महान भारत के शिल्पीकार

इबादतखाने ढहाए जा रहे हैं शरीफों पर पहरे बिठाए जा रहे हैं।
कलम करना था जिनका सर जरूरी उन्हीं के आगे सर झुकाए जा रहे हैं।।

* संग्रीकरण :- सौ. प्रगती प्रभाकर अकीम

* छायांकन :- श्री सुधीर वासुदेवराव लिंगायत
आर्टटेक ग्राफीक्स, ७८९/९०, गुरुवार पेठ, पुणे- मो. ९४२२३६३३११

* सौजन्य :- पार्टस् कॉटेज / पार्टस पॅराडाईज
६-ए, दिवाडकर अपार्टमेंटस्, ताडीवाला रोड, पुणे- ४११००१

* संशोधन, शुद्धिकरण:- श्री अशोक चांदमल सिंहल

* प्रेषक व्यवस्था :- श्री मोहन तुलस्यान (तुलस्यान एक्सप्रेस कुरिअर) फोन नं.२६११९२९१,
३, सागर अपार्टमेंटस्, फ्लॅट नं.८, ताडीवाला रोड, पूना-४११००१
घर-२६०५०७६१ मो.९८२३०४४८३२

* सहयोगी छायांकन :- रश्मि हीरा - संजय हीरा

* पॅकिंग श्री ओमप्रकाश बलभद्रप्रसाद अग्रवाल

*** प्रस्तुतकर्ता :- श्री अनन्तसुत मणिरत्नम् महेन्द्रकुमार पाटोदिया**

कोनार्क इन्क्लेव्ह, बी-८, बंड गार्डन रोड, पुणे - १
फोन नं. - २६१६२६७२,२६०५९६७४ मो. ९३७१११६६८३, ९३७३५०८३०१

* प्रकाशन **नारायणी देवी सांस्कृतिक भवन ट्रस्ट**
श्री नारायणी धाम, सर्व्हे नं. ७४/१-बी, प्लॉट नं. १७-१८-१९,
कात्रज दूध डेअरी के पीछे, सातारा रोड, पुणे-४११०४३ फोन- २४३६५१५१

** जीवन चरित्र ही सच्चा इतिहास है। चरित्र इतिहास का चरण बन जाता है।*
** मानव इतिहास का नियम है कि एक भी कदम पीछे न पडे।*

मूल्य - शहीदों को शत् शत् प्रणाम

ग्रन्थ प्राप्ति का स्थान

१) महालक्ष्मी मंदिर,
नेहरू स्टेडियम के पास,
सारस बाग, पुणे- ४११०३७

२) नारायणी देवी सांस्कृतिक भवन ट्रस्ट, (राणी सती मन्दिर)
सर्व्हे नं. ७४/१-बी/२, प्लॉट नं. १८-१९,
कात्रज दूध डेअरी के पीछे, सातारा रोड,
पुणे- ४११ ०४६ फोन नं. २४३६५१५१

३) अमरनाथ अग्रवाल
१०३१, बुधवार पेठ, जगोबादादा तालीम के पास,
पूना-४११००२ फोन नं. ऑ.२४४७३३१० घर-२५४३०२७४

४) डॉ. सुशील भारूका
आर्च डेव्हलपर्स, सिटी प्राईड, मोंढा नाका, जालना रोड,
औरंगाबाद फो. ०२४०-२३४५९५५ मो. ९८२३०२८४१२

५) श्री जगदीश बाघमल अग्रवाल
हॉटेल टूरिस्ट, मंगलवार पेठ, पुणे- २

६) श्री शाम ग्यानीराम अग्रवाल
आज का आनंद, शिवाजीनगर, पुणे-५
फोन ऑ. २५५३४८८८

७) श्री सुशीलकुमारजी अग्रवाल
एस-३, जनता कॉलनी, जयपुर-३०२००४
फोन नं. ऑ. ०१४१-२६०६७४६, मो. ९८२९०६०६७४

८) श्री प्रेमप्रकाश फूलचंद सूतवाला
पी-१/१/३, पद्म अपार्टमेंट, १६/१६, सिव्हील लाईन्स,
कानपुर (उ.प्र.)- २०८००१ मो. ९८३९११७७२२

९) श्रीमती गीता जयप्रकाश गोयल
बिल्डिंग ९ए, ११ वां मजला, गंगा सॅटेलाईट,
वानवडी, पुणे- ४११०४० मो. ९८६०००००२२२
फोन नं. ऑ. २६१४०२५१ घर- २६८३७४३४

१०) शंकरलाल रिणवाँ
धानुका आश्रम, परिक्रमा मार्ग, रमण रेती,
वृंदावन- २८११२१ (यू.पी.) मोबाईल -०९७५६२५८२४२
फोन नं. ०५६५-३२९०८०४, २५४००७५, २५४०७३१

११) श्री विजय चौधरी
आशिष, विमान नगर, खामगांव-४४४३०३
फोन नं. (०७२६३) २५२४०३ ऑ. २५३११६

१२) श्री बनवारीलाल अग्रवाल
१६-११-७४१/डी/३६, मूसारामबाग,
हैद्राबाद- ५०००३६ मो. ९४२४६३५४९१९

१३) श्री किरण अग्रवाल
कुसुम बंगलो, आकाशगंगा सोसायटी,
कृष्णचरन अपार्टमेंटस् के सामने, काठे गल्ली, द्वारका,
नासिक - ००१ फो. (०२५३) ८०४६३३, मो. ९८५०३०४०६१

१४) श्री देवीप्रसाद सरावगी
गोकुलधाम,२९बी-२ रा मजला, ३२/१बी,
रामकृष्ण समाधि रोड, कलकत्ता-७०००५४
फोन नं. घर-२३२०१४१४ ऑ.२३५३८७६८

१५) श्री मोतीलाल डेंगला
अरुणोदय, ११८९/ए, १३-मेन हॉल, दूसरा स्टेज
बेंगलोर- ५६०००८ फो. २५२६४२०५, मो.९३४१२६२४९३

१६) अग्रवाल समाज, पुणे
श्री अग्रसेन भवन (वासुदेव जानी)
१०८८, रविवार पेठ, पुणे- ४११००२
फोन- २४४७६१६५, २४४७७७५६

१७) श्री राजेन्द्र बेनीप्रसाद मंगल
श्री खाटू श्याम मित्र मंडल, पूना
सी.एम.ई. पुणे- ४११०३१ मो. ९७६४४५५८५५

१८) श्री बनवारीलाल जाजोदिया
रघुमणि, डी-३४, एचआयजी कॉलनी,
शॉपिंग कॉम्प्लेक्स के पीछे, आग्रा-मुंबई रोड,
इंदौर- ४५२००१ (म.प्र.)
फो. २५५९४५१ मो. ९३००५६९४७१

१९) श्रीकांत रामस्वरूप मोरारका
नानसा गेट, स्टेशन नवलगढ़- ३३३०४२
जिल्हा- झुनझुनु (राजस्थान) मो. ९४१४३१५७३०

२०) श्री अशोककुमार एस. जालान
अवाडे माळा, ए-१३, शुभमकरोति अपार्टमेंटस्,
इचलकरंजी- १५ जिल्हा-कोल्हापूर मो. ९४२२४२६७८०

२१) श्री दिनेशजी अग्रवाल
३/ए, प्रस्तावना अपार्टमेंट, प्रतिष्ठा कॉम्प्लेक्स,
एक्सेरिमेंटल स्कूल के सामने, पारले पॉईंट, सूरत
मोबाईल - ९८२४१००९४०

श्री गणेश

सिद्धिविनायक गणपति के दर्शन करने से सभी कामनाएं पूर्ण हो जाती है, सभी क्लेष नष्ट हो जाते हैं। मन को शांति मिलती है। सिद्धिविनायक गणपति आस्था, श्रद्धा और विश्वास का प्रतीक है। ऐसे ही टिटवाला कल्याण जिल्हे में श्री गणेश मंदिर है। टिटवाला महागणपति की नगरी के रूप में विख्यात है। यह गणेश मंदिर ऐतिहासिक और पौराणिक दृष्टि से काफी महत्व रखता है।

यही था कण्व ऋषि का आश्रम। दंडकारण्य के इस क्षेत्र में शकुंतला एवं दुष्यंत का विवाह हुआ था। ऐसा माना जाता है कि राजा दुष्यंत एक बार इस क्षेत्र में शिकार करने आए थे, तब कण्व ऋषि की मानस पुत्री शकुंतला के वे स्वयं शिकार हो गए। बाद में कण्व ऋषि ने दुष्यंत एवं शकुंतला का गंधर्व विवाह कर दिया। विवाह के बाद दुष्यंत लौट गए पर वह दुर्वासा के श्राप के कारण शकुंतला को भूल गए। शकुंतला संतप्त हो गई। शकुंतला को दुखी देखकर कण्व ने विघ्नहर्ता गणेश की पूजा- अर्चना करने को कहा। कण्व ऋषि एवं शकुंतला ने सिद्धिविनायक की प्रतिमा बना दी और शकुंतला ने प्रथमेश की पूजा शुरू कर दी। शकुंतला गणपति की आराधना में हमेशा लगी रही। अंतत: विघ्नहर्ता ने प्रसन्न होकर दुर्वासा के शाप को विनष्ट कर दिया और शकुंतला एवं दुष्यंत का फिर मिलन हो गया। तभी से टिटवाला भक्तों की आस्था का प्रतीक बन गया। यह भी कहा जाता है कि नवी सदी की इसी प्रतिमा की पूजा शकुंतला ने की थी। बाद में पेशवा माधवराव के शासनकाल में सूखा पड़ा, तो यहां स्थित सरोवर की खुदाई की गई। यह प्रतिमा उसी सरोवर में मिली, जिसे पेशवा सरदार रामचंद्र महेंदले ने प्राप्त किया और फिर प्रतिमा की प्रतिष्ठा की। तभी से यहां गणपति की पूजा-आराधना होनी लगी, जो आज तक जारी है।

टिटवाला का सिद्धिविनायक महागणपति भक्तों के आस्था का केंद्र बन गया है। मंदिर में अंगारिका चतुर्थी को भक्तों का जन सैलाब उमड़ पड़ता है।

टिटवाला के गणपति भक्तों की मनोकामना पूर्ण करते हैं ऐसा भक्तों को विश्वास है और गणपति उनके विश्वास को टूटने भी नहीं देते हैं।

श्री गणेश विघ्नहर्ता हैं। श्री विष्णु और ऊर्जा के स्रोत सूर्य की पूजा से पहले श्री गणेश की पूजा की जाती है। श्री गणेश के ऐसे ही अद्‌भुत ८ अवतारों और उनकी भक्ति के फल-

वक्रतुण्ड- श्री गणेश के इस रूप में मुड़ी हुई सूंड़ होती है। यह बाधाओं का नाश और विघ्न का नाश करते हैं। कलह का नाश करते हैं।

एकदंत- इस रूप में श्री गणेश का एक ही दांत होता है। यह लालच, अहंकार, आसक्ति और दंभ को चूर करते है। यह बुद्धिदाता होते हैं।

महोदरा- श्री गणेश के इस रूप में बड़े उदर यानि पेटवाले होते हैं, जो सुख-समृद्धि और आनंद देते हैं। भूमि-संपत्ति संबंधी बाधा को दूर करते हैं।

गजानन- श्री गणेश इस रूप का अर्थ होता है हाथी जैसे मुख वाले धन, दौलत, ऐश्वर्य और कार्य दक्षता और सिद्धि देते हैं। यह शांत और पुरूषार्थ बनाते हैं।

लम्बोदर- श्री गणेश के इस रूप का अर्थ होता है- लम्बे पेट वाले। क्रोध व अधर्म को अंत करते हैं।

विकट- विपदाओं व संकट के साथ शत्रुभय दूर करते हैं। यह संकटनाशक रूप माना जाता है।

विघ्नराज - सभी विघ्नों का नाश करते हैं और शुभ कार्यों में आनेवाली बाधाओं को दूर रखते हैं। इस रूप में गणेश कमल के फूल पर विराजित होते हैं।

धूम्रवर्ण - श्री गणेश इस रूप में धुएं की तरह रंगवाले होते हैं। हर धर्म और काम में सफलता देते हैं।वहीं दुष्प्रवृत्तियों का नाश करता हैं। ग्रहदोष शांति के लिए इनकी पूजा का महत्व है।

मोदकप्रिय मृद मंगजल दाता, विद्या बारिधि बुद्धि विधाता। सही सटिक पंक्तिया गणेश जी के लिए अशांत मन में ज्वारभाटे से समान उठते विचार, स्थिरता की ओर बढ़ने लगते है। गणेश जी जीवन में मंगल लानेवाले है। गणेशजी न्यायप्रिय कर्तव्य के लिए टूटकर भी डटे रहना, माता पिता के आदेश को दुनिया में सर्वोपरि रखना, सभी बाधाओं के बावजूद हमेशा मुस्कुराते रहना इनके जीवन से सीखते है। गणेश जी इस दुनिया के आदर्श कलाकार है। विशाल हृदय उनकी छबि, जीवन में कभी भी विचलित नहीं, अटूट धैर्य, सदैव मुस्कुराते हुए, सबकी मंगलकामना चाहनेवाले यह सब चीजें सीखनेपर आपका जीवन बदल जायेगा। न्याय और कर्तव्य के लिए आप जिम्मेदार होंगे। उनका हृदयसागर इतना विशाल और हिमालय जैसा ऊंचा ग्रहण करने योग्य है। लाभ हानि के विरुद्ध शून्य में रहकर सोचने से बहुत संदेश ग्रहण कर सकते है। माँ पार्वती के लिए जिंदगी को दांव पर लगानेवाले पुत्र की जिन्दगी की सबसे बड़ी सीख है। हमें धर्म, जाति सबसे उठकर ऐसा चरित्र बनाना चाहिए जो गणेश के समान हो।

बिना बुद्धि के अगर अपार धन की प्रज्ञप्ति हो जाए, तो भी वह निरर्थक साबित होती है। धन का धर्म सम्मत व्यय तभी माना जाता है, जब उसको सोच समझकर खर्च किया जाए। धन आने पर अच्छे भले आदमी का विवेक भी समाप्त हो जाता है। गणेशजी बुद्धि के स्वामी हैं, विवेकशील है। लक्ष्मीजी के साथ गणेश जी का पूजन असल में धन प्राप्ति में किसी भी तरह की विघ्न बाधा-को रोकने के लिए ही किया जाता है। फिर गणेशजी वैध तरीके से धन प्रदान करवाते हैं। विघ्न चाहे धन का हो, घर में कलह क्लेश का या कोई और, गणेश जी तत्काल बुद्धि देकर समस्या का निवारण करते हैं। परिवार की धुरी गृहलक्ष्मी ही होती है। विवाह के पश्चात स्त्री को गृहलक्ष्मी कहा जाता है, क्योंकि लक्ष्मीजी का सोलहवां अंश उसमें रहता हैं। लक्ष्मी उसी के पास लंबे समय तक टिकती हैं, जिसके पास बुद्धि होती है। गणेशजी बुद्धि के स्वामी होने के कारण इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

उन्नति की कामना करनेवालों को निद्रा, तन्द्रा, भय, क्रोध, आलस्य और दीर्घसूत्रता (काम को टालनेवाली प्रवृत्ति) का त्याग करना चाहिए। यह सत्य है कि इन छह दोषों से दूर रहनेवाला ही लक्ष्मी प्राप्त कर सकता है। अधिक नींद लेनेवाला लक्ष्मीजी को पसंद नहीं है। ऊंघते रहना कर्म और सफलता में बड़ी बाधा पैदा करता है। व्यक्ति के आत्मविश्वास को भय भी हानि पहुंचाता है। क्रोध व्यक्ति के अच्छे गुणों का नाश कर डालता है। आलसी आदमी किसी भी अच्छे काम को पूरा करने में असमर्थ रहता है। एक सबसे खराब आदत है किसी भी काम में विलंब करना या बहुत देरी करना।

गणेशजी की पूजा से यह छह दोष अपने आप समाप्त हो जाते हैं। पुराणों में कहा गया है- जहां माता-पिता, सास-ससुर, पितर, देवगण, गुरुओं और मेहमानों को प्रसन्नता नहीं होती, जहां झूठ बोलनेवाले, झूठी गवाही व कसम खानेवाले होते हैं, वहां लक्ष्मीजी निवास नहीं करती। यहीं गणेशजी की भूमिका शुरू होती है। गणेशजी शोक का नाश करनेवाले हैं, आनंद के देवता हैं, सकारात्मक सोच प्रदान करते हैं। फिर लक्ष्मीजी के मानस पुत्र भी हैं गणेशजी। गणेशजी और लक्ष्मीजी दोनों ही की राशि तुला है, इसलिए वे संतुलित व्यवहार पसंद करते हैं।

पाटोदिया परिवार का एक टिमटिमाता व जगमगाता सितारा सदा के लिए अस्त हो गया

मेरे अग्रज मनोहरलाल पाटोदिया की पुण्यस्मृति में

❊ बिछड़ गये बीच राहों में, दिल से नहीं जा पाओगे।
आंखों में आंसू हैं गम के, आप जीवनभर याद आओगे।

लोक आगमन- ८ नवम्बर, १९३४ लोक विदाई- २१ अप्रैल, २०१७

❊ नजरों से ओझल भले हो गये, पर दिल से न जा पाओगे,
भूलेंगे सारी दुनिया, पर आपको न भूल पायेंगे।

श्री मनोहरलाल पाटोदिया को भावभीनी अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि

श्री मनोहरलाल एक खिलखिलाते हसीन चेहरे हंसमुख व्यक्तित्ववाले व्यक्ति थे। इनका जन्म राजस्थान में झुनझुनु जिला नवलगढ़ में हुआ। यह अनन्तराम जी पाटोदिया के पुत्ररत्न थे। इनकी प्रारम्भिक व माध्यमिक नवलगढ़ के सेठ जी बी पोद्दार उच्च पाठशाला व महाविद्यालय में हुआ। सन १९५२ में वे मुम्बई आ गए और वाणिज्य में स्नातक की शिक्षा सिडनम कॉलेज मुम्बई में हुई। इन्हे वाणिज्य में स्नातक की उपाधि मुम्बई विद्यापीठ से मिली। शिक्षण पूर्ण होने पर पारिवारिक व्यवसाय से जुड़ गए। शेअर बाजार के व्यवसाय में उन्हे महारत हासिल थी। कई अच्छी अच्छी स्क्रीप्ट में उन्होंने निवेश किया जो बढ़कर कई गुनी हो गयी। सन १९५६ में उनका पाणिग्रहण सुशीला श्रीमती वीणादेवी के साथ हुआ। उनके दो पुत्र मुकेश व संजय बड़े ही होनहार और योग्य पुत्र हैं जिन्होने स्वचलित वाहन पूर्जा भंडार व्यवसाय को विकसित किया तथा ऑप्टिमा ऑटो लॅम्प निर्माण उद्योग स्थापित किया, जो अपनी गुणवत्ता से सर्वोत्तम जाना जाता है। श्री मनोहरलाल जी परिवार के लिए त्याग, समर्पण और बलिदान की मूर्ति थे। उनका स्वभाव प्रिय व मिलनसार था। हर एक व्यक्ति के चहेते थे। सादगी और मितव्ययता उनकी जीवनशैली थी और अपने मधुर और शालीन व्यवहार से सबको आकर्षण करने की क्षमता थी। हर समय हास्य विनोद उनकी प्राथमिकता थी।

एक रोशनी, जिसने दिखाई मंजिल की राह, एक जज्बा, जिसने जगाई कामयाबी की चाह

एक हिम्मत, जिसने बांधी अरमानों की लड़ी, एक हौसला, जिसने थामी मुश्किलों की घड़ी

एक सोच, जिसने बदला नजरिया, एक चाहत, जिसने दिया आगे बढ़ने का जरिया

एक प्रेरणा, जो हमारे दिल में कहीं है,

आज याद करते हैं उस शख्सियत को जिसका साया, यहीं पर कहीं है।

*** वक्त गुजरता रहा, पर साँसे थमी सी हैं, मुस्कुरा रहे हैं हम, पर आंखों में नमी सी हैं।**

यादों में केवल आप हो, नयनों मे पावन स्वरूप, पर हमको तो बहुत ज्यादा आपकी कमी सी हैं।

स्वर्णिम भारत का गौरवान्वित इतिहास

विषय सूचिका

इतिहासकार की कलम से

अतीत का सुनहरा अध्याय

गौरवशाली अतीत है वंदे मातरम का

वतन का प्रतिक राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा

संविधान की सार्थकता

आजादी की उपलब्धियां

आज का भारत

जनवरी

महादेव देसाई	१ जनवरी
अमर शहीद चंद्रशेखर आजाद	७ जनवरी
कैलाश सत्यार्थी	११ जनवरी
स्वामी विवेकानंद	१२ जनवरी
पं. सूर्यनाथ उपाध्याय	१६ जनवरी
महादेव गोविंद रानडे	१८ जनवरी
नेताजी सुभाषचंद्र बोस	२३ जनवरी
गणतंत्र दिवस	२६ जनवरी
पंजाब केसरी लाला लजपतराय	२८ जनवरी
महाराणा प्रताप	२९ जनवरी
सी. सुब्रह्मण्यम	३० जनवरी

फरवरी

खुशवंत सिंह	२ फरवरी
विश्वनाथ कराड	३ फरवरी
स्वामी दयानंद सरस्वती	१२ फरवरी
सरोजिनी नायडू	१३ फरवरी

सुषमा स्वराज	१४ फरवरी
रामकृष्ण परमहंस	१८ फरवरी
छत्रपती शिवाजी महाराज	१९ फरवरी
डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर	२१ फरवरी
जयललिता	२४ फरवरी

मार्च

सेठ रसिकलाल धारीवाल	१ मार्च
जमशेदजी टाटा	३ मार्च
सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन	७ मार्च
रानी कर्णावती	८ मार्च
डॉ राममनोहर लोहिया	२३ मार्च
शहीदों का दिन	२३ मार्च
ऊषा मेहता	२५ मार्च
महादेवी वर्मा	२६ मार्च
तीर्थंकर महावीर स्वामी	२७ मार्च
१८५७ का भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास	२९ मार्च

अप्रैल

डा. केशव हेडगेवार	१ अप्रैल
माखनलाल चतुर्वेदी	४ अप्रैल
कस्तुरबा गांधी	११ अप्रैल
दत्ताजी ताम्हणे	१३ अप्रैल
डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर	१४ अप्रैल
गुरु नानक	१५ अप्रैल
मार्शल अर्जुन सिंह	१५ अप्रैल
गुरु अर्जुन देव	१५ अप्रैल

मई

देशभक्त प. मोतीलाल नेहरू	६ मई
विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर	७ मई

ठुमरी साम्राज्ञी गिरिजादेवी ८ मई
गोपाल कृष्ण गोखले ९ मई
महाराणा प्रताप ९ मई
सुखदेव थापर १५ मई
सुमित्रानंदन पंत २० मई
राजा राम मोहन राय २२ मई
गौतम बुद्ध २२ मई
बछेन्द्री पाल २४ मई
रासबिहारी बोस २५ मई
क्रांतिकारी दामोदर विनायक सावरकर २८ मई

जून

शंकर कुरुप ३ जून
राहुल बजाज १० जून
रामप्रसाद बिस्मिल ११ जून
बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय २७ जून
पी.वी. नरसिंहराव २८ जून
पी.सी. महालनोबिस २९ जून

जुलाई

चंद्रशेखर १ जुलाई
भगवतीचरण बोहरा का बलिदान ४ जुलाई
गुलजारी लाल नंदा ४ जुलाई
ज्योति बसु ८ जुलाई
अरुणा आसफ अली १६ जुलाई
मंगल पांडे १९ जुलाई
बटुकेश्वर दत्त २० जुलाई
बाल गंगाधर तिलक २३ जुलाई
चंद्रशेखर आजाद २३ जुलाई
अजीम प्रेमजी २४ जुलाई

जे.आर.डी. टाटा	२९ जुलाई
साहित्य सर्जक प्रेमचन्द	३१ जुलाई

अगस्त

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त	३ अगस्त
जनेश्वर मिश्र	५ अगस्त
भीष्म साहनी	८ अगस्त
अगस्त क्रांति	९ अगस्त
सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	१० अगस्त
खुदीराम बोस	११ अगस्त
डॉ. विक्रम साराभाई	१२ अगस्त
शहादत भूलती पीढ़ी	१५ अगस्त
दार्शनिक अरविंद घोष	१५ अगस्त
हजारी प्रसाद द्विवेदी	१९ अगस्त
राजीव गांधी	२० अगस्त
त्रिलोचन शास्त्री	२० अगस्त
राजगुरु	२४ अगस्त
तसलीमा नसरीन	२५ अगस्त
हरिभाऊ उपाध्याय	२५ अगस्त
बैरिस्टर वीरचंद राघव गांधी	२५ अगस्त
मदर तेरेसा	२९ अगस्त
गोविंद वल्लभ पंत	३० अगस्त
भगवतीचरण वर्मा	३० अगस्त
अमृता प्रीतम	३१ अगस्त

सितंबर

दादाभाई नौरोजी	४ सितंबर
सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन	५ सितंबर
पंडित गोविंद वल्लभ पंत	१० सितंबर
आचार्य विनोबा भावे	११ सितंबर

ॲड. राम जेठमलानी	१४ सितंबर
नरेन्द्र मोदी	१७ सितंबर
कुंवर नारायण	१९ सितंबर
क्रांतिकारी रामधारी सिंह दिनकर	२३ सितंबर
मैडम भीकाजी कामा	२४ सितंबर
दीनदयाल उपाध्याय	२५ सितंबर
ईश्वरचंद्र विद्यासागर	२६ सितंबर
शहीदे आजम भगत सिंह	२८ सितंबर
मातंगिनी हजारा	२९ सितंबर

अक्तूबर

महामहिम रामनाथ कोविंद	१ अक्तूबर
लालबहादुर शास्त्री	२ अक्तूबर
मोहनदास करमचंद गांधी	२ अक्तूबर
श्यामजी कृष्ण वर्मा	४ अक्तूबर
लोकनायक जयप्रकाश नारायण	११ अक्तूबर
नानाजी देशमुख	११ अक्तूबर
अब्दुलकलाम आजाद	१५ अक्तूबर
मातंगिनी हजारा	१९ अक्तूबर
अशफाक उल्ला खां	२२ अक्तूबर
गणेश शंकर विद्यार्थी	२६ अक्तूबर
होमी जहांगीर भाभा	३० अक्तूबर
सरदार वल्लभभाई पटेल	३१ अक्तूबर

नवम्बर

वासुदेव बळवंत फड़के	४ नवम्बर
देशबंधु चितरंजन दास	५ नवम्बर
सी.वी. रमण	७ नवम्बर
बिपिनचन्द्र पाल	७ नवम्बर
सुरेन्द्रनाथ बॅनर्जी	१० नवम्बर

टीपु सुल्तान १० नवम्बर
मौलाना आजाद ११ नवम्बर
रणजीत सिंह १३ नवम्बर
पंडित जवाहरलाल नेहरू १४ नवम्बर
अमर शहीद वीरसा मुंडा १५ नवम्बर
बटुकेश्वर दत्त १८ नवम्बर
झांसी की रानी लक्ष्मीबाई १९ नवम्बर
इंदिरा गांधी १९ नवम्बर
युगपुरुष साधु टी. एल. वासवानी २५ नवम्बर
हरिवंशराय बच्चन २७ नवम्बर
जगदीशचंद्र बोस ३० नवम्बर

दिसंबर

भारत रत्न डॉ. राजेंद्र प्रसाद ३ दिसम्बर
खुदीराम बोस ३ दिसम्बर
इंद्रकुमार गुजराल ४ दिसम्बर
चक्रवर्ती राजगोपालाचारी १० दिसम्बर
प्रणब मुखर्जी ११ दिसम्बर
गुरु गोविंद सिंह २२ दिसम्बर
डॉ. मेहर चंद्र महाजन २३ दिसम्बर
पंडित मदन मोहन मालवीय २५ दिसम्बर
गुरु तेगबहादुर २५ दिसम्बर
अमर शहीद उधम सिंह २६ दिसम्बर
मिर्जा गालिब २७ दिसम्बर
रतन टाटा २८ दिसम्बर
धीरुभाई अंबानी २८ दिसम्बर

।।भारत की महीमा।।

जहाँ डाल डाल पर सोने की चिड़ियाँ करती हैं बसेरा
वो भारत देश है मेरा, वो भारत देश है मेरा
जहाँ सत्य अहिंसा और धर्म का पग पग लगता डेरा
वो भारत देश है मेरा -२ । जहाँ डाल .....
यह धरती जहाँ ऋषि-मुनि जपते प्रभु नाम की माला
जहां हर बालक एक मोहन है और हर राधा एक बाला
जहां सूरज सबसे पहले आकर डाले अपना डेरा। वो भारत....
अलबेलों की इस धरती के त्यौंहार भी हैं अलबेले
कहीं दिवाली की जगमग है कहीं होली के मेले
जहाँ राग रंग और खुशी का, चहुँ ओर है घेरा। वो भारत...
जहाँ आसमान से बातें करते, मंदिर और शिवाले
किसी नगर में किसी द्वार पर, कोई न ताला डाले
प्रेम की बंशी जहां बजाता, आए शाम सबेरा। वो भारत...

।। शहीदों को शत् शत् नमन।।

ऐ मेरे वतन के लोगों ! तुम खूब लगा लो नारा, ये शुभ दिन है हम सबका ! लहरा लो तिरंगा प्यारा
पर मत भूलो सीमा पर ! वीरों ने प्राण गवाये, कुछ याद उन्हें भी कर लो जो लौट के घर न आये
ऐ मेरे वतन के लोगों ! जरा आँख में भर लो पानी, जो शहीद हुए हैं उनकी जरा याद करो कुरबानी...
जब घायल हुआ हिमालय खतरे में पडी आजादी, जब तक थी साँस लडे वो फिर अपनी लाश बिछा दी
संगीन पे धर के माथा सो गए अमर बलिदानी ।। जो शहीद हुए है... ।।
जब देश में थी दिवाली वो खेल रहे थे होली, जब हम बैठे थे घरों में वो झेल रहे थे गोली
थे धन्य जवाँ वो अपने थी धन्य वो उनकी जवानी ।। जो शहीद हुए है...।।
कोई सिख कोई जाट मराठा, कोई गुरखा कोई मद्रासी, सरहद पर मरने वाला हर वीर था भारतवासी
जो खून गिरा पर्वत पर वो खून था हिन्दुस्थानी ।।जो शहीद हुए है...।।
थी खून से लथपथ काया फिर भी बन्दूक उठा के, दस दस को इक ने मारा फिर गिर गये होश गंवा के
क्या लोग थे वो दीवाने क्या लोग थे वो अभिमानी ।। जो शहीद हुए है...।।
जब अन्त समय आया तो कह गये कि अब मरते हैं, खुश रहना देश के प्यारो अब हम तो सफर करते हैं
तुम भूल न जाओ उनको इसलिये सुना यह कहानी, जो शहीद हुए है उनकी जरा याद करो कुरबानी ।।

वतन के आशिक

वतन की आन की खातिर बंधे हैं सर पर कफन,
वतन पर मिट गया जो भी वतन को उस पर गुमां होगा।।
न हिन्दू हैं न मुस्लिम है न हैं कोई सिक्ख-ईसाई,
वतन का लाल है जो भी, वतन उस लाल का भाई।
वतन की आन रख ले जो वही तो रहनुमा होगा।।
कोई आजाद है इनमें भगत सरदार है कोई,
हमें तो नाज है उस पर सदा तैयार है कोई।
हम अपने घर में बैठे हैं वो सरहद पर डटा होगा।।
तमन्ना सर फरोशों की नहीं गर तेरे दिल में है,
तमन्ना उन शहीदों की नहीं गर मेरे दिल हैं।
हमारी जिंदगी पर भी दाग एक बदनुमा होगा।।
मिटा दो खुद की हस्ती को मगर ये देश की अस्मत,
न लुटने पाये दीवानों वतन से कर लो मोहब्बत।
वतन का जो बना आखिक अमर वो नौ जवां होगा,
वतन पर मिट गया जो भी वतन को उस पर गुमां होगा।
वतन की आन की खातिर बंधे हैं सर पर कफन जिनके,
वतन पर मिट गया जो भी वतन को उस पर गुमां होगा।।

देशभक्ति गीत

हो चाहे कोई मंदिर मस्जिद, या गिरजा गुरुद्वारा, इन सब में बस्ते हैं अल्लाह-ईश्वर है यह पैगाम हमारा।
हर प्रांत हर देश में यारों कर दो ये ऐलान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
यह है अपनी धरती माता हम हैं इसकी संतान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
बहार लेकर आती है यहां हर रुत की हरियाली, महक उठे हर पत्ता-पत्ता और फूलों की डाली।
यहां के हर एक पंछी को है मिट्टी की पहचान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
इस मिट्टी में जो भी जन्मा वह है नसीबों वाला, हर इंसा यहां एक समान है गोरा हो या काला।
इसीलिए सारी दुनिया हम को देती है मान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
विश्व में नहीं जाती जितनी उतनी भारत की भाषा, एक है हम सब एक रहेंगे हम सबकी है यह आशा।
रोकना है जिन्हें रोक लें बनते जाएंगे बलवान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
यहां हर नर है प्यारा गुड्डा नारी है प्यारी गुड़ियां, कहे सदियों से सारा जग भारत को सोने की चिड़िया।

हमारे पुरुखों से तो हमको यही मिला है ज्ञान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
यहां सोने की गंगा बहती है और चांदी की जमुना, सारी दुनिया देखे जिसे वह ताजमहल है अपना।
आते हैं लाखों सैलानी बनकर अपने मेहमान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
राष्ट्रपिता गांधी जी ने दी है हमको यह शिक्षा, मरते-मरते भी करेंगे हम अपने भारत माता की रक्षा।
इस भारत माता की खातिर यह प्राण देंगे बलिदान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।
नाज है मुझको इस धरती पर इस मिट्टी का क्या कहना, प्यारा लगे हैं हमको इस धरती माता की गोद में रहना।।
वतन की खातिर मर-मिट जाएं बेताब का है अरमान, स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान स्वर्ग है मेरा हिन्दुस्तान।।
तस्वीर को धुंधला नहीं होने देंगे,
हम वो राही हैं सर लिए फिरते हैं सूरज, हम कभी पेड़ों से साया नहीं मांगा करते।
हमको अच्छी तरह आता है रास्ता बनाना, हम पहाड़ों से रास्ता नहीं मांगा करते।।

भारत है सबसे न्यारा

भारत है सबसे न्यारा, हमारा मुल्क, हमको तो अपनी जान से, प्यारा हमारा मुल्क।
हिन्दू भी हैं, मुस्लमां भी सीख भी ईसाई भी, आपस में लाख झगड़े, पर हैं तो भाई ही।
हम हम जबान बोले, हमारा हमारा मुल्क, अपनाई लाख गैर की, तहजीब को अगर,
हमने तहजीब अपनी तो, छोड़ी नहीं मगर, दुनिया की जिसपे नजरे, वो नजारा हमारा मुल्क।
पहचान लो, ये जान लो, तवारीख संसार से, गैरों को भी अपनाया है, भारत ने प्यार से।
यानि की बेसहारों का, सहारा हमारा मुल्क, हम तो हवा के झौंके हैं, रुकते नहीं कभी।
सर लाख ही कटा लें, पर झुकते नहीं कभी, दी हंस के जान जब भी, ललकारा हमारा मुल्क।
आये जहां से तूफां, लौटे भी हैं वहीं, इसका वजूद कोई, मिटा पाया ही नहीं।
हमने लहू से सींचा, सवारा हम मुल्क, हमको तो अपनी जान से, प्यारा हमारा मुल्क।
भारत है सबसे न्याया हमारा हमारा मुल्क।

परचम

देखों बच्चों यह छम छमाती परचम, हम सब की पहचान भारत की शान।
लहराया जिसने अपनी जान गंवाकर, उन्हें कभी न भूलना तुम्हें, परचम की कसम,
चट्टानों को रौंदकर तूफानों से टकराया, जाने कितने वीर जवानों ने अपना जान गंवाया।
उन्हें कभी न भूलना तुम्हें परचम की कसम, नेताजी, आजाद और भगत सिंह के सपने हैं।
इस माटी में गांधी और नेहरू के निशा हैं, उन्हें कभी न भूलना तुम्हें परचम की कसम।
उनके आशाओं के तस्वीर सजाएं रखना, उनके अरमानों का इस,
चयन को जनाएं रखना उन्हें कभी न भूलना, तुम्हें परचम की कसम।

मेरे प्यारे भारत

जयते जयते मेरे भारत, नतमस्तक तुझे प्रणाम, तेरी माटी का लाल हूं, तुझसे मेरा नाम।
तेरे रज रज में बसते हैं, अल्लाह, ईश्वर, ईशा, न धुंधली हो तस्वीर तेरी, चाहे सुबह हो या निशा।
है गर्व मुझे भारतीय हूं, भारतीयता पे अभिमान। तेरी माटी का लाल हूं, तुझसे मेरा नाम।
दुश्मन कोई तुझपे जो नजर डाले, कर देंगे उनके मुंह काले, मुंह जवाब मिलेगा उन्हें।
तैयार वीर हैं, मतवाले, हर हिन्दुस्तानी के दिल में। बसती है, हिंदुस्तान।

मेरा महबूब मेरा वतन

दासतां-ए-अहले वफां की सदके आसमां के जीवन तिरंगे की सदके।
हर तरफ शादों नजात की सदके, ए महबूब-ए-वतन हर सू, तेरी वजूद के सदके।
गली-ए-कूंचे और बहारों के सदके मुकम्मल-ए-चयन-ए-खुशबू की सदके।
शहीद-ए-वतन और जांबाजों की सदके ए-महबूब-ए-वतन हर, सू तेरी वजूद से सदके।
मंदिर और मस्जिद के रब्बों के सदके, खुदा के बंदे मेरी अवाम के सदके।
नेर-राहे-वफा इमान के सदके, ए-महबूब-ए-वतन, हर सू मेरी वजूद के सदके।
आजाद भगत सिंह, राणा इकबाल के सदके, वतन के शाम में कुरबान हर शय की सदके।
सारे जग का नूर, सदा-ए-वतन की सदके।

मैं एक सिपाही हूं

मैं एक सिपाही हूं, सिपाही जो जीता है, जो मरता है, देश के लिए सिपाही फिर भी गुमनाम है।
सिपाही जो एक शिक्षा है, प्रेरणा है, देश पर न्यौछावर होने के लिए,
फिर भी उसे स्थान नहीं मिलता दिलों में, इतिहास के पन्नों में भी सिपाही का नाम नहीं,
रंगीन हो, जीवन में ऐसी कोई शाम नहीं।
मैं एक सिपाही हूं मेरा नाम मिलेगा सरहद, पर दूर कहीं रेगिस्तानों में, पहाड़ों पर बर्फीले तूफानों में,
अनजानी बारूदी गाली में और मिलेगा नाम देश के सुनहरे भविष्य की नींव में, फिर भी सिपाही गुमनाम है।
मैं एक सिपाही हूं, जिसकी कल तक जय-जयकार थी, तब देश को मेरी जरूरत थी,
आज मुझे भुला दिया है, जब मुझे देश की जरूरत है, कल तक कंधों पे मेरे, देश की सुरक्षा का भार था,
देशवासियों के विश्वास को बनाये रखूं इसलिए सरहद पर खड़ा या चौकस और मुस्तैदी से,
बरसात में, तपती धूप में और गिरती बर्फ में भी, आज दब रहा हूं, परिवार की जिम्मेदारी में,
इस भार को मैं नहीं उठा पा रहा, क्योंकि अपने हाथ और पैर चढ़ा सका हूं सरहद पर, खुद आश्रित हूं।
दूसरों पर नजरें चुरा रहे हैं सब, जो दे रहे थे आश्वासन और कर रहे थे वादे कई, जान गया हूं वे।
आश्वासन के तवे पर, सत्ता की खातिर, वोटों की रोटी सेक रहे थे, फिर भी आंखें खोजती

है उन्हें, राह ताकती है जब थक जाती है, आंसू बहाती है, कोई देख न ले मैं पोछ लेता हूं वो आंसू।
क्यों? क्योंकि मैं एक सिपाही हूं।

वतन की मिट्टी का सलाम

वतन की मिट्टी को सलाम, वतन के हर शय को सलाम। आसमां पे लहराते तिरंगे को सलाम।
आजादी के तमाम शहीदों को सलाम, वतन के मिट्टी को सलाम।
ऊंचे परबत गिरते झरनों को सलाम, हवां के साज पे गुनगुनाती आजादी को सलाम।
खेतों की जवां हरियाली को सलाम, वतन कि मिट्टी को सलाम, वतन के हर शय को सलाम।
वतन के मसीहा किसानों को सलाम, वतन के पहरेदार जवानों को सलाम।
भारत मां के दिलेर लाल को सलाम, अमर शांति चयन को सलाम।
वतन कि मिट्टी को सलाम, वतन के हर शय को सलाम।
लाल-जाल-पाल और गोपाल को सलाम। गीता, कुरान, नानक और अजान को सलाम।
अमरनाथ, हरिद्वार, बोद्धगया और अजमेर को सलाम, हर बोली हर भाषा हर मजहब को सलाम।
वतन कि मिट्टी को सलाम, वतन के हर शय को सलाम।
आसमों पे लहराते तिरंगे को सलाम, आजादी के तमाम शहीदों को सलाम।

अपना तो जो भी है, वतन के लिए है

हमने किया कुछ आपने, अपने लिए है, निजी कुछ होता नहीं, सबके लिए है।
हमारे गृह उद्योग, खनिज, खेत, खलिहान, हमारे घर, आंगन आपके खेत खलिहान।
गांव देश की सम्पत्ति राष्ट्र हित के लिए है।
बच्चे हमारे आपके, अपने सही है, आंतरिक सुरक्षा देश के प्रहरी वही है,
नेता अभिनेता, खिलाड़ी या व्यवसायी, किसी सीमा में बंधकर रहता नहीं है।
विश्व मानवता के दुश्मन आतंक के पर्याय हैं, सूखते स्रोतों से, नासूर कुछ उग आये हैं।
दे रहे जो वेदना, प्रतिवेदना, संवेदनायें, गरजते, गर्जते मेघ फिर घिर आये हैं।
साम्राज्य छोड़ जाना पड़ा, सूर्य अस्त होता न था सहस्त्रवाहु, बाणासुर बलवान रावण कम न था।
समय चक्र अविरल चल रहा, रुकता नहीं, बस कहने को किस्सा अजूबा कुछ न था।
सत्य-अहिंसा, असहयोग अस्त्र ले बापू चले, आजाद हिंद फौज ले, सुभाष आगे बढ़े।
राजगुरु, आजाद, सुखदेव, भगतसिंह, आजादी की खातिर, वीर जवां सूली चढ़े
आदमी इंसान बन इंसानियत बोला नहीं, धर्म-जाति, संप्रदाय, पंथ कुछ होता नहीं।
ये हमारी आस्था के प्रतीक मात्र हैं, बस आदमी जानवर में फर्क कुछ होता नहीं।

इतिहासकार की कलम से

इतिहास गर्व पैदा करता है तो शर्म से सिर भी झुकवाता है। इतिहास में नायक भी होते हैं, खलनायक भी, मानवता के उद्धारक भी होते हैं और पृथ्वी को नरक बनानेवाले भी।

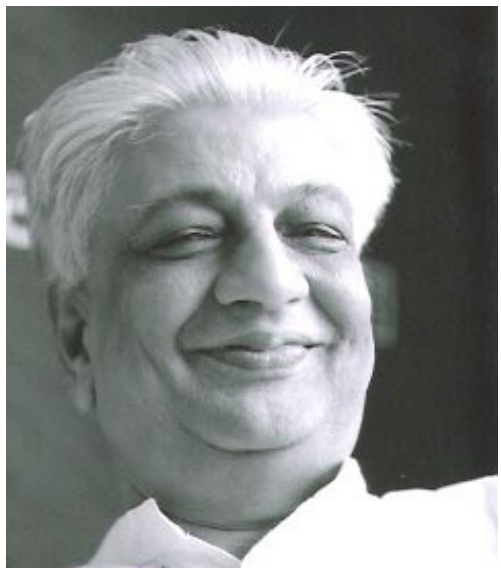

इतिहास ऐसे झूठे प्रकरणों से भरा पड़ा है जब खतनायकों को नायक महानायक प्रमाणित कर दिया गया है। कई सत्य बहुत देर बाद सामने आते हैं और वह भी काफी कम लोगों को पता चलते हैं। बादशाहों-राजाओं की क्रूरता की कहानियां असीमित हैं और तानाशाही के मामालों में बहुत सामान्य लगती हैं।

इतिहास घटनाप्रधान और पुराण शिक्षाप्रधान होते हैं। एक ही घटना जब शिक्षा देनेके उद्देश्यसे वर्णित की जाती है तब उसका नाम पुराण हो जाता है और जब केवल उसके यथार्थ रूपके प्रदर्शनके लिए ही उसका वर्णन किया जाता है, तब वह इतिहास हो जाता है।

इतिहास लेखन का एक मूलभूत नियम है कि प्रत्येक इतिहास समसामायिक इतिहास होता है। इसीलिये इतिहास को समझने के लिये हर युग अपना एक नजरिया बनाता है। यहाँ तक कि एक ही वक्त में कई तरह के नजरिए इतिहास को अपने अपने ढंग से देखने की कोशिश करते हैं। इतिहास में विवाद की जड़ इतिहास लेखन प्रणाली है। इतिहास पुनर्लेखन का एक ऐसा विषय है जिसकी जरूरत को भारतीय राजनीति में वामपंथी से लेकर दक्षिणपंथी तक दोनों धड़े बराबर महसूस करते रहे हैं, हालांकि यह मसला दक्षिणपंथी धड़े के दिल के ज्यादा नजदीक रहा है। जब जब देश में दक्षिणपंथी सरकार आई है, इतिहास के पुनर्लेखन पर नए सिरे से बहस खड़ी कर दी गई है। इसमें दिक्कत सिर्फ नीयत की है। अगर अब तक का इतिहास लेखन सिलेक्टिव रहा है, तो उसके जैसा इतिहास लेखन करने की मांग हो रही है। यह भी अपनी नीयत में साफ नहीं है। सुविधाजनक चयन की यह समस्या ही मामले का राजनीतिकरण करती रही है। भारत का इतिहास मूल रूप से भाषा के अध्ययन पर लिया गया है। भारत के इतिहास का बड़ा हिस्सा अंग्रेजों की सरकार के वक्त लिखा गया है। हालांकि इसमें कुछ फेरबदल भी हुआ है। इस बीच विज्ञान का विकास हुआ है और नई खोजें भी हुई हैं। ऐतिहासिक सबूतों के परीक्षण के लिए तकनीक मौजूद है। इतिहास के लेखन में इनकी मदद ली जा सकती है।

भारत का इतिहास वैसे ही बहुत गौरवशाली है। भारत का प्राचीनकाल हर दृष्टि से दुनिया में अग्रणी रहा है। जरूरत इस बात की है कि इतिहास को प्रमाणित सबूतों के साथ लिखा जाये। ताकि उन पर कोई अंगुली न उठा सके। अगर इतिहास के नाम पर झूठ को सच बताया जाने लगेगा तो ऐसे इतिहास से भारत पूरी दुनिया में मजाक का कारण बन जायेगा। मनगढ़ंत बातों के लिए इतिहास में कोई जगह नहीं होनी चाहिए। यह देश का दुर्भाग्य ही होगा कि पुनर्लेखन के नाम पर मिथकों और इतिहास का घालमेल करके अगली पीढ़ी को पढ़ाया जाय। इतिहास को या तो जनता बदलती है या दुनिया के शक्तिशाली लोग बदलते हैं। ऐसी इतिहास से जुड़ी हुई चीजों पर बहस हो सकती है। हमारे देश में इतिहास को लेकर अलग अलग विचारधाराएं रही हैं। पर इसमें तथ्य को सामने रखकर बात की जाती रही है।

इतिहास के विषय में मुझे केवल इसलिए दिलचस्पी है कि इतिहास ने दुनिया को बडे-बडे खडहर दिये हैं, जंग के मैदान दिये हैं और सुनने को बढी दिलचस्प कहानियां दी है। जिस मैदान ने हिंदुस्तान के इतिहास का रूख मोड दिया था, हम लोग अपने अतीत का सम्मान करना नहीं जानते। जो भाला राजा पोरस ने सिकंदर महान पर फेंका था मगर राजा पोरस का निशाना चूक गया। अगर इस भाले का निशाना चूक न जाता तो आज हिंदुस्तान का इतिहास कुछ और ही होता। इतिहास मर्त्यशील मनुष्यों का कभी नहीं होता। जिनके द्वारा भगवत् लीला का स्मरण हो वे ही इतिहास के यथार्थ पात्र है।

इतिहास तथ्यों पर आधारित होना चाहिए, तभी वह विश्वसनीय माना जा सकता है। प्राचीन इतिहास लेखन के लिए पुरातत्व, शिलालेख, सिक्कों आदि का आधार लिया जाता है परंतु मध्ययुगीन व आधुनिक इतिहास के लिए तो कितनी ही संदर्भ सामग्री उपलब्ध है। मुगलकालीन इतिहास के लिए बाबरनामा, अकबरनामा से तथा राजपूतों के इतिहास के लिए कर्नल टाड द्वारा लिखे एनाल्स ऑफ राजस्थान से भरपूर जानकारी मिलती है। इसके बावजूद दिक्कत वहां आती है जब इतिहास लेखक अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से इतिहास की व्याख्या करता है।

भारत में इतनी विविधताएं हैं, इतने विरोधाभास हैं कि उनमें से असली भारत की पहचान करना आसान नहीं है। हर लेखक और हर शोधकर्ता का अपना अलग नजरिया है; हर एक की सोच का अलग तरीका है, हर एक की अलग मान्यतायें हैं, हर एक की अलग पूर्वाग्रह हैं। पुस्तक या लेख का साइज भी इस खोज में महत्वपूर्ण होता है। पुस्तक लिखनी होगी तो ज्यादा तथ्य जुटाने होंगे। लेख तो लम्बे होने पर भी उनके संक्षिप्त और सरसरा होने की ही अधिक संभावना रहती है। पुस्तक लिखने के लिए बहुत पढ़ना, गिनना और गुणना होगा, आंखों को खुला रखना होगा, कई बार यायावर बनना होगा।

भारत के बारे में पाठक की जिज्ञासा कभी खत्म नहीं हो सकती। लेखक चाहे भारतीय हों या विदेशी, उनमें से हर एक का दृष्टिकोण अलग होता है, उसकी दिलचस्पी अलग होती है। उनकी विचारधारा भी उसे प्रभावित करती है। उसका क्षेत्र, उसका राज्य, उसका जिला सभी लेखन को प्रभावित करते हैं। विकास की गति भी उसे प्रभावित करती है। पाठक को भी हर नयी पुस्तक या नये लेख में कुछ न कुछ सामग्री मिलती ही रहती है- कुछ अनुकूल कुछ प्रतिकूल। विदेशी की लिखी कोई भीपुस्तक पूर्णत: अनुकूल या पूर्णत: प्रतिकूल नहीं होती जब तक कि लेखक बहुत ज्यादा इकतरफा न हो। बहुत कम तथ्यों या घटनाओं का वर्णन निर्विवाद होता है। हर भारतीय को भी अपने देश की संस्कृति, विरासत, मनोविज्ञान, परंपरा को समझने के लिए तो अनेक पुस्तकों का पाठन जरूरी है ही, प्राचीन काल से लेकर आज तक की घटनाओं को समझने के लिए, इतिहास की धाराओं को जानने के लिए भी देशी-विदेशी विद्वानों द्वारा लिखी पुस्तकों का अध्ययन भी आवश्यक है। भारत एक अति प्राचीन देश है किन्तु इस देश में इतिहास लेखन की कोई परंपरा नहीं रही है। इस्लाम के आने के बाद ही भारत में इतिहास लेखन प्रारम्भ हुआ। विदेशियों के यात्रा वृत्तान्त भारतीय इतिहास और संस्कृति के प्रारम्भिक स्त्रोत हैं। किंवदन्तियां, लोककथायें, जातियों की गाथायें आदि पर आधारित अर्धसत्यों के कारण प्राचीन भारत के बारे में कुछ भी निश्चित रूप से कहना कई बार मुश्किल हो जाता है और गलत बातें प्रचारित हो जाती हैं।

प्राचीनतम सभ्यताओं में भारत की आर्य सभ्यता आज भी गरिमापूर्ण रूप में है। इस सभ्यता का इतिहास ४००० साल पुराना है। इसमें अनेक उतार-चढ़ाव, न जाने कितने जय-पराजय, कितने उत्थान-पतन, कितने योद्धाओं, कितने महान ऋषि-मुनि के ज्ञान, विद्वता, त्याग, कितने देवों, दैत्यों, दानवों, यक्ष-गंधर्व-किन्नर एवम् अप्सराओं और राजाओं और

राज्यों का इतिहास इसके गर्भ में छिपा पड़ा है। चाहे वह क्षेत्र भाषा का हो, साहित्य का हो, रीति-रिवाजों का हो, समाज के विकास का हो, धर्म का हो या सभ्यता-संस्कृति का हो, हमने तथ्यात्मक, तर्कपूर्ण एवम् वैज्ञानिक शोध का कोई प्रयास नहीं किया। हमारे सभी भारतीय वर्नाकुलर क्षेत्रीय भाषाओं के व्याकरण अंग्रेजों ने लिखे थे। मराठी भाषा का व्याकरण भी एक फ्रांसीसी विद्वान ने लिख था। जॉर्ज ग्रियर्सन ने पहली बार ग्यारह खंडों में हिन्दुस्तानी भाषाओं का इतिहास लिखा था। इतिहास में देखे तो सिन्धु घाटी सभ्यता की खोज भी अंग्रेजों ने की थी। अजन्ता, एलोरा तथा एलीफेन्टा गुफाओं की खोज भी अंग्रेजों ने की थी। हम अपनी संस्कृति को वसुधैव कुटुम्बकम का आधार भी मानते हैं। परन्तु इस महान संस्कृति की महानता के विषय में तथ्यात्मक, तर्कपूर्ण एवम् वैज्ञानिक जानकारी नहीं रखते। इस क्षेत्र में हमें वैज्ञानिक शोध व तर्कपूर्ण विवेचना के लिए अनेक विद्वानों और शोध करनेवालों की जरूरत है।

इतिहासकार ताराचंद के बारे में आरोप था कि उन्होंने मुगलों की बहुत प्रशंसा की है तथा हिंदू राजाओं को नीचा दिखाया है। वामपंथी इतिहासकार अपने तरीके से व्याख्या करते हैं जिनमें रोमिला थापर आदि का समावेश है। वैसे ईश्वरी प्रसाद का लिखा इतिहास प्रामाणिक माना जाता है। हिंदूवादी विचारधारा या संघ से प्रभावित इतिहासकार राष्ट्रीय नायकों को ऊंचा उठाने की सोच रखते हुए अपने तरीके से इतिहास लेखन करते हैं। पी.एन.ओक ने तो शाहजहां द्वारा बनाए गए ताजमहल को तेजो महालय नामक शिवमंदिर बताकर विवाद खड़ा कर दिया था और दावा किया था कि इसे राजपूत राजा ने बनाया था। फिलहाल सभी जानते हैं कि स्वाभिमानी महाराणा प्रताप ने मेवाड़ की आजादी के लिए बादशाह अकबर से अत्यंत वीरतापूर्वक युद्ध किया था।

हल्दीघाटी की लड़ाई इतिहास में मशहूर है। महाराणा प्रताप ने कभी अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की। उपलब्ध इतिहास में यही उल्लेख है कि अकबर की बहुत बड़ी सेना का नेतत्व उसका सेनापति राजा मानसिंह कर रहा था, जिसके मुकाबले महाराणा प्रताप की छोटी राजपूत सेना को सफलता नहीं मिल पाई थी। अब राजस्थान की बीजेपी सरकार ने हल्दीघाटी युद्ध का इतिहास बदल दिया है। इसके मुताबिक, महाराणा प्रताप ने १५७६ में हुई हल्दीघाटी की लड़ाई में अकबर को हराया था। यह जानकारी राजस्थान में १० वीं कक्षा के लिए तैयार की गई सोशल साइंस की नई किताब में दी। राजस्थान विद्यापीठ के इतिहास विभाग ने भी राष्ट्रीय दृष्टिकोण रखते हुए कुछ बदलाव किए हैं। फरवरी २०१७ में इस विश्वविद्यालय के प्रोफेसर और इतिहासकार डॉ. चंद्रशेखर शर्मा ने तथ्यों के साथ एक शोध प्रस्तुत किया था। जिसके आधार पर वसुंधरा राजे सरकार के ३ मंत्रियों ने एक प्रस्ताव का समर्थन किया, जिसमें इतिहास का प्रचलित कथन बदलने को कहा गया था। सरकार ने इस पर मुहर लगाते हुए बदलाव कर दिया। इससे सवाल उठता है कि क्या समय के साथ इतिहास बदल सकता है?

हर शहर का अपना इतिहास होता है और यह इतिहास केवल बड़ी-बड़ी इमारतों, व्यक्तियों या बड़ी घटनाओं से ही नहीं बनता है। इस इतिहास में आम जन भी होता है। उनके सुख-दु:ख, उनकी स्मृतियां, उनकी रुचियां भी शामिल होती है, जिन्हें अक्सर इतिहासकर हाशिए पर ढकेल देते हैं। ऐसे बड़े इतिहासकारों की पुस्तकों में दर्ज होती हैं। अतीत की वे बड़ी घटनाएं जिनसे इतिहास बनता बिगड़ता है। ऐसे व्यक्तित्व जो इतिहास को बनाते-बिगाड़ते हैं, लेकिन आम जनता इसके बाहर होती है। ऐसे आम जनता की स्मृतियों को झांकने का प्रयास किया है।

इतिहास में जितने भी अच्छे या बुरे नेता हुए, उनमें प्रभाव डालने की जबरदस्त क्षमता थी। अपने आकर्षक व्यक्तित्व से उन्होंने पूरा इतिहास ही बदल डाला। अपने विचारों को लोगों के समक्ष बड़े ही आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया। इस

कला में वे लोग महारथी थे। संवाद शैली प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण में काफी बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसमें भाषा, शब्दोंका चयन और बोलने का लहजा शामिल होता है। इसलिये अपने विचार और इरादे दृढ़निश्चय के साथ रखने चाहिए। महत्वपूर्ण यह नहीं है कि आप क्या कहना चाहते है महत्वपूर्ण तो यह ही क्या आपके कहने का तरीका कैसा है।

विश्व का इतिहास उन थोड़े से व्यक्तियों द्वारा बनाया गया है जिनके पास चरित्रबल का उत्कृष्ट भण्डार है। यों तो कोई योद्धा विजेता और चक्रवर्ती सम्राट बहुत हुए हैं परन्तु इतिहास के अपने हृदय में केवल उन्हीं व्यक्तियों को स्थान दिया है, जिन्होंने मानव, समाज एवं राष्ट्र के लिये प्रकाश-स्तम्भ का कार्य किया है।

जो लोग इतिहास का आह्वान करते हैं, इतिहास उनकी सुनवाई जरूर करेगा और उन्हें इतिहास का फैसला स्वीकार करना होगा। दुनिया भर के इतिहास में प्रत्येक महान और महत्वपूर्ण आंदोलन उत्साह की सफलता है। बगैर इसके आंदोलन खड़े ही नहीं हो सकते।

इतिहास बताता है कि जहां नैतिकता और अर्थशास्त्र के बीच संघर्ष होता है वहां जीत हमेशा अर्थशास्त्र की होती है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने लेख में लिखा है - भारत देश धन्य है जहां न्यायालय है, पर कोई अपराधी नहीं, कारागार नहीं, कोई बन्दी नहीं, घर में सम्पूर्ण समृद्धि है पर ताले नहीं। पश्चिमी देशों का मानस स्वीकार ही नहीं करता भारत भी उनकी ही दुनिया का हिस्सा है और जीवन-मरण के वो ही नियम वहां भी लागू होते है। जो खुद को आधुनिक कहनेवाले पश्चिम देश में यही कारण है कि पश्चिमी दुनिया भारत में परलोक ढूंढने और घड़ने की कोशिश में लगी है। जहां पर उनको हवा-पानी पर जीनेवाले हजारों साल के योगी ज्यादा मिलते है, ऐसे योगी जो बोलते नहीं मौन है जो सिर्फ वरदान और श्राप देते है, खुद को विज्ञान और तर्क के बल पर प्रकृति का विजेता और मनुष्य की किस्मत के निर्माता के रूप में देखने में मिलता है। आतुर पश्चिमी दुनिया भारत को अपने प्रतिपक्ष के रूप में गढ़ना चाहती है, उनकी कल्पनाओं मे भारत शाश्वत पूरब है- जहां विज्ञान नहीं धर्म और उसके भभूतों से निकलनेवाले चमत्कारों का राज है, जहां जीवन तर्कबुद्धि के सहारे नहीं भावनाओं के जोर पर चलता है। आज भी विकसित देश की कामनाओं में भी ऐसा भारत देश है जो अपनी नियति को खुद नहीं बेचता बल्कि जिसकी नियति आसमानी ताकतें तय करती है। विज्ञान से पैदा हुयी आक्रमकता और नास्तिकता से पैदा हुई अनास्था से आतुर पश्चिमी दुनिया का मानस शाश्वत पूरब के रूप में भारत को अपना आश्रय स्थान बनाना चाहता है। विज्ञान के तर्क पर चलनेवाले पश्चिमी देशों ने शांति और श्रद्धा का मार्ग खो दिया है वही पर भारत ने अध्यात्म पर चलने से जीवन मार्ग प्रशस्त किया है।

किसी भी व्यक्ति के व्यवहार में, उसके हर हावभाव में उसका पूरा इतिहास झलकता है। हमारा अतीत, हमारी मानसिकता, हमारे अनुभव, हमारे हावभाव सब चुन-चुनकर उभरते है। संस्कारों का निर्माण भी इसी प्रक्रिया से होता है।

एक समाज, देश या राष्ट्र में सभी प्रकार के नागरिक होते हैं। बहुत अच्छे-अच्छे, सामान्य बुरे और बहुत बुरे। अच्छे और आदर्श नागरिक देश को शक्ति सम्पत्र, समृद्ध, सुखी, शांत और संगठित बनाते हैं। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक सभी दृष्टियों से इन नागरिकों का बड़ा महत्व होता है।

जितनी इन आदर्श नागरिकों की संख्या, उतना ही देश भाग्यशाली। सर्वप्रथम एक आदर्श नागरिक बड़ा देशभक्त होता है। देशभक्ति का तात्पर्य है मातृभूमि व देश के लिए अटूट प्रेम, गहरा लगाव और समर्पण। लेकिन सभी नागरिक ऐसे नहीं हो सकते, न होते हैं। अनेक नागरिक राष्ट्रभक्त होने के बजाय देशद्रोही और धोखेबाज होते हैं। वे अपने निजी स्वार्थ के लिए कोई भी नीचा काम कर सकते हैं। ऐसे लोग समाज के लिए कलंक हैं। हमें इनसे सदा सावधान रहना चाहिये। ये

लोग मनुष्य के वेश में शैतान होते हैं, इसके विपरीत आदर्श नागरिक देवता स्वरूप और परम देशभक्त। युद्ध और शांति, दोनों ही स्थितियों में वे देशहित में लगे रहते हैं।

एक आदर्श नागरिक स्वेच्छा से अनुशासन का पालन करता है। वह देश के नियमों-उपनियमों का पूरी जिम्मेदारी से निर्वाह करता है। वह अधिकारियों की कानून और व्यवस्था बनाये रखने में सहायता करता है। वह कभी कोई ऐसा काम नहीं करता जो दूसरों के अहित में हो, देश और समाज को हानि पहुंचानेवाला हो।

वह कभी करों की चोरी नहीं करता तथा अपनी सभी-जिम्मेदारियां पूरी निष्ठा से निभाता है। इसके विपरीत बुरे नागरिक करों की चोरी करते हैं, झूठ बोलते हैं, अधिकारियों के साथ सहयोग नहीं करते और संकट के समय आगे नहीं आते।

एक आदर्श नागरिक अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों दोनों के प्रति सचेत होता है। परन्तु अधिकार से अधिक वह अपने कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक होता है। एक आदर्श नागरिक, गृहस्थी, सरकारी कर्मचारी, व्यवसायी आदि किसी भी स्थिति में रहते हुए अपने कर्तव्यों का ध्यान रखता है। उनका जितना अच्छी तरह से हो सके निर्वाह करता है। वह कभी अपने निजी और संकीर्ण स्वार्थ की नहीं सोचता। वह न कभी कानून को अपने हाथ में लेता और न दूसरों को लेने देता है। अन्य नागरिक भी उससे प्रेरणा और निर्देश प्राप्त कर उस जैसा बनने का प्रयास करते हैं। एक आदर्श नागरिक चुनाव में भाग लेकन अपने मत का उचित प्रयोग करता है। वह निडर और पक्षपात रहित होकर अपना मत उचित व्यक्ति के पक्ष में डालता है। वह अपने मत का मूल्य भलि-भांति समझता है। उसका प्रत्येक कार्य राष्ट्रहित और समाज कल्याण की भावना से प्रेरित होता है।

वह दूसरों के साथ सहयोग करता है जिससे कि समाज और अच्छा, संस्कृत, समृद्ध और सुखी बन सके। परहित में ही वह अपना हित देखता है। एक आदर्श नागरिक सहनशील, आत्म-संयमी, सत्य पालनवाला, परिश्रमी और स्वावलम्बी होता है। वह किसी पर भार नहीं होता। अपने पैरों पर खड़ा रहकर अपने परिवार का भरण-पोषण करता है और देश की समृद्धि में सहयोग देता है।

देश के लिए, राष्ट्रहित के लिए वे अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करते। गांधीजी, नेहरू, सुभाष, लाला लाजपतराय, सरदार भगतसिंह आदि आदर्श नागरिकों के शिरोमणि थे। वे देश के लिए जिए और देश के लिए मर गये। उनके लिए राष्ट्रभक्ति से और अधिक मूल्यवान कुछ भी नहीं था। उन्हीं के कारण आज हम स्वतंत्र हैं।

किसी बात को इसलिए मत मानो कि ऐसा सदियों से होता आया है। इसलिए मत मानो कि किसी धर्म ग्रंथ में लिखा हुआ है या ज्यादातर लोग मानते हैं। किसी आचार्य, साधु-संत की बात को आंख बंद कर मत मान लेना। किसी बात को सिर्फ इसलिए मत मान लेना कि वह तुमसे कोई बड़ा कह रहा हो बल्कि हर बात को तर्क, विवेक व चिंतन की कसौटी पर कस कर तौलना और यदि वह बात स्वयं, समाज व मानव कल्याण के हित में लगे तो ही मानना। इससे पुनर्जन्म का सहारा लेकर जो महिलाओं या पिछड़ों को बराबर का स्थान न देने के लिए पिछले जीवन को कारण बताते हैं, वह मान्यता भी ध्वस्त होती है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा १४ अक्टूबर, १९५६ को लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म के ग्रहण से भारत की भूमि पर इसका पुनरूत्थान शुरू हुआ। लगभग हजार वर्ष तक यह धर्म यहां से विलुप्त हो गया था लेकिन दुनिया के दूसरे देशों में फैला। जिन देशों में इसका फैलाव हुआ, वहां के समाज में सम्पन्नता, सुख और शांति देखने लायक है।

आज देश में जातिवाद को जलाने की बजाय सींचा जा रहा है। तमाम आधुनिक जीवन शैली के बावजूद धार्मिक

अंधविश्वास, कर्मकांड व पाखंड का अंधेरा गहराता जा रहा है। हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार के रूप में नैतिकता का पतन हो रहा है। तर्क, चिंतन, विवेक व वैज्ञानिक सोच का गला घोंटा जा रहा है। ऐसे दौर में बुद्ध के चिंतन व दर्शन की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है।

हमें नाज है गोखले और तिलक पर, हमें नाज है शिवाजी और राणाप्रताप पर। हमें नाज है झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई पर। हमारे लिए ये तमाम विभूतियां आदर्श हैं। इन सभी ने प्रांतीयता व जात पात को नहीं बल्कि राष्ट्र व धर्म को सम्मान दिया था। हमें विवेकानंद, संत ज्ञानेश्वर, स्वामी रामदास, स्वामी समर्थ तुकाराम, नामदेव कबीर, तुलसीदास, सूरदास पर नाज है। काश, जनता इतिहास से सबक लेती है। जरूरी है अपनी महान सभ्यता और संस्कृति को मनन करने की।

इतिहास को इतिहास ही रहने दे विचारधारा के आधार पर इसे न बदलें। यही बात ज्ञान की हर शाखा पर लागू होनी चाहिए। अचानक एक दिन आप यह नहीं कह सकते कि इतिहास में जो कुछ लिखा गया है, वह गलत है, इसलिए हम अपना अलग इतिहास लिखेंगे। इतिहास ऐसा होना चाहिए, जिस पर कमोबेश सबकी स्वीकृति हो। वास्तविक ज्ञान वह है, जिसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृति प्राप्त हो। दूसरे शब्दों में कहें, तो ज्ञान सार्वभौमिक होना चाहिए। यही वास्तविक ज्ञान का लक्षण भी है। मगर अपने देश में ऐसा नहीं होता। हमारे यहां जब सरकार बदलती है, तो सांविधानिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और बौद्धिक संगठनों के प्रमुख बदल दिए जाते हैं और ज्यादातर इनमें ऐसे लोगों की नियुक्ति होती है, जो सत्तारूढ़ दल की विचारधारा की तरफ झुकाव रखते हों। इसलिये सच्चाई यही है कि इतिहास का लेखन तथ्यों के आधार पर होना चाहिए। भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद पर मार्क्सवादी इतिहासकारों का वर्चस्व रहा है। मार्क्सवादियों ने जो इतिहास लिखा, वह बौद्धिक विश्लेषण पर आधारित था। ऐसा नहीं है कि उनके इतिहास लेखन में कमियां नहीं थीं। कई बिंदुओं पर उनके इतिहास लेखन से मेरी भी आपत्ति है, मतभेद है, मगर उन कमियों का विरोध जताने और उन्हें दूर करने की भी एक इतिहाससम्मत प्रकिया होनी चाहिए। केवल अपनी विचारधारा के व्यक्ति को सांस्कृतिक संस्थानों का प्रमुख बना देने भर से यह कमी दूर नहीं होगी।

भारत की आजादी की लड़ाई में यूं तो लाखों करोड़ों हिंदुस्तानियों ने भाग लिया लेकिन कुछ ऐसे सपूत भी थे जो इस आजादी की लड़ाई के प्रतीक बनकर उभरे। राष्ट्रधर्म की खातिर क्रांति की पहली गोली चलानेवाले को भले ही तोपों से उड़ा दिया गया लेकिन जो चिंगारी उन्होंने लगाई उस आग में तपकर निकले स्वाधीनता सेनानियों ने अपने अहिंसक आंदोलन से अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया। आजादी की महागाथा में उन युवा महानायकों को भी याद रखा जाएगा जिन्होंने बहरे कानों को सुनाने के लिए धमाके किए तो किसी ने देश के लिए आजाद शहीद होना चुना। खून के बदले आजादी के नारों के साथ सेना का गठन कर शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य को चुनौती देने का साहस करनेवाले वीरों और भारत को खंडित होने से बचानेवाले फौलादी इरादों से ही इस स्वतंत्र भारत की नींव पड़ी है।

मैंने इस ग्रंथ में प्रसिद्ध क्रांतिकारी, उद्योगपति, क्रीड़ाक्षेत्र में महारत हासिल की तथा प्रसिद्ध साहित्यकार कवि, लेखकों वैज्ञानिक, कलाकार, आविष्कारक, प्रशासक, विशिष्ट उद्योगपति जिन्होंने आज के भारत का निर्माण किया और अपनी शहादतें व सेवाएं दी। उनकी उपलब्धियों का विवरण किया है।

यह ग्रंथ मेरे अग्रज श्री मनोहरलाल जी की पुण्यस्मृति में अर्पित किया है।

- महेन्द्रकुमार पाटोदिया

महान भारत और आजादी
(अतीत का सुनहरा अध्याय)

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं, वो हृदय नहीं पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

पुराने समय में जब पूरी दुनिया के लोग भारत आने के लिए उत्सुक रहा करते थे। यहां आर्य वर्ग के लोग मध्य यूरोप से आए और भारत में ही बस गए। उनके बाद मुगल आए और वे भी भारत में स्थायी रूप से बस गए। चंगेजखान, एक मंगोलियाई था जिसने भारत पर कई बार आक्रमण किया और लूट पाट की। अलेक्जेंडर महान भी भारत पर विजय पाने के लिए आया किन्तु पोरस के साथ युद्ध में पराजित होकर वापस चला गया। इ.पू.३२६वें वर्ष में सिकंदर ने भारत पर आक्रमण किया। सिन्ध तथा पंजाब की अनेक गण प्रधान रियासतों की स्वाधीनता का अपहनरण कर, उसने मौर्य वंश के संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया। महापद्म नन्द चन्द्रगुप्त मौर्य के पूर्वी साम्राज्य का पिछला शासक था, उस साम्राज्य की नींव उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत में दृढ़ करनेवाला सिकंदर ही था। मौर्य सत्ता की स्थापना के साथ (३२१ ई.पू.) भारतीय इतिहास में एक नवीन युग का प्रवर्तन होता हैं क्योंकि इस युग में भारतवर्ष पहली बार राजनीतिक दृष्टि से एक अखण्ड एवं सुसंघटित शासन तन्त्र के अंतर्गत ऐक्यबद्ध हुआ था। सिकन्दर के वापस लौटने पर चन्द्रगुप्त ने, राजनीति के प्रखर पण्डित चाणक्य की सहायता से, मगध में राज्यक्रांति घटित की और पाटलिपुत्र के सिंहासन को स्वाय: किया। उसने अपने अदम्य पौरुष से मौर्य साम्राज्य की उत्तरी एवं उत्तरी पश्चिमी सीमाएं हिन्दूकुश तथा वर्तमान पारस की सरहद तक तथा दक्षिण में नर्मदा विन्ध्यश्रेणी को लाँघकर, प्रायद्वीप के भीतर मैसूर तक पहुंचा दी थीं। इस प्रकार, कलिंग एवं कश्मीर को छोड़कर, समस्त भारत तथा समस्त आधुनिक अफगानिस्तान और बलूचिस्तान उसके साम्राज्य में समाविष्ट थे।

मौर्य वंश के संस्थापक चन्द्रगुप्त को भारत के पहले अहम राजा के रूप में जाना जाता है। चाणक्य रूपी महान रणनीतिकार को गुरु के रूप में पाने के बाद उन्होंने अपना अभियान शुरू किया और २० वर्ष की अल्प आयु में ही युद्ध जीतने शुरू कर दिए थे। सिकंदर के भारत पर आक्रमण का विरोध करने में वह पूरी तरह सक्षम थे।

अजातशत्रु मगध पर राज्य करते थे और वह हर्यंका वंश से थे। उनके पिता सम्राट बिम्बिसार थे। अजातशत्रु ने अपने पिता को बंदी बनाकर सत्ता हासिल कर ली। अजातशत्रु बुद्ध और महावीर के समय में हुए और उन्होंने उन्हें पूर्ण रूप से संरक्षण दियां अजातशत्रु ने वज्जी को हराकर वैशाली जैसे बड़े राज्य पर नियंत्रण प्राप्त किया। अजातशत्रु ने अपने भाई जो की खोसला राज्य के राजा थे उन्हें हराकर खोसला पर भी अधिपत्य हासिल किया। अजातशत्रु के समय में मगध मध्य भारत का एक बहुत ही शक्तिशाली राज्य था।

सम्राट अशोक महान एक ऐसे शासक थे जिनका राज्य अफगानिस्तान से लेकर बर्मा तक और कश्मीर से लेकर तमिलनाडु तक फैला हुआ था। उनकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। अशोक को भारत के इतिहास में सबसे शक्तिशाली राजा माना जाता है। अशोक मौर्य वंश के तीसरे शासक थे अशोक अपने शुरुआती दिनों में बहुत ही कठोर शासक थे इसीलिए उन्हें चंड अशोक कहा जाता था। परन्तु कलिंग युद्ध में लाखों लोगों की मृत्यु को देखकर उनका हृदय परिवर्तन हो गया और उन्होंने विस्तार का अपना अभियान छोड़ दिया।

अशोक ने अपने शासनकाल में एक प्रदेश कलिंग को विजित किया जो बंगाल की खाड़ी के तट पर वैतरणी तथा लांगुलीय नदियों के बीच के कृष्णा और गोदावरी तक व्याप्त उसके साम्रज्ञज्य के पूर्वी क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण अंश माना जाता था। कलिंग विजय मगध के इतिहास में एक महान घटना थी क्योंकि उसके साथ प्रादेशिक विजय तथा बलपूर्वक राज्यविस्तार का युग समाप्त हो गया और उसके स्थान में एक नवीन युग का समारंभ हुआ जिसमें शान्ति, सामाजिक उन्नति तथा धर्मप्रचार का व्यापक रूप से प्रसार हुआ। लेकिन, उसके साथ ही, राजनीतिक संज्ञाशून्यता तथा सम्भवत: सैनिक दुर्बलता भी व्याप्त हो गई जिसके परिणामस्वरूप भारतवर्ष की राजनीतिक सुदृढ़ता आनेवाली शताब्दियों में अप्रतिहत न रह सकी।

अशोक की मृत्यु (२३२ ई. पू.) के बाद मौर्य साम्राज्य का विघटन सद्य: प्रारम्भ हो गया। उसके उत्तराधिकारियों में अन्तिम राजा बृहद्रथ अपने ही सेनापति पुष्यमित्र शुङ्ग के द्वार मार डाला गया, जिसने मगध में एक नए ब्राह्मण राजवंश की (१८४ ई. पू.) स्थापना की। मौर्य साम्राज्य के पतन के कारणों में मुख्य तो यही था कि अशोक के प्रभावशाली व्यक्तित्व का विलोप हो जाने के बाद केन्द्रीय शासन-सत्ता दिनानुदिन दुर्बल होती गई जिससे राज्य-सूत्र विश्रृंखल हो गए। लेकिन, एक अन्य सबल कारण सिद्ध हुआ, मौर्य शासकों द्वारा यज्ञों का विरोध जो ब्राह्मणधर्म के आवश्यक अंग माने जाते थे। मौर्य शासन के अन्तिम दिनों में उसके विरुद्ध तीव्र ब्राह्मण प्रतिक्रिया घटित हुई। इस प्रतिक्रिया को पुष्यमित्र के नेतृत्व से बड़ा बल मिला जो स्वयं ब्राह्मण था।

पुष्यमित्र ने मौर्यों के विश्रृंखलित साम्राज्य तथा ब्राह्मणधर्म एवं संस्कृति की रक्षा के उद्देश्य से जिस प्रबल राज्यक्रांति का सूत्रपात किया, उससे वह लोकमानस को प्रसन्न एवं परितृप्त करने में यथेष्ट सफल रहा। शुङ्गवंश में अग्निमित्र तथा वसुमित्र को मिलाकर कुल दश राजा हुए जिनमें अन्तिम राजा देवभूति अपने अमात्य वसुदेव काण्वायन द्वारा उत्क्षिप्त कर दिया गया जिसने कण्ववंश की स्थापना की। कण्व नरेशों ने लगभग ७२ ई.पू. से २७ या २८ ई.पू. तक राज्य किया। मौर्य साम्राज्य के विघटन की भूमिका में यवन, शक इत्यादि विदेशी जातियों को भारतभूमि पर आक्रमण एवं अधिकार करने का सुवर्णावसर मिल गया और विभिन्न प्रदेशों में विदेशी नरेशों ने लगभग दो सौ वर्षों तक अपनी शासन-सत्ता स्थापित रखी। इन आक्रान्ताओं में यवन, शक, हूण, पह्लव तथा कुषाण प्रसिद्ध हैं। ग्रीक सत्ता भारत के सिंध, पंजाब इत्यादि उत्तरी पश्चिमी प्रदेशों पर, सिकन्दर की मृत्यु के बाद लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक बनी रही। सिकन्दर के आक्रमण के फलस्वरूप जल एवं स्थल के चार स्पष्ट मार्ग खुल गए थे। जिससे भारत और पश्चिम के देशों में पूर्वापेक्षा अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया। यूनानी सम्पर्क से सांस्कृतिक प्रभावों का जनन अवश्य हुआ।

भारत, चीन तथा रोमन साम्राज्य के बीच वाणिज्य व्यवसाय की अतिशय वृद्धि हुई। भारत रेशम, अन्न तथा मसाले का विक्रमय करने लगा और बदले में सोना और चांदी, विशेषत: रोम से खरीदने लगा। कुषाणों में सबसे प्रसिद्ध कनिष्क था। जिसने लगभग ७८ ई. से १२३ ई. तक राज्य किया। इसके सिक्के काबुल से लेकर उत्तर प्रदेश के गाजीपुर तक मिले हैं। इसने पाटलिपुत्र पर आक्रमण किया और वहाँ के प्रसिद्ध पण्डित अश्वघोष को पकड़कर अपनी राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) ले गया। विजयों के द्वारा भारत में कनिष्क का साम्राज्य उत्तर में कश्मीर तथा पश्चिम में सिन्धु की घाटियों से लेकर दक्षिण में विन्ध्यमेखला तथा बिहार तक फैल गया। कनिष्क की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उसने भारत को स्वदेश मान लिया था और उसी भाव से शासन करता रहा। मौर्य शासकों का प्रधान धर्म बौद्धधर्म ही था। अशोक ने यह धर्म अंगीकार कर, इसके व्यापक प्रचार के लिए अनेक प्रयत्न किए। अशोक के उत्तराधिकारी मौर्य नरेशों ने ब्राह्मणधर्म

का जो खुलकर विरोध किया था। मौर्यों की नीति से ब्राह्मणधर्म के मूलाधारों पर प्रहार तो हो ही रहा था, इसी समय यवनों एवं शकों ने भारत में प्रवेश करना आरम्भ कर दिया था और उसके साथ ही विदेशी रीति प्रथाएँ फैलने लग गई थीं। हिन्दूधर्म एवं संस्कृति को इस प्रकार भीतर और बाहर दोनों ओर से संकटों का सामना करना पड़ रहा था। मौर्यों की शासन पद्धति में बरती जानेवाली दुर्बल बौद्धों की शांति नीति से भारत की रक्षा विदेशी आक्रमणों से नहीं हो सकती थी और इस प्रकार उसकी संस्कृति एवं धर्म के भी लोप हो जाने की आशंका बलवती हो उठी थी। अतएवं, ब्राह्मण तंत्र के अधिनायक पुष्यमित्र द्वारा राज्यसत्ता ग्रहण करने पर, यह आवश्यक हो गया कि बौद्धों को संत्रस्त अथवा उध्वस्त कर ब्राह्मणधर्म का सशक्त पुनरुद्धार किया जाय जिससे परम्परागत संस्कृति एवं देश दोनों की रक्षा हो सके।

सिकंदर ने अपने विजयाभियानों से भारतीय और यूनानी कला एवं संस्कृति में घनिष्ठ सम्पर्क के द्वार उद्घाटित कर दिए थे। कनिष्क के राज्यकाल में कला की सुन्दर शैलियों का उत्कर्ष हुआ। सारनाथ, मथुरा, अमरावती एवं गन्धार, इन चार केंद्रों में मूर्ति, स्थापत्य तथा तक्षण कलाओं का अपनी विशिष्टताओं सहित अपूर्व विकास हुआ। अमरावती से प्राप्त पाषाण-वेष्टनियों पर उत्कीर्ण चित्रों की अनुपम कारीगरी शिल्प का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। पेशावर में बुद्ध का धातु प्रासाद मुख्यत: लकड़ी का बना हुआ था जिसकी ऊंचाई ४०० फीट थी। कनिष्क के समय में निर्मित एक मस्तकरहित विशाल मूर्ति तथा एक दूसरी मस्तक रहित बुद्ध प्रतिमा क्रमश: सारनाथ और कौशाम्बी में पाई गयी है। उसके शासनकाल में बहुत से बौद्ध संघाराम, स्तूप और प्रतिमाएँ निर्मित हुईं जिन पर कला की पुरानी यूनानी शैली का प्रभाव पड़ा है। हेन सांग नामक एक चीनी नागरिक यहां ज्ञान की तलाश में आया और उसने नालंदा तथा तक्षशिला विश्वविद्यालयों में भ्रमण किया जो प्राचीन भारतीय विश्वविद्यालय हैं। इसने अपने लेख में भारत का विस्तृत वर्णन किया है।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के राज्यकाल में चीनी यात्री फाहियान भारत आया। उसने गुप्त शासन की रीति-नीति तथा भारतीय जनवर्ग के जीवन का जो वर्णन किया है, उससे चन्द्रगुप्त की धार्मिक सहिष्णुता, प्रजा के सुखमय जीवन तथा शान्ति सुरक्षा के अखण्ड राज्य का परिचय मिलता है। सात वर्ष तक भारत भ्रमण करने पर भी, राज्यमार्गों पर उसके साथ किसी प्रकार का अत्याचार नहीं हुआ। इससे सिद्ध होता है कि अपराधों की घटनाएँ प्राय: नहीं घटती थीं और राज्य में संचार एकदम सुरक्षित था। इस काल में ज्योतिष एवं गणित शास्त्रों का अभूतपूर्व विकास हुआ। यज्ञादि के विधान के लिए शुभ मुहूर्त खोजे जाने के कारण, नभोमंडल के ग्रह नक्षत्र इत्यादि का श्रमसाध्य अध्ययन हुआ तथा पूजाओं के पुनरुद्धार के कारण जिनमें विभिन्न आकृतियों की वेदियाँ और यूप निर्मित होते थे, रेखागणित शास्त्र का अच्छा विकास हुआ। आर्यभट्ट जैसा गणितज्ञ तथा वराहमिहिर जैसा ज्योतिर्विद इसी युग की प्रसूति हैं। उपयोगी एवं ललित कलाओं का भी गुप्तों की छत्रछाया में अपूर्व उत्कर्ष हुआ। समुद्रगुप्त ने संगीत को विशेष प्रोत्साहन दिया। इसी प्रकार स्थापत्य, भास्कर्य एवं चित्रकला, नृत्यकला का भी व्यापक प्रसार हुआ। इसी काल में अजन्ता की सर्वोत्तम गुफाएँ- सोलहवीं, सत्रहवीं और उन्नीसवीं निर्मित हुईं। इन गुफाओं में ललित भित्तिचित्र मानवीय अन्तर्दृष्टि तथा सूक्ष्म शिल्प के अनन्य उदाहरण हैं। ब्राह्मण धर्म के पुनरुत्थान का प्रकाशन अनेक ब्राह्मण मंदिरों के निर्माण में हुआ। मेहरौली के लौहस्तंभ जिस पर अद्यापि जंग नहीं लगी तथा नालन्दा में पाई गई बहुसंख्यक एवं विशाल तांबे की मूर्तियों से गुप्तकालीन धातुर्विज्ञान के प्रकर्ष का विद्योतन होता है। चित्ररचना, स्थापत्य, संगीत, नृत्य, नाट्य, उद्यान, हीरक रचना इत्यादि सम्पूर्ण कलाएँ, जो महान वैभवशाली राजधानियों की आवश्यकताओं की परितृप्ति से सहायक हो सकती थीं, भव्य प्रोत्साहन प्राप्त कर, चूड़ान्त उत्कर्ष को पहुंच गई। नैतिकता अथवा सदाचार के आदर्श पहले की अपेक्षा नीचे स्खलित हो गए थे, स्त्री और

पुरुष दोनों उन्मुक्त भाव से वारूणी का सेवन करते थे।

तेरहवीं सदी तक भारत सोने की चिड़िया नाम का देश जाना जाता था और धन-धान्य और ऐश्वर्य से परिपूर्ण था। कुछ समय बाद बाहरी ताकतों ने इसपर लूटपाट आरंभ की, गुलाम वंश का राज्य हुआ। इसी समय कुतुबुद्दीन ऐबक, अल्तमस और रजिया सुल्ताना का राज्य स्थापित हुआ, पर कमजोर गुलाम राजाओं की वजह से यह राज्य बहुत लम्बे समय तक नहीं चला और राजपूतों का राज्य शुरू हो गया। पृथ्वीराज चौहान और जयचंद्र इस समय के प्रसिद्ध राजाओं में से थे।

जयचंद्र (१९७०-९४ ई.) कन्नौज के राज्य की देख रेख का उत्तराधिकारी उसके पिता विजयचंद्र ने अपने जीवन काल में ही बना दिया था। विजयचंद्र की मृत्यु के बाद वह कन्नौज का विधिवत राजा हुआ। जयचंद्र पृथ्वीराज चौहान की पत्नी संयोगिता का पिता था। जयचंद्र बड़ा वीर, प्रतापी और विद्वानों का आश्रयदाता था। उसने अपनी वीरता और बुद्धिमत्ता से कन्नौज राज्य का काफी विस्तार किया था। पृथ्वीराज रासो के अनुसार जयचंद्र दिल्ली के राजा अनंगपाल की पुत्री से उत्पन्न हुआ था। जयचंद्र द्वारा रचित रंभामंजरी नाटिका से ज्ञात होता है कि इसने चंदेल राजा मदनवर्मदेव को पराजित किया। इस नाटिका तथा रासों से यह भी पता चलता है कि जयचंद्र शहाबुद्दीन गोरी को कई बार पराजित कर उसे भारत से भगा दिया। मुसलमान लेखकों के विवरणों से ज्ञात होता है कि जयचंद्र के समय में गाहडवाल साम्राज्य बहुत विस्तृत हो गया। इब्न असीर नाम लेखक ने तो उसके राज्य का विस्तार चीन साम्राज्य की सीमा से लेकर मालवा तक लिखा है। पूर्व में बंगाल के सेन राजाओं से जयचंद्र का युद्ध एक दीर्घकाल तक जारी रहा। गहड़वाल वंश के अंतिम शासक जयचंद को सेन नरेश लक्ष्मण सेन ने एक युद्ध में परास्त कर दिया। दिल्ली पर अधिकार को लेकर हुए संघर्ष में उसे चौहानों से पराजित होना पड़ा। दिल्ली तथा अजमेर का चौहान नरेश पृथ्वीराज तृतीय उसका समकालीन था। यह शैव धर्म का अनुयायी था। पुष्कर तीर्थ में उसने वाराह मंदिर का निर्माण करवाया था।

कनौज की उन्नति- जयचंद्र के शासन-काल में बनारास और कनौज की बड़ी उन्नति हुई। कन्नौज, असनी (जिला फतेहपुर) तथा बनारस में जयचंद्र के द्वारा मजबूत किले बनवाये गये। इसकी सेना बहुत बड़ी थी, जिसका लोहा सभी मानते थे। गोविंदचंद्र की तरह जयचंद्र भी विद्वानों का आश्रयदाता था। प्रसिद्ध नैषधमहाकाव्य के रचयिता श्रीहर्ष जयचंद्र की राजसभा में रहते थे। उन्होंने कान्यकुब्ज सम्राट के द्वारा सम्मान-प्राप्ति का उल्लेख अपने महाकाव्य के अन्त में किया है। जयचंद्र के द्वारा राजसूय यज्ञ करने का भी पता चलता है। अंत में वह मुसलमान आक्रमणकारी मुहम्मद गोरी से पराजित होकर मारा गया था। उसकी मृत्यु सं. १२५१ वि. में हुई थी।

मुसलमानों द्वारा उत्तर भारत की विजय- परन्तु भारत के दुर्भाग्य से तत्कालीन प्रमुख शक्तियों में एकता न थी। गाहडवाल, चाहमान, चन्देल, चालुक्य तथा सेन एक-दूसरे के शत्रु थे। जयचंद्र ने सेन वंश के साथ लंबी लड़ाई कर अपनी शक्ति को कमजोर कर लिया। तत्कालीन चाहमान शासक पृथ्वीराज से उसकी घोर शत्रुता थी। इधर चंदेलों और चाहमानों के बीच अनबन थी। ११२० ई. में जबकि मुहम्मद गोरी भारत विजय की आकांक्षा से पंजाब में बढ़ता चला आ रहा था, पृथ्वीराज ने चंदेल शासक परमार्दिदेव पर चढ़ाई कर उसके राज्य को तहस-नहस कर डाला। उसके बाद उसने चालुक्यराज भीम से भी युद्ध ठान दिया।

युद्ध स्थल चंदवार- जिस स्थल पर जयचंद्र और मुहम्मद गोरी की सेनाओं में वह निर्णायक युद्ध हुआ था, उसे चंद्रवार कहा गया है। यह एक ऐतिहासिक स्थल है, जो अब आगरा जिला में फीरोजाबाद के निकट एक छोटे गांव के रूप में स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि उसे चौहान राजा चंद्रसेन ने ११वीं शती बें बसाया था। उसे पहले चंदवाड़ा कहा जाता

था, बाद में वह चंदवार कहा जाने लगा। चंद्रसेन के पुत्र चंद्रपाल के शासनकाल में महमूद गजनवी ने वहां आक्रमण किया था, किंतु उसे सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। बाद में मुहम्मद गोरी की सेना विजयी हुई थी। चंदवार के राजाओं ने यहां पर एक दुर्ग बनवाया था और भवनों एवं मंदिरों का निर्माण कराया था। इस स्थान के चारों ओर कई मीलों तक इसके ध्वंसावशेष दिखलाई देते थे।

जयचंद्र की पराजय और वीर-गति- मुहम्मद गोरी द्वारा पृथ्वीराज चौहान के पराजित होने से मुसलमानों का आधिपत्य पंजाब से आगे दिल्ली के बड़े राज्य तक हो गया था। उस विशाल भू-भाग पर अपना अधिकार स्थिर रखने के लिए गोरी ने अपने सेनानायक कुतुबुद्दीन ऐबक को वहां का शासक नियुक्त किया। उसके बाद उसने कन्नौज के विरुद्ध अपना अभियान आरंभ किया। कन्नौज का राजा जयचंद्र उस काल में सबसे शक्तिशाली हिन्दू नरेश था, किंतु उसकी शक्ति भी बंगाल के सेन राजाओं से निरंतर युद्ध करने से क्षीण हो गई थी।

फिर भी उसने बड़ी वीरता से गोरी की सेना का सामना किया, किंतु दुर्भाग्य से उसे भी संवत १२५१ में पराजित होना पड़ा था। जयचंद्र की सेना ने शत्रु पर भयंकर प्रहार किये। गोरी घुटने टेकने ही वाला था, कि उसके एक सैनिक का बाण राजा की आंख में आकर लगा, जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। इस दुर्घटना से जयचंद्र की सेना में घबड़ाहट फैल गई और वह हार गई। भाग्यवश गोरी जीत गया। वह युद्ध मुसलमानों के लिए ऐतिहासिक महत्व का सिद्ध हुआ, क्योंकि उसके पश्चात ही भारत में मुसलमानी राज्य की स्थापना हो सकी थी।

संयोगिता कन्नौज के महाराज जयचन्द्र की पुत्री थी। जयचन्द्र ने संयोगिता के विवाह हेतु स्वयंवर का आयोजन किया था, किंतु पृथ्वीराज चौहान से शत्रुता के कारण उसने उसे स्वयंवर का निमंत्रण नहीं भेजा। जब राजकुमारी संयोगिता के स्वयंवर का निमंत्रण नहीं भेजा। जब राजकुमार संयोगिता के स्वयंवर का आयोजन किया गया, तब पृथ्वीराज चौहान के अपमान के लिए महल में दरबान के स्थान पर पृथ्वीराज की प्रतिमा लगाई गई। स्वयंवर में पहुंचकर पृथ्वीराज चौहान राजकुमारी संयोगिता का हरण कर ले जाते हैं। इस घटना से दोनों राजाओं में इतनी अधिक शत्रुता पैदा हो गई कि जयचन्द्र ने मुस्लिम आक्रमणकारी मुहम्मद गोरी से हाथ मिलाकर उसे पृथ्वीराज चौहान पर हमला करने का निमंत्रण दिया ११९२ ई. में चन्दावर के युद्ध में तुर्क विजेता मुहम्मद गोरी ने जयचन्द्र को भी हराया और मार डाला।

पृथ्वीराज और संयोगिता की प्रेमकथा- पृथ्वीराज चौहान और संयोगिता की प्रेमकथा राजस्थान के इतिहास में स्वर्ण अंकित है। वीर राजपूत जवान पृथ्वीराज चौहान को उनके नाना ने गोद लिया था। वर्षों दिल्ली का शासन सुचारू रूप से चलानेवाले पृथ्वीराज को कन्नौज के महाराज जयचंद की पुत्री संयोगिता भा गई। पहली ही नजर में संयोगिता ने भी अपना सर्वस्व पृथ्वीराज को दे दिया, परन्तु दोनों का मिलन इतना सहज न था। महाराज जयचंद्र और पृथ्वीराज चौहान में कट्टर दुश्मनी थी। राजकुमारी संयोगिता का स्वयंवर आयोजित किया गया, ठीक वक्त पर पहुंचकर संयोगिता की सहमति से महाराज पृथ्वीराज उसका अपहरण करते हैं और मीलों का सफर एक ही घोड़े पर तय कर दोनों अपनी राजधानी पहुंचकर विवाह करते हैं। जयचंद्र के सिपाही बाल भी बांका नहीं कर पाते। इस अपमान का बदला लेने के लिए जयचंद्र ने मुहम्मद गोरी से हाथ मिलाता है तथा उसे पृथ्वीराज पर आक्रमण का न्योता देता है। कहते हैं पृथ्वीराज ने १७ बार मुहम्मद गोरी को परास्त किया तथा दरियादिल होकर छोड़ दिया। १८वीं बार धोखे से मुहम्मद गोरी ने पृथ्वीराज के साथ अत्यन्त ही बुरा सलूक किया गया। उनकी आंखें गरम सलाखों से जला दी गईं। अंत में पृथ्वीराज के अभिन्न सखा चंदबरदाई ने योजना बनाई। पृथ्वीराज चौहान शब्द भेदी बाण छोड़ने में माहिर थे। चंदबरदाई ने गोरी तक इस कला के

प्रदर्शन की बात पहुंचाई। गोरी ने मंजूरी दे दी। **चार बांस, चौबीस, अंगुल अष्टप्रमाण। मार मार मोटे तवे, मत चूको चौहान।** प्रदर्शन के दौरान गोरी के शाबाश लफ्ज के उद्घोष के साथ ही भरी महफिल में अंधे पृथ्वीराज चौहान ने गोरी को शब्दभेदी बाण से मार गिराया तथा इसके पश्चात दुश्मन के हाथ दुर्गति से बचने के लिए दोनों ने एक-दूसरे का वध कर दिया। अमर प्रेमिका संयोगिता को जब इसकी जानकारी मिली तो वह भी वीरांगना की भांति सती हो गई। दोनों की दास्तान प्रेमग्रंथ में अमिट अक्षरों से लिखी गई।

अफगानिस्तान से आकर महम्मद गजनी ने १७ बार भारत पर हमला किया और उसे बुरी तरह से लूटकर क्षतिग्रस्त किया। मोहम्मद गौरी, चंगेज खान, तैमूरलंग, नादिर शाह इन सभी ने भारत सोने की चिड़िया देश को मनचाहे ढंग से लूटा। इस समय राजपूतों का राज्य था। इसके पश्चात लोधीवंश का राजा आया। इब्राहिम लोधी, राणा सांगा का भयंकर युद्ध हुआ तत्पश्चात शूरीवंश का उदय हुआ। इसमें शेरशाह शूरी का आदिलशाह, मुहम्मद शाह और नादिर शाह का आधिपत्य शुरु हुआ। शूरीवंश के आधिपत्य के पश्चात मुगल साम्राज्य का आधिपत्य हुआ। भारत में पहले बाबर आया तत्पश्चात उसके पुत्र हूमायूं ने आक्रमण कर अपना राज्य स्थापित किया। शूरीवंश के शेरशाह शूरी और हूमायू के बीच बड़ा युद्ध हुआ। शेरशाह शूरी की विजय हुई। शेरशाह शूरी के बाद हूमायू का राज्य स्थापित हुआ। रानी कर्णावती (राणा सांगा की पत्नी) ने हूमायू को अपना भाई माना और हूमायू के पास राखी बांधने को जाती थी। उसके बेटे मुहम्मद बिन कासिम अकबर ने राज्य की बागडौर संभाली।

हल्दी घाटी की लढ़ाई महाराणा प्रताप सिंह और अकबर के दरम्यान हुई। मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। राणा सांगा और बाबर का पानिपत की लड़ाई ने मुगल साम्राज्य की नींव स्थापित की और यह मुगल साम्राज्य पीढ़ी दर पीढ़ी औरंगजेब तक चला। मुगलों का आखिरी शहंशाह जफर शाह था। इसके पश्चात ब्रिटिश कंपनी से इस्ट इंडिया कंपनी भारत में व्यापार करने के लिए स्थापित हुई और ब्रिटिशों ने अपनी हुकुमत जमाई। इनको भारत से खदेड़ना भारत के लिए बहुत ही मुश्किल पड़ा।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य बिखरने लगा। पेशवाओं के नेतृत्व में मराठों का उदय हुआ और दूसरी ओर यूरोपीय कंपनियां भारत में अपने साम्राज्य का विस्तार करने लगीं। प्लासी का युद्ध अब तक फ्रांसीसी और ब्रिटिश कंपनियों का ही वर्चस्व रह गया था।

कोलम्बस भारत आना चाहता था किन्तु उसने अमेरिका के तटों पर उतरना पसंद किया। पुर्तगाल से वास्को दिगामा व्यापार करने अपने देश की वस्तुएं लेकर यहां आया जो भारतीय मसाले ले जाना चाहता था। यहां फ्रांसीसी लोग भी आए और भारत में अपनी कॉलोनियां बनाई।

भारत में यूरोपीय लोग व्यापार करने आए पर बाद में यहां के शासक ही बन बैठे। सबसे पहले १४९८ में पुर्तगाल से वास्को डिगामा ने कालीकट खोजा। फिर पुर्तगालियों ने गोवा दमन व दीव पर कब्जा कर लिया। १६वीं सदी में डच ईस्ट इंडिया कंपनी व ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में आई। १७वीं सदी में फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कंपनी भी भारत में आ गई।

१७५७ में अंग्रेजी कमांडर लॉर्ड क्लाइव और फ्रांसीसी कमांडर डूप्ले की सेनाओं में युद्ध हुआ। इसमें फ्रांसीसियों को हरा कर लॉर्ड क्लाइव ने भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की नींव रखी। पानीपत की तीसरी लड़ाई- इस समय आलम यह था कि मुगल सम्राट मराठों की मदद से गद्दी पर बैठा था। उधर मराठे विजय के मद में चूर पंजाब व सरहिंद तक आक्रमण कर रहे थे। क्रोधित होकर १७६१ में अफगानिस्तान के सुल्तान अहमदशाह अब्दाली ने आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में मराठों की रीढ़ ही टूट गई। अब अंग्रेजों को रोकनेवाला कोई न था। बक्सर की लड़ाई- १७६४ में बक्सर के मैदान में अंग्रेजों का मुकाबला बंगाल के नवाब मीर कासिम, अवध के नवाब शुजाउद्दौला और मुगल सम्राट शाह आलम की सेनाओं से हुआ।

फ्रांसीसियों ने भी उनका साथ दिया था पर युद्ध अंग्रेजों ने जीता। मुगल सम्राट को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को देनी पड़ी। मैसूर युद्ध हैदर अली और अंग्रेजों में मैसूर का प्रथम युद्ध हुआ जिसमें अंग्रेजों को हार मिली। उसके बाद उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने भी अंग्रेजों की नींद उड़ा दी पर १७९९ में मैसूर के चौथे युद्ध में उसने वीर गति पाई। अंग्रेजों ने अनेक युद्धों में गोरखों, पिंडारियों और मराठों का दमन किया। उसने राजपूताना के अनेक छोटे राज्यों को संरक्षण देकर अपने अधीन कर लिया।

बंगाल मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत आनेवाले प्रांतों में सर्वाधिक सम्पन्न था। अंग्रेजों ने बंगाल में अपनी प्रथम कोठी १६५१ ई. में हुगली में तत्कालीन बंगाल के सूबेदार शाहशुजा (शाहजहां के दूसरे पुत्र) की अनुमति से बनायी तथा बंगाल से शोरे, रेशम और चीनी का व्यापार आरम्भ किया। ये बंगाल के निर्यात की प्रमुख वस्तुएं थीं। उसी वर्ष मुगल राजवंश की एक स्त्री की, डॉक्टर बौटन द्वारा चिकित्सा करने पर उसने अंग्रेजों को ३००० रु. वार्षिक में बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा में मुक्त व्यापार की अनुमति प्रदान की। शीघ्र ही अंग्रेजों ने कासिम बाजार, पटना तथा अन्य स्थानों पर कोठियां बना लीं।

अंत में ब्रिटिश लोग आए और उन्होंने लगभग २०० साल तक भारत पर शासन किया। वर्ष १७५७ ने प्लासी के युद्ध के बाद ब्रिटिश जनों ने भारत पर राजनैतिक अधिकार प्राप्त कर लिया और उनका प्रभुत्व लॉर्ड डलहौजी के कार्य काल में यहां स्थापित हो गया जो १८४८ में गवर्नर जनरल बने। उन्होंने पंजाब, पेशावर और भारत के उत्तर पश्चिम से पठान जनजातियों को संयुक्त किया और वर्ष १८५६ तक ब्रिटिश अधिकार और उनके प्राधिकारी यहां पूरी मजबूती से स्थापित हो गए। जबकि ब्रिटिश साम्राज्य में १९वीं शताब्दी के मध्य में अपनी नई ऊंचाइयां हासिल की, असंतुष्ट स्थानीय शासकों, मजदूरों, बुद्धिजीवियों तथा सामान्य नागरिकों ने सैनिकों की तरह आवाज उठाई जो उन विभिन्न राज्यों की

१८५७ का स्वतंत्रता संग्राम- लॉर्ड डलहौजी ने भारत की रियासतों को हड़पने के लिए लैप्स का सिद्धांत बनाया। इसमें दत्तक पुत्र का राज्य पर अधिकार समाप्त कर दिया गया। इस कारण १८५७ की क्रांति का श्रीगणेश हुआ। अंग्रेजों की कुटिल नीति के शिकार मुगल सम्राट बहादुरशाह जफर, नाना साहब पेशवा और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई भी बनीं। दिल्ली के लाल किले में गुप्त मंत्रणाएं होने लगीं। तय हुआ कि बहादुरशाह जफर के नाम से क्रांति की जाएगी और उसकी तारीख ३१ मई १८५७ होगी। मेरठ का विद्रोह- बैरकपुर की छावनी में मंगल पांडे ने चर्बी वाले कारतूस को लेकर विद्रोह कर दिया। मंगल पांडे मेरठ से ही बैरकपुर गए थे। उनके बलिदान की खबर मेरठ आई तो वहां के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। उन्होंने अंग्रेजों को मौत के घाट उतार दिया। १० मई १८५७ को उन्होंने दिल्ली चलो का नारा लगाते हुए दिल्ली की ओर कूच किया। दिल्ली- ११ मई प्रात:काल ही विद्रोही सैनिक दिल्ली पहुंच गए। दिल्ली के भारतीय सैनिक भी उनसे मिल गए। अंग्रेजों को मारकर विद्रोही लालकिले में घुसे। बहादुर शाह जफर को सम्राट घोषित किया गया और हाथी पर बैठा कर चांदनी चौक में जुलूस निकाला। दिल्ली के आसपास- क्रांति की आग शीघ्र ही दिल्ली व आसपास फैल गई। अलीगढ़, इटावा, मैनपुरी, मुरादाबाद और बरेली में भी अंग्रेजों का वध कर, बहादुरशाह जफर का हरा झंडा फहराया गया। अंग्रेजों ने मद्रास, सिख और गोरखा रेजीमेंट को बुलाकर क्रांति का दमन किया। बहादुरशाह को बंदी बनाकर उसके पुत्रों के सिर काट कर उनके पास भेजे गए। फिर उन्हें म्यांमार में रंगून भेज दिया गया जहां उनका देहांत हुआ। बनारस- बनारस में अंग्रेजों ने क्रांति का बड़ा क्रूरतापूर्ण दमन किया गया। गांव के गांव जला दिए। स्त्रियों और पुरुषों को मौत के घाट उतार दिया गया।

इलाहाबाद में मौलवी लियाकत अली के नेतृत्व में किले पर अधिकार कर लिया गया। बाद में अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों

का दमन कर उनके शव नीम के पेड़ पर लटका दिए। कानपुर नाना साहब पेशवा ने कानपुर और उसके आसपास के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया था। नाना ने अंग्रेजों को पकड़ कर नदी पार भेजा, तभी कुछ क्रांतिकारियों ने उनका वध कर दिया। कानपुर, बिठूर, लखनऊ और ग्वालियर में नाना साहब पेशवा और तात्या टोपे का कई बार अंग्रेजों से सामना हुआ। अंत में तात्या टोपे काल्पी चले गए। लखनऊ- क्रांति का सबसे भीषण रूप अवध में था। वहां सेना और जनता में अपार उत्साह था। क्रांतिकारियों ने लखनऊ रेजीडेंसी पर अधिकार कर लिया था। बड़े संघर्ष के बाद क्रांति का दमन किया गया। उधर नाना साहब ने अहमद शाह को मिलाकर शाहजहांपुर और बरेली पर अधिकार कर लिया।

सेनाओं के समाप्त हो जाने से बेरोजगार हो गए थे, जिन्हें ब्रिटिश जनों ने संयुक्त किया था और यह असंतोष बढ़ता गया। जल्दी ही यह एक बगावत (विद्रोह) के रूप में फूटा जिसने १८५७ के विद्रोह का आकार लिया।

स्वतंत्रता मानव के विकास की सबसे पहली आवश्यकता है। एक परतंत्र व्यक्ति न तो अपना उत्थान कर सकता है, न अपने परिवार का और न समाज का। तमाम मानवीय गुणों का तभी अर्थ है जब व्यक्ति भौतिक-मानसिक रूप से स्वतंत्र हो। राष्ट्र ही हमें आध्यात्मिक उन्नति का अवसर प्रदान करता है। स्पष्ट है कि राष्ट्रप्रेम से बड़ा कोई गुण नहीं है।

अगर हम अपने राष्ट्र को सुरक्षित अक्षुण्ण नहीं रख पाएंगे तो फिर अन्य मानवीय गुणों के होने अथवा न होने का क्या मतलब है? राष्ट्रभक्ति वह गुण है जो हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। जिस व्यक्ति के भीतर राष्ट्रप्रेम की भावना नहीं है वह न तो खुद को कोई दिशा दे सकता है और न ही अपने समाज को। हमें उन शहीदों का ऋणी होना चाहिए जिन्होंने देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति दिलाई। उन्होंने देश प्रेम की भावना में अपने प्राण तक न्यौछावर कर दिए।

आजादी मिलने के बाद राष्ट्र निर्माताओं ने जब भारत को सशक्त राष्ट्र बनाने का सपना देखा और इसे पूरा करने की दिशा में कार्य शुरू किया तब भी उनकी भावनाओं का आधार राष्ट्रप्रेम ही था। हमें उन शहीदों की कुर्बानियों को व्यर्थ नहीं जाने देना है। हमें देश की आजादी का जश्न मनाते हुए अपने अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों के प्रति भी सजग और सचेत रहना चाहिए। अगर हम सभी अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीन हो जाएंगे तो देश की प्रगति का पहिया थम जाएगा। हम सभी अपने-अपने सुखों को लेकर चिंतित रहते हैं। इसमें कोई हर्ज भी नहीं है, लेकिन हम सभी को राष्ट्र के निर्माण के प्रति भी अपने अपने संकल्प लेने चाहिए। एक देश अपने नागरिकों की ऊर्जा से ही ऊर्जा ग्रहण करता है। अगर नागरिक तेजहीन होंगे और केवल अपने स्वार्थों की चिंता करेंगे तो देश धीरे-धीरे अपनी ऊर्जा गंवाता जाएगा। इसलिए यह जरूरी है कि देशवासी ऊर्जा, उत्साह, सकारात्मकता से भरपूर रहें और अपने मन में नकारात्मक भावों को हावी न होने दें। सदाचार और परोपकार जैसे गुण हमारी सनातन परंपरा का आधार हैं। इन्हीं गुणों के प्रसार से राष्ट्र की उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा।

जिन लोगों ने देश की आजादी के लिए बलिदान दिए, मुश्किलें झेलीं, जिनकी बदौलत हमें आजादी मिली, उन्हें हम स्वतंत्रता सेनानी कहते हैं। बहुत से स्वतंत्रता सेनानियों के बारे में हम जानते है।, लेकिन अनगिनत स्वतंत्रता सेनानी ऐसे है, जिनके बारे में हम नहीं जानते या बहुत कम जानते हैं।

उत्तर प्रदेश से लेकर मध्य प्रदेश तक फैला चम्बल का बीहड़ नामी डकैतों के लिए कुख्यात है, लेकिन आजादी की जंग में इसी बीहड़ में रहने वाले बागियों ने अहम भूमिका निभाई थी। चम्बल के बीहड़ों में आजादी की जंग की कहानी १९०९ से शुरू हुई। इससे पहले शौर्य, पराक्रम और स्वाभिमान का प्रतीक मानी जानेवाली बीहड़ की वादियां चंबल के पानी की तरह साफ सुथरी और शान्त हुआ करती थी। चम्बल में पलनेवाले लोगों ने आजादी की लड़ाई लड़ रहे

क्रांतिकारियों का जम कर साथ दिया। बीहड़ क्रांतिकारियों के छिपने का ठिकाना भी बना। बीहड़ों में रहनेवाले अब भले ही डकैत कहे जाते हैं, लेकिन अंग्रेज उन्हें बागी कहा करते थे। डकैतों को अब भी बागी कहलाना ही पसंद है। आजादी के बाद बीहड़ में जुर्म की शुरूआत हुई, जो अब तक जारी है। इस आग में हजारों घर बर्बाद हो गए। बीहड़ में बसे डकैतों के पूर्वजों ने आजादी की लड़ाई में कंधे से कंधा मिलाकर क्रांतिकारियों का साथ दिया, लेकिन आजादी के बाद इन्हें कुछ नहीं मिला, इसीलिए तो उनके वंशज आज भी अपने स्वाभिमान के लिए बीहड़ को आबाद किए हैं। बीहड़ मामलों के जानकार भिंड निवासी ८५ वर्षीय मलखान सिंह गुर्जर, जिन्होंने आजादी की लड़ाई से लेकर आज तक बीहड़ का करीब से अवलोकन किया है, उन्होंने बताया कि राजस्थान से लेकर मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में बहनेवाली चम्बल के किनारे ४५० वर्ग किमी. फैले इन बीहड़ों में डकैत आज से नहीं आजादी से पहले भी हुआ करते थे। उन्हें पिंडारी कहा जाता था। पिंडारी मुगलकालीन जमींदारों के पाले हुए वफादार सिपाही हुआ करते थे, जिनका इस्तेमाल जमींदार किसी विवाद को निबटाने के लिए किया करते थे। मुगलकाल की समाप्ति के बाद अंग्रेजी शासन में चम्बल के किनारे रहनेवाले इन्हीं पिंडारियों ने वहीं डकैती डालना शुरू कर दिया और बचने के लिए अपनाया चम्बल की वादियों का रास्ता। अंग्रेजों के खिलाफ भारत छोड़ो आंदोलन में चम्बल के किनारे बसी हथकान रियासत के हथकान थाने में सन १९०९ में चर्चित डकैत पंचम सिंह, पामर और मुस्कुंड के सहयोग से क्रांतिकारी पंडित गेंदालाल दीक्षित ने थाने पर हमला कर २१ पुलिसकर्मियों को मौत के घाट उतार दिया और थाने में रखा असलहा गोला बारूद लूट लिया। इन्हीं डकैतों ने क्रांतिकारियों गेंदालाल दीक्षित, अशफाक उल्ला खान के नेतृत्व में सन १९०९ में ही पिन्हार तहसील का खजाना लूटा और उन्हीं हथियारों से ९ अगस्त १९१५ को हरदोई से लखनऊ जा रही ट्रेन को काकोरी रेलवे स्टेशन पर रोककर सरकारी खजाना लूटा। डकैती, लूट और हत्याओं की सैकड़ों घटनाओं को अंजाम देनेवाले क्रांतिकारी तो जेल चले गए या फांसी पर लटका दिए गए, लेकिन चम्बल की इन वादियों में रह गए तो सिर्फ डकैत जो देश की आजादी के बाद चम्बल की बहती साफ सुथरी धारा की तरह अपने स्वाभिमान के गुलाम बने। फर्क इतना है कि पहले बागी हुआ करते थे, लेकिन आज होते हैं डकैत।

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाएं एवं उनका अहम योगदान

सैकड़ों वर्षों के कठोर संघर्ष हमें स्वतंत्रता प्राप्त हुई। असंख्य देशवासियों ने न जाने इसके लिए कितनी शारीरिक और मानसिक यातनाएं झेलीं। कितनों ने भारत मां के चरणों में शीश चढ़ाएं, इसका अनुमान लगाना भी कठिन है।

भारत को आजादी दिलाने के लिए जितना योगदान पुरुषों का रहा उतना ही महिलाओं का भी रहा है। उन्होंने पुरुषों के कंधे से कंधा और कदम से कदम मिलाकर भारत मां को गुलामी की जंजीरों से मुक्त करवाया। जब तक सूरज, चांद सितारे रहेंगे, गंगा बइती रहेगी, हिमालय अपनी ऊंचाइयों से भारत का पहरेदार बना रहेगा, तब तक अपनी भारत मां की आजादी के लिए मर मिटनेवाली वीरांगनाओं का नाम दसों दिशाओं में गूंजता रहेगा। उनका जीवन आजादी की फसल को लहलहाता रखेगा और खून उसे सींचता रहेगा। अपनी भारत मां के लिए जान देने वाली महिलाएं अमर हैं और देश की नस-नस में बस गई हैं।

झलकारी ऐसी वीरांगना हैं जो रानी लक्ष्मी बाई की परछाई बनकर स्वतंत्रता संग्राम में उनके साथ रहीं। उन्होंने रानी का अनुसरण करते हुए अंग्रेजों के दांत खट्टे किए। अपनी जान की परवाह किए बिना इन्होंने रानी का हर संकट में साथ निभाया।

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं के योगदान के बारे में चर्चा करें तो सर्वोच्च स्थान झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का ही है। सन् १८५७ में लड़े गए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास इन्होंने अपने रक्त से लिखा और नारी जाति के लिए आदर्श बन गईं। जिस उम्र में बच्चे गुड्डे-गुड़िया से खेलते हैं, उस उम्र में पुरुषों के साथ मल्ल विद्या, घुड़सवारी, शस्त्र विद्याएं आदि सीखने के कारण उनका चरित्र वीरोचित गुणों से युक्त था। बाजीराव पेशवा इनके मुंह-बोले भाई थे। उनसे स्वतंत्रता की कहानियां सुनकर उनके हृदय में देश भक्ति की भावना कूट-कूट कर भर गई। रानी का सारा जीवन संघर्ष और युद्धों में ही व्यतीत हुआ। अंग्रेजों से डटकर मुकाबला करते लड़ते-लड़ते वह वीरगति को प्राप्त हो गईं। आज भी उनकी स्मृति भारतीयों में नवस्फूर्ति और नवचेतना का संचार करती है।

जीजाबाई शिवाजी की महान जननी थीं। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से तो स्वतंत्रता संग्राम में भाग नहीं लिया, परोक्ष रूप में अगर शिवाजी को याद किया जाता है तो इसके पीछे उनकी मां का ही योगदान था। वह उन्हें वीरता के गीत सुनातीं और युद्ध में डटकर मुकाबला करने के लिए प्रेरित करती थीं।

१५ अगस्त हमारी आजादी का दिन। इस दिन हमारा मन एक अलग तरह की खुशी से भर जाता है। इसी दिन ब्रिटेन के झंडे यूनियन जैक की जगह हमारे तिरंगे ने ली थी। पर इस दिन को लाने के लिए हमारे पूर्वजों ने बहुत तकलीफें सही हैं। कितने लोगों ने अपनी जान की बाजी लगा दी, तो कितनों ने जीते जी ऐसे अत्याचार सहे, जिनके बारे में सुनकर ही शरीर कांप उठता है। १८५७ में हमने पहली बार एक साथ मिलकर अंग्रेजों के खिलाफ आजादी की लड़ाई का बिगुल बजाया। इसे आजादी की पहली लड़ाई कहा जाता है। यह लड़ाई सफल तो नहीं हो सकी, लेकिन इससे देश के लोगों ने खुशी-खुशी खुद को देश पर कुर्बान कर दिया। उनकी शहादत रंग लाई और ९० साल बाद १९४७ में देश आजाद हुआ।

आज १३२ करोड़ देशवासियों की आत्मा, अस्तित्व और विकास ही हमारी शर्त है। हम सब मिलकर ही भारत को परिभाषित करते है। हमारा यह भारत विभिन्न धर्मों, विभिन्न जातियों, विभिन्न भाषाओं और विभिन्न वर्गों में बंटा हुआ देश नहीं है, बल्कि इन सबसे मिलकर ही भारत बना है। यह जुड़ाव ही इसकी असली ताकत है, इस जुड़ाव को और अधिक मजबूत करना हम सबका राष्ट्रीय कर्तव्य है। **भारत एक भूगोल है और भारत एक इतिहास है। भारत एक वर्तमान भी है और भारत एक भविष्य भी है। भारत एक वास्तविकता है और भारत एक विचार भी है। इस भारत का सारा जीवन ही अंधेरों-उजालों से जुड़ा है।**

हमारी सेना को सीधी चुनौती देने की हिम्मत तो कोई महाशक्तियां भी नहीं कर सकतीं। परमाणु मिसाइलों, पनडुब्बियों, स्वदेशी आधुनिकीकरण से दुश्मन खौफजदा है। रक्षा खर्च के निमित्त हम विश्व में चौथा स्थान रखते है। १४ लाख से अधिक सैनिक हमारे पास है जो कि विश्व का तीसरा सबसे बड़ा सैन्य बल है। यह थलसेना के जवानों की संख्या चीन के बाद सबसे अधिक है। हमारे पास १,२७,००० वायु सैनिक है जो कि पेशेवर चौथी सबसे बड़ी सामरिक वायु सेना है। हमारे पास ५५ हजार नौसैनिकों के साथ पांचवी सबसे बड़ी नौसेना है। सेनाओं का योगदान केवल युद्ध में जीत तक ही सीमित नहीं रहता इससे भी उनकी बड़ी भूमिका युद्ध नहीं होने देने में है। विश्व में भारत के बड़े मान-सम्मान के पीछे आज यकीनन उसकी सैन्य ताकत भी है। हम सबसे अधिक रक्षा खर्च वाले देशों में ही नहीं आते, लेकिन दुनिया में हथियारों के सबसे बड़े खरीददार भी हम ही है। हमारे स्वदेशीकरण और आधुनिकीकरण कार्य से दुश्मन भी खौफजदा हो जाते है। युद्ध रोकने के लिए हमारे पास काबिलियत है युद्ध के लिए तैयारी। हमें टेढ़ी आंखों से देखने की हिम्मत भी किसी देश में नहीं है।

आजादी के दिन तक अंग्रेजों की सोच यह थी कि हमें भारत को आजाद नहीं करना है। अंग्रेज चाहते थे किसी तरह भारतीयों को राजी कर अपनी सत्ता कायम रखें। उनकी यही सोच थी किसी तरह भारतीयों को आजाद नहीं किया जाएं।

जब किसी देश या समाज की आजादी का संघर्ष चलता है और व्यवस्था परिवर्तन की मांग होती है, तो यह बड़े कानूनी परिवर्तनों के बदौलत ही संभव हो पाता है। हमारे देश में दूसरी आजादी को लेकर अन्ना का आंदोलन चला है। यह दूसरी आजादी भ्रष्टाचार से आजादी है। यह इतनी जल्दी संभव नहीं है। ठीक उसी तरह जब अंग्रेजों से आजादी मिलने में हमें तकरीबन दो सौ साल की गुलामी का दंश झेलना पड़ा था। हम दो सौ साल तक गुलाम रहे, लेकिन इस बीच हमने बहुत बड़े-बड़े आंदोलन किये। इन आंदोलनों की बदौलत ही आजादी मिली। अब इसी बीच सवाल उठता है कि क्या अंग्रेज अचानक हमारा देश छोड़कर वापस जाने के लिए तैयार हो गये थे, बिल्कुल नहीं। यहां तक कि आजादी मिलने के दिन तक अंग्रेजों की सोच में हमें आजाद करना नहीं था। आजादी के आंदोलनों के कारण इंग्लैंड पर बढ़ रहे दबाव के चलते ही ऐसा संभव हो सका।

आजादी का संघर्ष १९वीं सदी से २०वीं सदी तक चलता रहा। लेकिन भारतीयों को सत्ता हस्तांतरण की बात थी, आजादी की बात नहीं थी। अंग्रेज जब भी भारतीयों को कोई अधिकार देते थे, उस पर उनका वीटो पावर जरूर रहता था, जिससे वे जब चाहे, उसमें दखल दे सकते थे। १९१९ में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट- १९१९ आया जिसे मांटेग्यू चेम्सफोर्ड रिफॉर्म भी कहते हैं, जिसके तहत यह प्रावधान किया गया था कि कुछ ब्रिटिश-इंडियन प्रांतों की सत्ता भारतीय हाथों में सौंप दी जायेगी। उस सत्ता में वे लोग होंगे जिन्हें वहां के भारतीय चुनकर भेजेंगे। लेकिन उस प्रांत का गवर्नर अंग्रेज होगा ओर उसके पास कुछ विशेषाधिकार होंगे। उस वक्त वह विशेषाधिकार सत्ता में दखलंदाजी करने के लिए काफी था। इस बीच कुछ प्रांतों में उन्होंने भारतीय हाथों में सत्ता सौंपी थी। लेकिन अब उन प्रांतों को स्वायत्तता देने की बात होने लगी थी, क्योंकि अंग्रेजों का दखल ज्यादा था। १९१९ एक्ट की समीक्षा करने उसके कुछ प्रावधानों में सुधार के लिए ब्रिटिश सरकार ने १९७२ में सात सदस्यीय साइमन कमीशन भेजा। उस कमीशन में एक भी भारतीय शामिल नहीं था, जिसके कारण उसका जबर्दस्त विरोध हुआ और कांग्रेस ने तिरंगा लहराया। देश के नागरिकों के अधिकारों को लेकर गांधीजी के नेतृत्व में अप्रैल १९३० में नागरिक अवज्ञा शुरू हो गया। ब्रिटिश सरकार ने इसे दबाने की पुरजोर कोशिशें की। जिसमें बहुत से लोग मारे भी गये। संघर्ष और आगे बढ़ा। भारतीयों के विरोध को देखते हुए इंग्लैंड में ब्रिटिश सरकार द्वारा एक राउंड टेबल कांफ्रेंस बुलायी गयी। उसका मकसद यह था कि भारतीय जिस अधिकार की बात कर रहे हैं, उसके बारे में राय-मशविरा करना और भारतीयों की मांगों को समझकर प्रावधान में सुधार करना, इसी के तहत जो एक्ट आया उसे गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट- १९३५ कहते हैं। इसके बड़े प्रावधान में यह था कि भारतीय प्रांतों को स्वायत्तता मिलेगी और वहां पर वे अपनी निर्वाचित सरकार बना सकेंगे। १९३९ में जब विश्वयुद्ध की शुरुआत हुई तो भारतीयों ने घोषणा कर दी कि वे इसका हिस्सा नहीं बनेंगे। इसके बाद आजादी के आंदोलन का स्वरूप और व्यापक हो गया। ठीक इसी वक्त अंग्रेजों ने ये समझ लिया कि अब उनका हिंदुस्तान में रहना मुश्किल है। लेकिन अभी भी वे भारत की आजादी के बारे में नहीं सोच रहे थे। इसलिए उन्होंने मुस्लिम लीग और कांग्रेस को अपनी नीतियों के तहत फोड़ना शुरू कर दिया। १९४५ में वेवेल प्लान आया और अप्रैल, १९४६ में कैबिनेट मिशन आया। इसके तहत अंग्रेजों ने यह माना कि भारतीयों के हाथ में सत्ता का हस्तांतरण का प्रावधान होना चाहिए, लेकिन तब भी उनकी सोच में भारतीयों को

सत्ता हस्तांतरण के साथ-साथ उनकी दखलंदाजी भी शामिल थी और यह तो जग जाहिर है कि सत्ता में दखलंदाजी बहुत मायने रखती है सिर्फ मायने नहीं रखती, बल्कि सत्ता को अपने अनुरूप चलाती है। लेकिन जब विरोध बढ़ता गया और वेवेल प्लान सफल होता नहीं दिखा तो ब्रिटिश सरकार ने लॉर्ड वेवेल को वापस बुला लिया और उसकी जगह लॉर्ड माउंटबेटन को भेजा। अंग्रेजों को लगा कि वे माउंटबेटन को भेजकर स्थिति में सुधार कर लेंगे। लेकिन जिस कदम विरोध बढ़ रहा था और आजादी का आंदोलन तेजी से बढ़ रहा था, उसे देखते हुए लॉर्ड माउंटबेटन ने तीन जून १९४७ को एक योजना की घोषणा की। उस योजना के तहत यह कहा गया कि सत्ता भारतीयों के हाथ में होगी। यही वह ३ जून १९४७ है जब अंग्रेजों ने पूरी तरह सोच लिया था कि अब उन्हें हिंदुस्तान छोड़कर वापस जाना होगा।

१५ अगस्त, १९४७ को हमारा देश एक स्वतंत्र राष्ट्र बना था। संप्रभुता पाने के साथ-साथ उसी दिन से देश की नियति तय करने की जिम्मेदारी भी ब्रिटिश हुकूमत के हाथों से निकलकर हम भारतवासियों के पास आ गई थी। केवल सत्ता का हस्तांतरण नहीं था। वह एक बहुत बड़े और व्यापक बदलाव की घड़ी थी। वह हमारे समूचे देश के सपनों के साकार होने का पल था। ऐसे सपने जो हमारे पूर्वजों और स्वतंत्रता सेनानियों ने देखे थे। स्वतंत्र भारत का उनका सपना, हमारे गांव, गरीब और देश के समग्र विकास का सपना था। आजादी के लिए हम उन सभी अनगिनत स्वतंत्रता सेनानियों के ऋणी है जिन्होंने इसके लिए कुर्बानियां दी थी। कित्तूर की रानी चेन्नम्मा, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, भारत छोड़ो आंदोलन की शहीद मातंगिनी हाजरा जैसी वीरांगनाओं के अनेक उदाहरण हैं। मातंगिनी हाजरा लगभग ७० वर्ष की बुजुर्ग महिला थीं। बंगाल के तमलुक में एक शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व करते समय ब्रिटिश पुलिस ने उन्हें गोली मार दी थी।

देश के लिए जान की बाजी लगा देनेवाले सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खां, तथा बिरसा मुंडा, सुभाषचंद्र बोस, राजगुरु, सुखदेव, गेंदालाल जैसे हजारों स्वतंत्रता सेनानियों को हम कभी नहीं भूला सकते थे। देश को राह दिखानेवाले अनेक महापुरुषों और क्रांतिकारियों का हमें आशीर्वाद मिला। न जाने कितने वीरों ने अपने घर-परिवार छोड़ दिए थे और देश की स्वतंत्रता के लिए स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े थे।

वह समय उस धारा का था जब हर व्यक्ति के मन में राष्ट्रप्रेम की भावना थी लेकिन आज हमारी आजादी धूमिल सी प्रतीत हो रही है। हर तरफ आतंक का राज फैल रहा है। सारे नेता भ्रष्टाचार में लिप्त हो गये हैं। नित नये घोटाले हो रहे हैं। आज प्रकृति से हमें मुफ्त में मिलनेवाली घास-फूस भी नहीं बची है। क्या हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने ऐसा सोचा होगा कि आनेवाली हमारी पीढ़ी स्वतंत्र होते हुए भी परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ जाएगी। आज स्थिति यह हो गयी है कि जनता के नेता बने लोग अपने फायदे हेतु अपने ही देश को लूट रहे हैं।

आज जनता का जीना मुश्किल हो गया है। इस आजादी को हम आजादी नहीं कह सकते। अगर आज देश से बुराइयों का जाल नहीं काटा गया तो ७० वर्ष क्या, सैंकड़ों वर्ष में भी हम सही मायने में आजाद नहीं हो सकते। आज हमें उन वीरों को याद कर उन्हें अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिए।

आजादी के समय हिंदू-मुस्लिम एकता थी। दोनों ही मिलजुल कर रहते थे। आज हिंदू-मुस्लिम झगड़ा आम हो गया है। इसके जिम्मेवार और कोई नहीं, हम ही हैं। आज बुराई इतनी फैल चुकी है कि संसद और विधानसभाएं, जिन्हें सच्ची राहों पर चलनेवाला कहा जाता है, भी नहीं बची हैं। वहां भी आपसी कलह, तोड़फोड़ एवं गाली गलौज चलती रहती हैं।

राष्ट्रव्यापी सुधार और संघर्ष के इस अभियान में गांधीजी अकेले नहीं थे। नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने जब तुम मुझे खून

दो, मैं तुम्हे आजादी दूंगा का आह्वान किया तो हजारों-लाखों भारतवासियों ने उनके नेतृत्व में आजादी की लड़ाई लड़ते हुए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया।

सरदार पटेल ने हमें राष्ट्रीय एकता और अखंडता के महत्व के प्रति जागरूक किया, साथ ही उन्होंने यह भी समझाया कि अनुशासन-युक्त राष्ट्रीय चरित्र क्या होता है। बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर ने संविधान के दायरे में रहकर काम करने तथा कानून के शासन की अनिवार्यता के विषय में समझाया। साथ ही, उन्होंने कहा, आज देश के लिए अपने जीवन का बलिदान कर देनेवाले ऐसे वीर स्वतंत्रता सेनानियों से प्रेरणा लेकर आगे बढ़ने का समय है।

आज भारत की आजादी को ७० वर्ष हो रहे हैं। यह आजादी हमें वर्षों के संघर्ष और बलिदान देने के बाद ही मिली है। उस दिन को भी हम नहीं भुला सकते जब ९ अगस्त १९४२ को अंग्रेजों भारत छोड़ो का नारा दिया गया और अंग्रेजों के पैर उखाड़ने हेतु हमारे आजादी के दीवानों ने अपनी जान की बाजी लगाई और खूनी खेल खेले एवं जमकर संघर्ष कर अंग्रेजों को खदेड़ दिया और हमें १५ अगस्त १९४७ को आजादी दिलाई।

दिल से हम सब धार्मिक आस्थावाले लोग हैं और लाख दुष्प्रचार के बावजूद किसी दूसरे समुदाय को हमेशा हमेशा के लिए खराब या अपना दुश्मन नहीं समझते। लेकिन इसराइलियों और फिलिस्तीनियों के माफिक यहां के लोगों में एक दूसरे के प्रति स्थायी दुश्मनी का कोई चिन्ह नहीं है। इस मामले में हम हिंदुस्तानी बड़े ढीठ लोग हैं। लड़ते, झगड़ते हैं और कुछ दिनों बाद फिर एक दूसरे की दीन-दुनिया में नाक घुसेड़ देते हैं। भुलक्कड़ी में हमारा कोई जवाब नहीं है।

सिलिकान वैली और नासा में सबसे ज्यादा कार्यकारी पेशेवर अभियांत्रिक और वैज्ञानिकों वाले देश के रूप में या दुनिया के सबसे पिछड़े अशिक्षित और गरीबों के देश में। दरअसल भारत की सच्चाइयों में इतना अंतर है कि कोई भी अंतिम धारणा हास्यास्पद सरलीकरण ही साबित होती है। यही कारण है कि पूरी दुनिया के समाज वैज्ञानिक भारत के बारे में कोई राय बनाने में सबसे ज्यादा घबराते हैं। शायद इसकी सबसे बड़ी वजह भारत की अनंत विधिता है। पहनावा, खानपान, बोली-भाषा में तो जबर्दस्त विविधता है ही सोच, आस्था और विश्वास में भी भारतीय एक दूसरे समुदायों, भौगोलिक इलाकों और सांस्कृतिक ईकाइयों से बिलकुल अलग हैं। हम भारतीयों की कोई साझी पहचान नहीं है। इतनी विविधता के बावजूद हममें समानता भी है।

हमारी एक और बड़ी खासियत है कि हम दूसरों की कम सुनते हैं। सुनते हैं तो भी जरूरी नहीं कि जो वह कह रहा हो, हम वही सुनें। ज्यादातर मौकों में हम सुनते वही हैं जो सुनना चाहते हैं या जो हमारे मन में होता है। यही कारण है कि हिन्दुस्तान में करीब ३०० ऐसे शहर हैं जहाँ ५-५ भाषाएं जानने और बोलनेवाले लोग एक साथ रहते हैं और उन्हें कभी दिक्कत नहीं होती है।

संसार के विकासशील देशों के लिए यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण है कि कम देशों में लोकतंत्र जीवित रहा है, लेकिन जहां भी लोकतंत्र कायम है, वहां सामाजिक समरसता बढ़ी है। आजाद भारत की सबसे बड़ी उपलब्धि ही लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था और जनवादी जागरूकता है, जिससे आजाद भारत में बुनियादी ढांचा जीवित हुआ और शिक्षा जैसी सेवाओं का तेजी से विस्तार हुआ। भूमंडलीकरण और नई अर्थव्यवस्था के चलते अफगानिस्तान व इराक में हस्तक्षेप हुआ। स्वतंत्रता विरोधी व मानवता विरोधी इस कृत्य में किसी को यह अधिकार नहीं है कि एक देश दूसरे देश की स्वतंत्रता को खत्म करें।

१९४७ से पहले हमारे पास खाद्यान्न की कमी थी, तो उसका एकमात्र कारण साम्राज्यवादी ब्रिटिश सरकार की नीतियां थीं। एक समय में पूरी दुनिया के खाद्यान्न उत्पादन में भारत का हिस्सा २३ फीसदी रहता था, लेकिन १९५२ में साम्राज्यवाद के ढाई सौ साल बाद यह घटकर केवल तीन फीसदी रह गया। १९वीं सदी के आखिरी वर्षों में बिहार व बंगाल में भारी अकाल पड़ा और सोचे-समझे तरीके से लगान की मात्रा दस गुना करके कृषि व्यवस्था को बार बार नष्ट किया गया। हमारी दुर्गति का कारण साम्राज्यवादी सरकारों की नीतियां रही हैं। भारत आजादी के पहले भी कभी अलग-थलग या कमजोर नहीं रहा। बल्कि एक ऐसे देश का गुलाम रहा, जिसने हमारी पूंजी को लूटकर अपना औद्योगिकीकरण किया। अब हम उस लूट के शिकार तो नहीं हैं, लेकिन विगत बीस वर्षों में विकसित देशों ने नई नीति अपनाई है। विकसित देशों की सोच है कि विकासशील देशों का आर्थिक शोषण किया जाए। इस कोशिश के खिलाफ लड़ना बहुत जरूरी है।

१९४७ में आजाद मुल्क बनने के बाद भारत को पड़ोसी मुल्कों से कई दिक्कतों का सामना करना पड़ा। आजादी मिलने के दो दशक के भीतर भारत को १९६२ में चीन और १९६५ में पाकिस्तान के साथ पूर्ण युद्ध का सामना करना पड़ा था। इन युद्धों में भारत ने पराक्रम तो दिखाया लेकिन विश्व पटल पर भारत सामरिक स्तर पर अपनी छाप छोड़ने में उस कदर सफल नहीं हुआ था। इन्हीं हालातों के बीच १९७१ का युद्ध आया। हालांकि पूर्व पाकिस्तान की आजादी को तब जिस आक्रामक तरीके से भारत ने सपोर्ट किया था उससे दोनों देशों के बीच तनाव की पृष्ठभूमि बनने लगी थी। इसकी परिणति पूर्ण युद्ध के रूप में हुई। १९७१ की सर्दियों में छिड़े युद्ध ने पूरे विश्व को भारत के नए तेवर से परिचित करवाया। भारत का आक्रामक रूख और दृढ़ रवैये ने विश्व को चौंकाया और भारत ने १३ दिनों के युद्ध में जिस अंदाज में पाकिस्तान को परास्त किया, उसने आजादी मिलने के २५ साल बाद ही पूरी दुनिया को भारत की ताकत को लोहा मानने पर मजबूर कर दिया। १६ दिसंबर १९७१ को घबराकर पाकिस्तान ने अपनी हार मानी। इस युद्ध में पाकिस्तानी हार का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि पूर्ण पाकिस्तान जिसे अब बंग्लादेश कहा जाता है, वहां पर १ लाख पाकिस्तानी सैनिकों ने आत्मसमर्पण किया।

पाकिस्तान को युद्ध में न सिर्फ एकतरफा ढंग से परास्त हुआ बल्कि बांग्लादेश भी आजाद मुल्क के रूप में पहचान मिली। यह जीत इसलिए भी महत्वपूर्ण थी क्योंकि अमेरिका और चीन जैसे देशों में परोक्ष-अपरोक्ष तरीके से पाकिस्तान को सपोर्ट करने की पहल की थी। लेकिन रूस भारत के साथ मजबूती के साथ रहा। इस जीत ने भारत को दुनिया भर में एक शक्तिशाली की तरह स्थापित करने का काम किया।

५ नवंबर २०१३ में को अंतरिक्ष की दुनिया में देश ने एक ऐसा कदम उठाया कि पूरी दुनिया में उसका कद कई गुना ऊंचा हो गया। इसरो ने भी हरिकोटा से मंगलयान को सफलतापूर्वक कक्ष में स्थापित कर दिया। इसके साथ ही भारत भी अब उन देशों में शामिल हो गया है जिन्होंने मंगल पर अपने यान भेजे हैं। वैसे अब तक मंगल को जानने के लिये शुरू किये गये दो तिहाई अभियान असफल भी रहे हैं परंतु २४ सितंबर २०१४ को मंगल पर पहुंचने के साथ ही भारत विश्व में अपने प्रथम प्रयास में ही सफल होनेवाला पहला देश तथा सोवियत रूस, नासा और यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के बाद दुनिया का चौथा देश बन गया है। इसके अतिरिक्त ये मंगल पर भेजा गया सबसे सस्ता मिशन भी है। भारत एशिया का भी ऐसा करनेवाला प्रथम पहला देश बन गया। क्योंकि इससे पहले चीन और जापान अपने मंगल अभियान में असफल रहे थे। यह दुनिया का सबसे सस्ता सफल मंगल अभियान है। पीएम मोदी ने लॉंच के वक्त कहा था कि इस मिशन की कीमत हॉलीवुड मूवी ग्रेविटी की प्रोडेक्शन कीमत से भी कम है।

गौरवशाली अतीत है वंदे मारतम् का

बंकिमचंद चटर्जी ने कहा- मेरी सारी किश्तियां गंगा में डुबा दो तो कोई हानि नहीं होगी, परन्तु यह एक शाश्वत महान गीत बचा रहेगा तो देश के हृदय में जीता रहूंगा।

ये बातें उन्होंने आज से सौ से भी अधिक वर्ष पूर्व लिखे गये अपने गीत वंदे मातरम के बारे में व्यक्त करते हुए लिखा था वंदे मातरम का यह गीत जन-जन के हृदयों पर एक घोषणा के रूप में अंकित हो जाएगा और देशभक्तों के अंत:करण की आवाज का शब्दबद्ध प्रतिरूप सिद्ध होगा।

१८ वीं शताब्दी के अंत में बंगाल के मुस्लिम शासकों के क्रूरतापूर्ण व्यवहार के विरोध में प्रख्यात उपन्यासकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने आनन्दमठ शीर्षक के अन्तर्गत एक उपन्यास लिखा जिसमें पहली बार वन्दे मारतर गीत छपा जो पूरे एक पृष्ठ पर आधारित था। इस उद्घोष का सबसे अधिक प्रयोग सन १९०५ ई. में हुआ जब तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड कर्जन ने बांटो और राज करो की नीति का अनुसरण करते हुए बंगाल को दो टुकड़ों में विभाजित करने की घोषणा की और इस विभाजन को बंग-भंग की संज्ञा दी गई। लार्ड कर्जन की इस नीति का भयंकर रूप से विरोध हुआ और उस समय विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार और स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के आन्दोलन के साथसाथ वन्दे मातरम उद्घोष को भी व्यापक रूप से जनसाधारण ने अपनाया। इसके बाद लगातार अंग्रेजों के विरुद्ध जो भी आंदोलन इस देश में प्रारम्भ हुए, उन सभी में वन्दे मातरम जन-जन का उद्घोष बन गया। बंगाल से प्रारम्भ होकर यह उद्घोष पूरे राष्ट्र में व्यापक रूप से फैल गया। १४ अप्रैल १९०६ को बंगाल का प्रांतीय अधिवेशन बारीसाल में तय किया गया था। सरकार ने गांव गांव में दीवारों पर पत्रक टांग कर घोषणा की कि जो वंदे मातरम गायेगा, उसे दंड दिया जायेगा। युवकों ने घोषणा की कि अधिवेशन की शुरूआत जुलूस से होगी जिसमें वंदे मातरम गाया जाएगा। अमृत बाजार के तत्कालीन संपादक मोती लाल घोष ने गर्जना की कि चाहो तो मेरा सिर फोड़ दो पर वंदे मारतम हम गायेंगे ही। जुलूस में वंदे मातरम का गान हुआ और पुलिस ने लाठी चार्ज किया। जख्मी युवकों को उसी हालत में अधिवेशन में लाया गया और हजारों प्रतिनिधियों ने खड़े होकर वंदे मातरम की गूंज से पुलिस राजा का हृदय कंपा दिया। ०६ अगस्त १९०६ को विपिनचंद्र पाल ने अंग्रेजी दैनिक में वंदे मातरम का प्रकाशन शुरू किया। बाद में इसका संपादन श्री अरविन्द ने संभाला। कलकत्ता कांग्रेस में भगिनी निवेदिता ने वंदे मातरम से अंकित राष्ट्रध्वज तैयार किया।

नवम्बर १९०७ में युगांतर में लिखा वंदे मातरम की घोषणा से शत्रु का धैर्य टूट गया है। उसका सामर्थ्य टूट गया। स्वातंत्र्य वीर वि. दा. सावरकर को जिन लेखों के कारण काला पानी का दण्ड मिला, उनमें सबसे महत्वपूर्ण लेख वंदे मारतम है जो १९०७ में मुंबई से प्रकाशित होनेवाले अखबार बिहारी में प्रकाशित होनेवाले अखबार बिहारी में प्रकाशित हुआ। १५ अगस्त १९४७ को जब हमारा देश आजाद हुआ तब १४-१५ अगस्त की मध्य रात्रि में सत्ता के हस्तांतरण के लिए तत्कालीन केन्द्रीय एसेम्बली का एक विशेष अधिवेशन आयोजित किया गया जिसका प्रारम्भ वंदे मातरम के गायन से हुआ और यह राष्ट्रीय गीत बहुत ही मधुर स्वर से श्रीमती सुचेता कृपलानी द्वारा प्रस्तुत किया गया। इस विशेष अधिवेशन का अंत भी इसी गीत के साथ हुआ। एसेम्बली में सभी उपस्थित सदस्यों ने इस गायन में श्रद्धापूर्वक भाग लिया

और इस उद्घोष के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया और सारा हाल वंदे मातरम के उद्घोष से लगातार गूंजता रहा।

वंदे मातरम- राष्ट्र की अस्मिता का गीत

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी अर्थात जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है। फिर अपनी मातृभूमि से प्रेम क्यों नहीं? अपनी मातृभूमि की अस्मिता से संबद्ध प्रतीक चिन्हों से घृणा क्यों? प्रश्न अनेक हैं परंतु उत्तर कोई नहीं। प्रश्न है राष्ट्रगीत वंदे मातरम का। क्यों कुछ लोग इसका इतना विरोध करते हैं कि वे यह भी भूल जाते हैं कि वे जिस भूमि पर रहते हैं, जिस राष्ट्र में निवास करते हैं, यह उसी राष्ट्र का गीत है, उस राष्ट्र की महिमा का गीत है?

वंदे मातरम को लेकर प्रारंभ से ही विवाद होते रहे हैं परंतु इसकी लोकप्रियता में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती चली गई। २००३ में बीबीसी वर्ल्ड सर्विस द्वारा आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय सर्वेक्षण के अनुसार वंदे मातरम का दूसरा सर्वाधिक लोकप्रिय गीत है। इस सर्वेक्षण में विश्व के लगभग सात हजार गीतों को चुना गया था। बीबीसी के अनुसार १५५ देशों और द्वीप के लोगों ने इसमें मतदान किया था। उल्लेखनीय है कि विगत दिनों कर्नाटक विधानसभा के इतिहास में पहली बार शीतकालीन सत्र की कार्यवाही राष्ट्रगीत वंदे मातरम के साथ शुरू हुई। अधिकारियों के अनुसार कई विधानसभा सदस्यों के सुझावों के बाद यह निर्णय लिया गया था। विधानसभा अध्यक्ष कागोदू थिमप्पा ने कहा था कि लोकसभा और राज्यसभा में वंदे मातरम गाया जाता है और सदस्य बसवराज रायारेड्डी ने इस मुद्दे पर एक प्रस्ताव दिया था जिसे आमसहमति से स्वीकार कर लिया गया। वंदे मातरम भारत का राष्ट्रीय गीत है। वंदे मातरम बहुत लंबी रचना है जिसमें मां दुर्गा की शक्ति की महिमा का वर्णन किया गया है।

भारत में पहले अंतरे के साथ इसे सरकारी गीत के रूप में मान्यता मिली है। इसे राष्ट्रीय गीत का दर्जा देकर इसकी धुन और गीत की अवधि तक संविधान सभा द्वारा तय की गई है जो ५२ सेकेंड है। उल्लेखनीय है कि १८७० के दौरान ब्रिटिश शासन ने गाड सेव क्वीन गीत गाया जाना अनिवार्य कर दिया था। बंकिमचंद्र चटर्जी को इससे बहुत दुख पहुंचा। उस समय वह एक सरकारी अधिकारी थे। उन्होंने इसके विकल्प के तौर पर ७ नवंबर १८७६ को बंगाल के कांतल पाडा नामक गांव में वंदे मातरम की रचना की। गीत के प्रथम दो पद संस्कृत में तथा शेष पद बांग्ला में हैं। राष्ट्रकवि रवींद्रनाथ ठाकुर ने इस गीत को स्वरबद्ध किया और पहली बार १८९६ में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में यह गीत गाया गया। १८८० के दशक के मध्य में गीत को नया आयाम मिलना शुरू हो गया।

वास्तव में बंकिमचंद्र ने १८८१ में अपने उपन्यास आनंदमठ में इस गीत को सम्मिलित कर लिया। उसके बाद कहानी की मांग को देखते हुए उन्होंने इस गीत को और लंबा किया, अर्थात बाद में जोड़े गए भाग में ही दशप्रहरणधारिणी, कमला और वाणी के उद्धरण दिए गए हैं। बाद में इस गीत को लेकर विवाद पैदा हो गया। वंदे मातरम स्वतंत्रता संग्राम में लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत था। इसके बावजूद इसे राष्ट्रगान के रूप में नहीं चुना गया। वंदे मातरम के स्थान पर वर्ष १९११ में इंग्लैंड से भारत आए जार्ज पंचम के सम्मान में रवींद्रनाथ ठाकुर द्वारा लिखे और गाये गए गीत जन गण मन को वरीयता दी गई। इसका सबसे बड़ा कारण यही था कि कुछ मुसलमानों को वंदे मातरम गाने पर आपत्ति थी। उनका कहना था कि वंदे मातरम में मूर्ति पूजा का उल्लेख है, इसलिए इसे गाना उनके धर्म के विरुद्ध है। इसके अतिरिक्त यह गीत जिस

आनंदमठ से लिया गया है, वह मुसलमानों के विरुद्ध लिखा गया है। इसमें मुसलमानों को विदेशी और देशद्रोही बताया गया है। १९२३ में कांग्रेस अधिवेशन में वंदे मातरम के विरोध में स्वर उठे। कुछ मुसलमानों की आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए कांग्रेस ने इस पर विचार-विमर्श किया।

पंडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में समिति गठित की गई जिसमें मौलाना अबुल कलाम आजाद, सुभाष चंद्र बोस और आचार्य नरेंद्र देव भी शामिल थे। समिति का मानना था कि इस गीत के प्रथम दो पदों में मातृभूमि की प्रशंसा की गई है जबकि बाद के दो पदों में हिन्दू देवी-देवताओं का उल्लेख किया गया है। समिति ने २८ अक्टूबर १९३७ को कलकत्ता अधिवेशन में पेश अपनी रिपोर्ट में कहा कि इस गीत के प्रारंभिक दो पदों को ही राष्ट्रगीत के रूप में प्रयुक्त किया जाएगा। इस समिति का मार्गदर्शन रविंद्रनाथ ठाकुर ने किया था। मोहम्मद अल्लामा इकबाल के कौमी तराने सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा के साथ बंकिमचन्द्र चटर्जी द्वारा रचित प्रारंभिक दो पदों का गीत वंदे मातरम राष्ट्रगीत स्वीकृत हुआ। १४ अगस्त, १९४७ की रात्रि में संविधान सभा की पहली बैठक का प्रारंभ वंदे मातरम के साथ हुआ। फिर १५ अगस्त १९४७ को प्रात: ६.३० बजे आकाशवाणी से पंडित ओंकारनाथ ठाकुर का रागदेश में निबद्ध वंदे मातरम के गायन का सजीव प्रसारण हुआ था। डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने संविधान सभा में २४ जनवरी, १९५० को वंदे मातरम को राष्ट्रगीत के रूप में अपनाने संबंधी वक्तव्य पढ़ा जिसे स्वीकार कर लिया गया। वंदे मातरम को राष्ट्रगान के समकक्ष मान्यता मिल जाने पर अनेक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय अवसरों पर यह गीत गाया जाता है। आज भी आकाशवाणी के सभी केंद्रों का प्रसारण वंदे मातरम से ही होता है। वर्ष १८८२ में प्रकाशित इस गीत को सर्वप्रथम ७ सितंबर, १९०५ के कांग्रेस अधिवेशन में राष्ट्रगीत का दर्जा दिया गया था, इसलिए वर्ष २००५ में इसके सौ वर्ष पूरे होने पर साल भर समारोह का आयोजन किया गया। ७ सितंबर, २००६ को इस समारोह के समापन के अवसर पर मानव संसाधन मंत्रालय ने इस गीत को स्कूलों में गाये जाने पर विशेष बल दिया था। इसके बाद देशभर में वंदे मातरम का विरोध प्रारंभ हो गया। परिणामस्वरूप तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह को संसद में यह वक्तव्य देना पड़ा कि वंदे मातरम गाना अनिवार्य नहीं है। यह व्यक्ति की स्वेच्छा पर निर्भर करता है कि वह वंदे मातरम गाये अथवा न गाये। इस तरह कुछ दिन के लिए यह मामला थमा अवश्य परंतु वंदे मातरम के गायन को लेकर उठा विवाद अब तक समाप्त नहीं हुआ है। जब भी वंदे मातरम के गायन की बात आती है, तभी इसके विरोध में स्वर सुनाई देने लगते हैं।

इस गीत के पहले दो पदों में कोई भी मुस्लिम विरोधी बात नहीं है और न ही किसी देवी या दुर्गा की आराधना है। इसके बाद भी कुछ मुसलमानों का कहना है कि इस गीत में दुर्गा की वंदना की गई है जबकि इस्लाम में किसी व्यक्ति या वस्तु की पूजा करने की मनाही है। इसके अतिरिक्त यह गीत ऐसे उपन्यास से लिया गया है जो मुस्लिम विरोधी है। गीत के पहले दो पदों में मातृभूमि की सुंदरता का वर्णन किया गया है। इसके बाद के दो पदों में मां दुर्गा की आराधना है लेकिन इसे कोई महत्व नहीं दिया गया है। ऐसा भी नहीं है कि भारत के सभी मुसलमानों को वंदे मातरम के गायन पर आपत्ति है या सब हिन्दू इसे गाने पर विशेष बल देते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व विख्यात संगीतकार एआर रहमान ने वंदे मातरम को लेकर एक संगीत एलबम तैयार किया था जो बहुत

लोकप्रिय हुआ। उल्लेखनीय बात यह भी है कि ईसाई समुदाय के लोग भी मूर्तिपूजा नहीं करते, इसके बावजूद उन्होंने कभी वंदे मातरम के गायन का विरोध नहीं किया। वरिष्ठ साहित्यकार मदनलाल वर्मा क्रांत ने वंदे मातरम का हिन्दी में अनुवाद किया गया था। अरबिंदो घोष ने इस गीत का अंग्रेजी में और आरिफ मोहम्मद खघन ने उर्दू में अनुवाद किया। उर्दू में वंदे मातरम का अर्थ है मां तुझे सलाम। ऐसे में किसी को भी अपनी मां को सलाम करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

वंदे मातरम...

बहुमुखी प्रतिभावान साहित्यकार बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा लिखित आनंद मठ उपन्यास सन १८८२ में प्रकाशित हुआ तो उसी में भारत की सांस्कृति परम्परा का सुमधुर गीत वंदे मातरम समाविष्ट हुआ था। वंदे मातरम में भारत माता की प्रार्थना है। इस गीत में कवि भारत माता को सुहासिनी, सुमधुर भाषिणी, बहुबल धारणी कहते हैं। स्वतंत्रता संग्राम में यह घर घर में गाया जानेवाला गीत था। वंदे मातरम कांग्रेस सहित सभी विचार के स्वाधीनता संग्राम सेनानियों का बीज मंत्र और जयघोष बना। कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन १८९६ में यह गीत गाया गया, लेकिन उस अधिवेशन के अध्यक्ष मो. रहमत उल्लाह ने कोई प्रतिवाद नहीं किया। १६ अक्टूबर १९०५ के दिन बंग-भंग कानून लागू होना था, जिसके विरोध में बंगाल धधक उठा और पूरे भारत की अवनि और अंबर में वंदे मातरम गुंजायमान हो उठा। इससे संतप्त तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने ८ नवम्बर १९०५ को वंदे का गान प्रतिबंधित व वर्जित कर दिया।

कांग्रेस ने १९०६ में शोभायात्रा भव्यतापूर्वक निकाली और उसमें कांग्रेस नेता अब्दुल रसूल सहित शोभा यात्रा में सम्मिलित पूरी जनता ने वंदे मातरम का जयकारा लगाया, जिस पर अंग्रेजों की पुलिस ने जोरदार लाठी चार्ज किया, फिर भी वंदे मातरम गाते हुए और बोलते हुए हिन्दुओं और मुसलमानों सहित सभी जनों ने शहादत दी। फिर १५ अगस्त १९४७ को स्वतंत्रता दिन पर सुचेता कृपलानी ने वंदे मातरम् गाया, आकाशवाणी से वंदे मातरम का प्रसारण हुआ। इतिहास निर्माताओं ने इसे भारतीय राष्ट्रीयता का मंत्र बना दिया। किंतु अब वंदे मातरम गान का विरोध बहिष्कार का फतबा जमीयत उलेमाए हिन्द ने जारी किया है और वंदे मातरम को मुद्दा बनाकर सियासी खेल खेला है। उनका यह फतवा सर्वथा अनुचित और असंवैधानिक है। मातृभूमि के जयघोष गान पर पाबंदी लगानेवालों का हम तीव्र प्रतिकार व विरोध करते हैं। इसको गाकर अनगिनत स्वतंत्रता सेनानी हंसते-हंसते फांसी के फंदे में झूल गये थे। आज भी मुसलमानों का शिक्षित और समझदार तबका जमीयत उलेमाए हिंद के इस फतवे को अस्वीकार कर रहा है। इस फतवे को हर भारतवासी पूरी तरह से अमान्य करता है। जो नागरिक वंदे मातरम कहेगा वही भारत देश में रहेगा।

*** समर्थ और क्षमता में योग्यता का अंतर होता है; आवश्यक नहीं की हर सामर्थवान योग्य हो, पर योग्यता स्वयं ही क्षमता का विकास करने में सक्षम है।**

*** बुद्धिमान का दुनिया सम्मान करती है, लेकिन चरित्रवान का दुनिया अनुसरण करती है। इसलिए आदमी का चरित्रवान होना बड़ी बात है।**

*** जिनमें अकेले चलने के हौसले होते है उन्हीं के पीछे काफिला चलता है।**

वतन का प्रतिक राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा

मजहबों से ऊंचा तिरंगा

वतन की राह में वतन को सजाते जाना है, मजहबों से ऊंचा तिरंगा कहते जाना है।
आंधी आये या तूफां जय हिंद कहते जाना है, बस इतनी सी तमन्ना है वतन की शान पे कुरबान जाना है।
वतन की राह में वतन को सजाते जाना है, मजहबों से ऊंचा तिरंगा कहते जाना है।
इस इतनी सी तमन्ना है वतन की शान पे कुरबान जाना है।
मुद्धत से सोई हिंद को जगाते जाना है, शहीदों के ख्वाब को सजाते जाना है।
दूर गगन पे वतन के झंडा लहराते जाना है, बस इतनी सी तमन्ना है वतन की शान पे कुरबान जाना है।
दुश्मनों के चाल, गद्दारों के भेष पहचान जाना है, वतन फरामोश जालसाजों को मिटाते जाना है।
हाथों में हाथ लिए कदम-कदम बढ़ाते जाना है, बस इतनी सी तमन्ना है वतन की शान पे कुरबान जाना है।
मेरी आन तिरंगा, मेरी शान तिरंगा, मेरी जान तिरंगा। हर एक जुबां को यह गीत सिखाते जाना है।
रंजिशों को सबक अपनों में प्यार बढ़ाते जाना है, वतन की राह में वतन को सजाते जाना है।
मजहबों से ऊंचा तिरंगा कहते जाना है, बस इतनी सी तमन्ना है वतन की शान पे कुरबान जाना है।

हिंद वतन का मान तिरंगा

हिंद वतन का मान तिरंगा, लहर-लहर लहराता है। नेहमयी भारत माता की, महिला का गुन गाता है।
हिंद वतन का मान तिरंगा... हृदय विश्व का हिंद वतन, वैदिक सब यहां प्रणाली है।
ऋषियों, मुनियों की संतानें, यह राष्ट्र चमन सब माली है। श्रम सेवा से सुमन खिला, खुशबू से जग महकाता है।
हिंद वतन का मान तिरंगा... सत्य, अहिंसा, प्रेम-दया, तप, अद्भुत यहां खजाना है।
आध्यात्म ज्ञान की प्रखर प्रभा, बहुत खुद को पहचाना है। ब्रह्म स्वयम आ आके जहां गीता का ज्ञान सुनाता है।
हिंद वतन का मान तिरंगा... यहां संत सैनिक प्रहरी इक सीमा का इक संस्कृति का।
इक मार भगाये अरि दल को, इक मोह हरे भव संसृति का।
सत पथ पर चलकर सज्जन जहां पूर्ण पुरुष बन जाता है।।
हिंद वतन का मान तिरंगा... मातृभुमि मां के आंचल सुरसरि गंगाजी बहती है।
रवि तनया को गले लगाकर, प्रेम-भाव उद्भवती है। प्रकृति सिखाए प्रेम जहां, विष भी अमृत बन जाता है।
हिंद वतन का मान तिरंगा... संदेश दे रहा अमर तिरंगा, असत् त्याग सत् को पा लो।
अज्ञान तिमिर अति दुखद रज्ज ज्ञान ज्ञेप लख गुन गा लो।
जीते जी मर-मर जो जिया, अमरत्व शंभु वह पाता है।। हिंद वतन का मान तिरंगा...

राष्ट्रध्वज हमेशा से ही सम्मान और प्रभुत्व का प्रतीक रहा है। हमारे देश के राष्ट्र ध्वज को तिरंगे की संज्ञा दी गयी है। तिरंगे झंड़े को भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में २२ जुलाई १९४७ को संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया। संविधान समिति ने तिरंगे झंडे को स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में मान्यता दे दी।

१९४७ से भारत का राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा न केवल राष्ट्रीय गौरव और संप्रभुता का प्रतीक रहा वरन यह कई अभियानों का भी साक्षी बना। २९ मई १९५३ को इसे विश्व की सबसे ऊंचाी चोटी माउंट एवरेस्ट पर ब्रिटेन के राष्ट्रध्वज यूनियन जैक और नेपाल के राष्ट्रध्वज के साथ लहराया गया। इसी दिन शेरपा तेजजिंग नोर्गे सर एडमंड हिलैरी के साथ माउंट एवरेस्ट के शिखर पर पहुंचे थे।

१९७१ में अपोलो १५ केसाथ तिरंगा झंडा अंतरिक्ष तक जा पहुंचा। इस इतिहास ने ५ अप्रैल १९८४ को स्वयं को पुन: तब दोहराया जब भारत सोवियत संघ के संयुक्त अंतरिक्ष मिशन पर विंग कमांडर राकेश शर्मा ने इसे अपने स्पेस सूट पर बैज के रूप में पहन रखा था। २३ मई १९८४ को बछेन्द्री पाल ने माउंट एवरेस्ट पर पहुंचनेवाली प्रथम भारतीय महिला के रूप में इसके शिखर पर राष्ट्रध्वज फहरा दिया। १७ जनवरी १९८९ को कर्नल जी.के. बजाज ने अंटार्कटिका अभियान के दौरान पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर तिरंगा झंडा फहराया।

२८ सितंबर १९८५ को कर्नल टी.पी. एस.चौधरी के नेतृत्व में तिरंगा झंडा विश्वयात्रा पर निकल पड़ा। कर्नल चौधरी और उनके दल ने तृष्णा नामक जहाज से ४७० दिनों में पूरी पृथ्वी के समुद्री मार्ग को नाप डाला और वे १० जनवरी १९८७ को भारत वापस लौटे। स्क्वाड्रन लीडर संजय थापर ने पूरे एशिया के स्काईड्राइवरों का रिकार्ड ध्वस्त करते हुए एम आई ८ हेलीकाप्टर से १० हजार फुट ऊंची छलांग लगाकर उत्तरी ध्रुव पर राष्ट्रध्वज फहरा दिया। भारत के राष्ट्रीय ध्वज में तीन रंग हैं। तिरंगे झंडे में समान अनुपात में तीन आड़ी पट्टियां हैं। इनमें गहरा केसरिया रंग सबसे ऊपर, सफेद रंग बीच में और गहरा हरा रंग सबसे नीचे है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज की लंबाई चौड़ाई का अनुपात ३.२ है। सफेद पट्टी के बीच में नीले रंग का एक चक्र है। इसका प्रारूप सारनाथ में सम्राट अशोक की लाट पर बने चक्र से लिया गया है। इसका व्यास लगभग सफेद पट्टी की चौड़ाई जितना ही है और इसमें २४ तीलियां हैं।

पहले हम राष्ट्रीय ध्वज को १५ अगस्त और २६ जनवरी को ही फहरा सकते थे लेकिन भारत सरकार ने राष्ट्रध्वज से जुड़े नियमों में बदलाव करके सभी नागरिकों को साल के ३६५ दिन तिरंगा झंडा अपने घर और प्रतिष्ठानों पर फहराने का अधिकार दे दिया है जिसकी शर्त यह है कि हम इसका सम्मान हर हाल में बरकरार रखें। राष्ट्रीय ध्वज का अपमान करने पर ३ साल की सख्त कैद और जुर्माने की सजा भी मिल सकती है।

राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा को फहराने के कुछ नियम भी हैं जिन्हें हमें हर हाल में पूरा करना पड़ता है। राष्ट्रध्वज का आकार ३ : २ के अनुपात में ही होना चाहिए और इसकी आकृति रंग मानकों के अनुसार ही होनी चाहिए। राष्ट्रध्वज को सूर्योदय के समय फहराना और सूर्यास्त के समय उतार लेना चाहिए।

कोई भी दूसरा झंडा राष्ट्रध्वज से ऊंचा नहीं लहराया जा सकता। ध्वजदंड पर कोई भी माला, फूल या प्रतीक चिन्ह नहीं होना चाहिए। राष्ट्रीय ध्वज को किसी भी व्यक्ति या वस्तु को सलामी देने के लिए जरा सा भी नहीं झुकाया जाना चाहिए। केवल भारत सरकार द्वारा राजकीय शोक की घोषणा पर ही इसे आधे ध्वज दंड पर फहराया जा सकता है।

भारत सरकार की विशेष अनुमति के बिना राष्ट्रध्वज और इसके डिजायन को किसी व्यावसायिक कार्य में उपयोग नहीं किया जा सकता। राष्ट्रध्वज पर कोई वाक्य या डिजायन नहीं लिखा या बनाया जा सकता। इसका प्रयोग पोशाक, रूमाल, कवर आदि किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता। गंदा या क्षतिग्रस्त तिरंगा झंडा नहीं फहराया जा सकता।

प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्र का अपना एक ध्वज होता है। यह एक स्वतंत्र देश होने का संकेत है। भारतीय राष्ट्रीय ध्वज की अभिकल्पना पिंगली वेंकैयानंद ने की थी। इसके वर्तमान रूप को २२ जुलाई १९४७ को आयोजित भारतीय संविधान सभा की बैठक के दौरान अपनाया गया था जो १५ अगस्त १९४७ को स्वतंत्रता के कुछ ही दिन पूर्व की गई थी। इसे १५ अगस्त १९४७ और २६ जनवरी १९५० के बीच भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में आयोजित किया गया और इसके पश्चात भारतीय गणतंत्र ने इसे अपनाया भारत में तिरंगे का अर्थ भारतीय राष्ट्रीय ध्वज है।

ध्वज के रंग - भारतीय राष्ट्रीय ध्वज में तीन रंग की पट्टिया हैं, सबसे ऊपर केसरिया, बीच में सफेद और नीचे गहरे हरे रंग की पट्टी होती है और वे तीनों समानुपात में होती हैं। ध्वज की चौड़ाई का अनुपात इसकी लंबाई के साथ २ और ३ का है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज की ऊपरी पट्टी में केसरिया रंग हैं जो देश की शक्ति और साहस को दर्शाता है। बीच में स्थित सफेद पट्टी धर्म चक्र के साथ शांति और सत्य का प्रतीक है। निचली हरी पट्टी उर्वरता, वृद्धि और भूमि की पवित्रता को दर्शाती है।

चक्र - इस धर्मचक्र को विधि का चक्र कहते हैं जो तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व मौर्य सम्राट अशोक द्वारा बनाए गए सारनाथ स्तंभ से लिया गया है। इस चक्र को प्रदर्शित करने का आशय यह है कि जीवन गतिशील है और रुकने का अर्थ मृत्यु है।

ध्वज फहराने के नियम - राष्ट्रीय ध्वज को शैक्षिक संस्थानों, महाविद्यालयों, खेल परिसरों, स्काउट शिबिरों में सम्मान देने के लिए फहराया जा सकता है। किसी सार्वजनिक संगठन या शैक्षिक संस्थान के सदस्य द्वारा राष्ट्रीय ध्वज का प्रदर्शन सभी दिनों और आयोजनों पर राष्ट्रीय ध्वज के मान- सम्मान और प्रतिष्ठा के अनुरूप अवसरों पर किया जा सकता है। इस ध्वज को सांप्रदायिक लाभ, पर्दे या वस्त्रों के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता है। इसे मौसम से प्रभावित हुए बिना सूर्योदय से सूर्यास्त तक फहराया जाना चाहिए।

इस ध्वज को भूमि, फर्श या पानी से स्पर्श नहीं कराया जाना चाहिए। इसे वाहनों के हुड, ऊपर और बगल या पीछे, रेलों, नावों या वायुयान पर लपेटा नहीं जा सकता। किसी अन्य ध्वज या ध्वज पट्ट को हमारे ध्वज से ऊंचे स्थान पर लगाया नहीं जा सकता है।

प्रथम राष्ट्रीय ध्वज ७ अगस्त १९०६ को पारसी बागान चौक कलकत्ता में फहराया गया था जिसे अब कोलकाता कहते हैं। इस ध्वज को लाल, पीले और हरे रंग की क्षैतिज पट्टियों से बनाया गया था।

द्वितीय ध्वज को पेरिस में मैडम कामा और १९०७ में उनके साथ निर्वासित किए गए कुछ क्रांतिकारियों द्वारा फहराया गया था। यह भी पहले ध्वज के समान ही था, सिवाय इसके कि इसमें सबसे ऊपर की पट्टी पर केवल एक कमल था। इस ध्वज में प्रयोग किए गए सात तारे सप्तऋषि को दर्शाते हैं। यह ध्वज बर्लिन में हुए समाजवादी सम्मेलन में भी प्रदर्शित किया गया था।

तृतीय ध्वज १९१७ में आया जब हमारे राजनीतिक संघर्ष ने एक निश्चित मोड़ लिया। डॉ. एनी बेसेंट और लोकमान्य तिलक ने स्वायत्तता आंदोलन के दौरान इसे फहराया। इस ध्वज में ५ लाल और ४ हरी क्षैतिज पट्टियां एक के बाद एक और सप्तऋषि के सात सितारे थे। बाईं और ऊपरी किनारे पर यूनियन जैक था। एक कोने में सफेद अर्धचंद्र और सितारा भी था।

राष्ट्र के प्रतीक- राष्ट्रीय ध्वज- तिरंगा, राष्ट्रीय चिन्ह- अशोक चक्र, राष्ट्रगान- जन गण मन, राष्ट्रीय गीत- वंदे मातरम्, राष्ट्रीय पशु- बाघ, राष्ट्रीय जल जीव- गंगा डॉल्फिन, राष्ट्रीय पक्षी- मोर, राष्ट्रीय पुष्प- कमल, राष्ट्रीय वृक्ष- बरगद, राष्ट्रीय फल- आम, राष्ट्रीय खेल- मैदानी हॉकी, राष्ट्रीय पंचांग- शक संवत।

तिरंगा झंडा हमारा राष्ट्रीय ध्वज है यह तो सब जानते है किंतु हमारा राष्ट्रीय ध्वज कैसे निर्मित हुआ इसका एक लंबा इतिहास है। १९३१ में राष्ट्रीय झंडे का एक नमूना बनाया गया था पर उसे कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया। बाद में उसी वर्ष कांग्रेस ने एक राष्ट्रीय झंडा स्वीकार किया। आजादी के बाद राष्ट्रीय झंडे में चरखे के स्थान पर अशोक चक्र बनाया गया। इस तिरंगे ध्वज को संविधान सभा ने २२ जुलाई १९४७ को अपनाया। इसे १४ अगस्त १९४७ को संविधान सभा के अर्धरात्रि कालिन अधिवेशन में राष्ट्र को समर्पित किया गया।

राष्ट्रीय ध्वज का आकार एवं विशेषताएं - हमारे राष्ट्रीय ध्वज में तीन रंगों को अपनाया गया है। सबसे ऊपर केसरिया रंग है जो शौर्य, बलिदान, त्याग तथा विरक्ति, विनम्रता का प्रतीक है बीच में सफेद रंग की पट्टी है जो सत्य, सादगी और पवित्रता की प्रतीक है। सबसे नीचे गहरा हरा रंग समृद्धि का प्रतीक है। यह तीनों रंग भारत के तीन प्रमुख धर्मों, वैदिक, ईसाई तथा इस्मालम का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। राष्ट्रीय ध्वज में सफेद पट्टी के मध्य में गहरे नीले रंग का अशोक चक्र बना हुआ है। इस चक्र में २४ आरे हैं जो हमें निरंतर कार्यरत रहने की प्रेरणा देते हैं तथा शिक्षा देते हैं कि चौबीसों घंटे हमें अपने कर्तव्य का पूर्ण सच्चाई व ईमानदारी के साथ पालन करना चाहिए।

हमारे देश का राष्ट्रीय ध्वज पंद्रह अगस्त, गणतंत्र दिवस तथा अन्य मौकों पर हर नागरिक द्वारा फहराया जा सकता है। जिन सरकारी इमारतों पर राष्ट्रीय झंडा फहराता है उनमें मुख्य हैं- उच्चतम न्यायालय, जिलाधीश कार्यालय, केंद्रीय जेल, जिला परिषद, नगर निगम, नगर पालिका के कार्यालय आदि। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के भवनों पर भी प्रतिदिन राष्ट्रीय झंडा फहराया जाता है।

आम नागरिकों में राष्ट्रीय ध्वज के प्रतिश्रद्धा भाव को देखते हुए राष्ट्रीय ध्वज संहिता २००२ में संशोधन किया गया है। इसके अनुसार अब राष्ट्रीय ध्वज को घर की छतों, सभी राजकीय भवनों में आम दिनों व समारोह में भी प्रत्येक नागरिक फहरा सकता है। सूर्योदय होने पर ही राष्ट्रीय ध्वज फहराया जाता है और सूर्यास्त होने पर झुका दिया जाता है। झंडे को हमेशा डोरी से फहराया जाना चाहिए और झुकाते समय धीमें से और आदर के साथ झुकाया जाना चाहिए। बहुत ही विशेष मौकों पर रात के समय भी राष्ट्रीय झंडा फहराया जा सकता है। राष्ट्रीय झंडे को फहराते समय इन नियमों का सावधानी के साथ पालन किया जाना चाहिए। इस बारे में अन्य मुख्य नियम इस प्रकार हैं।

१) झंडा धुंधले रंग का नहीं होना चाहिए। वह सिकुड़ा अथवा मुड़ा हुआ नहीं होना चाहिए। उसमें छेद नही होने चाहिए। वह कटा-फटा भी नहीं होना चाहिए। फटे हुए झंडे को सिल लेने के बाद भी अशोक चक्र में २४ लाइनें ही होनी चाहिए, कम या ज्यादा नहीं। २) झंडे को फहराते समय केसरी रंग ऊपर होना चाहिए। ३) पर्दे के रूप में झंडे का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। ४) झंडा सम्मान पूर्ण जगह पर फहराया जाना चाहिए। उसकी ऊंचाई इतनी हो कि उसे अच्छी तरह देखा जा सके वह धरती अथवा दीवार को न छुए और न ही वृक्ष की डालियों आदि से टकराए। ५) राष्ट्रीय झंडे का उपयोग तोरण बदनवार जैसी सजावट के लिए नहीं किया जाना चाहिए। ६) झंडे अथवा झंडे वाले बांस पर फुलमाला नहीं चढ़ानी चाहिए। ७) झंडे पर किसी तरह की लिखावट नहीं चाहिए। ८) राष्ट्रीय झंडे के साथ उसी बांस पर कोई अन्य झंडा नहीं फहराया जाना चाहिए। ९) कोई सरकारी दफ्तर किराए के भवन में हैं, वहां दो या ज्यादा दफ्तर भी हो सकते हैं, ऐसी जगहों पर रोज झंडा फहराने की जरूरत नहीं पर विशेष अवसरों पर इसे जरूर

फहराना चाहिए। १०) जब राष्ट्रीय झंडा कट-फट जाए या उसका उपयोग न किया जा सके, तो उसे एकांत में जलाकर नष्ट कर देना चाहिए उसे निरादर पूर्वक कहीं फेंकना नहीं चाहिए। ११) झंडारोहरण के समय सावधान की स्थिति में खड़े होकर राष्ट्रीय ध्वज को सलामी देनी चाहिए।

झंडा रोहण के समय झंडे में फूल बांधकर उसे ध्वज स्तंभ के ऊपर टांग दिया जाता है जब मुख्य अतिथि द्वारा झंडा फहराया जाता है तो यह फूल मुख्य अतिथि पर गिरते हैं। कभी-कभी डोरी खींचने पर झंडा नहीं खुलता है, तब स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है।

केंद्र सरकार के रक्षा मंत्रालय दिल्ली के कार्यालय ने पत्र क्रमांक ५/२/९५ डी.सी. ईआर दिनांक २४ जनवरी १९९६ के द्वारा यह निर्देश दिया था कि राष्ट्रीय ध्वज में फूल बांधकर फहराने की प्रथा को समाप्त किया जावे। इस आदेश की पालना सभी सरकारी विभागों तथा विद्यालयों आदि में नहीं हो रही है। सभी सरकारी पदाधिकारियों को ध्यान देकर इसका भी पालन करना चाहिए। राष्ट्रीय झंडे के प्रति आदर प्रकट करने के लिए कई बातों पर ध्यान रखना जरूरी होता है। हमारा देश लोकतांत्रिक देश है और हमारे देश ने कई दूसरे देशों के साथ राजनीतिक संबंध बना रखे हैं। इसलिए कई ऐसे मौके आते हैं, जब दूसरे राष्ट्र का राष्ट्रीय झंडा भी अपने देश के राष्ट्रीय झंडे के साथ फहराया जाता है इसके लिए भी कुछ नियमों का पालन करना बहुत जरूरी है। जब एक सीधी कतार में अन्य देशों के राष्ट्रीय झंडों के साथ हमारे देश का राष्ट्रीय झंडा भी फहराया जाता है तब वह सबसे दायीं ओर होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि जब कोई व्यक्ति राष्ट्रीय झंडों की उस कतार के बीच में दर्शकों की ओर मुंह करके खड़ा हो, तो हमारा राष्ट्रीय झंडा उसके सबसे दायीं ओर होनी चाहिए।

२५ अक्टूबर का दिन पूरी दुनिया में संयुक्त राष्ट्र दिवस के रूप में मनाया जाता है। जब संयुक्त राष्ट्र के झंडे के साथ राष्ट्रीय झंडा फहराया जाता है, तब उसे किसी भी तरह फहराया जा सकता है। वैसे प्राय: हमारे राष्ट्रीय ध्वज को सबसे दायीं ओर फहराया जाता है। कभी-कभी दुर्भाग्य से हमारे देश के किसी बड़े नेता की मृत्यु हो जाती है, ऐसे दु:खद मौकों पर हर कोई राष्ट्रीय ध्वज को आधा झुकाकर उसके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित्त करना चाहता है, यह तरीका बिल्कुल गलत है, राष्ट्रीय झंडा केवल उन्हीं इमारतों पर आधा झुकाया जाना चाहिए जहा वह रोज फहराया जाता है। इस तरह के मौकों पर हर नागरिक द्वारा राष्ट्रीय झंडे को आधा फहराना उचित नहीं है, उन्हें झंडा फहराया नहीं चाहिए।

मेरी आन तू

मेरी आन तू मेरी शान तू, मेरी हर आहट ईमान तू।
दिल से कहता हूं मैं हूं तेरा, तू है मेरा भारत महान तू।
है तिरंगा मेरी जान तू, मेरा साहस मेरी पहचान तू।
मेरी मिट्टी मेरा स्वाभिमान तू, तू ही मेरा भारत महान तू।
अगर तुझ पर कोई आंच आए, तो सबसे पहले मेरी जान जाए।
हो हाथों में बंदुक और, मुख में जय भारत माता का नारा।
विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊंचा रहे हमारा।

रंग लो एक तिरंगा

रंग लो एक तिरंगा, जिसमें प्रेम दया सच्चाई हो।
सलिल हो पावन, चंद्रभागा का, सुरसरि गंगा माई हो।।
धर्म दण्ड हो, ना पाखंड हो, शुभ, सत्कर्म मिलाओ।
राम रमइया, अल्ला-अकबर मिलकर इसे बनाओ।।
सागर की लहरों सा लहरे, पुरवा की पुरवाई हो।
सब समान हों, सब के महान हों, धनी रहें विद्या धन के।
सभी सुखी हों, नहीं दु:खी हों, मिटें रोग सब जन-जन के।।
ऊंच नीच का भेद रहे ना, हर एक भाई भाई हो।
तुम ही हो भविष्य भारत के, तुम बल की आंधी हो।
तुम ही वीर शिवा, नानक, गौतम, कबीर गांधी हो,
राम कृष्ण की पावन बगिया, की सुन्दर अमराई हो।

सबसे प्यारा, तिरंगा हमारा- हर राष्ट्र का अपना एक ध्वज होता है। यही ध्वज होता है देश की आन, बान और शान। भारत का राष्ट्रीय ध्वज है तिरंगा। इस तिरंगे पर हर भारतीय को गर्व है। भारतीय राष्ट्रीय ध्वज की कल्पना १५ अगस्त १९४७ को भारत की स्वतंत्रता के कुछ ही दिन पूर्व की गई थी। देश के राष्ट्रीय ध्वज में तीन रंग की पट्टियां हैं। सबसे ऊपर केसरिया, बीच में सफेद और नीचे गहरे हरे रंग की पट्टी। सफेद पट्टी के मध्य में गहरे नीले रंग का एक चक्र है। इसमें २४ तीलियां है। यही है हमारा राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा और इस तिरंगे की शान के लिए हर भारतीय अपनी कुर्बानी देने के लिए तैयार रहता है।

प्यारा तिरंगा

फहर रहा है प्यारा तिरंगा देखो कितनी शासन से, जागो वन के रखवालों रक्षा करो जी जान से।
गांव शहर में दंगे होते, देश प्रेम का नाम नहीं, करते नेता हवा बात में जनहित जैसा काम नहीं।।
भगतसिंह की राख पुकारे अपने हिंदुस्तान से, जागो वतन के रखवालों रक्षा करो जी जान से।
फहर रहा है प्यारा तिरंगा देखो कितनी शान से।।
नदियों खून बहाकर हमने यह आजादी पाई है, लाखों दीप बुझाकर हमने अपनी शान बचाई है।।
दसों दिशाएं थिरक रही मां भारती के यशगान से, जागो वतन के रखवालों रक्षा करो जी जान से।।
फहर रहा है प्यारा तिरंगा देखो कितनी शान से।।
काला धंधा, रिश्वतखोरी, इसको हमें मिटाना है। महाशक्ति यह देश बने, ऐसा करके दिखाना है।
आओ अच्छी बातें सीखें गीता और कुरान से। जागो वतन के रखवालों रक्षा करो जी जान से,
फहर रहा है प्यारा तिरंगा देखो कितनी शान से।।
फूलों के इस गुलशन से कांटों को हमें हटाना है, विश्व शांति की हवा बहे, ऐसी फिजा बनाना है।
करना सभी से दोस्ती न करना कभी नादान से, जागो वतन के रखवालों रक्षा करो जी जान से।
फहर रहा है प्यारा तिरंगा देखो कितनी शान से।।

राष्ट्र ध्वज हमेशा से ही सम्मान और प्रभुत्व का प्रतीक रहा है। हमारे देश के राष्ट्र ध्वज को तिरंगे की संज्ञा दी गयी है। तिरंगे झंडे को भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में २२ जुलाई १९४७ को संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया। संविधान समिति ने तिरंगे झंडे को स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप में मान्यता दे दी।

१९४७ से भारत का राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा न केवल राष्ट्रीय गौरव और संप्रभुता का प्रतीक रहा वरन यह कई अभियानों का भी साक्षी बना। २९ मई १९५३ को इसे विश्व की सबसे ऊंची चोटी माउन्ट एवरेस्ट पर ब्रिटेन के राष्ट्रध्वज यूनियन जैक और नेपाल के राष्ट्रध्वज के साथ लहराया गया। इसी दिन शेरपा तेजजिंग नोर्गे सर एडमंड हिलैरी के साथ माउंट एवरेस्ट के शिखर पर पहुंचे थे।

१९७१ में अपोलो १५ के साथ तिरंगा झंडा अंतरिक्ष तक जा पहुंचा। इस इतिहास ने ५ अप्रैल १९८४ को स्वयं को पुन: तब दोहराया जब भारत सोवियत संघ के संयुक्त अंतरिक्ष मिशन पर विंग कमांडर राकेश शर्मा ने इसे अपने स्पेस सूट पर बैज के रूप में पहन रखा था। २३ मई १९८४ को बछेन्द्री पाल ने माउंट एवरेस्ट पर पहुंचने वाली प्रथम भारतीय महिला के रूप में इसके शिखर पर राष्ट्र ध्वज फहरा दिया। १७ जनवरी, १९८९ को कर्नल जी. के बजाज ने अंटार्कटिका अभियान के दौरान पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर तिरंगा झंडा फहराया।

२८ सितंबर १९८५ को कर्नल टी.पी.एस. चौधरी के नेतृत्व में तिरंगा झंडा विश्वयात्रा पर निकल पड़ा। कर्नल चौधरी और उनके दल ने तृष्णा नामक जहाज से ४७० दिनों में पूरी पृथ्वी के समुद्री मार्ग को नाप डाला और वे १० जनवरी १९८७ को भारत वापस लौटे। २१ अप्रैल १९९९ को स्क्वाड्रन लीडर संजय थापर ने पूरे एशिया के स्क्राईड्राइवरों का रिकार्ड ध्वस्त करते हुये एम आई ८ हेलीकाप्टर से १० हजार फुट ऊंची छलांग लगाकर उत्तरी ध्रुव पर राष्ट्रध्वज फहरा दिया।

भारत के राष्ट्रीय ध्वज में तीन रंग हैं। तिरंगे झंडे में समान अनुपात में तीन आड़ी पट्टियां हैं। इनमें गहरा केसरिया रंग सबसे ऊपर, सफेद रंग बीच में और गहरा हरा रंग सबसे नीचे है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज की लंबाई चौड़ाई का अनुपात ३.२ है। सफेद पट्टी के बीच में नील रंग का एक चक्र है। इसका प्रारूप सारनाथ में सम्राट अशोक की लाट पर बने चक्र से लिया गया है। इसका व्यास लगभग सफेद पट्टी की चौड़ाई जितना ही है और इसमें तीलियां हैं। पहले हम राष्ट्रीय ध्वज को १५ अगस्त और २६ जनवरी को ही फहरा सकते थे लेकिन भारत सरकार ने राष्ट्रध्वज से जुड़े नियमों में बदलाव करके सभी नागरिकों को साल के ३६५ दिन तिरंगा झंडा अपने घर और प्रतिष्ठानों पर फहराने का अधिकार दे दिया है जिसकी शर्त यह है कि हम इसका सम्मान हर हाल में बरकरार रखें। राष्ट्रीय ध्वज का अपमान करने पर ३ साल की सख्त कैद और जुर्माने की सजा भी मिल सकती है।

राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा को फहराने के कुछ नियम भी हैं जिन्हें हमें हर हाल में पूरा करना होगा। राष्ट्रध्वज का आकार ३ : २ के अनुपात में ही होना चाहिए और इसकी आकृति रंग मानकों के अनुसार ही होनी चाहिये। राष्ट्रध्वज को सूर्योदय के समय फहराना और सूर्यास्त के समय उतार लेना चाहिए। कोई भी दूसरा झंडा राष्ट्रध्वज से ऊंचा नहीं लहराया जा सकता। ध्वजदंड पर कोई भी माला, फूल या प्रतीक चिन्ह नहीं होना चाहिए। राष्ट्रीय ध्वज को किसी भी व्यक्ति या वस्तु को सलामी देने के लिए जरा सा भी नहीं झुकाया जाना चाहिए। केवल भारत सरकार द्वारा राजकीय शोक की घोषणा पर ही इसे आधे ध्वज दंड पर फहराया जा सकता है। भारत सरकार की विशेष अनुमति के बिना राष्ट्रध्वज और इसके

डिजायन को किसी व्यावसायिक कार्य में उपयोग नहीं किया जा सकता। राष्ट्रध्वज पर कोई वाक्य या डिजायन नहीं लिखा जा सकता ना ही बनाया जा सकता है। इसका प्रयोग पोशाक, रूमाल, कवर आदि किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता। गंदा या क्षतिग्रस्त तिरंगा झंडा नहीं फहराया जा सकता।

मजहबों से ऊंचा तिरंगा

वतन की राह में वतन का सजाने जाना है, मजहबों से ऊंचा, तिरंगा कहते जाना है।
आंधी आये या तूफां जय हिंद कहते जाना है बस इतनी सी तमन्ना है वतन को सजाते जाना है।
वतन की राह में वतन को सजाते जाना है। मजहबों से ऊंचा तिरंगा कहते जाना है।
बस इतनी सी तमन्ना है वतन के शान पे कुरबान जाना है, मुद्दत से सोई हिंद को जगाते जाना है।
शहीदों के ख्वाबों को सजाते जाना है। दूर गगन के ख्वाबों को सजाते जाना है।
बस इतनी सी तमन्ना है वतन के शान पे कुरबान जाना है। दुश्मनों के चाल गद्दारों के भेष पहचान जाना है।

देश में बीते छह दशक से जारी जश्न-ए-आजादी के सिलसिले में लालकिले की प्राचीर से सबसे ज्यादा १७ बार तिरंगा फहराने का मौका प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को मिला। वही उनकी पुत्री इंदिरा गांधी ने भी राष्ट्रीय राजधानी स्थित सत्रहवीं शताब्दी की इस धरोहर पर १६ बार राष्ट्रध्वज फहराया।

नेहरू ने आजादी के बाद सबसे पहले १५ अगस्त १९४७ को लाल किले पर झंडा फहराया और अपना बहुचर्चित संशोधन नियति से एक पूर्व निश्चित भेंट दिया। नेहरू २७ मई १९६४ तक प्रधानमंत्री पद पर रहे। इस अवधि के दौरान उन्होंने लगातार १७ स्वतंत्रता दिवस पर ध्वजारोह किया। आजाद भारत के इतिहास में गुलजारी लाल नंदा और चंद्रखेशर ऐसे नेता रहे जो प्रधानमंत्री तो बने लेकिन उन्हें स्वतंत्रता दिवस पर तिरंगा फहराने का एक भी बार मौका नहीं मिल सका। नेहरू के निधन के बाद २७ मई १९६४ को नंदा प्रधानमंत्री बने लेकिन उस वर्ष १५ अगस्त आने से पहले ही नौ जून १९६४ को वह पद से हट गये और उनकी जगह लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने। नंदा ११ से २४ जनवरी १९६६ के बीच भी प्रधानमंत्री पद पर रहे। इसी तरह चंद्रशेखर १० नवंबर १९९० को प्रधानमंत्री बने लेकिन १९९१ के स्वतंत्रता दिवस के पहले ही उस वर्ष २१ जून को पद से हट गये।

लाल बहादुर शास्त्री के निधन के बाद नंदा कुछ दिन प्रधानमंत्री पद पर रहे लेकिन बाद में २४ जनवरी १९६६ को नेहरू की पुत्री इंदिरा गांधी ने सत्ता की बागडोर संभाली। नेहरू के बाद सबसे अधिक बार जिस प्रधानमंत्री ने लाल किले पर तिरंगा फहराया, वह इंदिरा ही रहीं। इंदिरा १९६६ से लेकर २४ मार्च १९७७ तक और फिर १४ जनवरी १९८० से लेकर ३१ अक्टूबर १९८४ तक प्रधानमंत्री पद पर रहीं। बतौर प्रधानमंत्री अपने पहले कार्यकाल में उन्होंने ११ बार और दूसरे कार्यकाल में पांच बार लाल किले पर झंडा फहराया।

स्वतंत्रता दिवस पर सबसे कम बार राष्ट्रध्वज फहराने का मौका चौधरी चरण सिंह २८ जुलाई १९७९ से १४ जनवरी १९८०, विश्वनाथ प्रताप सिंह २ दिसंबर १९८९ से १० नवंबर १९९०, एच.डी.देवगौड़ा १ जून १९९६ से २१ अप्रैल १९९७ और इंद्रकुमार गुजराल २१ अप्रैल १९९७ से लेकर २८ नवंबर १९९७ को मिला। इन सभी पूर्व प्रधानमंत्रियों ने एक एक बार १५ अगस्त को लाल किले से राष्ट्रध्वज फहराया।

संविधान की सार्थकता

२६ नवंबर १९४९ को देश का संविधान पारित हुआ। डॉ. भीमराव आंबेडकर के द्वारा रचित ब्रिटिश राज्य के संविधान के आधार पर एक गाईडलाइन की यह भारतीय देश को किस तरह आगे चलायेंगे। आंबेडकर की अध्यक्षता में एक संविधान की एक संमिति गठन हुई। भारत एक समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उनके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करनेवाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़संकल्प होकर संविधान सभा में इस संविधान को अंगीकृत व अधिनियमित किया। संविधान कोई जड़ वस्तु नहीं है बल्कि एक गतिशील दस्तावेज है और उसे देश की जनता के लिए सार्थक बनाये जाने की आवश्यकता है। गठित संविधान सभा को मालूम था कि संविधान में नये बदलाव की जरूरत पड़ेगी और एक गतिशील दुनिया में देश की जनता की सेवा करने का यही उचित रास्ता है। यही कारण है कि संविधान में समय समय पर कई संशोधन भी हुए है। संविधान अपने आप में एक पूर्ण एक अमूर्त आदर्श नहीं है बल्कि उसे हर गली मोहल्ले और गांव में आम आदमी की जरूरतों के अनुरूप सार्थक बनाया गया है। इससे लोग आपस में जूड़े और अधिक अनुकूल हो। संविधान की आत्मविश्वास है। यह विश्वास एक दूसरे में हो, एक दूसरी संस्था में हो। एक दूसरे के अच्छाइयों में हो और भावी पीढ़ी के विवेक पर भी विश्वास हो। केंद्र सरकार राज्य सरकारों को वित्तीय अधिकारों का विकेंद्रीकृत करती है तो संघीय भावना के अनुरूप काम किया जाता है। संविधान निर्माता ने यह महसूस भी किया था। संविधान चाहे कैसा भी लिखा जाए वह तब तक सार्थक नहीं होगा जब तक जनता के अधिकारों को लागू नहीं किया जाए और उनके मूल्यों की रक्षा ना हो। उन्हें भरोसा था कि भावी पीढ़ियां भी इसका पालन करेंगी। प्रत्येक व्यक्ति ने यह सोचना चाहिए कि संविधान के मूल्यों की रक्षा के लिये उन्होंने क्या-क्या योगदान दिया।

केन्द्र की राजग सरकार ने २६ नवंबर को संविधान दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया जो एक अच्छा और स्वागतयोग्य कदम माना जाना चाहिए क्योंकि २६ नवंबर १९४९ ही वह दिन था जब देश का यह आधारभूत दस्तावेज स्वीकार किया गया था। आजादी के बाद से देश ने जिन सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक संकटों का सामना किया है उन तमाम संकटों के बीच यह हमारा संविधान ही था, जिसने पथप्रदर्शक का काम किया है और हमारी शासन व्यवस्था को बरकरार रखा है। सांविधानिक ढांचे ने राष्ट्र की इतनी अच्छी तरह से सेवा की है कि इसे हम सहजता से लेने लगे हैं। संक्षिप्त आपातकाल को अपवाद के रूप में छोड़ दें तो इस देश के नागरिकों ने संविधान प्रदत मूलभूत अधिकारों का निर्बाध उपभोग किया है। वर्ष १९९१ के आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया के जरिये मुक्त बाजार की जो अर्थव्यवस्था हमारे देश में आई वह उदार राजनैतिक व्यवस्था के समर्थन के कारण सफल रही और इसका पूरा श्रेय देश के संविधान को ही जाता है। भारत अभी भी एक विकसित देश नहीं बन सका है, हालांकि वह विश्व के विकसित देशों की सूची में शामिल होने की दिशा में अग्रसर है। इसके बावजूद हम इस हकीकत को नजरअंदाज नहीं कर सकते कि देश की एक-तिहाई आबादी

अभी भी घोर गरीबों में जिंदगी बशर करने के लिए मजबूर है। यहां तक कि जो लोग सरकार द्वारा निर्धारित गरीबी रेखा से ऊपर उठ चुके हैं, वे भी इस बात को लेकर आश्वस्त नहीं हैं कि वे दुबारा गरीबी की गर्त में नहीं गिर जाएंगे। देश में साक्षरता की दर में सुधार हुआ है, पर शिक्षा अभी भी दूर का सपना बनी हुई है। लोगों में सफल होने और गरिमापूर्ण जीवन जीने की तीव्र इच्छा है। हर व्यक्ति समृद्धि में ही खेलना चाहता हो, ऐसा नहीं है। परंतु खुशहाल की जिंदगी हासिल करने के लिए अभी लंबी दूरी तय करनी बाकी है। पर बेहतर जिंदगी की चाहत और उम्मीद हर व्यक्ति में है।

आज की तारीख में हर आर्थिक स्तर के अधिकांश भारतीय न केवल इस बात में विश्वास करते हैं कि उन्हें सपने देखने का अधिकार है, बल्कि उन सपनों को हकीकत में बदल सकने का उन्हें पूरा यकीन भी है। यह सकारात्मक सोच हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था से आई है। हमारा संविधान हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार-स्तंभ है। भारत एशिया और अफ्रीका के उन कुछ देशों में से एक है, जो सफल लोकतंत्र है, जबकि कई राष्ट्र इस मामले में असफल सिद्ध हुए हैं। इस राजनैतिक आधारशिला का ही परिणाम रहा है कि भारत की आर्थिक सफलता की जड़ें दृढ़ हुई हैं और देश बनाना रिपब्लिक होने से बच गया है। देश में अभी भी बहुत असमानता और अन्याय है, परंतु संविधान द्वारा दिए गए सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय के भरोसे लोगों में उम्मीद बरकरार है। लोगों को विचारों की आजादी अभिव्यक्ति की आजादी, धर्म और पूजा-विधि की आजादी संविधान द्वारा प्रदत्त है। इसी तरह संविधान ने हमें पद और अवसर की समानता भी प्रदान की है। बहुत से लोग संभव है संविधान की प्रस्तावना में उद्धृत इन शब्दों को न जानते हों, पर उन्होंने उन शब्दों में रेखांकित भावनाओं को आत्मसात अवश्य किया है। देश का कोई भी राजनैतिक दल संविधान के इन सिद्धांतों की अनदेखी नहीं कर सकता।

भारतीय लोकतंत्र और भारतीय संविधान ने अतीत में अनेक संकटों का सामना किया है और यही कारण है कि भविष्य में आनेवाले संकटों का भी वह सफलतापूर्वक सामना करने में पूर्णतया सक्षम है।

भविष्य के लिए भी यह प्रकाश-स्तंभ होगा क्योंकि संविधान में भारत के सांस्कृतिक सामर्थ्य को अभिव्यक्त किया गया है। भारत की विविधता का मूल विचारों की स्वतंत्रता में है। अन्य कई देशों में असहिष्णुता का माहौल है। परंतु यह पागलपन लंबे समय तक टिक नहीं सकता। अतीत से हमे यही सीख लेनी है जो भविष्य में भी लाभदायक होगी। आस्तिक, नास्तिक, रुढ़िवादी, उदारवादी, दक्षिणपंथी, वामपंथी सभी को एक साथ घुलमिल कर यहां रहना है क्योंकि उनके पास यही एक विकल्प है। संविधान ने भारत के लिए अच्छाकाम किया है, क्योंकि उसने राष्ट्र की प्रतिभा को प्रतिबिंबित किया है। ऐसे में २६ नवंबर को संविधान दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लेकर केन्द्र की मोदी सरकार ने सराहनीय काम किया है। अफसोस की बात यह है कि इस विषय पर भी सत्तारूढ़ दल और विपक्षी दल तूतू, मैंमैं करने से बाज नहीं आए। भारतीय संविधान के शिल्पकार डॉ. बाबा साहब आंबेडकर भी उनके लिए आरोपप्रत्यारोप के विषय बन गए, जो अत्यंत खेदजनक है। एकता में अनेकता हमारी पहचान है। संविधान का आदर करना हमारा धर्म है।

प्रांत प्रेम के आगे संविधान का अपमान करनेवाले राजभक्त हो सकते हैं, राष्ट्रभक्त कदापि नहीं। वोट की राजनीति करनेवाले खद्दरधारियों की पहचान मात्र शिखंड की है। सत्ता के भूखे भेड़िए किस अधिकार से गुर्रा रहे हैं। ये असामाजिक तत्व हैं जिनका एकमात्र उद्देश्य शांति खंडित करना और फूट डालो राज करो है। जनता इनके बहकावे में नहीं आयी।

हमारे देश का संविधान बनानेवालों ने बड़ी मेहनत और सोच विचार के साथ सरकार के सिद्धांत तय किये थे। संविधान में कहा गया है कि देश के प्रत्येक नागरिक को फिर चाहे वो देश के किसी भी कोने में रहता हो, अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति की सुरक्षा का अधिकार रहेगा। देश के सभी नागरिकों को सरकारी और सरकार से मदद लेनेवाली किसी भी शिक्षा संस्था में प्रवेश पाने का हक होगा। धर्म, जाति, संप्रदाय या भाषा के आधार पर किसी में कोई भेद नहीं किया जाएगा। धर्म और भाषा के आधार पर घोषित अल्पसंख्यकों को अपनी अलग शिक्षा संस्था बनाने का अधिकार होगा। स्त्री और पुरुष सभी नागरिकों को अपनी रोजी रोटी कमाने के साधनों का समान अधिकार रहेगा। भौतिक संसाधनों की मिलकियत और निमंत्रण का इस तरह वितरण होगा कि उससे पूरे समाज को फायदा हो। आर्थिक व्यवस्था ऐसी होगी, जिससे सम्पत्ति और उत्पादन के साधनों का केंद्रीकरण न हो पाये। देश का कोई आदमी इनके लाभ से वंचित नहीं रहेगा। स्त्री और पुरुष दोनों को समान काम के लिए समान वेतन मिलेगा। स्त्री और पुरुष मजदूरों के स्वास्थ्य का समान रूप से ध्यान रखा जायेगा। किसी भी हालत में बच्चों का शोषण नहीं होगा।

किसी भी नागरिक को आर्थिक कारणों से उसकी शक्ति और उम्र के खिलाफ काम करने को मजबूर नहीं किया जायेगा। बच्चों को साफ-सुथरे वातावरण में स्वतंत्रता और सम्मान के साथ अपने विकास का अवसर मिलेगा। बच्चों और युवकों की नैतिक और भौतिक शोषण होने से रक्षा की जायेगी। यह कितने मानवीय सिद्धांत हैं हमारे संविधान में। कितनी उदारता और समानता की भावना से तैयार किए गए होंगे ये विधान। क्या समाज के स्त्री-पुरुषों को अपना रोजगार कमाने का समान अधिकार मिल पाया? क्या स्त्री और पुरुषों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिल पाया? क्या भौतिक संसाधन कुछ मुट्ठीभर लोगों के हाथों में नियंत्रित नहीं हो गये हैं? क्या नागरिकों के स्वास्थ्य का सही बंदोबस्त हो पाया? क्या देश के बच्चों का शोषण नहीं हो रहा? संविधान सभा ने दुनिया के पिछले सौ सालों के संवैधानिक दस्तावेजों और संविधानों की खाक छानकर अपने देश को एक महान संविधान दिया था। धर्मनिरपेक्षता की नींव पर स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के साथ जिंदगी जीने का संकल्प है इसमें।

नागरिकों के आत्मगौरव की रक्षा का आश्वासन भी है इसमें। संविधान में साफ-साफ कहा गया है कि हम देश के नागरिकों के आत्मगौरव को प्रतिष्ठित करने के लिए संकल्पित हैं। नागरिक के सम्मान व मौलिक अधिकारों की गॅरंटी इसी संकल्प का फल है। संविधान निर्माताओं का उद्देश्य देश के नागरिकों को एक शानदार सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन देना था। महात्मा गांधी ऐसे ही भारत का सपना देखते थे, जिसमें देश का सबसे गरीब नागरिक यह महसूस कर सके कि भारत उसका अपना देश है और इसके निर्माण में उसकी आवाज भी कुछ मायने रखती है। गांधीजी ऐसे भारत का सपना देखते थे, जहां सभी जातियां अमन -चैन के साथ रहती हों, जहां छुआछूत जैसी अस्वस्थ और अमानवीय परम्पराओं के लिए कोई जगह न हो और जहां महिलाओं को भी पुरुषों की तरह समान अधिकार हों। लेकिन क्या गांधीजी का यह सपना किसी भी अंश में पूरा हो पाया? यह सही है कि परम्पराएं और संस्कार जल्दी नहीं छूटते। लेकिन सामाजिक न्याय के लिए उन गलत परम्पराओं को झटकना चाहिए। जो आदमी-आदमी के बीच दूरी पैदा करते हैं और एक आदमी को दूसरे आदमी का शोषण करने के लिए उकसाते हैं। हमें सामाजिक न्याय के आदर्शों को जीवन और समाज में ढालने के लिए मेहनत करनी चाहिए। साथ ही व्यक्तिगत स्वार्थ को छोड़कर आपसी सहयोग के लिए

मानवतावादी दृष्टि अपनानी चाहिए। गांधीजी इसी स्वप्न को लेकर जीये और मरे। वे कहते थे कि हमें गरीब को उठाना होगा और अमीर को समझाना होगा। अगर हमारा देश आज भी जिंदा है तो आदमी की अच्छाई के कारण जिंदा है। हमें इसी अच्छाई को देश के हर नागरिक में उतारना चाहिए।

किसी भी देश की अपनी संस्कृति होती है। उसकी अपनी भाषा-बोली और अपनी संचार व्यवस्था होती है। उसकी अपनी पारिवारिक और सामाजिक संरचना होती है। किसी भी देश के विकास की नीतियां जब बनाई जाती हैं तो ये तथ्य ध्यान में रखने होते हैं। देश के मानस को समझना पड़ता है। कोई भी नीति जब तथ्यों को ताक पर रखकर विदेशी नकल पर बनाई जाती है तो उसकी सफलता संदेहजनक होती है। किसी मोटे आदमी के नाप से पैंट सिलाकर किसी बहुत पतले आदमी को पहनाई जायेगी तो हंसनेवाली बात हो जायेगी। इस देश में यही हुआ है। सरकारों ने देश की जरूरत को नहीं समझा।

२६ नवंबर १९४९ को हमारा संविधान देश की संविधान सभा में पारित हुआ था। इसके ठीक दो महीने बाद यानी २६ जनवरी १९५० को हमारा संविधान लागू हो गया था। इससे पहले अंग्रेजों द्वारा बनाया हुआ संविधान ही देशभर में लागू था। इस संविधान को बनाने में दो साल ग्यारह महीने अठारह दिन लगे थे।

हमारे भारतीय संविधान को दुनिया का सबसे बड़ा लिखित संविधान माना जाता है। पर बड़ा और लिखित संविधान होने के बावजूद इसमें संशोधन की गुंजाइश हमेशा रही है। समय-समय पर इसमें संशोधन भी होते रहे हैं। अब तक ११० से भी ज्यादा संविधान संशोधन हो चुके हैं।

हमारा संविधान इतना लचीला है कि इसमें पहला संशोधन इसके लागू होने के एक साल बाद ही १९५१ में हो गया था और यह सिलसिला बनाने के इतने साल बाद आज भी चल रहा है। वैसे तो हर देश का संविधान अपने देश की भलाई के लिए ही होता है, लेकिन भारत का संविधान सारी दुनिया का अकेला ऐसा संविधान है, जो जनता की नहीं बल्कि नेताओं, वकीलों, नौकरशाहों के अलावा पूंजीपतियों की भलाई के लिए है।

इसी संविधान में आरक्षण को १० सालों के लिये लागू किया गया था, लेकिन यह देश की गंदी और वोट बैंक की राजनीतिक के कारण आज तक भी चल रहा है। असल में इसका मकसद क्या था, इस बात से किसी को कोई मतलब नहीं है। इसका सबसे बड़ा नुकसान आज इस देश के सवर्ण समाज को हो रहा है। इनमें भी खास करके निर्धन व गरीब लोग ही इसका शिकार हो रहे हैं। असल में आरक्षण को आर्थिक आधार पर लागू करना चाहिए था, लेकिन ऐसा आज तक नहीं हो सका।

क्या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों में ही लोग गरीब है? क्या सामान्य वर्ग में कोई गरीब नहीं है? इस पर विचार करने की आज तक किसी भी पार्टी ने जरूरत नहीं समझी।

२६ जनवरी १९५० भारतीय इतिहास में इसलिए भी महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि भारत का संविधान, इसी दिन अस्तित्व में आया था और भारत उस दिन पूर्ण गणतंत्र देश बना। भारत का संविधान लिखित सबसे बड़ा संविधान है। संविधान निर्माण की प्रक्रिया में २ वर्ष, ११ महीना, १८ दिन लगे थे। भारतीय संविधान के वास्तुकार डॉ. भीमराव आंबेडकर प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने विश्व के अनेक संविधानों के अच्छे लक्षणों

को अपने संविधान में आत्मसात करने का प्रयास किया है। इस दिन भारत एक सम्पूर्ण गणतांत्रिक देश बन गया था। देश को गौरवशाली गणतंत्र राष्ट्र बनाने में जिन देशभक्तों ने अपना बलिदान दिया उन्हें २६ जनवरी दिन याद किया जाता और उन्हें श्रद्धांजलि दी जाती है। पूर्ण स्वराज दिवस (२६ जनवरी १९३०) को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान २६ जनवरी को लागू किया गया था। २६ जनवरी १९५० को १०.१८ मिनट पर भारत का संविधान लागू किया गया।

भारत का संविधान एक विस्तृत और जीवंत संविधान है। जीवंत होने का अर्थ यह कि वह केवल एक पुस्तक नहीं है, जिसमें एक बार नियम बना दिए गए तो वे बदले नहीं जा सकते। आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन किए जाने का प्रावधान है, इसलिए उसके अप्रासंगिक होने का प्रश्न ही नहीं है। भारतरत्न डॉ. भीमराव आंबेडकर की अध्यक्षता में निर्मित भारतीय संविधान में कुल ३९५ अनुच्छेद और ८ अनुसूचियों का समावेश है। अनेक संशोधनों के साथ अब वह और भी विस्तृत हो चुका है। भारत का संविधान पूरे विश्व में सबसे बड़ा लिखित संविधान है।

भारतीय संविधान का आधार बौद्धधर्म के सिद्धान्त समानता, करुणा व भ्रातृत्व पर है जो जाति, धर्म, क्षेत्र, वर्ग के भेद खत्म कर सबको समान न्याय और सत्ता में हिस्सेदारी का अवसर सुनिश्चित करता है। राष्ट्रध्वज में बौद्धधर्म चक्र और अशोक स्तम्भ का चित्र इसी बौद्ध दर्शन को इंगित करता है। इसमें मनुष्य से लेकर जीव जंतु, पशु-पक्षी के भी स्वतंत्र रूप से जीने की व्यवस्था की गयी है। पेड़-पौधों को काटने पर भी पाबंदी है। जीव जन्तुओं की रक्षा के लिए भारत सरकार में अलग ही मंत्रालय है।

संविधान में सारी व्यवस्थाओं के बावजूद भी आज भारतीय समाज में धार्मिक उन्माद, अंधविश्वास, शोषण, लूट हत्या, अपहरण, नक्सलवाद, बलात्कार, देह व्यापार बढ़ता जा रहा है। मानव-मानव में भेद रखनेवाली जाति व्यवस्था बरकरार है। आतंकवाद की आड़ में हजारों लोग मोर जा रहे हैं।

संसद भवन की नींव १२ फरवरी १९२१ के दिन ड्यूक ऑफ कनॉट ने रखी। भवन को बनाने में पूरे छह साल लगे। संसद भवन के निर्माण पर उस समय ८३ लाख रुपये लागत में आई। आज तो इतनी लागत में एक अच्छी कोठी भी नहीं बनती। जब भवन पूरी तरह से बनकर तैयार हो गया तो १८ जनवरी १९२७ के दिन भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड इविन ने इसका विधिवत उद्घाटन किया। संसद भवन के निर्माण में जितनी भी सामग्री का इस्तेमाल हुआ, वह सारी की सारी भारतीय हैं। यह सामग्री देश के अलग-अलग हिस्सों से आई। भवन के स्तंभों में इस्तेमाल किया गया काला संगमरमर गया, बिहार से मंगवाया गया। इसके दरवाजों पर सागौन तथा अन्य किस्म की जो लकड़ी लगी हुई है, वह असम तथा बर्मा से लाई गई। शीशम की लकड़ी दक्षिण भारत से आई। भवन की विशाल पुरानी लाइब्रेरी के हॉल की दीवारों पर लगा रंगीबिरंगा और सफेद संगमरमर मकराना, राजस्थान से आया। संसद भवन के कुल १२ दरवाजे हैं। पहली मंजिल पर चारों ओर खुला बरामदा है। चारों दिशाओं से आनेवाली ठंडी हवा इस बरामदे में घूमनेवालों को खूब ठंडक देती है। इसी मंजिल का खास आकर्षण है बरामदे के साथ-साथ बने हुए गोल स्तंभ।

हल्के भूरे रंग से बने हुए इन स्तंभों की कुल संख्या है १४४१ हरेक स्तंभ २७ फुट ऊंचा है। बरामदे में कहीं भी खड़े होकर देखें, गिनती में १७ स्तंभ एक साथ दिखाई देते हैं। बरामदे का चक्कर लगाने पर विजय चौक, केंद्रीय सचिवालय, राष्ट्रपति भवन, गुरुद्वारा रकाब गंज इत्यादि बड़े ही सुंदर रूप में दिखाई देते हैं।

आजादी की उपलब्धियां

यह आजादी ही है जिसकी बदौलत आज हर नौजवान अपने भविष्य में चमक या रोशनी की न्यूनतम उम्मीद कर सकता है। देश में भयानक बेरोजगारी है, लेकिन ठीक इसी पल यह विरोधाभास भी है कि देश में लाखों कुशल कारीगरों, तकनीशियनों की अविलंब जरूरत है। आजादी के बाद देश को कुशल औद्योगिक श्रमिक उपलब्ध कराने के लिए आईटीआई की स्थापना हुई, आज की तारीख में सरकारी और गैर सरकारी १२००० से ज्यादा ऐसे प्रशिक्षण केंद्र मौजूद हैं जहाँ ६ महीने से लेकर ३ साल तक के ४ दर्जन से ज्यादा विभिन्न पाठ्यक्रम मौजूद हैं। हर साल ४००००० से ज्यादा नौजवान आईटीआई से निकलते भी हैं। लेकिन अफसोस इनमें १० फीसदी भी किसी काम के नहीं होते? इनसे कुशल श्रमिकों की जरूरत पूरी नहीं होती। आज देश के हर बच्चे को १२वीं तक मुफ्त शिक्षा हासिल करने का अधिकार है। यह इतनी बड़ी आजादी और सुविधा है जिसकी गुलाम भारत में कल्पना नहीं की जा सकती थी, जब आठवीं-दसवीं तक की पढ़ाई के लिए भी मीलों सफर करना पड़ता था। माना की देश में बेरोजगारी है लेकिन आज इस बेरोजगारी से लड़ने और जूझने के दर्जनों रास्ते हासिल हैं। पचासों रोजगार स्कीमें हैं, दर्जनों स्किल डेवलपमेंट योजनाएं हैं। बैंक लोन हैं। ये सब आजादी ने ही मुहैया कराया है। आज भारतीय युवाओं से अमेरिकी घबराते हैं कि भारतीय उनकी नौकरियां छीन लेंगे, अमेरिका के कई राष्ट्रपति इस घबराहट को खुल्लमखुल्ला व्यक्त कर चुके हैं, चीन घबराया हुआ है कि भारत दुनिया का मैन पॉवर हब बनकर उभर रहा है।

किसी देश के इतिहास का सफर सिर्फ उपलब्धियों की पगडंडी से होकर ही नहीं गुजरता। इतिहास के इस सफर में बहुत सी राहें, बहुत सी पगडंडियां शामिल होती है लेकिन उपलब्धियों की पगडंडी सबसे उजली और चित्ताकर्षक होती है इसलिए यह बड़ी सहता से सबका ध्यान अपनी ओर खींच लेती हैं। १९४७ के बाद निर्मित इस पगडंडी से होकर गुजरें और उन गौरवशाली पलों को फिर से जियें जिनसे यह पगडंडी निर्मित हुई है।

आज शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र हो जहाँ महिलाएं सचमुच पुरुषों के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर न चल रही हों। आज हिन्दुस्तान के जीडीपी में महिलाओं का योगदान ३५ प्रतिशत तक पहुंच गया है और विभिन्न शोध सर्वेक्षणों का अनुमान है कि साल २०२५ तक महिलाओं की जीडीपी में भागीदारी ५० प्रतिशत का आंकड़ा छू लेगी और २०३५ तक यह पुरुषों से आगे निकल जाएगी क्योंकि श्रम आज भी उनका ज्यादा है लेकिन श्रम की कीमत कम मिलती है। भविष्य में यह सब संभव नहीं होगा। लड़की लड़के में भेद अब सात दशक पहले के मुकाबले महज १० प्रतिशत रह गया है। यह सब आजादी की ही उपलब्धियां हैं। आज तमाम कानूनों में महिलाओं को पुरुषों पर तरजीह दी जाती है। पुरुष शिकायत करने लगे हैं कि उनको महिलाओं के मुकाबले दोयम दर्जे का समझा जाता है। यह सब आजादी का कमाल है और उसी की बदौलत यह सिलसिला आगे भी महिलाओं के पक्ष में आगे बढ़ेगा।

निश्चित रूप से भारत के उद्योगपतियों ने १९४७ के बाद से आजादी ज्यादा हासिल की है लेकिन जिम्मेदारी कम निभाई है। लेकिन इसमें उनका इनकार कम राजनीतिज्ञों का इकरार ज्यादा शामिल है। आज भारत का पूंजी बाजार अमेरिका, चीन, जापान जैसा विशाल पूंजी बाजार है, जो इस बात का सबूत है कि न केवल भारत में उद्योग धंधे की आजादी देशी उद्योगपति बल्कि विदेशी पूंजीपति भी महसूसते हैं। इसीलिए देश विदेश के उद्योगपति खुलकर भारत में निवेश कर रहे हैं। आजादी की हकीकत को सबसे पहले उद्योगपति भांपते हैं। भारत में एक लम्बे समय तक उद्योगपतियों

को राजनीति और राजनेताओं को भेंट चढ़ाना होता रहा है लेकिन १९९० के बाद से खासकर नई आर्थिक नीतियों के बाद से यह शिकंजा ढीला हुआ है।

जीएसटी जैसे उपायों पर सरकार इसीलिए जोर दे रही है क्योंकि वो समझती है कि जैसे जैसे आजादी का माहौल मजबूत होगा, उद्योगपतियों से भेंट की मात्रा कम होती जाएगी। इसीलिए राजनीतिक कमाई के संस्थागत तरीके मजबूत किए जा रहे हैं। आजादी यूं भी हमारे बीच पूरी तरह से अदृश्य न तो पिछले ७० साल में रही है और न आगे होगी। आजादी से विश्वास खोना उन महान लोगों का अपमान और उनसे विश्वास खोना है जिनकी बदौलत हमें यह आजादी मिली है। इसलिए परेशानियों की कितनी ही काली रात क्यों न हो, है तो यह रात ही जो कट ही जाएगी।

अध्याय १ - गुलाम रहते हुए आप कितनी ही बड़ी उपलब्धि हासिल कर लें, वह रोमांच नहीं होता जो आजादी में रहते हुए मामूली सी कामयाबी में होता है। इसलिए १९४८ के लंदन ओलिंपिक में जब भारत की हॉकी टीम ने अपना पहला गोल्ड मेडल जीता तो पूरा देश खुशी से झूम उठा। यह आजादी के बाद वह राष्ट्रीय उपलब्धि थी जिसमें पूरे देश की खुशी और रोमांच शामिल थे। हिन्दुस्तान २६ जनवरी १९५० को संविधान को स्वीकृत करते हुए गणराज्य बना। इसके दो साल बाद देश में पहले आम चुनाव हुए जो इतिहासकारों के शब्दों में लोकतंत्र का त्यौहार था। पूरा देश इस त्यौहार को मनाकर आह्लादित तो हुआ ही, आजादी के बाद इसी के साथ दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रभावी सफर शुरू हुआ। इस पहले आम चुनावों में १७ करोड़ा भारतीयों ने वोट दिया था, जो दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक चुनाव था।

अध्याय २ - हालांकि इससे पहले साल १९५१ में हम एक और बड़ी उपलब्धि हासिल करके गौरवान्वित हो चुके थे, यह उपलब्धि एशियन गेम्स के पहले संस्करण की मेजबानी की थी। उपलब्धियों के इसी क्रम में साल १९५३ में देश को राष्ट्रीय एयरलाइंस मिली इंडियन एयरलाइंस अगला साल मील का पत्थर स्थापित करनेवाला रहा जब १९५४ में मुम्बई के ट्राम्बे में भारत दुनिया का एटॉमिक एनर्जी प्रोग्राम लांच करनेवाला पहला देश बना। अगले साल ही भारत ने अपना संगणक भी हासिल कर लिया लेकिन यह एक सौदा भर था इसमें हमारी कोई उपलब्धि नहीं थी। उपलब्धि लेकर तो १९५६ आया जब भारतीय हॉकी टीम ने मेलबर्न ओलिंपिक में गोल्ड मेडल जीता। १९५७ में आरती साहा इंग्लिश चैनल पार करनेवाली भारत की ही नहीं, एशिया की पहली महिला बनीं। इसके एक साल बाद साल १९५८ में देश को आईआईटी जैसा प्रौद्योगिकी शिक्षा संस्थान मिला बाद में जिनकी वैश्विक स्तर की श्रेष्ठता स्थापित हुई और देश गौरवान्वित हुआ।

अध्याय ३ - खेल ने सचमुच हमें सबसे ज्यादा गौरव के क्षण दिए हैं। साल १९६० के रोम ओलंपिक में यह पल लेकर आए मिक्खा सिंह। जब उन्होंने रिकॉर्ड तोड़ा ऐसा करनेवाले वह पहले भारतीय थे। हालांकि वह मेडल नहीं जीत पाए और वर्षों तक यह कसक भारत के खेल परिदृश्य को सालती रही। फिर भी वह एक राष्ट्रीय गौरव बने। १९६१ में गुट निरपेक्ष देशों की पहली बैठक का आयोजन करके हमने अपने वैश्विक नेतृत्व कौशल और महत्वाकांक्षा का परिचय दिया साथ ही इस वैचारिक सोच का भी कि साम्यवाद और पूंजीवाद के अलावा एक बीच का रास्ता भी है। जिसे नेहरू आधुनिक युग का पहला मंदिर कहते थे वह भाखड़ा नंगल बाँध हमें १९६२ में देश को पहला ट्रेनर मिला। अगला साल यानी १९६५ हरित क्रांति की शुरुआत जैसी उपलब्धि लेकर आया जिसके बाद ही हम अपनी अनाज की जरूरतों को पूरा कर सके।

अध्याय ४ -आजादी के बाद का १९वां साल यानी १९६६ भारत के लिए सौंदर्यमयी उपलब्धि लेकर आया जब २१ वर्षीय रीता फारिया मिस वर्ल्ड की खिताब जीतनेवाली पहली भारतीय महिला बनीं। इसके साल अगले साल ही यानी

१९६७ में पंडित रविशंकर ने भारत के लिए पहला ग्रैमी अवार्ड जीता। डॉ. प्रफुल्ल सेन १९६८ में हार्ट ट्रांस्प्लांट सर्जरी करनेवाले दुनिया के तीसरे और एशिया के पहले डॉक्टर बने। भारत को यह उपलब्धि अमेरिका से कुछ ही महीनों के अंतराल में हासिल हो गई थी। साल १९६९ में इसरो की स्थापना हुई जिस संस्थान ने हाल के सालों में देश को सबसे ज्यादा गौरव के पल दिए हैं। १९७१ में भारत ने बांग्लादेश की मुक्ति के लिए सैन्य हस्तक्षेप किया और पाकिस्तानकी करीबन एक लाख सेना को सरेंडर करने में मजबूर कर दिया। यह इन ७० साल के इतिहास का बहुत बड़ा सैन्य गौरव है।

अध्याय ५ - दुनिया में लुप्त हो रहे बाघों को पुनर्जन्म देनेवाला टाइगर प्रोजेक्ट १९७३ में लांच किया गया आज जिसकी पूरी दुनिया तारीफ कर रही है। इसके अगले साल ही यानी १९७४ में भारत ने अपना पहला परमाणु परीक्षण किया। दुनिया भर ने हमारी इस उपलब्धि पर अपनी त्योरियां चढ़ाईं। लेकिन इस सबकी परवाह न करते हुए १९७५ में भारत ने अपना पहला उपग्रह आर्यभट्ट हासिल किया। थोड़े से समयांतराल से हम दुनिया के पहले टेस्ट ट्यूब बेबी को हासिल करने से रह गए। बहरहाल भारत के पहले टेस्ट ट्यूब बेबी, दुर्गा का जन्म १९७८ में हुआ। साल १९८० में स्मॉल पॉक्स की बीमारी से निपटने के लिए भारत ने सबसे लंबे टीकाकरण कार्यक्रम की कामयाब शुरूआत की। १९८२ में एशियन गेम्स की हमने दूसरी बार मेजबानी की तो १९८३ में भारतीय क्रिकेट टीम ने लंदन में वर्ल्ड कप जीता, इसी के बाद क्रिकेट का भारत में जुनून पैदा हुआ।

अध्याय ६ - साल १९८४ में राकेश शर्मा अंतरिक्ष की यात्रा करनेवाले पहले भारतीय बने और अगले ही साल यानी १९८५ में भारत फास्ट ब्रीडर न्यूक्लियर रिएक्टर बनानेवाला दुनिया का छठा देश बन गया। १९८६ के १०वें एशियाई खेलों में भारतीय एथलीट पीटी उषा ने ४ स्वर्ण पदक जीते तो १९८७ में सुनील गावस्कर टेस्ट क्रिकेट में १०००० रन बनानेवाले दुनिया के पहले खिलाड़ी बने। १९८८ में इसरो ने एशिया की पहली रिमोट सेंसिंग सेटलाइट प्सै-१ लांच की जिसकी बाद में गौरवशाली उपलब्धि हासिल हुई। साल १९९३ में आईएमएफ यानी इंटरनेशनल मोनेटरी फंड ने दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में भारत को छठा स्थान दिया। साल १९९५ में भारतीयों ने इंटरनेट पर पहली बार लॉग इन किया और १९९६ में लिएंडर पेस ने आजादी के बाद पहला व्यक्तिगत ओलंपिक पदक हासिल किया जो कि टेनिस का कांस्य पदक था।

अध्याय ७ - साल १९९७ में अरुंधती राय ने अपनी नॉवल गॉड ऑफ स्माल थिंग्स के लिए बुकर प्राइज तो साल १९९८ में भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन को अर्थशास्त्र का नोबल पुरस्कार मिला। इंफोसिस १९९९ में अमेरिकी स्टॉक एक्सचेंज के नास्डैक में लिस्ट होनेवाली पहली भारतीय कंपनी बनी। साल २००० में विश्वनाथन आनंद पहले भारतीय बने जिन्होंने वर्ल्ड चेस चैंपियनशिप जीता। साल २००५ से भारत में आजादी का आरटीआई युग शुरू हुआ। जबकि साल २००७ में देश को अपनी पहली महिला राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल के रूप में मिलीं। साल २००८ के बीजिंग ओलिंपिक में अभिनव बिंद्रा व्यक्तिगत तौर पर स्वर्ण पदक जीतनेवाले पहले भारतीय बनें। उन्हें शूटिंग में यह गोल्ड मेडल मिला। साल २०१० में शिक्षा के अधिकार को प्रत्येक भारतीय का संवैधानिक अधिकार घोषित किया गया तो साल २०१४ में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भारत को पोलिया मुक्त घोषित किया। साल २०१६ में भारत ने महिला फाइटर पायलटों के पहले बैच को ट्रेनिंग दी तो साल २०१७ में १ जुलाई से जीएसटी वस्तु एवं सेवाकर, जम्मू-कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू हुआ।

आज का भारत

भारत १३२ करोड़ लोग नहीं, भारत कोई भूगोल नहीं, कोई नक्शा नहीं भारत मनुष्य की स्वतंत्रता का जयघोष है। भारत विश्व का हृदय है। भारत विश्व का अमृत, सबका प्राण है। भारत एक खोज है, उपलब्धि है। भारत अर्थात डेढ़ अरब से ज्यादा वनस्पति, पशु-पक्षी प्राणियों का एक स्वर, भारत अर्थात जल, जीवन, मृत्यु, जन्म। भारत अर्थात प्रेम, करूणा मैत्री।

भारत पुन: स्वयं को खोज पा रहा है। आज हम जिस उपलब्धि का उत्सव मना रहे हैं, वो केवल एक कदम है। नए अवसरों के खुलने का। इससे भी बड़ी विजय और उपलब्धियां हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। भारत की सेवा का अर्थ है, लाखों-करोड़ों पीड़ितों की सेवा करना। इसका अर्थ है निर्धनता, अज्ञानता और अवसर की असमानता मिटाना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की यही इच्छा है कि हर आंख से आंसू मिटे। संभवत: यह हमारे लिए संभव न हो, पर जब तक लोगों की आंखों में आंसू हैं, तब तक हमारा कार्य समाप्त नहीं होगा। आज एक बार फिर वर्षों के बाद, भारत जागृत और स्वतंत्र है। भविष्य हमें बुला रहा है। हमें कहां जाना चाहिए और हमें क्या करना चाहिए, जिससे हम आम आदमी, किसानों और श्रमिकों के लिए स्वतंत्रता और अवसर ला सकें, हम निर्धनता मिटाकर, एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और प्रगतिशील देश बना सकें। हम ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को बना सकें, जो प्रत्येक स्त्री पुरुष के लिए जीवन की परिपूर्णता और न्याय सुनिश्चित कर सके? कोई भी देश तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके लोगों की सोच या कर्म संकीर्ण है।

देश के सामने आज भी कई ऐसी समस्याएं हैं, जिनसे अभी तक आजादी नहीं मिली है। ढेर सारी समस्याएं जो सच्ची आजादी की राह में अवरोध बनकर खड़ी हैं। जब तक इन समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता तब तक हम खुद को एक आजाद देश का नागरिक बताकर कैसे गर्व अनुभव कर सकते हैं? मिसाल के तौर पर भारत आज भी गरीबी, बेरोजगारी जैसी अनगिनत समस्याओं की जंजीरों से जकड़ा हुआ है। भ्रष्टाचार विशालकाय अजगर बन कर मुंह बाये खड़ा है और देश की खुशहाली, विकास और प्रगति को ही नहीं बल्कि उसकी अस्मिता और अस्तित्व के साथ ही उसकी प्रतिष्ठा को भी निगल जाना चाहता है। देश की बागड़ोर जो संभाले हुए है और जो संभालने के लिए व्यग्र हैं, दोनों को ही देश से अधिक अपने परिवार और अपनों की चिंता है। सियासी हमाम में सारे के सारे नंगे नजर आ रहे हैं। जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा, प्रांत के आधार पर देश को बांटने के महापाप में छोटे बड़े सभी अपने सामर्थ्य के अनुसार योगदान कर रहे हैं। शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र भी भ्रष्टाचार के प्रदूषण से बच नहीं पाया है। समष्ठि पर व्यष्ठि हावी है। देश हित पर व्यक्तिगत स्वार्थ हावी है। जब तक इन समस्याओं और बुराइयों से मुक्त नहीं हो जाते वास्तविक स्वतंत्रता की बातें बेमानी हैं। एक ओर हम चांद पर जाने की बात करते हैं, तो दूसरी तरफ हर रोज घर से निकलने पर ट्राफिक में फंस जाते हैं। नियम कानून की धजियां उड़ाना आज शान की बात मानी जानी लगी है। नियम बनते हैं, पर उन्हें कोई मानता नहीं है। अक्सर देखने में आता है कि नियमों के पालन करने में निष्पक्षता या तटस्थता का पालन नहीं किया जाता। नियम तोड़ने की स्थिति में किसी को सजा मिले और दूसरा साफ छूट जाए तो इससे असंतोष और बगावत की भावना उपजे यह स्वाभाविक है। जब तक नियमों के पालन में चयनात्मक आधार खत्म नहीं होगा और किसी नियम को तोड़ने पर किसी को सजा हो और किसी को नहीं, तब

तक वास्तविक स्वतंत्रता कैसे मिलेगी? आजादी के इतने वर्षों बाद भी आम लोगों के लिए दो जून की रोटी, इलाज की बेहतर सुविधा, साफ-स्वच्छ पेयजल की सुविधा और इंसान के रहने लायक घर की सुविधा मुहैया नहीं करा पाए हों तो उसके लिए इस आजादी का क्या अर्थ है? देश ने कई क्षेत्रों में आशातीत प्रगति सिद्ध की है। इसके बावजूद आम आदमी की जिंदगी में बेहतरी नहीं आ पाई है। विकास की गंगा आम आदमी की जिंदगी में बेहतरी नहीं आ पाई है। विकास की गंगा आम आदमी तक पहुंचते पहुंचते सूख जाती है।

नारी सशक्तीकरण का जोर शोर से ढिंढोरा पीटा जाता है और लोकसभा और विधानसभाओं में महिलाओं को २७ प्रतिशत आरक्षण दिये जाने की बातें की जाती हैं, पर हकीकत में कुछ नहीं किया जाता है। महिलाओं के लिए आज भी परतंत्रता कायम है। भारतीय संविधान ने भले ही स्वतंत्रता दे दी हो पर भारतीय महिलाएं आज भी घरेलू हिंसा की शिकार हो रही हैं। महिलाओं को सिर्फ संविधान ने स्वतंत्रता दी है, समाज ने उसे आत्मसात नहीं किया है। आज भी महिलाओं के प्रति बुनियादी भेदभाव अपनी जगह कायम है। हमारे देश में किसी महिला को राष्ट्रपति बनने में पूरी ६० साल का लंबा सफर तय करना पड़ा। इन समस्याओं के बीच रहने के लिए समाज को अपनी सोच में बदलाव लाना जरूरी है। ये समस्याएं जीवन का एक भाग बन गई हैं। जरूरत उन्हें आसानी वसे लेने की है। इसके लिए हमें और समाज को अपनी सोच बदलनी होगी। कहने को तो भारत युवाओं का देश माना जाता है क्योंकि यहां २०-३५ आयु वर्ग के लोगों की संख्या सबसे अधिक है। पर देश का युवावर्ग आज दिशाशून्य होकर भटकाव की स्थिति में है। देश की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए युवाओं को सही दिशा निर्देश देना आवश्यक है। देश में ऐसे युवाओं की संख्या अधिक है जिन्हें उचित रोजगार नहीं मिला है। अवसर और मार्गदर्शन के अभाव में देश का युवा वर्ग सामाजिक तत्वों के इशारे पर काम करने को मजबूर है। युवाओं को सामाजिक तत्वों की गुलामी से आजाद करना जरूरी है।

अमीर गरीब के बीच की खाई चौड़ी हुई- इस भाषण को २०वीं सदी के महानतम भाषणों में से एक माना जाता है। इस भाषण में पंडित नेहरू ने जिस भारत की कल्पना की थी वो साकार नहीं हुआ। १९४७ में क्या हम वास्तव में स्वतंत्र हुए थे? आजादी मिलने के बाद के ७० वर्षों में भारत ने बहुत अधिक आर्थिक और तकनीकी तरक्की की है, लेकिन आज भी उसकी गिनती विकसित देशों में नहीं की जाती। आर्थिक विकास का फल सभी को समान रूप से नहीं मिल पाया है, नतीजतन अमीर और गरीब के बीच की खाई और अधिक चौड़ी हुई है और धन कुछेक हाथों में केंद्रित होता गया है। शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति तो हुई है और भारत के कुछ शिक्षा संस्थान दुनिया भर में अपने उच्च स्तर के लिए जाने जाते हैं, लेकिन इसके साथ ही यह भी सही है, कि प्राथमिक और माध्यमिक स्तर की शिक्षा की उपेक्षा की गई है। इस उपेक्षा के कारण शैक्षिक संरचना की नींव कमजोर रह गई है। इसी तरह सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में लगातार कमी आई है।

आम जनता के स्वतंत्र का किसी को ध्यान ही नहीं- हम अपनी स्वतंत्रता के ७० वें वर्ष में है। हमारा खुद का तंत्र है। हम पर कोई राज नहीं कर रहा है, हम ही अपने पर राज कर रहे हैं। इसमें प्रत्येक नागरिक की सहभागिता है। यदि कुछ सही नहीं हैं तो उसे उजागर करना और सही करने का हर संभव प्रयास करना हर एक नागरिक का कर्तव्य है। लेकिन हम पर हम राजा सही मायने में कर ही नहीं रहे। कुछ मुट्ठी भर राजनेता देश पर राज चला रहे हैं। जो पार्टी जीत कर आती है उसी का तंत्र चलता है, उन्हीं का स्वतंत्र है। पार्टी अपना और अपनों का हित साधती है। आम जनता के स्वतंत्र का किसी को

ध्यान ही नहीं है। तंत्र तो कुछ रसूखदारों का हुआ भारतीयों का तो नहीं है।

अंग्रेजों की विरासत आज भी कायम- गोरों ने भारत को सत्ता का हस्तांतरण, विवशता में लेकिन अपनी शर्तों पर किया था। अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियां भी सत्ता हस्तांतरण के लिए अंग्रेजों को बाध्य कर रही थीं। दूसरे महायुद्ध में यूरोपीय अर्थव्यवस्थाएं ध्वस्त हो चुकी थीं, जबकि अमेरिका और मजबूत होकर उभरा था। अपनी विपुल वित्तीय पूंजी के बल पर वह अपना राजनीतिक-सामरिक वर्चस्व स्थापित कर चुका था और ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन, हॉलैंड और पुर्तगाल के उपनिवेशों को अपना बाजार बनाने के लिए आतुर था। प्रत्यक्ष उपनिवेशक लूट के स्थान पर बिना उपनिवेश के साम्राज्यवाद का दौर अब कायम होने जा रहा था। आर्थिक कारणों के अतिरिक्त वर्ग संघर्ष का वैश्विक परिदृश्य भी एक अहम कारण था। नात्सी सत्ता के विरुद्ध लाल सेना के विजयी अभियान के बाद पूरा पूर्वी यूरोप समाजवादी शिबिर में शामिल हो चुका था। चीन, कोरिया, वियतनाम और मंगोलिया में कम्युनिस्ट नेतृत्व में राष्ट्रीय जनवादी क्रांतियों की विजय आसन्न थी। चारों ओर से उठ रहा लाल बवंडर राष्ट्रीय मुक्ति-युद्धों की आंधी के साथ मिलकर चक्रवाती तूफान का माहौल रच रहा था। भयाक्रांत साम्राज्यवादी शिबिर आत्म रक्षा के लिए नयी महाशक्ति अमेरिका की चौधराहट स्वीकारने को विवश था।

समस्याएं देश के सामने व्यवधान बनकर खड़ी- आज भी देश में आजादी के ७० सालों बाद भी जातिवाद, धाकि असहिष्णुता, भ्रष्टाचार, आर्थिक और सामाजिक असमानता, गरीबी, अज्ञानता, अशिक्षा, अनियंत्रित जनसंख्या जैसी अनेक भीषण समस्याएं देश के सामने व्यवधान बनके खड़ी हैं। हालांकि हमने काफी उन्नति भी हासिल की है, कई क्षेत्रों में लेकिन अब भी समाज का समग्र रूप से विकास नहीं हो पाया है। कुछ लोग एकमत होकर इसका दोष हमारे जनप्रतिनिधियों को देने लगेंगे, वैसे यह भी आधा ही सच है, क्योंकि भ्रष्ट नेताओं को हम ही चुनते है या उन्हें भ्रष्ट बनने का अवसर मुहैय्या कराते हैं। भारत जिसकी छवि विश्व में इस तरह प्रचारित की गई है कि यहां की विशेषता विविधता में एकता है। हालांकि विविधता के मामले में यह बात पूर्णतया सत्य है। सदियों से लोग यहां आते रहे हैं और बसते रहे हैं जिसने यहां की विविधता को समृद्ध किया है। देश में बदलाव की बयार तो बह रही है। महसूस कौन कितना कर पा रहा है, यह दीगर बात है। सूचना प्रवाह के इस युग में समूची दुनिया से जुड़ चुके हैं, भारत देश में हर जगह, हर वर्ग एवं स्तर बदलाव की अनुभूति कर रही है। लेकिन इस बदलाव की बहार के बीच यह बुनियादी सवाल उठाए जाने की जरूरत है कि हम जिस संप्रभु, समाजवादी जनवादी (लोकतांत्रिक) गणराज्य में जी रहे हैं, वह वास्तव में कितना संप्रभु है, कितना समाजवादी है और कितना जनवादी है?

आजादी के बाद की उपलब्धियां- भारत विश्व की सबसे पुरानी सभ्यताओं में से एक हैं, जिसमें बहुरुंगी विविधता और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है। इसके साथ ही यह अपने आप को बदलते समय के साथ ढालती भी आई है। आजादी पाने के बाद पिछले ७० वर्षों में भारत ने बहुआयामी सामसाजिक और आर्थिक प्रगति की है। भारत कृषि में आत्मनिर्भर बन चुका है और अब दुनिया के सबसे औद्योगीकृत देशों की श्रेणी में भी इसकी गिनती की जाती है। इन ७० सालों में भारत ने विश्व समुदाय के बीच एक आत्मनिर्भर, सक्षम और स्वाभिमानी देश के रूप में अपनी जगह बनाई है।

सभी समस्याओं के बावजूद अपने लोकतंत्र के कारण वह तीसरी दुनिया के अन्य देशों के लिए एक मिसाल बना रहा

है। उसकी आर्थिक प्रगति और विकास दर भी अन्य विकासशील देशों के लिए प्रेरक तत्व बने हुए है। हम दुनिया में एकमात्र राष्ट्र हैं, जिसने हर वयस्क नागरिक को स्वतंत्रता पहले दिन से ही मतदान का अधिकार दिया है।

अमेरिका जो दुनिया का दूसरा सबसे बड़े लोकतंत्र है ने स्वतंत्रता के १५० से अधिक वर्षों बाद इस अधिकार को अपने नागरिकों को दिया। ५६० छोटे रियासतों का भारत संघ में (विलय) किसी भी एक देश में बोली जानेवाली भाषाओं की सबसे अधिक संख्या भारत में है। करीब २९ भाषाएं पूरे भारत में बोली जाती हैं। करीब १६५० बोलियां भारत के लोग बोलते हैं। एक दलित द्वारा तैयार संविधान भारत में है।

जातीय समूहों की सबसे अधिक संख्या भारत में हैं। दुनिया में सबसे ज्यादा निर्वाचित व्यक्तियों (एक लाख) की संख्या भारत में हैं, पंचायती राज। निर्वाचित महिलाओं (पंचायतों, आदि) की संख्या सबसे अधिक। स्वदेशी परमाणु तकनीक विकसित की दुनिया का बहिष्कार झेला। सबसे कम लागत की परमाणु ऊर्जा उत्पन्न करनेवाला देश भारत है। थोरियम आधारित परमाणु ऊर्जा विकसित करनेवाला एकमात्र देश भारत है। अंतरिक्ष में वाणिज्यिक उपग्रहों सबसे कम कीमत में लांच करनेवाला देश भारत है। परमाणु पनडुब्बी लांच करनेवाले पांच देशों में से एक भारत है।

देश की बहुत बड़ी आबादी आज भी पूंजीपतियों, सरमायादारों और नेताओं की गुलाम बनी हुई है। आज भी देश की ७० प्रतिशत आबादी ४० रुपए से भी कम पर गुजारा करती है। देश का हर तीसरा व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे है। ऐसे लोगों के लिए इस आजादी के क्या मायने हैं? देश के ६० लाख लोग आज भी फुटपाथ पर सोते हैं। आजादी के ७० सालों में उन्हें एक छत तक नसीब नहीं हो पाई है। १५ अगस्त १९४७ की आधी रात को मिली आजादी की सुबह आज तक नहीं हुई है। देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने लाल किले की प्राचीरों से देश के नाम दिए अपने संदेश में एक संपन्न, समृद्ध, विकसित राष्ट्र का जो सुनहरा सपना देशवासियों को दिखाया था, वह सपना ही बनकर रह गया। गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, अन्याय, शोषण, अत्याचार आम लोगों के जीवन की वास्तविकता बन गए। ७० साल पहले की तरह गरीबी व भुखमरी की काली रात आज भी भारत को अपनी चपेट में लिए हुए हैं।

इन ७० सालों में देश का किसान, मजदूर, मेहनतकश तबका सबसे अधिक शोषण का शिकार हुआ है। पूर्व प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री का जय जवान, जय किसान का नारा सिर्फ नारा बनकर रह गया। पूरे देश का पेट पालनेवाले किसानों के हालात इतने तंग हो गए कि पिछले दो दशकों में लाखों किसान आत्महत्या करने को मजबूर हो गए। लाखों की तादात में किसान बीते दो दशकों में अपनी जमीनें छोड़ने के लिए मजबूर हो गए। विकास के नाम पर उनकी जमीनें उद्योगपतियों को दे दी गई और दी जा रही हैं। लाखों किसान दो जून की रोटी के लिए गांवों से शहरों की ओर पलायन कर गए। पलायन का यह सिलसिला अभी भी चल रहा है। राष्ट्रपति महात्मा गांधी ने विकास शहरों से गांवों की ओर जाने का सपना देखा था।, पर इन ७० वर्षों में विकास केवल महानगरों तक ही सीमित रह गया, गांवों तक पहुंचा ही नहीं। देश में आज भी ५ लाख ऐसे गांव हैं, जहां बिजली नहीं पहुंची है। देश के लाखों गांवों में ढंग के अस्पताल नहीं हैं। इलाज के लिए लोगों को शहरों में जाना पड़ता है। कई कई गांवों में स्कूल नहीं हैं। बच्चे मीलों चल कर स्कूल जाते हैं। आखिर उनके लिए इस आजादी के क्या मायने हैं। पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने गरीबी हटाओ का नारा दिया था। गरीबी तो नहीं हटी, पर सरकार ने गरीब हटाओ का रास्ता जरूर चुन लिया। अब इस देश में हर रोज २८ रुपए कमानेवाला

व्यक्ति गरीब की श्रेणी में नहीं आता है, लिहाजा गरीबों को मिलनेवाली सरकारी सुविधाओं का वह हकदार नहीं है। अब २८ रुपए प्रतिदिन कमानेवाली इस अमीर के लिए इस आजादी के क्या मायने हैं?

नब्बे के दशक में देश ने उदारीकरण की नीति अपनाई और विदेशी कंपनियों को भारत में व्यापार करने की खुली छूट दे दी। उस वक्त की सरकार का कहना था कि इससे समाज के अंतिम व्यक्ति को लाभ होगा। पर इन बीस सालों में समाज के इस अंतिम व्यक्ति के भाग में गरीबी, भुखमरी, अन्याय, शोषण और अत्याचार के सिवा और कुछ नहीं आया। विदेशी कंपनियों को यहां की जमीन, पहाड़ बेच दिए गए, जिससे लाखों लोग बेघर हो गए। देश की पूरी संपत्ति चंद औद्योगिक घरानों तक ही सिमट कर रह गई। पूंजीपतियों की तादाद तेजी से बढ़ी, पर उससे भी तेजी से गरीबों की तादाद बढ़ी। जिन पहाड़ों से यहां के गरीब अपना गुजर-बसर करते थे, उन्हें विदेशी कंपनियों को बेच दिया गया। बड़े-बड़े डैम बनाकर गांव के गांव डुबो दिए गए। इस तरह उन्हें नई किस्म की आर्थिक गुलामी की बेड़ियों में जकड़ दिया गया। भारत सरकार अब सभी क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ावा दे रही है, जिससे देश की अर्थव्यवस्था और भी विदेशी कंपनियों के हाथों में आ जाएगी। देश के अधिकतर संसाधनों पर चार-पांच घरानों का ही कब्जा है। देश की एक बड़ी आबादी तक सांधनों का लाभ पहुंचा ही नहीं। किसी भी समाज की दशा का अंदाजा वहां की महिलाओं के हालात को देखकर लगाया जा सकता है। हमारे देश में पिछले दस सालों में ५ लाख बच्चियां गर्भ में ही मार डाली गईं। महिलाओं पर होनेवाले अपराध खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा है। हर सेकंड कोई न कोई महिला यौन-शोषण का शिकार हो रही है। ऐसे में देश की इस आधी आबादी के लिए इस आजादी के क्या मायने हैं?

जहां तक बात राजनैतिक आजादी और लोकतंत्र की है तो वास्तविकता यह है कि देश में शासन कभी जनता के हाथ में आया ही नहीं। हमारे यहां लोकतंत्र आज भी केवल कुछ परिवारों तक ही सीमित है। सच्चाई यह है कि देश की जनता लोकतंत्र की तलाश आज तक कर रही है। मुल्क में आज भी बहुत बड़ी आबादी उस सुबह का इंतजार कर रही है, जिसका वादा किया गया था लेकिन वह सुबह आज तक नहीं हुई। देश जिन सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों को लेकर आजाद हुआ था, वे आज तक पूरे नहीं हुए। देश की बहुत बड़ी आबादी आज भी असली आजादी के इंतजार में है। एक शायर के शब्दों में कहें तो- सौ में नब्बे जन नाशाद हैं, देश फिर कैसे आजाद है।

देश जब आजाद हुआ था, तो सबके मन में यही एक कामना थी कि देश को आर्थिक रूप से मजबूत बनाया जाए। कोशिशें की गईं और अब की जा रही हैं और उसके कुछ सुखद परिणाम भी सामने आ रहे हैं। इसमें हम कितने सफल रहे हैं, इस एक शेर की इस पंक्ति के जरिए कहा जा सकता है, ज्यों-ज्यों दवा की, त्यों-त्यों मर्ज बढ़ता गया।

बेशक आज की तारीख में ग्रोथ रेट ९ पर्सेंट की ओर बढ़ रही है, देश में अमीरों की तादाद बढ़ गई, सूचना क्रांति की लहर चल रही है। एक अनुमान के मुताबिक, देश में प्रति व्यक्ति आमदनी जल्द ही एक हजार डॉलर तक पहुंचनेवाली है। भारत में नया कॉरपोरेट युग शुरू हो चुका है और इन उपलब्धियों को पूरा विश्व मान रहा है।

आज ७० वर्ष बाद भी स्वराज न जाने किस अंधेरी गुफा में अटक-भटक कर रह गया है। अगर इन ७० वर्षों की उपलब्धियों का सफलता असफलता का लेखा-जोखा तैयार किया जाए और देखा जाए कि हमारे राष्ट्र निर्माताओं के कितने सपने साकार हुए और कितने राख हो गये? स्वाधीन भारत की यदि कोई सबसे बड़ी उपलब्धि रही तो वह यही कि

हम इस विशाल आबादी वाले, विविधता भरे तरह-तरह से विखंडित विभाजित देश के लिए एक मान्य संविधान निर्माताओं ने भारत के लिए जो राजनीतिक व्यवस्था चुनी, उसके अंतर्गत भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य की संज्ञा दी गई। जब भारत अंग्रेजी शासकों की दासता से मुक्त हुआ और राष्ट्रीय आंदोलन के कर्णधार स्वाधीन भारत का संविधान बनाने बैठे तो उनके सामने सबसे बड़ी समस्या थी विभिन्न प्रकार से विभाजित विखंडित हम भारत के लोगों को किसी प्रकार एक सूत्र में पिरोकर एक राष्ट्र का निर्माण करने की। संविधान निर्माता चाहते थे कि भारतीय राष्ट्रीयता की चेतना जगे, साम्प्रदायिक भेदभाव और जातिवाद समाप्त हो, देश का आर्थिक विकास हो, गरीबी मिटे और सामाजिक न्याय पनपे। गांधीजी ने हर आंख का हर आंसू पोछने का आदर्श रखा था और नेहरू ने संविधान सभा में प्रतिज्ञा की थी कि जब तक आंसू है, पीड़ा है, गरीबी है तब तक काम समाप्त नहीं होगा। पिछले दशकों में इस व्यवस्था के कार्यकरण में जो भयावह विसंगतियां पैदा हुई, उन्होंने देश को यह सोचने के लिए बाध्य कर दिया है कि राजनैतिक-संविधान व्यवस्था हमारी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं के अनुरूप है भी या नहीं? क्या इसकी सफलता के लिए अनिवार्य पूर्वापेक्षाएं हमारे यहां विद्यमान हैं भी या नहीं। हमारी समस्याएं सुलझाने में कहां तक सफल रही है? किसी भी लोकतंत्रात्मक राजनीतिक व्यवस्था की सफलता के लिए जो चीजें सबसे अधिक अनिवार्य हैं उनमें प्रमुख है शिक्षा। शिक्षा के अभाव में लोकतंत्र की संस्थाओं की कल्पना एक ढकोसला मात्र है। लगता है कि देश की अधिकांश जनता को अशिक्षित, पिछड़ा और गरीब रखने में हमारे शासकों को गहरा निहित स्वार्थ हो गया है। लोकतंत्र के संदर्भ में जार्ज बनार्ड शॉ ने कहा था कि यदि मतदाता मूर्ख होंगे तो प्रतिनिधि धूर्त होंगे। किसी भी लोकतंत्र के सफल संचालन के लिए मतदाता को शिक्षित होना आवश्यक है। अशिक्षित मतदाता में अपने जनतांत्रिक अधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं होगी। आजादी के ७० वर्ष बाद जनता अशिक्षा के अंधकार में भटक रही है। शिक्षितों में भी बहुत बड़ा प्रतिशत ऐसा है जो अक्षर ज्ञान ही रखते हैं। एक जनतांत्रिक देश के नागरिक का दायित्व निभाने की उनमें कोई ललक नहीं है। भारत में जातिवाद और सांप्रदायिकता के साथ-साथ भ्रष्टाचार और हिंसा राष्ट्र के लिए एक सबसे बड़ी आंतरिक चुनौती हैं। यह हमारी लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष प्रणाली और संविधान की पवित्रता को कमजोर बनाती है। जातिवाद और सांप्रदायिकता बहुत लगन से बनी हुई बहुरंगी भारतीय एकता की सुंदर और मनोहर चादर को फोड़कर टुकड़े टुकड़े कर देना चाहती है। सुप्रसिद्ध न्यायविद नानी पालखीवाला के शब्दों में जात पात राजनीति में फुटबॉल के खेल के समान है जो हमारे लोग जन जीवन में खेलते हैं। दुर्भाग्यवश फूट भारत का सबसे बड़ा रोग है। सचमुच यह विभाजन हमारे देश में एड्स रोग के समान है। ऐसा रोग जो अत्यन्त तीव्रता से जीवन में फैल रहा है तथा असाध्य लगता है। सांप्रदायिक घृणा, भाषाई एकता तथा अखंडता के मर्म को कुतर रही हैं। पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने एक बार बिहार दौरे के दौरान कहा था कि सरकार का विकास मद के एक रुपया में से १५ पैसा ही लोगों को मिल पाता है। बाकी ८५ पैसे सरकारी तंत्र के रहनुमा मार लेते हैं। आज लोग खुले आम और साफ-साफ कहते हैं कि भ्रष्टाचार तो हमारे जीवन का आवश्यक अंग बन गया है। देश का या फिर राज्य का सबसे पहला कर्तव्य है नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करना किन्तु देश के कितने ही भागों में आज प्रशासन जैसी कानूनी और व्यवस्था जैसी कोई चीज नहीं है। आज आम आदमी का जीवन कहीं सुरक्षित नहीं उसकी सुरक्षा की किसी को चिंता नहीं, बल्कि करोड़ों रुपए उन थोड़े से व्यक्तियों की निजी सुरक्षा और झूठी शान के लिए खर्च किए जाते

हैं जिनमें से अधिकांश को जेलों में होना चाहिए। आज हम सब अपने को आजाद कहते हैं। राजनीतिक आजादी तो कहने के लिए हमें मिल गयी किन्तु पेड़ों की छाया में रहना, करोड़ों मासूम बच्चों को भूख से बिलखते हुए चिल्लाना, लाखों नवयुवकों का बेरोजगार रहना, चोरी, डकैती, बलात्कार, अपहरण, हत्या, लूटपाट और बैंक बैलेंस बनाने का नाम ही अगर आजादी है या अपनी सुरक्षा हेतु मुंह छिपाए फिरना या दूसरे की तरफ ताकने का नाम अगर आजादी है तो हम आजाद हैं अन्यथा आजादी पाना अभी शेष है। क्या इसीलिए हमारे क्रांतिकारी वीरों ने अपनी कुर्बानियां दी थी?

लेकिन आर्थिक सेक्टर का यह पहलू जितना खूबसूरत है, सिक्के का दूसरा पहलू उतना ही भयावह। आबादी तेज रफ्तार से बढ़ रही है। इसको थामने के लिए ठोस कदम अभी तक उठाए नहीं गए हैं। देश में आम आदमी का जीवन स्तर क्या है, इसका अंदाजा इस बात से साबित होता है कि करीब ३० पर्सेंट यानी ३० करोड़ लोग भारत में गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं। यह अमेरिका की आबादी से भी ज्यादा है। उन्हें दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती। गरीबी का यह हाल है कि देश के बड़े छह राज्यों में गरीब लोगों की दशा गरीब अफ्रीकी देशों में रहनेवाले लोगों से भी बुरी है। करीब ४० करोड़ लोगों को मूलभूत सुविधाएं सही तरीके से उपलब्ध नहीं हैं। देश में ५० पर्सेंट से ज्यादा लोग अब भी अशिक्षित हैं। भ्रष्टाचार चरम पर है, अब तो भ्रष्टाचार के मामले में भारत ने इंडोनेशिया को पीछे करते हुए पहली पायदान पर कदम रख लिया है। खराब यातायात वाले देशों की सूची में पहले १० देशों की सूची में भारत ने अपनी जगह पक्की कर ली है। औद्योगिक चैंबर पीएचडीसीसीआई के पूर्व महासचिव कृष्ण कालरा का कहना है, हमें दो चीजों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत थी। पहला, आबादी की रफ्तार को रोकना। दूसरा, भ्रष्टाचार को कम करना। इन दोनों मोर्चों में असफल हो जाने पर हम आर्थिक सेक्टर में संतुलन बनाने में ज्यादा सफल नहीं हो पाए।

आज के युग में दुनिया ने बहुत उन्नति की है। जो चीज असंभव थी उसे संभव बना दिया। कई देश चांद व मंग तक पहुंच गये हैं। कई तरह की मिसाइलों का आविष्कार हो चुका है जो बटन दबाते ही शत्रु के ठिकाने तक मार सकती हैं। आज आप दूरदर्शन, मोबाइल और संगणक पर घर बैठे हर चीज की जानकारी ले सकते हैं। इन सब बातों में भारत भी काफी देशों से आगे जा रहा है।

परंतु भारत ने जितना पाया उससे ज्यादा खो दिया क्योंकि हम नई पीढ़ी को वह शिक्षा नहीं दे सके जो बहुत जरूरी थी यानी देश प्रेम, ईमानदारी और सच बोलना। आज हमारी नई पीढ़ी में नैतिकता का जनाजा निकल चुका है। हर तरफ बेईमानी, धोखाधड़ी, ठगी, भ्रष्टाचार, लूटखसोट और नशे का बोलबाला हे।

देखो के कैसी आजादी है

घर की दीवार से, दिल्ली की मीनार तक, सौदे की सौदेबाजी है, देखो ये कैसी आजादी है।
आजादी के बाद बदल दी, हालत हिन्दुस्तान की, शासन बदला, शासक बदले, बदल गया इन्सान भी,
रोटी कपड़ा तन को नहीं है, बढ़ती रही आबादी है। देखो ये कैसी आजादी है।।
माल विदेशी हमें दिखाके मन को खूब लुभाया, खादी कपड़ा तन से हट गया, चरखा मन न भाया।
बेरोजगारी दर दर से भटके, भूखी मां चिल्लाती है। देखो ये कैसी आजादी है।।
कदम कदम पर जुल्म हैं बिखरे, दर दर पर है भ्रष्टाचार, मानवता भी चुप चुप रोती, कोई सुने ना यहां पुकार।

मां-बहिनों की इज्जत लुटती, लाज हमें ना आती है। देखो ये कैसी आजादी है।।
वीर जवानों ने पहना था, भारत मां का चोला, आगे आगे दुश्मन भागा, मुंह से कुछ ना बोला।
आओ भगत सिंह लौट के आओ, याद तुम्हारी आती है। देखो ये कैसी आजादी है।।
मनाऊं किस तरह आजादी का जश्न?
आज मनाऊं किस तरह, आजादी का जश्न। मुंह बाये जब हैं खड़ें, कई जटिलतम प्रश्न।।
आम, नीम, पीपल, डरे, बबूल, बरगद, बांस। हवा नक्सली हो गयी, कैसे लें हम सांस।।
सीने खाकर गोलियां, रख फर्ज, ईमान। उनके दम से देश है, जीवन में मुस्कान।।
तेल, दाल, चावल, नमक, डीजल और पेट्रोल। सब कुछ महंगा हो गया, अरे भाई बोल।।
सरे राह जनता लुटी, खून बीच बाजार। बेमतलब हैं आज के सारे पहरेदार।।
बाट घाट मछियार हैं, बाट बाट बटमार। फंसी जिंदगी मीन-सी, यत्न सभी बेकार।।
बरसाती हर पल कहर, घन मेघों की भीड़। ऐसी बारिश में कहीं, नहीं बचेगा नीड़।।
बिजली पानी, सड़क की, मुरझायी सौगंध। कुर्सी पहले ही सभी, तोड़ दिये अनुबंध।।
लूट, डकैती आम हैं, धोखाधड़ी, फरेब। मुकुंद कटती रोज ही, नागरिकों की जेब।।
राई भर खुशियां मिली, गम पहाड़ भर मित्र। दुर्जन बहुतेरे दिखे, सज्जन तनिक पवित्र।।
सड़कों पर वीरानियां, बदतर हैं हालात। गोली की बरसात है, बचो तो बने बात।।
सदियों से जारी यहां, अमन-चैन की खोज। इसी सनक में जिंदगी, जीती-मरती रोज।।

हम मानते हैं कि दूरदर्शन, मोबाईल और संगणक ने अपनी बहुत जगह बना ली है, उसके कई लाभ भी हैं परंतु दूसरी तरफ इन चीजों ने हमारी नई पीढ़ी के कुछ युवाओं व किशारों को गलत रास्ते पर डाल दिया है। शर्म नाम की कोई चीज नहीं रही। पहले परिवार के सारे सदस्य मिलजुल कर रहा करते थे, छोटे अपने बड़ों का पूरा मान-सम्मान करते थे और बड़े उनको प्यार और आशीर्वाद देते थे। परिवार स्वर्ग सा लगता था परंतु आज हर लड़का-लड़की आजादी चाहते हैं। आज परिवारों में माता-पिता को जितना सम्मान मिलना चाहिए, नहीं मिलता। पैसे की लालसा ने खून सफेद कर दिया है। आज कई दुष्प्रवृत्तियों के कारण हम पतन की ओर जा रहे हैं। इसमें हम सभी कसूरवार हैं क्योंकि आज बच्चों को देश प्रेम, ईमानदारी और सच बोलने की शिक्षा ही नहीं दी जाती।

आज जरूरत इस बात की है कि हम अपने बच्चों में देश प्रेम, ईमानदारी व सच्चाई की भावना करें, इससे देश व समाज मजबूत होगा। हमारी भावी पीढ़ी का चरित्र मजबूत होगा तथा वह अपने मजबूत कंधों पर देश का भार संभालेगी व उसे आगे बढ़ाएगी।

२१ वीं सदी को विज्ञान एवं विकास की सदी कहा जा रहा है मगर वास्तव में यह विनाश एवं अशांति की सदी साबित हो रही है। खासकर परमाणु खतरे एवं हिंसा-प्रतिहिंसा के सिलसिले ने मानवसभ्यता पर प्रश्न चिह्न खड़ा कर दिया है।

आज यह सवाल उठना लाजमी है कि हमारे परमाणु संयंत्र कितने सुरक्षित हैं, हम युद्ध का खेल कब तक खेलते रहेंगे और गलती से भी यदि किसी ने खेल-खेल में परमाणु बम का विस्फोर कर दिया तो हमारा क्या होगा? ऐसे कई

अन्य प्रश्न हमें परेशान करते हैं और इसके उत्तर की तलाश में बरबस हमारा ध्यान गौतम बुद्ध की ओर जाता है। हम जानते हैं कि आज हिंसा, आतंकवाद, आर्थिक मंदी, विषमता एवं पर्यावरणीय असंतुलन जैसी जो गंभीर समस्याएं उत्पन्न हुई हैं, उनके मूल में आधुनिक पश्चिमी सभ्यता की भोगवादी दृष्टि है। इसी का विस्तार हम भूमंडलीकरण की नीतियों के रूप में पाते हैं जहां पूंजी ही देवता है और मुनाफा है मोक्ष। इससे स्पष्ट है कि इसके अंतर्गत मनुष्य एवं मनुष्येतर प्राणी के साथ-साथ मानवीय भावनाएं संवेदनाएं एवं विचार भी महज एक बिकाऊ माल की तरह हैं और मुनाफे के लिए किसी भी हद तक जाना ही स्वधर्म।

यही वह भोगवादी दर्शन है जिसकी वजह से दुनिया में तथाकथित विकास की अंध दौड़ शुरू हो गई है। हम खतरनाक हादसों की अनदेखी कर परमाणु संयंत्र लगाने पर तुले हैं। बहुमूल्य पर्यावरण की कीमत पर विकास के महल खड़े कर रहे हैं और आर्थिक हितों को साधने के लिए युद्ध से भी बाज नहीं आ रहे हैं। कुल मिलाकर अर्थ की अनियंत्रित लिप्सा ने मानव को मानव का एवं प्रकृतिपर्यावरण दोनों का दुश्मन बना दिया है और प्रकरांतर से मानव स्वयं आत्महत्या पर उतारू है। ऐसे में विश्व को महानाश से बचाने में बुद्ध के उपदेशों की महत्ती भूमिका हो सकती है। खासकर यदि आधुनिक मानव बुद्ध के बताये अष्टांग मार्ग या कम से कम उसके एक अंग सम्यक आजीविका को भी अपना ले तो उक्त वर्णित अधिकांश समस्याओं को स्वत: स्थायी समाधान हो जायेगा।

पुन: आज चारों ओर जिस आर्थिक मंदी एवं आतंकवाद का हौवा खड़ा किया गया है, वह भी कहीं न कहीं साम्राज्यवादी ताकतों की हवस का ही परिणाम है। आर्थिक मंदी पूंजीपतियों के भ्रष्टाचार एवं भोगवाद का नतीजा है और आतंकवाद के जड़ में लूटखसोट एवं लोभ लालच की प्रवृत्ति है। सम्यक आजीविका को अपनाने से इन दोनों समस्याओं से सहज ही छुटकारा मिल सकता है।

सम्यक आजीविका कहीं न कहीं अहिंसा से भी जुड़ी हुई है। जब कोई व्यक्ति या राष्ट्र सम्यक या संयमित आजीविका के नियमों की अनदेखी कर अपने निहित स्वार्थों में लिप्त हो जाता है और दूसरों के हकों एवं अधिकारों को छीनने एवं हड़पने की कोशिश करता है तो इस क्रम में हिंसा-प्रतिहिंसा बढ़ती है। यदि हम समझ लें कि मेरे सहित सभी मनुष्यों एवं जीवजंतुओं को अपने जीवनयापन का समान अधिकार है तो हिंसा के साथ-साथ वैमनस्य एवं प्रतिद्वंद्विता भी समाप्त हो जायेगी। इस तरह सम्यक आजीविका के पालन से सबों के मानवाधिकारों की रक्षा हो सकती है और सभी प्रकार के शोषण एवं अन्याय का अंत भी संभव है। फिर उससे व्यक्ति एवं व्यक्ति, समाज एवं समाज और राष्ट्र एवं राष्ट्र के बीच मैत्री का प्रसार स्वाभाविक होकर पुन: यह विश्वबंधुत्व एवं विश्वशांति की आधार शिला बन सकती है।

इसलिये जो लोग शांति चाहते हैं, उन्हें अशांति के मूल कारणों तथा भ्रष्टाचार, साम्राज्यवाद, सांप्रदायिकता, पूंजीवाद, जातिवाद, स्त्री पुरुष भेदभाव आदि को समाप्त कर एक समतामूलक न्यायपूर्ण समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में योगदान देना चाहिये। अन्यायपूर्व समाज में कभी भी शांति नहीं हो सकती और होनी भी नहीं चाहिये क्योंकि न्यायरहित शांति एक धोखा, छल एवं अन्याय है।

इस देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि यहां जनता सहानुभूति पर जीती है। सहनशीलता बहुत जरूरी है किंतु एक सीमा तक ही सहनशीलता अच्छी होती है, सीमा लांघने के बाद नहीं अन्यथा उसे कमजोरी मान लिया जाता है और

सहनशील अपनी खामियों की वजह से कमजोर सिद्ध भी हो जाता है। कुव्यवस्था ने यदि सामान्य लोगों को ज्यादा दु:खी किया है तो सामान्य वर्ग ही कुव्यवस्था के लिए दोषी भी है। अधिकारों के प्रति सजगता जरूरी है। अत्याचार सहन करना अत्याचारी को प्रोत्साहित करना है। भ्रष्टाचार सर्वव्यापी हो गया। आजकल बगैर दान दक्षिणा के कोई भी कार्य आसानी से संपन्न नहीं होता है। स्पष्ट शब्दों में कमीशन का मोह बढ़ चुका है। कमीशन बांटे बगैर मार्केटिंग में यश की कामना सिवाए मूर्खता के और कुछ नहीं। संविधान की भी यहां परवाह न करनेवालों का राज है। तभी तो विषमताएं बढ़ रही हैं। जनता जागरूक होने को भी तैयार नहीं। वजह है भीषण गरीबी, रोजी-रोटी संकट और न्यायलयों में निर्णय को वर्षों से लंबित मामले। सहानुभूति की आदी हो चुकी जनता को सिर्फ सहानुभूति पसंद है, वह सहानुभूति जिससे पेट की भूख तक शांत नहीं हो पाती। नेताओं ने जनता की नब्ज पहचान लीं। विगत साठ वर्षों में खद्दरधारियों ने दिल खोल कर सहानुभूति बांटी। कई चुनावी महासमर सहानुभूतियों से ही प्रभावित हुए।

भाजपा ने भी शून्य से शिखर तक का सफरनामा रामभरोसे ही तय किया था। विश्वनाथ प्रताप सिंह फकीर से देश की तकदीर बन गए। भावनाओं को समझने और भुनाने का दौर चुनाव की तिथियां घोषित होते ही शुरू हो जाता है, चुनावी परिणामों के आने तक जारी रहता है और फिर एक अल्प विराम लग जाता है। कुछ लोगों की कमजोरी सहानुभूति बन जाती है। सहानुभूति के अभाव में आत्मविश्वास डगमगाने लगता है। नेताओं के पास वादों का खजाना है और आश्वासनों का पिटारा है। चुनावी दौर में पिटारा खुलता है। सरकार ने सर्वशिक्षा अभियान को सफल बनाने में कितनी ईमानदारी बरती, बताने की जरूरत नहीं। शिक्षा का निजीकरण, और बाजारीकरण करनेवाली सरकार ने आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग से शिक्षा का अधिकार ही छीन लिया। महंगी शिक्षा से उच्च आय वर्ग लाभान्वित हो रहा है। भारत में उच्च आय वर्ग का साम्राज्य स्थापित हो चुका है। समाजवाद को इससे बड़ा तमाचा और क्या हो सकता है। क्या यही सपना गांधी ने देखा था। एक मध्यम आय वर्ग के अभिभावक का जितना वार्षिक उत्पन्न हीं, उससे ज्यादा तो उसे बच्चों को उच्च शिक्षा प्रदान करने में खर्च करना पड़ रहा है। फिर लाखों खर्च कर नौकरी का जुगाड़ हो पाता है। आर्थिक तंगी ही कई युवाओं के सपने चकनाचूर कर देती है। आज दसवीं के बाद बच्चों को पढ़ाना कठिन हो गया है। स्कूल कॉलेज की फीस, ट्यूशन फीस, फिर स्पर्धा परीक्षाओं की तैयारी व अन्य खर्च वहन करने के बाद पालक लगभग खाली हो जाते हैं। यहीं से जमीर डोलता है, ईमानदारी से विश्वास उठना शुरू हो जाता है और मनुष्य धन उगाही में जुट जाता है। यहीं से नैतिक पतन बढ़ता जाता है। दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति को दोषमुक्त बनाने हेतु सामूहिक प्रयास करना अत्यंत ही जरूरी है। शासकीय रूग्णालयों में डॉक्टरों का जबरदस्त अभाव है। निजी दवाखानों के मोह ने शासकीय रुग्णालयों को बीमार बना दिया है। कहीं चिकित्सक हैं तो दवा नहीं, कहीं मशीन, उपकरण हैं तो स्टाक नहीं। यह है हमारी स्वास्थ्य सेवाओं का सच। खून बिक रहा है। किडनी बिक रही है। दवाएं तक दवाखानों से दुकानों तक पहुंच रही है। डॉक्टरों को वह शपथ कहां याद है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की खामियां प्रशासन दूर करना नहीं चाहता। सुनकर शर्म आती है किंतु मंत्रियों को कहां शर्म आती है। यदि आती तो स्थानांतरण और प्रमोशन दौलत के आधार पर नहीं होते। मंत्रालयों में एजेंटों ने घुसपैठ जमा कर रखी है। पसंदीदा स्थान के रेट फिक्स हैं। पुलिस थानों में पैसा चलता है और गृहमंत्रालय तक

दौड़ता है। अचानक तबादलों की राजनीति सच्चाई उजागर करती है। मंत्रियों और सचिवों कीा आमदनी के अनेक रास्तों में एक रास्ता अधिकारों के दुरूपयोगों का भी है। लाखों में पद बिकते हैं और फिर करोड़ों के वारे-न्यारे। फाइलें तो दूर की बात है। कागज तक बगैर चढ़ावे के नहीं खिसकता। शायद ही कोई विभाग ऐसा होगा जहां चढ़ावा न चढ़ता हो। कितना सटीक नारा है कांग्रेस का हाथ गरीबों के साथ साठ बरस में ५६ बरस तो कांग्रेस का ही राज रहा है। गरीबी इन ५६ वर्षों में कई गुना बढ़ी। न्याय के लिए जहां वर्षों जूझना पड़े, वहां अधिकारों के प्रति सजगता कैसे पैदा होगी। महानगरों में दौलतमंदों का राज चल रहा है तो गांवों में असामाजिक तत्वों का। गांव-गांव में शरबा की, पेट्रोल-डीजल की अवैध बिक्री जारी है। करोड़ों का कारोबार तो देह व्यवसाय से हो रहा है। जुआ, सट्टा, लाटरी सर्वत्र जाल बिछा चुके हैं। भ्रष्टाचार को अवैध कारोबारों ने ही तो अनिवार्य बना दिया। सब गोलमाल चल रहा है। हालात बिगड़ते जा रहे हैं। आतंकवादियों के पास धन कहां से पहुंच रहा है। आधुनिक हथियारों की पूर्ति कहां से हो रही है। छोटी-छोटी नौकरियों में संलग्न भी जुगाड़ जमाकर सब कुछ जमा लेते हैं।

आधुनिक भारत के निर्माता और देश के प्रथम प्रधानमंत्री युगपुरुष पं, जवाहरलाल नेहरू ने इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। सही अर्थों में वे विश्व के सार्वकालिक महान राजनीतिज्ञों में से एक थे। फ्रांसीसी बुद्धिजीवी आंद्रे मालरॉक्स उन्हें राजनीतिज्ञों का सरताज कहते थे। मालरॉक्स नेहरू को विश्वमंच पर चर्चिल, दि गॉल, माओ और स्टॉलिन से भी अधिक महत्वपूर्ण और सर्वस्वीकृत राजनीतिज्ञ मानते थे। नेहरू की गुटनिरपेक्ष विदेश नीति ने भारत को न केवल अपनी स्वतंत्रता अक्षुण्ण रखने में बल्कि अंतरराष्ट्रीय समझ और राष्ट्र समुदाय में शांति स्थापित करने में भी मदद की है, जिसके चलते भारत अंतरराष्ट्रीय संघर्षों में मध्यस्थता करने में सफल रहा। पंडित जी के संरक्षण में गुटनिरपेक्षता विश्व का सबसे बड़ा शांति आंदोलन साबित हुई। शीत युद्ध के जमाने में पश्चिमी ताकतें और सोवियत यूनियन एक दूसरे को शक की नजर से देखते थे ऐसी स्थिति में उनके बीच परस्पर मैत्री भाव कैसे स्थापित हो इसके लिए वे नेहरू से ही पूछते थे। शक्ति के इन दोनों ध्रुवों को एक दूसरे से जोड़ने में नेहरू पुल का काम करते थे। समस्या कोरिया युद्ध की रही हो, स्वेज नहर की रही हो, या काँगो का संकट रहा हो, उन्हें हल करने में नेहरू की महत्वपूर्ण भूमिका थी। नेहरू ने अपनी सूझबूझ से अनेक बार विश्वयुद्ध होने से रोका।

भारत, उसके इतिहास और उसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत की नेहरू से बेहतर कोई नहीं जानता था। अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक द डिस्कवरी ऑफ इंडिया (भारत की खोज) में उन्होंने भारत का वर्णन सांस्कृतिक विविधता में एकता के रूप में किया है। उनकी दृष्टि और उनके आदर्शों ने स्वतंत्र भारत में उदार और धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र की नींव डाली थी। १४ अगस्त १९४७ की मध्यरात्रि में उनके द्वारा दिए गए ऐतिहासिक भाषण ने अनेक पीढ़ियों को प्रेरणा देती आ रही है। आज भारत चारों ओर से असफल राष्ट्रों से घिरा है। ऐसे में यदि हम लोकतंत्र की सफलता का उदाहरण पेश कर पा रहे हैं तो इसका सारा श्रेय शुरुआती और संकटपूर्ण वर्षों में नेहरू के कुशल नेतृत्व और जनता में उनके अटल विश्वास को दिया जाना चाहिए। उनके नेतृत्व के बिना उन महत्वपूर्ण दिनों में भारत की स्वतंत्रता व हमारा लोकतंत्र बचा रहता, इसमें संदेह है। कोई नहीं जानता है उस समय यदि देश को नेहरू का नेतृत्व न मिला होता तो भारत भी पाकिस्तान की राह पर न चलता, जहां सत्ता का सूत्र धर्मगुरुओं और राजनैतिक रूप से महत्वाकांक्षी सेना के हाथ में है। क्रिकेटर से नेता बने

इमरान खान ने तो खुलेआम स्वीकार किया है कि लोकतंत्र को मजबूत कर सके, पाकिस्तान को ऐसा कोई नेहरू नहीं मिला।

भारत इस समय उदारीकरण के मार्ग पर चल रहा है, पर इस आर्थिक उदारीकरण पर देश के पहले प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू का असर तो है ही अब नरेंद्र मोदी देश के प्रधानमंत्री हैं और उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि आर्थिक नीतियों पर नेहरू का जो प्रभाव है, उसे जस का तस स्वीकार कर लें या उसे हटाकर अपनी खुद की आर्थिक नीति लागू करें? हमारे यहाँ एक खास बात यह है कि समस्या चाहे जो भी हो, उसके लिए नेहरू-गांधी परिवार को जिम्मेदार ठहराना फैशन हो गया है। सबसे अधिक आलोचना नेहरू की होती है क्योंकि वे देश के पहले प्रधानमंत्री थे। भाजपा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हमेशा से ऐसा कहते रहे हैं कि नेहरू ने देश को बरबाद कर दिया। पर दिलचस्प बात यह है कि मोदी नेहरू की आर्थिक नीतियों पर चल रहे हैं अंतर बस देश और काल का है। नेहरू के समय दुनिया अलग थी और उसकी समस्याएं भी अलग थीं। नए-नए स्वतंत्र हुए भारत की प्राथमिकताएं अलग थीं और उनके अनुसार नेहरू ने अपनी आर्थिक नीतियां अपनाईं। मोदी के लिए आज प्राथमिकताएं अलग हैं और इसका असर उनकी नीतियों पर स्पष्ट दिखाई देता है। पर बारीकी से देखें तो नेहरू और मोदी की नीतियों का एक ही आधार है- तेज औद्योगिकरण और कृषि का विकास। मोदी ने राष्ट्रीय स्तर पर अभी तक कोई आर्थिक मॉडल नहीं दिया है। पर उन्होंने गुजरात में कुछ खास कंपनियों का क्षेत्र विशेष में एकाधिकार स्थापित हो इस प्रकार की नीतियां अपनाई थीं। नेहरू की ही तरह मोदी ने भी गुजरात में ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर जोर दिया था। नेहरू की इस नीति के कारण ही देश इस समय अन्न उत्पादन में स्वावलंबी है।

औद्योगिकरण और कृषि के विकास के लिए नेहरू ने मजबूत आधार खड़ा करने के लिए कई क्रांतिकारी कदम उठाए थे। औद्योगिकरण को गति देने के लिए उन्होंने आईआईटी की स्थापना करवाई। नेहरू का मानना था कि देश को यदि औद्योगिक विकास करना है तो श्रेष्ठ टेक्नोकेट्स पैदा करने होंगे और बड़े पैमाने पर अनुसंधान करने होंगे। मोदी आज जिस स्किल बेस्ड शिक्षा की बात करते हैं, वह नेहरू की बात से अलग नहीं है।

आंबेडकर की विजय यात्रा में इंग्लिश पर मास्टरी एक जरूरी कदम थी। इसीलिए डॉ. आंबेडकर ने इंग्लिश को शेरनी का दूध बताया तथा दलितों से इंग्लिश अपनाने का आह्वान किया। इंग्लिश को नेशनल लिंक भाषा बनाने की मांग करनेवाले पहले राष्ट्रीय नेता आंबेडकर ही थे। भारत की एकता, अखंडता को बनाए रखने में संविधान के बाद सबसे बड़ी भूमिका इंग्लिश की और फिर इंग्लिश बोलनेवालों की है। इंग्लिश का असर दलित समाज पर भी साफ दिखता है। किसी भी अमेरिकन विद्यापीठ में जाइए, वहां दलित छात्र मिल ही जाते हैं। ढेर सारे दलित अधिकारी जीवन भर की कमाई का काफी बड़ा हिस्सा खर्च कर अपने बच्चों की पढ़ाई विदेशों में करा रहे हैं। वे आरक्षण का त्याग कर रहे हैं और ओपन कैटिगरी में प्रतियोगिता के जरिए अपनी जगह बना रहे हैं। अमेरिका में पढ़ाई करने के लिए पैसों से भी ज्यादा जरूरी है इंग्लिश भाषा का ज्ञान होना।

उत्तर भारत के जाट और गुर्जर, गुजरात के पटेल और आंध्र प्रदेश के कापू मूलत: शूद्र हैं। अत: जाट, गुर्जर, पटेल और कापू भी ओबीसी में आते हैं, क्योंकि इनकी सामाजिक चेतना और व्यवसाय ओबीसी जातियों की ही तरह है।

कभी इनका भी सामाजिक शोषण हुआ है, हिंदू समाज की शोषण-श्रृंखला में ये भी निचले पायदान पर आते है। लेकिन इंग्लिश को लेकर इन चारों जातियों और समूचे ओबीसी समाज का रुख हैरान करनेवाला है।

ओबीसी समाज के सबसे बड़े नेता राम मनोहर लोहिया हुआ करते थे। उन्होंने उत्तर भारत में एक बहुत बड़ा आंदोलन चलाया था जिसे अंग्रेजी हटाओ का नाम दिया गया था। साठ के दशक में इस आंदोलन ने उत्तर भारत को काफी प्रभावित किया। इसके कारण ओबीसी परिवारों मं इंग्लिश के प्रति अनादर पैदा हुआ। इसका नुकसान यह समाज आज तक भुगत रहा है।

भूमंडलीकरण की भाषा- ग्लोबलाइजेशन एक सच्चाई है। दुनिया का कोई भी देश इससे अलग नहीं रह सकता। इसकी एक भाषा है, जिसे इंग्लिश कहते हैं। चीन, जापान, फ्रांस और जर्मनी जैसे महान देशों में इंग्लिश जानने की होड़ मची है। व्यापार, मैन्यूफैक्चरिंग, शोध और शासन-प्रशासन की भाषा इंग्लिश ही है। वर्ष २०५० तक इंग्लिश न जाननेवाला व्यक्ति गूंगा-बहरा जैसा बन जाएगा। ऐसी स्थिति में इंग्लिश जाने बगैर जाट या समूचा ओबीसी समाज आरक्षण का क्या उपयोग कर पाएगा? एक बेहतर भारत के लिए यह जरूरी है कि सारे भारतीय इंग्लिश पढ़ने-पढ़ाने का व्रत लें। खासकर आरक्षण का लाभ ले रही सभी जातियों को वैसे ही अंग्रेजी अपनानी चाहिए जैसे दलित जातियां अपना रही हैं। जो जातियां दलितों की तरह अंग्रेजी को नहीं अपना रही हैं, उन्हें आरक्षण छोड़ देना चाहिए और आरक्षण की मांग कर रही हैं तो यह मांग छोड़ देनी चाहिए।

देश के गांवों में सही तरीके से विकास नहीं हो पाया है। कश्मीर का मुद्दा वहीं मुंह बाए खड़ा हैं, देश में आतंकवाद का साया है। मानसिक रूप से भी हम बस कहने को आजाद हैं। जब तक हर तरफ असुरक्षा का माहौल रहेगा तब तक देश में खुशहाली नहीं आएगी।

आजादी का मायने है लोकतंत्र के चारों स्तंभों की भ्रष्टाचार से मुक्ति, आतंक और अहिंसा का खात्मा।,

भारत की तरक्की की रफ्तार जो है, वह अपने आप में अद्‌भुत है। एक समय था जब देश में गिनती के हाइ-वे थे लेकिन आज सड़कों में तेज रफ्तार भागती कारों को देखकर तरक्की का अंदाजा लगाया जा सकता है। देश में एजुकेशन, इंफ्रास्टक्चर, इंडस्ट्री और कंस्ट्रक्शन के नाम पर जो भी काम हुआ है, वह पूरी दुनिया के लिए उदाहरण है।

खाद्य पदार्थों की बढ़ती कीमतों के बावजूद लाखों टन अनाज को यूं ही सड़ा दिया गया। देशभक्ति और झूठे दिखावे के नाम पर हो रहे कामनवेल्सथ खेलों में कॉमन आदमी की वेल्थ का कोई ख्याल नहीं रखा गया। नेता, बाबू और आईएएस ने जमकर पेसे कमाएं हैं। ७० करोड़ लोग गरीबी रेखा से नीचे हैं।

आजादी का सही अर्थ देशभक्ति, आत्मनिर्भरता, सहिष्णुता, समानता और देश की सुरक्षा एवं अखंडता में निहित है। आज भी हम हिंदुस्तानी राजतंत्र में जी रहे हैं, सिर्फ स्वरूप बदल गया है। अंग्रेजों से पहले राज्य की एक भू-सीमा होती थी। उस सीमा के अंतर्गत उस राजा का राज्य होता था। आज उसी सीमा ने राजनीतिक पार्टी का रूप ले लिया है। हर पार्टी का अपना एक राजा और राज परिवार है। इसकी मिसाल हर पार्टी में देखने को मिलेगी। बैनर पर भी कुछ ऐसा लिखा होता है कि राजाचे राजपन आजपन उद्यापन।

एक भयमुक्त समाज हो, जहां हर कोई सुखपूर्वक रह सके। महंगाई, गरीबी, बेरोजगारी तथा अशिक्षा से निजात मिल

सके। हम अपने ही देश में अपने ही लोगों द्वारा गुलाम बनाए गए हैं। हमने ही अपनी खुशियों को भ्रष्टाचारियों के हाथों सौंप दिया है। हम नारे लगाते हैं कि अतिथि देवो भवो: लेकिन कॉमनवेल्थ खेलों के जरिए हम कौन सा उदाहरण पेश करनेवाले हैं दुनिया के सामने।

सहानुभूति प्राप्त कर चिंगारी को आग में तब्दील करने का सपना देखनेवाले शायद भूल गए हैं कि जब अपने घर शीशे के बने हों तो दूसरों के घरों पर पत्थर नहीं फेंकना चाहिए। संविधान को चुनौती देनेवालों को माफ नहीं किया जाना चाहिए किन्तु इन्हें संज्ञा की भी जरूरत नहीं। अलग राग अलापने का दम खम तो नहीं किन्तु सपना सिकन्दर बनने का देख रहे हैं।

दलित वर्ग, पिछड़े वर्ग के उत्थान हेतु सभी को प्रयास करना चाहिए। ऊंच-नीच की सोच सही नहीं है। जरूरत है देशप्रेम की न कि चापलूसों की। वैसे ही चाटुकारों ने आजादी के अर्थ को मजाक बना दिया है। जिधर देखो, उधर ही भाई-भतीजावाद हावी है।

सच्चाई तो यह है कि आज भी राजतंत्र हावी है। पति की मौत होती है और पत्नी राजगद्दी पा जाती है। पिता की मौत नहीं हुई कि पुत्र/पुत्री विरासत को सम्हालने लगते हैं। जिल्हाधिकारी की मौत के बाद विधवा को जिल्हाधिकारी का पद नहीं मिलता किन्तु पार्टी के अध्यक्ष का पद खैरात के रूप में बंट जाता है। इससे सुन्दर प्रजातंत्र हो भी नहीं सकता। हत्याखोर विधायक देशभक्ति दिखाने निकले हैं। बागी दागी खद्दर लपेट कर राज कर रहे हैं। यही देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। इससे पहले कि ये जहरीले सांपनाथ, नागनाथ देश को डसने की जुर्रत करें, इनकी जुबां खींच लेनी चाहिए।

हमारे देश में लोकतंत्र की जड़ें बहुत गहरी हैं। ईसा जन्मने में जब ८०० साल का वक्त था, तब भी भारत में लोकतंत्र था। कई धर्म थे, कई भाषाएं थीं और उनमें झगड़े भी बहुत थे। अलग-अलग राज्य थे, मगर इतने अलागाव के बावजूद भी समाज और सत्ता के तार एक-दूसरे से जुड़े हुए थे, समाज के स्वर भी काफी बड़े पैमाने पर एक दूसरे से मिलते थे। भारत में लगभग सभी जगहों पर कर प्रणाली एक जैसी थी। इसी कारण दूर देश से आये व्यापारियों के लिए यह भूमि हमेशा अच्छी साबित होती थी। आयात-निर्यात के मौजूदा जमाने में जीनेवाले लोग यह जानकर आश्चर्यचकित होंगे कि आयात-निर्यात का व्यापार करनेवालों में भारत दुनिया में सबसे आगे था। हमारे पूर्वज हथियारों पर नहीं विचारों पर खर्च करते थे। मध्ययुग में जब इंग्लैंड की महारानी मेरी के वंशज जंगी जहाज बना रहे थे तो हमारे यहां मुगल एक मिश्रित संस्कृति की संरचना कर रहे थे। यहां आकर उनमें भी ठहराव आ गया था। वे लड़ाकू कबीलों से समरस समाज की ओर बढ़ रहे थे। यही कारण है कि अंग्रेज, फ्रेंच और पुर्तगाली बड़ी आसानी से यहां घुसते चले आये। प्लासी की लड़ाई के बाद जब अंग्रेजों ने समूचे भारत पर कब्जा करने की ठानी तो उन्हें मजबूरी में आधुनिक तकनीक से इस देश को रू-ब-रू कराना पड़ा। सन १८५७ की लड़ाई जीतने के बाद उन्होंने जिस तेजी से रेल, रोड और समुद्री यातायात को बढ़ावा दिया, उससे उनकी हुकूमत भले ही ९० साल और चल गई हो, लेकिन यह सच है कि भारत राष्ट्र ने राज्य का आकार भी उसी दौरान ग्रहण किया। अंग्रेजों के जाने के बाद हम अजीब हालत में फंस गये थे।

जवाहरलाल नेहरू ने जो सपने देखने शुरू किये, उन्हें कुछ लोगों ने शेख चिल्ली की बौद्धिक उड़ान माना था। आज वे सपने आकार लेने लगे हैं। भारतीय प्रशासनिक सेवा से लेकर विभिन्न शिक्षा परिषदों के जो नतीजे इस दौरान सामने आये हैं, वे हम सबके मन में गहरी उम्मीद बांधते हैं। पहले आईएएस और आईपीएस की नौकरी केवल अच्छी जाति के लोगों

की जागीर हुआ करती थी। लेकिन आज सूरत बदल रही है। मुगलकाल के खत्म होने तक महिलाएं, दलित और आदिवासी अपने सामान्य अधिकारों से वंचित हो गये। आज हमारा देश शायद एक बार फिर अपनी समतावादी जड़ों की ओर लौट रहा है। इतिहास से सीखने और वक्त से लड़ने की हममें अद्‌भुत शक्ति है। शिक्षा की जागृति हिंदी भाषी प्रदेशों में जोर से फैल चुकी है। पिछले कई सालों का अच्छा ट्रेंड गवाह है कि आज हमारे चारों ओर उम्मीदों के दीए जल पड़े हैं। देश का भविष्य ठीक-ठाक होने के लिए यही एक आशा की किरण भी हैं।

हमारी असली समस्या यही है कि हम अपने ही संसाधन, अपनी ही ताकत का सदुपयोग नहीं कर पा रहे हैं या नहीं करना चाहते। छोटे छोटे देश आज विकास की दौड़ में तेजी से बढ़ रहे हैं और हम पीछे पिछड़ रहे हैं। हमारी समस्या यही है कि हम अपना ही दुरुपयोग कर रहे हैं। नहीं तो हमारे देश के पास वह सब हैं, जो किसी भी देश को महान बना सकता है। हमारे पास है- ११५ करोड़ के लगभग विशाल मानव संसाधन। अपार प्राकृतिक संसाधन जैसे पहाड़, जंगल, नदी, वर्षा, खनिज आदि। ईमानदार नेता, सोच-समझवाले लोग और बहादुर नौजवान। हमारे पास नहीं है तो इस मानव संसाधन का अधिकांश हिस्सा निष्क्रिय है। इन सबका बिना लोभ लालच के उचित व संतुलित उपयोग। ईमानदारी की उपेक्षा, अच्छी स ोच व वीरता का सही सम्मान नहीं।

खुद को सूरज का तरफदार बनाने के लिए, लोग निकले हैं चिरागों को बुझाने के लिए।
कितने लोग बेवजह चीखते हैं यहाँ, किसी कमजोर की आवाज दबाने के लिए।

देश के आजाद होते ही पहले प्रधानमंत्री की कुर्सी हासिल करने में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सफलता पा ली। जबकि देश सरदार वल्लभभाई पटेल को अपना मुखिया चुनना चाहता था पर सरदार इस देश के पीएम नहीं हो सके। बहरहाल देश मजबूत हो विकास के पथ पर तेजी से आगे बढ़े इसके लिए जब नीतियां बनाने की बारी आई तो हमारे पहले प्रधानमंत्री ने विवेकानंद, गांधी, विनोबा और अरविंद के विचारों की अनदेखी कर दी। नेहरू विदेश में पढ़े-लिखे थे। उससे भी ज्यादा वे पश्चिम की चकाचौंध और साम्यवादी विचारधारा की मानसिकता वाले व्यक्ति थे। देश के मानस को शायद वे नहीं समझ सके। उनके नेतृत्व में बनी नीतियों पर पश्चिम और साम्यवादी मॉडल की स्पष्ट छाप देखी गई। गांधी के रामराज्य की परिकल्पना को कहीं अंधेरे में धकेल दिया गया। महात्मा की ग्रामवासिनी भारतमाता की चिंता उस व्यक्ति ने भी नहीं की, जो उनके हस्तक्षेप के कारण ही प्रधानमंत्री बना। शहरों के विकास को प्राथमिकता दी गई। वह भी विकास के विदेशी मॉडल के आधार पर। गांधी को नजर अंदाज करनेवाले नेहरू ने विवेकानंद, अरविंद, विनोबा, दीनदयाल और लोहिया के स्वदेशी चिंतन पर भी विचार नहीं किया।

स्वदेशी मॉडल को विकसित करने में अब तक किसी ने रुचि नहीं दिखाई है। दूसरों के रंग में रंगकर हमने अपनी मौलिकता भी खो दी है। कोई भी देश अपने स्वाभिमान, गौरव और चिंतन के आधार पर ही आगे बढ़ सकता है, इसे भूलना नहीं चाहिए। भारत के आसपास ही चीन और जापान सहित अन्य देश आजाद हुए थे। आज चीन और जापान कहां से कहां पहुंच गए। जापान पर तो अमकेरिका ने एटम बम गिराकर उसकी कमर तोड़ दी थी फिर भी उसका हौसला कम नहीं हुआ। उसने अपने विकास का अपना मॉडेल बनाया। आज वह दुनिया के सबसे ऊंचे देशों में से एक है। आज चीन और जापान विकसित देश हैं, जबकि हम विकासशील।

हमारा देश लगभग २०० साल अंग्रेजों का गुलाम रहा। अंग्रेज जो हमें सौंप गए, हमारे नेता उसे ही आगे बढ़ाते रहे हैं। हालांकि दोष उनका नहीं बल्कि उनकी शिक्षा का था। शिक्षा को लेकर मैकाले की नीति से हम सब वाकिफ हैं। भारत को हमेशा मानसिक रूप से पश्चिम का गुलाम बनाने के लिए किस तरह उसने भारतीय शिक्षण प्रणाली को खत्म कर दिया। अंग्रेजियत के बुखार से पीड़ित हमारे नीति बनानेवालों के मन में यह बात बैठ गई थी कि जो कुछ पश्चिम में हुआ और हो रहा है, वहीं श्रेष्ठ है। पश्चिम ही बेहतर है। इस रोग से पीड़ित नेतृत्व स्वदेशी मॉडल की चिंता क्यों करने लगा। वह तो उसी पश्चिम मॉडल को हम पर लादने को आतुर था। जिसकी जरूरत और समझ इस देश के ७०% लोगों को नहीं थी, लेकिन उसे पश्चिमी मॉडल से ब्लाइंड लव जरूर था।

गांधी के विकास के स्वदेशी मॉडल में गांवों का विकास प्राथमिकता में था जबकि नेहरू की प्राथमिकता शहरों का विकास थी। तब खेती में हम सबसे आगे थे। खेती ही हमारी ताकत थी। जब कोई अपनी ताकत को ही अनदेखी करता है तो निश्चित ही उसे मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। अधिकतर समाज की अनदेखी का ही नतीजा है कि स्थितियां खराब हो जा रही हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, जीवनस्तर, पर्यावरण, शहरीकरण और औद्योगिककरण की क्या स्थिति है, हम सब जानते हैं एक भी क्षेत्र में हम मजबूती के साथ नहीं खड़े हैं। जब नींव ही खोखली हो तो इमारत का कमजोर होना निश्चित है। हजारों लोगों के बलिदान और संघर्ष से मिली आजादी के बाद हम व्यवस्था में क्या बदलाव लाये, वह सोचने की बात है।

जब सत्ता सुख ही मकसद बन जाए तो देश की चिंता किसे रहती है? देश के विकास के लिए नई नीतियां बनाना तो दूर हमारे राजनेता तो अंग्रेजों के बनाए कानूनों और व्यवस्थाओं को अब तक घसीट रहे हैं। राजनीति अब समाजसेवा का माध्यम नहीं रही, बल्कि अय्याशी का साधन बन गई हैं। समाज के लिये खुद को खपानेवाले लोग अब राजनीति में बहुत खोजने पर ही मिलेंगे।

गलत नीतियों के कारण आजादी के इतने सालों बाद भी आज हम वहीं है। गरीब और गरीब हो रहा है। अमीर दोगुनी-चौगुनी रफ्तार से अमीर हो रहे है। देश के ६०% लोगों को दो वक्त की रोटी भी मुश्किल हो गई है। पश्चिमी मॉडेल के कारण आज पर्यावरण को जो नुकसान पहुंचा है, वह रोंगटे खड़े कर देनेवाला है। हम युवा ताकत को नहीं पहचान रहे। उनके दो हाथों को काम नहीं दे पा रहे। देश में बेरोजगारों की फौज खड़ी हो गई है। ऐसे-ऐसे सवाल हैं जो सरकार में बैठे लोगों का मुंह नोंचने को छटपटा रहे हैं। जब देश आजाद हुआ था तब यह तय हुआ था कि हमें जाना कौन सी दिशा में है। भारत के मानस को समझकर विकास का मॉडल तय करना चाहिए था। गांधी के रामराज्य की कल्पना को समझना चाहिए था। देश की जरूरत को पहचान कर उसके मुताबिक नीतियां बनानी चाहिए थी। स्वदेशी और सर्वस्पर्शी मॉडल के जरिए ही हम दुनिया के सामने मॉडल रूप में स्थापित हो सकते हैं।

आज का गांधी युग खत्म हो चुका है और स्वार्थ युग शुरू हो गया। हर कोई अपने अपने स्वार्थ के ब्रशीभूत होकर एक-दूसरे को सता रहे हैं, कष्ट दे रहे हैं। कहीं हिंसा, कहीं भ्रष्टाचार तो कहीं आजादी के बादी भी ढेरा सारी बंदिशें। भारत के भविष्य का जो सपना गांधी जी देखना चाहते थे वह थोड़ा तो साकार हुआ, हमें आजादी मिली, हर युवा शिक्षित हुए, इलेक्ट्रॉनिक की दुनिया में प्रगति हुई। महिलाएं हर क्षेत्र में आगे बढ़ी और हर व्यक्ति को अपने तरह से जीने का अधिकार मिला। फिर भी न जाने क्यों इतनी तरक्की के बाद भी हमारे देश में कुछ हिंसावादी लोगों के कारण हिंसाएं होने लगी हैं। देश जितना आगे बढ़ रहा है, बुराइयां उतनी ही तेजी से अपना पैर फैला रही है, सब आगे बढ़ने की होड़ में एक-दूसरे को

कुचल रहे हैं। रिश्तों की आत्मीयता खत्म हो चुकी है। हर दिन अलग अलग घटनाएं सुनने-देखने को मिलती है। आज हमारे देश में संन्यासी, संत किसे कहें यह भी कह पाना मुश्किल होता है। इस मायावी दुनिया में हम संत को ढोंगी, तो ढोंगी को संत समझ बैठते हैं क्योंकि इस युग में मानव व दानव का रूप एक जैसा होता है। हम उनकी मन में छिपे धृष्टता को पहचान नहीं पाते। हम जितनी तरक्की कर रहे हैं, उतनाी ही हम पतन की ओर जा रहे हैं। हमारी मानवता कहीं खो रही है। स्वतंत्रता से पहले अंग्रेजों ने हमारा शोषण किया था अब हम अपने देश के नागरिकों का शोषण करते हैं। घर के ही लोग इतने बुरे हो गये हैं कि बाहर वालों की जरूरत ही नहीं पड़ती।

भारत के इतिहास में १५ अगस्त १९४७ का दिन अत्यंत महत्वपूर्ण है। अंग्रेजों की दासता की जंजीरों को तोड़कर हमने इसी दिन स्वतंत्रता की खुली हवा में सांस ली थी। स्वतंत्रता दिवस की पूर्वरात्रि १४ अगस्त १९४७ के दिन स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री के रूप में प. जवाहरलाल नेहरू द्वारा दिल्ली के लाल किले से दिए गए भाषण का उल्लेख आज भी किया जाता है। सभी को समान अवसर प्राप्त हो, निर्धनता और अस्वास्थ्य से मुक्ति मिले, सामाजिक समरसता और सौहार्द की स्थापना हो और निरंतर प्रगतिपथ पर अग्रसर होनेवाले एक सार्वभौम राष्ट्र के निर्माण की बात नेहरू ने अपने इस भाषण में कही थी। नेहरू ने देश के सर्वसामान्य लोगों की आंखों में सपने जगाए थे। परंतु नेहरू ने देश के सामान्य लोगों की जो सपने जगाए थे, वे कहां तक साकार हुए हैं। हमारे नेताओं ने गरीबी हटाओ का नारा दिया था। पर गरीबी हटी नहीं।

रोटी, कपड़ा और मकान व्यक्ति की बुनियाद जरूरते हैं। कड़ी मेहनत के बावजूद जो लोग अपनी इन जरूरतों को पूरी नहीं कर पाते हैं वे सभी गरीब हैं। आज की स्थिति अन्ना हजारे के शब्दों में कहें तो कुछ लोगों को क्या खाएं की समस्या है तो कुछ लोगों की समस्या क्या-क्या खाएं की है। विषम परिस्थितियों से बाहर निकलना है तो शिक्षा का कोई विकल्प नहीं है। वर्ष १९५१ में देश में साक्षरता १६.६ प्रतिशत थी, इस समय वह ७४.०४ प्रतिशत है।

सरकार ने शिक्षा के अधिकार का कानून तो बना दिया, पर उसके लिए पोषक वातावरण का निर्माण करना आवश्यक है। अधिकांश बच्चे स्कूल इसलिए नहीं जाते क्योंकि वे भूखे होतें हैं। इसके लिए सरकार ने मध्याह्न भोजन योजना शुरू की है। यह निश्चित ही बहुत अच्छी योजना है, पर भ्रष्टाचार से वह भी बच नहीं पाई है। कभी-कभी तो भ्रम होता है कि योजनाएं बनाई ही इसलिए जाती हैं कि भ्रष्टाचार करने का अवसर मिले।

देश में आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक समता प्रस्थापित करना स्वतंत्रता के पीछे का मुख्य उद्देश्य था। इसमें सामाजिक समता का विचार करते हुए देश में जाति-व्यवस्था समाप्त किए जाने का उद्देश्य सामने रखा गया था। समय बदल रहा है देश प्रगति कर रहा है, देश में जाति-व्यवस्था समाप्त किए जाने का उद्देश्य सामने रखा गया था। समय बदल रहा है देश प्रगति कर रहा है, देश में जाति-व्यवस्था भी क्रमश: समाप्त हो रही है, इसमें संदेह नहीं। पर यह चित्र केवल शहरी क्षेत्र में ही देखने को मिलता है। ग्रामीण क्षेत्र में अभी भी जाति व्यवस्था कायम है। कहने को तो जाति व्यवस्था के खिलाफ जंग आज भी जारी है। परंतु यह लड़ाई महापुरुषों के स्मारक बनाए जाने किसी मार्ग या स्थान विशेष का नाम किसी महापुरुष के नाम के साथ जोड़े जाने की मांग से आगे नहीं जाती है। जाति के नाम पर आरक्षण की मांग की जाती है, जाति के नाम पर ही वोट मांगे और दिए जाते हैं। ऐसी स्थिति में जाति-प्रथा समाप्त होने की जगह और भी मजबूत हो रही है। राजनैतिक समानता की बात करें तो आज राजनीति में वही अपना स्थान बना सकता है, जिसके पास अकूत पैसा और अपार बाहुबल हो। राजनैतिक दल चुनावों में उसी को टिकट देते हैं, जिसमें योग्यता और देश का कुछ भला करने

की ललक भले ही न हो, पर धनबल और बाहुबल के जोर पर चुनाव जीतने का सामर्थ्य अवश्य हो। आज की सत्ता केंद्रित और वोट केंद्रित राजनीति में किसी ईमानदार और योग्य व्यक्ति के लिए बहुत थोड़ी ही जगह बची है। आर्थिक विषमता और भ्रष्टाचार देश को खोखला कर रहे हैं।

हमारे देश की निश्चित ही अधिक प्रगति हुई होती। वह नहीं हुई तो उसका एकमात्र कारण है भ्रष्टाचार। हर जगह भ्रष्टाचार और लाल फीताशाही का बोलबाला है। वर्ष २००५ में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में ५५ प्रतिशत से भी अधिक लोग रिश्वत देकर अपना काम करवाते हैं।

देश की आजादी के लिये आंदोलन करनेवालों में राजनीति एक पवित्र मिशन थी। खुद के लिये या कुछ कमाने के लिये लोग राजनीति में नहीं आते थे। इसके विपरीत, देश को अंग्रेजों से मुक्ति दिलाने के लिये लोग राजनीति में नहीं आते थे। इसके विपरीत, देश को अंग्रेजों से मुक्ति दिलाने के लिये, वे अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहते थे। महात्मा गांधी, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर और डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी जैसे नेता थे, जो समाज के अच्छे व ईमानदार लोगों को राजनीति में आने के लिए प्रेरित करते थे। आजादी के बाद सेवा की भावना धीरे-धीरे कम होती गई। दुर्भाग्य की बात है कि आज भारत में राजनीति को न तो सेवा कार्य माना जाता है और न ही पेशा माना जाता है, बल्कि इसे पूरी तरह से एक बेईमानी का धन्धा मान लिया गया है। ऐसा नहीं है कि सभी राजनेता और राजनीतिक कार्यकर्ता भ्रष्ट और बेईमान होते हैं। आज की राजनीति में कुछ (?) अच्छे लोग भी हैं। सच्चाई यह भी है कि आज राष्ट्रीय जीवन के हर क्षेत्र में मूल्यों में गिरावट आई है। ईमानदारी और व्यावसायिक नैतिकता की कमी वकीलों, न्यायाधीशों, चिकित्सकों, शिक्षकों, बैंक कर्मचारी और शेयर मार्केट के कर्मचारियों में भी देखी जा रही है। यहाँ तक कि राजनीति और सरकार में भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करनेवाले मीडिया में भी भ्रष्टाचार है।

यह व्यापक भ्रष्टाचार सारे देश के लिये एक खतरे का संकेत है। इससे देश के लोकतंत्र को बड़ा खतरा है। यह हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए भी खतरा है, क्योंकि सिस्टम में काम कर रहे बेईमान लोग उन राष्ट्र विरोधी ताकतों के खिलौने बन जाते हैं, जो आतंकवाद और विद्रोह को बढ़ाना चाहते हैं। ऐसे में जरूरी है कि सभी जागरूक और सही सोचवाले लोग इस बुराई को रोकने के लिये पूरी त्याग भावना से देश के लिये काम करें। आज चरित्र का संकट वास्तव में नेतृत्व का संकट है। हमें नये नेताओं की जरूरत है। आज हमारे समाज में ऐसे अच्छे और सक्षम युवा नेता मौजूद हैं, पर उनकी पहचान करना और उनको बढ़ावा देना जरूरी है। आज सरकारी या गैर सरकारी बड़े अधिकारियों से ज्ञान का और ऊंचा स्तर दिखाने की अपेक्षा होती है।

विभिन्न घोटालों और सर्वव्यापी भ्रष्टाचार के कारण भारत की छवि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर खराब हुई है। ये सारी बातें चिंतित करनेवाली और मन को उद्विग्न करनेवाली हैं। परंतु यह कहना गलत होगा कि देश ने आजादी के बाद कोई प्रगति की ही नहीं है। माना कि देश में निराशा और असुरक्षा का घना अंधेरा व्याप्त है पर इस अंधेरे में भी आशा की एक किरण दिखाई देती है और वह देश की युवाशक्ति। युवाओं से हमें बड़ी अपेक्षाएं हैं। भ्रष्टाचार-विरोधी जनआंदोनल में युवाओं ने स्वयमेव आकर जिस तरह हिस्सा लिया वह आश्वस्त करनेवाला है। उनका यह उत्तर आज भी प्रासंगिक है। इतने संकटों के बाद भी हमारा देश स्वतंत्र और विश्व के सबसे बड़ा लोकतांत्रिक सार्वभौम राष्ट्र के रूप में खड़ा

है, यह सबसे बड़ी आश्वासित करनेवाली बात है।

हम सभी देशवासियों के लिये यह एक मंगल अवसर है। देश के नागरिकों के लिये यह बहुत महत्वपूर्ण दिन है तथा ये इतिहास में सदा के लिये उल्लिखित हो चुका है। ये वो दिन है जब भारत के महान स्वतंत्रता सेनानियों के वर्षों के कड़े संघर्ष के बाद ब्रिटिश शासन से हमें आजादी मिली। आज उन सभी महान नेताओं के बलिदानों को याद करने का दिन है जिन्होंने भारत की आजादी के लिये हंसते हंसते अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया। आजादी के बाद हमें अपने राष्ट्र और मातृभूमि में सारे मूलभूत अधिकार मिले। हमें अपने भारतीय होने पर गर्व होना चाहिये और अपने सौभाग्य की प्रशंसा करनी चाहिये कि हम आजाद भारत की भूमि में पैदा हुए हैं। आज हर क्षेत्र में प्रगति करते हुए भी अभी हम खुशहाली से बहुत दूर हैं। देश के चरित्र का तो कहना ही क्या। देश चलानेवाले लोगों में ईमानदार लोग उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। हमारे देश के गरीबों की बात करें तो सरकार अस्पतालों में इलाज के लिये उन्हें हर कदम पर रिश्वत देनी पड़ती है। हमारे देश का किसान आत्महत्या करने को मजबूर हो गया है। स्कूल/कॉलेज में प्रवेश के लिये रिश्वत देते हुए छात्र के मन में यह बात घर कर जाती है कि कमाते वक्त मैं भी रिश्वत लूंगा। इस तरह अभी भी हमें कई आयामों पर आजादी हासिल करनी है। मसलन अशिक्षा से आजादी, गरीबी और बेरोजगारी से आजादी, सड़ी गली परंपराओं और कुरीतियों से आजादी, भ्रष्टाचार और बेइमानी से आजादी, सच बोलने की आजादी और हमारे दिलो दिमाग को हिंसा से आजादी मिलती बाकी है। यह सोचना जरूरी है। हम सभी यदि अपने स्तर पर आजादी का महत्व और सही मतलब समझाने में कामयाब हो जायेंगे। इसी के साथ सरकार को भी आगे आना होगा।

अंधेरा छंटेगा, उजाला आएगा। ढाई वर्ष से ज्यादा हो गए, न अंधेरा छंटा और न ही कोई उजाले का प्रबंध अपने मुकाम तक पहुंचा। दो बार लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री ने देश के लिए जो घोषणाएं कीं, वो अब तक भी जमीन पर नहीं उतरीं। उतरीं तो वे योजनाएं जिनके भरोसे नागरिक अपनी मूलभूत समस्याएं दूर नहीं कर सकते। आज भी कई गांवों-शहरों में घंटों बिजली नहीं आती। आज भी जनता महंगाई से परेशान है। आज भी देश में कहीं सूखा है, किसान मर रहा है तो कहीं बाढ़ से जिंदगियां तबाह हो रही हैं। वास्तव में वर्तमान में देश दो भागों में बंटा है। एक आधुनिक सुख सुविधा से परिपूर्ण-संपन्न और सुखद भविष्य दिखाता, तो दूसरा अपनी मौलिक जरूरतों से भी कोसों दूर अंधकार में दूसरा भाग है और उसमें रहनेवाला वर्ग है। इसका पैमाना ज्यादा बड़ा है, या कहें असली हिन्दुस्तान यही है, किन्तु हमेशा ढांक दिया जाता है और ऊपर से देश की संपन्नता और चमक-धमक के दर्शन करवाए जाते हैं। देशवासियों को उम्मीद है कि देश में बदलाव की बयार बहेगी।

भारत की जनसंख्या एक अरब तीस करोड़ के आसपास है। इसमें से ८३ करोड़ के करीब ऐसे लोग हैं जिनकी दैनिक आय २० रुपये या उससे कम है। इस महंगाई में बीस रुपये में क्या-क्या खरीदा जा सकता है। भारत में भूख से प्रति वर्ष करीब २५ लाख लोग मरते हैं अर्थात हर ५ मिनट में एक मौत होती है। यह तथ्य सरकार आज तक स्वीकार करने को तैयार नहीं हुई। वह हर इस मौत को जो भूख से होती है, अलग अलग तरीके से परिभाषित करती है। इन मौतों का अलग अलग कारण गिनाती है। इन कारणों में कुपोषण और बीमारी भी बताती है। कुपोषण पर्याप्त पोषक भोजन के अभाव को कहते हैं और कुपोषण का शिकार शरीर रोग प्रतिरोधक क्षमता में अत्यंत दरिद्र होता है इसलिए कुपोषण से मौत हो या उल्टी सीधी कोई चीज खाकर बीमारी से मौत, दोनों मामलों में मुख्य चीज भूख ही है लेकिन भूख स्वीकार न कर सरकार

कुपोषण और बीमारी बताती है। इससे अधिकांश लोगों को सरकार संतुष्ट कर देती है कि मौत की वजह भूख नहीं थी। सरकार बिना कीमत लिए जनता को अन्न का एक दाना भी नहीं देती। पैसे से भी एक तय तरीके से ही देती है। दूसरी ओर अफसर कर्मचारियों की लापरवाही से लाखों क्विंटल अनाज सड़ जाता है। यही अनाज अगर ८३ करोड़ लोगों में बांट दिया जाए तो न सिर्फ लाखों मौतें बचाई जा सकती हैं बल्कि बीमारों की नित बढ़ती फौज भी कम की जा सकती है। बेरोजगारों की फौज लगातार बढ़ती जा रही है। इसमें कोई दो राय नहीं कि नेता वोट खींचने की जुगतें लगाते रहने के अतिरिक्त जनता की खुशहाली के लिए कोई ठोस कार्य योजना नहीं बना पाए हैं। सभी को पर्याप्त शिक्षा व तकनीकी शिक्षा की ठोस व्यवस्था नहीं है। इसलिए अवसर होते हुए भी बहुतों को काम नहीं मिल पाता। यदि सरकारी, अर्धसरकारी और निजी क्षेत्र में काम के घंटे ८ की बजाय ६ कर दिए जाएं और कार्य समय ८ के बजाय १२ घंटे का कर दिया जाए (दो पालियों में), सेवानिवृत्ति की आयु ६० के बजाय ५० वर्ष की कर दी जाए, फौजियों और अन्य कर्मिकों का सेवानिवृत्ति के बाद अन्य कहीं नौकरी करना प्रतिबंधित कर दिया जाए तो काफी हद तक बेरोजगारी पर काबू पाया जा सकता है। इसके अलावा जनता की बदहाली दूर करने को भूमि का सभी भूमिहीनों में समान वितरण, महंगाई और जरूरतों के अनुरूप दैनिक या मासिक वेतन (अकुशल लोगों के लिए) का नियम लागू किया जाना चाहिए। यह कार्य काफी पहले होना चाहिए तथा लेकिन कम से कम इस दौर में तो हो जाए जब भारत को महाशक्ति बनाने की तैयारी है।

देश को स्वतंत्र हुए ७० वर्ष हो गये हैं पर आजादी के लक्षण कहीं से भी नजर नहीं आ रहे हैं। वही तोड़-फोड़, खसोट जो आजादी से पूर्व विद्यमान थी। विरोध जताने की परिपाटी में कीं नयापन नजर नहीं आ रहा है। संसद से लेकर विधानसभा आज दंगल का अखाड़ा बन चुके हैं जहां वैचारिक मंथन की जगह बाहुबल का प्रयोग ज्यादा देखा जा सकता है। देश अपना है, इसका आभास आज तक किसी में हो पाया हो, ऐसा कहीं नजर नहीं आ रहा है। आज भी विरोध प्रदर्शन में सबसे ज्यादा सरकारी संपत्ति का ही नुकसान होते देखा गया है। न्यायालयों में न्याय पाने के लिये पूर्व की भांति आज भी भटकते देखा जा सकता है। कोई सरकारी महकमा नहीं है जहां भ्रष्टाचार व्याप्त न हो। लूट सके सो लूट, का जीवंत प्रकरण आजादी के उपरान्त ज्यादा सक्रिय हो चला है। देश में अपहरण, भ्रष्टाचार, बलात्कार, अनैतिकता के अनेक कदम दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। देश के विकास स्तंभ सरकारी, अर्द्धसरकारी संस्थायें सफेद हाथी बन चुकी हैं। जो जहां हैं, वहीं अपने अपने तरीके से देश को लूट रहे हैं। आजादी से पूर्व इस देश को विदेशियों ने लूटा। आजादी के बाद देशवाले लूट रहे हैं। आज आम जनता पर विभिन्न तरह के करों के बोझ का दायरा बढ़ता जा रहा है। सुरक्षा की तरह बढ़ती जा रही महंगाई अनियंत्रित होती जा रही है, वहीं अनेक लोग राजनीतिक छांव में अवैध रूप से धन बटोरने एवं राजनीतिज्ञों की सुख सुविधा के तमाम संसाधन जुटाने में तत्पर है।

आजादी के उपरांत संविधान जो बना, उसमें आरक्षण संधित विधेयक प्रमुख रहा। आरक्षण के स्वरूप एवं उद्देश्य पर एक नजर डालें। जब देश स्वाधीन हुआ, संविधान में आर्थिक एवं सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों को उपर उठाने की दृष्टि से सहायतार्थ विशेष सुविधाओं का एक पैकेज आरक्षण पद्धति के तहत दिये जाने का देश के बुद्धिजीवी वर्ग ने वैचारिक रूप से निर्णय लिया तथा संविधान में शामिल कर इसे अमल में भी लाये जाने का भरपूर प्रयास किया गया जिसके परिणाम शुरू-शुरू में बेहतर ही निकले। समय के अनुसार ऐसा होना मुनासिब भी था। सामाजिक एवं आर्थिक तोर पर कमजोर वर्ग को राहत भी मिली, उनका जीने का नजरिया बदला परन्तु धीरे धीरे यह जी का जंजाल भी बनता गया। इस

राहत के नाम देश जातिगत राजनीति में धीरे-धीरे बढ़ता चला गया। पहले आदिवासी, अनुसूचित एवं बाद में पिछड़े वर्ग के नाम पर देश में फिर से आरक्षण के तहत वोट की राजनीति शुरू हो गई। कुछ वर्षों के लिये लागू यह पद्धति वोट की राजनीति के कारण जन्म-जन्मांतर हेतु ही नहीं हुई बल्कि इसे पाने की एक होड़ सी हर जातियों में समा गई। लोकतंत्र के पहरूओं ने इसे स्वहित में एक हथियार बनाकर लोकतंत्र पर कब्जा करने का सशक्त माध्यम बना लिया जिसके कारण आज आरक्षण मूल उद्देश्य से चला है जहां देश एक बार फिर से जाति के नाम बंटने को तैयार दिख रहा है। इसी कारण सर्वोच्च न्यायालय को भी इस तरह के संदेश आरक्षण के खिलाफ जारी करने पड़े देश को मत बांटो। इस तरह के अनेक सवाल आज हमारे सामने हैं।

आज लोकतंत्र की दुहाई देनेवाले ही लोकतंत्र का खुला मजाक उड़ा रहे हैं। जनता द्वारा चुने गए जनप्रतिनिधि अब वेतनभोगी हो चुके हैं, जो अपनी हर सेवा की सेवा शुल्क लेने लगे हैं। जन सेवक से मालिक बन चुके हैं। कल जिनके पास रहने की झोपड़ी नहीं थी, आज उनके पास महल हैं। क्या इन्हीं हालातों के लिये जहां लूट खसोट का जीवन्त प्रकरण सर्वाधिक रूप से जागृत हो चला हो, लूट सके सो लूट, आजादी की छूट हेतु आजादी की लड़ाई लड़ी गई थी? चुनाव व्यापार का रूप ले चुका है, जहां देश की सेवा का संकल्प लेकर इस क्षेत्र में उतरा जनप्रतिनिधि ज्याद से ज्यादा धन बटोरने में लगा हुआ हो। इस तरह के हालातों के बीच जहां देशभक्ति की भावना हमारे जनप्रतिनिधियों के दिल से निकलती जा रही हो, जहां देश को येन केन प्रकारेण लूटने की प्रवृत्ति ज्यादा पनप रही हो, कैसे देश को संकट से उबारा जा सकता है?

अभी गांवों में भूख, गरीबी और बेरोजगारी और अशिक्षा का अड्डा है। साहूकार, जमींदार और भूमिपति बढ़े और फले-फूले हैं। गांव-गांव में नेताओं की फौज महिषासुर के रक्तबीज-सी बढ़ी है मगर इनसे कहीं अधिक मजदूर की बेबसी बढ़ी है, भूख बढ़ी है, मजदूरी कम और मजबूरी ज्यादा बढ़ी है। लूट खसोट, ठगी, बेईमानी, घूसखोरी, अपघात, प्रतिशोध, वैमनस्य, गुटबंदी, भाई भतीजावाद और न जाने क्या-क्या ऐसा बढ़ा है जिसे बीड्स यानी खरपतवार ही कहा जा सकता है। अर्थात् जो हमने न बोया था, न चाहा था वह ज्यादा बढ़ा है बजाय उसके जो चाहा गया था। जो भारत की आत्मा की आजादी के बदा का सुंदर सपना था, वह महज मृगतृष्णा बन गया है। मृग जब अपनी ही नाभि में छिपी कस्तूरी की खुशबू के पीछे भागता है तो भागते-भागते पगला जाता है, थक जाता है।

हमारा सपनों का भारत, महज एक मृगतृष्णा साबित हुआ है। चारों तरफ कुंठा, निराशा, असंतोष, आक्रोश का माहौल हमें अवसाद पूर्ण हां ही कहने को विवश करता है। हम भले ही परमाणु बम बना चुके हों, साइबर सिटी सिलिकॉन घाटी बनाने जा रहे हों, इंटरनेट और ई-मेल के युग में प्रवेश कर चुके हों किंतु चरित्र, आदर्श, मूल्य, नैतिकता, संस्कार, संस्कृति और विरासत को हमने गहरे अंधकूप में धकेल दिया है। आपसी प्रेम, सौहार्द, बंधुत्व का स्थान ईर्ष्यों, द्वेष, वैमनस्य और दंगे फसादों ने कब्जा कर लिया है। आजादी पाकर देश का नाम भले ही उठा हो, हम स्वयं तो बहुत नीचे गिरे हैं, खुद से, खुद की निगाहों से।

अब दूसरा पक्ष भी, यानी उज्ज्वल पक्ष को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यदि ७० बरस के लेखे-जोखे पर निगाह डालें तो हमने पाया भी कम नहीं। आज यदि हिन्दुस्तान को एक महाशक्ति के रूप में देखा समझा जा रहा है तो यह ७० बरसों की प्रगति का नमूना है।

जब भी और जैसा भी संकट आया है हम बखूबी उससे न केवल सुरक्षित बच निकले हैं अपितु आफतों की आग से सदा ही कुंदन से तपकर, चमक कर बाहर आए हैं। कृषि, उद्योग, वाणिज्य, तकनीक, नीति, कूटनीति, सबमें हमने बेहतर नहीं तो औसत तरक्की तो की ही है। यदि आज अपनी पूंजी न होने पर भी विदेशी अरबों-खरबों डालर हमारे यहां झोंकने पर तत्पर हैं तो यह हमारी ७० बरस की विश्वसनीयता का ही प्रतीक है।

एक बार फिर व्यक्ति से सूक्ष्म यानी राष्ट्र और संस्था से व्यक्ति पर लौटें तो फिर वही खालीपन दिल में कांटे की तरह चुभता है, खटकता है, सालता है, पीड़ा देता है। आज भी वह औसत आय हो या आयु, जीवनस्तर हो अथवा सुख सुविधाएं, विश्व में सबसे नीचे पायदानों पर खड़े लोगों में गिना जाता है। मुट्ठी भर प्रवासियों, अनिवासियों, उद्योगपतियों या नेताओं को छोड़ दें तो अधिसंख्य भारत गरीबी की रेखा के नीचे घिसटता नजर आता है जहां न पर्याप्त भोजन है, न कपड़े और न ही मकान। मूलभूत आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं हो पा रही है।

संसद में राजनीति तो है पर राष्ट्रहित नीति, गरीबों का हितैषी स्वर, सर्वजन हिताय या बहुजन सुख का भाव सांसदों, नेताओं, पार्टियों और गुटों के गिद्ध गर्जन में कहीं सुनाई नहीं देता। घात-प्रतिघात है, आलोचना है, निंदा है, भर्त्सना है, आत्मश्लाघा है मगर वह सब नहीं जिसके लिए जनता ने इन्हें चुनकर भेजा है।

न्यायालयों में सत्य की जगह असत्यमेव जयते का व्यवहार जगजाना हो गया है। व्यवस्थापितका की जड़ों में भ्रष्टाचार व अकर्मण्यता का धुन बहुत गहरे चला गया। चौथा खम्भा कहे जानेवाला मीडिया कागज से इंटरनेट पर जा बैठा है यानी दो रुपये की बासी खबरें गरीब भारतीय की और तरोताजा, आधुनिक सूचना उसी क्रीमीलेयर की जो सच्चे भारत का दाना पानी छीन कर उसके सर पर सवार हो बैठा है। अस्तु, आजादी है और रहेगी भी किंतु सपनों के नाम पर तो महज मृगतृष्णा है, मरीचिका है, आश्वासन हैं और नारों के साथ चिपके कोरे वायदे हैं बस।

कई देशी-विदेशी लेखकों ने भारत के एकीकरण, एक राष्ट्र के रूप में आधुनिक भारत का निर्माण विषय में काफी गहराई से लिखा है। विदेशी लेखक ज्यादातर भारत के संबंध में अपनी एक निश्चित तथा पूर्ण निर्धारित प्रतिक्रिया व्यक्त करता है या घृणा करता है। कोई उसे रहस्यमय समझता है, कोई उसकी फिजूलखर्ची पर अपनी आंखें टिकाता है, कोई कंजूसी पर। कोई उसके खाने को सर्वश्रेष्ठ मानता है कोई दुनिया में सबसे खराब। एशिया के कई देश उसे अपना प्रतिद्वंद्वी मानते हैं। अमरीकन इसे एक चुनौती समझते हैं जिसके साथ या तो समन्वय करना होगा या आर्थिक प्रतिद्वंद्विता में फंसना होगा। योरपीयनों के लिए भारत एक धार्मिक स्थल है जिसका एक खास किंतु अपरिभाषित संदेश है। ब्रिटिश लोगों को अभी भी औपनिवेशिक दिनों की याद सताती है। पाकिस्तान के लिए भारत एक स्थायी खतरा है। ये विभिन्न दृष्टियां अपनी जगह कायम रहती हैं। भारत क्या करता है और क्यों करता है, इसका कोई सरोकार इनके सोच में नहीं हैं। भारत कितनी ही शांति की घोषणायें करे या कहे या उसके लिए काम करे, इन धारणाओं में ज्यादा परिवर्तन नहीं होता। आंखें वही देखती हैं जो दिमाग में पहले से ही जमा है। भारत एक आश्चर्यचकित करनेवाला देश भी है। कई बार देखनेवाले का मस्तिष्क अनेक दुविधाओं में फंस जाता है। यहां राजनीति में कुछ और है, आर्थिक स्थिति कुछ अलग है और सामाजिक परिस्थितियां कुछ भिन्न। तीनों में कई बार जुड़ाव या तारतम्य या संबंध ढूंढ़ना भी कठिन हो जाता है। भारत का भाग्य ब्रिटेन की दूसरी कालोनीज से बिल्कुल अलग तरीके से या तरह से निर्मित है। आजादी के वक्त का सोच और उस वक्त की रीयलीटिज आज से पूरी तरह भिन्न हैं। उस वक्त राष्ट्र एक सपना था, राष्ट्रीयता अन्दर तक बैठी हुई थी।

आज वह सपना बहुत कुछ टूट चुका है। राष्ट्रीयता की जगह क्षेत्रीयता हावी हो रही है। राजनीति में भी क्षेत्रीय दलों का प्रभुत्व या महत्व बढ़ता जा रहा है। त्याग की जगह भ्रष्टाचार ने ली है। सिद्धांत की जगह अवसरवाद सर्वेसर्वा बन गया है। आर्थिक जगत से एक नये सिरे के पूंजीवाद के बल पर भारत महानता की तरफ बढ़ रहा है। लोकतंत्र में वंशवाद की बेल चारों तरफ फैल रही है। पंचायत से लेकर संसद तक वंश चल रहे हैं। स्पष्टता की जगह चापलूसी आगे बढ़ने का मुख्य साधन हो गया है। इन सबके बावजूद हमारा लोकतंत्र चल रहा है यद्यपि गरिमाहीन और अदूरदर्शी होता जा रहा है। अमीर बनने की होड़ लगी है। अमीर बनने का सबसे सरल तरीका गरीबी उन्मूलन की योजनायें हैं और विकास की परियोजनायें हैं। शोषण का विरोध या उन्मूलन करनेवाली पार्टियां शोषण करने में लगी हुई हैं। गरीब के लिए गरीबी से निकलने का कोई रास्ता खुला नहीं है। इतिहास गवाह है कि समाजवाद की नीतियों ने देश को खजाने दिये। इसी के बल पर हमारी आर्थिक महानता खड़ी हुई है। हमारी गरीबी विस्फोटक है पर विस्फोट होने की आज कोई संभावना नहीं लगती। बढ़ती जनसंख्या हमारी सरकारों की एक बड़ी चिन्ता रही है। देश की सारी कमी तथा कमजोरियों की जड़ बढ़ती जनसंख्या में बताई जाती है पर यह भी सच है कि भारत की नयी पीढ़ी भारत की भावी समृद्धि का सबसे बड़ा सहारा है। सबसे ज्यादा योग्य युवा अशिक्षा के बावजूद हमारे पास है। चीन, जापान, अमरीका या अन्य कोई राष्ट्र दक्ष युवाओं के मामले में हमारा मुकाबला नहीं कर सकता। देश का ही नहीं, दुनियां का भविष्य इस युवा पीढ़ी के हाथ में है क्योंकि इन्हीं में से वैज्ञानिक निकलेंगे, कलाकार निकलेंगे, साहित्यकार निकलेंगे, प्रशासक निकलेंगे, आविष्कारक निकलेंगे और भावी दुनियां को दुनिया के हर हिस्से में फेल कर चलायेंगे। ऐसा विलक्षण देश हमारा है ऐसा भारत देश हमारा है।

जब कोई ईमानदार नागरिक रात को सो नहीं पाता है, जब कोई देशभक्त उदास हो जाता है, जब कोई काबिल नौजवान इम्प्लायमेंट एक्सचेंज की सीढ़ियों पर दिन गुजारता है, जब कोई लेखक इनाम और अॅवार्ड के मोह में राजनेताओं के चक्कर काटता है, जब कोई आदमी न्यायालय में तारीख पे तारीख लेता बचपन से बुढ़ापे में पहुंच जाता है, जब कोई मरीज अस्पताल के कम्पाउंड में अपना बिस्तर लगता है, तब सवाल उठता है कि ७० साल की आजादी में आम आदमी के हिस्से में क्या आया?

करीब ५० सालों के कड़े संघर्ष, त्याग और बलिदानों के बाद हमें अंग्रेजी शासन से मुक्ति मिली और १५ अगस्त १९४७ को हम आजाद हो गये।

१४ अगस्त १९४७ की आधी रात को देश में आजादी की घोषणा की गई थी। आजादी का पहला भाषण देश के पहले प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आधी रात को दिया था। तब से लेकर आज तक हमारे देश में कुल १६ प्रधानमंत्रियों ने शपथ ली हैं। पंडित नेहरू को छोड़कर आज के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी तक सिर्फ इंदिरा गांधी और वाजपेयी ही थे, जो दो बार प्रधानमंत्री बने थे और सिर्फ मनमोहन सिंह ही ऐसे प्रधानमंत्री रहे, जिन्होंने २००४ और २००९ में लगातार दो बार प्रधानमंत्री की शपथ ली थी।

आजादी के इस संघर्ष में हमारे नेताओं के प्रयत्न और उनकी प्रेरणा तो थी ही, मगर देश के आम आदमी की हिस्सेदारी भी कोई कम नहीं थी। आजादी के आंदोलन में आम आदमी के शामिल हुए बिना यह कार्य पूरा हो ही नहीं सकता था।

इस आम आदमी ने देश के खूनी बँटवारे के बाद भी आजादी का जश्न मनाया। उसे उम्मीद बंधी कि अब हमारी अपनी सरकार और अपने प्रशासन के तहत उसके अच्छे दिन आयेंगे। उसे उम्मीद बंधी कि अब उसके खेतों में पैदावार बढ़ेगी,

नए कारखाने और उद्योग खुलेंगे, शिक्षा का विकास होगा, चिकित्सा-सुविधाएं सबको समान रूप से मिलेंगी और फिर अपने ही लोगों के राज में उसकी समस्याओं, अभावों और जरूरतों का समाधान होगा। बेकारी, बेरोजगारी, शोषण और असमानता का अंत होगा और उसे सामान्य, शांतिपूर्ण और सहज जीवन जीने का मौका मिलेगा। इसके बाद उसकी जिंदगी में गरीबी तथा दरिद्रता पूरी तरह खत्म हो जायेगी।

ये सही है कि आजादी के बाद देश के सभी क्षेत्रों का विकास हुआ। खेतों में उपज बढ़ी। बड़े उद्योग शुरू हुए। शिक्षा संस्थाओं और चिकित्सा सुविधाओं का काफी विकास हुआ। वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्र में भी हम खूब आगे बढ़े। लेकिन इस पूरे विकास का जितना लाभ आम आदमी को मिलना चाहिए था, वो नहीं मिला। क्योंकि देश का सारा विकास कुछ थोड़ी सी मुट्ठियों में कैद होकर रह गया और देश का आम आदमी आज पहले से भी बुरी स्थिती में आ पड़ा है।

देश की आजादी के बाद राजनैतिक, सामाजिक और सार्वजनिक मूल्यों में जो गिरावट आयी, उसमें सबसे ज्यादा देश के आम आदमी का ही नुकसान हुआ है। इस देश में आज तक जितने भी प्रधानमंत्री हुए हैं उन सबने आम आदमी को बार बार मोहक नारों के साथ अच्छे अच्छे वादे किये, लेकिन पिछले ७० सालों में उस आम आदमी के हिस्से में क्या आया?

किसी भी देश के लोकतंत्र में आम आदमी को, उनकी मूलभूत जरूरतों को और अपेक्षाएं भी बहुत थोड़ी होती हैं। वो रहने के लिए बंगले नहीं मांगता, खाने के लिए फाइव स्टार होटलों का खाना नहीं मांगता, पहनने के लिए भारी चमकदार कपड़े नहीं मांगता। वो बिचारा तो अपने दो हाथों के लिए काम मांगता है। अपने बच्चों के लिए अच्छी शिक्षा और अच्छे स्वास्थ्य की सुविधा मांगता है। वो सिर्फ यह चाहता है कि उसे दिनभर काम करने के बाद दो टाइम की रोटी मिले और सामान्य सहज जीने के लिए कुछ छोटी-छोटी जरूरी सुविधाएं मिले।

मगर ७० सालों की इस आजादी के बाद भी आज देश के करीब सौ करोड़ लोग बेहद अभावों के बीच जिंदगी जीने को मजबूर हैं। करीब ३० करोड़ लोग गरीबी-रेखा के नीचे जी रहे हैं। करीब एक तिहाई आबादी को पीने का शुद्ध पानी नहीं मिल पाता। कई प्रदेशों में आज भी लोग भुखमरी के शिकार हैं। खेलने खाने की उम्रवाले बच्चे मजदूरी करने को मजबूर हैं। स्त्री-पुरुष की समानता आज भी सपना बनी हुई है। हर साल प्राकृतिक आपदाओं मकें लाखों गरीब अपनी जान गंवा देते हैं, लेकिन हमारी कल्याणकारी सरकार आजादी ७० सालों में उसका कोई स्थायी समाधान नहीं खोज पायी। देशभर में ६ लाख से ज्यादा गांव हैं। वहां के लघु और कुटीर उद्योग नष्ट हो गये हैं। हमारे सरकारी अफसर तो इतने भ्रष्ट हो गये हैं कि अगर सरकार गरीबों के लिए कुछ करती भी है तो गरीब आदमी तक कुछ नहीं पहुंच पाता।

आम आदमी के पल्ले में सिर्फ नेताओं के खोखले आश्वासन ही आते हैं। जिन्हें वो ७० सालों से ओढ़ता और बिछाता आ रहा है। अब तो राजनीति, प्रशासन और पुलिस की मिलीभगत ने बिगड़े हुए प्रणाली को और भी भयंकर बना दिया है।

साथ ही अब दलालों और नवधनिक लोगों की जमात भी पैदा हो गई है। पिछले बीस सालों में तो स्थिति इतनी भयंकर हो गई हैं कि देश का आम आदमी दिन-ब-दिन बौना होता जा रहा है।

आजादी मिली, तब हमारे नेताओं ने इस देश के आम आदमी को उसके दरवाजे पर रोजगार देने का सपना दिखाया था, मगर आज वही आम आदमी अपनी रोजी रोटी का जुगाड़ करने के लिए दर-दर भटक रहा है। गांधीजी ने सर्व समानता का सपना देखा था। सहज और सादा जीवन जीने की प्रेरणा दी थी। नैतिक आदर्शों को जीवन में उतारने की बात कही थी और समाज के अंतिम आदमी की हर आंख का आंसू पोंछने का आहवान किया था, लेकिन उनके जीवन के अंतिम चरण

में उनको हाशिये पर डाल दिया गया और यह सब उन नेताओं की कृपा से हुआ, जिन्हें गांधीजी ने ही नेतृत्व की प्रेरणा दी थी। बेशक, यह बात सच है कि गांधीजी के समय के नेताओं में आम आदमी के लिए संवेदना थी, वे इस वर्ग के लिए ईमानदारी के साथ कुछ करना भी चाहते थे, लेकिन उनकी प्राथमिकताएं गलत साबित होती गईं, जिस काराण देश का आम आदमी उपेक्षित होता चला गया।

आजादी के बाद जो नया नेतृत्व उभरा वो एक सिरे से इतना स्वार्थ केंद्रित, धन का लालची और भ्रष्ट निकला कि आज देश के लोगों में थोड़ी बहुत आस्था और आशा भी बिखरती नजर आने लगी है।

दरअसल आजादी से पहले हमारे सामने एक स्पष्ट लक्ष्य था कि अंग्रेजों के राज्य से मुक्ति पाना है। लेकिन अंग्रेजों के जाने के बाद हमें क्या करना है इसकी कोई स्पष्ट रूप रेखा हमारे नेताओं के सामने नहीं थी। अगर होती तो सबसे पहले पूरे देश को शिक्षित और प्रशिक्षित करने का काम हाथ में लिया जाता। लोकतंत्र की सफलता के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण एक अनिवार्य शर्त है। इसलिए भारत जैसे अविकसित, अशिक्षित और गरीब देश के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण और रोजी रोटी की सुविधाएं जुटाना हमारी प्राथमिकताएं होनी चाहिए थी और यही नहीं हो पाया। जो थोड़ा बहुत हुआ भी, उसे समाज के अमीर लोगों ने डकार लिया। आज आम आदमी के लिये आजादी का कोई मतलब नहीं रह गया। वो बिचारा आज भी वहीं खड़ा है, जहां ७० साल पहले अंग्रेजों के राज में खड़ा था। अब तो हालात इतने बिगड़ गए हैं कि गरीब आदमी वहां भी खड़ा-खड़ा लड़खड़ाने लगा है। उसके लिए शिक्षा इतनी महंगी हो गई है कि उसे अपने बच्चों को पढ़ाना भारी होता जा रहा है। लगातार बढ़ते भ्रष्टाचार और व्यापारीकरण ने इस पवित्र क्षेत्र को भी दूषित कर दिया है। शिक्षक व्यवसायी हो गये हैं, परीक्षा पद्धति भ्रष्ट हो गई है। संपन्न लोगों के बच्चे पैसे के दम पर ऊंची उपाधियां पाकर ऊंचे से ऊंचे पद पा जाते हैं और आम आदमी अपनी अशिक्षा, तंगहाली और बेरोजगारी के बोझ से बेदम होता जा रहा है।

हमारे निम्न मध्यम वर्ग की हालत भी कोई बहुत आशाजनक नहीं है। अपनी योग्यता के अनुरूप अवसर नहीं मिलने के कारण वह भी मानसिक तनाव से हैरान परेशान है। वो बिचारा एक अजीब सी घुटन के बीच सांस लेता हुआ अपने दिन गिन रहा है। देश में स्वास्थ्य सेवाओं की हालत भी बेहद खराब है। आबादी के हिसाब से स्वास्थ्य सेवाएं बहुत ही कम हैं। आम आदमी के लिए सार्वजनिक चिकित्सालयों में इलाज कराना किसी भयंकर अनुभव से कम नहीं है। चिकित्सकों, नर्सों, दवाइयों और बिस्तरों के अभाव में उसे वे सुविधाएं भी नहीं मिल पाती, जिनकी घोषणा हमारे संविधान, पंचवर्षीय योजना तथा नेताओं के भाषणों में बार बार होती रही है।

आज दिखने को तो बड़ी बड़ी शानदार बिल्डिंगे हैं, बड़े बड़े मॉल हैं, मल्टीप्लेक्स थिएटर हैं, रोड पर बड़ी बड़ी विदेशी कारें हैं। यह सब उन्हीं राजनेताओं और अफसरों का है जो आम आदमी के हित में काम करने की बजाय, खुद का स्वार्थ साधने में लगे हैं। पुलिस और प्रशासन ही नहीं बल्कि न्याय व्यवस्था पर भी इन्हीं का दबाव बढ़ रहा है। गुंडे और दादा लोगों से इनकी सांठ-गांठ ने तो हालात और भी खराब कर दिये हैं।

आज हमारा पूरा समाज नैतिक अवमूल्यों से ग्रस्त है। आज सिर्फ भौतिक संपन्नता ही देश के नौजवानों के लिए एक स्वीकृत व्यवस्था बन गई है। दूसरी ओर, अशिक्षा और प्रशिक्षण के अभाव में आज भी देश की बड़ी आबादी अंधविश्वासों, सड़ी गली परम्पराओं और जड़ आदर्शों से जकड़ी पड़ी है।

देशभर में हर साल छह महीने में होनेवाले चुनावों में खरीदी बिक्री का बाजार गर्म रहता है। देश का आम आदमी

राजनेताओं के लिए सिर्फ एक वोट बनकर रह गया है। माता-पिता और अध्यापक से लेकर समाजसेवी, सरकार, अधिकारी, न्याय व्यवस्था आदि सबके सब मूल्य विहीन होते जा रहे हैं। हमारा संविधान तक एक मजाक बनकर रह गया है। आज देश में प्रजातंत्र अपने विकृत रूप में विद्यमान है। वो प्रजातंत्र न रहकर पाखंडतंत्र बन गया है। इन सबके बीच आम आदमी का आक्रोश भी सरकार के कानों तक पहुंचता नहीं हैं। शायद इसीलिए आनेवाले कल पर देश के आम आदमी का विश्वास नहीं रह गया है।

अनियंत्रित उदारीकरण और वैश्विकरण ने इस स्थिति को और भी भयावह बना दिया है। इसने तो मनोरंजन के क्षेत्र को भी भ्रष्ट कर दिया है। सिनेमा और दूरदर्शन के माध्यम से अश्लीलता व पश्चिमी संस्कृति हमारे घरों में घुस गई है। देश के नौजवानों में फैशन, दिखावा, हिंसा और अश्लीलता को बढ़ावा मिल रहा है। हमारी संस्कृति के अच्छे संस्कार अब बीते दिनों की बात हो रही है। विज्ञापनों की दुनिया अपने तरीके से देश के आम आदमी को छोटा बनाने में लगी है। ऐसे में हमारे समाज का संपन्न वर्ग मजे कर रहा है।

एक ऐसा भारत जहां आजादी के ७० साल बाद भी रोटी, कपड़ा और मकान के लिए ५० करोड़ से ज्यादा लोग मोहताज हैं, आज भी हमारे देश की आत्मा गांवों में बसती है और ऐसे में महात्मा गांधी के भारत की तस्वीर खुद ही एक आलोचना बन जाती है। आज हालत ये है कि एक तरफ गरीबों के लिए तीन रूपये किलो के हिसाब से अनाज के वादे हैं, तो दूसरी तरफ एक करोड़ का वेतन पानेवाले मैनेजरों की लिस्ट है। एक तरफ रोजी रोटी और शिक्षा जैसी मूलभूत जरूरतों का इंतजार करते करोड़ों लोग हैं, तो दूसरी तरफ कानून से आंख मिचौली खेलकर अरबों रुपयों के घोटाले करते, चमकदार चेहरेवाले मुट्ठीभर लोग हैं। ७० साल की आजादी में यह देश कितना बदल गया है। यहां की जिंदगियां कितनी बदर्ल गई हैं। सोच में कितना बदलाव आ गया है और इन सबके बीच जो नहीं बदला है, वह है आम आदमी का दुर्भाग्य। उसकी समस्याएं, उसका अभाव, उसकी मजबूरियां सब जैसे अंग्रेजों की गुलामी के समय थी वैसी ही ठहरी हुई ही नहीं बल्कि और ज्यादा कठिन हो गई है। क्या इन्हीं सबके लिए बापू ने आजादी की लड़ाई लड़ी थी? क्या इसी हालत के लिए जनता ने अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष किया था, जेल की कोठरियां भरी थी और हजारों की संख्या में अपनी जान गंवाई थी। क्या आजादी के शुरू के दौर में हमारे नेताओं ने इन सबके लिए अपना ऐशो आराम छोड़ा और विरोध का झंडा उठाकर कांटों से भरी राह पर चले थे? तब एक सपना था उनकी आंखों में, जनता की खुशहाली का। सेवा का और त्याग का। भारत की सेवा का मतलब है उन लोगों की सेवा करना जो दुखी, बेबस और बदकिस्मत हैं। भारत की सेवा का मतलब है गरीबी, जहालत और अज्ञान को मिटाना। सबको उन्नति के लिए बराबर का मौका देना। हर आंख का आंसू पोंछना। यह हमारी शक्ति के बाहर की बात हो सकती है, मगर जब तक ये आंसू नहीं पोंछे जाते या गरीबी और आम आदमी की मुश्किलें दूर नहीं हो जातीं, तब तक हमारी जिम्मेदारी पूरी नहीं होती। इस जिम्मेदारी को निभाने के लिए हमें तब तक मेहनत करनी चाहिए, जब तक आम आदमी के सपनों को सच्चाई में न बदल दें। सारे देशवासी हमारे भाई हैं और हमारा उद्देश्य उनकी राजनीतिक और सामाजिक स्थिति में सुधार करना है। गांधी ने आजादी की लड़ाई को सत्याग्रह और अहिंसा का एक नया आयाम दिया था। आजादी के लिए लड़ी गई दुनिया में यह पहली और अंतिम अहिंसक लड़ाई थी। बापू ने हमें आजादी दिलाई, मगर सारी दुनिया को उदारतावादी नीति और मानवतावादी आदर्श का संदेश भी दिया। बापू ने सत्य, अहिंसा और भाईचारे का आदर्श सारी दुनिया के सामने रखा।

१ जनवरी

महादेव हरिभाई देसाई (जन्म- १ जनवरी)

बेहतरीन विचारक, लेखक तथा विख्यात स्वतंत्रता सेनानी महादेव देसाई राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के बेहद करीबी थे और जीवन भर उनकी छाया की तरह रहे। वे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के विश्वसनीय सचिव थे। १९४२ में जब आगा खां महल में उनका निधन हुआ, उस समय भी वह गांधी जी के साथ थे। शुरू से गांधी जी कें विचारों से प्रभावित महादेव देसाई उच्च कोटि के विचारक और बेहतरीन लेखक थे। महात्मा गांधी के विचारों के कार्यान्वयन में महादेव देसाई की अहम भूमिका रही। महादेव देसाई ने लंबे समय तक डायरी लिखी जो महात्मा गांधी के चरित्र, विचार और उनके दर्शन को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है। उनकी डायरियों से गांधीजी की जीवनशैली, उनके क्रियाकलापों आदि का विस्तृत विवरण मिलता है। महात्मा गांधी ने ८ अगस्त १९४२ को मुंबई के अपने ऐतिहासिक भाषण में करो या मरो का नारा दिया था। ९ अगस्त की सुबह ही अंग्रेजों ने महात्मा गांधी, सरोजनी नायडू, महादेव देसाई आदि को गिरफ्तार कर पुणे के आगा खां महल में बंद कर दिया। इसी जेल में १५ अगस्त को महादेव देसाई का दिल का दौरा पड़ने से निधन हो गया। उनके निधन पर महात्मा गांधी ने कहा था कि उन्होंने ५० साल की जिंदगी में ही १०० साल का काम कर दिया। महादेव देसाई को महात्मा गांधी के निजी सचिव के रूप में जाना जाता है, लेकिन वह और कस्तूनरबा उन्हें अपने पुत्र सरीखा मानते थे। गांधी जी ने पहली ही मुलाकात में देसाई की छिपी हुई विशेषताओं को पहचान लिया और उन्हें अपने साथ काम करने का न्यौता दिया। गांधीजी और देसाई का जो संबंध १९१७ में बना, वह १९४२ में देसाई के निधन तक बना रहा। गांधीजी के पत्र व्यवहार को व्यवस्थित रखने में महादेव देसाई की अहम भूमिका थी। महादेव देसाई ने चंपारन सत्याग्रह, बारदोली सत्याग्रह और नमक सत्याग्रह में भाग लिया और इसी दौरान वह गिरफ्तार किए गए।

सम्पूर्णानंद (जन्म- १ जनवरी)

सम्पूर्णानंद एक प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, राजनेता थे जो उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री और राजस्थान के राज्यपाल भी रहे थे। डॉ. सम्पूर्णानंद कुशल तथा निर्भीक राजनेता एवं सर्वतोमुखी प्रतिभावाले साहित्यकार एवं अध्यापक थे। डॉ. सम्पूर्णानंद की इतिहास, पुराण, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र आदि में गहरी पैठ थी। आध्यात्मिक विषयों में भी उनकी बड़ी रुचि थी। वे समाजवादी विचारों के व्यक्ति थे और १९३४ में कांग्रेस के अंदर समाजवादी पार्टी के गठन में आचार्य नरेंद्र देव के साथ उनका भी प्रमुख हाथ था। वे तीन बार उत्तर प्रदेश कांग्रेस के सचिव रहे। १९४० के पुणे हिंदी साहित्य सम्मेलन की उन्होंने अध्यक्षता की। अपने मंत्रित्व काल में उन्होंने हिंदी के उन्नयन के लिए अनेक योजनाएं आरंभ कीं। हिंदी समिति (जो अब हिंदी संस्थान कहलाती है) उन्हीं की आरम्भ की हुई है।

सत्येंद्रनाथ बोस (जन्म- १ जनवरी)

सत्येंद्र नाथ बोस प्रसिद्ध गणितज्ञ और भौतिक शास्त्री थे। भौतिक शास्त्र में दो प्रकार के अणु माने जाते हैं- बोसॉन और फर्मियान। इनमें से बोसॉन सत्येंद्र नाथ बोस के नाम पर ही है। सत्येन्द्रनाथ बोस ललित कला और संगीत प्रेमी थे। वे इसराज और बांसुरी बजाया करते थे, किंतु इसराज बजाने में वे बहुत निपुण थे। सत्येंद्र नाथ बोस ने प्लॅक्स ब्लॅक बॉडी रेडिएशन लॉ का गहन अध्ययन किया और ब्लैक बॉडी ऐडिएशन की फोटोन गैस के रूप में पहचान की।

उन्होंने मेक्स प्लांक जिन्होंने क्वान्टम मेकेनिक्स की रचना की, के ब्लैक बॉडी रेडिएशन नियम में लाइट क्वांटा या फोटोन गेस को लेकर प्रतिवाद था जिसको लेकर आइन्सटाइन भी असहमत थे। बोस के मित्र बताते थे कि उनके कमरे में किताबों, आइंस्टीन, रमन आदि वैज्ञानिकों के चित्र के अलावा एक वाद्य यंत्र यसराज हमेशा रहता था। परंतु यसराज तो किसी विशेषज्ञ की तरह बजाते बोस के संगीत प्रेम का दायरा लोक संगीत, भारतीय संगीत से लेकर पश्चात संगीत तक फैला हुआ था। प्रो. धुरजटी दास बोस के मित्र थे। जब प्रो. दास भारतीय संगीत पर पुस्तक लिख रहे थे तब बोस ने उन्हें काफी सुझाव दिए थे। प्रो. दास के अनुसार बोस यदि वैज्ञानिक नहीं होते तो वह एक संगीत गुरु होते। उनका निधन ४ फरवरी को हुआ।

मनीराम बागड़ी (जन्म- १ जनवरी)

मनीराम बागड़ी समाजवादी विचार धारा के प्रसिद्ध नेता थे, जो तीन बार (दूसरी, छठी और सातवीं) लोकसभा में संसद के सदस्य रहे थे। साधारण परिवार से संबंध रखनेवाले मनीराम बागड़ी ने हमेशा कमेरे वर्ग की लड़ाई लड़ी। चाहे मुजारा आंदोलन हो या अध्यापकों, किसानों और कर्मचारियों का आंदोलन, उनकी सभी में सक्रिय भागीदारी थी।

ज्योतिरादित्य सिंधिया (जन्म- १ जनवरी)

ज्योतिरादित्य सिंधिया वाणिज्य और उद्योग राज्यमंत्री हैं। ज्योतिरादित्य सिंधिया का परिवार भारतीय राजनीति के सबसे पुराने परिवारों में से एक हैं।

उदय प्रकाश (जन्म- १ जनवरी)

उदय प्रकाश चर्चित कवि, कथाकार, पत्रकार और फिल्मकार हैं। उदय प्रकाश हिन्दी साहित्य और संसार के प्रतिष्ठित और चर्चित कथाकार हैं। इनकी रचनाएं न केवल भारतीय भाषाओं, बल्कि कई विदेशी भाषाओं में अनुदित होकर लोकप्रिय हुई। उदय प्रकाश की कहानियों में जहां कविताओं जैसी रवानगी और सरसता है, वहीं वे समय की विसंगतियों की ओर बहुत गहराई से ध्यान आकर्षित करती हैं। रूसी, अंग्रेजी, जापानी डच और जर्मन भाषा में उनकी कविताओं का अनुवाद हो चुका है और लगभग सभी राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय कविता संकलनों में उनकी कविताएं संग्रहीत हैं। २००४ में हॉलैंड के प्रख्यात अंतरराष्ट्रीय कविता उत्सव में वे भारतीय कवि के रूप में भाग ले चुके हैं।

बाबू गेनू (जन्म- १ जनवरी)

महाराष्ट्र के पुणे जिले के ग्राम महांगल में १९०८ में जन्मे बाबू गेनू श्री ज्ञानबा उर्फ गेनू के पुत्र थे। ४थी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त बाबू गेनू एक मिल मजदूर थे। १९३० में असहयोग आंदोलन में भाग लिया। नमक सत्याग्रह में हिस्सा लिया और शराब तथा विदेशी कपड़ा बेचनेवाली दुकानों पर धरना दिया। १२ दिसंबर १९३० को बंबई के प्रिंसेस स्ट्रीट के निकट विदेशी सामान से भरे एक ट्रक के सामने लेट गए और बुरी तरह घायल हो गए बंबई के जी.टी. अस्पताल में उनकी मृत्यु हो गई।

२ जनवरी

मन्नत्तु पद्मनाभन (जन्म- २ जनवरी)

मन्नत्तु पद्मनाभन केरल के प्रसिद्ध समाज सुधाकों में से एक थे। घर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। कई कठिनाइयों का सामना करते हुए इन्होंने मजिस्ट्रेटी की परीक्षा पास की थी, जिससे वकालत शुरू कर सकें। उस समय नायर समाज में जो अंधविश्वास और पाखण्ड व्याप्त था, उसे दूर करने के लिए मन्नतु पद्मनाभन ने नायर सर्विस सोसाइटी नामक एक संस्था की स्थापना की थी। केरल का भारत में विलय कराने के आंदोलन में उन्हें ६८ साल की उम्र में जेल भी जाना पड़ा। बहुमुखी सेवा कार्यों के लिए इन्हें १९६६ में पद्मभूषण सम्मान प्रदान किया गया था।

डी.एन.खुरोदे (जन्म- २ जनवरी)

दारा नुसेरवानजी खुरोदे एक प्रसिद्ध भारतीय उद्यमी थे, जिन्हें भारत के दुग्ध उद्योग में उनके योगदान के लिए जाना जाता है। उन्होंने अपने कॅरियर की शुरुआत में कई निजी और सरकारी संगठनों में काम किया। बाद में कई सरकारी उच्च पदों पर भी अपनी सेवाएँ दीं। डी.एन.खुरोदे ने १९४६ से १९५२ तक मुम्बई के दुग्ध आयुक्त के रूप में भी कार्य किया। १९५० के दशक में भारत में इनका नाम डेयरी का पर्याय बन गया था। वर्ष १९६३ में डी.एन. खुरोदे को वर्गीज कुरियन के साथ सम्मिलित रूप से रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्रदान किया गया। भारत सरकार ने इनको सन १९६४ में पद्मभूषण से सम्मानित किया था।

बुला चौधरी (जन्म- २ जनवरी)

बुला चौधरी भारतीय महिला खिलाड़ी हैं, जिन्होंने पांचों महाद्वीप के सातों समुद्र तैर कर पार किए हैं और उन पर अपनी जीत हासिल की है। बुला चौधरी को अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। उन्हें जल परी की उपाधि दी जा चुकी है। २००३ में उन्हें ध्यानचंद लाइफटाइम एचीवमेंट अवॉर्ड भी दिया गया है। वह सुर्खियों में तब आईं, जब उन्होंने मात्र ९ वर्ष की आयु में राष्ट्रीय प्रतियोगिता जीत ली। उन्होंने अपनी आयु वर्ग की सभी प्रतियोगिताएं जीत कर एकसाथ छह स्वर्णपदक जीत लिए।

सफदर हाशमी (निधन- २ जनवरी)

सफदर हाशमी एक मार्क्सवादी नाटककार, कलाकार, निर्देशक, गीतकार और कलाविद थे। सफदर हाशमी को नुक्कड़ नाटक के साथ जुड़ाव के लिए जाना जाता है। सफदर हाशमी जन नाट्य मंच और दिल्ली में स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एस.एफ.आई) के संस्थापक सदस्य थे। जन नाट्य मंच की नींव भारतीय जन नाट्य संघ (इप्टा) से अलग हटकर १९७३ में रखी गई थी।

बली राम भगत (निधन- २ जनवरी)

बली राम भगत प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, संसदीय व्यवस्था के गहन अनुभवी तथा संसदीय प्रकियाओं तथा कार्यसंचालन नियमों के अच्छे ज्ञाता जब १५ जनवरी, १९७६ में पांचवी लोकसभा के अध्यक्ष निर्वाचित किए गए, तब सभा का

निर्धारित कार्यकाल समाप्त होने को था। भगत में अध्यक्ष पद के लिए अपेक्षित सभी योग्यताएं विद्यमान थीं। वे स्पष्टवादी, ईमानदार, दृढ़ और निष्पक्ष व्यक्ति थे।

जैनेन्द्र कुमार (जन्म- २ जनवरी, निधन २४ दिसंबर)

जैनेन्द्र कुमार हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कथाकार, उपन्यासकार तथा निबंधकार थे। ये हिन्दी उपन्यास के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक के रूप में मान्य हैं। जैनेन्द्र अपने पात्रों की सामान्यगति में सूक्ष्म संकेतों की निहिति की खोज करके उन्हें बड़े कौशल से प्रस्तुत करते हैं। उनके पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ इसी कारण से संयुक्त होकर उभरती हैं। जैनेंद्र के उपन्यासों में घटनाओं की संघटनात्मकता पर बहुत कम बल दिया गया मिलता है। चरित्रों की प्रतिक्रियात्मक संभावनाओं के निर्देशक सूत्र ही मनोविज्ञान और दर्शन का आश्रय लेकर विकास को प्राप्त होते हैं।

हरे कृष्ण मेहताब (निधन- २ जनवरी)

हरे कृष्ण मेहताब भारती राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख नेताओं में से एक थे। आधुनिक उड़ीसा के निर्माताओं में गिने जानेवाले हरे कृष्ण मेहताब भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अग्रणी रहे थे। वे १९४६ से १९५० तक तथा फिर १९५६ से १९६१ तक उड़ीसा के मुख्यमंत्री भी रहे। हरे कृष्ण मेहताब उड़ीसा में उत्कल केसरी की उपाधि से भी जाने जाते थे।

३ जनवरी

सावित्रीबाई फुले

सावित्रीबाई फुले भारत के पहले बालिका विद्यालय की पहली प्रधानाचार्य और पहले किसान स्कूल की संस्थापक थी। महात्मा ज्योतिबा को महाराष्ट्र और भारत में सामाजिक सुधार आंदोलन में एक सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में माना जाता है। सावित्रीबाई ने अपने जीवन को एक मिशन की तरह से जीया जिसका उद्देश्य था विधवा विवाह करवाना, छुआछात मिटाना, महिलाओं की मुक्ति और दलित महिलाओं को शिक्षित बनाना। वे एक कवियत्री भी थीं उन्हें मराठी की आदिकवियत्री के रूप में भी जाना जाता था।

जयपाल सिंह

जयपाल सिंह भारतीय हॉकी के प्रसिद्ध खिलाड़ियों में से एक थे। वर्ष १९२८ से १९५६ तक का समय भारतीय हॉकी के लिए स्वर्णिम युग था। डॉ. जयपाल सिंह को वर्ष १९२८ में एमस्टर्डम में आयोजित ओलम्पिक खेलों में भारतीय हॉकी टीम का कप्तान नियुक्त किया गया था। इस ओलम्पिक में भारत ने जयपाल सिंह के नेतृत्व में देश के लिए स्वर्ण पदक प्राप्त किया था।

जसवंत सिंह

जसवंत सिंह एक वरिष्ठ भारतीय राजनेता हैं। वे अपनी नम्रता और नैतिकता के लिए जाने जाते हैं। वे उन गिने-चुने नेताओं में से हैं, जिन्हें भारत के रक्षामंत्री, वित्तमंत्री और विदेशमंत्री बनने का अवसर मिला। जसवंत सिंह एक आदर्शवादी

व्यक्ति के रूप में जाने जाते हैं। जब उन्हें विदेश नीति का कार्यभार सौपा गया था, तब उन्होंने बड़ी कुशलता से भारत और पाकिस्तान के बीच के तनाव को कम किया था। उनकी लेखनी में उनकी परिपक्वता और आदर्शों के प्रति उनका आदर साफ झलकता है। जसवंत सिंह को लोगों से घुलना-मिलना पसंद है और वे अस्पताल, संग्रहालय और जल संरक्षण जैसी कई परियोजनाओं के ट्रस्टी भी रहे। ७ अगस्त, २०१४ को अपने निवास स्थान पर गिरने के कारण जसवंत सिंह कोमा में चले गए, जिसके बाद उनका स्वास्थ्य खराब ही चल रहा है।

एम.एस. गोपालकृष्णन (निधन- ३ जनवरी)

एम.एस. गोपालकृष्णन भारत के प्रसिद्ध वायलिन वादकों में से एक थे। पद्मभूषण, तथा अन्य पुरस्कारों से सम्मानित गोपालकृष्णन ने सात दशक तक वायलिन के सुरों से हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत के प्रेमियों को बांधे रखा था। उनको एमएस जी के नाम से भी जाना जाता था।

मोहन राकेश (निधन- ३ जनवरी)

मोहन राकेश नई कहानी आंदोलन के साहित्यकार थे। हिन्दी नाटक के क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ, जब स्वाधीनता के बाद पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ज्वार देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था। उनके नाटकों ने न सिर्फ नाटक का आस्वाद तेवर और स्तर ही बदल दिया, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया। आधुनिक हिन्दी साहित्य काल में मोहन राकेश ने अपने लेखन से दूर होते हिन्दी साहित्य को रंगमंच के करीब ला दिया और स्वयं को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद के समकक्ष खड़ा कर दिया।

४ जनवरी

झाबरमल्ल शर्मा (निधन- ४ जनवरी)

पंडित झाबरमल्ल शर्मा राजस्थान के वयोवृद्ध साहित्यकार, पत्रकार एवं इतिहासकार थे। पं. झाबरमल्ल ने नेहरू वंशावली राजस्थान पर अपनी अन्तिम पुस्तक लिखी थी। अनेक गवेष्णामूलक लेख उन्होंने राजस्थानी हस्तिलिखितों पर लिखे। इन्हें राष्ट्रीय सम्मान दिया गया था, पद्मभूषण उपाधि से अलंकृत किया गया था। पंडित झाबरमल्ल शर्मा साहित्यकारों की कीर्ति-रक्षा के लिए अपने जीवन का अधिकांश समय लगाया था। आप उच्चकोटि के पत्रकार होने के साथ इतिहास, साहित्य, संस्कृति के प्रकाण्ड विद्वान थे।

अयोध्या प्रसाद खत्री (निधन- ४ जनवरी)

अयोध्या प्रसाद खत्री ने गद्य और पद्य की भाषा के अलगाव को गलत मानते हुए इसकी एकरूपता पर जोर दिया। पहली बार इन्होंने साहित्य जगत का ध्यान इस मुद्दे की तरफ खींचा। साथ ही इसे आंदोलन का रूप दिया। इसी क्रम में खत्री जी ने खड़ी बोली का पद्य दो खंडों में छपवाया। इन दोनों किताबों को तत्कालीन साहित्य-रसिकों के बीच नि:शुल्क बंटवाया। इस किताब के छपने के बाद काव्य-भाषा का सवाल एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में उभरा। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में खड़ी बोली का पद्य ऐसी पहली और अकेली किताब है, जिसकी वजह से इतना अधिक वाद-विवाद हुआ।

इस किताब ने काव्य-भाषा के संबंध में जो विचार प्रस्तावित किया, उस पर करीब तीन दशकों तक बहसें होती रहीं। इस किताब के जरिए एक साहित्यिक आंदोलन की शुरुआत हुई।

लोचन प्रसाद पांडेय

लोचन प्रसाद पाण्डेय प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार थे। इन्होंने हिन्दी एवं उड़िया, दोनों भाषाओं में काव्य रचनाएँ भी की हैं। सन १९०५ से ही इनकी कविताएँ सरस्वती तथा अन्य मासिक पत्रिकाओं में निकलने लगी थीं। लोचन प्रसाद पाण्डेय की कुछ रचनाएँ कथाप्रबंध के रूप में हैं तथा कुछ फुटकर। भारतेंदु साहित्य समिति के भी ये सदस्य थे। मध्य प्रदेश के साहित्यकारों में इनकी विशेष प्रतिष्ठा थी। आज भी इनका नाम बड़े आदर से लिया जाता है।

मोहम्मद अली (निधन- ४ जनवरी)

मोहम्मद अली जौहर भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार और शिक्षाविद थे। इन्होंने सन १९११ में कामरेड नामक साप्ताहिक समाचार पत्र निकाला था। तत्कालीन अंग्रेज सरकार द्वारा १९१४ में इस पत्र पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था तथा मोहम्मद अली को चार साल की सजा दी गई। मोहम्मद अली ने खिलाफत आन्दोलन में भी भाग लिया और अलीगढ़ में जामिया मिलिया विश्वविद्यालय की स्थापना की, जो बाद में दिल्ली लाया गया। ये रायपुर रियासत के शिक्षाधिकारी भी बनाये गए थे।

५ जनवरी

मंसूर अली खान पटौदी (जन्म- ५ जनवरी)

मंसूर अली खान पटौदी अथवा नवाब पटौदी भारतीय क्रिकेट टीम के भूतपूर्व कप्तान और महान खिलाड़ी थे। अपनी कलात्मक बल्लेबाजी से अधिक कप्तानी के कारण क्रिकेट जगत में अमिट छाप छोड़नेवाले मंसूर अली खान पटौदी ने भारतीय क्रिकेट में नेतृत्व कौशल की नई मिसाल और नए आयाम जोड़े थे।

शाहजहां (जन्म- ५ जनवरी)

शाहजहां का जन्म जोधपुर के शासक राजा उदयसिंह की पुत्री जगत गोसाई (जोधाबाई) के गर्भ से ५ जनवरी, १५९२ ई. को लाहौर में हुआ था। उसका बचपन का नाम खुर्रम था। खुर्रम जहांगीर का छोटा पुत्र था, जो छल-बल से अपने पिता का उत्तराधिकारी हुआ था। वह बड़ा कुशाग्र बुद्धि, साहसी और शौकीन बादशाह था। वह बड़ा कला प्रेमी, विशेषकर स्थापत्य कला का प्रेमी था।

ममता बनर्जी (जन्म- ५ जनवरी)

ममता बनर्जी भारतीय राज्य पश्चिम बंगाल की वर्तमान मुख्यमंत्री एवं तृणमूल कांग्रेस की प्रमुख हैं। ये अपने समर्थकों में दीदी (बड़ी बहन) के नाम से अत्यधिक लोकप्रिय हैं। सूती साड़ी, हवाई चप्पल, कंधे पर कपड़े का थैला और चेहरे पर हमेशा संघर्ष के भाव, इनकी मुख्य पहचान हैं। तृणमूल कांग्रेस की अध्यक्ष ममता बनर्जी अपनी सादगी और संघर्ष की बुनियाद पर पश्चिम बंगाल में वाममोर्चा के ३४ साल पुराने किले को ढहाने में सफल रहीं। ममता का व्यक्तित्व एक

जमीनी, संघर्षशील, तेज तर्रार और मुखर नेता के समान हैं।

बारीन्द्र कुमार घोष (जन्म- ५ जनवरी)

बारीन्द्र कुमार घोष अरविन्द घोष के क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित थे। स्वदेशी आंदोलन के परिणामस्वरूप बारीन्द्र कुमार ने क्रांतिकारी विचारों का प्रचार करने के लिए १९०६ में गंगाली साप्ताहिक युगान्तर का प्रकाशन प्रारम्भ किया। १९०७ में क्रांतिकारी आतंकवाद की गतिविधियों का संयोजन करने के लिए मणिकतल्ला पार्टी का गठन किया।

भदन्त आनन्द कौसल्यायन (जन्म- ५ जनवरी)

भदन्त आनन्द कौसल्यायन प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान, समाज सुधारक, लेखक तथा पालि भाषा के मूर्धन्य विद्वान थे। ये पूरे जीवन घूम-घूमकर राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करते रहे। भदन्त आनन्द कौसल्यायन बीसवीं शती में बौद्ध धर्म के सर्वश्रेष्ठ क्रियाशील व्यक्तियों में गिने जाते थे। ये दस वर्षों तक राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधानमंत्री रहे थे। ये देशवासियों की समता के समर्थक थे। इन्होंने २१ वर्ष की उम्र में ही घर का त्याग कर दिया था और देशाटन के लिए निकल पड़े थे।

६ जनवरी

कमलेश्वर (जन्म- ६ जनवरी)

कमलेश्वर बीसवीं शती के सबसे सशक्त लेखकों में से एक हैं। कहानी, उपन्यास, पत्रकारिता, स्तंभ लेखन, फिल्म पटकथा जैसी अनेक विधाओं में उन्होंने अपनी लेखन प्रतिभा का परिचय दिया। इन्होंने अनेक हिन्दी फिल्मों के लिए पटकथाएँ लिखीं तथा भारतीय दूरदर्शन श्रृंखलाओं के लिए दर्पण, चन्द्रकांता, बेताल पच्चीसी, विराट युग आदि लिखे। भारतीय स्वातंत्रता संग्राम पर आधारित पहली प्रामाणिक एवं इतिहासपरक जन-मंचीय मीडिया कथा हिन्दुस्तां हमारा का भी लेखन किया।

फिलॉसफी का पैगंबर खलील जिब्रान

दानशीलता यह नहीं है कि तुम मुझे वह वस्तु दे दो, जिसकी आवश्यकता मुझे तुमसे अधिक है, बल्कि यह है कि तुम मुझे वह वस्तु दो, जिसकी आवश्यकता तुम्हें मुझसे अधिक है। यदि तुम जाति, देश और व्यक्तिगत पक्षपातों से जरा ऊंचे उठ जाओ तो नि:संदेह तुम देवता के समान बन जाओगे। ये वाक्य कोई मोटी डायरी में नहीं दर्ज किए गए थे। घर में आए लिफाफों के कवर पर तो कभी थियेटर के पासेज पर और कभी सिगरेट के पॉकेटों पर ये बेशकीमती शब्द उकेरे गए। इन्हें लिखनेवाले के दिमाग में इतना कुछ था कि वह सादे कागजों या नोट पैड का इंतजार नहीं कर सकता था। फिलॉसफी के पैगंबर खलील जिब्रान ६ जनवरी को जन्मे। लेबनान से अमेरिका तक खलील ने जहां-जहां पांव रखें, छोटी-छोटी ऐसी कहानियां बिखेरीं कि फिलॉसफी की इमारतें खड़ी होती गई। ठीक-ठाक परिवार में पैदा होने के बाद भी मुश्किलों ने खलील का घर देख लिया था। खलील के सीखने की ललक और कल्पनाशील दिमाग ने उस वक्त बने हर नियम, कर्मकांड को प्रभावित किया। सो विरोध भी शुरू हो गया। चर्च उनके पीछे पड़ गया। उन्हें अपनी जमीन छोड़नी

पड़ी। अक्सर विचार, लेखन, क्रांति, संघर्ष में परिवार को रुकावट माना जाता है। खलील जिब्रान ने उस वक्त इस मिथक को तोड़ा। उनका परिवार के प्रति प्रेम और समर्पण उस समय एक आदर्श था। मां से बहुत कुछ सीखकर उन्होंने हर क्षेत्र में अपने आपको साबित किया। कला, लेखन, दर्शन, धर्म, सूफिज्म, भाषा, संस्कृति, व्यवहार, राजनीति, कूटनीति, लोकोक्तियां, मुहावरे सब पर इतना कुछ लिखा कि हर ओर जिब्रान ही जिब्रान नजर आने लगे। अद्भुत कल्पनाशीलता और व्यावहारिक स्वभाव ने लेबनान की माटी के इस सितारे को अमेरिका तक पहुंचते-पहुंचते फिलॉसफी का पैगंबर बना दिया।

कपिल देव (जन्म- ६ जनवरी)

कपिल देव भारत के प्रथम क्रिकेट विश्व कप विजेता दल के कप्तान एवं सफलतम हरफनमौला खिलाड़ी हैं। कपिल देव का खेल और उनके आँकड़े इस बात के प्रमाण हैं। भारत के इस प्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी का जन्म ६ जनवरी, १९५९ को हरियाणा में हुआ था। कपिल देव ने सन १९७५ में प्रथम श्रेणी क्रिकेट में प्रवेश किया। उनका जन्म एक लकड़ी व्यापारी के यहाँ हुआ। कपिल देव ने २० वर्ष की उम्र में ही एक हजार बनाने तथा १०० विकेट लेने का नया कीर्तिमान स्थापित किया है। यह कीर्तिमान केवल एक साल और १०९ दिन में ही बना है।

नरेद्र कोहली (जन्म- ६ जनवरी)

नरेन्द्र कोहली हिन्दी के उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार एवं व्यंग्यकार हैं। नरेंद्र कोहली ने साहित्य के सभी प्रमुख विधाओं (यथा उपन्यास, व्यंग्य, नाटक, कहानी) एवं गौण विधाओं (यथा संस्मरण, निबंध, पत्र आदि) और आलोचनात्मक साहित्य में अपनी लेखनी चलाई। हिन्दी साहित्य में महाकाव्यात्मक उपन्यास की विधा को प्रारंभ करने का श्रेय नरेंद्र कोहली को ही जाता है। पौराणिक एवं ऐतिहासिक चरित्रों की गुत्थियों को सुलझाते हुए उनके माध्यम से आधुनिक समाज की समस्याओं एवं उनके समाधान को समाज के समक्ष प्रस्तुत करना कोहली की अन्यतम विशेषता है।

बाना सिंह (जन्म- ६ जनवरी)

नायब सूबेदार बाना सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति है। इन्हें यह सम्मान सन १९८७ में मिला। पाकिस्तान के साथ भारत की चार मुलाकातें युद्धभूमि में तो हुई हीं, कुछ और भी मोर्चे हैं, जहाँ हिन्दुस्तान के बहादुरों ने पाकिस्तान के मंसूबों पर पानी फेर कर रख दिया। सियाचिन का मोर्चा भी इसी तरह का एक मोर्चा है, जिसमें ८ जम्मू एंड कश्मीर लाइट इंफेंटरी के नायब सूबेदार बाना सिंह को उसकी चतुराई, पराक्रम और साहस के लिए परमवीर चक्र दिलवाया।

खलील जिब्रान (जन्म- ६ जनवरी)

खलील जिब्रान विश्व के श्रेष्ठ चिंतक महाकवि के रूप में ख्याति प्राप्त करनेवाले महान दार्शनिक थे। देश विदेश भ्रमण करनेवाले खलील जिब्रान अरबी, अंग्रेजी, फारसी के ज्ञाता, दार्शनिक और चित्रकार भी थे। उनमें अद्भुत कल्पना शक्ति थी। उनकी रचनाएं २२ से अधिक भाषाओं में देश विदेश में तथा हिन्दी, गुजराती, मराठी, उर्दू में अनुवादित हो चुकी हैं। इनमें उर्दू तथा मराठी में सबसे अधिक अनुवाद प्राप्त होते हैं।

७ जनवरी

१) अमर शहीद चंद्रशेखर आजाद

सन् १९२१, संपूर्ण भारतवर्ष परतंत्रता की भीषण ज्वाला मे दहक रहा था। सभी के दिलोदिमाग मे भरा एक सा जुनून- हाथ मे जान से भी प्यारा राष्ट्रध्वज, कालगर्जना सा उद्घोष- अंग्रेजों भारत छोड़ो। भगवान शंकर की नगर वाराणसी थर्रा उठी, संस्कृत पाठशाला के नन्हे-मुन्ने छात्रों की सिंह गर्जना से। इंकलाब जिंदाबाद, भारतमाता की जय। छात्रों की टोली का दुबला-पतला नायक सबसे आगे। सहसा ब्रिटिश हुकूमत शाही की हथियार बंद बर्बर पुलिस का सामना। अधिकारी ने कहा- लड़के, तेरी उम्र अभी बहुत कम है, तू मुझसे माफी माँग ले, हम तुझे छोड़ देंगे। छात्र की गर्जना- माफी तो तुझे मुझसे माँगनी होगी। अंग्रेज अधिकारी विस्मित, तेरा नाम क्या है ?

आजाद। तेरे बाप का क्या नाम है ? स्वतंत्रता। तेरा घर कहाँ है ? जेलखाना। आशा के विपरीत मुँहतोड जवाब। अंग्रेज अधिकारी आग बबूला हो चिल्ला उठा- इस लड़के की पीठ पर १४ कोड़े लगाए जाएँ। १४ वर्ष की अबोधता मे १४ कोड़ो की वीभत्स यातना। खून से लथ-पथ इसकी सहानुभूति मे पूरा वाराणसी शहर उमड़ पड़ा। असह्य पीड़ा काफूर हो गयी। क्रोध की प्रचण्ड ज्वाला से प्रलयंकारी हुंकार गूंजा- आज से मै आजाद हूँ, आजाद ही रहूँगा और आजाद ही मरूँगा। अब दोबारा अंग्रेज पुलिस मुझे जिन्दा नही पकड़ सकती है और न ही मुझे मार सकती है। यह शौर्य गाथा है भारतमाता के अनमोल सपूत क्रांति-देवता शहीद शिरोमणि चन्द्रशेखर आजाद की। उत्तर प्रदेश के उन्नाव जनपद के ग्राम बदरका मे ७ जनवरी, १९०६ को पं. सीताराम तिवारी के घर खुशियों की बहार आई, वर्षों बाद आंगन मे बच्चे की किलकारी गूंजी। माता जगरानी देवी अपने भविष्य की सुखद कल्पनाओ मे खो गई, इस आशा से कि बच्चा बड़ा होकर बुढ़ापे का सहारा बनेगा। गाँव के पंडित जी की सलाह से सीताराम तिवारी ने अपने पुत्र का नाम चन्द्रशेखर रखा। काकोरी काण्ड मे लखनऊ जेल मे कैद स्वाधीनता के महान उपासक पं. रामप्रसाद बिस्मिल ने चन्द्रशेखर आजाद को हिन्दुस्तान समाजवादी रिपब्लिक आर्मी का कमांडर इन चीफ घोषित किया। सन् १९२१ से लेकर १९३१ तक का कालखण्ड समूचे उत्तर भारत मे ब्रिटिश हुकूमतशाही के लिए अभिशाप बन उठा। चन्द्रशेखर आजाद की छाप दक्षिण भारत मे भी छाने लगी, काकोरी ट्रेन डकैती काण्ड हो या महात्मा गाँधी का असहयोग आन्दोलन चन्द्रशेखर आजाद सबसे आगे रहे। २७ फरवरी १९३१ को, भारत माता का यह अनन्य दुलारा, इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क मे अंग्रेज पुलिस कप्तान सर नाट बाबर के साथ भारी सशस्त्र पुलिस के घेरे मे घिरा, निडर आजाद अकेला, इमली का बड़ा वृक्ष सहारा। चारो ओर भीषण गोलीबारी, बच पाना असंभव, मैगजीन मे अंतिम गोली, हँसते-हँसते अपनी कनपटी मे झोक दी। गंगा के किनारे अवतरित यह सिंह, गंगा-यमुना के पावन संगम मे विलीन हो गया।

हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के प्रमुख सेनापति और स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, चंद्रशेखर आजाद १४ वर्ष की आयु में बनारस गए और वहां एक संस्कृत पाठशाला में पढ़ाई की। वहां उन्होंने कानून भंग आंदोलन में योगदान दिया था। १९२०-२१ के वर्षों में वे गांधीजी के असहयोग आंदोलन से जुड़े। वे गिरफ्तार हुए और जज के समक्ष प्रस्तुत किए गए। जहां उन्होंने अपना नाम आजाद पिता का नाम स्वतंत्रता और जेल को उनका निवास बताया। उन्होंने आजाद

जीवन जिया और बंदी जीवन के बजाय उन्होंने आजाद मौत चुनी।

जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन (जन्म- ७ जनवरी)

सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन का भारतीय विद्याविशारदों में, विशेषत: भाषाविज्ञान के क्षेत्र में एवं लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के प्रणेता के रूप में अमर स्थान है। ग्राउस और बीम्स की भाँति वे भी इंडियन सिविल सर्विस के कर्मचारी थे। १८६८ से डब्लिन में ही उन्होंने संस्कृत और हिंदुस्तानी का अध्ययन प्रारंभ कर दिया था। सरकारी कामों से छुट्टी पाने के बाद वे अपना अतिरिक्त समय संस्कृत, प्राकृत, पुरानी हिंदी, बिहारी और बंगला भाषाओं और साहित्यों के अध्ययन में लगाते थे। जहां भी उनकी नियुक्ति होती थी वहीं की भाषा, बोली, साहित्य और लोकजीवन की ओर उनका ध्यान आकृष्ट होता था।

८ जनवरी

रामचन्द्र वर्मा (जन्म- ८ जनवरी)

रामचन्द्र वर्मा ने हिन्दी साहित्य की महती सेवा की है। इन्होंने अपनी कई महत्वपूर्ण कृतियाँ हिन्दी जगत को दीं। सन १९०७ में बालगंगाधर तिलक के मराठी पत्र केसरी के लिए रामचन्द्र वर्मा ने हिन्दी संस्करण में कार्य किया था। हिन्दी ज्ञानेश्वरी दासबोध, हिन्दू राजतन्त्र, साम्यवाद धर्म की उत्पत्ति और विकास, पुरानी दुनिया, छत्रशाल, प्राचीन मुद्रा, रायफल तथा देवलोक आदि इनकी प्रमुख अनुदित कृतियाँ हैं।

आशापूर्णा देवी (जन्म- ८ जनवरी)

आशापूर्णा देवी बांग्ला भाषा की प्रख्यात उपन्यासकार हैं जिन्होंने मात्र १३ वर्ष की आयु में लिखना प्रारंभ कर दिया था और तब से ही उनकी लेखनी निरंतर सक्रिय बनी रही। आशापूर्णा के लेखन की विशिष्टता उनकी एक अपनी शैली है। कथा का विकास, चरित्रों का रेखाकंन, पात्रों के मनोभावों से अवगत कराना, सबमें वह यथार्थवादिता को बनाए रखते हुए अपनी आशामयी दृष्टि को अभिव्यक्ति देती हैं। इसके पीछे उनकी शैली विद्यमान रहती है।

८ जनवरी १९०९ को बांग्ला भाषा की साहित्यकार आशापूर्णा देवी का जन्म कोलकाता (प. बंगाल) में हुआ था। वे कभी स्कूल नहीं गयीं लेकिन लेखन का काम १३ वर्ष की आयु में ही शुरू कर दिया था। उनके लेखन की विशिष्टता उनकी एक अपनी ही शैली है। १९७६ में प्रथम प्रतिश्रुति के लिए ज्ञाननीठ पुरस्कार से सम्मानित होनेवाली पहली महिला साहित्यकार बनी। इसी वर्ष उन्हें पद्मश्री से भी सम्मानित किया गया। उनका निधन १३ जुलाई १९९५ को हुआ।

केशव चन्द्र सेन (निधन- ८ जनवरी)

केशव चन्द्र सेन एक प्रसिद्ध धार्मिक व समाज सुधारक, जो ब्रह्मसमाज के संस्थापकों में से एक थे। वे बड़े तीव्र बुद्धि, तार्किक और विद्वान युवक थे। उन्होंने उत्साहपूर्वक समाज को संगठित करना प्रारम्भ किया और इस कारण वे शीघ्र ही आचार्य पद पर नियुक्त हो गये। केशव चन्द्र सेन ने ही आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती को सलाह दी थी कि वे सत्यार्थ प्रकाश की रचना हिन्दी में करें। केशव चन्द्र सेन और स्वामीजी के विचार आपस में नहीं मिलते थे, जिस कारण ब्रह्म समाज का विभाजन आदि ब्रह्मसमाज और भारतीय ब्रह्मसमाज में हो गया।

९ जनवरी

वृंदावनलाल वर्मा (जन्म- ९ जनवरी)

वृंदावनलाल वर्मा ऐतिहासिक उपन्यासकार एवं निबंधकार थे। वृंदावनलाल वर्मा जी भारत सरकार, राज्य सरकार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश राज्य के साहित्य पुरस्कार तथा डालमिया साहित्यकार संसद, हिन्दुस्तानी अकादमी, प्रयाग (उत्तर प्रदेश) और नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के सर्वोत्तम पुरस्कारों से सम्मानित किये गये हैं। अपनी साहित्यिक सेवाओं के लिए वृंदावनलाल वर्मा जी आगरा विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट. की उपाधि से सम्मानित किये गये। इनकी अनेक रचनाओं को केन्द्रीय एवं प्रान्तीय राज्यों ने पुरस्कृत किया है।

हरगोविन्द खुराना (जन्म- ९ जनवरी)

हरगोबिन्द खुराना भारत में जन्मे अमेरिकी जैव रसायनशास्त्री थे। इन्हें १९६८ में शरीर विज्ञान या चिकित्सा के क्षेत्र में मार्शल डब्ल्यू नीरेनबर्ग और रॉबर्ट डब्ल्यू. हॉली के साथ उस अनुसंधान के लिए नोबेल पुरस्कार मिला। इस अनुसंधान से पता लगाने में मदद मिली कि कोशिका के आनुवंशिक कूट (कोड) को ले जानेवाले न्यूक्लिक अम्ल (एसिड) न्यूक्लिओटाइड्स कैसे कोशिका के प्रोटीन संश्लेषण (सिंथेसिस) को नियंत्रित करते हैं।

नौ जनवरी १९२२ को नोबल वैज्ञानिक हरगोविंद खुराना का जन्म रायपुर, मुल्तान (पाकिस्तान) में हुआ था। प्रोटीन संश्लेषण न्यूक्लिटाइड की भूमिका को बतानेवाले वे पहले वैज्ञानिक थे। उन्होंने बताया कि कोशिकाओं में प्रोटिन संश्लेषण के द्वारा अनुवांशिक कोड जीवन की सभी प्रक्रियाओं को निर्धारित करता है। उन्होंने अपनी टीम के साथ एक खमीर जीन की पहली कृत्रिम प्रतिलिपि भी संश्लेषित किया। १९६८ में वे नोबल पुरस्कार से सम्मानित हुए। उनका निधन नौ नवंबर २०११ को मैसेच्यूसेट्स (अमेरिका) में हुआ। हरगोविन्द खुराना ने १९७० में आनुवंशिकी में एक और योगदान दिया, जब वह और उनका अनुसंधान दल एक खमीर जीन की पहली कृत्रिम प्रतिलिपि संश्लेषित करने में सफल रहे। डॉक्टर खुराना अंतिम समय में जीवन विज्ञान एवं रसायनशास्त्र के एल्फ्रेड पी. स्लोन प्राध्यापक और लिवरपूल यूनिवर्सिटी में कार्यरत रहे। उनका निधन ९ नवम्बर को हुआ।

१० जनवरी

विश्व हिंदी दिवस

१० जनवरी १९७५ को पहली बार विश्व हिंदी सम्मेलन नागपुर में आयोजित हुआ था और तब से ही इस तारीख को विश्व हिंदी दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसका मूल उद्देश्य विश्व में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए जागरूकता पैदा करना तथा हिंदी को अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में पेश करना। भारतीय विदेश मंत्रालय ने विदेशों में १० जनवरी २००६ को पहली बार विश्व हिंदी दिवस मनाया। इसके बाद से भारतीय दूतावासों में प्रतिवर्ष इसे विशेष रूप से मनाया जाता है। देश में १४ सितंबर को हिंदी दिवस मनाया जाता है।

११ जनवरी

कैलास सत्यार्थी (जन्म- ११ जनवरी)

बच्चों के हितों की लड़ाई लड़कर नोबेल पुरस्कार पानेवाले कैलाश सत्यार्थी ने कभी भी नदी के प्रवाह की दिशा में तैरना मुनासिब नहीं समझा। बच्चों के हक की खातिर वह जिंदगी को भी जोखिम में डालने से नहीं हिचके और मुसीबत के दौर में पत्थर पर आटा गूंथा और रोटियां पकाई।

मध्य प्रदेश के विदिशा जिले में जन्मे कैलाश सत्यार्थी बचपन से ही कुरीति विरोधी रहे हैं। उन्होंने सम्राट अशोक अभियांत्रिकी महाविद्यालय से इंजीनिरिंग की शिक्षा हासिल की। गरीबी कभी उन्हें डिगा नहीं सकी। हाल यह था कि उनके पास आटा गूंथने के लिए बर्तन नहीं था और वह पत्थर पर आटा गूंथकर रोटी बनाया करते थे। सत्यार्थी चर्चाओं में तब आए जब उन्होंने विदिशा में महात्मा गांधी की प्रतिमा के पास सफाई कामगारों से भोजन बनवाया था। उनके इस गांधीवादी कदम ने नई बहस को जन्म दिया।

उसके बाद उन्होंने बच्चों के अधिकारों के लिए काम शुरू किया और दिल्ली जाकर एक गैर सरकारी संगठन से जुड़ गए। बाद में उन्होंने बचपन बचाओ आंदोलन की नींव रखी। सत्यार्थी के संगठन बचपन बचाओ आंदोलन ने अब तक करीब ८० हजार बच्चों को बाल मजदूरी से मुक्त कराया है। सत्यार्थी लंबे समय से बच्चों को बाल मजदूरी से हटाकर उन्हें शिक्षा अभियान से जोड़ने की मुहिम चलाते रहे हैं।

उन्होंने मध्य प्रदेश के मंदसौर से काम शुरू किया और बाल मजदूरी पर केंद्रित स्लेट पेंसिल उद्योग में लगे बच्चों को सबसे पहले मुक्त कराया। वहीं पर उन्होंने मुक्ति आश्रम की स्थापना की। सत्यार्थी ने मध्य प्रदेश के सागर में भी काम किया और वहां भी मुक्ति आश्रम की स्थापना की। कुछ सालों बाद उन्होंने स्वामी अग्निवेश के साथ काम किया। उन्हें १९९३ में अशोका फेलोशिप मिली और फिर वह स्वतंत्र रूप से काम करने लगे। मंदसौर में बाल अधिकारों के लिए काम कर रहे डॉ. राघवेंद्र सिंह तोमर का कहना है कि सत्यार्थी को बच्चों को बंधुआ मजदूरी से मुक्त कराने के लिए जान भी दांव पर लगाना पड़ा है। हरियाणा में खदान में काम करनेवाले बच्चों को मुक्त कराने की कोशिश में उन पर जानलेवा हमला हुआ था और हमलावर उन्हें मृत मान चुके थे, मगर वे बच गए। सत्यार्थी ने चूड़ी उद्योग, ईंट भट्टा उद्योग, पटाखा व माचिस उद्योग में काम करनेवाले बच्चों को बंधुआ व बाल मजदूरी से मुक्त कराने का काम किया है। उन्होंने उत्तर प्रदेश के गोंडा में एक सर्कस से ४० नेपाली बच्चों को मुक्त कराया था। वह १८० देशों में बाल अधिकारों के लिए अभियान चलाए हुए हैं। बच्चों की शिक्षा, अधिकार के लिए अभियान चलाए हुए हैं। सत्यार्थी को मिले नोबेल पुरस्कार को उन बच्चों के लिए लड़ी गई लड़ाई का प्रतिसाद माना जा रहा है जो अपने अधिकारों से अनजान व वंचित रहे हैं।

श्रीधर पाठक (जन्म- ११ जनवरी)

श्रीधर पाठक भारत के प्रसिद्ध कवियों में से एक थे। वे स्वदेश प्रेम, प्राकृतिक सौंदर्य तथा समाजसुधार की भावनाओं के कवि थे। वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के पाँचवें अधिवेशन (१९१५, लखनऊ) के सभापति हुए थे। उन्हें कविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया था। हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी पर श्रीधर पाठक का समान अधिकार था।

राहुल द्रविड (जन्म- ११ जनवरी)

राहुल द्रविड भारतीय क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान एवं विश्व के सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाजों में से एक हैं। अक्टूबर २००५ में वे भारतीय क्रिकेट टीम के कप्तान के रूप में नियुक्त किये गए और सितम्बर २००७ में उन्होंने अपने इस पद से इस्तीफा दे दिया था। द्रविड को वर्ष २००० में पांच विसडेन क्रिकेटरों में से एक के रूप में सम्मानित किया गया। द्रविड को २००४ के उद्घाटन पुरस्कार समारोह में इस वर्ष के आईसीसी प्लेयर और वर्ष के टेस्ट प्लेयर के पुरस्कार से सम्मानित किया गया। द्रविड ने क्रिकेट की दुनिया में बहुत से रिकॉर्ड बनाये हैं। द्रविड बहुत शांत व्यक्ति है। दीवार के रूप में लोकप्रिय द्रविड लंबी अवधि के लिए बल्लेबाजी करने की क्षमता के लिए जाना जाता है।

राम चतुर मल्लिक (निधन- ११ जनवरी)

पंडित राम चतुर मल्लिक भारतीय शास्त्रीय संगीत की ध्रुपद-धमार शैली के प्रसिद्ध गायक थे। इन्होंने ध्रुपद-धमार गायन शैली में सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी ख्याति प्राप्त की थी और देश का नाम रोशन किया। मल्लिक जी ध्रुपद, खयाल, ठुमरी और मैथिली लोकगीतों के अनुपम गायक थे। १९७६ में फ्रांस सरकार ने राम चतुर मल्लिक के ध्रुपद-धमार के रिकार्ड को यूनेस्को प्रसारण के लिए चुना था।

१२ जनवरी

महर्षि स्वामी विवेकानन्द

जिंदगी जीना आसान नहीं होता बिना संघर्ष के कोई महान नहीं होता।

आजकल हम भारतीय लोग स्वामी विवेकानंद की वर्षगांठ मना रहे हैं। वे सिर्फ ३९ वर्ष जीएं। मगर कई हजार सालों का काम कर गये अपनी इस छोटी सी उम्र में। उनको पूरी तरह जानने की कोशिश करेंगे तो पता चलेगा कि वे परेशानियों, चुनौतियों, मुसीबतों के पहाड़ के बीच पैदा हुए थे और आजीवन इनसे घिरे भी रहे। फिर भी वे हैरत में डालनेवाले काम कर गये। आज लोग अपने जीवन से लेकर सामाजिक जीवन में जो चुनौतियां झेलते हैं, वे विवेकानंद की परेशानियों की तुलना में एक प्रतिशत भी नहीं है। उनके शरीर को व्याधिमंदिरम कहा गया था। जब तक वे जीए, बीमारियों से लड़ते रहे। उन्हें दो बड़ी बीमारियां तो विरासत में यानी वंशगत मिली थीं- पहली मधुमेह की और दूसरी हृदय रोग की। पिता के अचानक चले जाने के बाद हमेशा ही उनके सिर में तेज दर्द रहने लगा, उस दर्द से छुटकारा पाने के लिए वे कपूर सूंघते थे। कहते हैं कि पूरे जीवन में उन्हें ३१ बीमारियां हुईं। इनमें हृदय रोग, मधुमेह, दमा, पथरी, किडनी की समस्या, अनिद्रा, स्नायुरोग या न्यूरो स्थेनिया, यकृत की बीमारी, मियादी बुखार, टॉनसिल, सिर का तेज दर्द, मलेरिया, सर्दी-खांसी, कई तरह के बुखार, बदहजमी, पेट में पानी का जमना, डिस्पेप्सिया, लाम्बेगो या कमर दर्द, गर्दन का दर्द, ब्राइट्स डिजीज, ड्रॉप्सी या पैर का फूलना, एल्बूमिनियूरिया, आंखों का लाल हो जाना, एक आंख की ज्योत चले जाना, समय से पहले ही बाल और दाढ़ी का सफेद हो जाना, रात को भोजन के बाद तेज गर्मी लगना, गर्मी सहन न होना, जल्दी थक जाना, सी. सिकनेस और सन स्ट्रोक शामिल हैं। कई बार उन्होंने अपने परिचित लोगों को पत्र लिखे, उन पत्रों

में इन बीमारियों का उल्लेख है। इतनी सारी बीमारियों से घिरे होने के बावजूद उस सन्यासी ने इतने कम समय में कैसे-कैसे काम किये? यह बहुत ही अविश्वसनीय बात है। उनके काम युगों युगों तक असर डालनेवाले हैं। सन् १८९७ में उन्होंने अल्मोड़ा से डॉक्टर शशि घोष को पत्र लिखा अनिद्रा रोग के संदर्भ में। पत्र में वे लिखे हैं- जीवन में कभी भी मुझे बिस्तर पर पड़ते ही नींद नहीं आई, कम से कम दो घंटे तक इधर-उधर करवटें बदलनी पड़ती हैं। केवल मद्रास से दार्जिलिंग की यात्रा और प्रवास के पहले महीने में तकिये पर सिर रखते ही नींद आ जाती थी। वह नींद अब पूरी तरह चली गई है। अब फिर इधर-उधर करवटें लेने की बीमारी और रात को भोजन के बाद गर्मी लगने की समस्या तंग कर रही है। इसके बाद एक सन्यासी शिष्य स्वामी अचलानंद को उन्होंने कहा था कि होश संभालने के बाद कभी भी मैं चार घंटे से अधिक नहीं सो पाया। कई बार स्वामी विवेकानंद डॉक्टर या वैद्य के पास भी गये। तब चिकित्सा विज्ञान का इतना विकास और विस्तार नहीं हुआ था। इलाज के लिए वे एलोपेथी, होम्योपेथी, आयुर्वेद वैद्यों के अलावा देश-विदेश में में झोलाछाप डॉक्टरों या मामूली चिकित्सकों के पास भी गये। वे हमेशा ही पैसों की तंगी में भी रहे। डॉक्टरों को फीस देने के लिए उनके पास पैसे भी नहीं होते थे। एक बार सन् १८९८ में वे डॉ. के. एल. दत्त के पास गये थे। जाँच के बाद डॉक्टर ने ४० रुपये फीस मांगी। साथ में दवा के लिए १० रुपये अलग से मांगे। स्वामी विवेकानंद को वह देना ही पड़ा। उन दिनों ५० रुपये की क्या कीमत रही होगी, इसकी कल्पना हम कर ही सकते हैं। उनके गुरु भाइयों ने बड़ी मुश्किल से पचास रुपये का इंतजाम किया। घर की परेशानियों से भी स्वामीजी सारी जिंदगी दुखी रहे। अपनी बीमारियों से ज्यादा वे अपनी मां भुवनेश्वरी देवी के लिए परेशान रहे। जब तक पिता विश्वनाथ दत्त जिंदा थे, तब तक उनके घर का खर्च १००० रुपये दर माह का था। फिर १८८४ में उनके पिता की मौत के बाद स्वामी की मां भुवनेश्वरी देवी ने यह खर्च घटाकर सिर्फ तीस रुपये तक ला दिया। अचानक आई मुसीबत और दरिद्रता के बीच भी भुवनेश्वरी देवी का धैर्य काबिले तारीफ था। स्वामीजी में आजीवन मां को सुख न दे पाने की पीड़ा रही। उन्होंने एक बार कहा भी था, जो अपनी मां की सच में पूजा नहीं कर सकता, वो कभी बड़ा नहीं हो सकता। स्वामी विवेकानंद की परेशानियों की कल्पना करके ही दिल कांप उठता है, मगर इसके बावजूद भी उन्होंने वो काम किये, जिसे भारत हजारों वर्षों तक याद रखेगा। मानव समाज के लिए उनसे बढ़कर प्रेरक कोई नहीं है। पारिवारिक मुसीबतें तथा अपनी स्वास्थ्य की परेशानियों को झेलते हुए भी उन्होंने समाज के लिए, दूसरों के लिए, भारत माता के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दी, पूरा जीवन उसमें लगा दिया, इससे बड़ा आदर्श चरित्र आज की युवा पीढ़ी के लिए दुनिया में और कौन हो सकता है? देश के सारे युवाओं तक आज उनका संदेश जाना जरूरी है।

स्वामी विवेकानन्द एक युवा सन्यासी के रूप में भारतीय संस्कृति की सुगन्ध विदेशों में बिखरने वाले साहित्य, दर्शन और इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान थे। युगांतरकारी आध्यात्मिक गुरु, जिन्होंने हिन्दू धर्म को गतिशील तथा व्यवहारिक बनाया और सुदृढ़ सभ्यता के निर्माण के लिए आधुनिक मानव से पश्चिमी विज्ञान व भौतिकवाद को भारत की आध्यात्मिक संस्कृति से जोड़ने का आग्रह किया। नरेंद्रनाथ चिंतन, भक्ति व तार्किकता, भौतिक एवं बौद्धिक श्रेष्ठता के साथ-साथ संगीत की प्रतिभा का एक विलक्षण संयोग थे। भारत में स्वामी विवेकानन्द के जन्म दिवस को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है।

नरेंद्र (स्वामी विवेकानंद) बचपन से बहुत मेधावी थे। उन्होंने छोटी उम्र में ही कई ग्रंथों का अध्ययन कर डाला था। उनके पिता विश्वनाथ बड़े वकील थे। वह जितना कमाते थे, उसे खर्च कर डालते थे। अचानक एक दिन उनका निधन हो गया और घर की सारी जिम्मेदारी नरेंद्र पर आ गई। तभी नरेंद्र ने नौकरी करने का निश्चय किया। उन्होंने नौकरी की काफी तलाश की, लेकिन सफलता नहीं मिली। उनका ईश्वर पर से विश्वास उठ गया। जब उनके गुरु स्वामी रामकृष्ण ने उनसे कहा, मां के चरणों में जाकर बैठो और उनसे जो चाहो, मांग लो। वह तुम्हारी सारी मनोकामनाएं पूरी करेंगी।

नरेंद्र दुखी मन से मां की मूर्ति के सम्मुख जाकर बैठ गए। देवी काली उन्हें साकार दिखाई देने लगीं और वह आनंदित हो उठे। नरेंद्र ने हाथ जोड़कर कहा, मुझे भक्ति और ज्ञान दीजिए। नरेंद्र ने अपने निर्धन परिवार के लिए कुछ नहीं मांगा। स्वामी रामकृष्ण ने उन्हें पुन: मां के दर्शन के लिए भेजा। इस बार भी उन्होंने कहा, मां, मुझे भक्ति और ज्ञान दीजिए। स्वामी रामकृष्ण परमहंस के उत्साहित करने पर नरेंद्र काली मां के सम्मुख लगातार तीन बार गए और एक बार भी कोई भौतिक दया न मांगी, सिर्फ ज्ञान और भक्ति ही मांगते रहे।

स्वामी रामकृष्ण नरेंद्र के स्वभाव को जानते थे। अंतत: उन्होंने ही उनके परिवार को सुखी और सानंद रहने का आशीर्वाद दिया। वह समझ गए कि सच्चा साधक ईश्वर से तुच्छ संसारी वस्तुएं नहीं, भक्ति और ज्ञान ही मांगता है।

इस्लाम के बुनियादी मूल्यों के प्रशंसक थे विवेकानंद

स्वामी विवेकानंद का मानना था कि हिंदुस्तान का भविष्य पूर्ण, शानदार और अपराजेय तभी होगा जब इसे वेदांत का दिमाग और इस्लाम का शरीर मिल जाएंगे।

स्वामी विवेकानंद उन बड़े भारतीय आध्यात्मिक गुरुओं में से एक हैं जो समाज सेवा, ईश्वर की एकता, वैश्विक भाईचारे और धार्मिक सद्भाव के समर्थक रहे। धार्मिक पूर्वाग्रह के वह सख्त विरोधी थे। वह मानते थे कि भगवान तक पहुंचने के रास्ते तंग, बंद या किसी एक विचारधारा तक सीमित नहीं है। सभी धर्म अपने अंतिम लक्ष्य में एक हैं। जैसे हिंदू दर्शन के अनुसार मोक्ष का माध्यम निर्वाण (दु:ख से मुक्ति या ब्रह्म से मिलाप) जीवन का वास्तविक और अंतिम लक्ष्य है, उसी तरह इस्लामी अध्यात्मिकता (सूफीवाद) के अनुसार मनुष्य की सबसे बड़ी सफलता विसाले इलाही यानी अल्लाह के साथ अंतरंग संबंध है। दुर्भाग्य से, हिंदू और मुसलमान दोनों समुदायों के कुछ धार्मिक कट्टरपंथी अपने गलत उद्देश्यों को पूरा करने के लिए हिंदुस्तान के दो सबसे बड़े धर्मों के सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संबंधों को बिगाड़ रहे हैं।

वे यह अफवाह भी फैला रहे हैं कि स्वामी विवेकानंद इस्लाम के विरोधी थे। सच यह है कि स्वामी जी इस्लाम के बुनियादी मूल्यों के बड़े प्रशंसक थे। उनका विश्वास था कि पूरी दुनिया में इस्लाम के अस्तित्व का एकमात्र कारण उसके अंदर छुपे आध्यात्मिक नैतिक मूल्य है। स्वामी विवेकानंद की शिक्षा किताब में एक अध्याय मुहम्मद और इस्लाम का एक अंश पठनीय हैं। पाठक इस्लाम और पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहू अलैहि वसल्लम) से संबंधित स्वामी विवेकानंद के ऐतिहासिक बयान के महत्व को खुद समझेंगे- मुहम्मद साहब ने अपने जीवन द्वारा यह बात प्रदर्शित की कि मुसलमानों के बीच सही संतुलन होना चाहिए। पीढ़ी, जाति रंग या लिंग का कोई सवाल पैदा नहीं होता। तुर्की का सुल्तान अफ्रीका के बाजार से एक हब्शी खरीद सकता है और जंजीरों में उसे जकड़कर तुर्की ला सकता है। लेकिन वह हब्शी सुल्तान की बेटी से शादी भी कर सकता है। इसकी तुलना इससे करें कि हब्शियों और अमेरिकी भारतीयों के साथ देश (संयुक्त राज्य

अमेरिका) में कैसा व्यवहार किया जाता है।

जैसे ही एक व्यक्ति मुसलमान हो जाता है, इस्लाम के सभी अनुयायी किसी प्रकार का भेदभाव किए बिना उसे एक भाई के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। यह किसी अन्य धर्म में नहीं पाया जाता। अगर कोई अमेरिकी भारतीय मुसलमान बन जाता है तो तुर्की के सुल्तान को उसके साथ खाना खाने में कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन इस देश में मैंने अभी तक ऐसा कोई चर्च नहीं देखा जहां गोरा और हब्शी कंधे से कंधा मिलाकर भगवान की पूजा के लिए झुक सकें। कुरान में एक भी आयत ऐसी नहीं मिली जो कहती हो कि महिलाओं के पास कोई आत्मा नहीं है। कुरान यह सिद्ध करता है कि उनके पास आत्मा है। भारत का इस्लाम किसी भी अन्य देश के इस्लाम से पूरी तरह अलग है। कोई अशांति या फूट तभी होती है, जब अन्य देशों से मुसलमान आते हैं और हिंदुस्तान में मुसलमानों के बीच उन लोगों के साथ न रहने का प्रचार करते हैं जो उनके धर्म के नहीं है। हमारे देश के लिए दो महान विचारधाराओं की प्रणाली इस्लाम और हिंदू धर्म का संगम, वेदांत का दिमाग और इस्लाम का शरीर ही सिर्फ एक उम्मीद है। हिंदुस्तान का भविष्य पूर्ण, मतभेद और अराजकता और विवाद व संघर्ष से मुक्त, शानदार और अपराजेय तब देखा जाता है जब वेदांत का दिमाग और इस्लाम का शरीर दोनों मिल जाएंगे।

उन्होंने ऐसे मुसलमानों की आलोचना की जो मुसलमानों या गैरमुसलमानों के विरुद्ध अत्याचार करते हैं। उन्हें यकीन था कि मुसलमानों की मौजूदा परिस्थिति इस्लाम के सार्वभौमिक संदेश से बिल्कुल विपरीत है। उनके बीच जब कोई विचारक आया उसने अपने धर्म के साथ कभी खिलवाड़ नहीं किया।

दुनियाभर में भारत के दर्शन और हिन्दू धर्म का डंका बजानेवाले स्वामी विवेकानंद के मात्र दो शब्दों ने दुनिया को भारत का दीवाना बना दिया था और उस समय के विद्वानों को यह स्वीकार करना पड़ा था कि भारत सभी धर्मों की मां है।

१२ जनवरी १८६३ को जन्मे स्वामी विवेकानंद का बचपन से ही धर्म और अध्यात्म की ओर रुझान था।

धर्म अध्यात्म के मर्मज्ञ विवेकानंद को दुनिया में भारतीय दर्शन की पताका फहराने का मौका उस समय मिला जब १८९३ में अमेरिका के शिकागो शहर में विश्व धर्म संसद का आयोजन हुआ। काफी कोशिशों के बाद विवेकानंद इस कार्यक्रम में भारत का प्रतिनिधित्व करने में कामयाब रहे। विवेकानंद शोध साहित्य से जुड़े डॉ. रामकिशोर के अनुसार विश्व धर्म संसद में शुरू में अन्य देशों के प्रतिनिधियों ने स्वामी विवेकानंद को तुच्छ समझा और यह सोचकर कि वह एक गुलाम देश के प्रतिनिधि हैं, उन्हें पहले दिन सबसे अंत में बोलने का मौका दिया गया। विश्व धर्म संसद का उद्घाटन ११ सितंबर १८९६ को हुआ और स्वामीजी को सबसे अंत में थोड़ी देर के लिए बोलने का मौका मिला। रामकिशोर के अनुसार जब स्वामी जी ने अपने धर्म भाषण के शुरू में अमेरिका के बहनों और भाइयों बोला तो वातावरण वहां मौजूद सात हजार लोगों की तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। तालियां लगभग दो मिनट तक लगातार बजती रहीं।

विवेकानंद को थोड़ी देर के लिए मौका मिला था। लेकिन उनके करिश्माई संबोधन का असर कुछ ऐसा हुआ कि उनका संबोधन निर्धारित समय से काफी अधिक देर तक चला।

स्वामीजी के करिश्मे का ऐसा असर हुआ कि धर्म संसद के अध्यक्ष डा. बोराज कह उठे, भारत धर्मों की मां है जिसका प्रतिनिधित्व भगवा कपड़े पहननेवाले स्वामी ने किया। उन्होंने श्रोताओं पर गहरा असर छोड़ा है। अपने इस संबोधन से विवेकानंद अमेरिका तथा तमाम दुनिया की प्रेस की सुर्खियों में छा गए और उन्हें भारत का तूफानी संत करार दिया गया।

न्यूयार्क क्रिटिक ने लिखा वह स्वामी किसी दैवीय शक्ति से युक्त वक्ता हैं। न्यूयॉर्क हेराल्ड ने लिखा विवेकानंद नि:संदेह धर्म संसद की शीर्षतम हस्ती हैं। विवेकानंद ने धर्म संसद में कई बार हिन्दू दर्शन पर भाषण दिया।

रामकिशोर का कहना है कि शुरू में स्वामीजी को तुच्छ समझकर उन्हें सबसे अंत में बोलने का मौका मिलता था लेकिन बाद में उनका भाषण इसलिए अंत में रखा जाता था कि लोग उनका भाषण सुनने के लिए ही आखिर तक बैठे रहें। धर्म संसद का समापन २७ सितंबर १८९३ को हुआ जिसमें सार्वभौमिकता और धार्मिक सहिष्णुता पर जोर दिया गया। इसके बाद स्वामी विवेकानंद की ख्याति ऐसी फैली कि उन्हें दुनिया के कई देशों ने अपने यहां धर्म पर भाषण देने के लिए आमंत्रित किया।

रामकिशोर का कहना है कि स्वामी जी एक प्रखर वक्ता ही नहीं बल्कि दूरदृष्टा भी थे। धर्म संसद में भाग लेने के बाद वह जब कोलंबो के जरिए १८९७ में भारत पहुंचे तो उन्होंने भविष्यवाणी की कि भारत ५० साल बाद आजाद हो जाएगा। और उनकी भविष्यवाणी बिल्कुल सही साबित हुई।

स्वामी जी ने रामकृष्ण मठ और मिशन की स्थापना के साथ ही हिन्दू दर्शन के प्रचार प्रसार के लिए काफी कुछ किया। बीसवीं सदी के बहुत से विद्वानों और नेताओं ने स्वामी विवेकानंद के प्रभाव को स्वीकार किया। स्वतंत्र भारत के प्रथम गवर्नर जनरल चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने एक बार कहा था स्वामी विवेकानंद ने हिन्दूवाद और भारत को बचाने का काम किया। सुभाष चंद्र बोस का कहना था स्वामीजी आधुनिक भारत के निर्माता हैं।

स्वामी विवेकानंद के जीवन चरित्र ने बहुत से स्वतंत्रता सेनानियों को नया हौसला प्रदान करने का भी काम किया। अरबिन्दो घोष स्वामी विवेकानंद को अपना आध्यात्मिक गुरु मानते थे।

स्वामी विवेकानंद ने दशकों पहले माना था कि विश्व मंच पर भारत की पुनर्प्रतिष्ठा में युवाओं के प्रति उनके विचारों की वजह से ही वह आध्यात्मिक हस्ती होने के बावजूद आज भी युवाओं के प्रेरणास्त्रोत हैं। दरअसल स्वामी विवेकानंद में मेधा, तर्कशीलता, जैसी कुछ ऐसी बातें थीं कि युवा उनसे प्रेरणा लेते हैं। दिल्ली रामकृष्ण आश्रम के सचिव स्वामी शांतमात्मानंद का कहना है कि स्वामी विवेकानंद को देश और युवाओं से काफी प्यार था और उनका मानना था कि विश्व मंच पर भारत की पुनर्प्रनिष्ठा में युवाओं की बहुत बड़ी भूमिका है। मध्यप्रदेश सरकार में पुस्तकालय अध्यक्ष रह चुके नीलमणि दुबे के अनुसार स्वामी विवेकानंद ने एक बार कहा था कि युवकों को गीता पढ़ने के बजाय फुटबॉल खेलना चाहिए। विवेकानंद कहते थे कि युवाओं की स्नायु फौलादी होनी चाहिए क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। स्वामी शांतमात्मानंद का कहना है कि स्वामी विवेकानंद को मन की शांति स्वामी रामकृष्ण परमहंस के आध्यात्मिक संपर्क में आने के बाद मिली थी। दरअसल उससे पहले वह ब्रह्म समाज से जुड़े थे लेकिन जब वहां उनका मन नहीं रमा तब एक दिन वह अपने मित्रों के साथ स्वामी रामकृष्ण परमहंस के यहां गए। उन्होंने वहां एक भजन गाया तब परमहंस बहुत प्रसन्न हुए। दुबे के अनुसार कर्मशील नरेंद्रनाथ ने परमकहंस से पूछा, क्या आप ईश्वर में विश्वास करते हैं। क्या आप उन्हें दिखा सकते हैं। परमहंस ने पूरे विश्वास के साथ हां कहा, जिससे वह बहुत प्रभावित हुए। विवेकानंद ने हालांकि प्रारंभ में परमहंस को अपना गुरू नहीं माना लेकिन काफी समय तक उनके संपर्क में रहकर वह उनके प्रिय शिष्य बन गए। स्वामी विवेकानंद ने धर्मग्रंथों के अलावा विविध साहित्य का भी गहन अध्ययन किया था। वर्ष १८९३ में

विश्व धर्म संसद में अपने ओजपूर्ण भाषण से उन्होंने विश्वमंच पर न केवल हिंदू धर्म, बल्कि भारत की भी प्रतिष्ठा स्थापित की। ग्यारह सितंबर १८९३ को इस संसद में जब उन्होंने अमेरिका के भाइयो और बहनों से संबोधन प्रारंभ किया तब काफी देर तक तालियां बजती रहीं। उनके तर्कपूर्ण भाषण से लोग अभिभूत हो गए। उन्हें निमंत्रणों का तांता लग गया। विवेकानंद का जन्म कलकत्ता के एक कुलीन परिवार में १२ जनवरी, १८६३ को हुआ था। उनके पिता उच्च न्यायालय के अटार्नी विश्वनाथ दत्त बहुत ही उदार एवं प्रगतिशील व्यक्ति थे। उनकी मां भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारोंवाली महिला थीं। स्वामी विवेकानंद के बचपन का नाम नरेंद्रनाथ था और उनपर अपने पिता के तर्कसंगत विचारों तथा मां की धार्मिक प्रवृत्ति का असर था। विवेकानंद पढ़ाई लिखाई में बहुत तेज थे। स्कॉटिश चर्च कॉलेज के प्राचार्य डॉ. विलियम हस्टी ने उनके बारे में लिखा है कि मैंने काफी भ्रमण किया है लेकिन दर्शन शास्त्र के छात्रों में ऐसा मेधावी और संभावनाओं से पूर्ण छात्र कहीं नहीं दिखा, यहां तक कि जर्मन विश्वविद्यालयों में भी नहीं देखा। स्वामी विवेकानंद ने देश और दुनिया का काफी भ्रमण किया। वह नर सेवा को ही नारायण सेवा मानते थे। उन्होंने रामकृष्ण के नाम पर रामकृष्ण मिशन और मठ की स्थापना की। जुलाई, १९०२ को उन्होंने बेलूर मठ में अपने गुरुभाई स्वामी प्रेमानंद को मठ के भविष्य के बारे में निर्देश देने के बाद महासमाधि ले ली थी।

स्वामी विवेकानंद ने कर्तव्य और कर्मयोग को सर्वोपरि बताया है। कोई भी काम छोटा-बड़ा नहीं होता, यह उनके इस व्याख्यान से पता चलता है। यदि कोई मनुष्य संसार से विरक्त होकर ईश्वरोपासना में लग जाए, तो उसे यह नहीं समझना चाहिए कि जो लोग संसार में रहकर संसार के हित के लिए कार्य करते हैं, वे ईश्वर की उपासना नहीं करते। संसार के हित में काम करना भी एक उपासना ही है। अपने अपने स्थान पर सभी बड़े हैं।

स्वामी विवेकानंद का नाम भारत में काफी व्यापक महत्व रखता है और घरों-घरों में लोग उन्हें भलीभांति जानते हैं। स्वामीजी आधुनिक विश्व के महान आध्यात्मिक नेता थे। सन १८९३ में शिकागो में हुई विश्वधर्म संसद में दिए गए उनके वक्तव्य एवं दृष्टांत आज भी लोगों के लिए प्रेरणास्रोत हैं। उन्होंने लगभग साढ़े ४ साल इंग्लैंड और अमेरिका में आध्यात्मिक शिक्षा देकर भारत की छवि को उज्ज्वल किया। उन्होंने भारत की आध्यात्मिक शांति एवं वृहद सामाजिक मूल्यों के पालन की परंपरा को विश्व के सामने रखकर दुनिया के सामने भारत को आध्यात्मिक गुरु के रूप में प्रस्तुत कर दिया। आज का आधुनिक हिंदुत्व स्वामीजी का ही रचित है। स्वामीजी के ज्ञान एवं उनके आध्यात्मिक ज्ञान से आजादी के पहले के स्वतंत्र भारत के लिए आंदोलन चलानेवाले नेता तिलक, गांधीजी, नेहरू एवं अन्य नेता भलीभांति परिचित थे और उन्हें आधुनिक भारत का जनक मानते थे। पश्चिम के विद्वानों ने स्वामीजी को आधुनिक विश्व को मोड़नेवाली शक्ति रखनेवाले का उपनाम दे दिया था। स्वामीजी एक महान मानवतावादी पथ प्रदर्शक थे और उन्होंने पूर्व एवं पश्चिम में मानवता को समान रूप से प्रेम किया। स्वामीजी दुनिया के विकास में युवकों के योगदान को बड़ा महत्वपूर्ण मानते थे और उनका कहना था कि युवक ही विश्व का नक्शा बदल सकते हैं और किसी भी तरह का परिवर्तन लाने की क्षमता रखते हैं।

दुनिया में हिंदू धर्म और भारत की प्रतिष्ठा स्थापित करनेवाले स्वामी विवेकानंद एक आध्यात्मिक हस्ती होने के बावजूद अपने नवीन एवं जीवंत विचारों के कारण आज भी युवाओं के प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। महज ३९ वर्ष के

जीवनकाल में स्वामी विवेकानंद ने अपने विचारों से युवाओं के मन मस्तिष्क पर ऐसी अमिट छाप छोड़ी कि उनके गुजरने के सौ वर्ष से अधिक समय बाद भी युवा पीढ़ी उनसे प्रेरणा लेती है।

हालांकि शांतमात्मानंद का यह भी कहना है कि आजकल युवाओं को स्वामी विवेकानंद के सिद्धांत भाते जरूर हैं परंतु उनके जीवन में इन सिद्धांतों का कोई खास असर नहीं दिख रहा है। लेकिन उन्हें उम्मीद है कि यह स्थिति धीरे-धीरे बदलेगी।

भारत देव भूमि है। अन्य देशों में देवता नहीं आते उनके दूत या पूत आते हैं। यहां भगवान स्वयं आते हैं, इसीलिये मेरा देश देवभूमि है। यह कथन है स्वामी विवेकानंद का जिन्होंने भारतीय संस्कृति का डंका सारी दुनिया में बजाया। भारतीय जीवन दर्शन सत्य, सनातन, अनादि, अनन्त है। यह बात इस देश के ही नहीं, दुनिया भर के विद्वान, मनीषी बार-बार दोहराते हैं। लेकिन एक समय ऐसा भी था जब दुनिया के लोग भारत को सपेरों व गड़रियों का देश मानते थे। उस निराधार धारणा को बदलने का श्रेय महान तत्वदर्शी रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी विवेकानंद को है।

विवेकानंद केवल स्वामी नहीं, विश्व विजेता थे। उन्होंने अपनी प्रतिभा, मेधा से सारे विश्व को नतमस्तक करा दिया। ऐसा करना आसान न था लेकिन जिसके रोम-रोम में भारत बसता हो, जिसका चिंतन केवल और केवल अपनी मातृभूमि का पुनरुत्थान हो, जिसने भारत के जर्रे-जर्रे को निकट से देखा हो, जिसे स्वयं तीन समुद्रों के बीच स्थित शिलाखंड अपनी गोद में बैठाने को उत्सुक हो, उस असाधारण व्यक्ति के लिए यह संभव ही नहीं सहज भी था।

भारत भ्रमण के दौरान स्वामी जी ने अध्यात्म के उच्च शिखरों को देखा तो भूख, प्यास, निर्वस्त्र, घर विहीन बेबस लोगों को भी देखा। उस महा दरिद्रता ने उन्हें द्रवित कर दिया था। मन-बुद्धि में हलचल मच गई, सारे विश्व को खिलानेवाला भारत आज दरिद्र, दयनीय क्यों? छुआछूत अस्पृश्यता ने उन्हें झकझोर दिया, आत्मवत सर्व भूतेषु वाली धरा पर यह पापाचार क्यों? निरक्षरता, अस्पृश्यता, गरीबी, शोषण के देखे दृश्यों ने उन्हें रुदन करा दिया। नरेंद्र से सच्चिदानंद, विविधसानंद बना यह युवा संन्यासी दु:खी तो अवश्य था लेकिन विचलित नहीं हुआ। उसने संकल्प लिया- भारत के पुनरुत्थान का। विश्व में भारत की छवि सुधारने का।

जो भी स्वामीजी के संपर्क में आया, उनका शिष्य बना, साधारण मनुष्य ही नहीं, राजा-महाराजा तक। खेतड़ी के महाराज ने अमेरिका में होनेवाले विश्व धर्म सम्मेलन में ज्ञान का प्रकाश कराने के लिए भेजने से पूर्व उन्हें नया नाम दिया- विवेकानंद। मुंबई से जलमार्ग द्वारा पूर्णत: अपरिचित देश अमेरिका पहुंचे इस संन्यासी ने क्या कुछ नहीं सहा। वहां जाकर मालूम हुआ कि सम्मेलन की तिथि दो महीने आगे बढ़ गई है। अनजान स्थान पर जहां भारत की तरह मांग कर भी नहीं खाया जा सकता था, कैसे वे रहे होंगे, इसकी सहज कल्पना की जा सकती है। कोई गाली देता तो कोई थूकता।

निंदा करते इन लोगों के व्यवहार को विवेकी होने के कारण सहन करते रहे। इस अपरिचित देश को अपना बनाने आये थे, इसलिए कोई प्रतिरोध नहीं। प्रोफेसर राईट ने कृपापूर्वक सम्मेलन में भाग लेने की व्यवस्था की लेकिन सम्मेलन में दिये गये भाषण के पूर्व के संबोधन ने इतिहास रचा। लेडीज एंड जेंटलमेन वाले देश में माई ब्रदर्स एंड सिस्टर्स ऑफ अमेरिका अनूठा और नया संबोधन था जिसने पूरे सभागृह को दस मिनट तक तालियों से गूंजाये रखा। लोग उल्लास से झूम उठे।

उस युवा संन्यासी के लिए भी यह नया अनुभव था। उन्होंने सभाध्यक्ष से कारण पूछा तो उन्हें बताया गया- लोग आनंद के कारण ऐसा कर रहे हैं। उस संबोधन के बाद तो श्रोताओं में उनके कपड़ों का चुंबन लेने से अपना अतिथि बनाने

की होड़ लग गई। अगले दिन समाचार पत्रों ने उन्हें विश्व विजेता भारतीय युवा संन्यासी घोषित कर अपमान से सम्मान तक की उस अनूठी यात्रा को साकार रूप प्रदान किया। ढाई वर्ष भारत भ्रमण के बाद साढ़े चार वर्ष विश्व भ्रमण कर स्वामीजी १८९७ में भारत लौटे तो रामेश्वरम समुद्र तट पर कालीन बिछाकर स्वागत करने की तैयारी थी लेकिन जहाज से उतरते ही अपनी मातृभूमि की माटी पर उन्होंने पांव नहीं रखा बल्कि माटी को ही सिर पर रखा। विवेकानंद फिर से देश दर्शन पर निकले। अलख जगाई, मुझे मनुष्य चाहिए। उनका मनुष्य वह था जो भारत भक्ति करता हो। जिसमें निरक्षर को सुशिक्षित बनाने का जनून हो, गरीबी को अपनी संपत्ति बांटने की इच्छा हो, भूखे को घर बुलाकर खाना खिलाने का भाव हो, ऐसा देशभक्त। स्वामी जी का विश्वास था- भारत का पुनरुत्थान प्रतिभाओं के विकास से ही संभव है। मनुष्य अर्थात चरित्रवान बना प्रतिभा विकसित करनेवाली शिक्षा चाहिए।

अध्यात्म कोई धार्मिक रीति रिवाज नहीं वरन जीवन दृष्टि है। भारतीय दर्शन में युद्ध व सेवा दोनों में अध्यात्म है लेकिन आज अध्यात्म व्यापार बन रहा है। तथाकथित संत खुद के लिए तो बड़े-बड़े आश्रम बना रहे हैं, कारों, विमानों में घूमते हैं लेकिन दरिद्र नारायण के लिए केवल उपदेश। जिस देश में सदियों से कहा गया भूखे भजन न होय गोपाला, वहां आज के संत प्रतिनिधि की बजाय निधिपति बनकर मौज ले रहे हैं। ऐसे में विवेकानंद की प्रासंगिकता कहीं ज्यादा है जिन्होंने अपने गुरु के स्मारक के लिए एकत्र धन को अकाल पीड़ितों की सेवा में खर्च कर दिया। आज भी पूर्वोत्तर भारत में जहां ईसाई मिशनरी सक्रिय है वहां रामकृष्ण मिशन उनके समानान्तर सेवा कार्य कर रहा है। केवल शब्दों में नहीं, हमारे व्यवहार में भी हो अध्यात्म यह था विवेकानंद का दर्शन पर आज हम कहां है?

विवेकानंद ढोंगवाद का कठोरता से खंडन करते हुए कहते थे, गरीब को संपन्न, मूर्ख को बुद्धिमान, चांडाल को अपने जैसा बनाना ही भगवान की पूजा है। इससे ही राष्ट्र निर्माण, भारत पुनरुत्थान होगा। आनेवाले कुछ वर्षों तक सब देवी देवताओं को कोने में रखकर भारत माता की पूजा करना चाहिए। यदि भारत रहेगा तो ही देवी देवता भी रहेंगे।

धार्मिक असहिष्णुता के दौर में उस एकात्म भाव की आवश्यकता है जो स्वामी जी ने दिया था जब एक प्रोफेसर ने उनसे पूछा, एक तमिल और पंजाबी में क्या समानता? ना पहनावे में, न खानपान में, ना रीति रिवाजों में। स्वामी जी ने कहा था- भातर तो मानव संग्रहालय हैं समानता क्या? पूरे भारत में पूछ लो एक ही जवाब आएगा- ईश्वर सर्वत्र, आत्मा अविनाशी, सृष्टि अनादि अनंत। ये जोड़नेवाले तत्व समझना आवश्यक। लाहौर में स्वामीजी को सिख, सनातनी, आर्यसमाजी सब अलग अलग बुलाना चाहते थे किन्तु उन्होंने कहा कि सब एक साथ आओ और वह कार्यक्रम अत्यंत सफल रहा क्योंकि सब साथ-साथ आये। स्वामी जी वे वहां कुछ सम्प्रदायों के आपसी विवाद भी हल करवाये। आज भी हमें स्वयं को हिंदू, मुस्लिम, सिख आदि से पहले भारतीय बनने की चुनौती है।

स्वामी विवेकानंद जी का आह्वान था, गर्व से कहो- हम भारतीय है। स्वामी विवेकानंद ने १८९७ में कहा था, आनेवाले ५० वर्षों तक हमें केवल एक ही बात का ध्यान रखना चाहिए और वह है अपनी मातृभूमि। भारत माता ही एकमेव जागृत देव हैं। स्वामी विवेकानंद के ओजस्वी व्याख्यानों का हर शब्द ब्रह्मांड में गूंज रहा है लेकिन उन शब्दों को आत्मसात करने की दिशा में न जाने हम कब आगे बढ़ेंगे। जीवन के अंतिम दिन उन्होंने कहा, बीमारियां मुझे चालीस पार नहीं करने देंगी। इसलिए अब एक नहीं, अनेक विवेकानंद चाहिए।

दुनिया में हिंदू धर्म और भारत की प्रतिष्ठा स्थापित करनेवाले स्वामी विवेकानंद ने एक आध्यात्मिक हस्ती होने के बावजूद युवाओं के दिलों में अमिट छाप छोड़ी। दिल्ली रामकृष्ण आश्रम के सचिव स्वामी शांतमात्मानंद का कहना है कि स्वामी विवेकानंद को देश और युवाओं से काफी प्यार था और उन्होंने युवकों को प्रेरित करने के लिए काफी कुछ कहा। विवेकानंद का मानना था कि विश्व मंच पर भारत की पुनर्प्रतिष्ठा में युवाओं की बहुत बड़ी भूमिका है।

स्वामीजी ने पूरे विश्व को हिंदू धर्म की विशिष्टताओं से अवगत कराया। अपने भाषण में उन्होंने हिंदू धर्म को सभी धर्मों की जननी बताया। उन्होंने कहा कि इतर धर्मानुयायियों से त्रस्त लोगों को आश्रय देकर हिंदुओं ने उन्हें अपने राष्ट्र में बसने दिया है। इस तरह हिंदुओं ने विश्व को विश्वबंधुत्व और सहिष्णुता का पाठ पढ़ाया है। सर्वधर्मसमभाव का, संवादिता का, विविधता में एकता का पावन वातावरण स्वामीजी ने निर्मित किया। इसके बाद तो उनके प्रवचनों में लोगों की भीड़ उमड़ने लगी। ऐसे ही एक प्रवचन के दौरान एक अमेरिकी युवक ने स्वामीजी से पूछा, हमारे देश और आपके पहनावे में कोई तालमेल नहीं दिखाई देता है। आपको क्या लगता है? यह सुनकर स्वामीजी ने हंसते हुए कहा, आपका दरजी आपको सुंदर कपड़ा पहनाकर बाहर से सुंदर और आकर्षक बनाता है, जबकि हम बाहरी दिखावे को गौण मानते हैं। हम अपने आंतरिक वैभव को समृद्ध करते हैं। स्वामीजी की बात सुनकर वह युवक पानी पानी हो गया। वे युवाओं को सदैव प्रेरित करते थे और कहते थे, उठो, जागो और प्रकृति का वरदान प्राप्त करो। वे कहा करते थे, देश के केवल ५०० नवयुवक यदि मुझे मिल जाएं तो मैं पूरे देश का कायापलट कर सकता हूं। जिनकी तैयारी राष्ट्र के लिए कुरबान होने की हो, ऐसे युवकों का मैं स्वागत करूंगा। राष्ट्र के उत्थान के लिए युवाओं की जरूरत थी। राष्ट्र के नवनिर्माण के लिए युवाशक्ति और युवक संगठन ही कुछ कर सकेंगे, ऐसी स्वामीजी का दृढ़ मान्यता थी। यही कारण है कि उनका जन्मदिन युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है। १२ जनवरी १८६३ में कोलकाता के सिमालियो मुहल्ले में जन्मे स्वामी विवेकानंद का बचपन का नाम नरेंद्र था। स्वामीजी ने विश्व के तमाम देशों में भारत की अस्मिता जगाई थी। पंथ, संप्रदाय, जाति भेद से छिन्न-भिन्न हिंदू धर्म का सच्चा स्वरूप विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया। स्वामीजी का संदेश क्रांतिकारी था। वेदांत, उपनिषद, संवादिता के सत्य को वे विज्ञान की कसौटी पर कस कर प्रस्तुत करते थे। उनके प्रवचनों में आक्रामक जोश रहता था। अपनी प्रचंड, प्रखर वाणी से वे सबको आकर्षित कर लेते थे। उन्होंने पराधीनता, अस्पृश्यता और भेदभाव दूर करने की हिमायत की और गहरे आत्मविश्वास और निष्ठा पर बल दिया।

स्वामी विवेकानंद के बारे में उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस हमेशा कहते थे- आकाश में जो सात तारे (सप्तर्षि) दिखाई देते हैं, उनके नजदीक एक तारा अपनी अलग पहचान लेकर खड़ा है। वह नरेंद्र (विवेकानंद) है। १५ जनवरी १८८२ के दिन रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद की पहली मुलाकात हुई तो रामकृष्ण परमहंस ने उनसे कहा, नरेन, आज तक तुम कहां थे? मैं कब से तुम्हारी राह देख रहा था। भावावेश में आकर परमहंस ने उनका स्पर्श किया। इस स्पर्श से नरेंद्र (स्वामी विवेकानंद) को कोई अनोखी अनुभूति हुई। परमहंस को नरेंद्र में दृढ़ मनोबल दिखाई दिया। वे कहते थे, नरेंद्र तो नारायण है। देखिएगा वह पूरे जगत को चमचमाकर रख देगा। सचमुच स्वामी विवेकानंद एक अद्वितीय विरल विभूति थे। इसके कुछ दिन बाद परमहंस ने नरेंद्र को निर्विकल्प समाधि का अनुभव कराया और कहा मां की संपूर्ण कृपा अब तुम पर उतरी है। यह कहकर उन्होंने उन्हें राममंत्र की दीक्षा दी। उन्होंने अपनी सारी शक्ति नरेंद्र में संक्रमित की और उसके

तीन चार दिन बाद परमहंस ने देह त्यागी। उनकी मृत्यु के बाद नरेंद्र ने स्वामी विवेकानंद नाम धारण किया। स्वामी जी ने छह वर्ष पूरे देश का भ्रमण किया। धर्म के विषय में उनके विचार निराले थे। उनके अनुसार धर्म अनुभूति और साक्षात्कार की वस्तु है। सभी को सभी धर्मों की भावना को आत्मसात करना चाहिए। साधु होने में धर्म नहीं है, बल्कि मानवसेवा और प्रभुसेवा में ही सच्चा धर्म समाया है। अपने भ्रमण के दौरान स्वामीजी ने भारत में अनेकता के परे एकता, अकल्प्य दारिद्र्य, भयंकर जातिभेद, सामाजिक आर्थिक विषमता और अशिक्षा के दर्शन किए। इस दौरान उन्हें समाज के तमाम वर्ग के लोगों के साथ रहने का अवसर मिला। वे हरिजनों और मुसलमानों के भी साथ रहे। इस तरह उन्होंने जाति-धर्म की दीवार तोड़ी। देश के भविष्य की उन्हें भारी चिंता थी। इस चिंता के बीच ही उनमें चेतना ज्योति प्रकट हुई। नई अस्मिता जागी। सन १८९७ में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। लोगों की सेवा करना उनका ध्येय था। कोलकाता में प्लेग की महामारी फैली तो उन्होंने रामकृष्ण मिशन के संन्यासियों को लोगों कीसेवा करने के लिए कहा। पैसा नहीं तो मठ बेच देंगे, पर लोग मरें और हम देखते रहें, ऐसा नहीं होगा। ऐसी थी उनकी उदात्त भावना। मात्र ३९ वर्ष की अल्पायु में उन्होंने इस संसार से चिरविदा ली। उन्होंने अपने इस संक्षिप्त जीवन में जो कार्य किए वे अभूतपूर्व थे। हिंदू धर्म में उन्होंने नवजीवन का संचार किया। लोगों में आत्मसम्मान जागृत किया। कन्याकुमारी के समुद्र में बीचोंबीच बना विवेकानंद शिला नामक उनका स्मारक आज भी उनके विचारों, कार्यों का स्मरण दिलाता है।

उन्नीसवीं सदी के सातवें दशक ने भारत को तीन अतुलनीय व्यक्तित्व दिए-स्वामी विवेकानंद, रवींद्रनाथ टैगोर और महात्मा गांधी। ये तीनों विलक्षण मेधा वाले चरित्र थे, जिन्होंने हमारे देश के जीवन प्रवाह में तीन अलग-अलग धाराएं विकसित कीं- स्वामी विवेकानंद ने धर्म और अध्यात्म की राह चुनी, टैगोर ने कला और साहित्य को एक नई दिशा दी और गांधी सार्वजनिक जीवन और स्वतंत्रता संग्राम के क्षेत्र में उतरे। इन तीनों ने अपने समय में तथा उसके बाद भी भारतीय चेतना को सबसे गहराई से प्रभावित किया। पर विवेकानंद ने धर्म और अध्यात्म को जिस तरह सर्वथा एक नई व्याख्या दी, वैसा उनके अन्य समकालीनों ने साहित्य या राजनीति के क्षेत्र में नहीं किया। स्वामी विवेकानंद के योगदान को परस्पर जुड़े तीन आयामों में देखा जाना चाहिए। पहला, उन्होंने धर्म को केंद्रीय स्थान पर प्रतिष्ठापित किया और उसे सर्वथा नया अर्थ दिया। दूसरा, उन्होंने विभिन्न संप्रदायों में आपसी सद्भाव पर विशेष बल दिया। और तीसरा, उनका शिक्षण आज भी पूरी तरह प्रासंगिक है। उनके ही समकालीन थे जर्मनी के सुप्रसिद्ध विचारक फ्रेडरिक नीत्शे (१८४४-१९००), जिन्होंने घोषणा की थी कि ईश्वर मर चुका है। उनके बाद के विद्वानों और लेखकों ने इसी को दोहराते हुए कहा कि अब लोगों को ईश्वर में पहले जैसी दिलचस्पी नहीं रह गई है। यह कहा गया कि मानवीय प्रवृत्तियों को संचालित करने में धर्म से अधिक विज्ञान और बौद्धिकता निर्णायक भूमिका निभाती है। स्वामी विवेकानंद को यह स्थापना स्वीकार्य नहीं थी, इसलिए उन्होंने धर्म को बिलकुल नया अर्थ दिया।

स्वामी विवेकानंद ने यह शिक्षा दी कि ईश्वर की सेवा का वास्तविक अर्थ गरीबों की सेवा है। उन्होंने साधुओं-पंडितों, मंदिरों-मस्जिदों, गिर्जाघरों, गोम्पाओं और सत्राओं के इस पारंपरिक विचार को पूरी तरह नकार दिया कि धार्मिक जीवन का उद्देश्य केवल संन्यास के उच्चतर मूल्यों को या मोक्ष पाना है। इसके बजाय उन्होंने दीन-हीन लोगों की सेवा पर ज्यादा जोर दिया। उन्होंने कहा, दरिद्र नारायण यानी ईश्वर का निवास गरीबों और असहाय लोगों

में होता है। इस दरिद्र नारायण शब्द ने सभी आस्थावान स्त्री-पुरुषों में कर्त्तव्य की यह भावना जगाई कि ईश्वर की सेवा का अर्थ निर्धन-असहाय प्राणियों की सेवा है।

गौतम बुद्ध की तरह स्वामी विवेकानंद ने भी मानव के आचरण में बौद्धिकता की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया। उनका मत था कि हम जो भी काम करें, वह तर्कसंगत हो। मनुष्य को एक ऐसे धर्म के साथ रहना सीखना होगा, जो बौद्धिक चेतना और तार्किकता की आत्मा को प्रश्रय दे। धर्म का पथ ऐसा टिकाऊ विश्वास का पथ होना चाहिए जो प्रत्येक व्यक्ति के बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास पर जोर दे, चाहे वह किसी जाति, प्रजाति, समुदाय या संप्रदाय का क्यों न हो। कोई भी धर्म, जो एक आदमी को दूसरे से अलग करता हो या विशेषाधिकार, शोषण या युद्ध का समर्थन करता हो, प्रशंसनीय नहीं हो सकता। अन्य किसी भी संत महात्मा की तुलना में स्वामी विवेकानंद ने इस बात पर ज्यादा जोर दिया कि प्रत्येक धर्म गरीबों की सेवा करे और समाज के पिछड़े लोगों की अज्ञानता, दरिद्रता और रोगों से मुक्ति का उपाय करे और ऐसा करते समय पुरुष और स्त्री में, एक मत और दूसरे मत में, एक पेशे और दूसरे पेशे में कोई भेदभाव न करे। इस उच्च स्तर पर पहुंचने के बाद विभिन्न मतों के बीच आपसी सद्भाव पहली शर्त हो जाया करती है। इस प्रकार का वातावरण मानव-मानव के बीच सामंजस्य की भावना की अपेक्षा करता है। शत्रुता या वैमनस्य के शमन के लिए हमें घृणा का परित्याग करना होगा और सभी के लिए प्रेम और सहानुभूति जगानी होगी।

स्वामी जी की प्रार्थना थी कि मैं बार बार जन्म लूं और हजारों कष्टों को झेलूं, जिससे विभिन्न जातियों-नस्लों में विद्यमान अपने दरिद्र नारायण की सेवा, उनकी पूजा कर सकूं। आज किसी व्यक्ति का सबसे अलग एक टापू की तरह जीना संभव नहीं रह गया है। विभिन्न मतों और विभिन्न पंथों के लोग साथ-साथ एक गांव औरशहर में रह रहे हैं। ऐसे में जरूरी है कि लोग एक दूसरे को समझें, उनकी जरूरतों, उनकी आकांक्षाओं को तरजीह दें और उनके धार्मिक विश्वासों तथा पद्धतियों को सम्मान दें। स्वामी विवेकानंद ने स्पष्ट किया कि वेदांत दर्शन न तो ब्राह्मण दर्शन है, न बौद्ध, न ईसाई, न मुस्लिम। यह इन सभी धर्मों का सार तत्व है। ११ सितंबर, १८९३ को शिकागो के धर्म सम्मेलन में दिए गए अपने ऐतिहासिक भाषण में स्वामीजी ने स्पष्ट किया था कि ईसाइयों को न तो हिंदू या बौद्ध होने की जरूरत है, न ही हिंदुओं या बोद्धों को ईसाई बनने की जरूरत है। लेकिन प्रत्येक को दूसरों की आत्मा से जुड़ना है और अपनी व्यक्तिगत विशेषता को बरकरार रखते हुए अपनी विकास विधि से आगे बढ़ना है। स्वामीजी इसे भारतीय परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक मानते थे। भारतीय जीवन दर्शन यही है कि व्यक्ति अपने परिवेश से सर्वश्रेष्ठ तत्व को प्राप्त करे और उसके साथ पूरी निष्ठा से रहे। स्वामीजी विभिन्न धार्मिक आस्थाओं में सामंजस्य स्थापित करने के पक्षधर थे और सभी को एक धर्म का अनुयायी बनाने के विरुद्ध थे। स्वामी जी कहा करते थे कि यदि सभी मानव एक ही धर्म को मानने लगें, एक ही पूजा पद्धति को अपना लें और एक ही नैतिक स्तर का पालन करने लगें तो यह विश्व के लिए सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी क्योंकि यह धार्मिक और आध्यात्मिक विकास के लिए प्राणघातक हो जाएगा।

स्वामी जी के आचार और विचार निश्चय ही आज के दौर में काफी प्रासंगिक हैं। उन्होंने लोगों को न केवल आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग दिखाया बल्कि उन्हें सामाजिक जीवन व्यतीत करने का तरीका भी सिखाया। लोकसेवकों को प्रलोभनों से दूर रखने में हमारी असमर्थता ने भारतीय लोकतंत्र के सामने बड़ी चुनौती खड़ी कर दी है। स्वामी जी द्वारा

स्थापित रामकृष्ण मिशन अपने स्थापना काल से ही अपने सदस्यों की परवरिश इस तरह करता रहा है कि वे कर्त्तव्यपरायणता और सेवा भावना की मिसाल बने हुए है। यह अपने प्रत्येक सदस्यों के भोजन, वस्त्र, आवास और चिकित्सा आदि की व्यवस्था करता है और उन्हें प्रशिक्षण और आदर्शवाद के द्वारा अभिप्रेरित (मोटिवेट) करता है। जबकि दूसरी ओर राजनीतिक दल हैं जिनके पास अपने सक्रिय सदस्यों के समुचित भरण-पोषण के लिए कोई व्यवस्था नहीं है।

स्वामी विवेकानंद की शिष्या आयरिश महिला भारत की होकर रह गईं :- भगिनी निवेदिता एक आयरिश युवती थीं। उनके नाना हैमिल्टन की देखरेख में उनमें प्रखर राष्ट्रभाव प्रदीप्त हुआ था। स्वामी विवेकानंद जी के प्रति अनन्य श्रद्धाभाव लेकर वह भारत आई थी। भारत आकर उन्होंने तन-मन धन से प्लेग की महामारी में प्रशंसनीय कार्य किया, फिर भी अंग्रेज होने के कारण भारत आने के बाद भी उनमें कुछ दृष्टिभेद रह ही गया था।

उन दिनों स्वामी विवेकानंद जी अपने विदेशी शिष्यों के साथ नैनीताल में अध्ययन-मनन, चिंतन एवं वार्तालाप के माध्यम से सहयोगी कार्यकर्ता निर्माण चल रहा था। स्वामी विवेकानंद परख करना चाहते थे कि भगिनी निवेदिता में व्यक्तिनिष्ठा है या तत्व निष्ठा। अत: एक दिन स्वामी जी ने अनायास ही उनसे पूछ लिया- निवेदिता। तुम्हारी राष्ट्रीयता क्या है?

दृढ़निश्चयी निवेदिता का स्पष्ट उत्तर था, निश्चित रूप से ब्रिटिश और स्वामी जी। इंग्लैंड के यूनियन जैक (राष्ट्रध्वज) के प्रति मेरे मन में वही श्रद्धा है जितनी एक भारतीय नारी के हृदय में अपने ईष्टदेव (ठाकुर) के प्रति होती है।

स्वामी जी को ऐसे उत्तर की कल्पना नहीं थी। अत: उत्तर सुनकर वह स्तम्भित रह गए। उन्हें आभास हो गया कि उनकी मानस पुत्री की शिक्षा अभी अधूरी है। स्वयं को अंग्रेजी राष्ट्रीयता का अभिन्न अंग मानकर चलनेवाला प्राणी उनकी मातृभूमि की सेवा कैसे कर सकेगा? अत: कार्यक्षेत्र में उतरने से पहले और प्रशिक्षण आवश्यक है। सेवा के लिए पहले भक्ति आवश्यक है। यह मन ही मन सोचकर उन्होंने प्रशिक्षण की दिशा तय की।

एक दिन वे ध्यानमग्न थे। उसी समय एक काला सर्प उनके निकट ा पहुंचा लेकिन उन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं हुआ। कुछ बालकों ने सर्प को देखा, चिल्लाए भी पर वह ध्यानमग्न बैठे रहे। सभी विस्मित और भयभीत थे, सर्प कुछ समय बाद स्वयं ही चला गया। वे जब सोने के लिए जाते और नेत्र बंद करते तो भृकुटियों के मध्य जोतिर्मय बिन्दु दिखाई देता। बाद में उनके गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस ने बताया कि यह ध्यान सिद्ध का विशिष्ट लक्षण है। बताया जाता है कि एक दिन वे कमरा बंद करके ध्यान कर रहे थे। अकस्मात एक सौम्य, शांत ज्योतिर्मय पुरुष दण्ड कमण्डल हाथ में लिये हुए सामने खड़े होकर कुछ बोलने को उद्यत हुए किन्तु प्रशांत मूर्ति को कुछ क्षण देखते ही विस्मित होकर कमरे के बाहर चले गए।

कुछ दिनों बाद स्वामी रामकृष्ण परमहंस से जब उन्होंने इस घटना का उल्लेख किया तो उन्होंने बताया कि भगवान स्वयं शुभाशीष देने आये थे। कहा जाता है कि उन्हें मां काली के दर्शन हुए थे जिससे उनके भीतर अनेक अनुभूतियां हुई और उनमें अनेक शक्तियां संचित हो गई। स्वामी विवेकानन्द ने ११ सितम्बर १८९३ को अमेरिका के शिकागो नगर में विश्व धर्म सम्मेलन में जो उद्‌बोधन दिया, वह चिरस्मरणीय रहेगा। स्वामी जी के विषय में एनी बेसेन्ट ने कहा था, महिमामय मूर्ति, गैरिक वस्त्र से विभूषित शिकागो के धूसर वृक्ष पर भारतीय सूर्य की तरह दीप्तिमान, उन्नत सिर, मर्म भेदी आंखें, धर्म महासभा के प्रतिनिधियों के लिए निर्दिष्ट कमरे में स्वामी विवेकानंद मेरी आंखों में प्रथम बार इसी रूप में प्रतिभाव हुए थे। विवेकानन्द का महान व्यक्तित्व और विशाल कृतित्व का मूल्यांकन मानवबुद्धि और क्षमता से

परे हैं। वह साक्षात ज्ञान कर्म और भक्ति के समन्वित स्वरूप थे। उनके विचारों की श्रृंखला दस खण्डों में विवेकानन्द साहित्य नाम से प्रकाशित हुई है। यह पुस्तकें सहज बोधगम्य व व्यावहारिक हैं। कठोर परिश्रम के कारण स्वामी जी बीमार पड़ गये और १९०२ में ब्रह्मलीन हो गये।

कहते हैं नया दौर युवाओं का है और हम उन्हें दरकिनार कर विकास केपथ पर नहीं चल सकते। १२ जनवरी को युवा दिवस मनाया जाता है, जो स्वामी विवेकानंद की याद में मनाया जाता है। विवेकानंद युवाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन कर देश को प्रेम और सौहार्द के रास्ते पर ले जाना चाहते थे, विवेक और आनंद का संगम है विवेकानंद।

नरेंद्र दत्त अन्य बच्चों की तरह ही नटखट थे। उनका प्रारंभिक जीवन तैराकी, दौड़, कुश्ती और संगीत आदि सीखने में बीता। जिज्ञासा की लहरें सदा उनके कोमल मन को झकझोरतीं, अपने ३९ वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामीजी ने जितने अद्‌भुत और महान कार्य किये, वह न केवल उस समय बल्कि आज के पीढ़ियों के लिए भी प्रेरणा के स्रोत हैं। उनके उन्हीं अद्‌भुत कार्यों को देखते हुए १९८४ में भारत सरकार ने उनके जन्मदिन के अवसर पर प्रत्येक वर्ष १२ जनवरी को राष्ट्रीय युवा दिवस मनाने की घोषणा की। अमेरिका स्थित शिकागो में १८९३ में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से एक युवा अनजान संन्यासी ने सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया। यह वो समय था जब यूरोप और अमेरिका के लोग पराधीन भारतवासियों को बहुत हीन दृष्टि से देखते थे। वहां के कई लोगों ने प्रयत्न किया कि सर्वधर्म परिषद में उन्हें कुछ बोलने का मौका ही नहीं दिया जाये।

अमेरिका के ही एक अच्छे व्यक्ति ने उन्हें थोड़ा समय दिया, जब लोगों ने उनके धर्म संबंधी विचार और ओजस्वी भाषण को सुना तो सभी दंग रह गये। अमेरिका में उनके भक्तों का एक बड़ा समुदाय बन गया; वहां के मीडिया ने उन्हें साइक्लोनिक हिंदू का नाम दे डाला। यह युवा संन्यासी और कोई नहीं, स्वामी विवेकानंद थे, जिन्होंने संपूर्ण भारत के सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक पुनर्जागरण के क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वामीजी ने धर्म को मनुष्य की सेवा का केंद्र मानकर ही आध्यात्मिक चिंतन किया था। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की थी। मनुष्य को जाति-धर्म के आधार पर बांटना उन्हें मंजूर नहीं था। वे युवाओं की शक्ति को भली भांति पहचानते थे। उन्होंने एक बार कहा था- मुझे बहुत से युवा संन्यासी चाहिए जो भारत के गांवों में फैलकर देशवासियों की सेवा कर सके। राष्ट्रप्रेम की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने जन्म को सफल बनाओ। तब तक नहीं रुको जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाये। ये अनमोल वचन थे भारत के नव निर्माण की नींव रखनेवाले स्वामी विवेकानंद के। पहला राष्ट्रीय युवा दिवस १२ जनवरी, १९८५ को भोपाल में मनाया गया था।

दुनियाभर में भारतीय अध्यात्म का परचम लहराने वाले स्वामी विवेकानंद ने भारत की गौरवशाली परंपरा और संस्कृति के प्रति न केवल भारतीयों के मन में आत्मसम्मान और आत्मविश्वास का संचार किया, बल्कि नव भारत के निर्माण की रूपरेखा तैयार करने के साथ ही एक नवजागरण की शुरूआत भी की। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र के प्रोफेसर आनंद कुमार ने कहा कि राष्ट्रीय नवजागरण के अग्रदूत की भूमिका निभानेवाले स्वामी विवेकानंद को लेकर भारतीय जनमानस में कई तरह की छवियां अंकित हैं। सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए उनके द्वारा शुरू किया गया अभियान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। साथ ही एक भारतीय युवा के रूप में जीवन जीने का उन्होंने जो आदर्श प्रस्तुत

किया वह आज के समय में भी युवाओं के लिए आदर्श है। उन्होंने कहा कि विवेकानंद को भारतीय समाज की बुनियादी एकता को मजबूत करने और पाश्चात्य समाज के बीच भारत की एक अलग एवं नयी छवि बनाने के लिए सदा याद किया जाएगा। उनके बारे में एक बार गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था कि अगर भारत को जानना है तो विवेकानंद को पढ़िये। उनमें आप कुछ सकारात्मक ही पाएंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं। वर्ष १८९३ में शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेकर भारतीय संस्कृति का झंडा बुलंद करनेवाले विवेकानंद ने पूर्व और पश्चिम का एक अद्‌भुत सहचर्य प्रस्तुत किया। शायद यही वजह है कि उनके बारे में एक बार सुभाष चन्द्र बोस ने लिखा स्वामी जी ने पूर्व एवं पश्चिम, धर्म एवं विज्ञान, भूत एवं वर्तमान का आपस में मेल कराया। इस लिहाज से वह महान हैं। भारतवासियों को उनकी शिक्षा से अभूतपूर्व आत्मसम्मान, आत्म निर्भरता एवं आत्म विश्वास मिला। यायावर जीवन व्यतीत करनेवाले स्वामी विवेकानंद पर प्रकाशित मशहूर बांग्ला लेखक शंकर की पुस्तक द मॉन्क ऐज मैन में कहा गया है कि वह कई बीमारियों से पीड़ित थे। शायद यही वजह है जब बच्चे उनके पास गीता का उपदेश सुनने के लिए आए तो उन्होंने कहा कि गीता नहीं फुटबॉल खेलो। उन्होंने कहा कि मैं चाहता हूं कि तुम्हारी मांसपेशियां पत्थर सी मजबूत हों और तुम्हारे दिमाग में बिजली की तरह कौंधने वाले विचार आएं। विवेकानंद ने अपने जीवन और विचारों में आधुनिकता को समुचित स्थान दिया था। उनसे जुड़े इस पहलू से आधुनिक भारत के निर्माता पंडित जवाहर लाल नेहरू भी भली-भांति परिचित थे। स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने स्वामी विवेकानंद के बारे में लिखा है प्राचीन मूल्यों से जुड़े, भारत की प्रतिष्ठा पर गौरव महसूस करनेवाले विवेकानंद ने जीवन की कठिनाइयों के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण अपनाया। वह एक तरह से प्राचीन और वर्तमान भारत के बीच की कड़ी थे। उन्होंने दुखियों और हतोत्साहित हिन्दू संस्कृति के लिए मरहम का काम किया और उन्हें स्वाभिमान की भावना से भरा। कई विशिष्ट ग्रंथों की रचना करनेवाले विवेकानंद जब शिकागो में विश्व धर्म सम्मेलन में बोलने के लिए गये तो उन्होंने वहां भारत की एक अविस्मरणीय गाथा लिख डाली। रामकृष्ण मिशन की स्थापना करनेवाले स्वामी विवेकानंद की शिष्या भगिनी निवेदिता ने शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन को लेकर लिखा है कि यह कहा जा सकता है, उन्होंने जब बोलना शुरू किया तो हिन्दुओं के धार्मिक विचार सामने आने शुरू हुए लेकिन जब उन्होंने खत्म किया तब वहां हिन्दू धर्म का निर्माण हो गया। कई बीमारियों से लड़ते हुए चार जुलाई १९०२ को विवेकानंद का देहावसान हो गया। उस समय इस यशस्वी विद्वान की उम्र महज ३९ साल थी।

स्वामी विवेकानंद ने राजस्थान में शेखावाटी अंचल के खेतड़ी में १९८१ में शास्त्रों का अध्ययन किया था और खेतड़ी नरेश अजीत सिंह ने उनका नाम विवेकानंद रखा था। इससे पूर्व युवा संन्यासी का नाम विविदिषानंद था। यह बहुत कम लोगों को विदित है कि खेतड़ी नरेश अजीत सिंह के आर्थिक सहयोग से ही स्वामी विवेकानंद अमेरिका के शिकागो शहर में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में शामिल होने गए और वेदांत की पताका फहरा कर भारत को विश्व धर्मगुरु का सम्मान दिलाया था। खेतड़ी पुस्तकालय में उपलब्ध साक्ष्यों के अनुसार, नरेश से माउंट आबू पर्वत पर पहली बार स्वामी विवेकानंद की मुलाकात १४ जून १८९१ को हुई और इस युवा संन्यासी से वह इतने प्रभावित हुए कि उन्हें अपना गुरु बना लिया तथा अपने साथ खेतड़ी चलने का आग्रह किया, जिसे स्वामीजी ठुकरा नहीं पाए। पहली बार स्वामी विवेकानंद ७ अगस्त १८९१ को खेतड़ी आए। उन्होंने यहां राजपंडित नारायण दास शास्त्री से अष्टध्यायी तथा

महाभाष्यधायी का अध्ययन किया। इसके साथ ही व्याकरणाचार्य और पांडित्म्य के लिए विख्यात नारायण दास शास्त्री को गुरु कह कर संबोधित किया।

इसकी चिंता न करो कि तुम पापी हो। पारस फिक्र नहीं करता कि लोहा लोहा है। एक बड़ी प्रीतिकर घटना है। विवेकानंद अमरीका गए, उसके पहले की घटना है। राजस्थान में एक राजा के घर मेहमान थे। राजा तो राजा। विवेकानंद की विदाई के लिए उसने बड़ा समारोह किया। वे अमरीका जाने की तैयारी में थे विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने, तो राजा ने बड़ा समारोह किया और राजा जैसे समारोह कर सकता था वैसा किया। उसने काशी की सबसे प्रसिद्ध वेश्या भी बुलवा ली। उसको यह खयाल भी न आया, रात भर पीए और दिन भर सोए। उसे होश कहां कि विवेकानंद के स्वागत में वेश्या को बुलाना चाहिए या नहीं, यह गणित का खयाल ही नहीं बैठा और अच्छा ही हुआ कि खयाल नहीं बैठा; बैठ जाता तो यह अपूर्व घटना घटने से रह जाती। दिन आ गया उत्सव का तब विवेकानंद को पता चला; सांझ जब उनको जाना था उत्सव में, तब पता चला कि काशी की बहुत प्रसिद्ध वेश्या नृत्य करेगी वहां।

विवेकानंद पुराने ढंग के सन्यासी। कलकत्ते में भी उनके संबंध में कहा जाता था कि जिस मुहल्ले में वेश्या रहती हों उससे गुजरते नहीं थे वे। चाहे उनको चार मील का चक्कर लगाना पड़े तो वे चार मील का चक्कर लगा कर घर आते, मगर उस रास्ते से नहीं गुजरते थे जहां कोई वेश्या रहती है। तो वे नहीं जानेवाले थे जहां कोई वेश्या रहती है। तो वे कहीं जानेवाले थे उत्सव में। आखिरी वक्त जब पता उनको चला तो उन्होंने राजा के वजीर को कहा कि फिर मैं नहीं आ सकूंगा। उसने कहा, अब नहीं आते तो नहीं आएं, अब समारोह तो होगा ही। और फिर इतने दूर से वेश्या आई है, उसका गीत-गान, नृत्य तो होगा ही। चलने दो, उत्सव शुरू होने दो मैं तो हूं ही।

लेकिन वेश्या को बहुत चोट लगी और उसने एक भजन गाया। भजन, जिसका अर्थ होता है कि पारस पत्थर को जरा भी भेद नहीं होता कि जिस लोहे को वह सोना बना रहा है वह पूजा घर का लोहा है या पशुओं की हत्या जिससे की जाती है वह लोहा है। पारस तो दोनों को ही सोना बना देता है।

पास ही विवेकानंद का कमरा है। वे सब सुन रहे है। यह गीत जब उन्होंने सुना तब उन्हें बड़ी चोट पड़ी। लगा कि अभी मैं दमन से ही भरा हुआ हूं। अभी भी डर है मेरे भीतर। सच तो है, पारस को क्या फिक्र? लोहा कहां से आया है, कसाई के घर से आया है कि पूजा गृह से आया है, यह तो पारस पूछता ही नहीं। उसको तो जो लोहा छूले वही सोना हो जाता है। वह वेश्या रो रही है और गा रही है। विवेकानंद बीच में पहुंए गए और कहा, मुझे क्षमा करो, मुझसे भूल हो गई। मुझे बड़े बड़े ज्ञानी जो न समझा सके, वह तूने समझा दिया। तू मेरी गुरु है।

विवेकानंद ने बड़े आदर से स्मरण किया है इस घटना का कि उस घटना के बाद मेरे जीवन में क्रांति हो गई। मुझे भय था, स्त्रियों का जो डर था, वह गल गया और वह गया।

लेकिन भारतीय जनमानस को यह बात बहुत अखरी। विवेकानंद का पहुंच जाना और वेश्या से क्षमा मांगना, लोगों को बहुत अखरा। लोग तो खुश थे कि विवेकानंद नहीं आए, क्योंकि तब तक सन्यासी की परिभाषा में पड़ते थे।

रामकृष्ण जो नहीं कर पाए थे वह उस वेश्या ने कर दिया। रामकृष्ण ने जो सन्यास दिया था, ऊपर-ऊपर रह गया, उस वेश्या ने अंतरतम को छू लिया। विवेकानंद का आना उस उत्सव में और क्षमा मांगना उनके असली सन्यास का प्रारंभ

था। लेकिन लोगों में बड़ी भद्द हो गई। लोगों ने तो समझा कि ये तो सब बहाने हैं- माफी मांगना और यह करना। असली बात यह है कि खबर सुनी होगी कि स्त्री बड़ी सुंदर है, तो नहीं रह सके। मगर विवेकानंद के सिर से एक बोझ उतर गया और उनके पश्चिम जाने मे और पश्चिम के जीवन में तालमेल बैठ जाने में उस वेश्या ने जितना सहयोग दिया और किसी और ने नहीं। नहीं तो पश्चिम में बड़ी मुश्किल हो जाती। भारत में तो ठीक था। पश्चिम में तो स्त्री और पुरुष समानता को उपलब्ध हो गए हैं, बराबरी के दर्जे पर जी रहे हैं। अब वह मूढ़ता नहीं रही जो पहले थी। वहां विवेकानंद बड़ी मुश्किल में पड़ जाते और जिन्होंने विवेकानंद को सच में वहां साथ दिया, वे सब महिलाएं थीं और जो महिला उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण शिष्या बनी-निवेदिता-अगर वे पुराने ढब के ही सन्यासी रहे आते तो निवेदिता से संबंध ही नहीं बन सकता था।

लेकिन भारतीय मानस को बड़ी चोट पहुंची। विवेकानंद जब वापस लौटे निवेदिता के साथ तो बंगाल में बड़ी बदनामी हुई- कि सन्यासी और स्त्री के साथ आया। गए थे बचाने, खुद ही डूब गए। हजार-हजार तरह की अफवाहें उड़ी। लेख लिखे गए विवेकानंद के खिलाफ, पुस्तिकाएं छापी गई। और न मालूम किस किस तरह की बेहूदी बातें। और जान कर तुम हैरान होओगे कि निवेदिता को दक्षिणेश्वर के मंदिर में नहीं ठहरने दिया गया। जिसने विवेकानंद और रामकृष्ण को सारी दुनिया में पहुंचाने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम किया, उस महिला को दक्षिणेश्वर के मंदिर में नहीं ठरहने दिया गया; उसको बाहर मकान लेकर रहना पड़ा, आश्रम में भीतर नहीं और विवेकानंद को उस कारण बड़ी परेशानी झेलनी पड़ी कष्ट झेलना पड़ा। विवेकानंद के अंतिम दिन बहुत पीड़ा और दुख में बीते। बड़ी से बड़ी पीड़ा तो थी यह जनमानस की अंधी दशा कि ये कभी समझेंगे या नहीं समझेंगे?

लोगों ने यही समझा कि निवेदिता ने विवेकानंद को बदल लिया।

भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर पहचान दिलानेवाले महापुरुष स्वामी विवेकानंद का बचपन का नाम नरेन्द्र नाथ था। नरेन्द्र की बुद्धि बचपन से ही तेज थी। बचपन में नरेन्द्र बहुत नटखट थे। भय, फटकार या धमकी का असर उन पर नहीं होता था। तो माता भुवनेश्वरी देवी ने अद्भुत उपाय सोचा, नरेन्द्र का अशिष्ट आचरण जब बढ़ जाता तो, वो शिव शिव कहकर उनके ऊपर जल डाल देतीं। बालक नरेन्द्र एकदम शान्त हो जाते। इसमें संदेह नहीं कि बालक नरेंद्र शिव का ही रूप थे।

बाल्यावस्था में नरेंद्र नाथ को गाड़ी पर घूमना बहुत पसन्द था। जब कोई पूछता बड़े होकर क्या बनोगे तो मासूमियत से कहते कोचवान बनूंगा। पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखनेवाले पिता विश्वनाथ दत्त अपने पुत्र को अंग्रेजी शिक्षा देकर पश्चातय सभ्यता में रंगना चाहते थे।

किन्तु नीयति ने तो कुछ खास प्रयोजन हेतु बालक को अवतरित किया था। ये कहना अतिशयोक्ति न होगा कि भारतीय संस्कृति को विश्वस्तर पर पहचान दिलाने का श्रेय अगर किसी को जाता है तो वे हैं स्वामी विवेकानंद। व्यायाम, कुश्ती, क्रिकेट आदि में नरेंद्र की विशेष रूचि थी। कभी कभी मित्रों के साथ हास-परिहास में भी भाग लेते। नरेन्द्रनाथ दर्शन शास्त्र के अति उत्तम छात्र हैं। जर्मनी और इग्लैंड के सारे विश्वविद्यालयों में नरेन्द्रनाथ जैसा मेधावी छात्र नहीं है।

नरेन्द्र के चरित्र में जो भी महान है, वो उनकी सुशिक्षित एवं विचारशील माता की शिक्षा का ही परिणाम है। बचपन से ही परमात्मा को पाने की चाह थी। डेकार्ट का अहंवाद, डार्विन का विकासवाद, स्पेंसर के अद्वेतवाद को सुनकर नरेन्द्रनाथ सत्य को पाने के लिए व्याकुल हो गये। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु ब्रह्मसमाज में गये किन्तु वहाँ उनका चित्त शान्त

न हुआ। रामकृष्णस परमहंस की तारीफ सुनकर नरेन्द्र उनसे तर्क के उद्देश्य से उनके पास गये किन्तु उनके विचारों से प्रभावित होकर उन्हें गुरु मान लिया। परमहंस की कृपा से उन्हें आत्म साक्षात्कार हुआ।

हजारों लोग उनके शिष्य बने- १८९३ में शिकागो विश्व धर्म परिषद में भारत के प्रतिनिधि बनकर गये किन्तु उस समय यूरोप में भारतीयों को हीन दृष्टि से देखते थे। उगते सूरज को कौन रोक पाया है, वहाँ लोगों के विरोध के बावजूद एक प्रोफेसर के प्रयास से स्वामीजी को बोलने का अवसर मिला।

स्वामी जी ने बहिनों एवं भाइयों कहकर श्रोताओं को संबोधित किया। स्वामी के मुख से ये शब्द सुनकर करतल ध्वनि से उनका स्वागत हुआ। श्रोता उनको मंत्र मुग्ध सुनते रहे निर्धारित समय कब बीत गया पता ही न चला।

अध्यक्ष गिबन्स के अनुरोध पर स्वामी आगे बोलना शुरू किये तथा २० मिनट से अधिक बोले। उनसे अभिभूत हो हजारों लोग उनके शिष्य बन गये। आलम ये था कि जब कभी सभा में शोर होता तो उन्हें स्वामी के भाषण सुनने का प्रलोभन दिया जाता सारी जनता शान्त हो जाती।

उमाशंकर दीक्षित (१२ जनवरी)

उमाशंकर दीक्षित भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के पुरोधा एवं मानवता के पुजारी और राष्ट्रवाद के अग्रदूत थे। उन्होंने भारत में उन्नाव के नाम का गौरव बढ़ाया। उमाशंकर दीक्षित ने केंद्रीय गृहमंत्री व राज्यपाल जैसे महत्वपूर्ण पदों पर रहकर स्वयं के हित लाभ को त्याग कर राष्ट्र की सच्ची सेवा की और उसके लिए सदैव समर्पित रहे। तमाम व्यस्तता के बाद भी वे लोगों से परिवार की तरह मिलते थे। वे कर्नाटक और पश्चिम बंगाल के राज्यपाल रहे थे।

१३ जनवरी

डी. आर. बेंद्रे (जन्म- १३ जनवरी)

दत्तात्रेय रामचन्द्र बेंद्रे कन्नड़ भाषा के प्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने कन्नड़ काव्य को सम्माननीय ऊँचाई दिलवाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। उनका प्रथम कविता संग्रह प्रकाशित होने से पूर्व ही समाज ने उन्हें एक कवि के रूप में अंगीकार कर लिया था। दत्तात्रेय जी के विशिष्ट योगदान को देखते हुए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९५८) और पद्मश्री (१९६८) भी प्रदान किया गया था।

शमशेर बहादुर सिंह (जन्म- १३ जनवरी)

शमशेर बहादुर सिंह आधुनिक हिंदी कविता के प्रगतिशील कवि हैं। ये हिंदी तथा उर्दू के विद्वान हैं। प्रयोगवाद और नई कविता के कवियों की प्रथम पंक्ति में इनका स्थान है। इनकी शैली अंग्रेजी कवि एजरा पाउण्ड से प्रभावित है। शमशेर बहादुर सिंह ने अपने वक्तव्य में एजरा पाउण्ड के प्रभाव को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है- टेकनीक में एजरा पाउण्ड शायद मेरा सबसे बड़ा आदर्श बन गया। शमशेर बहादुर सिंह दूसरा सप्तक (१९५१) के कवि हैं।

राकेश शर्मा (जन्म- १३ जनवरी)

राकेश शर्मा भारत के प्रथम अंतरिक्ष यात्री हैं। उन्हें अंतरिक्ष यान में उड़ने और पृथ्वी का चक्कर लगाने का अवसर २

अप्रैल, १९८४ में मिला था। वे विश्व के १३८वें अंतरिक्ष यात्री हैं। स्क्वड्रन लीडर राकेश शर्मा ने लो ऑर्बिट में स्थित सोवियत स्पेस स्टेशन की उड़ान भरी थी और सात दिन स्पेस स्टेशन पर बिताए थे। भारतवासियों के लिए वह गर्व का क्षण था, जब प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पूछने पर कि अंतरिक्ष से भारत कैसा लगता है, तब राकेश शर्मा ने कहा- सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा।

१४ जनवरी

सी.डी. देशमुख

चिन्तामणि द्वारकानाथ देशमुख ब्रिटिश शासन के अधीन आई.सी.एस. अधिकारी और स्वतंत्र भारत के तीसरे वित्तमंत्री और भारतीय रिजर्व बैंक के तीसरे गर्वनर थे। वर्ष १९५६ से १९६० के बीच जब चिन्तामणि देशमुख विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के चेयरमैन थे, तब शिक्षा तथा समाज सेवाओं के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार सामने आए जिनसे विश्वविद्यालयों के कार्य स्तर में देशव्यापी विकास देखा जा सका।

नारायण कार्तिकेयन

नारायण कार्तिकेयन भारत के एकमात्र फॉर्मूला वन चालक हैं। उनका पूरा नाम कुमार राम नारायण कार्तिकेयन है। आज वह युवाओं के गति के प्रतीक हैं और खिलाड़ी के रूप में एक आदर्श हैं। पिछले कई वर्षों में फॉर्मूला थ्री में शिरकत करने के पश्चात वर्ष २००५ में नारायण कार्तिकेयन ने ऑस्ट्रेलियन ग्रान्ड प्रिक्स से अपने फॉर्मूला वन कॅरियर की शुरुआत की। यद्यपि वह १५ वें स्थान पर आये, तब भी उनका उभर कर आना सराहनीय है। वर्ष २०११ में नारायण कार्तिकेयन ने हिस्पेनिय रेसिग टीम के लिए ड्राइविंग की। २०१३ में हिस्पेनिय रेसिग टीम की फॉर्मूला वन में लिस्ट न होने के कारण वह दोबारा ड्राइविंग नहीं कर पाए।

महाश्वेता देवी

महाश्वेता देवी भारत की प्रसिद्ध कार्यकर्ता और लेखिका थीं। उन्होंने बांग्ला भाषा में बेहद संवेदनशील तथा वैचारिक लेखन के माध्यम से उपन्यास तथा कहानियों से साहित्य को समृद्धशाली बनाया। अपने लेखन के कार्य के साथ-साथ महाश्वेता देवी ने समाज सेवा में भी सदैव सक्रियता से भाग लिया और इसमें पूरे मन से लगी रही। स्त्री अधिकारों, दलितों तथा आदिवासियों के हितों के लिए उन्होंने जूझते हुए व्यवस्था से संघर्ष किया तथा इनके लिए सुविधा तथा न्याय का रास्ता बनाती रही। १९९६ में उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। महाश्वेता जी ने कम उम्र में ही लेखन कार्य शुरू कर दिया था और विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं के लिए लघु कथाओं का महत्वपूर्ण योगदान दिया।

अबुल फजल (जन्म- १४ जनवरी)

अबुल फजल शेख मुबारक नागौरी का द्वितीय पुत्र था। इनका जन्म ९५८ हिजरी (६ मुहर्रम, १४ जनवरी सन १५५१ ई.) में हुआ था। वह बहुत पढ़ा-लिखा और विद्वान था और उसकी विद्वता का लोग आदर करते थे। इनका स्वभाव एकांतप्रिय था, इसलिए इन्हें एकांत अच्छा लगता था। अबुल फजल रात्रि में दरवेशों के यहां जाते, उनमें अशर्फियां बांटते और अपने धर्म के लिए उनसे दुआ मांगते थे। १६०२ ई. में बुन्देला राजा वीरसिंहदेव ने शहजादा सलीम के

उकसाने से अबुल फजल की हत्या कर डाली।

१५ जनवरी

खाशाबा जाधव

खाशाबा दादासाहेब जाधव भारत के प्रसिद्ध कुश्ती खिलाड़ी थे। वे पहले भारतीय खिलाड़ी थे, जिन्होंने सन १९५२ में हेलसिकी ओलम्पिक, फिनलैण्ड में देश के लिए कुश्ती की व्यक्तिगत स्पर्धा में सबसे पहले कांस्य पदक जीता था। वैसे तो १९५२ के हेलसिकी ओलम्पिक में भारतीय हॉकी टीम ने फिर से स्वर्ण पदक हासिल किया था, लेकिन चर्चा सोने से अधिक उस कांस्य पदक की होती है, जिसे पहलवान खाशाबां जाधव ने जीता था। खाशाबा को पॉकेट डायनमो के नाम से भी जाना जाता है।

मार्टिन लूथर किम जुनियर

अफ्रीका के सिविल राइट्स मूवमेंट का सबसे बड़ा नाम, मार्टिन लूटर किंग जुनियर ने प्रसिद्ध लेटर फ्रॉम बिर्मिंघम जेल से लिखे। द निग्रो इस योर ब्रदर (निग्रो तुम्हारा भाई है) इतिहास में दर्ज हो गया। इस खत ने अफ्रीकन अमेरिकन लोगों के विरोध की हिंसा न करने के फैसले का महत्व बताया। इसके तहत अमेरिकन लोगों से सही का साथ देने की अपील की गई।

मायावती

मायावती नैना कुमारी को भारत की शीर्ष महिला राजनीतिज्ञों में स्थान प्राप्त है। वे देश की प्रमुख राजनीतिक पार्टियों में से एक बहुजन समाज पार्टी (बसपा) की प्रमुख और उत्तर प्रदेश की पूर्व मुख्यमंत्री थी। वे अपने कार्यकर्ताओं के बीच बहनजी के नाम से प्रसिद्ध है। आयरन लेडी कुमारी मायावती नामक पुस्तक के लेखक पत्रकार मोहम्मद जमील अख्तर हैं। मायावती ने स्वयं हिन्दी में मेरा संघर्षमयी जीवन और बहुजन मूवमेंट का सफरनामा तीन भागों में लिखा है। ये दोनों ही पुस्तकें काफी चर्चित रही हैं। वरिष्ठ पत्रकार अजय बोस द्वारा लिखी गयी बहनजी: अ पॉलिटिकल बायोग्राफी ऑफ मायावती, मायावती से संबंधित अब तक की सर्वाधिक प्रशंसनीय पुस्तक है।

होमाई व्यारावाला (निधन- १५ जनवरी)

होमाई व्यारावाला भारत की प्रथम महिला फोटो पत्रकार थी। जिस समय होमाई व्यारावाला फोटोग्राफर थीं, उस समय कैमरा ही अपने आप में एक आश्चर्य कहलाता था। उस पर भी एक महिला का इस क्षेत्र में प्रवेश करना बड़े आश्चर्य की बात थी उन्हें वर्ष २०११ में भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

अश्विनीकुमार दत्त (जन्म- १५ जनवरी)

अश्विनी कुमार दत्त भारत के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, सामाजिक कार्यकर्ता और देशभक्त थे। एक अध्यापक के रूप में उन्होंने अपना व्यावसायिक जीवन प्रारम्भ किया था। उन्होंने वर्ष १८८६ में कांग्रेस के दूसरे कोलकाता अधिवेशन में प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया था।

चुनी गोस्वामी

चुनी गोस्वामी का नाम भारतीय फूटबॉल के इतिहास में बहुत इज्जत से लिया जाता है। उन्होंने १९६२ के जकार्ता एशियाई खेलों में उस भारतीय फूटबॉल टीम का नेतृत्व किया, जिसने पहली बार एशियाई स्तर पर स्वर्णपदक जीता था। उन्हें १९६३ में अर्जुन पुरस्कार प्रदान किया गया तथा १९८३ में उन्हें पद्मश्री देकर सम्मानित किया गया।

१६ जनवरी

पं. सूर्यनाथ उपाध्याय (जन्म- १६ जनवरी)

जौनपुर जनपद के स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास स्व. पं. सूर्यनाथ उपाध्याय की चर्चा किये बगैर अधूरा है। अन्तिम सांस तक समाज के विकास की सोच रखनेवाले उपाध्याय जी जनपद में कांग्रेसी राजनीति के केन्द्रबिन्दु रहे, वह अपने जुझारू तेवर, ओजपूर्ण भाषणों एवं तेज तर्रार नेतृत्व के लिए हमेशा चर्चित रहे। स्व. उपाध्याय जी जीवनपर्यंत समाज के दबे-कुचले गरीबों व असहायों की लड़ाई लड़ते रहे, वे सच्चे अर्थों में गरीबों के मसीहा व समाजसेवी थे। आज जब स्व. उपाध्याय जी नहीं हैं तो जनपद उनके दबंग राजनीति, संघर्षशील व्यक्तित्व एवं जुझारू नेतृत्व को बड़ी शिद्दत से याद करता है। स्व. उपाध्याय जी का जन्म १६ जनवरी १९१८ दिन बुधवार को सिकरारा थानान्तर्गत देहजुरी के एक संभ्रान्त ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम पूर्णमासी उपाध्याय था। स्व. उपाध्याय जी सर्वप्रथम अपने लहू से फार्म भरकर भगत सिंह की हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी के सदस्य बने। और सन १९३८ में ट्रेनिंग कर व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लिया और १८ मार्च १९४१ को गिरफ्तार हुए। नौ माह कठोर कारावास तथा सौ रुपये जुर्माना न देने पर तीन माह की सजा और बढ़ा दी गयी तथा जौनपुर जेल से चुनार कैम्प जेल भेज दिये गये। इस जेल यात्रा में उन्होंने दोनों ही जेलों में जबरदस्त क्रांतिकारी संगठन बनाया जिसने सन १९४२ के आन्दोलन में जनपद में अंग्रेजी का तख्ता पलटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दिनांक ९ अगस्त १९४२ को जब रणभेरी बजी तो इस संगठन का प्रत्येक नौजवान सर पर कफन बांधकर भारत मां को ब्रिटानी दासता से मुक्त करने के लिए स्व. उपाध्याय जी के नेतृत्व में क्रांति की दहकती आग में कूद पड़ा। बरईपार-सिरसी के शिवमन्दिर में जनपद के क्रांतिकारियों की बैठक बंदूकों, रिवाल्वरों, पिस्तौलों एवं भाला-गड़ासों की गगनभेदी टंकार के बीच हुई जिसमें अपने नेतृत्व क्षमता तथा अदम्य साहस के बल पर सूर्यनाथ जिले के कमाण्डर चुने गये। इस जत्थे में लगभग ५०० नौजवान १५० रिवाल्वरों व पिस्तौलों के साथ प्राणों को न्यौछावर करने और आजादी हासिल करने के लिए जिला प्रशासन से लड़ने लगे। इस जत्थे का आतंक इतना था कि अंग्रेजी हुकूमत और दो-चार थाने मुठभेड़ करने से कतराये थे। नेदरसोल कमिश्नर ने कई बार पकड़ने हेतु अभियान चलाया, किन्तु असफल रहा। इस जत्थे ने बड़े बड़े काण्ड किये। मछलीशहर तहसील पर धावा बोला, सुजानगंज थाना लूटा, सिकरारा में राजा बनारस की छावनी तहस-नहस कर दी, कई गोदाम, डाकखाने लूटे गये, तार-सड़क व पुल काटे गये जिले का प्रशासन अस्त-व्यस्त कर दिया गया। अंग्रेजी हुकूमत ने १५ दिनों तक स्व. उपाध्याय और अन्य साथियों को गोली मारने के आदेश दे दिया तथा बाद में १०००० रू. का इनाम घोषित किया। १६ अक्टूबर १९४२ को वे कुल्हनामऊ में डाक लूटने के बाद कुछ देशद्रोही गद्दारों के कारण उपाध्याय जी अपने साथियों, बैजनाथ सिंह, दुखरन मौर्य, उदरेज सिंह, शिवब्रत सिंह व दयाशंकर के साथ गिरफ्तार हुए, इन लोगों का घर अंग्रेजों द्वारा फूंक दिया गया। स्व. उपाध्याय जी को ३०

दिसम्बर १९४२ को ७ वर्ष कठोर कारावस तथा १०० रु. जुर्माना न देने पर १८ माह कठोर कारावास की सजा दी गयी। पुन: मड़ियाहूं के एक अन्य केस में ९ जनवरी १९४३ को २ वर्ष की कठोर कारावास की सजा दी गयी। सब मिलाकर २४ वर्ष की कठोर कारावास की सजा उपाध्याय जी को हुई। सजा काटने के लिए फरवरी १९४३ में बनारस सेंट्रल जेल भेजे गये जहां १५ दिन तक अनशन किया और ६ अप्रैल १९४३ को हरदोई स्टेशन पर नारा लगाने के कारण पुलिस से तीखी नोंक-झोंक हुई, गाली देने के कारण उपाध्याय जी ने एस.पी. श्री जेटली को लोटे से मारकर उसका सर फोड़ दिया। जिसके कारण ३८ डी.आई.आर. का मुकदमा चला और बरेली जेल से पुन: हरदोई लाये गये जहां सख्त पहरे और बेड़ी, हथकड़ी के बावजूद जेल के सीखंचों को काटकर भागे, किन्तु अन्तिम दीवाल पर पकड़े गये और इतना पीटे गये कि शरीर मांस का लोथड़ा बनकर रह गया। सारे नाखून खपीचें ठोककर निकाल लिये गये, मोर्चनी से बालों को उखाड़ा गया। जेल के अन्य कैदियों ने सोचा कि उपाध्याय जी मर गये। प्रदेश की समस्त जेलों में मातम पुर्सी की मीटिंग हुई, किन्तु १२ दिन तक बेहोश रहने के बाद उपाध्याय जी को होश आ गया। हरदोई जेल में २ वर्ष सजा २५ रु. जुर्माना न देने पर ६ माह और सजा। जेल से भागने के प्रयास में १ वर्ष तथा ३८ डी.आई.आर. में ३ वर्ष की सजा और बढ़ा दी गयी। १४ जुलाई १९४३ को हरदोई से बरेली भेजे गये। जहां ३ माह अनशन किया, अनशन के सातवें दिन दो बार में ४० बेंत भी लगाये गये। ३ माह बाद अनशन टला। ०३-०५-१९४६ को बरेली सेंट्रल जेल से फतेहगढ़ सेंट्रल जेल भेज दिये गये जहां जेल में बी क्लास मिला, बाद में जब उ.प्र. से सभी कैदी छोड़ दिये गये तो भी उपाध्याय जी को नहीं छोड़ गया। पुन: सरकार बनने के एक माह बाद फतेहगढ़ सेन्ट्रल जेल से उपाध्याय जी को रिहा किया गया। स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में स्व. उपाध्याय जी के महत्व का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के प्रख्यात सेनानी एवं इतिहासकार मन्मथ नाथ गुप्त ने अपनी पुस्तक भारतीय स्वतंत्रता का रोमांचकारी इतिहास भाग दो में स्व. उपाध्याय जी के कारनामों पर डेढ़ पेज का लेख लिया स्व. उपाध्याय जी १९६२ में सिकरारा के ब्लाक प्रमुख और १९६९ में रारी से विधायक बने। १९७२ से १९८० तक जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे। इसी बीच पुन: रारी से ही एम.एल.ए. हुए। सन १९८० में मड़ियाहूं विधानसभा क्षेत्र से विधायक चुने गये। कई बड़ी-बड़ी कमेटियों के सदस्य तथा सिंचाई आयोग के अध्यक्ष रहे। स्व. उपाध्याय जी ने शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया था। जूनियर से लेकर डिग्री कॉलेज तक के कई शिक्षण संस्थानों की स्थापना की। इन्हें दर्शन में विशेष अभिरूचि रही, संस्कृत, हिन्दी व अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान था, उर्दू भी पढ़ लेते थे। उनके बड़े पुत्र श्री राजबली उपाध्याय समाजसेवा में संलग्न हैं तथा छोटे पुत्र श्री अभयराज उपाध्याय शिक्षा के क्षेत्र में संक्रिय हैं एवं पौत्र श्री संजय उपाध्याय राजनीति एवं समाज सेवा में श्री उपाध्याय जी के पदचिन्हों पर चल रहे हैं। ८ जनवरी, १९९८ को स्वतंत्रता आंदोलन के इस महानायक तथा जनपद के कद्दावर नेता ने अपनी संघर्षमयी गाथा को छोड़कर हम सबको अलविदा कह दिया किन्तु जनमानस में आज भी उनकी साफ-सुथरी राजनीति, उनकी कार्यशैली तथा उनके द्वारा किये गये विकास कार्य चर्चा का विषय बने रहते हैं और जब कभी भी जनपद का इतिहास लिखा जायेगा तो स्व. उपाध्याय जी का नाम सुनहरे अक्षरों में लिखा जायेगा।

गुरु हरराय

गुरु हरराय सिक्खों के सातवें गुरु थे। वे ३ मार्च, १६४४ को गुरु नियुक्त हुए तथा इस पद पर ६ अक्टूबर, १६६१ ई.

तक रहे। गुरु हरराय अपने पितामह, महान योद्धा गुरु हरगोविंद सिंह के विपरीत थे, गुरु हरराय शांति के समर्थक थे, जो मुगल उत्पीड़न का विरोध करने के लिए उपयुक्त नहीं था।

रामनरेश त्रिपाठी- (निधन- १६ जनवरी)

रामनरेश त्रिपाठी प्राक्छायावादी युग के महत्वपूर्ण कवि हैं जिन्होंने राष्ट्रप्रेम की कविताएँ भी लिखीं। इन्होंने कविता के अलावा उपन्यास, नाटक, आलोचना, हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तथा बालोपयोगी पुस्तकें भी लिखीं। इनकी मुख्य कृतियाँ हैं- मिलन, पथिक, स्वप्न तथा मानसी। रामनरेश त्रिपाठी ने लोक-गीतों के चयन के लिए कश्मीर से कन्याकुमारी और सौराष्ट्र से गुवाहाटी तक सारे देश का भ्रमण किया। स्वप्न पर इन्हें हिंदुस्तान अकादमी का पुरस्कार मिला।

१७ जनवरी

रांगेय राघव

१७ जनवरी १९२३ को तमिल भाषी हिंदी रचनाकार रांगेय राघव का जन्म आगरा (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। उनका मूल नाम तिरूमल्लै नंबकम वीर राघव आचार्य था। वे १३ वर्ष की आयु में ही लिखने लगे थे। बंगाल यात्रा पर उनकी पहली रिपोर्ट तूफानों के बीच चर्चा का विषय बन गया था। मात्र ३९ वर्ष की अल्पायु में उन्होंने १५० से अधिक पुस्तकें लिखीं। घरौंदा, मुर्दों का टीला, सीधा सादा रास्ता, विषादमठ, परिवर्तन, आखिरी आवाज आदि उनकी प्रमुख कृतियां हैं। वे हिंदुस्तान अकादमी पुरस्कार, महात्मा गांधी पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजे गए। १२ सितंबर १९६२ को मुंबई में उनका देहांत हुआ था।

बाबू गुलाबराय (जन्म- १७ जनवरी)

बाबू गुलाबराय भारत के प्रसिद्ध साहित्यकार, निबंधकार और व्यंग्यकार थे। वे हमेशा सरल साहित्य को प्रमुखता देते थे, जिससे हिन्दी भाषा जन-जन तक पहुंच सके। आधुनिक काल के निबंध लेखकों और आलोचकों में बाबू गुलाबराय का स्थान बहुत ऊँचा है। उन्होंने आलोचना और निबंध दोनों ही क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा और मौलिकता का परिचय दिया है।

१८ जनवरी

महादेव गोविन्द रानाडे (जन्म- १८ जनवरी)

महादेव गोविन्द रानाडे भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रवादी, समाज सुधारक, विद्वान और न्यायविद थे। उन्हें महाराष्ट्र का सुकरात कहा जाता है। रानाडे ने समाज सुधार के कार्यों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था। गोविंद रानाडे दक्कन एजुकेशनल सोसायटी के संस्थापकों में से एक थे। इन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना का भी समर्थन किया था। रानाडे स्वदेशी के समर्थक और देश में ही निर्मित वस्तुओं का प्रयोग करने के पक्षधर थे। प्रार्थना समाज, आर्य समाज और ब्रह्म समाज का इनके जीवन पर बहुत प्रभाव था। मुम्बई के प्रार्थना समाज और पुणे के सार्वजनिक सभा में सक्रिय हिस्सा लिया। १८९३ से १९०१ तक बॉबे हाईकोर्ट के जज। उन्होंने लेखक, धार्मिक और समाज सुधारक के रूप में देश को प्रार्थना समाज जैसा संगठन दिया वहीं पश्चिमी शिक्षा की हिमायत करके देश के युवकों को प्रगति की रफ्तार में पिछड़ न

जाने के लिए आगाह किया। वे बम्बई विधानसभा के सदस्य रहे। अर्थशास्त्र, इतिहास और सामाजिक समस्याओं पर गंभीर लेखन। उनका निधन- १६ जनवरी को हुआ।

अपर्णा पोपट (जन्म- १८ जनवरी)

अपर्णा पोपट भारत की सर्वश्रेष्ठ बैडमिंटन खिलाड़ियों में से एक हैं। वह लगातार ८ वर्षों तक राष्ट्रीय महिला चैंपियन रह चुकी हैं। उन्होंने १९९८ में फ्रेंच ओपन में महिलाओं का एकल खिताब जीता है। उन्हें २००५ में अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। अपर्णा पोपट को देश की अति श्रेष्ठ शटलर माना जाता है। उन्होंने राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय दोनों स्तर पर ख्याति पाई है।

बद्रीनाथ प्रसाद (निधन- १८ जनवरी)

बद्रीनाथ प्रसाद प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। बद्रीनाथ प्रसाद को सन १९६३ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था और १९६४ में राज्यसभा के सदस्य निर्वाचित हुए। बद्रीनाथ प्रसाद इंडियन मैथमैटिकल सोसाइटी और विज्ञान परिषद के अध्यक्ष थे।

१९ जनवरी

देवेन्द्रनाथ ठाकुर (निधन- १९ जनवरी)

देवेन्द्रनाथ टैगोर कलकत्ता निवासी श्री द्वारकानाथ ठाकुर के पुत्र थे, जो प्रख्यात विलान और धार्मिक नेता थे। अपनी दानशीलता के कारण उन्होंने प्रिंस की उपाधि प्राप्त की थी। पिता से उन्होंने ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा तथा ऋण उत्तराधिकार में प्राप्त किया था। नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ ठाकुर देवेंद्रनाथ ठाकुर के पुत्र थे। पिता के ऋण का भुगतान उन्होंने बड़ी ही ईमानदारी के साथ किया (जो कि उस समय असाधारण बात थी) और अपनी विशालता, शालीनता, श्रेष्ठ चरित्र तथा सांस्कृतिक क्रियाकलापों में योगदान के द्वारा उन्होंने टैगोर परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा को और भी ऊपर उठाया।

विष्णु सखाराम खांडेकर (जन्म- १९ जनवरी)

विष्णु सखाराम खांडेकर मराठी भाषा के सुप्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। उनके ललित निबन्ध उनकी भाषा शैली आदि के कारण बहुत पसन्द किये जाते हैं। उन्होंने उपन्यासों और कहानियों के अतिरिक्त नाटक, निबन्ध तथा आलोचनात्मक निबन्ध आदि लिखे थे। विष्णु सखाराम खांडेकर को साहित्य अकादमी पुरस्कार पद्मभूषण और ज्ञानपीठ पुरसकार (१९७४) से भी सम्मानित किया गया था।

उपेन्द्रनाथ अश्क (निधन- १९ जनवरी)

उपेन्द्रनाथ अश्क उपन्यासकार, निबन्धकार, लेखक, कहानीकार है। अश्क जी ने आदशोन्मुख, कल्पनाप्रधान अथवा कोरी रोमानी रचनाएँ की। हिन्दी-उर्दू के प्रेमचंदोत्तर कथा साहित्य के विशिष्ट कथाकार उपेन्द्रनाथ अश्क की पहचान, बहुविधावादी रचनाकार होने के बावजूद, कथाकार के रूप में ही है। उनकी कहानियां मानवीय नियति के प्रश्नों, जीवनगत विडंबनाओं, मध्यवर्गीय मनुष्य के दैनंदिन जीवन की गुत्थियों के चित्रण के कारण; नागरिक जीवन के हर पहलू संबद्ध

रहने के कारण सामान्य पाठकों को उनकी कहानियाँ अपनापे से भरी लगती हैं, उनमें राजनीतिक प्रखरता और उग्रता के अभाव से किसी रिक्तता बोध नहीं होता।

२० जनवरी

कुर्रतुलऐन हैदर

२० जनवरी १९२६ को उर्दू की प्रसिद्ध लेखिका कुर्रतुलऐन हैदर का जन्म अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। वे मुंबई में इंप्रिंट की प्रबंध संपादक बनीं। बाद में इलस्ट्रेटेड वीकली से जुडीं। उनकी कहानियों का पहला संग्रह सितारों के आगे १९४७ में प्रकाशित हुआ था। उनका पहला उपन्यास मेरे भी सनमखाने था। उनकी अन्य कृतियां आग का दरिया, शीशे के घर आदि हैं। वे साहित्य अकादमी पुरस्कार, सोवियतलैंड नेहरू पुरस्कार, ज्ञानपीठ पुरस्कार (१९९१) से सम्मानित की गयीं। उनका निधन २१ अगस्त २००७ को नोएडा (उत्तर प्रदेश) में हुआ।

खान अब्दुलगफ्फार खान (जन्म- २० जनवरी)

२०वीं शताब्दी में पख्तूना (या पठान; पाकिस्तान और अफगानिस्तार का मुसलमान जातीय समूह) के सबसे अग्रणी और करिश्माई नेता थे, जो महात्मा गांधी के अनुयायी बन गए और उन्हें सीमांत गांधी कहा जाने लगा। अब्दुल गफ्फार खां का जन्म एक सम्पन्न परिवार में हुआ था। वह बचपन से ही अत्यधिक दृढ़ स्वभाव के व्यक्ति हैं इसलिए अफगानों ने उन्हें बाचा खान के रूप में पुकारना प्रारम्भ कर दिया। आपका सीमा प्राप्त के कबीलों पर अत्यधिक प्रभाव था। गांधी जी के कट्टर अनुयायी होने के कारण ही उनकी सीमांत गांधी की छवि बनी। विनम्र गफ्फार ने सदैव स्वयं को एक स्वतंत्रता संघर्ष का सैनिक मात्र कहा, परन्तु उनके प्रशंसकों ने उन्हें बादशाह खान कहकर पुकारा। गांधीजी भी उन्हें ऐसे ही सम्बोधित करते थे। राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेकर उन्होंने कई बार जेलों में घोर यातनायें झैली हैं। फिर भी वे अपनी मूल संस्कृति से विमुख नहीं हुए। इसी वजह से वह भारत के प्रति अत्यधिक स्नेह भाव रखते थे।

२१ जनवरी

प्रतिभा राय (जन्म- २१ जनवरी)

प्रतिभा राय उड़िया भाषा की प्रसिद्ध लेखिका हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से सामाजिक अन्याय और भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज बुलंद की। उड़ीसा राज्य की बोंडा पहाड़ियों के बोंडा जनजाति पर उनके नृशास्त्रीय अध्ययन को अधिभूमि नाम से प्रकाशित किया गया था। इसे नृशास्त्रीय अध्ययन पर एक श्रेष्ठ कृति माना जाता है। प्रतिभा राय का उपन्यास मगनमति १९९९ के महाचक्रवात पर आधारित है। यह उनकी सर्वोत्कृष्ट रचना है।

शिवपूजन सहाय (निधन- २१ जनवरी)

आचार्य शिवपूजन सहाय हिन्दी साहित्य में एक उपन्यासकार, कहानीकार, सम्पादक और पत्रकार के रूप में प्रसिद्ध थे। इनके लिखे हुए प्रारम्भिक लेख लक्ष्मी, मनोरंजन तथा पाटलीपुत्र आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। शिवपूजन सहाय ने १९३४ ई. में लहेरियासराय (दरभंगा) जाकर मासिक पत्र बालक का सम्पादन किया। स्वतंत्रता के बाद

शिवपूजन सहाय बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के संचालक तथा बिहारी हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित साहित्य नामक शोध-समीक्षाप्रधान त्रैमासिक पत्र के सम्पादक थे।

ज्ञानचंद्र घोष (निधन- २१ जनवरी)

ज्ञानचंद्र घोष भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में से एक थे। ये अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं के संस्थापक और सदस्य रहे थे। घोष के अनुसंधान कार्यों से ही उनका यश विज्ञान जगत में फैला था। ज्ञानचंद्र घोष द्वारा स्थापित तनुता का सिद्धांत, घोष का तनुता सिद्धांत के नाम से सुप्रसिद्ध है, यद्यपि इसमें पीछे बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा। बंगलोर में भारत सरकार के इंडस्ट्रीज और सप्लाइज के डाइरेक्टर जनरल के पद पर वर्ष १९४७ - १९५० ई. तक रहे। फिर खड़गपुर के तकनीकी संस्थान को स्थापित कर एवं प्राय: चार वर्ष तक उसके डाइरेक्टर रहकर कोलकाता विश्वविद्यालय के उपकुलपति नियुक्त हुए। वहां से आयोजन आयोग के सदस्य होकर भारत सरकार में गए।

२२ जनवरी

टी.एम.कृष्णा (जन्म-२२ जनवरी)

थोडुर मादाबुसी कृष्णा भारत में कर्नाटक शैली के प्रशिक्षित गायक हैं। उन्हें वर्ष २०१६ का प्रतिष्ठित रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्त हुआ है। उनके साथ ही एक और अन्य भारतीय बेजवाड़ा विल्सन को भी यह पुरस्कार मिला है। बेजवाड़ा को मानवाधिकार के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए, जबकि टी. एम. कृष्णा को संस्कृति में सामाजिक एकजुटता के प्रयासों के लिए यह पुरस्कार दिया गया है।

वांडीवाश का युद्ध

२२ जनवरी १७६० को अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच वांडीवाश का युद्ध भारत में लड़ा गया था। यह सप्तवर्षीय युद्ध का ही हिस्सा था। वांडीवाश किले (अब तमिलनाडु में) पर अपना अधिकार जमाने के लिए यह लड़ाई लड़ी गयी थी। इस युद्ध में फ्रांसीसियों की हार हुई और जनवरी १९६१ में पांडिचेरी में पूर्ण समर्पण कर दिया। इस तरह उन्हें पांडिचेरी अंग्रेजों को सौंपना पड़ा। इस विजय के साथ ही अंग्रेजों ने भारत में फ्रांसीसियों की राजनीतिक शक्ति समाप्त कर दी। अंग्रेजी सेना का नेतृत्व सर आयर कूट कर रहे थे जबकि फ्रांस की सेना ने काउंट डी लैली के नेतृत्व में युद्ध लड़ा था।

ठाकुर रोशन सिंह (जन्म- २२ जनवरी)

ठाकुर रोशन सिंह भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाले क्रांतिकारियों में से एक थे। ९ अगस्त, १९२५ को उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ के पास काकोरी स्टेशन के निकट काकोरी काण्ड के अंतर्गत सरकारी खजाना लूटा गया था। यद्यपि ठाकुर रोशन सिंह ने काकोरी काण्ड में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लिया था, फिर भी उनके आकर्षक व रौबीले व्यक्तित्व को देखकर डकैती के सूत्रधार रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खाँ और राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी के साथ उन्हें भी फाँसी की सजा दे दी गई।

तरुण राम फुकन (जन्म- २२ जनवरी)

तरुण राम फुकन असम के प्रमुख कार्यकर्ताओं में से एक थे। इन्होंने अपना व्यावसायिक जीवन बैरिस्टरी से प्रारम्भ

किया था। स्वराज्य पार्टी के प्रचार-प्रसार में इनका बहुत बड़ा हाथ था। भारत में महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए तरुण राय ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया। वे महिलाओं की समानता के सदा पक्षधर रहे थे। १९२१ में गांधी जी की असम प्रदेश यात्रा में वे पूरे समय उनके साथ रहे थे।

२३ जनवरी

नेताजी सुभाषचंद्र बोस

भारत नायकों ही नहीं, महानायकों का देश है, यहां की वसुंधरा ने समय-समय पर वक्त के तकाजे के अनुसार दैदीप्यमान सूरज भी पैदा किए हैं और शीतल चांदनी की छटा बिखरते चंदाओं को भी जन्म दिया है। अशोक, बुद्ध, महावीर, गांधी जैसे लोगों ने दुनिया को सहिष्णुता, प्रेम, अहिंसा, करूणा का रास्ता दिखाया है तो चन्द्रगुप्त, छत्रपति शिवाजी महाराज, भगतसिंह, सुखदेव, चन्द्रशेखर आदि ने दुनिया को बताया है कि भारतीय खांडे की धार भी कम तीक्ष्ण नहीं है। कुछ सपूतों ने दुनिया के घावों पर ठण्डे फाहे रखकर पीड़ा से मुक्ति दिलाई है तो कुछ ने नश्तर का प्रयोग कर नासूर से छुटकारा दिलाया है।

इन्हीं नायकों-महानायकों की श्रेणी मेंएक नाम महानायकों के नायक की तरह अलग ही प्रभा पुंज सा दिखता है, यह नाम है नेताजी का, सुभाष का यानी जानकीनाथ बसु के नटखट बेटे सुभाष चन्द्र बोस का।

उड़ीसा सदा ही भौतिक लब्धियों के मामले में कुबेर रहा है, खनिजों का अथाह भंडार इसकी थाती है मगर गरीबी भी इसकी जीवन संगिनी है। मध्य प्रखर वकील जानकीनाथ बसु की पत्नी ने अपने आठवें बेटे को जन्म दिया तो यह कुछ भी अनोखा न था। उनकी अन्य संतानों की तरह ही यह बालक भी गौरवर्ण और सुदर्शनी था। चंचलता व नटखटपने में यह बालक अन्य बच्चों को मात देता था। शरारतों, बालसुलभ क्रीड़ाओं के मध्य बड़ा होता यह बालक अत्यंत जिज्ञासु था। खेल-खिलौनों में इतनी रुचि न थी जितनी कि माता के भजनों में। विद्यालय की प्रगति रिपोर्ट भी असंतोषजनक न थी, मगर उसका विद्रोही और जिज्ञासु स्वभाव शिक्षकों की परीक्षा सी लेता दिखता था, साथियों पर चौधराहट तो नैसर्गिक थी ही। एक बार जो कह दिया सो कह दिया, सोच लिया सो करना ही है कैसे भी, किसी भी कीमत पर।

यही नहीं, किशोरावस्था तक आते-आते स्वाधीनता की चिंगारी सुभाष के हृदय को दग्ध करने लगी। अंग्रेज शिक्षकों का सौतेला व्यवहार अंग्रेज विद्यार्थियों का वर्चस्व उससे सहा न जाता था। प्रतिभा का ज्वार जुबान तक आकर ही रुकता और कभी-कभी तो घुटनों तक आती भुजाएं सीमाएं भी तोड़ डालतीं। परिणामत: कुछ स्कूलों को स्वयं छोड़ा तो कुछ ने उन्हें छोड़ देने को विवश किया। सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित पिता के लिये यह अत्यंत अपमानजनक था सो वे अक्सर सुभाष चन्द्र बोस पर नाराज ही होते थे और उन्हें नालायक की संज्ञा से नवाजते थे मगर मां की ममता और उनका विश्वास सदैव सुभाष चन्द्र बोस पर कृपालु रहा। युवावस्था तक आते-आते उग्र सुभाष चन्द्र बोस अचानक ही वैरागी हो गए, शायद हृदय के अंदर सुलगती ज्वाला को शांत करने के लिए आध्यात्म और हिमालय ने उन्हें निमंत्रण दिया था घर बार छोड़ बैरागी हो जाने का मगर चिंगारी हो तो बुझे, आग हो तो शमन हो। जहां दवानल दहक रहा हो, वहां पानी भी घी का काम कर जाता है। सुभाष ठण्डे हिमाद्री श्रृंग से और भी तेजस्वी होकर निकले। पितृ इच्छा की पूर्ति के आगे शीश झुकाते हुए आई.सी.एस. की परीक्षा दी तो उनकी प्रतिभा के सैलाब में अंग्रेजी प्रतिभा तिनके सी बह गई। प्रथम स्थान पाए बेटे को

बाप ने गले से लगा लिया मगर गांधी जी के आहवान् के प्रभाव क्षेत्र में आए सुभाष ने आई.सी.एस. के उच्च पद को बेहिचक ठोकर लगा, आजादी के महायज्ञ में सर्वस्व अर्पण का व्रत ले लिया।

उन दिनों कांग्रेस एक दोराहे पर खड़ी थी, एक तरफ शांत हिमालय से गांधी खड़े थे जिन्हें कोई भी अत्याचार, शोषण, दमन, उत्पीड़न और कूट चालें छू भी न पाती थी, जो धैर्य, शांति और अहिंसा से क्रूर आततार्ई वर्ग को जीत लेना चाहते। जिनके लिए सविनय-अवज्ञा एक हथियार था जो भारत छोड़ो, के नारे से स्वाधीनता लेने के सपने और रामराज को धरती पर उतार लाने के ख्वाब बुन रहे थे, जिनके पीछे एक बड़ा हुजूम नेताओं का और हिलोरे लेता जन सैलाब खड़ा था। दूसरी तरफ लाल बाल पाल के नेतृत्व में ईंट का जवाब पत्थर से देने को आतुर, व्यग्र गरमपंथी थे। ये चोट करनेवाले लोग महाचोट का माद्दा खुद तो रखते ही थे, देश में भी ऐसा ही एक जज्बा पैदा करना चाहते थे और कर भी रहे थे। इन्हीं की बदौलत भारतीय स्वाधीनता संग्राम ने एक अलग रुख किया था, नई करवट ली थी। इस वर्ग के लिए साधन की पवित्रता उतनी महत्वपूर्ण न थी जितनी कि साध्य को पाने की ललक। परिणाम सामने था- उधम सिंह, भगत सिंह, राजगुरू, बटुकेश्वर, चन्द्रशेखर आदि उग्र विचारकों, प्रहारकों की लंबी श्रृंखला तैयार थी।

गहन दृष्टि से देखें तो दोनों ही विचारधाराएं, दोनों ही दर्शन अतिवादी थे। आजादी किसी भी एकांगी अतिवाद से मिलनी प्राय: असंभव थी क्योंकि अंग्रेजों जैसी शेमप्रूफ कौम के लिए अहिंसा एक दर्शन नहीं अपितु राहत पैदा करती थी। गोली का जवाब गोली से देने की ताकत हममें उनके समकक्ष थी भी नहीं। ऐसी विषम परिस्थिति में प्रतिभा के धनी सुभाष ने एक नए ही दर्शन को जन्म दिया, उन्होंने ललकार भी अपनाई और गांधी के अनुयायी भी बने रहे। वे जानते थे कि गांधी जैसे विराट पुरुष की छवि भारतीय जनमानस में कितनी गहरी बैठी है और कांग्रेस जैसे जनमंच के बिना स्वाधीनता के यज्ञ में पड़नेवाली समिधा सही जगह ज्वाला पैदा नहीं कर पाएगी अत: उन्होंने कांग्रेस को ही बदल डालने की नीति अपनाई। वे चाहते थे कि अहिंसक आंदोलनों के साथ-साथ कांग्रेस खुलकर उग्र खेमे की गतिविधियों को समर्थन दे व उनके दर्शन को एक नैतिक सम्बल प्रदान कर अंग्रेजी शासन को सीधी-सीधी चेतावनी भी दे दे।

मगर भगतसिंह, राजगुरू, सुखदेव को फांसी, बिस्मिल व उधमसिंह के बलिदान तथा चन्द्रशेखर की हत्या तक पर कांग्रेस और गांधी की चुप्पी ने सुभाष चन्द्र बोस में सोई चिंगारी को और भी भड़का दिया। रही सही कसर १९३६-३७ के कांग्रेस के अध्यक्ष चुनाव व अध्यक्ष चुने जाने के बावजूद गांधी जी के अपनी हार बताने जैसे वक्तव्यों ने पूरी कर दी। सुभाष चन्द्र बोस चाहते तो कांग्रेस का विभाजन तक हो जाता मगर सुभाष चन्द्र बोस किसी भी हालत में कांग्रेस को कमजोर नहीं देखना चाहते थे, सो सारे राजनैतिक हितों को तिलांजलि दे स्वयं ही एक नई राह बनाने को निकल पड़े, बिल्कुल अकेले और साधन-विहीन। यदि सुभाष चन्द्र बोस हारना जानते तो वे महानायक क्यों कहलाते। एक नई रणनीति के चलते, उन्होंने देश ही छोड़ दिया और भारतीय आजादी के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन जुटाने की दृष्टि से उन्होंने रंगून व सिंगापुर में बैठकर बाहर से अंदर छिपे कोढ़ पर हमले की योजना के तहत आजाद हिंद फौज का गठन किया। भले ही तत्कालीन विश्लेषकों ने इसमें भी गांधी-सुभाष मतभेदों की झलक देखी हो। अंदर हाथ सहार दे बाहर वाहे चोट के दर्शनानुसार एक भविष्य पर नजर गड़ाए था तो दूसरा वर्तमान को संवारने के लिए सर्वस्व होम कर डालने पर उतारू।

द्वितीय विश्व युद्ध में जापानी पक्ष की पराजय से पूर्व नेताजी के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज ने अण्डमान निकोबार द्वीप

समूह को मुक्त करवाकर शहीद द्वीप के नाम से १९४४-४५ में भारत में आजादी का पहला दीया जलाने का गौरव पाया। यदि नागासाकी और हिरोशिमा तबाह न होते, युद्ध जापानी-रूसी खेमे की कमर न तोड़ देता तो बेशक भारत तभी आजाद हो गया होता और तब का भारत १९४७ में आजाद हुए भारत से थोड़ा अलग ही होता। उस भारत में गांधी दर्शन के स्थान पर सुभाष चन्द्र बोस दर्शन का वर्चस्व होता। शायद उस भारत में तुष्टिकरण की बजाय बलिवेदी पर स्वयं को होम कर देने की जिजीविषा कहीं अधिक होती। खैर जो हो ही न सका, उस पर रोदन एक निरर्थक आलाप ही होगा। भारत जिस तरह आज न गांधी के आत्मनिर्भरता दर्शन पर चल रहा है और न ही सशक्त भारत को सुभाष चन्द्र बोस याद आते ही हैं। जीवन विवादों में उलझा रहा, मौत ने भी विवाद खड़े किये मगर एक बात में सुभाष आज भी निर्विवाद हैं और वह है कि सुभाषचन्द्र बोस आज भी महानायक हैं, महानायकों के भी नायक हैं।

जब देश की जनता स्वतंत्रता की खुली हवा में सांस लेने के लिए छटपटा रही थी। पारतंत्र के अंधेरे में सुख की एक किरण भी नजर नहीं आ रही थी उस समय इस धरती पर एक ऐसे सूर्य का उदय हुआ जिसकी रोशनीरूपी चलो दिल्ली के एक ही गूंज से ब्रिटिश साम्राज्य हिल गया। उस परम आत्मा का नाम आज हम नेताजी सुभाषचंद्र बोस के रूप में लेते हैं। उनकी जन्मतारीख २३/१/१८९७ है।

नेताजी का जन्म कटक में हुआ। माता का नाम प्रभादेवी और पिता जानकीदास थे। यह समय था ब्रिटिशों के जुल्म भरे राज का। माँ प्रभादेवी जहां काली मां के उपासक थीं वही जानकीदास एक जाने माने वकील थे। उन्हें सात भाई और कुल ६ बहनें थी। एक धन संपन्न परिवार के रूप में यह परिवार स्थापित था। इसी वजह से उनकी बाल्यावस्था बड़ी ही सुख के साथ बीती। सम्राट राजा सिद्धोधन जिस प्रकार कुमार सिद्धार्थ का लालन पालन करते थे, जानकीदास जी भी अपने इस पुत्र का बड़ा ही ख्याल रखते थे। बड़े होकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर सरकारी सेवा में बड़े ओहदे पर काम कर धन के साथ-साथ ख्याति भी अर्जित करे ऐसा ही कुछ स्वप्न वह बालक सुभाष के लिए देखते थे। परंतु कहते हैं होनहार बिरवान के होत चिकने पात इस कहावत के अनुसार होनी को कुछ और ही मंजूर था। वह समय था स्वतंत्रता संग्राम का। हर कोई इसमें अपने आप की भागीदारी बढ़ाने को तत्पर था और ऐसे वातावरण में पले बढ़े सुभाष इससे अनछुए रहे यह कैसे संभव हो सकता था। बाल सुभाष ने अपना शालेय शिक्षण एक मिशनरी स्कूल से शुरू किया उस समय उनको लाने ले जाने के लिए कार तक की सुविधा थी। इस प्रथम चरण में ही गोरे काले के भेदभाव से परिचित हो उन्होंने अपनी शिक्षा मातृभाषा में बंगाली में ही लेने की ठान ली और घमंडी ब्रिटिशों के मुंह पर यह उनका प्रथम तमाचा था। उस समय मातृभाषा में शिक्षा की अवस्था बड़ी ही दयनीय थी। छात्र गाय विषय पर भी सही निबंध तक नहीं लिख पाते थे। इसी बात से प्रेरणा लेकर मातृभाषा में उच्च शिक्षित हो समाज में भाषा का स्थान ऊपर उठाने का प्रण इस बाल सुभाष के मन द्वारा किया गया। इसी का ही परिणाम है कि १६ वें साल में मेट्रिक कर सन् १९१३ में केंद्र में वह सर्वप्रथम आए। कलकत्ता के रेसीडेंसी कालेज में ज्ञानपिपासु सुभाषद्वारा शिक्षा खातिर ग्रंथालय में दिन-रात रम जाना जिसकी वजह से उन्होंने यह शिक्षा १९१६ में बी.ए. उत्तीर्ण होकर सरकार द्वारा रायबहादुर खिताब से वह सम्मानित किये गए। पितृ इच्छा से उन्होंने उस समय आई.पी.एस. की परीक्षा १९२० में पास की जिसमें उनका क्रमांक ५ वां था। पिता तो अत्यंत आनंदित हुए लेकिन बचपन से ही स्वतंत्रता की चाह में कूढ़ता यह बाल मन अब एक नवजवान के रूप में स्थापित हो चुका था। धन

और शिक्षा जैसे हथियार उनके हाथ थे और लक्ष्य था भारत माँ की स्वतंत्रता। उसी खातिर केमब्रीज से मानसशास्त्र और नीतिशास्त्र विषय में वे यशस्वी हुए। सरकार ने उन्हें नौकरी भी दी परंतु स्वतंत्रता के खुले आसमान में उड़ने की चाह रखने वाले इस युवा सुभाष ने उसे ठुकराते समय कहा मैं एक ही समय पर जुल्मी ब्रिटिश सरकार और मेरी प्रिय मातृभूमि को खुश नहीं रख सकता, असमर्थ हूं। वह समय था असहकार आंदोलन का जिसने एक आग का रूप धारण कर लिया था। पंजाब में जालियावाला बाग हत्याकांड जैसे हत्याकांड ब्रिटिशों के अन्याय की गाथा रो-रो कर सुना रहे थे। उस समय सुभाष देश से दूर सातो समुंदर पार थे परंतु उन्हें ऐसा लग रहा था कब मैं मातृभूमि पर कदम रखूं और जुल्म के खिलाफ लड़कर मातृभूमि के पैरों में पड़ी पारतंत्रता की बेड़ियां काटने वाले युवाशक्ति को एकत्र करो, बड़ा करो, १६ जुलाई १९२१ मणिभवन में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से उन्होंने प्रथम भेंट की। गांधीजी ने उनकी पीठ थपथपाई। सुभाष के मन में गांधीजी के प्रति आदरभाव उत्पन्न हुए। देशबंधु द्वारा उन्हें नेशनल कालेज ऑफ कलकत्ता का प्रिंसिपल का पद प्रदान किया गया। २५ दिसंबर १९२१ को प्रिंस ऑम कॉमन वेल्थ के सम्मान के विरोध के कारण उन्हें ६ महीने का कारावास मिला। समय था बंगाल में भीषण बाढ़ जिसके द्वारा हजारों बेघर, कईयों की मौत कई अपना वतन छोड़ने पर मजबूर। सुभाष जी ने दीनबंधुवों की मदद से ४ लाख रुपये जमा कर गरीब दुखियारों के पुनर्वसन में की। २५ अक्टूबर १९२४ में वे क्रांतिकारी गुट के सदस्य बने जिसके कारण उन्हें फिर से गिरफ्तार कर लिया। १९२७ में वे रिहा हुए तथा १९२८ में कलकत्ता अधिवेशन में अध्यक्ष पद पर उनका चुनाव हुआ। २६ जनवरी १९३० यह उस समय के भारतीयों द्वारा माना और मनाया गया पहला स्वतंत्रता दिवस था। १९२९ में लाहौर अधिवेशन में उन्होंने जो भाषण दिया उससे ब्रिटिश साम्राज्य इन्हें अपने ऊपर टंगी हुई तलवार समान मानने लगे। स्वतंत्रता की चाह लिए जनता की आवाज लेकर १९३३ में वह यूरोप गए जहां उनके पेट पर शस्त्रक्रिया की गई। ऐसे समय में उन्होंने इटली, फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रेलिया जैसे विश्व के कई देशों में भ्रमण किया। १० से ११ बार उन्हें जेल की कोठरियों में बंद होना पड़ा परंतु १५ जनवरी १९४१ के दिन अचानक नेताजी सुभाषचंद्र बोस भूमिगत हो गए और २१ अक्टूबर १९४३ को उनके द्वारा किए गए अथक प्रयास, कुशल नेतृत्व और नेताजी नाम को सार्थ करने वाला प्रयास आजाद हिंद सेना के रूप में भारत की सीमा पर प्रकट हुआ। उनके नेतृत्व में भारत भूमि पर पहला तिरंगा फहराया गया जिसको थाम कर यह वीर सेनानी कह उठा तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा। चलो दिल्ली। प्रयास सफल नहीं हो पाया। पूरे विश्व पर जिनका साम्राज्य पूरे विश्व पर फैला हुआ था। धन तथा सेना की जिन्हें कोई कमी नहीं थीं। ब्रिटिश साम्राज्य की नींव तो हिल गई परंतु साधन और अन्य कारण से यह भारतीय सेना पराजित हो गई। सुभाष डगमगाए नहीं। उस समय हिटलर जैसे चर्चिल जैसे साम्राज्यवादी विश्व में एक शक्ति के रूप में प्रस्तापित थे। स्वतंत्रता की चाह लिए सुभाष कई दिनों के पनडुब्बी के सफर द्वारा उनके पास पहुंचे। पर निराशा हाथ लगी फिर भी थमे नही, रुके नहीं, कई घटनाएं घटी परंतु १८ अगस्त १९४२ की एक ऐसी घटना जिसने सारे देशवासियों को रुला दिया। कहा जाता है कि इस दिन इस स्वतंत्रता संग्राम के नेताजी को एक विमान दुर्घटना में काल ने अपने वश में कर लिया।

पराजय शब्द नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जीवन के शब्दकोश में नहीं था और उनके एक आदेश पर आजाद हिंद फौज

का एक एक जवान भारत माता के लिए अपने प्राणों का बलिदान देने के लिए तैयार रहता था। यह कहना है सुक्कन सिंह का जो कभी बोस की आजाद हिंद फौज में सिपाही थे। उम्र के असर की वजह से सुक्कन सिंह को बोलने में थोड़ी दिक्कत होती है और सुनाई भी कम देने लगा है। लेकिन आजाद हिंद फौज के बारे में बातें कर उन्हें बेहद खुशी होती है। उन्होंने बताया मैं बर्मा में था और हम २७ लोग आजाद हिंद फौज में शामिल हुए थे। हमें प्रशिक्षण दिया जाता था। खुद नेताजी मौजूद रहते थे। वह एक-एक जवान से बातें करते थे। हममें से किसी को भी, कुछ भी पूछना होता था तो हम सीधे उनसे पूछते थे। नेताजी और हम सब एक साथ खाना खाते थे। बोस से जुड़ी किसी खास याद के बारे में पूछने पर सुक्कन सिंह कहते हैं जब भी वह हमें संबोधित करते थे तो एक बात हमेशा कहते थे, पराजय शब्द का कोई मतलब नहीं होता। धीरे-धीरे हम सबके मन में उन्होंने भर दिया था कि पराजय शब्द अर्थहीन होता है। सुक्कन सिंह के अनुसार, आजाद हिंद फौज के जवानों को जय हिंद का नारा सुभाष चंद्र बोस ने दिया था। सुक्कन सिंह बताते हैं सुबह शाम हमारी तैयारी चलती ही रहती थी। हमें कहा गया था कि मातृभूमि से ऊपर हमारे लिए कुछ नहीं है। नेताजी को जवान इतना चाहते थे कि उनके एक आदेश पर अपने प्राणों की बलि देने में कोई पीछे नहीं हटता। वह भी इस बात को समझते थे। २३ जनवरी १८९७ को जन्मे सुभाष चंद्र बोस की याद करते हुए सुक्कन सिंह की आंखें छलक उठती हैं। वह कहते हैं नेताजी हमें कहते थे कि युवाओं को पहले कदम बढ़ाना होगा। उन्हें हम पर बहुत भरोसा था। फौज में युवा चेहरे ही थे। बोस की मृत्यु को लेकर हमेशा विवाद उठते रहे। कहा जाता है कि १८ अगस्त १९४५ को ताइवान से तोक्यो जाते समय विमान दुर्घटना में उनकी मृत्यु हुई। सुक्कन सिंह कहते है। हमें आज भी विश्वास नहीं होता कि वह इस तरह मारे गए। बोस से अंतिम मुलाकात के बारे में पूछने पर वह कहते हैं, तारीख तो याद नहीं है लेकिन सन १९४४ में जाड़े के दिनों में हम सबने आखिरी बार उन्हें देखा था, सुबह की परेड में। फिर उनके बारे में सिर्फ सुनते रहे।

नेताजी सुभाषचंद्र बोस स्वतंत्रता संग्राम के एक ऐसे व्यक्ति थे जिनका मानना था कि बिना शस्त्र आजादी मिल नहीं सकती और यही वजह थी कि उन्होंनें आजाद हिंद सेना की स्थापना की थी। सुभाषचंद्र बोस ने युवाओं से कहा था कि तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा। उनके इस आह्वान के बाद उनकी फौज में शामिल होने के लिए कतार लग गई थी। सुभाषचंद्र बोस केवल हिन्दुस्तान में ही नहीं बल्कि दुनियाभर के देशों में जाने जाते हैं और उनको मानने वाले लोग आज भी हैं। नेताजी सुभाषचंद्र बोस में सामाजिक सेवा की भावना छात्रावस्था से ही विद्यमान थी। १९१३ में दर्शनशास्त्र के अध्ययन के लिए वे प्रेजीडेंसी कॉलेज (कोलकाता) में भरती हुए। उन्होंने छात्रों का एक वाद-विवाद क्लब चलाया। सभी छात्र उन्हें नेता मानने लगें।

सुभाष के स्कूल में अंग्रेज छात्रों की संख्या अच्छी खासी थी। एक बार कुछ भारतीय और अंग्रेज छात्र खेल रहे थे। लड़कों के बीच किसी बात को लेकर कहासुनी हो गई। सुभाष वहां आ पहुंचे और उन्होंने एक अंग्रेज लड़के से पूछा, क्या बात है? उस अंग्रेज लड़के ने कहा, मैं भारतीय लड़कों से बात नहीं करता, मैं उन्हें ठोकर मारकर गिरा देता हूं।

सुभाष ने कहा, हिंदुस्तानी लड़के भी अंग्रेज लड़कों को ठोकर मारकर गिरा देते हैं। यह कहते हुए सुभाष ने अंग्रेज लड़के को ठोकर मारकर गिरा दिया।

१९१६ के प्रारंभ में वहां पर एक जैसी घटना घटी जिसने उनके जीवन को नया मोड़ दे दिया। कॉलेज के कुछ अंग्रेज

प्राध्यापक भारतीय छात्रों को घृणा की नजर से देखते थे और समय-समय पर उनका अपमान कर डालते थे। इससे छात्रों में बडा रोष उत्पन्न हो गया। तनाव बढ़ता ही जा रहा था कि एक दिन एक अंग्रेज प्राध्यापक ने भारतवासियों के लिए कुछ असह्य अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया। इससे सारे छात्र उत्तेजित हो उठे। वे जब बरामदे में एकत्र होकर रोष प्रदर्शन करने लगे तो एक-दूसरे अंग्रेज प्राध्यापक ने उन्हें शांत करने के बजाय बुरी तरह फटकार दिया। छात्र भड़क उठे। फलस्वरूप उसी शाम छात्रों ने एक अंग्रेज प्राध्यापक को पीट दिया। छात्रों के समूह में सुभाष भी मौजूद थे। उन्हें स्वाभाविक रूप में छात्रों का नेता मानकर कालेज के अधिकारियों ने फरवरी १९१६ में कॉलेज से उनका निष्कासन कर दिया। सुभाष ने किसी तरह की क्षमा याचना नहीं की। मातृभूमि का अपमान वे किसी भी तरह सहने को तैयार न थे। उनका विचार था कि उन्हें रंग भेद की नीति का शिकार बनाया गया।

इसी तरह की घटनाओं ने उन्हें मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाले सैनिकों की अगली पंक्ति में ला खड़ा किया। अंतिम क्षणों तक उनका उद्देश्य रहा- स्वतंत्रता के लिए संघर्ष।

कहां है वह प्राचीन युग। वे आर्य वीर कहाँ हैं जो भारत माता के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर सकें ? क्या केवल देश की ही दशा सोचनीय है ? देखिये, भारत के धर्म की क्या दशा है ? कहाँ हे वह पवित्र सनातन धर्म और कहाँ है हमारा पवित्र आचरण ? कहाँ है वह पवित्र आर्यकुल की ऋषि-समुदाय जिनकी चरण-रज लेकर यह धरती पावन हो गयी और कहाँ आज हम पतन के गर्त में गिरे हुए उनके वंशधर।

चारों ओर नास्तिकता, अनास्था और पाखण्ड का साम्राज्य है, इसलिए लोगों को इतना कष्ट उठाना पड रहा है। आज भारत माता की संतान की क्या दशा हो गयी है। कुसंस्कारों में हम लिप्त हैं। धर्म के नाम पर अधर्म को प्रश्रय मिल रहा है। क्या भारत माँ की थोड़ी भी संतानें अपने स्वार्थों को तिलांजलि देकर माँ के लिए अपना जीवन उत्सर्ग नहीं करेंगी? क्या भारत माता और सनातन धर्म का यह रूदन हमें व्यथित नहीं करता ? क्या इस पशुवत् इन्द्रियों के दास बने रहे, मात्र स्वार्थ- लिप्त होकर आयुष्य बिताते रहे तो इस देव-दुर्लभ मानव- देह-प्राप्ति से लाभ क्या ? धर्म और देश के लिए जीवित रहना ही यथार्थ जीवन है।

२३ जनवरी १८९७ को स्वतंत्रता सेनानी व आजाद हिंद फौज के संस्थापक सुभाष चंद्र बोस का जन्म उड़ीसा के कटक में हुआ था। उनको सम्मान से नेताजी भी कहा जाता है।

इंग्लैंड से आईसीएस की परीक्षा पास करने के बाद वे स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ गए। तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा के नारे के साथ उन्होंने आजाद हिंद फौज का नेतृत्व करते हुए देश से अंग्रेजों को खदेड़ने के लिए जापानी सेना की मदद से १९४३ से १९४५ तक युद्ध लड़ा।

वैसे तो उनकी मृत्यु एक रहस्य है, फिर भी कहा जाता है कि १८ अगस्त १९४५ को जापान में इलाज के दौरान उनकी मृत्यु हो गई थी। वे विमान दुर्घटना में घायल हो गए थे।

सुभाष चंद्र बोस के अतिरिक्त भारत के इतिहास में ऐसा कोई व्यक्तित्व नहीं हुआ, जो एक साथ महान सेनापति, वीर सैनिक, राजनीति का अद्भुत खिलाड़ी और अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पुरुषों, नेताओं के समकक्ष साधिकार बैठकर कूटनीति तथा चर्चा करनेवाला हो। महात्मा गांधी के नमक सत्याग्रह को नेपोलियन की पेरिस यात्रा की संज्ञा देनेवाले सुभाष चंद्र

बोस का एक ऐसा व्यक्तित्व था, जिसका मार्ग कभी भी स्वार्थों ने नहीं रोका। जिसके पांव लक्ष्य से कभी नहीं हटे, जिसने जो भी स्वप्न देखें, उन्हें साधा। नेताजी में सच्चाई के सामने खड़े होने की अद्भुत क्षमता थी।

बचपन में ही सुभाषचंद्र बोस ने जो आत्मविश्वास और त्याग की भावना दिखाई, वह अपने आप में एक मिसाल है। शुरू से ही उनमें अपने समाज के लिए बहुत कुछ करने की ललक थी।

एक बार शहर में हैजा फैल गया। लोग बड़ी संख्या में मरने लगे तो सुभाष अपने कुछ साथियों के साथ गंदी बस्ती में रह रहे लोगों की सेवा करने लगे।

सबने मिलकर बस्ती की सफाई की और लोगों को साफ खाना और पानी के लिए हिदायत दी। उन्होंने बीमार लोगों में दवाइयां बांटीं। उनका ये सेवा कार्य कुछ लोगों को नागवार गुजरा और उन्होंने अमीरी-गरीबी के भेदभाव का आरोप लगाकर उनका विरोध किया। इनका नेता छंटा हुआ गुंडा हैदर था। उसने सुभाष और उनके साथियों को बस्ती में आने से मना कर दिया, लेकिन थोड़े दिन बाद हैदर का परिवार भी हैजा की चपेट में आ गया। उन सबकी मदद के लिए कोई आगे नहीं आया। अगर आए तो सुभाष और उनके साथी। वे उसके घर पहुंचे और परिवार के लोगों को भोजन और दवाइयां दीं। हैदर शर्म से सिर झुकाए खड़ा था। सुभाष ने उससे कहा, इस गलती का सुधार यही है कि तुम भी हमारे साथ आ जाओ और हमारे सेवाकार्य में जुट जाओ। हैदर ने सुभाष से क्षमा मांगी और लोगों की सेवा में लग गया।,

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का जन्म २३ जनवरी १८९७ को उड़ीसा के कटक शहर में हुआ था। उनके पिता जानकीनाथ बोस वहां के एक सुप्रसिद्ध वकील थे और माता प्रभावती बोस एक धार्मिक़ प्रवृत्ति की महिला थीं। सुभाषचंद्र बोस ने १९१३ में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। १९१९ में कोलकाता विश्व विद्यालय से स्नातक की डिग्री ग्रहण की। सुभाष चन्द्र बोस महान क्रांतिकारी, सफल सेनानी, कुशल राजनीतिज्ञ और प्रभावशाली वक्ता थे। रंगून के जुबली हाल में नेताजी ने अपने भाषण में कहा था कि तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।

राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति उन्हें प्रेरित करने में चित्तरंजन दास का विशेष योगदान था। सन १९२३ में वे कोलकाता के मेयर चुने गये। २५ अक्टूबर १९२४ को उन्हें गिरफ्तार कर माण्डले जेल भेज दिया गया। सन १९२९ में सुभाष चन्द्र बोस अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अध्यक्ष हुए। सन १९३८ में कांग्रेस के हरी पुरा अधिवेशन में नेताजी को अध्यक्ष बनाया गया। १९४० में अंग्रेज सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया, लेकिन स्वास्थ्य बिगड़ने के कारण उन्हें निर्धारित अवधि से एक माह पूर्व ही जेल से रिहा कर दिया गया और उन्हें उनके निवास में ही कड़ी निगरानी में रखा गया। उचित अवसर पाकर १९४१ में वे चमत्कारिक ढंग से घर से निकले गये और जर्मनी पहुंचे। जर्मनी एवं इटली में बंदी के रूप में रह रहे भारतीय सैनिकों को एकत्र कर मुक्ति सेना का गठिन किया।

जर्मनी में ही सुभाष चन्द्र बोस ने जय हिन्द का नारा दिया। १३ जून १९४३ को वह टोकियो पहुंचे। वहां पहुंचने पर उन्होंने रास बिहारी द्वारा गठिन सेना की बागडोर सम्हाली।

इस प्रकार आजाद हिन्द फौज की दो टुकड़ियां तैयार हो गई। जापान ने.. अक्टूबर १९४३ में बर्मा (म्यामांर) और फिलीपीन्य की स्वतंत्रता को स्वीकार कर लिया। इससे भारतीयों में उत्साह बढ़ गया। २१ अक्टूबर १९४३ को आर जी हुकूमत ए आजाद हिन्द की घोषणा कर दी गई।

नेताजी ने महिलाओं की रेजीमेन्ट झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के नाम पर लक्ष्मीबाई रेजीमेन्ट बनाई। नवंबर १९४३ को जापान ने अण्डमान और निकोबार द्वीप भी नेताजी को सौंप दिये। नेताजी ने उन द्वीपों को शहीदद्वीप और स्वराज्य द्वीप का नया नाम दिया। आजाद हिन्द फौज ने ब्रिटिश शासन का नैतिक बल गिरा दिया। द्वितीय महायुद्ध के दौरान सुभाष चन्द्र बोस के साहसपूर्ण कार्यों ने उन्हें अमर बना दिया। सुभाष चन्द्र बोस के हृदय में देश प्रेम का अंकुर जन्म से ही था। विकास का अवसर पाते ही उस देश प्रेम ने वट वृक्ष की तरह सारे भारत को आच्छादित कर दिया।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस १८ अगस्त १९४५ को ताइवान में कथित विमान दुर्घटना में मारे गए, उनके साथ रूस में कोई हादसा पेश आया या वह आजाद भारत में किसी साधु सन्यासी के वेश में छिपकर रहे ये कुछ ऐसे सवाल हैं जो आज भी अनुत्तरित हैं। नेताजी की कथित मौत की जांच के लिए तीन-तीन आयोग बने लेकिन देश के सामने कुछ भी स्पष्ट नहीं हुआ। मुखर्जी आयोग ने २००६ में संसद में पेश अपनी रिपोर्ट में इस बात को खारिज कर दिया था कि नेताजी की मौत ताइवान में विमान हादसे में हुई थी। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि जापान के रेंकोजी मंदिर में रखी अस्थियां नेताजी की नहीं हैं और इस बारे में आगे जांच की जरूरत है लेकिन सरकार ने न्यायमूर्ति मुखर्जी की इस रिपोर्ट को खारिज कर दिया। २३ जनवरी १८९७ को कटक में जन्मे इस महान क्रांतिकारी के लापता होने के बारे में सच सामने न आने से आज भी उनके बारे में रहस्य बरकरार है।

नेताजी के जीवन पर मृत्यु से वापसी नेताजी का रहस्य नाम की पुस्तक लिखनेवाले और सूचना के अधिकार अधिनियम (आरटीआई) के तहत प्रधानमंत्री कार्यालय से नेताजी से संबंधित फाइल की मांग करनेवाले अनुज धर का कहना है कि इस विषय पर काफी शोध करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि १८ अगस्त १९४५ को नेताजी की मौत नहीं हुई थी।

धर ने कहा कि उन्होंने खुद इस बारे में ताइवान के रिकॉर्ड खंगाले जिनसे पता चला कि १८ अगस्त १९४५ को वहां कोई विमान हादसा हुआ ही नहीं था। भारत सरकार जानती है लेकिन सच छिपाए बैठी है। उन्होंने कहा कि जब उन्होंने आरटीआई के तरत सरकार से नेताजी से संबंधित फाइल के बारे में जानकारी मांगी तो पहले तो जवाब दिए जाने से इंकार किया जाता रहा और जब वह बार-बार अपील करते रहे तो जवाब मिला कि वह फाइल नष्ट हो गई है।

धर ने कहा कि नेताजी के बारे में सच सामने लाने के लिए उन्होंने मिशन नेताजी नाम से संगठन खड़ा किया। उन्होंने कहा कि उनके द्वारा किए गए शोध के अनुसार नेताजी आजादी के काफी दिन बाद तक भारत में ही वेश बदलकर रहे। फैजाबाद के गुमनामी बाबा उर्फ भगवन जी से नेताजी की कहानी काफी मिलती जुलती है। धर ने कहा कि उन्होंने भगवन जी के बक्से से मिले हस्तलेखों की जांच जब विशेषज्ञों से कराई तो पता चला कि अंग्रेजी और बांग्ला में उनके द्वारा लिखी गई सामग्री नेताजी सुभाष चंद्र बोस की राइटिंग से मिलती है।

उन्होंने बताया कि नेताजी के करीबी रहे बहुत से लोग गुमनामी बाबा से मिलने जाते थे। जब भी उनसे पूछा जाता कि आप सार्वजनिक रूप से सामने क्यों नहीं आते उनका जवाब होता मेरी वापसी राष्ट्र हित में नहीं है। धर ने कहा कि बहुत से लोगों का ऐसा मानना है कि आजादी के समय शायद भारत सरकार और ब्रिटिश सरकार के बीच ऐसा गुप्त समझौता हुआ जिसमें कहा गया कि यदि नेताजी वापस आए तो युद्धबंदी के रूप में अंग्रेजों को सौंप दिए जाएंगे। यदि यह सही है

तो हो सकता है कि नेताजी इसीलिए सामने नहीं आए। हालांकि इस समझौते के उनके, पास कोई सबूत नहीं है।

उन्होंने कहा कि सरकार ने सच सामने लाने के लिए मुखर्जी आयोग की मदद नहीं की और आगे जांच कराने की बजाय उल्टा रिपोर्ट को ही अस्वीकार कर दिया। इतना ही नहीं, बल्कि नेताजी से संबंधित सबूतों को भी नष्ट कर दिया। उल्लेखनीय है कि ३० अप्रैल १९९८ को कलकत्ता उच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को नेताजी के बारे में समग्र जांच कराने के लिए एक आयोग गठित करने का निर्देश दिया था ताकि इस संबंध में विवाद हमेशा के लिए खत्म किया जा सके। सरकार ने उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश न्यायमूर्ति मनोज मुखर्जी का एक सदस्यी आयोग गठित किया। जांच पूरी होने के बाद आयोग की रिपोर्ट १७ मई २००६ को संसद में पेश की गई जिसमें कहा गया कि नेताजी अब इस दुनिया में नहीं हैं लेकिन १९४५ में विमान हादसे में उनकी मौत नहीं हुई थी।

जापान के रेंकोजी मंदिर में रखीं अस्थियां नेताजी की नहीं हैं। इसमें १९४५ में नेताजी के रूस में कथित ठहराव पर कोई टिप्पणी नहीं की गई और कहा कि इस मामले में आगे और जांच की जरूरत है। सरकार ने मुखर्जी आयोग की इस रिपोर्ट को खारिज कर दिया।

आजाद हिन्द फौज के सेनानी राम सिंह का भी यही मानना था कि नेताजी विमान हादसे में नहीं मारे गए थे और वह गुमनामी बाबा के रूप में भारत में ही बहुत दिनों तक रहे। नेताजी के डलहौजी प्रवास के बारे में जब आए थे सुभाष हिम के आंचल में नाम की पुस्तक लिखने वाले हरेंद्र श्रीवास्तव का कहना है कि अब रहस्य से शायद ही पर्दा उठ पाए। इसलिए बहस छोड़ नेताजी को अपने दिलों में महसूस किया जाए। नेताजी लोगों के दिलों में आज भी जिन्दा हैं।

सत्ता से उपेक्षित, जनता के नेताजी सच्चे महानायक सुभाष - सुभाष वह नाम है जो सत्ता प्रतिष्ठान से पूरा सम्मान नहीं मिलने पर भी वह सच्चे महानायक हैं और दिलों की गहराइयों में बसे हैं। जिसे इस देश की आजादी का सबसे ज्यादा श्रेय मिलना चाहिए था, एक बहुत लंबे कालखंड तक सरकारी आयोजनों में तो वह प्राय: विस्मृत सा ही रहा पर, कुछ तो ऐसा चुंबकीय आकर्षण है उस व्यक्तित्व में कि वह भारतीय जनमानस के मन की उस तह तक जा बसा कि वह वहां अपनी अमिट छाप के साथ मौजूद रहा, बावजूद उस सारी गफलत के कि वह जिंदा है या मुर्दा।

उसे जिंदाबाद कहकर याद करें कि अमर रहे कहकर। सुभाषचंद्र बोस उस शख्स का नाम है जो सचमुच ही नेताजी, यानी नेतृत्व करनेवाले सम्मान का हकदार है। जनमानस से नेताजी का नाम पाए पिता जानकीनाथ बसु के सुबाष यानी सुभाषचंद्र बोस को हर भारतीय दिल की अटल गहराइयों से सम्मान देता है। आजाद भारत में सुभाष चंद्र बोस सबसे ज्यादा उपेक्षा के शिकार हुए। उनसे कहीं कम बलिदान करनेवाले लोग अधिक सम्मान पाते रहे पर प्रछन्न कारणों से सरकारों ने उन्हें बहुत कम अहमियत दी पर देश की धड़कनों में समाए सुभाषचंद्र बोस को आम जन से श्रद्धा व सम्मान दोनों भरपूर मिले। १८ वर्ष की आयु में संन्यास ले सच्चे गुरु की तलाश की पर संतुष्टि नहीं मिली तो लौट आए। नया लक्ष्य था भारत को आजाद कराना। सुभाष को पिता की आई.सी.एस. बनने की इच्छा भी रास नहीं आई और देश की गुलामी ने उन्हें बगावत को मजबूर किया। खुद को सिद्ध करने की जिद में सुभाष ने आई.सी.एस. परीक्षा पास कर दिखाई मगर आई.सी.एस. अधिकारी नहीं बने। अगर बन गए होते तो फिर वह इतिहास कौन रचता जो उन्होंने रच दिखाया। सुभाष की कुशाग्रता ने उन्हें गांधी का प्रिय बनाया पर गांधी केवल अहिंसा से ही आजादी पाने के हामी थे, वहीं सुभाष

अंग्रेजों की नीति बांटो व राज करो को समझ रहे थे। अंग्रेज एक-एक करके भगत सिंह, बिस्मिल, सुखदेव, राजगुरु, चंद्रशेखर आजाद अशफाकउल्ला खान आदि सैकड़ों आजादी के दीवानों को खत्म कर चुके थे और गांधी एक कदम आगे व एक पीछे की नीति पर चल रहे थे। उन पर कांग्रेस में भी बस नेहरू का ही प्रभाव था। १९३९ में सुभाष की कांग्रेस अध्यक्ष पद पर हासिल की गई जीत को भी अपनी हार बताना सुभाष का दिल तोड़ने को काफी था जिसकी परिणिति उनके कांग्रेस छोड़ने के रूप में हुई। यहीं से दृढ़व्रती सुभाष व गांधी के रास्ते अलग हो गए और सुभाष उस रास्ते पर बढ़ गए जिस पर चलकर आजादी या मौत में से किसी एक को चुनना था। सुभाष, द्वितीय विश्व युद्ध में आज के अंदमान को, शहीद द्वीप के नाम से आजाद कराने में सफल हुए पर १९४५ के अणु बम के प्रहार ने जापान की कमर व सुभाष के सपने भी तोड़ दिए। उसके बाद से सुभाष कहां गए? उनका क्या हुआ? यह आज भी रहस्य के आवरण में ही लिपटा हुआ है। सुभाष चंद्र बोस की मृत्यु के बारे में कई अफवाहें रहीं हैं। इनमें सबसे अधिक १८ अगस्त १९४५ को ताईवान के ताइपेह में ताईहोकू हवाई अड्डे पर हुई विमान दुर्घटना में नेताजी की मृत्यु का सिद्धांत शक के दायरे में हैं। कहा जाता है कि वे टोकियो से उस विमान में सवार हुए थे जो लैंडिंग करते वक्त दुर्घटनाग्रस्त हो गया और नेताजी उस दुर्घटना में मारे गए पर मुखर्जी आयोग को ताईवान के अधिकारियों ने बताया कि इस तारीख को ताईवान के इतिहास में किसी विमान दुर्घटना का ही उल्लेख नहीं है। मुखर्जी आयोग का तो कहना था कि उसकी जांच में जापान ने सहयोग नहीं किया जिसकी तरफ से सुभाष चंद्र बोस ने युद्ध में हिस्सा लिया था और जहां अंतिम बार सुभाषचंद्र बोस को देखा गया था। मृत्यु का यह सिद्धांत शक के बीज बोता है। वहीं अमेरिकी खुफिया एजेंसी सी.आई.ए. की रिपोर्ट १९४६ में भी सुभाष चंद्र बोस के जिंदा होने व रूस में देखे जाने का उल्लेख करती है। नेताजी के निकट सहयोगी कैप्टन शाहनवाज व ढिल्लन का कहना था कि नेताजी उस विमान में सवार हुए ही नहीं थे। वहीं उसी विमान में सवार कैप्टन हबीबुर्रहमान जो जिंदा बच गए थे, ने एक शपथ में बंधे होने के कारण कुछ भी कहने से मना कर दिया। एक अफवाह यह रही कि नेताजी को ब्रिटेन की सरकार ने युद्ध अपराधी घोषित किया था इसलिए वे स्वयं ही भूमिगत हो गए और उनके सहयोगियों ने उनकी मौत की खबर फैलाई जिससे वें सुरक्षित रह सके। खोसला आयोग समेत कोई भी आयोग नेताजी की मृत्यु के बारे में किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाया। १९९९ से २००५ तक सुभाष चंद्र बोस की मृत्यु पर जांच कर रही मुखर्जी कमेटी की रिपोर्ट में १९४५ में नेताजी की मृत्यु को शक के दायरे में माना। वहीं बहुत बाद तक भी उनके फैजाबाद में रह रहे गुमनामी बाबा के रूप में जिंदा होने की बातें कही जाती रही जो १९८५ में दिवंगत हुए। कहा जाता रहा कि मृत्यु के बाद उनके सामान में से नेताजी से संबंधित कई सामान मिले। एक अपुष्ट रिपोर्ट दावा करती है कि डी.एन.ए. रिपोर्ट भी उनके सुभाषचंद्र बोस होने की पुष्टि करती है। नेताजी की मृत्यु के बारे में बहुत उलझाव हैं। नेताजी के भतीजे व उनके भाई शरतचंद्र के बेटे अभियनाथ बसु के अनुसार नेताजी लम्बे समय तक रूस के साइबेरिया जेल में बंदी रहे और बाद में स्टालिन के आदेश पर उन्हें कत्ल कर दिया गया। यह थ्योरी इस परिकल्पना पर काम करती है कि जापान की हार के बाद उन्हें रूस की सेना ने बंदी बना लिया था और एक संधि के तहत उन्हें वे आजाद नहीं कर सकते थे। कचोटता यक्ष प्रश्न: पर प्रश्न उठता है कि यदि वे जिंदा थे तो भारत क्यों नहीं लौटे व उन्हें वापस लाने का प्रयास क्यों नहीं किया गया? उनके कांग्रेस, गांधी तथा नेहरू से खराब संबंध एक शक पैदा करते रहे हैं इस संदर्भ में। एक बात तो है कि यदि सुभाष जिंदा लौटते तो देश की

राजनीति एक नई करवट लेती। तब शायद हम एक सॉफ्ट टारगेट न होते। हमें बनाना स्टेट जैसे ताने न झेलने पड़ते। तब शायद भारत पाक का विभाजन भी न हो पाता। यदि होता भी तो आसपास के छोटे मुल्क तक हमेंधमकियां देने की जुर्रत करने से पहले दस बार सोचते क्योंकि नेताजी की सोच ससम्मान जीने की सोच थी, देश पर मर मिटने की सोच थी जो शायद बाद के नेताओं में नहीं रही। सुभाष ताउम्र सरकारों से लड़ते जूझते रहे। उनमें सत्ताप्रेम नहीं था। वे शायद आज के पिलपिले लोकतंत्र के भी हामी नहीं थे। हर शख्स मानता है कि वे हर हाल में देश को मजबूत बनाते चाहे इसके लिए उन्हें कुछ भी करना पड़ता । हम तो उनके मरने जीने तक की खैर खबर न ले पाए।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अनगिनत देशभक्तों ने अपना तन, मन और धन न्यौछावर किया। देश के हर प्रांत के लोग शहीद हुए लेकिन जिन वीर देशभक्तों ने जान हथेली पर रखकर स्वतंत्रता के लिए आवाजें उठायीं, सशस्त्र क्रांति का बिगुल फूंका, उसमें अदम्य साहसी नेताजी सुभाष चन्द्र बोस सबसे अव्वल हैं। परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ी भारतमाता की दुर्दशा सुभाष बाबू से देखी न गई और उन्होंने हंसते-हंसते अपने प्राण मां के आंचल में डाल दिये।

इस वीर सपूत का जन्म २३ जनवरी १८९७ को कटक (उड़ीसा) में हुआ था। धर्मनिष्ठ माता व कर्मठ पिता का बालक सुभाष पर गहरा प्रभाव पड़ा था। इनकी शिक्षा का आरंभ यूरोपियन स्कूल में हुआ था। स्कूली जीवन में ही इस मेधावी छात्र के अंग्रेजी ज्ञान के संबंध में परीक्षक ने कहा था कि इस विद्यार्थी से अच्छी अंग्रेजी तो मैं भी नहीं जानता। सुभाष बाबू ने स्कॉटिश चर्च कॉलेज से स्नातक (प्रतिष्ठा) की परीक्षा पास की। १९१९ में आई.सी.एस. की प्रतियोगिता परीक्षा में बैठने के लिए विलायत गए और इस परीक्षा में सफल भी हुए किंतु सुभाष बाबू को अंग्रेजों की नौकरी कर आजीवन चांदी काटना नागवार लगा। उन्होंने राष्ट्र की स्वतंत्रता के सामने अपनी सुख सुविधाओं की तिलांजलि दे दी और मन प्राण से स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े। जिस समय उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में कदम रखा, उस समय भारत के राजनीतिक आकाश में देशबंधु चित्तरंजन दास अपनी पूरी आभा के साथ चमक रहे थे। नेताजी ने देशबंधु को गुरु का सम्मान देते हुए स्वराज दल के कामकाज में पूरी सहायता की। अपनी इन्हीं गतिविधियों के चलते वे अंग्रेजों की आंखों की किरकिरी बन गए। सर्वप्रथम १९२१ में दिसंबर माह में वे बंदी बनाए गए। इस अवसर पर उन्होंने कहा था कि मैं मुर्गीचोर तो हूं नहीं जो इतनी कम सजा दी जा रही है। दूसरी बार फिर तो जेल जाने और आने का क्रम ही बन गया। एक ही लक्ष्य रहते हुए भी सुभाष बाबू का महात्मा गांधी और कांग्रेस से मतभेद था। १९३८ में उन्होंने सर्वसम्मति से कांग्रेस के अध्यक्षीय चुनाव में परोक्ष रूप से गांधी जी को परास्त कर दिया किंतु गांधीजी के सम्मान में ही उन्होंने यह पद तत्काल छोड़ दिया। कांग्रेस की नीतियों का विरोध करते हुए उन्होंने फारवर्ड ब्लॉक नामक दल की स्थापना की। होलवेल स्मारक के विरुद्ध आंदोलन के कारण पहले तो उन्हें जेल भेज दिया गया किंतु उनके अनशन से घबराकर बाद में उन्हें अपने आवास में ही नजरबंद कर दिया गया। अन्ततः १५ दिसंबर १९४१ को उन्होंने पहरेदारों को चकमा देकर भागने में सफलता प्राप्त की। उस समय द्वितीय विश्वयुद्ध चरम पर था जिसमें अंग्रेज बुरी तरह फंसे हुए थे। सुभाष बाबू ने इस समय को देश स्वतंत्र करने का समुचित अवसर समझा। उनके हृदय में देशभक्ति की जो आग जल रही थी, उस कारण उन्होंने क्रांतिकारी कदम उठाना ही श्रेयस्कार समझा जबकि गांधी तथा अन्य वरिष्ठ नेताओं का विचार था कि कुछ दिनों बाद अंग्रेजों का विचार बदलेगा और उन्हें स्वतंत्र कर देंगे। अपनी क्रांतिकारी योजना के कार्यान्वयन हेतु सुभाष बाबू विदेश दौरे पर निकले।

कलकत्ता में वर्धमान, पेशावर, काबुल होते हुए जर्मनी पहुंचे। सुभाष बाबू के निर्भीक साहसी व्यक्तित्व से हिटलर काफी प्रभावित हुआ। उसने उन्हें एक हवाई जहाज ओर रेडियो ट्रांसमीटर दिया। इसके बाद उन्होंने इटली और जापान की भी यात्रा की। वहां से भी सहायता प्राप्त होने लगी। ५ जुलाई १९४३ को उन्होंने आजाद हिन्द फौज की विधिवत स्थापना की। नेताजी के आह्वान पर हजारों हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई उनके झंडे के नीचे आ गए। केवल पुरुष ही नहीं वरन स्त्रियां भी इस फौज में शामिल हुई। उस फौज में चार ब्रिगेड, सुभाष ब्रिगेड और झांसी की रानी ब्रिगेड। फौज के गहन अभ्यास और अनुशासित होने के बाद नेताजी ने जय हिन्द और दिल्ली चलो का नारा दिया। सुसंगठित आजाद हिन्द फौज अपूर्व साहस और उत्साह के साथ कदम बढ़ाती जा रही थी। विजय पताका फहराती यह सेना कोहिमा, मणिपुर होती हुई असम में इम्फाल तक पहुंच गयी। अब दिल्ली की बारी थी किंतु भाग्य में कुछ और ही था। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी, जापान और इटली की पराजय होने लगी। जापान परमाणु बम से तहस-नहस हो गया। फिर भी स्वतंत्रता सैनिक महाराणा प्रताप की भांति घास की रोटी खाकर लड़ते रहे। इसी बीच अंग्रेजों ने सिंगापुर पर कब्जा कर लिया जिससे यह सेना बुरी तरह फंस गई और अनगिनत सैनिक वीरगति को प्राप्त हुए। विश्वास किया जाता है कि जब नेताजी वायुयान द्वारा बैंकाक से जापान जा रहे थे तो उनके विमान में आग लग गयी जिसमें उनकी मृत्यु हो गयी। इस आशय का समाचार रेडियो टोकियो ने १८ अगस्त १९४५ को प्रसारित किया था। एक कवि की ये पंक्तियां नेताजी के लिए बिल्कुल फिट बैठती हैं-

आज की इस संकटपूर्ण समय में अजय, साहसी और अपराजय शक्तिवाले भारतभू के इस सपूत की याद हमारे दिल में कसक पैदा करती है कि न जाने कब भारत मां के गर्भ से ऐसा मसीहा फिर पैदा होगा।

सच हर हाल में उभरकर सामने आता है। ६९ वर्ष बीतने के बाद ब्रिटेन को अहसास हुआ कि नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद फौज से उसका १९४४ में हुआ युद्ध सबसे बड़ी लड़ाई थी। बलिदानों की महान गाथा से जुड़ी इस लड़ाई को आजादी के बाद के वर्षों में कांग्रेस ने कभी महत्व नहीं दिया और यही प्रचार किया जाता रहा कि देश को अहिंसा के जरिये आजादी मिली। कभी यह नहीं बताया गया कि द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन के कमजोर हो जाने, आजाद हिंद फौज के बर्मा पार कर इम्फाल व कोहिमा (मणिपुर) तक पहुंच जाने और नौसेना की बाम्बे डाक यार्ड पर बगावत (म्यूटिनी) ऐसे कारण थे जिन्होंने अंग्रेजों को बोरिया-बिस्तर बांधकर भागने और भारत को आजाद करने पर विवश किया। यह बात अलग है कि यदि चुंबकीय व्यक्तित्व वाले सुभाष बाबू कामयाब होते तो भारत का विभाजन नहीं होने देते। धूर्त अंग्रेजों ने जिन्ना की जिद की आड़ लेकर और कांग्रेसजनों की सत्ता पाने की लालसा देखकर जाते जाते देश को विभाजन का दर्द दे दिया। नेताजी सुभाष चंद्र बोस जब जर्मनी से पनडुब्बी से जापान पहुंचे तो वहां उन्होंने जापानियों द्वारा युद्धबंदी बनाए गए ब्रिटिश आर्मी के भारतीय सैनिकों से भेंट की और उन्हें संगठित कर इंडियन नेशनल आर्मी (आईएनए) या आजाद हिंद फौज बनाई। इस फौज को नेताजी ने जयहिंद का नारा पं. नेहरू सहित हर प्रधानमंत्री ने १५ अगस्त को लालकिले की प्राचीर से लगाया। आजाद हिंद फौज वस्तुत: रासबिहारी बोस ने बनाई थी परंतु उन्हें कामयाबी नहीं मिल पाई थी। इसे सुभाष बाबू ने संगठित रूप दिया। इम्फाल और कोहिमा की लड़ाई में आजाद हिंद फौज ने काफी वीरता दिखाई लेकिन अंग्रेजों ने वायुसेना से बमबारी कर इसे पराजित कर दिया। अंग्रेज हुकूमत ने आजाद हिंद फौज के सेनानियों सहगल, ढिल्लो, शाहनवाज पर लालकिले में विशेष कोर्ट बनाकर राजद्रोह का मामला चलाया। इन

सेनानियों की वकालत करने पं. नेहरू ने फिर एक बार वकील की पोशाक पहनी थी। इन सभी को बरी करना पड़ा। शाहनवाज आगे चलकर केंद्र सरकार में मंत्री भी रहे।

तथ्यों को छुपाया गया- १९४५ में नेताजी की फारमोसा जाते समय विमान दुर्घटना में निधन होने की बात प्रचारित की गई जिस पर लोगों ने कभी विश्वास नहीं किया। बाद में नेताजी के रूस चले जाने और स्टालिन द्वारा साइबेरिया में कैद किए जाने की खबरें भी आईं। भारत सरकार ने न जाने किस दबाव में आकर नेताजी से जुड़े तथ्यों को सामने नहीं आने दिया। यह भी कहा जाता रहा कि ब्रिटेन की नजरों में नेताजी युद्धापराधी थे और इसके लिए उन पर नाजियों के समान मुकदमा चलता। जिस महान नेता के पीछे करोड़ों भारतीय हों, उन्हें कौन हाथ लगा सकता था? नेताजी की फौज में कैप्टन डॉ. लक्ष्मी सहगल भी थीं जिन्होंने बाद में डॉ. कलाम के खिलाफ राष्ट्रपति चुनाव लड़ा था। इसे ब्रिटिश सेना से जुड़ी अब तक की सबसे बड़ी लड़ाई घोषित किया गया है। उनका निधन १८ अगस्त को हुआ।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी सेनानी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष, आजाद हिंद फौज के सुप्रीम कमांडर, आईसीएस की परीक्षा में उत्तीर्ण करने के बाद सुभाष ने आईसीएस से इस्तीफा दिया। इस बात पर उनके पिता ने उनका मनोबल बढ़ाते हुए कहा- जब तुमने देशसेवा का व्रत ले ही लिया है, तो कभी इस पथ से विचलित मत होना। स्वतंत्रता के इस महान सेनानी को कोटि-कोटि प्रणाम!

खड़ा रहा जो अपने पथ पर लाख मुसीबत के आने में, मिली सफलता उसको जग में जीने में या मर जाने में।

बाल ठाकरे (जन्म- २३ जनवरी)

बालासाहेब केशव ठाकरे भारत के महाराष्ट्र राज्य के प्रसिद्ध राजनेता थे। उन्होंने शिवसेना नामक हिन्दू राष्ट्रवादी दल का गठन किया। वे महाराष्ट्र के शेर जाने जाते है। वे निर्भीक स्वभाव के थे।

जिन्हें जाना हो जाएं मैं अकेला ही काफी हूं

एक व्यंग चित्रकार तथा मराठी भाषियों के हित के लिए लड़नेवाली एकमेव राजनैतिक पार्टी शिवसेना के संस्थापक जिन्होंने अपनी कुशल तथा चपल राजनीति के वजह से संपूर्ण महाराष्ट्र में एक क्रांति लाई थी। जिसकी वजह से संपूर्ण भारत में बालासाहब ठाकरे हिंदू हृदय सम्राट के नाम से प्रसिद्ध हो गए। राजनीति में आने से पहले उन्होंने एक व्यंग चित्रकार के रूप में अंग्रेजी समाचार पत्र (फ्री प्रेस जनरल) को अपनी सेवाएं दी, परंतु वे जल्द ही इसे छोड़कर स्वयं की साप्ताहिक पत्रिका मार्मिक शुरू किए।

प्रबोधनकार ठाकरे के विचारों से प्रेरित होकर १९ जून १९६६ के दिन शिवतीर्थ पर शिवसेना नामक संगठन की स्थापना की गई। उन्होंने मराठी भाषिक लोगों के हित के लिए गैर मराठी भाषिक लोगों के खिलाफ आंदोलन किए, अपनी आवाज की अधिक बुलंद करने के लिए तथा अधिक से अधिक लोगों तक अपनी आवाज अपने विचार को पहुंचाने के लिए उन्होंने मराठी समाचार पत्र सामना को प्रकाशित किया तथा उसका संपादन भी किया। हिंदी भाषिक जनता के लिए दोपहर का सामना नामक समाचार पत्र प्रकाशित करके गैर मराठी जनता के दिलों में भी अपनी पकड़ मजबूत बना ली। महाराष्ट्र में मुंबई है पर मुंबई में महाराष्ट्र नहीं। ऐसा एक समय यशवंतराव चव्हाण ने कहा था। जब शिवसेना नहीं थी तब मराठी लोग ही जाति-पाति के बंधनों में फंसे हुए थे। जैसे ही बालासाहब ठाकरे ने आवाज लगायी सभी मराठी लोग भगवे

झंडे के नीचे इकट्ठा आए और हर एक मराठी इंसान शिवसैनिक बन गया। पूरी दुनिया में शिवसेना की एक अलग सी पहचान बनी। महाराष्ट्र में संविधान के शिल्पकार डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, ज्योतिबा फुले, शाहू महाराज जैसे अनेकों महापुरुषों ने महाराष्ट्र में सामाजिक, शैक्षणिक सुधार लाने का प्रयास किया। भारतीय संविधान ने तो जाति भेद को कानून से ही समाप्त कर दिया, किंतु फिर भी लोग जाति-पाति के बंधनों में जकड़े हुए थे। बालासाहब ठाकरे ने शिवसेना की स्थापना करके लोगों को जाति-पाति के वर्णभेद के बंधनों से मुक्त कराकर सभी को भगवे झंडे के नीचे लाकर महात्मा फुले, आंबेडकर, शाहू महाराज के सपनों को पूरा करने का प्रयास किया। शिवसेना का विस्तार करते समय बालासाहब ने नेतृत्व को महत्व दिया जाति को नहीं। वामनराव महाडिक सेना के पहले विधायक बने थे। उनकी पार्टी में शिवसैनिकों की निष्ठा व योग्यता को महत्व दिया जाता था और आज भी पार्टी के युवा नेता उद्धव ठाकरे के नेतृत्व में वही सिलसिला जारी है। शिवसेना का विस्तार करने के लिए उन्होंने पूरे महाराष्ट्र का दौरा किया। हेलीकाप्टर तथा हवाई जहाज के भारी भरकम खर्चे न करके उन्होंने सड़क मार्ग से महाराष्ट्र के लोगों को अपने विचारों से प्रेरित कर अपने साथ लेकर चले। मराठी युवकों में नई अस्मिता जागृत हुई और उन्हें मुंबई में ही नौकरी मिलने लगी और हजारों युवकों ने खुद के व्यवसाय शुरू किए। बहुराष्ट्रीय कंपनियों में भी मराठी युवक स्वाभिमान से जुड़ने लगे। फाईव स्टार होटलों में भी मराठी युवकों को नौकरी मिली। शिवसेना में आए हुए हजारों, लाखों नवयुवकों को बालासाहब ठाकरे ने जीने की नई सीख दी। समय के साथ शिवसेना का विस्तार इतना बढ़ गया कि अन्य राजनैतिक दल भी सेना का अस्तित्व मानने लगे। शिवसेना के विस्तार में कई गद्दार भी निकले। कुछ घर के, कुछ बाहर के, परंतु बालासाहब ठाकरे के पैर कभी डगमगाए नहीं। वे कहते जिन्हें जाना है वो जाओ, मैं अकेला ही काफी हूं। बाला साहब ठाकरे ने अनेक लोगों को बनाया और महाराष्ट्र में जब शिवसेना सत्ता में आई तो उन्हें मुख्यमंत्री के पद तक पहुंचाया। उन्हीं के प्रयासों से महापालिका, नगरपालिका, जिला परिषद के साथ-साथ पूरे महाराष्ट्र में शिवसेना की सत्ता स्थापित हुई। राज्य में ४० सालों की परंपरा को तोड़ दिया। सही अर्थ में शिवशाही का राज्य बालासाहब ने महाराष्ट्र में लाया और एक नया इतिहास रचा। पिछले ४० सालों में उन्होंने किसी को भी दु:ख नहीं पहुंचाया। उनके शब्दों में लाखों जनों को संजीवनी देने की ताकत थी। बालासाहब ठाकरे एकमेव ऐसे राजनेता थे जिनकी एक आवाज तथा एक इशारे पर संपूर्ण मुंबई ठहर सी जाती थी। अगर बात बालासाहब ठाकरे की करें तो वे एक निर्भीक स्पष्टवादी इंसान रहे, वे अपने जीवनकाल में कभी भी किसी के सामने नहीं झुके। वे लोगों को झुकानेवाले इंसान थे। बालासाहब ने जो भी ठान लिया उसको बिना अंजाम दिए चुप नहीं बैठे। शिवसेना उनकी अपनी ही पार्टी है, जो आज तक शिवतीर्थ पर दशहरे के दिन जोरदार रैली का आयोजन करती आ रही है। श्री ठाकरे का भाषण दम खम भरा हुआ होता था। उन्हें भाषण के दरम्यान बीच बीच में लोगों को हंसाने की शैली में महारथ हासिल थी। बालासाहब घंटों बोलते रहते, फिर भी समय का पता ही नहीं चलता। मुंबई के हिंदू, मुस्लिम, दंगों के दरम्यान बालासाहब हिंदुओं के मसीहा बनकर हिंदुओं को बचाया। श्री ठाकरे ही थे, जो दंगों के दरम्यान अपने शिवसैनिकों को हिंदू बस्तियों की रखवाली करने का आदेश दिया। उनके एक आदेश पर ही शिवसैनिक अपने प्राण न्योछावर करने को तैयार हो जाते। बालासाहब ठाकरे को महाराष्ट्र ही नहीं अपितु पूरा भारत हिंदू हृदय सम्राट कहता है। बालासाहब ठाकरे बेहद सरल स्वभाव के मिलनसार और सर्वगुण संपन्न व्यक्तित्व थे। उनके स्वभाव में हास्य व्यंग्य, करुणा, हाजिर जवाबी का संगम दिखाई

देता था। वे कभी किसी से भेदभाव नहीं किए, उन्हें जो भी अच्छा लगा, वे कर डाले। उनसे किसी ने पूछा, साहब संजय निरुपम को सांसद बनाने का क्या कारण था? साहब का दो टूक जवाब वो मुझे अच्छा लगा इसलिए मैंने उसे सांसद बना दिया। शिवसेना-भाजपा युति सरकार के दरम्यान श्री ठाकरे ने रिमोट कंट्रोल की भूमिका निभाते हुए सरकार पर पैनी नजर रख सरकार का कार्यकाल सुचारू ढंग से पूरा करवाया। श्री ठाकरे अपनी निर्भीकता दृढ़ता के लिए जाने जाते रहे, जब तक यह शेर रहा सदैव गर्जना करता रहा, इस शेर के हुंकार मात्र से ही विरोधियों को पसीना छूट जाता। एक ऐसा महान राजनेता तथा व्यंग चित्रकार जो करोड़ों लोगों के हृदय की धड़कन हिंदू हृदय सम्राट १७ नवंबर सन २०१२ के दिन इस संसार को अलविदा करके चले गए और हमें दे गए अपने अमूल्य विचार तथा एक शक्ति जो कि कभी समाप्त नहीं हो सकती। ऐसे परम पूज्यनीय महात्मा को मेरा शतश: नमन और वंदन है।

बालासाहेब केशव ठाकरे भारत के महाराष्ट्र राज्य के प्रसिद्ध राजनेता थे। उन्होंने शिवसेना नामक हिन्दू राष्ट्रवादी दल का गठन किया। बाल ठाकरे शिव सेना के मुखपत्र मराठी अखबार सामना और हिन्दी अखबार दोपहर के सामना के संस्थापक थे। उनका निधन १७ नवम्बर को हुआ।

कनिंघम (जन्म- २३ जनवरी)

अलेक्जॅन्डर कॅनिघम को भारत के पुरातत्त्व अन्वेषण का पिता कहा जाता है। कॅनिघम एक ब्रिटिश पुरातत्वशास्त्री तथा सेना में अभियांत्रिक पद पर नियुक्त थे। कॅनिघम को इनके योगदानों के लिए २० मई, १८७० को ऑर्डर ऑफ इंडियन एम्पायर से भी सम्मानित किया गया। १८८७ में इन्हें नाइट कमांडर ऑफ इंडियन एंपायर घोषित किया गया।

नरेन्द्र मोहन सेन (निधन- २३ जनवरी)

नरेन्द्र मोहन सेन भारत के प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक थे। अपनी शिक्षा बीच में ही छोड़कर ये अनुशीलन समिति में शामिल हो गए थे। बारीसाल षडयंत्र केस में नरेंद्र मोहन सेन को गिरफ्तार किया गया था और फिर बाद में १९१४ ई. में इन्हें नजरबंद कर दिया गया।

२४ जनवरी

कर्पूरी ठाकुर

२४ जनवरी १९२४ को कर्पूरी ठाकुर का जन्म गांव पितौझिया (अब कर्पूरी ग्राम) समस्तीपुर, बिहार में हुआ था। वे १८५२ से लगातार बिहार विधानसभा के सदस्य रहे, कुछ दिनों को छोड़कर फिर वे १९७७ में लोकसभा के सदस्य बने थे। दो बार बिहार के मुख्यमंत्री रहे। बिहार माध्यमिक परीक्षा से अंग्रेजी, जो एक अनिवार्य विषय था, को हटाया। उन्होंने वर्ष १९७८ में ही राज्य की नौकरियों में पिछड़ वर्गों को आरक्षण दिया। वे बिहार के पहले गैर-कांग्रेसी मुख्यमंत्री थे। उन्होने हमेशा समाज में शोषण और अन्याय के खिलाफ लड़ाई लड़ी। उनका निधन १७ फरवरी, १९८८ को हुआ था।

२५ जनवरी

माइकल मधुसूदन दत्त (जन्म- २५ जनवरी)

माइकल मधुसूदन दत्त बंगला भाषा के प्रसिद्ध कवि, साहित्यकार और नाटककार थे। माइकेल मधुसूदन बंगाल में अपनी पीढ़ी के उन युवकों के प्रतिनिधि थे, जो तत्कालीन हिन्दू समाज के राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन से क्षुब्ध थे। वे अतिशय भावुक व्यक्ति थे। यह भावुकता उनकी आरंभ की अंग्रेजी रचनाओं तथा बाद की बंगला रचनाओं में भी व्याप्त हुई।

राजेन्द्र अवस्था (जन्म- २५ जनवरी)

राजेन्द्र अवस्थी भारत के प्रसिद्ध साहित्यकार और पत्रकार थे। वे कादम्बिनी पत्रिका के सम्पादक थे। उन्होंने जहाँ एक पत्रकार के रूप में कई मापदण्ड स्थापित किये, वहीं अपने साहित्य सृजन में भी अद्भुत सफलता प्राप्त की थी। राजेन्द्र अवस्थी नवभारत, सारिका, नंदन और साप्ताहिक हिन्दुस्तान के सम्पादक भी रहे थे। उन्होंने कई चर्चित उपन्यासों, कहानियों एवं कविताओं की रचना की। वह ऑथर गिल्ड ऑफ इंडिया के अध्यक्ष भी रहे थे।

अनंता सिंह (निधन- २५ जनवरी)

अनुंता सिंह भारत के प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक थे। वे अपने साथी क्रांतिकारियों में बम तथा बन्दूक की गोलियाँ आदि बनाने में कुशल थे। चटगाँव कांड के फलस्वरूप अनंता सिंह के कई साथियों को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया था। जब उन्हें इस घटना का पता चला तो वे स्वयं पुलिस के समक्ष उपस्थित हो गये। आजीवन कारावास के तहत उन्हें १९३२ में अंडमान की जेल भेज दिया गया, जहाँ से वे १९४६ में रिहा हुए।

२६ जनवरी

रानी गाइदिनल्यू (जन्म- २६ जनवरी)

रानी गाइदिनल्यू भारत की प्रसिद्ध महिला क्रांतिकारियों में से एक थीं। उन्होंने देश को आजादी दिलाने के लिए नागालैण्ड में अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों को अंजाम दिया। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के समान ही वीरतापूर्ण कार्य करने के लिए इन्हें नागलैण्ड की रानी लक्ष्मीबाई कहा जाता है। जब रानी गाइदिनल्यू को अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण अंग्रेजों ने गिरफ्तार कर लिया, तब पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कई वर्षों की सजा काट चुकीं रानी को रिहाई दिलाने के प्रयास किए। किंतु अंग्रेजोबं ने उनकी इस बात को नहीं माना, क्योंकि वे रानी से बहुत भयभीत थे और उन्हें अपने लिए खतरनाक मानते थे।

माधव श्रीहरि अणे (निधन- २६ जनवरी)

माधव श्रीहरि अणे भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाले स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। माधव श्रीहरि अणे लोकमान्य तिलक से अत्यधिक प्रभावित थे। ये कुछ समय तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य भी रहे। गाँधी जी के नमक सत्याग्रह के समय इन्होंने भी जेल की सजा भोगी। १९४३ से १९४७ ई. तक ये श्रीलंका में भारत के उच्चायुक्त भी

रहे। आजादी प्राप्त करने के बाद इन्हें बिहार का राज्यपाल भी बनाया गया था।

मानवेन्द्र नाथ राय (निधन- २६ जनवरी)

मानवेन्द्र नाथ राय वर्तमान शताब्दी के भारतीय दार्शनिकों में क्रांतिकारी विचारक तथा मानवतावाद के प्रबल समर्थक थे। इनका भारतीय दर्शनशास्त्र में भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मानवेन्द्र नाथ राय ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान क्रांतिकारी संगठनों को विदेशों से धन व हथियारों की तस्करी में सहयोग दिया था। सन १९१२ ई. में वे हावड़ा षडयंत्र केस में गिरफ्तार भी कर लिये गए थे। सन १९२२ ई. में बर्लिन से द लैंगार्ड ऑफ इंडियन इण्डिपेंडेंन्स नामक समाचार पत्र भी इन्होंने निकाला। कानपुर षडयंत्र केस में उन्हें छह वर्ष की सजा हुई थी।

स्वराज, लोकतंत्र, लोकतंत्र दिवस

भारतीय इतिहास में वंशवाद का वर्चस्व रहा है। भारत भले ही विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश होने का दंभ भरता हो, किंतु भारतीय मानसिकता आजादी के बावजूद भी कहीं न कहीं आग्रह से ग्रस्त हैं। वंशवाद न सिर्फ एक रूढ़ितंत्र है, बल्कि सामान्य-जन से उठकर पनपनेवाली प्रतिभाशाली नेतृत्व की क्षमतावाली नई पीढ़ी के अवसरों को छीनने की दारुण व्यथा भी है। मुट्ठीभर लोग पूरे देश का भविष्य तय करते हैं, जनता उनको ऐसा करने के लिए भेजना चाहती है। तब पीढ़ियों से चले आ रहे अनुभव की दुहाइयां देकर अंततोगत्वा उसे ही सौंप दी जाती है। वंशवाद के कारण नई विचारधारा पैदा नहीं हो पाती। वंशवाद के कारण राजनीति में आपराधिक प्रवृत्ति के लोग आ गये हैं।

भले ही लोग २६ जनवरी के मायने गणतंत्र दिवस मात्र समझते हो परंतु भारतीय इतिहास में २६ जनवरी के कई मायने हैं। २६ जनवरी के दिन अनेक ऐसी घटनायें हुई जो ऐतिहासिक होने के कारण इतिहास में आज भी दर्ज हैं। २६ जनवरी सन १९३० को लाहौर के रावी नदी के तट पर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत में पूर्ण स्वराज्य की घोषणा की थी और उस दिन को स्वराज्य दिवस के रूप में देशवासियों ने मनाया था। इसी कारण भारतीय संविधान लागू करने के लिए २६ जनवरी सन १९६० को चुना गया और इस दिन को गणतंत्र दिवस के रूप में मनाने की शुरुआत की गई।

२६ जनवरी सन १८५७ को जम्मू एवं कश्मीर की संवैधानिक व्यवस्था लागू की गई और २६ जनवरी सन १९६९ को मद्रास राज्य का नाम तमिलनाडु के रूप में परिवर्तित किया गया। अतीत के आईने में झांके तो २६ जनवरी १९६४ को राजा बीसल देव ने दिल्ली पर जीत हासिल की थी जबकि अलाउद्दीन खिलजी २६ जनवरी १२९९ को दिल्ली के किले की नाकेबन्दी करने में कामयाब हुए थे। मुगल सम्राट बाबर की मृत्यु २६ जनवरी १५३० को होने के कारण इसे शोक दिवस के रूप में भी कुछ दिनों तक मनाया गया। यह भी संयोग ही है कि बाबर के बेटे हुमायूं की मृत्यु भी २६ जनवरी के ही दिन सन १५५६ को हुई थी।

जिस बादशाह शेरशाह सूरी के नाम से कोलकत्ता से पेशावर तक सड़क बनाई गई थी। उसी बादशाह शेरशाह सूरी ने २६ जनवरी सन १५३९ को हुमायूं पर विजय पाई थी। बादशाह अकबर को २६ जनवरी १५५४ को सलीम के रूप में पुत्र की प्राप्ति हुई थी तो बादशाह नादिर शाह ने भी दिल्ली पर आक्रमण करने के लिए २६ जनवरी १७२० का ही दिन चुना था। मुगल सुल्तान टीपू ने २६ जनवरी १७९२ को अंग्रेजों के युद्ध के दौरान दांत खट्टे किये थे। वही २६ जनवरी १२६४

को नसीरउद्दीन महमूद की मृत्यु के कारण यह तिथि इतिहास में दर्ज हुई।

२६ जनवरी १८५३ में अंग्रेजों ने काबुल में पहली बार दस्तक दी थी तो २६ जनवरी १८५३ को भारत में यात्री रेल की शुरूआत हुई थी। कोलकत्ता से मुम्बई के बीच पहली रेल भी २६ जनवरी १८६१ को चलाई गई थी। २६ जनवरी १९९३ को देश में निजी बैंक खोलने की शुरूआत की गई तो २६ जनवरी को ही जनगण मन अधिनायक गीत को राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त हुआ था। तभी तो २६ जनवरी के भारतीय इतिहास में बड़े मायने हैं और २६ जनवरी का दिन हम राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाते हैं।

प्रतिवर्ष २६ जनवरी को हम गणतंत्र दिवस के रूप में मनाते है। गणतंत्र दिवस हमें हमारे लोकतांत्रिक अधिकारों और मूल्यों का सम्मान करने का स्मरण दिलाता है। २६ जनवरी १९५० को हमने नया संविधान लागू किया था और इसी दिन हमने देश में लोकतांत्रिक और संधीय शासन-व्यवस्था अंगीकार की थी। भारत ने एक सार्वभौम स्वयंप्रभुता संपन्न लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में विश्व के समक्ष अपनी पहचान बनाई। अनेक समानताओं-असमानताओं के बीच हमने एक आशाजनक भविष्य की गौरव गाथा लिखनी शुरू कर दी है। आज हमें विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश होने का गौरव प्राप्त है, इसके साथ ही हमारा लोकतंत्र क्रमश: परिपक्वता की ओर बढ़ रहा है। आज हम लोकतंत्र और उसमें असहमति की अहमियत समझने लगे हैं। लोकतांत्रिक शासनव्यवस्था में व्यक्ति की स्वतंत्रता सुरक्षित रहती है और वह खुलकर जी सकता है। यह लोकतंत्र की ही देन है कि हम सही का समर्थन और गलत का विरोध कर सकते हैं, चुनाव में अपने मताधिकार का प्रयोग सही प्रत्याशी का चुनाव करने में कर सकते हैं। आज भारतीय समाज परिवर्तन की प्रक्रिया से गुंजर रहा है। प्रसार माध्यम भी जाग्रत हो चुके हैं और जनता भी जाग गई है। युवा सोच का विकास हो रहा है। शिक्षा और प्रौद्योगिकी में धीरे-धीरे तेजी से प्रगति हो रही है। हम नित नये आयाम निर्मित कर रहे हैं जिसके चलते शासन और प्रशासन में भ्रष्टाचार के खिलाफ भय का वातावरण बन चुका है। सूचना के अधिकार ने जहां लोगों को जाग्रत किया है वहीं लोकपाल बिल को लेकर एक सकारात्मक भावना जाग्रत हुई है। पिछले कुछ वर्षों में देश का युवा जागरूक हुआ है, जिससे एक नये भारत का उदय हो रहा है।

गणतंत्र दिवस २६ जनवरी को मनाया जाता है क्योंकि ७० वर्ष पहले २६ जनवरी १९५० को देश का संविधान लागू हुआ था और देश में शासन की लोकतांत्रिक संधीय प्रणाली स्वीकार की गई थी। लोकतांत्रिक प्रणाली का अर्थ है कि देश का शासन जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधि परस्पर सहमति और सहयोग से चलाएं, ऐसी अपेक्षा की जाती है। संधीय प्रणाली का अर्थ है कि देश का प्रत्येक राज्य अपनी प्रगति और विकास करने के लिए निश्चित दायरे में रहकर निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र है। भारतीय संवधिान में केंद्र और राज्यों के कार्यक्षेत्रों और अधिकारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है। इसके लिए केन्द्र सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के रूप में विषयों का विभाजन किया गया है। केन्द्र सूची में ऐसे तमाम विषयों को शामिल किया गया है जिन पर निर्णय लेने और कानून बनाने का अधिकार केन्द्र सरकार को है। राज्यों को राज्यसूची में दिए विषयों पर निर्णय लेने और संबंधित राज्य की आशाओं आकांक्षाओं और आवश्यकताओं के अनुसार योजनाएं और कानून बनाने का अधिकार है। समवर्ती सूची में ऐसे तमाम विषय शामिल किए गए है, जिन पर योजनाएं बनाने और तत्संबंधी निर्णय लेने के लिए केंद्र और राज्यों के

बीच सहमति और समन्वय आवश्यक है। हमारे देश में शासन की संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था है। इसमें एक सशक्त केन्द्र की व्यवस्था है, जो राज्यों के विकास में योगदान करने के साथ ही उनके बीच के विवादों को हल करने और उन्हें एक साथ जोड़े रखकर देश की अखंडता को अक्षुण्ण रखने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। देश की बाहरी और आंतरिक सुरक्षा, विदेश नीति, अर्थव्यवस्था आदि विषय देखना केंद्र का उत्तरदायित्व है। सक्षम और शक्तिशाली केन्द्र देश की सुरक्षा और समृद्धि के लिए आवश्यक है। सौभाग्यवश इस समय केन्द्र में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एक मजबूत सरकार है और हम आशा करते हैं वह अपनी नीतियों और निर्णयों से देश को न केवल प्रगति और समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर करेगी, बल्कि विश्व मंच पर उसे गौरवपूर्ण स्थान भी दिलाएगी।

भारत के आधुनिक इतिहास में २६ जनवरी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। २६ जनवरी १९५० को ही देश का संविधान लागू हुआ और वह संसदीय स्वरूप के साथ एक संप्रभुताशाली समाजवादी लोकतांत्रिक गणतंत्र के रूप में सामने आया। तब से २६ जनवरी को देश में गणतंत्र दिवस के रूप भारी उत्साह के साथ मनाया जाता है। यह हमारा राष्ट्रीय पर्व है। भारत का संविधान लागू किए जाने के पहले भी २६ जनवरी का महत्व था। ३१ दिसंबर १९२९ को मध्यरात्रि में राष्ट्र को स्वतंत्र बनाने की पहल करते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने लाहौर में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अपने अध्यक्षीय भाषण में घोषणा की थी कि यदि अंग्रेज सरकार २६ जनवरी १९३० तक भारत को उपनिवेश का दर्जा नहीं प्रदान करेगी तो देश अपने को पूर्ण स्वतंत्र घोषित कर देगा। २६ जनवरी १९३० तक जब ब्रिटिश सरकार ने ऐसी घोषणा नहीं की तो कांग्रेस ने उसी दिन पूर्ण स्वतंत्रता के अपने निश्चय की घोषणा कर दी। उसी दिन से कांग्रेस अपना सक्रिय आंदोलन शुरू किया। लाहौर अधिवेशन में पहली बार तिरंगा झंडा फहराया गया और उसी दिन सर्वसम्मति से यह महत्वपूर्ण निर्णय भी लिया गया कि प्रतिवर्ष २६ जनवरी का दिन पूर्ण स्वराज दिवस के रूप में मनाया जाएगा। इस तरह २६ जनवरी का दिन अघोषित रूप से भारत का स्वतंत्रता दिवस बन गया था। उस दिन से १५ अगस्त १९४७ को स्वतंत्रता प्राप्त होने तक २६ जनवरी को स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाया जाता रहा। २६ जनवरी १९५० को देश का संविधान लागू किया गया और संविधान में भारत के गणतंत्र स्वरूप को मान्यता प्रदान की गई। कभी भारत का पूर्ण स्वराज दिवस के रूप में मनाया जानेवाला दिन अब देश का गणतंत्र दिवस बन गया था। तब से आज तक हर वर्ष २६ जनवरी को पूरे राष्ट्र में बड़े गर्व और हर्षोल्लास के साथ गणतंत्र दिवस मनाया जाता है। इस दिन भारतीय सेना द्वारा राष्ट्रपति को दी जानेवाली २१ तोपों की सलामी देश के वैभव, सामर्थ्य और क्षमता का प्रदर्शन करती है। हर भारतीय को इस झांकी पर गर्व होता है।

गणतंत्र दिवस हर भारतीय के लिए बहुत मायने रखता है। यह दिन हम सभी के लिए बहुत महत्व का दिन है जिसे हम बेहद ही उत्साह के साथ मनाते हैं। भारत एक महान देश है और सिर्फ भारत में ही विविधता में ही एकता देखने को मिलती है। जहां विभिन्न जाति और धर्म के लोग प्यार से रहते हैं। २६ जनवरी और १५ अगस्त दो ऐसे राष्ट्रीय दिवस हैं जिन्हें हर भारतीय खुशी और उत्साह के साथ मनाता है।

गणतंत्र दिवस की पहली परेड १९५५ को दिल्ली के राजपथ पर हुई थी। भारतीय संविधान की दो प्रतिया जो हिन्दी और अंग्रेजी में हाथ से लिखी गई। भारतीय संविधान की हाथ से लिखी मूल प्रतियां संसद भवन के पुस्तकालय में सुरक्षित रखी हुई हैं। भारत के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने गवर्नमेंट हाऊस में २६ जनवरी १९५० को शपथ ली थी। गणतंत्र

दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति तिरंगा फहराते हैं और हर साल २१ तोपों की सलामी दी जाती है। २९ जनवरी को विजय चौक पर बीटिंग रिट्रीट सेरेमनी का आयोजन किया जाता है जिसमें भारतीय सेना, वायुसेना और नौसेना के बैंड हिस्सा लेते हैं। यह दिन गणतंत्र दिवस के समारोह के समापन के रूप में मनाया जाता है। गणतंत्र दिवस के मौके पर प्रधानमंत्री अमर ज्योति पर शहीदों को श्रद्धांजलि देते हैं जिन्होंने देश के आजादी में बलिदान दिया।

हम गर्व से अपने मातृभूमि को ऐसा प्रभुसत्ता संपन्न गणतंत्र बताते हैं जो दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। लोकतंत्र और गणतंत्र शब्दों में बेशक तकनीकी अंतर हो लेकिन भारत में दोनों एकाकार हैं। इस देश की सबसे छोटी इकाई ग्राम पंचायत के पंच और उसके मुखिया से देश का मुखिया (राष्ट्रपति) तक के हर पद लोकतांत्रिक पद्धति से निर्वाचित होते हैं। बेशक साम्राज्यवादी शक्तियां लगातार हमें सपेरों और मदारियों का देश कहकर हतोत्साहित करती रही लेकिन वे भी मानते हैं कि गण और तंत्र की इस युगलबंदी का पाठ सारी दुनिया को हमने ही पढ़ाया है।

सैकड़ों वर्षों तक आक्रांताओं से लुटते, पिटते, भिड़ते, जीतते, हारते रहने के बाद अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति मिलना इस देश के गण की ही विजय है लेकिन स्वयं को दुनिया का सर्वाधिक सभ्य समाज बतानेवाले जो आज तक राजशाही के बंदी हैं, अंग्रेजों ने हमारे गौरव को खंडित करने का आखिरी प्रयास तब किया जब आजादी के नाम देश को दुनिया का सबसे बड़ा रक्तपात से सना बंटवारा और ऐसा शरारती पड़ोसी दे गये जहां लोकतंत्र और गणतंत्र फौजी जूतों तले लगातार कराहा रहा है लेकिन २६ जनवरी १९५० को पुन: गणतंत्र बना भारत लगातार सत्ता से मुद्रा तक का परिवर्तन सहजता से स्वीकार करता रहा है।

बेशक गण ने हर चुनाव में तंत्र को जांचा, परखा और आवश्यक होने पर उसे उखाड़ फेंका लेकिन तंत्र की विश्वसनीयता निश्चित रूप से घटी है। लोकतंत्र में धनबल, बाहुबल और परिवारवाद की घुसपैठ बढ़ी है। कानून का शासन और कर्तव्य परायणता अपनी कसौटी पर खरे साबित नहीं हुए। उन पर भाई-भतीजावाद, अकर्मण्यता, भ्रष्टाचार हावी है। यह भी सत्य है कि देश में कानूनों की कमी नहीं हैं, नित नये भी बनते रहते हैं परन्तु ईमानदारी से क्रियान्वयन वाले अध्याय के अनेक पन्ने गायब हैं। देश का धन विदेशी बैंकों में जाता रहा है तो शरारती पड़ोसी नकली नोट भेजकर हमारे तंत्र को चुनौती देता रहा। इसका प्रतिकार करने तथा गण को सबल बनाने के लिए पिछले दिनों तंत्र ने अनेक कठोर फैसले लिए। लेकिन आज भी अवैध हथियारों संग आतंकवादी, नक्सलवादी और न जाने कौन कौन देश के हर कोने तक अपनी पैंठ बनाये हुए हैं तो केवल इसीलिए कि तंत्र में अभी भी अनेक काली भेड़ें मौजूद हैं जिनकी आंखें बंद है।

तंत्र एक कार्य पूरी निष्ठा से कर रहा है, वह कार्य है इस देश को भारत और इण्डिया में विभाजित करना। देश में दोहरी शिक्षा प्रणाली है तो दोहरी स्वास्थ्य व्यवस्था भी। सुरक्षा के अलग अलग मापदंड हैं तो बिजली, पानी, सड़क जैसी आवश्यक सुविधाओं की उपलब्धता भी एक जैसी नहीं है। पिछड़े क्षेत्रों का अंधेरा और अमीरों की बस्ती की जगमगाहट कहीं भी देखी जा सकती है। दुर्भाग्य से ये दोहरे मापदंड किसी एक दल के शासन तक सीमित नहीं रहे।

मूर्ख युवराज और मेधावी युवा का बेरोजगार होना तंत्र की ईमानदारी और कार्यकुशलता पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। स्पष्ट है कि जनता जनार्दन नहीं, बेचारी है। जनता के लिए बने अस्पतालों में इलाज के नाम पर लंबी लाइनें हैं। रेल के सामान्य डिब्बे में पैर रखने की जगह नहीं। बसें बेबस हैं। शिक्षा प्रणाली गण के लिए अलग और तंत्र के लिए अलग है। तभी तो

सरकारी स्कूलों की एक कक्षा में सौ छात्र, टूटे कमरे, पीने का पानी नहीं, सफाई का अभाव, अर्थव्यवस्था हैं तो दूसरी नकल से टापर बनाने का शिक्षा माफिया है। लाखों की वार्षिक फीसवाले पंचसितारा स्कूल भी तंत्र का हिस्सा बने हुए हैं। भ्रष्टाचार और कालेधन अब तक लगातार फलता फूलता रहा तो क्या यह तंत्र की निष्क्रियता अथवा मिली भगत के बिना संभव नहीं था? आज भी कालेधन को रोकने की दौड़ जीतने की कामना करनेवाला तंत्र कड़े नियमों की जंजीरों को खोलने से संकुचा रहा हैं। जब जब गण से कर वसुली के अनेक केंद्र हो तो उसका तंत्र से दूरी बनाना स्वाभाविक है, यानी जनार्दन गण नहीं, तंत्र है। निरपराध गण अपराधबोध से ग्रस्त है। इसे गणतंत्र की पूर्ण सार्थकता हर्गिज नहीं माना जाा सकता। गुण्डे, आतंकी, नक्सली और उनके दलाल फल-फूल रहे हैं क्योंकि तंत्र इन पर गन तानने से डरता है जबकि शरीफ आदमी के लिए गणतंत्र गनतंत्र बना हुआ है। प्रथम गणतंत्र दिवस अर्थात २६ जनवरी १९५० जिस दिन संविधान लागू हुआ था उसकी भी हमारे तंत्र ने कहा लाज रखी है।

बौद्ध साहित्य में उल्लेख है कि एक बार महात्मा बुद्ध से पूछा गया कि गणराज्य की सफलता के सूत्र कैसे हों तो उन्होंने सात सूत्र दिये थे- जल्दी जल्दी सभाएं करना जिसमें अधिकतम सदस्यों की सहभागिता हो, राज्य के कामों को मिलजुल कर पूरा करना, कानूनों का पालन करते हुए समाज विरोधी नियमों कानूनों से दूरी बनाना, अनुभवी वृद्धों के विचारों का सम्मान करना, महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार न करना, स्वधर्म में दृढ़ विश्वास रखना, अपने कर्तव्य का पालन करना।

भारत के आधुनिक इतिहास में २६ जनवरी का विशेष महत्व है। भारत सरकार के संसदीय रूप के साथ एक संप्रभुताशाली समाजवादी लोकतांत्रिक गणतंत्र के रूप में भारत का उदय हुआ और उसी समय से २६ जनवरी को भारत के गणतंत्र दिवस के रूप में भारी उत्साह के साथ देशभर में मनाया जाता है। १५ अगस्त १९४७ को भारत ने अंग्रेजों की दासता की जंजीरों से मुक्त होकर स्वतंत्रता के मुक्त वातावरण में सांस ली थी। इसके ८९४ दिन बाद २१ तोपों की सलामी के बाद भारतीय राष्ट्रध्वज को फहरा कर देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद थे। क्रांतिकारी आंदोलन ने कहा यदि २६ जनवरी १९३० तक भारत को उपनिवेश का दर्जा नहीं प्रदान करता है तो भारत अपने को पूर्ण स्वतंत्र घोषित कर देगा। २६ जनवरी १९३० तक जब अंग्रेज सरकार ने कुछ नहीं किया तो कांग्रेस ने उस दिन पूर्ण स्वतंत्रता के अपने निश्चय की घोषणा की और अपना सक्रिय आंदोलन शुरू कर दिया। कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में ही पहली बार तिरंगा झंडा फहराया गया। इस दिन सर्वसम्मति से एक और महत्वपूर्ण फैसला यह लिया गया था कि प्रतिवर्ष २६ जनवरी अघोषित रूप से भारत का स्वतंत्रता दिवस के रूप में ही मनाया जाता रहा। यह एक संयोग ही था कि कभी भारत का पूर्ण स्वराज दिवस के रूप में मनाया जानेवाला दिन अब भारत का गणतंत्र दिवस बन गया है। इसके बाद स्वतंत्रता प्राप्ति के वास्तविक दिन १५ अगस्त को स्वतंत्रता दिवस के रूप में स्वीकार किया गया। यही वह दिन था जब १९६५ में हिंदी को भारत की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया।

प्रति वर्ष २६ जनवरी को बड़ी धूमधाम से मनाया जानेवाला गणतंत्र दिवस भारत का सबसे बड़ा राष्ट्रीय त्यौहार है। इस दिन राष्ट्रपति इंडिया गेट पर भारत के सभी राज्यों से आए हुए प्रतिनिधियों तथा भारतीय सेना की तीनों शाखाओं की सलामी लेते हैं। अनेक प्रकार की सुंदर झांकियां निकाली जाती हैं। नाच-गाने, बैंड-बाजे, हाथी, उंट और घोड़ों की सवारियां, टैंक, तोप, समुद्री जहाज, हवाई जहाज आदि के नमूने कृषि और उद्योग की झांकियां, स्कूली बच्चों के विविध

कार्यक्रम इस अवसर पर आयोजित किए जाते हैं। गणतंत्र दिवस के अवसर पर आयोजित परेड में किसी अन्य देश के राष्ट्रप्रमुख को बुलाए जाने की परंपरा है। इस दिन राष्ट्रपति के हाथों विभिन्न क्षेत्रों में विशेष उल्लेखनीय कार्य करनेवाले विशिष्ट व्यक्तियों के सम्मानित किए जाने की भी परंपरा है। गणतंत्र दिवस हमें हमारे गणतांत्रिक देश के लिए उसका संविधान बहुत मायने रखता है। उसका संविधान ही उसे वे सभी अधिकार और कानून मुहैया करवाता है, जिसकी बदौलत देश अपनी गणतांत्रिक व्यवस्था को चलाता है।

अब जबकि हम स्वतंत्र भारत का ७०वां गणतंत्र दिवस मना रहे हैं तो बहुत सी समानताओं और असमानताओं के बीच हमने एक आशाजनक भविष्य की गौरव-गाथा लिखनी शुरू की है। विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश होने का गर्व है तो हमारा लोकतंत्र भी क्रमश: परिपक्वता की ओर बढ़ रहा है। हम पहले से अधिक जागरूक हुए हैं और लोकतंत्र की अहमियत भी समझने लगे हैं। केवल लोकतांत्रिक व्यवस्था में ही व्यक्ति खुलकर जी सकता है। केवल लोकतंत्र में ही ऐसा संभव है कि हम सही बातों का समर्थन और गलत बातों का विरोध कर सकते हैं। चुनाव में अपने मत का सही प्रयोग करके एक सही प्रतिनिधि का चुनाव कर सकते हैं और उससे अपनी व्यवस्था को मजबूत कर सकते हैं। हमारा समाज बदल रहा है। प्रसार माध्यम भी जागृत हो रहे हैं। जनता जाग गई है और युवा सोच का विकास हो रहा है। शिक्षा और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हम नित नए आयाम गढ़ रहे हैं, जिसके कारण शासन व प्रशासन में भ्रष्टाचार के खिलाफ एक भय का वातावरण बन चुका है। सूचना के अधिकार ने जहां लोगों को जागृत किया है, वहीं लोकपाल बिल को लेकर भी लोगों में एक भावना जागृत हुई है। इस समय एक नए भारत का उदय हो रहा है, जिसमें युवाओं की तादाद बढ़ गई। जोश और जुनून से भरा युवावर्ग भारत में बदलाव चाहता है। यह सही है कि भारतीय लोकतंत्र में अभी भी कई दूषण हैं। पर उसमें कई प्रशंसनीय विशेषताएं भी हैं। हमारा चुनाव आयोग निष्पक्ष रहा है और सबसे बड़ी बात यह है कि लोग चुनाव-परिणामों को नतमस्तक होकर स्वीकार करते हैं। भारत में तख्तपटलट का मार्ग अहिंसक है। इसमें सेना तटस्थ रहती है। भारत में निचले और गरीब माने जानेवाले लोगों ने भी राजनीति में भाग लेकर और अपनी पार्टी बनाकर अपनी अहमियत साबित की है। दलित आंदोलन और महिला सशक्तीकरण हमारे लोकतंत्र के दो उज्ज्वल पक्ष हैं। अलबत्ता उस दिशा में हमें अभी बहुत कुछ करना है, पर इसकी शुरूआत हो चुकी है, यह कम खुशी की बात नहीं है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। हमारे यहां जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता के लोगों की ही सरकार चुनी जाती है। इसलिए संसद व विधानसभाओं के लिए चुनाव होते हैं। लोकसभा या विधानसभा में जिस दल को बहुमत मिलता है, उसकी सरकार बनती है। लेकिन पिछले कुछ सालों में राजनैतिक दलों की संख्या इतनी बढ़ गई है कि केंद्र तथा बहुत से राज्यों में एक दल को बहुमत नहीं मिल पा रहा है जिसके कारण मिले-जुले दलों की सरकारें बन रही हैं। मिली जुली सरकार की स्थिरता की संभावना कम होती है तथा दल बदल की वजह से सरकार गिरने का खतरा हमेशा मंडराता रहता है। मिली जुली सरकार में छोटे दलों की मनमानी की वजह से बड़ा दल अपनी नीति लागू नहीं कर पाता। इसके अलावा अपराधी भी चुनकर आने लगे हैं और मंत्री तक बन जाते हैं। उसके अलावा और भी अनेक खामियां हैं जिसके कारण लोकतंत्र से लोगों का विश्वास भी डगमगा रहा है। चुनाव लड़ना इतना महंगा हो गया है कि सीधा-सच्चा आदमी चुनाव लड़ नहीं सकता। लोकतंत्र को मजबूत करने तथा लोगों का भरोसा इसमें रहे, संसद/विधानसभा का

चुनाव लड़ने के लिये शैक्षिक योग्यता जरूर होनी चाहिए। चाहे बी.ए., एम.ए. न हो लेकिन अनपढ़ भी नहीं होना चाहिए। चुनाव लड़नेवाले के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता जरूर निर्धारित की जानी चाहिए। संसद/विधानसभा का चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम आयु निर्धारित है लेकिन अधिकतम आयु निर्धारित नहीं है, इसलिए ऐसे लोग भी चुन लिए जाते हैं जोशारीरिक रूप से सक्षम नहीं होते। अधिकतम आयु ७०-७५ जो भी हो, निर्धारित होनी चाहिए।

राजनैतिक दलों को नियम बनाना चाहिए कि वे किसी भी अपराधी को टिकट नहीं देंगे। सरकार को नियम बनाना चाहिए कि जिस व्यक्ति पर अपराधिक मामला दर्ज हो, चाहे फैसला न हुआ हो, उन्हें चुनाव में भाग लेने की अनुमति नहीं होनी चाहिए। एक व्यक्ति को एक ही क्षेत्र से चुनाव लड़ने की अनुमति होनी चाहिए। अगर कोई व्यक्ति संसद/विधायक चुन लिया जाये तो उसे जब तक उसकी सदस्यता की अवधि पूरी न हो जाये, चुनाव लड़ने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। लोकसभा या विधानसभा का चुनाव हार चुके व्यक्ति को राज्यसभा या विधान परिषद का सदस्य बनाकर जबदरस्ती जनता पर नहीं थोपना चाहिए। हारे हुये व्यक्ति को राज्यपाल या किसी आयोग या संस्था का अध्यक्ष भी नहीं बनाया जाना चाहिए। राष्ट्रीय दलों को लोकसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं का चुनाव लड़ने की अनुमति होनी चाहिए। लेकिन क्षेत्रीय दलों को केवल उसी राज्य की विधानसभा का चुनाव लड़ने की अनुमति होनी चाहिए जिस राज्य में उसका अस्तित्व है। ऐसा करने से दलों की संख्या कम होगी तथा एक पार्टी की सरकार का मार्ग प्रशस्त होगा। बहुउद्देशीय चुनावपत्र प्रत्येक नागरिक का पूर्ण जांच पड़ताल करके बनाया जाना चाहिए ताकि विदेशी की पहचान हो सके? चुनाव अनिवार्य होना चाहिए। जो व्यक्ति अपने क्षेत्र में नहीं है, उसे डाक द्वारा या वीडियो के जरिए या अन्य किसी माध्यम से वोट देने की अनुमति होनी चाहिए। चुनाव जीतने के बाद दल-बदल की अनुमति नहीं होनी चाहिए। अगर कोई दल बदल करना चाहता है तो पहले वह अपनी सदस्यता से इस्तीफा दें तथा फिर जिस दल में जाना चाहता है उसमें सम्मिलित हो तथा उस दल से चुनाव लड़े। ५० प्रतिशत मत प्राप्त करनेवाले उम्मीदवार को ही विजयी घोषित किया जाना चाहिए। अगर चुनाव से पहले दलों ने गठबंधन किया हो तथा मिलकर चुनाव लड़ा हो, तभी चुनाव बाद उन्हें सरकार बनाने की इजाजत होनी चाहिए। चुनाव खर्च सरकार को उठाना चाहिए। दूरदर्शन, रेडिया, अखबार के द्वारा ही लोगों को उम्मीदवार के बारे में बताया जाना चाहिए। अन्य सभी तरह के प्रचार की मना होनी चाहिए। संसद/विधानसभाओं में सदस्यों की भाग लेने की अनिवार्यता होनी चाहिए। ऐसा नियम बनाया जाना चाहिए कि संसद/विधानसभपा का सत्र चले तथा सदस्य उपस्थित रहे। विशेष परिस्थिति में ही अनुपस्थित होने की छूट होनी चाहिए। ये कुछ ऐसे सुझाव हैं अगर उन्हें लागू किया जाये तो लोकतंत्र को मजबूत करने में सहायता मिलेगी।

२८ जनवरी

पंजाब केसरी लाला लजपतराय

भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम मे ब्रिटिश सल्तनत की लाठियों से वीरगति को प्राप्त अमर वीर बलिदानी लाला लाजपतराय का जन्म पंजाब प्रांत के फिरोजपुर जिले के धुडिके नामक गाँव मे २८ जनवरी, १८६५ को हुआ था। पिता लाला राधाकिशनजी शासकीय पाठशाला मे उर्दू के शिक्षक थे। लालाजी अत्यंत कुशाग्र बुद्धि संपन्न मेधावी छात्र थे। विद्यार्थी

जीवन मे अनेक महत्वपूर्ण पुरस्कार अर्जित करते हुए सन् १८८० मे उन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण की तथा उसी वर्ष पंजाब विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा मे भी सफल हुए और लाहौर के शासकीय विश्वविद्यालय मे प्रवेश ले लिया। देशभक्त महापुरुषों की जीवनी एवं आत्मकथाओं को पढ़कर स्वातंत्र्य प्रेम एवं देश सेवा की उत्कट आकांक्षा उन्ही दिनों उनके मन मे उत्पन्न हुई। सन् १८८६ मे लाला जी वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करके हिसार मे आकर वकालत करने लगे। धनोपार्जन करके आरामदायक जीवन बिताना उनका ध्येय नही था, उनका मन तो क्रान्तिकारी देशभक्तों के जीवनादर्शों को आत्मसात करने के लिए व्याकुल रहता था। सन् १८८८ मे लालाजी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस मे सम्मिलित होकर पार्टी का ध्यान जनता की मूल समस्याओं, निर्धनता और निरक्षरता की ओर आकर्षित किया। जिस समय ब्रिटिश सरकार की शक्ति अपनी चरम सीमा पर थी उस समय लाला जी द्वारा उसका खुला विरोध करना उनकी निर्भीकता एवं अद्वितीय साहस का ही परिचायक था। ८ नवंबर १९२७ को ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने भारत के लिए आवश्यक प्रशासनिक सुधारो के संबंध मे रिपोर्ट देने के लिए सात सदस्यीय आयोग नियुक्त किया, जिसका अध्यक्ष सर जॉन सायमन था, इस आयोग मे किसी भारतीय प्रतिनिधि के न होने के कारण भारतीय राजनीतिज्ञों ने इसे देश के लिए अपमानजनक मानकर इसके बहिष्कार का निर्णय लिया और ३० अक्टूबर, १९२८ को आयोग के सदस्य जब लाहौर पहुँचने वाले थे तो वहाँ इनका विरोध साइमन कमीशन वापस जाओ के नारो एवं काले झण्डो से किया गया। लाला जी के नेतृत्व मे इन शांत प्रदर्शनकारियों पर ब्रिटिश सैनिकों ने लाठीचार्ज प्रारंभ कर दिया। इसी समय सांडर्स नामक पुलिस अधिकारी ने लाला जी पर भी लाठी से जोरदार प्रहार किए। लाठीचार्ज से आई गंभीर चोटों के कारण लालाजी अस्वस्थ रहते हुए १७ नवंबर, १९२८ को स्वर्गवासी हो गए। सद्गुणनिधान अमर हुतात्मा लाला लाजपतराय का जीवन अद्वितीय कार्यकुशलता, अविश्रांत परिश्रम एवं प्रखर राष्ट्रभक्ति का जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करता है।

शेर ए पंजाब की शहादत ने युवाओं में भरी थी आजादी की नई उमंग

पंजाब केसरी और शेर ए पंजाब जैसे नामों से जाने जानेवाले लाला लाजपत राय भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास का एक अमिट नाम हैं। उन्होंने न सिर्फ देश की आजादी के लिए लड़ाई लड़ी, बल्कि शिक्षा के प्रसाद के लिए कई शिक्षण संस्थाओं की स्थापना भी की। २८ जनवरी १८६५ को जन्मे लाला लाजपत राय ने अपनी शिक्षा दीक्षा के बाद वकालत को पेशे के रूप में अपनाया। इतिहासकार एचके कौशल के अनुसार पढ़ाई के दिनों में स्वतंत्रता सेनानियों की संगत ने लाला लाजपत राय को भी महान स्वतंत्रता सेनानी बना दिया। लाला हंसराज और पंडित गुरुदत्त जैसे स्वतंत्रता सेनानियों ने उन पर गहरा असर छोड़ा। लाजपत राय पर दयानंद सरस्वती का गहरा प्रभाव था। १८८८ और १८८९ में वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक सम्मेलनों में प्रतिनिधि के रूप में हुए। शेर ए पंजाब ने १८९५ में पंजाब नेशनल बैंक की स्थापना में मदद की। उन्होंने सन १९०० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की बैठक में रचनात्मक और आत्मविश्वास से भरी राष्ट्र निर्माण गतिविधियों पर जोर दिया। लाजपत राय ने १९१७ में न्यूयार्क में इंडियन होम रूल लीग की स्थापना की। १९२० में अमेरिका से लौटने के बाद उन्हें कांग्रेस के कोलकाता अधिवेशन की अध्यक्षता करने के लिए आमंत्रित किया गया। इसमें रोलट एक्ट के जवाब में असहयोग आंदोलन छेड़ने का फैसला किया गया। पंजाब में इस आंदोलन की अगुवाई लाला लाजपत राय ने की और इसके साथ ही वह पंजाब केसरी कहलाने लगे। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर चमन लाल के अनुसार तीस अक्टूबर १९२८ को साइमन कमीशन के सदस्यों के लाहौर पहुंचने पर लाला लाजपत राय के नेतृत्व में एक शांतिपूर्ण प्रदर्शन किया गया, लेकिन तत्कालीन पुलिस अधीक्षक स्कॉट के आदेश पर

पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर बर्बर लाठीचार्ज किया। इस लाठीचार्ज में लाजपत राय को निशाना बनाकर उनके सीने पर बुरी तरह वार किए गए। इस निर्मम हमले में घायल लाजपत राय १७ नवम्बर १९२८ को वीरगति को प्राप्त हो गए। इस घटना ने देश के नौजवानों के मन में ब्रितानिया हुकूमत के खिलाफ रोष भर दिया। इसी घटना का बदला लेने के लिए भगत सिंह और उनके साथियों ने स्कॉट को मारने की योजना बनाई, लेकिन गलती से सहायक पुलिस अधीक्षक जेपी सांडर्स मारा गया। महान स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही लाला लाजपत राय एक जाने माने लेखक भी थे। उन्होंने यूनाइटेड स्टेट ऑफ अमेरिका (ए हिन्दूज इंप्रेशंस एंड ए स्टडी, हिस्ट्री ऑफ आर्य समाज, स्वराज एंड सोशल चेंज, इंग्लैंड्स डैब्ट टू इंडिया) इंडिया और प्रॉब्लम्स ऑफ नेशनल एजुकेशन इन इंडिया जैसी पुस्तकें लिखीं।

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय और लोकमान्य तिलक ने ही सबसे पहले देश को यह पाठ सिखाया था कि आजादी मांगने से नहीं मिलेगी, प्रार्थनाओं और प्रस्तावों से नहीं मिलेगी, आजादी के लिए लड़ना होगा, कुर्बानी करनी होगी। जीवन-भर वीरतापूर्वक लड़ने के कारण ही उन्हें देश ने पंजाब का शेर कहा था।

जन्म से लाजपत राय साधारण घर के थे। आजीविका के लिए उन्होंने वकालत पास की, लेकिन कभी भी वकालत से धन कमाकर आराम से बैठने की इच्छा नहीं की। अपने जन्म-स्थान हिसार से १८९२ में लाहौर आने के बाद उनका अधिकांश समय आर्य समाज के शिक्षणात्मक तथा सुधार संबंधी कार्यों को सफल बनाने में बीतता था। उन दिनों पंजाब में आर्य समाज ही सार्वजनिक कार्यों में अग्रणी संस्था थी। पंजाब के सभी नवयुवक आर्य समाज के प्रगतिशील आदर्शों और नई सुधार-योजनाओं से आकर्षित हो रहे थे। लाला हंसराज ने अपने जीवन की बलि देकर दयानंद एंग्लो-वैदिक कॉलेज का बीज बोया था। उनकी भाषण शैली पर जनता मुग्ध थी। उनकी सिंह-गर्जना श्रोताओं के दिल पर जादू का असर करती थीं। उनसे प्रभावित होकर पुरुष अपनी जेबें खाली कर देते थे, स्त्रियां आभूषण उतारकर प्रसन्नतापूर्वक दान कर देती थीं। राष्ट्रीय दृष्टि से जनता के साथ संपर्क बनाने के काम को अंग्रेजी सरकार के अफसर पसन्द नहीं करते थे। किन्तु लाजपत राय को उनकी प्रसन्नता-अप्रसन्नता की चिंता नहीं थी। आखिर वह दिन भी आ गया, जब जनता के साथ संबंध स्थापित करने का फल उन्हें भुगतना पड़ा। रावलपिंडी के किसानों को सरकार की लगानवृद्धि की नीति से असंतोष था। किसानों ने रावलपिंडी के वकीलों की सहायता ली। वकीलों ने किसानों का पक्ष लिया। लाजपत राय भी किसानों की पैरवी करने लाहौर से रावलपिंडी गए।

वहां जिला मजिस्ट्रेट से कहा-सुनी हो गई। लालाजी अपमान सहनेवाले व्यक्ति नहीं थे। मजिस्ट्रेट के उत्तर में उन्होंने भी कड़े शब्द कह दिए। मजिस्ट्रेट ने रावलपिंडी के वकीलों को गिरफ्तार करके जेल भिजवा दिया। लाजपत राय पर उस समय तो कोई अभियोग नहीं लगाया गया, किन्तु बाद में बंगाल रेगुलेशन के अनुसार उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। रावलपिंडी के वकीलों के मामले की जांच पंजाब हाईकोर्ट के जज मि. मांटेग्ये ने की, जिसने उन सबको छोड़ दिया, किन्तु लाला लाजपत राय को गिरफ्तार करके मांडले भेज दिया गया। साइमन कमीशन के प्रति विरोध प्रदर्शित करने के लिए लाहौर की जनता लाहौर रेल्वे स्टेशन की ओर उमड़ पड़ी थी। लालाजी सबसे आगे थे। हथियारबंद पुलिस ने चारों ओर जनता को घेर लिया था। कमीशन के आने पर जनता ने काले झण्डों से कमीशन का स्वागत किया। पुलिस ने निर्दयता से लाठियां बरसाईं। लाला लाजपत राय का स्वास्थ्य पहले ही कुछ अच्छा नहीं था, फिर भी उन्होंने जनता का साथ दिया। लाठियों से घायल लाला लाजपत राय ने अन्ततः प्राण त्याग दिए।

२८ जनवरी १८६५ को महान स्वतंत्रता सेनानी पंजाब केसरी लाला लाजपत राय का जन्म मोगा (पंजाब) में हुआ

था। उन्होंने बालगंगाधर तिलक और विपिनचंद्र पाल के साथ मलिकर सबसे पहले पूर्ण स्वतंत्रता की मांग उठायी थी। वे तीनों लाल-बाल-पाल के नाम से जाने जते हैं। वे एटक (एआईटीयूसी) के पहले अध्यक्ष थे। स्वामी दयानंद के साथ मिलकर पंजाब में आर्य समाज को लोकप्रिय बनाया और डीएवी स्कूल-कॉलेज की स्थापना की। साइमन कमीशन के विरुद्ध आंदोलन के दौरान अंग्रेजों के लाठी प्रहार से घायल हुए और १७ नवंबर १९२८ को शहीद हो गए।

लाला लाजपत राय को भारत के महान क्रांतिकारियों में गिना जाता है। आजीवन ब्रिटिश राजशक्ति का सामना करते हुए अपने प्राणों की परवाह न करनेवाले लाला लाजपत राय को पंजाब केसरी भी कहा जाता है। लालाजी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गरम दल के प्रमुख नेता तथा पूरे पंजाब के प्रतिनिधि थे। उन्हें पंजाब के शेर की उपाधि भी मिली थी।

लाला लाजपत राय को भारत के महान क्रांतिकारियों में गिना जाता है। आजीवन ब्रिटिश राजशक्ति का सामना करते हुए अपने प्राणों की परवाह न करनेवाले लाला लाजपत राय को पंजाब केसरी भी कहा जाता है। लालाजी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गरम दल के प्रमुख नेता तथा पूरे पंजाब के प्रतिनिधि थे। उन्हें पंजाब के शेर की उपाधि भी मिली थी। लालाजी की पंजाब में वही स्थान प्राप्त है, जो महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक को प्राप्त है। इन्होंने कानून की शिक्षा प्राप्त कर हिसार में वकालत प्रारम्भ की। कालान्तर में स्वामी दयानंद के सम्पर्क में आने के कारण लाला जी आर्य समाज के प्रबल समर्थक बन गये। यहीं से इनमें उग्र राष्ट्रीयता की भावना जागृत हुई। लाला जी को पंजाब में वही स्थान प्राप्त था, जो महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक को। अपने अंतिम भाषण में उन्होंने कहा- मेरे शरीर पर पड़ी एक-एक चोट ब्रिटिश साम्राज्य के कफन की कील बनेगी। इस चोट ने कितने ही ऊधमसिंह और भगतसिंह तैयार कर दिए, जिनके प्रयत्नों से हमें आजादी मिली।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में अविस्मरणीय पंजाब केसरी लाला लाजपतराय का सिर पर पुलिस की लाठी के कारण हुए जख्म से १९२८ में निधन हुआ था। पंजाब के अग्रवाल वैश्य कुल में २८ जनवरी १८६५ को जन्मे लालाजी अति तीव्र बुद्धि के थे और शिक्षण काल में अपनी प्रतिभा के बल पर स्कॉलरशिप प्राप्त की थी। शिक्षण काल में ही इनका परिचय आर्य समाजी नेता गुरुदत्त से हुआ और उनके प्रभाव से ये समाज सुधार के काम में लग गए। शिक्षा के प्रसार में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान हे। उन्होंने अनेक विद्यालय खुलवाए।

लालाजी उचित कामों में धन खर्च करने में कभी भी पीछे नहीं रहते थे। वे दयालुता और दानवीरता के प्रतीक माने जाते थे। एक बार कुछ लोग किसी जनहितकारी काम में सहयोग प्राप्ति की इच्छा लेकर उनके पास गए। लालाजी उस वक्त घूमने जानेवाले थे। बग्गी घर केसामने खड़ी थी। अंधेरा होनेवाला था, सो उन्होंने कोचवान से बग्गी की बत्ती जला लेने को कहा। बत्ती जलाने के क्रम में कोचवान ने माचिस की आठ-दस तीलियां नष्ट कर दीं। यह देख लालाजी उस पर बिगड़े कि व्यर्थ ही इतनी तीलियां नष्ट हो गईं जबकि बत्ती सावधानी से जलाई जाती तो एक ही तीली से जल जाती। दान मांगने आए लोग खड़े-खड़े यह देख रहे थे। उनके मन निराशा से भरने लगे कि इस कंजूस से उन्हें कुछ भी मिलने की संभावना नहीं। पर बग्गी तैयार होते ही वे उसमें बैठ गए और आगंतुकों को भी साथ ही बैठा लिया। फिर उनके आने का प्रयोजन पूछा। आगंतुकों ने डरते-डरते अपनी योजना उन्हें बताई और यह भी बताया कि वे आर्थिक सहयोग प्राप्ति की उम्मीद लेकर आए थे। लालाजी ने उनकी बात ध्यान से सुनी और तुरंत उन्हें दस हजार का चेक दिया। माचिस की चंद तीलियों के लिए कोचवान पर कुपित होनेवाले लालाजी का दयालु रूप देखकर वे चकित हो गए। लालाजी ने उन्हें समझाया कि मुझे फिजूलखर्ची पसंद नहीं है। जो काम एक तीली से संभव है, उसके लिए दस तीलियां क्यों खर्च की जाएं।

स्वाधीनता संग्राम के बड़े सेनानियों में लाला लाजपतराय का नाम भी बड़े आदर के साथ लिया जाता है। स्वतंत्रता

सेनानी कई प्रकार के हुए हैं। प्रथम वे जो आजादी की लड़ाई लड़ने के आरोप में अंग्रेज सरकार द्वारा फांसी के फंदे पर लटका दिए गए। द्वितीय वे जिन्हें लम्बी-लम्बी सजाएं अथवा काले पानी का दण्ड दिया गया। तृतीय वे जिन्होंने प्रत्यक्ष रूप से नहीं बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से स्वाधीनता का युद्ध अपनी कलमों द्वारा लड़ा। काले पानी की सजा पानेवालों में लालाजी भी एक थे जिन्होंने काले पानी की यंत्रणाएं सहन की पर उफ तक न की। उन्होंने देश की गुलामी से मुक्ति दिलवाने के लिए हजारों कष्ट सहे पर कभी अंग्रेजों के आगे झुके नहीं।

लाहौर आकर उन्होंने आर्य समाज प्रचार के आंदोलन में बढ़ चढ़ कर भाग लिया जिसके परिणाम स्वरूप उनका नाम सारे पंजाब में लोगों की जुबां पर आने लगा। वे प्रसिद्धि के शिखर पर पहुंच गए। जनता उनका आदर करने लगी और उन्हें नेता मानकर उनके द्वारा निर्धारित मार्ग पर पग बढ़ने लगी।

कहने को लालाजी कांग्रेसी थे पर उनके विचार नरम दल के नेताओं से विपरीत थे। वे क्रांतिकारी स्वभाव के होने के बावजूद भी गांधी जी का आदर करते थे। लालाजी एक महान वक्ता थे और हमेशा हिन्दुस्तानी में बोला करते थे। जब कभी वे भाषण देते थे तो श्रोता उनके शब्दों में जादू में बंध जाया करते।

१९१९ में भारत के शासन विधान में अंग्रेज सरकार ने कुछ सुधार किए पर ये सुधार इतने कम तथा अधूरे थे कि कोई भी इनसे संतुष्ट नहीं था। ब्रिटिश सरकार ने भारत को वचन दिया था कि १० वर्ष के पश्चात सरकार को अगर महसूस हुआ कि भारतवासी अपनी स्वतंत्रता को संभालने के काबिल हैं तो उन्हें स्वतंत्रता दी जाएगी। इसी वचन को निभाने के लिए इंग्लैंड पार्लियामेंट ने एक कमीशन की नियुक्ति की पर इस साइमन कमीशन नामक कमीशन में एक भी भारतीय सदस्य नहीं था जो एक तरह से भारत का अपमान था। इसलिए भारत के लोगों नें इस कमीशन का बहिष्कार करने का निश्चय किया। जहां जहां भी यह साइमन कमीशन गया वहां पर इसका स्वागत काली झंड़ियों से तथा साइमन कमीशन वापस जाओ के नारों से दिया गया। इस कारण से सरकार क्रोध से भर उठी और उसने बर्बरता के साथ इन प्रदर्शनों को दबाने की भरपूर कोशिश की पर जनता कब झुकनेवाली थी। प्रदर्शनों का जोर ज्यों का त्यों बना रहा। साइमन कमीशन ३० अक्टूबर १९२८ को लाहौर पहुंचा। लाला जी का गढ़ भी लाहौर था। यह कैसे हो सकता था कि यहां लाला जी का गढ़ हो और वहां पर कमीशन का स्वागत न हो। काली झंडियों के साथ, साइमन वापस जाओ के नारे लगाते हुए लोगों का जन समूह जुलूस की सूरत में निकल पड़ा था अपने घरों से। सरकार ने धारा १४४ लागू कर दी पर जनता ने इस धारा की कहां परवाह की। कमीशन का बहिष्कार करने के लिए स्टेशन पर अपार भीड़ थी। इस बड़े जनमसूह का नेतृत्व स्वयं लाला जी कर रहे थे। घुड़सवार पुलिस जुलूस का रास्ता रोक कर खड़ी थी। अचानक जुलूस में भगदड़ मच गई थी क्योंकि पुलिस ने लाठियां बरसानी आरंभ कर दी थी पर लालाजी सबसे आगे तनकर खड़े थे। पुलिस कप्तान साण्डर्स ने एक गोरे सिपाही को लालाजी पर लाठियां बरसाने का हुक्म दिया। फिर क्या था। तड़ातड़-तड़ातड़ उस गोरे सिपाही ने लाला जी पर अनगिनत लाठियों के प्रहार किये। एक भरपूर लाठी का प्रहार उनकी छाती पर पड़ा और वे धरती पर कटे वृक्ष की भाँति गिर पड़े। शाम को एक विशाल सभा का आयोजन किया गया जिसमें लाला जी ने भाषण दिया जो उनके जीवन का अंतिम भाषण बन गया। उन्होंने गरजते हुए कहा था। मेरे जिस्म पर पड़ी, अंग्रेज सरकार की एक-एक लाठी की चोट, अंग्रेजी साम्राज्य के ताबूत में एक एक कील बनेगी। उनकी यह बात १९ वर्षों के पश्चात अक्षरश: सत्य सिद्ध हुई थी।

उस दिन के पश्चात उन्हें ज्वर ने पकड़ लिया। सत्रह दिन तक बीमार रहने के बाद १९२८ की १७ नवंबर को वे सदा-सदा के लिए सो गए। सदा गरजते रहनेवाला एक शेर हमेशा हमेशा के लिए खामोश हो गया। भारत की स्वतंत्रता की

क्रांतिकारी लड़ाई का एक चिराग बुझ गया। उनके पश्चात आज तक पंजाब में अन्य कोई ऐसा नेता नहीं हुआ जो उनका स्थान ले सके।

के.एम. करिअप्पा (जन्म- २८ जनवरी)

के.एम. करिअप्पा भारत के पहले नागरिक थे, जिन्हें प्रथम कमाण्डर इन चीफ बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। करिअप्पा ने जनरल के रूप में १५ जनवरी, १९४९ ई. को पद ग्रहण किया था। इसके बाद से ही १५ जनवरी को सेना दिवस के रूप में मनाया जाने लगा। करिअप्पा भारत की राजपूत रेजीमेन्ट से सम्बद्ध थे। १९५३ ई. में करिअप्पा सेवानिवृत्त हो गये थे, लेकिन फिर भी किसी न किसी रूप में उनका सहयोग सेना को सदा प्राप्त होता रहा।

२९ जनवरी

महाराणा प्रताप (निधन- २९ जनवरी)

महाराणा प्रताप का नाम भारतीय इतिहास में वीरता और दृढ़ प्रतिज्ञा के लिए अमर है। वे उदयपुर, मेवाड़ में सिसोदिया राजवंश के राजा थे। वह तिथि धन्य है, जब मेवाड़ की शौर्य-भूमि पर मेवाड़-मुकुट मणि राणा प्रताप का जन्म हुआ। वे अकेले ऐसे वीर थे, जिसने मुगल बादशाह अकबर की अधीनता किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं की। वे हिन्दू कुल के गौरव को सुरक्षित रखने में सदा तल्लीन रहे। महाराणा प्रताप की जयंती विक्रमी सम्वत कॅलण्डर के अनुसार प्रतिवर्ष ज्येष्ठ, शुक्ल पक्ष तृतीया को मनाई जाती है। महाराणा प्रताप प्रजा के हृदय पर शासन करनेवाले थे। एक आज्ञा हुई और विजयी सेना ने देखा उसकी विजय व्यर्थ है। चित्तौड़ भस्म हो गया, खेत उजड़ गये, कुएँ भर दिये गये और ग्राम के लोग जंगल एवं पर्वतों में अपने समस्त पशु एवं सामग्री के साथ अदृश्य हो गये। शत्रु के लिये इतना विकट उत्तर, यह उस समय महाराणा की अपनी सूझ है। अकबर के उद्योग में राष्ट्रीयता का स्वप्न देखनेवालों को इतिहासकार बदायूँनी आसफ खाँ के ये शब्द स्मरण कर लेने चाहिये- किसी की ओर से सैनिक क्यों न मरे, थे वे हिन्दू ही और प्रत्येक स्थिति में विजय इस्लाम की ही थी। यह कूटनीति थी अकबर की और महाराणा इसके समक्ष अपना राष्ट्रगौरव लेकर अडिग भाव से उठे थे।

मुगल काल में जब राजपुताना के अन्य शासकों ने मुगलोंसे संधि कर ली थी तब मेवाड़ की भूमि पर जिस सूर्य का उदय हुआ उसका नाम था प्रताप। माता से मेवाड़ी परंपरा और शौर्य की गाथा सुनकर प्रताप का मन बचपन से ही मातृभूमि की भक्ति में लग गया और उन्होंने अपना जीवन राष्ट्र, कुल और धर्म की रक्षा के लिए अर्पित कर दिया। अकबर से पराजित होने और जंगलों में भटकने के बाद भी उनका साहस नहीं टूटा और महाराणा ने चित्तौड़गढ़ वापस प्राप्त किया और राजपूतों की शान फिर से बढ़ाई।

राज्यवर्धन सिंह राठौड (जन्म- २९ जनवरी)

राज्यवर्धन सिंह राठौड़ भारत के प्रसिद्ध निशानेबाज हैं। अगस्त २००४ में होनेवाले एथेंस ओलंपिक में १७ अगस्त को एक नए खिलाड़ी ने नया कीर्तिमान स्थापित किया था, उसने आजाद भारत को पहला ओलंपिक रजत पदक दिलाया। किसी व्यक्तिगत स्पर्धा में मिलनेवाला रजत पदक भारत को राज्यवर्धन सिंह राठौड़ की बंदूक से मिला। स्वतंत्र भारत में भारत को प्रथम रजत पदक स्वतंत्रता के ५७ वर्ष पश्चात मिला था। उनसे पहले ब्रितानी मूल के भारत में जन्मे नॉर्मन

प्रिचर्ड ने १९०० ग्रीष्मकालीन ओलम्पिक में दो रजत पदक जीते थे।

सरला ग्रेवाल (निधन- २९ जनवरी)

सरला ग्रेवाल भारतीय प्रशासनिक सेवा में भारत की दूसरी महिला अधिकारी थीं। उन्होंने पंजाब के अन्तर्गत अनेक महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर कार्य किया था। सरला ग्रेवाल १९५६ में शिमला की डिप्टी कमिश्नर बनाई गई थीं। वे देश में इस पद पर दायित्व निभानेवाली पहली महिला अधिकारी थीं। १९६३ में वे पंजाब सरकार के स्वास्थ्य विभाग की सचिव नियुक्त हुई थीं। सरला ग्रेवाल मध्य प्रदेश के राज्यपाल पद पर भी रहीं।

देश का पहला अंग्रेजी अखबार

२९ जनवरी १७८० को देश का पहला अंग्रेजी अखबार बंगाल गजट प्रकाशित हुआ था। यह चार पेज का अखबार हुआ करता था और सप्ताह में एक बार ही प्रकाशित होता था। एक अंग्रेज जेम्स अगस्ट्न हिकी ने कोलकाता कोलकाता से इसे प्रकाशित किया था। इस अखबार को हिकीज गजट भी कहा जाता है। वे भारत के पहले पत्रकार थे जिन्होंने प्रेस की स्वतंत्रता के लिए ब्रिटिश सरकार से संघर्ष किया।

भ्रष्टाचार का विरोध और ब्रिटिश शासन की आलाचेना करने के कारण इस अखबार को जब्त कर लिया गया था। २३ मार्च १७८२ को इसका प्रकाशन बंद हो गया।

जोगेन्द्र नाथ मंडल (जन्म- २९ जनवरी)

जोगेन्द्र नाथ मंडल बंगाल के प्रसिद्ध समाज सुधारक और राजनीतिज्ञ थे। इन्हें सुभाष बाबू की मदद से कोलकाता नगरपालिका के लिए चुना गया था। वर्ष १९३७ में जोगेन्द्र नाथ जी को कांग्रेस ने जिला कौंसिल में मनोनीत किया था। जोगेन्द्र नाथ जी ने सभी वर्गों के लिए बराबर संघर्ष किया। एक समाज सुधारक के रूप में इन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों और भेदभाव आदि का सदा विरोध किया था।

३० जनवरी

सी. सुब्रह्मण्यम (जन्म- ३० जनवरी)

अन्न उत्पादन में भारत की आत्मनिर्भरता के प्रणेता- भारत जैसे विशाल देश में हरित क्रांति की शुरुआत करनेवाले भारत रत्न चिदम्बरम सुब्रमण्यम ने कृषि उत्पादन के मामले में देश की आत्मनिर्भरता की बुनियाद तैयार की थी। रूढ़िवादी राजनेता की छवि वाले सुब्रह्मण्यम ने कृषि के पुराने तौर-तरीकों से अलग हटकर देश को काश्तकारी की नई तकनीक से जोड़ा और विदेशी उन्नत बीजों को देश में बोकर खुशहाली की फसल लहलहाई। वरिष्ठ राजनेता और पूर्व केन्द्रीय मंत्री वसंत साठे ने बातचीत में सुब्रह्मण्यम के योगदान का जिक्र करते हुए कहा कि कृषि मंत्री के रूप में सुब्रह्मण्यम ने देश को अन्न उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के लिये ठोस बुनियाद दी। उन्होंने बताया कि चिदम्बरम देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के निकटस्थ राजनेताओं में गिने जाते थे और नेहरू भी उन्हें यूं ही तरजीह नहीं देते थे। नेहरू के प्रधानमंत्री काल के दौरान ऐसी स्थिति थी कि भारत को अमेरिका और कनाड़ा से पीएल

४८० किस्म का गेहूं आयात करना पड़ता था जो निकृष्ट किस्म का होता था। साठे ने बताया कि नेहरू ने देश में गेहूं के उत्पादन की कमी को दूर करने की जिम्मेदारी सुब्रह्मण्यम को सौंपी थी और उनसे उत्पादन और खत की खाई पाटने के उपाय करने को कहा था। साठे ने बताया कि सुब्रह्मण्यम ने देश में हरित क्रांति लाने के लिये द्विआयामी योजना बनाई थी। उनकी योजना का पहला हिस्सा खेतों के अंतिम छोर तक पानी पहुंचाना था और दूसरा भाग उन्नत बीजों का इस्तेमाल सुनिश्चित करना था। उन्होंने बताया कि सुब्रह्मण्यम के प्रयत्नों से बांधों का पानी खेतों में पहुंचा और किसानों को एक के बजाय दो-तीन फसलें मिलने लगीं। बाद में उन्हीं के प्रयासों से हाईब्रिड बीजों और बेहतर किस्म के उर्वरक का इस्तेमाल शुरू हुआ। इन तमाम प्रयासों की वजह से वर्ष १९७२ में देश में गेहूं का रिकॉर्ड उत्पादन हुआ जिसे देश में हरित क्रांति का नाम दिया गया। साठे ने बताया कि नेहरू के सत्ता से हटने के बाद प्रधानमंत्री बनीं इंदिरा गांधी के शासनकाल में भी देश में कृषि के क्षेत्र में सुब्रह्मण्यम की भूमिका बनी रही। मतभेद की वजह से अलग होने के बावजूद इंदिरा गांधी ने काश्तकारी के मामले में सुब्रह्मण्यम की ही नीतियों को आगे बढ़ाया और देश ने अन्न उत्पादन की दिशा में अनेक उपलब्धियां हासिल कीं। तीस जनवरी १९१० को कोयम्बटूर के सेनगुट्टेपलयम गांव में जन्मे चिदम्बरम सुब्रमण्यम वर्ष १९५२ से १९६२ तक तमिलनाडु सरकार में शिक्षा, कानून एवं वित्त मंत्री रहे। वर्ष १९६२ में लोकसभा के लिये चुने जाने के बाद उन्हें पहले इस्पात एवं खनन और बाद में १९६५ में कृषि जैसा महत्वपूर्ण मंत्रालय सौंपा गयां वह योजना आयोग के उपाध्यक्ष भी रहे। समर्थकों के साथ-साथ वैचारिक विरोधियों में भी बेहद सम्मान की नजरों से देखे जाने वाले सुब्रह्मण्यम के योगदान को देखते हुए सरकार ने उन्हें वर्ष १९९८ में भारत रत्न से सम्मानित किया। सात नवम्बर २००० को उन्होंने अंतिम सांस ली।

चिदम्बरम सुब्रह्मण्यम भारत में हरित क्रांति के पिता कहे जाते हैं। जब भारत को आजादी प्राप्त हुई, उस समय देश में खाद्यान्न उत्पादन की स्थिति बड़ी शोचनीय थी। कई स्थानों पर अकाल पड़े। बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा में अनेक लोग भुखमरी के शिकार हुए और काल का ग्रास बन गये। जब सी. सुब्रह्मण्यम को केन्द्र में कृषि मंत्री बनाया गया, तब उन्होंने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाने के लिए अनेक योजनाएँ क्रियान्वित कीं। उनकी बेहतर कृषि नीतियों के कारण ही १९७२ में देश में रिकॉर्ड खाद्यान्न उत्पादन हुआ। सी. सुब्रह्मण्यम की नीतियों और कुशल प्रयासों से ही आज देश खाद्यान्न उत्पादन में पूर्ण रूप से आत्म-निर्भर हो चुका है।

जयशंकर प्रसाद (जन्म- ३० जनवरी)

जयशंकर प्रसाद हिन्दी नाट्य जगत और कथा साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। कथा साहित्य के क्षेत्र में भी उनकी देन महत्वपूर्ण है। भावना प्रधान कहानी लिखने वालों में जयशंकर प्रसाद अनुपम थे। प्रसाद जी का जीवन कुल ४८ वर्ष का रहा है। इसी में उनकी रचना प्रक्रिया इसी विभिन्न साहित्यिक विधाओं में प्रतिफलित हुई कि कभी कभी आश्चर्य होता है। कविता, उपन्यास, नाटक और निबन्ध सभी में उनकी गति समान है। किन्तु अपनी हर विद्या में उनका कवि सर्वत्र मुखरित है। वस्तुत: एक कवि की गहरी कल्पनाशीलता ने ही साहित्य को अन्य विधाओं में उन्हें विशिष्ट और व्यक्तिगत प्रयोग करने के लिये अनुप्रेरित किया।

अमृता शेरगिल (जन्म- ३० जनवरी)

अमृता शेरगिल खूबसूरत चित्रकारी करनेवाले चित्रकारों में से एक थीं। अमृता शेरगिल ने कैनवास पर भारत की एक नई तस्वीर उकेरी। अपनी पेंटिंग्स के बारे में अमृता का कहना था- मैंने भारत की आत्मा को एक नया रूप दिया है। यह परिवर्तन सिर्फ विषय का नहीं, बल्कि तकनीकी भी है। अमृता ने इस प्रकार के यथार्थवादी चित्रों की रचना की थी, जिनकी सारे संसार में चर्चा हुई।

माखनलाल चतुर्वेदी (निधन- ३० जनवरी)

माखनलाल चतुर्वेदी सरल भाषा और ओजपूर्ण भावनाओं के अनूठे हिन्दी रचनाकार थे। इन्होंने हिन्दी एवं संस्कृत का अध्ययन किया। ये कर्मवीर राष्ट्रीय दैनिक के संपादक थे। इन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। इनका उपनाम एक भारतीय आत्मा है। राष्ट्रीयता माखन लाल चतुर्वेदी के काव्य का कलेवर है तथा रहस्यात्मक प्रेम उसकी आत्मा है।

चाह नहीं मैं सुरबाला के, गहनों में गूँथा जाऊं, चाह नहीं, प्रेमी-माला में, बिंध प्यारी को ललचाऊँ।
चाह नहीं सम्राटों के शव, पर हे हरि, डाला जाऊँ, चाह नहीं, देवों के सिर पर, चढ़ू भाग्य पर इठलाऊँ।
मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर देना तुम फेंक, मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।

नाथूराम प्रेमी (निधन- ३० जनवरी)

नाथूराम प्रेमी प्रसिद्ध लेखक, कवि, भाषाविद और सम्पादक थे। वे अपनी रचनाएँ प्रेमी उपनाम से लिखते थे। नाथूराम जी ने संस्कृत, बंगला, मराठी और गुजराती भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने मौलिक ग्रंथों के प्रकाशन के साथ-साथ भारतीय भाषाओं, विशेषत: बंगला के मूर्धन्य साहित्यकारों की रचनाओं के अनुवाद प्रकाशित करके हिन्दी के भंडार को भरने का सराहनीय कार्य सम्पन्न किया था।

३१ जनवरी

सोमनाथ शर्मा (जन्म- ३१ जनवरी)

मेजर सोमनाथ शर्मा भारतीय सेना की कुमाऊँ रेजिमेंट की चौथी बटालियन की डेल्टा कंपनी के कंपनी-कमांडर थे जिन्होंने अक्टूबर-नवम्बर, १९४७ के भारत पाक संघर्ष में अपनी वीरता से शत्रु के छक्के छुड़ा दिये। उन्हें भारत सरकार ने मरणोपरान्त परमवीर चक्र से सम्मानित किया। परमवीर चक्र पानेवाले ये प्रथम व्यक्ति हैं।

अकिलन (निधन- ३१ जनवरी)

अकिलन तमिल भाषा के सुविख्यात साहित्यकार, उपन्यासकार, लघु कहानी लेखक, पत्रकार, व्यंग्यकार, यात्रा लेखक, नाटककार तथा पटकथा लेखक थे। अकिलन का पूरा नाम पेरुंगळूर वैद्य विंगम अखिलंदम (पी.वी. अखिलंदम) था। उन्होंने अपना अधिकांश लेखन कार्य अकिलन नाम से किया और इसी नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की। एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में भी वे जाने जाते थे।

१ फरवरी

सतपाल सिंह (जन्म- १ फरवरी)

सतपाल सिंह भारत के प्रसिद्ध कुश्ती पहलवान हैं। वे १९८२ के एशियाई खेलों के स्वर्ण विजेता रह चुके हैं। वर्तमान में सतपाल सिंह दिल्ली में पहलवानों के प्रशिक्षण में संलग्न हैं। २०१२ ओलंपिक पदक विजेता सुशील कुमार भी उनके शिष्य हैं। सतपाल पहलवान को पद्मश्री से सम्मानित किया जा चुका है। सतपाल वर्तमान में दिल्ली के शिक्षा विभाग में उप शिक्षा निर्देशक पद पर कार्य कर रहे हैं।

कल्पना चावला (निधन- १ फरवरी)

कल्पना चावला एक भारतीय अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री और अंतरिक्ष शटल मिशन विशेषज्ञ थी। वे कोलंबिया अन्तरिक्ष यान आपदा में मारे गए सात यात्री दल सदस्यों में से एक थी।

२ फरवरी

खुशवंत सिंह (जन्म- २ फरवरी)

खुशवंत सिंह भारत के प्रसिद्ध पत्रकार, लेखक, उपन्यासकार और इतिहासकार थे। एक पत्रकार के रूप में इन्होंने बहुत लोकप्रियता प्राप्त की है। भारत सरकार के विदेश मन्त्रालय में विदेश सेवा के सम्माननीय पद पर भी खुशवंत सिंह जी ने कार्य किया है। पद्म भूषण (१९४७) और पद्म विभूषण (२००७) जैसे अलंकरणों से भी इन्हें सम्मानित किया जा चुका है। खुशवंत सिंह ने कई अमूल्य रचनाएँ अपने पाठकों को प्रदान की हैं। वर्ष २००० में इनको वर्ष का ईमानदार व्यक्ति सम्मान मिला था।

२० मार्च २०१४ का दिन हम सभी के लिए दुखद रहा, क्योंकि हमने साहित्यकार खुशवंत सिंह की खुशी और खुशबू दोनों खो दिया। ९९ वर्ष के सिंह की खुशी का राज उनका आत्मविश्वास तो था ही साथ ही उनका अनुशासन तो सचमुच में उन्हें तपस्वी बनाता था। वे रात को ९ बजे सोते और सुबह में ४ बजे उठते थे। यह क्रम आजीवन चलता रहा। शायद इसी वजह से वे बहुत कुछ कर पाए। २ फरवरी, १९१५ को पाकिस्तान के पंजाब प्रांत के हदाली में पैदा हुए खुशवंत को भारत पाक बंटवारे का बेहद मलाल था। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके उपन्यास ट्रेन टू पाकिस्तान में मिलता है। वास्तव में विद्वान वही होता है जिसे अपनी विद्वता पर घमंड न हो। शायद इसीलिए उन्होंने अपने लेखन के बारे में कहा था, मैं तो बकवास लिखता हूं, न जाने लोग क्यों पढ़ते हैं। सच यह है कि वे लेखन में बहुत ही तत्पर थे। वास्तव में वे अंग्रेजी साहित्य में अपनी अमिट छाप छोड़ गए हैं। सिख धर्म पर उनका लिखा इतिहास हिस्ट्री ऑफ सिख और जपुजी साहिब का अंग्रेजी में भी अनुवाद तो कालजयी कृति है। साथ ही वे अपनी बेबाक जीवन शैली के लिए आजीवन जाने जाते रहेंगे। खुशवंत सिंह भले ही इतने बड़े लेखक, पत्रकार और इतिहासकार थे लेकिन पढ़ाई के समय वे हमेशा थर्ड डिवीजन के छात्र रहे। साथ ही कोई उन्हें पत्र लिखे तो उसका जवाब वे जरूर देते थे।

वे लिटरेचर के गॉडफादर के रूप में सदैव हमारे बीच में रहेंगे। बीबीसी के लिए एक साक्षात्कार में उनका स्वयं के बारे

में विचार था कि शरीर से तो मैं बूढ़ा हूं लेकिन आंख तो अब भी बदमाश है। दिल में ख्वाहिश तोब हैं आखिरी सांस तक रहेंगी। ये ख्वाहिशें पूरी नहीं होंगी ये तो मुझे पता है। दूसरी ओर उनकी जिंदगी एक खुली किताब थी इस बात का प्रमाण भी उनकी इस बात से स्पष्ट होता है जिसमें वे कहते हैं, छिपाता नहीं हूं। वे उन लोगों में से नहीं थे जो करते तो हर बुरा काम हैं लेकिन बुरा काम की बुराई कर स्वयं को दुनिया का सबसे बड़ा महात्मा अपने को ही कहलवाने में अपनी विजय समझते हैं।

खुशवंत सिंह कई अखबारों और पत्रिकाओं के संपादक भले ही थे। लेकिन उनकी ख्याति एक प्रतिष्ठित अंग्रेजी लेखक के रूप में सदैव रहेगी। पिछले वर्ष की प्रकाशित खुशवंत नामा में जिस तरह से उन्होंने अपनी बुराइयों (कमियों) के लिए खेद जताया था। वह सचमुच में उन्हें युग पुरुष सिद्ध करती है। वास्तव में वे आधुनिक अंग्रेजी साहित्य में अपनी अमिट छाप छोड़ गए हैं। असंख्य समकालीन अंग्रेजी लेखक खुशवंत सिंह की शैली से विशेष लगाव रख खुशवंत शैली का नारा बुलंद दिया था। साथ ही वे अपनी बेबाक जीवनशैली के लिए आजीवन जाने जाते रहेंगे। वे कट्टर नहीं थे अकाली सिख होने पर भी गायत्री मंत्र पढ़ते थे। उनके घर के प्रवेश द्वार पर गणपति की प्रतिमा लगी है और कृपालु जी महाराज उनके पसंदीदा साधु थे।

भारत वर्ष में चाहे वह उत्तर प्रदेश का चौराहा हो, पंजाब का ढाबा हो या फिर मुम्बई की रेल हो अब तो सभी जगह सन्नाटा छा गया। अन्यथा खुशवंत सिंह के लेखों की चर्चा के बिना ये सब अधूरे लगते थे। वास्तव में खुशवंत जी इसलिए भी चर्चा के धनी थे क्योंकि वे भले ही इतने बड़े लेखक, पत्रकार और इतिहासकार थे।

मैं तो बकवास लिखता हूं, न जाने लोग क्यों पढ़ते हैं। इस हद तक अपनी आलोचना करनेवाली हस्ती खुशवंत सिंह के अलावा और कौन सी हो सकती है? शरारत तो मानो उनकी जिंदगी का हिस्सा थी। यहां तक कि जब उन्होंने अपनी आत्मकथा लिखी तो उसके टाइटल में भी शरारत को जगह थी- सच, प्यार और थोड़ी सी शरारत (ट्रुथ, लव एंड लिटिल मैलिस)। ट्रेन टु पाकिस्तान जैसी मशहूर किताब के रचयिता खुशवंत सिंह ने वकील, संपादक और लेखक के रूप में शान से जिंदगी जी। वे आखिरी दम तक काम करते रहे। उनका कॉलम ना काहू से दोस्ती ना काहू से बैर (विद् मैलाइस टुवार्ड्स वन एंड ऑल) बेशुमार पॉपुलर था। यह देश के लगभग ५० अखबारों में एक साथ छपता था।

इमरजेंसी के सपोर्टर- खुशवंत सिंह अपनी बेबाकी के लिए भी मशहूर थे। वह उन चंद लोगों में थे जिन्होंने इमरजेंसी लगाने के इंदिरा गांधी के फैसले का खुलकर समर्थन किया था। हालांकि बाद में उनके रिश्ते बिगड़ गए और वे मेनका गांधी के करीब आ गए। बाद में उन्होंने ब्लू स्टार ऑपरेशन के लिए इंदिरा का खुलकर विरोध भीी किया। वे इतना नाराज थे कि उन्होंने पद्मभूषण अवॉर्ड भी सरकार को लौटा दिया। खुशवंत ने अपनी बायोग्राफी में इस बारे में काफी विस्तार से लिखा है।

विमिन ऐंड मैन इन माई लाइफ- २ फरवरी १९१५ को पाकिस्तान के पंजाब प्रांत के हदाली में जन्मे खुशवंत की कलम के कायल लोगों की कमी नहीं है। राजनीति पर लिखना और तमाम आधुनिक विषयों पर तंज कसना उनका प्रिय शगल था। १९९५ में उनकी किताब विमिन ऐंड मैन इन माई लाइफ आई तो साबित हो गया कि उनकी तरह हर किसी में आइने की तरह जिंदगी को सबके सामने रखने की हिम्मत नहीं होती। उनके लिखने की शैली ही अलग था। उन्होंने अपनी पहली की किताब द मार्क ऑफ विष्णु ऐंड अदर स्टोरीज (१९५०) से अंधविश्वास पर कटाक्ष करने की शुरुआत की थी। वे जिंदगी भर नास्तिक रहे और कलम से इसका समर्थन भी करते रहे। उन्होंने वकालत भी की और लंदन उच्चायोग में भी काम किया।

मनमोहन के फैन- खुशवंत की लोकप्रियता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि राष्ट्रपति रहते हुए डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने खुद उनके घर जाकर उनसे मुलाकात की। वह खुद मनमोहन सिंह के फैन थे। लेकिन स्वाभिमान इतना कि एक बार भी पीएम हाउस नहीं गए, जबकि वे उन्हें पहले से जानते थे। जब उनके दुनिया से जाने की खबर मिली तो प्रधानमंत्री उनके घर पहुंचे। बीजेपी के पीएम कैंडिडेट नरेंद्र मोदी से लेकर शाहरूख खान तक ने ट्विटर पर उन्हें श्रद्धांजलि दी। यूथ में उनकी पॉपुलैरिटी इतनी कि गुरुवार को उनका नाम दिनभर ट्विटर पर ट्रेंड करता रहा।

नहीं छोड़ा अनुशासन- खुशवंत सिंह अनुशासन के बड़े पक्के थे। रात को ९ बजे सोना और सुबह ४ बजे उठने का उनका शेड्यूल शायद ही कभी टूटा हो। दुनिया भर में घूमना और दिल लगाकर लिखना उनका शौक था। एक और शौक भी था उनका, जिसके बारे में उन्होंने अपनी बयॉग्रफी में लिखा था कि मरने से पहले उनकी आखिरी ख्वाहिश थोड़ी सी शराब ही होगी। कह सकते हैं कि ख्वाहिशों को किताब होने दिया उन्होंने।

खुशवंत सिंह एक ऐसे लेखक, पत्रकार और इतिहासकार थे जोकि अपनी बेबाक जीवनशैली के लिए आजीवन जाने जाते रहे। वे कट्टर नहीं थे और एक अकाली सिख होने पर भी गायत्री मंत्र पढ़ते थे। उनके घर के प्रवेश द्वार पर गणपति की प्रतिमा लगी है और कृपालु जी महाराज उनके पसंदीदा साधु थे। वे एक जमाने में इंदिरा गांधी के करीबी रहे पर ऑपरेशन ब्लू स्टार के बाद से वे इंदिरा जी को नापसंद करते थे। उन्हें लगने लगा कि यह महिला कट्टर ब्राह्मणी है। वे अटल बिहारी बाजपेयी के उदार राजनीतिक विचारों और खानपान शैली के प्रशंसक रहे और आडवाणी के खुल्लमखुल्ला प्रशंसक भी।

और जहां तक उनके लेखक होने की बात है तो उनकी ट्रेन टू पाकिस्तान की कहानी को उसने कहा था जैसी कहानी के समकक्ष रखा जा सकता है। इस किताब में उनका गांव का सीधा साधा आकर्षण, पंजाब की मासूमियत, दैहिक आसक्ति, धार्मिक आस्था और अंत में त्याग और बलिदान। उनके पत्रकारीय लेखन का ही कमाल था कि अस्सी से ज्यादा किताबें लिखनेवाले इस लेखक का एक साप्ताहिक स्तम्भ विद मैलिस टुवार्डस् वन एंड ऑल पचास वर्ष से अधिक समय तक चला।

आज यह स्थिति है कि किसी भी पत्रकार का लिखा किसी को भी दूसरे दिन तक याद नहीं रहता है। लेकिन वे सूचित करते थे, उकसाते थे और हंसाने का भी काम करते थे। यहां तक उन्होंने सरदारों पर भी जोक लिख मारे। उनकी कुछ रचनाएं ऐसी हैं जिन्हें पोर्न लेखन की श्रेणी में रखा जा सकता है तो उन्होंने कई खंडों में सिखों का इतिहास लिखा। उन्होंने जपजी साहिब का अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। वे सिख होने पर गर्व करते थे लेकिन शायद ही कभी गुरुद्वारे जाते हों। उनके बेटे राहुल सिंह ने एक बार कहा था कि खुशवंत सिंह पॉलिटिकली अनकरेक्ट हो सकते हैं कि उनकी ज्यादातर किताबें जर्नलिस्टिक एप्रोच से लिखी गई हैं। सिख इतिहास पर उनकी किताबों में कई ऐसी अवधारणाएं हैं जिनका कोई सबूत इतिहास में नहीं मिलता। जैसे-वह कहते हैं कि गुरु नानक देव जी के समय यह कह दिया गया था कि सिख ना हिंदू हैं और ना ही मुसलमान।

एक ओर वह कहते हैं कि गुरु नानक देव जी के काफी कम माननेवाले थे। कोई भी उनकी शोध क्षमताओं पर सवाल नहीं उठाता है लेकिन ये स्रोतों पर आधारित ज्यादा लगती हैं। सिख इतिहास के प्राथमिक लेखक होने के कारण उन्हें परेशानियां आई होंगी। सिख इतिहास पर उनकी आखिरी किताब उस समय हुई घटनाओं का श्वेत पत्र है, जिसे उन्होंने जर्नलिस्टिक एप्रोच के साथ लिखा गया है। इसमें उन्होंने एसजीपीसी को गवर्नमेंट विदइन द गवर्नमेंट करार दिया है।

उनके लेखन में खामियां तो हो सकती हैं लेकिन उन्होंने सभी बातें केवल दिमाग से नहीं लिखीं। वे इतनी बड़ी आयु तक जी सके तो इसका एक ही अर्थ है कि वे अपने निजी जीवन में बहुत ही अनुशासित और समय के पाबंद थे।

पंजाब विद्यापीठ में एक बार बोलते हुए राहुल सिंह ने कहा था- पंजाब विद्यापीठ उन्हें अपना एल्युमनी कहते हुए सम्मानित कर रही है, लेकिन सब विद्यार्थियों के लिए यह खुशी की बात है कि वह हमेशा थर्ड डिवीजनर रहे हैं। खुशवंत सिंह के प्रसिद्ध होने का एक कारण यह भी है कि वह हर किसी के पत्र का जवाब जरूर देते और वो भी पोस्ट कार्ड पर। एक बार साउथ इंडिया के काफी पिछड़े से गांव में राहुल सिंह की गाड़ी खराब हो गई, तो वहां एक किसान ने पोस्ट कार्ड दिखाया कि यह आपके पिता ने मुझे लिखा था। एसजीपीसी ने खुशवंत सिंह को जब सरदारों पर जोक लिखने से मना किया तो उन्होंनें उनको भी पोस्ट कार्ड पर जवाब दिया। इस पर तीन शब्द लिखे थे- गो टु हेल।

बीबीसी के लिए एक साक्षात्कार में उनका खुद के बारे में कहना था कि जिस्म से तो बूढ़ा हूं लेकिन आंख तो अब भी बदमाश है। दिल अब भी जवान है। दिल में ख्वाहिशें तो रहती हैं आखिरी दम तक रहेंगी। पूरी नहीं कर पाऊंगा ये भी मुझे मालूम है। वे किसी चीज को छिपाते नहीं थे। वे कहते थे कि शराब पीता हूं तो खुल्लम-खुल्ला पीता हूं, कहता हूं मैं पीता हूं। मुलीद हूं, नास्तिक हूं छिपाया नहीं कभी, मैं कहता हूं कि मेर कोई दीन इमान धरम-वरम कुछ नहीं है।

लेकिन उन्होंने किसी मजहब का मजाक नहीं उड़ाया। किसी का अपमान नहीं किया और अपनी बात को रखा मगर साथ में उसकी इज्जत भी की। वे मानते थे कि किसी के दिल को चोट पहुंचाना गलत बात है। इसीलिए जब सलमान रुश्दी की दि सैटेनिक वर्सेस किताब आई थी तो वह छपने से पहले ही उसे पढ़ी थी। उन्होंने काफी दिलचस्प चीजें लिखी हैं कि कई पार्टियों में उनका जाना होता था और वहां आपके बारे में टीका-टिप्पणियां होती थीं और वे खामोश रहते थे। उनका कहना था कि हां अब ये उसका हक है, मुझसे उसकी राय मुख्तलिफ है। खुशवंत सिंह के बारे में कहा जा सकता है कि वे ९९ वर्ष तक जिंदादिल इंसान के रूप में जिए जो सदा जवान रहे कभी बूढ़े हुए ही नहीं।

मोहन लाल सुखाड़िया (निधन- २ फरवरी)

मोहन लाल सुखाड़िया राजस्थान के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों में से एक थे। उन्हें आधुनिक राजस्थान का निर्माता भी कहा जाता है। मोहन लाल सुखाड़िया सबसे लम्बे समय तक राजस्थान के मुख्यमंत्री रही थे।

राजकुमारी अमृत कौर (जन्म- २ फरवरी)

राजकुमारी अमृत कौर भारत की एक प्रख्यात गांधीवादी, स्वतंत्रता सेनानी और एक सामाजिक कार्यकर्ता थी। वह देश की स्वतंत्रता के बाद भारतीय मंत्रिमण्डल में दस साल तक स्वास्थ्य मंत्री रहीं। देश की पहली महिला कैबिनेट मंत्री होने का सम्मान उन्हें प्राप्त है। वे सन १९५७ से १९६४ में अपने निधन तक राज्य सभा की सदस्य भी रही थीं।

मोटूरि सत्यनारायण (जन्म- २ फरवरी)

मोटूरि सत्यनारायण दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार आन्दोलन के संगठक, हिन्दी के प्रचार-प्रसार-विकास के युगपुरुष, गांधी दर्शन एवं जीवन मूल्यों के प्रतीक, हिन्दी को राजभाषा घोषित कराने और उसके स्वरूप का निर्धारण करानेवाले महत्वपूर्ण सदस्यों में से एक थे। मोटूरि सत्यनारायण केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के संस्थापक थे।

३ फरवरी

डॉ. विश्वनाथ कराड समाज के लिए प्रेरणास्रोत हैं

श्रद्धा, धैर्य, विनम्रता, कर्मठता, दूरदृष्टि और संवेदनशीलता जैसे गुणों को किसी एक व्यक्तित्व में शामिल किया जाए, तो वह मेरे आदर्श प्रेरणाश्रोत एमआईटी-मार्इर्स के संस्थापक प्रा. डॉ. विश्वनाथ कराड को जाता है। ऐसे महान गौरवशाली शिक्षाविद् व हजारों छात्रों के भविष्य निर्माता व मित्रों स्नेहियों के मार्गदर्शक डॉ. विश्वनाथ कराड के सानिध्य में प्राप्त प्रेरक अनुभव यहां प्रस्तुत हैं।

आमतौर पर अधिकतर लोग मेरे शब्दों, मेरी भाषा और मेरे बोलने के प्रभावशाली ढंग की प्रशंसा करते रहते हैं, परंतु यह एक स्पष्ट सत्य है कि मैं जिस व्यक्तित्व के शब्दों, भाषा, ज्ञान और विभिन्न भाषाओं में धारा प्रवाह बोलने के सामर्थ्य से प्रभावित हूं, वे हैं अति गुणी, अति विद्वान, अति विनम्र, प्रा. डॉ. विश्वनाथ कराड साहब। मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा है और अभी भी उनसे बहुत कुछ सीखने की प्रक्रिया चालू है। मराठी, हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी में किसी भी विषय पर प्रामाणिक और प्रभावी रूप से बोलने में प्रा. डॉ. विश्वनाथ कराड अद्वितीय व्यक्तित्व हैं। कराड साहब को कभी भी क्रोधित होते नहीं देखा। क्रोध पर तो अनेक बार ईश्वर, ऋषि-मुनि, साधु-संत तथा बड़े बड़े नेतागण भी नियंत्रण नहीं रख पाये हैं। कभी-कभी उनके निकट रहने का अवसर वे प्रदान करते रहते हैं और अपना स्नेह सबको लुटाते रहते हैं। विद्वता, ज्ञान, लोकप्रियता, सम्पन्नता और सफलता में मुझसे कई गुना अधिक होने के बावजूद डॉ. कराड साहब सदैव मुझे बहुत ज्यादा महत्व और मान-सम्मान देते रहे हैं। यह नि:संदेह उनकी महानता है, उनकी विशाल हृदयता है। मैंने किसी महापुरुष का यह वक्तव्य पढ़ा है कि संसार में वही व्यक्ति सबसे बड़ा होता है, जिसके सामने कोई भी दूसरा व्यक्ति अपने आपको छोटा न समझे। यह वक्तव्य डॉ. कराड साहब की विशालता को प्रमाणित करने के लिए एक उदाहरण है।

किसी भी छोटी से छोटी भावनापूर्ण बात पर भावुक होकर अपनी आंखों में आंसू भर लेनेवाले डॉ. कराड साहब, आवश्यकता पड़ने पर कठोरतम निर्णय भी लेने में कभी झिझकते नहीं हैं। विपरीत परिस्थितियों में उनका संयम, धैर्य और स्वयं पर नियंत्रण रखने का अनूठा तरीका, उनके व्यक्तित्व को अति विशाल स्वरूप प्रदान कर देता है। मैंने उन्हें कभी भी अकेले भोजन करते हुए भी नहीं देखा। मात समान अपनी बड़ी बहन तथा भाइयों की सेवा डॉ. कराड साहब ने पूरे मन से की है।

कराड साहब की अकल्पनीय विचार शक्ति, दूरदृष्टि, कल्पना शक्ति और कार्य कुशलता की सक्षमता वास्तव में अकल्पनीय है। हर निर्माण कार्य में, हर व्यवस्था में, हर क्षेत्र के मार्गदर्शन में उनकी अपनी अलग विशिष्ट छाप दिखाई देती है। उनके द्वारा बोले गए हर शब्द को बहुत ध्यान से सुने जाते है और उनकी कही हुई हर बात को संजोकर रखी जाती है। मेरी यही आदत मुझे मेरे मंच संचालन में मार्ग प्रदर्शित करती रहती है। अन्य लोग भले ही मेरी प्रशंसा करते रहें या मुझसे प्रभावित होते रहें, परंतु अपने अंत:करण में मैं हमेशा प्रा. डॉ. विश्वनाथ कराड साहब का ही आभारी बना रहता हूं, क्योंकि मुझमें जो भी धैर्य, शांति, समच सूचकता और शाब्दिक ज्ञान जमा हो गया है, उसका मूल स्रोत प्रा. डॉ. विश्वनाथ कराड साहब ही हैं। उनकी विनम्रता ने मुझे भी विनम्र बना दिया है। मेरे अहंकार का नाश उनकी सरलता के कारण ही हुआ है। अनगिनत अविस्मरणीय संस्मरण मेरे मन मस्तिष्क में धरोहर के रूप में संजोकर रखे हुए हैं।

राम सिंह (जन्म- ३ फरवरी)

राम सिंह नामधारी संप्रदाय के संस्थापक थे। सतगुरु राम सिंह तत्कालीन समय के महान समाज सुधारक, धर्मगुरु और स्वाधीनता सेनानी थे। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों के विरुद्ध तो संघर्ष किया ही, साथ ही वे विदेशी शासकों के विरुद्ध भी एक कारगर संग्राम के सूत्रधार बने थे। उनकी विचारधारा से अंग्रेज इतना परेशान हुए कि उन्हें बंदी बनाकर रंगून (अब यांगून), बर्मा (वर्तमान म्यांमार) भेज दिया गया।

रघुराम राजन (जन्म- ३ फरवरी)

रघुराम राजन भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व (२३वें) गवर्नर हैं। ४ सितम्बर, २०१३ को डी. सुब्बाराम की सेवानिवृत्ति के पश्चात उन्होंने यह पदभार ग्रहण किया था। विश्व के प्रमुख दस अर्थशास्त्रियों में से एक रघुराम राजन ने डॉ. डी. सुब्बाराव के बाद गवर्नर का पद संभाला। रघुराम राजन पर गिरते रुपए को संभालने के साथ-साथ देश की अर्थव्यवस्था को फिर से पटरी पर लाने की सबसे बड़ी चुनौती थी। ४ सितम्बर, २०१६ को रघुराम राजन का कार्यकाल पूर्ण हुआ और उनके स्थान पर उर्जित पटेल ने ५ सितम्बर, २०१६ से आरबीआई के नये गवर्नर के रूप में कार्यभार ग्रहण किया।

अल्ला रक्खा खाँ (निधन- ३ फरवरी)

अल्ला रक्खा खां सुविख्यात तबला वादक, भारत के सर्वश्रेष्ठ एकल और संगीत वादकों में से एक थे। इनका पूरा नाम कुरैशी अल्ला रक्खा खां है। अल्ला रक्खा खां अपने को पंजाब घराने का मानते थे। अल्ला रक्खा खां के पुत्र का नाम जाकिर हुसैन है जो स्वयं प्रसिद्ध तबला वादक हैं।

राधाकृष्ण (निधन- ३ फरवरी)

राधाकृष्ण बिहार में जन्मे हिन्दी के यशस्वी कहानीकार थे। राधाकृष्ण रांची में एक समाज कल्याण विभाग की पत्रिका के संपादक थे। इनमें चुटीले व्यंग लिखने की अद्भुत शक्ति थी। वे प्रेमचंद के हंस के समय से ही लिखते रहे। राधाकृष्ण की कहानियों में देश एवं समाज की कुरीतियों पर गहरा व्यंग्य रहता है। भाषा सरल, सीधी किन्तु हृदयग्राही है।

४ फरवरी

सत्येंद्रनाथ बोस (निधन- ४ फरवरी)

सत्येंद्रनाथ बोस प्रसिद्ध गणितज्ञ और भौतिक शास्त्री थे। भौतिक शास्त्र में दो प्रकार के अणु माने जाते हैं- बोसॉन और फमिर्यान। इनमें से बोसॉन सत्येंद्र नाथ बोस के नाम पर ही है।

एम. ए. अय्यंगार (जन्म- ४ फरवरी)

मदभूषी अनन्तशयनम अय्यंगार भारत के दूसरे लोकसभा अध्यक्ष थे। लोकसभा के प्रथम अध्यक्ष जी.वी. मावलंकर के आकस्मिक निधन से पैदा हुई रिक्तता को भरने के लिए अध्यक्ष पद का दायित्व ग्रहण करके मद्भूषी अनन्तशयनम अय्यंगार ने स्वतंत्रता की उपलब्धियों तथा नव गणतंत्र में स्वस्थ संसदीय संस्कृति को विकसित करने के अधूरे कार्य को आगे बढ़ाने के लिए अपने आपको सर्वोपयुक्त सिद्ध किया। अय्यंगार ने छह दशक के अपने सार्वजनिक जीवन में, एक

वकील, सामाजिक कार्यकर्ता तथा स्वतंत्रता सेनानी के रूप में, उत्कृष्ट सांसद तथा लोक सभा अध्यक्ष और एक प्रतिष्ठित विद्वान के रूप में, जीवन में जिस भी कार्यक्षेत्र को चुना उसमें अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ी।

पंडित भीमसेन जोशी

४ फरवरी १९२२ को शास्त्रीय गायक भारत रत्न पंडित भीमसेन जोशी का जन्म गड़ग (कर्नाटक) में हुआ था। वे १९ साल उम्र से गायन शुरू कर सात दशकों तक शास्त्रीय गायन करते रहे। मिले सुर मेरा तुम्हारा से वे घर-घर में पहचाने जाने लगे थे। उन्होंने तानसेन सुर संगम, बसंत बहार, अनकही फिल्मों के लिए गीत भी गाए। वे किराना घराना के सबसे प्रसिद्ध गायकों में से एक थे। उन्हें ख्याल शैली और भजन गायन के लिए विशेष रूप से जाना जाता है।

वे पद्मश्री, पद्मभूषण, संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार के बाद भारत रत्न से सम्मानित किए गए। २४ जनवरी २०११ को पुणे में उनका देहांत हुआ।

पंडित भीमसेन जोशी किराना घराने के महत्वपूर्ण शास्त्रीय गायक थे। उन्होंने १९ साल की उम्र से गायन शुरू किया था और वे सात दशकों तक शास्त्रीय गायन करते रहे। भीमसेन जोशी ने कर्नाटक को गौरवान्वित किया है। भारतीय संगीत के क्षेत्र में इससे पहले एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी, उस्ताद बिस्मिल्ला खान, पंडित रविशंकर और लता मंगेशकर को भारत रत्न से सम्मानित किया जा चुका है। उनकी योग्यता का आधार उनकी महान संगीत साधना है।

बिरजू महाराज (जन्म- ४ फरवरी)

बिरजू महाराज भारत के प्रसिद्ध शास्त्रीय नृत्य कलाकारों में से एक हैं। वे भारतीय नृत्य की कथक शैली के आचार्य और लखनऊ के कालका-बिदादीन घराने के एक मुख्य प्रतिनिधि हैं। ताल और घुँघरूओं के तालमेल के साथ कथक नृत्य पेश करना एक आम बात है, लेकिन जब ताल की थापों और घुँघरूओं की रूंझन को महारास के माधर्यु में तब्दील करने की बात हो तो बिरजू महाराज के अतिरिक्त और कोई ध्यान में नहीं आता।

५ फरवरी

अच्युत पटवर्धन (जन्म- ५ फरवरी)

बनारस सेंट्रल हिंदू कॉलेज में पढ़ाई करने के बाद वहीं अध्यापन। १९३२ में गांधीजी के आंदोलन में शामिल होने के लिए अध्यापकी छोड़ दी। १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में भूमिगत रहकर कार्य किया। आंदोलन के दौरान सातारा में समानांतर सरकार की स्थापना करनेवाले अग्रिम पंक्ति के नेताओं में शामिल। स्वाधीनता संग्राम के दौरान कई बार जेल भुगती कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना में अहम भूमिका। आजादी के बाद जे. कृष्णमूर्ति फाउंडेशन में सक्रिय। समाजवाद पर कई पुस्तकों और पैंफ्लेट्स के लेखक।

६ फरवरी

खान अब्दुल गफ्फार खान

६ फरवरी, १८९० को भारतीय स्वतंत्रता सेनानी व बलूचिस्तान के एक महान राजनेता खान अब्दुल गफ्फार खान का

जन्म पेशावर (अब पाकिस्तान) में हुआ था। वे बादशाह खान व सीमांत गांधी नाम से भी जाने जाते थे। उन्होंने १९२० में खुदाई खिदमतगार नाम से संगठन की स्थापना की। कांग्रेस का समर्थन मिलने पर वे गांधीजी के करीब आए और उनके अनुयायी बन गए। उनका संस्मरण ग्रंथ माई लाइफ एंड स्ट्रगल १९६९ में प्रकाशित हुआ। भारत सरकार ने उन्हें १९८७ में सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से सम्मानित किया।

२० जनवरी, १९८८ को उनकी मृत्यु पेशावर में हुई, लेकिन उनकी इच्छानुसार जलालाबाद, अफगानिस्तान में उन्हें दफनाया गया।

७ फरवरी

मन्मथनाथ गुप्त (जन्म- ७ फरवरी)

मन्मथनाथ गुप्त भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक प्रमुख क्रांतिकारी तथा सिद्धहस्त लेखक थे। इन्होंने हिन्दी, अंग्रेजी तथा बांग्ला में आत्मकथात्मक, ऐतिहासिक एवं गल्प साहित्य की रचना की है। ये मात्र १३ वर्ष की आयु में ही स्वतंत्रता संग्राम में कूद गये और जेल गये। बाद में वे हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के सक्रिय सदस्य भी बने और १७ वर्ष की आयु में उन्होंने सन १९२५ में हुए काकोरी काण्ड में सक्रिय रूप से भाग लिया।

शचीन्द्रनाथ सान्याल (निधन- ७ फरवरी)

शचीन्द्रनाथ सान्याल भारत की आजादी के लिए संघर्ष करने वाले प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। वे राष्ट्रीय व क्रांतिकारी आंदोलनों में सक्रिय भागीदार होने के साथ ही क्रांतिकारियों की नई पीढ़ी के प्रतिनिधि भी थे। इसके साथ ही वे गदर पार्टी और अनुशीलन संगठन के दूसरे स्वतंत्रता संघर्ष के प्रयासों के महान कार्यकर्ता और संगठनकर्ता थे। वर्ष १९२३ में उनके द्वारा खड़े किए गये हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन को ही भगत सिंह एवं अन्य साथियों ने हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ के रूप में विकसित किया। शचीन्द्रनाथ सान्याल को जीवन में दो बार काला पानी की सजा मिली।

८ फरवरी

जाकिर हुसैन (जन्म- ८ फरवरी)

डॉ. जाकिर हुसैन भारत के तीसरे राष्ट्रपति थे। उनका राष्ट्रपति कार्यकाल १३ मई १९६७ से ३ मई १९६९ तक रहा। डॉ. जाकिर हुसैन मशहूर शिक्षाविद और आधुनिक भारत के द्रष्टा थे। ये बिहार के राज्यपाल (कार्यकाल- १९५७ से १९६२) और भारत के उपराष्ट्रपति (कार्यकाल- १९६२ से १९६७ तक) भी रहे। उन्हें वर्ष १९६३ में भारत रत्न से सम्मानित किया गया। १९६९ में असमय देहावसान के कारण वे अपना राष्ट्रपति कार्यकाल पूरा नहीं कर सके।

८ फरवरी १८९७ को शिक्षाविद भारत-रत्न डॉ. जाकिर हुसैन का जन्म हैदराबाद (आंध्रप्रदेश) में हुआ था। वे जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय की स्थापना दल के सदस्य थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के कुलपति बने। वे भारतीय प्रेस आयोग, यूजीसी, यूनेस्को, केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से भी जुड़े रहे। वे बिहार के राज्यपाल, देश के उपराष्ट्रपति और फिर राष्ट्रपति बने। वे राष्ट्रपति बननेवाले पहले मुसलमान थे। वे पद्मविभूषण एवं सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से भी सम्मानित हुए। तीन मई १९६९ को उनका निधन हुआ।

शोभा गुर्टू (जन्म- ८ फरवरी)

शोभा गुर्टू भारतीय शास्त्रीय शैली की एक प्रसिद्ध गायिका थीं। उनका मूल नाम भानुमति शिरोडकर था। वे एक ऐसी शास्त्रीय शिल्पी थीं, जिन्होंने गायन की ठुमरी शैली को विश्वभर में ख्याति दिलाई। शोभा गुर्टू को ठुमरियों की रानी कहा जाता है। उन्होंने ठुमरी के अतिरिक्त कजरी, होरी और दादरा आदि उप-शास्त्रीय शैलियों के अस्तित्व को भी बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

जगजीत सिंह (जन्म- ८ फरवरी)

जगजीत सिंह गजलों की दुनिया के बादशाह और अपनी सराहना आवाज से लाखों-करोड़ों सुननेवालों के दिलों पर राज करनेवाले प्रसिद्ध गजल गायक थे। खालिस उर्दू जाननेवालों की मिल्कियत समझी जानेवाली नवाबों, रक्वासाओं की दुनिया में झनकती और शायरों की महफिलों में वाह-वाह की दाद पर इतराती गजलों को आम आदमी तक पहुंचाने का श्रेय अगर किसी को जाता है तो वह जगजीत सिंह हैं। उनकी गजलों ने न सिर्फ उर्दू के कम जानकारों के बीच शेरो शायरी की समझ में इजाफा किया बल्कि गालिब, मीर, मजाज, जोश और फिराक जैसे शायरों से भी उनका परिचय कराया।

जेम्स माइकल लिंगदोह (जन्म- ८ फरवरी)

जेम्स माइकल लिंगदोह भारत के पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त के रूप में प्रसिद्ध है। जे.एम. यानी जेम्स माइकल लिंगदोह का नाम भारत के लोकतांत्रिक राजनीतिक इतिहास में बहुत ही खास अहमियत रखता है। मेघालय के खासी जनजाति से सम्बन्ध रखने वाले लिंगदोह १९६१ में देश की सर्वोच्च नागरिक सेवाओं में से एक भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए चुने गये थे। उन्होंने काफी लंबे समय तक बिहार कैडर के तहत वहाँ कई जिलों में सराहनीय काम किया, लेकिन सही अर्थों में उन्हें प्रसिद्धि मिली, मुख्य चुनाव आयुक्त के रूप में।

अशोक चक्रधर (जन्म- ८ फरवरी)

डॉ. अशोक चक्रधर हिन्दी के मंचीय कवियों में से एक हैं। हास्य की विधा के लिये अशोक चक्रधर की लेखनी जानी जाती है। कवि सम्मेलनों की वाचिक परंपरा को घर घर में पहुंचाने का श्रेय गोपालदास नीरज, शैल चतुर्वेदी, सुरेंद्र शर्मा और ओमप्रकाश आदित्य आदि के साथ-साथ इन्हें भी जाता है। अशोक चक्रधर ने आसपास बिखरी विसंगतियों को उठाकर बोलचाल की भाषा में श्रोताओं के सम्मुख इस तरह रखा कि वह कहकहे लगाते-लगाते अचानक गम्भीर हो जाते हैं और कहकहों में डूब जाते हैं।

९ फरवरी

सी.पी. कृष्णन नायर (जन्म- ९ फरवरी)

सी.पी. कृष्णन नायर होटल लीलावेंचर के संस्थापक और चेयरमैन एमिरेट्स थे। भारतीय सेना से अपना करियर शुरू करनेवाले नायर ने शुरुआत में टेक्सटाइल इकाई स्थापित की थी। बाद में वर्ष १९८१ में उन्होंने होटल एवं रिसोर्ट ब्रांड लीला पैलेस के नाम से लक्झरी हॉस्पिटैलिटी चेन शुरू की। फरवरी २०१३ में उन्होंने होटल लीलावेंचर के चेयरमैन पद

से इस्तीफा देकर कारोबार की कमान अपने बेटों विवेक और दिनेश नायर को सौंप दी थी।

परिमार्जन नेगी (जन्म- ९ फरवरी)

परिमार्जन नेगी प्रसिद्ध ग्रैंड मास्टर खिलाड़ी हैं। वे ग्रैंड मास्टर का खिताब जीतनेवाले सबसे कम उम्र के भारतीय खिलाड़ी है। वर्ष २००५ में परिमार्जन नेगी विश्व के सबसे कम उम्र के इंटरनेशनल मास्टर बने। २००२ में परिमार्जन ने तेहरान में १० वर्ष में कम आयु वर्ग की एशियाई चैंपियनशिप में पहली बार अन्तर्राष्ट्रीय सफलता प्राप्त की थी।

१० फरवरी

प्रोफेसर पीआर पिशारोती

१० फरवरी, १९०९ को मौसम विज्ञानी प्रो. पीआर पिशारोती का जन्म कोलेनगोड (केरल) में हुआ था। वे देश में रिमोट सेंसिंग के पिता भी कहे जाते हैं। उन्होंने ही पहली बार पता लगाया कि उत्तरी गोलार्ध में ध्रुव की ओर गर्म हवाओं की अपर्याप्त परिवहन के कारण भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून में विलंब होता है और देश में अच्छे मानसून के लिए आवश्यक नमी अरब सागर के बाष्पीकरण से आती है।

६० के दशक में अपने अनुसंधान के दौरान उन्होंने देश में रिमोट सेंसिंग लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। भारत सरकार ने उन्हें १९७० में पद्मश्री से सम्मानित किया। २४ सितंबर २००२ को उनका निधन हुआ।

कुमार विश्वास (जन्म- १० फरवरी)

कुमार विश्वास हिन्दी भाषा के एक अग्रणी कवि हैं। शृंगार रस के गीत इनकी विशेषता है। कवि-सम्मेलनों और मुशायरों के क्षेत्र में भी डॉ. विश्वास एक अग्रणी कवि हैं। वो अब तक हजारों कवि सम्मेलनों और मुशायरों में कविता-पाठ और संचालन कर चुके हैं।

कुरिआकोसी इलिआस चावारा (जन्म- १० फरवरी)

कुरिआकोसी इलिआस चावारा केरल के सीरियन कैथॉलिक संत तथा समाज सुधारक थे। २३ नवम्बर, २०१४ को पोप फ्राँसिस ने सेंट पीटर स्क्वायर पर उन्हें मरणोपरान्त संत की उपाधि दी।

शानी (निधन- १० फरवरी)

शानी प्रसिद्ध कथाकार एवं साहित्य अकादमी की पत्रिका समकालीन भारतीय साहित्य और साक्षात्कार के संस्थापक-संपादक थे। नवभारत टाइम्स में भी इन्होंने कुछ समय काम किया। अनेक भारतीय भाषाओं के अलावा रूसी, लिथुवानी, चेक और अंग्रेजी में इनकी रचनाएं अनुदित हुई। मध्य प्रदेश के शिखर सम्मान से अलंकृत और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं।

जगन्नाथ शंकर शेट मुरकुटे उर्फ नाना शेट (जन्म- १० फरवरी)

विकास के भी कुछ खंडहर हैं, जहां कुछ स्मृतियां भटकती रहती हैं और कुछ विवाद

अप्रैल १८५३ को विक्टोरिया टर्मिनस से थाना के लिये चली उस पहली ट्रेन में पांच सौ यात्री सवार थे। इनमें कुछ

बम्बई शहर के गणमान्य नागरिक भी थे। इनमें एक यात्री वह भी था जो समय के किसी नए पड़ाव की ओर इस शहर को ले जाना चाहता था। पटरियों पर रेल दौड़ रही थी और मन की पटरियों पर सपने। वह निरा व्यवसायी नहीं था, असाधारण समाज सुधारक, राष्ट्रवादी और आधुनिक नागरिक लैंडस्केप का शिल्पी भी था। उस दिन वह ट्रेन विक्टोरिया टर्मिनस से छूटकर ४५ मिनट में थाना पहुंची और भारत ने एक नये युग में प्रवेश किया। जगन्नाथ शंकर शेट मुरकुटे उर्फ नाना शेट भारत की उस पहली रेल लाइन को शुरू करवाने वाले कर्ता-धर्ता थे। भारत में रेल लाने के लिये उन्होंने साथी उद्योगपति सर जमशेदजी जीजीभॉय के साथ मिलकर १८४५ में इंडियन रेलवे असोसिएशन नामक संस्था बनायी थी, जिसकी परिणति १८५३ की इस ऐतिहासिक पहली रेल यात्रा में हुई। बाद में यह संस्था जी.आई.पी. (ग्रेट इंडिया पेनिजुला) लाइन कहलाने लगी। आज हम इसे सेंट्रल रेलवे के नाम से जानते हैं।

नाना शेट का इस आधुनिक शहर की निर्मिति में आधारभूत योगदान रहा। शिक्षा व्यवस्था में सुधार की जरूरतों को देखते हुए १८२४ में बम्बई में जब नेटिव एजुकेशन सोसायटी की स्थापना हुई तो वे उसके संस्थापक सदस्यों में थे। बाद में इस संस्था का नाम बम्बई में उच्च शिक्षा के एल्फिंस्टन नेटिव एजुकेशन इंस्टीट्यूट रखा गया और १८५६ से यह संस्था एल्फिंस्टन कॉलेज कहलाने लगी। भारत के स्वाधीनता आंदोलन और एक नए राष्ट्र के निर्माण में यह कॉलेज सर्वविदित है। यही वह संस्था है जिसमें नाना शेट के समय में बालशास्त्री जांभेकर, दादाभाई नौरोजी, महादेव गोविंद रानाडे, रामकृष्ण गोपाल भंडारकर, फिरोज शाह मेहता जैसी विभूतियों ने शिक्षा पाई। बाद के वर्षों में गोपाल कृष्ण गोखले और लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, बाबा साहेब आंबेडकर और होमी भाभा से लेकर भूलाभाई देसाई, पु.ल. देशपांडे और किशोरी अमोनकार तक विभिन्न क्षेत्रों के तमाम जगमगाते सितारे इस कॉलेज से निकले। गिनने बैठें तो इन सितारों की सूची बहुत लंबी हो जाएगी। नाना शेट ने स्टूडेंटस लायब्रेरी ऐंड साइंटिफिक सोसायटी जैसी संस्थाओं को खड़ा किया। इन संस्थाओं ने जब पहली बार लड़कियों की शिक्षा के लिए अपने दरवाजे खोले तो परंपरावादी हिंदू समाज ने उसका घोर विरोध किया था। लेकिन नाना शेट सामाजिक नवोन्मेष के लिये दान देते रहे। गिरगांव में उन्होंने इंग्लिश स्कूल, संस्कृत पाठशाला और संस्कृत पुस्तकालय खोले। एल्फिंस्टन कॉलेज में फेकल्टी ऑफ लॉ उन्हीं के प्रयासों से खुला था। ब्रिटिश ज्यूरी के वे पहले भारतीय सदस्य थे। एक बॉम्बे सोसायटी उन्होंने स्थापित करवाई थी, जो ब्रिटिश सरकार द्वारा देसी नागरिकों के साथ किये गए अन्याय के खिलाफ लड़ती थी। बम्बई यूनिवर्सिटी की स्थापना में उन्होंने सहयोग दिया और व्यापारियों का प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था बॉम्बे असोसिएशन भी खड़ी की। १८६२ में भायखला में विक्टोरिया गार्डन चिड़ियाघर (रानीबाग) और एल्बर्ट म्युजियम की स्थापना में डेविड सासून और सर जमशेदजी जीजीभॉय जैसे उद्योगपतियों के साथ जगन्नाथ शंकट शेट की प्रमुख भूमिका रही। अब यह जीजामाता उद्यान और भाऊदाजी लाड संग्रहालय कहलाता है। १८४१ में उन्हीं के प्रयत्नों से ग्रांट रोड इलाके में नाट्य और संगीत कलाओं के प्रदर्शन के लिये भारत का पहला सभागार खुला जिसे ग्रांट रोड थियेटर या शंकर शेट की रंगशाला कहा जाता है। आज जिसे हम एशियाटिक सोसायटी लायब्रेरी के नाम से जानते हैं। इस एशियाटिक लायब्रेरी के प्रवेश द्वार पर श्वेत मार्बल की उनकी विशाल प्रतिमा आपका स्वागत करती है। उनकी एक प्रतिमा मरीन लांइस के आधुनिक सोनापुर (श्मशान गृह) के अहाते में भी आपसे मुलाकात करती है। इस आधुनिक चंदनवाड़ी श्मशान गृह को उन्होंने १८६० में बनवाया था।

नाना शेट का जन्म १० फरवरी, १८०३ में बम्बई में एक सम्पन्न ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पितामह बाबुल शेट गनबा शेट १८वीं सदी के मध्य में कोंकण से बम्बई चले आये थे। उनके पिता शंकर शेट अपने परिश्रम और प्रतिभा के बल पर १८ वीं सदी के अंतिम वर्षों में दक्षिण बम्बई के एक प्रमुख कारोबारी बन चुके थे। फोर्ट इलाके में गनबो स्ट्रीट का नाम किसी विदेशी के नाम पर नहीं, नाना शेट के दादा गनबा शेट के नाम पर है। नाना चौक के पास भवानी शंकर मंदिर और राम मंदिर शंकट शेट ने ही बनवाये थे। उनकी ईमानदारी की ख्याति ऐसी थी कि उस दौर में अरब, अफगान और दूसरे विदेशी व्यापारी अपना धन बैंकों के बजाय शंकर शेट के यहां रखना पसंद करते थे। जगन्नाथ शंकर शेट ने अपने पूर्वजों से विरासत में मिली अकूत संपदा को सार्वजनिक जीवन के हित के लिये इस्तेमाल किया।

१८५७ के बाद बम्बई शहर ने एक दूसरे चरण में प्रवेश किया। सर जॉर्ज बर्डवुड, डॉ. भाउ दाजी लाड और जगन्नाथ शंकर शेट की त्रयी ने इस शहर में बृहद पुनर्निर्माण कार्य की पटकथा लिखी। ये सभी एक बदलते युग के कल्पनाशील लोग थे और व्यक्ति नहीं, लगभग संस्था बन गये थे। शहर निर्माण और उसमें विकसित हो रही चेतना के पीछे इनकी एक नये युग की कल्पनाशीलता थी कि पतली-पतली तंग गलियों और औसत जन सुविधाओं से वंचित यह शहर चौड़ी सड़कों, भव्य इमारतों और खुली सार्वजनिक जगहों वाले शहर में तब्दील होता गया। आधुनिकता का यह बोध भौगोलिक लैंडस्केप, भवनों के स्थापत्य, नागरिक जीवन को संगठित करनेवाली संस्थाओं, उद्योग, व्यापार, लोक व्यवहार, जीवन शैली, सामूहिक आकांक्षाओं, विचार, चिंतन, कला-सभी कुछ में किन्हीं नई अभिव्यक्तियों को जन्म दे रहा था। १९वीं सदी का वह शहर आज के भीड़-भड़क्के, धक्का-मुक्की, अनियंत्रित दबावों और बढ़ते रक्तचापवाला शहर नहीं था। हम इतिहास में जाते हैं और पाते हैं कि महानगर किसी एक चीज से निर्मित नहीं होते, वे जीवन की सम्पूर्ण बहुपर्तीय व्यवस्थाओं में रचे जाते हैं।

आज इस द्रूत गति वाली सभ्यता में जरा ठहरकर इन चीजों को मुड़कर देखना केवल एक रूमानी पैशन नहीं है। हम एक भयावह स्मृतिहीन समय में जी रहे हैं। ३१ जुलाई, २०१५ को नाना शेट का १५०वां स्मृति दिवस था, लेकिन बहुत फीके तरीके से गुजर गया। जिस नाना जगन्नाथ शंकर शेट ने १९वीं सदी में इस महानगर के विकास के लिये अपनी सैंकड़ों एकड़ जमीन समर्पित्त कर दी थी, उनके स्मृति दिवस पर उनका एक स्मारक खड़ा करने की मांग को पूरा करने के लिये इसी शहर की महानगरपालिका का अपनी केवल डेढ़ हजार वग फीट की जमीन देने का उत्साह नहीं था। किसी तरह एंटॉप हिल इलाके में उनके स्मारक के लिये कुछ जगह दे दी गई। यह बताता है कि तात्कालिकता में लिपटे अपने निरे वर्तमान के अलावा आज कुछ भी हमारे लिये प्रासंगिक नहीं रह गया है। इस तरह हम अपने आपको, अपनी रिहाइश की आंतरिक लय को, अपने समय बोध और अपने शहरों को खोते चले जाते हैं। प्रसिद्ध रूसी कवि जोसेफ ब्रॉडस्की की एक कविता की ये पंक्तियां इसप्रकार है - शहर कभी नष्ट नहीं होते, बस वे सिर्फ हमरी स्मृतियों में कहीं लुप्त हो जाते हैं।

११ फरवरी

तिलका माँझी (जन्म- ११ फरवरी)

तिलका माँझी भारतीय स्वाधीनता संग्राम के पहले शहीद थे। इन्होंने अंग्रेजी शासन के विरूद्ध एक लम्बी लड़ाई छेड़ी

थी। संथालों द्वारा किये गए प्रसिद्ध संथाल विद्रोह का नेतृत्व भी तिलका माँझी ने किया था। तिलका माँझी का नाम देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्रामी और शहीद के रूप में लिया जाता है। अंग्रेजी शासन की बर्बरता के जघन्य कार्यों के विरुद्ध उन्होंने जोरदार तरीके से आवाज उठायी थी। इस वीर स्वतंत्रता सेनानी को १७८५ में गिरफ्तार कर लिया गया और फिर फाँसी दे दी गई।

फखरुद्दीन अली अहमद (निधन- ११ फरवरी)

फखरूद्दीन अली अहमद भारतवर्ष के पाँचवें राष्ट्रपति (नाम के अनुसार फखरुद्दीन अली अहमद पाँचवें राष्ट्रपति और कार्यकाल के अनुसार यह छठे राष्ट्रपति) के रूप में जाने जाते हैं। इनका राष्ट्रपति चुना जाना भी भारतवर्ष की धर्मनिरपेक्ष संवैधानिक व्यवस्था का एक ज्वलंत प्रमाण है।

नरेंद्र शर्मा (निधन- ११ फरवरी)

पंडित नरेंद्र शर्मा हिन्दी के प्रसिद्ध कवि, लेखक एवं सम्पादक थे। १९३४ में प्रयाग में अभ्युदय पत्रिका का संपादन किया। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी स्वराज्य भवन में हिंदी अधिकारी रहे और फिर बॉम्बे टॉकीज बम्बई में गीत लिखे। उन्होंने फिल्मों में गीत लिखे, आकाशवाणी से भी संबंधित रहे और स्वतंत्र लेखन भी किया। उनके १७ कविता संग्रह, एक कहानी संग्रह, एक जीवनी और अनेक रचनाएं पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं।

१२ फरवरी

अब्राहम लिंकन

संयुक्त राज्य अमेरिका के १६ वें राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन लोकतंत्र के मसीहा माने जाते हैं। राष्ट्रपति बनने से पहले भी वे बहुत लोकप्रिय नेता थे। वे हमेशा जनमत का आदर करते थे। साधारण व्यक्ति के अच्छे सुझाव को भी मान लेने में उन्हें संकोच नहीं होता था। उनका बचपन अभावों में बीता। कभी नाव चला कर, तो कभी लकड़ी काट कर भी उन्हें जीविका चलानी पड़ती थी। उनकी उदारता का परिचय एक छोटी सी कहानी से मिलता है।

एक बार उन्हें पता चला कि एक पड़ोसी के पास जॉर्ज वॉशिंग्टन की जीवनी वाली एक किताब है। लिंकन के लिए पुस्तक खरीद कर पढ़ना भी मुमकिन नहीं था। मगर पड़ोसी से किताब मांगने में उन्हें हिचक महसूस हुई। पड़ोसी ने उनकी रुचि को देखते हुए वह पुस्तक उन्हें दे दी। लिंकन ने उसे जल्दी ही लौटाने का वादा किया। एक दिन जोरों की बारिश हुई। चूंकि लिंकन झोपड़ी में रहते थे, जिसकी छत बारिश का पानी नहीं रोक पाती थी।

बारिश में वह पुस्तक पूरी तरह भग गयी। लिंकन ने वह पुस्तक पूरी तरह पढ़ी भी नहीं थी फिर भी दुखी मन से पड़ोसी के पास जाकर बोले, आपकी पुस्तक को ठीक से संभाल नहीं पाने का मुझसे अपराध हुआ है, किंतु मैं आपको नयी पुस्तक लाकर दूंगा। पड़ोसी ने उनकी गरीबी को देखते हुए सवाल किया, नयी पुस्तक किस तरह लाकर दोगे? लिंकन बोले, मुझे अपनी मेहनत पर पूरा विश्वास है। मैं आपके खेत में मजदूरी कर पुस्तक के दोगुने दाम का काम कर दूंगा। पड़ोसी मान गया। लिंकन ने काम करके पुस्तक के दाम की भरपाई कर दी और वॉशिंग्टन की जीवनी वाली किताब उन्हीं

की संपत्ति हो गयी। इस प्रकार अपनी मेहनत से लिंकन ने अपने पुस्तकालय की पहली पुस्तक प्राप्त की थी। लिंकन के जीवन की यह घटना सिखाती है कि हमें जीवन में अगर कुछ हासिल करना है, तो अपने श्रम पर ही भरोसा करना चाहिए, न कि किसी दूसरे पर।

खुद के मेहनत से जो उपलब्धि प्राप्त होती है, उसमें ही आप प्रशंसा के पात्र होते हैं। अपने ऊंचे विचारों और महान व्यक्तित्व के कारण ही एक दिन लिंकन अमेरिका के राष्ट्रपति पद तक पहुंचे।

स्वामी दयानंद सरस्वती (जन्म- १२ फरवरी)

१२ फरवरी १८२४ को आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म मोरवी (गुजरात) में हुआ था। इनका वास्तविक नाम मूलशंकर था। १४ वर्ष की उम्र में मूर्तिपूजा के प्रति विद्रोह किया जब एक चूहे को शिवलिंग पर चढ़ा हुआ देखा। २१ वर्ष में घर छोड़ने के बाद वे वेदांत के प्रभाव में आए और सन्यासियों की चतुर्थ श्रेणी में दीक्षित हुए। यहीं उन्हें दयानंद सरस्वती की उपाधि मिली। उन्होंने १८७५ में आर्य समाज की स्थापना की। साथ ही धार्मिक संकीर्णता, पाखंड, जातिवाद और बाल-विवाह का विरोध कर नारी शिक्षा तथा विधवा विवाह को प्रोत्साहित किया। ३० अक्टूबर १८८३ को उनका निधन हुआ था।

महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती आर्य समाज के प्रवर्तक और प्रखर सुधारवादी सन्यासी थे। जिस समय केशवचन्द्र सेन ब्रह्मसमाज के प्रचार में संलग्न थे लगभग उसी समय दण्डी स्वामी विरजानन्द की मथुरा पुरी स्थित कुटी से प्रचण्ड अग्निशिखा के समान तपोबल से प्रज्वलित, वेदविद्यानिधान एक सन्यासी निकला, जिसने पहले पहल संस्कृतज्ञ विद्वात्संसार को वेदार्थ और शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। यह सन्यासी स्वामी दयानन्द सरस्वती थे।

आर्यसमाज की स्थापना के साथ ही दयानंद सरस्वती ने हिन्दी में ग्रंथ रचना आरम्भ की। साथ ही पहले के संस्कृत में लिखित ग्रंथों का हिन्दी में अनुवाद किया। ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका उनकी असाधारण योग्यता का परिचायक ग्रंथ है। सत्यार्थप्रकाश सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ है। अहिन्दी भाषी होते हुए भी स्वामी जी हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। उनके शब्द थे- मेरी आंखें तो उस दिन को देखने के लिए तरस रही हैं, जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा को बोलने और समझने लग जायेंगे। अपने विचारों के कारण स्वामी जी को प्रबल विरोध का भी सामना करना पड़ा। उन पर पत्थर मारे गए, विष देने के प्रयत्न भी हुए, डुबाने की चेष्टा की गई, पर वे पाखंड के विरोध और वेदों के प्रचार के अपने कार्य पर अडिग रहे। उनका निधन ३० अक्टूबर को हुआ।

सूफी अम्बा प्रसाद (निधन- १२ फरवरी)

सूफी अम्बा प्रसाद भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रवादी नेता, महान क्रांतिकारी और स्वतंत्रता सेनानी थे। इनकी क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण ब्रिटिश सरकार ने इन्हें वर्ष १८९७ और १९०७ में फाँसी की सजा सुनाई थी। किंतु दोनों ही बार फाँसी से बचने के लिए सूफी अम्बा प्रसाद ईरान भाग गये। ईरान में ये गदर पार्टी के अग्रणी नेता थे। ये अपने सम्पूर्ण जीवन काल में वामपंथी रहे। सूफी अम्बा प्रसाद का मकबरा ईरान के शीराज शहर में बना हुआ है।

१३ फरवरी

सरोजिनी नायडू

सच बोलना अच्छा है, किंतु सच जीना और अधिक अच्छा है- यह बोध वाक्य है उत्तर प्रदेश की प्रथम राज्यपाल सरोजिनी नायडू का। १९१९ में मद्रास की एक विशाल जनसभा में उन्होंने इस वाक्य को अपना जीवनादर्श घोषित किया था। वह जन्मजात कवयित्री थीं। राष्ट्रप्रेम उनके रोम-रोम में समाया था। आजादी के आंदोलन के दौरान एक बार गोपालकृष्ण गोखले से मिलने पूना गई। भेंट होने पर गोखले ने उनसे कहा, तो तुम मुझे यह समझाने आई हो कि तुम्हारा दृष्टिकोण सही है ? यह बहस का मुद्दा है, इस पर हम बहस जरूर करेंगे। पर बहस बाद में, पहले यहां मेरे साथ खड़ी हो जाओ और इन तारों, सामने वाली इन पर्वतमालाओं को साक्षी बनाकर अपने स्वप्न, गीत, विचार, जीवन-आदर्श, सभी कुछ भारतमाता को अर्पित कर दो और भारत के हजारों-हजार गांवों में फैले सुप्त जनमानस को जगाओ। उन्होंने अपनी भावी कविताएं भारतमाता की सेवा में समर्पित करने का संकल्प लिया। भारतीयता से ओतप्रोत कविताएं रचने और अपने मधुर कंठ से गाने के कारण ही वे कालांतर में भारत कोकिला कहलाई।

१३ फरवरी १८७९ को हैदराबाद में जन्मीं सरोजिनी नायडू ने गोखले और गांधीजी के साथ स्वतंत्रता का बिगुल बजाया। कांग्रेस की सक्रिय सदस्य होने के नाते उन्होंने संपूर्ण देश का दौरा कर राष्ट्रीय जागरण का संदेश प्रचारित किया। १९१७ से लेकर १९४७ के बीच भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की कोई ऐसी घटना नहीं, जिसमें सरोजिनी नायडू ने अपनी सक्रिय भागीदारी दर्ज न कराई हो। वे कहती थीं कि अक्सर लोग पूछते हैं कि मैं काव्य का स्वप्नलोक छोड़कर राजनीति के खुश्क धरातल पर क्यों उतरी ? मेरे पास यही उत्तर है कि कवि समाज से अलग नहीं है। उसका भाग्य भी देश की जनता, उसकी कठिनाइयों और परेशानियों के साथ जुड़ा है। वह दो बार अखिल भारतीय कांग्रेस की अध्यक्ष निर्वाचित हुई। १९२५ के कानपुर अधिवेशन में वह प्रथम बार कांग्रेस अध्यक्ष चुनी गई। इस पद को यद्यपि उनसे पहले डॉ. एनी बेसेंट सुशोभित कर चुकी थीं तथापि वे इस गौरवपूर्ण पद को प्राप्त करने वाली प्रथम भारतीय महिला थीं। आजादी मिलने के बाद प्रथम महिला राज्यपाल होने का गौरव भी उन्हें ही मिला। उनका निधन २ मार्च, १९४९ को हुआ।

सरोजिनी नायडू सुप्रसिद्ध कवयित्री और भारत देश के सर्वोत्तम राष्ट्रीय नेताओं में से एक थीं। वह भारत के स्वाधीनता संग्राम में सदैव आगे रहीं। १३ फरवरी, १९६४ को भारत सरकार ने उनकी जयंती के अवसर पर उनके सम्मान में १५ नए पैसे का डाक टिकट भी चलाया। इस महान देशभक्त को देश ने बहुत सम्मान दिया। सरोजिनी नायडू को विशेषत: भारत कोकिला, राष्ट्रीय नेता और नारी मुक्ति आन्दोलन की समर्थक के रूप में सदैव याद किया जाता रहेगा। वे बहुभाषाविद थी। वह क्षेत्रानुसार अपना भाषण अंग्रेजी, हिन्दी, बांग्ला या गुजराती भाषा में देती थीं।

भारत कोकिला महान कवयित्री सरोजिनी नायडू का जन्म १३ फरवरी, १८७९ को पूर्वी बंगाल के ब्रह्मनगर गांव में हुआ था। पिता का नाम डॉ. अघोर नाथ चट्टोपाध्याय व माता का नाम श्रीमती बरदा सुन्दरी था। इन्होंने १८९१ में मद्रास में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके बाद लंदन के किंग्ज कॉलेज और फिर कैंब्रिज के गर्टन कॉलेज में अध्ययन किया। लंदन में वे प्रख्यात अंग्रेजी लेखकों से मिलती रही। ३८ वर्ष तक अंग्रेजी में उच्च कोटि की कविताएं लिखती

रही। महात्मा गांधी, नेहरू, गोखले, गुरूदेव भी उनके विचारों तथा लेखन से प्रभावित थे। १८९८ में लंदन से लौटने के पश्चात श्री गोविन्द राजुल नायडू से स्वेच्छा से विवाह किया। वह बहुत ही विनोदप्रिय थी। उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय भूमिका निभाई तथा नेतृत्व किया। स्वतंत्रता के बाद वह उत्तर प्रदेश की प्रथम राज्यपाल बनाई गई। राज्यपाल के रूप में अपनी प्रशासनिक क्षमता का बुद्धिमत्तापूर्ण परिचय दिया। श्रीमती नायडू की प्रसिद्ध पुस्तकों में गोल्डेन थ्रेशोल्ड, द वर्ड ऑफ टाइम, द ब्रोकेन विंग, द सेप्टर्ड लूट आदि प्रमुख हैं। राष्ट्रीय एकता, नारी उत्थान तथा भारतीय सभ्यता संस्कृति की प्रतिमान सरोजिनी नायडू का संदेश आज भी स्वदेशी जागृति के लिए प्रासंगिक है जो सदा सर्वदा प्रेरणा देता रहेगा। सरोजिनी नायडू को विशेष रूप से राष्ट्रीय नेता और नारी-मुक्ति की समर्थक के रूप में याद किया जाता है। राष्ट्रीय नेता होने के कारण उन्हें हमेशा देश की राजनीतिक निर्भरता की चिन्ता रहती थी और एक नारी होने के कारण वह भारतीय नारी की दुखद स्थिति से परिचित थी। नारी के प्रति हो रहे अन्यायों के विरुद्ध उन्होंने आवाज उठाई। नारियों को उनके मूलभूत अधिकारों से वंचित रखनेवाली सामाजिक व्यवस्था का उन्होंने विरोध किया। वह नारीवाद नहीं थीं लेकिन भारत की नारियों को जिन समस्याओं और कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था उनका उन्हें पूरा-पूरा ख्याल था। उनका निधन २ मार्च को हुआ। सरोजिनी नायडू सुप्रसिद्ध कवयित्री और भारत देश के सर्वोत्तम राष्ट्रीय नेताओं में से एक थीं। वह भारत के स्वाधीनता संग्राम में सदैव आगे रहीं। उनके संगी साथी उनसे शक्ति, साहस और ऊर्जा पाते थे। युवा शक्ति को उनसे आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती थी।

गोपाल प्रसाद व्यास (जन्म- १३ फरवरी)

पंडित गोपाल प्रसाद व्यास भारत के प्रसिद्ध कवियों, लेखकों और साहित्यकारों में से एक थे। वे ब्रजभाषा के कवि, समीक्षक, व्याकरण, साहित्य-शास्त्र, रस-रीति, अलंकार, नायिका भेद और पिगल के मर्मज्ञ माने जाते थे। पंडित जी हिन्दी में व्यंग्य-विनोद की नई धारा के जनक थे। गोपाल प्रसाद व्यास हास्य रस में पत्नीवाद के प्रवर्तक माने जाते थे। वे सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक व्यंग्य-विनोद के प्रतिष्ठा प्राप्त कवि एवं लेखक थे और हास्यरसावतार के नाम से प्रसिद्ध थे।

फैज अहमद फैज (जन्म- १३ फरवरी)

फैज अहमद फैज प्रसिद्ध शायर थे जिनको अपनी क्रांतिकारी रचनाओं में रसिक भाव (इंकलाबी और रूमानी) के मेल की वजह से जाना जाता है। सेना, जेल तथा निर्वासन में जीवन व्यतीत करनेवाले फैज ने कई नज्म, गजल लिखी तथा उर्दू शायरी में आधुनिक प्रगतिवादी दौर की रचनाओं को सबल किया। उन्हें नोबेल पुरस्कार के लिए भी मनोनीत किया गया था। जेल के दौरान लिखी गई उनकी कविता जिन्दा नामा को बहुत पसंद किया गया था। उनके द्वारा लिखी गई कुछ पंक्तियाँ अब भारत पाकिस्तान की आम भाषा का हिस्सा बन चुकी हैं, जैस कि और भी गम हैं जमाने में मुहब्बत के सिवा।

जगजीत सिंह अरोड़ा (जन्म- १३ फरवरी)

जगजीत सिंह अरोड़ा भारतीय सेना के कमांडर थे। उनका जन्म झेलम में हुआ था जो वर्तमान में पाकिस्तान में स्थित है। पाकिस्तान के साथ १९७१ के युद्ध में उसे पूर्वी मोर्चे पर करारी मात देकर बांग्लादेश नाम के नये देश को विश्व के मानचित्र में स्थापित करनेवाले हीरो लेफ्टिनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा का जन्म १९१६ ई. में हुआ था।

१४ फरवरी

सुषमा स्वराज (जन्म- १४ फरवरी)

सुषमा स्वराज भारत सरकार की वर्तमान केंद्रीय मंत्रिमंडल में शामिल विदेश मंत्री हैं। भारत की प्रमुख राजनीतिक पार्टियों में से एक भारतीय जनता पार्टी की शीर्ष महिला नेत्रियों में गिनी जाती हैं। पार्टी ने उन्हें संसद मे विपक्ष का नेता नियुक्त किया है। सुषमा स्वराज ग्यारहवीं, बारहवीं और पंद्रहवीं लोक सभा की सदस्य चुनी गयी थीं। उन्हें सन २००९ में लोकसभा चुनावों के लिये भाजपा की १९ सदस्यीय चुनाव प्रचार समिति का अध्यक्ष भी बनाया गया था। सुषमा स्वराज केन्द्रीय मंत्री और देश की राजधानी दिल्ली की प्रथम महिला मुख्यमंत्री रही हैं।

भावी प्रधानमंत्री पद के लिए पहले शिवसेना सुप्रीमो बाल ठाकरे एवं बाद में कांग्रेस नेता दिग्विजय सिंह तथा अन्य ने भले ही जिस प्रयोजन से भाजपा नेत्री एवं प्रतिपक्ष नेता सुषमा स्वराज का नाम उछाला हो किंतु इसमें दो राय नहीं कि वह भारतीय राजनीति की सबसे बेबाक एवं बेजोड़ राजनेत्री हैं। उनकी बेबाकी एवं वाकपटुता के सामने कोई टिक नहीं पाता। विरोधी नेता भी उनकी बातों एवं तर्क व दलीलों के आगे कायल होकर निरूत्तर हो जाते हैं। उनकी योग्यता का गुणगान बाल ठाकरे के अलावा विरोधी दल के नेता दिग्विजय सिंह को भी करना पड़ा। सचमुच में सुषमा स्वराज का संपूर्ण व्यक्तित्व अपने आपमें निराला एवं अद्‌भुत है। बेबाक एवं बेमिसाल राजनेत्री सुषमा स्वराज के व्यक्तित्व एंव कृतित्व में संपूर्ण भारतीयता की झलक मिलती है। इनमें भारतीय महिला की दमदारी के दर्शन होते हैं। मुस्कान उनकी पहचान है। इनमें गजब का हौसला है। उनकी हर बात वजनदार होती है। इन्होंने मात्र १८ वर्ष की उम्र में छात्र नेता के रूप में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की सरकार के विरुद्ध १९७० में मोर्चा खोल दिया था। सुषमा स्वराज ने १९७३ में सुप्रीम कोर्ट में एक वकील के रूप में कार्य करना आरंभ किया था। तभी वरिष्ठ वकील स्वराज कौशल से परिचय एवं १३ जुलाई १९७५ को विवाह हुआ था। बांसुरी स्वराज नामक लड़की उनकी एक मात्र संतान है। सुषमा स्वराज वकालत करने के दौरान अनेक सामाजिक सांस्कृति संगठनों से जुड़ी रहीं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन हरियाणा की ४ वर्षों तक अध्यक्ष रहीं। १९७० में जयप्रकाश नारायण के आन्दोलन से प्रभावित होकर तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की सरकार के विरुद्ध छात्र नेता के रूप में पहला प्रदर्शन किया। चौधरी देवीलाल के समय हरियाणा के अंबाला छावनी विधानसभा सीट से चुनाव लड़ीं और जीतकर मात्र २५ वर्ष की उम्र में हरियाणा की श्रम एवं रोजगार मंत्री बनकर कीर्तिमान बनाया। राजनीति में इस पदार्पण के बाद वे सतत आगे बढ़ती गईं। सन १९८० में भाजपा से जुड़ीं और आज वह १५वीं लोकसभा में प्रतिपक्ष की नेता है।। इस बीच उन्होंने विधायक, राज्यसभा सदस्य, लोकसभा सदस्य, केन्द्र में मंत्री एवं भाजपा संगठन में विभिन्न दायित्वों का निर्वहन किया। आज संसद में एवं टीवी पर उन्हें लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार एवं सोनिया के समतुल्य महत्व एवं समय मिलता है। वह कुछ मास तक दिल्ली की मुख्यमंत्री भी रहीं। कॉलेज जीवन से आज तक अनेक सम्मानों से नवाजी जा चुकी हैं। वे जब बोलती हैं तब विरोधियों को खामोश रहकर बचाव करना पड़ता है अन्यथा उनकी जुबान से निकलने वाले गोला बारूद से सामनेवाले की धज्जियां उड़ जाती हैं। उन्हें तलेभुने की बजाय सादा भोजन पसंद है। कृष्ण की भक्त हैं। ब्रज चौरासी भजन सुनना पसंद करती हैं। हर साल मथुरा, वृंदावन दर्शन करने जरूर जाती हैं। अनेक धार्मिक मान्यताओं एवं व्रत, उपवास को मानती है। समय पर कार्यक्रम में पहुंचने को

महत्व देती हैं। वह कृष्ण की भक्त हैं इसलिए अपनी एक मात्र संतान बेटी का नाम बांसुरी रखा है। बांसुरी स्वराज वकालत कर रही हैं। सुषमा स्वराज राजनीतिक विषयों पर उससे चर्चा करती हैं। वह स्वयं भी राजनीति में रुचि रखती हैं एवं समय पर विरासत संभालने को तैयार हैं। सुषमा स्वराज को संगीत एवं कविताएं पसंद हैं। आर्थिकी, रक्षा-सुरक्षा एवं सूचना संसार पसंदीदा विषय हैं। वह हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी, उर्दू, हरियाणवी, मारवाडी, मलयाली एवं तमिल आदि भाषा जानती हैं व उनमें धाराप्रवाह बातचीत कर सकती हैं। इसलिए भाषण के दौरान संबद्ध विषय पर उनकी पकड़ मजबूत रहती है। अटल बिहारी बाजपेयी धीमी गति से बोलते हैं जबकि सुषमा के भाषण में प्रवाहमयता है। आडवाणी या कोई और नेता इनके जैसा बोल नहीं सकता। सुषमा स्वराज, अटल, आडवाणी को अपना आदर्श मानती हैं, किंतु सभी सुषमा से प्रभावित हैं। सुषमा सबसे बेबाक एवं बेजोड़ हैं।

कमला प्रसाद (जन्म- १४ फरवरी)

कमला प्रसाद हिन्दी प्रमुख लेखक एवं आलोचक थे। प्रगतिशील लेखक संघ के पूर्व राष्ट्रीय महासचिव और वसुधा पत्रिका के संपादक कमला प्रसाद ने एक ऐसे समय में जब सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक स्तर पर हो रहे अन्याय के खिलाफ लेखकीय प्रतिरोध की अत्यंत और प्रखर जरूरत थी, उन्होंने पूरे देश में घूम-घूम कर लेखकों को चेताया, सजग और सचेत किया।

मोहन धारिया (जन्म- १४ फरवरी)

मोहन धारिया भारत के पूर्व केंद्रीय मंत्री, वकील एवं सामाजिक कार्यकर्ता थे। लोकसभा और राज्यसभा के दो बार सदस्य रह चुके मोहन धारिया राज्य स्तरीय व राष्ट्र स्तरीय राजनीति का जाना-पहचाना नाम है। वह १९७१ में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के कार्यकाल में राज्य मंत्री रहे लेकिन १९७५ में प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के कार्यकाल में वाणिज्य मंत्री बने थे। मोहन धारिया योजना आयोग के उपाध्यक्ष भी रहे थे।

बाबर (जन्म- १४ फरवरी)

१५२६ ई. में पानीपत के प्रथम युद्ध में दिल्ली सल्तनत के अंतिम वंश (लोदी वंश) के सुल्तान इब्राहीम लोदी की पराजय के साथ ही भारत में मुगल वंश की स्थापना हो गई। इस वंश का संस्थापक जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर था। बाबर का पिता उमर शेख मिर्जा, फरगना का शासक था, जिसकी मृत्यु के बाद बाबर राज्य का वास्तविक अधिकारी बना। पारिवारिक कठिनाईयों के कारण वह मध्य एशिया के अपने पैतृक राज्य पर शासन नहीं कर सका। उसने केवल २२ वर्ष तक काबुल का शासक रहा। उस काल में उसने अपने पूर्वजों के राज्य को वापिस पाने की कई बार कोशिश की, पर सफल नहीं हो सका।

१५ फरवरी

नरेश मेहता (जन्म- १५ फरवरी)

नरेश मेहता ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित हिंदी के यशस्वी कवि एवं उन शीर्षस्थ लेखकों में से हैं जो भारतीयता की अपनी गहरी दृष्टि के लिए जाने जाते हैं। नरेश मेहता ने आधुनिक कविता को नयी व्यंजना के साथ नया आयाम दिया।

नरेश मेहता ने इन्दौर से प्रकाशित चौथा संसार हिन्दी दैनिक का सम्पादन भी किया। नरेश मेहता की भाषा संस्कृतनिष्ठ खड़ीबोली है। शिल्प और अभिव्यंजना के स्तर पर उसमें ताजगी और नयापन है। उन्होंने सीधे, सरल बिम्बों का प्रयोग भी किया है। नरेश मेहता की भाषा विषयानुकूल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है। उनके काव्य में रूपक, मानवीकरण, उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है। नवीन उपमानों के साथ-साथ, परंपरागत और नवीन छंदों का प्रयोग किया है। रागात्मकता, संवेदना और उदात्तता उनकी सजन्नता के मूल तत्त्व है, जो उन्हें प्रकृति और समूची सृष्टि के प्रति पर्युत्सुक बनाते हैं।

राधावल्लभ त्रिपाठी (जन्म- १५ फरवरी)

राधावल्लभ त्रिपाठी प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। मुख्यत: वे संस्कृत भाषा के प्रतिष्ठित साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं। उनके द्वारा रचित कविता संग्रह संधानम के लिये उन्हें सन १९९४ में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। राधावल्लभ त्रिपाठी संस्कृत को आधुनिकता का संस्कार देनेवाले विद्वान और हिन्दी के प्रखर लेखक व कथाकार हैं।

१६ फरवरी

राजेन्द्रलाल मित्रा (जन्म- १६ फरवरी)

राजेन्द्रलाल मित्रा भारत विद्या से संबंधित विषयों के प्रख्यात विद्वान थे। इन्होंने संस्कृत, फारसी, बंगला और अंग्रेजी भाषाओं में दक्षता प्राप्त की थी। इन्होंने अनेक ग्रंथ एवं रचनाओं का संपादन किया है। राजेन्द्रलाल मित्रा २५ वर्ष तक वाडिया इंस्टीट्यूट के निदेशक रहे थे।

मेघनाथ साहा (निधन- १६ फरवरी)

मेघनाथ साहा गणित व भौतिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करनेवाले भारतीय वैज्ञानिक थे। इनके अथक प्रयासों से ही इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स की स्थापना हुई थी। डॉ. मेघनाथ साहा ने तारों के ताप और वर्णक्रम के निकट संबंध के भौतकीय कारणों को खोज निकाला था। अपनी इस खोज के कारण २६ वर्ष की उम्र में ही इन्हें अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। इन्हें ३४ वर्ष की उम्र में लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी का फैलो चुना गया था। मेघनाथ साहा संसद के भी सदस्य थे। उनके प्रयत्न से भारत में भौतिक विज्ञान को बड़ा प्रोत्साहन मिला था।

१७ फरवरी

के. चन्द्रशेखर राव (जन्म- १७ फरवरी)

कल्वाकुंतला चन्द्रशेखर राव नवगठित राज्य तेलंगाना के प्रथम मुख्यमंत्री हैं। वे तेलंगाना राष्ट्र समिति के प्रमुख हैं। के. चन्द्रशेखर राव को अलग तेलंगाना राष्ट्र आंदोलन के प्रमुख कार्यकर्ता के रूप में जाना जाता है। चन्द्रशेखर जी १५वीं लोकसभा के सदस्य हैं। केंद्र में श्रम और नियोजन मंत्री के पद को भी वे सुशोभित कर चुके हैं। तेलंगाना राष्ट्र समिति के गठन से पहले चन्द्रशेखर राव तेलगू देशम पार्टी के सदस्य थे। उन्होंने अलग तेलंगाना राज्य के निर्माण की मांग करते हुए तेलगू देशम पार्टी छोड़ दी थी।

जीवनानन्द दास (जन्म- १७ फरवरी)

जीवनानन्द दास बांग्ला भाषा के प्रसिद्ध कवि और लेखक थे। वे ऐसे बांग्ला कवि थे, जिन्होंने कविता में वर्णनात्मक शैली के स्थापत्य का सूत्रपात किया। उनके उपन्यास और कहानियाँ बांग्ला क्षेत्र के लोगों के बीच खास स्थान रखते हैं। उन्हें १९५५ में मरणोपरांत श्रेष्ठ कविता के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। जीवनानन्द दास जी की कविता ने रवींद्रनाथ के बाद बांग्ला समाज की कई पीढ़ियों को चमत्कृत किया। उनकी कविता बनलेता सेन तो मानों अनिवार्य रूप से कंठस्थ की जाती रही है।

१८ फरवरी

रामकृष्ण परमहंस (जन्म- १८ फरवरी)

रामकृष्ण परमहंस भारत के एक महान संत एवं विचारक थे। इन्होंने सभी धर्मों की एकता पर जोर दिया था। उन्हें बचपन से ही विश्वास था कि ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं। अत: ईश्वर की प्राप्ति के लिए उन्होंने कठोर साधना और भक्ति का जीवन बिताया । रामकृष्ण मानवता के पुजारी थे। साधना के फलस्वरूप वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संसार के सभी धर्म सच्चे हैं और उनमें कोई भिन्नता नहीं है। वे ईश्वर तक पहुंचने के भिन्न-भिन्न साधन मात्र हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध धार्मिक रहस्यवादी योगी रामकृष्ण परमहंस का मानना था कि धर्म चाहे कोई भी हो उसका लक्ष्य परमतत्व की प्राप्ति ही है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इनके अनुयाई धर्म में बताए गए अलग अलग रास्तों का पालन करके आगे बढ़ती हैं। धर्म चाहे हिंदू, मुस्लिम अथवा ईसाई हो सभी एक समान हैं और उनका पालन करके हमें एक ही ईश्वर की प्राप्ति होती है।

राजधानी दिल्ली स्थित रामकृष्ण मिशन में सचिव शांतमात्मानंद ने कहा कि रामकृष्ण परमहंस अपने शिष्यों को प्रवचन आदि देकर आध्यात्मिक शिक्षा नहीं देते थे। इसके बजाय वह चीजों को अपने जीवन में अपनाने के बाद उसे प्रमाणित करके दिखाते थे। उन्होंने बिना आहार, बिना निद्रा के ध्यान और ईश्वर की भक्ति की। उनके शिष्य उनके जीवन से ही शिक्षा प्राप्त करते थे। रामकृष्ण परमहंस ने हिंदू, मुस्लिम, ईसाई धर्मों का गहन अध्ययन करने के बाद पाया कि इन सभी का लक्ष्य ईश्वर अथवा परमतत्व को प्राप्त करना है। इसके लिए इनमें साधना के अलग अलग साधन का प्रयोग किया जाता है।

रामकृष्ण परमहंस का जन्म १८ फरवरी १८३६ को पश्चिम बंगाल के हुगली जिले के कमरपुकुर गांव के एक गरीब परंतु धर्मनिष्ठ वैष्णव ब्राह्मण परिवार में हुआ था। रामकृष्ण परमहंस के पिता का नाम खुदीराम चटोपाध्याय और मां का नाम चंद्रमणि देवी था। उनके अभिभावकों ने उनका नाम गदाधर चटोपाध्याय रखा। वह बाद में मां काली के दक्षिणेश्वर मंदिर के पुजारी बने। उनके कई शिष्यों का मानना है कि वह भगवान के एक अवतार थे। रामकृष्ण परमहंस की प्रथम आध्यात्मिक गुरु एक सन्यासी महिला थी जिनको तंत्र और वैष्णव भक्ति का काफी ज्ञान था। बाद में एक अद्वैत वेदांती संन्यासी ने उन्हें ध्यान की शिक्षा दी। परमहंस के अनुसार इस दौरान उन्होंने अपने इस गुरु के दिशानिर्देशन में निर्विकल्प समाधि का अनुभव किया। उन्होंने पारंपरिक रूप से कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की थी लेकिन इसके बावजूद उन्होंने मध्यम

वर्ग और बंगाली शिक्षाविदों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। वर्ष १८४३ में रामकृष्ण परमहंस के पिता का देहांत हो गया जिससे वह अपनी मां के और करीब आ गए। पिता के निधन से परिवार की पूरी जिम्मेदारी परमहंस के बड़े भाई रामकुमार के कंधों पर आ गई।

रामकृष्ण अपनी पत्नी को मां कहते थे और यूं ही नहीं कि बाद में कहने लगे थे। रामकृष्ण जब चौदह साल के थे, तब उनको पहली समाधि हुई। आ रहे थे अपने खेत वापस। झील के पास से गांव में से गुजरते थे। सुंदर गांव की झील, सांझ का समय, सूरज का डूबना, बस डूबा-डूबा। सूरज की डूबती हुई किरणों ने आकाश में फैली छोटी-छोटी बदलियों पर बड़े रंग फैला रखे हैं। वर्षा के दिन करीब आ रहे हैं। काली बदलियां भी छा गई हैं, घनघोर। जल्दी रामकृष्ण लौट रहे हैं। तभी बगुलों की एक पंक्ति झील से उड़ी और काली बदलियों को पार करती हुई निकल गई। काली बदलियों से सफेद बगुलों की पंक्ति का निकल जाना, जैसे बिजली कौंध गई। यह सौंदर्य का ऐसा क्षण था कि रामकृष्ण वहीं गिर पड़े। घर उन्हें लोग बेहोशी में लाये। लोग समझे बेहोशी है, वह थी मस्ती। बामुश्किल से वे होश में लाये जा सके। उनसे पूछा, क्या हुआ?

उन्होंने कहा, अद्‌भुत हुआ, बड़ा आनंद हुआ। बार बार ऐसा ही होना चाहिए। अब मुझे होश में रहने की जिसको तुम होश कहते हो उसमें रहने की कोई इच्छा नहीं।

गांव के लोगों ने, घर के लोगों ने सोचा कि लड़का बिगड़ा जा रहा है। यह तो मामला खराब है। यह ऐसे भी साधु संग करता था, जाता था सुनने सत्संग, तब तक भी ठीक था, अब यह समाधि में भी जाने लगा। अब यह बेहोश हो-होकर गिरने लगा। यह मामला बिगड़ा जा रहा था। यह हाथ से गया गदाधर उनका नाम था। जो घर के लोगों का आम सोचने का ढंग होता है, उन्होंने कहा, जल्दी से इसके विवाह वगैरह का इंतजाम करो, हथकड़ी-बेड़ी डाल दो, तो यह रास्ते पर आ जायेगा। सो रामकृष्ण से पूछा कि बेटा, विवाह करोगे?

रामकृष्ण ने कहा- करेंगे।

घर के लोग थोड़े चौंके। उन्होंने सोचा था यह इनकार करेगा।

उन्होंने कहा, जरूर करेंगे। किससे करना है? घर के लोगों ने कहा, अरे। हम तो सोचते थे तू सत्संगी हो गया है, समाधि लगने लगी और गांव में बड़ी चर्चा है कि तू ज्ञानी हुआ जा रहा है। इसलिए तो विवाह कर रहे हैं। और तू कहता है करेंगे, किससे करना है? तू इतनी जल्दी में है। पास में ही गांव में एक लड़की खोजी गई। रामकृष्ण को दिखाने ले गये। रामकृष्ण को जब लड़की मिठाई परोसने आई। बंगाल तो वहां संदेश परोसा होगा। जब संदेश उसने रामकृष्ण की थाली में रखे, रामकृष्ण ने देखा। शायद उसका नाम था शारदा। खीसे में जितने मां ने रूपये रख दिये थे, सब निकालकर उसके पैरों पर चढ़ा लिए और कहा कि तू तो मेरी मां है। शादी हो गई। लोगों ने कहा, तू पागल है रे। पहले तो शादी करने की इतनी जल्दी की और अब पत्नी को मां कह रहा है। कुछ अक्ल है? बेअक्ल कहीं का। मगर उसने कहा कि यह तो मेरी मां है। शादी होगी, मगर यह मेरी मां ही रहेगी।

शादी भी हो गई। शादी में इनकार नहीं किया। यह आदमी अद्‌भुत है। शादी करने में इनकार ही नहीं किया। नोट देखकर आंख बंद करनेवाला आदमी नहीं है यह। अरे शादी से भी नहीं भागा। मगर शादी भी किस मस्ती से की। कहा कि मेरी मां है और फिर जीवन भर मां ही माना। मां ही कहते थे वे शारदा को और हर वर्ष जब बंगाल में काली की पूजा होती,

तो वे काली की पूजा तो साल भर करते थे, मगर जब काली की पूजा का दिन आता है, उस दिन वे शारदा की पूजा करते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध धार्मिक रहस्यवादी योगी रामकृष्ण परमहंस का मानना था कि धर्म चाहे कोई भी हो उसका लक्ष्य परमतत्व की प्राप्ति ही है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इनके अनुयायी धर्म में बताये गए अलग अलग रास्तों का पालन करके आगे बढ़ते हैं। धर्म चाहे हिंदू, मुस्लिम अथवा ईसाई हो सभी एक समान हैं और उनका पालन करके हमें एक ही ईश्वर की प्राप्ति होती है। राजधानी दिल्ली स्थित रामकृष्ण मिशन में सचिव शांततात्मानंद ने कहा कि रामकृष्ण परमहंस अपने शिष्यों को प्रवचन आदि देकर आध्यात्मिक शिक्षा नहीं देते थे। इसके बजाय वह चीजों को अपने जीवन में अपनाने के बाद उसे प्रमाणित करके दिखाते थे। उन्होंने बिना आहार, बिना निद्रा के ध्यान और ईश्वर की भक्ति की। उनके शिष्य उनके जीवन से ही शिक्षा प्राप्त करते थे। लेखक नीलमणि दुबे का कहना है कि रामकृष्ण परमहंस ने हिंदू, मुस्लिम, ईसाई धर्मों का गहन अध्ययन करने के बाद पाया कि इन सभी का लक्ष्य ईश्वर अथवा परमतत्व को प्राप्त करना है। इसके लिए इनमें साधना के अलग अलग साधन का प्रयोग किया जाता है। रामकृष्ण परमहंस का जन्म १८ फरवरी १८३६ को पश्चिम बंगाल के हुगली जिले के कमरपुकुर गांव के एक गरीब परंतु धर्मनिष्ठ वैष्णव ब्राह्मण परिवार में हुआ था। रामकृष्ण परमहंस के पिता का नाम खुदीराम चटोपाध्याय और मां का नाम चंद्रमणि देवी था। उनके अभिभावकों ने उनका नाम गदाधर चटोपाध्याय रखा। वह बाद में मां काली के दक्षिणेश्वर मंदिर के पुजारी बने। उनके कई शिष्यों का मानना है कि वह वह भगवान के एक अवतार थे। रामकृष्ण परमहंस की प्रथम आध्यात्मिक गुरु एक संन्यासी महिला थी जिनको तंत्र और वैष्णव भक्ति का काफी ज्ञान था। बाद में एक अद्वैत वेदांती संन्यासी ने उन्हें ध्यान की शिक्षा दी। परमहंस के अनुसार इस दौरान उन्होंने अपने इस गुरु के दिशानिर्देशन में निर्विकल्प समाधि का अनुभव किया। उन्होंने पारंपरिक रूप से कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की थी लेकिन इसके बावजूद उन्होंने मध्यम वर्ग और बंगाली शिक्षाविदों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। वर्ष १८४३ में रामकृष्ण परमहंस के पिता का देहांत हो गया जिससे वह अपनी मां के और करीब आ गए। पिता के निधन से परिवार की पूरी जिम्मेदारी परमहंस के बड़े भाई राम कुमार के कंधों पर आ गई। उधर रामकृष्ण अब अपना अधिकतर समय घर के कार्यों और मंदिर में पूजा पाठ में व्यतीत करने लगे। जब वह किशोरावस्था में थे उसी समय उनके परिवार की आर्थिक हालत और खराब हो गई। इससे रामकुमार ने कलकत्ता में संस्कृत विद्यालय शुरू किया। वर्ष १८५२ में रामकृष्ण मंदिर के पूजा कार्यों में अपने भाई की सहायता के लिए कलकत्ता चले आये। रामकृष्ण परमहंस को मंदिर में मां काली की मूर्ति के श्रृंगार का कार्य सौंपा गया। वर्ष १८५६ में रामकुमार के निधन के बाद वह काली मंदिर केपुजारी बने। उन्होंने मां काली की मूर्ति को अपनी मां और ब्रह्मांड की मां के रूप में देखना शुरू कर दिया। वर्ष १८५९ में उनका विवाह शारदा देवी से हो गया। विवाह के समय शारदा देवी की आयु १४ वर्ष और रामकृष्ण की २३ वर्ष थी। शारदा देवी १८ वर्ष की आयु में रामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर मंदिर पहुंची। शारदादेवी जब रामकृष्ण परमहंस के पास आयी उस समय उन्होंने तपस्वी के रूप में जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया था। पुजारी के रूप में रामकृष्ण परमहंस शोदषी पूजा करते थे जिसमें शारदा देवी मां काली के स्थान पर बैठती। रामकृष्ण उन्हें मां के रूप में संबोधित करते। रामकृष्ण के कई शिष्य हुए जिनमें स्वामी विवेकानंद प्रमुख थे। स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरु के

विचारों के अनुरूप रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। १८८५ में रामकृष्ण परमहंस को गले का कर्करोग हो गया। उन्हें कलकत्ता के पास स्थित श्यामपुर ले जाया गया जहां डॉ. महेन्द्रलाल सरकार सहित उस समय के जानेमाने चिकित्सकों ने उनका इलाज किया। ऐसा माना जाता है कि मृत्यु से पहले रामकृष्ण परमहंस ने अपनी आध्यात्मिक शक्तियां विवेकानंद को हस्तांतरित कर दी थीं। उन्होंने विवेकानंद से शिष्यों का ध्यान रखने को कहा। उन्होंने १६ अगस्त १८८६ की सुबह अपनी अंतिम सांसें लीं।

रफी अहमद किदवई (जन्म- १८ फरवरी)

रफी अहमद किदवई स्वतंत्रता सेनानी और देश के प्रमुख राजनीतिज्ञ थे। नेहरू जी के कांग्रेस अध्यक्ष बनते ही पुन: दल में वापस आ गए। इसके बाद उन्होंने केंद्र में खाद्य और कृषिमंत्री का पद भार सम्भाला। शासन के सभी पदों पर चाहे प्रदेश हो या केन्द्र उन्होंने अपनी छाप छोड़ी और प्रशासनिक क्षमता के नये मापदंड स्थापित किए। श्री किदवई राष्ट्रवादी, धर्मनिरपेक्ष तथा विश्वसनीय व्यक्ति थे। उनके व्यवहार में कृत्रिमता नहीं थी। प्रतिपक्षी की सहायता करने में भी सदा आगे रहते थे।

मदन लाल ढींगरा (जन्म- १८ फरवरी)

मदन लाल ढींगरा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान क्रांतिकारी थे। स्वतंत्रता भारत के निर्माण के लिए भारत-माता के कितने शूरवीरों ने हंसते-हंसते अपने प्राणों का उत्सर्ग किया था, उन्हीं महान शूरवीरों में अमर शहीद मदन लाल ढींगरा का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य हैं। अमर शहीद मदनलाल ढींगरा महान देशभक्त, धर्मनिष्ठ क्रांतिकारी थे- वे भारत माँ की आजादी के लिए जीवन पर्यंत प्रकार के कष्ट सहन किए परन्तु अपने मार्ग से विचलित न हुए और स्वाधीनता प्राप्ति के लिए फांसी पर झूल गए।

जयनारायण व्यास (जन्म- १८ फरवरी)

जयनारायण व्यास भारत के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी, राजस्थान के पूर्व मुख्यमंत्री और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रसिद्ध राजनेता थे। अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण इन्होंने कई बार जेल की सजा काटी थी। देश के आजाद होने के बाद जयनारायण जी वर्ष १९५६ से १९५७ तक प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे थे। राजस्थान के मुख्यमंत्री पद को भी इन्होंने सुशोभित किया था।

१९ फरवरी

हिन्दू सम्राट छत्रपति शिवाजी (जन्म- १९ फरवरी)

शिवाजी पश्चिमी भारत के मराठा साम्राज्य के संस्थापक थे। शिवाजी के पिता का नाम शाहजी भोसले और माता का नाम जीजाबाई था। सेनानायक के रूप में शिवाजी की महानता निर्विवाद रही है। शिवाजी ने अनेक किलों का निर्माण और पुनरुद्धार करवाया। उनके निर्देशानुसार सन १९७९ ई. में. अन्नाजी दत्तों ने एक विस्तृत भू-सर्वेक्षण करवाया, जिसके परिणामस्वरूप एक नया राजस्व निर्धारण हुआ।

मनुष्य जन्म से महान् नहीं होता। उसके आचार-विचार और उत्कृष्ट कर्म ही उसे महानता प्रदान करते हैं। जिस समय समस्त भारतवर्ष मुसलमानों की सत्ता के अधीन हो चुका था, शिवाजी ने एक स्वतंत्र हिन्दू राज्य की स्थापना करके इतिहास में एक नवीन अध्याय की रचना की।

उनके जीवन में पिता शाहजी का योगदान नहीं के बराबर था। माता जीजाबाई परित्यक्ता का जीवन बिता रही थी। फलत: बालक शिवा की शिक्षा-दीक्षा भी समुचित रूप से नहीं हो पायी, फिर भी उन्होंने अपने बलबूते पर एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। वस्तुत: सिंह का न तो कोई अभिषेक करता है और न संस्कार। अपने बल पर ही वह वनराज की पदवी प्राप्त करता है।

शिवाजी का जन्म वैशाख शुक्ल द्वितीया संवत् १५४९ को शिवनेरी के किले में हुआ था। उनका बचपन सुखद नहीं था। उनके चरित्र निर्माण में माता जीजाबाई का, राजनैतिक दाव पेंच और प्रशासनिक कुशलता में दादा कोण्डदेव एवं आत्मविश्वास स्वजातीय प्रेम राष्ट्रभक्ति, धार्मिक सहिष्णुता का भाव विकसित करने मेंसमर्थ गुरु रामदास का योगदान सर्वोपरि है।

इसे विधि की विडम्बना ही कहें कि भावी सम्राट को माता पति प्रेमवंचिता और निर्धन अवस्था में थी, फिर भी उन्होंने हार नहीं मानी। शिवाजी अभी बालक ही थे, तभी २५ जुलाई १६२९ में निजामशाह ने शिवा के नाना, मामा एवं अन्य जाधव सरदारों की निर्मम हत्या करवा दी। अपने पिता, भाइयों तथा भतीजे के साथ हुये इस अमानवीय विश्वासघात को माता जीजाबाई जीवनपर्यंत नहीं भूल सकी। संभवत: इसी प्रतिशोध की प्रेरणा ने उन्हें सदा यवनों के विनाश की प्रेरणा दी जिसने युग निर्माता शिवाजी का निर्माण किया।

बचपन से ही दादा कोण्डदेव ने बालक शिवा को तत्कालीन परिस्थितियों से गहन परिचय करवाया और न्याय प्रशासन, युद्ध चतुरता, कूटनीति और जनता के प्रति प्यार का पाठ पढ़ाया।

पूना की जागीर पिता द्वारा मिली थी। पिता शाहजी बीजापुर सुल्तान के मनसबदार थे। पूना की जागीर का अच्छा प्रबंध होने के पश्चात् शिवाजी की शिक्षा दीक्षा हुई। १६४० में सईबाई से उनका विवाह हो गया।

जब शिवाजी ने अनुभव किया कि हिन्दुओं की दशा दयनीय है और उन्हें अपने धर्म की आजादी भी नहीं है, तब उन्होंने १६४५ में स्वतंत्र हिंदवी स्वराज का संकल्प लिया और अपने मावल साथियों के साथ तोखी, चाकण, पुरन्दर, सूपा आदि दुर्गोंपर अधिकार कर लिया। इसके बाद सफलताओं का दौर रहा। जावली पर आक्रमण कर तथाकथित क्षत्रिय मोरे परिवार को अपनी शक्ति का परिचय दिया।

१६५७ में जुन्नार और अहमदनगर को लूटकर औरंगजेब को चुनौती दी। फिर कोंकण पर अधिकार किया। १६६०-६१ में मुगलों से सामाना हुआ और शिवाजी ने अंग्रेजों से भी बदला लिया।

पुरन्दर की संधि कर शिवाजी चाहते थे कि मुगलों से बार-बार युद्ध कर जन-धन की हानि न हो किंतु औरंगजेब ने चालाकी से उन्हें आगरा बुलवाकर बंदी बना लिया किंतु वे अपनी सूझ-बूझ से कैद से निकल भागे। यह घटना १९ अगस्त १६६६ की है। १६६७ से १६६९ के बीच शिवाजी ने बाहर से मुगलों के अधीन रहकर शक्ति संचय किया। फिर १६७० में पुन: मुगलों के विरुद्ध जेहाद छेड़ दिया तथा सिंहगढ़ सहित सभी दुर्गों पर पुन: अधिकार कर लिया और जब वे

समझ चुके कि अपना राज्य सुरक्षित है, तब अपना गौरवमय राज्याभिषेक करवाया।

यह प्राचीन भारतीय परम्परा का पुनरोद्धार था। फिर प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार और नयी स्थापनाओं का क्रम शुरू हुआ। उन्होंने राजशक संवत् का प्रचलन किया। प्रशासकीय पदों का संस्कृत नामकरण किया। राजकीय कार्य के लिए राजव्यवहार कोश यानी संविधान की रचना की। पेशवा के प्रधान मंत्री, मजूमदार का अमात्य (राजस्व मंत्री) सुरनिस सचिव आदि नामकरण किया गया। इसी प्रकार धार्मिक व सामाजिक सुधार कार्य भी सम्पन्न किये गये जिनमें धर्मशाला, मन्दिर, वृक्षारोपण और विद्यालय भवन तथा जलाशय निर्माण प्रमुख है।

छत्रपति शिवाजी महान् देशभक्त हिन्दू सम्राट थे। वे स्त्रियों, गौ, ब्राह्मणों एवं मुस्लिम फकीर व उलेमाओं का सम्मान करते थे। वे अंतिम हिन्दू सम्राट थे जिन्होंने महाराष्ट्र सहित सम्पूर्ण देश में एक राज्य की स्थापना का श्रीगणेश किया था। जागीरदार की परम्परा को हटाकर नकद वेतन देने की परम्परा बनायी। सैन्य संगठन, प्रजातांत्रिक-प्रशासन एवं नौसेना बेड़ा, नया सिक्का आदि का प्रचलन कर उन्होंने भावी भारत के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान किया।

वे चरित्रवान् व्यक्ति थे। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उनके प्रमुख पदों पर आरूढ़ थे। सभी धर्मों का आदर करना वे भलीभांती जानते थे। अपने शौर्य, धैर्य, शील और गुणों के कारण वे युगों-युगों तक याद किये जाते रहेंगे।

महान देशभक्त, राष्ट्र निर्माता तथा कुशल प्रशासक छत्रपति शिवाजी महाराज का व्यक्तित्व बहुमुखी था। माँ जीजाबाई के प्रति उनकी श्रद्धा और आज्ञाकारिता उन्हें एक आदर्श सुपुत्र सिद्ध करती है। शिवाजी का व्यक्तित्व इतना आकर्षक था कि उनसे मिलनेवाला हर व्यक्ति उनसे प्रभावित हो जाता था। साहस, शौर्य तथा तीव्र बुद्धि के धनी शिवाजी का जन्म १९ फरवरी, १६३० को शिवनेरी दुर्ग में हुआ था। कुछ विद्वानों के अनुसार उनका जन्म २० अप्रैल १९२७ को हुआ था।

शिवाजी की शिक्षा-दीक्षा माता जीजाबाई के संरक्षण में हुई थी। माता जीजाबाई धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं, उनकी इस प्रवृत्ति का गहरा प्रभाव शिवाजी पर भी था। शिवाजी की प्रतिभा को निखारने में दादाजी कोंडदेव का विशेष योगदान था। उन्होंने शिवाजी को सैनिक एवं प्रशासकीय दोनों प्रकार की शिक्षा दी। शिवाजी में उच्चकोटि की हिन्दुत्व की भावना उत्पन्न करने का श्रेय माता जीजाबाई को एवं दादा कोंडदेव को जाता है। छत्रपति शिवाजी महाराज का विवाह सन १४ मई १६४० में सईबाई निम्बालकर के साथ लाल महल पूना में हुआ था।

शिवाजी की बुद्धि बड़ी ही व्यवहारिक थी, वे तात्कालिक सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों के प्रति बहुत सजग थे। हिन्दू धर्म, गौ एवं ब्राह्मणों की रक्षा करना उनका उद्देश्य था। शिवाजी हिन्दु धर्म के रक्षक के रूप में मैदान में उतरे और मुगल शासकों के विरुद्ध उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। वे मुगल शासकों के अत्याचारों से भली भाँति परिचित थे इसलिए उनके अधीन नहीं रहना चाहते थे।

उन्होंने मावल प्रदेश के युवकों में देशप्रेम की भावना का संचार कर कुशल तथा वीर सैनिकों का एक दल बनाया। शिवाजी अपने वीर तथा देशभक्त सैनिकों के सहयोग से जावली, रोहिड़ा, जुन्नर, कोंकण, कल्याणी आदि उनके प्रदेशों पर अधिकार स्थापित करने में कामयाब रहे। प्रतापगढ़ तथा रायगढ़ दुर्ग जीतने के बाद उन्होंने रायगढ़ को माराठा राज्य की राजधानी बनाया था।

शिवाजी पर महाराष्ट्र के लोकप्रिय संत रामदास एवं तुकाराम का भी प्रभाव था। संत रामदास शिवाजी के आध्यात्मिक

गुरु थे, उन्होंने ही शिवाजी को देश प्रेम और देश के उद्धार के लिये प्रेरित किया था। शिवाजी की बढ़ती शक्ति बीजापुर के लिये चिन्ता का विषय थी। आदिलशाह की विधवा बेगम ने अफजल खाँ को शिवाजी के विरुद्ध युद्ध के लिये भेजा था। कुछ परिस्थिति वश दोनों खुल्लम-खुल्ला युद्ध नहीं कर सकते थे।

अत: दोनों पक्षों ने समझौता करना उचित समझा। १० नवम्बर १६५९ को मिलने का दिन तय हुआ।

शिवाजी जैसे ही अफजल खाँ के गले मिले, अफजल खाँ ने शिवाजी पर वार कर दिया। शिवाजी को उसकी मंशा पर पहले से ही शक था, वो पूरी तैयारा से गये थे। शिवाजी ने अपना बाघनखा अफजल खां के पेट में घुसेड़ दिया। अफजल खाँ की मृत्यु के पश्चात बीजापुर पर शिवाजी का अधिकार हो गया। इस विजय के उपलक्ष्य में शिवाजी, प्रतापगढ़ में एक मंदिर का निर्माण करवाया जिसमें माँ भवानी की प्रतिमा को प्रतिष्ठित किया गया।

शिवाजी एक कुशल योद्धा थे। उनकी सैन्य प्रतिभा ने औरंगजेब जैसे शक्तिशाली शासक को भी विचलित कर दिया था। शिवाजी की गोरिल्ला रणनीति (छापामार रणनीति) जग प्रसिद्ध है। अफजल खाँ की हत्या, शाइस्ता खाँ पर सफल हमला और औरंगजेब जैसे चीते की मांद से भाग आना, उनकी इसी प्रतिभा और विलक्षण बुद्धि का परिचायक है। शिवाजी एक सफल कूटनीतिज्ञ थे। इसी विशेषता के बल पर उन्होंने अपने शत्रुओं को कभी एक नहीं होने दिया। औरंगजेब से उनकी मुलाकात आगरा में हुई थी जहाँ उन्हें और उनके पुत्र को गिरफ्तार कर लिया गया था। परन्तु शिवाजी अपनी कुशाग्र बुद्धि के बल पर फलों की टोकरियों में छुपकर भाग निकले थे। मुगल मराठा सम्बन्धों में यह एक प्रभावशाली घटना थी। बीस वर्ष तक लगातार अपने साहस, शौर्य और रण-कुशलता द्वारा शिवाजी ने अपने पिता शहाजी भोसले की छोटी सी जागीर को एक स्वतंत्र तथा शक्तिशाली राज्य के रूप में स्थापित कर लिया था। ६ जून १६७४ को शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ था। शिवाजी जनता की सेवा को ही अपना धर्म मानते थे। उन्होंने अपने प्रशासन में सभी वर्गों और सम्प्रदाय के अनुयायियों के लिये समान अवसर प्रदान क्किये। कई इतिहासकारों के अनुसार शिवाजी केवल निर्भिक सैनिक तथा सफल विजेता ही न थे, वरन अपनी प्रजा के प्रबुद्धशील शासक भी थे। शिवाजी के मंत्री परिषद में आठ मंत्री थे, जिन्हें अष्ट प्रधान कहते हैं। छत्रपति शिवाजी के राष्ट्र का ध्वज केशरिया है। इस रंग से संबंधित एक किस्सा है। एक बार शिवाजी के गुरू, समर्थ गुरु रामदास भिक्षा माँग रहे थे, तभी शिवाजी ने उन्हें देखा उनको बहुत खराब लगा। शिवाजी, गुरु के चरणों में बैठ कर आग्रह करने लगे कि आप ये समस्त राज्य ले लीजिए लेकिन एवं भिक्षा न माँगे। शिवाजी की भक्ति देख समर्थ गुरु रामदास अत्यधिक प्रसन्न हुए और शिवाजी को समझाते हुए बोले कि मैं राष्ट्र के बंधन में नहीं बंध सकता किन्तु तुम्हारे आग्रह को स्वीकार करता हूं और तुम्हें ये आदेश देता हूं कि आज से मेरा ये राज्य तुम कुशलतापूर्वक संचालित करो। ऐसा कहते हुए समर्थ गुरु रामदास अपने दुपट्टे का एक टुकड़ा फाड़कर शिवाजी को दिया तथा बोले कि वस्त्र का ये टुकड़ा सदैव मेरे प्रतीक के रूप में तुम्हारे साथ तुम्हारे राष्ट्र ध्वज के रूप में रहेगा जो तुम्हें मेरे पास होने का बोध कराता रहेगा।

कुशल एवं वीर शासक छत्रपति शिवाजी का अंतिम समय बड़े कष्ट एवं मानसिक वेदना में व्यतीत हुआ। घरेलू उलझने एवं समस्याएं उनके दु:ख का कारण थीं। बड़े पुत्र सम्भाजी के व्यवहार से वे अत्यधिक चिन्तित थे। तेज ज्वर के प्रकोप से ३ अप्रैल १६८० को शिवाजी का स्वर्गवास हो गया।

शिवाजी केवल मराठा राष्ट्र के निर्माता ही नहीं थे, अपितु मध्ययुग के सर्वश्रेष्ठ मौलिक प्रतिभा- सम्पन्न व्यक्ति थे। महाराष्ट्र की विभिन्न जातियों के संघर्ष को समाप्त कर उनको एक सूत्र में बाँधने का श्रेय शिवाजी को ही है। इतिहास में शिवाजी का नाम, हिन्दु रक्षक के रूप में सदैव सभी के मानस पटल पर विद्यमान रहेगा।

शिवाजी शाहजी भोसले मराठा शासन के बहुत ही लोकप्रिय और सफल शासक हुए। उन्होंने बहुत ही कम उम्र से गुरिल्ला युद्ध कला में महारत हासिल कर ली थी। छोटी उम्र से ही उनमें देशभक्ति की असीम भावना थी और उन्हें मुगल शासक बिलकुल भी पसंद नहीं थे। वे एक कुशल नेता, सफल राजनीतिक और चतुर रणनीतिकार थे।

गोकुलभाई भट्ट (जन्म- १९ फरवरी)

गोकुलभाई भट्ट भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। इन्हें एक सच्चे समाज सेवक के रूप में भी जाना जाता था। इसके साथ ही वे एक कुशल वक्ता, कवि, पत्रकार, बहुभाषाविद और लेखक भी थे। इनका पूरा नाम गोकुलभाई दौलतराम भट्ट था। वर्ष १९३९ में गोकुलभाई की प्रेरणा से ही लोग झण्डे वाली टोपियाँ पहनने लगे थे। गोकुलभाई भट्ट १९४८ में जयपुर कांग्रेस की स्वागत समिति के अध्यक्ष रहे थे।

२० फरवरी

के.वी. सुबन्ना (जन्म- २० फरवरी)

कुंटागोडू विभूति सुबन्ना भारत के जाने-माने नाटककार और निनासम धर्म संस्था के संस्थापक तथा रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ थिएटर के लिए मील का पत्थर थे।

जयन्त कुमार मलैया (जन्म- २० फरवरी)

जयन्त कुमार मलैया एक राजनीतिज्ञ के रूप में मध्य प्रदेश में अपनी खास पहचान रखते हैं। वे मध्य प्रदेश सरकार के जल संसाधन और पर्यावरण मंत्री हैं। जयन्त कुमार पहली बार १९८४ में दमोह विधान सभा क्षेत्र से निर्वाचित हुए थे। भारतीय जनता पार्टी के चोटी के नेताओं में उन्हें गिना जाता है। २००४ में सुश्री उमा भारती के मंत्रिमंडल में भी उन्हें शामिल किया गया था।

शिवनारायण श्रीवास्तव (निधन- २० फरवरी)

शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी साहित्य में अध्ययनशील एवं मननशील रचनाकार के रूप में अविस्मरणीय है। शिवनारायण श्रीवास्तव जी की मुख्य रचनाएँ निम्नलिखित हैं- हिंदी के प्रमुख साहित्यकार कविता की शिक्षा।

भवानी प्रसाद मिश्र (निधन- २० फरवरी)

भवानी प्रसाद मिश्र हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तथा गांधीवादी विचारक थे। भवानी प्रसाद मिश्र दूसरे तार-सप्तक के एक प्रमुख कवि हैं। मिश्र जी विचारों, संस्कारों और अपने कार्यों से पूर्णत: गांधीवादी हैं। गांधीवाद की स्वच्छता, पावनता और नैतिकता का प्रभाव और उसकी झलक भवानी प्रसाद मिश्र की कविताओं में साफ देखी जा सकती है। उनका प्रथम संग्रह गीत फरोश अपनी नई शैली, नई उद्भावनाओं और नये पाठ-प्रवाह के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ।

२१ फरवरी

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला (जन्म- २१ फरवरी)

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला हिन्दी के छायावादी कवियों में कई दृष्टियों से विशेष महत्वपूर्ण हैं। निराला जी एक कवि, उपन्यासकार, निबंधकार और कहानीकार थे। उन्होंने कई रेखाचित्र भी बनाये। उनका व्यक्तित्व अतिशय विद्रोही और क्रांतिकारी तत्वों से निर्मित हुआ है। उसके कारण वे एक ओर जहाँ अनेक क्रांतिकारी परिवर्तनों के सृष्टा हुए, वहाँ दूसरी ओर परम्पराभ्यासी हिन्दी काव्य प्रेमियों द्वारा अरसे तक सबसे अधिक गलत भी समझे गये। उनके विविध प्रयोगों-छन्द, भाषा, शैली, भावसम्बन्धी नव्यतर दृष्टियों ने नवीन काव्य को दिशा देने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया।

शान्ति स्वरूप भटनागर (जन्म- २१ फरवरी)

शान्ति स्वरूप भटनागर प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक, जो औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के निदेशक रहे। इन्होंने राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं की स्थापना में अमूल्य योगदान दिया।

डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर का जन्म २१ फरवरी सन १८९४ ईस्वी में पंजाब के शाहपुर जिले में हुआ। बचपन से ही उन्हें इलेक्ट्रॉनिक बैटरियां, यांत्रिक खिलौने और धागे के फोन बनाने में आनन्द आता था। सन १९०८ में वे लाहौर गए और सन १९१७ में फोरमेन क्रिश्चियन कॉलेज से एम.एस.सी. करके १९१९ में यूरोप चले गए। वहां उन्होंने प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के पथ प्रदर्शन में लवणों की घुलनशीलता एवं उसके प्रभाव पर काम करके डी.एस.सी. की उपाधि प्राप्त की। सन १९२४ में वे यूनिवर्सिटी केमीकल लेबोरटरी लाहौर के डायरेक्टर बने।

उन्होंने सन १९२६ में चुम्बक रसायन पर अनुसंधान आरंभ किए। उन्होंने चुम्बकत्व को कुछ रसायनों और रासायनिक प्रक्रियाओं को जानने के लिए अपना उपकरण बनाया। उन्होंने आर.एन.माथुर के सहयोग से एक चुम्बकीय तराजू का आविष्कार किया, जो भटनागर-माथुर इंटरफीयरेंस बैलेंस के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

उन्होंने चुम्बकीय रसायन के सिद्धांत तथा उपयोग पर एक पुस्तक लिखी। अंग्रेजी भाषा में इस विषय पर यह पहली पुस्तक थी। इमल्शन कोलाइड्स व औद्योगिक रसायन के क्षेत्र में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा।

एक ब्रिटिश कंपनी रावलपिंडी के निकट तेल के लिए खुदाई कर रही थी। दलदली क्षेत्र होने के कारण ड्रिलिंग करना अत्यन्त कठिन हो रहा था। बाहर निकलनेवाला कीचड़ नमकीन पानी के साथ मिलकर चट्टान जैसा कठोर बन जाता था। कंपनी ने इस समस्या को हल करने के लिए कई वैज्ञानिकों को लिखा। इससे कंपनी को दिन प्रतिदिन हानि हो रही थी। अन्तत: उन्होंने भारतीय वैज्ञानिक डॉ. भटनागर से इस समस्या के निदान के लिए संपर्क किया।

डॉ. भटनागर इस समस्या को हल करने के लिए प्रयोगशाला में जुट गए और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यदि ड्रिल करके निकाले गए कीचड़ में गोंद मिला दें, तो कीचड़ कम गाढ़ा हो जाएगा, जिससे कठोर नहीं होगा। इस प्रकार वे समस्याहल करने में सफल हुए। इस हल से उन्होंने कंपनी के अधिकारियों को विस्मित कर दिया और कंपनी दिवालिया होने से भी बच गई। कंपनी ने उन्हें पुरस्कार स्वरूप डेढ़ लाख रुपये दिए परंतु डॉ. भटनागर ने यह राशि स्वीकार नहीं की। उन्होंने कंपनी को सुझाव दिया कि वे यह राशि पंजाब विश्व विद्यालय को पेट्रोलियम पर शोधकार्य के लिए प्रदान कर दें।

देशभर के वैज्ञानिकों ने डॉ. भटनागर की इस सफलता की प्रशंसा की। डॉ. साहा ने अपने पत्र में भटनागर को लिखा, भारत में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो लाखों कमा रहे हैं लेकिन इनमें से कुछ लखपति भी इसका अनुसरण करें, जो भटनागर जैसे गरीब अध्यापक ने किया है, तो देश की वैज्ञानिक व नैतिक प्रगति तेजी से होगी।

डॉ. भटनागर ने देश में कई वैज्ञानिक संस्थाओं का निर्माण किया। उन्होंने मोम को गंधहीन बनाने में, मिट्टी के तेल को शुद्ध करके लौ को और ऊंचा करने एवं पेट्रोल साफ करने की विधि का आविष्कार किया। उन्होंने युद्ध में काम आनेवाली उपयोगी वस्तुएं जैसे गैस कपड़ा, ईंधन, वनस्पति तेल के मिश्रण वार्निश आदि ईजाद कीं। युद्ध के लिए उन्होंने ऐसा कपड़ा बनाया, जिस पर गैस का प्रभाव नहीं होता था। द्वितीय विश्वयुद्ध के दिनों में भारत सरकार ने उन्हें वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान का डायरेक्टर बनाया। उनकी देखरेख में अनेक उपयोगी आविष्कार किए गए। उनके सुझाव पर सरकार ने कौंसिल ऑफ साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रियल रिसर्च बनाई एवं देशभर में राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं की श्रृंखला स्थापित की।

अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस

२१ फरवरी को अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाया जाता है। यूनेस्को ने १७ नवंबर १९९९ को इसे पूरे विश्व में मनाने की घोषणा की थी।

१९५२ को इसी दिन बांग्लादेश की राजधानी ढाका में उर्दू और बांग्ला भाषा विवाद के कारण चार छात्रों को जान गंवानी पड़ी थी। इसलिए उसी दिन को यूनेस्को ने अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस के रूप में मनाने का निर्णण लिया। बांग्लादेश में १९५२ से ही भाषा आंदोलन दिवस मनाया जाता है। ढाका में चारों शहीदों की याद में मीनार भी बनाई गई है। इसका उद्देश्य विश्व में भाषाई एवं सांस्कृतिक विविधता और बहुभाषिता को बढ़ावा देना। ऑस्ट्रेलिया के एशफील्ड में अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस स्मारक भी बनाया गया है।

रानी चेन्नम्मा (निधन- २१ फरवरी)

रानी चेन्नम्मा का दक्षिण भारत के कर्नाटक में वही स्थान है जो स्वतंत्रता संग्राम क संदर्भ में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का है। चेन्नम्मा ने लक्ष्मीबाई से पहले ही अंग्रेजों की सत्ता को सशस्त्र चुनौती दी थी और अंग्रेजों की सेना को उनके सामने दो बार मुंह की खानी पड़ी थी।

२२ फरवरी

यतींद्र मोहन सेनगुप्ता

२२ फरवरी, १८८५ को स्वतंत्रता सेनानी यतींद्र मोहन सेनगुप्ता का जन्म चटगांव (अब बांग्लादेश में) में हुआ था। कोलकाता में अपनी वकालत छोड़कर वे असहयोग आंदोलन में कूद पड़े थे। चाय बगानों के मजदूरों के शोषण के विरुद्ध हड़ताल करवाने के कारण वे गिरफ्तार हुए। स्वराज पार्टी की ओर से बंगाल विधान परिषद के सदस्य चुने गए। वे बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष बने और सविनय अवज्ञा आंदोलन में सक्रिय नेतृत्व किया। वे पांच बार कोलकाता के मेयर भी चुने गए थे। उन्हें अस्वस्थ अवस्था में ही जेल में बंद रखा गया था। २२ जुलाई १९३३ को रांची में उनका निधन हुआ।

यतीन्द्र मोहन सेनगुप्त भारतीय स्वाधीनता संग्राम के प्रमुख नायकों में से एक थे। इन्होंने १९०९ ई. में इंग्लैंड से अपनी बैरिस्टरी पूर्ण की थी। इन्होंने कोलकाता उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की और साथ ही मजदूरों के हित के लिए सदैव कार्य करते रहे। यतीन्द्र मोहन सेनगुप्त को पाँच बार कोलकाता का मेयर चुना गया था। इन्होंने एक अंग्रेज युवती नेली सेनगुप्त से विवाह किया था, जिसने देश को स्वाधीन कराने के लिए अपने पति के समान ही जेल की सजाएँ भोगीं।

इंदुलाल याज्ञिक (जन्म- २२ फरवरी)

इंदुलाल याज्ञिक भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेनेवाले प्रमुख कार्यकर्ताओं में से एक थे। वे गुजरात प्रदेश के निर्माताओं में से एक और ऑल इंडिया किसान सभा के नेता थे। उन्होंने गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की योजना बनाई थी। इंदुलाल याज्ञिक गुजरात की सत्याग्रह कमेटी के सचिव भी बनाये गए थे। वर्ष १९२३ में उन्हें गिरफ्तार करके यरवदा जेल में महात्मा गांधी के साथ बंद किया गया था। यह बात भी उल्लेखनीय है कि उन्होंने अपनी पूरी संपत्ति महागुजरात सेवा ट्रस्ट को दान कर दी थी।

स्वामी श्रद्धानन्द (जन्म- २२ फरवरी)

स्वमी श्रद्धानन्द को भारत के प्रसिद्ध महापुरुषों में गिना जाता है। वे ऐसे महान राष्ट्रभक्त सन्यासियों में अग्रणी थे, जिन्होंने अपना सारा जीवन वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित कर दिया था। स्वामी श्रद्धानंद ने स्वराज्य हासिल करने, देश को अंग्रेजों की दासता से छुटकारा दिलाने, दलितों को उनका अधिकार दिलाने और पश्चिमी शिक्षा की जगह वैदिक शिक्षा प्रणाली का प्रबंध करने जैसे अनेक कार्य किए थे। सबसे बड़ी बात यह थी कि वे १८वीं सदी में हिंदुओं और मुस्लिमों के सर्वमान्य नेता थे।

२३ फरवरी

वृंदावनलाल वर्मा (निधन- २३ फरवरी)

वृंदावनलाल वर्मा ऐतिहासिक उपन्यासकार एवं निबंधकार थे। ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में वृंदावनलाल वर्मा का कृतित्त्व विशेष महत्व रखता है। इनमें पूर्व हिन्दी साहित्य में ऐसा कोई उपन्यासकार नहीं हुआ, जिसने इतनी व्यापक भावभूमि पर इतिहास को प्रतिष्ठित करके उसके पीछे निहित कथा तत्व को शक्तिसंलग्नता और अंतर्दृष्टि के साथ सूत्रबद्ध किया हो। वर्माजी के अनेक उपन्यासों में वास्तविक इतिहास रस की उपलब्धि होती है। इस पुष्टि से ये हिन्दी के अन्यतम उपन्यासकार हैं।

अमृतलाल नागर (निधन- २३ फरवरी)

अमृतलाल नागर हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। इन्होंने नाटक, रेडियोनाटक, रिपोर्ताज, निबन्ध, संस्मरण, अनुवाद, बाल साहित्य आदि के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन्हें साहित्य जगत में उपन्यासकार के रूप में सर्वाधिक के रूप में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हुई तदपि उनका हास्य-व्यंग्य लेखन कम महत्वपूर्ण नहीं है।

२४ फरवरी

जयललिता (जन्म- २४ फरवरी)

दक्षिण भारत ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय राजनीति के प्रमुख चेहरों में शुमार तमिलनाडु की मुख्यमंत्री जयललिता जयराम की जिंदगी का कैनक्स काफी बड़ा और भव्य रहा है। उन्हें स्थानीय राजनीति के सबसे मजबूत क्षेत्रों में गिना जाता रहा है। देश में ऐसी गिनी-चुनी ही शख्सियतें होंगी, जिन्हें सिनेमा और राजनीति दोनों क्षेत्रों में एकसाथ इतनी बड़ी कामयाबी हासिल हुई हो। तमिल सिनेमा में जहां वह अपने वक्त की सबसे ग्लैमरस और सशक्त अभिनेत्रियों में गिनी गईं, वहीं राजनीति में भी उन्हें अपार कामयाबी मिली। वे कई तरह के विवादों और भ्रष्टाचार के आरोपों में भी घिरीं, लेकिन हर बार न केवल ज्यादा ताकतवर होकर उभरीं, बल्कि करोड़ों जनता का बेशुमार प्यार भी उन्हें मिला।

जयललिता का जन्म अय्यर परिवार में मैसूर राज्य के मांडया जिले के मेलुरकोट गांव में हुआ था। महज २ साल की उम्र में ही उनके पिता जयराम उन्हें मां संध्या के साथ अकेला छोड़कर चल बसे। पिता की मौत के बाद मां उन्हें लेकर बेंगलुरु चली आईं, जहां जया के नाना-नानी रहते थे। बाद में उनकी मां ने तमिल सिनेमा में काम करना शुरू कर दिया और अपनी फिल्मी नाम संध्या रखा। जया की शुरुआती पढ़ाई पहले बेंगलुरु, फिर चेन्नई में हुई। उन्होंने सरकारी स्कॉलरशिप से भी आगे की पढ़ाई की।

स्कूल में पढ़ाई के दौरान ही मां ने उन्हें फिल्मों में काम करने के लिए राजी कर लिया। महज १५ साल की उम्र में वह कन्नड़ फिल्मों में लीड एक्ट्रेस बनकर भूमिका करने लगीं। इसके बाद उन्होंने तमिल फिल्मों की ओर रुख किया। वे पहली ऐसी एक्ट्रेस थीं जो ऑन स्क्रीन स्कर्ट में नजर आईं।

जिस वक्त जया ने अपनी फिल्मी करियर शुरू किया, रामचंद्रन सुपरस्टार थे। दोनों की नजदीकियां बढ़ीं और उनके रिश्ते हर किसी की जुबां पर थे। यहां तक कि जया ने इस संबंध के लिए खूब अपमान भी झेला। दोनों के प्यार की खूब चर्चा हुई, यह बात दीगर है कि रामचंद्रन पहले से शादीशुदा और दो बच्चों के पिता भी थे। दोनों के बीच उम्र का फासला भी काफी ज्यादा था। रामचंद्रन तब ४२ साल के थे, तो जया सिर्फ १६ साल की थीं। रामचंद्रन की पत्नी ने भी उनके रिश्ते को कभी नहीं स्वीकार किया।

साल १९८२ में जया ने ऑल इंडिया अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम जॉइन करते हुए एम.जी. रामचंद्रन के साथ अपने राजनीतिक करियर की शुरुआत की। १९८३ में उन्हें पार्टी का प्रचार सचिव नियुक्त किया गया। बाद में जया उपचुनाव में जीतकर विधानसभा सदस्य बन गईं। इसके बाद वह १९८४ से १९८९ तक तमिलनाडु से राज्यसभा की सदस्य भी रहीं। १९८७ में रामचंद्रन के निधन के बाद एआईएडीएमके दो धड़ों में बंट गई। एक धड़े की नेता रामचंद्रन की विधवा जानकी थीं, तो दूसरे धड़े की जयललिता। तब जया ने खुद को रामचंद्रन का राजनीतिक विरासत का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। साल १९८९ में उनकी पार्टी ने विधानसभा में २७ सीटें जीतीं और वे राज्य की पहली निर्वाचित नेता प्रतिपक्ष बनीं। १९९१ में राजीव गांधी की हत्या के बाद राज्य में हुए चुनावों में उन्होंने फिर सरकार बनाई।

जया ने तेलुगु, कन्नड़, इंग्लिश और हिंदी भाषा की करीब ३०० फिल्में की हैं। हिंदी फिल्मों में उन्होंने धर्मेंद्र समेत कई

एक्टर्स के साथ काम किया। लेकिन उनकी सबसे मशहूर जोड़ी शिवाजी गणेशन और एमजी रामचंद्रन के साथ ही बनी।

जयललिता २४ जून १९९१ से १२ मई तक तमिलनाडु की पहली निर्वाचित और सबसे कम उम्र की मुख्यमंत्री बनीं। १९९६ में उनकी पार्टी चुनाव हार गई। लेकिन २००१ में वे फिर मुख्यमंत्री बनने में कामयाब हुईं। भ्रष्टाचार के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने उनकी नियुक्ति अवैध घोषित कर दी तो उन्हें सत्ता अपने विश्वस्त को सौंपनी पड़ी। मद्रास उच्च न्यायालय से राहत मिलने के बाद २००२ में वे फिर मुख्यमंत्री बनीं। अप्रैल २०११ में जब ११ दलों के गठबंधन ने १४वीं विधानसभा में बहुमत हासिल किया, तो वे तीसरी बार मुख्यमंत्री बनीं।

२५ फरवरी

अमरनाथ झा (जन्म- २५ फरवरी)

अमरनाथ झा भारत के प्रसिद्ध विद्वान, साहित्यकार और शिक्षा शास्त्री थे। वे हिन्दी के प्रबल समर्थकों में से एक थे। हिन्दी को सम्माननीय स्तर तक ले जाने और उसे राजभाषा बनाने के लिए अमरनाथ झा ने बहुमूल्य योगदान दिया था। उन्हें एक कुशल वक्ता के रूप में भी जाना जाता था। उन्होंने कई पुस्तकों की रचना भी की। शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान को देखते हुए उन्हें वर्ष १९५४ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

मन्नत्तु पद्मनाभन (निधन- २५ फरवरी)

मन्नत्तु पद्मनाभन केरल के प्रसिद्ध समाज सुधारकों में से एक थे। घर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। कई कठिनाइयों का सामना करते हुए इन्होंने मजिस्ट्रेटी की परीक्षा पास की थी, जिससे वकालत शुरू कर सकें। उस समय नायर समाज में जो अंध विश्वास और पाखण्ड व्याप्त था, उसे दूर करने के लिए मन्नत्तु पद्मनाभन ने नायर सर्विस सोसाइटी नामक एक संस्था की स्थापना की थी। केरल का भारत में विलय कराने के आन्दोलन में उन्हें ६८ साल की उम्र में जेल भी जाना पड़ा। बहुमुखी सेवा कार्यों के लिए इन्हें १९६६ में पद्मभूषण सम्मान प्रदान किया गया था।

२७ फरवरी

विजय सिंह पथिक (जन्म- २७ फरवरी)

विजय सिंह पथिक भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले वीर क्रांतिकारियों में से एक थे। विजय सिंह पथिक अपनी युवावस्था में ही रासबिहारी बोस और शचीन्द्रनाथ सान्याल जैसे अमर क्रांन्तिकारियों के सम्पर्क में आ गए थे। महात्मा गांधी के सत्याग्रह आन्दोलन से बहुत पहले ही पथिक जी ने बिजोलिया किसान आन्दोलन के नाम से किसानों में स्वतंत्रता के प्रति अलख जगाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

२८ फरवरी

कमला नेहरू (निधन- २८ फरवरी)

कमला कौल नेहरू जवाहर लाल नेहरू, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और भारत के पहले प्रधानमंत्री की पत्नी थीं। कमला

नेहरू को आज भी सौम्यता और विनम्रता की प्रतिमूर्ति के रूप में याद किया जाता है।

राजेन्द्र प्रसाद (निधन- २८ फरवरी)

डॉ. राजेंद्र प्रसाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे। राजेन्द्र प्रसाद बेहद प्रतिभाशाली और विद्वान व्यक्ति थे। राजेन्द्र प्रसाद, भारत के एकमात्र राष्ट्रपति थे जिन्होंने दो कार्यकालों तक राष्ट्रपति पद पर कार्य किया।

राणा उदयसिंह (निधन- २८ फरवरी)

राणा उदयसिंह मेवाड़ के राणा साँगा के पुत्र और राणा प्रताप के पिता थे। इनका जन्म इनके पिता के मरने के बाद हुआ था और तभी गुजरात के बहादुरशाह ने चितौड़ नष्ट कर दिया था। इनकी माता कर्णवती द्वारा हुमायूँ को राखीबंद भाई बनाने की बात इतिहास प्रसिद्ध है। मेवाड़ की ख्यातों में इनकी रक्षा की अनेक अलौकिक कहानियाँ कही गई हैं। उदयसिंह को कर्त्तव्यपरायण धाय पन्ना के साथ बलबीर से रक्षा के लिए जगह-जगह शरण लेनी पड़ी थी।

२९ फरवरी

मोरारजी देसाई (जन्म- २९ फरवरी, निधन- १० अप्रैल)

मोरारजी देसाई को भारत के चौथे प्रधानमंत्री के रूप में जाना जाता है। वह ८१ वर्ष की आयु में प्रधानमंत्री बने थे। इसके पूर्व कई बार उन्होंने प्रधानमंत्री बनने की कोशिश की परंतु असफल रहे। मोरारजी देसाई मार्च १९९७ में देश के प्रधानमंत्री बने लेकिन प्रधानमंत्री के रूप में इनका कार्यकाल पूर्ण नहीं हो पाया और चौधरी चरण सिंह से मतभेदों के चलते उन्हें प्रधानमंत्री पद छोड़ना पड़ा।

१ मार्च

मैरी कॉम (जन्म- १ मार्च)

मैरी कॉम का पूरा नाम चंग्नेइजैंग मैरी कॉम है परंतु मैरी कॉम अधिक लोकप्रिय है। मैरी कॉम ने वर्ष २००१ में पहली बार नेशनल वुमन्स बॉक्सिंग चैंपियनशिप जीती। प्रथम अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता के अपने अनुभव के बारे में वह बताती हैं कि मैं काफी घबराई हुई थी। तब मैंने सोचा मेरे पास खोने के लिए कुछ भी नहीं है, पर पाने के लिए बहुत कुछ है। इस सोच के साथ मैरी कॉम ने वर्ल्ड वुमन्स बॉक्सिंग चैंपियनशिप में रजत पदक हासिल किया। मुक्केबाज की दुनिया में भारत का नाम रोशन करने के लिए भारत सरकार ने वर्ष २००३ में उन्हें अर्जुन पुरस्कार से नवाजा एवं वर्ष २००६ में उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया गया। २९ जुलाई, २००९ को वे भारत के सर्वोच्च खेल सम्मान राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार के लिए मुक्केबाज विजेंदर कुमार तथा पहलवान सुशीलकुमार के साथ संयुक्त रूप से चुनीं गयी।

मैरी कॉम एक भारतीय प्रसिद्ध महिला मुक्केबाज हैं। मैरी कॉम भारत के मणिपुर राज्य से हैं। मैरी कॉम पांच बार विश्व मुक्केबाजी प्रतियोगिता की विजेता रह चुकी हैं। मैरी कॉम ने लंदन ओलम्पिक २०१२ में कांस्य पदक जीता। इसके अतिरिक्त मैरी कॉम ने २०१० के एशियाई खेलों में काँस्य तथा २०१४ के एशियाई खेलों में स्वर्ण पदक हासिल किया। इनके जीवन पर एक फिल्म मैरी कॉम भी बनी है जिसका प्रदर्शन २०१४ में हुआ। इस फिल्म में मैरी कॉम की भूमिका प्रसिद्ध अभिनेत्री प्रियंका चोपड़ा ने निभाई।

सेठ रसिक माणिकचंद धारीवाल (जन्म- १ मार्च)

रसिकलाल जी स्वयं से बने हुए सर्वगुण संपन्न उद्योगपति थे। वे सर्वधर्म समभाव, लाजवाब दानवीरता और व्यापारिक कुशलता के धनी थे। अपनी मेहनत, लगन और ईमानदारी के त्रीसूत्रों को अपनाकर अपने साम्राज्य को शून्य से निर्माण किया। ऑक्सीरीच व पॉलीमार से लेमिनेशन जैसी एकमात्र चीजों का निर्माण करके उन्होंने उद्योग व्यापार क्षेत्र में एक अविस्मरणीय योगदान दिया। २४ अक्टूबर उनके निधन से पूणे के उद्योग व्यापार क्षेत्र को एक गहरा आघात लगा। श्री धारीवाल जी ने हमेशा लीक से हटकर काम किया। ऑक्सीरीच व पॉलीमार से लेमिनेशन का निर्माण इसके ज्वलंत उदाहरण है। समाज, स्वास्थ्य, शिक्षा व धार्मिक कार्यों में उनका योगदान सदैव याद रखा जाएगा। नेक इरादे से की जानेवाली कोशिशें कभी नाकाम नहीं होती है। रास्ते में चाहे कितनी भी मुश्किलें आ जाएं पर उनकी परवाह किये बिना चलते रहनेवालों को ही उनकी मंजिल मिल जाती है। रसिकलाल जी का शिक्षण ११वीं क्लास तक ही हुआ। वे बचपन से ही बड़े उद्यमी थे और बड़ा बनने का सपना देखते थे। उनके यह सामाजिक कार्य में उनकी जीवनसंगिनी शोभा धारिवाल ने अमूल्य सहयोग दिया। रसिकलाल जी की पैदाइश १ मार्च १९३९ में पूना जिल्हे के घोड़नदी गांव में हुई। वही पर उनका बचपन गुजरा। १४ साल की उम्र में ही उनके पिता का निधन हो गया। उनका जन्म एक अमीर घराने में हुआ, जिनके परिवार में हजारों एकर जमीन थी लेकिन सन १९५६ में आये लॅण्ड सिलिंग ॲक्ट की वजह से उनकी सारी जमीन एक दिन में चली गयी। शायद वे न्यायालय का दरवाजा खटखटाते तो उससे कम से कम ५० प्रतिशत जमीन उन्हें वापिस मिल सकती थी। लेकिन उनकी मां मदनबाई का कहना था तुम खेती तो करनेवाले नहीं हो फिर जिसकी है यह

कमाई बुजुर्गों की थी उसे छोड़ दो। अपने मां के यह शब्द सुनकर उन्होंने अपनी माँ की आज्ञा कभी टाली नहीं और जमीन की सम्पत्ति में से मोह छोड़ दिया। वो अपन मां को बहुत मानते थे। उनका कहना था कि मां जो बोली वह भगवान बोले। अब इनके पास पैसा नहीं रहा। काम करने के अलावा कोई उपाय भी नहीं था। पिताजी का एक छोटा सा बिड़ी कारखाना था जहाँ २०-२५ मजदूर काम करते थे। उसीको लेकर उन्होंने काम शुरू किया। उस समय बीड़ी बनानेवाले सही कारागीर उपलब्ध नहीं होते थे। १७ वर्ष की उम्र में उन्होंने यवत में एक कारखाना लगाया उसकी उन्नति की भी सीमा थी। क्योंकि बड़ा व्यापार करने के लिए आंध्र प्रदेश जाये बिना यह संभव नहीं था। पैसा नहीं होने की वजह से घोड़नदी छोड़कर जाना भी मुश्किल था। उस बीड़ी के व्यवसाय में पेट भरने लायक कोई कमाई नहीं थी। वहींपर उन्होंने स्टेशनरी का व्यापार शुरू किया। वहींपर उन्होंने तम्बाकु के पैकेट बनाए और अपनी परंपरागत कार्यों को छोड़कर नया काम करने लगे। वे एक कुशल सेल्समन थे और उन्होंने इस काम में सफलता पायी। पान-मसाला गुटखे की वजह से पूरी तरह से हिंदुस्तान में छा गए। ऑक्सीरीच सिम्पल पानी का ब्रॅण्ड है। लेकिन इनका इकलौता ब्रँड है जिनमें बाहर से ऑक्सीजन डाला जाता है। यह तकनीक इन्होंने खोज निकाली। ऑक्सीरीज स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छा है। वे अपनी माँ की बात बहुत मानते थे। माँ अनपढ़ थी। ४थी कक्षा मराठी में पढ़ाई की थी। पूरा गाँव उनकी माँ के पांव छूने आता था। उनके पिता के देहान्त के बाद सभी रिश्तेदारों ने कहां की बीड़ी का कारखाना बंद कर दो। लेकिन उनकी मां ने कहा कारखाना बंद नहीं करना है। अगर यह कारखाना बंद करोगे तो तुमको दूसरों से मांगना पड़ेगा। इस धन्धे को ही बढ़ाओ। वे घोड़नदी छोड़कर पूने में सन १९६७ में आये और घूम-घूमकर तम्बाकू के पैकेट बझार में बेचते थे। जर्दा के धन्धे में भी वे सर्वअग्रणी थे। बाद में पान मसाले में छा गए। जब वे १४ वर्ष के थे तब उनके पास एक गाड़ी थी जो उनके पिताश्री ने बेच दी। यह देखकर उनकी मां के आंखों में आंसू आ गए। माँ का दु:ख उनसे देखा नहीं गया और उन्होंने अपनी मां से कहा कि तेरा यह बेटा गाड़ियों की लाइनें लगा देगा और आज उनकी परिवार में अनगिनत गाड़ियां है।

किसी भी देश और समाज के निर्माण में ऐसे संकल्पवान व्यक्तियों की जरूरत होती है जो कर्म को ही पूजा मानकर निरंतर कर्तव्य पथ पर चलते रहे। ऐसे लोग ही सदियों तक नई पीढ़ियों के लिए प्रेरणास्त्रोत और आदर्श बन जाते है। उन्होंने सिर्फ एक औद्योगिक साम्राज्य का ही निर्माण नहीं किया बल्कि उन्होंने एक आदर्श समाज के निर्माण हेतू जीवनभर अपनी कार्यों से मजबूत बुनियाद रच दी। वे सर्वधर्म समभाव को माननेवाले व जातिभेद के विरुद्ध व सुखी मानव निर्माण के हेतू जीए।

अच्छा व्यापार करने के साथ ही उन्होंने नीति व विनय की सीख दी। कुशल व्यवहार व पैसों का बेहतर विनियोग करने हेतु वे प्रसिद्ध थे। वे धर्मनिष्ठ के रूप में विख्यात थे। प्रत्येक व्यक्ति की भलाई की कामना करनेवाले बड़े व्यक्ति के रूप में उनका वर्णन किया जा सकता है। उनके चेहरे पर अक्सर प्रसन्नता झलकती थी।

हम जो कुछ भी कमाते हैं उसमें समाज का भी हिस्सा होता है और वह समाज को लौटाना चाहिए। रसिकलाल धारीवाल इस तरह की सात्विक भावना रखनेवाले व्यक्ति थे। किसी बात का संकल्प लेने और निर्धारित अवधि में उसे पूरा करने में उनकी ख्याति थी। समाज के लिए हरी संभव कार्य निरंतर करते रहना उन्हें पसंद था।

वे सामाजिक जीवन में जरूरतमंदों के दुख हरते और उनकी जरूरत पूरी करते थे। जीवन में हर किसी के भीतर समय, बुद्धि, व्यावहारिक ज्ञान व मानवीय गुण होते है। किसी के पास कम तो किसी के पास ज्यादा। इन सबका सदुपयोग करके

जीवन को सार्थक बनानेवाली आत्माएं विरला ही होती है। ऐसे हैं प्रेम, दया और मानवता की मूर्ति रसिकलाल माणिकचंद धारीवाल। उनके सेवाकार्यों, उदार व्यक्तित्व तथा प्रेरक जीवन का महत्व है। रसिक जी का हंसमुख व्यक्तित्व असंख्य लोगों के हृदयपटल पर अंकित हो गया, जिनके जीवन में उन्होंने उजियाला भर दिया। धारीवाल जी ने अनाज दान, औषधिदान, ज्ञानदान और अभयदान समाज को दिया। उनके सहयोग से फले फूले शैक्षणिक संस्थान, अस्पताल, आश्रम, धर्मस्थल आदि इसके प्रमाण है। उनका आकस्मिक निधन निश्चित रूप से समाज के लिये अपूरणीय क्षति है। वे सबके दिलों में राजा थे। उनके द्वार से कभी कोई निराश नहीं लौटा। वे हर व्यक्ति को संतुष्ट करने के बारे में सोचते थे। उनकी उदारता निर्णय लेने की क्षमता व बेहद दानशीलता जैसे गुण समाज में बहुत कम लोगों में होती है। गत २० वर्षों में उन्होंने कम से कम १००० करोड़ रुपयों का दान किया होगा। उन्हें दीन-दुनिया का गहरा अनुभव रहा और वे लोगों के साथ मजबूती से खड़े रहे। अनेक परिवारों के वे आधार है। आम जनों को साथ लेकर चलते थे। उनका स्पष्ट और बेबाक ढंग से सीधे बोलने का स्वभाव लोगों को अधिक अच्छा लगता था। बड़ी हस्ती और इंसानियत का जतन करनेवाले व्यक्ति के रूप में उनकी पहचान थी। उनके अंदर अच्छे व्यक्ति को परखने का गुण था। किसी भी सामाजिक कार्य हेतू धन जुटाने का अद्‌भुत कौशल्य उनके पास था। वे हर परिस्थिति में जमीन से जुड़े हुए थे। उन्हें संगीत में रूचि थी। श्रेष्ठ जीवन स्तर बनाए रखना, बेहतर रहन-सहन उनके जीवन का हिस्सा था। इन्सान बड़ा हो या छोटा वे सभी के साथ सम्मानजनक व्यवहार और उचित ढंग से अतिथि सत्कार करते थे। उनके अचूक निर्णय लेने की क्षमता हमेशा लोगों को प्रभावित करती रही। ये जैन समाज में भामाशाह के नाम से जाने जाते थे।

रसिक धारीवाल समाज के लिए जीनेवाले लाखों में एक व्यक्ति थे। स्वयं के लिए जीनेवाले तो सभी होते है पर समाज के लिए जीनेवाला लाखों में एक व्यक्ति था। इन्होंने व्यवसाय क्षेत्र में अपूर्व सफलता अर्जित की। विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनका जीवन नाम के अनुसार ही रसिकता से परिपूर्ण था। उनमें किसी भी संकट का सामना करने की इच्छाशक्ति थी। वे अपने पीछे पत्नी शोभा धारीवाल, पुत्री जान्हवी और पुत्र प्रकाश को छोड़ गए।

कुंजारानी देवी (जन्म- १ मार्च)

एन. कुंजारानी देवी भारतीय महिला खिलाड़ी हैं, जिन्होंने भारोत्तोलन में देश का गौरव बढ़ाया है। अगस्त, २००२ के मानचेस्टर में हुए राष्ट्रमंडल खेलों में कुंजारानी भारत की दिग्गज भारोत्तोलक के रूप में सुर्खियों में छाई रहीं, जब उन्होंने तीन स्वर्णपदक जीते। भारत की इस लौह महिला की आदर्श खिलाड़ी एथलीट पी.टी. उषा रही हैं। कुंजारानी अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर लगभग ६० से अधिक पदक प्राप्त कर चुकी हैं। वह केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल में असिस्टेंट कमांडेंट जैसे महत्वपूर्ण पद पर कार्यरत हैं। १९९० में अर्जुन पुरस्कार प्राप्त करनेवाली वे देश की प्रथम महिला भारोत्तोलक बनी थीं।

सोहनलाल द्विवेदी (निधन- १ मार्च)

सोहन लाल द्विवेदी हिन्दी के प्रसिद्ध कवि हैं। सोहन लाल द्विवेदी हिंदी के राष्ट्रीय कवि के रूप में प्रतिष्ठित हुए। ऊर्जा और चेतना से भरपूर रचनाओं के इस रचयिता को राष्ट्रकवि की उपाधि अलंकृत किया गया। पं. सोहनलाल द्विवेदी स्वतंत्रता आंदोलन युग के एक ऐसे विराट कवि थे, जिन्होंने जनता में राष्ट्रीय चेतना जागृति करने, उनमें देशभक्ति की

भावना भरने और नवयुवकों को देश के लिए बड़े से बड़े बलिदान के लिए प्रेरित करने में अपनी सारी शक्ति लगा दी। वे पूर्णत: राष्ट्र को समर्पित कवि थे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रति उनकी अटूट आस्था थी। उन्होंने एक युग पुरुष के रूप में गांधी का स्तवन किया। १९६९ में भारत सरकार ने आपको पद्मश्री उपाधि प्रदान कर सम्मानित किया था।

२ मार्च

जयन्त तालुकदार

जयन्त तालुकदार भारतीय तीरंदाज खिलाड़ी हैं, जिन्होंने विश्व के नम्बर एक तीरंदाज वर्ष २००६ होने का कीर्तिमान कायम किया है। तीरंदाजी में उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए जयन्त को वर्ष २००७ अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

३ मार्च

जमशेदजी टाटा

भारतीय उद्योग जगत को जमदेशजी टाटा ने दी नयी पहचान

नयी दिल्ली वैश्विक औद्योगिक मानचित्र पर भारत को प्रतिष्ठित स्थान दिलाने में टाटा घराने की उस हस्ती का नाम सर्वोपरि है, जिसे दुनिया जमशेदजी टाटा कहती है। कभी टाटा समूह से जुड़े रहे और अब उम्र के ७० वें पड़ाव पर पहुंच चुके जयप्रकाश चंद्र कहते हैं कि जब भारत में ब्रिटिश कंपनी दमन चक्र चरम पर था और देश गरीबी के शिकंजे में जा चुका था, तब २० वर्ष के जमशेदजी टाटा ने अपनी देशभक्ति और उद्यमशीलता को आम आदमी से जोड़ने का प्रयास किया। उत्पाद, बाजार, ट्रेडिंग तथा बैंकिंग का नौ साल का अनुभव हासिल कर उन्होंने केवल २९ वर्ष की उम्र में २१ हजार रुपये से एक ट्रेडिंग कंपनी शुरू की। यह हौसला कम ही लोगों में मिलता है। जमशेदजी ने १८६९ में बांबे के औद्योगिक केंद्र चिंचपोपली में एक दिवालिया तेल मिल को खरीदा और कपड़ा उद्योग में कदम रखा, फिर उन्होंने अलेक्जेंडर मिल का नया नाम रखा और उसे कॉटन मिल में तब्दील कर दिया। जयप्रकाश कहते हैं कि जमशेदजी ने १८७४ में सेंट्रल इंडिया स्पिनिंग वीविंग एंड मैन्यूफैक्चरिंग कंपनी की स्थापना की और इसमें डेढ़ लाख रुपये लगाये। उन्होंने ३७ साल की उम्र में एम्प्रैस मिल की स्थापना की। यह थी भारतीय उद्योग की नींव जिस पर आज वैश्विक स्तर पर देश का लोहा मनवाने वाली बुलंद इमारत खड़ी है। तीन मार्च १८३९ को गुजरात के छोटे से कस्बे नवसारी में जन्मे जमशेदजी टाटा पारसी पुजारी परिवार के मुखिया नुसरवंजी टाटा की पहली संतान और एकमात्र पुत्र थे। युवा शोधार्थी चेतन गांधी कहते हैं कि लीक से हटकर कुछ नया कर गुजरने की चाह ने जमशेदजी को भीड़ से अलग पहचान दे दी। नुसरवंजी परिवार की परंपरा के अनुसार पुजारी बन गए थे, लेकिन उनके बेटे जमशेदजी ने इस परंपरा को ठुकराते हुए उद्योग जगत की ओर रुख किया और वह अपने परिवार की ओर से उद्योग जगत में जानेवाले पहले सदस्य बने। उद्योग जगत की गहरी समझ उनमें प्राकृतिक रूप से थी और उस पर कूट कूट कर भरी देशभक्ति ने उन्हें जल्द ही आम आदमी के कल्याण की दिशा में प्रेरित कर दिया। वह मानते थे कि उनके कारोबार का लाभ आम आदमी तक पहुंचे और राष्ट्र की प्रगति की दिशा तय करे। जमशेदजी ने कई मानवीय और धर्मार्थ संस्थानों की स्थापना की। उन्होंने जेएन टाटा इंडोवमेंट की १८९२ में स्थापना की। यह संस्था भारतीयों को विदेश में उच्च शिक्षा हासिल करने में मदद करती थी। इसका

योगदान ऐसा रहा कि संभ्रांत इंडियन सिविल सर्विस में हर साल जानेवाले पांच भारतीयों में से दो टाटा स्कॉलर होते थे। मुंबई में आतंकवादियों का निशाना बन चुका पांच सितारा ताजमहल होटल जमशेदजी का एक प्रमुख सपना था। कहा जाता है कि भारतीय होने के कारण उन्हें अंग्रेजों द्वारा स्थापित एक होटल में प्रवेश नहीं दिया गया। इस अपमान के चलते उन्होंने उसी होटल के समान भारतीयों के लिए आलीशान होटल बनाने की ठानी। ताजमहल १९०३ में बनकर पूरा हुआ और यह तत्कालीन बंबई की पहली इमारत थी, जिसमें बिजली व्यवस्था की गयी थी। इस होटल में अमेरिकी पंखे, जर्मन ऐलीवेटर, तुर्की स्नानागर और अंग्रेजी बटलर थे। इस महान देशभक्त और देश के अग्रणी उद्योगपति ने १९०४ में जर्मनी में अंतिम सांस ली।

जमदेशजी नुसीरवानजी टाटा भारत के विश्व प्रसिद्ध औद्योगिक घराने टाटा समूह के संस्थापक थे। भारतीय औद्योगिक क्षेत्र में जमदेशजी ने जो योगदान दिया, वह असाधारण और बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। टाटा साम्राज्य के जनक जमशेदजी द्वारा किये गये अनेक कार्य आज भी लोगों को प्रेरित एवं विस्मित करते हैं।

जमशेद जी नुसीरवानजी टाटा भारत के विश्व प्रसिद्ध औद्योगिक घराने टाटा समूह के संस्थापक थे। भारतीय औद्योगिक क्षेत्र में जमशेदजी ने जो योगदान दिया, वह असाधारण और बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। उन्होंने भारतीय औद्योगिक विकास का मार्ग ऐसे समय में प्रशस्त किया था, जब उस दिशा में केवल यूरोपीय, विशेष रूप से अंग्रेज ही कुशल समझे जाते थे। उनका निधन १९ मई को हुआ।

गुरु समर्थ रामदास (जन्म- ३ मार्च)

समर्थ रामदास महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत थे। वे छत्रपति शिवाजी के गुरु थे। उन्होंने दासबोध नामक एक ग्रन्थ की रचना भी की थी, जो मराठी भाषा में है। हिन्दू पद पादशाही के संस्थापक शिवाजी के गुरु रामदासजी का नाम भारत के साधु-संतों व विद्वत समाज में सुविख्यात है। महाराष्ट्र तथा सम्पूर्ण दक्षिण भारत में तो प्रत्यक्ष भगवान हनुमान के अवतार के रूप में उनकी पूजा की जाती है।

जसपाल भट्टी (जन्म- ३ मार्च)

जसपाल भट्टी भारतीय हिन्दी फिल्मों के अभिनेता और प्रसिद्ध हास्य कलाकार थे। जसपाल भट्टी सिर्फ हास्य कलाकार नहीं थे बल्कि वह जीवन की विडंबनाओं पर चुटीली टिप्पणियां करनेवाले सधे हुए व्यंग्यकार थे। महंगाई, भ्रष्टाचार, नेताओं के पाखंड या जीवन के दूसरे सवालों पर उन्होंने बहुत सधे हुए संवाद किए। ८० और ९० के दशक में दूरदर्शन पर उनके कार्यक्रम फ्लॉप शो और उल्टा-पुल्टा बेहद चर्चित हुए।

४ मार्च

तोरु दत्त (जन्म- ४ मार्च

तोरु दत्त अथवा तरु दत्त अंग्रेजी भाषा की सर्वश्रेष्ठ प्रतिभान्वित कवियित्री थी। तोरु दत्त की ख्याति भारत की अंग्रेजी भाषा की श्रेष्ठ प्रतिभावान कवयित्री के रूप में है। इन्होंने साहित्य को अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य बनाया। ये संस्कृत साहित्य के आधार पर सीता, सावित्री, लक्ष्मण, ध्रुव, प्रह्लाद आदि की कथाओं को अपनी प्रतिभा का पुट देकर अंग्रेजी काव्य में व्यक्त करने लगीं।

रामनरेश त्रिपाठी (जन्म- ४ मार्च)

रामनरेश त्रिपाठी प्राक्छायावादी युग के महत्वपूर्ण कवि हैं जिन्होंने राष्ट्रप्रेम की कविताएँ भी लिखीं। इन्होंने कविता के अलावा उपन्यास, नाटक, आलोचना, हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तथा बालोपयोगी पुस्तकें भी लिखीं। इनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं- मिलन, पथिक, स्वप्न तथा मानसी। रामनरेश त्रिपाठी ने लोक-गीतों के चयन के लिए कश्मीर से कन्याकुमारी और सौराष्ट्र से गुवाहाटी तक सारे देश का भ्रमण किया। स्वप्न पर इन्हें हिंदुस्तान अकादमी का पुरस्कार मिला।

कोमल कोठारी (जन्म- ४ मार्च)

कोमल कोठारी राजस्थान के ऐसे व्यक्ति, जो राजस्थानी लोकगीतों व कथाओं आदि के संकलन एवं शोध हेतु समर्पित थे। इन्हें भारत सरकार भूषण से सम्मानित किया गया था। कोमल कोठारी द्वारा राजस्थान की लोक कलाओं, लोक संगीत एवं वाद्यों के संरक्षण, लुप्त हो रही कलाओं की खोज एवं उन्नयन तथा लोक कलाकारों को प्रोत्साहित करने हेतु बोरूंदा में रूपायन संस्था की स्थापना की गई थी।

फणीश्वरनाथ रेणु (जन्म- ४ मार्च)

फणीश्वरनाथ रेणु एक सुप्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार थे। फणीश्वरनाथ रेणु ने १९३६ के आसपास से कहानी लेखन की शुरुआत की थी। १९७२ में रेणु ने अपनी अंतिम कहानी भित्तिचित्र की मयूरी लिखी। उनकी अब तक उपलब्ध कहानियों की संख्या ६३ है। रेणु को जितनी प्रसिद्धि उपन्यासों से मिली, उतनी ही प्रसिद्धि उनको उनकी कहानियों से भी मिली। ठुमरी, अग्निखोर, आदिम रात्रि की महक, एक श्रावणी दोपहरी की धूप, अच्छे आदमी, सम्पूर्ण कहानियां, आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

सत्येन्द्र प्रसन्नो सिन्हा (निधन - ४ मार्च)

सत्येन्द्र प्रसन्नो सिन्हा प्रसिद्ध भारतीय अधिवक्ता और राजनेता थे, जिनका कानूनी कार्यकाल बेहद सफल रहा था। सत्येन्द्र प्रसन्नो सिन्हा वर्ष १९०७ में बंगाल के महाधिवक्ता नियुक्त होनेवाले और गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी परिषद में नियुक्त होनेवाले पहले भारतीय थे। वे ऐसे पहले भारतीय थे, जिन्होंने वाइसरॉय की काउंसिल में कानून सदस्य के रूप में प्रवेश करने का सम्मान प्राप्त किया था। सत्येन्द्र प्रसन्नो सिन्हा को प्रथम महायुद्ध के बाद लॉर्ड की उपाधि दी गई थी।

लाला हरदयाल (निधन- ४ मार्च)

लाला हरदयाल प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। लाला हरदयाल जी ने गदर पार्टी की स्थापना की थी। विदेशों में भटकते हुए अनेक कष्ट सहकर लाला हरदयाल जी ने देशभक्तों को भारत की आजादी के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित किया।

५ मार्च

शिवराज सिंह चौहान (जन्म- ५ मार्च)

शिवराज सिंह चौहान को भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के वरिष्ठ नेता एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के समर्पित कार्यकर्ताओं में गिना जाता है। वे मध्य प्रदेश के २९वें मुख्यमंत्री हैं। शिवराज सिंह चौहान भारतीय जनता पार्टी की केंद्रीय राजनीति में खासा दखल रखने के साथ-साथ जुझारू और संघर्षशील युवा नेता के रूप में भी जाने जाते हैं।

भाजपा महासचिव रह चुके शिवराज सिंह भाजपा की मध्य प्रदेश इकाई के अध्यक्ष भी रहे हैं।

गंगूबाई हंगल (जन्म- ५ मार्च)

गंगूबाई हंगल भारत की प्रसिद्ध खयाल गायिका थीं। भारतीय शास्त्रीय संगीत के किराना घराने का प्रतिनिधित्व करनेवाली गंगूबाई हंगल ने जातीय बाधाओं को पार कर संगीत क्षेत्र में आधे से अधिक सदी तक अपना योगदान दिया।

सोम ठाकुर (जन्म- ५ मार्च)

सोम ठाकुर मुक्तक, ब्रजभाषा के छंद और बेमिसाल लोक गीतों के वरिष्ठ एवं लोकप्रिय रचनाकार हैं। वे बड़े ही सहज, सरल व संवेदनशील व्यक्तित्व के कवि है। १९८४ में सोम ठाकुर पहले कनाडा, फिर हिन्दी के प्रसार के लिए मॉरिशस भेजे गए। बाद में ये अमेरिका चले गए। वापस लौटने पर इन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया और राज्यमंत्री का दर्जा दिया गया। इनके उल्लेखनीय योगदान के लिए इन्हें २००६ में यशभारती सम्मान और वर्ष २००९ में दुष्यंत कुमार अलंकरण प्रदान किया गया।

६ मार्च

अम्बिका चक्रवर्ती (निधन- ६ मार्च)

अम्बिका चक्रवर्ती प्रसिद्ध क्रांतिकारी और नेता थे। उनके विचार और कार्य क्रांतिकारी थे, पर प्रकट रूप से उन्होंने कांग्रेस संगठन से भी निकट का सम्बन्ध रखा। शीघ्र ही वे क्रांतिकारियों के चटगाँव समूह के नेता बन गए। १९२४ में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और १९२८ तक वे जेल में रहे। अंबिका ने बाद में अपने कुछ अन्य साथियों के साथ चटगाँव को अंग्रेजों से स्वतंत्र कराने की योजना बनाई। इसके लिए दो दलों का गठन किया गया। एक दल ने टेलीफोन और तारघर पर कब्जा कर लिया और दूसरे ने शस्त्रागार को अपने कब्जे में ले लिया। १९३० में पुलिस ने अंबिका को खोज निकाला और आजीवन कैद की सजा देकर उनको अंदमान भेज दिया गया। अंदमान में साम्यवादी साहित्य के अध्ययन से उनके विचारों में परिवर्तन हुआ और १९४६ में जेल से बाहर आने पर वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन गए।

हुमायूँ (जन्म- ६ मार्च)

नासिरुद्दीन मुहम्मद हुमायूँ एक प्रसिद्ध मुगल शासक था। हुमायूँ का जन्म बाबर की पत्नी माहम बेगम के गर्भ से ६ मार्च, १५०८ ई. को काबुल में हुआ था। बाबर के ४ पुत्रों, हुमायूँ, कामरान, अस्करी और हिन्दाल में हुमायूँ सबसे बड़ा था। बाबर ने हुमायूँ को अपना उत्तराधिकरी नियुक्त किया था। भारत में राज्याभिषेक के पूर्व १५२० ई. में १२ वर्ष की अल्पायु में उसे बदख्शाँ का सूबेदार नियुक्त किया गया। बदख्शाँ के सूबेदार के रूप में हुमायूँ ने भारत के उन सभी अभियानों में भाग लिया, जिनका नेतृत्व बाबर ने किया था।

मोटूरि सत्यनारायण (निधन- ६ मार्च)

मोटूरि सत्यनारायण दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार आंदोलन के संगठक, हिन्दी के प्रचार-प्रसार-विकास के युगपुरुष, गांधी दर्शन एवं जीवन मूल्यों के प्रतीक, हिंदी को राजभाषा घोषित कराने और उसके स्वरूप का निर्धारण करानेवाले महत्वपूर्ण सदस्यों में से एक थे। मोटूरि सत्यनारायण केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के संस्थापक थे।

७ मार्च

अज्ञेय, सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन (जन्म- ७ मार्च)

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे। अज्ञेय को प्रतिभासम्पन्न कवि, शैलीकार, कथा-साहित्य को एक महत्वपूर्ण मोड़ देनेवाले कथाकार, ललित-निबन्धकार, सम्पादक और सफल अध्यापक के रूप में जाना जाता है। हिंदी साहित्य में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय ने न सिर्फ प्रयोगवाद की शुरुआत की, बल्कि काव्य और उपन्यास लेखन की धारा को ही बदल दिया। आज के दौर के साहित्यकार उन्हें युगांतकारी मानते हैं। अज्ञेय ने कई अविस्मरणीय काव्य संग्रहों की रचना करने के साथ ही शेखर-एक जीवनी जैसा उपन्यास लिखा है, जिसे हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों में गिना जाता है। एक कवि से ज्यादा बतौर उपन्यासकार उनका योगदान कहीं बड़ा है। अज्ञेय हिंदी साहित्य के युगांतकारी कवि थे और उन्होंने नयी कविता एवं प्रयोगवाद को भी शुरू किया। आधुनिक हिंदी साहित्य की चर्चा अज्ञेय के बगैर पूरी नहीं हो सकती। अज्ञेय का जन्म सात मार्च, १९११ को उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जिले में हुआ। पिता पुरातत्वविद एवं संस्कृति के विद्वान थे और इस वजह से भी उनमें साहित्य के प्रति लगन बचपन से जग गई। उन्होंने साहित्य में अमूल्य योगदान देने के साथ ही स्वतंत्रता आंदोलन में भी बढ़चढ़कर हिस्सा लिया। चार अप्रैल, १९८७ में उनका निधन हो गया। अज्ञेय ने कई काव्य संग्रहों और गद्य संकलनों की रचना की। उनका उपन्यास शेखर एक जीवनी हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों में आज भी शुमार किया जाता है। वह एक साहित्यकार के साथ दिग्गज पत्रकार भी थे। उन्होंने प्रतीक जैसी साहित्यिक पत्रिका का संपादन किया तो राजनीतिक पत्रिका दिनमान के भी सफल संपादक रहे। कई लोग उनकी रचनाओं में एक तरह का व्यंग्य भी देखते हैं। मशहूर लेखक प्रेम जनमेजय कहते हैं, अज्ञेय को सभी एक कवि और उपन्यासकार के रूप में देखते हैं, लेकिन मैं उनके व्यंग्यात्मक पक्ष का कायल हूं। वह बहुत महीन व्यंग्य करते थे। आजकल के साहित्यकारों को व्यंग्य लेखन उनसे सीखना चाहिए। जनमेजय ने कहा, बतौर उपन्यासकार उनका कद बहुत बड़ा है। वह संवेदना के धरातल पर उतरकर रचनाएं करते थे। उनकी रचनाओं की संवेदनाओं को समझने के लिए उसी गहराई तक उतरना पड़ेगा। उन्होंने साहित्यिक पत्रकारिता को भी नया आयाम दिया। साहित्य में अज्ञेय के योगदान के लिए उन्हें पुरस्कारों सम्मानों से नवाजा गया।

गोविंद बल्लभ पंत (निधन- ७ मार्च)

गोविंद बल्लभ पंत उत्तर प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री एवं स्वतंत्रता सेनानी थे। इनका मुख्यमंत्री कार्यकाल १५ अगस्त १९४७ से २७ मई १९५४ तक रहा। बाद में ये भारत के गृहमंत्री भी (१९५५-१९६१) बने। भारतीय संविधान में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने और जमींदारी प्रथा को खत्म कराने में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। भारत रत्न का सम्मान उनके ही गृहमन्त्रित्व काल में आरम्भ किया गया था। बाद में यही सम्मान उन्हें १९४७ में उनके स्वतंत्रता संग्राम में योगदान देने, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री तथा भारत के गृहमंत्री के रूप में उत्कृष्ट कार्य करने के उपलक्ष्य में राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद द्वारा प्रदान किया गया।

नरी कॉन्ट्रैक्टर (जन्म- ७ मार्च)

नरीमन जमशेदजी नरी कॉन्ट्रेक्टर भारत के प्रसिद्ध पूर्व क्रिकेट खिलाड़ी थे। वे बायें हाथ से खेलनेवाले सलामी बल्लेबाज थे।

८ मार्च

रानी कर्णावती (निधन- ८ मार्च)

इतिहास में कर्णावती नाम की दो रानियों का उल्लेख मिलता है। इनमें एक चित्तौड़ के शासक राणा संग्राम सिंह राणा सांगा की पत्नी थी। जिन्होंने अपने राज्य को गुजरात के सुल्तान बहादुर शाह के हमले से बचाने के लिए मुगल बादशाह हुमायूं को राखी भेजी थी जबकि दूसरी उत्तराखंड के गढ़वाल की शासिका थीं। जिनका नाम नाक काटनेवाली रानी से मशहूर था। उनके बारे में कहा जाता है कि वह अपनी आज्ञा का उल्लंघन करनेवाले व्यक्ति की नाक कटवा देती थीं।

गढ़वाल की इस रानी के बारे में इतिहास में दर्ज है कि उसने अपनी राजनीतिक सूझबूझ और पराक्रम से मुगल सेना के छक्के छुड़ा दिए था। हालांकि रानी कर्णावती के जन्म, मायके आदि के बारे में जानकारी नहीं मिलती है लेकिन यह निश्चित है कि उनका जन्म किसी उच्च कूल में हुआ था। रानी कर्णावती का विवाह गढ़वाल के राजकुमार महीपति शाह के साथ हुआ था। जो अपनी पराक्रम गाथाओं से बाद में महाराज गर्वभंजन महिपति शाह के नाम से प्रसिद्ध हुए। १ जुलाई १६३१ में अल्मोड़ा के युद्ध में महिपति शाह के मारे जाने के बाद उनके पुत्र पृथ्वीपति शाह का ७ साल की उम्र में राजतिलक कर दिया गया लेकिन उसके वयस्क होने तक पूरा राजकाज रानी कर्णावती ने संभाला। इतिहासकार कैप्टन शूरवीर सिंह पवार राजमाता कर्णावती के विषय में लिखते हैं कि वे अपनी विलक्षण बुद्धि एवं गौरवमय व्यक्तित्व के लिए प्रसिद्ध थीं। अपने पुत्र के नाबालिग होने के कारण वह कर्तव्यवश जन्मभूमि गढ़वाल के हित के लिए अपने पति की मृत्यु पर सती नहीं हुईं और बड़े धैर्य और साहस के साथ उन्होंने पृथ्वीपति शाह के संरक्षक के रूप में राज्यभार संभाला। रानी कर्णावती ने राजकाज संभालने के बाद अपनी देखरेख में शीघ्र ही शासन व्यवस्था को सुदृढ़ किया। गढ़वाल के प्राचीन ग्रंथों और गीतों में रानी कर्णावती की प्रशस्ति में उनके द्वारा निर्मित बावलियों, तालाबों, कुओं आदि का वर्णन आता है। रानी कर्णावती ने निर्माण कार्यों के अलावा गढ़वाली सेना को भी पुनर्गठित एवं संगठित किया। मुख्य सेनाध्यक्ष माधोसिंह भंडारी के नेतृत्व में सेना को सुव्यवस्थित करने में उन्हें अच्छी सफलता मिली। इतिहासकारों के अनुसार दोस्तबेग मुगल नाम का एक मुसलमान सेनानायक महाराजा महिपति शाह के शासनकाल से उनकी सेना में नियुक्त था। राजमाता ने उसके परामर्श से विशेष लाभ उठाना प्रारंभ किया और संभवत: उसी की सलाह पर उन्होंने विद्रोहियों तथा आततार्इयों को कठोर दंड देना शुरू किया तथा अपनी आज्ञा का उल्लंघन करनेवालों की नाक कटवा देने की प्रथा डाली। इसी कारण वह नाक काटने वाली रानी के नाम से जानी गईं। इसे ऐतिहासिक संयोग ही कहा जा सकता है कि १६३४ में बदरीनाथ धाम की यात्रा के दौरान छत्रपति शिवाजी के गुरू समर्थ रामदास की गढ़वाल के श्रीनगर में सिख गुरू हरगोविंद सिंह से भेंट हुई। इन दो महापुरुषों की यह भेंट बड़ी महत्वपूर्ण थी क्योंकि दोनों का एक ही उद्देश्य था, मुगलों के बर्बर शासन से मुक्ति प्राप्त कर हिन्दू धर्म की रक्षा करना। इतिहासकार कैप्टन पवार लिखते हैं कि देवदूत के रूप समर्थ गुरु स्वामी रामदास १६३४ में श्रीनगर गढ़वाल पधारे और रानी कर्णावती को उनसे भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त किया। समर्थ गुरू रामदास ने रानी कर्णावती से पूछा कि क्या पतित पावनी गंगा की सप्त धाराओं से सिंचित भूखंड में यह शक्ति है कि वैदिक धर्म एवं राष्ट्र की मर्यादा की रक्षा के लिए मुगल शक्ति से लोहा ले सके। इस पर रानी कर्णावती ने विनम्र निवेदन किया पूज्य गुरुदेव इस पुनीत कर्तव्य के लिए हम गढ़वाली सदैव कमर कसे हुए उपस्थित हैं। मोहन चट्टी में मुगल सेना को

नेस्तनाबूद कर देने के बाद रानी कर्णावती ने जल्द ही पूरी दून घाटी को भी पुन: गढ़वाल राज्य के अधिकार क्षेत्र में ले लिया। वे ८ मार्च को वीरगति को प्राप्त हुई।

गोपी चन्द भार्गव (जन्म- ८ मार्च)

गोपी चन्द भार्गव संयुक्त पंजाब के प्रथम मुख्यमंत्री थे। वे गाँधी स्मारक निधि के प्रथम अध्यक्ष, गाँधीवादी नेता तथा स्वतंत्रता सेनानी थे। उनका सम्पूर्ण जीवन एक प्रेरणा स्रोत था। गोपी चन्द भार्गव के जीवन का मुख्य उद्देश्य समाज की सेवा था और वे आजीवन इसी कार्य में तत्पर रहे। उन्होंने महात्मा गांधी के साथ देश की आजादी की लड़ाई भी लड़ी।

बाल गंगाधर खेर (निधन- ८ मार्च)

बालासाहब गंगाधर खेर भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेताओं में से एक थे। वे दो बार महाराष्ट्र प्रदेश के मुख्यमंत्री भी बने। एक वकील और सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में वे जाने जाते थे। गंगाधर खेर १८५२ से १९५४ तक ब्रिटेन में भारत के उच्चायुक्त भी रहे। उन्हें भारत सरकार द्वारा सन १९५४ में पद्मविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया था।

९ मार्च

डॉ. नगेन्द्र (जन्म- ९ मार्च)

डॉ. नगेन्द्र भारत के प्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार थे। आधुनिक हिन्दी की आलोचना को समृद्ध करने में डॉ. नगेन्द्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। वे काव्य शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान माने जाते थे। उनके निबन्धों में वैचारिक औदात्य के साथ-साथ उनका व्यक्तित्व भी अभिव्यक्ति पा गया है। नगेन्द्र जी का हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश एक कवि के रूप में हुआ था। उनकी प्रतिभा का विकास मूलत: आलोचनात्मक निबंधकार के रूप में ही हुआ। हिन्दी के पांक्तेय आलोचक के रूप में नगेन्द्र विशेषत: यशस्वी रहे हैं।

कर्ण सिंह (जन्म- ९ मार्च)

कर्ण सिंह एक भारतीय राजनेता, लेखक और कूटनीतिज्ञ हैं। वर्ष १९४९ में प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू के हस्तक्षेप पर उनके पिता (महाराजा हरि सिंह) ने उन्हें राजप्रतिनिधि नियुक्त कर दिया। इसके पश्चात अगले १८ वर्षों के दौरान वे राजप्रतिनिधि, निर्वाचित सदर-ए-रियासत और राज्यपाल के पदों पर आसीन रहे।

हरिकृष्ण देवसरे (जन्म- ९ मार्च)

हरिकृष्ण देवसरे हिंदी के प्रतिष्ठित बाल साहित्यकार और संपादक थे। कविता, कहानी, नाटक, आलोचना आदि विधाओं में उनकी लगभग ३०० पुस्तकें प्रकाशित हैं। वे बच्चों की लोकप्रिय पत्रिका पराग के लगभग १० वर्ष संपादक भी रहे।

उस्ताद जाकिर हुसैन (जन्म- ९ मार्च)

जाकिर हुसैन भारत के प्रसिद्ध तबला वादक हैं। वे मशहूर तबला वादक कुरैशी अल्ला रक्खा खान के पुत्र हैं। १९८८ में जब उन्हें पद्मश्री का पुरस्कार मिला था तब वह महज ३७ वर्ष के थे और इस उम्र में यह पुरस्कार पाने वाले सबसे कम उम्र के व्यक्ति भी थे। इसी तरह २००२ में संगीत के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए उन्हें पद्म भूषण का पुरस्कार दिया गया था। जाकिर हुसैन को १९९२ और २००९ में संगीत का सबसे प्रतिष्ठित पुरस्कार ग्रैमी अवार्ड भी मिला है।

११ मार्च

मदनसिंह मतवाले (जन्म- ११ मार्च)

मदनसिंह मतवाले हैदराबाद रियासत के साथ संघर्ष करनेवाले प्रमुख व्यक्तियों में से थे। इन्होंने हैदराबाद राज्य को स्वाधीन भारत में मिलाने के चलाये जा रहे आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया था। हैदराबाद रियासत के साथ उन्होंने पहला संघर्ष तब किया, जब आर्य समाज ने हैदराबाद के विरुद्ध आंदोलन चलाया। यह आंदोलन सफल हुआ था और निजाम हैदराबाद को झुकना पड़ा।

चन्द्रभानु गुप्त (निधन-११ मार्च)

चन्द्रभानु गुप्त भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। उन पर आर्य समाज का बहुत गहरा प्रभाव था। वर्ष १९२६ से ही सी.बी.गुप्त उत्तर प्रदेश कांग्रेस और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य बन गए थे। कई विभागों में मंत्री रहने के बाद चन्द्रभानु जी वर्ष १९६० से १९६३ तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे। उन्होंने समाज सेवा के क्षेत्र में भी अनेक काम किए। लखनऊ और गोरखपुर जैसे शहरों को आधुनिक व विकासशील बनाने की पहल करनेवाले सी.बी. गुप्त को लोग मजबूत प्रशासन, जुझारू नेतृत्व व बड़प्पन के लिए आज भी याद करते हैं।

वी. शांता (जन्म- ११ मार्च)

वी. शांता भारत की ऐसी महिला हैं, जिन्हें उनके जनकल्याणकारी कार्यों के लिए वर्ष २००५ में रेमन मैग्सेसे पुरस्कार दिया गया था। डॉ. वी. शांता ने चेन्नई कैंसर इंस्टीट्यूट में इस ओर बहुत काम किया और इस उपेक्षित क्षेत्र में इलाज तथा अनुसंधान दोनों को अपने निर्देशन में संपन्न किया। उनको उनके द्वारा जनकल्याणकारी कार्य के लिए मैग्सेसे पुरस्कार प्रदान किया गया।

शम्भाजी (निधन- ११ मार्च)

शम्भाजी / शंभू राजे / शम्भुजी शिवाजी के ज्येष्ठ पुत्र और उत्तराधिकारी थे, जिसने १६८० से १६८९ ई. तक राज्य किया। शम्भुजी आरम्भ से ही अभिमानी, क्रोधी एवं भोग विलासी हो गया था। अपनी मृत्यु के समय शिवाजी ने उसे पन्हाला के किले में कैद कर रखा था। शम्भुजी में अपने पिता की कर्मठता और दृढ़ संकल्प का अभाव था। वह विलास प्रेमी था किन्तु उसमें शौर्य की कमी न थी।

१२ मार्च

यशवंतराव चव्हाण (जन्म- १२ मार्च)

यशवंतराव बलवंतराव चव्हाण भारत के पाँचवें उपप्रधानमंत्री और महाराष्ट्र के प्रथम मुख्यमंत्री थे। एक समय भारत देश के प्रमुख राजनेता और केन्द्र सरकार के महत्वपूर्ण विभागों के सफल मंत्री थे। यशवंतराव चव्हाण एक मजबूत कांग्रेस नेता, स्वतंत्रता सेनानी, सहकारी नेता, सामाजिक कार्यकर्ता और लेखक थे। ये आम आदमी के नेता के रूप में लोकप्रिय थे। यशवंतराव चव्हाण ने अपने भाषणों और लेखों में दृढ़ता से समाजवादी लोकतंत्र की वकालत की और महाराष्ट्र में किसानों की बेहतरी के लिए सहकारी समितियों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

क्षितिजमोहन सेन (निधन- १२ मार्च)

क्षितिजमोहन सेन का मध्यकालीन संत साहित्य में मर्मज्ञ समीक्षकों में अग्रणी स्थान है। क्षितिजमोहन सेन की गिनती अपने समय के प्रमुख संस्कृत विद्वानों में की जाती थी। ये अमर्त्य सेन के नाना थे। अपने नाना के प्रभाव से ही अमर्त्य सेन ने संस्कृत सीखी थी और भाषायी विद्वत्ता हासिल की।

१३ मार्च

विलायत खाँ (निधन- १३ मार्च)

विलायत खाँ भारत के प्रसिद्ध सितार वादक थे, जिन्होंने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बहुत ख्याति प्राप्त की थी। उस्ताद विलायत खाँ की पिछली कई पुश्तें सितार वादन से जुड़ी रही थीं। उनके पिता इनायत हुसैन खाँ से पहले उस्ताद इमदाद हुसैन खाँ भी जाने-माने सितार वादक रहे थे। विलायत खाँ ने सितार वादन की अपनी अलग गायन शैली विकसित की थी, जिसमें श्रोताओं पर गायन का अहसास होता था। उनकी कला के सम्मान में राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद ने उन्हें आफताब-ए-सितार का सम्मान दिया था। ये सम्मान पानेवाले वे एकमात्र सितार वादक थे।

करम सिंह (निधन- १३ मार्च)

लांस नायक करम सिंह भारत के दूसरे परमवीर चक्र से सम्मानित व्यक्ति थे। इन्हें यह सम्मान सन १९४८ में मिला। भारत पाकिस्तान युद्ध १९४७ में भारत की विजय में विशेष योगदान रहा।

१५ मार्च

कांशी राम

कांशी राम बहुजन समाज पार्टी के संस्थापक और दलित राजनीति के सबसे बड़े नेता थे। दलितों के उत्थान की छटपटाहट और उनके हाथ में सत्ता होने का सपना देखनेवाले कांशीराम ने ही मायावती की क्षमता को पहचाना और उन्हें राजनीति में आने को प्रेरित किया।

गुरु हनुमान- १५ मार्च

गुरु हनुमान भारत के महान कुश्ती प्रशिक्षक (कोच) थे। वे स्वयं भी महान पहलवान थे उन्होंने सम्पूर्ण विश्व में भारतीय कुश्ती को महत्वपूर्ण स्थान दिलाया। उनकी कुश्ती के क्षेत्र विशेष में उपलब्धियों के कारण इन्हें सन १९८८ में द्रोणाचार्य पुरस्कार और सन १९८३ में पद्मश्री सम्मानित किया गया।

सरला ठकराल (निधन- १५ मार्च)

सरला ठकराल भारत की प्रथम महिला विमान चालक थीं। १९३६ में सरला ठकराल परंपराओं को तोड़ते हुए एयरक्राफ्ट उड़ानेवाली पहली भारतीय महिला बनी थीं। उन्होंने जिप्सी मॉथ को अकेले ही उड़ाने का कारनामा कर दिखाया था।

१६ मार्च

अम्बिका प्रसाद दिव्य (जन्म- १६ मार्च)

अम्बिका प्रसाद दिव्य भारत के जाने-माने शिक्षाविद और हिन्दी साहित्यकार थे। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। अंग्रेजी, संस्कृत, रूसी, फारसी और उर्दू सहित कई अन्य भाषाओं के वे जानकार थे। दिव्य जी का पद्य साहित्य मैथिलीशरण गुप्त, नाटक साहित्य रामकुमार वर्मा तथा उपन्यास साहित्य वृंदावनलाल वर्मा जैसे प्रसिद्ध साहित्यकारों के काफी निकट है।

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध (निधन- १६ मार्च)

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध का नाम खड़ी बोली को काव्य भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करनेवाले कवियों में बहुत आदर से लिया जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में १८९० ई. के आसपास अयोध्यासिंह उपाध्याय ने साहित्य सेवा के क्षेत्र में पदार्पण किया। खड़ी बोली के प्रथम महाकाव्यकार हरिऔध जी का सृजनकाल हिन्दी के तीन युगों में विस्तृत है, इसीलिये हिन्दी कविता के विकास में हरिऔध जी की भूमिका नींव के पत्थर के समान है। उन्होंने संस्कृत छंदों का हिन्दी में सफल प्रयोग किया है। प्रियप्रवास की रचना संस्कृत वर्णवृत्त में करके जहाँ हरिऔध जी ने खड़ी बोली को पहला महाकाव्य दिया, वहीं आम हिन्दुस्तानी बोलचाल में चौखे चौपदे, तथा चुभते चौपदे रचकर उर्दू जुबान की मुहावरेदारी की शक्ति भी रेखांकित की।

विजयानन्द त्रिपाठी (निधन- १६ मार्च)

विजयानन्द त्रिपाठी ने हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। इन्होंने तुलसी साहित्य और रामचरितमानस का गहन अध्ययन किया था।

२० मार्च

कर्नल टॉड (जन्म- २० मार्च)

कर्नल जेम्स टॉड ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के एक अधिकारी तथा भारतविद थे। मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह ने इसकी सलाह से अपने राज्य में अनेक सुधार किए। सन १८१९ में जोधपुर जाते समय टॉड ने कई अभिलेखों और मुद्राओं का संग्रह किया जो इतिहास के लिये अत्यंत उपयोगी हैं। जोधपुर के महाराज ने भी कर्नल टॉड को राजपूत इतिहास की अनेक पुस्तकें दीं। इसी बीच में घूमकर अनेक ऐतिहासिक स्थानों और अभिलेखों की भी खोज टॉड ने की, जिनमें संवत १२२६ का बिजोल्या का शिलालेख विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

२१ मार्च

बिस्मिल्लाह खाँ (जन्म- २१ मार्च)

उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ भारत रत्न से सम्मानित प्रख्यात शहनाई वादक थे। सन १९६९ में एशियाई संगीत सम्मेलन

के रोस्टम पुरस्कार तथा अनेक अन्य पुरस्कारों से सम्मानित बिस्मिल्लाह खान की शहनाई को भारत के बाहर एक विशिष्ट पहचान दिलवाने में मुख्य योगदान दिया। वर्ष १९४७ में देश की आजादी की पूर्व संध्या पर जब लालकिले पर भारत का तिरंगा फहरा रहा था, तब बिस्मिल्लाह खान की शहनाई भी वहाँ आजादी का संदेश बाँट रही थी। तब से लगभग हर साल १५ अगस्त को प्रधानमंत्री के भाषण के बाद बिस्मिल्लाह खान का शहनाई वादन एक प्रथा बन गयी।

मानवेन्द्र नाथ राय (जन्म- २१ मार्च)

मानवेन्द्र नाथ राय वर्तमान शताब्दी के भारतीय दार्शनिकों में क्रांतिकारी विचारक तथा मानवतावाद के प्रबल समर्थक थे। इनका भारतीय दर्शनशास्त्र में भी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। मानवेन्द्र नाथ राय ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान क्रांतिकारी संगठनों को विदेशों से धन व हथियारों की तस्करी में सहयोग दिया था। सन् १९१२ ई. में वे हावड़ा षड़यंत्र अभियोग में गिरफ्तार भी कर लिये गए थे। इन्होंने भारत में कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। सन १९२२ ई. में बर्लिन से द लैंगार्ड ऑफ इण्डियन इण्डिपेंडेन्स नामक समाचार पत्र भी इन्होंने निकाला। कानपुर षड़यंत्र अभियोग में उन्हें छह वर्ष की सजा हुई थी।

केशव प्रसाद मिश्र (जन्म- २१ मार्च)

केशव प्रसाद मिश्र हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारों में से एक थे। एक भाषण के दौरान विनयपत्रिका की अत्यधिक प्रशंसा करने के कारण भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी पण्डित मदन मोहन मालवीय ने गदगद होकर इन्हें सन् १९२८ ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापक नियुक्त किया था।

२२ मार्च

मुंशी दयानारायण निगम (जन्म- २२ मार्च)

मुंशी दयानारायण निगम उर्दू के प्रसिद्ध पत्रकार और समाज सुधारक थे। वे बीसवीं सदी के प्रारंभ में कानपुर से प्रकाशित होनेवाली उर्दू पत्रिका जमाना के संपादक थे। इन्होंने प्रसिद्ध लेखक मुंशी प्रेमचन्द की पहली कहानी दुनिया का सबसे अनमोल रतन प्रकाशित की थी। मोहम्मद इक्बाल की प्रसिद्ध रचना सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा भी जमाना में ही पहली बार प्रकाशित हुई थी। भारत के विश्वविख्यात लेखक मुंशी प्रेमचन्द और दयानारायण निगम में बहुत गहरी मित्रता थी। नवाबराय के नाम से लिखनेवाले धनपतराय श्रीवास्तव को प्रेमचन्द का नाम भी दयानारायण निगम जी ने ही दिया था।

सूर्य सेन (जन्म- २२ मार्च)

सूर्य सेन भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले प्रसिद्ध क्रांतिकारियों और अमर शहीदों में गिने जाते हैं। भारत भूमि पर अनेकों शहीदों ने क्रांति की वेदी पर अपने प्राणों की आहुति देकर आजादी की राहों को रोशन किया है।

हनुमान प्रसाद पोद्दार (निधन- २२ मार्च)

हनुमान प्रसाद पोद्दार का नाम गीता प्रेस स्थापित करने के लिये भारत व विश्व में प्रसिद्ध है। भारतीय अध्यात्मिक

जगत पर हनुमान प्रसाद पोद्दार नाम का एक ऐसा सूरज उदय हुआ जिसकी वजह से देश के घर-घर में गीता, रामायण, वेद और पुराण जैसे ग्रंथ पहुंच सके। आज गीता प्रेस गोरखपुर का नमा किसी भी भारतीय के लिए अनजाना नहीं है। उनका निधन २२ मार्च को हुआ।

२३ मार्च

डॉ. राममनोहर लोहिया

डॉ. राममनोहर लोहिया दूरदर्शी राजनेता ही नही, एक चिंतक भी थे। उन्होने अपनी जन्मस्थली फैजाबाद मे रामायण मेला की परिकल्पना के स्थान पर राम-भरत भ्रातृ मिलन स्थल और तुलसी की प्रवास स्थली, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना से युक्त चित्रकूट का चयन रामायण मेले हेतु किया यह उनकी महानता थी। डॉ. लोहिया की दृष्टि मे तुलसी के रामचरितमानस का महत्व हमारे देश के सांस्कृतिक जीवन मे निर्विवाद है। इस विषय मे उन्होने कहा भी है कि इसे मैने बारम्बार पढ़ा और उसके रस मे डूबा। डॉ. लोहिया की दूरदृष्टि ने समझ लिया था कि तुलसी और हिंदी एक दूसरे के पर्याय बन चुके है। प्रवासी भारतीयों के संबल बने तुलसी और रामचरितमानस ने भारतीय संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

डॉ. राममनोहर लोहिया के सम्पादन मे चौखंभा हिंदी मे तथा मैनकाइन्ड अंग्रेजी में प्रकाशित आलेख मील के पत्थर तथा समाज को दिशा देने वाले बने। महात्मा गांधी ने भी बचपन मे अपनी माँ से तुलसीदास जी के रामचरित मानस के प्रसंगों को सुनकर स्वाधीनता आंदोलन मे रामराज्य लाने का उद्घोष किया था। वस्तुत: महात्मा गाँधी के बाद डॉ. राममनोहर लोहिया ने राजनैतिक शून्यता को भरने की कोशिश की। मनीषी डॉ. युगेश्वर ने लोहिया की सांस्कृतिक दृष्टि मे लिखा कि गाँधी के बाद राजनीति धर्म और संस्कृति से शून्य हो गई थी। राज्य के दैनिक कार्यों मे नीरसता आने लगी थी। लोहिया ने भाषा और रामायण मेला के द्वारा इस नीरस शून्यता को दूर करने की कोशिश की। उन्होने ठीक पहचाना कि राजनीति तत्कालिक है और धर्म दीर्घकालिक।

डॉ. राम मनोहर लोहिया मूलत: राजनीतिक चिंतक थे। सांस्कृतिक चिंतन के लिए भी उन्होने समय निकाला। किंतु इस थोड़े समय मे उन्होने सम्पूर्ण भारतीय चिन्तन को एक नयी दृष्टि और दिशा दी। अपने चिन्तन मे उन्होने राम, कृष्ण और शिव की नयी व्याख्या प्रस्तुत की। डॉ. राममनोहर लोहिया का चिन्तन तीव्र और बौद्धिक है, किन्तु उनकी मूलशक्ति एक अन्तर्निहित भावना है। उनका रामायण मेला मात्र एक उत्सव नही है, वह एक सामाजिक परिवर्तन एवं निर्माण का आन्दोलन है। उन्होने राजनीति और नैतिकता का संतुलन बनाये रखने के लिए सांस्कृतिक कार्यों को आगे बढ़ाने मे भरपूर प्रोत्साहन और सहयोग दिया। डॉ. लोहिया की लोकप्रियता का एक कारण उनकी सांस्कृतिक पक्षधरता भी है। लोक आग्रह लोहिया को लोकभाषा और रामायण की ओर मोड़ता है।

स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी नेताओं में से एक राममनोहर लोहिया अपने समय से भी आगे सोचनेवाले एक प्रखर चिंतक थे। कश्मीर समस्या हो, गरीबी, असमानता अथवा आर्थिक मंदी, इन तमाम मुद्दों पर लोहिया का चिंतन और सोच स्पष्ट थी।

देश विभाजन के थे खिलाफ- यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि आज जिन समस्याओं से आमजन को दो-चार

होना पड़ रहा है, लोहिया उनमें से अधिकांश पर अपना दृष्टिकोण पहले ही रख चुके हैं। विश्व आज भी गरीबी, असमानता, आर्थिक मंदी समेत अनेक समस्याओं से जूझ रहा है। इसके लिए जो समाधान आज बुद्धिजीवियों द्वारा सुझाए जा रहे हैं वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लोहिया के चिंतन से जुड़े हैं। जुझारू समाजवादी नेता लोहिया की मृत्यु के ४३ साल बाद उनकी बातें दोहराने वालों में वे लोग भी शामिल है जिन्होंने लोहिया को शायद पढ़ा भी नहीं या फिर वह लोहिया के विरोधी रहे हैं। कश्मीर मुद्दा आज भी भारत पाकिस्तान के बीच विवाद का कारण बना हुआ है। लोहिया ने देश विभाजन को सहजीवन प्रणाली के विरुद्ध बताया और पाप कहा था। उन्होंने भारत-पाक एका कार्यक्रम के जरिए भारत-पाक महासंघ बनाकर उसके अंतर्गत कश्मीर की जनता को आत्मनिर्णय की सुविधा की बात कही थी। आज पूर्व न्यायाधीश कृष्ण अय्यर, भाजपा नेता लाल कृष्ण आडवाणी और प्रख्यात अर्थशास्त्री लार्ड मेघनाथ देसाई सहित अनेक लोग इस सोच का समर्थन कर रहे है लोहिया द्वारा उठाए गए सवाल आज हर राजनीतिक पार्टी के घोषणापत्र का हिस्सा होते हैं।

लोहिया ने २७ करोड़ और तीन आने की बहस से जिस आर्थिक समानता की तरफ ध्यान खींचा था, वह आज भी है। अर्जुनसेन गुप्ता समिति ने असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की सामाजिक सुरक्षा रिपोर्ट में बताया है कि ८३.६ करोड़ भारतीय रोजाना २० रूपये से भी कम पर अपना जीवन बसर करते हैं, जो कि १९६३ के तीन आने से भी कम है। यह पूछे जाने पर लोहिया को आदर्श बतानेवाले समाजवादी पार्टी के प्रमुख मुलायम सिंह यादव सहित कई पार्टियों के सांसदों ने वेतन वृद्धि के लिए संसद में हंगामा किया और वेतन वृद्धि होने के बाद ही शांत हुए। अगर लोहिया होते तो इसका पुरजोर विरोध करते। आर्थिक मंदी को शुरू हुए दो साल से भी अधिक हो गया है, किंतु सरकारी पैकजों की घोषणा और अर्थशास्त्रियों की तमाम कोशिशों के बावजूद यह पूरी तरह खत्म नहीं हो पायी है।

जाति व्यवस्था के लिखाफ थे लोहिया और जहां तक जाति आधारित जनगणना का सवाल है, तो लोहिया भी इसका समर्थन करते क्योंकि इससे न केवल भारत की ६००० जातियां मात्र चार समूहों में आ जाएंगी, बल्कि धीरे-धीरे लोग अपनी जाति को भूलना शुरू कर देंगे।

लोहिया ने इकनॉमिक्स आफ्टर मार्क्स में पूंजीवाद के इन संकटों का जो विश्लेषण किया था, वह आज भी प्रासंगिक है।

अब तो अरूंधति राय जैसे रोमानी क्रांतिकारी बुद्धिजीवी भी घूम फिर कर पूंजीवाद और साम्यवाद से परे गांधियन समाजवाद की बातें कर रहे हैं। यह लोहिया के अप्रासंगिकता के सिद्धांत का ही भाष्य है।

राम मनोहर लोहिया को भारत एक अजेय योद्धा और महान विचारक के रूप में देखता है। देश की राजनीति में स्वतंत्रता के बाद ऐसे कई नेता हुए जिन्होंने अपने दम पर शासन का रुख बदल दिया जिनमें एक थे राममनोहर लोहिया। अपनी प्रखर देशभक्ति और बेलौस तेजस्वी समाजवादी विचारों के कारण अपने समर्थकों के साथ ही डॉ. लोहिया ने अपने विरोधियों के मध्य भी अपार सम्मान हासिल किया। उनका निधन १२ अक्टूबर को हुआ।

राममनोहर लोहिया दुनियाभर के समाजवादियों को एकजुट करना चाहते थे। देश में गैर कांग्रेसवाद की अलख जगानेवाले महान स्वतंत्रता सेनानी और समाजवादी नेता राम मनोहर लोहिया चाहते थे कि दुनियाभर के सोशलिस्ट एकजुट होकर मजबूत मंच बनाए। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो. तुलसी राम कहते हैं कि लोहिया भारतीय

राजनीति में गैर कांग्रेसवाद के शिल्पी थे और उनके अथक प्रयासों का फल था कि १९६७ में कई राज्यों में कांग्रेस की पराजय हुई, हालांकि केंद्र में कांग्रेस जैसे तैसे सत्ता पर काबिज हो पायी।

तुलसी राम ने कहा कि हालांकि लोहिया १९६७ में ही चल बसे लेकिन उन्होंने गैर कांग्रेसवाद की जो विचारधारा चलायी उसी की वजह से आगे चलकर १९७७ में पहली बार केंद्र में गैर कांग्रेसी सरकारी बनी। उन्होंने कहा कि लोहिया मानते थे कि अधिक समय तक सत्ता में रहकर कांग्रेस अधिनायकवादी हो गयी थी और वह उसके खिलाफ संघर्ष करते रहे।

२३ मार्च १९१० को उत्तर प्रदेश में फिरोजाबाद जिले के अकबरपुर में जन्मे राम मनोहर लोहिया मैट्रिक की परीक्षा में प्रथम आने के बाद इंटरमीडिएट की पढ़ाई के लिए बनारस हिंदू विश्वविद्यालय गए। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक की शिक्षा ली। बहुत कम उम्र में ही उनकी मां गुजर गयीं। वह अपने पिता हीरालाल के माध्यम से स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े। हीरालाल अपने पुत्र को कई विरोध प्रदर्शनों में ले गए। लोकमान्य तिलक के निधन पर छोटी हड़ताल आयोजित कर लोहिया ने स्वतंत्रता आंदोलन में अपना पहला योगदान दिया। पिता के माध्यम से ही वह गांधीजी से मिले। गांधीजी ने उनके जीवन पर गहरा असर डाला। वह महज दस साल की उम्र में गांधीजी के सत्याग्रह से जुड़े। बाद में वह जवाहरलाल नेहरू से मिले और उनसे उनकी निकटता बढ़ गयी। हालांकि आगे चलकर उन्होंने कई मुद्दों पर नेहरू से भिन्न राय रखी।

जिनिवा में लीग आफ नेशंस सभा में भारत का प्रतिनिधित्व ब्रिटिश राज के सहयोगी बीकानेर के महाराजा द्वारा किए जाने पर लोहिया ने कड़ी आपत्ति जतायी। अपने इस विरोध का स्पष्टीकरण देने के लिए अखबारों और पत्रिकाओं में उन्होंने कई पत्र भेजे। इस पूरी प्रक्रिया के दौरान लोहिया रातोंरात चर्चा में आ गए।

भारत लौटने के बाद वह कांग्रेस में शामिल हो गए। वह समाजवाद की ओर आकर्षित हुए और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना में मदद की। उन्होंने कांग्रेस के अंदर ही विदेश मामले से संबंधित एक अलग विभाग बनाया और नेहरू ने उन्हें उसका प्रथम सचिव बनाया।

वर्ष १९४० में उन्होंने सत्याग्रह अब आलेख लिखा और उसके छह दिन बाद उन्हें दो साल की कैद की सजा हो गयी। मजिस्ट्रेट ने उन्हें सजा सुनाने के दौरान उनकी खूब सराहना की। जेल में उन्हें खूब यातना दी गयी। दिसंबर, १९४१ में वह रिहा कर दिए गए। आजादी के बाद लोहिया राजनीति में काफी सक्रिय रहे। स्वतंत्रता बाद के कई सालों तक कांग्रेस सत्तासीन रही। उन्होंने कांग्रेस का पुरजोर विरोध किया और गैर कांग्रेसवाद की अलख जगायी। वह प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के महासविच थे। उन्होंने आगे चलकर विश्व विकास परिषद बनायी। जीवन के अंतिम वर्षों में वह राजनीति के अलावा साहित्य से लेकर राजनीति एवं कला पर युवाओं से संवाद करते रहे। वह १२ अक्टूबर, १९६७ को इस दुनिया से चल बसे।

शहीदों का दिन (२३ मार्च)

शहीद भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी (२३ मार्च १९३१)

यह दिन बड़ा महत्वपूर्ण है। संत श्रेष्ठ तुकाराम महाराज सत्रहवीं सदी में सदेह स्वर्ग में गए थे। इसी दिन २३ मार्च १९३१ को भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव इन तीनों देशभक्त क्रांतिकारियों को फांसी दी गई। फांसी से पहले एक कैदी सहयोगी ने भगतसिंह से पूछा था, सरदारजी। मरने जा रहे हो, कोई अफसोस तो नहीं हो रहा?

इस पर जोर से हंसते हुए भगतसिंह ने कहा था, भाई। इस रास्ते पर पहला कदम रखते ही हमने इन्कलाब जिन्दाबाद की घोषणा सारे देश में पहुंचाने की बात सोची थी। मेरे फांसी पर चढ़ने के बाद जब यह घोषणा मेरे करोड़ों देशवासियों के मुंह से निकलेगी, तो उसकी गूंज ब्रिटिश साम्राज्य को उखाड़कर रख देगी। मेरी इस छोटी सी उम्र का इससे ज्यादा मोल और क्या हो सकता है भाई?

इसी वक्त पूछनेवाले कैदी ने राजगुरु की तरफ भी देखा तो राजगुरु भी बिना कुछ सोचे तुरंत बोले, भाई। फांसी पर चढ़ते ही हमारी यात्रा तो खत्म हो जाएगी, लेकिन तुम सब तो अलग अलग अपराधों में सजा काट रहे हो। फांसी होते ही हमारी यात्रा तो एक पल में खत्म हो जाएगी, लेकिन तुम्हारी सजा की यात्रा तो सालों साल चलती रहेगी, बस यही सोचकर हमें दु:ख हो रहा है।

भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव ये तीनों क्रांतिवीर मरने के रास्ते पर जाते वक्त भी मजाक कर सकते थे,यह बात उनके पक्के इरादों को दर्शाती थी।

३ मार्च तक अंग्रेजी सरकार से दया की याचना यानी माफीनामे का आवेदन करना था। इन तीनों बहादुर क्रांतिवीरों ने इससे इन्कार कर ही दिया था। इसी वक्त इन तीनों ने तब पंजाब के गवर्नर को अंग्रेजी में एक पत्र लिखा था। तीनों के हस्ताक्षर वाले इस पत्र में लिखा था, राजा के विरूद्ध युद्ध पुकारने के आरोप में हमें फांसी की सजा सुनाई गई है। इसका मतलब इंग्लैंड और हिन्दुस्तान इन दो देशों के बीच युद्ध जारी है। इसका मतलब है कि हमने इस युद्ध में हिस्सा लिया है तो हम राजबंदी नहीं बल्कि युद्धबंदी हुए। हमारे नेताओं को तो आपने कुछ लालच देकर सरकार की तरफ खींच लिया है। उन नेताओं ने इस देश के नौजवानों के साथ विश्वासघात किया है। मगर इसका भी हमें दु:ख नहीं है। तुमने हमे फांसी देने का निश्चय कर लिया है, इस लिए हमने दया की भीख कबूल नहीं की। लेकिन अंग्रेजों के कोर्ट के कहने के अनुसार अगर हमने युद्ध पुकारा था तो हमें युद्ध बंदी समझकर हमें फांसी न देते हुए वीरों की तरह गोली मार देनी चाहिए।

इस बीच इन तीनों क्रांतिवीरों को बचाने के लिए अनेक देशभक्त कानून के पंडित भी खटपट कर रहे थे। १८ मार्च १९३१ को गृह विभाग की ओर से बुरी सूचना देनेवाले पत्र तीनों क्रांतिवीरों के घर भेज दिए गए। इन पत्रों में कहा गया था कि २३ मार्च को सुबह वे फांसी पर चढ़नेवालों से मिल सकेंगे। उस दिन जेल के बाहर जबरदस्त भीड़ थी। सिर्फ मां बाप ही मिल सकेंगे, यह सुनकर बिशन सिंह भड़क उठे, बोले, जाएंगे तो सब जाएंगे, वरना कोई नहीं जाएगा, यही उनकी भूमिका थी। देशभक्तों का यह दृश्य अच्छे अच्छों का दिल हिला देनेवाला था, इसका सही वर्णन करना भी बड़ा कठिन हे। शाम ४ बजे जेल के दरवाजे बंद हो गए। इन तीनों क्रांतिवीर की अंतिम भेंट भी किसी को नहीं मिली।

भगतसिंह ने मेरा रंग दे बसंती चोला यह गाना शुरू कर दिया। राजगुरु और सुखदेव भी साथ गा रहे थे। शाम को ७ बजे तीनों क्रांतिवीरों को स्नान कराया गया। गाना और नहाने की आवाज सुनकर जेल के अन्य कैदी जोर जोर से रोने लगे, हाथों की जंजीरें और दरवाजे बजाने लगे। कुछ कैदी तो अपने हाथ और सिर को लोहे के गजों पर पीटने लगे। फांसी के कक्ष का दरवाजा खुला। वहां बैठे जेल मैजिस्ट्रेट से भगतसिंह बोले, साहब। आप भाग्यवान है। हिंदुस्तानी क्रांतिकारी अपने सर्वोच्च ध्येय के लिए खुशी खुशी मौत को गले लगा रहे हैं, यह आपको देखने को मिल रहा है। इस पर मैजिस्ट्रेट की गर्दन नीचे झुक गई।

फांसी के तख्ते पर खड़े होकर तीनों क्रांतिवीर लाँग लिव रिवोल्यूशन, डाउन विद इम्पीरिएलिज्म और वंदे मातरम की घोषणाएं करने लगे। तभी तीनों क्रांतिवीरों के पांव घुटनों के नीचे से बांध दिए गए।

उसी वक्त तीनों ने खुशी खुशी फांसी के फन्दे को चूम लिया। वहां खड़े सिपाहियों ने तीनों के मुंह पर कालां टोप डालकर फांसी का फन्दा गले में डाल दिया। जब भगत सिंह के चेहरे पर काला टोप डाला गया तो भगतसिंह ने उसे उठाया और कहा मुझे मेरी भारत माँ के दर्शन करने दो। फंदे की गांठ गले पर कसते ही घोषणाएं रूक गई। पूरा माहौल शान्त हो गया, जैसे वक्त ही रुक गया हो।

ठीक ७ बजकर ३३ मिनट पर इशारा होते ही खटका दबा दिया गया। तीनों क्रांतिवीरों के शरीर आठ फुट गहरे गड्ढे में लटक गए। जेल की दीवार तोड़कर तीनों की लाश को चोरी छुपे लाहौर से २५ मील दूर फिरोजपुर में ले जाया गया। अंग्रेजों ने वहां रात को ही सतलज नदी के किनारे पर जल्दी जल्दी में दाह-संस्कार भी कर दिया। यह खबर मिलते ही जेल के बाहर खड़ी भीड़ उस तरफ भागी। लोगों के वहां पहुचंने से पहले ही चिता की जगह साफ कर दी गई। फिर भी रात के अन्धेरे में ही लोग धीरे धीरे लाइन लगाकर उस गरम धरती तक गए और शहीदों की राख अपने हाथ में लेकर ही घर लौटे।

बलिदान ने हिला दी थी अंग्रेजों की नींव

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में अमर हुए राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह की क्रांतिकारी गतिविधियों ने अंग्रेजों की नींव हिलाकर रख दी थी और उन्होंने तीनों को फांसी पर चढ़ाने को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। अंग्रेज इन तीनों को जीवित नहीं देखना चाहते थे क्योंकि उन्हें लगता था कि ये तीनों भारत में ब्रिटिश हुकूमत के लिए काफी खतरनाक हैं। ये तीनों ही क्रांतिकारी बुलंद हौसलेवाले थे और जेल में अंग्रेजों की कोई भी प्रताड़ना इनके इरादों को नहीं तोड़ पाई थी। उन्होंने कहा कि बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी भगत सिंह अने क्रांतिकारी साथियों के अत्यंत चहेते थे और वे उन पर अटूट विश्वास रखते थे। भगत सिंह हिंसा में विश्वास नहीं करते थे, लेकिन लाला लाजपत राय को अंग्रेजों ने जिस निर्ममता से मारा, उससे उनका खून खौल उठा था। वे इस घटना के जिम्मेदार ब्रिटिश अधिकारियों को सबक सिखाना चाहते थे और इसीलिए उन्होंने सांडर्स को मौत के घाट उतार दिया। भगत सिंह ने बटुकेश्वर दत्त के साथ जब पब्लिक सेफ्टी और ट्रेड डिस्प्यूट बिल के विरोध में आठ अप्रैल १९२९ को केंद्रीय विधानसभा में बम फेंका तो वह भी ऐसी जगह फेंका जिससे किसी की जान नहीं जाए। भगत सिंह वैचारिक क्रांति के प्रतीक हैं। वह हिंसा के समर्थक नहीं थे। शहीद ए आजम ने खुद कहा भी है कि क्रांति बम और पिस्तौल की संस्कृति नहीं है। इसका मतलब यह है कि जुल्म और शोषण पर टिकी व्यवस्था बदलनी चाहिए। राजगुरु और सुखदेव भगत सिंह के अनन्य मित्र थे और इन तीनों में एक दूसरे के प्रति विशेष सखा भाव था। राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह को फांसी देने के मुद्दे को अंग्रेजों ने प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। अंग्रेजों को डर था कि यदि ये तीनों जीवित रहे तो भारत से अंग्रेजों का बोरिया बिस्तर कभी भी उठ सकता है। गोरी हुकूमत ने इन क्रांतिकारियों के प्रति भारत के जनमानस में उमड़े समर्थन के डर से फांसी के लिए मुकर्रर तारीख से एक दिन पहले ही उन्हें फांसी पर चढ़ा दिया। राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह ने २३ मार्च १९३१ को हंसते हंसते फांसी का फंदा चूम लिया और भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में अमिट हो गए। इन क्रांतिकारियों को सांडर्स हत्याकांड में मौत की सजा सुनाई गई थी।

२५ मार्च

ऊषा मेहता

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान एक भूमिगत रेडियो आजादी की अलख जगाता था। दिलचस्प बात यह है कि इस भूमिगत रेडियो स्टेशन का ठिकाना हर दिन बदल जाता था और यह काम एक महिला करती थी जिसका नाम था ऊषा मेहता। अंग्रेजी फौजों से छिप कर रेडियो के माध्यम से स्वतंत्रता सेनानियों के संदेश देने के जोखिम भरे काम में अहम भूमिका निभानेवाली ऊषा मेहता ने इसी रेडियो से पहली बार कहा था भारत के किसी गुमनाम स्थान से ४२.३४ मीटर की वेवलेंथ पर यह कांग्रेस रेडियो है। वर्ष १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भूमिगत रेडियो के संचालन में ऊषा की भूमिका का अपनी पुस्तक में उल्लेख किया है। इतिहासकारों के मुताबिक, ऊषा ने अपने सहयोगियों के साथ १४ अगस्त १९४२ को कांग्रेस रेडियो शुरू किया था। वल्लभभाई झावेरी, चंद्रकांत झावेरी, बाबूभाई ठक्कर, नंका मोतवानी, राम मनोहर लोहिया, अच्युत पटवर्धन और पुरुषोत्तम त्रिकमदास जैसे लोग इस रेडियो से जुड़े हुये थे। इस भूमिगत रेडिया से महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक और महत्वपूर्ण नेताओं के रिकार्ड किये गये टेप प्रसारित किये जाते थे। हर रोज इस भूमिगत रेडियो स्टेशन का ठिकाना बदला जाता था। ब्रिटिश पुलिस ने १२ नवंबर १९४२ को इस रेडियो स्टेशन का पता लगाकर ऊषा मेहता को गिरफ्तार कर लिया। तीन माह में इस रेडियो से ऐसी खबरें आई थीं जिन पर ब्रिटिश सरकार ने रोक लगा रखी थी। पुलिस की एक शाखा सीआईडी (क्रिमिनल इन्वेस्टिगेशन डिपार्टमेंट) ने छह माह तक ऊषा से पूछताछ की। इस दौरान उन्हें एक अलग कोठरी में अकेले रखा गया और लालच देने के प्रयास किए गए। लेकिन ऊषा चुप रहीं। सुनाई के दौरान ऊषा ने कहा कि वह किसी सवाल का जवाब नहीं देंगी और न ही अपने बचाव में कुछ कहेंगी। ऊषा को चार साल की सजा सुनाई गई। आजादी के लिये हर खतरा उठानेवाली इस जांबाज स्वतंत्रता सेनाने ने आजादी के बाद देश के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हालात के बारे में साप्ताहिक पत्रिका इंडिया टुडे को दिये एक साक्षात्कार में कहा था यह निश्चित रूप से वह आजादी नहीं है जिसके लिये हमने लड़ाई लड़ी थी। पद्म विभूषण से सम्मानित ऊषा मेहता का जन्म २५ मार्च १९२० को गुजरात में सूरत के सारस गांव में हुआ था। आठ साल की उम्र में ही उन्होंने साइमन आयोग के विरोध में आयोजित एक मार्च में भाग लिया था और साइमन वापस जाओ का नारा लगाया था। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ऊषा की उम्र अधिक नहीं थी लेकिन वह स्वाधीनता का मतलब समझती थीं। पांच साल की उम्र में अहम दाबाद के एक आश्रम में महात्मा गांधी को पहली बार देखनेवाली ऊषा ने आजीवन खादी पहनी और बापू के सिद्धांतों का पालन किया। उन्होंने अन्य बच्चों के साथ अंग्रेजों के खिलाफ और शराब की दुकानों के विरोध में निकाली जानेवाली प्रभात फेरी में भाग लिया। मुंबई में नौ अगस्त १९४२ को उन्होंने ग्वालियर टैंक मैदान में तिरंगा फहराया। बाद में इसे अगस्त क्रांति मैदान के नाम से जाना गया। ११ अगस्त २००० को मुंबई में उनका निधन हो गया।

विख्यात गांधीवादी और स्वतंत्रता सेनानी। १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भूमिगत गुप्त कांग्रेस रेडियो चलाने में अहम भूमिका। १२ नवंबर १९४२ को गिरफ्तार कर जेल भेज दी गईं। आजादी के बाद पढ़ाई पूरी की। मुंबई विश्वविद्यालय से विद्यार्थी, रिसर्च असिस्टेंट, लेक्चरर, प्रोफेसर तथा सिविक्स एंड पॉलिटिकल डिपार्टमेंट की विभागाध्यक्ष के रूप में जुड़ी रहीं। गांधी स्मारक निधि, भारतीय विद्या भवन की गतिविधियों से भी जुड़ी रहीं। अंग्रेजी और गुजराती में पुस्तकें लिखीं। पद्मविभूषण से सम्मानित।

२६ मार्च

छायावादी कवियत्री- महादेवी वर्मा (जन्म- २६ मार्च)

महादेवी जी का जन्म उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद में २६ मार्च १९०७ को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री गोविंद प्रसाद वर्मा तथा माता का नाम श्रीमती हेम रानी वर्मा था।

महादेवी जी के नाना ब्रज भाषा में काव्य रचना करते थे, अत: महादेवी जी की प्रारंभिक शिक्षा इंदौर में हुई। घर पर इन्होंने चित्रकला, संगीत की शिक्षा भी प्राप्त की। अपनी माता से तुलसी, सूर और मीरा का साहित्य पढ़ा, इनकी शिक्षा छठी तक ही हो पायी थी तभी इनका विवाह नौ वर्ष की अवस्था में डॉ. स्वरूप नारायण वर्मा के साथ हुआ।

ससुराल में ससुर जी के विरोध के कारण वे आगे की शिक्षा पाने से वंचित थी। उनके निधन के बाद वे आगे की शिक्षा प्राप्त कर सकी। सन १९२० में वे प्रयाग से मिडिल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर संयुक्त प्रांत में सर्वप्रथम रहीं। इन्हें छात्रवृत्ति मिली।

सन १९२४ में महादेवी जी ने इंटेऊस प्रथम श्रेणी में तथा सन १९२३ में इण्टरमीडिएट तथा सन १९२८ में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। बी.ए. में इनके ऐच्छिक विषय संस्कृत एवं दर्शन थे। महादेवी जी ने भारतीय दर्शन का गंभीर अध्ययन किया जिसकी छाप उनकी रचनाओं पर पड़ी। उन्होंने तत्पश्चात ससम्मान संस्कृत में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वे प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्रधानाचार्य नियुक्त हुई।

महादेवी जी इलाहाबाद से प्रकाशित पत्रिका चांद की संपादिका भी रही। वे उत्तर प्रदेश विधानसभा की सदस्य भी रही। उन्होंने साहित्यकारों की सहायतार्थ साहित्यसंस नामक संस्था स्थापित की। इनकी प्रमुख रचनाओं में नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, यामा, दीप शिक्षा, सत्प्रर्वणा सन्धिनी (काव्य) अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं, पथ के साथी, मेरा परिवार (रेखाचित्र) साहित्यकार की आस्था, अन्य निबंध संकल्पिता (निबंध) स्मारिका, स्मृतिचित्र, संभाषण, संचयन, दृष्टिबोध (विविधसंकलन) चांद, साहित्यकार, रंगवाणी पत्रिकाओं का संपादन व पुस्तकों में बंगदर्शन एवं हिमालय का संपादन किया जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। महादेवी जी कवियत्री, निबंधकार, संस्मरणकार, यात्रावृत्त लेखिका एवं गद्य लेखिका के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने आधुनिक हिंदी साहित्य के गद्य एवं पद्य विधाओं को समृद्ध साहित्य दिया है। एक निश्चित दायित्व के साथ उन्होंने भाषा साहित्य शिक्षा, संस्कृति को विशिष्ट संस्कार दिए।

महादेवी जी को राष्ट्रपति के कर कमलों द्वारा पद्मश्री, पदम भूषण, उपाधि से सम्मानित किया गया। इन्हें मंगला प्रसाद पुरस्कार सहित अनेकों सम्मान प्रदान किये गये। सन १९८२ में यामा काव्य रचना पर महादेवी जी को ज्ञानपीठ पुरस्कार से अलंकृत किया गया। ११ सितंबर १९८७ को महादेवी वर्मा जी का निधन हो गया।

महादेवी वर्मा हिन्दी भाषा की प्रख्यात कवयित्री हैं। महादेवी वर्मा की गिरनती हिन्दी कविता के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभ सुमित्रानन्दन पंत, जयशंकर प्रसाद और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के साथ की जाती है। आधुनिक हिन्दी कविता में महादेवी वर्मा एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरीं। महादेवी वर्मा ने खड़ी बोली हिन्दी को कोमलता और मधुरता से संसिक्त कर सहज मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का द्वारखोला, विरह को दीपशिखा का गौरव दिया,

व्यष्टिमूलक मानवतावादी काव्य के चिंतन को प्रतिष्ठापित किया। महादेवी वर्मा के गीतों का नाद सौंदर्य, पैनी उक्तियों की व्यंजना शैली अन्यत्र दुर्लभ है।

२७ मार्च

तीर्थंकर महावीर स्वामी

महापुरुषों का जन्म विश्व का कल्याण करने के लिए होता है। आज से २५०० वर्ष पूर्व महावीर स्वामी ने जो जीवनधर्म बताया, वह आज भी मानव मात्र के लिए सच्चे सुख का एकमात्र मार्ग है। महावीर राजकुमार थे। संपूर्ण सुख समृद्धि थी। परंतु उसमें उनका मन नहीं रमा, इसलिए सारा कुछ छोड़कर सच्चे व शाश्वत सुख की खोज में वे निकल पड़े। दीर्घकाल की कठोर साधना और तपश्चर्या के बाद पूर्ण ज्ञान हुआ तभी उन्होंने उपदेश दिए। उनका जीवनदर्शन अंतरज्ञान और स्वानुभव का परिणाम है, इसलिए वह वास्तववादी और बुद्धिगम्य है, अपौरुषेय या गूढ़ नहीं है। उनके जीवनदर्शन की आधारभूत मान्यता है कि मनुष्य से लेकर चींटी तक सभी प्राणी समान हैं और ज्ञान व मुक्ति के अधिकारी हैं। आत्मा असंख्य योनियों में भटकने के बाद मानवदेह प्राप्त करती है। इस प्रकार अंतिम मुक्ति प्राप्त करने का उसे अपूर्व अवसर प्राप्त होता है। महावीर के धर्म में ऊंच-नीच, जाति-पांति, काला-गोरा, स्त्री-पुरुष जैसा को भेदभाव नहीं। महावीर द्वारा स्थापित जैन धर्म किसी जाति या कौम विशेष का धर्म नहीं है। कोई व्यक्ति जन्मता जैन नहीं होता बल्कि अपने आचरण और गुणकर्म से ही वह जैन होता है। जैनधर्म मानवधर्म है, विश्वधर्म है। हर धर्म प्रवर्तक के समक्ष एक ही प्रश्न होता है कि दु:ख से भरे इस संसार में सच्चा सुख कैसे प्राप्त किया जा सकता है। दुख का मूल क्या है? उसे दूर करने का उपाय क्या है? मनुष्य सुख की खोज में कहां-कहां नहीं भटकता है। महावीर जैसे धर्मप्रवर्तक राह भूले मानव को सही राह दिखाते हैं। महावीर के अनुसार मनुष्य का सुख दु:ख का कर्ता मनुष्य स्वयं ही है। बाहरी संयोग व परिस्थिति व्यक्ति के सुख-दु:ख का कुछ अंश तक निमित्त अवश्य बनते हैं, परंतु व्यक्ति के सुख-दु:ख का मूल उसकी प्रकृति और उसका स्वभाव है। व्यक्ति की वासना, कामना और तृष्णा उसके दु:ख का मुख्य कारण है। संसार में व्यक्ति व्यक्ति के बीच कौम-कौम के बीच के टकराव का मूल कारण मनुष्य की तृष्णा और स्वार्थ है। इन बुराइयों पर विजय प्राप्त करना जीवन का परम पुरुषार्थ है। इस पुरुषार्थ को सिद्ध करने के लिए अहिंसा, अनेकांत एवं अपरिग्रह ये तीन उपाय महावीर ने बताए हैं। जीवन साधना में ये सिद्धांत सनातन सत्य हैं। ये तीनों सिद्धांत परस्पर इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि एक को अच्छी तरह समझ लें व स्वीकार कर लें तो बाकी के दो स्वयंमेव फलित हो जाते हैं। सभी जीव मेरे जैसे ही हैं, यह प्रतीति होते ही मन में मैत्रीभाव पैदा होता है और किसी के भी प्रति वैरभाव रह ही नहीं जाता। जीओ और जीने दो, यह सिद्धांत कोई नया नहीं है, सभी धर्मप्रवर्तकों ने इसकी शिक्षा दी है। परंतु महावीर ने अहिंसा को जितना महत्व दिया है, उतना किसी और ने नहीं दिया है। वर्तमान युग में डॉ. अल्बर्ट स्वाइत्जर ने अपने स्वतंत्र चिंतन से पुन: इस सिद्धांत का दृढ़ समर्थन किया। संस्कृति और नैतिक मूल्यों का ऱ्हास क्यों हुआ, इसका अनुसंधान करते हुए डॉ. स्वाइत्जर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सजीव सृष्टि के प्रति मानव आदरभाव गवां बैठा है। उसकी आध्यात्मिक अवनति का यही कारण है।

गांधीजी ने अहिंसा का रचनात्मक व व्यापक स्वरूप दिखाया और जीवन के हर क्षेत्र में और व्यवहार में अहिंसा की

सफलता और विफलता बताई। पर विश्व में हिंसा और हिंसक वातावरण का प्रमाण बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति ने इतिहास से या संतों कुछ नहीं सीखा है। अमेरिका जैसा शक्तिशाली राष्ट्र भी आज भय की स्थिति में जी रहा है, फिर भी तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्र जमा करने से बाज नहीं आ रहा है। विश्व यदि विनाश से बचना चाहता है तो महावीर, बुद्ध और गांधीजी की अहिंसा ही सही मार्ग है। अनेकांत जैन धर्म द्वारा विश्व को दी गई अनुपम देन है। अनेकांत का अर्थ है मतसहिष्णुता, एक दूसरे के विचारों के प्रति आदर समन्वय दृष्टि। कोई व्यक्ति पूर्ण सत्य नहीं प्राप्त कर सकता। ऐसी स्थिति में हम जो कह रहे हैं वही सत्य है, ऐसा दुराग्रह रखना उचित नहीं। अपने विचारों पर दृढ़ रहते हुए भी, दूसरों के विचारों में सत्य का अंश हो सकता है, ऐसी उदार दृष्टि रखनी जरूरी है। दुराग्रह में विचारों की हिंसा होती है। अनेकांत वैचारिक अहिंसा है। विचार में हिंसा या क्रोध होता है तो वह वाणी और व्यवहार में अवश्य प्रकट होता है। अनेकांत विचारों का अपरिग्रह है। विचार में अहिंसा न हो तो वाणी और व्यवहार में अवश्य प्रकट होता है। अनेकांत विचारों का अपरिग्रह है। विचार में अहिंसा न हो तो वाणी और व्यवहार में अवश्य प्रकट होता है। भौतिक संपत्ति अपरिग्रह आध्यात्मिक जीवन साधना का महत्वपूर्ण अंग है। जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति की अपेक्षा संतोष करना अपरिग्रह है। अहिंसा से अपरिग्रह फलित होता है। परिग्रह प्राप्त करने में और प्राप्त परिग्रह को सुरक्षित रखने में हिंसा का आश्रय लेना पड़ता है। यह तो हुआ उसका आध्यात्मिक पक्ष, पर उसकी सामाजिक आवश्यकता और उपयोगिता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। आर्थिक विषमता और उससे उत्पन्न सामाजिक अन्याय हमारे जीवन की विषमताओं और संघर्ष का मुख्य कारण है। करोड़ों लोग जीवन की सामान्य आवश्यकताओं को भी पूरी न कर पाते हों और अपार दु:ख व यातना सहन करते हों जबकि दूसरी ओर मुट्ठीभर लोग असीमित संग्रह करें, इससे बड़ा सामाजिक अपराध दूसरा कोई हो ही नहीं सकता। भगवान महावीर का यह सच्चा व सात्विक समाजवाद है। वर्तमान समाजवाद की दृष्टि भौतिक है। महावीर ने अपरिग्रह की भावना को प्रधानता देते हुए कहा कि जीवन की आवश्यकताओं को असीमित रूप से बढ़ाना और उन्हें पूरी करने के लिए उत्पादन बढ़ाना एक प्रकार का विषचक्र है। संविभाग और अपरिग्रह दोनों साथ हों तभी समाज में और जीवन में संतुलन आता है। परिग्रह का एक कारण भोग की लालसा है। सच्ची अपरिग्रह भावना में अध्यात्मिक उन्नति के साथ सामाजिक समता भी होती है। सामाजिक विषमता दूर करने का सच्चा मार्ग व्यक्ति का स्वैच्छिक संयम है। भगवान महावीर का यह संदेश आज से ढाई हजार वर्ष पहले जितना प्रासंगिक था, आज भी उतना ही बल्कि उससे भी अधिक प्रासंगिक है।

जब जब महापुरुषों का अवतरण हुआ है, तब तब लोग उस समय तो नहीं समझ पाये बल्कि उनके प्रयाण के बाद उन्हें समझा और उनकी आराधना की। भगवान महावीर भी ऐसे संक्रमण काल में अवतरित हुए थे कि धर्म और ईश्वर के नाम पर पाखंड का बोलबाला था और अंधकार के गर्त में यह पृथ्वी पीड़ित थी उन पाखंडियों से जो लोगों को ठगते थे और गुमराह करते थे।

जब जब होय धर्म की हानि, बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
तब तब धरहिं हरि मनुज शरीरा, हरहिं सदा सज्जन पीरा।।

धर्म के नाम पर अनेकानेक प्रकार के अंधविश्वास पलते हैं और बहु प्रकार के कर्मकांड तथा आडम्बर को स्थान दिया जाता है। धर्म और ईश्वर के प्रति अति राग को महावीर ने नकारा है क्योंकि राग होने का मतलब है हिंसा होना और बात

सही भी है कि धर्म और ईश्वर के नाम पर खून की नदियां बहायी गयीं। भगवान महावीर ने वीतराग का सिद्धांत लागू किया। अर्थात् किसी भी प्रकार का राग न होना ही धर्म का मूल है। अफसोस है कि आज भी लोग इस वीतराग भाव को आत्मसात नहीं कर पाये और इसलिए दिगम्बर और श्वेताम्बर इन दो गुटों में वैमनस्य है और इसका मूल कारण है धर्म के प्रति राग जबकि धर्म तो एक वीतराग भाव है।

अंधविश्वास को हटाना बहुत ही मुश्किल काम था और आज भी है क्योंकि जो बातें लोगों के दिमाग में घर कर गयी है उसे निकालना डेढ़ी खीर है। जबकि धर्म का सीधा अर्थ है व्यक्ति के भीतर अनन्त ज्ञान और अनुभव रूपी अनन्त धन से संपर्क होना। धर्म के इस सही अर्थ को स्वीकार करने के लिए सदैव महापुरुषों ने कहा है। चूंकि नास्तिक लोग अंधविश्वास को तो नकारते हैं ही, साथ ही ईश्वर को भी नहीं मानते और आस्तिक ईश्वर को मानते हैं परंतु अंधविश्वास के जाल में बुरी तरह से फंसे हुए हैं। आस्तिक और नास्तिक दोनों ही धर्म के मर्म को समझ जाएं इसके लिए भगवान महावीर ने कहा- ईश्वर नहीं है क्योंकि ईश्वर के साथ अंधविश्वास आने शुरू हो जाते हैं और फिर आगे कहा- मनुष्य के भीतर है वह ईश्वर और जो भीतर है उसके लिए कर्मकांड, पाखंड, पंडित-पुरोहित किसी की जरूरत नहीं है। भीतर ईश्वर है ऐसा कहकर अपनी आत्मा को ही देखो जो कि राग और बैराग से एकदम अलग है तथा जब वीतराग होगा तो धर्म स्वयं ही अनुभूत होता है।

पुरानी मान्यताओं को, अंधविश्वास को एक ओर रखकर पवित्र हृदय से यदि समझने का प्रयास किया जाय महावीर के इस समन्वय संदेश को, तो सहज में ही शाश्वत सुख-शांति प्राप्त होती है जिसके लिए महावीर जी ने जीवन भर प्रयास किया। अहिंसा के पुजारी भगवान महावीर के संदेश को अपनाने से ज्ञान का प्रकाश फैल सकता है। मन की खिड़कियों और रोशनदानों को खोलकर हृदय से आत्मा का चिंतन करना चाहिए तभी तो आत्मप्रकाश से जीवन आलोकित होगा और साथ-साथ महकेगा भी।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि हम संसारी लोग महापुरुषों के असली संदेश को भूल जाते हैं और दिखावा तथा आडंबर में फंस जाते हैं। इसलिए आज पुन: भगवान महावीर जैसे महापुरुष के अवतरण की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। राम, कृष्ण, नानक के अनुयायी भी इस सच को मान रहे हैं। आवश्यकता है महापुरुष की, जो ज्ञान प्रकाश से अंधकार को दूर कर दे।

महावीर स्वामी सदियों पहले जन्मे थे और वे जन्म से महावीर नहीं थे। उन्होंने जीवन भर अनगिनित संघर्षों का सामना किया, कष्टों को झेला, दु:ख में सुख खोजा, गहन तप किया एवं साधना के बलबूते पर सत्य तक पहुंचे।

महावीर स्वामी ने सैकड़ों शास्त्रार्थों तथा असंख्य सभाओं द्वारा पाखंड़ियों को हराकर जनता को धार्मिक अत्याचारों से मुक्ति दिलाई।

जैन धर्म के २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर का पहला नाम वर्धमान था। इनके पिता का नाम लिच्छाविराज सिद्धार्थ और माता का नाम त्रिशला था। इनका जन्मस्थान बिहार में वेशाली का कुण्डग्राम था। इनकी जन्मतिथि चैत्र सुदी त्रयोदशी है। जिन महापुरुषों की जन्म तिथि दुनिया के लिए पर्व और जिनका जन्म स्थान तीर्थ के समान पवित्र माना जाता है, उनमें महान गुण होते हैं, उनमें लोक कल्याण का सबसे बड़ा गुण होता है, ऐसे महान व्यक्ति पूरी दुनिया के हित के लिए कुछ कर

जाते हैं।

आज से २६११ वर्ष पूर्व मगध की राजधानी वैशाली (बिहार प्रांत) में राजा सिद्धार्थ का राज्य शासन था। उन दिनों मचे हुए कर्म-काडों, पशु एवं नर बलि की वजह से साथ ही हिंसा की अधिकता से चारों ओर त्राहि त्राहि मची हुई थी। समस्त राज्य की प्रजा, किसी महापुरुष (तीर्थंकर) के जन्म की राह देख रही थी, उन्हीं दिनों रानी त्रिशला ने रात्रि के अंतिम प्रहर में अत्यंत मनभावना एवं सुहावने स्वप्न देखे।

सुबह राजा सिद्धार्थ ने उसका अर्थ पूछवाया और उन्हें खबर दी गई कि उनके यहां तीर्थंकर का जन्म होनेवाला है। वैसा ही हुआ, उन्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई उसका नाम वर्धापन रखा गया। कालांतर में वर्धमान ने काफी लंबे समय तक विश्व कल्याण के लिए तप किए इसलिए उनका नाम महावीर पड़ गया।

भगवान महावीर महात्मा थे, परमार्थी थे और जिन थे। अगर वे चाहते तो अन्य योगियों की तरह गुफा में जाते और आत्मलाभ प्राप्त करकके ऋद्धि-सिद्धि अथवा निर्वाण प्राप्त कर सकते थे। लेकिन वे हजार कष्ट सहकर भी लोगों में रहे और अन्त तक लोगों के कल्याण के लिए ही काम करते रहे। जनकल्याण की भावना महावीर में दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। धीरे-धीरे वे प्राणी मात्र के लिए व्याकुल होते गए और एक दिन उन्होंने संन्यास लेने की ठान ली। उनके पिता महाराज सिद्धार्थ को मंत्रियों ने सूचना दी कि वे कुमार वर्धमान को साधु होने से रोकें। माता पिता ने राजकुमार वर्धमान को डाट-फटकार से कुछ फायदा नहीं दिखा तो उनकी विरक्ति की भावना नष्ट करने के लिये उनका विवाह कर दिया। माता पिता की आज्ञा मानकर विवाह होने के बाद अगर वे विवाह को बोझ की तरह ढोते तो यह पत्नी के प्रति और भी अत्याचार होता। अत: राजकुमार वर्धमान ने अपनी गृहस्थी को एक आदर्श व्यक्ति की तरह चलाया। राजकुमार होते हुए भी वे एक साधारण व्यक्ति की तरह ही गृहस्थी के छोटे बड़े कामों में रूचि लेते, नौकरों के होते हुए भी सारे काम वे अपने हाथ से करते। कुछ समय बाद उनकी पत्नी राजकुमारी यशोदा ने अनुभव किया कि उनका पति परमात्मा का पूर्ण प्रतिबिम्ब है। वे केवल उसकी ही सम्पत्ति नहीं, बल्कि सारे संसार की विभूति हैं, जिसका लाभ सारी दुनिया की दुखी मानवता को मिलना चाहिए। कुछ समय बाद उन्हें एक पुत्री पैदा हुई। इसके बाद उन्होंने पति की इच्छानुसार ही वर्धमान को सारी दुनिया को सौंपने की तैयारी कर ली। वर्धमान ने गृहस्थी को अनासक्ति भाव से भोगा और पत्नी को इतना प्रेम दिया कि कोई दूसरा सारी जिंदगी में नहीं दे पाता। यह उनका जन साधारण के आगे सामान्य जीवन का एक आदर्श उदाहरण था। अपने बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवहार से वर्धमान ने पत्नी को भी परोपकार के लिए हर तरह का त्याग करने के लिए तैयार कर लिया था, किन्तु माता पिता का मोह कम करने का कोई उपाय नहीं था। माता-पिता का अधिकार खुद वर्धमान पर था। वर्धमान नहीं चाहते थे कि उनका मन दुखाकर संन्यास ले लिया जाए। कारूणिक हृदय होने के कारण वे माता-पिता के महत्व का मूल्य समझते थे। लेकिन एक दिन ऐसा भी आया कि उनके माता-पिता उन्हें छोड़कर चले गये। इस समय वर्धमान की उम्र केवल १८ साल की थी। इसी उम्र में वे सन्यास लेकर घर छोड़ने को तैयार हो गए। वर्धमान को घर से जाते देख उनके बड़े भाई नन्दिवर्धन ने उन्हें रोककर कहा, वर्धमान अभी तो माता पिता के बिछुड़ने की घड़ी पुरानी भी नहीं हुई है, उसका घाव ताजा है और अब तुम भी मुझे छोड़कर जा रहे हो, क्या मेरा दुर्भाग्य इतना कठोर है? परिवार को यह अघात सहन करने लायक तो हो जाने दो, तब चले जाना, वर्धमान में तुमसे दो साल का समय चाहता हूं। इस बात से

छोटे भाई वर्धमान के कदम रूक गए। आदरणीय भाई का दिल तोड़ना उन्हें सही नहीं लगा। इसके बाद वर्धमान ने यह दो साल भी अपने आगामी जीवन के अभ्यास में लगा दिये। वे घर पर रूके जरूर, मगर पूरी तरह एक साधु की तरह ही। बड़े भाई नन्दिवर्धन ने उनके हिस्से की जो लाखों की सम्पत्ति वर्धमान को दी, वह भी उन्होंने अपने स्नेहियों, नौकरों और दीन-दुखियों गरीबों में बांट दी। दो वर्ष बीत जाने के बाद वर्धमान ने महावीर होकर अपना रास्ता लिया, उन्होंने अपने बाल अपने हाथ से उखाड़ फेंके। एक कोपीन के अलावा सारे कपड़े त्याग दिए। कुछ समय घूमने के बाद वर्धमान ने निश्चय किया कि अब वे किसी उपयुक्त जगह पर जाकर समाधि का अभ्यास करेंगे, मौन धारण करें और भिक्षा अन्न हाथ पर रखकर ही खायेंगे। वे इसी उद्देश्य से आस्थिक नामक गांव में पहुंचे। वहां उन्होंने देखा कि जनता अंधविश्वासों में फंसी हुई है, भूत-प्रेत और देव-दानव में विश्वास करते है और बदमाश किस्म के लोग उन्हें मूर्ख बनाकर ठग रहे हैं। यह सब देखकर उनकी आत्मा तड़प उठी। वे समाधि लगाना भूलकर लोगों का अन्धविश्वास दूर करने में लग गये। इस काम में चार महीने लगे, लेकिन अन्त में वे लोगों के दिलो-दिमाग से अन्धविश्वास को जड़ से खत्म करने में कामयाब रहे। इसके बाद वे यहां से मौराक गांव में गये। वहां की जनता भी बुरी तरह से अनाचार के चक्र में फंसी थी। तन्त्र-मन्त्र का पाखंड दूर करने के लिए वहां भी वर्धमान को चार महीने रूकना पड़ा। इस के बाद वे स्वेताम्बी और सुरभिपुर होते हुए नालन्दा पहुंचे, जहां उनका परिचय मोखिला पुत्र गोसाल से हुआ। गोसाल उस वक्त के बहुत बड़े विद्वान एवम् धर्म-प्रवर्तकों में से था, किन्तु वर्धमान की त्याग, तपस्या और मानव कल्याण की भावना से वह इतना प्रभावित हुआ कि उन्हें अपना गुरु मान लिया। महावीर का यह प्रभाव किसी बड़ी तपस्या का और विद्या विभूति का नहीं था, बल्कि उनका यह प्रभाव उनकी उस उज्ज्वल आत्मा का था, जो हर समय विश्व कल्याण की कामना से व्याकुल रहती थी। अपने संन्यस्त जीवन में १२ साल तक देशभर में घूमते और कष्ट सहते-सहते वे पूर्ण परमहंस पदवी के योगी हो गये। वे नग्न घूमते, बच्चे उनको पत्थर मारते, लोग ताली बजाते और पागल-पागल कहकर शोर मचाते, किन्तु वीतराग वर्धमान मौन मानस में डुबकी लगाके, न सुनने के समान करके सत्य की खोज में लगे रहते। अब उन्होंने पानी, साधारण साग सब्जी का भी त्याग कर दिया था। पानी भी गर्म करके ही पीते थे। अपनी शरीर की सारी यातनाएं मिटाने के लिये उन्होंने सुख की नींद सोना, सर्दी, गर्मी और बरसात से बचना भी छोड़ दिया। वे कड़ी सर्दी के दिनों में भी खुले मैदानों और गर्मियों में लोहारों आदि की दुकानों पर पड़े रहते थे। बारह साल तक नींद का त्याग करके वे पूर्ण जिन हो गये और दुनिया के सारे दुख सुख से परे हो गये। शरीर साधना में सिद्ध होकर महावीर राजगिरि, मुंगेर, बसाढ़, बनारस, अयोध्या आदि प्रदेशों की यात्रा करते हुए वे राढ़ पहुंचे, जहां उन्हें सबसे ज्यादा कष्ट उठाने पड़े। इस तरह अपनी अद्भुत एवम् असहनीय अवस्था में १२ साल तपने के बाद उन्हें वैशाख सुदी दशमी को ऋतु बालिका नदी के तट पर जमिया नामक गांव में केवल दर्शन का बोध प्राप्त हुआ। ईश्वरीय प्रकाश पाते ही उन्होंने सुख के सही मार्ग की खोज कर ली और तब उन्होंने अपने मौन व्रत को उपदेशों के रूप में तोड़ दिया। उन्होंने सैकड़ों शास्त्रार्थों तथा असंख्य सभाओं द्वारा पाखण्डियों तथा धर्म पुरोहितों को हरा कर जनता को धार्मिक अत्याचारों से मुक्ति दिलाई। फिर उन्होंने लाखों शिष्य तथा प्रचारक बनाए। उनके शिष्यों में केवल जन साधारण ही नहीं बल्कि बड़े बड़े राजा, राजकुमार तथा राजकुमारियां भी थीं। ज्ञान की प्यासी जनता उनके उपदेश सुनती और तुरन्त उनसे दीक्षा भी ले लेती। इस तरह सम्पूर्ण देश में उनकी कीर्ति फैल गई। अंग, काशी श्रावस्ती तथा राजगृह आदि में राजाओं

तथा राजवंशियों को दीक्षा देते और उपदेश करते हुए अपनी जन्मभूमि वैशाली में गये, जहां पर उन्होंने अपनी पत्नी, पुत्री तथा दामाद जमाई को भी धर्म की दीक्षा दी। इस तरह जब वे देश का धार्मिक कायाकल्प करके पावापुरी आये, तब कठोर तपस्या तथा व्यस्त कार्यक्रमों में उनका स्वास्थ्य लगभग खत्म हो चुका था। वहां निरन्तर उपदेश देते और उपवास करते हुए उन्होंने दीपावली की रात को महानिर्वाण प्राप्त किया।

महावीर अभी के लिए और सभी के लिए हैं। लगभग २५०० वर्ष पहले अहिंसा और सहिष्णुता की शिक्षा देनेवाले जैन धर्म के २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का जीवन ही उनका संदेश है। उनके सिद्धांत और आदर्श वर्तमान संदर्भों में सभी के लिए प्रासंगिक हैं। सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और अस्तेय आदि अनेक उपदेशों को अपनाकर आज भी रामराज्य की स्थापना की जा सकती है।

कोई भी सुखी नहीं रह सकता- भगवान महावीर ने कहा था कि दूसरों को दुखी बनाकर कोई सुखी नहीं रह सकता। महावीर से बढ़कर इस जगत में कोई साधना नहीं है। इसमें असीम सुख, शांति और तृप्ति के साथ ही जीवन की ऊंचाइयों और गहराइयों को छूने की शक्ति है।

धन से नहीं मन से धर्म हो- महावीर के सिद्धांत आज भी प्रासंगिक हैं। आज धर्म और धर्माचायों पर अंगुली उठती है। ऐसे विषम माहौल में समाजजनों को उन लोगों को आगे लाना चाहिए जो सच्चे साधुसंत हैं और नि:स्वार्थ भाव से समाज व धर्म की सेवा कर रहे हैं।

अहिंसा और मैत्री आज की जरूरत- अहिंसा और मैत्री की आज दुनिया को जरूरत है और भगवान महावीर ने यही संदेश दुनिया को दिया था। आज धर्म में दिखावा और आडंबर अधिक आ गया है। अपना नाम गुप्त रखकर गरीबों और पीड़ितों की सेवा करें।

अहिंसा सब समस्याओं का समाधान- विश्व की समस्याओं का एक ही समाधान है- भगवान महावीर के अहिंसा के सिद्धांत का पालन करना। भगवान महावीर ने कहा था- मैं अपने भक्तों को ही अपनी परतंत्रता से मुक्ति देता हूं। इस स्वतंत्रता का अर्थ हमने बदल दिया।

जैन धर्म के चौबीसवें एवं अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने कहा अपने स्वरूप में आओ। छल-कपट तो तुमने आढ़ रखा है। यह तुम्हारा अपना स्वरूप नहीं है। तुम्हारा असली स्वरूप है सरलता। तुम्हारा बिम्ब हैं पवित्रता। क्योंकि धर्म न पूजा में है, न उपासना में। धर्म है हृदय की पवित्रता में। यदि जीवन में पवित्रता नहीं, सरलता नहीं, तो तपस्या भी बेमानी बन जाती है। आज समाज में कितनी पूजा हो रही है, उपासना हो रही है, फिर भी मनुष्य दु:खी है-बेचैन है। क्योंकि सरलता को नहीं अपनाया। दिखावा व आडंबर में फंस गए तथा महावीर के संदेश से बहुत दूर चले गए।

भगवान महावीर का जन्म आज से २६०० वर्ष पूर्व बिहार प्रांत के कुण्डपुर नगर में महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला के यहां चैत्र शुक्ल त्रयोदशी की मध्य रात्रि में हुआ। महावीर के जन्म का नाम वर्धमान था, क्योंकि जब वे मां के गर्भ में आये तो चारों ओर सुख संपदा की वृद्धि होने लगी। ऋद्धि संपदा भी बहुत बढ़ी और इस आधार पर उनका नामकरण श्री वर्धमान हो गया। फिर जिज्ञासाओं का समाधान करने पर सम्मति नाम प्रसिद्ध हुआ तथा भयंकर आपदाओं का सामना करने और उन पर विजय पाने से वे महावीर कहलाए। भगवान महावीर यद्यपि जैन सामाजिओं के आराध्य हैं लेकिन

उनका संदेश संपूर्ण मानवजाति के लिए उपयोगी है। अहिंसा व अपरिग्रह की प्रतिमूर्ति रहे महावीर। वे जिन थे और जिन का मतलब होता है जीतना। जिसने अपने मन और इंद्रियों की कामनाओं को जीत लिया हो वे जिन कहलाते हैं। महावीर चूंकि जिन थे इसलिए उनके अनुयायी जैन कहलाते हैं।

यथार्थ में देखा जाए तो जब जब महापुरुष का अवतरण होता है तो वे पूरी मानव जाति के धरोहर होते हैं और उनका संदेश सबके लिए एक समान होता है, कि अपने आपको पहचानों। उन महापुरुष के चले जाने के बाद एक पथ बन जाता है उनके नाम पर और लोग असली संदेश को दरकिनार कर देते हैं तथा मात्र मौखिक बातें ही शेष रह जाती है। महावीर के प्रयाण के बाद भी यही हुआ, जैन संप्रदाय बना, आचार संहिता का निर्माण हुआ और लकीर के फकीर बन गए। वरना कहां है महावीर की अहिंसा, अपरिग्रह, प्रेम, करुणा, दया? ये सभी शब्द कोरे रह गए। इन पर न तो अमल हो रहा है और न ही इन गुणों को जीवन के व्यवहार में उतारा जा रहा है। आवश्यकता है महावीर के संदेश को आत्मसात करने की। महावीर सांसारिक वैभव के आकर्षण से कोसों दूर थे और बीस वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने संसार से विरक्त होकर साधना में जुट गए। साढ़े बारह वर्ष की कठोर तपश्चर्या के पश्चात उन्हें कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ और ज्ञान प्राप्त होते ही जन जन में इसका बोध कराया। कैवल्य ज्ञान है अपने स्वरूप को पहचानों जब तक प्रत्येक मनुष्य अपने स्वरूप को नहीं पहचानेगा तब तक महावीर के मैत्री, करुणा, दया के संदेश को व्यवहारिकता में नहीं ला सकेगा।

चूंकि आत्मा अनंत है और आत्मस्वरूप को जानना ही अपने स्वरूप को पहचानना है। चेतना की धारा अंत:करण में अविरल बह रही है, आवश्यकता है उसमें डुबकी लगाने की। आत्मगुण जो हमारे भीतर है, उसे देखना चाहिए तभी तो सरलता आयेगी। महावीर ने कहा- जो कर्म योगी हैं, वे जन्म मरण का नहीं बल्कि शाश्वत आत्म तत्व का चिंतन मनन करते हैं। जिसका जन्म है उसकी मृत्यु अटल है और जिसे मृत्यु प्राप्त होगी उसका नव जन्म ही होना है, यह जन्म मृत्यु का अपरिहार्य चक्र है। चिंता जन्म मृत्यु की नहीं करनी चाहिए, बल्कि आत्मा के गुणों को अपनाने की चिंता होनी चाहिए अर्थात आत्मचिंतन करना ही श्रेयस्कर है।

यदि महावीर को जाना है समझना है तो अहंकार को त्यागना चाहिए। बीतराग होने के लिए सरलता को अपनाना चाहिए। जो सत्य है, शाश्वत है, सरल है, जिसे आत्मा में प्रवेश कर अनुभूत किया जा सकता है तथा निरंतर उस ओर बढ़ना ही वर्धमान कहलाता है। वर्धमान का हर पल वर्धमान और वर्तमान है। निरंतर बढ़ते रहना अपने स्वरूप की ओर, महावीर को समझने में सहायक होता है। अहिंसा और अपरिग्रह भी तभी संभव है जब हमारा चिंतन अपने स्वरूप का होगा वरना कोरे शब्द हैं। सचमुच में महावीर अतीत नहीं है, बल्कि वर्तमान है बशर्ते उनके विचारों को, उनके चिंतन को अनुभूति के दायरे में लाएं। सारी समस्याओं का समाधान महावीर के सिद्धांतों में निहित है। अहिंसा, अपरिग्रह, करुणा, मैत्री, प्रेम ऐसे सूत्र हैं जिन्हें अपनाकर आत्मकल्याण के पथ पर निरंतर बढ़ सकते हैं और वर्धमान बन सकते हैं। सचमुच के जिन बन सकते हैं, अपने स्वरूप को अपनाकर और यही महावीर का अमर संदेश था दुनिया के समस्त तत्व जिज्ञासुओं के लिए है।

महावीर स्वामी के संदेश - सुखी होने के लिये पसंद की सामग्री प्राप्त करना ऐसे दुनिया मानती है। परंतु संत कहते हैं, जो प्राप्त हुआ है, उसे पसंदीता बना दो ती सुख अपने कदमों में होगा।

लोभी मनुष्य विचार करता है, सभी दे दुंगा तो मै क्या खाऊंगा, तुरंत दिलबार यह सोचता है सभी खाऊंगा तो औरों को क्या दूंगा। संसार आज का आज के दु:खों से चिंतित नहीं, परंतु आनेवाले कल को काल्पनिक दु:खों की चिंता से ज्यादा पीड़ित है। आज का मानव कर्त्तव्य करनेवालों की निंदा करता है, ऐसे नहीं, परंतु सही में ना आज के मानव की निंदा में रस ज्यादा है, इसलिए यह सदैव पर निंदा ही करता रहता है, कभी प्रशंसा नहीं।

हमे हमारे सकृत को याद करते हैं, अनुमोदना के खातिर नहीं, परंतु हमारे अहंकार की पृष्टी के लिए।

खुशी है मानव के पास परंतु हसने का समय नहीं, नींद है आंखों में, पर चैन से सोने को समय नहीं।

दिल में दर्द भरा हुआ, परंतु मनसोक्त रोने का समय नहीं, असफलता का मतलब यह नहीं कि मै हार गया।

परंतु इसका मतलब यह है कि मैं अभी तक नही सका... और प्रयास करना चाहिए तुझे।

दौड़ता था तब लगता मुझ जैसा कोई समर्थ नहीं, परंतु पीछे मुडकर देखा तो समझ आया, इतना दौड़ा पर कोई अर्थ नहीं... सभी व्यर्थ... खाली हाथ आया है... खाली हाथ ही पड़ेगा...।

जरूरत के समय किसी को कुछ देना यह उदारता है, परंतु देकर भुल जाना यह महानता है।

जब कोई कामयाबी मिलती है तो यह मेरा पुरूषार्थ था परंतु जब असफलता मिलती है तो शायद कुदरत को यही मंजुर था। यह कैसा न्याय।

खुशी है मुझे कि मेरे पास पर्याप्त पैसा है, घर परिवार, स्वजन, स्नेही और इज्जत है।

परंतु सही खुशी तो इसमें है कि मैं जीवित हूं... और मेरी जीवनज्योत अभी भी प्रज्वलीत है।

दुख इस बात का मत मानो कि मेरी मृत्यु अटल है, परंतु इस बात को मानो कि मेरा जन्म मानव-भव में हुआ.. जहां मैं अपने अपने कर्मों को खपाकर शाश्वत ऐसे मोक्ष सुख की भी मालिक बन सकता हूं।

हंसते हंसते तो सहना फिर भी मुमकिन है, परंतु सही वीर तो वह है, जो सहते सहते भी हसता।

कलयुग आज का ऐसा, अपनी पत्नी का माँ को वा... वा कहकर पुकारे, और अपनी जन्मदात्री माता को हाय तोबा... हाय तोबा... कहकर पुकारे। काया हमारी मानव की पररु कार्य हमारे दानव के, फिर भी बनना चाहते है देवों के देव... कभी अंतरआत्मा में झांककर भी देखा है।

महत्व इस बात का नही कि घरमें इन्सान कितने रहते हैं, परंतु महत्व इस बात का है कि जो रहते है उनमें इन्सानियत कितनी है। अमीरी आपकी इसमें नहीं कि आप कितने दौलतमंद है, परंतु सही अमीरी तो उसमें है आंप कितने दिलदार है, कितना त्याग सकते है औरों के लिये।

परमात्मा की भक्ति हमें संकट मुक्त करती है, परंतु हमारे संसारी स्नेहीजन हमें संकट मुक्त में देते हैं जरा सोचिये।

सुख पदार्थ में नहीं, परंतु अपनी मनोवृत्ति में हैं... भुख है तो सुखी रोटी भी मिष्टान्न जैसी, ना हो तो मिष्टान्न भी बेस्वाद लगता है। भुख तो फिर भी मनुष्य सहन कर लेता है, परंतु अपने प्रति दूसरों की भूल...कदापी नहीं।

प्रकृति का परिवर्तन करनेवाले को शायद भगवान मिल सकता है, परंतु अपनी प्रवृति (स्वभाव) का परिवर्तन करनेवाला तो स्वयं भगवान बन जाता है।

संसारी मानव हमेशा दु:खों का अन्त ढुंढने मे व्यस्त... जो शायद ही मुमकीन परंतु संत महात्मा दु:खों की वजह ढुंढने

में... इसिलिए वह सदैव खुशमिजाज में रहते हैं।

मौन रहना तो फिर भी आसान है, परंतु मर्यादापूर्वक संयमपूर्वक बोलना औरों की सुनना शायद ही मुमकिन है। बात यह महत्व की नहीं के तकलीफ किसने और कैसे पैदा करी... परंतु बात यह महत्व की है आयी हुई समस्या का हल क्या और किसके पास है। इसमें कोई संशय नहीं कि महावीर का मार्ग पूर्णत:, स्पष्ट और कैवल्य ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग है। यह राजपथ है। उनके उपदेश हमारे जीवन में किसी भी तरह के विरोधाभास को नहीं रहने देते। जीवन में विरोधाभास या द्वंद्व है तो फिर आप कहीं भी नहीं पहुंच सकते।

भगवान महावीर को समझने के लिए कैवल्य ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। समुद्र को जानने के लिए समुद्र में डूबना होगा। महावीर की गहराई को फिर भी कोई छू नहीं सकता। धरती पर कुछ गिने-चुने ही महापुरुष हुए है। उनमें महावीर ध्यानियों में ऐसे हैं जैसे सागरों में प्रशांत महासागर।

महावीर का जीवन, दर्शन या तप कुछ भी रहा हो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मुख्य बात यह है कि उन्होंने कैवल्य ज्ञान की जिस ऊंचाई को छुआ था वह अवर्णीय है। वह अंतरिक्ष के उस सन्नाटे की तरह है जिसमें किसी भी पदार्थ की उपस्थिति नहीं हो सकती। जहाँ न ध्वनि है और न ही ऊर्जा। केवल शुद्ध आत्मतत्व।

महावीर का जीवन- भगवान महावीर तीर्थंकरो की कड़ी के अंतिम तीर्थंकर हैं। उनका जन्म नाम वर्धमान है। राजकुमार वर्धमान के माता-पिता श्रमण धर्म के पार्श्वनाथ सम्प्रदाय से थे। महावीर से २५० वर्ष पूर्व २३ वे तीर्थंकर पार्श्वनाथ हुए थे।

भगवान महावीर का जन्म ५९९ ई.पू. अर्थात २६०८ वर्ष पहले वैशाली गणतंत्र के कुंडलपुर के क्षत्रिय राजा सिद्धार्थ के यहाँ हुआ। उनकी माता त्रिशला लिच्छवि राज चेटकी की पुत्र थीं। भगवान महावीर ने सिद्धार्थ-त्रिशला की तीसरी संतान के रूप में चैत्र शुक्ल की तेरस को जन्म लिया।

महावीर की शिक्षा- वर्धमान के बड़े भाई का नाम नंदिवर्धन था। वर्धमान का बचपन राजमहल में बीता।

आठ बरस के हुए, तो उन्हें पढ़ाने, शिक्षा देने, धनुष आदि चलाना सिखाने के लिए शिल्प शाला में भेजा गया।

जैन धर्म के २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का जीवन ही उनका संदेश है। उनके सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और अस्तेय आदि उपदेश एक खुली किताब की तरह है। जो सत्य परंतु आम आदमी को कठिन प्रतीत होते हैं। कहने को तो वे एक राजा के परिवार में पैदा हुए थे। उनकें घर-परिवार में ऐश्वर्य, धन-संपदा की कोई कमी नहीं थी। जिसका वे मनचाहा उपभोग भी कर सकते थे। परंतु युवावस्था में कदम रखते ही उन्होंने संसार की माया-मोह, सुख-ऐश्वर्य और राज्य को छोड़कर दिल दहला देनेवाली यातनाओं को सहन किया और सारी सुविधाओं को त्याग कर वे नंगे पैर पैदल यात्रा करते रहे।

पिता ने दिया वर्द्धमान का नाम- जन्मोत्सव के बाद ज्योतिषों द्वारा चक्रवर्ति राजा बनने की घोषणा करने के बाद उनके कई किस्से इस बात को सच साबित करते पाए गए। अनेक जन्म से पूर्व की कुंडलपुर के वैभव और संपन्नता की ख्याति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती गई। अत: महाराजा सिद्धार्थ ने उनका जन्म नाम वर्द्धमान रख दिया। चौबीस घंटे लगनेवाली दर्शनार्थियों की भीड़ ने राज-पाट की सारी मर्यादाएँ ढहा दी। इस प्रकार वर्द्धमान ने लोगों में यह संदेश प्रेरित किया कि

उनके घर के द्वार सभी के लिए हमेशा खुले रहेंगे। वर्द्धमान ने यह सिद्ध कर दिखाया।

वीर नाम की प्राप्ति- जैसे-जेसे महावीर बड़े होते जा रहे थे वैसे-वैसे उनके गुणों में बढ़ोतरी हो रही थी। एक बार जब सुमेरू पर्वत पर देवराज इंद्र उनका जलाभिषेक कर रहे थे। तब कहीं बालक बह न जाए इस बात से भयभीत होकर इंद्रदेव ने उनका अभिषेक रुकवा दिया। इंद्र के मन की बात भाँप कर उन्होंने अपने अँगूठे के द्वारा सुमेरु पर्वत को दबाकर कँपायमान कर दिया। यह देखकर देवराज इंद्र ने उनकी शक्ति का अनुमान लगाकर उन्हें वीर के नाम से संबोधित करना शुरू कर दिया।

दो मुनियों ने दिया भेंट सन्मति का नाम- बाल्यकाल में महावीर महल के आँगन में खेल रहे थे। तभी आकाशमार्ग से संजय मुनि और विजय मुनि का निकलना हुआ। दोनों इस बात की तोड़ निकालने में लगे थे कि सत्य और असत्य क्या है? उन्होंने जमीन की ओर देखा तो नीचे महल के प्रांगण में खेल रहे दिव्य शक्तियुक्त अद्‌भुत बालक को देखकर वे नीचे आएँ और सत्य के साक्षात दर्शन करके उनके मन की शंकाओं का समाधान हो गया है। इन दो मुनियों ने उन्हें सन्मति का नाम दिया और खुद भी उन्हें उसी नाम से पुकारने लगे। युवावस्था में लुका-छिपी के खेल के दौरान कुछ साथियों को एक बड़ा फनधारी साँप दिखाई दिया। जिसे देखकर सभी साथी डर से काँपने लगे, कुछ वहाँ से भाग गए। लेकिन वद्धर्मान महावीर वहाँ से हिले तक नहीं। उनकी शूर-वीरता देखकर साँप उनके पास आया तो महावीर तुरंत साँप के फन पर जा बैठे। उनके वजन से घबराकर साँप बने संगमदेव ने तत्काल सुंदर देव का रूप धारण किया और उनके सामने उपस्थित हो गए।

महावीर स्वामी ने अपने स्यादवाद सिद्धांत के जरिये एक वस्तु को विभिन्न दृष्टिकोण से देखना सिखाया। इसके लिए उन्होंने भाषा के स्तर पर प्रयोग भी किए।

महावीर स्वामी ने अपने दर्शन के प्रचार-प्रसार के लिए भाषा के स्तर पर काफी प्रयोग किए थे। महावीर ने जो सबसे बड़ी क्रांति की थी,वह थी उनकी संवाद-शैली। जिस अतींद्रिय ज्ञान के माध्यम से उन्होंने आत्मा के सत्य के बहुआयामी स्वरूप को जान लिया था, उसे व्याख्यायित करते समय उनके सामने दो समस्याएं थी।

एक तो सभी लोग संस्कृत नहीं जानते थे और दूसरी इंद्रियों की सीमित क्षमतावाले लोगों को अतींद्रिय को अभिव्यक्त करना कठिन था। इसके समाधान के लिए उन्होंने तत्कालीन जनभाषा प्राकृत में प्रवचन देना प्रारंभ किया। दूसरे, एक ही सत्य के अनेक विरोधी स्वरूपों को व्यक्त करने के लिए उन्होंने स्यादवाद की शैली का आविष्कार किया। यहां स्यात का अर्थ है- साक्षेप। वाद शब्द का अर्थ कथन होता है, अत: स्यादवाद का अर्थ है किसी के सापेक्ष कथन। महावीर कहते हैं कि यदि हम स्यात्का प्रयोग करें तो श्रोता समझ जाएगा कि अभी वस्तु का एक धर्म (पक्ष) समझाया जा रहा है, लेकिन अन्य धर्म भी हैं, जिनका निषेध नहीं है। महावीर कहते हैं कि आप ह्यहीह्ल की जगह भी का प्रयोग करें, तो संघर्ष नहीं रहेगा। जैसे आप कहें कि मेरा संप्रदाय भी अच्छा है तो कभी किसी को कोई परेशानी नहीं है, किंतु जब आप यह कहते हैं कि मेरा संप्रदाय ह्यहीह्ल अच्छा है तो संघर्ष हो जाता है। महावीर कहते हैं, हमारी भाषा की शैली अहिंसक होनी चाहिए। जैसे यदि सब्जी काट दो की जगह अगर आप सब्जी बना दो कहें तो ज्यादा उपयुक्त होगा। महावीर ने साधना के क्षेत्र में भी भाषा को लेकर बहुविध प्रयोग किए थे।

२८ मार्च

बंसीलाल (निधन- २८ मार्च)

चौधरी बंसीलाल हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री और स्वतंत्रता सेनानी भी थे। बंसीलाल का जन्म हरियाणा के भिवानी जिले में एक तत्कालीन लोहारू रियासत में एक सम्पन्न परिवार में हुआ था। १९६८ में वे हरियाणा के मुख्यमंत्री बने और १९७५ तक रहने के बाद इंदिरा गांधी ने उन्हें रक्षामंत्री बना दिया। १९७७ ई. के चुनाव में जनता पार्टी की विजय के बाद चुनाव में हारे बंसीलाल पर सौ से अधिक आरोप लगाकर उनकी जाँच अनेक कमीशनों को सौंपी गई। पर कुछ सिद्ध नहीं किया जा सका और १९८० के चुनावों में कांग्रेस की विजय के बाद सब जाँच समाप्त हो गई। अपने मुख्यमंत्रित्व में बंसीलाल ने हरियाणा में कृषि, सिंचाई, विद्युत, शिक्षा, स्वास्थ्य और यातायात के क्षेत्र में इतना काम किया कि, उससे हरियाणा उन्नति के मार्ग में कई कदम आगे बढ़ गया।

रिसर्च महत्वपूर्ण है- डॉ. स्वाति पिरामल (जन्म- २८ मार्च)

वे डॉक्टर हैं और कुशल प्रबंध करनेवाली उद्योजिका नारी भी हैं। पारिवारिक व्यवसाय के बजाए एक अलग ही क्षेत्र में उतर कर पति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने व सक्षमता से अपने व्यवसाय की धुरी संभालनेवाली डॉ. स्वाति पिरामल (आयु ६१ वर्ष) को कौन नहीं जानता? आज देश में नई दवाओं के संशोधन (रिसर्च) के क्षेत्र में पिरामल हेल्थ केअर इंस्टीट्यूट, एक अग्रणी कंपनी मानी जाती है।

जब वे विवाह करके परिमल परिवार में आई तो मिलों में कर्मचारियों की हड़ताल चह रही थी। इस हड़ताल का परिणाम मिलों पर हो रहा था और मिलें बंद हो रही थीं। उनका परिवार भी इस स्थिति से गुजर रहा था और इसी दौरान उनके ससुर की मृत्यु हो गई। इस विपत्ति से उबर भी नहीं पाए थे कि उनके छोटे देवर को कर्करोग हो गया और इतना सब होने के बाद उनके सबसे बड़ जेठ ने घर के व्यवसाय से अलग होने का फैसला कर लिया। इस तरह उनके ऊपर दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। मिलें तो बंद हो गई लेकिन बिजनेस तो बंद नहीं किया जा सकता था। उनके पति अजय व उन्होंने एक नया बिजनेस शुरू करने के बारे में सोचा, वह था फार्मास्युटिकल का डॉक्टर होने के बावजूद प्रत्यक्ष औषधि निर्माण में सहभाग कभी नहीं रहा। लेकिन बिजनेस की नस पकड़ने के लिए उनको ही ये सब भी सीखना था। व्यवसाय की धुरी संभालने के बाद सक्षम व्यवस्थापन सीखने के लिए ३७ वर्ष की उम्र में अपने २ बच्चों को छोड़कर उन्होंने हार्वर्ड बिजनेस स्कूल जॉइन किया। वहां उन्होंने प्रबंधन के जो गुर सीखे उनका प्रत्यक्ष उपयोग बिजनेस में करने पर बिजनेस ने जिन ऊंचाइयों को छुआ, आज वो सबके सामने है। उनके काम में संशोधन का बहुत योगदान है। विभिन्न औषधियों पर संशोधन करना, उनकी निर्माण करना और उपयोगिता मूल्य आंकने का काम पिरामल हेल्थकेअर में किया जाता है। संशोधन किसी भी देश की आर्थिक व सामाजिक प्रगति का आधार होता है।

२९ मार्च

१८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (क्रांतिकारी गद्दर)

अतीत का सुनहरा अध्याय

कई दिनों की गुलामी से १ दिन की आजादी भी मनुष्य, पशु, पक्षी यहाँ तक प्रकृति में विचरण करनेवाले हर प्राणी में ईश्वर द्वारा रचित आजादी से सराबोर हुए इस वातवारण में रहने का मन करता है। गुलामी कितनी भी हसीन हो पर आजादी का तोड़ कुछ नहीं हो सकता।

गुलामी जिन्दगी की सबसे बड़ी बदकिस्मती है

परिवर्तन की जीवंत प्रक्रिया सतत प्रवाहमान है। संहार के बाद सृजन, क्रांति के बाद शांति और संघर्ष के बाद विमर्श का सिलसिला मानव के अंतर्बाह्य जगत में चलता रहता है। मनुष्य का असंतोष से भरा जीवन आजन्म संघर्ष की स्थिति को झेलता रहता है। लड़ाइयाँ लड़ता है, नयी व्यवस्था के निर्माण के पुरानी व्यवस्था पर आघात करता है, इसी द्वंद्व की स्थिति में वह जीता, मरता रहता है।

इस देश में अनेकों महान राष्ट्र पुरुषों का उदय हुआ जिन्होंने अपने कर्तृत्व द्वारा भारत माता को महान बनाया। उसमें तथागत भगवान बुद्ध, भक्त कवि महात्मा फुले, छत्रपति शिवाजी महाराज, छत्रपति शाहू महाराज, महात्मा गांधी जी, लोकमान्य तिलक, आगरकर, स्वा. सावरकर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आदि जैसे अनेकों नेताओं का समावेश है साथ ही परतंत्र की बेडियां तोडने के लिए शहीद होने वाले हमारे वीर क्रांतिकारी भगत सिंह सुखदेव, राजगुरु, देशभक्त बाबू गेनू, तातय टोपे, अब्दुल रसुल, कुर्बान हुसैन, दामोदर चाफेकर, आनंद कान्हेरे, मलप्पा धनशेट्टी, महादेव रानडे, चाफेकर, सारडा, शंकर महाले, कृष्णजी कर्वे, पिंगळे आदि अनेक।

वतन पर जो फिदा होगा, अमर वो नौजवां होगा। रहेगी जब तलक दुनिया, यही बाकी निशां होगा।

चंद्रशेखर आजाद। क्रांतिकारियों के अमर प्रणेता ७० साल भी नहीं हुए आजादी को। मनुष्य के आजाद होने की घोषणा को हम भूल गए। मैं आजाद हूं। आजाद जीऊंगा और आजाद मरूंगा। मौत भी जिसने अपनी गोली से हासिल की। भारतमाता का अमर लाल। इलाहाबाद का अल्फ्रेड पार्क गवाह है मनुष्य आजाद मरता है बस, वह इतना ही जान ले कि उसकी आजादी को छीन पाना मौत के लिए भी संभव नहीं है।

यही घोषणा लोकमान्य तिलक ने की। यही घोषणा महात्मा गांधी ने की। यही घोषणा आजादी के धधकते जीवंत अग्निकुंड भगतसिंह ने की। यही घोषणा उन हजार-हजार क्रांतिकारियों ने की, बलिदानियों ने की।

आज भी यही घोषणा जन-जन से हो। संपूर्ण असितु हिंमाचल भारत से हो, जब आजादी को प्राण समर्पित करने का संकल्प हो तो कौन है वह ताकतवर जो उसे गुलाम बना ले। मनुष्य स्वतंत्र है। भारतमाता की जय है।

यह आजादी केवल महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस या पं. जवाहरलाल नेहरू की नहीं है यह आजादी उस भारत के हर युवा की सोच और निडरता के साथ अंग्रेजों को मुंहतोड़ कार्रवाई का ही नतीजा है कि आज हम स्वतंत्र रूप से विचरण कर रहे हैं। भारत को अंग्रेजों से मुक्त कराने के व शहीदों को याद करने के लिए (१५ अगस्त) को हर साल हम सभी भारतीयवासी बड़े हर्ष और उल्लास के साथ मनाते हैं। आजादी की जंग में हर युवा, हर धर्म और भारत के सभी प्रांतों के लोगों ने इसमें तन, मन, धन से सहयोग किया।

भारत का पहला स्वतंत्रता संग्राम १८५७ में हुआ था, पर ज्यादातर लोगों को मालूम नहीं कि गदर पार्टी के झंडा तले

(शुरुआत २१ अप्रैल, १९१३) एक दूसरा स्वतंत्रता संग्राम भी था, जो विदेश की जमीन से लड़ा गया था और जिसकी कमान संभाली थी वहां आकर बसे स्वतंत्रता सेनानियों ने। इस पार्टी से बिना सीधे जुड़े पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा ने देश की आजादी के लिए संघर्ष करते हुए वहीं अपने प्राण त्याग दिए। मैडम भीकाजी कामा श्यामजी की० सहयोगी वह तेजस्वी महिला जिन्होंने १०६ साल पहले अंग्रेजों के देश में फहराया था भारतीय स्वतंत्रता ध्वज।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम १८५७ से लेकर भारत की आजादी १५ अगस्त १९४७ तक के घटनाक्रमों पर एक सरसरी नजर। १८५७ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की पहली लड़ाई। १८८५ इंडियन नैशनल कांग्रेस की स्थापना। १९०५ लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल विभाजन। १९०६ मुस्लिम लीग की स्थापना। १९११ भारत की राजधानी कलकत्ता से दिल्ली लाई गई, ब्रिटिश राजा और महारानी का भारत दौरा। १९१६ प्रथम विश्वयुद्ध की शुरुआत। १९१८ मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच लखनऊ समझौता। १९१८ प्रथम विश्व युद्ध समाप्त, १९१९ मांटेग्यू चेम्सफर्ड सुधार लागू, जलियांवाला बाग नरसंहार। १९२० खिलाफत आंदोलन की शुरुआत। १९२७ देशभर में सायमन कमिशन वापस जाओ का नारा बुलंद। १९२८ शेर-ए-पंजाब लाला लाजपत राय की मौत। १९२९ लाहौर कांग्रेस में संपूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव। १९३० गांधीजी द्वारा सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरुआत और दांडी मार्च। १९३१ गांधी-इरविन समझौता। १९३५ भारत सरकार अधिनियम लागू। १९३७ प्रांतीय स्वायत्तता, कांग्रेस ने मंत्री मंडल बनाया। १९३९- १ सितंबर को द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत। १९४१ रविंद्रनाथ टैगोर की मृत्यु, सुभाषचंद्र बोस ने गुप चुप तरीके से भारत छोड़ा। १९४२ क्रिप्स मिशन भारत आया, भारत छोड़ो आंदोलन की शुरुआत। १९४३-४४ सुभाष चंद्र बोस ने आजाद हिंद सेना का गठन किया। १९४५ लाल किले में भारतीय नौसेना पर मुकदमे की सुनवाई, शिमला सम्मेलन, द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त। १९४६ ब्रिटिश कैबिनेट मिशन का भारत दौरा, केंद्र में अंतरिम सरकार का गठन। १९४७ भारत विभाजन, भारत और पाकिस्तान स्वतंत्र देश घोषित।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के निर्माण में व्यक्ति की यही संघर्षशील चेतना कार्यरत है। गुलामी के बंधन को तोड़कर उन्मुक्त होने की कामना ने १८५७ में क्रांति की नयी जमीन को खोज निकाला। जब शान से दिल्ली के लाल किले पर अपना तिरंगा लहराता है तो एक प्रकार से दिल में असीम खुशी और गर्व का भाव अपने मन में होता है व खुदवा-खद आजादी के इन रणबांकुरों की याद में श्रद्धा से सिर झुक जाता है।

सन १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के यज्ञ में महर्षि दयानंद सरस्वती ने व आजादी की लड़ाई में प्रथम बलिदान मंगल पांडे ने दिया था जो आजादी की लौ इन रणबांकुरों ने जलाई थी वह देखते देखते चारों ओर फैल गई। इस महासंग्राम में तात्या टोपे, रानी लक्ष्मीबाई, लाल लाजपत राय जैसे योद्धाओं ने इस स्वतंत्रता के यज्ञ में अपने रक्त की आहुति दी। वहीं युवाओं में अपने देश पर मर मिटने की जो अलम सरफरोशी की तमन्ना, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक, भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, राजगुरू, सुखदेव, आदि अंग्रेजों से लड़ते लड़ते शहीद हो गई। स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है का जयघोष करनेवाले तिलक ने युवाओं में अंग्रेजों से लड़कर मरमिटने की जो अलख जगाई थी इसी अलख ने गोरों के हौंसले पस्त कर दिए थे। वहीं सुभाषचंद्र बोस ने तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा, का मंत्र दिया। इस मंत्र ने युवाओं को मन में एक प्रकार से जोश भर दिया और उन्हें अंग्रेजों से आजादी के अलावा कुछ और चाहिए ही नहीं था ऐसी

सोच और निडरता लिए इन शहीदों को हम सदैव याद करते रहेंगे। वहीं अहिंसा और सहयोग का अस्त्र लेकर महात्मा गांधी और गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ने को तत्पर लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल व पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपने प्रयास से हमें ९० वर्षों का लंबा संघर्ष के बाद १५ अगस्त १९४७ को भारत की स्वतंत्रता देवी का वरदान दिलाने में सफलता प्राप्त की। १५ अगस्त भारत का स्वतंत्रता दिवस है।

देश को आजादी दिलाने के लिए ही कांग्रेस की स्थापना हुई थी और भारत के पहले प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री घोषित हुए। आजादी हमें स्वतंत्र नहीं मिल गई थी अपितु एक लंबे संघर्ष और हजारों, लाखों लोगों के बलिदान के बाद ही भारत आजाद हो पाया था। देश पर मर मिटने वाले हजारों शहीद जो इतिहास के पन्नों में जगह नहीं पा सके हम उन्हें भी शत्-शत् नमन करते हैं। इसी आजादी के तराने में कई कवियों और लेखकों ने अपनी कलम से आजादी के लिए ओजस्वी कविता और लेखों से युवाओं के दिल में एक प्रकार से अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने की जो नफरत फैलाई थी वह स्वतंत्र भारत में तब्दील होकर ही रही।

भारत पर विजय, जिसे प्लासी के संग्राम (१७५७) में आरंभ हुआ नामा जा सकता है, व्यावहारिक रूप से १८५६ में डलहौजी के कार्यकाल का अंत था। किसी भी अर्थ में यह सुचारु रूप से चलनेवाला मामला नहीं था, क्योंकि लोगों के बढ़ते असंतोष से इस अवधि के दौरान अनेक स्थानीय क्रांतियां होती रहीं। यद्यपि १८५७ का विद्रोह, जो मेरठ में सैन्य कर्मियों की बगावत से शुरू हुआ, जल्दी ही आगे फैल गया और इससे ब्रिटिश शासन को एक गंभीर चुनौती मिली। जबकि ब्रिटिश शासन इसे एक वर्ष के अंदर ही दबाने में सफल रहा, यह निश्चित रूप से एक ऐसी लोकप्रिय क्रांति थी जिसमें भारतीय शासक, जनसमूह और नागरिक सेना शामिल थी, जिसने इतने उत्साह से इसमें भाग लिया कि इसे भारतीय स्वतंत्रता का पहला संग्राम कहा जा सकता है।

ब्रिटिश द्वारा जमीनदारी प्रथा को शुरू करना, जिसमें मजदूरों को भारी करों के दबाव से कुचल डाला गया था, इससे जमीन के मालिकों का एक नया वर्ग बना। दस्तकारों को ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के आगमन से नष्ट कर दिया गया। धर्म और जाति प्रथा, जिसने पारम्परिक भारतीय समाज की सुदृढ़ नींव बनाई थी अब ब्रिटिश प्रशासन के कारण खतरे में थी। भारतीय सैनिक और साथ ही प्रशासन में कार्यरत नागरिक वरिष्ठ पदों पर पदोन्नत नहीं किए गए, क्योंकि ये यूरोपियन लोगों के लिए आरक्षित थे। इस प्रकार चारों दिशाओं ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ असंतोष और बगावत की भावना फैल गई, जो मेरठ में सिपाहियों के द्वारा किए गए इस बगावत के स्वर में सुनाई दी जब उन्हें ऐसी कारतूस मुंह से खोलने के लिए कहा गया जिन पर गाय और सुअर की चर्बी लगी हुई थी, इससे उनकी धार्मिक भावनाएं आहत हुईं। हिंदु तथा मुस्लिम दोनों ही सैनिकों ने इन कारतूसों का उपयोग करने से मना कर दिया, जिन्हें ९ मई १८५७ को अपने साथी सैनिकों द्वारा क्रांति करने के लिए गिरफ्तार कर लिया गया। बगावती सेना ने जल्दी ही दिल्ली पर कब्जा कर लिया और यह क्रांति एक बड़े क्षेत्र में फैल गई और देश के लगभग सभी भागों में इसे हाथों हाथ लिया गया। इसमें सबसे भयानक युद्ध दिल्ली, अवध, रोहिलखण्ड, बुंदेल खण्ड, इलाहाबाद, आगरा, मेरठ और पश्चिमी बिहार में लड़ा गया विद्रोही सेनाओं में बिहार में कंवर सिंह के तथा दिल्ली में बख्तखान के नेतृत्व में ब्रिटिश शासन को एक करारी चोट दी। कानपुर में नाना साहेब ने पेशावर के रूप में उदघोषणा की और तात्या टोपे ने उनकी सेनाओं का नेतृत्व किया जो एक निर्भीक नेता थे। झांसी की

रानी लक्ष्मीबाई ने ब्रिटिश के साथ एक शानदार युद्ध लड़ा और अपनी सेनाओं का नेतृत्व किया। भारत के हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख और अन्य सभी वीर पुत्र कंधे से कंधा मिलाकर लड़े और ब्रिटिश राज को उखाड़ने का संकल्प लिया। इस क्रांति को ब्रिटिश राज द्वारा एक वर्ष के अंदर नियंत्रित कर लिया गया जो १० मई १८५७ को मेरठ में शुरु हुई और २० जून १८५८ को ग्वालियर में समाप्त हुई।

१८५७ को विद्रोह की असफलता के परिणामस्वरूप, भारत में इस्ट इंडिया कंपनी के शासन का अंत भी दिखाई देने लगा तथा भारत के प्रति ब्रिटिश शासन की नीतियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिसके अंतर्गत भारतीय राजाओं, सरदारों और जमींदारों को अपनी ओर मिलकर ब्रिटिश शासन को सुदृढ़ करने के प्रयास किए गए। रानी विक्टोरिया के दिनांक १ नवम्बर १८५८ की घोषणा के अनुसार यह उद्घोषित किया गया कि इसके बाद भारत का शासन ब्रिटिश राजा के द्वारा व उनके वास्ते सेक्रेटरी ऑफ स्टेट द्वारा चलाया जाएगा। गवर्नर जनरल को वायसराय की पदवी दी गई, जिसका अर्थ था कि वह राजा का प्रतिनिधि था। रानी विक्टोरिया जिसका अर्थ था कि वह सम्राज्ञी की पदवी धारण करें और इस प्रकार ब्रिटिश सरकार ने भारतीय राज्य के आंतरिक मामलों में दखल करने की असीमित शक्तियां धारण कर लीं। संक्षेप में भारतीय राज्य सहित भारत पर ब्रिटिश सर्वोच्चता सुदृढ़ रूप से स्थापित कर दी गई। अंग्रेजों ने वफादार राजाओं, जमींदारों और स्थानीय सरदारों को अपनी सहायता दी जबकि, शिक्षित लोगों व आम जन समूह (जनता) की अनदेखी की। उन्होंने अन्य स्वार्थियों जैसे ब्रिटिश व्यापारियों, उद्योगपतियों, बागान मालिकों और सिविल सेवा के कर्मिकों (सर्वेन्ट्स) को बढ़ावा दिया। इस प्रकार भारत के लोगों को शासन चलाने अथवा नीतियां बनाने में कोई अधिकार नहीं था। परिणामस्वरूप ब्रिटिश शासन से लोगों की घृणा बढ़ती गई, जिसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को जन्म दिया।

हमारे समस्त नेता जब भी स्वतंत्रता की बात करते हैं तो वे महात्मा गांधी का नाम अवश्य लेते हैं और कहते हैं कि महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसात्मक आंदोलन द्वारा भारत ब्रिटिश शासन से आजाद हुआ।

गांधीजी के अहिंसात्मक आंदोलन में शत्रु का सिर लेना मना था पर अपना सिर देने पर कोई प्रतिबंध न था। यह बात सुनकर हमें दु:ख के साथ-साथ आश्चर्य भी होता है और एक प्रश्न भी मन में बार-बार उठता है कि वह कौन सी आजादी थी जो भारत को बिना खून बहाये प्राप्त हुई? क्या स्वतंत्रता हमें उपहार स्वरूप प्राप्त हुई थी।

हमारी भारत माता अनेकानेक शहीदों के पावन रक्तसे सिंचित होकर ही परतन्त्रता के ग्रहण से मुक्त हो सकी। स्वतंत्रता महायज्ञ का आरंभ सन १८५७ में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के वीरतापूर्ण बलिदान के साथ आरंभ हुआ था। प्रतिशोध की भावना से ग्रसित होकर अंग्रेजों ने भारतीयों पर क्रूरतम प्रहार किये। क्रांतियुद्ध से जुड़े होने के संदेह पूरे गांव के गांव में आग लगा दी जाती थी। इस क्रांति में नाना फड़नवीस, तात्या टोपे, खुदाबख्श और कुंवर सिंह जैसे वीरों ने किस प्रकार क्रोध, घृणा एवं प्रतिशोध की भावना से पागल ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों का सामना किया, कितना खून बहा, कितने शीश कटे, इसका हिसाब आज तक कोई नहीं बना पाया है।

अंग्रेज बहादुर गुर्गों ने कितनी नारियों को अपमानित किया। कितने बच्चों को मार डाला, कितने गांव जला दिये, आदि की करुण कहानी कहनेवाले अनेक लोग अभी जीवित हैं। आप उनसे यदि यह गाना सुनें तो मेरा दावा है कि आप अपनी सारी मर्म व्यथा भूल जायेंगे।

इन्हीं दोनों नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज का जय हिन्द एवं दिल्ली चलो का सिंहनाद पूरे विश्व ने सुना। नेताजी का कहना था तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।

कौन नहीं जानता कि इस अवसर पर भारत के असंख्य बेटे-बेटियों का अथाह खून बहा था। महिलाओं ने अपनी इज्जत बचाने के लिए मांग-मांग कर मौत ली। पिता और भाई अपनी बहन और बेटी को अपने हाथों से जला आए। दरियाओं में धकेल आये। रक्त का सागर पार करने के बाद ही भारतवासियों को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। खून बहाये बिना ही भारतवासियों को आजादी प्राप्त नहीं हुई? आजादी के लिए हिन्दुस्तानियों ने बहुत भारी कीमत चुकायी है।

हाल मे दिल्ली के ३०० साल पुराने चांदनी चौक मे मुगलकालीन दिल्ली की शानोशौकत व रौनक को जीवंत करते हुए चांदनी चौक उत्सव मनाया गया। चांदनी चोक मुगल दौर से एक महत्वपूर्ण बाजार रहा है। इस अवसर पर कई सांस्कृतिक आयोजन किए गये थे। लालकिले के सामने से शाही अंदाज मे शाहजहां की सवारी निकली। प्राचीन गौरी शंकर मंदिर के सामने भजन-संध्या आयोजित थी तो जामा मस्जिद के बाहर कव्वाली। गुरुद्वारा शीशगंज साहिब के बाहर गुरुवाणी का पाठ तो चर्च के बाहर गीत-संगीत की लहरियां चल रही थी। इस सांझी संस्कृति से १८५७ का वह महासमर अनायास सामने जीवंत हो उठा, जब पेशावर से कलकत्ता तक रक्त कमल और चपाती बांट कर एक धर्म और एक खापना की शपथ ली गयी थी। वह शपथ स्वधर्म और स्वराज की थी। सबका एक ही धर्म था- मातृभूमि को दासता की बेड़ियों से मुक्ति दिलाना। वह महीना भी मई का ही था।

११ मई, १८५७ को अंग्रेजों द्वारा अपदस्थ आखिरी मुगल बादशाह बहादुर शाह जफर की पुन: ताजपोशी की गयी थी। इस ताजपोशी में हिन्दू-मुसलमान दोनो बराबर के हिस्सेदार थे। इस महासमर की रणभेरी २९ मार्च, १८५७ को बैरकपुर छावनी के वीर शिरोमणि मंगल पांडे नामक एक ब्राह्मण ने बजाई थी। नाना साहब, अजीमुल्ला खां, तात्याटोपे, मौलवी अहमद शाह, वजीर अली नक्की खाँ, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, कुंवर सिंह आदि ने मिलकर देश को अंग्रेजी दासता से मुक्ति दिलाने के लिए ३१ मई, १८५७ की तिथि तय की थी, किन्तु कुछ तात्कालिक कारणों से असंतोष और आक्रोश की ज्वाला समय से पूर्व ही भड़क उठी। योजना भंग होने एवं कुछ देशी रियासतों के साथ नही देने के कारण वीर सेनानियों का यह महायज्ञ सफल नही हो सकता और देश की आजादी करीब सौ साल के लिए टल गयी।

दिल्ली पर पुन: अधिकार होने के बाद अंग्रेजों ने अस्सी वर्ष के वृद्ध बहादुर शाह जफर को गिरफ्तार कर लिया और उन पर मुकदमा चलाने के लिए अदालत का ढोंग रचा। बहादुर शाह जफर पर चलाए गए ऐतिहासिक मुकदमे की पूरी कार्रवाई एक सुनियोजित षड्यंत्र थी। एक ओर तो अंग्रेज यह संकेत देना चाहते थे कि वे न्याय पसंद है और दूसरी ओर वे इस निष्कर्ष पर भी पहुँच रहे थे कि देश के मुसलमानों को हिन्दुओं के साथ मिलकर युद्ध मे सन्नद्ध होने का दूसरा अवसर कदापि उपलब्ध नही होने देना है। अंग्रेजो की फूट डालो और राज करो की नीति इसी बीज से प्रस्फुटित हुई। दुर्भाग्य से आजादी के बाद अंग्रेजों की यह घृणित नीति हमारे कथित पंथनिरपेक्षियों ने अपना लजी और समाज को सम्प्रदायों मे बांटकर उनका राजनीतिक दोहन किया।

इस कार्य मे पाकिस्तान के सृजन के कसूरवार कम्युनिस्टों के साथ अल्पसंख्यको के तुष्टिकरण नीति की पुरोधा कांग्रेस पार्टी निरंतर संलिप्त है। १८५७ के इस महासमर में मुसलमानों ने इस्लाम की विशिष्ट अतिरेकी मनोवृत्ति का पोषण करने

वाली ग्रंथि को त्याग कर राष्ट्र को ऊपर रखा। उन्होने यह मान्तया झुठला दी थी कि इस्लाम स्वीकार करने वाले की इतिहास दृष्टि बदल जाती है और वह अपने पूर्वजों की मिट्टी से नफरत करने लगता है। इस महासमर मे मुसलमानों ने एकं सत् विप्रा: बहुदा वदन्ति की भारतीय चिंतन का ही परिचय देते हुए हिन्दुओं के साथ कंधे से कंधा मिलाते हुए आजादी का नारा बुलंद किया था। अंग्रेजों के लिए यह बिल्कुल नया अवसर था। ११ मई से लेकर २० सितंबर, १८५७ तक बहादुर शाह जफर दिल्ली के तख्त पर आसीन रहे।

इस स्वातंत्र्य समर की मशाल थामने के बाद बादशाह जफर ने दीवाने आम में दरबार आयोजित कर राजे-महाराजे, ताल्लुकेदारों व जागीरदारों को चिट्ठियां लिखवाईं और उन्हे आजादी की जंग मे शामिल होने को कहा। दूसरा महत्वपूर्ण फैसला बादशाह ने हिन्दू-मुस्लिम एकता को मजबूत करने के लिए लिया। दिल्ली की क्रान्तिकालीन आजाद हुकूमत का जो संविधान तैयार किया गया, उसमे गोवध पर पाबंधी को पहले स्थान पर रखा गया। बादशाह की ओर से यह फरमान भी जारी किया गया कि न सिर्फ गाय का कत्ल करने वालों को, बल्कि इसके लिए उकसाने या अफवाहे फैलाने वालों को भी तोप से उड़ाने की सजा दी जायेगी। यही नही, कुछ अतिरेकी मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं के खिलाफ जिहाद की चर्चा सुनने पर बादशाह खुद सड़कों पर उतरे और सबको खबरदार किया, जिहाद केवल फिरंगियों के साथ।

१८५७ की क्रांति को कुछ इतिहासकार केवल सिपाही विद्रोह बताकर बौना करते आये है। इन इतिहासकारों के अनुसार चर्बी वाले कारतूस के कारण सिपाहियों ने विद्रोह किया। यह एक तात्कालिक कारण जरूर बना, किन्तु यदि केवल यही एक कारण होता तो कानपुर के नाना साहब, दिल्ली के वृद्ध व अंधे बादशाह, झांसी की रानी, कुंवर सिंह, नाहर सिंह और रूहेलखंड के खान बहादुर खान ने इसमे क्यो योगदान किया ? न तो वे अंग्रेजों की सेवा मे थे और नल ही उन पर चर्बी वाले कारतूस को प्रयोग करने का दबाव ही था। यदि कारतूसों के कारण ही अग्नि प्रज्ज्वलित हुई थी तो अंग्रेज जनरल द्वारा उनकी वापसी के आदेश दिए जाने के बाद आक्रोश मंद हो जाना चाहिए। स्पष्ट है कि केवल कारतूस ही कारण नही थे। धार्मिक मूल्यों पर की जा रही चोटों से भारतीय जनमानस उद्वेलित था।

१८५७ का भारतीय स्वातंत्र्य समय मे विनायक दामोदर सावरकर ने लिखा है, मिशनरियों ने सेना मे भी ईसाई मत का प्रचार शुरू कर दिया था। वे यह समझते थे कि यदि विद्रोह भी हुआ तो कम से कम सेना ईसाई होने के कारण विद्राह नही करेगी। भगवान राम अथवा हजरत मोहम्मद को ईसाई धर्म प्रचारक अपशब्दों से सम्बोधित करते थे। वेद और कुरान का अपमान किया जाता था, मूर्तियां भ्रष्ट की जाती थी।

१८५७ का सिपाही विद्रोह- १० मई १८५७ को मेरठ स्थित ३ बंगाल लाइट कैवलरी ने नेतृत्व में ब्रिटिश फौज में काम करनेवाले भारतीय सिपाहियों ने विद्रोह किया। नयी एनफिल्ड रायफलों के लिए जरूरी इस नये कारतूस में सूअर व गाय की चर्बी के प्रयोग की खबर विद्रोह की वजह थी।

विद्रोहियों ने दूसरे ही दिन दिल्ली पर अधिकार कर लिया और अगले दो महीनों में अवध व रूहेलखंड में भी फैल गया।

नेतृत्व के अभाव के कारण अंग्रेज यह विद्रोह दबाने में सफल हुए। लॉर्ड कैनिंग ने ८ जुलाई १८५८ को विद्रोह की समाप्ति और शांति स्थापना की घोषणा की थी। इसके बाद भारत का प्रशासन इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के हाथों में चला गया।

भवानी प्रसाद मिश्र (जन्म- २९ मार्च)

भवानी प्रसाद मिश्र हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तथा गांधीवादी विचारक थे। भवानी प्रसाद मिश्र दूसरे तार सप्तक के एक प्रमुख कवि हैं। मिश्र जी विचारों, संस्कारों और अपने कार्यों से पूर्णत: गांधीवादी हैं। गांधीवाद की स्वच्छता, पावनता और नैतिकता का प्रभाव और उसकी झलक भवानी प्रसाद मिश्र की कविताओं में साफ देखी जा सकती है। उनका प्रथम संग्रह गीत-फरोश अपनी नई शैली, नई उद्भावनाओं और नये पाठ-प्रवाह के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ।

सियारामशरण गुप्त (निधन- २९ मार्च)

सियारामशरण गुप्त हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार और राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे। उन पर गाँधीवाद का विशेष प्रभाव रहा है। इसलिये उनकी रचनाओं में करुणा, सत्य-अहिंसा की मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है। हिन्दी साहित्य में उन्हें एक कवि के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई लेकिन एक मूर्धन्य कथाकार के रूप में भी उन्होंने कथा-साहित्य में भी अपना स्थान बनाया।

३० मार्च

सीरिल रैडक्लिफ (जन्म- ३० मार्च)

सीरिल रैडक्लिफ एक ब्रिटिश वकील थे, जिन्होंने भारत-पाकिस्तान विभाजन की रेखा तैयार की थी, जिसे वर्तमान में रैडक्लिफ रेखा कहा जाता है। इस विभाजन में न केवल भारतीय उप-महाद्वीप के दो टुकड़े किये गये बल्कि बंगाल का भी विभाजन किया गया और बंगाल के पूर्वी हिस्से को भारत से अलग कर पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांग्लादेश) बना दिया गया। वहीं पंजाब का विभाजन कर पाकिस्तान का निर्माण हुआ। इस विभाजन में रेलवे, फौज, ऐतिहासिक धरोहर, केंद्रीय राजस्व, सबका बराबरी से बंटवारा किया गया।

मनोहर श्याम जोशी (निधन- ३० मार्च)

मनोहर श्याम जोशी आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध गद्यकार, उपन्यासकार, व्यंग्यकार, पत्रकार, दूरदर्शन धारावाहिक लेखक, जनवादी-विचारक, फिल्म पट-कथा लेखक, उच्च कोटि के संपादक, कुशल प्रवक्ता तथा स्तंभ-लेखक थे। दूरदर्शन के प्रसिद्ध और लोकप्रिय धारावाहिकों-बुनियाद नेताजी कहिन, मुंगेरी लाल के हसीं सपने, हम लोग आदि के कारण वे भारत के घर घर में प्रसिद्ध हो गए। उन्होंने धारावाहिक और फिल्म लेखन से संबंधित पटकथा- लेखन नामक पुस्तक की रचना की है। दिनमान और साप्ताहिक हिन्दुस्तान के संपादक भी रहे।

३१ मार्च

गुरु अंगद देव (जन्म- ३१ मार्च, निधन- २८ मार्च)

गुरु अंगद देव सिक्खों के दूसरे गुरु थे। गुरु अंगद देव महाराज जी का सृजनात्मक व्यक्तित्व था। उनमें ऐसी अध्यात्मिक क्रियाशीलता थी जिससे पहले वे एक सच्चे सिख और फिर एक महान गुरु बने। गुरु अंगद देव लहिणा जी

भी कहलाते हैं। ये पंजाबी लिपि गुरुमुखी के जन्मदाता है, जिसमें सिक्खों की पवित्र पुस्तक आदिग्रंथ के कई हिस्से लिखे गए। ईश्वरीय गुणों से भरपूर महान और प्रभावशाली व्यक्तित्व के स्वामी थे गुरु अंगद देव।

शीला दीक्षित (जन्म- ३१ मार्च)

शीला दीक्षित केरल की पूर्व राज्यपाल एवं दिल्ली की पूर्व मुख्यमंत्री हैं। इनका मुख्यमंत्री के रूप में कार्यकाल लगातार १५ वर्ष रहा जो एक रिकॉर्ड है। ये दिल्ली की दूसरी महिला मुख्यमंत्री थी। कई वर्षों के अनुभव के बाद शीला दीक्षित राजनीति के दांव पेंच बहुत अच्छी राजनीतिज्ञ हैं। एक बेहद कुशल राजनेत्री होने के साथ ही शीला दीक्षित कला प्रेमी भी हैं। व्यक्तिगत जीवन में आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी महिला हैं। लगातार तीन बार मुख्यमंत्री पद पर जीत दर्ज करना स्वयं अपने आप में एक रिकॉर्ड है, जिससे यह साफ प्रमाणित होता है कि शीला दीक्षित के व्यक्तित्व में बेजोड़ नेतृत्व क्षमता है।

१ अप्रैल

गुरु तेग बहादुर

गुरु तेग बहादुर सिक्खों के नौवें गुरु थे। इनका जन्म १६२१ में अमृतसर ग्राम बकाला में हुआ था। वे बड़े ही पराक्रमी, वीर, साहसी एवं कुशल प्रशासक थे। इन्होंने मानवता एवं धर्म की रक्षा के लिए अपने आपको कुर्बान कर दिया और अपना शीश दान।

बात उस समय की है जब औरंगजेब का अत्याचार अत्यंत प्रकाष्ठा के साथ बढ़ रहा था। हिंदुओं पर घोर अत्याचारों के साथ अत्यंत अमानवीय व्यवहार किया जा रहा था। उन पर तलवार की नोक पर इस्लाम कबूल करने के लिए दबाव बनाया जा रहा था और जो हिंदू इस्लाम कबूल नहीं करता, उसे मृत्युदंड दे दिया जाता था।

मुगलों द्वारा हिंदुओं को घृणा की दृष्टि से देखा जा रहा था, उनसे जजिया कर वसूला जा रहा था, मंदिरों को तोड़कर मस्जिदें बनाई जा रही थी। उस समय गुरु तेग बहादुर से मिलते एवं उनसे रक्षा का वचन लेने के लिए आनंदपुर आया लेकिन उस समय गुरु तेग बहादुर वहां नहीं थे। पंडितों के दल की मुलाकात भाई मतिदास से हुई। पं. किरपाराम ने उत्तर भारत में बढ़ते अत्याचारों के बारे में मतिदास को बताया। यह सुनकर भाई मतिदास अत्यंत द्रवित हो उठे। उन्होंने वह संदेश तत्काल गुरु तेग बहादुर को पटना भेजा। गुरु तेग बहादुर उस समय पटना में ही थे। गुरु गोविंद सिंह का जन्म हो चुका था तथा वे बाल्यावस्था से गुजर रहे थे। संदेश सुनते ही वे तत्काल वहां से रवाना हो गए।

वे आनंदपुर साहिब पहुंचे। भाई मतिदास से सब समाचार सुनकर वे बोले कि जाकर औरंगजेब को कहो कि पहले गुरु तेग बहादुर को मुसलमान बनाओ, फिर हम सभी इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेंगे। वहां उन्होंने भाई मतिदास के साथ मिलकर पांच सौ श्रद्धालुओं को इकट्ठा किया। फिर उन्होंने एक शिबिर लगाया जिसमें उत्तर भारत में हिंदुओं पर किए जा रहे अत्याचारों का मुकाबला करने के लिए एक योजना बनाई गई। ये सारी बातें औरंगजेब के कानों तक पहुंच गई। उसने गुरु तेग बहादुर को दिल्ली बुलवाया।

गुरु तेग बहादुर दिल्ली के लिए रवाना हो गए। उनके साथ भाई मतिदास, भाई दयाला और भाई गुरुदत्ता भी थे। सभी को रोपड़ के पास मलिकापुर गांव में गिरफ्तार कर लिया गया तथा बंदी बनाकर पिंजरे में दिल्ली लाया गया। उन्हें बंदी की हालत में कोतवाली चांदनी चौक में रखा गया। औरंगजेब ने गुरु तेरा बहादुर को काजी के मार्फत संदेश भिजवाया कि वे चमत्कार दिखाएं या इस्लाम धर्म स्वीकार करें या दोनों न कर सकें तो मौत के लिए तैयार रहें।

गुरुजी ने बड़े ही शांत स्वर में पहली दोनों बातें अस्वीकार कर दी। भाई मतिदास ने गुरु से कहा कि यदि आप कहें तो मैं इस मुगल साम्राज्य की ईंट से ईंट बजा देता हूं और इन मुगलों का नामोनिशान मिटा देता हूं लेकिन प्रजा के हित को ध्यान में रखकर गुरु जी ने यह बात टाल दी लेकिन भाई मतिदासजी की बात सुनकर काजी क्रोध में आग बबूला हो गया और वहां से औरंगजेब के पास चल पड़ा।

काजी के जाने के बाद गुरु तेग बहादुर ने भाई मतिदासजी को अपनी शक्ति को एकत्रित एवं संचित रखने को कहा। काजी ने एक का दो लगाकर औरंगजेब से कहा। वह क्रोध से पागल हो गया। फिर उसने मतिदासजी को संदेश भिजवाया

कि वह इस्लाम धर्म स्वीकार करें या मौत को गले लगाएं। मतिदासजी ने भी प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

इस पर क्रुद्ध होकर औरंगजेब ने मतिदास को आरे से चीरने का हुक्म जारी कर दिया। परिणामस्वरूप ९ नवंबर १६७५ को दिल्ली के चांदनी चौक में अल्थाय हुसैन द्वारा भाई मतिदास को लकड़ी के दो तख्तों के बीच बांधकर आरे से चीर दिया गया। जब भाई मतिदासजी ओर से चीरे जा रहे थे और खून की धारा उनके चेहरे पर पड़ी तो काजी ने उन्हें धर्म परिवर्तन के लिए बहुत बड़ा प्रलोभन दिया लेकिन भाई मतिदासजी ने जवाब दिया कि मैं ईश्वर के सामने सुर्खरू जाना चाहता हूं और उन्होंने सुखमनी साहिब का पाठ शुरू कर दिया। जल्लादों ने उन्हें सिर से लेकर धड़ तक चीर दिया। कहा जाता है कि धड़ के दोनों भागों से तब तक पाठ की आवाज निकलती रही जब तक कि उनके प्राण नहीं निकल गए।

फिर अगले दिन १० नवंबर को उनके छोटे भाई सतिदास जी को रूई से लपेटकर जिंदा जला दिया गया। पुन: अगले दिन भाई दयाला को उबलती देग में बैठकर उबाल दिया गया। भाई मतिदास एवं उनके भाइयों का त्याग और बलिदान को देखकर बाद में गुरु गोविंद सिंह जी ने इस वंश को भाई के खिताब से नवाजा।

सबसे अंत में चांदनी चौक की सुनहरी मस्जिद के सामने कोतवाली के समीप वटवृक्ष के पास जल्लाद जलालुद्दीन ने गुरु तेग बहादुर का सिर धड़ से अलग कर दिया। गुरु तेग बहादुर धर्म मानवता एवं स्वाभिमान की रक्षा के लिए शहीद हो गए।

गुरु तेग बहादुर का कटा हुआ शीश भाई जस्सा आनंदपुर साहिब ले गए। उन्होंने उस सिर को गुरु के पुत्र गोविंद सिंह को सौंप दिया जबकि उनका धड़ छकड़े में डालकर ले गए तथा अपनी झोपड़ी जलाकर उनका अंतिम संस्कार कर दिया। दिल्ली में आज उसी स्थान पर रकाबगंज साहिब स्थित है। जिस स्थान पर गुरु तेग बहादुर ने अपनी शहादत दी थी। वहां गुरुद्वारा शीशगंज साहिब है जबकि भाई मतिदासजी की शहादत का स्थान भाई मतिदास चौक चांदनी चौक कहा जाता है।

गुरु तेग बहादुर का जन्म एक अप्रैल १९२१ को अमृतसर में हुआ था। वह गुरु हरगोविंद व माता नानकी की कनिष्ठ संतान थे। बचपन से ही उन्हें युद्धकला, घुड़सवारी, तलवारबाजी तथा धर्म की शिक्षा बाबा बूढ़ा तथा भाई गुरदास से मिली, फरवरी १६३३ में १२ वर्ष की अल्पायु में उनकी, लालचंद व बिशन कौर की बेटी गुजरीजी से शादी हो गई। अल्पायु में ही तेग बहादुरजी ने अपने पिता व सिखों के छठें गुरु हरगोविंद के साथ कई युद्ध लड़े। सन १६३४ में करतारपुर के युद्ध में भीषण नरसंहार देख उनका हृदय विचलित हो गया और वह ध्यान-त्याग के पथ पर चल पड़े। जब गुरु हरगोविंदजी कीरतपुर से अपने जीवन का बाकी समय शांति व ध्यान में बिताने के लिए बस गए, तब तेग बहादुरजी भी उनके साथ नौ वर्षों तक वहां रहे, तत्पश्चात यह एक दूर-दराज के गांव बकाला में सन १६५६ में ध्यान मनन के उद्देश्य से बस गए। समय आने पर भी गुरु हरगोविंदजी ने अपने पुत्र तेग बहादुर को गुरुगद्दी नहीं सौंपी। गुरुजी को लगा कि अभी उनके बेटें में उत्तराधिकारी के सारे गुण नहीं है। सिख संप्रदाय को एक योद्धा चाहिए था। ना कि ध्यान-ममन में लीन त्यागी। इसलिए गुरू हरगोविंदजी ने अपने पौत्र हरारायजी को सिख पंथ का सातवां गुरु चुना। फिर गुरु हरारायजी अपने कनिष्ठ पुत्र गुरु हरकृष्णजी को आठवां गुरु बनाया।

सन १६६४ में दिल्ली में गुरु हरकृष्णजी की तबीयत इतनी खराब हुई कि वह ठीक से बोल तक नहीं पा रहे थे। उन्होंने

तेग बहादुर की ओर इशारा करते हुए नौवें सिख गुरु के रूप में पंथ को बाबा बकाला को प्रतिष्ठित करने का आदेश दिया। तेग बहादुरजी अब सिखों के गुरु बन गए। उन्होंने करितपुर, तरन-तारन, खड्र साहिब, गोविंदवाल आदि स्थानों की यात्राएं की। अमृतसर के पवित्र सरोवर में उन्होंने स्नान किया। परंतु पृथीचंद नामक सिख के पौत्र हरजी ने उनको स्वर्णमंदिर परिसर में घुसने नहीं दिया। मन मसोस कर गुरुजी कीरतपुर लौट आए। यहां भी उन्हें कुछ लोगों का विरोध झेलना पड़ा। गुरुजी ने एक नया शहर बनाने का फैसला किया। कहलूर के राजा से उन्होंने एक भूखंड पाया और सन १६६५ में चक नानकी नामक शहर की नींव रखी। यह नामकरण उन्होंने अपनी माता के नाम पर किया था, उन दिनों देश मुगल सम्राट औरंगजेब के जुल्मोसितम से कराह रहा था। हिंदू मंदिरों व अन्य धार्मिक स्थलों को तोड़कर असंख्य मसजिदें बनवाई जा रही थीं। विरोध करनेवाले का सर कलम कर दिया जाता था। इस विपदा में करीब ५०० कश्मीरी पंडितों का एक दल पंडित कृपाराम दत्त के नेतृत्व में गुरु तेग बहादुर से मिलने आनंदपुर साहिब पहुंचा। पंडित कृपाराम बाद में गुरु गोविंद सिंह के संस्कृत शिक्षक बने। पंडित से शिक्षक व शिक्षक से योद्धा बने कृपाराम ने चमकौर के युद्ध में सिख सिपाहियों संग औरंगजेब की सेना से लोहा लिया। दिल्ली रवाना होने से पहले गुरुजी ने कहलवाया कि उनके उपरांत गोविंदराय गुरु होंगे। सुनियोजित रणनीति के तहत गुरुजी के नेतृत्व में ५०० कश्मीरी पंडित, भाई मती दास, भाई दबाला तथा भाई सती दास आदि औरंगजेब के सामने पेश हुए, औरंगजेब ने भाई मती दास को बांध कर बड़े आरे से कटवा दिया। फिर भाई दबाला को खौलते पानी में उबाला। भाई सती दास को जिंदा जला दिया। इतने जुल्म देखकर भी गुरुजी अपने संकल्प पर अटल रहे। आखिर ११ नवंबर १६७५ को औरंगजेब ने चांदनी चौक में सरेआम गुरु तेग बहादुर का सर कलम करवा दिया।

मोहम्मद हामिद अंसारी (जन्म- १ अप्रैल)

मोहम्मद हामिद अंसारी भारत के वर्तमान उपराष्ट्रपति हैं। वे भारतीय अल्पसंख्यक आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष भी रहे हैं। वे एक शिक्षाविद तथा प्रमुख राजनेता हैं, एवं अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के उपकुलपति भी रह चुके हैं। वे ११ अगस्त २००७ को भारत के १३वें उपराष्ट्रपति चुने गये। इसके बाद मोहम्मद हामिद अंसारी भारत के १४वें उपराष्ट्रपति भी निर्वाचित हुए। उन्हें राष्ट्रपतिपद के चुनाव २०१२ की मतगणना के बाद ७ अगस्त, २०१२ को उपराष्ट्रपति निर्वाचित किया गया। भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (१९५२-१९६२, १९६२-१९६७) के बाद हामिद अंसारी दूसरे ऐसे व्यक्ति बने जो लगातार दूसरी बार इस पद निर्वाचित किए गए।

फौजा सिंह (जन्म- १ अप्रैल)

भारतीय मूल के धावक फौजा सिंह ने सबसे अधिक उम्र में टोरंटो मैराथन पूरा करके नया कीर्तिमान स्थापित करते हुए गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में अपना नाम दर्ज कराया है। फौजा सिंह को सौ साल के बुजुर्ग के बजाय जवान कहना ज्यादा उचित होगा। इस धावक ने दिखा दिया है कि अगर इच्छाशक्ति हो तो उम्र इरादों को नहीं बांध सकती। १०० वर्षीय फौजा सिंह ने १६ अक्टूबर, २०११ को हुई मैराथन दौड़ पूरी करने में आठ घंटे से ज्यादा का समय लिया। फौजा सिंह ने दौड़ को भले ही सबसे बाद में पार किया हो, लेकिन संकल्प के धनी इस बुजुर्ग की उपलब्धि को कम करके नहीं

आंका जा सकता।

डॉक्टर केशव हेडगेवार (जन्म- १ अप्रैल)

गुरु और गुरु दक्षिणा- संघ की कार्यशैली की विशेषता यह है कि संघ की जो भी आवश्यकताएं हैं वे संघ के स्वयंसेवक ही पूर्ण करेंगे। संस्था चलाने के लिये धन चाहिये ही। वह कौन देगा, अर्थात् स्वयंसेवक देंगे। संघ किसी से दान नहीं लेता। गुरुदक्षिणा तो प्रारंभ हुई। किन्तु गुरु कौन? डॉक्टर साहब ने बताया कि कोई व्यक्ति संघ में गुरु नहीं। भगवा ध्वज अपना गुरु। वह ध्वज त्याग का, पवित्रता का, तथा पराक्रम का प्रतीक है। इस पद्धति के कारण संघ में व्यक्तिमाहात्म्य नहीं।

डॉ. हेडगेवार के जीवन और दर्शन संघ के लिए नींव की पत्थर की तरह हैं, जिन्होंने राष्ट्र के वैभव को सर्वोपरि बना दिया, अहं के स्थान पर वयं को स्थापित किया।

सावरकर जी ने कहा, हमारा कार्य मूसलाधार वर्षा जैसा है, जो जलप्लावन उत्पन्न करके अंत में बह जाती है, किन्तु डॉ. हेडगेवार का कार्य किसान जैसा है, जो पानी को रोक समाज हित में लगाता है।

मानापमान की चिंता नहीं- राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का जन्मदाता या संस्थापक मैं न होकर, आप सब हैं, यह मैं भली भांति जानता हूं। आपके द्वारा स्थापित संघ का, आपकी इच्छानुसार, मैं एक दाई का कार्य कर रहा हूं। ऐसा करते समय किसी प्रकार के संकट अथवा मानापमान की मैं कतई चिंता नहीं करूंगा। जब भी प्रतीत हो कि मेरी अयोग्यता के कारण संघ की क्षति हो रही है तो आप मेरे स्थान पर दूसरे योग्य व्यक्ति को प्रतिष्ठित करने के लिए स्वतंत्र हैं।

राष्ट्रीय गुणों से युक्त और संपूर्ण दोषमुक्त विजय की आकांक्षा तथा विश्वास रखकर पुरूषार्थ करनेवाला, स्वाभिमानी, सुसंगठित समाज का निर्माण करना अधिक आवश्यक एवं मूलभूत कार्य है। यह सोचकर डॉक्टर साहब ने १९२५ में राष्टीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। प्रखर ध्येयनिष्ठा, असीम आत्मीयता और अपने आचरण के उदाहरण से युवकों को जोड़कर उन्हें गढ़ने का कार्य शाखा के माध्यम से शुरू हुआ।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का नाम आज सर्वत्र चर्चा में है। संघ कार्य का बढ़ता व्याप देखकर संघ विचार के विरोधी चिंतित होकर संघ का नाम बार बार उछाल रहे हैं। अपनी सारी शक्ति और युक्ति क्षीण होने के बजाय बढ़ रही है, यह उनकी चिंता और उद्वेग का कारण है। दूसरी ओर राष्ट्रहित में सोचनेवाली सज्जन शक्ति संघ का बढ़ता प्रभाव एवं व्याप देखकर भारत के भविष्य के बारे में अधिक आश्वस्त होकर संघ के साथ या उसके सहयोग से किसी न किसी सामाजिक कार्य में सक्रिय होने के लिए उत्सुक है, यह देखने में आ रहा है।

संघ का यह विशाल वटवृक्ष एक तरह नई आकाशीय ऊंचाइयाँ छूता दिखता है, वहीं उसकी अनेक जटाएं धरती में जाकर इस विशाल विस्तार के लिए रस पोषण करने हेतु नई-नई जमीन तलाश रही हैं, तैयार कर रही हैं। इस सुदृढ़ विस्तृत और विशाल वटवृक्ष का बीज कितना पुष्ट एवं शुद्ध होगा, इसकी कल्पना से ही मन रोमांचित हो उठता है। इस संघ वृक्ष के बीज संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवारजी का जन्म वर्ष प्रतिपदा पर है।

नागपुर में वर्ष प्रतिपदा के पावन दिन १ अप्रैल १८८९ को जन्मे केशव हेडगेवार जन्मजात देशभक्त थे। आजादी के आन्दोलन की आहट भी मध्य प्रांत के नागपुर में सुनाई नहीं दी थी और केशव के घर में राजकीय आन्दोलन की ऐसी कोई परंपरा भी नहीं थी, तब भी शिशु केशव के मन में अपने देश को गुलाम बनाने वाले अंग्रेज के बारे में गुस्सा

तथा स्वतंत्र होने की अदम्य इच्छा थी, ऐसा उनके बचपन के अनेक प्रसंगों से ध्यान में आता है। रानी विक्टोरिया के राज्यारोहण के हीरक महोत्सव के निमित्त विद्यालय में बाँटी मिठाई को केशव द्वारा (उम्र ८ साल) कूड़े में फेंक देना या जॉर्ज पंचम के भारत आगमन पर सरकारी भवनों पर की गई रोशनी और आतिशबाजी देखने जाने के लिए केशव (उम्र ९ साल) का मना करना, ऐसे कई उदाहरण हैं।

बंग विरोधी आन्दांलन का दमन करने हेतु वन्दे मातरम के प्रकट उद्घोष करने पर पाबन्दी लगानेवाले रिस्ले सर्क्युलर की धज्जियाँ उड़ाते हुए १९०७ में विद्यालय निरीक्षक के स्वागत में प्रत्येक कक्षा में वन्दे मातरम का उद्घोष करवा कर, उनका स्वागत करने की योजना केशव की ही थी। इसके माध्यम से अपनी निर्भयता, देशभक्ति तथा संगठन कुशलता का परिचय केशव ने सबको कराया। १९२० में नागपुर में होनेवाले काँग्रेस के अधिवेशन की व्यवस्था के प्रबंधन की जिम्मेदारी डॉक्टर साहब के पास थी। इस हेतु उन्होंने १२०० स्वयंसेवकों की भरती की थी। कांग्रेस की प्रस्ताव समिति के सामने उन्होंने दो प्रस्ताव रखे थे। भारत के लिए पूर्ण स्वतंत्रता और विश्व को पूंजीवाद के चंगुल से मुक्त करना, यह कांग्रेस का लक्ष्य होना चाहिए। पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव कांग्रेस ने संघ स्थापना के बाद १९३० में स्वीकार कर पारित किया, इसलिए डॉक्टर साहब ने संघ की सभी शाखाओं पर कांग्रेस का अभिनंदन करने का कार्यक्रम करने के लिए सूचना दी थी। इससे डॉक्टर साहब की दूरगामी एवं विश्वव्यापी दृष्टि का परिचय होता है।

व्यक्तिगत मतभिन्नता होने पर साम्राज्य विरोधी आंदोलन में सभी को साथ रहना चाहिए और यह आंदोलन कमजोर नहीं होने देना चाहिए, ऐसा वे सोचते थे। इस सोच के कारण ही असहयोग आंदोलन को कांग्रेस का समर्थन देने की महात्मा गांधी जी की घोषणा का विरोध होने के बावजूद उन्होंने अपनी नाराजगी खुलकर प्रकट नहीं की तथा गांधीजी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन में वे बेहिचक शामिल हुए। स्वतंत्रता प्राप्त करना किसी भी समाज के लिए अत्यंत आवश्यक एवं स्वाभिमान का विषय है। किंतु वह चिरस्थायी रहे तथा समाज में आनेवाले सभी संकटों का सफलतापूर्वक सामना कर सके, इसलिए राष्ट्रीय गुणों से युक्त और संपूर्ण दोषमुक्त विजय की आकांक्षा तथा विश्वास रखकर पुरुषार्थ करनेवाला, स्वाभिमानी, सुसंगठित समाज का निर्माण करना अधिक आवश्यक एवं मूलभूत कार्य है। यह सोच कर डॉक्टर साहब ने १९२५ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। प्रखर ध्येयनिष्ठा, असीम आत्मीयता और अपने आचरण के उदाहरण से युवकों को जोड़कर उन्हें गढ़ने का कार्य शाखा के माध्यम से शुरू हुआ।

शक्ति की उपासना, सामूहिकता, अनुशासन, देशभक्ति, राष्ट्रगौरव तथा सम्पूर्ण समाज के लिए आत्मीयता और समाज के लिए नि:स्वार्थ भाव से त्याग करने की प्रेरणा इन गुणों के निर्माण हेतु अनेक कार्यक्रमों की योजना शाखा नामक अमोघ तंत्र में विकसित होती है। सारे भारत में यात्रा करते हुए अथक परिश्रम से केवल १५ वर्ष में ही आसेतु हिमालय, संपूर्ण भारत में संघ कार्य का विस्तार करने में वे सफल हुए। उन्होंने संघ को संपूर्ण समाज का संगठन के नाते ही विकसित किया। संघकार्य को संपूर्ण स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर बनाते हुए उन्होंने बाहर से आर्थिक सहायता लेने की परंपरा नहीं रखी। इसके कारण ही आज ९ दशक बीतने के बाद भी सात-सात पीढ़ियों से संघकार्य चलने के बावजूद संघकार्य अपने मार्ग से न भटका, ना बँटा, ना रुका। फलानूमेया प्रारंभा: यानी वृक्ष का बीज बोया है उसकी प्रसिद्धि अथवा चर्चा न करते हुए वृक्ष के बड़ा होने पर उसके फलों का जब-जब आस्वाद लेंगे तब किसी ने वृक्ष बोया था यह बात अपने आप लोग

जान लेंगे, ऐसी उनकी सोच एवं कार्यपद्धति थी। इसलिए उनके निधन होने के पश्चात भी अनेक उतार चढ़ाव संघ के जीवन में अनेक उथल-पुथल होने के बावजूद संघ कार्य अपनी नियत दिशा में, निश्चित गति से लगातार बढ़ता हुआ, अपने प्रभाव से संपूर्ण समाज को स्पर्श और आलोकित करता हुआ आगे ही बढ़ रहा है। संघ की इस यशोगाथा में ही डॉक्टर साहब के समर्पित युगद्रष्टा, सफल संगठक और सार्थक जीवन की यशोगाथा है।

संघ की प्रार्थना

नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे, त्वया हिन्दुभूमे सुखं वर्धितोऽहम्।
महामङ्गले पुण्यभूमे त्वदर्थे, पतत्वेष कायो नमस्ते नमस्ते।
प्रभो शक्तिमान हिन्दुराष्ट्राङ्गभूता, इमे सादरं त्वां नमामो वयम्।
त्वदीयाय कार्याय बद्धा कटीयम्, शुभामाशिषं देहि तत्पूर्तये।
अजय्यां च विश्वस्य देहीश शक्तिम्, सुशीलं जगद् येन नम्रं भवेत्।
श्रुतं चैव यत् कण्टकाकीर्णमार्गम स्वयं स्वीकृतं नः सुगं कारयेत।
समुत्कर्ष निःश्रेयसस्यैकमुग्रम, परं साधनं नाम वीरव्रतम्।
तदन्तः स्फुरत्वक्षया ध्येयनिष्ठा, हृदन्तः प्रजागर्तु तीव्राऽनिशम्।
विजेत्री च नः संहता कार्यशक्तिर, विधायास्य धर्मस्य संरक्षणम्।
परं वैभवं नेतुमेतत् स्वराष्ट्रम, समर्था भवत्वाशिषा ते भृशम।

प्रार्थना का अर्थ

हे प्यार करनेवाली मातृभूमि। मैं तुझे सदैव नमस्कार करता हूं।
तूने मेरा सुख से पालन-पोषण किया है, हे महामंगलमयी पुण्यभूमि।
तेरे ही कार्य में मेरा यह शरीर अर्पण हो। मैं तुझे बारम्बार नमस्कार करता हूं।
हे सर्वशक्तिशाली परमेश्वर। हम हिन्दूराष्ट्र के अंगभूत तुझे आदर सहित प्रणाम करते हैं।
तेरे ही कार्य के लिए हमने अपनी कमर कसी है। उसकी पूर्ति के लिए हमें अपना शुभाशीर्वाद दें।
हे प्रभु, हमें ऐसी शक्ति दें, जिसे विश्व में कभी कोई चुनौती न दे सके,
ऐसा शुद्ध चारित्र्य दें जिसके समक्ष सम्पूर्ण विश्व नतमस्तक हो जाये
ऐसा ज्ञान दें कि स्वयं के द्वारा स्वीकृत किया गया यह कंटकाकीर्ण मार्ग सुगम हो जाये।
उग्र वीरव्रती की भावना हममें, उत्स्फूर्त होती रहे जो उच्चतम,
आध्यात्मिक सुख एवं महानतम ऐहिक समृद्धि प्राप्त करने का एकमेव श्रेष्ठतम साधन है।
तीव्र एवं अखंड ध्येयनिष्ठा हमारे अंतःकरणों में सदैव जागती रहे।
तेरी कृपा से हमारी यह विजयशालिनी संगठित कार्यशक्ति हमारे धर्म का संरक्षण कर
इस राष्ट्र को वैभव के उच्चतम शिखर पर पहुंचाने में समर्थ हो।

डॉ. हेडगेवार ने मूलमंत्र दिया था कि सामाजिक जीवन में कार्यकर्ता को पारदर्शी होना चाहिए। संघ शाखा में मिले एक

आना का भी हिसाब रखा गया था। डॉक्टर साहब का यह आदर्श उदाहरण सभी कार्यकर्ताओं को दीपस्तंभ की तरह मार्गदर्शन देता है।

आम आदमी के दिल में देश भक्ति की भावना जागृत करने एवं यह देश मेरा है, इस आत्मीय भाव को जगाने के लिए चरित्रवान व्यक्तित्व के निर्माण के उद्देश्य से वर्ष १९२५ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की नींव रखी गई। ९० वर्षों के पश्चात वह बीज आज वटवृक्ष का रूप धारण कर चुका है।

पिछले ७० वर्षों में कई सरकारें आईं और गईं, इन सरकारों ने समाज के हित एवं कल्याण का विचार किया या नहीं इसका मूल्यांकन वर्ष २०१४ के आम चुनाव में स्पष्ट हुआ। इस आम चुनाव में भारतीय जनता पार्टी को मिली भारी सफलता वास्तव में डॉ. हेडगेवार के विचारों की जीत है। क्योंकि भारतीय जनता पार्टी जिन सिद्धांतों पर चलती है वे पंडित दीनदयाल उपाध्याय के अंत्योदय सिद्धांत, जिसमें समाज के आम आदमी को केंद्र बिंदु मानकर चलने की परंपरा है, समाज के वंचित व्यक्ति तक लाभ पहुंचाना ही जिसका लक्ष्य है, पर आधारित है। पंडितजी संघ के स्वयंसेवक एवं प्रचारक थे। संघ के सिद्धांतों पर चलते हुए १९५२ से भारतीय जनसंघ ने कार्य शुरू किया। इस विचारधारा पर चलने से पार्टी को २०१४ के आम चुनाव, विधानसभा चुनाव एवं इसके बाद हुए महानगरपालिका एवं स्थानीय निकायों के चुनाव में बड़ी सफलता मिली। यह वास्तव में एक क्रांतिकारी घटना है, इसमें कों दो राय नहीं है, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात है विश्वास, आम आदमी के हित का, समाज के हित का। एकता की भावना को पूर्ण रूप से जागृत करने में संघ की विचारधारा का हाथ था।

भारतीय जनता पार्टी में अब संख्यात्मक वृद्धि दिखाई दे रही है। इस प्रकार की संख्यात्मक वृद्धि राजनीतिक जीवन में असंख्य बार देखी है, लेकिन संघ के विचारों से प्रेरित भारतीय जनता पार्टी को इस संख्यात्मक वृद्धि से संतुष्ट होने की आवश्यकता नहीं है। इस संख्यात्मक वृद्धि का दूसरसा पहलू गुणात्मकता भी है। इस दूसरे पहलू को संभालना नितांत आवश्यक है।

३ अप्रैल

कमलादेवी चट्टोपाध्याय (जन्म- ३ अप्रैल)

कमलादेवी चट्टोपाध्याय भारत की सजासुधारक, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, तथा भारतीय हस्तकला के क्षेत्र में नवजागरण लानेवाली गांधीवादी महिला थीं। उन्हें समाज सेवा के लिए १९५५ में पद्मभूषण और सामुदायिक नेतृत्व के लिए सन १९६६ में रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

सैम मानेकशॉ (जन्म- ३ अप्रैल)

सैम मानेकशॉ सेना के अध्यक्ष थे जिनके नेतृत्व में भारत ने सन १९७१ में हुए भारत-पाकिस्तान युद्ध में विजय प्राप्त किया था जिसके परिणामस्वरूप बांग्लादेश का जन्म हुआ था। अदम्य साहस और युद्धकौशल के लिए मशहूर, भारती सेना के इतिहास में स्वर्णिम दस्तखत करनेवाले सबसे ज्यादा चर्चित और कुशल सैनिक कमांडर पद्म भूषण, पद्म विभूषण सैम मानेकशॉ भारत के पहले फील्ड मार्शल थे। अपने ४० साल के सैनिक जीवन में उन्होंने दूसरे विश्व युद्ध के अलावा चीन

और पाकिस्तान के साथ हुए तीनों युद्धों में भी भाग लिया था। उनके दोस्त उन्हें प्यार से सैम बहादुर कहकर बुलाते थे।

निर्मल वर्मा (जन्म- ३ अप्रैल)

निर्मल वर्मा हिन्दी के आधुनिक साहित्यकारों में से एक थे। हिन्दी साहित्य में नई कहानी आंदोलन के प्रमुख ध्वजवाहक निर्मल वर्मा का कहानी में आधुनिकता का बोध लानेवाले कहानीकारों में अग्रणी स्थान है।

मन्नू भंडारी (जन्म- ३ अप्रैल)

मन्नू भंडारी हिन्दी की आधुनिक कहानीकार और उपन्यासकार हैं। मन्नू भंडारी ने कहानी और उपन्यास दोनों विधाओं में कलम चलाई है। राजेंद्र यादव के साथ लिखा गया उनका उपन्यास एक इंच मुस्कान पढ़े-लिखे और आधुनिकता पसंद लोगों की दुखभरी प्रेमगाथा है। विवाह टूटने की त्रासदी में घुट रहे एक बच्चे को, केंद्रीय विषय बनाकर लिखे गए उनके उपन्यास आपका बंटी को हिंदी के सफलतम उपन्यासों की कतार में रखा जाता है। आम आदमी की पीड़ा और दर्द की गहराई को उकेरनेवाले उनके उपन्यास महाभोज पर आधारित नाटक खूब लोकप्रिय हुआ था। इनकी यही सच है कृति पर आधारित रजनीगंधा फिल्म ने बॉक्स ऑफिस पर खूब धूम मचाई थी।

४ अप्रैल

माखनलाल चतुर्वेदी

माखनलाल चतुर्वेदी (४ अप्रैल १८८९-३० जनवरी १९६८) ने जब कानपुर में कदम रखा तो उनकी पहचान गणेश शंकर विद्यार्थी और उनके दैनिक प्रताप से हुई। गेय छंदों में सरस भावनाओं के उदात्त विचारों से परिपूर्ण चतुर्वेदी जी की नार्मदेय रचनाएं भेड़ाघाट की रंगीन संगमरमरी चट्टानों की तरह निरंतर प्रवाहित हो रहीं थी। बिटिया की विदा, प्रबल नगाधिराज जैसी रचनाओं में सामाजिकता और करुणा की भव्यता थी। विद्यार्थी जी ने चतुर्वेदी जी से कहा कि आप अपनी शक्ति का सदुपयोग कीजिए। आप कविता से अपने पिता पं. नंदलाल चतुर्वेदी का नाम उजागर करें और निधन के बाद भी जीवित रहें। जैसे सूर, तुलसी, मीरा, भूषण आदि का मरणोत्तर जीवन चल रहा है। बात कुछ अटपटी लगी तो माखनलाल जी ने पूछा कि वे क्या लिखें ? विद्यार्थी जी ने उनको राष्ट्रभक्ति में लिखने की प्रेरणा दी, लक्ष्य निर्धारित कर दिया।

माखनलाल चतुर्वेदी जी ने स्वयं को एक भारतीय आत्मा कहा और आजादी के दीवानों को राष्ट्र के लिए जीने की प्रेरणा दी। उन्होंने अपनी कविताओं को अस्त्र-शस्त्र बनाकर आजादी की लड़ाई लड़ी। गांधीजी का नेतृत्व स्वीकार किया। उनके सिद्धान्तों पर चले और निर्देशित कार्यक्रमों का अनुगमन करके जेल भी गए। खंडवा आकर उन्होंने प्रभा साहित्यक पत्रिका और सामाजिक चेतना के लिए कर्मवीर का संपादन-प्रकाशन किया। पं. रामनारायण उपाध्याय जैसे साहित्यकार उनके अच्छे मित्र थे। धूनी वाले बाबा की तपोभूमि उन्हें बहुत अच्छी लगी। निमाड़ी लोकजीवन में वे रच-पच गए। एक फूल की चाह, द्वार बलि का खोलकर जैसी उत्प्रेरक रचनाएं लिखीं। सागर विश्वविद्यालाय ने उनको डी.लिट की उपाधि दी तो भारत सरकार ने पद्म विभूषण अलंकरण, दिया। चतुर्वेदी जी की पद्य रचनाएं हैं- हिमकिरीटनी, हिमतरंगिनी, युगचरण, वेणु लो गूंजे धरा, और कृष्णार्जुन युद्धा ओज, उत्साह तथा साहस संचारित करती पं. माखनलाल चतुर्वेदी जी की रचनाएं यह

सिद्ध करती हैं कि बाल्यकाल की शिक्षा के बाद उन्होंने अपने स्वाध्याय से संस्कृत बंगला, गुजराती और मराठी भाषाएं सीखीं और इन भाषाओं के साहित्य पराग को लेकर उन्होंने अनथक कार्य किया और उसे लोकहित में वितरित भी किया।

माखनलाल चतुर्वेदी सरल भाषा और ओजपूर्ण भावनाओं के अनूठे हिन्दी रचनाकार थे। इन्होंने हिन्दी एवं संस्कृत का अध्ययन किया। ये कर्मवीर राष्ट्रीय दैनिक के संपादक थे। इन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। इनका उपनाम एक भारतीय आत्मा है। राष्ट्रीयता माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का कलेवर है तथा रहस्यात्मक प्रेम उसकी आत्मा है।

अज्ञेय, सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन (निधन- ४ अप्रैल)

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे। अज्ञोय को प्रतिभासम्पन्न कवि, शैलीकार, कथा-साहित्य को एक महत्वपूर्ण मोड़ देनेवाले कथाकार, ललित-निबन्धकार, सम्पादक और सफल अध्यापक के रूप में जाना जाता है।

हंसा मेहता (निधन- ४ अप्रैल)

हंसा मेहता एक समाजसेवी, स्वतंत्रता सेनानी और शिक्षाविद के रूप में भारत में काफी प्रसिद्ध रही है। इनके पिता मनुभाई मेहता बड़ौदा और बीकानेर रियासतों के दीवान थे। हंसा मेहता का विवाह देश के प्रमुख चिकित्सकों में से एक तथा गाँधी जी के निकट सहयोगी जीवराज मेहता जी के साथ हुआ था।

५ अप्रैल

श्री रहीमतुल्ला सयानी (जन्म- ५ अप्रैल)

१८४६ में जन्मे श्री रहीमतुल्ला सयानी ने शिक्षा प्राप्ति के लिए अनेक दुविधाएं पार की और एमए, एलएलबी तक शिक्षा प्राप्त की। बॉम्बे विश्वविद्यालय से फेलोशीप प्राप्त की एवं बाद में सिंडीकेट के सदस्य बने। १८७६ में बॉम्बे कॉर्पोरेशन के सदस्य बने एवं १८८८ में इसके अध्यक्ष रहे। कांग्रेस के शुरुआती दिनों के प्रखर नेता रहे। मुंबई में जनजागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंजुमन-ए-इस्लाम के मंत्री व १८८८ में ही बॉम्बे विधान परिषद के सदस्य निर्वाचित हुए। १८९६ में इंपीरियल विधान परिषद के सदस्य बने। १९०२ में निधन हुआ।

६ अप्रैल

मुमताज महल (जन्म- ६ अप्रैल)

मुमताज महल का वास्तविक नाम अर्जुमंद बानो बेगम था। मुमताज, नूरजहाँ के भाई आसफ खाँ की पुत्री जिसका निकाह मुगल सम्राट जहाँगीर के पुत्र खुर्रम (शाहजहाँ) से हुआ। १९ वर्ष की उम्र मे मुमताज का निकाह शाहजहां से १० मई, १६१२ को हुआ। मुमताज, शाहजहां की तीसरी पत्नी थी लेकिन शीघ्र ही वह उनकी सबसे पसंदीदा पत्नी बन गई। शाहजहां ने उसकी कब्र पर विश्वविख्यात स्मारक ताजमहल बनवाया।

प्यारेलाल खण्डेलवाल (जन्म- ६ अप्रैल)

प्यारेलाल खण्डेलवाल भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता और राज्यसभा के सांसद थे। वे आजीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक रहे थे। भारतीय जनसंघ और फिर उसके बाद भाजपा, विशेषकर मध्य प्रदेश में, के पार्टी संगठन को खड़ा करने में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। कुशाभाऊ ठाकरे के साथ खण्डेलवाल ने भी कार्यकर्ताओं को अंतिम समय तक संयम, धैर्य और सहिष्णुता की सीख देते हुए विचारधारा पर दृढ़ता से खड़े रहने का पाठ पढ़ाया था।

चौधरी देवी लाल (निधन- ६ अप्रैल)

चौधरी देवी लाल भारत के पूर्व उप प्रधानमंत्री एवं भारतीय राजनीतिक के पुरोधा, किसानों के मसीहा, महान स्वतंत्रता सेनानी, हरियाणा के जन्मदाता, राष्ट्रीय राजनीति के भीष्म पितामह, करोड़ों भारतीयों के जननायक थे। आज भी चौधरी देवी लाल का महज नाम-मात्र लेने से ही, हजारों की संख्या में बुजुर्ग एवं नौजवान उद्वेलित हो उठते हैं। उन्होंने आजीवन किसान किसान, मुजारों, मजदूरों, गरीब एवं सर्वहारा वर्ग के लोगों के लिए लड़ाई लड़ी और कभी भी पराजित नहीं हुए। आज उनका कद भारतीय राजनीति में बहुत ऊंचा है। उन्हें लोग भारतीय राजनीति के अपराजित नायक के रूप में जानते हैं।

७ अप्रैल

रवि शंकर (जन्म- ७ अप्रैल)

रविशंकर विश्व में भारतीय शास्त्रीय संगीत की उत्कृष्टता के सबसे बड़े उद्घोषक थे। एक सितार वादक के रूप में उन्होंने ख्याति अर्जित की। रवि शंकर और सितार मानो एक दूसरे के लिए ही बने हों। वह इस सदी के सबसे महान संगीतज्ञों में गिने जाते हैं। रविशंकर को विदेशों में बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई। विदेशों में वे अत्यन्त लोकप्रिय एवं सफल रहे। रविशंकर के संगीत में एक प्रकार की आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त होती हे।

जानकी वल्लभ शास्त्री (निधन- ७ अप्रैल)

जानकी वल्लभ शास्त्री प्रसिद्ध कवि थे। जानकी वल्लभ शास्त्री को उत्तर प्रदेश सरकार ने भारत भारती पुरस्कार से सम्मानित भी किया है उन थोड़े-से कवियों में रहे हैं, जिन्हें हिंदी कविता के पाठकों से बहुत मान-सम्मान मिला है। आचार्य का काव्य संसार में बहुत ही विविध और व्यापक है। प्रारंभ में उन्होंने संस्कृत में कवितएं लिखीं। फिर महाकवि निराला की प्रेरणा से हिंदी में आए।

८ अप्रैल

कुमार गंधर्व (जन्म- ८ अप्रैल)

पंडित कुमार गंधर्व भारत के सुप्रसिद्ध शास्त्रीय गायक थे। कालिदास के बाद कुमार गन्धर्व मालवा के सबसे दिव्य सांस्कृतिक विभूति हैं। लोक संगीत को शास्त्रीय से भी ऊपर ले जानेवाले कुमार जी ने कबीर को जैसा गाया वैसा कोई नहीं गा सकेगा।

हेमचंद्र रायचौधरी (जन्म- ८ अप्रैल)

हेमचंद्र रायचौधरी एक भारतीय इतिहासकार थे, जो भारत प्राचीन इतिहास पर अपने ज्ञान के लिए जाने जाते हैं।

९ अप्रैल

राहुल सांकृत्यायन (जन्म- ९ अप्रैल)

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन को हिन्दी यात्रा साहित्य का जनक माना जाता है। वे एक प्रतिष्ठित बहुभाषाविद् थे और २० वीं सदी के पूर्वार्द्ध में उन्होंने यात्रा वृतांत तथा विश्व-दर्शन के क्षेत्र में साहित्यिक योगदान किए। बौद्ध धर्म पर उनका शोध हिन्दी साहित्य में युगान्तरकारी माना जाता है, जिसके लिए उन्होंने तिब्बत से लेकर श्रीलंका तक भ्रमण किया था।

परिस्थितियों के अनुसार जिस विषय के सम्पर्क में वे आये, उसकी पूरी जानकारी प्राप्त करना उनका व्यक्तिगत धर्म बन गया। वाराणसी में जब संस्कृत से अनुराग हुआ, तो सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य एवं दर्शनादि को पढ़ लिया। कलकत्ता में अंग्रेजी से पाला पड़ा तो कुछ समय में अंग्रेजी के ज्ञाता बन गये। आर्य समाज का जब प्रभाव पड़ा तो वेदों को मथ डाला। बौद्ध धर्म की ओर जब झुकाव हुआ तो पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, तिब्बती, चीनी, जापानी, एवं सिंहली भाषाओं की जानकारी लेते हुए सम्पूर्ण बौद्ध ग्रंथों का मनन किया और सर्वश्रेष्ठ उपाधि त्रिपिटिकाचार्य की पदवी पायी। साम्यवाद के क्रोड़ में जब राहुल जी गये तो कार्ल मार्क्स, लेनिन तथा स्तालिन के दर्शन से पूर्ण परिचय हुआ। प्रकारान्तर से राहुल जी इतिहास, पुरातत्त्व, स्थापत्य, भाषाशास्त्र एवं राजनीति शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे।

शरन रानी (जन्म- ९ अप्रैल)

शरन रानी हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की विद्वान और सुप्रसिद्ध सरोद वादक थीं। संगीत के प्रति उनके समर्पण के कारण ही उन्हें कई पुरस्कारों व सम्मानों से सम्मानित किया गया था। शरन रानी ने १९९२ में सरोद के उद्भव, इतिहास और विकास पर एक किताब भी लिखी थी। उन्हें सरकार की ओर ये राष्ट्रीय कलाकार, साहित्य कला परिषद पुरस्कार और राजीव गांधी राष्ट्रीय उत्कृष्टता पुरस्कार से नवाजा गया था। वर्ष १९९८ में उनकी वीथिका से चार वाद्य लेकर डाक टिकट भी जारी किए गए थे।

वे प्रथम महिला थीं, जिन्होंने सरोद जैसे मर्दाना साज को संपूर्ण ऊंचाई प्रदान की। इसी कारण उनके प्रशंसक उन्हें सरोद रानी के नाम से पुकारते थे। शरन रानी का देहांत उनके अस्सीवें जन्मदिन से एक दिन पहले ही हो गया। शरन रानी २०वीं सदी की म्यूजिक लीजेंड मानी जाती हैं। पद्मभूषण और पद्मश्री से नवाजी जा चुकीं शरन रानी को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारत की सांस्कृतिक राजदूत कह कर सम्मानित किया था। उनका निधन ८ अप्रैल को हुआ।

१० अप्रैल

घनश्याम दास बिड़ला (जन्म- १० अप्रैल)

घनश्याम दास बिड़ला भारत के अग्रणी औद्योगिक समूह बी.के.के.एम. बिड़ला समूह के संस्थापक थे, जिसकी परिसंपत्तियाँ १९५ अरब रूपये से अधिक है। ये स्वाधीनता सेनानी भी थे। इस समूह का मुख्य व्यवसाय कपड़ा, विस्कट

फिलामेंट यार्न, सीमेंट, रासायनिक पदार्थ, बिजली, उर्वरक, दूरसंचार, वित्तीय सेवा और एल्युमिनियम क्षेत्र में है, जबकि अग्रणी कंपनियाँ ग्रासिम इंडस्ट्रीज और सेंचुरी टेक्सटाइल हैं। ये गांधीजी के मित्र, सलाहकार, प्रशंसक एवं सहयोगी थे। भारत सरकार ने सन् १९५७ में उन्हें पद्म विभूषण की उपाधि से सम्मानित किया।

धन सिंह थापा (जन्म- १० अप्रैल)

मेजर धन सिंह थापा परमवीर चक्र से सम्मानित नेपाली मूल के भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९६२ में मिला। १९६२ के भारत-चीन युद्ध में जिन चार भारतीय बहादुरों को परमवीर चक्र प्रदान किया गया, उनमें से केवल एक वीर उस युद्ध को झेलकर जीवित रहा उस वीर का नाम धन सिंह थापा था जो १/८ गोरखा राइफल्स से, बतौर मेजर इस लड़ाई में शामिल हुआ था। धन सिंह थापा भले ही चीन की बर्बर सेना का सामना करने के बाद आज भी जीवित रहे, लेकिन युद्ध के बाद चीन के पास बन्दी के रूप में जो यातना उन्होंने झेली उसकी स्मृति भर भी थरथरा देनेवाली है।

किशोरी अमोनकर (जन्म- १० अप्रैल)

किशोरी अमोनकर हिंदुस्तानी शास्त्रीय परंपरा की प्रमुख गायिकाओं में से एक और जयपुर घराने की अग्रणी गायिका हैं। हिंदुस्तानी संगीत में गायिकाएं तो एक से एक हुई लेकिन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जो ख्याति किशोरी अमोनकर को मिली, वह किसी और को नसीब नहीं हुई। कोकिलकंठी किशोरी अमोनकर की सुरीली आवाज से देश विदेश के लाखों संगीत रसिक मंत्रमुग्ध हैं। ख्याल, मीरा के भजन, मांड, राग भैरवी की बंदिश बाबुल मोरा नैहर छूटल जाए पर उनका गायन तो जैसे संगीत रसिकों के दिल में नक्श सा हो गया है। इस समय किशोरी की गायकी के चहेते सारे देश में बड़ी संख्या में है। गायन के अलावा वे एक श्रेष्ठ गुरु भी हैं। उनके शिष्यों में मानिक भिड़े, अश्विनी देशपांडे भिड़े, आरती अंकलेकर जैसी जानी मानी गायिकाएं भी हैं।

नाजिश प्रतापगढ़ी (निधन- १० अप्रैल)

नाजिश प्रतापगढ़ी उर्दू के सुप्रसिद्ध शायर व कवि थे। राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने उन्हें गालिब सम्मान से नवाजा। यह और बात है कि जब उन्हें उर्दू शायरी के सर्वोच्च सम्मान से नवाजा गया तो उसे ग्रहण करने के लिए वे जिंदा नहीं थे। नाजिम साहब गालिब पुरस्कार और मीर पुरस्कार जैसे उर्दू साहित्य के सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित हैं।

११ अप्रैल

ज्योतिबा फुले (जन्म - ११ अप्रैल)

ज्योतिराव गोविंदराव फुले महाराष्ट्र में सर्वप्रथम अछूतोद्धार और महिला शिक्षा का काम आरंभ करनेवाले महान भारतीय विचारक, समाज सेवी, लेखक, दार्शनिक तथा क्रान्तिकारी कार्यकर्ता थे।

महात्मा ज्योतिबा फुले १८९० में इस दुनिया से विदा हुए थे। उनका जन्म ११ अप्रैल १८२७ को पुणे में हुआ। उनके पिता का नाम गोविंदराव तथा माता का नाम विमलाबाई था। एक साल की उम्र में ही फुले की माता का देहांत हो गया। पढ़ाने की ललक से पिता ने उन्हें पाठशाला में भेजा था मगर सवर्णों ने उन्हें स्कूल से वापस बुलाने पर मजबूर कर दिया।

अब ज्योतिबा अपने पिता के साथ माली का कार्य करने लगे। काम के बाद वे आसपास पड़ोस के लोगों से देश दुनिया की बातें करते और किताबें पढ़ते थे। सन १८४० में तेरह साल की छोटी सी उम्र में ही ज्योतिबा का विवाह नौ वर्षीय सावित्रीबाई से हुआ। ज्योतिबा का नाम स्काटिश मिशन स्कूल में लिखा दिया गया। वहां पर उन्होंने थामसपेन की किताब राइट्स ऑफ मेन एवं दी एज ऑफ रीजन पढ़ी, जिसका उन पर काफी असर पड़ा। स्कूल के अपने एक ब्राह्मण मित्र की शादी में एक बार ज्योतिबा गए थे, तो उन्हें वहां पर अपमानित होना पड़ा था। उन्होंने इन रूढ़ियों के प्रतिकार का विचार पक्का किया। १८४८ में उन्होंने अछूतों के लिए पहला स्कूल पुणे में खोला। यह भारत के तीन हजार साल के इतिहास में ऐसा पहला स्कूल था जो दलितों के लिए था।

विष्णु प्रभाकर (निधन- ११ अप्रैल)

विष्णु प्रभाकर अपने साहित्य में भारतीय वाग्मिता और अस्मिता को व्यंजित करने के लिये प्रसिद्ध रहे है। विष्णु प्रभाकर जी ने कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, निबंध, एकांकी, यात्रा-वृत्तांत और कविता आदि प्रमुख विधाओं में अपनी बहुमूल्य रचनाएं की हैं। प्रभाकर जी ने आकाशवाणी, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाओं तथा प्रकाशन संबंधी मीडिया के प्रत्येक क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की थी। देश-विदेश की अनेक यात्राएँ करनेवाले विष्णुजी जीवन-पर्यंत पूर्णकालिक मसिजीवी रचनाकार के रूप में साहित्य साधना में लीन रहे थे।

कस्तूरबा गांधी (जन्म- ११ अप्रैल)

कस्तूरबा गांधी महात्मा गांधी की पत्नी जो भारत में बा के नाम से विख्यात हैं। कस्तूरबा गांधी, महात्मा गांधी के स्वतंत्रता कुमुक की पहली महिला प्रतिभागी थीं। कस्तूरबा गांधी का अपना एक दृष्टिकोण था, उन्हें आजादी का मोल और महिलाओं में शिक्षा की महत्ता का पूरा भान था। स्वतंत्र भारत के उज्ज्वल भविष्य की कल्पना उन्होंने भी की थी। उन्होंने हर कदम पर अपने पति मोहनदास करमचंद गांधी का साथ निभाया था। बा जैसा आत्मबलिदान का प्रतीक व्यक्तित्व उनके साथ नहीं होता तो गांधी जी के सारे अहिसक प्रयास इतने कारगर नहीं होते। कस्तूरबा ने अपने नेतृत्व के गुणों का परिचय भी दिया था। जब जब गांधी जी जेल गए थे, वो स्वाधीनता संग्राम के सभी अहिंसक प्रयासों में अग्रणी बनी रहीं।

दुनिया में कस्तूर को खुशबू के लिए जाना जाता है और उसका नाम इसी पर रखा गया था। वह रईस कपाड़िया परिवार में सबसे छोटी थी, जो विदेशों में कपड़े, अनाज और कपास के कारोबार का स्थापित घराना था। बाद में दुनिया में उन्हें कस्तूरबा के नाम से जाना गया। वह एक ऐसे व्यक्ति की पत्नी बनीं, जिसे शांति के दूत के रूप में दुनिया भर में सम्मान प्राप्त हुआ। कस्तूरबा की शादी बचपन में ही मोहनदास से हो गयी थी। मोहनदास स्वयं धर्मी और दबंग पति थे।

पोरबंदर में मोहनदास के साथ अपने अनुभवों को लिखा था। उनका जन्म मोहनदास से ६ माह पहले ११ अप्रैल १८६९ को हुआ था, जबकि मोहनदास का जन्म २ अक्तूबर १८६९ को हुआ था। उन्होंने अफ्रीका के दिनों और मोहनदास के एक जन नेता के रूप में उभरने के अनुभव भी बताये हैं। कस्तूरबा की यह डायरी पोरबंदर से कई सालों का सफर करती है। इसमें मोध बनिया समुदाय की ओर से गांधी की पढ़ने के लिए देश से बाहर जाने की योजना का विरोध और उससे भी ज्यादा दक्षिण अफ्रीका में गांधी के उपक्रमों के विरोध के बारे में अनुभव कहे गये हैं।

जामिनी रॉय (जन्म- ११ अप्रैल)

जामिनी रॉय भारत के प्रसिद्ध चित्रकारों में से एक थे। वे २० वीं शताब्दी की भारतीय कला के प्रारंभिक और अति महत्वपूर्ण आधुनिकतावादी उन कलाकारों में से थे, जिन्होंने अपने समय की कला परम्पराओं से अलग एक नई शैली स्थापित करने में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई। लगभग ६० वर्षों के उनके कला-कार्य की अवधि में कई महत्वपूर्ण बदलाव आए, जिससे दृश्य भाषा की प्रस्तुति में उनकी प्रतिभा का पता चलता है। जामिनी रॉय अपनी निर्भीक रचनाओं में चटकीली रेखाओं, सपाट रंगों, जिसकी प्रेरणा परंपरागत कोलकता से मिली, के लिए विख्यात चित्रकार थे।

फणीश्वरनाथ रेणु (निधन- ११ अप्रैल)

फणीश्वरनाथ रेणु एक सुप्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार थे। वे सिर्फ सृजनात्मक व्यक्तित्व के स्वामी ही नहीं बल्कि एक सजग नागरिक व देशभक्त भी थे। १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में उन्होने सक्रिय रूप से योगदान दिया। इस प्रकार एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उन्होंने अपनी पहचान बनाई। इस चेतना का वे जीवनपर्यंत पालन करते रहे और सत्ता के दमन और शोषण के विरुद्ध आजीवन संघर्षरत रहे। १९५४ में उनका पहला उपन्यास मैला आंचल प्रकाशित हुआ। मैला आंचल उपन्यास को इतनी ख्याति मिली कि रातों रात उन्हें शीर्षस्थ हिन्दी लेखकों में गिना जाने लगा।

अनंत लक्ष्मण कन्हेरे (शहीद- ११ अप्रैल)

अनंत लक्ष्मण कन्हेरे को देश की आजादी के लिए शहीद होनेवाले युवाओं में गिना जाता है। १९०९ ई. में सरकार के खिलाफ एक लेख लिखने के कारण गणेश सावरकर को आजन्म कारावास की सजा हुई। अंग्रेज सरकार के इस फैसले से क्रांतिकारियों में उत्तेजना पैदा हो गई। प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर अनंत लक्ष्मण कन्हेरे ने २१ दिसम्बर, १९०९ ई. को नासिक के जिला अधिकारी जैक्सन को गोली मार दी। बाद में कन्हेरे पकड़ लिये गए और १९ वर्ष की अवस्था में ११ अप्रैल, १९१० ई. को उन्हें फांसी दे दी गई।

१२ अप्रैल

राखालदास बंधोपाध्याय (जन्म- १२ अप्रैल)

राखालदास बंधोपाध्याय भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार और पुरातत्ववेत्ता थे। ये भारतीय पुराविदों के उस समूह में से एक व्यक्ति थे, जिसमें से अधिकांश ने २०वीं शती के प्रथम चरण में तत्कालीन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के महानिदेशक जॉन मार्शल के सहयोगी के रूप में पुरातात्त्विक उत्खनन, शोध तथा स्मारकों के संरक्षण में विशेष ख्याति प्राप्त की थी।

वीनू मांकड़ (जन्म- १२ अप्रैल)

वीनू मांकड़ भारत के महान क्रिकेट खिलाड़ियों में से एक हैं। इनका पूरा नाम मूलवंतराय हिम्मतलाल मांकड़ था। इनका नाम विश्व के महान ऑलराउंडरों में गिना जाता है। वीनू मांकड़ ने भारत के लिए ४४ टेस्ट मैचों में ३१.४७ की औसत से पांच टेस्ट शतक और ६ अर्द्धशतक सहित २१०९ रन बनाए। इनका शीर्ष स्कोर २३१ रहा और साथ ही साथ गेंदबाजी में ३२.३२ की औसत से १६२ विकेट भी लिये। इसके अतिरिक्त इन्होंने २३३ प्रथम श्रेणी मैचों में ३४.७० की

औसत से २६ शतक और ५२ अर्द्धशतक सहित ११५९२ रन और गेंदबाजी में २४.५६३ के शानदार औसत से ७८२ विकेट भी लिए। १९५६ में पंकज राय के साथ मिलकर उन्होंने ४१३ रन की ओपनिंग साझेदारी की। यह रेकॉर्ड ५२ साल बाद टूटा। इनके बेटे अशोक मांकड़ ने भी भारत क्रिकेट टीम का प्रतिनिधित्व किया।

सुमित्रा महाजन (जन्म- १२ अप्रैल)

सुमित्रा महाजन भारतीय जनता पार्टी की प्रसिद्ध महिला राजनीतियों में से एक हैं। वर्तमान में उन्हें १६ वीं लोकसभा का अध्यक्ष बनाया गया है। अपने कार्यकर्ताओं के बीच वे सुमित्रा ताई के नाम से प्रसिद्ध हैं। वर्ष १९८२-१९८५ में पहली बार सुमित्रा महाजन इंदौर नगर निगम में उपमहापौर बनी थीं। वे १९८९ से लगातार लोकसभा सांसद सुमित्रा महाजन नौवीं, दसवीं, ग्यारहवीं, बारहवीं, तेरहवीं, चौदहवीं, पंद्रहवीं और अब सोलहवीं लोकसभा की भी सदस्य हैं।

सफदर हाशमी (जन्म- १२ अप्रैल)

सफदर हाशमी एक मार्क्सवादी नाटककार, कलाकार, निर्देशक, गीतकार और कलाविद थे। सफदर हाशमी को नुक्कड़ नाटक के साथ जुड़ाव के लिए जाना जाता है। सफदर हाशमी जन नाट्य मंच और दिल्ली में स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एस.एफ.आई.) के संस्थापक सदस्य थे। जन नाट्य मंच की नींव भारतीय जन नाट्य संघ (इप्टा) से अलग हटकर १९७३ में रखी गई थीं।

१३ अप्रैल

बाबू गुलाबराय (निधन- १३ अप्रैल)

बाबू गुलाबराय भारत के प्रसिद्ध साहित्यकार, निबंधकार और व्यंग्यकार थे। वे हमेशा सरल साहित्य को प्रमुखता देते थे, जिससे हिन्दी भाषा जन-जन तक पहुंच सके। गुलाबराय जी ने दो प्रकार की रचनाएँ की हैं- दार्शनिक और साहित्यिक। उनकी दार्शनिक रचनाएँ उनके गंभीर अध्ययन और चिंतन का परिणाम हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में शुद्ध भाषा तथा परिष्कृत खड़ी बोली का प्रयोग अधिकता से किया है। आधुनिक काल के निबंध लेखकों और आलोचकों में बाबू गुलाबराय का स्थान बहुत ऊँचा है। उन्होंने आलोचना और निबंध दोनों ही क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा और मौलिकता का परिचय दिया है।

दत्ताजी ताम्हणे (जन्म- १३ अप्रैल)

अंग्रेजों के पुर्तगालियों के हर बड़े कारागार में बंद रहा हूं। उनसे भी ज्यादा दिन अपनों इमरजेंसी के दौरान) की जेल में काटे हैं। आंदोलन किए हैं, लाठियां खाई हैं। दत्ताजी ताम्हणे अब बोर्डी के आचार्य भिसे के साथ जेल की अंधी कोठरी में बिताई रात का वाकया बताने लगे हैं, सुबह उठा तो पूरा शरीर सफेद, जैसे खून का नामो निशान नहीं।

भारत छोड़ो ही नहीं, साइमन कमीशन के विरोध, नमक सत्याग्रह और इसके पहले व बाद भी दत्ताजी कई बार (कुल सात साल) जेलों में आए गए। साइमन वापस जाओ की तख्ती कंधों पर ताने जोर जोर से नारे लगाने, वडाला के नमक के खेतों में बापू के साथ नमक बनाने के दौरान लाठी खाकर गिरने, गोवा मुक्त आंदोलन में हवालात की रोटियां खाने जैसी

यादें उनकी स्मृतियों के फलक पर वैसी ही ताजा हैं, जैसी महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू से मुलाकातों की यादें।

दुनिया में दत्ताजी के सगे कम ही हैं, पर जो हैं वे सगों से ज्यादा। इस अविवाहित स्वतंत्रता सेनानी का निजी परिवार है मुलुंड (पूर्व) की अमृत सोसायटी में और बाकी परिवार सारी दुनिया। छोटे बच्चों की संगत उन्हें रुचती है और क्लास फोर के कर्मचारियों को खिला-पिलाकर व उपहार देकर आत्मा तृप्त हो जाती है। रिलायंस में अफसर उनके संबंधी राहुल नाचने ने बताया, अभी तबीयत थोड़ी खराब है। वे जल्दी थकने और थोड़ी देर से उठने लगे हैं, पर बाकी कार्यक्रमों में कोई खलल नहीं।

सुबह-शाम चाय, सही वक्त व हर चीज खाना और चैन की नींद सो जाना- आज भी दत्ताजी को किसी टेक या सहारे की जरूरत नहीं। घर में मदद के लिए बाई है, पर भाई काका को अपने सारे काम खुद करना पसंद है, राहुल की लैक्चरर पत्नी वृषाली जब यह बता रही थी, तो दत्ताजी ने हमारी पीठ सहलाई और हौले से बोले, मेरी अभिभावक है। भाई काका इज वर्सेटाइल, फुल ऑफ लाइफ ऐंड मच अहेड ऑफ टाइम, वृषाली ने चकित कर देनेवाली हमारी जानकारियों में और इजाफा किया, भाई काका नई बातों व परिवर्तन के हामी हैं, सामान्य बुजुर्गों की तरह अतीतजीवी नहीं। सुबह व्यायाम, २६० वर्ष पुराने घर के मंदिर में पूजा, दोपहर १ बजे लंच, २ बजे झपकी और दोपहर को सुडोकू। नींद गहरी और इस उम्र में भी उन्हें डायबीटीज, रक्तचाप या दिल की बीमारी नहीं है, न ही है दवाइयां गटकने की मजबूरी। याददाश्त अच्छी और मराठी, अंग्रेजी में पढ़ने की पुरानी आदत बनी हुई है। महाराष्ट्र विधान मंडल और राष्ट्रपति भवन में सम्मानित यह शतकवीर छोटी सी इस मुलाकात में हमें मराठी में लिखी अपनी नई कविता सुनाना नहीं भूला, न ही खुद पर लिखी किताब भेंट करना। पिछले १३ अप्रैल को उनके १००वें जन्मदिन पर केंद्रीय कृषि मंत्री शरद पवार उन्हें बधाई देने घर आए, तो उन्हें दत्ताजी ने १०१वीं वर्षगांठ के लिए अग्रिम न्योता दिया। वजह? उनका यह अटूट विश्वास कि विधाता ने उनकी उम्र १०५ वर्ष लिखी है।

वर्धा आश्रम में गांधीजी ने मुझे उठाऊ लैट्रिन साफ करने का काम दिया। जैसे ही लैट्रिन का पॉट सिर पर रखा मन का सारा अहंकार खत्म हो गया।

संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के दिनों में जवाहरलाल नेहरू से मिलने दिल्ली गया था। देखा, टेबल से एक पिन नीचे गिर गई। पंडितजी सारा काम छोड़ तुरंत नीचे झुके, पिन उठाई और कुशन में खोंस दी। मैंने डेलिगेशन को बता दिया, हमारा प्रधानमंत्री तो एक पिन तक की इतनी फिक्र रखता है, फिर चिंता क्यों?

१४ अप्रैल

डॉ. बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर

डॉक्टर भीमराव रामजी आंबेडकर विधिवेत्ता थे। वे एक बहुजन राजनीतिक नेता और एक बौद्ध पुनरूत्थानवादी होने के साथ साथ, भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार भी थे। उन्हें बाबासाहेब के नाम से भी जाना जाता है। इनका जन्म एक गरीब अस्पृश्य परिवार में हुआ था। बाबासाहेब आंबेडकर ने अपना सारा जीवन हिंदू धर्म की चतुवर्ण प्रणाली और भारतीय समाज में सर्वत्र व्याप्त जाति व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष में बिता दिया। हिंदू धर्म में मानव समाज को चार वर्णों में वर्गीकृत

किया है। उन्हें बौद्ध महाशक्तियों के दलित आंदोलन को प्रारंभ करने का श्रेय भी जाता है। बाबासाहेब आंबेडकर को भारत रत्न से भी सम्मानित किया गया है जो भारत का सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार है। कई सामाजिक और वित्तीय बाधाएं पार कर, आंबेडकर उन कुछ पहले अछूतों में से एक बन गये जिन्होंने भारत में कॉलेज की शिक्षा प्राप्त की। आंबेडकर ने कानून की उपाधि प्राप्त करने के साथ ही विधि, अर्थशास्त्र व राजनीति विज्ञान में अपने अध्ययन और अनुसंधान के कारण कोलंबिया विश्वविद्यालय और लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स से कई डॉक्टरेट उपाधियां भी अर्जित कीं। आंबेडकर वापस अपने देश एक प्रसिद्ध विद्वान के रूप में लौट आए और इसके बाद कुछ साल तक उन्होने वकालत का अभ्यास किया। इसके बाद उन्होंने कुछ पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जिनके द्वारा उन्होंने भारतीय अस्पृश्यों के राजनैतिक अधिकारी और सामाजिक स्वतंत्रता की वकालत की। डॉक्टर आंबेडकर को भारतीय बौद्ध भिक्क ने बोधिसत्व की उपाधि प्रदान की है।

प्रारंभिक जीवन- युवा आंबेडकर भीमराव रामजी आंबेडकर का जन्म ब्रिटिशों द्वारा केंद्रीय प्रांत (अब मध्य प्रदेश) में स्थापित नगर व सैन्य छावनी मऊ में हुआ था। उनका परिवार मराठी था और वो अंबावडे नगर जो आधुनिक महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में है, से संबंधित था। हिंदू महार जाति से संबंध रखते थे, जो अछूत कहे जाते थे और उनके साथ सामाजिक और आर्थिक रूप से गहरा भेदभाव किया जाता था। आंबेडकर के पूर्वज लंबे समय तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में कार्यरत थे और उनके पिता भारतीय सेना की मऊ छावनी में सेवा में थे और यहां काम करते हुये वो सूबेदार के पद तक पहुंचे थे। उन्होंने मराठी और अंग्रेजी में औपचारिक शिक्षा की उपाधि की थी। उन्होंने अपने बच्चों को स्कूल में पढ़ने और कड़ी मेहनत करने के लिये हमेशा प्रोत्साहित किया। वीर पंथ से संबंधित इस परिवार मे, रामजी सकपाल, अपने बच्चों को हिंदू ग्रंथों को पढ़ने के लिए, विशेष रूप से महाभारत और रामायण प्रोत्साहित किया करते थे। उन्होंने सेना मे अपनी हैसियत का उपयोग अपने बच्चों को सरकारी स्कूल से शिक्षा दिलाने में किया, क्योंकि अपनी जाति के कारण उन्हें इसके लिये सामाजिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा था। स्कूली पढ़ाई में सक्षम होने के बावजूद आंबेडकर और अन्य अस्पृश्य बच्चों को विद्यालय में अलग बिठाया जाता था और अध्यापकों द्वारा ना तो ध्यान ही दिया जाता था ना ही कोई सहायता दी जाती थी। उनको कक्षा के अन्दर बैठने की अनुमति नहीं थी साथ ही प्यास लगने पर कोई ऊँची जाति का व्यक्ति ऊंचाई से उनके हाथों पर पानी डालता था क्योंकि उनको ना तो पानी ना ही पानी का पात्र को स्पर्श करने की अनुमति थी क्योंकि लोगों के मुताबिक ऐसा करने से पात्र और पानी दोनों अपवित्र हो जाते थे। आमतौर पर यह काम स्कूल के चपरासी द्वारा किया जाता था जिसकी अनुपस्थिति में बालक आंबेडकर को बिना पानी के ही रहना पड़ता था। रामजी सकपाल सेवानिवृत्त हो जाने के बाद सपरिवार सातारा चले गए और इसके दो साल बाद आंबेडकर की मां की मृत्यु हो गई। बच्चों की देखभाल उनकी चाची ने कठिन परिस्थितियों में रहते हुये की। अपने भाइयों और बहनों में केवल आंबेडकर ही स्कूल की परीक्षा में सफल हुए और इसके बाद बड़े स्कूल में जाने में सफल हुये। अपने एक देशस्त ब्राह्मण शिक्षक महादेव आंबेडकर जो उनसे विशेष स्नेह रखते थे के कहने पर आंबेडकर ने अपने नाम से सकपाल हटाकर आंबेडकर जोड़ लिया जो उनके गांव के नाम अंबावडे पर आधारित था।

गायकवाड शासक ने संयुक्त राज्य अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय मे जाकर अध्ययन के लिये आंबेडकर का चयन किया गया साथ ही इसके लिये एक डॉलर प्रति मास की छात्रवृत्ति भी प्रदान की। न्यूयॉर्क शहर में आने के बाद,

आंबेडकर को राजनीति विज्ञान विभाग के स्नातक अध्ययन कार्यक्रम में प्रवेश दे दिया गया। शयनशाला मे कुछ दिन रहने के बाद, वे भारतीय छात्रों द्वारा चलाये जा रहे एक आवास क्लब में रहने चले गए और उन्होंने अपने एक पारसी मित्र नवल भातेना के साथ एक कमरा ले लिया। उन्हें उनके एक शोध के लिए पी.एच.डी. से सम्मानित किया गया। इस शोध को अंतत: उन्होंने पुस्तक इवोल्युशन ऑफ प्रोविन्शिअल फिनान्स इन ब्रिटिश इंडिया के रूप में प्रकाशित किया। हालांकि उनकी पहला प्रकाशित काम, एक लेख जिसका शीर्षक, भारत में जाति- उनकी प्रणाली, उत्पत्ति और विकास है। अपनी डाक्टरेट की उपाधि लेकर आंबेडकर लंदन चले गये जहाँ उन्होंने ग्रेस इन और लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स में कानून का अध्ययन और अर्थशास्त्र में डॉक्टरेट शोध की तैयारी के लिये अपना नाम लिखवा लिया। अगले वर्ष छात्रवृत्ति की समाप्ति के चलते मजबूरन उन्हें अपना अध्ययन अस्थायी तौर बीच में ही छोड़ कर भारत वापिस लौटना पड़ा। ये विश्व युद्ध प्रथम का काल था। बड़ौदा राज्य के सेना सचिव के रूप में काम करते हुये अपने जीवन में अचानक फिर से आये भेदभाव से आंबेडकर उदास हो गये और अपनी नौकरी छोड़ एक निजी ट्यूटर और लेखाकार के रूप में काम करने लगे। यहाँ तक कि अपनी परामर्श व्यवसाय भी आरंभ किया जो उनकी सामाजिक स्थिति के कारण विफल रहा। अपने एक अंग्रेज जानकार बंबई के पूर्व राज्यपाल लॉर्ड सिडनेम, के कारण उन्हें बंबई के सिडनेम कॉलेज ऑफ कॉमर्स एंड इकोनोमिक्स मे राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर के रूप में नौकरी मिल गयी। कोल्हापूर के महाराजा अपने पारसी मित्र के सहयोग और अपनी बचत के कारण वो एक बार फिर से इंग्लैंड वापस जाने में सक्षम हो गये। उन्होंने अपना शोध प्रॉब्लेम्स ऑफ द रूपी (रुपये की समस्यायें) पूरा कर लिया। उन्हें लंदन विश्वविद्यालय द्वारा डॉक्टर ऑफ साईंस की उपाधि प्रदान की गयी और कानून का अध्ययन पूरा होने के साथ ही साथ उन्हें ब्रिटिश बार में बैरिस्टर के रूप में प्रवेश मिल गया। भारत वापस लौटते हुये आंबेडकर तीन महीने जर्मनी में रुके, जहाँ उन्होंने अपना अर्थशास्त्र का अध्ययन, बॉन विश्वविद्यालय में जारी रखा। उन्हें औपचारिक रूप से जून को कोलंबिया विश्वविद्यालय द्वारा पी.एच.डी. प्रदान की गयी।

भारत सरकार अधिकनयम, तैयार कर रही साउथबोरोह समिति के समक्ष, भारत के एक प्रमुख विद्वान के तौर पर आंबेडकर को गवाही देने के लिये आमंत्रित किया गया। इस सुनवाई के दौरान आंबेडकर ने दलितों और अन्य धार्मिक समुदायों के लिये पृथक निर्वाचिका और आरक्षण देने की वकालत की। बंबई में, उन्होंने साप्ताहिक मूकनायक के प्रकाशन की शुरुआत की। यह प्रकाशन जल्द ही पाठकों में लोकप्रिय हो गया, तब आंबेडकर ने इसका इस्तेमाल रूढ़िवादी हिंदू राजनेताओं व जातीय भेदभाव से लड़ने के प्रति भारतीय राजनैतिक समुदाय की अनिच्छा की आलोचना करने के लिये किया। उनके दलित वर्ग के एक सम्मेलन के दौरान दिये गये भाषण ने कोल्हापूर राज्य के स्थानीय शासक शाहू चतुर्थ को बहुत प्रभावित किया, जिनका आंबेडकर के साथ भोजन करना रूढ़िवादी समाज में हलचल मचा गया। आंबेडकर ने अपनी वकालत अच्छी तरह जमा ली और बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना भी की जिसका उद्देश्य दलित वर्गों में शिक्षा का प्रसार और उनके सामाजिक आर्थिक उत्थान के लिये काम करना था। वो बंबई विधान परिषद के एक मनोनीत सदस्य बन गये। डॉ. आंबेडकर ने छुआछूत के के खिलाफ एक व्यापक आंदोलन शुरू करने का फैसला लिया। उन्होंने सार्वजनिक आंदोलनों और जुलूसों के द्वारा, पेयजल के सार्वजनिक संसाधन समाज के सभी लोगों के लिये खुलवाने के साथ ही उन्होंने अछूतों को भी हिंदू मंदिरों में प्रवेश करने का अधिकार दिलाने के लिये भी संघर्ष किया। उन्होंने महड में

अस्पृश्य समुदाय को भी शहर की पानी की मुख्य टंकी से पानी लेने का अधिकार दिलाने के लिये सत्याग्रह चलाया।

जनवरी को डॉ. आंबेडकर ने द्वितीय आंग्ल-मराठा युद्ध, की कोरेगांव की लड़ाई के दौरान मारे गये भारतीय सैनिकों के सम्मान में कोरेगांव विजय स्मारक में एक समारोह आयोजित किया। यहाँ महार समुदाय से संबंधित सैनिकों के नाम संगमरमर के एक शिलालेख पर खुदवाये। उन्होंने अपना दूसरी पत्रिका बहिष्कृत भारत शुरू की, और उसके बाद रीक्रिश्टेन्ड जनता की। उन्हें बॉम्बे प्रेसीडेंसी समिति में सभी यूरोपीय सदस्योंवाले साइमन आयोग में काम करने के लिए नियुक्त किया गया। इस आयोग के विरोध में भारत भर में विरोध प्रदर्शन हुये और जबकि इसकी रिपोर्ट को ज्यादातर भारतीयों द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया, डॉ. आंबेडकर ने अलग से भविष्य के संवैधानिक सुधारों के लिये सिफारिशें लिखी।

पूना संधि- अब तक डॉ. आंबेडकर आज तक की सबसे बड़ी अछूत राजनीतिक हस्ती बन चुके थे। उन्होंने मुख्यधारा के महत्पवूर्ण राजनीतिक दलों की जाति व्यवस्था के उन्मूलन के प्रति उनकी कथित उदासीनता की कटु आलोचना की। आंबेडकर ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और उसके नेता मोहनदास गांधी (महात्मा गांधी) की आलोचना की, उन्होंने उन पर अस्पृश्य समुदाय को एक करुणा की वस्तु के रूप में प्रस्तुत करने का आरोप लगाया। आंबेडकर ब्रिटिश शासन की विफलताओं से भी असंतुष्ट थे, उन्होंने अस्पृश्य समुदाय के लिये एक ऐसी अलग राजनैतिक पहचान की वकालत की जिसमें कांग्रेस और ब्रिटिश दोनों की ही कोई दखल ना हो। ८ अगस्त १९३० को एक शोषित वर्ग के सम्मेलन के दौरान आंबेडकर ने अपनी राजनीतिक दृष्टि को दुनिया के सामने रखा, जिसके अनुसार शोषित वर्ग की सुरक्षा उसके सरकार और कांग्रेस दोनों से स्वतंत्र होने में है।

हमें अपना रास्ता स्वयं बनाना होगा और स्वयं राजनीतिक शक्ति शोषितों की समस्याओं का निवारण नहीं हो सकती, उनका उद्धार समाज में उनका उचित स्थान पाने में निहित है। उनको अपना रहने का बुरा तरीका बदलना होगा। उनको शिक्षित होना चाहिए। एक बड़ी आवश्यकता उनकी हीनता की भावना को झकझोरने और उनके अंदर उस दैवीय असंतोष की स्थापना करने की है जो सभी ऊंचाइयों का स्रोत है।

१३ अक्टूबर १९३५, को येओला नासिक में आंबेडकर एक रैली को संबोधित करते हुए १३ अक्टूबर १९३५ को आंबेडकर को सरकारी लॉ कॉलेज का प्रधानाचार्य नियुक्त किया गया और इस पद पर उन्होंने दो वर्ष तक कार्य किया। इसके चलते आंबेडकर बंबई में बस गये, उन्होंने यहां एक बड़े घर का निर्माण कराया, जिसमें उनके निजी पुस्तकालय में ५०००० से अधिक पुस्तकें थीं। इसी वर्ष उनकी पत्नी रमाबाई की एक लंबी बीमारी के बाद मृत्यु हो गई। रमाबाई अपनी मृत्यु से पहले तीर्थयात्रा के लिये पंढरपूर जाना चाहती थीं पर आंबेडकर ने उन्हें इसकी इजाजत नहीं दी। आंबेडकर ने कहा की उस हिन्दु तीर्थ में जहाँ उनको अछूत माना जाता है, जाने का कोई औचित्य नहीं है इसके बजाय उन्होंने उनके लिये एक नया पंढरपुर बनाने की बात कही। भले ही अस्पृश्यता के खिलाफ उनकी लड़ाई को भारत भर से समर्थन हासिल हो रहा था पर उन्होंने अपना रवैया और अपने विचारों को रूढ़िवादि हिंदुओं के प्रति और कठोर कर लिया। उनकी रूढ़िवादी हिंदुओं की आलोचना का उत्तर बड़ी संख्या में हिंदू कार्यकर्ताओं द्वारा की गयी उनकी आलोचना से मिला। १३ अक्टूबर को नासिक के निकट येओला में एक सम्मेलन में बोलते हुए आंबेडकर ने धर्म परिवर्तन करने की अपनी इच्छा प्रकट की। उन्होंने अपने अनुयायियों से भी हिंदू धर्म छोड़ कोई और धर्म अपनाने का आह्वान किया। उन्होंने अपनी इस

बात को भारत भर में कई सार्वजनिक सभाओं में दोहराया भी। १९३६ में आंबेडकर ने स्वतंत्र लेबर पार्टी की स्थापना की जो १९३७ में केंद्रीय विधान सभा चुनावों में १५ सीटें जीतीं। उन्होंने अपनी पुस्तक जाति के विनाश भी इसी वर्ष प्रकाशित की जो उनके न्यूयॉर्क में लिखे एक शोधपत्र पर आधारित थी। इस सफल और लोकप्रिय पुस्तक मे आंबेडकर ने हिंदू धार्मिक नेताओं और जाति व्यवस्था की जोरदार आलोचना की। उन्होंने अस्पृश्य समुदाय के लोगों को गांधी द्वारा रचित शब्द हरिजन पुकारने के कांग्रेस के फैसले की कड़ी निंदा की। आंबेडकर ने रक्षा सलाहकार समिति और वाइसराय की कार्यकारी परिषद के लिए श्रम मंत्री के रूप में सेवारत रहे। १९४१ और १९४५ के बीच में उन्होंने बड़ी संख्या में अत्यधिक विवादास्पद पुस्तकें और पर्चे प्रकाशित किये जिनमे थॉट्स ऑन पाकिस्तान भी शामिल है, जिसमें उन्होंने मुस्लिम लीग की मुसलमानों के लिए एक अलग देश पाकिस्तान की मांग की आलोचना की। वॉट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स (कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के लिये क्या किया) के साथ, आंबेडकर ने गांधी और कांग्रेस दोनों पर हमलों को तीखा कर दिया उन्होंने उन पर ढोंग करने का आरोप लगाया। उन्होंने अपनी पुस्तक हू वर द शुद्राज? (शुद्र कौन थे?) के द्वारा हिंदू जाति व्यवस्था के पदानुक्रम में सबसे नीची जाति यानी शुद्रों के अस्तित्व मे आने की व्याख्या की। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि किस तरह से अछूत, शुद्रों से अलग हैं आंबेडकर ने अपनी राजनीतिक पार्टी को अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन में बदलते देखा, हालांकि १९४६ में आयोजित भारत के संविधान सभा के लिए हुये चुनाव में इसने खराब प्रदर्शन किया।

बाबासाहब अंबेडकर ने जीवनभर तिरस्कार झेले। उन्होंने अपने सहपाठियों को अपने छात्र जीवन के कटु अनुभव सुनाए और बताया था कि मैंने घोर गरीबी में जीवन बिताया, जब मैं स्कूल जाने लगा, तब यह हाल था कि तन पर एक लंगोटी के अलावा और कुछ पहनने को नहीं होता था। खूब प्यास लगी हो तो भी नल खोलकर पानी नहीं पी सकता था, क्योंकि जाति से मैं अछूत था। डॉ. अंबेडकर को बम्बई के एलफिन्सटन कॉलेज में संस्कृत विषय नहीं पढ़ने दिया गया क्योंकि अछूतों को संस्कृत पढ़ने का अधिकार नहीं था। लेकिन इच्छा शक्ति के धनी भीमराव ने स्वयं परिश्रम व लगन से संस्कृत भाषा एवं साहित्य का अध्ययन किया और संस्कृत के बड़े विद्वान बन गए।

लगनशील भीमराव के अध्ययन के तथा परिश्रम से उनके शिक्षक प्रभावित थे। उन्होंने सन् १९१२ में बी.ए.उत्तीर्ण किया। इसके बाद वे बड़ोदा राज्य की फौज में लेफ्टिनेंट के पद पर नियुक्त हुए। उन्होंने १९१५ में एम.ए. तथा १९२१ में एम.एस.सी. और १९२७ में कोलंबिया विश्वविद्यालय से द एव्यूलेशन ऑफ प्राविन्शियल फायनेंस एंड ब्रिटिश इंडिया शोध प्रबंधन विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्ति की। डॉ. अंबेडकर ने पढ़ाई के दौरान की अमेरीका की जीवनशैली का भी अध्ययन किया। वहाँ की स्वतंत्रता, मानव मूल्यों और उदार व्यवहार ने डॉ. भीमराव अंबेडकर को दृढ़ निश्चय किया कि वे भारतीय समाज से अस्पृश्यता का कलंक मिटाकर ही दम लेंगे। अछूत जाति में उत्पन्न होने के कारण वे जीवन भर तिरस्कृत होते रहे थे। अस्पृश्यता निवारण के ध्येय हेतु उन्होंने अनेक ऊंचे पदों पर सेवारत होने के अवसर त्याग दिये और दलितों के मानवीय सामाजिक तथा राजनीतिक अधिकारों के लिये संघर्ष में स्वयं को पूरी तरह समर्पित्त किया। उन्होंने आग्रह किया कि वर्णाश्रम व्यवस्था समाप्त की जाये ओर अधिकार, उत्तरदायित्व तथा सामाजिक दर्जा जाति के आधार नहीं अपितु गुण एवं योग्यता के आधार पर तय होना चाहिए।

२१ जनवरी १९२१ को डॉ. अंबेडकर ने मूकनायक नामक एक साप्ताहिक पत्र प्रारंभ किया। इस पत्र का उद्देश्य था भारत के दलित वर्ग की समस्याओं के हल के लिये संघर्ष करना। साप्ताहिक पत्र के प्रथम अंक के संपादकीय में उन्होंने लिखा, आज जितने भी समाचार पत्र मौजूद है, वे सब किसी न किसी जाति के हितों की रक्षा में लगे हुए हैं। वे अन्य जातियों के हितों की ओर दृष्टिगत नहीं करते हैं।

हमारा यह देश विषमताओं से भरा है। सत्ता और ज्ञान के अभाव में अब्राह्मण तथा दलित वर्ग प्रकृति से वंचित है। गरीबी, अयोग्यता और अज्ञान ने विशाल दलित समाज को गहरे गर्त में डाल रखा है। ३० अप्रैल १९२७ को डॉ. अंबेडकर ने एक अन्य समाचार पत्र शुरू किया। इसका नाम परिष्कृत भारत था। नये सुधारों के परिप्रेक्ष्य में इस पत्र ने दलित वर्गों की समस्याओं को उठाया। इस पत्र ने जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व की जोरदार मांग की ओर इसके लिये अभियान चलाए। पत्र के द्वारा डॉ. अंबेडकर ने समाज से यह भी मांग की कि सारे मंदिर और जलस्त्रोतों पर अछूतों को प्रवेश व उपयोग का अधिकार मिले। जातियों की समाप्ति नामक अपनी पुस्तक में डॉ.बाबा साहब अंबेडकर ने लिखा मैं निस्संशय यह कह सकता हूँ कि समाज व्यवस्था को बदले बिना प्रगति संभव नहीं है, ऐसे किये बिना समाज रक्षा अथवा राष्ट्र का निर्माण नहीं हो सकता। नैतिकता और जातिप्रथा की नींव पर जो कुछ भी बनाया जायेगा, उसमें दरारें पड़ जायेंगी, वह कभी पूरा नहीं हो पायेगा।

डॉ. बाबा साहब अंबेडकर का जीवन किसी विशेष जाति के लिये नहीं बल्कि मानव की आत्मा की मुक्ति के लिये समर्पित था। उनका संदेश विश्व के उन सभी स्थानों और स्थितियों के लिये अर्थ रखता है। भारतीय मनुष्य के प्रति अन्याय करता है। भारतीय लोकसभा के केन्द्रीय भवन में बाबा साहब अंबेडकर की प्रतिमा की स्थापना इस बात का प्रतीक है कि भारती जनता तथा इस देश की सरकार समाज व्यवस्था और राजनीति में उनके द्वारा प्रतिपादित और स्थापित पवित्र मानवीय दृष्टि को अत्यंत महत्वपूर्ण माने। समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति के लिये स्वाभाविक रूप से डॉ. बाबा साहब अंबेडकर एक महान मुक्तिदाता, अटल देशभक्त और स्वतंत्र चिंतक थे। डॉ. अंबेडकर एक प्रखर बुद्धिजीवी, प्रभावशाली वक्ता, अनन्य लेखक तथा विधिवेत्ता थे। इन सबसे ऊपर न्यायोचित है कि डॉ. बाबा साहब अंबेडकर को हम भारतरत्न कहने का दावा करें। इतिहास उनका सही अर्थ में एक विश्व पुरुष के रूप में मूल्यांकन करेगा।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। जड़ हो या चेतन, समय के साथ सभी में परिवर्तन होना एक सामान्य व सार्वभौमिक प्रक्रिया है। अगर हम सामाजिक परिवर्तन की बात करते हैं तो उन सब आयामों, परिस्थितियों पर विचार करना होगा जिनके चलते सामाजिक परिवर्तन घटित होते हैं। डॉ. भीमराव आम्बेडकर ऐसे ही एक महान विचारक हुए जिनके सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक चिंतन ने समाज को नई दिशा तो दी ही, साथ ही अनुसूचित जातियों, जनजातियों आदि को संविधान द्वारा सम्मानित दर्जा दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह की।

वाद से तात्पर्य उस विचारधारा से है जो किसी सिद्धांत को लेकर आगे बढ़ती है। डॉ. आम्बेडकर की अपनी विचारधारा थी जिसकी आधारभूत पृष्ठभूमि तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त असमानता को स्पष्ट करती है। प्रारंभिक स्तर पर यदि देखा जाए तो आम्बेडकर का बचपन उन सामाजिक-आर्थिक दशाओं में बीता जहां दलितों को निम्नतम स्थान प्राप्त था। उन्हें अपनी पाठशाला में बैठने के लिए स्वयं की टाटपट्टी लेकर जाना पड़ता था। वे अन्य उच्च जातियों के बच्चों

के साथ बैठ नहीं सकते थे। डॉ. अम्बेडकर के मन पर इस छुआछूत का व्यापक असर हुआ जो बाद में विस्फोटक रूप में सामने आया।

यदि बड़ौदा के महाराजा गायकवाड ने मदद न की होती तो आम्बेडकर शायद उस मुकाम पर नहीं पहुंच पाते जहां वे पहुंचे। ऐसी स्थिति में हम यह नहीं कह सकते कि डॉ. भीमराव आम्बेडकर के साथ हमेशा केवल अन्याय ही हुआ।

जिस अन्याय की बात सामान्यत: की जाती है वह उस अशिक्षित, घोर अंधविश्वासी और संभ्रांत समाज व्यवस्था की देन थी जिसने उनके बाल्यकाल को पीड़ादायक बनाया। तात्पर्य यही है कि भीमराव आम्बेडकर से डॉ. भीमराव आम्बेडकर बनाने वाली भी वही सामाजिक व्यवस्था थी जिसमें गायकवाड जैसे उदार महाराजा भी थे। दूसरा काल उनके अध्ययन का वह दौर रहा जब वे अपने अध्ययन हेतु महाराजा गायकवाड द्वारा उपलब्ध कराई गई छात्रवृत्ति से मुंबई के एल्फिस्टन कॉलेज में गए। अगली पढ़ाई के क्रम में १९१३ में उन्हें अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में प्रवेश मिला, जहां से उन्होंने अर्थशास्त्र में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की।

यहां यह बात उल्लेखनीय है कि डॉ. आम्बेडकर ने दो सामाजिक व्यवस्थाओं (देशी-विदेशी) को एक साथ भोगा और अनुभव किया कि जहां भारत में तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था छूत-अछूत, जाति आधारित मौलिक सिद्धांत पर आधारित थी, वहीं विदेशों में उन्हें इन आधारों पर कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा।

चूंकि वे कुशाग्र बुद्धि के थे, इसलिए उन्होंने देश व विदेश की सामाजिक व्यवस्था का अपने ढंग से न केवल मूल्यांकन किया बल्कि उन विसंगतियों को भी समझा जो भारतीय समाज में छुआछूत के आधार पर मानव से मानव के साथ अप्रिय व्यवहार के रूप में परिलक्षित होती रही थी। इतना ही नहीं, ब्रिटिश शासन के दौरान ही उन्हें लंदन के स्कूल ऑफ इकानॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस में प्रवेश भी मिला। लेकिन गायकवाड शासन के अनुबंध के कारण पढ़ाई छोड़कर वापस भारत आए और बड़ौदा राज्य में मिलेट्री सचिव पद पर कार्य करना पड़ा। सन् १९२० में वे पुन: लंदन गए और १९२१ में एम.एससी. तथा पी.एच.डी. लॉ की उपाधि भी प्राप्त की। इंग्लैंड से लौटकर उन्होंने १९२३ में आजीविका के लिए वकालत प्रारंभ कर दी तथा साथ ही अछूतों के उद्धार के लिए कार्य करना प्रारंभ किया। १९२७ में बहिष्कृत भारत पाक्षिक समाचार-पत्र निकाला और सही मायने में यहीं से डॉ. अम्बेडकर का प्रखर सामाजिक चिंतन सामाजिक बदलाव के परिप्रेक्ष्य में प्रारंभ हुआ। वे प्रबल देशभक्त और भारत के एकीकरण के समर्थक तो थे परंतु गांधीजी की विचारधारा से कभी सहमत नहीं दिखाई देते। इसका मूल कारण था दलितों के पृथक प्रतिनिधित्व का प्रश्न।

उनके इस चिंतन से एक बात स्पष्ट होती है कि वे उस व्यवस्था से असहमत थे जहां दलितों को कोई स्थान नहीं दिया गया था। उनका मत था कि उन व्यक्तियों और संस्थाओं को अछूतों की बात कहने का हक नहीं जो अछूत नहीं है। इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की स्थापना के द्वारा उन्होंने दलित वर्ग, मजदूर वर्ग और किसानों की अनेक समस्याओं को उल्लेखित करने में ही नहीं बल्कि उन्हें एकजुट करने में शक्ति लगाई।

१९३७ में तत्कालीन बंबई प्रदेश के चुनावों में इस पार्टी को १५ में से १३ स्थानों पर जीत मिली। साथ ही २ सामान्य पदों पर भी इसके उम्मीदवार जीते। दलित, मजदूर और किसान सभी के वे सर्वमान्य ऐसे प्रतिनिधि बनकर उभरे जिसकी मिसाल तत्कालीन व्यवस्था में संभव नहीं थी। यद्यपि वे गांधीजी के दलितोद्धार के तरीकों से सहमत नहीं थे परंतु अपनी

विचारधारा के कारण उन्होंने कांग्रेस के अग्रणी नेताओं नेहरू और पटेल को अपनी प्रतिभा से प्रभावित किया। यही कारण था कि स्वतंत्रता प्राप्ति कर उन्हें ३ अगस्त १९४९ को भारत का कानून मंत्री बनाया गया और इस पद पर रहते हुए उन्होंने हिन्दू कोड बिल लागू कराया। इसका उद्देश्य हिन्दुओं के सामाजिक जीवन में सुधार था। तलाक की व्यवस्था और स्त्रियों को सम्पत्ति में हिस्सा इसके महत्वपूर्ण पक्ष थे। स्वतंत्र भारत में उन्हें पर्याप्त सम्मान और राजनीतिक पद हासिल हो जाने के बावजूद वे हिन्दू सामाजिक व्यवस्था से संतुष्ट नहीं थे। यही कारण था कि उन्होंने १४ अक्टूबर १९५६ को बौद्ध धर्म अपना लिया। वैसे डॉ. आम्बेडकर पर जिन ग्रंथों ने सर्वाधिक प्रभाव डाला वे रामायण और माभारत ही थे। उनके जीवन पर गौतम बुद्ध, कबीर और ज्योतिबा फुले के विचारों का अत्यधिक प्रभाव रहा। आम्बेडकरवाद को हम वैयक्तिक परिवर्तन से सामाजिक परिवर्तन के क्रम में पाते हैं। स्वतंत्र भारत में दलित और सवर्णों में इतनी अधिक प्रतिस्पर्धा या वैमनस्य नहीं दिखाई देता जो उसके पूर्व ब्रिटिशकाल में रहा था। इसका कारण केवल आम्बेडकर ही नहीं थे बल्कि तत्कालीन कांग्रेस विचारधारा के पुरोधा गांधी, नेहरू और पटेल भी थे। दलितों को आरक्षण देने की मांग के सूत्रधार के रूप में डॉ. आम्बेडकर का योगदान अत्यधिक रहा। दलित उद्धार के संदर्भ में अपनी पीड़ा को आम्बेडकर ने कभी नहीं छुपाया। जीवन के प्रथम ३५ वर्षों में पग-पग पर घोर अपमान, अमानवीय व्यवहार और भारी यंत्रणा को उन्होंने भोगा था, इसलिए एक बार उन्होंने एक पत्रकार से कहा था- मेरे दु:ख-दर्द और मेहनत को तुम नहीं जानते, जब सुनोगे तो रो पड़ोगे।

डॉ. आम्बेडकर इस प्रकार दलितोद्धार के प्रणेता बने। डॉ. आम्बेडकर के पहले के दलितोद्धार समर्थक तो वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था को बनाए रखते हुए दलितों को सम्मान दिलाने का प्रयत्न कर रहे थे लेकिन डॉ. आम्बेडकर ने इस बात पर बल दिया कि चार वर्णों पर आधारित सामाजिक संरचना ने ही जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता को जन्म दिया है, जो कि असमानता और छुआछूत का एक अमानवीय और चरम रूप है। अत: अस्पृश्यों की समस्याएं किसी छोटे-मोटे उपचार से हल नहीं होंगी। उसके लिए क्रांतिकारी सामाजिक हल की आवश्यकता है और वह क्रांतिकारी सामाजिक हल जाति व्यवस्था को संपूर्ण रूप में अस्वीकार करना ही हो सकता है। डॉ. आम्बेडकर ने दलितों में स्त्री शिक्षा पर भी बल दिया। उन्होंने कहा था- कभी मत सोचो कि तुम अछूत हो। साफ-सुथरे रहो। जिस तरह के कपड़े सवणर्ध स्त्रियां पहनती हैं, तुम भी पहनो। यह देखो कि वे साफ हैं। यदि तुम्हारे पति और लड़के शराब पीते हैं तो उन्हें खाना मत दो। अपने बच्चों को स्कूल भेजो। शिक्षा जितनी जरूरी महापुरुषों के लिए है उतनी ही स्त्रियों के लिए भी आवश्यक है। यदि तुम पढ़ना-लिखना जान जाओगे तो बहुत उन्नति होगी। जैसी तुम होंगी, वैसे ही तुम्हारे बच्चे बनेंगे। अच्छे कार्यों की ओर अपना जीवन मोड़ दो। तुम्हारे बच्चे इस संसार में चमकते हुए हों। इस प्रकार जहां एक ओर डॉ. आम्बेडकर ने राजनीतिक स्तर पर दलितों के उद्धार के लिए अपना स्वस्फूर्त आंदोलन चलाया वहीं दूसरी ओर उन्होंने दलितों को भी अपनी सामाजिक स्थिति बदलने की प्रेरणा दी।

भारत देश हमेशा से ही शील, शौर्य और सदाचार के लिए प्रसिद्ध रहा है। इसी प्रसिद्धि में तथागत महात्मा गौतम बुद्ध और सम्राट अशोक की महान देन है। इन्हीं की वजह से भारत सोने की चिड़िया कहलाया। भारत में आर्यों के आने के पहले आदिकाल में वर्ण व्यवस्था और जातिभेद नहीं था। सभी मनुष्य प्राकृतिक नियमानुसार अपने अधिकार और कर्तव्यों को ध्यान में रखकर वर्गविहीन समाज को सुव्यवस्थित रखते थे। तब हमारे देश की सभ्यता और संस्कृति निष्कलंक थी।

बौद्ध धम्म का प्रचार और प्रसार तथागत बुद्ध अशोक के समय तक अच्छी तरह से चलता रहा, लेकिन कुछ वर्षों बाद भारत में इस धम्म का धीरे-धीरे पतन होता चला गया। इसके कारण शासकों द्वारा बौद्ध भिक्षुओं को परेशान किए जाने लगा, बौद्ध विहारों, बौद्ध साहित्य को नष्ट किया गया। अपने आपको बचाने के लिए बौद्ध भिक्षु भारत छोड़कर पड़ोसी देशों में जाने को मजबूर हो गए। सन १९५६ के पहले यह स्थिति नहीं थी। भारत में ही पैदा हुआ बौध भारत में ही नष्ट होने लगा। जापान, चीन, श्रीलंका, थाईलैंड, बर्मा, नेपाल, तिब्बत में भिक्षु फैलते गए। आज यह सभी बौद्धमय राष्ट्र कहलाने लगे।

१४ अक्टूबर १९५६ को बोधिसत्व डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने अपने लाखों अनुयायियों के साथ नागपुर की पवित्र दीक्षाभूमि पर बौद्ध धम्म की दीक्षा ली और भारत में बौद्ध धम्म को पुनर्जीवित किया। तभी से भारत में बौद्ध धम्म का प्रचार-प्रसार होने लगा। बौद्ध धम्म एक ऐसा धम्म है, जो वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है। इसमें अंधविश्वास, भूत-प्रेत, देवी-देवता, आत्मा-परमात्मा, ईश्वरवाद, पुनर्जन्म आदि को कोई स्थान नहीं दिया गया। पुनर्जन्म माना भी गया तो आत्मा के स्थान पर नाग और रूप से संधात को माना गया, जिसके अनवरत प्रवाह के कारण चार महाभूतों के एकत्रीकरण की प्रक्रिया को पुनर्जन्म के रूप में स्वीकार किया गया। इसे समझने के लिए बौद्ध साहित्य में अभिधम्म विषक एवं प्रत्यक्ष अनुभव में विपश्यना ध्यान भावना का अभ्यास करना आवश्यक है। संपूर्ण पृथ्वी पर बौद्ध धम्म ही ऐसा धम्म है जो विश्वशांति स्थापित कर सकता है। इसलिए धम्म का प्रचार-प्रसार करना बहुत जरूरी है।

हम सभी जानते हैं कि बौद्ध धम्म वास्तव में आचरण का धम्म है। यह धम्म कीर्तिमता को विशेष महत्व देता है। बौद्ध उपासकों की विशेष पहचान तो उनका सभ्य आचरण है। यह एक कड़वी सच्चाई है कि जिस देश में बुद्ध, महावीर एवं कबीर जैसे महापुरुष हुए हैं, वह देश आज कई संप्रदायों में बंटा हुआ है और प्रत्येक समुदाय अपना-अपना अस्तित्व बनाए रखने में जुटा है। देश और काल की परिस्थिति को देखते हुए हमें भी अपना अस्तित्व बनाए रखना जरूरी है और इसलिए हमारी विशेष पहचान बनाने हेतु सताचरण के साथ-साथ दिखावे के संस्कारों की भी आवश्यकता है क्योंकि संस्कारों से ही संस्कृति का निर्माण होता है। संस्कार और त्यौहार धम्म के लिए यह आवरण का कार्य करते हैं। धम्मफल का भीतरी हिस्सा जो वास्तव में धम्म है, वह तो सदाचरण है।

इतिहासकारों के अनुसार बौद्ध धम्म और मौर्य साम्राज्य के पतनकर्ता ब्राह्मण पुष्प मित्र शुंग उर्फ भगवान राम ने सम्राट अशोक के पोता मौर्यवंश के खारी सम्राट बोद्ध राजा ग्रहदश को धोखे से कत्ल करके मगध की गद्दी हथियाई। तब उसने गद्दी पर बैठते ही घोषणा की कि जो कोई भी बौद्ध भिक्षु का सिर काटकर लाएगा, उसे इनाम में सोने के सिक्के दिए जाएंगे। इस घोषणा से सुनियोजित ढंग से बौद्ध धम्म और मौर्य साम्राज्य का पतन किया गया। बौद्ध धम्म के इन विरोधियों ने समाज को गुमराह करने के लिए तथागत गौतम बुद्ध के असली स्वरूप जीवन और मिशन पर अमिट कालिमा पोत दी। यानी गौतम बुद्ध को विष्णु का अवतार माना गया। गौतम बुद्ध को महात्मा बुद्ध कह दिया। सिद्धार्थ गौतम के घर-परिवार छोड़कर चले जाने तथा बौद्ध धम्म हिन्दू धर्म का ही अंग है, कुछ भी अलग नहीं है, का प्रचार किया।

आज हम देख रहे हैं कि बौद्ध धम्म में ईश्वर आत्मा को कोई स्थान नहीं होने के कारण पूजा-पाठ भी नहीं होता और तथागत के प्रति श्रद्धा भी कम हो रही है। केवल बाबासाहब के प्रति समर्पित्त होना ही काफी नहीं है, तो उसके साथ-साथ एक सच्चा और निष्ठावान और साधारण शब्दों में कहें तो कट्टर बौद्ध बनना जरूरी है। अत: प्रत्येक उपासक का कर्तव्य

होना चाहिए कि बौद्धों में तथागत और धम्म के प्रति श्रद्धा जगाए। व्यावहारिक दृष्टि से इसके तीन रास्ते हैं। पहला श्रावकयान यानी पवित्रता का जीवन, दूसरा है प्रत्येक बुद्धयान या दार्शनिक का जीवन और तीसरा है बोधिसत्ववान अर्थात परामर्श का जीवन और इन तीनों गुणों को उच्चतम एकत्व होता है- सम्यक सम्बुद्ध। उसकी पूजा तो होनी ही चाहिए, लेकिन अंधश्रद्धा नहीं, शुद्ध श्रद्धा उत्पन्न होनी चाहिए। यह धम्म जितना अधिक बुद्धिमान लोगों के लिए प्रज्ञा का धम्म है तो साधारण लोगों के लिए उतना ही भावुकता का धम्म है। धम्म के आचरण, नीतिमत्ता, संस्कार, त्यौहार आदि की जानकारी देने के लिए कोई भी तरीका अपनाया जा सकता है बौद्ध धम्म में।

डॉ. आंबेडकर अपने जीवन में पूर्ण तथा व्यावहारिक थे न कि भाग्यवादी। मानव की बुद्धि ओर कर्म पर अटूट विश्वास रखते थे। उन्होंने कहा भी है, यदि समय, प्रकृति अनिवार्यता आदि ही सब कुछ है, वे ही घटना विशेष के कारण हैं, तो हम कौन हैं ? यदि आदमी अति प्राकृतिक कारणों में विश्वास करता रहे तो उसकी बुद्धि का फिर महत्त्व क्या है ? क्या आदमी समय, प्रकृति, परिवर्तन, देवता, भाग्य, अतिवार्यता के हाथ में कठपुतली मात्र है ? यह हो सकता है कि आदमी उस घटना के वास्तविक कारण को ढूंढ न पाया हो फिर भी यदि उसमें बुद्धि है तो वह उसे अवश्य ही ढूंढ लेगा।

डाक्टर भीमराव आंबेडकर का जन्म १४ अप्रैल १८९१ ई. में. मध्यप्रदेश के महू गांव में महार परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम रामजी संकपाल और माता का नाम भीमाबाई था। उनका वंश महाराष्ट के रत्नागिरी जिले के आम्बावडे गांव से संबंधित रहा है। उनका लालन-पालन आदर्श धार्मिक वातावरण में हुआ था। उनका परिवार कबीरपंथी था, जिससे उनके मन पर बाल्यावस्था से ही धार्मिक संस्कार की छाप पड़ी। उन संस्कारों की झलक उनके व्यक्तित्व में स्पष्ट रूप से दिखाई देती थी। बचपन से ही आम्बेडकर पढ़ने लिखने में तेज थे। बुद्धि, चातुर्य, तर्क शक्ति और ज्ञानपूर्ण बातें सबको अचरज में डालनेवाली होती थीं। वे अछूतवर्ग के पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने १९१३ में एल्फिंस्टन कालेज से बी.ए. पास किया था। उनका साहस बढ़ाने के लिए बंबई में दलितों ने उनका सत्कार समारोह आयोजित किया था। इस अवसर पर श्रीकृष्णाजी अर्जुन केलुस्कर ने उन्हें बुद्धचतरित भेंट स्वरूप दिया था। १४ वर्ष की उम्र में ९ वर्ष की रमा से भीमरावजी की शादी हुई थी। इस पत्नी की मृत्यु १९३५ में हुई। जब डॉ. भीमराव संविधान का काम करते-करते थक गए और ग्रंथों का अध्ययन तथा उनका निर्माण करने में आखों की दृष्टि मंद होने लगी। एक पैर की ताकत कम हो गई। तब ऐसी अवस्था में मेडिकल विशेषज्ञों की सलाह पर डॉ. कुमारी शारदादेवी (सविदादेवी) नामक सारस्वत ब्राह्मण से उन्होंने सन् १९४८ में पुन: विवाह किया। उन्हें सफलता की मंजिल तक पहुंचने में शारदादेवी का महत्वपूर्ण योगदान व उत्सर्ग रहा है।

सन् १९२० में मूकनायक साप्ताहिक जन जागृति हेतु संपादन किया। तत्पश्चात बहिष्कृत हित कारिणी सभा की स्थापना की। सन् १९२७ से १९३५ के अंतराल में डॉ. आंबेडकर ने सामाजिक और राजनैतिक समानता हेतु संघर्ष किया। सन् १९३२ में पुणे करार हुआ। डॉ. आम्बेडकर सन् १९३५ से १९५४ तक राजनीतिक और सामाजिक कार्य में लगे रहे। भारत में बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से लेकर उत्तर मध्य तक जिन महामनाओं का विचार और कर्तव्य प्रभावशाली तथा विवादास्पद रहा है, उनमें डॉ. आम्बेडकर अग्रणी रहे हैं। वे विद्वानों में महाविद्वान तथा पंडितों में महापंडित थे। वे राजनीति, कानून, अर्थशास्त्र, समाज-शास्त्र तथा धर्मशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान थे। वे सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक समस्याओं को नैतिकता के धरातल पर सुलझाना चाहते थे। इसलिए वे धर्म को अनन्य महत्व

देते थे। उनकी दृष्टि में बौद्ध में ही नैतिकता को महत्व दिया गया है। इसलिए वह सर्वग्राह्य है। उन्होंने बौद्ध धर्म को मौलिक रूप से केवल समझा ही नहीं, उसे अपने जीवन में उतारा भी था। वे मानते थे कि बौद्ध धर्म संसार के अन्य धर्मों से इस दृष्टि से भिन्न और विशिष्ट है। उसका दर्शन प्रज्ञा, श्रद्धा और कर्मण्यता के उस त्रिपथ को जन्म देता है जो आज मानव संस्कृति की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

कोई यह नहीं जानता था कि महाराष्ट्र में १४ अप्रैल को जन्म लेने वाला बालक भीमराव आंबेडकर भविष्य में हजारों सालों से वर्णवाद केपाटों में पिस रहे करोड़ों इंसानों का मसीहा बनेगा। पिता श्रीराम जो एक फौजी थे, ने यह स्वप्न में भी कभी नहीं सोचा था कि उनका बेटा जवान होकर कभी दलित सेना का मुखिया बनेगा।

डा. भीमराव आंबेडकर ने सदियों से सताए चले आ रहे लोगों के लिये जाति-पाति के भेदभाव को मिटाने के लिये जत्थेबंद होकर अभिमानियों से बिजली के समान गर्जन करके उनसे टक्कर लेने का निर्णय ले लिया। इन वर्णजाति के विरोधियों ने डॉ. साहिब पर कौम विरोधी, ब्राह्मण विरोधी, अंग्रेजों और मुसलमानों के पक्ष में रहनेवाले और हिन्दू समाज के बागी तक की संज्ञा दी।

दलितों को उनका अधिकार दिलाने में उन्होंने महात्मा गांधी जी से भी टक्कर ली। डा. साहिब ने दलितों के लिये जुलूस निकाले, भाषण दिये, प्रचार करवाये और अंग्रेजों पर उनकी शर्तों को पूरा करने के लिये दबाव डाला। उन्होंने देश में ही नहीं वरन् उनकी चर्चा दुनिया भर में की।

दलितों की नर्क बनी जिंदगी का उन्होंने आंखों देखा हाल बयान किया है कि जब उन्होंने देखा कि एक दलित महिला प्रसूति दर्द से छटपटा रही थी, उसने एक बच्चे को जन्म दिया। मां बच्चे दोनों को बुखार हो गया था परन्तु डाक्टर छुआछूत के कारण उनको देखने को तैयार नहीं हुआ। बहुत कहने पर उसने उसकी नब्ज पर कपड़ा रखकर देखना स्वीकार किया। दवा वह दूर से ही देता था जिस कारण जच्चा-बच्चा दोनों ही काल के ग्रास में समा गये।

डॉ. आंबेडकर ने कहा कि हिन्दुओं का सनातनवाद, हिटलर द्वारा यहूदियों पर हुये जुल्मों और अत्याचारों से कम नहीं।

डॉ. आंबेडकर ने भारत के हिन्दू नेताओं से अति दुखी होकर कहा- जब एक देश पर दूसरे देश का कब्जा करना न्याय के विरुद्ध है तो एक जाति को दूसरी जाति द्वारा गुलाम बनाना पशुओं जैसा बर्ताव करना क्या पाप नहीं है।

डॉ. आंबेडकर ने गोलमेज कांग्रेस १९३०-३१ में अपने भाषण के दौरान कहा कि हिन्दू हमें मन्दिरों में जाने नहीं देते, हमारी जिंदगी को नर्क बनाकर रख दिया है, इसलिए डा. साहिब ने धमकी भरे शब्दों में कहा कि अगर हमें हिन्दू सरोवरों एवं कुओं से पानी नहीं पीने देंगे तो मैं यह केस लीग आफ नेशन में ले जाऊंगा, जहां सारी दुनिया देख सके कि हिन्दू धर्म एक पत्थर रूपी दीवार है जहां कमजोरों एवं दलितों के रोने-धोने का कोई लाभ नहीं।

दस साल बराबर संघर्ष करने के पश्चात् वे इस निर्णय पर पहुंचे कि यदि अछूतों को स्वाभिमान के साथ भारत में रहना है तो हिन्दू धर्म का त्याग करके कोई दूसरा धर्म स्वीकार कर लें। इस ऐलान के पश्चात् डा. साहिब के ऊपर हिन्दूओं द्वारा धर्म न बदलने के लिए दबाव डाला जाने लगा। जब श्री असुरकर महाराज हिन्दू मिशनरी ने धर्म न बदलने के लिये कहा, तो डा. साहब ने कहा कि ठीक है मैं ५-१० साल तक अपना यह इरादा त्याग दूंगा परन्तु मेरी शर्त है कि एक अछूत अगुआ एस. के. साकत को शंकराचार्य की गद्दी पर बैठाया जाये और १०० चितपावन ब्राह्मण परिवार उसको प्रतिदिन

झुककर प्रणाम करें, तब मैं समझूंगा कि सही में आप हिन्दूओं के मन में अछूत भावना समाप्त हो चुकी है।

ऐसा सुनकर असुरकर महाराज निरूत्तर हो गये। १४ अक्टूबर १९५५ को डॉ. आंबेडकर जी ने अपनी पत्नी एवं ७५००० सहयोगियों सहित नागपुर के विशाल समागम में हिन्दू धर्म को सदैव के लिये त्याग कर बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। अपनी पुस्तक मुक्ति कौन पथे मराठी में गुरुग्रंथ साहिब के प्रति आदर एवं सिख धर्म के प्रति प्यार दर्शाया है कि सिख धर्म ऊंच नीच को नहीं मानता। गुरु अर्जुन देव जी ने श्री दरबार साहिब अमृतसर की नींव मुसलमान फकीर मियांमीर से रखवाई। गुरुग्रंथ साहिब में पवित्र वाणी के साथ-साथ कबीर, नामदेव, बाबा फरीद जी एवं उनके भक्तों की वाणी का समावेश एवं सम्मान किया। हमें डा. आंबेडकर के पद चिन्हों पर चलना चाहिये

युग पुरुष डॉ. आंबेडकर न केवल स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं में से एक थे, बल्कि वे दलितों के जुझारू नेता, जाने-माने शिक्षाविद और कानून के प्रकांड पंडित थे। कबीर और रैदास की तरह बाबासाहब आंबेडकर का जन्म भी दलित वर्ग में हुआ था। वे महार जाति के थे। उनका जन्म १४ अप्रैल १८९१ को मध्यप्रदेश के महू में हुआ था। इनके पिता का नाम रामजी और माता का नाम भीमाबाई था। जिस समय बाबासाहब का जन्म हुआ था, उस समय भारतीय समाज में अस्पृश्यता की बुराई आज से ही अधिक व्याप्त थी। बाबासाहब को अपने छात्र जीवन में अस्पृश्यता के चलते होनेवाले तिरस्कार का बार बार सामना करना पड़ा था।

लेकिन मेधावी और लगनशील बालक भीमराव ने हिम्मत नहीं हारी। वे दृढ़ता से शिक्षा के एक एक सोपान तय करते गये। १९१३ में जब वे अंग्रेजी और फारसी में स्नातक हो गये तो इससे बड़ौदा के तत्कालीन नरेश काफी प्रभावित हुए और उन्होंने छात्रवृत्ति देकर बाबासाहब को अमेरिका पढ़ने के लिए भेजा, जहां कोलंबिया विश्वविद्यालय से उन्होंने एमए की उपाधि प्राप्त की।

जब बाबासाहब उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद वापस भारत लौटे, तब भी उनको तिरस्कार का सामना करना पड़ा। प्रकांड विद्वान होने के बावजूद वे अपने आपको समाज में उपेक्षित पाते थे। जाति से निम्न होने के कारण उनको पग-पग पर अपमान के घूंट पीने पड़ते थे। पश्चिम के देशों में व्याप्त सामाजिक एकता को उन्होने काफी करीब से देखा था। इसके विपरीत भारत के समाज में समता जैसी कोई चीज दूर दूर तक दिखायी नहीं देती थी। बाबासाहब ने विचार किया कि आखिर इसकी वजह क्या है कि भारत के नागरिकों का एक वर्ग दूसरे वर्ग के लोगों को अछूत मानता है।

गहन विचार विमर्श के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इसकी जड़ में भारत में प्रचलित वर्णाश्रम व्यवस्था ही है। दलितों पर होनेवाले जुल्मों और समाज में उनको हीन मानने की प्रवृत्ति के खिलाफ लड़ने में बाबासाहब ने अपना पूरा जीवन होम कर दिया। वे भारत के हिंदू समाज में आमूलचूल परिवर्तन करना चाहते थे।

हिंदू समाज जड़ था और अब भी है, बाबासाहेब आंबेडकर उसको गतिशील समाज में बदलना चाहते थे। उनके इस रचनात्मक प्रयास का परंपरावादियों ने तीव्र विरोध किया, फिर भी बाबासाहब निराश नहीं हुए और अपने मिशन में लगे रहे, जिसके सकारात्मक परिणाम सामने आये।

वर्ष १९२४ में उन्होंने दलित वर्ग के उत्थान के लिए बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की। बाबासाहब द्वारा मूक नायक और बहिष्कृत भारत तथा जनता नामक पत्रों के माध्यम से दलित वर्ग में अभूतपूर्व जनजागृति लायी गयी। उन्होंने

वर्ष १९२७ में चवदार जलाशय से दलितों द्वारा पानी लेने के अधिकार के सवाल पर सत्याग्रह किया। वर्ष १९३० में अछूतों के मंदिर प्रवेश के अधिकार के लिए नासिक के कालाराम मंदिर पर सत्याग्रह का नेतृत्व किया। बाबासाहब केवल दलितों को समाज में सम्मान ही नहीं दिलाना चाहते थे, बल्कि दलित वर्ग के लोगों की गरीबी भी दूर करना चाहते थे। दलितों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए बाबासाहब ने अनेक प्रयास किये। उन्होंने मजदूरों, बंधुआ मजदूरों तथा किसानों के लिए भी संघर्ष किया। बाबासाहब द्वारा गठित स्वतंत्र मजदूर पार्टी ने मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी के लिए सबसे पहले आंदोलन छेड़ा था।

जहां उन्होंने मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी दिलाने के लिए आंदोलन छेड़ा था, वहीं पट्टेदारी को समाप्त करनेवाले काले कानून के खिलाफ भी आंदोलन छेड़ा था। बाबा साहब अपनी अंतिम सांस तक दलितों के हक के लिए लड़ते रहे।

हमारे देश में ऐसे कई महापुरुष, मनीषी हुए हैं जिन्होंने शोषितों, वंचितों एवं दलितों को समाज में बराबर हक दिलाने के लिए जीवन भर प्रयास किए हैं। तथागत बुद्ध से लेकर महात्मा ज्योतिबा फुले, संतकबीर, गुरु नानक, बाबासाहब डॉ. भीमराव आंबेडकर आदि इस संबंध में उल्लेखनीय माने जाते हैं।

हम यहां उस युग-पुरुष डॉ. आंबेडकर की बात करना चाहेंगे जिनकी चर्चाएं सामाजिक मंचों से लेकर संसद के गलियारों तक अक्सर होती रहती हैं और जिनका नाम हमारे राजनेताओं ने राजनीतिवश ही सही, तोते की तरह रट रखा है। लगता है हमारे नेताओं में कुछ नैतिकता अभी भी बाकी है।

देश के वातावरण को अंबेडकरमय बना देने में दलित संगठनों की भी अहम भूमिका रही है। वैसे तो सामाजिक असमानता के खिलाफ तथागत बुद्ध ने पहले ही बिगुल बजा दिया था। हिंदू धर्म से पलायन कर बौद्ध धर्म की स्थापना इसकी पुष्टि के लिए पर्याप्त मानी जा सकती है।

डॉ. आंबेडकर को मानवीय छुआछूत, अस्पृश्यता, ऊंच-नीच की दु:खद अनुभूतियां स्कूली जीवन से ही होने लगी थी। वह जब घर पहुंचते तो अपने पिताजी से पूछते थे कि पिताजी यह लोग (हिंदू) हमें अछूत क्यों मानते हैं? उनके ऐसे कई प्रश्नों में समाज को गहराई से समझने की जिज्ञासाएं समाहित थी। इन्हीं जिज्ञासाओं ने उन्हें सामाजिक विषमताओं से लड़ने की ताकत दी।

जिस विद्यालय में डॉ. आंबेडकर पढ़ रहे थे, उस विद्यालय में डिप्टी साहब स्कूल निरीक्षक निरीक्षण के लिए आए हुए थे। उन्होंने डॉ. आंबेडकर वाली कक्षा में जब बच्चों से पूछा कि बताइये कि ऐसी चीज कौन सी है जिसे तुम देख तो सकते हो लेकिन छू नहीं सकते? उस समय अधिकांशत: सवर्ण बच्चे ही शिक्षा प्राप्त किया करते थे।

अधिकांश बच्चों ने जवाब दिया कि सूर्य ऐसी चीज है जिसे हम देख तो सकते हैं लेकिन छू नहीं सकते। बच्चों का उत्तर सही था लेकिन डॉ. आंबेडकर के दृष्टिकोण में इसका उत्तर कुछ और ही था। पीछे बैठा बालक आंबेडकर उत्तर देने के लिए हाथ ऊपर उठाए हुए था। पूछने पर बालक आंबेडकर ने पानी से भरे घड़े की ओर संकेत करते हुए स्कूल निरीक्षक को जवाब दिया कि पानी से भरा वह घड़ा एक ऐसी चीज है जिसे मैं देख तो सकता हूं लेकिन छू नहीं सकता। उनके उत्तर से डिप्टी साहब आश्चर्य में पड़ गये।

उनके उत्तर में एक तरफ स्वयं को अछूत माने जाने की बेचारगी थी तो दूसरी तरफ सामाजिक असमानता के खिलाफ

विद्रोह करने का संकेत भी। यह हमारे समाज का सौभाग्य ही रहा है कि मानवीय असमानताओं की गंद भरी हमारी सामाजिक व्यवस्था में मानवीय समता की खुशबू बिखेरनेवाले भी हमेशा मौजूद रहे हैं। यही कारण है कि तमाम विपरीत परिस्थितियों के बावजूद भी तत्कालीन सिटी स्कूल के हेडमास्टर श्रीकृष्ण जी कैलुस्कर, डॉ. आंबेडकर को आंबेडकर नाम देनेवाले ब्राह्मण अध्यापक, बड़ौदा महाराज सयाजी राव गायकवाड जैसे समतापसन्द लोगों ने डॉ. आंबेडकर को समय-समय पर मार्गदर्शन सहित सहयोग किया।

जून १९२३ में उन्होंने एक बैरिस्टर के रूप में व्यवसायिक जीवन शुरू किया। २० मार्च, १९२७ में महाड़ में चावदार तालाब से पानी के लिए, १९३० में कालाराम के प्रसिद्ध मंदिर में प्रवेश के लिए सत्याग्रह किये। उन्होंने १९२० में मूकनायक नाम से एक पाक्षिक समाचार पत्र का प्रकाशन कर पत्रकारिता के क्षेत्र में कदम रखा। उन्होंने बहिष्कृत भारत, जनता, प्रबुद्ध भारत, समता के नाम से भी पत्र निकाले।

पत्रकारिता के क्षेत्र में कदम इसलिए रखना पड़ा क्योंकि उस समय का मीडिया पूर्णत: सवर्ण व अंग्रेजों के हाथों में होने के कारण डॉ. आंबेडकर को आमंत्रित किया गया तो सवर्ण हिंदुओं के कान तुरंत खड़े हो गए क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि डॉ. आंबेडकर को जाति तोड़ो मंडल कार्यक्रम की अध्यक्षता का सम्मान प्राप्त हो। परिणामस्वरूप सवर्ण डॉ. आंबेडकर को कार्यक्रम से रोकने में सफल रहे।

दृढ़ संकल्पी डॉ. आंबेडकर भी इस पर चुप बैठनेवाले नहीं थे। उन्होंने अपना अध्यक्षीय भाषण ऐनहिलेशन ऑफ कास्ट के नाम से छपवाकर स्वयं जनता के बीच वितरित कर दिया। डॉ. आंबेडकर अटूट इरादों संकल्पों के धनी थे। यही वजह रही कि वह हर मोर्चे पर अग्रसर होकर भारतीय सामाजिक समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व का संदेश देने में सफल हुए।

सन् १९२८ में साइमन कमीशन के समक्ष अछूत जातियों का पक्ष जोरदार तरीके से रखकर उन्होंने अंग्रेजी शासन को अछूतों के बारे में सोचने को बाध्य किया। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने का उन्हें अवसर प्राप्त हुआ। इस सम्मेलन में अछूत नेतृत्व का एक नया मुद्दा सामने आया क्योंकि दूसरी तरफ महात्मा गांधी भी स्वयं को हिंदू नेता के साथ-साथ अछूतों का नेता भी मानते थे। परिणामस्वरूप डॉ. आंबेडकर ही अछूतों के नेता के रूप में स्वयं को स्थापित करने में सफल हुए।

उन्होंने बहिष्कृत हितकारणी सभा, इंडिपेबंडेंट लेबर पार्टी, अखिल भारतीय अनुसूचित जाति संघ व भारतीय बौद्ध महासभा जैसे संगठनों की स्थापना कर दलित आंदोलन की धार को और भी पैना किया। स्वतंत्र भारत का संविधान लिखने का भी मौका उन्हें मिला। संविधान सभी ने उन्हें संविधान निर्माता के रूप में सम्मानित भी किया। उन्होंने सिद्धांतों से कभी राजनीतिक समझौता नहीं किया। इसलिए उन्होंने नेहरू मंत्रिमंडल से हिंदू कोड़ बिल के मुद्दे पर स्वयं इस्तीफा देकर अपनी सैद्धांतिक सोच को और भी मजबूती प्रदान की।

जातिवाद और ऊंच-नीच की मनुवादी व्यवस्था से आजिज होकर उन्होंने १९३५ में आत्मिक पीड़ा लोगों के सामने घोषणा के रूप में व्यक्त की कि मैं हिंदू के रूप में पैदा हुआ, वह मेरे वश में नहीं था किन्तु हिंदू के रूप में मरूंगा नहीं। यह मेरे वश में है। १४ अक्टूबर, १९५६ को लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। कुछ ही दिनों बाद ६ दिसंबर, १९५६ की वह युग पुरुष भारतीय समाज के क्षितिज से ओझल हो गया जिसे बौद्ध दर्शन में महापरिनिर्वाण कहा जाता है।

उनके द्वारा किये गए समाज परिवर्तन के कार्यों के लिए सारा राष्ट्र उन्हें श्रद्धांजलि अपति करता है।

डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर एक बहुजन राजनीतिक नेता और एक बौद्ध पुनरूत्थानवादी भी थे। उन्हें बाबासाहेब के नाम से भी जाना जाता है। आम्बेडकर ने अपना सारा जीवन हिन्दू धर्म की चतुवर्ण प्रणाली और भारतीय समाज में सर्वत्र व्याप्त जाति व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष में बिता दिया। उन्हें बौद्ध महाशक्तियों के दलित आंदोलन को प्रारंभ करने का श्रेय भी जाता है। आम्बेडकर को भारत रत्न से भी सम्मानित किया गया है जो भारत का सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार है। अपनी महत्वपूर्ण उपलब्धियों तथा देश की अमूल्य सेवा के फलस्वरूप डॉ. आम्बेडकर को आधुनिक युग का मनु कहकर सम्मानित किया गया।

डॉ. आंबेडकर जी के अनुसार- कानून और व्यवस्था राजनीतिक शरीर की दवा है और जब राजनीतिक शरीर बीमार पड़े तो दवा जरूर दी जानी चाहिए।

भारतीय संविधान के शिल्पकार, कानूनविद, अर्थशास्त्री, भारतरत्न महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अर्थात्त भीमराव रामजी आंबेडकर जिसे उनके अनुयायी महापरिनिर्वाण दिन के रूप में मनाते हैं। इस अवसर पर महाराष्ट्र के कोने-कोने से लाखों की संख्या में उनके अनुयायी मुंबई के दादर स्थित चैत्यभूमि में एकत्र होकर बाबासाहब के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं। दलितों के उद्धार के लिए, उनके अधिकार के लिए अंतिम सांस तक लड़नेवाले डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने अपने अनुयाइयों को पढ़ो, संगठित हो, संघर्ष करो की सीख दी। डॉ. बाबासाहब के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक और प्रेरणादायक हैं। पर उनके चिंतन और दृष्टि को ठीक तरह से समझने के लिए कुछ महत्वपूर्ण बिंदु है। वे अपने चिंतन में कहीं दुराग्रही नहीं दिखाई देते हैं। उनके चिंतन में जड़ता नहीं है। वे निरंतर अपने ज्ञान और अनुभव से सीखते रहे और उनके आधार पर अपने निष्कर्षों को परिष्कृत करते रहे। दूसरे, अपने लेखन में उन्होंने जगह-जगह हिंदू या हिंदुओं आदि शब्दों का प्रयोग किया है। पर मोटे तौर पर इन दोनों शब्दों का प्रयोग सवर्ण हिंदुओं के लिए ही किया गया है। डॉ. आंबेडकर अस्पृश्य समझे जानेवाले समाज के अधिकारों और उनके उत्थान के लिए जीवन भर लड़ते रहे। पर इससे यह निष्कर्ष निकाल लेना सही नहीं होगा कि वे समाज के केवल एक हिस्से के नेता थे। उनका दृष्टिकोण न संकुचित था और न ही वे पक्षपाती थे। वास्तव में दलित समाज को सशक्त और शिक्षित करने का उनका अभियान पूरे हिंदू समाज को सशक्त करने के अभियान का ही एक हिस्सा था। डॉ. आंबेडकर ने उस समय जो प्रश्न उठाए थे वे आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। समाज का एक बड़ा और महत्वपूर्ण भाग यदि कमजोर और अशिक्षित रहेगा तो समग्र हिंदू समाज सशक्त कैसे बन सकता है?

शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार जब समाज के एक विशेष वर्ग को ही हो और बाकी सारा समाज ज्ञान-विज्ञान से दूर रहने को बाध्य हो तो वह समाज आगे कैसे बढ़ सकता है? डॉ. आंबेडकर वास्तव में इसी विषमता को दूर करने के लिए लड़ रहे थे। उनके इस प्रयास को एकांगी कदापि नहीं कहा जा सकता। कुछ सौ साल पहले गुरु गोविंद सिंह ने भी वर्णविहिन और जातिविहिन समाज की स्थापना का प्रयास किया था। भक्तिकाल में भी इस प्रकार के प्रयोग किए गए थे। डॉ. आंबेडकर उसी प्रयोगधर्मिता को आगे बढ़ा रहे थे। पर उनके प्रयोग में एक नवीनता थी। पहले ऐसे अधिकांश प्रयोग सवर्ण हिंदुओं द्वारा हुए थे। पहली बार इस प्रयोग का सूत्रधार एक ऐसा व्यक्ति बन रहा था जो स्वयं अस्पृश्य समझे

जानेवाले समाज का हिस्सा था और वह वर्णव्यवस्था को चुनौती दे रहा था। उस समय हिंदू समाज में एक मंथन चल रहा था। वर्णव्यवस्था अब केवल शास्त्रों में रह गई थी। वास्तव में वर्ण का स्थान जाति ने ले लिया है। इस सामाजिक सागर-मंथन से निकला जहर भी आंबेडकर को ही पीना पड़ा। वे बार-बार सवर्ण हिंदुओं से विषमता की दीवार गिराने का आग्रह कर रहे थे ताकि हिंदू समाज सशक्त बन सके। वे उन्हें हर तरह से झकझोर रहे थे। अंत में निराश और क्षुब्ध होकर उन्होंने १९३५ में नाशिक में यह घोषणा भी कर दी कि वे अब हिंदू नहीं रहेंगे। उनकी इस घोषणा से इसाई मिशनरियां और इस्लामी संस्थाएं बहुत खुश हुई। पर उनका मानना था कि मतांतरण से राष्ट्रांतरण होता है। उनका यह भी मानना था कि इस्लाम और ईसाइयत विदेशी मजहब है, उनके अपनाने से व्यक्ति अपने देश की परंपरा से अलग हो जाता है। यही कारण है कि उन्होंने इन दोनों में से किसी भी धर्म को अंगीकार नहीं किया। अंतत: उन्होंने जब बौद्ध धर्म अंगीकार किया तो उनका गला भर आया था। उन्होंने रहस्योद्घाटन किया- मैंने महात्मा गांधी को वचन दिया था कि मैं चाहे जिस धर्म में भी दीक्षित होऊंगा पर यह ध्यान रखूंगा कि उससे भारतीयता को कम से कम हानि हो। आज मैंने वह वचन पूरा कर दिया है। बुद्ध भारत की सनातन परंपरा के ही हिस्सा हैं, इसलिए मेरी इस दीक्षा से कोई हानि नहीं होगी।

आजादी की लंबी लड़ाई के बाद अंतत: अंग्रेजों ने भारत छोड़कर जाने की घोषणा की तो देश के सामने एक नए संविधान की रचना का प्रश्न उपस्थित हुआ। देश को अब अपने लिए युगानुकूल एक नई स्मृति की रचना करनी थी। पुरानी स्मृतियां अब अप्रासंगिक हो चुकी थीं। इस नई स्मृति (संविधान) का रचयिता कौन हो, इस पर गंभीरता से विचार किया जाने लगा। अंत में संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए एक समिति का गठन किया गया, जिसके अध्यक्ष पद पर डॉ. बाबासाहब आंबेडकर की नियुक्ति की गई। इसके बाद डॉ. आंबेडकर स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री बने। हिंदुओं के लिए एक कानून संहिता (हिंदू कोड बिल) बनाने की बात आई तो सबसे बड़ा सवाल उठ खड़ा हुआ हिंदू को परिभाषित करने का। बाबा साहब ने कहा मुसलमान, इसाई, यहूदी और पारसी को छोड़कर बाकी इस देश के सभी नागरिक हिंदू हैं। अर्थात डॉ. आंबेडकर के अनुसार विदेशी उद्गम के धर्मों को माननेवाले गैर हिंदू, बाकी सब हिंदू हैं। उन्होंने इस परिभाषा से देश की आधारभूत एकता को रेखांकित कर दिया था। संविधान सभा में उन्होंने कहा था- आज हम राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से टुकड़े-टुकड़े हो गए हैं। हम आपस में लड़नेवाले गुट बन गए हैं। पर मुझे विश्वास है कि कालांतर में अच्छा समय आने पर हमारे देश को एक होने से रोकना संसार की किसी भी शक्ति के लिए संभव नहीं। बाबासाहब द्वारा उठाए गए प्रश्न आज भी किसी सीमा तक अपने उत्तर की तलाश में हैं। उनके उत्तर ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी और उनके सही उत्तरों में ही भारत का भविष्य छिपा है।

कोकण संभाग में अंबावडे (रत्नागिरि) के मूल निवासी बाबासाहेब का जन्म मध्यप्रदेश के महू नगर में हुआ था। वे अपने माता-पिता की चौदहवीं संतान थे। बाबासाहेब ने तत्कालीन विपरीत सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों में प्राथमिक स्तर से लेकर महाविद्यालयीन शिक्षा मुंबई में ली। बाबासाहेब ने १९०७ में एलफिंस्टन कॉलेज से मैट्रिक पास की। उन्होंने देश-विदेश से अनेक उपाधियां हासिल कीं। बड़ौदा नरेश के यहां एक करार के अनुसार नौकरी की और १९१७ में मुंबई वापस आए।

बाबासाहेब को मुंबई जैसे महानगर में भी कई बार जातीय आधार पर अपमान सहना पड़ा। आजीविका के लिए शेयर मार्केट में सटोरियों को सलाह देने के लिए उन्होंने एक कार्यालय खोला। लेकिन अफसोस जब बाबासाहेब की जाति का

लोगों को पता चला तो लोगों ने उनसे सलाह लेना बंद कर दिया। फलस्वरूप उनका यह कार्यालय भी बंद हो गया। तत्पश्चात बाबासाहेब ने अध्यापन के क्षेत्र में कदम रखा। भारी उठा-पटक के बीच बाबासाहेब १९३८ तक अध्यापन कार्य करते हुए गवर्नमेंट लॉ कॉलेज के प्राचार्य बने।

प्राचार्य पद पर काम करते हुए उन्होंने मुंबई में सामाजिक, शैक्षणिक, मजदूर वर्ग, पत्रकारिता, राजनीति आदि के क्षेत्र में भी काम करना शुरू कर दिया था।

शिक्षा के प्रसार के लिए १९४६ में पीपुल्स एजूकेशन सोसायटी का गठन किया और सिद्धार्थ कॉलेज की नींव रखी। मुंबई में सर्वप्रथम बाबसाहेब ने मॉर्निंग कॉलेज की प्रथा शुरू की और अर्न-लर्न (कमाएं और पढ़े) का नारा दिया था। उस समय हजारों युवकों को इसका लाभ मिला।

१९२४ में बाबासाहेब ने समाजसुधार के क्षेत्र में आवाज उठाई और उन्होंने बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन किया। चवदार तालाब सत्याग्रह (महाड) १९२७ में और १९२७ में ही नासिक के कलाराम मंदिर में प्रवेश का शंखनाद किया। महार वतन और खोती जैसी प्रथाओं के खिलाफ आवाज बुलंद की और लाखों परिवारों को सामंतों-जमीनदारी के बेगारी, शोषण और भेदभाव के मकड़जाल से मुक्त कराया। इस अभियान में पहली बार लाखों लोगों ने दीन-नेत्रहीन दशा में होने के बावजूद पैदल आकर बाबासाहेब के नेतृत्व में आस्था व्यक्त की थी। मुंबई की अर्थव्यवस्था को आधार देने में कपड़ा मिलों के मुख्य योगदान के बावजूद इसके कामगार शोषण के शिकार थे। बाबासाहेब ने कामगारों को संगठित किया और १९२४, १९२५, १९२८ और १९२९ में ४३ कपड़ा मिलों के ७५ हजार कामगारों का नेतृत्व कर न्याय दिलाया। इसी तरह वे मुंबई के हर क्षेत्र के लोगों को कानूनी संरक्षण दिलाने के लिए संघर्ष करते रहे।

दादर स्थित हिंदू कॉलोनी में अपने बनाए राजगृह में १९३४ के दरम्यान आए। यहां से राजनीति के क्षेत्र में व्यापक काम शुरू किया। स्वतंत्र लेबर पार्टी बनाई। मुंबई को महाराष्ट्र का अंग बनाए रखने के लिए अक्टूबर १९४८ में साथ दिया था। पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय रहते हुए, मूकनायक, बहिष्कृत भारत और जनता पाक्षिक का प्रकाशन किया था।

बाबासाहेब ने ही मुंबई सहित देशभर में सेवायोजना कार्यालय बनाने का पहला प्रस्ताव रखा था। मुंबई में कामगारों के बीच काम करने से मिले अनुभव का कामगार केंद्रीय मंत्री रहते हुए भरपूर उपयोग किया था। इस बीच भेद-भाव की अनेक ठोकरों से मिली टीस को सहन किया और बौद्ध धर्म को अपनाया।

२०५० तक इंग्लिश न जाननेवाला व्यक्ति गूंगा-बहरा जैसा बन जाएगा। ऐसे में आरक्षण उसके लिए किस काम का रहेगा? पूर्वी पाकिस्तान यानी वर्तमान बांग्लादेश पाकिस्तान का एक प्रांत था। पर पाकिस्तान के संविधान में वह गहराई नहीं थी। उसने अपना एक हिस्सा वर्ष १९७१ में खो दिया। पाकिस्तान का निर्माण ही धर्म के आधार पर हुआ था, पर मुस्लिम बहुत पूर्वी पाकिस्तान विद्रोह कर अलग देश बन गया। एक अरब २५ करोड़ की आबादी वाले देश भारत में २९ राज्य और सात केंद्र शासित प्रदेश हैं, पर भारत का संघीय ढांचा बरकरार है। यह एक मजबूत राष्ट्र के रूप में आगे बढ़ता जा रहा है। जितना बहुभाषी, बहुधार्मिक, बहुजातीय भारत है, उतनी दुनिया का कोई भी देश नहीं। अमेरिका में जरूर ५० राज्य हैं, पर सभी अंग्रेजीभाषी हैं।

संविधान और अखंडता - भारत की एकता और अखंडता को हमारे संविधान ने बचा कर रखा है। अब इस बात पर

कोई विवाद नहीं है कि हमारा संविधान विश्व में श्रेष्ठतम है। भारतीय संविधान के शिल्पकार बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर की सबसे बड़ी चिंता यही थी कि भारत की एकता, अखंडता किस तरह सदैव बनी रहे। इसका उत्तर उन्हें मिला फेडरलिज्म में। एक ऐसा संघीय ढांचा जिसमें छोटे से छोटा राज्य भी अपने को सहज रख सके, बड़े राज्यों से डरे नहीं। बाबा साहब इस कार्य में सफल रहे।

भारत को श्रेष्ठतम संविधान देने के लिए डॉ. आंबेडकर ने विश्व के कुछ श्रेष्ठ संविधानों का अध्ययन किया, स्वयं अपनी विद्वता का इस्तेमाल किया और अंतत: कभी भी असफल न होनेवाला संविधान बना डाला। उच्च शिक्षा के लिए डॉ. आंबेडकर जुलाई १९१३ में न्यूयॉर्क स्थित कोलंबिया विश्वविद्यालय पहुंचे। बहुत कम समय में ही उन्होंने अपने सहपाठियों और प्रोफेसरों को प्रभावित करना शुरू कर दिया। आंबेडकर के प्रोफेसर्स, खासकर प्रोफेसर जॉन डिवे, जेम्स शॉटवेल और सेलिमेन उनकी इंग्लिश से हैरान थे कि एक गैर अंग्रेजी भाषी देश के नागरिक को इतनी अच्छी इंग्लिश कैसे आती है।

आचार्य रतनलाल सोनग्रा पुणे द्वारा रचित मैत्रेय बुद्ध नामक पुस्तक विश्वरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर पर आधारित है। मनुष्य वही जिसके जीवन में अपने द्वारा किये कार्यों की पारदर्शिता परिलक्षित होती है। ठीक उसी तरह बाबासाहेब के जीवन में सर्वलोक हितकारक ऐसे दस गुण दिखाई दिए। इन दस गुणों को पाली ग्रंथ में पारमिता कहते हैं। दान, शील, नैष्कर्म्य, प्रज्ञा, वीर्य, शांति, सत्य, अधिष्ठान, मैत्री, उपेक्षा।

मनुष्य अगर एक भी पारमिता का पालन करता है, तो उसे बुद्धत्व की प्राप्ति हो जाती है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने अपने जीवन में सभी दस पारमिताओं का परमोच्च पालन किया है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर और इनके पूर्वज शाक्यमुनि बुद्ध से संबंधित हैं, वास्तव में आंबेडकरजी शाक्य ही थे। गौतम बुद्ध शाक्य थे। मौर्यराज वंश तथा सम्राट अशोंक भी शाक्य थे और डॉ. बाबासाहेब का उपनाम (सकपाल- सक्कपाल-शाक्यपाल) है।

दान सब दानों से बढ़कर है। दान पारमिता का प्रभाव विभिन्न संप्रदायों में है। अन्न, वस्त्र, भोजन के साथ कन्यादान यह शब्द भी जुड़ा हुआ है। डॉ. आंबेडकरजी ने अविरत ज्ञानसाधना कर समाज में... वैज्ञानिक और वैधानिक क्रांति लाने का प्रयास किया। अपनी उपाधियों का उपयोग अपने निजी जीवन के लिए नहीं परंतु पूर्ण समाज के लिए ज्ञानदान देने के लिए किया। उन्होंने लाखों को विद्यादान और संविधान का दान कर उन्हें राज्यपाल लोकपाल बनाया।

जो शीलवान है, विद्वान है और धर्म कार्य में स्थित है। सत्यवान है, जो अपना कर्तव्य करता है, ऐसे मनुष्य से लोग प्रेम करते हैं। कुमार्ग से निवृत्त होना और सत्कर्म में प्रवृत्त होना, उसे साधु लोग शील कहते हैं। प्राणिघात न करना, चोरी न करना, व्याभिचार न करना, असत्य भाषण न करना और नशीले पदार्थों का सेवन न करना। इन पांच नियमों का निष्ठा से पालन करने पर कुकर्म से मुक्त हो सकते हैं। बाबसाहब ने अपने जीवन में शील पारमिता का परिपूर्ण पालन किया। वे अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में तीन साल तक रहे। वहां उन्होंने लगनपूर्वक अध्ययन किया। उनके पास छात्रवृत्ति की रकम के सिवा अन्य कोई पैसे नहीं थे। उसमें से कुछ पैसे बचाकर परिवार को खर्च के लिए भेजते थे। यहां बिना दवाई के उनका छोटा बच्चा मर गया। ऐसी विपरीत दशा में शील सुरक्षित रखना यह अपूर्व साधक ही कर सकता है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संविधान की मसौदा के अध्यक्ष बने। संविधान बनाने के लिए उन्होंने बहुत से देशों के

संविधान, कायदे कानून का अध्ययन किया था। तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने कुछ महत्वपूर्ण किताबों की लिस्ट खरीदने के लिए रुपए तीन हजार का चेक आंबेडकरजी को भेजा। वो चेक जैसे ही प्राप्त हुआ, उन्होंने लिस्ट देखकर पं. नेहरू को पत्र लिखकर सूचित किया कि मेरे ग्रंथालय में यह सभी किताबें उपलब्ध हैं, जिन्हें मैंने पढ़ा है।

उनकी सहायता के लिए धन्यवाद और रु. तीन हजार का चेक उन्हें वापस लौटा दिया। चेक वापस भेजकर उन्होंने शील का निर्वाह किया।

शांति का अर्थ है- क्षमाशीलता किसी से घृणा नहीं करना और घृणा के बदले क्षमाशीलता का परिचय देना। बचपन में सार्वजनिक जगहों पर सवर्णों से पीने का पानी नहीं मिला। स्कूल में हर समय बाहर बैठना पड़ा, अर्थशास्त्र, विधि, विज्ञान में विदेशों से उच्च शिक्षा होने पर भी डेढ़ साल तक कोई उचित काम नहीं मिला। बड़ोदा में रहने को घर नहीं मिला, चपरासी भी फाइल ऊपर से फेंकता था, पनवेल नुक्कड़ पर चायवाले ने चाय नहीं दी। इस महारथी का इतनी बार अपमान होने पर भी उन्होंने शांति पारमिता का पालन किया।

बराबरी और आजादी से आदर्श समाज मुमकिन

एक ऐसा समाज, जिसमें न्याय, भाईचारा, सबके साथ बराबरी और आजादी हो वह आदर्श समाज होता है। भाईचारे का मतलब यह है कि देश में पैदा हुए सब लोग आपस में भाई भाई हैं और सबका पिता की संपत्ति की ही तरह देश की संपत्ति पर भी एक समान हक है। जीवन चलाने के लिए जो जरूरी है यानी भोजन, कपड़े, दवाई और शिक्षा- इन सब पर सबका बराबर हक। इसी का नाम भाईचारा है। इसी का दूसरा नाम जनतंत्र।

बराबरी के मसले पर फ्रांसीसी राज्य क्रांति के वक्त बहुत विवाद हुआ, क्योंकि सब मनुष्य एक समान नहीं होते। कोई प्रतिभाशाली है, कोई जड़-बुद्धि, कोई कलाकार है, कोई बदमाश, कोई बल्लिष्ठ है, कोई दुर्बल, कोई वीर है, कोई भीरू, कोई पुरुषार्थी है, कोई आलसी, कोई कर्मठ है और कोई आरामतलब, कोई हर तरह से सुंदर है, कोई कुरूप आदि। प्राकृतिक असमानता के कारण बर्ताव में भी असमानता न्यायसंगत है। लेकिन हर शख्स को, उसके भीतर निहित शक्ति के संपूर्ण विकास में, समान भाव से प्रोत्साहन और सुविधा मिलना बहुत जरूरी है। इसमें जाति, वंश, खानदान, पारिवारिक ख्याति, सामाजिक संबंध आदि बातें बाधक नहीं होनी चाहिए। जनतंत्र में वोट सबके समान होते हैं, वोटों का वर्गीकरण नहीं होता। इसलिए सबकी उन्नति के हक और उनके साथ बर्ताव में भी बराबरी होना बेहद जरूरी है।

आजादी वक्त की मांग और युग-धर्म है। जैसे उठने-बैठने, चलने-फिरने, हिलने-डुलने, सोने-जागने की आजादी सबको मिली है, उसी तरह हर शख्स को अपनी इच्छा के मुताबिक जीविका अर्जन करने और अपने जीवन का कर्त्तव्य स्थिर करने की विवशता होना तो दासता है। वर्ण विधान अर्थात कल्पित वर्णों के मुताबिक कर्मों की व्यवस्था दास प्रथा बनी। खान-पान, रहन-सहन, धर्माचरण, चिंतन-भाषण, लेखन-मुद्रण इत्यादि की आजादी सभी को होनी चाहिए।

इस प्रकार न्याय, बंधत्व, बराबरी और आजादी से युक्त समाज ही भीमराव आंबेडकर के अनुसार आदर्श समाज के लक्षण है।

भारतीय महापुरुषों में महात्मा गांधी के बाद बाबासाहब भीमराव आंबेडकर संभवत: अकेले ऐसे नेता हैं जिन पर सबसे ज्यादा पुस्तकें, आलेख और शोध प्रबंध लिखे गए हैं और जिनके विचारों पर आज भी सर्वाधिक बहस होती है।

बाबासाहब दुनिया के उन प्रमुख व्यक्तियों में शुमार होते हैं, जिनके पक्ष और विपक्ष दोनों में आक्रामक होनेवालों की बहुत बड़ी संख्या है। सामान्य दृष्टि से भी देखें तो यह स्थिति ही किसी व्यक्ति की अहमियत को प्रमाणित करती है। बाबसाहब पर लिखने या शोध करनेवालों में केवल दलित ही नहीं, सवर्ण समाज के लोग भी हैं और पुस्तकें भी केवल दलित या आंबेडकर साहित्य के प्रचार-प्रसार में लगी संस्थाएं ही प्रकाशित नहीं करती, आम प्रकाशक भी कर रहे हैं।

बदली हुई स्थितियां- उनके संदर्भ में स्थितियां काफी बदलीं हैं। उसी तरह समाज और अर्थव्यवस्था की जिस रचना का अनुभव उन्होंने किया आज उसमें भी आमूल नहीं तो व्यापक बदलाव अवश्य आ गया है। यह बात ठीक है कि समाज में जातिभेद, छुआछूत के अवशेष आज भी विद्यमान हैं, पर कम-से-कम अर्थव्यवस्था के स्तर पर तो भारत तब से आमूल रूप से बदल ही चुका है और बदलाव की यह प्रक्रिया हम चाहें न चाहें सतत आगे बढ़ रही है। ऐसे में यह आवश्यक है कि हम बाबासाहब को आज की परिस्थिति के अनुसार देखने की कोशिश करें और फिर निष्कर्ष निकालें कि आखिर अब उनके अनुयायियों और विचार समर्थकों की भूमिका कैसी होनी चाहिए। तीन पहलुओं के आधार पर ऐसा करने की कोशिश कर सकते हैं। पहला समतामूलक समाज का निर्माण उनका ध्येय था, तो उसके रास्ते आनेवाली जो भी बाधाएं उन्हें नजर आईं उसके विरुद्ध उन्होंने आवाज उठाई और उसे बदलने का प्रयास किया। उन परिस्थितियों में उन्हें लगा कि गांव और गांवों की अर्थव्यवस्था, जीवनप्रणाली समाज में ऊंच-नीच, छुआछूत को बनाए रखने के आधार साबित हो रहे हैं। इसलिए इस अर्थव्यवस्था और ग्राम व्यवस्था पर चोट करी और इसे बदलने का प्रयत्न किया। इसलिए उन्होंने आधुनिक पश्चिमी विकास, जिसमें तकनीकों का प्रमुख स्थान था स्वीकार किया। स्पष्ट है, भारत की ग्रामीण समाज की प्रकृति की जगह उनका इरादा शहरी समाज के विस्तार का था। शहर में आते ही, कारखाना या कार्यालय में काम करना आरंभ करते ही अस्पृशता का लगभग नहीं दिखती। गांवों में कुछ कार्य निश्चित जातियों द्वारा ही किए जाते थे और समाज की श्रेणी की तरह कार्यों की भी ऊंच नीच की श्रेणियां बनी हुई थीं। इसके विपरीत शहर में तकनीक से संबंधित आर्थिक विकास से जुड़े किसी संस्थान में कोई काम नीची या ऊंची जातियों के आधार पर आरक्षित नहीं हो सकता था। इसलिए उन्होंने आधुनिक विकास नीति की आक्रामक वकालत थी।

हालांकि उनको इस बात का आभास था कि ग्रामीण वर्चस्व वाले भारतीय समाज की प्रकृति पूरी तरह बदल नहीं सकती। सारे दलित न तो शहर जाने के लिए आसानी से तैयार होंगे और न शहरों की क्षमता इतनी अधिक होगी कि इन सबका समायोजन कर सके। इसलिए उन्होंने अपने आर्थिक विचारों में कृषि ढांचे में आमूल परिवर्तन का विचार रखा। कृषि का राष्ट्रीयकरण करते हुए इसमें मशीनों के अत्यधिक प्रयोग की हिमायत उन्होंने की। उनकी सोच यह थी कि इससे एक तो श्रमिकों का शोषण रुकेगा, कृषि पैदावार बढ़ेगी, किसानों की स्थिति भी बेहतर होगी और कुल मिलाकर गरीबी दूर होगी। पहले आम चुनाव यानी १९५२ में उन्होंने अनुसूचित जाति परिसंघ के घोषणा पत्र में अपनी आर्थिक और सामाजिक नीति को बिन्दुवार रखा, ताकि गरीबी का अवशेष न रहे- बाबासाहब भारत को एक ऐसा देश बनाना चाहते थे, जहां गरीबी का अवशेष न रहे, जहां से जात-पांत, छूआछूत का पूरी तरह अंत हो जाए, जहां हर व्यक्ति के पास अपने विकास का अवसर पाने की क्षमता हो, जहां कोई जाति, धर्म के आधार पर भेदभाव का शिकार न हो, आदि आदि। इसमें यह भाव हर जगह शामिल है कि किसी को इतनी अधिक आर्थिक शक्ति न प्राप्त हो जाए कि समाज में भयानक आर्थिक

भेदभाव बढ़े। आर्थिक संपन्नता और विपन्नता के बीच की खाई को वे पाटना चाहते थे। वे यह भी नहीं चाहते थे कि भारत पर बाहरी आर्थिक शक्तियों का किसी तरह वर्चस्व हो। आज आर्थिक भूमंडलीकरण का जो क्रूर चेहरा दिख रहा है उसे बाबासाहब कतई स्वीकार नहीं कर सकते थे। इससे एक नई किस्म की आर्थिक सभ्यतागत गुलामी की स्थिति कायम हो रही है। इसमें एक वर्ग की संपन्नता बढ़ती जा रही है और जिसे उपभोग की सारी सुविधाएं प्राप्त हो जाती हैं और दूसरे अपनी आर्थिक क्षमता के कारण उससे वंचित हैं। ऐसा समाज बाबासाहब के मूल ध्येय से मेल नहीं खाता। आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण की आक्रामक वकालत करना आज बाबासाहब के विचार नहीं हो सकते। दूसरे, समाज में अस्पृशता की कुरीतियों का कटु अनुभव होते हुए भी बाबासाहब ने भारत से बाहर मजहब या पंथ स्वीकार नहीं किया। उन्होंने यह अवश्य कहा कहा कि मैं हिन्दू के रूप में पैदा अवश्य हुआ पर मरूंगा हिन्दू के रूप में नहीं, उन्होंने बौद्ध मत स्वीकार किया। यह काफी सोचा-समझा निर्णय था। इस पर उनके अपने विचार भी हैं और दूसरों के विश्लेषण भी। आंबेडकरजी ने संस्कृत सीखी, हिन्दू धर्मग्रंथों का गहन अध्ययन किया और अस्पृश्यता का धार्मिक आधार ढूंढने की कोशिश की। उसके बाद इसलिए वे बौद्ध धर्म की ओर गए, जहां साधना के लिए किसी पुरोहित की, किसी मूर्ति की, किसी विशेष कर्मकांड की आवश्यकता नहीं।

अंतत: बाबसाहब समाज और देश की एकता के प्रबल पक्षधर थे। संविधान लिखनेवाली समिति के प्रमुख होने के नाते एक भी शब्द बगैर उनके पढ़े तो स्वीकृत हो नहीं सकता था और अंत में संविधान के जो नीति-निर्देशक तत्व हैं, अगर उसे भी बाबासाहब आंबेडकर के विचारों का प्रतिबिंब मानें तो सब कुछ स्पष्ट हो जाता है। भारत की राज व्यवस्था का वही तो लक्ष्य है, जिसे साकार करने का संकल्प भाव शासन-प्रशासन में है ही नहीं। सामाजिक न्याय की कल्पना उसी से साकार हो सकती है तथा समता-ममतामूलक समाज रचना का आधार वही हो सकता है।

आधुनिक भारत के संविधान निर्माताओं में डॉ. भीमराव आंबेडकर सर्वप्रमुख हैं। डॉ. आंबेडकर मात्र एक साधारण व्यक्ति ही नहीं वरन् दार्शनिक, चिंतक, विचारक, शिक्षक, सरकारी सेवक, समाज सुधारक, मानवाधिकारवादी, संविधानविद और राजनीतिज्ञ इन सभी रूपों में उन्होंने विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह किया। यह संयोग ही कहा जाएगा कि जिस वर्ष डॉ. आंबेडकर का जन्म हुआ, उसी वर्ष महात्मा गांधी वकालत पास कर लंदन से भारत वापस आए। डॉ. आंबेडकर के पिता रामजी आंबेडकर सैन्य पृष्ठभूमि के थे एवं विचारों से क्रांतिकारी थे जिनके संघर्षस्वरूप सेना में महारों के प्रवेश पर लगी पाबन्दी को हटाकर सन १९१४ में प्रथम विश्व युद्ध के दौरान महार बटालियन की स्थापना हुई। बुद्ध, कबीर, फुले की अमिट छाप- डॉ. आंबेडकर पर बुद्ध, कबीरदास और ज्योतिबा फुले की अमिट छाप पड़ी थी। बुद्ध से उन्होंने शारीरिक व मानसिक शान्ति का पाठ लिया, कबीर से भक्ति मार्ग तो ज्योतिबा फुले से अथक संघर्ष की प्रेरणा। यही नहीं, अमेरिका और लन्दन में अध्ययन के दौरान वहां के समाज, परिवेश व संविधान का भी आपने गहन अध्ययन किया और उसे भारतीय परिवेश में उतारने की कल्पना की। अमेरिका के १४ वें संविधान संशोधन जिसके द्वारा काले नीग्रों को स्वाधीनता के अधिकार प्राप्त हुए, से वे काफी प्रभावित थे और इसी प्रकार दलितों व अछूतों को भी भारत में अधिकार दिलाना चाहते थे। २० मार्च १९२७ को महाड़ में आपने दलितों का एक विशाल सम्मेलन बुलाया और उनकी अन्तरात्मा को झकझोरते हुए अपने पैरों पर खड़ा होने और स्वचेतना से स्वाभिमान व सम्मान पैदा करने की बात कही।

उन्होंने दलितों का आह्वान किया कि वे सरकारी नौकरियों में बढ़-चढ़कर भाग लें। वहीं दूसरी तरफ यह भी कहा कि- अपना घर-बार त्यागो, जंगलों की तरफ भागो और जंगलों पर कब्जा कर उसे कृषि लायक बनाकर अपना अधिकार जमाओ। इस आंदोलन से रातोंरात डॉ. आंबेडकर दलितों के सर्वमान्य नेता के रूप में उभरकर सामने आए। डॉ. आंबेडकर का स्पष्ट मानना था कि राजनैतिक स्वतंत्रता से पूर्व सामाजिक एवं आर्थिक समानता जरूरी है। आंबेडकर का मानना था कि सवर्ण व्यवस्था का सीधा दुष्प्रभाव भले ही दलितों व पिछड़ों मात्र पर दिखता है पर जब इसी सामाजिक विघटन के कारण देश गुलाम हुआ तो सवर्ण भी बिना प्रभावित हुए नहीं रह सके। योग्यता, प्रतिभा व मेधा के भीम- डॉ. आंबेडकर अपनी योग्यता की बदौलत सन १९४२ में वायसराय की कार्यकारी परिषद के सदस्य भी बने एवम कालान्तर में संविधान सभा के सदस्य भी चुने गये। संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष रूप में आपने संविधान का पूरा खाका खींचा और उसमें समाज के दलितों व पिछड़े वर्गों की बेहतरी के लिए भी संवैधानिक प्रावधान सुनिश्चित किए। स्वतंत्रता पश्चात डॉ. आंबेडकर भारत के प्रथम कानून मंत्री भी बने पर महिलाओं को संपत्ति में बराबर का हिस्सा देने के लिये उनके द्वारा संसद में पेश किया गया हिन्दू कोड बिल निरस्त हो जाने से वे काफी आहत हुए और १० अक्टूबर १९५१ को मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दिया। हिन्दू धर्म में मरना नहीं चाहते थे- १९३५ में नासिक जिले के मेले में आयोजित महार सम्मेलन में ही आंबेडकर ने घोषणा कर दी थी कि- आप लोगों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैं धर्म परिवर्तन करने जा रहा हूं। मैं हिन्दू धर्म में पैदा हुआ, क्योंकि यह मेरे वश में नहीं था लेकिन मैं हिन्दू धर्म में मरना नहीं चाहता। बौद्ध धर्म ग्रहण करने के कुछ ही दिनों पश्चात ६ दिसंबर १९५६ को डॉ. आंबेडकर ने नश्वर शरीर को त्याग दिया पर आत्मदीपोभव की तर्ज पर समाज के शोषित, दलित व अछूतों के लिये विचारों का एक पुंज छोड़ गए। अक्षुण्ण प्रासंगिकता- आज डॉ. आंबेडकर को लेकर मत-विमत में राजनीति बहुत करते हैं पर उनके दिखाए रास्ते पर बहुत कम ही लोग चलते हैं। उन्होंने दलित-पिछड़ों के समन्वय का सपना देखा था, वह असमय काल-कवलित हो गया। जब तक इस धरती पर शोषण है, छूत-अछूत की भावना है, शोषक शक्तियों द्वारा दमितों का दोहन है- तब तक डॉ. आंबेडकर की प्रासंगिकता स्वमेव बनी रहेगी कार्य अधूरे सपने सच होने शेष- बाबा भीमराव आंबेडकर का कार्य अभी अधूरा है। उनका सपना अभी सच होना शेष है। गांव में रहनेवाला दलित अभी भी दो जून की रोटी के लिए तड़प रहा है, पसीना बहा रहा है। लाला के कर्ज का शिकार है। यह एक कड़वी सच्चाई है जिसपर आज हर एक दलित को सोचना चाहिए कि क्या हम वाकई बाबा साहब के नक्शे कदमों पर चल रहे हैं। क्या वाकई हमारा पक्ष लेनेवाली पार्टियां दलितों के उत्थान के लिए कार्य कर रही हैं। क्या वाकई दलित समाज के लोग जो आज उच्च स्थानों पर पहुंच गये हैं, अपने दलित भाइयों की मदद कर रहे हैं। एक कुंठा और एक सवाल सा है हर दलित के दिल में खुद के दलित होने पर। दलितों एवं शोषितों के मसीहा- हजारों वर्षों से शोषित, पीड़ित, दलित, अछूतजन, शासक-शोषक, परंपरावादियों के जघन्य एवं अमानवीय शोषण, दमन, अन्याय के विरुद्ध छोटे-मोटे संघर्ष को संगठित रूप से देने का कार्य सर्वप्रथम अद्भुत प्रतिभा, सराहनीय निष्ठा, न्यायशीलता, स्पष्टवादिता के धनी बाबासाहब युग पुरुष डॉ. भीमराव आंबेडकर जी ने किया। आप ज्ञान के भण्डार व दलितों एवं शोषितों के मसीहा बनकर भारतीय समाज में अवतरित हुए। आपने दीन दलित एवं पिछड़ों को समाज में सर ऊंचा कर बराबरी के साथ चलना सिखाया। आप ऐसे समाज की केवल कल्पना ही कर सकते हैं जब दीन दलितों के साथ

इन्सान जैसी शक्ल सूरत होने के बावजूद उन्हें परंपरावादी समाज इन्सान नहीं समझता था। ऐसे समाज के प्रति बाबासाहब ने स्वअस्तित्व की सामर्थ्य, अस्मिता एवं क्रांति की आग जलाई, जिससे सामाजिक न्याय प्राप्ति के लिए अनेक दलित-शोषित कार्यकर्ता आत्मबलिदान के लिये उनके साथ खड़े हो गये।

सामाजिक एवं दलितोद्धार दर्शन- डॉ. भीमराव आंबेडकर एक महानायक के रूप में सदैव याद किये जाते रहेंगे क्योंकि उनका सामाजिक दर्शन, समानता एवं विश्वबन्धुत्व का सपना, भारत से जाति के दैत्य को मिटाने का जज्बा, पैनी दूरदृष्टि, सबके लिए समान अवसर व संवैधानिक मूल्यों की जमीन तैयार करने का नजरिया बेमिसाल था। भले ही राजनैतिक स्वार्थ के चलते उन्हें एक वर्ग विशेष से बांधने जोड़ने के प्रयास हुए पर चिंतनशील लोग जानते हैं कि भीम सचमुच ही मेधा के भीम थे जो भारत को जड़ों तक जानते थे और उसी के लिए जीते थे। शायद इसीलिए उन्होंने जातिगत आरक्षण का विरोध भी किया था।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कानून के प्रकांड पंडित थे, भारत के संविधान निर्माता थे, दलितों के प्रमुख नेता थे, एक सच्चे समाज सेवक तथा महान लेखक भी थे। हमारे देश का एक बहुत ही प्रखर युवक अमेरिका और इंग्लैंड से उच्च शिक्षण लेकर बैरिस्टर बनकर भारत आया। उसने बम्बई हाईकोर्ट में प्रैक्टिस शुरु की। उस समय हमारा देश अंग्रेजों का गुलाम था और आजाद होने की तैयारी में लगा था। तब भारत में जितने बड़े माने जानेवाले बैरिस्टर थे, उनमें डॉ. बाबासाहेब का नाम सबसे ऊँचा था। उन्हें बड़े-बड़े केस मिलते थे। एक-एक केस की फीस भी बहुत मोटी मिलती थी। मगर जुल्म की बात तो ये थी कि तब उन्हें रहने के लिए किराये का मकान नहीं मिलता था। इतना ही नहीं, न्यायालय का चपरासी भी उन्हें पानी पिलाने से इन्कार करता था। इसका एकमात्र कारण ये था कि वे अछूत कहे जानेवाली महार जाति में पैदा हुए थे। कोई और युवक होता तो सोचता कि कैसे जंगली लोगों के बीच आ गया हूं, इन्हें तो इन्सानों जैसा व्यवहार करना भी नहीं आता। यह सोचकर वो अमेरिका, इंग्लैंड में जाकर बैरिस्टरी की प्रैक्टिस करते, खूब पैसे कमाते और मजे में रहते, जैसा कि आज के हमारे अधिकतर युवक कर रहे हैं, मगर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नामक इस युवक को अपनी धरती से प्यार था, इस देश की संस्कृति से प्यार था। अत: जिल्लत का बरताव सहन करके भी वे इसी देश में रहे। अछूत परिवार में पैदा होने के कारण बचपन में उन्हें वे सारी शारीरिक तथा मानसिक यातनाएं सहनी पड़ीं जो उन दिनों दलित समाज को सहनी ही पड़ती थी। वे खुद को दूसरे बच्चों की तरह ही मानते थे और अपने समानता के अधिकार को पाने की कोशिश में लगे रहते थे। अन्य बच्चों की उपेक्षा तथा अपमानजनक व्यवहार ने उनके अंदर पढ़-लिखकर बड़ा विद्वान बनने का संकल्प जगाया, ताकि उसके बाद वे लोगों को मनवा सकें कि वे भी अन्य लोगों की तरह एक इन्सान हैं, अपनी कठोर साधना के कारण वे ऊंची जाति के विद्यार्थियों से पढ़ाई में हमेशा ही बहुत आगे रहते थे। भारत में शिक्षा समाप्त करके वे विदेश गये। वहां वे घंटों पुस्तकालय में बैठकर अध्ययन करते। विदेशी अधिकारी भी उनकी ज्ञान पिपासा देखकर दंग रह जाते। अंत में बैरिस्टर बनकर वे भारत लौटे। बहुत ज्ञान, बहुत उपधियां लेने के बाद भी भारतवासियों की संकीर्ण भावना ने उन्हें दु:खी कर दिया। उनके जितनी उपाधि तब भारत में किसी के पास नहीं थी। वे कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से पीएचडी व डीएससी थे, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी से एलएलडी थे तथा उस्मानिया यूनिवर्सिटी से डी.लिट् प्राप्त थे। देश के बड़े बुद्धिवादी होते हुए भी उन्हें कदम-कदम पर अपमान और तिरस्कार झेलना पड़ा। जब वे

बड़ौदा सिविल सर्विसेस में बड़े अधिकारी थे, तो उनके अधीन काम करनेवाला चपरासी भी उनके द्वारा स्पर्श की गई फाइलों को चिमटे से पकड़कर कपाट में रखता था। तब बम्बई में उन्हें किराये का घर नहीं मिलता था। एक पारसी ने घर दिया तो लोगों ने उस घर को जला देने की धमकी दी, जिससे उन्हें वो घर खाली करना पड़ा। आखिर जात-पात का यह जुल्म देखकर उनकी सहन शक्ति खत्म हो गई। महाराष्ट्र के कोलाबा जिले के महाड़ गांव में पहली बार उनका उग्र रूप देखने को मिला। उन्होंने सारे दलितों को इकट्ठा किया और अपने अधिकारों के लिए लड़ने की मशाल जलाई। दलितों को उन्होंने ही एक इज्जतदार इन्सान का दर्जा दिलाया। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सिर्फ दलितों के ही नेता नहीं थे, सारे भारतवासियों के नेता थे। हिंदुओं में फैली जातीयता के खिलाफ उन्होंने आंदोलन किए और उन ग्रंथों को भी जलाया, जिनमें जातिवाद का जहर भरा हुआ था। दो लाख अनुयायियों के एक साथ एक ही दिन में परिवर्तन की यह ऐतिहासिक घटना थी। उनके मुकाबले का ब्रिलियंट बैरिस्टर तब पूरे भारत में कोई नहीं था, इसीलिए उन्हें संविधान समिति का अध्यक्ष बनाया गया। आजाद भारत के वे पहले कानून मंत्री थे। उन्होंने अर्थशास्त्र, राजनीति, अछूतोद्धार, कानून तथा प्रासंगिक संदर्भों पर अनेक पुस्तकें भी लिखी थीं। तब उनके घर में उनकी अपनी ३५००० किताबों का भंडार था, जो एक अनोखी बात है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का जीवन सारे भारतवासियों के लिए प्रेरणादायक है। एक बहुत ही साधारण बालक कदम-कदम पर अपमान सहते हुए भी मानवता की बुलंदी तक पहुंच गया। एक समाज सुधारक के रूप में तथा भारत के महान सपूत के रूप में उन्हें हमेशा याद किया जाता है।

संविधान निर्माता डॉक्टर भीमराव आंबेडकर राजनीतिक और सामाजिक समता के पैरोकार होने के साथ ही आर्थिक सुधारों के प्रबल समर्थक थे। उनका सपना कृषि क्षेत्र और ग्रामीण भारत को बुलंदी पर देखने का था। दलित चिंतक चंद्रभान प्रसाद ने बातचीत में कहा कि डॉक्टर आंबेडकर के राजनीतिक और सामाजिक दृष्टिकोण की बात हमेशा की जाती है, लेकिन उनके आर्थिक नजरिये के बारे में चर्चा बहुत कम होती है। वह एक प्रखर अर्थशास्त्री थे और उन्होंने हमेशा आर्थिक सुधारों का समर्थन किया। प्रसाद के मुताबिक कृषि को लेकर आंबेडकर की नीति अलग थी। उन्होंने कहा कि आंबेडकर ने १९५२ के चुनाव में अपनी पार्टी के घोषणापत्र में कृषि को प्राथमिकता दी थी। वह कृषि को औद्योगिक रूप देना चाहते थे ताकि समाज के निचले तबके का शोषण न हो और देश में समृद्धि भी आये। भारत रत्न से विभूषित आंबेडकर का जन्म १४ अप्रैल, १८९१ को हुआ था। कोलंबिया विश्वविद्यालय और लंदन स्कूल आफ इकनॉमिक्स से पढ़ाई करनेवाले आंबेडकर ने देश की सामाजिक विषमता और छूआछत के खिलाफ आवाज उठाई। वह हमेशा दलित उत्थान और सामाजिक समता को लेकर आगे बढ़े। कुछ जानकार आंबेडकर की नीतियों में समाजवाद का पहलू भी देखते हैं। आंबेडकर पर अध्ययन करनेवाले लेखक मस्तराम कपूर कहते हैं कि डॉक्टर आंबेडकर की नीतियां समाजवादी नेता राममनोहर लोहिया से मिलती थीं। कई ऐसे मौके आये जब लोहिया और आंबेडकर की राय एक दिखी। आंबेडकर की आर्थिक नीति नेहरू से अलग थी, लेकिन इस मामले में वह लोहिया के विचारों के निकट थे। आंबेडकर ऐसा आर्थिक सुधार चाहते, जो देश के सभी तबकों के हित में रहे। वह कृषि को लेकर बड़े पैमाने पर काम करने के पक्षधर थे। गुलाम भारत के जब कांग्रेस और गांधी की लहर थी, तो उस वक्त आंबेडकर ने अपनी अलग धारा बनाई। इसकी सबसे बड़ी वजह यह थी कि वह कांग्रेस की नीतियों से इत्तेफाक नहीं रखते थे। बापू से भी उनके मतभेद जगजाहिर

थे और पूना समझौता से पहले दोनों आमने-सामने भी थे। दोनों के मतों में भिन्नता थी, लेकिन दोनों दलित समाज के हित में सोचते थे। पूना समझौते के संदर्भ में मैं गांधी के रूख से इत्तेफाक रखता हूं। गांधी ने आंबेडकर नहीं, बल्कि अंग्रेजों की साजिश के खिलाफ आवाज बुलंद की थी। सामाजिक सुधार और समता की राह पर चलते हुए आंबेडकर ने हिंदू और इस्लाम से भी अपनी असहमति दिखाई। इसी का नतीजा था कि जीवन के आखिरी दिनों में उन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। विदेश नीति के मामले पर आंबेडकर की सोच बड़ी दूरगामी थी। उस वक्त जब हम सोवियत संघ से करीबी बना रहे थे तो आंबेडकर ने अमेरिका के निकट जाने की पैरवी की। उन्होंने नेहरू से यह भी कहा था कि हमें संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता के लिए कोशिश करनी चाहिए। आंबेडकर स्वतंत्र भारत के पहले कानून मंत्री रहे। उन्होंने रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया का गठन किया, हालांकि चुनावी राजनीति में ज्यादा कामयाबी नहीं मिली। इसके बावजूद उन्होंने देश के दलित वर्ग को मुखर होने की ताकत दी। जानकार इस बात को लेकर चिंता जाहिर करते हैं कि आंबेडकर के व्यक्तित्व को सिर्फ दलितों तक ही सीमित कर दिया गया, जबकि उनका योगदान समूचे भारत के लिए था। यह बड़ी दुख की बात है कि आंबेडकर को सिर्फ दलितों से जोड़ दिया गया। वह पूरे भारत के नेता थे। उन्होंने सभी वर्ग के लोगों के हित में काम किया। गांधी के बाद शायद वह दूसरे सबसे बड़े नेता थे।

जब बाबासाहब उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद वापस भारत लौटे, तब भी उनको तिरस्कार का सामना करना पड़ा। प्रकांड विद्वान होने के बावजूद वे अपने आपको समाज में उपेक्षित पाते थे। जाति से निम्न होने के कारण उनको पग-पग कर अपमान के घूंट पीने पड़ते थे। पश्चिम के देशों में व्याप्त सामाजिक एकता को उन्होंने काफी करीब से देखा था। इसके विपरीत भारत के समाज में समता जैसी कोई चीज दूर दूर तक दिखायी नहीं देती थी। बाबासाहब ने विचार किया कि आखिर इसकी वजह क्या है कि भारत के नागरिकों का एक वर्ग दूसरे वर्ग के लोगों को अछूत मानता है। गहन विचार विमर्श के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इसकी जड़ में भारत में प्रचलित वर्णाश्रम व्यवस्था ही है।

उन्होंने मजदूरों, बंधुआ मजदूरों तथा किसानों के लिए भी संघर्ष किया। बाबासाहब द्वारा गठित स्वतंत्र मजदूर पार्टी ने मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी के लिए सबसे पहले आंदोलन छेड़ा था। जहां उन्होंने मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी दिलाने के लिए आंदोलन छेड़ा था, वहीं पट्टेदारी को समाप्त करनेवाले काले कानून के खिलाफ भी आंदोलन छेड़ा था। बाबासाहब अपनी अंतिम सांस तक दलितों के हक के लिए लड़ते रहे।

डॉ. आंबेडकर एक विश्व मानव है जिन्होंने अपना जीवन गरीबों और वंचितों की सेवा में अर्पित कर दिया। डॉ. आंबेडकर शिक्षा की ताकत में विश्वास रखते थे। विशेष आर्थिक दृष्टिकोण रखनेवाले डॉ. आंबेडकर ने किसानों एवं श्रमिकों के कल्याण पर अधिक जोर दिया था।

जाने कैसी कैसी मुसीबतों को अपनी दृढ़ इच्छा के बल पर उसने किनारे लगाया और पढ़ाई करने के लिए वह किसी तरह से स्कूल पहुंचा। मगर उसे क्लास में बैठने ही नहीं दिया। काफी जद्दोजहद के बाद जब जगह मिली तो सबसे पीछे मिली। इस दौरान जब उसे प्यास लगती तो उसे पानी का सार्वजनिक घड़ा छूने और पानी पीने से भी रोका जाता। उसके के लिए घड़ा अलग था। यह घड़ा यूं ही अलग नहीं था, बल्कि उसके जैसे बच्चों को यह घड़ा अहसास कराता था कि वह ऐसी जाति से हैं, जिसे लोग नीच कहकर अपमानित करते थे। पानी जैसी चीज में होनेवाले फर्क को वह सहन नहीं कर

सका। बचपन में ही पहला विद्रोह उसका इसी बात पर फूटा कि बच्चों में ऊंच-नीच का फर्क क्यों? हालांकि विद्रोह का दुष्परिणाम भी उसे ही भुगतना पड़ा। उसे हर उस चीज को हासिल करने से रोका गया, जिससे उसे थोड़ी बहुत भी खुशी मिलती थी। रोने का सिलसिला पहले से चल रहा था। मगर वह नहीं रुका। वह विद्रोही बालक था भीमराव सकपाल। एक ब्राह्मण शिक्षक भीमराव को हमेशा सराहा करते थे। उन्हीं के कहने पर भीमराव ने अपने नाम से सकपाल हटा आंबेडकर लगा लिया। आंबेडकर को जिस बात से भी रोका गया, उसे उन्होंने हासिल करके दिखा दिया। उन्हें पढ़ने से रोका गया था। सो किताबों से ऐसी दोस्ती की कि भारत का पहला कानून मंत्री बन गए। शोषितों को ऐसा थामा कि आज भी उनके दिलों में जिंदा हैं। उन्हें भागवान के मंदिर में जाने से रोका, खुद पीड़ितों के दिलों का भगवान बन गए। उन्हें धर्म के विधान से रोका, उन्होंने दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र का संविधान लिख डाला। ऐसे थे भीमराव आंबेडकर जिन्होंने बाधाओं को बना लिया था ताकत का स्रोत।

डॉ. भीमराव आंबेडकर जी भारतीय संविधान के जनक कहे जाते है। उनके महान प्रयास ने देश को एकजूट रखने में बहुत मदद की है। उनके द्वारा लिखित भारत का संविधान आज देश का मार्गदर्शन कर रहा है और आज भी कई संकटों के दौरान सुरक्षित रूप से बाहर उभारने में मदद कर रहा है।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर एक जुझारू नेता, लेखक, बेहतर अर्थशास्त्री, संपादक, शिक्षक, समाज सुधारक और संविधान के रचयिता के तौर पर जाने गए, जिनका सारा जीवन राष्ट्र के प्रति समर्पित रहा। यद्यपि उनका सारा जीवन संघर्ष भरा रहा इसके बावजूद भी उन्होंने ताउम्र राष्ट्र को जोड़ने का ही कार्य किया। उनका जीवन कठिनाइयों से भरा रहा और उन्होंने विषम परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया। परिस्थितियों को प्रमुखता ना देते हुए डॉ. आंबेडकर ने सदैव परिणामों के प्रति चिंता की। आज वह इतने प्रासंगिक इसलिए हैं क्योंकि उन्होंने अपने बल पर बिना डगमगाए जीवन की सारी बाधाएं पार की। अनूठी अध्ययनशीलता, अद्भुत मेधा, समाज का भला करने की उत्कृष्ट इच्छा, विपन्नता में भी धैर्य के साथ प्रसन्नता खोज लेने की प्रवृत्ति और बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी धैर्य न खोने के कारण वे राष्ट्र के गौरव बनें। डॉ. आंबेडकर एक सोच थे, जिन्होंने राष्ट्र निर्माण में विशेष योगदान दिया, सामाजिक परिवर्तन की दिशा में विशेष प्रयास किया और समाज को बचाने के लिए संघर्ष किया। डॉ. आंबेडकर की राष्ट्रवादी सोच और उनके प्रगतिशील विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक है। उनके द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलने से निश्चय ही राष्ट्र और समाज का उत्थान होगा। आज के दिन ६१ साल पहले डॉ. आंबेडकर इस दुनिया से रुखसत हुए। उन्होंने संविधान की रचना करके देश के करोड़ों लोगों की किस्मत को बदला। आंबेडकर आज भी हिन्दुस्तान की राजनीति और सामाजिक विमर्श में अहम स्थान रखते हैं। यह सच है कि वोट के लालच में राजनैतिक पार्टियां उनके प्रति दिखावटी आस्था और भक्ति का प्रदर्शन करती है। डॉ. आंबेडकर की कद्दावर शख्सियत राजनीति से कहीं ज्यादा ऊंचा दर्जा रखती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि आजाद भारत में गांधी और आंबेडकर के अलावा कोई और शख्स अपनी मृत्यु के दशकों बाद भारत की जनता को लुभाने की हैसियत नहीं बना पाया। अपने जीवनकाल में बाबा साहब ने जो किया और कहा, वह करोड़ों दलितों, दबे-कुचलों और शोषितों को आगे बढ़ानेवाली रोशनी का पुंज साबित हुआ। आंबेडकर का संपूर्ण जीवन संघर्ष और उनका निर्वाण सामाजिक समरसता का संदेश देता है। डॉ. आंबेडकर का स्पष्ट मत था कि

देश की एकता और स्वतंत्रता के लिए छोटी बड़ी जातियों में बंटे वर्गों को एकजुट होना चाहिए और मजहब, पंथ, जाति ये देश से बड़े नहीं हो सकते। इससे पता चलता है कि अपने समय में सामाजिक दंश झेलने के बावजूद देश और हिन्दू समाज के प्रति कितनी आस्था और प्रेम उनके हृदय में था। डॉ. आंबेडकर केवल दलितों के उद्धारक नहीं थे, बल्कि उन्होंने सदियों से सभी तरह के अधिकारों एवं सुविधाओं से वंचित जनसमूहों में चेतना का संचार करके उन्हें शिक्षित, संगठित होकर संघर्ष करने का मार्ग बताया। यह उनकी सच्ची राष्ट्र सेवा का दुर्लभ उदाहरण है। सुविधा तथा अधिकार से वंचित मात्र दलित ही नहीं हैं, बल्कि समाज के वे लोग भी हैं जिनकी उन्नति तथा समृद्धि के सभी मुहानों को उद्धारक कहलाने वाले मायावी मानवों ने अवरुद्ध कर रखा है। श्रम-समस्या, नारी-उत्थान, धर्म, सामाजिक न्याय, उद्योग, कृषि, मानव-संसाधन, जल-संसाधन, बीमा उद्योग, मद्यनिषेध, शिक्षा, लोकतंत्र, कार्यपालिका, न्यायपालिका, व्यवस्थापिका, संघीय शासन प्रणाली, भाषायी प्रांत और राष्ट्रभाषा आदि विषयों पर डॉ. आंबेडकर के चिंतन तथा सिद्धांत आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। डॉ. आंबेडकर एक प्रखर विचारक और दूरद्रष्टा थे। उन्होंने समय समय पर न केवल विधि, संविधान, सामाजिक न्याय, अस्पृश्यता-उन्मूलन आदि विषयों पर विचारोत्तेजक विचार व्यक्त किए, बल्कि भारत की अर्थनीति, वित्त, कर-व्यवस्था पर भी बहुत ही सारगर्भित अभिमत दिए, जो आज भी देशवासियों के लिए प्रेरणादायी हैं। वह सच में एक महामानव थे। उनके बताए रास्ते पर चलकर तथा उनके सिद्धांतों और उनके प्रखर विचारों को अपनाने से ही उनके महापरिनिर्वाण दिन पर उनका सही अर्थों में अभिवादन होगा।

१५ अप्रैल

मार्शल अर्जुन सिंह

मार्शल अर्जुन सिंह की कमी हमेशा महसूस होगी। राष्ट्र के महान नायक द्वारा राष्ट्र को प्रदान की गई उनकी सेवाओं के लिए पूरा राष्ट्र नमन करता है। इस महान नायक का जन्म १५ अप्रैल १९१९ को पंजाब के जाट सिख औलख परिवार में हुआ। १९६५ के युद्ध के नायक, जिनकी क्षमता, बुद्धिमत्ता, उत्कृष्ट नेतृत्व, कौशल और साहस की बदौलत हमारे देश ने १९६५ की जंग में विजय प्राप्त किया। भारत के इतिहास में एकमात्र ऐसे वायुसेना अधिकारी जिन्हें भारतीय वायुसेना में मार्शल फाईव स्टार का रैंक प्रदान हुआ, जो कि भारतीय सेना के फील्ड मार्शल की बराबरी का होता है। यह वायुसेना के एकमात्र ऐसे प्रमुख रहे जिन्होंने पांच वर्ष के लिए वायुसेना का नेतृत्व किया। इनके स्वर्गवास से राष्ट्र ने अपने महान सपूत को खो दिया। उनकी क्षति की पूर्ति होना संभव नहीं है। उनके अदम्य साहस की शौर्यपूर्ण गाथा आनेवाली पीढ़ियों को प्रोत्साहित करती रहेगी।

भारतीय वायुसेना के प्रथम और अकेले पंचतारांकित प्रमुख मार्शल अर्जुन सिंह का २३ सितंबर २०१७ को ९८ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आज की पीढ़ी मार्शल अजुन सिंह के नाम से संभवत: परिचित न हो, पर १९६१ के भारत चीन युद्ध में भारत को मिली दारुण पराजय के बाद भारतीय वायुसेना को अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा वायुसेना के चीफ मार्शल अर्जुन सिंह के कारण ही दुबारा प्राप्त हुई थी। १९६५ के भारत पाक युद्ध में भारत की जीत का श्रेय भी उन्हें ही जाता है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू के निधन के बाद देश की बागडोर लाल बहादुर शास्त्री ने संभाली। देश में इस बीच आई अल्पकालिक राजनैतिक अस्थिरता और हमारी सैनिक असज्जता का लाभ उठाते हुए पाकिस्तान के तत्कालीन सैनिक शासक जनरल अयूब खान ने कश्मीर को पूरी तरह हड़पने के लिए भारत पर हमला कर दिया। लेकिन इस युद्ध में पाकिस्तान को मात देने में वायुसेना अध्यक्ष अर्जुन सिंह ने निर्णायक भूमिका निभाई। अचानक शुरू हुए उस युद्ध की तैयारी भारत ने नहीं की थी, इसलिए मौका देखकर पाकिस्तानी सेना ने हमला बोल दिया और कश्मीर को पूरी तरह भारत से अलग करने की अयूब खान की कोशिश करीब करीब कामयाब भी हो गई थी, क्योंकि जहां से आक्रमण हुआ था उन भागों में भारतीय पैदल (थल) सेना को पीछे हटना पड़ा था। केवल दो दिन और मिले होते तो पाकिस्तानी सेना अपने मकसद में पूरी तरह कामयाब हो जाती। ऐसे में वहां फौरन भारतीय सेनादल की टुकड़ी भेजना बिल्कुल संभव नहीं था, इसलिए अपर्याप्त शक्ति और युद्ध सामग्री के साथ युद्ध कर रही भारतीय थल सेना को वायुसेना का पीठबल देने का निर्णय लिया गया। ऐसी विकट परिस्थिति में वायुसेना प्रमुख अर्जुन सिंह ने अपने शौर्य और अपनी कुशलता का परिचय दिया। तत्कालीन रक्षामंत्री यशवंतराव चव्हाण ने वायुसेना प्रमुख अर्जुन सिंह से सलाह मशविरा किया और लगभग एक घंटे में भारतीय वायुसेना ने कश्मीर में घुसे पाकिस्तानी सैनिकों को खदेड़ने और उसके टैंकरों को नष्ट करने की मुहिम शुरू कर दी।

अर्जुन सिंह के नेतृत्व में भारतीय सेना ने दो दिन में ही पाकिस्तानी सेना की कमर तोड़ दी। यहां नेतृत्व में शब्द औपचारिक बिल्कुल नहीं है। अर्जुन सिंह एक ऐसे सेनापति थे कि उन्होंने सेना के मुख्यालय में बैठकर लड़ाइयां नहीं लड़ी थीं। सीधे मोर्चे पर जाकर और हवाई हमले में प्रत्यक्ष रूप से शामिल होकर उन्होंने युद्ध का नेतृत्व किया था। १९६५ के उस युद्ध का फैसला उन्होंने चंद हवाई हमलों से ला दिया और पाकिस्तान एक माह भी युद्ध आगे खींच नहीं सका। जिसे भारत का कमजोर पहलू समझकर पाकिस्तान ने आक्रमण करने का दु:साहस किया था, वहीं उसे पूरी तरह पीटकर अर्जुन सिंह के हवाई दल ने अपर्याप्त युद्ध सामग्री से शत्रु को खदेड़ दिया। साधन और शस्त्र-अस्त्र से नहीं बल्कि इच्छाशक्ति के बल पर युद्ध जीते जाते हैं, इसका यह एक ज्वलंत उदाहरण है। १९६५ के युद्ध से अथवा उसमें मिली भारत की जीत से अर्जुन सिंह को अभिन्न रूप से जोड़ दिया गया है क्योंकि उस समय भारतीय वायुसेना अपनी शैशव अवस्था में थी और तुलना में पाकिस्तानी वायुसेना की साधन सामग्री अतिशय आधुनिक थी। सामान्य विमान और साधारण व सीमित साधन-सामग्री के साथ अर्जुन सिंह ने अपने सहयोगी जीवन वैमानिकों को इस खूबी के साथ इस्तेमाल किया कि पाकिस्तान के आधुनिक अमेरिकी विमान भी उनके सामने दिवाली के पटाखे जैसे फुस्स साबित हुए। पर इस जीत से अर्जुन सिंह संतुष्ट नहीं हुए। भविष्य की सुरक्षा का विचार करके उन्होंने सरकार और राजनैतिक दलों द्वारा की गई प्रशंसा और दिए गए मान-सम्मान की अपेक्षा वायुसेना की सज्जता को अधिक महत्व दिया।

अर्जुन सिंह के विशेष प्रयासों से आनेवाले समय में भारतीय हवाई दल के आधुनिकीकरण को गति मिली। उन्होंने १९६५ के बाद ६० से भी अधिक प्रकार और बनावट के विमान वायुसेना में शामिल किए थे, उनमें से अधिकांश को आज भी उपयोग में लाया जाता है। हेलिकॉप्टर, यात्री विमान या जेट जैसे वेगवान लड़ाकू विमान वायुसेना में शामिल किए जाने के उनके आग्रह से हमारी सुरक्षा व्यवस्था मजबूत हुई है। सन १९७१ के युद्ध में अर्जुन सिंह के मार्गदर्शन में तैयार हवाई दल ने अपूर्व सफलता प्राप्त की थी। पूरे पचास वर्ष के बाद सेवानिवृत्त हुए अर्जुन सिंह ने खुद को कभी

सेवानिवृत्त नहीं माना। ९८ वर्ष की आयु में भी खुद को सेवानिवृत्त न माननेवाला यह महान सेनानायक अंत में विलीन हो गया। एक महान अमेरिकी सेनापति के शब्दों में कहे तो, सैनिक निवृत्त नहीं होता है, वह काल के प्रवाह में अंर्तध्यान होता है।

कल तारण गुरु नानक

भादों की अमावस की धुप अंधेरी रात में बादलों की डरावनी गड़गड़ाहट, बिजली की कौंध और वर्षा के झोंके के बीच जबकि पूरा गाँव नींद में निमग्न थज्ञ, उस समय एक ही व्यक्ति जाग रहा था, नानक। नानक देर रात तक जागते रहे और गाते रहे। आधी राते के बाद माँ ने दस्तक दी और कहा- बेटे, अब सो भी जाओ। रात कितनी बीत गई है। नानक रुके, लेकिन उसी वक्त पपीहे ने शोर मचाना शुरू कर दिया। नानक ने माँ से कहा- माँ अभी तो पपीहा भी चुप नहीं हुआ। यह अब तक अपने प्यारे को पुकार रहा है। मैं कैसे चुप हो जाऊँ जब तक यह गाता रहेगा, तब तक मैं भी अपने प्रिय को पुकारता रहूँगा।

नानक ने फिर गाना प्रारंभ कर दिया। धीरे-धीरे उनका मन पुन: प्रियतम में लीन हो गया। कौन है ये नानक, क्या केवल सिख धर्म के संस्थापक। नहीं, मानव धर्म के उत्थापक। क्या वे केवल सिखों के आदि गुरु थे ? नहीं, वे मानव मात्र के गुरु थे। पाँच सौ वर्षों पूर्व दिए उनके पावन उपदेशों का प्रकाश आज भी मानवता को आलोकित कर रहा है।

गुरु नानक देवजी का प्रकाश (जन्म) १५ अप्रैल १४६९ ई. (वैशाख सुदी ३, संवत् १५२६ विक्रमी) में तलवंडी राजभोय नामक स्थान पर हुआ। सुविधा की दृष्टि से गुरु नानक का प्रकाश उतसव कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता है। तलवंडी अब ननकाना साहिब के नाम से जाना जाता है। तलवंडी पाकिस्तान के लाहौर जिले से ३० मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है।

नानकदेवजी के जन्म के समय प्रसूति गृह अलौकिक ज्योत से भर उठा। शिशु के मस्तक के आसपास तेज आभा फैली हुई थी, चेहरे पर अद्‌भुत शांति थी। पिता बाबा कालूचंद बेदी और माता त्रिपाता ने बालक का नाम नानक रखा। गाँव के पुरोहित पंडित हरदयाल ने जब बालक के बारे में सुना तो उन्हें समझने में देर न लगी कि इसमें जरूर ईश्वर का कोई रहस्य छुपा हुआ है।

जीती नौखंड मेदनी सतिनाम दा- चक्र चलाया, भया आनंदजगत बिच कल तारण गुरू नानक आया।

बचपन से ही नानक के मन में आध्यात्मिक भावनाएँ मौजूद थीं। पिता ने पंडित हरदयाल के पास उन्हें शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजा। पंडितजी ने नानक को और ज्ञान देना प्रारंभ किया तो बालक ने अक्षरों का अर्थ पूछा। पंडितजी निरुत्तर हो गए। नानकजी ने क से लेकर ड तक सारी पट्टी कविता रचना में सुना दी। पंडितजी आश्चर्य से भर उठे। उन्हें अहसास हो गया कि नानक को स्वयं ईश्वर ने पढ़ाकर संसार में भेजा है। इसके उपरांत नानक को मौलवी कुतुबुद्दीन के पास पढ़ने के लिए बिठाया गया। नानक के प्रश्न से मौलवी भी निरुत्तर हो गए तो उन्होंने अलफ, बे की सीफहीं के अर्थ सुना दिए। मौलवी भी नानकदेवजी की विद्वता से प्रभावित हुए।

विद्यालय की दीवारें नानक को बोँधकर न रख सकीं। गुरु द्वारा दिया गया पाठ उन्हें नीरस और व्यर्थ प्रतीत हुआ। अंतर्मुखी प्रवृत्ति और विरक्ति उनके स्वभाव के अंग बन गए। एक बार पिता ने उन्हें भैंस चराने के लिए जंगल में भेजा। जंगल में भैसों की फिक्र छोड़ वे आँख बंद कर अपनी मस्ती में लीन हो गए। भैंसे पास के खेत में घुस गईं और सारा खेत

चर डाला। खेत का मालिक नानकदेव के पास जाकर शिकायत करने लगा। जब नानक ने नहीं सुना तो जमींदार रायबुलार के पास पहुँचा। नानम से पूछा गया तो उन्होंने जवाब दिया कि घबराओ मत, उसके ही जानवर हैं, उसका ही खेत है, उसने ही चरवाया है। उसने एक बार फसल उगाई है तो हजार बार उगा सकता है। मुझे नहीं लगता कोई नुकसान हुआ है। वे लोग खेत पर गए और वहाँ देखा तो दंग रह गए, खेत तो पहले की तरह ही लहलहा रहा था।

एक बार जब वे भैंस चराते समय ध्यान में लीन हो गए तो खुले में ही लेट गए। सूरज तप रहा था जिसकी रोशनी सीधे बालक के चेहरे पर पड़ रही थी। तभी अचानक एक साँप आया और बालक नानक के चेहरे पर फन फैलाकर खड़ा हो गया। जमींदार रायबुलार वहाँ से गुजरे। उन्होंने इस अद्‌भुत दृश्य को देखा तो आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने नानक को मन ही मन प्रणाम किया। इस घटना की स्मृति में उस स्थल पर गुरुद्वारा मालजी साहिब का निर्माण किया गया।

उस समय अंधविश्वास जन-जन में व्याप्त थे। आडंबरों का बोलबाला था और धार्मिक कट्टरता तेजी से बढ़ रही थी। नानकदेव इन सबके विरोधी थे। जब नानक का जनेऊ संस्कार होने वाला था तो उन्होंने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि अगर सूत के डालने से मेरा दूसरा जन्म हो जाएगा, मैं नया हो जाऊँगा, तो ठीक है। लेकिन अगर जनेऊ टूट गया तो ? पंडित ने कहा कि बाजार से दूसरा खरीद लेना। इस पर नानक बोल उठे- तो फिर इसे रहने दीजिए। जो खुद टूट जाता है, जो बाजार में बिकता है, जो दो पैसे में मिल जाता है, उससे उस परमात्मा की खोज क्या होगी। मुझे जिस जनेऊ की आवश्यकता है उसके लिए दया की कपास हो, संतोष का सूत हो, संयम की गाँठ हो और उस जनेऊ सत्य की पूरन हो। यही जीव के लिए आध्यात्मिक जनेऊ है। यह न टूटता है, न इसमें मैल लगता है, न ही जलता है और न ही खोता है।

एक बार पिता ने सोचा कि नानक आलसी हो गाय है तो उन्होंने खेती करने की सलाह दी। इस पर नानकजी ने कहा कि वह सिर्फ सच्ची खेती-बाड़ी ही करेंगे, जिसमें मन को हलवाहा, शुभ कर्मों को कृषि, श्रम को पानी तथा शरीर को खेत बनाकर नाम को बीज तथा संतोष को अपना भाग्य बनाना चाहिए। नम्रता को ही रक्षक बाड़ बनाने पर भावपूर्ण कार्य करने से जो बीज जमेगा, उससे ही घर-बार संपन्न होगा।

श्री गुरुनानकदेवजी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अँधेरे युगों में था। उनका जन्म १४६९ में लाहौर से ३० मील दूर दक्षिण-पश्चिम में तलवंडी राजभोय नामक स्थान पर हुआ जो अब पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकाना साहिब रखा गया।

उत्तरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा-तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था। और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमकश का दौर था। न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में ही, बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न-भिन्न संप्रदायों के बीच भी। धर्म काफी समय से थोथी रस्मों और रीति-रिवाजों का नाम बनकर रह गया था। इन कारणों से भिन्न-भिन्न संप्रदायों में और भी कट्टरता और बैर-विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। अत्यधिक उदार मानवतावादी और मेल पैदा करने वाला दृष्टिकोण और मनुष्य मात्र के प्रति सहानुभूति, जो प्राचीनकाल से भारत की विशेषता रही थी, कहीं भी धर्म के उपदेश में या आचरण में देखने को नहीं मिलती थी।

उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर-ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से हतोत्साहित किया जाता था। निम्न जाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल

वर्जित था। इस ऊँच-नीच का गुरुनानकदेवजी पर बहुत असर पड़ा। वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं। ऊँच-नीच का विरोध करते हुए गुरुनानकदेवजी अपनी मुखवाणी जपुजी साहिब में कहते हैं कि नानक उत्तम-नीच न कोई जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा-बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं। गुरुनानकदेवजी अपनी वाणी सिरी-राग में कहते हैं कि- नीचा अंदर नीच जात, नीची हूँ अति नीच। नानक तिन के संगी साथ, वडियाँ सिऊ कियां रीस ।।

समाज में समानता का नारा देने के लिए उन्होंने कहा कि ईश्वर हमारा पिता है और हम सब उसके बच्चे हैं और पिता की निगाह में छोटा-बडा कोई नहीं होता। वही हमें पैदा करता है और हमारे पेट भरने के लिए खाना भेजता है। गुरुजी कहते हैं कि- सभनाजीआं का इकदाता और भी इस प्रकार कहा है कि-

नानक जंत उपाइके, संभालै सभनाह। जिन करते करना कीआ, चिंताभिकरणी ताहर ।।

जब हम एक पिता एकस के हम वारिक बन जाते हैं तो पिता की निगाह में जात-पात का सवाल ही नहीं पैदा होता।

गुरु साहिब जात-पात का विरोध करते हैं। उन्होंने समाज को बताया कि मानव जाति तो एक ही है फिर यह जाति के कारण ऊँच-नीच क्यों ? गुरु नानकदेवजी ने कहा कि मनुष्य की जाति न पूछो, जब व्यक्ति ईश्वर की दरगाह में जाएगा तो वहाँ जाति नहीं पूछी जाएगी। सिर्फ कर्म देखे जाएँगे।

आगे जात न जोर है, अगैर जीओ, निवेल जनकी लेखे पति पवे चंगै सेई केया।

तत्कालीन सामाजिक कुप्रभावों का विरोध गुरुजी ने सशक्त रूप से किया है। हिंदुओं और मुसलमानों को अपनी वाणी द्वारा उन्होंने झूठे कर्मकांडों को त्यागने के लिए प्रेरित किया। हिन्दुओं द्वारा मूर्ति पूजा करने को उन्होंने व्यर्थ कहा तथा एक ईश्वर की पूजा पर जोर दिया। उन्होंने कहा है कि-

पत्थरु ले पूजहि मुगध गवार उह जो आप डूबे, तुम कहा तारणहार

श्री गुरुनानकदेवजी ने हिन्दुओं द्वारा आरती उतारने की भी आलोचना की। उनका कहना था कि वह परमेश्वर तो इतना बड़ा है कि उसकी आरती तो उसके द्वारा रचित कुदरत द्वारा ही हो सकती है और कुदरत अपनी गगन रूपी थाली में तारों को मोती बनाकर ईश्वर की आरती द्वारा आराधना कर रही है।

गगन मैं थालु, रवि चन्दु दीपक बने, तारिका मंडल जनक मोती।

इसी प्रकार गुरु नानकदेवजी ने पित्तर-पूजा, तंत्र-मंत्र और छुआ-छूत की भी आलोचना की।

इसी प्रकार इस्लाम धर्म के अनुयायाई भी पैगंबर द्वारा बनाए गए उसूलों पर नहीं चल रहे थे और थोथी रस्म-रिवाजों के कारण लकीर के फकीर बन चुके थे। मुल्ला लोगों की हठधर्मी अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। वे पवित्र कुरान और इंसानियत के कानून से परे और शरीयत की अवहेलना कर रहे थे।

उस समय मुल्ला लोग शासकों को गलत काम से रोकने की बजाए उनकी हाँ में हाँ मिला रहे थे। गुरुजी ने असली मुसलमान की पहचान के लिए अपनी वाणी में कहा कि-

मिहर मसित, सिदक कर, मुसला हकु हलाल कुरान, सरस सुनति, सील रोजा, उहो मुसलमान।

गुरु नानकदेव (१४६९-१५३८) के समय जनता भयंकर रूढ़ियों की शिकार थी। लोग कर्मकांडों, अंधविश्वासों की श्रृंखलाओं में जकड़े हुए थे। राजनीतिक अवस्था, तो और भी खराब थी। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक विषम परिस्थितियों की श्रृंखला से आबद्ध मानव उनसे मुक्त होने के लिए छटपटा रहा था। वह कभी असहाय होने के कारण संन्यासी कीसी उदासीनता और भाग्यवादिता से अपने मन को सांत्वना देने की चेष्टा करता था, तो कभी सगुण भगवान की कल्पना कर उसी के गुण कीर्तन में अपने मन को व्यस्त कर प्रसन्नता प्राप्त करना चाहता था।

धार्मिक साधना के क्षेत्र में रामानंद, नामदेव और कबीर जैसे कई महिमाशाली व्यक्तित्व प्रकट हो चुके थे जो जाति-पांति तथा सांप्रदायिक भेदभाव मिटाने का प्रयास कर चुके थे। गुरु नानक ने इन महात्माओं के विचारों को बड़े आदर से सुना और समझा। देश की स्थिति समझने के लिए उन्होंने देशभर की यात्राएं की। गुरु नानक एक महान परिव्राजक थे, अपने जीवन की लगभग एक-तिहाई उम्र उन्होंने यात्रा में ही बिता दी।

अपनी चौथी यात्रा में वे एक हाथी के रूप में मक्का गए। इसी यात्रा के दौरान वे यरुशलम, दमिश्क और अलेप्पो से होते हुए बगदाद पहुंचे। वे अनेक मुस्लिम संतों और विचारकों से मिले। इन यात्राओं के दौरान विभिन्न विचारधाराओं को समझने के साथ-साथ उन्होंने जनसामान्य के दु:ख-दर्द को भी देखा और समझा।

नानक के जन्म के समय उत्तर भारत में लोदी वंश का राज्य था। इनके ही समय में देश पर बाबर के आक्रमण हुए और मुगल साम्राज्य की नींव पड़ी। आक्रमणकारी बाबर की फौज द्वारा गुरु नानक अपने साथी मर्दाना के साथ कैद कर लिए गए थे। इस युद्ध की विभीषिका से गुरु नानक का कवि आर्तनाद कर उठा था और उन्होंने ईश्वर से शिकायत की थी कि हिन्दुस्तान को इतनी मार पड़ती देखकर उसका दिल क्यों नहीं पसीजा ?

खुरासान खसमाना किया, हिन्दुस्तान डराया। ऐती नार पई कुरलाने, तैकि दरद न आया ?

गुरु नानक वीतराग समर्थक नहीं थे। उनके अनुसार यदि ईश्वर सच है तो उसकी रची सृष्टि भी असत्य नहीं हो सकती, अत: मनुष्य को अपने सांसारिक कार्यों से उदासीन नहीं होना चाहिए। हिमाचल प्रदेश की यात्रा के दौरान गुरु नानक वहां सिद्धों, संतों से मिले। गुरु नानक ने उन्हें उलाहना दिया कि तुम्हें संसार के दुखों से क्या मतलब ? तुम तो यहां आनंद से समाधि लगाकर बैठे हो। सच्चा भजन तो संसार में रहकर मनुष्य की सेवा करने से होता है। गुरु नानक श्रम की कमाई को ही ग्राह्य मानते थे। जो कमाई समाज के अंग का खून चूसकर कमाई गई हो, उससे उनका कोई सरोकार नहीं था।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी केवल जाति विशेष का ग्रंथ न हाकर विश्व का दर्जा रखते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का इतिहास विचित्र है। इस धार्मिक शक्ति के अध्यात्मक ग्रंथ को श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी के पांचवें उत्तराधिकारी श्री गुरु अरजन देव जी ने १६०४ इ. में संकलन किया। इसके लिखारी गुरमति के विद्वान साहित्यकार भाई गुरुदास जी थे और महान सत्कारयोग सक्षीयत बाबा बुढ़ा जी इसके पहले ग्रंथी बने जो आप इस पवित्र वाणी के ग्रंथ को हरिमंदर साहिब जी में लेकर आए थे। इस ग्रंथ में गुरुओं के वाणी के अतिरिक्त संतों भक्तों तथा भट कविओं की वाणी शामिल है। इस गुरु ग्रंथ के १४३० पृष्ठ हैं और ५८६९ सबद, श्लोक भिन्न ३१ रागों में उपलब्ध हैं। इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि गुरु जी ने इसको केवल अपेन शिष्यों तक ही सीमित न रखकर उसको विश्व स्तर का ग्रंथ बनाया।

गुरु ग्रंथ साहिब जी में वर्णित है- गुरुवाणी इस जगत महि चानण, कर्म वसै मनि आई।

गुरुवाणी के इस ग्रंथ में १४६९ ई. से लेकर १७०८ तक की ज्योति प्रकाशमान नजर आती है। यह वाणी जो मनुष्य को सही मार्ग प्रदान करती है। गुरु साहिब ने सबको दु:ख सुख में इसका आसरा लेने के लिए कहा है और आदेश दिया : सब सिखन को हुकम है गुरु मान्यों ग्रंथ।। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी तो पंजाब प्रांत में तयार किया गया था परंतु इसमें उन संतों की वाणी शामिल है जो दूर प्रांतों में रहते थे और विभिन्न जातियों से संबंधित थे। भक्त कबीर जी काशी (यूपी) के थे और जुलाहे थे, भक्त रविदास बनारस के रहनेवाले थे, धन्ना भक्त राजस्थान के जाट थे, जयदेव बंगाल के ब्राह्मण थे, बाब फरीद जो पश्चिमी पाकिस्तान के मुसलमान थे, प्रमानंद जी महाराष्ट्र संत के मुकुटमनी भक्त नामदेव जी महाराष्ट्र के थे। भक्त सूरजदास जी अवध प्रांत के ब्राह्मण थे, सधना जी सिंध प्रांत के रहरेवाले थे और कसाई थे। किसी और धार्मिक ग्रंथ में इस प्रकार की उदारता और गहरी दृष्टिपात का वर्णन देखने में नहीं मिलता।

श्री गुरु साहिब जी में मनुष्य को सही मार्गदर्शन और संसार के बारे में स्पष्ट ज्ञान प्राप्त होता है जिससे कोई भी शंका नहीं रहती। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में वर्णीमत भिन्न विषयों के बोर में दिए गए विश्व को संदेश इस प्रकार है-

संसार के बारे में: यह संसार उस अकाल पुरख की रचना है जो आप सत्य है और उसकी स्वैच्छा से संसार की रचना हुई है जिस बारे में वर्णित है। जा तिस भाणा तां जगत उपाया, ब्रह्मा, विष्णु, महेश उपाए।

मनुष्य चाहे वह विश्व के किसी भी भाग में रहता है उस अकाल पुरख द्वारा भेजा हुआ ही धरती पर आया। इसमें रंग रूप, जाति, पाति का कोई भिन्न भेद नहीं सभी एक समान है। केवल मानव प्रेम मात्र ही सबसे बड़ा है। इस बारे में गुरुवाणी से संदेश हैं- अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कौर भले को मंदे।।

सभी विश्व में एक परमात्मा की ज्योति ही विद्यमान है जिसका प्रकाश सभी ओर फैला हुआ है-

सब महि जोति है सोई तिसदे चानण सबमहि चानण होहि।।

गुरु नानक देव सिखों के प्रथम गुरु (आदि गुरु) हैं। इनके अनुयायी इन्हें गुरुनानक, बाबा नानक और नानकशाह नामों से संबोधित करते हैं। गुरुनानक का व्यक्तित्व असाधारण था। उनमें पैगम्बर, दार्शनिक, राजयोगी, गृहस्थ, त्यागी, धर्मसुधारक, समाज-सुधारक, कवि, संगीतज्ञ, देशभक्त, विश्वबन्धु सभी के गुण उत्कृष्ट मात्रा में विद्यमान थे। उनमें विचार शक्ति और क्रिया शक्ति का अपूर्व सामंजस्य था। उन्होंने पूरे देश की यात्रा की। लोगों पर उनके विचारों का असाधारण प्रभाव पड़ा। उनमें सभी गुण मौजूद थे। पैगंबर, दार्शनिक, राजयोगी, गृहस्थ, त्यागी, धर्मसुधारक, कवि, संगीतज्ञ, देशभक्त, विश्वबंधु आदि सभी गुण जैसे एक व्यक्ति में सिमटकर आ गए थे। उनकी रचना जपुजी का सिक्खों के लिए वही महत्व है जो हिंदुओं के लिए गीता का है।

सिख जाति की प्रतिभा पूरे भारतवर्ष के इतिहास में सूर्य के समान चमक रही है तथा खालसा जाति के शौर्य, पराक्रम, देशहित और प्राणपन से देश के स्वातंत्र्य की रक्षा को देखकर ब्रिटिश शासन के वीर अंग्रेज भी नतमस्तक होकर अपना शीश झुकाते व मुगल शासक भी थर्रा जाते थे।

दुर्दान्त यवनों के चंगुल से हिन्दू धर्म को छोड़ने के लिये सिख जाति ने अपना लहू बहाया है उसी सिख जाति के पूजनीय गुरुओं में प्रथम गुरु श्री गुरुनानक का नाम स्वर्ण अक्षरों में भारतीय इतिहास में अंकित है। भारत के महापुरुषों में

गुरुनानक भी ऐसे महापुरुष हुये हैं, जिन्होंने भाईचारा और एकता का संदेश दिया है। गुरुनानक देव सिखों के पहले गुरु हैं जिन्होंने सिख धर्म चलाया।

गुरुनानक का जन्म कार्तिक पूर्णिमा संवत् १५२६ (सन १४६९) में पूर्णमासी की रात में तृप्ता माता के गर्भ से तलवंडी शहर जिला लाहौर प्रान्त में हुआ था, जो अब वर्तमान में पाकिस्तान में स्थित है। गुरुनानक के जन्म के कारण की ननकाना अब सिक्खों का पवित्र धर्मस्थल है। गुरुनानक के पिता का नाम कालूराम था।

गुरुनानक बचपन से ही साधुओं की तरह उठते-बैठते थे। उनका पढ़ने-लिखने में मन न लगता था। अपना पूरा समय दीन-दुखियों में व्यतीत करते और जेब खर्च भी गरीबों में बांट दिया करते थे। नानक एकान्त में बैठकर भगवान का स्मरण करते और भजन गाते थे।

श्री गुरुनानक के ज्ञान के बारे में एक किस्सा काफी प्रचलित है। श्री गुरु जी घर से बाहर निकलकर एकान्त में जंगल में जाकर ईश्वर के गुणों का ध्यान स्मरण करने बैठ गये। कुछ देर पश्चात एकचित्त होकर जब समाधि में बैठे तो एक महासर्प ने अपने फन को फैलाकर श्री गुरु जी के मुख पर छाया की। उसी समय रायबुलार नामक हाकिम जो शिकार खेलने के लिये उसी जंगल में गये हुए थे, तो अचरज में पड़ गये कि एक लड़के के ऊपर सर्प ने अपने फन की छाया कर रखी है। वो रायबुलार हाकिम समझ गये यह लड़का कोई साधारण लड़का नहीं है। इसी तरह गुरुनानक जी बहुत छोटी अवस्था में अच्छे लोगों में प्रख्यात हो चुके थे।

इसी प्रकार एक और घटना जब रायबुलार हाकिम ने देखी तो उसने श्री गुरुजी के पिता कालूराम को बुलाकर कहा कि अपने बेटे को कभी तकलीफ न देना। अगर कभी परेशानी हो तो मुझे लिखकर दे देना।

गुरुनानक को साधुसंतों के पदचिन्हों पर चलते देख उनके पिता बड़े दुखी हुये। उन्होंने गुरुनानक को समझाने का भरसक प्रयास किया, मगर वह विफल रहे। आखिर में उनके पिता ने सोचा कि नानक का विवाह कर दिया जाये ताकि गृहस्थी के भार से नानक सुधर जाये। इसलिये उन्होंने ग्राम परवों जिला गुरदासपुर के निवासी मूलचंद चोना जाति के क्षत्रिय की पुत्री सुलक्षणी से श्री गुरुजी का विवाह संपन्न करा दिया जिससे गुरुजी के श्रीचन्द और लक्ष्मीचन्द नामक दो पुत्र भी हुये मगर नानक का मन तब भी गृहस्थी में न लगा। उनकी पत्नी ने उन्हें बहुत समझाया लेकिन नानक पर कोई प्रभाव न पड़ा। गुरु नानक का कहना था-

मनहाली किरसाणी किरणी, सब पाणी तन खेत। नाम बीच संतोष सोहागा, सब गरीबी भेष।।

एक दिन श्री गुरुजी अपने दोनों शिष्यों के साथ घरबार छोड़कर सत्य के प्रचार के लिए यात्राओं पर निकल गये। श्री गुरुनानक के काशी, गया, मुंगेर भागलपुर, मुर्शिदाबाद, बर्दवान, हुगली, आसाम, सिलहर, चित्तकोट, भोपाल चंदेरी, झांसी, ग्वालियर, धोलपुर, भरतपुर, रिवाडी, कारनाल व कुरूक्षेत्र आदि में घूमकर लोगों को उपदेश दिये।

श्री गुरुजी ने अपनी दसूरी यात्रा में मध्यप्रदेश, सतलुज, भटिण्डा, बीकानेर, अहमदनगर, श्रीलंका, अहमदाबाद, नागपुर, नासिक, कोयम्बटूर, बंगलौर तथा तीसरी यात्रा में देहरादून, गोरखपुर, दार्जिलिंग और नेपाल तथा चौथी यात्रा में गुजरात, इस्माइल खां, बगदाद आदि मेंयात्रा तथा लोगों को उपदेश दिये।

श्री गुरुनानक सत्य और समतामूलक मानव समाज के पहरेदार थे। इसी वजह से श्री नानक को राम और कृष्ण की

भांति ईश्वर के अवतार के रूप में जाना व पहचान गया। श्री नानक ने कहा- सत्य को मान्यता देना बड़ा काम है लेकिन सत्य को जीवन में उतारना उससे भी ऊंची साधना है। यूं तो भारत में संतों का अभाव नहीं रहा। निर्गुण और सगुण ब्रह्मा के उपासक संतों की परंपरा में अनेक संत हुए, अगर इन सबमें गुरुनानक का स्वर नया मौलिक व अनूठा रहा।

श्री गुरुजी ने अत्याचारों को सहने का सदैव विरोध किया और शोषितों-उत्पीड़ितों को सत्य की शक्ति से लगातार भरते रहे। अन्याय के विरुद्ध युद्ध करना श्री गुरुजी का स्वभाव था, तभी सबने उनका लोहा माना। गुरुग्रन्थ साहिब के रूप में संसार को उन्होंने ऐसी आध्यात्मिक मंजूषा प्रदान की, जिससे सभीधर्मों के अनुयायी अपने हृदय को प्रतिध्वनित होता देख सकते हैं।

श्री गुरुजी ने अपने ७० वर्षीय जीवन में लगभग ५० हजार मील की यात्रा की। शुरु से ही हिंदू जाट युवक बाला तथा एक मुसलमान मरदाना नामक शिष्य आपके साथ रहे थे और अंतिम समय तक गुरुनानक जी के साथ उन्होंने अपना जीवन गुजारा।

श्री गुरुनानक जी अपने उपदेशों का देश में प्रचार करके मानव व जीवों को अपने सद्वचनों से लाभ पहुंचाकर तथा लहन अपर नामक गुरु अंगद को अपने स्थान पर स्थापित कर आप ६९ वर्ष व १० दिन की आयु में १० संवत् १५९६ विक्रमी संवत् में इस दुनिया से कूच कर गये। गुरुनानक के मृत्यु के पश्चात जो चादर उन्होंने ओढ़ रखी थी, हिंदुओं ने जिस स्थान पर उन्हें जलाया था वहां पर दूसरी बार संवत् १८२८ विक्रमी में सरदार पदा सिंह सरदार गुरूबख्श जाट जाति के शिष्यों ने अपना धन लगाकर एक बड़ा दर्शनीय सुंदर देहरा बनवाया था जिसके दर्शन करने अनेकों शिष्य वहां अब भी जाते हैं और साल के साल वहां मेला भी लगता है। गुरुनानक की वाणी आज भी आपसी सद्भाव और सदाचार का पाठ सिखाती है और सिक्खों के पूजागृह गुरुद्वारों में गुरुनानक के गीत बड़ी श्रद्धा और भक्ति से गाए जाते हैं।

हम जैसे साधारण लोगों के उद्धार के लिए समय-समय पर प्रभु स्वयं इस पृथ्वी पर अवतारित होते हैं, पांच सदियां पहले सुल्तानपुर में श्री गुनुनानक देवजी अवतरित हुए वे नेक लागों के लिए, विद्वानों के लिए या बड़े लोगों के लिए नहीं आए थे। गुरुनानक देवजी आए हम जैसे साधारण लोगों के लिए। वे आए गुनहगारों के लिए, जो माया की मस्ती में सच को भुला बैठे थे। वे आए ऐसे लोगों को नवजीवन का दान देने।

एक दिन गुरुनानक देवजी के पिताजी उन्हें बीस रुपए देते हैं और कहते हैं, मेरे बेटे। अब तू बड़ा हो गया है, मैं तुम्हें बीस रुपए दे रहा हूं। तुम जाओ और जाकर इन बीस रुपयों से कुछ धंधा करो और कुछ पैसे कमाकर लाओ। गुरुजी बीस रुपए लेकर निकल पड़ते हैं। उन दिनों के बीस रुपए आज के बीस हजार के बराबर थे। वे रास्ते से चले जा रहे थे, तभी उनकी नजर सड़क के किनारे बैठे कुछ गरीबों पर पड़ी जो भूख से बेहाल थे और उनके शरीर पर पूरे वस्त्र भी नहीं थे। गुरुजी का हृदय बड़ा कोमल था। वे बड़े दयालु थे। उन गरीबों को देखकर गुरुजी का हृदय पिघल जाता है। गुरुजी कहते हैं, इन भूखों को रोटी देना और इनका शरीर वस्त्र से ढकने से बड़ा, खरा सौदा और कौन-सा हो सकता है? गुरुजी तुरंत भोजन और वस्त्र लेकर आते हैं और उन गरीबों को देते हैं। फिर वे उन सबको इकट्ठा कर उनसे कीर्तन करवाते हैं। सतनाम, सतनाम, सतनाम, जी श्री वाहेगुरु, वाहेगुरु, वाहेगुरुजी। संध्या के समय गुरुजी घर वापिस लौटते हैं। उनके पिताजी कालू उनकी राह देख रहे थे, मेरा पुत्र कब लौटेगा? वे जानने के लिए उत्सुक थे कि नानक ने क्या सौदा किया

और कैसे किया। पिता कालू अपने बेटे से पूछते हैं, बेटे क्या सौदा करके लौटे हो? गुरुजी कहते हैं, पिताजी मैं खरा सौदा करके लौटा हूं। पिताजी पूछते हैं, बेटे उसका मुनाफा कहां है।

गुरुजी उत्तर देते हैं, पिताजी, मुनाफा हमें यहां नहीं मिलेगा। सच्चा मुनाफा तो हमें परलोक में मिलेगा।

एक बार गुरुनानक देवजी सुलतानपुर में नदी में नहा रहे थे। वे जैसे ही पानी में डूबकी लगाते हैं तो क्या देखते हैं? परमेश्वर परमात्मा स्वयं उनके सम्मुख खड़े हैं। प्रभु के हाथ में एक प्याला है, जिस प्याले में अमृत है। वे गुरुजी से कहते हैं मेरे प्रिय नानक। इस प्याले में नाम का अमृत है, यह अमृत पीकर तुम भ्रमण पर निकलो। लोगों को तुम्हारी जरूरत है, लोग दु:खी हैं। तुम एक जगह से दूसर जगह जाओ और जाकर लोगों को जगाओ। जाकर उनको सुख का संदेश दो। यह दैवी आवाज सुनकर गुरुनानक देवजी पानी से बाहर निकले। लोग देखते हैं कि उनके मुख मंडल पर एक अनोखा तेज चमक रहा था। अब गुरुनानक देवजी अपनी सारी पूंजी दु:खी दरिद्रों में बांट देते हैं और प्रभु का संदेश लोगों तक पहुंचाने के लिए रटन पर निकल पड़ते हैं। वे उतर में गए, दक्षिण में गए, पूरब में गए, पश्चिम में गए और लोगों की प्रभु प्रेम का संदेश दिया। नाम का संदेश दिया। सत्य का संदेश दिया।

जन्म- दुनिया को सिख धर्म की सीख देनेवाले गुरु नानक देव का जन्म पंजाब के एक क्षत्रिय हिंदू परिवार में १५ अप्रैल १४६९ को हुआ था। इनके पिता मेहता कल्याण दास बेदी लाहौर के पास बसे तलवंडी गांव (जिसे अब ननकाना साहिब कहा जाता है) में पटवारी थे। इनकी माता तृप्ता देवी थी।

बचपन- पांच साल की उम्र से ही गुरु नानक देव ने आध्यात्मिक बातों की तरफ ध्यान देना शुरू कर दिया था। सात साल की उम्र में उनका गांव के स्कूल में दाखिला कराया गया। इसी दौरान कई ऐसी बातें हुई कि लोग कथाएं बनकर आज भी लोगों के दिलों में बसी हैं।

शादी और परिवार- गुरु नानक देव की शादी माता सुलखनी से बटाला गांव में हुई। उनके दो बेटे भी थे श्री चंद और लक्ष्मीचंद।

सिख धर्म का जन्म- सबसे पहले जमींदार राय बुलार भट्टी और उनकी बहन बेबे नानकी ने यह जाना कि गुरु नानक के भीतर कुछ दैवीय शक्तियां हैं। उन्होंने गुरु नानक को पढ़ने और घूमने के लिए प्रेरित किया। १४९९ में जब वे ३० साल के हुए तभी सिख परंपरा की शुरुआत हुई। उन्होंने ऐलान किया कि न कोई हिंदू है और न कोई मुस्लिम। उसके बाद वे चारों दिशाओं में भ्रमण करने गए। पूर्व में बंगाल और असम, तो दक्षिण में तमिलनाडु। फिर उत्तर में कश्मकीर, लद्दाख और तिब्बत की सैर की तो पश्चिम में बगदाद, मक्का और मदीना व अरब तक हो आए। मक्का में जब वे काबा की तरफ पैर करके सो रहे थे तब उन्हें कहा गया कि इस दिशा में पैर करके नहीं सोना चाहिए। गुरु नानक देव ने कहा कि आप मेरे पैर उस दिशा में कर दो जहां भगवान न हों या उनका घर न हो। यानी उन्होंने यह संदेश दे दिया कि भगवान सब जगह होते हैं।

अगला गुरु- गुरु नानक देव अपने शिष्यों को परखते रहते थे। जब उन्होंने पाया कि बाबा लहना सिर्फ अपने गुरु में ही भरोसा करते हैं तो गुरु नानक ने उन्हें अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया और उनका नाम रखा गुरु अंगद देव। जिसका मतलब होता है कि किसी का बहुत अपना या उसका एक हिस्सा। २२ तिसंबर १५३९ को ७० साल की उम्र में करतापुर पंजाब में गुरु नानक देव जी ने प्राण त्याग दिए।

गुरु ग्रंथ साहिब- गुरु नानक देव जी की शिक्षाएं गुरु ग्रंथ साहिब में सहेज कर रखी गईं। उन्होंने गुरु को ईश्वर भक्ति के लिए जरूरी माना, हेवा पर जोर दिया, अहंकार त्यागने की बात कही। ईश्वर को सर्वव्यापी बताया और रूढ़िवाद का जबर्दस्त विरोध किया। महिला और पुरुष में भेदभाव करने को भी गलत बताया।

यह एक निसंदिग्ध सत्य है कि भारत वर्ष की पावन भूमि सदैव संतों महात्माओं एवं अवतारों की प्रमुख कर्मस्थली रही है। यहां कई संत महात्मा अवतरित हुए हैं जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में आध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वर से जोड़ा है। पृथ्वी जागृत कर उसका नाता ईश्वर से जोड़ा है। पृथ्वी से पाप को कम कर पुण्य का संचार किया है। ऐसे ही एक अलौकिक संत श्री गुरु नानक देवजी महाराज हैं जिनमें हमें साक्षात ईश्वर के दर्शन होते हैं। श्री गुरु नानक देवजी ने संसार को व्यर्थ के कर्मकांडों से मुक्त कर परमात्मा का संदेश दिया और इस कलियुग में सतनाम के मंत्र का जाप जपवाया। श्री गुरुनानक देवजी ने समस्त विश्व का भ्रमण कर सभी को धर्मपालन के प्रति जागृत किया। भविष्य पुराण में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि कलियुग में श्री गुरुनानक देव जी का अवतार होगा जो मनुष्यों को सद्मार्ग की ओर ले जाएंगे। श्री गुरूग्रंथ साहिब में भी कहा गया है कि श्री गुरूनानक देवजी सतियुग में वामन अवतार, द्वापर में श्रीकृष्ण, त्रेता में रघुवंश के मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम थे और कलियुग में श्री गुरूनानक देवजी के रूप में अवतरित हुए।

चिरअमरत्व को प्राप्त श्री गुरुनानक देवजी केवल एक अवतार ही नहीं वरन मनुष्यों को सत्कर्मों की ओर प्रवृत्त करनेवाले ऐसे दीपक भी हैं जिनकी ज्योत अनंत काल तक प्रज्वलित रहेगी। उन्होंने हर अत्याचारी का विरोध किया चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। अन्यायियों में आध्यात्मिक ज्योति जगाई। हर धर्म, हर संप्रदाय का सम्मान आदर किया। दिग्भ्रमितों को सही राह दिखाई। गुरूजी ने किसी भी दुश्मन से दुश्मनी नहीं की बल्कि उसे तर्कसंगत सही मार्ग बताया। श्री जपुजी साहिब श्री नानकदेव महाराज की प्रमुख ज्ञान रचना है जो काव्य रूप में है। उन्होंने सुमेर पर्वत पर ८४ सिद्धों, मच्छिंदरनाथ, गोरखनाथ, भरथरीनाथ आदि को उपदेश देते हुए श्री जपुजी साहिब नामक विलक्षण काव्य ज्ञान की रचना की। सिद्ध पुरुष इस भ्रम में थे कि मात्र भगवान श्री शिव ही सृष्टि के रचयिता एवं पालनहार हैं। उनका यह भ्रम दूर करते हुए श्री गुरूनानक देवजी ने उन्हें समझाया कि शिव परमपिता परमेश्वर के केवल एक अंश है।

परमेश्वर ने प्रारंभ में मां अर्थात आदि शक्ति भवानी मां की रचना की है। मां ने अपनी शक्ति से तीन शिष्य बनाए जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव हैं। परमेश्वर ने ब्रह्मा को सृष्टि के सृजन, विष्णु को पालन और शिव को संहार का कार्य सौंपा। तद्नुसार ही वे अपना अपना कार्य संचालन करते हैं। श्री जपुजी साहिब का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है मानसिक और शारीरिक व्याधियों का निवारण। श्री जपुजी साहिब के नियमित पाठ से मानसिक शांति और शारीरिक सुस्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। इस काव्यकृति में कुल ३८ पौड़ियां हैं। यह परम आवश्यक है कि इन्हें श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाए। अन्य उपाय जैसे दवाई वगैरह भी करना चाहिए। कहते भी हैं कुछ दवा, कुछ दुआ। संपूर्ण श्री जपुजी साहिब हाथ से लिखकर भंडारी या संदूक में डालकर रखने से अन्न-धन-धान्य की कभी कमी नहीं होती। अत हर गुरू सिख को प्रतिदिन सिर ढांक कर श्री जपुजी साहिब का पाठ गाकर करना चाहिए जो कि अनिवार्य है। भगवान श्री रामचंद्र के वंशज- भारतीय इतिहास में इस बात के कई साक्ष्य मिलते हैं जो दर्शाते हैं कि श्री गुरूनानक देवजी महाराज भगवान श्री रामचंद्र के वंशज हैं। श्री रामचंद्र ने भी अत्याचारियों का प्रतिकार किया किंतु मर्यादा में रहकर। श्री गुरु नानकदेवजी ने सर्वधर्म समभाव, नैतिकता,

भाईचारे एवं समस्त सद्गुणों के उपदेश विश्वभर में प्रचारित किए। इसी कारण उन्हें युगदृष्टा भी कहा जाता है। उनके जीवन की कई अलौकिक घटनाओं को ग्रंथबद्ध किया जा चुका है।

श्री गुरुनानक देव जी ने स्वयं किसी धर्म की स्थापना नहीं की। उनके बाद आये गुरुओं से अपने समय की स्थितियों को देखकर सिख पंथ की स्थापना भी भारतीय धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिये की थी। श्री गुरुनानक देव जी का जीवन सदैव समाज चिंतन और सुधार में बीता। बहुत कम लोग हैं जो आज के सभ्य भारतीय समाज में उनकी भूमिका का सही आंकलन कर पाते हैं। उनके काल में भारतीय समाज अंधविश्वासों और कर्मकांडों में मकड़जाल में फंसा हुआ था। कहने को लोग भले ही समाज की रीतियां निभा रहे थे पर अपने धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिये उनके पास कोई ठोस योजना नहीं थी। राजनीतिक रूप से विदेशी आक्रमणकारी अपना दबाव इस देश पर बढ़ा रहे थे। इन्हीं आक्रमणकारियों के साथ आये कथित विद्वान सामान्य जनों को अपनी विचारधारा के अनुरूप माया मोह की तरफ आकर्षित कर रहे थे। देश के अधिकतर राजाओं का जीवन प्रजा की भलाई की बजाय अपने निजी राग द्वेष में बीत रहा था। वह राज्य के व्यवस्थापक का कर्तव्य निभाने की बजाय उसके उपभोग के अधिकार में अधिक संलग्न थे। यही कारण था कि जन असंतोष के चलते विदेशी राजाओं ने उनको हराने का सिलसिला जारी रखा। इधर सामान्य लोग भी अपने कर्मकांडों में ऐसे लिप्त रहे उनके लिये कोई नृप हो हमें का हानि की नीति ही सदाबहार थी।

समाज धीरे-धीरे विदेशी मायावी लोगों के जाल में फंसता जा रहा था और अपने अध्यात्मिक ज्ञान के प्रति उसका कोई रूझान नहीं था। ऐसे में महान संत श्री गुरुनानक देव जी ने प्रकट होकर समाज में अध्यात्मिक चेतना जगाने का जो काम किया वह अनुकरणीय है। वैसे महान संत कबीर भी इसी श्रेणी में आते हैं। हम इन दोनों महापुरुषों का जीवन देखें तो न वह केवल रोचक, प्रेरणादायक और समाज के लिये कल्याणकारी है।

फिर सदा आखिर उठी तौहीद की पंजाब से, हिन्द को एक मर्द कामिल ने जगाया ख्वाब से।

यह वह समय था जब सत्ता पर बैठे लोग जनता पर निरंतर अत्याचार कर रहे थे और स्वयं भेग विलास में लिप्त थे। राजनीति पर कठमुल्लापद हावी था। धर्म में रूढ़ियों के कारण सामाजिक ढडांचा चरमरा गया था। प्राचीन सांस्कृतिक राष्ट्र भावना विलुप्त हो चुकी थी। जाति और उपजातियों की बाढ़ आई हुई थी।

असवर्णों पर सवर्णों का सामाजिक और आर्थिक शोषण, नवागन्तुक मुस्लिम आक्रमणकारी शासकों के अत्याचारों से भी बढ़ कर था। उत्तर भारत के जुलाहे, रंगरेज, राज मजदूर, संगतराश यहां तक कि संगीतकारों और चित्रकारों ने भी जातीयता और निर्धनता के कारण इस्लाम कबूल किया। स्त्रियों की दशा भी अत्यंत शोचनीय थी। पूरा सामंती तबका भोग लिप्सा, हिंस और लूटपाट में लिप्त था।

गुरु नानक देव ने ज्ञान का साक्षात्कार करने के बाद हिन्दू और मुसलमान से ऊपर सत्य को माना और घोषणा की- न हिन्दू न मुसलमान।

उन्होंने इस बात को स्पष्ट किया कि सामाजिक शोषण और आर्थिक विषमता ही समाज में फले अनाचार की जड़ हैं।

हक पराया नानका, उसु सुअर उसु गाय। गुरू पीर हामां ता भरे, जा मुर्दाज्ञ न खाई।

गलि भिसति न जाईए, छूटे सचु कमाई।

एक बार भ्रमण करते हुए गुरू नानक देव सैदपुर अमीनाबाद पहुंचे। पाठन सूबेदार दीवान भागो ने गुरू महाराज को अपने घर भोजन का निमंत्रण दिया पर उन्होंने उसके महल में जाने से इंकार कर दिया। उन्होंने शिष्य भाई मरदाना सहित गरीब लालो बढ़ई के घर जाकर रोटी खाई। इस पर सैदपुर के अमीर उमरावों ने बड़ा हंगामा किया। गुरू नानक देव से भीड़ के सामने पूछा गया कि उन्होंने भागो दीवान के यहां जाना क्यों ठुकरा दिया। लालो और भागो दोनों के घरों से गुरूदेव ने रोटियां मंगवाई। गुरूदेव ने भागो की रोटी लेकर अपने मुट्ठी में दबाया। इसमें से खून की धार निकलने लगी। लालो बढ़ई की रोटी से दूध की धार बह चली।

गुरू देव ने ऊंच नीच, जातिवाद पर निरंतर प्रहार किया।

नीचा अंदर नीच जात नीची हूं अति नीच। नानक तिनके संग साथ, वड्डिया स्यौ क्या रीस।।

गुरू महाराज ने वाद विवाद के द्वारा अपने विचारों को थोपने का प्रयास नहीं किया। उनका माध्यम था रवाब की मधुर ध्वनि और पवित्र शब्द का गायन। रवाब की तारों को छेड़कर स्वर्गीय धुन उत्पन्न करनेवाले, उनके शिष्य भाई मर्दाना सदा उनके साथ रहा करते थे। यह वह स्वरलहरी थी जो हृदय की कोमल भावनाओं को जागृत कर देती थी। इसके माध्यम से धर्म में पनप रहे अंधविश्वासों पर उन्होंने चोट की। काशी में मरनेवाले सीधे स्वर्ग जाते हैं, इस विश्वास पर उन्होंने कहा- **मनहु कठोर मरे बनारस, नरक न बांचिया जाई, हरि का संत मरै हाड़म्बै त सगली सैन तराई।**

भारत पर बाहरी आक्रमण के समय, काबुल और दिल्ली के बीच होने के कारण पंजाब को धर्मांधता और क्रूरता का सबसे अधिक शिकार होना पड़ता था। हिन्दुस्तान पर मुगल बाबर के सिपाहियों ने चढ़ाई कर दी। उस समय पंजाब में अफगानों का राज्य था। जब मुगल घुड़सवार आगे बढ़ने लगे तो पठान मुल्ला और पीरों ने उन्हें रोकने के लिए टोना टोटका का सहारा लिया।

गुरू नानक इस समय सैदपुर में थे। मुगलों ने महल और झोपड़ियां जलाकर खाक में मिला दीं। अफगान शहजादों और झोपड़ियां जलाकर खाक में मिला दीं। अफगान शहजादों और सेवकों के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। बेगमों और शहजादियों की प्रतिष्ठा धूल में मिल गई। सारे शहर में मनुष्यों की असंख्य लाशें बिखरी थी। सड़कें और गलियां खून से भर गई थी। यह दृश्य देख कर गुरूदेव का हृदय विदीर्ण हो गया। बाबर की फौज ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया और उनसे बोझा ढोने का काम लिया जाने लगा।

सैदपूर के इस फकीर के बारे में जब बाबर ने सुना तो वह गुरू महाराज के पास आया। गुरूदेव ने अपने भावयुक्त सक्षम वार्ता वसे सैनिकों द्वारा जनता पर किये गये अत्याचार का वर्णन किया। बाबर ने सभी निर्दोष लोगों को मुक्त कर दिया।

भारतीय संतों की परंपरा के अनुरूप गुरूनानक देव ने भी राष्ट्रीय एकात्मता को मजबूत किया। पूरे भारत का भ्रमण कर, उन्होंने अपनी अमृत वाणी से संतप्त हृदयों को नया जीवन दिया। हर स्थान जहां उन्होंने अपने चरण रखे, वह पवित्रस्थल बन गया।

सन १५३१ में गुरू महाराज ने करतारपुर को अपना स्थायी निवास बनाया। वहां के कृषक जीवन व्यतीत करने लगे। वे स्वयं शिष्यों के साथ खेतों में काम करते थे। समस्त भारत से आये शिष्य, सभी कामों में गुरू महाराज को पूर्ण सहयोग देते थे। यहां किसी की निजी संपत्ति नहीं थी। लंगर में स्त्री, पुरुष, युवा, वृद्ध, हिन्दू, मुसलमान, ऊंच नीच, सभी साथ ही

प्रसाद ग्रहण करते थे। गुरू महाराज ने यहां मनुष्य को कर्म और भक्ति का सामंजस्य सिखाया। अपने आचरण से उन्होंने बताया कि संसार से विरक्त होकर निष्क्रिय जीवन बिताना भयंकर प्रवंचना है। मनुष्य सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ रचना है। गुरु महाराज ने सिक्ख धर्म को मानव धर्म के रूप में प्रस्तुत किया जहां आतंक, हिंसा, लूटपाट, खूनखराब और घृणा का कोई स्थान नहीं है। अत्यन्त कष्ट सहते हुए भी उन्होंने आम मुसलमान, सिक्ख, हिन्दुओं के बीच कोई भेदभाव नहीं किया। अपने धर्म को सर्वव्यापी और सहिष्णु बनाया। यही सच्चा पौरुष है। गुरु नानक देव की शिक्षा के अनुरूप आचरण की आवश्यकता आज समय की मांग है।

भारत की पावन भूमि पर कई संतमहात्मा अवतरित हुए हैं, जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा है। ऐसे ही एक अलौकिक अवतार गुरु नानक देव जी है। कहा जाता है कि गुरु नानक देवजी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युगों में था। उनका जन्म १४६९ में लाहौर से ३० मील दूर दक्षिण-पश्चिम में तलवंडी रायभोय नामक स्थान पर हुआ जो अब पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकाना साहिब रखा गया। श्री गुरु नानक देव संत, कवि और समाज सुधारक थे।

गुरु नानक देव के चेहरे पर बाल्यकाल से ही अद्भुत तेज दिखाई देता था। उनका परिवार कृषि करके आमदनी करते थे। गुरुनानक का जहां जन्म हुआ था वह स्थान आज उन्हीं के नाम पर अब ननकाना के नाम से जाना जाता है। ननकाना अब पाकिस्तान में है।

हर्षोल्लास और रोशनी का पर्व - गुरू नानक देव जी ने एक ऐसे विकट समय में जन्म लिया जब भारत में कोई केंद्रीय संगठित शक्ति नहीं थी। वह सदाचार और मानवता के लिए बड़ा ही कठिन दौर था। ऐसे दौर में पैदा होकर उन्होंने समाज को एक नई दिशा दी और एक प्रभु जो कि शाश्वत सत्य है के आधार पर धर्म स्थापना करने की प्रेरणा दी। विदेशी आक्रमणकारी देशवासियों का मान मर्दन कर देश को लूटने में लगे थे। धर्म के नाम पर अंधविश्वास और कर्मकांड का बोलबाला था।

धर्म काफी समय से थोथी रस्मों और रीति-रिवाजों का नाम बनकर रह गया था। उत्तरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमशक का दौर था। न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में ही, बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न-भिन्न संप्रदायों के बीच भी।

इन कारणों से भिन्न-भिन्न संप्रदायों में और भी कट्टरता और बैर-विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से हतोत्साहित किया जाता था। निम्न जाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल वर्जित था। इस ऊंच-नीचे का गुरु नानकदेव पर बहुत असर पड़ा। वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं।

बचपन से इनमें प्रखर बुद्धि के लक्षण दिखाई देने लगे थे। पढ़ने-लिखने में इनका मन नहीं लगा। ७-८ साल की उम्र से ही वे सारा समय आध्यात्मिक चिंतन और सत्संग में व्यतीत करने लगे। गुरूनानक देव जी एक महान क्रांतिकारी, समाज सुधारक और राष्ट्रवादी गुरू थे। गुरु नानक अपने व्यक्तित्व में दार्शनिक, योगी, गृहस्थ, धर्मसुधारक, कवि, देशभक्त और विश्वबंधु सभी के गुण समेटे हुए थे। नानक सर्वेश्वरवादी थे। मूर्तिपूजा को उन्होंने निरर्थक माना। रूढ़ियों

और कुसंस्कारों का कड़ा विरोध किया। खंडित होती धर्म, समाज एवं देश की एकता को देखते हुए उन्होंने अपने हृदयस्पर्शी उपदेशों से पुन: एकता के सूत्र में बांध दिया। उन्होंने लोगों को बेहद सरल भाषा में समझाया कि सभी इंसान एक दूसरे के भाई हैं। ईश्वर सबका साझा पिता है। फिर एक पिता की संतान होने के बावजूद हम ऊंच नीच कैसे हो सकते हैं।

गुरुजी ने इन उपदेशों को अपने जीवन में अमल में लाकर स्वयं एक आदर्श बन सामाजिक सद्भाव की मिसाल कायम की। उन्होंने लंगर की परंपरा चलाई जहां कथित अछूत लोग जिनके सामीप्य से कथित उच्च जाति के लोग बचने की कोशिश करते थे, उन्हीं ऊंच जातिवालों के साथ बैठकर एक पंक्ति में बैठकर भोजन करते थे। आज भी सभी गुरूद्वारों में गुरूजी द्वारा शुरू की गई यह लंगर परंपरा कायम है। लंगर में बिना किसी भेदभाव के संगत सेवा करती है। ऊंच नीच का भेदभाव मिटाने के लिए लंगर की परंपरा चलाई।

जीवन भर प्रेम और सद्भाव का संदेश देने के बाद गुरु नानक ने २५ सितंबर, १५३९ को अपना शरीर त्याग दिया। जनश्रुति है कि नानक के निधन के बाद उनकी अस्थियों की जगह मात्र फूल मिले थे। इन फूलों का हिन्दू और मुसलमान अनुयायियों ने अपनी अपनी धार्मिक परंपराओं के अनुसार अंतिम संस्कार किया।

तवलंडी अब ननकाना साहिब के नाम से जाना जाता है। तलवंडी पाकिस्तान के लाहौर जिले से ३० मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है।

नानकदेवजी के जन्म के समय प्रसूति गृह अलौकिक ज्योत से भर उठा। शिशु के मस्तक के आसपास तेज आभा फैली हुई थी, चेहरे पर अद्भुत शांति थी। पिता बाबा कालूचंद्र बेदी और माता तृपाता ने बालक का नाम नानक रखा। गाँव के पुजारी पुरोहित पंडित हरदयाल ने जब बालक के बारे में सुना तो उन्हें समझने में देर न लगी कि इसमें जरूर ईश्वर का कोई रहस्य छुपा हुआ है। नानक के मन में आध्यात्मिक भावनाएं मौजूद थीं। पिता ने पंडित हरदयाल के पास उन्हें शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजा। पंडितजी ने नानक को और ज्ञान देना प्रारंभ किया तो बालक ने अक्षरों का अर्थ पूछा। पंडितजी निरुत्तर हो गए। नानकजी ने क से लेकर ड़ तक सारी पट्टी कविता रचना में सुना दी। पंडितजी आश्चर्य से भर उठे। उन्हें अहसास हो गया कि नानक को स्वयं ईश्वर ने पढ़ाकर संसार में भेजा है। इसके उपरांत नानक को मौलवी कुतुबुद्दीन के पास पढ़ने के लिए बिठाया गया। नानक के प्रश्न से मौलवी भी निरुत्तर हो गए तो उन्होंने अलफ, बे की सीफहीं के अर्थ सुना दिए। मौलवी भी नानकदेवजी की विद्वता से प्रभावित हुए।

विद्यालय की दीवारें नानक को बाँधकर न रख सकीं। गुरु द्वारा दिया गया पाठ उन्हें नीरस और व्यर्थ प्रतीत हुआ। अंतर्मुखी प्रवृत्ति और विरक्ति उनके स्वभाव के अंग बन गए। एक बार पिता ने उन्हें भैंस चराने के लिए जंगल में भेजा। जंगल में भैसों की फिक्र छोड़ वे आँख बंद कर अपनी मस्ती में लीन हो गए। भैंसे पास के खेत में घुस गईं और सारा खेत चर डाला। खेत का मालिक नानकदेव के पास जाकर शिकायत करने लगा।

जब नानक ने नहीं सुना तो जमींदार रायबुलार के पास पहुंचा। नानक से पूछा गया तो उन्होंने जवाब दिया कि घबराओ। मत, उसके ही जानवर हैं, उसका ही खेत है, उसने ही चरवाया है। उसने एक बार फसल उगाई है तो हजार बार उगा सकता है। मुझे नहीं लगाता कोई नुकसान हुआ है। वे लोग खेत पर गए और वहाँ देखा तो दंग रह गए, खेत तो पहले की तरह ही लहलहा रहा था।

एक बार जब वे भैंस चराते समय ध्यान में लीन हो गए तो खुले में ही लेट गए। सूरज तप रहा था जिसकी रोशनी सीधे बालक के चेहरे पर पड़ रही थी। तभी अचानक एक सांप आया और बालक नानक के चेहरे पर फन फैलाकर खड़ा हो गया। जमींदार रायबुलार वहाँ से गुजरे। उन्होंने इस अद्भुत दृश्य को देखा तो आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने नानक को मन ही मन प्रणाम किया। इस घटना की स्मृति में उस स्थल पर गुरूद्वारा मालजी साहिब का निर्माण किया गया।

उस समय अंधविश्वास जन-जन में व्याप्त थे। आडंबरों का बोलबाला था और धार्मिक कट्टरता तेजी से बढ़ रही थी। नानकदेव इन सबके विरोधी थे। जब नानक का जनेऊ संस्कार होनेवाला था तो उन्होंने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि अगर सूत के डालने से मेरा दूसरा जन्म हो जाएगा, मैं नया हो जाऊंगा, तो ठीक है। लेकिन अगर जनेऊ टूट गया तो?

पंडित ने कहा कि बाजार से दूसरा खरीद लेना। इस पर नानक बोल उठे- तो फिर इसे रहने दीजिए। जो खुद टूट जाता है, जो बाजार में बिकता है, जो दो पैसे में मिल जाता है, उससे उस परमात्मा की खोज क्या होगी। मुझे जिस जनेऊ की आवश्यकता है उसके लिए दया की कपास हो, संतोष का सूत हो, संयम की गाँठ हो और उस जनेऊ सत्य की पूरन हो। यही जीव के लिए आध्यात्मिक जनेऊ है। यह न टूटता है, न इसमें मैल लगता है, न ही जलता है और न ही खोता है।

एक बार पिता ने सोचा कि नानक आलसी हो गया है तो उन्होंने खेती करने की सलाह दी। इस पर नानकजी ने कहा कि वह सिर्फ सच्ची खेती बाड़ी ही करेंगे, जिसमें मन को हलवाहा, शुभ कर्मों को कृषि, श्रम को पानी तथा शरीर को खेत बनाकर नाम को बीज तथा संतोष को अपना भाग्य बनाना चाहिए। नम्रता को ही रक्षक बाड़ बनाने पर भावपूर्ण कार्य करने से जो बीज जमेगा, उससे ही घर बार संपन्न होगा।

दस सिद्धांत- गुरुनानक देव जी ने अपने अनुयायियों को जीवन के दस सिद्धांत दिए थे। यह सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है। ईश्वर एक है, सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो। जगत का कर्ता सब जगह और सब प्राणी मात्र में मौजूद है। सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करनेवालों को किसी का भय नहीं रहता। ईमानदारी से मेहनत करके उदरपूर्ति करना चाहिए। बुरा कार्य करने के बारे न सोचें और न किसी को सताएं। सदा प्रसन्न रहना चाहिए। ईश्वर से सदा अपने को क्षमाशीलता माँगनी चाहिए। मेहनत और ईमानदारी से कमाई करके उसमें से जरूरतमंद को भी कुछ देना चाहिए। सभी स्त्री और पुरुष बराबर हैं। भोजन शरीर को जिंदा रखने के लिए जरूरी है पर लोभ-लालच व संग्रहवृत्ति बुरी है।

ऊंच-नीच का विरोध करते हुए गुरु नानकदेव अपनी मुखवाणी जपुजी साहिब में कहते हैं कि नानक उत्तम नीच न कोई जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं।

बचपन से प्रखर बुद्धिवाले नानक देव सिख धर्म के संस्थापक हैं। वे उम्र के १६वें वर्ष में शादी होने के बाद अपनी पत्नी और दोनों पुत्रों को छोड़कर धर्म के मार्ग पर निकल पड़े। बचपन से ही उनका मन धर्म और अध्यात्म में लगता था।

कहा जाता है कि गुरुनानक देव ने एक ऐसे विकट समय में जन्म लिया जब भारत में कोई केंद्रीय संगठित शक्ति नहीं थी। विदेशी आक्रमणकारी भारत देश को लूटने में लगे थे। धर्म के नाम पर अंधविश्वास और कर्मकांड चारों तरफ फैले हुए थे। ऐसे समय में नानक एक महान दार्शनिक, विचारक साबित हुए।

उन्होंने अपनी सुमधुर सरल वाणी से जनमानस के हृदय को जीत लिया। लोगों को बेहद सरल भाषा में समझाया सभी इंसान एक दूसरे के भाई है। ईश्वर सबके पिता है, फिर एक पिता की संतान होने के बावजूद हम ऊंच नीच कैसे हो सकते है? इन्हीं सभी भ्रांतियों को दूर करने के लिए उन्होंने उपदेशों को अपने जीवन में अमल किया और चारों ओर धर्म का प्रचार कर स्वयं एक आदर्श बने। सामाजिक सद्भाव की मिसाल कायम की।

गुरु नानक देव ने भारत सहित अनेक देशों की यात्राएं कर धार्मिक एकता के उपदेशों और शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार कर दुनिया को जीवन का नया मार्ग बताया।

गुरुनानक देव जी ने अपने अनुयायियों को जीवन के सिद्धांत दिए थे- ईश्वर एक है, सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो, जगत का कर्ता सब जगह और सब प्राणी मात्र में मौजूद है, सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करनेवालों को किसी का भय नहीं रहता।

बाल्यकाल से ही गुरुनानक देव के चेहरे पर अद्भुत तेज दिखाई देता था। बचपन से प्रखर बुद्धिवाले नानक देव सिख धर्म के संस्थापक हैं। बचपन से ही उनका मन धर्म और अध्यात्म में लगता था। कहा जाता है कि गुरुनानक देव ने एक ऐसे विकट समय में जन्म लिया जब भारत में कोई केंद्रीय संगठित शक्ति नहीं थी। विदेशी आक्रमणकारी भारत देश को लूटने में लगे थे। धर्म के नाम पर अंधविश्वास और कर्मकांड चारों तरफ फैले हुए थे। ऐसे समय में नानक एक महान दार्शनिक, विचारक साबित हुए।

उन्होंने अपनी सुमधुर सरल वाणी से जनमानस के हृदय को जीत लिया। लोगों को बेहद सरल भाषा में समझाया कि सभी इंसान एक दूसरे के भाई हैं। ईश्वर सबके पिता हैं, फिर एक पिता की संतान होने के बावजूद हम ऊंच नीच कैसे हो सकते हैं? इन्हीं सभी भ्रांतियों को दूर करने के लिए उन्होंने उपदेशों को अपने जीवन में अमल किया और चारों ओर धर्म का प्रचार कर स्वयं एक आदर्श बने। सामाजिक सद्भाव की मिसाल कायम की। ऊंच-नीच का भेदभाव मिटाने के लिए लंगर की परंपरा चलाई। जहां कथित अछूत और उच्च जाति के लोग एक साथ लंगर में बैठकर एक पंक्ति में भोजन करते थे। आज भी सभी गुरुद्वारों में यही लंगर परंपरा कायम है। लंगर में बिना किसी भेदभाव के संगत सेवा करती है। भारत सहित अनेक देशों की यात्राएं कर नानक ने धार्मिक एकता के उपदेशों और शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार कर दुनिया को जीवन का नया मार्ग बताया।

सिख धर्म के दस गुरुओं की कड़ी में प्रथम हैं गुरु नानक। गुरु नानकदेव से मोक्ष तक पहुंचने के एक नए मार्ग का अवतरण होता है। इतना प्यारा और सरल मार्ग कि सहज ही मोक्ष तक या ईश्वर तक पहुंचा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में गुरु का महत्व आदिकाल से ही रहा है। कबीर साहब ने कहा था कि गुरु बिन ज्ञान न होए साधु बाबा। कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन १४६९ को राएभोर के तलवंडी नामक स्थान में, कल्याणचंद (मेहता कालू) नाम के एक किसान के घर गुरु नानक का जन्म हुआ। उनकी माता का नाम तृप्ता था। माना जाता है कि १६ वर्ष की आयु में उनका विवाह हुआ। श्रीचंद और लक्ष्मीचंद नाम के दो पुत्र भी उन्हें हुए। १५०७ में वे अपने परिवार का भार अपने ससुर पर छोड़कर यात्रा के लिए निकल पड़ें। १५२१ तक उन्होंने भारत, अफगानिस्तान, फारस और अरब के प्रमुख स्थानों का भ्रमण किया। उन्होंने चारों दिशाओं में भ्रमण किया था। लगभग पूरे विश्व में भ्रमण के दौरान नानकदेव के साथ अनेक

रोचक घटनाएं घटित हुई। १५३९ में उन्होंने देह त्याग दी।

नाम धरियो हिंदुस्तान- नानकदेवजी से ही हिंदुस्तान को पहली बार हिंदुस्तान नाम मिला। लगभग १५२६ में जब बाबर द्वारा देश पर हमला करने के बाद गुरु नानकदेवजी ने कुछ शब्द कहे थे तो उन शब्दों में पहली बार हिंदुस्तान शब्द का उच्चारण हुआ था।

बालक नानक के अलौकिक ज्ञान ने बचपन से ही समय के ज्ञानवान, विद्वानों को आश्चर्य चकित कर छोड़ा था। प्रथम पंडित गोपाल जी ने बालक-नानक की कुशाग्र बुद्धि को नतमस्तक करते हुए नानक के पिता मेहता कालूराय से विनम्र निवेदन किया कि आपका नानक तो मुझसे कहीं अधिक विद्वान है। इसके बाद जब फारसी की शिक्षा ग्रहण करने पिता ने पुत्र को एक अन्य विद्वान मौलवी कुतुबुद्दीन के पास भेजा, तो ठीक वैसी ही स्थिति मौलवी साहब की भी हुई। मौलवी के सम; बाल नानक ने पहला ही सवाल दागा, कि मौलवी जी अलिफ के मायने समझाइए। अलिफ को सिर्फ हर्फ (अक्षर) समझनेवाले मौलवी जी खुद भी नहीं जानते थे नन्हे नानक के सवाल का जवाब। क्योंकि आज तक किसी शिष्य ने इतनी छोटी आयु में इतनी समझदारी वाला न तो सवाल ही पूछा था और न ही नानक की तरह अलिफ की पूरी पूरी व्याख्या कर मौलवी कुतुबुद्दीन को यह कहने को मजबूर कर दिया कि मेहता जी आप धन्य हो। आपके घर खुद खुदा बेटे का रूप धारण कर भूले-भटकों को सही राह दिखाने आया है। हम भला क्या इसे पढ़ाएंगे। आपका नानक तो सारी दुनिया को पढ़ाने आया है।

पाखंड, कुरीतियों का विरोध- हिंदू धर्म में जनेऊ रस्म का खासा महत्व है। पिता कालूरा ने भी बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञोपवीत संस्कार के लिए बेटे नानका को तैयार किया। पंडित गोपाल जब बच्चे को जनेऊ पहनाने लगे, तब बालक नानक ने यज्ञोपवीत स्वीकारने या ग्रहण करने से यह कहकर मना कर दिया कि पंडित जी धागों के इन बंधनों में मेरा कदापि विश्वास नहीं है। पहनाना ही चाहते हो, तो कृपया आप मुझे ऐसा जनेऊ पहनाओ, जो कभी मैला न हो सके, जो कभी जल न सके। धागों से नहीं मनुष्य का मन उसके आचरण से शुद्ध हो सकता है। बालक नानक की सच्चाई सुन संस्कार समारोह में उपस्थित सभी जन दंग रह गए। ऐसा कहकर बालक नानक ने हिंदू समाज में धर्म के नाम पर फैली कुरीतियों और स्वांग व आडंबर का बचपन से ही विरोध किया। जहां ढोग-षड्यंत्र के खिलाफ बाबाजी ने स्वर बुलंद किये, वहीं धर्म के नाम पर समाज में पनप रही कट्टरता व भेदभाव को विराम लगाने वह छोटी उम्र से ही प्रयासरत रहें।

मरदाना को बनाया अपना सखा- मरदाना नाम का एक व्यक्ति इसलिए मुबारक का हकदार है क्योंकि वह एक मुसलमान परिवार में जन्मा था। लेकिन बाबा नानक ने बिना किसी भेदभाव के उसे अपना जीवनभर का साथी चुना। देश विदेश में जहां जहां गुरु नानक देव जी ने भ्रमण किया, मरदाना सहर्ष आपके साथ हो लिये। इतना ही नहीं, अपने मुसलमान सखा को बाबाजी, भाई मरदाना कहकर संबोधित करते थे। भाई मरदाना रबाब बजाता और उतने ही चाव से नानक वाणी को संगीतबद्ध कर जनमानस के अंतरमन को प्रभावित करने में खुद भी बाबा नानक के विचारों में मंत्रमुग्ध रहता।

पशुओं को भी चराया- पिता कालूराय बालक की बालावस्था में ही उदासी देख स्वयं भी चिंता में डूब जाते। यह सोच कि किसी कार्य की जिम्मेदारी सौंपने से शायद बच्चे की चित्तवृत्ति में अंतर आ जाए। उन्होंने पशुओं को चराने के काम में बाबाजी को लगा दिया आश्चर्य की बात है देवमानसों में जहां बाल नानक ने भैंसे चराई वहीं इनसे पहले

हजरत ईसा मसिह ने अपनी बाल अवस्था में बकरियां चराई थी व भगवान कृष्णने गाये चराई थी। इसे अजीब इत्तेफाक ही कहा जाएगा। बाबा नानक को इसी बहाने वाहेगुरु से जुड़ने का कीमती अवसर प्राप्त हो जाता। वह भैंसा को चराने आजाद छोड़ देते और स्वयं परमात्मा के ध्यान में मग्न घंटो लीन हो जाते। कभी तो पेड़ की शीतल छांव तले उनकी आंख लग जाती और वह गहन निद्रा में खो जाते।

पिता मेहता कालूराय की एक ही मंशा थी कि पुत्र नानक को उदासी से निकालकर किसी कार्य में स्थापित करना। बेटी नानकी का विवाह, सज्जन पुरुष जयराम से हो चुका था। बहन नानकी उम्र में भाई नानक से कई वर्ष बड़ी थी। जयराम जी सुलतानपुर ने नवाब लोदी के यहा विशिष्ठ कार्यभार संभाल रहे थे। मेहता कालूराय ने नानक का ध्यान उदासी से हटाने पुत्र को उसकी बहन के यहां सुलतानपुर भेज दिया। नानकी, पहले से ही जान चुकी थी कि उसका भाई नानक एक असाधारण देव मानस है। बहुत प्यार करती थी वह छोटे नानक भाई को। निहायत ही ईमानदार शख्स जयराम अपने मालिक, नवाब लोदी का सबसे नजदीक का विश्वासपात्र था। इसी भरोसे के तहत, जयराम ने पत्नी नानकी की सलाह पर उसके भाई को नवाब के यहां नौकरी दिलवा दी। नवाब मोदी ने नानक को, महल के शाही भंडार यानी मोदी खाने की देखभाल का विश्वसनीय कार्य सौंप दिया।

नानक को मोदी खाने में काम करता देख बहनोई जयराम और साथ ही बहन नानकी को अत्यंत खुशी होती। नानक की उदारता वाली गाथा, नानक के साथ ही सुलतानपुर में पहुंच चुकी थी। मोदी खाने में भी नानक जरूरतमंदों की किंतु आर्थिक अभाव में ग्रस्त लोगों की भी जी जान से सहायता करने में जुट जाते। इससे नानक की ख्याति सुलतानपुर के लोगों की जुबानी दूर दूर तक पहुंचने लगी। नवाब लोदी भी बाल नानक के प्रशंसक बन चुके थें यह देख, नवाब के अनेक दरबारी-कर्मचारी नानक से ईर्ष्या करने लगे थे।

गुरु नानक देव, बाल अवस्था में यही उचारते रहे, इस संसार में जितने भी जीव जंतु हैं, उक्त सारी सृष्टि की रचना अकाल पुरुष ने की है। उस समय भारत वर्ष पर इसलाम कट्टर पंथियों की मजबूत पकड़ थी। इस्लाम को ही, उनकी मान्यता प्राप्त थी। किसी अन्य धर्म के लोगों को वे काफर मान बैठे थे। ऐसे में नानक के धर्मनिरपेक्ष व सर्वधर्म समभाव वाले सिद्धांतों से उन्हें खौफ होने लगा था। मोदी खाने में नानक जी की दरियादिली देखकर वहां के कर्मचारी घबरा गए। जो भी सौदा खरीदने आता। नानक तकड़ी पर तेरा-तेरा (तेरह-तेरह) तोलकर बांट देते। नानक से घृणा करनेवाले मोदी खाने के ही कुछ कर्मचारियों ने नवाब से नानक की इस लूट की शिकायत कर दी।

नवाब ने जयराम को हुक्म दिया। मोदीखाने की रसद की जांच की जाए। नुकसान या घाटा होने पर जयराम को ही हिसाब चुकाने का आदेश दिया। ईर्ष्या करने वाले खुश थे कि नानक की मोदीखाने से छुट्टी निश्चित थी। मगर जांच-पड़ताल के पश्चात नवाब यह जानकर खुश हुआ कि मोदी खाने को घाटा नहीं, निरंतर लाभ पहुंच रहा था। उल्टा शिकायत कर्ताओं को अपने राजा की फटकर सहनी पड़ी। इसके बाद जल-भुनकर उनका, नानक के प्रति विरोध खुलकर सामने आया। उन्होंने मुस्लिम धर्म के कट्टर समर्थकों के कान भरने शुरू कर दिए। अपितु बाबा नानक देव जी भाईचारे व समभाव वाली सोच पर आंच नहीं आई।

वह अक्सर उचारते ना कोई हिन्दू ना कोई तुर्क इस उक्ती की शिकायत भी विरोधियों ने काजी से कह सुनाई। अपने

ऊपर बढ़ता द्वेष देखकर नानक जी मोदीखाने से छुट्टी पाने का मन बना चुके थे और उचित अवसर की ताक में थे। एक अति सुबह नानकदेव अपने सेवक के साथ नदी किनारे स्नान करने पहुंचे। कहर बरपा रही ठंड में, सेवक महज एक डुबकी लगाकर थरथराता हुआ बाहर निकल आया। उसने देखा नानकजी नदी की धार में आगे बढ़ते चले जा रहे हैं। काफी आगे निकल चुके बाबाजी ने गहरे में डुबकी लगाई। सेवक किनारे पर कपड़े धोकर सुखाने लगा। परंतु बाबा नानक कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। उसकी शंका, भय में तब्दील हो चुकी थी। उसने बुदबुदाया। बाबा नानक, तेरियां रमजां, तु ही जाणें। बाबा जी के डूब जाने का डर उसे जयराम के पास ले गया।

नरोत्तम मिश्रा (जन्म- १५ अप्रैल)

नरोत्तम मिश्रा एक राजनेता के रूप में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) में अपना खास स्थान रखते हैं। वे मध्य प्रदेश शासन के विधि विधायी, संसदीय कार्य, आवास एवं लोक स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री हैं। नरोत्तम मिश्रा जीवाजी विश्वविद्यालय की महासभा (१९८८) के सदस्य भी थे। २८ अक्टूबर, २००९ में उन्हें माननीय मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के मंत्रिमंडल में शामिल किया गया।

सुल्तान खान (जन्म- १५ अप्रैल)

सुल्तान खान भारत के प्रसिद्ध सारंगी वादक और शास्त्रीय गायक थे। वे इन्दौर घराना से सम्बन्धित थे। उन्हें देश में सारंगी को पुनर्जीवित करने का श्रेय दिया जाता है। सारंगी के उस्ताद और हृदय को छूनेवाले पिया बसंती रे तथा अलबेला सूजन आयो रे सरीखे गीतों को अपनी आवाज देनेवाले उस्ताद सुल्तान खान को हिन्दी संगीत जगत में विशेष सम्माननीय दर्जा प्राप्त है। उन्हें भारत के तीसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान पद्मभूषण से वर्ष २०१२ में सम्मानित किया गया था।

अर्जुन देव (जन्म- १५ अप्रैल)

सिखों के जो दस गुरु हुए हैं उनमें श्री गुरु अर्जुन देव जी ब्रह्मज्ञानी के रूप में विख्यात है। उन्हें शहीदों का सरताज और शांति पुंज भी कहा जाता है। सिख संस्कृति के प्रचार प्रसार में उनका योगदान महत्वपूर्ण तो रहा ही साथ ही उन्होंने गुरु ग्रंथ साहिब का संपादन भी किया। पवित्र गुरुग्रंथ साहिब में गुरु अर्जुन देव जी की वाणी तीस रागों में संकलित है। यदि गणना की दृष्टि से देखें तो सिखों के इस सर्वोच्च ग्रंथ में सर्वाधिक वाणी गुरु अर्जुन देव जी की ही है। गुरु अर्जुनदेव ने ग्रन्थ का संपादन कार्य १६०४ ई. में पूर्ण किया था तब उसमें पहले पांच गुरुओं की वाणियां थीं। इसके बाद गुरु गोविन्द सिंह ने अपने पिता गुरु तेग बहादुर की वाणी शामिल करके आदिग्रन्थ को अंतिम रूप दिया। गुरु अर्जुन देव जी का जन्म १५ अप्रैल सन १५६३ को श्री गुरु रामदास जी के घर बीबी भानी जी की पवित्र कोख से गोइंदवाल में अपने ननिहाल में हुआ। वह अपने ननिहाल में ही पोषित और जवान हुए। एक दिन ये अपने नाना श्री गुरु अमर दास जी के पास खेल रहे थे तो गुरु नाना जी के पलंग को पकड़कर खड़े हो गए। बीबी भानी जी ऐसा देखकर उन्हें पीछे हटाने लगीं इस पर गुरुजी अपनी सुपुत्री से कहने लगे बीबी। यह अब ही गद्दी लेना चाहता है मगर गद्दी इसे अपने पिताजी से ही मिलेगी। इसके पश्चात गुरु अमर दास जी ने अर्जुन जी को पकड़कर प्यार किया और ऊपर उठाया। उन्होंने भविष्यवाणी की कि यह बहुत बड़े गुरु

बनेंगे। गुरु अर्जुन देव का विवाह १५७९ में हुआ था। तरनतारन में जो पक्का सरोवर है वह गुरु अर्जुन देव जी के प्रयासों से ही बन सका था। गुरु अर्जुन देव जी ने गुरु नानक देव के उपदेशों को प्रचारित करना ही अपने जीवन का उद्देश्य समझा। अपने पिता और चौथे सिख गुरु रामदास के निधन के पश्चात अर्जुन देव जी पांचवें गुरु बनाए गए। उन्होंने अपने पिता के अधूरे रह गए प्रयासों को पूरा करते हुए अमृतसर में हरमंदिर साहिब की स्थापना की और इस स्थल को सिखों के पवित्र तीर्थ स्थल के रूप में मान्यता दिलवाई। गुरु अर्जुन देव जी के जीवन के बारे में जो जानकारी मिलती है उसके अनुसार वह गंभीर और शांत स्वभाव वाले महापुरुष थे। वह सभी दिन रात बस सेवा के कार्य में ही लगे रहते थे। वह सभी धर्मों के प्रति समान रूप से आदर का भाव रखते थे और संसार के कष्टों से हर व्यक्ति का निजात दिलाना चाहते थे। उस समय गुरु जी द्वारा किये जा रहे धार्मिक और सामाजिक कार्य तत्कालीन शासक जहांगीर को नहीं भाते थे। जहांगही को अपने धर्म के अलावा कोई और धर्म पसंद नहीं था। वह गुरु जी से विभिन्न कारणों से नाराज चल रहा था और एक दिन उसने अपने सेवकों को आदेश दिया कि गुरु अर्जुन देव को परिवार सहित पकड़ लाओ।

जहांगीर ने १६ जून १६०६ को लाहौर में गुरुजी की हत्या करवा दी। इसके पहले उन्हें विभिन्न प्रकार से यातनाएं दी गयीं। इस तरह गुरुजी को शहीदों का सरताज होने का गौरव भी प्राप्त हुआ। सुखमीन साहिब गुरु अर्जुन देव की अमर वाणी है। इसमें चौबीस अष्टपदी हैं। सूत्रात्मक शैली की इस रचना में साधना और उसके प्रभावों तथा सेवा और त्याग के उपायों का वर्णन यिा गया है जिन्हें मानव अपने जीवन में अपनाकर सच्चे सुख की प्राप्ति कर सकता है। गुरु अर्जुन देव जी ने ३० बड़े रागों में २२१८ आध्यात्मिक भजनों की रचना भी की है।

गुरु अर्जुन देव ने पंजाबी भाषा साहित्य और संस्कृति को भी नई दिशा प्रदान की। उनके शाहीदी दिवस पर उन्हें याद कर उनकी धर्मनिरपेक्ष विचारधारा और महान जीवन मूल्यों को अपनाने का प्रण लिया जाता है। गुरु अर्जुन देव ने कहा था परमात्मा की ज्योति ऊंच-नीच सभी में व्याप्त है परमात्मा घट-घट में व्याप्त है।

सगल वनस्पति महि बैसन्तरु सगल दूध महि घीआ। ऊंच नीच महि जोति समाणी, घटि घटि माथउ जीआ।।

१६ अप्रैल

कंदुकूरी वीरेशलिंगम (जन्म- १६ अप्रैल)

कंदुकूरी वीरेशलिंगम तेलुगु भाषा के प्रसिद्ध विद्वान, जिन्हें आधुनिक तेलुगु साहित्य में गद्य ब्रह्मा के नाम से ख्याति मिली। उन्होंने विधवा आश्रमों की स्थापना की। स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए उन्होंने १८७४ में राजमंड्री के समीप धवलेश्वर में और १८८४ में इन्निसपेटा में बालिकाओं के लिए पाठशालाओं की स्थापना की। आधुनिक तेलुगु गद्य साहित्य के प्रवर्तक के रूप में ख्याति अर्जित की थी।

नंदलाल बोस (निधन- १६ अप्रैल)

नंदलाला बोस या नंदलाल बसु भारत के एक प्रसिद्ध चित्रकार थे। नंदलाल बोस ने संविधान की मूल प्रति का डिजाइन बनाया था। इनके प्रसिद्ध चित्रों में है- डांडी मार्च, संथाली कन्या, सती का देह त्याग इत्यादि है। नंदलाल बोस ने चित्रकारों और कला अध्यापन के अतिरिक्त इन्होंने तीन पुस्तिकाएँ भी लिखीं- रूपावली, शिल्पकला और शिल्प चर्चा।

ये अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रख्यात शिष्य थे।

अद्वैत मल्लबर्मन (निधन- १६ अप्रैल)

अद्वैत मल्लबर्मन बांग्ला भाषा के प्रसिद्ध लेखक थे। इनके द्वारा रचित बांग्ला उपन्यास तितास एकटि नदीर नाम बहुत प्रसिद्ध हुआ।

१७ अप्रैल

गीत सेठी (जन्म- १७ अप्रैल)

गीत श्रीराम सेठी भारत के बिलियर्ड्स और स्नूकर खिलाड़ी हैं। गीत सेठी का जन्म १७ अप्रैल, १९६१ को दिल्ली में हुआ। ९ बार विश्व बिलियर्ड्स खिताब जीतनेवाले गीत सेठी को १९९२-९३ में राजीव गाँधी खेल रत्न पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

तात्या टोपे (निधन- १७ अप्रैल)

तात्या टोपे सन १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणीय वीरों में उच्च स्थान प्राप्त है। इस वीर ने कई स्थानों पर अपने सैनिक अभियानों में उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात में अंग्रेजी सेनाओं से टक्कर ली थी और उन्हें परेशान कर दिया था। गोरिल्ला युद्ध प्रणाली को अपनाते हुए तात्या ने अंग्रेजी सेनाओं के कई स्थानों पर छक्के छुड़ा दिये थे। तात्या टोपे जो तांतिया टोपी के नाम से विख्यात हैं।

१८ अप्रैल

सुधाकर पाण्डेय (निधन- १८ अप्रैल)

सुधाकर पाण्डेय हिन्दी साहित्य की प्रमुख विधाओं के उत्कृष्ट लेखक और सुधारक थे। ये वर्ष १९७१ में कांग्रेस के उम्मीदवार और सांसद भी चुने गए थे।

बारीन्द्र कुमार घोष (निधन- १८ अप्रैल)

बारीन्द्र कुमार घोष अरविन्द घोष के क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित थे। स्वदेशी आंदोलन के परिणामस्वरूप बारीन्द्र कुमार ने क्रांतिकारी विचारों का प्रचार करने के लिए १९०६ में बंगाली साप्ताहिक युगान्तर का प्रकाशन प्रारम्भ किया। १९०७ में क्रांतिकारी आतंकवाद की गतिविधियों का संयोजन करने के लिए मणिकतल्ला पार्टी का गठन किया। १९०८ में इन्हें गिरफ्तार कर मृत्यु दण्ड की सजा सुनाई गई, किन्तु बाद में इसे आजीवन कारावास में बदल दिया गया।

पांडुरंग वामन काणे (निधन- १८ अप्रैल)

डॉ. पांडुरंग वामन काणे संस्कृत के एक विद्वान एवं प्राच्यविद्या विशारद थे। भारत की अति प्राचीन वैदिक भाषा के रूप में यदि आज संस्कृत को विश्व की सभी भाषाओं की जननी माना जाता है और भारत की अति प्राचीन धर्म संस्कृति को यदि विश्वभर में बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, तो उसमें महान भारतीय संस्कृतज्ञ और विद्वान पंडित डॉक्टर

पांडुरंग वामन काणे के अमूल्य योगदान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता। धर्मशास्त्र का इतिहास पाँच भागों में प्रकाशित बड़े आकार के ६५०० पृष्ठों का भारतीय धर्मशास्त्र का विश्वकोश है। यह ग्रंथ इस बात का प्रमाण है कि डॉ. काणे ने अथक लगन और परिश्रम से इस ग्रंथ का निर्माण किया।

गुरु तेग बहादुर (जन्म- १८ अप्रैल)

गुरु तेग बहादुर सिंह सिक्खों के नौवें गुरु थे। विश्व के इतिहास में धर्म एवं सिद्धांतों की रक्षा के लिए प्राणों की आहुति देनेवालों में इनका अद्वितीय स्थान है। तेग बहादुर जी के बलिदान से हिंदुओं व हिन्दू धर्म की रक्षा हुई। हिन्दू धर्म के लोग भी उन्हें याद करते और उनसे संबंधित कार्यक्रमों में भाग लेते हैं।

धोंड़ो केशव कर्वे (जन्म- १८ अप्रैल)

सन १८९१ में जब धोंड़ो केशव कर्वे देशभक्त और समाज सेवी गोपालकृष्ण गोखले, दादा भाई नौरोजी और महादेव गोविंद रानाडे जैसे महापुरुषों के पद चिन्हों पर चलते हुए समाज सेवा के क्षेत्र में कुछ सार्थक करने की योजना बना रहे थे, उन्हीं दिनों उनकी पत्नी राधाबाई का निधन हो गया। यद्यपि वे अपनी पत्नी के अधिक सम्पर्क में नहीं रहे थे, तथापि यह उनके लिए बड़ा आघात था। सन १८९१ के अंतिम माह में वे राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा संचालित पूना के फर्ग्युसन कॉलेज में गणित के प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। अपनी मेहनत और प्रतिभा से वह डेक्कन शिक्षा समिति के आजीवन सदस्य बने।

२० अप्रैल

चन्द्रबली सिंह (जन्म- २० अप्रैल)

चन्द्रबली सिंह एक लेखक होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के अनुवादक एवं आलोचक थे। गाजीपुर में जन्मे चन्द्रबली सिंह ने लोक दृष्टि, हिन्दी साहित्य तथा आलोचना का जनपक्ष नामक शीर्षक से पुस्तक का प्रकाशन किया। इनकी गिनती एक उत्कृष्ट कोटि के अनुवादक के रूप में भी की जाती थी। चन्द्रबली सिंह अंग्रेजी के परम विद्वान होकर भी हिन्दी के साधक थे। वे रामविलास शर्मा के सान्निध्य में काफी लंबे समय तक आगरा के बलवंत राजपूत स्नातकोत्तर महाविद्यालय में प्राध्यापन करते रहे। रामविलास शर्मा ने अपनी रामचन्द्र शुक्ल पर लिखी आलोचना पुस्तक को चन्द्रबली सिंह को अभूतपूर्व आलोचक कहकर समर्पित किया है।

गोपीनाथ मोहंती (जन्म- २० अप्रैल)

गोपीनाथ मोहंती उड़िया भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। वर्ष १९३० से १९३८ के बीच का समय इनके लेखक जीवन का निर्माण काल माना जाता हे। गोपीनाथ मोहंती को १९७३ में उनके योगदान के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। बाद में १९८१ में भारत सरकार द्वारा इन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में पद्मभूषण से पुरस्कृत किया गया।

पन्नालाल घोष (निधन- २० अप्रैल)

पन्नालाल घोष भारत के प्रसिद्ध बांसुरी वादक थे। पंडित पन्नालाल घोष बांसुरी के मसीहा नयी बांसुरी के जन्मदाता और

भारतीय शास्त्रीय संगीत का युगपुरुष जिसने लोक वाद्य बांसुरी को शास्त्रीय के रंग में ढालकर शास्त्रीय वाद्य यंत्र बना दिया।

२१ अप्रैल

मोहम्मद इकबाल (निधन- २१ अप्रैल)

मोहम्मद इकबाल एक आधुनिक भारतीय प्रसिद्ध मुसलमान कवि थे। इकबाल ने अपनी अधिकांश रचनाएँ फारसी में की हैं। सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा यह मशहूर गीत इकबाल का ही लिखा हुआ है।

२४ अप्रैल

तीजनबाई (जन्म- २४ अप्रैल)

तीजनबाई छत्तीसगढ़ राज्य की पहली महिला कलाकार हैं जो पण्डवानी की कापालिक शैली की गायिका हैं। तीजनबाई ने अपनी कला का प्रदर्शन अपने देश में ही नहीं बल्कि विदेश में भी किया है, जिसके लिए उन्हें भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण और पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया गया है।

सचिन तेंदुलकर (जन्म- २४ अप्रैल)

सचिन तेंदुलकर क्रिकेट इतिहास में विश्व में सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाजों में शामिल एक भारतीय क्रिकेटर हैं। वे बल्लेबाजी में कई कीर्तिमान स्थापित कर चुके हैं। सचिन तेंदुलकर ने टेस्ट व एकदिवसीय क्रिकेट दोनों में सर्वाधिक शतक अर्जित किये हैं। वे टेस्ट क्रिकेट में सबसे ज्यादा रन बनानेवाले बल्लेबाज हैं। इसके साथ टेस्ट क्रिकेट में १५००० से अधिक रन बनानेवाले वे विश्व में एकमात्र खिलाड़ी हैं।

महात्मा रामचन्द्र वीर (निधन- २४ अप्रैल)

महात्मा रामचन्द्र वीर महाराज एक यशस्वी लेखकर, कवि तथा ओजस्वी वक्ता थे। उन्होंने देश तथा धर्म के लिए बलिदान देनेवाले हिन्दू महात्माओं का इतिहास लिखा। हमारी गोमाता, वीर रामायण (महाकाव्य), हमारा स्वास्थ्य जैसी दर्जनों पुस्तकें लिखकर उन्होंने साहित्य सेवा में योगदान दिया। वीर जी महाराज ने देश की स्वाधीनता, मूक-प्राणियों व गोमाता की रक्षा तथा हिन्दू हितों के लिए २८ बार जेल यातनाएँ सहन की। वीर जी राष्ट्रभाषा हिन्दी की रक्षा के लिए भी संघर्षरत रहे।

रामधारी सिंह दिनकर (निधन- २४ अप्रैल)

रामधारी सिंह दिनकर हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक, कवि एवं निबंधकार हैं। राष्ट्रकवि दिनकर आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं।

२५ अप्रैल

चन्द्रबली पाण्डेय (जन्म- २५ अप्रैल)

चन्द्रबली पाण्डेय हिन्दी भाषा और साहित्य के उन्नयन, संवर्धन और संरक्षण के लिए समर्पित थे। हिंदी साहित्य

सम्मेलन के सभापति रहने के अतिरिक्त नागरी प्रचारिणी सभा के भी सभापति रहे। इन्होंने अपना पूरा जीवन अध्ययन और हिंदी प्रचार में लगा दिया। हिंदू उर्दू समस्या तथा सूफी साहित्य और दर्शन से सम्बद्ध इनके विचार ऐतिहासिक महत्व के हैं।

बड़े गुलाम अली खाँ (निधन- २५ अप्रैल)

उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ की गणना भारत के महानतम गायकों व संगीतज्ञों में की जाती है। वे विलक्षण मधुर स्वर के स्वामी थे। इनके गायन को सुनकर श्रोता अपनी सुध-बुध खोकर कुछ समय के लिए स्वयं को खो देते थे। भारत के कोने-कोने से संगीत के पारखी लोग खाँ साहब को गायन के लिए न्यौता भेजते थे। क्या राजघराने क्या मामूली स्कूल के विद्यार्थी, खाँ साहब की मखमली आवाज सभी को मंत्रमुग्ध कर देती थी।

२७ अप्रैल

मनीभाई देसाई (जन्म- २७ अप्रैल)

मनीभाई देसाई उस पीढ़ी के व्यक्ति थे जिन्होंने संग्राम के दौरान महात्मा गांधी के साथ भी सक्रिय होकर काम किया और उसके बाद आजाद भारत में भी उन्हें प्रतिबद्धतापूर्वक काम करने का लम्बा अवसर मिला। मनीभाई देसाई ने महात्मा गांधी के सामने यह संकल्प लिया था कि वह आजीवन निर्धन गाँववालों के आर्थिक तथा सामाजिक विकास के लिए काम करते रहेंगे। यह संकल्प उन्होंने पूरी निष्ठा के साथ निभाया और उनके कार्यक्षेत्र में उनकी कर्मठता का प्रमाण स्पष्ट देखा गया। मनीभाई देसाई की इसी प्रतिबद्ध सेवा के लिए उन्हें १९८२ का मैग्सेसे पुरस्कार दिया गया।

२९ अप्रैल

राजा रवि वर्मा (जन्म- २९ अप्रैल)

राजा रवि वर्मा भारत के विख्यात चित्रकार थे। उन्होंने भारतीय साहित्य और संस्कृति के पात्रों का चित्रण किया। उनके चित्रों की सबसे बड़ी विशेषता हिन्दू महाकाव्यों और धर्म ग्रंथों पर बनाए गए चित्र हैं। हिन्दू मिथकों का बहुत ही प्रभावशाली इस्तेमाल उनके चित्रों में दिखता है। इस संग्रहालय में उनके चित्रों का बहुत बड़ा संग्रह है।

जुबिन मेहता (जन्म- २९ अप्रैल)

जुबिन मेहता एक प्रसिद्ध भारतीय संगीत निर्देशक हैं। जुबिन मेहता को कला के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६६ में पद्मभूषण और २००१ में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया था। अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संगीतज्ञ जुबिन मेहता भारतीय संगीत के प्रबल समर्थक हैं।

अल्ला रक्खा खाँ (जन्म- २९ अप्रैल)

अल्ला रक्खा खाँ सुख्यिात तबला वादक, भारत के सर्वश्रेष्ठ एकल और संगीत वादकों में से एक थे। इनका पूरा नाम कुरैशी अल्ला रक्खा खाँ है। अल्ला रक्खा खाँ अपने को पंजाब घराने का मानते थे। अल्ला रक्खा खाँ के पुत्र का नाम जाकिर हुसैन है जो स्वयं प्रसिद्ध तबला वादक हैं।

अल्ला रक्खा खाँ सुविख्यात तबला वादक, भारत के सर्वश्रेष्ठ एकल और संगीत वादकों में से एक थे। इनका पूरा नाम कुरेशी अल्ला रक्खा खाँ है। अल्ला रक्खा खाँ अपने को पंजाब घराने का मानते थे। अल्ला रक्खा खाँ के पुत्र का नाम जाकिर हुसैन है जो स्वयं प्रसिद्ध तबला वादक हैं। संगीत के क्षेत्र में आपके योगदान को स्वीकार करते हुए भारत सरकार के द्वारा सन १९७७ ई. में आपको पद्मश्री के सम्मान से अलंकृत किया गया। सन १९८२ ई. में संगीत नाटक अकादमी ने भी आपको जीवन पर्य।त संगीत सेवा के लिये अकादमी अवार्ड से सम्मानित किया।

भामाशाह (जन्म- २९ अप्रैल)

भामाशाह (जन्म- २९ अप्रैल, १५४७ ई.) का नाम मेवाड़ के उद्धारकर्ता के रूप में आज भी सुरक्षित है। वे मेवाड़ के महाराणा प्रताप के मित्र, सहयोगी और विश्वासपात्र सलाहकार थे। भामाशाह को अपनी मातृ-भूमि से बहुत प्रेम था। कहा जाता है कि उनके पास बहुत बड़ी मात्रा में धन सम्पत्ति थी, जो उन्होंने मेवाड़ के उद्धार के लिए महाराणा प्रताप को समर्पित कर दी थी। महाराणा इस प्रचुर सम्पत्ति से पुन: सैन्य-संगठन में लग गये थे। चित्तौड़ को छोड़कर महाराणा ने अपने समस्त दुर्गों का शत्रु से उद्धार करा लिया था।

राजा महेन्द्र प्रताप (निधन- २९ अप्रैल)

राजा महेन्द्र प्रताप एक सच्चे देशभक्त, क्रांतिकारी, पत्रकार और समाज सुधारक थे। ये आर्यन पेशवा के नाम से प्रसिद्ध थे। राजा महेन्द्र प्रताप का जीवन क्रम आरम्भ से ही जहाँ एक तुफान के समान निरंतर वेगवान था, वहीं वह आस्था, विश्वास और परोपकार की सुरभि से सुरभित भी रहा। मौलिक चिन्तन, दृढ़ निश्चय, अदम्य उत्साह और एक-एक क्षण के सदुपयोग की प्रबल उत्कंठा उनमें किशोरावस्था से ही अपने राज्याधिकार प्राप्ति काल में भी विद्यमान थी। प्राचीनता के प्रति श्रद्धा और ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास रखते हुए भी नवीन युग की नव चेतना को बचपन से ही उन्होंने आगे बढ़कर अपनाया।

३० अप्रैल

हरि सिंह नलवा (निधन- ३० अप्रैल)

सरदार हरि सिंह नलवा महाराजा रणजीत सिंह के सेनाध्यक्ष थे। जिस एक व्यक्ति का भय पठानों और अफगानियों के मन में, पेशावर से लेकर काबूल तक, सबसे अधिक था; उस शख्सीयत का नाम जनरल हरि सिंह नलवा था। सिख फौज के सबसे बड़े जनरल हरि सिंह नलवा ने कश्मीर पर विजय प्राप्त कर अपना लौहा मनवाया। यही नहीं, काबुल पर भी सेना चढ़ाकर जीत दर्ज की। खैबर दर्रे से होनेवाले इस्लामिक आक्रमणों से देश को मुक्त किया।

१ मई

एस.एम.कृष्णा (जन्म- १ मई)

सोमनाहल्ली मल्लैया कृष्णा एक भारतीय राजनीतिज्ञ हैं, जिन्होंने सन २००९ के बाद से भारत सरकार में विदेश मंत्री के रूप में देश की सेवा की है। १९९९ से २००४ तक एस.एम. कृष्णा कर्नाटक के मुख्यमंत्री रहे थे और वर्ष २००४ से २००८ तक वे महाराष्ट्र के राज्यपाल भी रहे। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने २२ मई, २००९ को उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल किया और विदेश मंत्रालय का कार्यभार सौंप दिया। वे मनमोहन सिंह के मंत्रिमंडल के एक मात्र ऐसे मंत्री हैं, जो मंत्री, उप मुख्यमंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल और तीन बार केंद्रीय मंत्री का पद संभाल चुके हैं।

निरंजन नाथ वांचू (जन्म- १ मई)

निरंजन नाथ वांचू वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी थे। बाद में वे केरल और मध्य प्रदेश के राज्यपाल पद पर रहे। वर्ष १९३४ में निरंजन नाथ वांचू ने भारतीय प्रशासनिक सेवा में प्रवेश किया और बिहार में सब कलेक्टर के रूप में अपनी सेवाएँ प्रारंभ की।

३ मई

सुमित्रा सिंह (जन्म- ३ मई)

सुमित्रा सिंह भारतीय राज्य राजस्थान की प्रसिद्ध महिला राजनीतिज्ञों में से एक हैं। वे राजस्थान विधान सभा की प्रथम महिला अध्यक्षा हैं।

रघुवर दास (जन्म- ३ मई)

रघुवर दास भारतीय राजनीतिज्ञ तथा झारखण्ड के वर्तमान मुख्यमंत्री हैं। उन्होंने २०१४ के चुनावों में जमशेदपुर पूर्व सीट से भारतीय जनता पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ा और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उम्मीदवार आनन्द बिहारी दुबे को ७०१५७ वोटों के अंतर से हराकर झारखंड के छठवें मुख्यमंत्री बने। वे झारखंड के पहले गैर आदिवासी मुख्यमंत्री हैं। इससे पूर्ण वह प्रदेश के उपमुख्यमंत्री भी रह चुके हैं।

उमा भारती (जन्म- ३ मई)

उमा भारती भारत की महिला राजनीतिज्ञों में से एक एवं जल संसाधन, नदी विकास और गंगा कायाकल्प मंत्रालय की वर्तमान केंद्रीय मंत्री हैं। सदैव भगवा वस्त्र में दिखाई देनेवालीं उमा भारती का विवादों से भी नाता रहा है। सन २००३ में भारत की प्रमुख राजनीतिक पार्टियों में से एक भाजपा (भारतीय जनता पार्टी) ने उन्हें मध्य प्रदेश के विधानसभा चुनावों में अपना अगुवा बनाया थज्ञ।

अशोक गहलोत (जन्म- ३ मई)

अशोक गहलोत प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ के पूर्व मुख्यमंत्री हैं। अशोक गहलोत ने इन्दिरा गांधी, राजीव गांधी तथा पी.वी.

नरसिम्हा राव के मंत्रीमंडल में केंद्रीय मंत्री के रूप में कार्य किया। वे तीन बार केन्द्रीय मंत्री बने। अशोक गहलोत १ दिसंबर १९९८ से ८ दिसंबर २००३ तक राजस्थान के मुख्यमंत्री रहे। उनका यह कार्यकाल अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धियों के अलावा अभूतपूर्व सूखा प्रबन्धन, विद्युत उत्पादन, संसाधनों का विकास, रोजगार सृजन, औद्योगिक और पर्यटन विकास, कुशल वित्तीय प्रबन्धन और सुशासन के लिए जाना जाता है।

जाकिर हुसैन (निधन- ३ मई)

डॉ. जाकिर हुसैन भारत के तीसरे राष्ट्रपति थे। उनका राष्ट्रपति कार्यकाल १३ मई १९६७ से ३ मई १९६९ तक रहा। डॉ. जाकिर हुसैन मशहूर शिक्षाविद और आधुनिक भारत के दृष्टा थे। ये बिहार के राज्यपाल (कार्यकाल- १९५७ से १९६२ तक) और भारत के उपराष्ट्रपति (कार्यकाल- १९६२ से १९६७ तक) भी रहे। उन्हें वर्ष १९६३ में भारत रत्न से सम्मानित किया गया। १९६९ में असमय देहावसान के कारण वे अपना राष्ट्रपति कार्यकाल पूरा नहीं कर सके।

४ मई

त्यागराज- जन्म- ४ मई

त्यागराज प्रसिद्ध संगीतज्ञ थे। वे कर्नाटक संगीत के महान ज्ञाता तथा भक्तिमार्ग के कवि थे। इन्होंने भगवान श्रीराम को समर्पित भक्ति गीतों की रचना की थी। उनके सर्वश्रेष्ठ गीत अक्सर धार्मिक आयोजनों में गाए जाते हैं। त्यागराज ने समाज एवं साहित्य के साथ-साथ कला को भी समृद्ध किया था। उनकी विद्वता उनकी कृति में झलकती है, हालांकि पंचरत्न कृति को उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना कहा जाता है।

टीपू सुल्तान (निधन- ४ मई)

कई बार अंग्रेजों के छक्के छुड़ा देनेवाले टीपू सुल्तान को भारत के पूर्व राष्ट्रपति एवं महान वैज्ञानिक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने विश्व का सबसे पहला रॉकेट अविष्कारक बताया था। टीपू सुल्तान भारतीय इतिहास के प्रसिद्ध योद्धा हैदर अली का पुत्र था। पिता की मृत्यु के बाद पुत्र टीपू सुल्तान ने मैसूर सेना की कमान को संभाला था, जो अपनी पिता की ही भांति योग्य एवं पराक्रमी था। टीपू को अपनी वीरता के कारण ही शेर-ए-मैसूर का खिताब अपने पिता से प्राप्त हुआ था। टीपू द्वारा कई युद्धों में हारने के बाद मराठों एवं निजाम ने अंग्रेजों से संधि कर ली थी।

हेमचंद्र रायचौधरी (निधन- ४ मई)

हेमचंद्र रायचौधरी एक भारतीय इतिहासकार थे, जो भारत प्राचीन इतिहास पर अपने ज्ञान के लिए जाने जाते हैं। उन्हें १९२१ में कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्राचीन भारतीय इतिहास में पी.एच.डी. से सम्मानित किया गया।

किशन महाराज (निधन- ४ मई)

पंडित किशन महाराज भारत के सुप्रसिद्ध तबला वादक थे। ये बनारस घराने के वादक थे। इन्हें कला क्षेत्र में योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा सन १९७३ में पद्मश्री और सन २००२ में पद्म विभूषण से भी सम्मानित किया गया था। किशन महाराज तबले के उस्ताद होने के साथ साथ मूर्तिकार, चित्रकार, वीर रस के कवि और ज्योतिष के मर्मज्ञ भी थे।

के.सी. रेड्डी (जन्म- ४ मई)

के.सी. रेड्डी कर्नाटक के प्रथम मुख्यमंत्री थे। अपने राजनीति जीवन में इन्होंने कई महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित किया था। के.सी. रेड्डी लगातार तीन बार मैसूर विधान सभा के नेता और राज्य के मुख्यमंत्री रहे। वर्ष १९५६ से १९७१ तक इन्होंने मध्य प्रदेश के राज्यपाल का पद भी सम्भाला था।

५ मई

समरेश जंग (जन्म- ५ मई)

समरेश जंग भारत के प्रसिद्ध निशानेबाज (शूटर) हैं। २००६ में मेलबर्न में होनेवाले १८वें राष्ट्रमंडल खेलों में पांच स्वर्ण, दो रजत तथा एक कांस्य पदक जीतनेवाले भारतीय निशानेबाज समरेश जंग को इन खेलों का सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी चुना गया था। ऐसा पहली बार हुआ था, जब भारत के किसी खिलाड़ी को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया गया हो। अत: उन्होंने यह पुरस्कार जीतकर एक नया इतिहास रच डाला। समरेश जंग ने द्वितीय साउथ एशियन फैडरेशन शूटिंग चैंपियनशिप में १९९७ में दो स्वर्ण पदक जीते थे। २००२ के राष्ट्रमंडल खेलों में भी समरेश ने दो स्वर्ण पदक जीतकर सफलता प्राप्त की थी।

मनोहर लाल खट्टर (जन्म- ५ मई)

मनोहर लाल खट्टर भारत के उत्तरी राज्य हरियाणा के वर्तमान मुख्यमंत्री एवं भारतीय जनता पार्टी के नेता हैं। इन्होंने अक्टूबर २०१४ में संपन्न हुए हरियाणा विधानसभा चुनाव के बाद २६ अक्टूबर, २०१४ को मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। हिमाचल प्रदेश में संघ के प्रचारक रहे मनोहर लाल खट्टर को राजनीति में नरेन्द्र मोदी लेकर आए। रोहतक के रहनेवाले खट्टर को करनाल सीट से लड़ाया गया। जब हिमाचल प्रदेश में नरेंद्र मोदी प्रभारी हुआ करते थे तब खट्टर सह प्रभारी थे।

होशियार सिंह (जन्म- ५ मई)

मेजर होशियार सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९७१ में मिला। वर्ष १९७१ के भारत पाकिस्तान युद्ध ने भारत के दो बहादुर सिपाहियों को परमवीर चक्र का हकदार बनाया। एक तो पूना हॉर्स के सेकेण्ड लेफ्टिनेंट अरुण खेत्रपाल जिन्होंने अपने प्राण गँवाकर सबसे कम उम्र के परमवीर चक्र विजेता का सम्मान प्राप्त किया, दूसरे मेजर होशियार सिंह जिन्होंने ३ ग्रेनेडियर्स की अगुवाई करते हुए अपना अद्भुत पराक्रम दिखाया और दुश्मन को पराजय का मुंह देखना पड़ा। उन्होंने जम्मू कश्मीर की दूसरी ओर शकरगढ़ के पसारी क्षेत्र में जरवाल का मोर्चा फतह किया था।

आबिद सुरती (जन्म- ५ मई)

आबिद सुरती एक राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता हिन्दी गुजराती साहित्यकार और कार्टून पात्र ढब्बू जी के सर्जक हैं। आबिद सुरती चित्रकार, कार्टूनिस्ट, व्यंग्यकार, उपन्यासकार और कहानीकार भी हैं। विभिन्न कलाविधाएँ उनके लिए कला और जिन्दगी के ढर्रे को तोड़ने का माध्यम हैं। उनकी ये कोशिशें उनके चित्रों में नजर आती हैं। स्वभाव से यथार्थवादी होते हुए भी वे अपनी कहानियों में मानव मन की उड़ानों को शब्दांकित करते हैं। जीवन का सच्चाई से वे सीधे साक्षात्कार न करके

फंतासी और काल्पनिकता का सहारा लेते हैं।

अमरदास गुरु (जन्म- ५ मई)

सिक्खों के तीसरे गुरु अमरदास का जन्म अमृतसर के निकट १४८० ई. में हुआ था। ये जाति के खत्री थे और वैष्णव धर्म के पक्के अनुयायी थे। नित्य सालिग्राम की पूजा करते थे। एक दिन इनके कानों में गुरु अंगद की पुत्री के गाये हुए नामक देव के भजन पड़े। उसके बाद ही अमरदास गुरु अंगद के पास पहुंचे और उनके शिष्य बन गए। ये बड़े गुरुभक्त थे। गुरुआनंद ने इन्हें ही अपनी गद्दी का उत्तराधिकारी बनाया। अकबर भी एक बार इनके दर्शनों के लिए गया था। इन्होंने सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए बाईस केंद्र खोले। अपनी गद्दी इन्होंने अपने योग्य शिष्य और दामाद जेठा को सौंप दी थी जो गुरु रामदास के नाम से प्रसिद्ध हुए। उसके बाद के सभी गुरु जेठा की वंश परंपरा में ही हुए हैं। गुरु रामदास ने संतोषसर नामक तालाब बनवाया था जो गुरु अमरदास के नाम पर अब अमृतसर कहलाता है। गुरु अमरदास के कुछ पद गुरु ग्रंथ साहब में संग्रहीत हैं।

६ मई

देशभक्त पं. मोतीलाल नेहरू

इस देश की आजादी की बात हो या इस देश मे विश्वास की गंगा बहाने की बात हो, हर दृष्टि मे इसके लिए नेहरू-गाँधी परिवार का स्मरण अवश्य करना होगा। इसी परिप्रेक्ष्य मे जब आजादी के दीवाने इस देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त कराने की लड़ाई छेड़े हुए थे तब एकल व्यक्ति प्रदर्शन मे हमारे समक्ष एक नाम आता है पं. मोतीलाल नेहरू का। इस परिवार की पीढ़ियां आज तक देश मे अपने नाम का परचम फहरा रही है। इसी नेहरू परिवार ने देश को तीन-तीन कर्मठ और लोकप्रिय प्रधानमंत्री दिए। पं. मोतीलाल नेहरू के पिता दिल्ली मे पुलिस अधिकारी थे और भारत के प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन १८५७ में वे दिल्ली छोड़कर आगरा आ बसे थे। अभी पं. मोतीलाल नेहरू के पिताजी पं. गंगाधर और माता जियोरानी आगरा आकर भली प्रकार जम भी नही पाई थी कि ३४ वर्ष की अवस्था मे फरवरी १८६१ मे पं. गंगाधर जी का देहावसान हो गया। पिताजी के निधन के तीन माह बाद आगरा मे मोतीलाल जी का जन्म ६ मई १८६१ को हुआ। जैसे-जैसे बचपन बीता प्राथमिक कक्षाओं की पढ़ाई आगरा मे पूरी की। सन् १८७९ मे कानपुर से इन्ट्रेन्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की।

कानपुर मे आगे की पढ़ाई के लिए कोई कॉलेज न होने के कारण इलाहाबाद के सेंट्रल म्योर कालेज मे प्रवेश लिया। वहाँ के प्रिंसिपल मि. हेरिसन मोतीलाल नेहरू की छात्र प्रतिभा से अत्यन्त प्रभावित थे। तत्पश्चात उनका ध्यान वकालत की ओर गया। पं. मोतीलाल नेहरू नें १८८३ में कानपुर में वकालत शुरू की और तीन वर्ष बाद ही इलाहाबाद चले गए जहाँ आपके बड़े भाई नन्दलाल नेहरू पहले से ही प्रयाग हाईकोट में वकालत कर रहे थे। उन्हीं के साथ पं. मोतीलाल नेहरू ने हाईकोर्ट मे वकालत शुरू की। थोडे ही दिनों बाद हाईकोर्ट के अच्छे वकीलों में आपकी गणना होने लगी। स्वरूप रानी से आपका विवाह हुआ और प्रयाग में ही १४ नवंबर १८८९ को जवाहरलाल नेहरू का जन्म हुआ। अब पं. मोतीलाल नेहरू ने सन् १९०० मे इलाहाबाद मे ही मकान खरीद लिया और इस मकान को सुविधाजनक बनाया। जो आनन्द भवन के नाम से जाना जाता है। यही आनन्द-भवन आगे चलकर देश की स्वाधीनता संग्राम संचालन का केंद्र बना।

इस देश की आजादी की बात हो या इस देश मे विश्वास की गंगा बहाने की बात हो, हर दृष्टि मे इसके लिए नेहरू-गाँधी परिवार का स्मरण अवश्य करना होगा। इसी परिप्रेक्ष्य मे जब आजादी के दीवाने इस देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त कराने की लड़ाई छेड़े हुए थे तब एकल व्यक्ति प्रदर्शन ने हमारे समझ एक नाम आता है पं. मोतीलाल नेहरू का। इस परिवार की पीढ़ियां दर पीढ़ियां आज तक देश मे अपने नाम का परचम फहरा रही है। इसी नेहरू परिवार ने देश को तीन-तीन कर्मठ और लोकप्रिय प्रधानमंत्री दिए। पं. मोतीलाल नेहरू के पिता दिल्ली मे पुलिस अधिकारी थे और भारत के प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन १८५७ में वे दिल्ली छोड़कर आगरा आ बसे थे। अभी पं. मोतीलाल नेहरू के पिता जी पं. गंगाधर और माता जियोरानी आगरा आकर भली प्रकार जम भी नही पाई थी कि ३४ वर्ष की अवस्था मे फरवरी १८६१ में पं. गंगाधर जी का देहावसान हो गया। पिताजी के निधन के तीन माह बाद आगरा मे मोतीलाल जी का जन्म ६ मई १८६१ को हुआ। जैसे-जैसे बचपन बीता प्राथमिक कक्षाओं की पढ़ाई आगरा मे पूरी की। सन् १८७९ में कानपुर से इन्ट्रेन्स की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की। कानपुर मे आगे की पढ़ाई के लिए कोई कालेज न होने के कारण इलाहाबाद के सेंट्रल म्योर कालेज मे प्रवेश लिया। वहाँ के प्रिंसिपल मि. हेरिसन मोतीलाल नेहरू की छात्र प्रतिभा से अत्यन्त प्रभावित थे। तत्पश्चात उनका ध्यान वकालत की ओर गया। पं. मोतीलाल नेहरू ने १८८३ में कानपुर मे वकालत शुरू की और तीन वर्ष बाद ही इलाहाबाद चले गए जहाँ आपके बड़े भाई नन्दलाल नेहरू पहले से ही प्रयाग हाईकोर्ट में वकालत कर रहे थे।

अपने बेटे और देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के माध्यम से महात्मा गांधी के संपर्क में आने के बाद पंडित मोतीलाल नेहरू ने देश की आजादी की खातिर न सिर्फ ऐशो आराम की जिंदगी ठुकरा दी, बल्कि देश के लिए अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दिग्गज नेताओं में से एक मोतीलाल नेहरू कश्मीरी पंडित थे और पश्चिमी रहन-सहन, वेशभूषा के कायल थे। वह १९०९ में ग्रेट ब्रिटेन के प्रिव्ही काउंसिल में भाग लेने की अनुमति मिलने के बाद अपने कानूनी कैरियर के शिखर पर पहुंचे। वकालत के दौरान मोतीलाल नेहरू हजारों रुपये की फीस लेते थे। उनके मुवक्किलों में अधिकतर बड़े जमींदार और स्थानीय रजवाड़ों के वारिस होते थे। हालांकि वह गरीबों की मदद करने में भी पीछे नहीं रहते थे। दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के रीडर डॉ. महेश रंगराजन के अनुसार मोतीलाल नेहरू अपने बेटे जवाहर लाल नेहरू के माध्यम से महात्मा गांधी के संपर्क में आए। उनके प्रभाव में आकर वह पूरी तरह भारतीय शैली में ढल गए। अमृतसर में १९९९ के जलियांवाला बाग गोलीकांड के बाद उन्होंने महात्मा गांधी के आहवान पर वकालत छोड़ दी। उनकी बेटी विजयलक्ष्मी पंडित ने अपनी आत्मकथा द स्कोप आफ हैप्पीनेस में लिखा है कि उस दौर में उनके पिता आनंद भवन में भव्य पार्टियां दिया करते थे, जिनमें देश के नामी गिरामी लोग और अंग्रेज अधिकारी शामिल हुआ करते थे। लेकिन बाद में महात्मा गांधी से मिलने के बाद उनके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन आया और उनका बिछौना तक जमीन पर लगने लगा। वह १९१९ और १९२० में दो बार कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। उन्हें असहयोग आंदोलन के दौरान गिरफ्तार कर लिया गया। वह प्रारंभ में गांधी के काफी करीब थे, लेकिन जब १९२२ में चौराचौरी कांड के चलते महात्मा गांधी ने अपना आंदोलन वापस लिया, तो मोतीलाल नेहरू ने उनकी खुलकर आलोचना की। उन्होंने देखबंधु चितरंजन दास के साथ १९२३ में स्वराज पार्टी का गठन किया। इस पार्टी के जरिये वह सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली पहुंचे और बाद में विपक्ष के नेता बने। रंगराजन के अनुसार महात्मा गांधी से भले ही मोतीलाल नेहरू के वैचारिक मतभेद

हो गए थे, लेकिन दोनों के बीच व्यक्तिगत कटुना नहीं थी। विपक्ष के नेता के रूप में उन्होंने अपने कानूनी ज्ञान से वित्त विधेयक और कई अन्य कानूनों की खामियों को उजागर किया। सन् १९२६ में उनकी भारत को पूर्ण डोमेनियन का दर्जा दिए जो की मांग को खारिज कर दिये जाने के बाद उन्होंने और उनके साथियों ने एसेम्बली छोड़ दी और कांग्रेस में लौट आए। उनके कानूनी ज्ञान के कारण ही साइमन कमीशन के विरोध में सर्वदलीय सम्मेलन ने १९२७ में मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक समिति बनायी, जिसे भारत का संविधान बनाने का जिम्मा सौंपा गया। इस समिति की रिपोर्ट को नेहरू रिपोर्ट के बारे में जाना जाता है। रंगराजन कहते हैं कि जहां मोतीलाल नेहरू उदारवादी थे वहीं उनके पुत्र जवाहर लाल नेहरू समाजवादी थे। सन् १९३१ में मोतीलाल नेहरू के गुजर जाने के बाद जवाहर लाल नेहरू गांधी जी को पितातुल्य मानने लगे।

छह मई १८६१ को दिल्ली में जन्मे मोतीलाल नेहरू की शुरूआती शिक्षा कानपुर और बाद में इलाहाबाद में हुई। उन्होंने कानपुर में वकालत शुरू की पर बाद में वह इलाहाबाद उच्च न्यायालय में प्रैक्टिस करने लगे। मोतीलाल नेहरू ने आजादी के आंदोलन में भारतीय लोगों का पक्ष सामने रखने के लिए स्वतंत्र अखबार भी निकाला। मोतीलाल नेहरू की बढ़ती उम्र और बिगड़ते स्वास्थ्य ने १९२९-३१ के बीच के ऐतिहासिक घटनाक्रमों से उन्हें दूर रखा जब कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता को अपना लक्ष्य घोषित किया और महात्मा गांधी ने नमक सत्याग्रह छेड़ा। वह छह फरवरी १९३१ को चल बसे।

६ मई, १८६१ में स्वतंत्रता सेनानी व वकील मोतीलाल नेहरू का जन्म आगरा (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। वे गांधीजी से प्रेरित होकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में आये और पश्चिमी रहन-सहन, वेशभूषा एवं वकालत भी छोड़ दी, वे दो बार कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये।

साइमन कमीशन के विरोध में सर्वदलीय सम्मेलन में भारत का संविधान बनाने के लिए गठित समिति के अध्यक्ष बनाये गये। उन्होंने देशबंधु चित्तरंजन दास के साथ स्वराज पार्टी का गठन किया और सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेंबली के लिए चुने गये। उन्होंने भारतीयों के पक्ष को समाने रखने के लिए इंडिपेंडेंट अखबार भी चलाया। ६ फरवरी १९३१ को उनका निधन हुआ था।

देश के नामी और दिग्गज बैरिस्टरों की जमात में शामिल रहे पंडित मोतीलाल नेहरू का नाम भारतीय इतिहास में एक ऐसे देशभक्त के रूप में दर्ज है जिसने आजादी की लड़ाई की खातिर तमाम शानो शौकत को ठुकरा दिया। आजादी की लड़ाई में वैचारिक स्तर पर बढ़ चढ़कर हिस्सा लेनेवाले मोतीलाल नेहरू एक ऐसे दिग्गज सेनानी थे जिन्होंने जंग ए आजादी के लिए अपनी जीवन शैली को ही बदल डाला था।

शुरुआती दौर में मोतीलाल नेहरू पूरी तरह अंग्रेज तबीयत के मनुष्य थे और उनके घर के लोगों की जीवनशैली पूरी तरह से अंग्रेजीयत के रंग में रंगी थी और बच्चों तक को हिंदी में बात करने की मनाही थी लेकिन एक पड़ाव ऐसा भी आया कि मोतीलाल नेहरू महात्मा गांधी से इस कदर प्रभावित हुए कि सारी अंग्रेजीयत को छोड़कर वह पूरी तरह न केवल भारतीयता के रंग में रंग गए बल्कि आजादी के सफर का वह एक अहम हिस्सा बन गए। जामिया मिलिया इस्लामिया में इतिहास के प्रोफेसर रिजवान ने भाषा से कहा कि आजादी की जंग के लिए मोतीलाल नेहरू ने अपनी जीवन शैली को ही बदल डाला था। वर्ष १९२८ में मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में नियुक्त कमेटी ने भारतीय संविधान के निर्माण कीरूपरेखा तैयार की और देश का राजनीतिक भविष्य उम्दा बनाने की प्रक्रिया शुरू की। मोतीलाल नेहरू की बेटी और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की बहन विजय लक्ष्मी पंडित ने अपनी आत्मकथा द स्कोप ऑफ हैप्पीनेस में लिखा है, पिता के चरित्र के कई पहलू थे। उन्हें पूजा पाठ में कोई रुचि नहीं थी लेकिन वह रत्नों में काफी दिलचस्पी

रखते थे। प्रो. रिजवान के अनुसार, दिग्गज अधिवक्ता मोतीलाल नेहरू ने १९२८ में नेहरू रिपोर्ट में संविधान निर्माण और देश की राजनीतिक भविष्य के बारे में कई अहम सुझाव दिए। उन्होंने हिंदू मुस्लिम सौहार्द की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया। मोतीलाल नेहरू अपने समय की भारतीय पीढ़ी के उन युवाओं में से थे जिन्होंने पश्चिमी जीवन शैली को अपनाया। लक्ष्मी ने लिखा है कि उनके पिता को घुड़सवारी, समय मिलने पर शिकार और युवा दिनों में टेनिस खेलना पसंद था। मोतीलाल की होम्योपैथी में गहरी रूचि थी और इलाहाबाद स्थित आनंद भवन में वह हर सुबह मरीजों का इलाज करते थे। मोतीलाल नेहरू का जन्म ६ मई, १८६१ को दिल्ली के कश्मीरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके जन्म से पहले ही उनके पिता पंडित गंगाधर का देहांत हो गया। उनकी माता का नाम जीवरानी था। बाद के वर्षों में वह अपने चाचा के साथ आगरा चले गए और वहां के मैर कालेज में स्नातक में नामांकन लिया लेकिन परीक्षा में शामिल नहीं हो सके। इसके बाद उन्होंने विधि की पढ़ाई की और विधि की परीक्षा में प्रथम स्थान हासिल कर वकालत शुरू कर दी। वकालत से उन्हें अच्छी आमदनी होती थी और वह इलाहाबाद मेंशान-शौकत भरा जीवन व्यतीत करते थे। वह अक्सर यूरोप की यात्रा पर जाया करते थे। प्रो. रिजवान ने बताया कि वर्ष १९१९ में अमृतसर के जालियांवाला बाग हत्याकांड ने उनके मन में ब्रिटिश सरकार सरकार के प्रति नफरत भर दी और उन्होंने आजादी की लड़ाई में उतनरने का फैसला किया। उन्होंने अपनी विलासिता त्याग दी और आम आदमी के साथ मिलकर अंग्रेजों से लोहा लेने लगे।

मृदुला साराभाई

गांधीवादियों के अनुसार, एक औद्योगिक घराने से ताल्लुक रखने के बावजूद मृदुला साराभाई ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए जो काम किया वह अविस्मरणीय है। विभाजन के बाद उनके द्वारा किये गये काम की कोई तुलना नहीं की जा सकती। गांधीवादी वर्षा दास ने मृदुला साराभाई को याद करते हुए कहा कि नोआखाली में हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए उन्होंने जो काम किया वह अविस्मरणीय है। विभाजन के बाद अपनी सुरक्षा की परवाह किए बिना उन्होंने लापता लड़कियों को शिविरों तक लाने का काम किया था। अंदर की इच्छा और आवाज के बिना यह करना संभव नहीं था। दास ने कहा कि लोगों को गांधी की आखिरी आदमी तक पहुंचने की बात प्रभावित करती थी, जबकि वर्तमान दौर में स्वार्थपरता सबसे बड़ी चीज हो गयी है। इस वक्त हर चीज पर बाजारवाद हावी होता जा रहा है। स्वदेशी और सादगी की बात से लोग कोसों दूर होते जा रहे हैं। छह मई १९११ में जन्मी मृदुला साराभाई गांधी के नमक सत्याग्रह के दौरान पढ़ाई छोड़कर आंदोलन में शामिल हो गयी थीं और २६ अक्टूबर १९७४ को उनका निधन हुआ था। गांधीवादी महंत तिवारी ने कहा कि गांधी ने अपने जीवन को सच का आइना बना दिया था और वह ऐसे चमकते हुए सूरज थे, जो अपने साथ ढेर सारे लोगों को लेकर चलने की क्षमता रखते थे। यह सबसे बड़ा कारण था जिसके कारण मृदुला साराभाई जैसे लोगों ने सारी सुख सुविधाओं को त्यागकर अपना पूरा जीवन गांधी को समर्पित्त कर दिया था। उन्होंने कहा कि समकालीन राजनीति में ऐसे लोगों का अभाव है जिनकी सोच और दिशानिर्देश लोगों को प्रभावित कर सके। एक अन्य गांधीवादी अशोक कुमार ने कहा कि मृदुला साराभाई जैसे लोग जब गांधी से जुड़े उस वक्त देश में राष्ट्रवाद की लहर थी और लोगों के अंदर सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ समाज को दिशा देने की भावना थी और उनके अंदर राष्ट्रनिर्माण का भाव था। उन्होंने बताया कि वर्तमान राजनीति में ऐसे लोगों का अभाव है जो गांधी की तरह मृदुला साराभाई जैसे उच्च वर्ग को अपनी तरफ आकर्षित कर सके। हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए मृदुला बहन का काम कभी नहीं भुलाया जा सकता है।

७ मई

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर

युगद्रष्टा थे महान कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर (जन्म- ७ मई)

गुरुदेव के नाम से विख्यात रवींद्रनाथ ठाकुर महान कवि, साहित्यकार, दार्शनिक और नोबल पुरस्कार से सम्मानित होनेवाले एकमात्र भारतीय साहित्यकार हैं। ठाकुर का ७ अगस्त, १९४१ को निधन हो गया था।

रवींद्रनाथ ठाकुर भारतीय सांस्कृतिक चेतना में नई जान फूंकनेवाले युगद्रष्टा कवि थे। साहित्य में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित होनेवाले वे एशिया के प्रथम व्यक्ति हैं। वे एकमात्र ऐसे कवि हैं जिनकी दो अलग-अलग रचनाएं दो देशों का राष्ट्रगान हैं। भारत का राष्ट्र गान जन गण मन और बांग्लादेश का राष्ट्रीय गान आमार सोनार बांग्ला गुरुदेव की ही रचनाएं हैं।

रवींद्रनाथ ठाकुर का जन्म देवेन्द्रनाथ टैगोर और शारदा देवी की संतान के रूप में ७ मई, १८६१ को कोलकाता के जोड़ासांको ठाकुरबाड़ी में हुआ। उनकी स्कूल की पढ़ाई सेंट जेवियर स्कूल में हुई। उन्होंने बैरिस्टर बनने की चाहत में १८७८ में इंग्लैंड के ब्रिजटाऊन में पब्लिक स्कूल में नाम दर्ज कराया। उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन किया, लेकिन १८८० में बिना डिग्री हासिल किए ही स्वदेश वापस आ गए। सन १८८३ में मृणालिनी देवी के साथ उनका विवाह हुआ।

बचपन से ही उनमें कविता, छंद और भाषा में अद्भुत प्रतिभा की झलक मिलने लगी थी। उन्होंने पहली कविता आठ साल की उम्र में लिखी थी और १८७७ में केवल सोलह साल की उम्र में उनकी लघुकथा प्रकाशित हुई थी।

ठाकुर के सृजन संसार में गीतांजलि, पूरबी प्रवाहिनी, शिशु भोलानाथ, महुआ, वनवाणी, परिशेष, पुनश्च, वीथिका शेषलेखा, चोखेरबाली, कणिका, नैवेद्य मायेर खेला और क्षणिका आदि शामिल हैं।

टैगोर को बचपन से ही प्रकृति का सान्निध्य बहुत भाता था। वह हमेशा सोचा करते थे कि प्रकृति के सानिध्य में ही विद्यार्थियों को अध्ययन करना चाहिए। इसी सोच को मूर्तरूप देने के लिए वह १९०१ में सियालदह छोड़कर आश्रम की स्थापना करने के लिए शांतिनिकेतन आ गए। प्रकृति के सान्निध्य में पेड़ों, बगीचों और एक पुस्तकालय के साथ टैगोर ने शांतिनिकेतन की स्थापना की।

टैगोर ने करीब २२३० गीतों की रचना की। रवींद्र संगीत बांग्ला संस्कृति का अभिन्न अंग है। टैगोर के संगीत को उनके साहित्य से अलग नहीं किया जा सकता। उनकी अधिकतर रचनाएं तो अब उनके गीतों में शामिल हो चुकी हैं। हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की ठुमरी शैली से प्रभावित ये गीत मानवीय भावनाओं के अलग-अलग रंग प्रस्तुत करते हैं।

गुरुदेव ने जीवन के अंतिम दिनों में चित्र बनाना शुरू किया। इसमें युग का संशय, मोह, क्लांति और निराशा के स्वर प्रकट हुए हैं। ठाकुर और महात्मा गांधी के बीच राष्ट्रीयता और मानवता को लेकर हमेशा वैचारिक मतभेद रहा। जहां गांधी पहले पायदान पर राष्ट्रवाद को रखते थे, वहीं टैगोर मानवता को राष्ट्रवाद से अधिक महत्व देते थे। लेकिन दोनों एक दूसरे का बहुत अधिक सम्मान करते थे। ठाकुर ने गांधीजी को महात्मा का विशेषण दिया था। एक समय था जब शांतिनिकेतन आर्थिक कमी से जूझ रहा था और गुरुदेव देशभर में नाटकों का मंचन करके धन संग्रह कर रहे थे। उस वक्त

गांधीजी ने टैगोर को ६० हजार रूपये के अनुदान का चेक दिया था। उनकी काव्यरचना गीतांजलि के लिये उन्हें सन १९१३ में साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला।

भारत के सांस्कृतिक एवं पौराणिक इतिहास में मन की उदार शक्तियों को जागृत करने वाले जीवन के संघर्ष में पथ को आलोकित एवं हृदय को झंकृत करने वाले कथानकों की कमी नहीं है। मूलत: साहित्य और कला दोनों ही जीवन की चेतना और अनुभूति की अभिव्यक्ति है। इसमें सौंदर्यपूर्ण, निर्दोष, साधुमना एवं वीर चरित्र की प्रचुरता है। यह चरित्र युगों से कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में आज भी उपलब्ध है।

आदि मानव ने प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों और उसके भयावह रूपों को देखकर उनमें परित्राण पाने के लिए ऐसी अदृश्य शक्ति की कल्पना की जो उसकी रक्षा कर सके। मानव के सामाजिक जीवन के साथ-साथ उसकी मानसिक शक्तियों का भी विकास हुआ और उसमें बौद्धिक प्रतिभा भी जागृत हुई। मानव के चिन्तन का केंद्र अमूर्त भाव है और कला का आरंभ वहीं से होता है। चित्रों के रंगों का वही महत्व है जो शरीर में हृदय का है। रंग, अग्नि और जल की भांति एक अनिवार्य वस्तु है। इसका प्रभाव क्षणिक न होकर स्थायी होता है। मनुष्य स्वभाव से ही कलाकार है और किसी भी माध्यम से वह अपने भावों को व्यक्त करने का साधन ढूंढ लेता है, इसलिए यह कहना कठिन है कि कब और किस माध्म से कला का उदय हुआ।

कलाकार की तूलिका आदर्श और कल्पना से परिचित है और वह उसी को रूप देती है। उसकी मान्यता है कि सूक्ष्मतम वस्तुओं से महान कृतियों का सृजन होता है, जो सजीव दृश्य से कहीं अधिक शक्तिशाली होती है। उनमें जीवन की सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिलती है। कला के विकास में द्वंद्वात्मक प्रवृत्तियां भी प्रेरक होती हैं जिनमें से एक का लक्ष्य होता है सौंदर्य-दर्शन और दूरी का ज्ञानार्जन। इस दूसरी प्रवृत्ति ने भी अति यथार्थवाद को जन्म दिया और उसका लक्ष्य था मानव के अन्तर्मन की खोज।

कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने अमूर्त चित्रों में साहित्य एवं काव्य का सहारा लेकर अपनी भावनाओं को, रेखाओं द्वारा आकारों में परिणत किया और मानव संस्कृति को ऊंचा उठाने में ठीक उसी प्रकार अपना योगदान दिया जैसे रूस में जन्मे टालस्टाय ने अपनी आभा से संसार को चमत्कृत किया। कवि रवीन्द्र विलियम ब्लैक जैसे उन विरल साहित्यकारों में थे जिनके व्यक्तित्व और साहित्य में अद्‌भुत साम्य रहा है। रवीन्द्र नाथ के व्यक्तित्व को देखकर लगता है मानों काव्य की व्यापकता ही पूंजीभूत रूप में मूर्त हो गयी हो।

वे प्रख्यात लेखक, दार्शनिक, नाटककार, अभिनेता, संगीतज्ञ तथा कलाविद् थे। उनके काव्य में नाविक के तीर की सी मार्मिकता है जो सीधे हृदय में उतर जाती है। उन्होंने तूलिका द्वारा हृदय के उन भावों को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है, जिन्हें वे अपने काव्य साहित्य के माध्यम से व्यक्त नहीं कर पाए थे। वे शांत, सौम्य, सरल, निराभिमानी, विवेकशील और महान थे। कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर के जन्म के समय बंगाल में पुनर्जागरण का सूत्रपात हो चुका था। उस समय वहां तीन धाराएं प्रवाहित थीं। राजाराम मोहन राय की धार्मिक चिन्तनधारा में पुनर्जागरण का सूत्रपात, वन्देमातरम् के रचयिता बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय की साहित्यिक क्रांति एवं महर्षि विवेकानंद का उत्तिष्ठत् जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत का संदेश देशवासियों को सचेत कर रहा था और उन्हें उनके अस्तित्व का बोध करा रहा था।

महर्षि देवेन्द्रनाथ के छोटे पुत्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर को पांच वर्ष की आयु में उनका अक्षरारंभ हुआ और सात वर्ष आयु में नार्मल स्कूल में प्रवेश दिलाया गया, परन्तु इस विद्यालय में मन न लगने के कारण उनकी अधिकांश शिक्षा घर पर ही हुई। तत्पश्चात १८७९ से उन्होंने लंदन यूनिवर्सिटी कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। घर के सांस्कृतिक वातावरण के कारण काव्य, संगीत और चित्रकला की प्रेरणा उन्हें अपने कला-प्रिय परिवार से मिली। आरंभ से ही उनका सर्जनात्मक कार्यों एवं कविता लेखन के प्रति लगाव था। युग के महान संदेशवाहक के तीन विभिन्न परिवेश हैं और उनसे उत्पन्न अनुभूतियां सौम्य, प्रभात, प्रखर दोपहर और कोलाहल में शांति का संकेत देती हुई संख्या के समान है। कवि रवीन्द्र मानवीय महिमा के उद्घोषक और समर्थक थे, जिसे उन्होंने एई महामानवेर सागर तीरे में व्यक्त किया है। भारतीय संस्कृति के आदर्श का भाव उनके काव्य में ओत-प्रोत होने के कारण वे आज सार्वजनिक हो गए हैं। उन्होंने अपने विशिष्ट स्वर में जीवन की सर्वांगीण सार्थकता प्राप्त करने के आदर्श को बार-बार दुहराया है।

तीस वर्ष की आयु में बिखरी कला और उनका ध्यान आकृष्ट हुआ और कला-अभ्यास में रवीन्द्र घंटों व्यस्त रहने लगे। पुराने अभ्यास का सहारा लेकर रवीन्द्र ने रेखाओं तथा चित्रों में एक नवीन आभा प्रदान कर नई नई कला को सांकेतिक भावना प्रधान कृतियों का रूप दिया। उनके चित्रों में रंग-सामंजस्य भी अकारण उत्पन्न हुआ, जो उनके मानसिक प्रभाव का द्योतक है। रवीन्द्र नाथ के शब्दों में मनुष्य के चेहरे में केवल आकृति की ही सुन्दरता नहीं होती, उसमें चेतना की दीप्ति, बुद्धि की स्फूर्ति और हृदय का लावण्य भी होता है।

भारतीय कला-जगत में कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर को, कलाकार के रूप में परम्परागत शैलियों से भिन्न आधुनिक शैली का जन्मदाता होने का श्रेय प्राप्त है। उनके सामने देश-विदेश का इतना विस्तृत क्षितिज खुल गया था जहां अनुभव के रंगों में पुरानापन संभव नहीं था। यह भी सत्य है कि कवि युग के अनेक अभावों की अभिशप्त छाया से मुक्त रहे। अपने आकस्मिक चित्र-सृजन में उन्होंने निजी शैली का विकास किया, जिसमें काव्य उनका आधार और रेखाएं उनकी अभिव्यक्ति के रूप में मुखरित हुई। रवीन्द्र नाथ की कला केवल सामान्य अभिव्यक्ति ही नहीं अपितु उनकी उस भावनात्मक अनुभूतियों का आधार भी है। इनके मूल में तकनीकी शिक्षा प्राय: बिलकुल नहीं है। पृथ्वीश नियोगी ने रवीन्द्र शताब्दी ग्रंथ में प्रकाशित अपने लेख में कहा है कि १८९३ में जब रवीन्द्र नाथ ने अपने चित्रों की असफलता पर खेद व्यक्त किया था। रवीन्द्र का मत था कि यदि उन्होंने कला को विधि-विधान से सीखा होता तो वे अवश्य ही अधिक सफल चित्रकार होते। रवीन्द्र के चित्र स्वछन्दतावादी कला की कोटि में आते हैं। उन्होंने एक अभिनव चित्र-सज्जा और अनुपातहीन नव्य चित्राकृतियों से देश के कला-भंडार को समृद्ध किया जिससे नवीन कलाकारों के लिए संभावनाओं के नए द्वार खुल गए। उन्होंने आह्वान स्वरूप अपनी एक पुस्तक में कहा है कि मैं जोरदार शब्दों में कहता हूं कि यदि कोई हमारे कलाकारों से जबरदस्ती चित्र बनवाकर उन पर प्राचीन कलाकारों की निपुणता का ठप्पा लगाकर उन्हें प्रसिद्ध करना चाहे तो उसे निश्चित रूप से अस्वीकार कर देना चाहिए।

अप्रतिम कृतिकार रवीन्द्र नाथ ठाकुर सदा सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् के ही उपासक रहे। उनकी अनवरत चिन्तन साधना केवल उपनिषदों की विचारधारा से भी प्रभावित हुई थी। रवीन्द्र भारत के उन प्राचीन ऋषियों के समान थे जो प्रतिदिन प्रात:काल उस सूर्य की उपासना किया करते थे जो परमात्मा के अनन्त ज्ञान और उनकी जीवनदायिनी शक्ति का एक प्रज्ज्वलित प्रतीक है।

बंगाल के विद्वान देवेंद्रनाथ टैगोर और शारदा देवी के पुत्र रवींद्र (जन्म ७ मई १८८६) बचपन में चित्रकार बनना चाहते थे, उनकी यह इच्छा अंत तक बनी रही, लेकिन उन्होंने विश्व पटल पर साहित्य की अनोखी खोज से भारत का मस्तक उन्नत किया। साहित्य में उनके प्रयोग इतने रचनात्मक सिद्ध हुए कि लोगों के जीवन में नवचेतना का स्फुरण हुआ। उनकी शोधपरक शैली ने साहित्य सृजकों को नयी दिशा प्रदान कीं यद्यपि उनके व्यक्तित्व पर हजारों शोधकर्ताओं ने कार्य किया और आज भी करते आ रहे है, विदेशों में भी अनेक चिंतक व विचारक उनके कृतित्व पर प्रकाश डाल रहे हैं। लेकिन उनके देशप्रेम की व्याख्या जनमानस में स्वत: गूंज रही है। उनके संवेदनशील साहित्य प्रवास से आम आदमी अभिभूत हुआ। सामाजिक परिवेश के हृदय स्थल को स्पर्श करने में वे सबसे सफल आधुनिक रचनाकार माने गए। बंगला और अंग्रेजी साहित्य में उनका योगदान युगों तक भुलाया नही जा सकता।

उनकी विश्वभारती संस्था मे पथ भवन, शिक्षा भवन, विद्या भवन, हिन्दी भवन, कला भवन, संगीत भवन, रवींद्र भवन, दीनबंधु भवन, श्रीनिकेतन, शिल्प भवन, विनय भवन आदि विभिन्न क्षेत्रों की शिक्षा-दीक्षा के पृथक-पृथक संकाय बने थे। एक अमेरिकी जिज्ञासु ने वहाँ पहुँचकर गुरुदेव से पूछा, आपने भारत भवन नही बनाया। उन्होने तुरंत उत्तर दिया, मित्र, भारत भवन मेरे मन मंदिर मे बसा है- कही अन्यत्र इसे बनाने का प्रश्न ही नही। देशप्रेम की भावना से ओतप्रोत उनका हृदय काव्यमय था, साहित्य मे डूबा था। उनका कवित्व जितना शक्तिशाली है, उतनी ही कथा शिल्प भी। उपन्यास और नाटक में उन्होंने मौलिकता को सजीव करके प्रकृति व समाज के संबंध रेखांकित किए। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि उन्होंने निर्जीव प्रयोगवाद का आश्रय नहीं लिया। जीवन के प्रति उनका व्यावहारिक दृष्टिकोण जितना स्पष्ट है उतना ही वैचारिक धरातल पर आत्मोन्नति का शांत पथ भी है। साहित्य के लिए १९१९ के नोबल पुरस्कार विजेता, राष्ट्रगान के रचयिता कवींद्र रवींद्र का जीवन दर्शन मनीषियों को प्रभावित करता है। स्वयं महात्मा गांधी ने गुरुदेव को भारतीय स्वतंत्रता का संबल स्वीकार किया। उन्होंने भारत की स्वाधीनता के लिए काव्यमय प्रेरणा का अवगाहन किया। मानव स्वातंत्र्य की उनकी दार्शनिक अवधारणा उनकी रचनाओं में रचती बसती प्रतीत होती है। उनकी कृतियों में उनका हृदय स्पंदन लक्ष्य भेद की ओर बढ़ता है। साहित्य के माध्यम से समाज की संरचना का संकेत मिलता है। गुरुदेव का समग्र ज्ञान उनके साहित्य में समाया है, उससे भी बढ़कर उनका कार्य ही उनकी जीवन साधना का अंग है। उन्होंने मानव प्रेम, समृद्धि, देशभक्ति, शांति और आत्मिक विकास के गीत गाए जो सदियों तक लोगों की साधना का आधार बने रहेंगे।

नोबेल पुरस्कार प्राप्त कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने साहित्य, शिक्षा, संगीत, कला, रंगमंच और शिक्षा के क्षेत्र में अपनी अनूठी प्रतिभा का परिचय दिया तथा आलोचकों की दृष्टि में अपने मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण वह सही मायनों में विश्वकवि थे। टैगोर दुनिया के संभवत: एकमात्र ऐसे कवि हैं जिनकी रचनाओं को दो देशों ने अपना राष्ट्र गान बनाया। बचपन से कुशाग्र बुद्धि के रवींद्रनाथ ने देश और विदेशी साहित्य, दर्शन, संस्कृति आदि को अपने अंदर समाहित कर लिया था और वह मानवता को विशेष महत्व देते थे। इसकी झलक उनकी रचनाओं में भी स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होती है। साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने अपूर्व योगदान दिया और उनकी रचना गीतांजलि के लिए उन्हें साहित्य के नोबल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। साहित्य अकादमी के अध्यक्ष सुनील गंगोपाध्याय ने बताया कि गुरुदेव सही मायनों में विश्वकवि होने की पूरी योग्यता रखते हैं। उनके काव्य के मानवतावाद ने उन्हें दुनिया भर में पहचान दिलायी। दुनिया की

तमाम भाषाओं में आज भी टैगोर की रचनाओं को पसंद किया जाता है। गंगोपाध्याय ने कहा कि टैगोर की रचनाएं बांग्ला साहित्य में एक नयी बहार लेकर आयी। उन्होंने एक दर्जन से अधिक उपनयस लिखे। इन रचनाओं में चोखेर बाली, घरे बाहिरे, गोरा आदि शामिल हैं। उनके उपन्यासों में मध्यम वर्गीय समाज विशेष रूप से उभर कर सामने आया है। बांग्ला के वरिष्ठ लेखक गंगोपाध्याय के अनुसार टैगोर का कथा साहित्य एवं उपन्यास भले ही बंकिमचन्द्र और शरतचन्द्र की तरह लोकप्रिय नहीं हो लेकिन साहित्य के मापदंडों पर उनका कथा साहित्य बहुत उच्च स्थान रखता है। उन्होंने भारतीय साहित्य में नये मानक रचे। समीक्षकों के अनुसार उनकी कृति गोरा कई मायनों में अलग रचना है। इस उपन्यास में ब्रिटिश कालीन भारत का जिक्र है। राष्ट्रीयता और मानवता की चर्चा के साथ पारंपरिक हिन्दू समाज और ब्रह्म समाज पर बहस के साथ विभिन्न प्रचलित समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही उसमें स्वतंत्रता संग्राम का भी जिक्र आया है। इतना समय बीत जाने के बाद भी बहुत हद तक उसकी प्रासंगिकता कायम है। रवींद्रनाथ टैगोर की कविताओं में उनकी रचनात्मक प्रतिभा सबसे मुखर हुई है। उनकी कविताओं में नदी और बादल की अटखेलियों से लेकर अध्यात्मवाद तक के विभिन्न विषयों को बखूबी उकेरा गया है। इसके साथ ही उनकी कविताओं में उपनिषद जैसी भावनाएं महसूस होती हैं। साहित्य की शायद ही कोई शाखा हो जिनमें उनकी रचनाएं नहीं हो। उन्होंने कविता, गीत, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि सभी विधाओं में रचना की। उनकी कई कृतियों का अंग्रेजी में भी अनुवाद किया गया है। अंग्रेजी अनुवाद के बाद पूरा विश्व उनकी प्रतिभा से परिचित हुआ। सात मई १८६१ को जोडासांको में पैदा हुए रवींद्रनाथ के नाटक भी अनोखे हैं। वे नाटक सांकेतिक हैं। उनके नाटकों में डाकघर, राजा, विसर्जन आदि शामिल हैं। बचपन से ही रवींद्रनाथ की विलक्षण प्रतिभा का आभास लोगों को होने लगा था। उन्होंने पहली कविता सिर्फ आठ साल में लिखी और केवल १६ साल की उम्र में उनकी पहली लघुकथा प्रकाशित हुयी थी। रवींद्रनाथ की रचनाओं में मानव और ईश्वर के बीच का स्थायी संपर्क कई रूपों में उभरता है। इसके अलावा उन्हें बचपन से ही प्रकृति का साथ काफी पसंद था। रवींद्रनाथ चाहते थे कि विद्यार्थियों को प्रकृति के सानिध्य में अध्ययन करना चाहिए। उन्होंने इसी सोच को मूर्त रूप देने के लिए शांति निकेतन की स्थापना की। उन्होंने दो हजार से अधिक गीतों की भी रचना की। रवींद्र संगीत बांग्ला संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया है। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत से प्रभावित उनके गीत मानवीय भावनाओं के विभिन्न रंग पेश करते हैं। गुरूदेव बाद के दिनों में चित्र भी बनाने लगे थे। रवींद्रनाथ ने अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, चीन सहित दर्जनों देशों की यात्राएं की थी। सात अगस्त १९४१ को देश की इस महान विभूति का देहावसान हो गया।

इस तरह से इबादत-ए-खुदा करतर हूं मैं दुश्मन के वास्ते भी हुआ करता हूं।
हररोज मुझे पुराना करती है जिंदगी, हररोज मैं जिंदगी को नया करता हूं।

रवीन्द्रनाथ टैगोर आज भी अपनी सृजनशीलता और विलक्षणता के शिखर पर कायम हैं। उनकी साहित्य साधना का प्रभाव बांग्ला भाषा तक ही सीमित नहं रहा, बल्कि हिन्दी के संगीतकारों और साहित्यकारों की रचनाओं में साफ तौर नजर आता है। साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित से सम्मानित रवीन्द्रनाथ ठाकूर का जीवन ८० साल का रहा, जिसमें उन्होंने करीब ६००० कविताएं लिखीं। उनकी रचनाओं में अद्भुत बात है कि उनकी सारी की सारी कविताएं संगीतबद्ध हो सकती थीं। दुनिया के किसी भी देश में कोई भी कवि ऐसा नहीं हुआ, जिसकी सारी रचनाएं संगीतबद्ध हो सकें।

रवीन्द्रनाथ टैगोर, भारत के पहले नोबेल पुरस्कार विजेता थे। उनकी कहानियों पर हिन्दी में बेशक कम ही फिल्में बनीं, लेकिन उनके द्वारा सृजित गानों की धुनों का हिन्दी फिल्मों में भरपूर उपयोग हुआ है। यह सारे गाने उस जमाने में बेहद लोकप्रिय भी हुए। इसमें सबसे आश्चर्य की बात ये है कि रवीन्द्र संगीत का उपयोग जितना बंगाल से आनेवाले संगीतकारों ने किया, उतना ही गैर बंगाली म्युजिक डायरेक्टरों ने भी किया है।

भारत के सांस्कृतिक एवं पौराणिक इतिहास में मन की उदार शक्तियों को जागृत करने वाले जीवन के संघर्ष में पथ को आलोकित एवं हृदय को झंकृत करने वाले कथानकों की कमी नहीं है। मूलत: साहित्य और कला दोनों ही जीवन की चेतना और अनुभूति की अभिव्यक्ति है। इसमें सौंदर्यपूर्ण, निर्दोष, साधुमना एवं वीर चरित्र की प्रचुरता है। यह चरित्र युगों से कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में आज भी उपलब्ध है।

आदि मानव ने प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों और उसके भयावह रूपों को देखकर उनमें परित्राण पाने के लिए ऐसी अदृश्य शक्ति की कल्पना की जो उसकी रक्षा कर सके। मानव के सामाजिक जीवन के साथ-साथ उसकी मानसिक शक्तियों का भी विकास हुआ और उसमें बौद्धिक प्रतिभा भी जागृत हुई। मानव के चिन्तन का केंद्र अमूर्त भाव है और कला का आरंभ वहीं से होता है। चित्रों के रंगों का वही महत्व है जो शरीर में हृदय का है। रंग, अग्नि और जल की भांति एक अनिवार्य वस्तु है। इसका प्रभाव क्षणिक न होकर स्थायी होता है। मनुष्य स्वभाव से ही कलाकार है और किसी भी माध्यम से वह अपने भावों को व्यक्त करने का साधन ढूंढ लेता है, इसलिए यह कहना कठिन है कि कब और किस माध्म से कला का उदय हुआ।

कलाकार की तूलिका आदर्श और कल्पना से परिचित है और वह उसी को रूप देती है। उसकी मान्यता है कि सूक्ष्मतम वस्तुओं से महान कृतियों का सृजन होता है, जो सजीव दृश्य से कहीं अधिक शक्तिशाली होती है। उनमें जीवन की सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिलती है। कला के विकास में द्वंद्वात्मक प्रवृत्तियां भी प्रेरक होती हैं जिनमें से एक का लक्ष्य होता है सौंदर्य-दर्शन और दूरी का ज्ञानार्जन। इस दूसरी प्रवृत्ति ने भी अति यथार्थवाद को जन्म दिया और उसका लक्ष्य था मानव के अन्तर्मन की खोज।

कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने अमूर्त चित्रों में साहित्य एवं काव्य का सहारा लेकर अपनी भावनाओं को, रेखाओं द्वारा आकारों में परिणत किया और मानव संस्कृति को ऊंचा उठाने में ठीक उसी प्रकार अपना योगदान दिया जैसे रूस में जन्मे टालस्टाय ने अपनी आभा से संसार को चमत्कृत किया। कवि रवीन्द्र विलियम ब्लैक जैसे उन विरल साहित्यकारों में थे जिनके व्यक्तित्व और साहित्य में अद्‌भुत साम्य रहा है। रवीन्द्र नाथ के व्यक्तित्व को देखकर लगता है मानों काव्य की व्यापकता ही पूंजीभूत रूप में मूर्त हो गयी हो।

वे प्रख्यात लेखक, दार्शनिक, नाटककार, अभिनेता, संगीतज्ञ तथा कलाविद् थे। उनके काव्य में नाविक के तीर की सी मार्मिकता है जो सीधे हृदय में उतर जाती है। उन्होंने तूलिका द्वारा हृदय के उन भावों को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है, जिन्हें वे अपने काव्य साहित्य के माध्यम से व्यक्त नहीं कर पाए थे। वे शांत, सौम्य, सरल, निराभिमानी, विवेकशील और महान थे। कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर के जन्म के समय बंगाल में पुनर्जागरण का सूत्रपात हो चुका था। उस समय वहां तीन धाराएं प्रवाहित थीं। राजाराम मोहन राय की धार्मिक चिन्तनधारा में पुनर्जागरण का सूत्रपात, वन्देमातरम् के रचयिता बंकिमचन्द्र

चट्टोपाध्याय की साहित्यिक क्रांति एवं महर्षि विवेकानंद का उत्तिष्ठत् जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत का संदेश देशवासियों को सचेत कर रहा था और उन्हें उनके अस्तित्व का बोध करा रहा था।

महर्षि देवेन्द्रनाथ के छोटे पुत्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर को पांच वर्ष की आयु में उनका अक्षरारंभ हुआ और सात वर्ष आयु में नार्मल स्कूल में प्रवेश दिलाया गया, परन्तु इस विद्यालय में मन न लगने के कारण उनकी अधिकांश शिक्षा घर पर ही हुई। तत्पश्चात १८७९ से उन्होंने लंदन यूनिवर्सिटी कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। घर के सांस्कृतिक वातावरण के कारण काव्य, संगीत और चित्रकला की प्रेरणा उन्हें अपने कला-प्रिय परिवार से मिली। आरंभ से ही उनका सर्जनात्मक कार्यों एवं कविता लेखन के प्रति लगाव था। युग के महान संदेशवाहक के तीन विभिन्न परिवेश हैं और उनसे उत्पन्न अनुभूतियां सौम्य, प्रभात, प्रखर दोपहर और कोलाहल में शांति का संकेत देती हुई संख्या के समान है। कवि रवीन्द्र मानवीय महिमा के उद्घोषक और समर्थक थे, जिसे उन्होंने एई महामानवेर सागर तीरे में व्यक्त किया है। भारतीय संस्कृति के आदर्श का भाव उनके काव्य में ओत-प्रोत होने के कारण वे आज सार्वजनिक हो गए हैं। उन्होंने अपने विशिष्ट स्वर में जीवन की सर्वांगीण सार्थकता प्राप्त करने के आदर्श को बार-बार दुहराया है।

तीस वर्ष की आयु में बिखरी कला और उनका ध्यान आकृष्ट हुआ और कला-अभ्यास में रवीन्द्र घंटों व्यस्त रहने लगे। पुराने अभ्यास का सहारा लेकर रवीन्द्र ने रेखाओं तथा चित्रों में एक नवीन आभा प्रदान कर नई नई कला को सांकेतिक भावना प्रधान कृतियों का रूप दिया। उनके चित्रों में रंग-सामंजस्य भी अकारण उत्पन्न हुआ, जो उनके मानसिक प्रभाव का द्योतक है। रवीन्द्र नाथ के शब्दों में मनुष्य के चेहरे में केवल आकृति की ही सुन्दरता नहीं होती, उसमें चेतना की दीप्ति, बुद्धि की स्फूर्ति और हृदय का लावण्य भी होता है।

भारतीय कला-जगत में कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर को, कलाकार के रूप में परम्परागत शैलियों से भिन्न आधुनिक शैली का जन्मदाता होने का श्रेय प्राप्त है। उनके सामने देश-विदेश का इतना विस्तृत क्षितिज खुल गया था जहां अनुभव के रंगों में पुरानापन संभव नहीं था। यह भी सत्य है कि कवि युग के अनेक अभावों की अभिशप्त छाया से मुक्त रहे। अपने आकस्मिक चित्र-सृजन में उन्होंने निजी शैली का विकास किया, जिसमें काव्य उनका आधार और रेखाएं उनकी अभिव्यक्ति के रूप में मुखरित हुई। रवीन्द्र नाथ की कला केवल सामान्य अभिव्यक्ति ही नहीं अपितु उनकी उस भावनात्मक अनुभूतियों का आधार भी है। इनके मूल में तकनीकी शिक्षा प्राय: बिलकुल नहीं है। पृथ्वीश नियोगी ने रवीन्द्र शताब्दी ग्रंथ में प्रकाशित अपने लेख में कहा है कि १८९३ में जब रवीन्द्र नाथ ने अपने चित्रों की असफलता पर खेद व्यक्त किया था। रवीन्द्र का मत था कि यदि उन्होंने कला को विधि-विधान से सीखा होता तो वे अवश्य ही अधिक सफल चित्रकार होते। रवीन्द्र के चित्र स्वछन्दतावादी कला की कोटि में आते हैं। उन्होंने एक अभिनव चित्र-सज्जा और अनुपातहीन नव्य चित्राकृतियों से देश के कला-भंडार को समृद्ध किया जिससे नवीन कलाकारों के लिए संभावनाओं के नए द्वार खुल गए। उन्होंने आह्वान स्वरूप अपनी एक पुस्तक में कहा है कि मैं जोरदार शब्दों में कहता हूं कि यदि कोई हमारे कलाकारों से जबरदस्ती चित्र बनवाकर उन पर प्राचीन कलाकारों की निपुणता का ठप्पा लगाकर उन्हें प्रसिद्ध करना चाहे तो उसे निश्चित रूप से अस्वीकार कर देना चाहिए।

अप्रतिम कृतिकार रवीन्द्र नाथ ठाकुर सदा सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् के ही उपासक रहे। उनकी अनवरत चिन्तन साधना केवल उपनिषदों की विचारधारा से भी प्रभावित हुई थी। रवीन्द्र भारत के उन प्राचीन ऋषियों के समान थे जो प्रतिदिन

प्रात:काल उस सूर्य की उपासना किया करते थे जो परमात्मा के अनन्त ज्ञान और उनकी जीवनदायिनी शक्ति का एक प्रज्ज्वलित प्रतीक है।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का वैज्ञानिकों और विज्ञान से बहुत लगाव था। उन्होंने आम लोगों को सरल-सरस भाषा में विज्ञान की जानकारी देने के लिए स्वयं विश्व परिचय नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने इसे अल्मोड़ा के शांत वातावरण में पूरा किया। उनके प्रिय मित्र बोशी सेन उनके साथ थे। श्रीयुक्त सत्येंद्र नाथ बसु प्रीतिभाजनेषू संबोधन के साथ यह पुस्तक उन्होंने प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी प्रोफेसर सत्येन्द्र नाथ बसु को समर्पित की। अपनी इस पुस्तक में उन्होंने परमाणु लोक, नक्षत्र लोक, सौर जगत, ग्रह लोक और डलहौजी पहाड़ दिनभर घूमने के बाद सांध्यबेला में डाक बंगले में पहुंचते।

वहां आंगन में कुर्सी लगाकर बैठते। देखते ही देखते गिरि श्रंगों के घेरे के ऊपर निविड नील आकाश के स्वच्छ अंधकार में तारावलि निकट उतर आती। वे मुझे नक्षत्र दिखाते, ग्रह दिखाते, इतना ही नहीं वे मुझे सूर्य से उनकी प्रदक्षिणा की दूरी, उनके घूमने का समय और अन्य विवरण विस्तार से बताते। उनके भीतर बचपन से ही जड़ और चेतन जगत के प्रति अत्यधिक जिज्ञासा थी। वे प्रकृति के रहस्यों को विज्ञान और कविता दोनों ही के माध्यम से समझना चाहते थे। वे प्रकृति के इन रहस्यों पर अपने समकालीन वैज्ञानिकों से विमर्श किया करते थे। यह जानकर खुशी भी होती है और आश्चर्य भी कि कालजयी कविताओं के महान रचनाकार रवींद्रनाथ टैगोर की विज्ञान में गहरी रुचि थी और अपने समय के अनेक नामी वैज्ञानिकों से भी उनकी घनिष्ठता थी। यह विज्ञान के प्रति उनका प्रेम ही था कि वे आचार्य जगदीश चन्द्र बसु, सत्येंद्र नाथ बोस, मेघनाद साहा, प्रफुल्ल चंद्र रॉय, चंद्रशेखर वेंकटरामन, प्रशांत चंद्र महालनोबिस जैसे भारतीय और अल्बर्ट आइंस्टाइन, वेर्नर कार्ल हीजनबर्ग जैसे प्रसिद्ध विदेशी वैज्ञानिकों के संपर्क में रहे।

साहित्य, संगीत, कला और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में अपनी अनूठी प्रतिभा का परिचय देनेवाले नोबेल पुरस्कार से सम्मानित कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ऐसे मानवतावादी विचारक थे जिन्हें प्रकृति का सानिध्य काफी पसंद था। उनका मानना था कि छात्रों को प्रकृति के सानिध्य में शिक्षा हासिल करनी चाहिए। अपनी इसी सोच को ध्यान में रखकर उन्होंने शांतिनिकेतन की स्थापना की थी।

टैगोर दुनिया के संभवत: एकमात्र ऐसे कवि हैं जिनकी रचनाओं को दो देशों ने अपना राष्ट्रगान बनाया। बचपन से कुशाग्र बुद्धि के रवींद्रनाथ ने देश और विदेशी साहित्य, दर्शन, संस्कृति आदि को अपने अंदर समाहित कर लिया था और वह मानवता को विशेष महत्व देते थे। इसकी झलक उनकी रचनाओं में भी स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होती है। साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने अपूर्व योगदान दिया और उनकी रचनाओं में भी स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होती है और उनकी रचना गीतांजलि के लिए उन्हें साहित्य के नोबल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। समीक्षकों के अनुसार उनकी कृति गोरा कई मायनों में अद्‌भुत रचना है। इस उपन्यास में ब्रिटिश कालीन भारत का जिक्र है। राष्ट्रीयता और मानवता की चर्चा के साथ पारंपरिक हिन्दू समाज और ब्रह्म समाज पर बहस के साथ विभिन्न प्रचलित समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। चर्चित रचनाकार महीप सिंह के अनुसार गोरा बेहतरीन कृति है जिसमें अंग्रेज दंपत्ति की संतान हिन्दू परिवार में पलती है। उसके माता-पिता नहीं हैं और उसे नहीं मालूम है कि वह ईसाई है। वास्तविकता की जानकारी मिलने पर वह परेशान हो जाता है और इसके साथ ही उसके विचार में व्यापक बदलाव आ जाता है। भारत-पाकिस्तान विभाजन पर केंद्रित पानी और

पुल जैसी चर्चित कहानी लिखनेवाले महीप सिंह के अनुसार यह अपने समय को दर्शानेवाली बेहतरीन कृति है जिसमें धर्म, समाज जैसे मुद्दों से ज्यादा मानवीय संबंधों पर जोर दिया गया है। गोरा हिंदू, ईसाई आदि बातों को व्यर्थ मानते हुए मानवीय संबंधों को महत्वपूर्ण मानने लगता है। गुरुदेव सही मायनों में विश्वकवि होने की योग्यता रखते हैं। उनके काव्य के मानवतावाद ने उन्हें दुनिया भर में पहचान दिलाई। टैगोर की रचनाएं बांग्ला साहित्य में नई बहार लेकर आई। उन्होंने एक दर्जन से अधिक उपन्यास लिखे। इन रचनाओं में चोखेर बाली, घरे बाहिरे, गोरा आदि शामिल हैं। उनके उपन्यासों में मध्यम वर्गीय समाज विशेष रूप से उभर कर सामने आया है। रवींद्रनाथ टैगोर की कविताओं में उनकी रचनात्मक प्रतिभा मुखर हुई है। उनकी कविताओं में प्रकृति से अध्यात्मवाद तक के विभिन्न विषयों को बखूबी उकेरा गया है। साहित्य की शायद ही कोई विधा हो जिनमें उनकी रचना नहीं हो। उन्होंने कविता, गीत, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि सभी में अपने सशक्त लेखन का परिचय दिया। उनकी कई कृतियों का अंग्रेजी में भी अनुवाद किया गया। अंग्रेजी अनुवाद के बाद पूरा विश्व उनकी प्रतिभा से परिचित हुआ। ७ मई १८६१ को जोड़ासांको में पैदा हुए रवींद्रनाथ के नाटक भी अनोखे हैं। वे नाटक सांकेतिक हैं। बचपन से ही रवींद्रनाथ की विलक्षण प्रतिभा का आभास लोगों को होने लगा था। उन्होंने पहली कविता सिर्फ ८ साल की उम्र में लिखी और केवल १६ साल की उम्र में उनकी पहली लघुकथा प्रकाशित हुई थी। उन्होंने दो हजार से अधिक गीतों की रचना की। रवींद्र संगीत बांग्ला संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया है। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत से प्रभावित उनके गीत मानवीय भावनाओं के विभिन्न रंग पेश करते हैं। गुरुदेव बाद के दिनों में चित्र भी बनाने लगे थे। रवींद्रनाथ ने अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, चीन सहित दर्जनों देशों की यात्राएं की थी। सात अगस्त १९४१ को उनका देहावसान हो गया।

हमारे राष्ट्रगीत जन-गण-मन के रचनाकार रवीन्द्रनाथ टैगोर, मानवीय मूल्यों की गरिमा के गायक और सार्वभौम सामंजस्य के संदेशवाहक थे। उनकी लेखनी में लोकमंगल, वाणी में विश्वबंधुत्व, विचारों में वसुधैव कुटुंबकम, सांसों में साहचर्य, दिल में देशभक्ति और आत्मा में अन्तर्राष्ट्रवाद समाया हुआ था। वे कवि के रूप में ईश्वरीय प्रेम के प्रवक्ता, कथाकार के रूप में कुरीतियों के भंजक, उपन्यासकार के रूप में समाज-सुधार के समर्थक, चित्रकार के रूप में सृजनशीलता के पोषक, शिक्षा शास्त्री के रूप में सर्वजन संस्काराय के संवाहक, नाटककार के रूप में प्रकृति के प्रभाव तथा प्रतिक्रिया के विश्लेषक, निबंधकार के रूप में नैतिकता के उद्घोषक और दार्शनिक के रूप में सत्यम् शिवम् अद्वैतम् के आराधक थे। रवीनंद्रनाथ सर्वजन सुखाय के साधक के रूप में मानवतावाद की मुंडेर पर सामंजस्य का दीप जलाते हैं। सामंजस्य के दीप में द्वेष की नहीं, बंधुत्व की बाती होती है। वैमनस्य का विष नहीं, समन्वय का स्नेह होता है। सामंजस्य का दीप दुर्भावना की दियासलाई से नहीं जलाया जाता अपितु सद्भावना के सुप्रभाव से स्वत: प्रकाशित हो जाता है। बंधुत्व की बाती से लोक कल्याण की लौ उभरती है। लोक कल्याण की लौ उभरने से अलगाव का अंधकार हटने से अपनत्व और प्रेम का प्रकाश फैलता है। प्रेम का प्रकाश फैलने से घृणा का घेरा टूटता है। घृणा का घेरा टूटने से दंभ की दीवार गिरती हैं। दंभ की दीवारें गिरने से समत्व से साक्षात्कार होता है। समत्व से साक्षात्कार के फलस्वरूप साहचर्य की भावना का उदय होता है। साहचर्य की भावना के उदय से आत्मीयता की अनुभूति होती है। इसी कारण टैगोर ने लिखा है- आओ आर्य, अनार्य, हिंदू, मुसलमान सब आओ,

हे पादरियों, हे ईसाइयों आओ, सबके सब आओ।

आओ ब्राह्मणों सब मनुष्य की बांह पकड़कर, अपने हृदय को पवित्र कर लो।

तुम सब आओ जो वर्जन और पृथक करते थे, असम्मान सब धो डालो।

आओ, मां के अभिषेक में सम्मिलित हो जाओ, इसके पवित्र कमण्डल को भर दो।

इस जल से जो सबके स्पर्श से पवित्र हो चुका है, इस भारत भूमि में, विशाल मानवता के तट पर।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के मत में मानवीय मूल्यों की उपेक्षा करके भौतिकता का आदर करना अनुचित तो है ही अनैतिक भी है। भौतिकता की भट्टी में सुलगने वाली आपाधापी की आग में संवेदनशीलता के स्वाहा होने का सदैव भय रहता है। भौतिकता वस्तुत: भ्रांति की भूलभुलैया है जो भटकाव लाती है। भटकाव से व्यक्ति का विवेक नष्ट और लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता है। जिसका लक्ष्य भ्रष्ट और विवेक नष्ट हो चुका हो, उस व्यक्ति से समाज के सृजन का पथ प्रशस्त नहीं हो सकता, ऐसा व्यक्ति समाज को गिरावट के गटर में धकेलने का कार्य आसानी से कर सकता है। सभ्यता के वृक्ष की जड़ों में मानव प्रेम का पानी चाहिए न कि भौतिक लालसा की छाछ। उसके अनुसार सभ्यता का सारा मानव-प्रेम है न कि भौतिक शक्तियों का संचय। अपने प्रारंभिक दिनों में भले ही टैगोर पश्चिम तथा ईसाइयत से प्रभावित हुए हों किन्तु आगे चलकर उनका दृढ़ विश्वास हो गया था कि पश्चिमी सभ्यता भौतिकवाद के झूले में झूलती सभ्यता है जबकि भारतीय संस्कृति नैतिकता के नीर की निर्मल नदी है। भौतिकता की उपलब्धि आरंभ में सुखद किन्तु अन्त में दु:खद होती है जबकि नैतिकता के नीर से सिंचित उपलब्धि सदैव उपलब्धि सदैव सुखद और स्थायी होती है। रविन्द्रनाथ की काव्यात्मक संवेदनशीलता तथा मानवतावादी भावना को पश्चिमी सभ्यता की असीम साम्राज्यवादी उग्रता और हिंसात्मक क्रूरता ने मर्मान्तक पीड़ा पहुंचाई थी। यही कारण है कि अपनी अस्सीवीं वर्षगांठ के अवसर पर (सात मई उन्नीस सौ इकतालीस) उन्होंने कहा था एक दिन मैंने अंग्रेजों को यौवन की शक्ति से पूर्ण, जरूरतमंदों की सहायता के लिए सदैव उद्यत एक स्वस्थ राष्ट्र के रूप में देखा था किन्तु आज देख रहा हूं कि वे समय से पहले ही वृद्ध हो चुके हैं और उस महामारी के दुष्प्रभाव से जर्जरित हैं, जिसने प्रच्छन्न रूप से उनके राष्ट्र की समृद्धि और कल्याण केा लूट लिया है। अब हमारे मन में सभ्यता के उस मखौल के प्रति सम्मान बनाए रखना संभव नहीं है जो शक्ति के बल पर शासन करने में विश्वास करता है तथा जिसे स्वतंत्रता में तनिक भी आस्था नहीं है। अंग्रेजों ने हमें अपनी सभ्यता की सर्वोत्तम उपलब्धियों से वंचित रखकर और हमारे साथ मानवीय संबंध स्थापित न करके हमारी प्रगति के सब मार्गों को प्रभावपूर्वक बंद कर दिया है। टैगोर के मत में पश्चिम के साम्राज्यवादी परजीवी जन्तुओं की भांति एशिया तथा अफ्रीका की जातियों का रक्त चूस रहे थे और इससे विजयी राष्ट्रों का अध:पतन हो रहा था। उनके मत में इस विषम समस्या का आदर्श समाधान यह था कि परमार्थ और आध्यात्मिकता का संदेशवाहक भारत और भौतिकता की भावभूमि पर खड़ा पश्चिम, ये दोनों परस्पर मिलें और मैत्री के संबंध स्थापित कर आगे बढ़ें। अपनी पुस्तक दे रिलीजन ऑफ मैन के एक सौ चौंतीसवें पृष्ठ पर उन्होंने लिखा भी है। केवल इसी प्रकार अमर आत्मा की सब संतानें परस्पर आध्यात्मिकता के आलिंगन में आबद्ध हो सकती हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर चूंकि सामंजस्य के संदेशवाहक थे इसीलिए उन्होंने ऐसी हर रूढ़ि का विरोध किया जो सामाजिक सद्भाव को खोखला करती है तथा बैर और विग्रह के विषाणु पैदा करती है। यही कारण था कि उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त जाति-प्रथा के उन्मूलन का समर्थन

किया। उनकी मान्यता थी कि जातिवाद की ज्वाला में सामाजिक सौहार्द भस्म और राष्ट्रीय एकता आहत हो जाती है। उन्होंने अस्पृश्यता और बहिष्कार के उस निष्ठुर और निरर्थक नियम की निंदा की जो अनम्य और अप्रगतिशील समाज का लक्षण है। अस्पृश्यता की अमानवीय, अनैतिक और अप्राकृतिक प्रथा ने उनके कवि मन की संवेदनशीलता को झकझोर दिया। परिणामस्वरूप, पीड़ा और व्यथा के वैचारिक वन में वेदना को भोगते हुए उन्होंने अस्पृश्यता के विरोध में गीतांजलि में लिखा है हे मेरे अभागे देश। तूने जिनका अपमान किया था, उनके साथ तुझे भी अपमानित होना होगा। जिनके मानवीय अधिकारों कही अवज्ञा की थी, जिन्हें सामने खड़ा रखकर साथ बैठने का मान नहीं दिया था, तूने मनुष्य में स्थित देवता का अपमान किया है इसलिये तुझ पर विधाता का शाप पड़ा है और तुझे दुर्भिक्ष के द्वार पर विवश होकर हर किसी के साथ भोजन करना पड़ा है। अब भी यदि तू सबको नहीं पुकारेगा, दूर खड़ा रहेगा और अपनी रक्षा के लिये झूठे अभिमान की रेखा खींचेगा तो मृत्यु ही चिताभस्म में तुझे सबके बराबर बनाएगी। रवीन्द्रनाथ टैगोर, मनुष्य को सर्वशक्तिमान परमात्मा की सृजनात्मकता के ईजल में लगे कैनवास की सर्वोत्तम तस्वीर मानते थे। उनकी मान्यता थी कि ईश्वर मनुष्य के दीपकों को अपने तारों से अधिक प्यार करता है। वे प्रेम के प्रबल पक्षधर थे। उनकी मान्यता थी कि प्रेम की पेढ़ी पर बैठकर ही मानवतावाद का मंत्रोच्चार किया जा सकता है तथा अन्तर्राष्ट्रवाद की अलख जगाई जा सकती है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने गीतांजलि के द्वारा भारत को विश्व के साहित्यिक मानचित्र में प्रतिष्ठा और पहचान दिलाई। साहित्य का सर्वप्रथम नोबल-पुरस्कार प्राप्ति का गौरव गीतांजलि से ही हमारे देश की उल्लेखनीय उपलब्धियों के खाते में अंकित हो सका। सात की संख्या स्वनामधन्य विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के जन्म और मृत्यु के संयोग का ऐसा ही कथानक है। उनका जन्म सन् १८६१ की सात मई को हुआ और देहावसान सात अगस्त १९४१ को सामंजस्य के संदेशवाहक टैगोर साहचर्य के संविधान सृजेता थे, इसीलिए वे साहित्य की आसदी से नैतिकता के न्यायालय में विश्वास के वकील के रूप में प्यार की दलील देते हुए, मानवता की अपील करते रहे।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर एक बांग्ला कवि, कहानीकार, गीतकार, संगीतकार, नाटककार, निबंधकार और चित्रकार थे। भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ रूप से पश्चिमी देशों का परिचय और पश्चिमी देशों की संस्कृति से भारत का परिचय कराने में टैगोर की बड़ी भूमिका रही तथा आमतौर पर उन्हें आधुनिक भारत का असाधारण सृजनशील कलाकार माना जाता है। राष्ट्रगान जन गण मन के रचयिता टैगोर को बंगाल के ग्राम्यांचल से प्रेम था और इनमें भी पद्मा नदी उन्हें सबसे अधिक प्रिय थी। जिसकी छवि उनकी कविताओं में बार बार उभरती है। उन वर्षों में उनके कई कविता संग्रह और नाटक आए, जिनमें सोना तरी (१८९४, सुनहरी नाव) तथा चित्रांगदा (१८९२) उल्लेखनीय है।

भारत भूमि पर सदा विभूतियों ने जन्म लिया है। उनके कृतित्व ने राष्ट्र के सम्मान में वृद्धि की है। उनकी पावन भावना और साहित्य साधना की अनुकृतियों से भारत कृतकृत है। अपनी सत्यनिष्ठा एवं विद्वता से भारतीय संस्कृति को पुनर्जीवित किया है। युगपुरुष बनना एक चमत्कार होता है।

कालीदास प्राचीन भारत के कवि और रवीन्द्र टैगोर विश्व के महाकवि माने जाते हैं। उनकी कृतियां सरहदी अध्यात्म है। मानवता एवं विश्वबंधुत्व उनकी कविताओं एवं चित्रकला में अवतरित होता है। जन-गण-मन राष्ट्रीय गीत उनकी रचना है। वे अस्सी वर्ष राष्ट्र को गौरवान्वित करते रहे। शांतिनिकेतन उनकी अमर देन है। वे बच्चों के साथ खेलते और

प्राकृतिक वातावरण में वृक्षों के तले, खुले आकश में पढ़ाया करते। रहस्यवादी कविता संग्रह गीतांजलि १९१३ की कृति है। जिसके लिए उनको उनकी विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृति के लिए नोबल पुरस्कार मिला। वह धनराशि उन्होंने शांति निकेतन को समर्पित कर दी जो विश्व भारती बन गया। भारत उनको गुरुदेव कहता है। यह नाम उनको गांधी जी ने दिया। गांधी को वे महात्मा कहते। रवीन्द्र नाथ टैगोर के हाथों में चित्रकारी का विशेष जादू था जो उन्होंने बुढ़ापे में सीखी थी। उनका कथन है कि कोई भी कला किसी भी उम्र में सीखी जा सकती है। साहित्य के जिस क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी लेखनी एवं तूलिका उठाई, वही चमक उठा। आलोचना, कहानी, गीत, कविता, नाटक, बंगला और अंग्रेजी भाषा में लिखा जो कुछ भी उन्होंने लिखा, वह हर युग के लिए है। उन्होंने १७००० पृष्ठ लिखे जो अनेक पुस्तकों में संकलित हैं। उनकी सभी पुस्तकों का अनुवाद हिन्दी में हो चुका है। उनकी पुस्तकों का अनुवाद अन्य भाषाओं में उनके जीवनकाल में ही शुरू हो चुका था।

८ मई

ठुमरी साम्राज्ञी गिरिजा देवी (जन्म- ८ मई)

गिरिजा देवी भारत की प्रसिद्ध ठुमरी गायिका है। उन्हें ठुमरी की रानी कहा जाता है। वे बनारस घराने से सम्बधित हैं। गायकी के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें वर्ष १९७२ में पद्मश्री और वर्ष १९८९ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था। गिरिजा देवी संगीत नाटक अकादमी द्वारा भी सम्मानित की जा चुकी है। उनका जन्म बनारस के निकट एक गांव में जमीनदार परिवार में हुआ। बनारसी घराने की सशक्त आवाज और संगीत की जीवंत मिसाल मानी जानेवाली गिरजा देवी काशी को संगीत का मुख्य केंद्र बनाने की इच्छा रखती थी।

पद्मविभूषण से सम्मानित प्रख्यात शास्त्रिय गायिका गिरिजा देवी का निधन हृदय विफलता से ८८ वर्ष की आयु में २५ अक्तूबर २०१७ को हुआ। वो अपने पीछे एक पुत्री को छोड़ गयी। वे ठुमरी की मल्लिका जानी जाती थी और प्रेम से लोग उन्हें अप्पाजी बुलाते थे। भारतीय शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाने के उनके प्रयासों को हमेशा याद रखा जायेगा। उनकी अंतिम समय तक गाने की ख्वाहिश थी। सुरों के साथ रहनेवाली ठुमरी साम्राज्ञी गिरिजा देवी ने देश के हर शहर और दुनिया के तमाम देशों में कार्यक्रम प्रस्तुत किए। उनकी खनकती आवाज ने ठुमरी को गायिकी का एक खास विधा के तौर पर परिचित कराया। बचपन में इक्कड़-दुक्कड़ खेलने के दिनों में गायन के जुनून को पिता ने मान्यता दी। मां दादी के विरोध के बावजूद १९४९ में ऑल इंडिया रेडियो, इलाहाबाद से गायन की शुरुआत की, तो लगातार ६८ सालों तक उनकी आवाज का जादू चलता रहा। वे अपने निधन के कुछ दिन पूर्व भी पूना आना चाहती थी और अपनी फरफार्मेंस की तैयारी कर रही थी पर उनका यह सपना पूरा नहीं हो सका। अप्रैल में बनारस में हुए ४३ दिवसीय संगीत महाकुम्भ के शुभारंभ सत्र में उन्होंने मंच से गंगा की लहरों पर आशा भोसले के साथ युगल गायन की इच्छा भी व्यक्ति की। आशाजी ने भी उनके इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए कहा कि उनके साथ गाना यह उनका बड़ा सौभाग्य होगा और यह सपना भी साकार नहीं हो पाया। काशी में संगीत अकादमी स्थापित करने के लिए सरकार से जमीन मांग रही थी पर किसी ने भी इस ओर ध्यान नहीं दिया।

गिरिजा देवी की गायिकी में बुलंद टेर थी, वजनदार आवाज में गाई उनकी बोल-बनाव की ठुमरी, चैती, कजरी, टप्पा से रसिक मंत्रमुग्ध होते थे। राग-रागिनियां उनके सुरों का स्पर्श पाकर जीवंत हो उठती थीं। पद्म विभूषण, पद्म भूषण, पद्मश्री संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार एवं फैलोशिप, न जाने कितने सम्मान एवं पुरस्कार उन्हें पाकर धन्य-धन्य हुए। गायकी के साथ-साथ उनकी कलम भी धारदार थी, ये रचना अप्पा जी की कलम से निकली है- घिर आई कारी बदरिय/ाधे बिन लागे ना मोरा जिया। अमूमन राधा कृष्ण के बिना बेकरार होती हैं लेकिन इस बंदिश में कृष्ण का विकल मन राधा के लिए तड़प रहा है। ठुमरी की साम्राज्ञी गिरिजा देवी का दिव्य स्वर हमें आलोकित और आह्लादित करता रहा है। उनके पिताजी को गाने बजाने का बड़ा शौक था। उनका गायन सुन-सुनकर ही उन्हें उसमें रुचि उत्पन्न हुई। १८ वर्ष की उम्र से २५ वर्ष की उम्र तक स्व. पंडित श्रीचंद प्रसाद की देखरेख में ठुमरी की तालिम ली। ९ साल की उम्र में उन्होंने पहला राग भैरव और यमन सीखा। वे हार्मोनियम, तबला बजाना सीखी। इन्होंने अपने पहले गुरु से ध्रुपद राग में आलाप सीखा। बचपन में वे ऐतिहासिक कहानियां बहोत सुनती और पढ़ती थी जिससे उनके मन को बल मिला। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई से बहुत प्रेरित थी। प्रात: ४ से ६, सुबह १० से ११ और रात को ८ से १० बजे रियास का अभ्यास करती थी। शादी ब्याह में भी गाना बजाना होता था। शादी ब्याह में दौलत तो मिलती थी पर इज्जत नहीं। अप्पाजी बड़ी दभंग और धीट थी और किसी से भी डरती नहीं थी। बनारसी ठुमरी का एक अलग ही स्थान है। बनारस की ठुमरी में शब्दों को स्वरों के भाव से सजाया जाता है। उन्होंने अपने जीवन में अनुशासन रखा और लम्बे समय तक ऊर्जावान रही।

स्वामी चिन्मयानंद (जन्म- ८ मई)

स्वामी चिन्मयानंद सरस्वती भारत के प्रसिद्ध आध्यात्मिक चिंतक तथा वेदान्त दर्शन के विश्व प्रसिद्ध विद्वान थे। इनका मूल नाम बालकृष्ण मेनन था। इन्होंने सारे भारत में भ्रमण करते हुए देखा कि देश में धर्म संबंधी अनेक भ्रांतियां फैली हैं। उनका निवारण कर शुद्ध धर्म की स्थापना करने के लिए स्वामी चिन्मयानंद जी ने गीता ज्ञान यज्ञ प्रारम्भ किया और १९५३ में चिन्मय मिशन की स्थापना की। उपनिषद, गीता और आदि शंकराचार्य के ३५ से अधिक ग्रंथों पर इन्होंने व्याख्यायें लिखीं। गीता पर लिखा गया उनका भाष्य सर्वोत्तम माना जाता है।

गोपबन्धु चौधरी (जन्म- ८ मई)

गोपबन्धु चौधरी को उड़ीसा के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों में गिना जाता है। भारत की तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने इन्हें उड़ीसा में अकाल पड़ने के समय सहायता अधिकारी नियुक्त किया था। जब गांधीजी ने असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हो गए। इन्होंने विनोबा भावे के प्रसिद्ध भूदान आन्दोलन में भी सक्रिय भूमिका निभाई थी।

९ मई

राष्ट्र निर्माता गोपालकृष्ण गोखले

गोपालकृष्ण गोखले का राष्ट्रीय आन्दोलन तथा स्वाधीनता संग्राम में प्रमुख योगदान रहा है। उनका जन्म देश की आजादी के पहले ९ मई १८६६ को भूतपूर्व बम्बई प्रेसीडेंसी के रत्नागिरि जिले के कोतलुक नामक गाँव मे हुआ था। गोखले का जन्म

१८५७ की उस महान भारतीय क्रांति के नौ वर्ष पश्चात हुआ, जिसे भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम भी कहा जाता है। उस समय देश मे सर्वत्र एक नवीन उत्साह व्याप्त था। चिंतनशील भारतीयों के लिए एक चुनौती का समय था।

गोखले का विद्यार्थी जीवन मे दृढ़ विचार था कि भारत तभी स्वाधीन हो सकता है जब भारतीयों को आधुनिक तरीकों से शिक्षित किया जाए। केवल आधुनिक विज्ञान, आधुनिक कलाएं और आधुनिक चिंतन पद्धतियां अपना कर ही वे विदेशी शासन का भार उतार फेकने मे समर्थ हो सकते है। गोखले ने अपना राजनीतिक जीवन सार्वजनिक सभा के मंत्री के रूप मे आरंभ किया। इस सभा का उद्देश्य था जनता की आवश्यकताओं तथा भावनाओं की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करना। गोपाल कृष्ण गोखले का १८९७ मे वैल्वी आयोग के सदस्य के रूप मे महत्वपूर्ण योगदान था, जिसके माध्यम से उन्होने भारत के लोगों की आवाज को जोरदार ढंग से उठाया। यह उनकी पहली इंग्लैंड यात्रा थी। वह भारतीय दल मे सबसे छोटी उम्र के थे, उस समय वह मात्र ३१ वर्ष के ही थे।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में कांग्रेस के नरमपंथी धड़े के प्रमुख नेता गोपाल कृष्ण गोखले एक दूरदृष्टि वाले नेता और समाज सुधारक थे और उन्होंने ही महात्मा गांधी को देश भर की यात्रा कर भारत का जनमानस समझने की मूल्यवान सलाह दी थी। गांधी उन्हें अपना राजनीतिक गुरू मानते थे। राजधानी के गांधी स्मारक संग्रहालय के पुस्तकालय अधिकारी एस के भटनागर ने बताया कि गोखले ने महात्मा गांधी को एक ऐसी मूल्यवान सलाह दी थी जिसके कारण न केवल महात्मा गांधी बल्कि भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की दिशा ही बदल गयी। गांधी जब दक्षिण अफ्रीका से लौटे तो वह गोखले से मिलने गये। उन्होंने कहा कि गोखले ने गांधी को रेल के तीसरे दर्जे में पूरे भारत की यात्रा करने की सलाह दी। सालभर की इन यात्राओं में गांधी ने भारतीय जनमानस और समाज की चुभती हुई सच्चाइयों को बेहद नजदीक से देखा। इस यात्रा के दौरान ही गांधी ने न केवल देश की आजादी बल्कि समाज सुधार के भी कई कार्यक्रमों की रूपरेखा अपने मन में बनायी। महात्मा गांधी गोखले के जबरदस्त प्रशंसक थे और उन्होंने उन्हे अपना राजनीतिक गुरु भी स्वीकार किया था। गोखले उन नेताओं में थे जिनसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी सबसे अधिक प्रभावित थे। भटनागर ने बताया कि गांधी और गोखले की नजदीकी भेट पहले भी हो चुकी थी। गोखले की दक्षिण अफ्रीका यात्रा को सफल बनाने के लिए गांधी ने व्यक्तिगत रुचि लेते हुए काफी प्रयास किये थे। गांधी और गोखले को नजदीक लाने में दीनबंधु सी एफ एंड्रूज का काफी योगदान था। उन्होंने कहा कि गोखले की दक्षिण अफ्रीका यात्रा ने गांधी को उन्हें नजदीक से देखने और उनके व्यक्तित्व एवं विचारों को गंभीरता से समझने का मौका दिया। गोखले के उदारवादी दृष्टिकोण, समाज सुधार की प्रवृत्तियों, प्रभावी भाषण शैली तथा आकर्षक व्यक्तित्व ने गांधी के मन में गहरी छाप छोड़ी। स्वतंत्रता आंदोलन में गांधी गोखले की लोकमुखी राजनीति से प्रेरित होकर आये और इसी कारण कांग्रेस में आम आदमी का प्रवेश बढ़ गया और वह गांव-गांव तक पहुंच गयी। इससे स्वतंत्रता आंदोलन में आम आदमी की सहभागिता और भूमिका बढ़ती गयी। गोखले कालेज में शिक्षा हासिल करनेवाली देश की शुरूआती पीढ़ियों में से एक के सदस्य थे। शिक्षा प्राप्त करने से उन्हें इसका महत्व समझ में आया और वह चाहते थे कि आम भारतीय भी शिक्षा के महत्व को समझें। शिक्षा के महत्व को समझते हुए इसके सार्वजनिक प्रसार के लिए काफी प्रयास किया। बीसवीं सदी के शुरूआती वर्षों में गोखले जननेता के तौर पर उभरे और युवाओं के बीच वह विशेष रूप से लोकप्रिय हुए। उन्होंने सर्वेंट्स आफ इंडिया सोसाइटी की स्थापना की जिसका

लक्ष्य ऐसे प्रतिबद्ध लोगों को प्रशिक्षित करना था जो निस्वार्थ भाव से आम लोगों की भलाई के लिए काम कर सकें। गोखले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में उस दौर में विख्यात हुए जब आजादी की लड़ाई लड़ रही कांग्रेस दो स्पष्ट विचारधाराओं में विभाजित नजर आ रही थी। एक ओर बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल, लाला लाजपत राय और अरविन्द घोष जैसे गरमपंथी विचारधारा के नेता थे, वहीं नरमपंथी विचारधारा के सिरमौर नेता गोखले थे। गोखले ने दादा भाई नौरोजी जैसे नरमपंथी नेताओं के साथ हमेशा सामाजिक सुधारों पर जोर दिया। इन तमाम कद्दावर नेताओं के बावजूद गोखले अपनी स्पष्ट विचारधारा और बेबाक भाषण शैली के कारण भारत ही नहीं ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका जैसे कई अन्य देशों में काफी लोकप्रिय थे। गोखले गांधी के न्यौते पर दक्षिण अफ्रीका गये थे जहां भारतीय मूल के लोगों ने उनका जबदरस्त स्वागत किया था। नौ मई १८६६ को महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में पैदा हुए गोखले ने तमाम बाधाओं के बीच परिवार के समर्थन से शिक्षा हासिल की। देशवासियों की प्रगति के लिए आजीवन प्रयासरत रहने का असर उनके स्वास्थ्य पर पड़ा। वह मधुमेह, दमा जैसी कई गंभीर बीमारियों से परेशान रहने लगे और अंतत: १९ फरवरी १९१५ को उनका निधन हो गया।

गोपाल कृष्ण गोखले अपने समय के अद्वितीय संसदविद और राष्ट्रसेवी थे। यह एक स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी, विचारक एवं सुधारक भी थे। १८५७ ई. के स्वतंत्रता संग्राम के नौ वर्ष बाद गोखले का जन्म हुआ था। यह वह समय था, जब स्वतंत्रता संग्राम असफल अवश्य हो गया था, किंतु भारत के अधिकांश देशवासियों के हृदय में स्वतंत्रता की आग धधकने लगी थी।

श्री गोपाल कृष्ण गोखले का जन्म १८६६ रत्नागिरी जिले में हुआ। १८८६ में वह फर्ग्युसन कॉलेज में अंग्रेजी के प्राध्यापक के रूप में सम्मिलित हुए। वह श्री एम.जी. रानाडे के प्रभाव में आए। सार्वजनिक सभा पूना के सचिव बने। १८९० में कांग्रेस में उपस्थित हुए। वह १८९९ में बॉम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल के लिए और १९०२ में इंपीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल के लिए निर्वाचित किए गए। वह अफ्रीका गए और वहां गांधी जी से मिले। वह भारत लोकसेवा समाज के संस्थापक और अध्यक्ष थे। उदारवादी विचारधारा के वह अग्रणी प्रवक्ता थे। श्री गोखले ने अपनी स्नातक की उपाधि १८८४ में एल्फिंस्टन कॉलेज, मुम्बई से ग्रहण की। बाद में वे न्यू इंग्लिश स्कूल, पूना में शिक्षक हो गये। जब वे फर्ग्युसन कॉलेज में शिक्षक थे तो उनका संपर्क न्यायाधीश महादेव गोविंद रानडे से हुआ। उन्होंने भारत स्वतंत्र आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। गोखले १८८९ में इंडियन नॅशनल कॉंग्रेस से जुड़े और जिन्होंने १९०५ में उन्हें इंग्लैंड भेजा। उन्होंने वहां की जनता को ब्रिटिश राज्य की हुकूमत के बारे में अवगत कराया। १९०५ में उन्होंने नॅशनल कॉंग्रेस की अध्यक्षता ली थी। राष्ट्र की बेहतर सेवा करने के लिए उन्होंने सर्वंटस् ऑफ इंडिया सोसायटी की स्थापना की। मोहम्मद अली जिन्ना भी गोखले को अपना गुरु मानते थे।

गोपाल कृष्ण गोखले अपने समय के अद्वितीय संसदविद और राष्ट्रसेवी थे। यह एक स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी, विचारक एवं सुधारक भी थे। गोखले ने भारत के लिए काउंसिल ऑफ द सेक्रेटरी ऑफ स्टेट और नाइटहुड की उपाधि में पद ग्रहण करने से इन्कार कर दिया था। गोखले ने स्वदेशी का प्रचार करते हुए भारत में औद्योगिकीकरण का समर्थन किया। तिलक ने गोखले को भारत का हीरा, महाराष्ट्र का लाल और कार्यकर्ताओं का राजा कहकर उनकी सराहना की। उनका निधन १९ फरवरी को हुआ। गांधीजी ने इन्हें राजनीति का गुरु माना।

टी. बालासरस्वती (निधन- ९ मई)

तंजोर बालासरस्वती भरतनाट्यम की सुप्रसिद्ध नृत्यांगना थीं। उन्हें संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, पद्मभूषण और मानद विद्या वाचस्पति आदि अलंकारणों से सम्मानित किया गया था। टी. बालासरस्वती तमिलनाडु राज्य से सम्बन्धित थीं।

महाराणा प्रताप (जन्म- ९ मई)

महाराणा प्रताप का नाम भारतीय इतिहास में वीरता और दृढ़ प्रतिज्ञा के लिए अमर है। वे उदयपुर, मेवाड़ में सिसोदिया राजवंश के राजा थे। वह तिथि धन्य है, जब मेवाड़ की शौर्य-भूमि पर मेवाड़-मुकुट मणि राणा प्रताप का जन्म हुआ। वे अकेले ऐसे वीर थे, जिसने मुगल बादशाह अकबर की अधीनता किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं की। वे हिन्दू कुल के गौरव को सुरक्षित रखने में सदा तल्लीन रहे। महाराणा प्रताप की जयंती विक्रमी सम्वत कॅलण्डर के अनुसार प्रतिवर्ष ज्येष्ठ, शुक्ल पक्ष तृतीया को मनाई जाती है।

उदयपुर, मेवाड़ में सिसोदिया राजवंश के राजा थे। वह तिथि धन्य है, जब मेवाड़ की शौर्य भूमि पर मेवाड़ मुकुट मणि राणा प्रताप का जन्म हुआ। प्रताप का नाम इतिहास में वीरता और दृढ़ प्रण के लिये अमर है। महाराणा प्रताप की जयंती विक्रमी सम्वत कैलेण्डर के अनुसार प्रतिवर्ष ज्येष्ठ, शुक्ल पक्ष तृतीया को मनाई जाती है।

राजस्थान के कुम्भलगढ़ में प्रताप का जन्म महाराणा उदयसिंह एवं माता राणी जीवत कंवर के घर हुआ था। बप्पा रावल के कुल की अक्षुण्ण कीर्ति की उज्ज्वल पताका, राजपूतों की आन एवं शौर्य का यह पुण्य प्रतीक, राणा सांगा का वह पावन पौत्र (विक्रम संवत १६२८ फाल्गुन शुक्ल १५) तारीख १ मार्च सन १५७३ ई. को सिंहासनासीन हुआ। शौर्य की मूर्ति प्रताप एकाकी थे। अपनी प्रजा के साथ और एकाकी ही उन्होंने जो धर्म एवं स्वाधीनता के लिये ज्योतिर्मय बलिदान किया, वह विश्व में सदा परतन्त्रता और अधर्म के विरुद्ध संग्राम करनेवाले, मानधनी, गौरवशील मानवों के लिये मशाल सिद्ध होगा।

धर्म रहेगा और पृथ्वी भी रहेगी, (पर) मुगल साम्राज्य एक दिन नष्ट हो जायगा। अत: हे राणा। विश्वम्भर भगवान के भरोसे अपने निश्चय को अटल रखना।

अब्दुर्रहीम खान-ए-खाना महाराणा का वह निश्चय लोकविश्रुत है- भगवान एकलिंग की शपथ है, प्रताप के इस मुख से अकबर तुर्क ही कहलायेगा। मैं शरीर रहते उसकी अधीनता स्वीकार करके उसे बादशाह नहीं कहूंगा। सूर्य जहां उगता है, वहां पूर्व में ही उगेगा। सूर्य के पश्चिम में उगने के समान प्रताप के मुख से अकबर को बादशाह निकलना असम्भव है।

सम्राट अकबर की कूटनीति व्यापक थी। राज्य को जिस प्रकार उन्होंने राजपूत नरेशों से सन्धि एवं वैवाहिक सम्बन्ध द्वारा निर्भय एवं विस्तृत कर लिया था, धर्म के सम्बन्ध में भी वे अपने दीन-ए-इलाही के द्वारा हिन्दू धर्म की श्रद्धा थकित करने के प्रयास में नहीं थे, कहना कठिन है। आज कोई कुछ कहे, किंतु उस युग में सच्ची राष्ट्रीयता थी। हिंदुत्व और उसकी उज्ज्वल ध्वजा, गर्वपूर्वक उठानेवाला एक ही अमर सेनानी था- प्रताप। अकबर का शक्ति सागर इस अरावली के शिखर से व्यर्थ ही टकराता रहा- नहीं झुका।

अकबर के महासेनापति राजा मानसिंह, शोलापुर विजय करके लौट रहे थे। उदय सागर पर महाराणा ने उनके स्वागत

का प्रबन्ध किया। हिन्दू नरेश के यहां भला अतिथि का सत्कार न होता, किंतु महाराणा प्रताप ऐसे राजपूत के साथ बैठकर भोजन कैसे कर सकते थे, जिसकी बुआ मुगल अन्त:पुर में हो। मानसिंह को बात समझने में कठिनाई नहीं हुई। अपमान से जले वे दिल्ली पहुंचे। उन्होंने सैन्य सज्जित करके चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया।

राजपूताने की पावन बलिदान-भूमि के समकक्ष, विश्व में इतना पवित्र बलिदान स्थल कोई नहीं। उस शौर्य एवं तेज की भव्य गाथा से इतिहास के पृष्ठ रंगे हैं। भीलों का अपने देश और नरेश के लिये वह अमर बलिदान राजपूत वीरों की वह तेजस्विता और महाराणा का वह लोकोत्तर पराक्रम इतिहास का, वीरकाव्य का परम उपजीव्य है। मेवाड़ के उष्ण रक्त ने श्रावण संवत १६३३ विक्रमी में हल्दीघाटी का कण-कण लाल कर दिया। अपार शत्रु सेना के सम्मुख थोड़े-से राजपूत और भील सैनिक कब तक टिकते? महाराणा को पीछे हटना पड़ा और उनका प्रिय अश्व चेतक, जिसने उन्हें निरापद पहुंचाने में इतना श्रम किया कि अन्त में वह सदा के लिये अपने स्वामी के चरणों में गिर पड़ा।

हल्दीघाटी के इस प्रवेश द्वार पर अपने चुने हुए सैनिकों के साथ प्रताप शत्रु की प्रतीक्षा करने लगे। दोनों ओर की सेनाओं का सामना होते ही भीषण रूप से युद्ध शुरू हो गया और दोनों तरफ के शूरवीर योद्धा घायल होकर जमीन पर गिरने लगे। प्रताप अपने घोड़े पर सवार होकर द्रुतगति से शत्रु की सेना के भीतर पहुंच गये और राजपूतों के शत्रु मानसिंह को खोजने लगे। वह तो नहीं मिला, परन्तु प्रताप उस जगह पर पहुंच गये, जहां पर सलीम (जहांगीर) अपने हाथी पर बैठा हुआ था। प्रताप की तलवार से सलीम के कई अंगरक्षक मारे गए और यदि प्रताप के भाले और सलीम के बीच में लोहे की मोटी चादर वाला हौदा नहीं होता तो अकबर अपने उत्तराधिकारी से हाथ धो बैठता। प्रताप के घोड़े चेतक ने अपने स्वामी की इच्छा को भांपकर पूरा प्रयास किया और तमाम ऐतिहासिक चित्रों में सलीम के हाथी के सूंड पर चेतक का एक उठा हुआ पैर और प्रताप के भाले द्वारा महावत का छाती का छलनी होना अंकित किया गया है। महावत के मारे जाने पर घायल हाथी सलीम सहित युद्ध भूमि से भाग खड़ा हुआ।

इस समय युद्ध अत्यन्त भयानक हो उठा था। सलीम पर प्रताप के आक्रमण को देखकर असंख्य मुगल सैनिक उसी तरफ बढ़े और प्रताप को घेरकर चारों तरफ से प्रहार करने लगे। प्रताप के सिर पर मेवाड़ का राजमुकुट लगा हुआ था। इसलिए मुगल सैनिक उसी को निशाना बनाकर वार कर रहे थे। राजपूत सैनिक भी उसे बचाने के लिए प्राण हथेली पर रखकर संघर्ष कर रहे थे। परन्तु धीरे-धीरे प्रताप संकट में फंसते जा रहे थे। स्थिति की गम्भीरता को परखकर झाला सरदार ने स्वामिभक्ति का एक अपूर्व आदर्श प्रस्तुत करते हुए अपने प्राणों का बलिदान कर दिया। झाला सरदार मन्नाजी तेजी के साथ आगे बढ़ा और प्रताप के सिर से मुकुट उतारकर अपने सिर पर रख लिया और तेजी के साथ कुछ दूरी पर जाकर घमासान युद्ध करने लगा। मुगल सैनिक उसे ही प्रताप समझकर उस पर टूट पड़े और प्रताप को युद्ध भूमि से दूर निकल जाने का अवसर मिल गया। उसका सारा शरीर अगणित घावों से लहुलूहान हो चुका था। युद्धभूमि से जाते-जाते प्रताप ने मन्नाजी को मरते देखा। राजपूतों ने बहादुरी के साथ मुगलों का मुकाबला किया, परन्तु मैदानी तोपों तथा बन्दूकधारियों से सुसज्जित शत्रु की विशाल सेना के सामने समूचा पराक्रम निष्फल रहा। युद्धभूमि पर उपस्थित बाईस हजार राजपूत सैनिकों में से केवल आठ हजार जीवित सैनिक युद्धभूमि से किसी प्रकार बचकर निकल पाये। महाराणा प्रताप चितौड़ छोड़कर वनवासी हो गए। महाराणी, सुकुमार राजकुमारी और कुमार घास की रोटियों और निर्झर के जल पर

ही किसी प्रकार जीवन व्यतीत करने को बाध्य हुए। अरावली की गुफाएं ही अब उनका आवास थीं और शिला ही शैय्या थी। दिल्ली का सम्राट सादर सेनापतित्व देने को प्रस्तुत था। उससे भी अधिक वह केवल यह चाहता था कि प्रताप मुगलों की अधीनता स्वीकार कर लें और उसका दम्भ सफल हो जाय। महाराणा प्रताप का पुत्र और उत्तराधिकारी अमर सिंह। अपने पिता की भांति उसने भी स्वतंत्रता के लिए अकबर से युद्ध किया। पर १५९९ ई. में पराजित हो गया। लेकिन उसने संघर्ष जारी रखा और १६१४ ई. तक मुगल सेनाओं से लोहा लेता रहा। इस बीच अकबर की मृत्यु हो चुकी थी और जहांगीर शासक बन गया था। जहांगीर ने मेवाड़ के राणा के मुगल दरबार में उपस्थित होने और किसी राजकुमारी को मुगल हरम में भेजने की अपमानजनक शर्त नहीं रखी थी। अत: अपनी असफलता को देखते हुए अमर सिंह ने उसके साथ संधि कर ली। यह संधि औरंगजेब के सत्ता में आने के समय तक चलती रही।

हिंदुत्व पर दीन-ए-इलाही स्वयं विजयी हो जाता। प्रताप राजपूत की आन का वह सम्राट, हिंदुत्व का वह गौरव-सूर्य इस संकट, त्याग, तप में अम्लान रहा, अडिग रहा। धर्म के लिये, आन के लिये यह तपस्या अकल्पित है। कहते हैं महाराणा ने अकबर को एक बार सन्धि-पत्र भेजा था, पर इतिहासकार इसे सत्य नहीं मानते। यह अबुल फजल की मात्र एक गढ़ी हुई कहानी भर है। अकल्पित सहायता मिली, मेवाड़ के गौरव भामाशाह ने महाराणा के चरणों में अपनी समस्त सम्पत्ति रख दी। महाराणा इस प्रचुर सम्पत्ति से पुन: सैन्य-संगठन में लग गये। चितौड़ को छोड़कर महाराणा ने अपने समस्त दुर्गों का शत्रु से उद्धार कर लिया। उदयपुर उनकी राजधानी बना। अपने २४ वर्षों के शासन काल में उन्होंने मेवाड़ की केसरिया पताका सदा ऊंची रखी।

दिल्ली का उत्तराधिकारी युवराज सलीम (बाद में जहांगीर) मुगल सेना के साथ युद्ध के लिए चढ़ आया। उसके साथ राजा मानसिंह और सागरजी का जातिभ्रष्ट पुत्र मोहबत खां भी था। प्रताप ने अपने पर्वतों और बाईस हजार राजपूतों में विश्वास रखते हुए अकबर के पुत्र का सामना किया। अरावली के पश्चिम छोर तक शाही सेना को किसी प्रकार के विरोध का सामना नहीं करना पड़ा, परन्तु इसके आगे का मार्ग प्रताप के नियंत्रण में था।

प्रताप अपनी नई राजधानी के पश्चिम की ओर पहाड़ियों में आ डटे। इस इलाके की लम्बाई लगभग ८० मील (लगभग १२८ कि.मी.) थी और इतनी ही चौड़ाई थी। सारा इलाका पर्वतों और वनों से घिरा हुआ था। बीच बीच में कई छोटी-छोटी नदियां बहती थीं। राजधानी की तरफ जानेवाले मार्ग इतने तंग और दुर्गम थे कि बड़ी कठिनाई से दो गाड़ियां आ जा सकती थीं। उस स्थान का नाम हल्दीघाटी था, जिसके द्वार पर खड़े पर्वत को लांघकर उसमें प्रवेश करना संकट को मोल लेना था। उनके साथ विश्वासी भील लोग भी धनुष और बाण लेकर डट गए। भीलों के पास बड़े-बड़े पत्थरों के ढेर पड़े थे। जेसे ही शत्रु सामने से आयेगा, वैसे ही पत्थरों को लुढ़काकर उनके सिर को तोड़ने की योजना थी।

१० मई

छत्रपति साहू महाराज (निधन- १० मई)

छत्रपति साहू महाराज को एक भारत में सच्चे प्रजातंत्रवादी और समाज सुधारक के रूप में जाना जाता है। वे कोल्हापुर के इतिहास में एक अमूल्य मणि के रूप में आज भी प्रसिद्ध हैं। छत्रपति साहू महाराज ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने राजा होते हुए

भी दलित और शोषित वर्ग के कष्ट को समझा और सदा उनसे निकटता बनाए रखी। उन्होंने दलित वर्ग के बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करने की प्रक्रिया शुरू की थी। गरीब छात्रों के छात्रावास स्थापित किये और बाहरी छात्रों को शरण प्रदान करने के आदेश दिए।

११ मई

सआदत हसन मंटो

११ मई १९१२ को उर्दू कहानीकार, पटकथा लेकर और पत्रकार सआदत हसत मंटो का जन्म समराला, लुधियाना (पंजाब) में हुआ था। उनकी कहानियों का पहला संग्रह आतिशपारे १९३६ में आया था। अपनी छोटी सी जिंदगी में उन्होंने २८० कहानियां, ६७ रेडियो नाटक, २२ शब्द चित्र और ७० लेख लिखे, अपनी कहानियों के कारण उन पर लंबे मुकदमें भी चले।

उनकी कृतियों में सियाह हाशिए, नंगी आवाजें, लाइसेंस बू, ठंडा गोश्त, काली शलवार, घुआं, टोबा टेक सिंह आदि प्रमुख हैं। ऑल इंडिया रेडियो, दिल्ली और फिर मुंबई में काम करने के बाद वे पाकिस्तान चले गये। १८ जनवरी १९५५ को लाहौर में उनका निधन हुआ।

१२ मई

जे. कृष्णमूर्ति (जन्म- १२ मई)

जे. कृष्णमूर्ति एक विश्व प्रसिद्ध दार्शनिक तथा आध्यात्मिक विषयों के बड़े ही कुशल एवं परिपक्व लेखक थे। इन्हें प्रवचनकर्ता के रूप भी ख्याति प्राप्त थी। जे. कृष्णमूर्ति मानसिक क्रान्ति, बुद्धि की प्रकृति, ध्यान और समाज में सकारात्मक परिवर्तन किस प्रकार लाया जा सकता है, इन विषयों आदि के बहुत ही गहरे विशेषज्ञ थे।

कृष्ण चन्द्र भट्टाचार्य (जन्म- १२ मई)

कृष्ण चन्द्र भट्टाचार्य कलकत्ता विश्वविद्यालय में दार्शनिक थे, जिन्होंने हिन्दू दर्शन पर अध्ययन किया। कृष्णचन्द्र भट्टाचार्य के दर्शन के विकास को तीन सुस्पष्ट अवधियों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम अवधि १९१८ तक, द्वितीय अवधि १९२५ से १९३२ तक और तृतीय १९३४ से १९३८ तक।

शमशेर बहादुर सिंह (निधन- १२ मई)

शमशेर बहादुर सिंह आधुनिक हिंदी कविता के प्रगतिशील कवि हैं। ये हिंदी तथा उर्दू के विद्वान है। प्रयोगवाद और नई कविता के कवियों की प्रथम पंक्ति में इनका स्थान है। इनकी शैली अंग्रेजी कवि एजरा पाउण्ड से प्रभावित है। शमशेर बहादुर सिंह दूसरा सप्तक (१९५१) के कवि हैं। शमशेर बहादुर सिंह ने कविताओं के समान ही चित्रों में भी प्रयोग किये हैं।

१४ मई

अरुण चन्द्र गुहा (जन्म- १४ मई)

अरुण चन्द्र गुहा भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और राजनैतिक कार्यकर्ता थे। कानूनी शिक्षा प्राप्त करने के दौरान ही वह क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय हो गए थे। रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के विचारों से अरुण चन्द्र बहुत प्रभावित थे। भारत की आजादी के बाद अरुण चन्द्र गुहा संविधान परिषद के सदस्य भी चुने गए थे। वे तीन बार वर्ष १९५२, १९५७ और १९६२ में लोकसभा के लिए भी निर्वाचित हुए। एक प्रसिद्ध लेखक के रूप में भी अरुण गुहा जाने जाते थे।

डॉ. रघुवीर (निधन- १४ मार्च)

डॉक्टर रघुवीर देश के प्रख्यात विद्वान तथा राजनीतिक नेता थे। एक ओर इन्होंने कोशों की रचना कर राष्ट्रभाषा हिन्दी का शब्दभंडार संपन्न किया, तो दूसरी ओर विश्व में विशेषत: एशिया में फैली हुई भारतीय संस्कृति की खोज कर उसका संग्रह एवं संरक्षण किया। राजनीतिक नेता के रूप में इनकी दूरदर्शिता, निर्भीकता और स्पष्टवादिता कभी विस्मृत नही की जा सकती।

१५ मई

सुखदेव थापर

प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी सुखदेव ने भारत के स्वाधीनता संग्राम में बेहद महत्वपूर्ण और सक्रिय भूमिका निभाई। उनका जन्म १५ मई १९०७ को लुधियाना, पंजाब के अपने पैतृक घर में हुआ था। युवावस्था में ही अपने प्राणों का बलिदान करनेवाले सुखदेव का वास्तविक नाम सुखदेव थापर था। बचपन से ही उन्होंने भारतीय लोगों पर अत्याचार होते देखा था। यही कारण है कि किशोरावस्था में पहुंचते ही वह अंग्रेजों को भारत से बाहर करने के लिए चलाई जा रही क्रांतिकारी गतिविधियों में भाग लेने लगे। सुखदेव थापर हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के सदस्य थे। इस संस्था के सदस्य के तौर पर सुखदेव ने पंजाब और उत्तर भारत के अनेक शहरों में क्रांतिकारी गुटों को संगठित किया। एक समर्पित कार्यकर्ता होने के कारण सुखदेव कभी-कभार लाहौर के नेशनल कॉलेज में पढ़नेवाले भारतीयों को भारत के शानदार इतिहास और स्वाधीनता की महत्ता से जुड़े पाठ पढ़ाया करते थे। अपने कुछ प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानियों और क्रांतिकारी मित्रों की सहायता से सुखदेव ने लाहौर में नौजवान भारत सभा का गठन किया। इस सभा का मुख्य कार्य क्रांतिकारी गतिविधियों का संचालन और ज्यादा से ज्यादा युवाओं को इसमें भागीदार बनाना था। अंग्रेजी शासन काल में जेल में बंद भारतीयों और अंग्रेज कैदियों के साथ बहुत भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता था। जहां अंग्रेज अपराधियों को स्वच्छ खाना और बर्दी दी जाती थी। उनके रहने की व्यवस्था पर पूरा ध्यान दिया जाता था। वहीं दूसरी ओर भारतीय लोगों को पहनने के लिए गंदे कपड़े मिलते थे। हालात से त्रस्त होकर वर्ष १९२९ में जतिन दास ने जेल में रहते हुए भूख हड़ताल का आहवान कर दिया। इस हड़ताल में सुखदेव समेत सारे कैदियों ने भाग लिया। १८ दिसंबर १९२८ को लाला लाजपत राय की मृत्यु का बदला लेने के लिए सुखदेव, राजगुरु और भगतसिंह ने उन पर हमला करनेवाले मुख्य पुलिस अधिकारी स्कॉट पर गोली चलाई लेकिन यह गोली किसी अन्य पुलिस अफसर सांडर्स को जा लगी।

गोली चलाने के तुरंत बाद तीनों लोग वहां से भाग निकले और किसी तरह पुलिस से बचते रहे। ८ अप्रैल १९२९ को सेंट्रल असेंबली हॉल में बम फेंकने के बाद सुखदेव, भगत सिंह और राजगुरु को हिरासत में ले लिया गया। कोर्ट में केस की सुनवाई के दौरान उन तीनों स्वतंत्रता सेनानियों पर सांडर्स की हत्या का आरोप भी साबित हो गया और तीनों को फांसी की सजा सुना दी गई। २२ साल की कम उम्र में ही सुखदेव फांसी के फंदे में झूल गए।

सुखदेव को भारत के उन प्रसिद्ध क्रांतिकारियों और शहीदों में गिना जाता है, जिन्होंने अल्पायु में ही देश के लिए शहादत दी। सुखदेव का पूरा नाम सुखदेव थापर था। देश के और दो अन्य क्रांतिकारियों- भगतसिंह और राजगुरु के साथ उनका नाम जोड़ा जाता है। ये तीनों ही देशभक्त क्रांतिकारी आपस में अच्छे मित्र और देश की आजादी के लिए अपना सर्वत्र न्यौछावर कर देनेवालों में से थे। २३ मार्च, १९३१ को भारत के इन तीनों वीर नौजवानों को एक साथ फाँसी दी गई।

अंग्रेजों ने भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की फांसी को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था और वे हर कीमत पर इन तीनों क्रांतिकारियों को ठिकाने लगाना चाहते थे। लाहौर षड्यंत्र (सांडर्स हत्याकांड) में जहां पक्षपातपूर्ण ढंग से मुकदमा चलाया गया, वहीं अंग्रेजों ने सुखदेव के मामले में तो सभी हदें पार कर दीं और उन्हें बिना जुर्म के ही फांसी पर लटका दिया।

जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर चमन लाल का कहना है कि सांडर्स हत्याकांड में सुखदेव शामिल नहीं थे, लेकिन फिर भी ब्रितानिया हुकूमत ने उन्हें फांसी पर लटका दिया। उनका कहना है कि राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह की लोकप्रियता तथा क्रांतिकारी गतिविधियों से अंग्रेजी शासन इस कदर हिला हुआ था कि वह इन्हें हर कीमत पर फांसी पर लटकाना चाहता था। उन्होंने कहा कि सांडर्स हत्याकांड में पक्षपातपूर्ण ढंग से मुकदमा चलाया गया और सुखदेव को इस मामले में बिना जुर्म के ही सजा दे दी गई। १५ मई १९०७ को पंजाब के लायलपुर (अब पाकिस्तान का फैसलाबाद) में जन्में सुखदेव भी भगत सिंह की तरह बचपन से ही आजादी का सपना पाले हुए थे। ये दोनों लाहौर नेशनल कॉलेज के छात्र थे। दोनों एक ही सन में लायलपुर में पैदा हुए और एक ही साथ शहीद हो गए।

अंग्रेजों ने भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की फांसी को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था और वे हर कीमत पर इन तीनों क्रांतिकारियों को ठिकाने लगाना चाहते थे।

लाहौर षड्यंत्र (सांडर्स हत्याकांड) में जहां पक्षपातपूर्ण ढंग से मुकदमा चलाया गया, वहीं अंग्रेजों ने सुखदेव के मामले में तो सभी हदें पार कर दीं और उन्हें बिना जुर्म के ही फांसी पर लटका दिया। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में भारतीय भाषा विभाग के अध्यक्ष और इतिहासकार चमन लाल का कहना है कि सांडर्स हत्याकांड में सुखदेव शामिल नहीं थे, लेकिन फिर भी ब्रितानिया हुकूमत ने उन्हें फांसी पर लटका दिया। उनका कहना है कि राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह की लोकप्रियता तथा क्रांतिकारी गतिविधियों से अंग्रेजी शासन इस कदर हिला हुआ था कि वह उन्हें हर कीमत पर फांसी पर लटकाना चाहता था। उन्होंने कहा कि सांडर्स हत्याकांड में पक्षपातपूर्ण ढंग से मुकदमा चलाया गया और सुखदेव को इस मामले में बिना जुर्म के ही सजा दे दी गई। पंद्रह मई १९०७ को पंजाब के लायलपुर (अब पाकिस्तान का फैसलाबाद) में जन्मे सुखदेव भी भगत सिंह की तरह बचपन से ही आजादी का सपना पाले हुए थे। ये दोनों लाहौर नेशनल कॉलेज के छात्र थे। दोनों एक ही सन में लायलपुर में पैदा हुए और एक ही साथ शहीद हो गए। चमनलाल ने बताया कि दोनों के बीच गहरी दोस्ती थी। चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व में पब्लिक सेफ्टी और ट्रेड डिस्पयूट बिल के विरोध में सेंट्रल असेंबली में बम फेंकने के लिए जब हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी (एचएसआरए) की पहली बैठक हुई तो उसमें सुखदेव शामिल नहीं थे। बैठक में भगत ने कहा कि बम वह फेकेंगे, लेकिन आजाद ने उन्हें इजाजत नहीं दी और कहा कि संगठन को उनकी बहुत जरूरत है। दूसरी बैठक में जब सुखदेव शामिल हुए तो उन्होंने भगत सिंह को ताना दिया कि शायद तुम्हारे भीतर जिन्दगी जीने की ललक जाग उठी है, इसीलिए बम फेंकने नहीं जाना चाहते। इस पर भगत ने आजाद से कहा कि बम वह ही फेकेंगे और अपनी गिरफ्तारी भी देंगे। चमन लाल ने बताया कि अगले दिन

जब सुखदेव बैठक में आए तो उनकी आंखें सूजी हुई थीं। वह भगत को ताना मारने की वजह से सारी रात सो नहीं पाए थे। उन्हें अहसास हो गया था कि गिरफ्तारी के बाद भगत सिंह की फांसी निश्चित है। इस पर भगत सिंह ने सुखदेव को सांत्वना दी और कहा कि देश को कुर्बानी की जरूरत है। सुखदेव ने अपने द्वारा कही गई बातों के लिए माफी मांगना और भगत सिंह इस पर मुस्करा दिये। दोनों के परिवार लायलपुर में पास-पास ही रहा करते थे।

सुखदेव को भारत के उन प्रसिद्ध क्रांतिकारियों और शहीदों में गिना जाता है, जिन्होंने अल्पायु में ही देश के लिए शहादत दी। सुखदेव का पूरा नाम सुखदेव थापर था। देश के और दो अन्य क्रांतिकारियों- भगत सिंह और राजगुरु के साथ उनका नाम जोड़ा जाता है। ये तीनों ही देशभक्त क्रांतिकारी आपस में अच्छे मित्र और देश की आजादी के लिए अपना सर्वत्र न्योछावर कर देनेवालों में से थे। २३ मार्च, १९३१ को भारत के इन तीनों वीर नौजवानों को एक साथ फांसी दी गई।

देवेन्द्रनाथ ठाकुर (जन्म- १५ मई)

देवेन्द्रनाथ ठाकुर अथवा देवेन्द्रनाथ टैगोर कलकत्ता निवासी श्री लारकानाथ ठाकुर के पुत्र थे, जो प्रख्यात विलान और धार्मिक नेता थे। अपनी दानशीलता के कारण उन्होंने प्रिंस की उपाधि प्राप्त की थी। पिता से उन्होंने ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा तथा ऋण उत्तराधिकार में प्राप्त किया था। नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ ठाकुर देवेंद्रनाथ ठाकुर के पुत्र थे।

टी.एन. शेषन (जन्म- १५ मई)

टी.एन. शेषन भारत के दसवें मुख्य चुनाव आयुक्त रहे हैं। शेषन ने अपनी गंभीरता, निष्पक्षता और सख्ती से भारत में होनेवाले चुनावों को शांतिपूर्वक संपन्न कराने में मुख्य योगदान दिया है। मुख्य चुनाव आयुक्त के रूप में उनका कार्यकाल १२ दिसंबर, १९९० से ११ दिसंबर, १९९६ तक रहा। उनके कार्यकाल में स्वच्छ ावं निष्पक्ष चुनाव सम्पन्न कराने के लिये नियमों का कड़ाई से पालन किया गया, जिसके कारण तत्कालीन केन्द्रीय सरकार एवं कई नेताओं के साथ उनका विवाद भी हुआ, किंतु वे अपने कार्य में पूरे मन से तल्लीन रहे और अपनी जिम्मेदारियों को सफलतापूर्वक निभाया। शेषन अपने कार्यकाल में सर्वाधिक चर्चित व्यक्ति रहे।

१६ मई

शानी (जन्म- १६ मई)

शानी प्रसिद्ध कथाकार एवं साहित्य अकादमी की पत्रिका समकालीन भारतीय साहित्य और साक्षात्कार के संस्थापक संपादक थे। नवभारत टाइम्स में भी इन्होंने कुछ समय काम किया। अनेक भारतीय भाषाओं के अलावा रूसी, लिथुवानी, चेक और अंग्रेजी में इनकी रचनाएं अनूदित हुए। मध्य प्रदेश के शिखर सम्मान से अलंकृत और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं।

रूसी मोदी (निधन- १६ मई)

रुस्तमजी होमुसजी मोदी संक्षिप्त नाम रूसी मोदी टाटा समूह के शीर्ष सदस्य थे। वे एयर इंडिया और तत्कालीन इंडियन एयरलाइंस के पूर्व संयुक्त अध्यक्ष और टाटा स्टील के सीएमडी थे। रूसी मोदी वर्ष १९३९ में तत्कालीन टेस्को कंपनी में दैनिक वेतन भोगी के तौर पर एक प्रशिक्षु के रूप में जुड़े थे। तब उन्हें ५० पैसे दैनिक वेतन मिलता था। धीरे-धीरे वे

कंपनी के लिए काम करते गए और १९९३ में टाटा स्टील के अध्यक्ष नियुक्त किये गए। इन्होंने जमशेदपुर को इस्ताप नगरी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

गोपाल चंद्र प्रहराज (निधन- १६ मई)

गोपाल चंद्र प्रहराज भारत के प्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। वे उड़िया भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा भाषाविद थे। सरल भाषा के गम्भीर विचार युक्त व्यंग्य लेखक के रूप में गोपाल चंद्र प्रहराज की काफी प्रसिद्धि थी।

१७ मई

धीरेन्द्र वर्मा (जन्म- १७ मई)

धीरेन्द्र वमा हिन्दी और ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि और लेखक थे। जो कार्य हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया, वही कार्य हिन्दी शोध के क्षेत्र में डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने किया था। धीरेन्द्र वर्मा जहाँ एक तरफ हिन्दी विभाग के उत्कृष्ट व्यवस्थापक रहे, वहीं दूसरी ओर एक आदर्श प्राध्यापक भी थे। भारतीय भाषाओं से सम्बद्ध समस्त शोध कार्य के आधार पर उन्होंने १९३३ ई. में हिन्दी भाषा का प्रथम वैज्ञानिक इतिहास लिखा था। फ्रेंच भाषा में उनका ब्रजभाषा पर शोध प्रबन्ध है, जिसका अब हिन्दी अनुवाद हो चुका है।

सी.पी. कृष्णन नायर (निधन- १७ मई)

सी.पी. कृष्णन नायर होटल लीलावेंचन के संस्थापक और चेयरमैन एमिरेट्स थे। भारतीय सेना से अपना करियर शुरू करनेवाले नायर ने शुरुआत में टेक्सटाइल इकाई स्थापित की थी। बाद में वर्ष १९८१ में उन्होंने होटल एवं रिसोर्ट ब्रांड लीला पैलेस के नाम से लक्जरी हॉस्पिटैलिटी चेन शुरू की। भारत से सबसे अधिक कपड़ा निर्यात करने के लिए भारत सरकार ने कृष्णन नायर को पद्मभूषण से सम्मानित किया था।

१८ मई

देश का पहला परमाणु विस्फोट

१८ मई १९७४ को पोखरन (राजस्थान) में देश का पहला परमाणु विस्फोट किया गया था। इसे पोखरन-१ कहा जाता है और पूरी योजना का नाम स्माइलिंग बुद्धा था। तत्कालीन पीएम इंदिरा गांधी ने परमाणु विस्फोट का निर्णय लिया था। ऐसा करनवोला भारत विश्व का छठा देश बना। जमीन के अंदर १०७ मीटर की गहराई पर यह विस्फोट किया गया था। इसमें प्लूटोनियम परमाणु बल का प्रयोग किया गया था जिसकी क्षमता १५ से २० किलो टन तक की थी। इस विस्फोट की प्रमुख विशेषता यह थी कि इससे किसी प्रकार का नाभकीय अवताप नहीं उत्पन्न हुआ था। बीएआरसी के निदेशक राजा रमन्ना के नेतृत्व में पोखरन-१ संपन्न हुआ था।

२० मई

सुमित्रानंदन पंत- प्रकृति का सुकुमार कवि

प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत के काव्य में न केवल प्रकृति प्रेम और सौंदर्य की छटा मिलती है अपितु बाद की रचनाओं में छायावाद का प्रभाव और मार्क्सवाद का असर देखने को मिलता है। हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष अशोक चक्रधर ने कहा, पंत छायावादी आंदोलन के दौरान प्रकृति की सुंदरता को उकेरनेवाले कवि है और जब प्रगतिवादी स्वर के बीच राष्ट्रीय चेतना के विमर्श में परिवर्तन शब्द कवियों ने लिखा तो परिवर्तन पर सबसे लंबी कविता उन्होंने ही लिखी। उन्होंने बताया, पंत को नये शब्दों का गढ़ना प्रिय था और सुंदर उनका प्रिय शब्द रहा। पंत सात वर्ष की उम्र में जब चौथी कक्षा में पढ़ रहे थे, तभी से कविता लिखने लग गये थे। स्वयं कवि ने १९०७ से १९१८ के काल को कवि जीवन का प्रथम चरण माना है। ये कविताएं वीणा में संग्रहित हैं। वर्तमान उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले के कौसानी ग्राम की मनोरम घाटियों में २० मई १९०० को जन्मे सौंदर्यवादी कवि सुमित्रानंदन पंत एक विचारक, दार्शनिक और मानवतावादी के रूप में सामने आते हैं। लेकिन १९१८ से १९२४ तक लिखी गयी ३२ कविताओं का संग्रह पल्लव सबसे कलात्मक है। पंत का रचा हुआ संपूर्ण साहित्य सत्यम शिवम सुंदरम के आदर्शों से प्रभावित होते हुए भी समय के साथ निरंतर बदलता रहा है। प्रारंभिक कविताओं में प्रकृति प्रेम और सौंदर्य की छटा मिलती है जिसका उत्कर्ष पल्लव में देखने को मिलता है। १९३६ के बाद के कविता संग्रह युगांत और ग्राम्या में मार्क्सवाद का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। कवि पंकज सिंह ने पंत के बारे में कहा, हिन्दी साहित्य का वड्र्सवर्थ कहते समय हम पंत की आरंभिक कविताओं को याद करते हैं, जिसमें प्रकृति के बिंबों का अनूठा और विरल चित्रण है। उनकी प्रेम कविताएं हिन्दी में अद्वितीय हैं और अन्यतम कविताओं में से हैं। उन्होंने कहा, मैं पंत को गंभीर मानवतावादी मानता हूं और जहां कहीं भी जो भी सुंदर है उसका प्रेमी मानता हूं। उनकी कविता हर जगह मौजूद सौंदर्य को संवेदना के सूक्ष्म स्तर तक जाकर सराहती है। उनकी कविता मानवतावाद के सौंदर्य को उकेरती है। पंत की उत्तरकालीन रचनाओं में अरविंद की विचारधारा की छाप देखने को मिलती है। वह सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति और सचल दृश्यों के चित्रण में अद्वितीय हैं। भाषा बड़ी सशक्त एवं समृद्ध है। मधुर भावों और कोमलकांत गीतों के लिए सिद्धहस्त हैं। २८ दिसंबर १९७७ को दुनिया से कूच करनेवाले पंत को १९६० में कला और बुढ़ा चांद के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार और १९६८ में चिदम्बरा के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। आधी सदी से भी लंबे उनके रचनाकर्म में आधुनिक हिन्दी कविता का पूरा युग समाया हुआ है।

मौजूदा उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले की खूबसूरत वादियों में पैदा हुए सुमित्रानंदन पंत के दिलो-दिमाग में प्रकृति की सुंदरता कुछ इस कदर समाई कि ताउम्र उनकी संगिनी बनकर रह गयी। हिंदी साहित्य के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक माने जानेवाले सुमित्रानंदन पंत प्रकृति प्रेमी थे। २० मई १९०० को पैदा हुए पंत की ज्यादातर रचनाएं प्राकृतिक सौंदर्य की छटा बिखेरती नजर आती हैं। मशहूर साहित्यकार जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और रामकुमार वर्मा के समकालीन पंत ऐसे सात्यिकारों में गिने जाते हैं जिनका प्रकृति चित्रण इन सबमें सबसे बेहतरीन था। आकर्षक व्यक्तित्व के धनी सुमित्रानंदन पंत की रचना और उनके व्यक्तित्व के बारे में जानेमाने साहित्यकार और हंस पत्रिका के संपादक राजेन्द्र यादव कहते हैं कि पंत अंग्रेजी के रूमानी कवियों जैसी वेशभूषा में रहकर प्रकृति केन्द्रित साहित्य लिखते थे। जन्म के महज छह घंटे के भीतर अपनी मां को खो देनेवाले पंत के बारे में यादव ने बताया कि पंत लोगों से बहुत जल्द प्रभावित हो जाते थे। उन्होंने बताया कि पंत ने महात्मा गांधी और कार्ल मार्क्स से प्रभावित

होकर उन पर रचनाएं लिख डालीं। हिंदी साहित्य के विलियम वर्डस्वर्थ कहे जानेवाले सुमित्रानंदन पंत के बारे में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, जेएनयू, में हिंदी साहित्य के प्रोफेसर देवेन्द्र चौबे ने बताया कि उन्हें प्रकृति के सुकुमार कवि के तौर पर जाना जाता है। महानायक अमिताभ बच्चन को अमिताभ नाम देनेवाले सुमित्रानंदन पंत के बारे में चौबे ने बताया कि पद्मभूषण, ज्ञानपीठ और साहित्य अकादमी पुरस्कारों से नवाजे जा चुके पंत की रचनाओं में समाज के यथार्थ के साथ साथ प्रकृति और मनुष्य की सत्ता के बीच टकराव भी होता था। संस्कृतनिष्ठ हिंदी लिखने के लिए मशहूर सुमित्रानंदन पंत की प्रमुख रचनाएं वीणा, लोकायतन, चिदंबरा और बूढ़ा चांद आदि थीं लेकिन उनकी सबसे कलात्मक कविताएं पल्लव में संकलित हैं। यह ३२ कविताओं का संग्रह है। जन्म के कुछ ही घंटों बाद अपनी मां को खो चुके पंत को उनकी दादी ने पाला पोसा और उनका नाम गुसाई दत्त रखा। हरिवंश राय बच्चन और श्री अरविंदो के साथ जिंदगी के अच्छे खासे दिन बिता चुके पंत के बारे में चौबे ने बताया कि आधी सदी से भी ज्यादा लंबे उनके रचनाकर्म में आधुनिक हिंदी कविता का एक पूरा युग समाया हुआ है।

२० मई १९०० को हिंदी साहित्य सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत का जन्म कौसानी (अल्मोड़ा, उत्तराखंड) में हुआ था। इन्हें बचपन में गुसाई दत्त नाम से पुकारा जाता था। लेकिन बाद में लक्ष्मण के चरित्र को आदर्श मानकर अपना नाम सुमित्रानंदन कर लिया।

वे पांच वर्ष की उम्र से ही कविता लिखने लगे थे, उनकी कृतियों में वीणा, पल्लव, गुंजर, युगांत, ग्राम्य, हार (उपन्यास) व पांच कहानियां प्रमुख हैं।

उन्हें हिंदी साहित्य का विलियम वड्र्सवर्थ भी कहा जाता है। वे कला और बूढ़ा चांद के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, चिदम्बरा के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार व लोकायतन के लिए सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से भीसम्मानित किये गये। २८ दिसंबर १९७७ को इलाहाबाद में वे दुनिया से चल बसे।

प्रकृति-चित्रण के अमर गायक कविवर सुमित्रानन्दन पंत का जन्म २० मई १९०० को अल्मोड़ा (उत्तरांचल) के निकट कौसानी नाम के ग्राम में हुआ था। जन्म के छह घण्टे के बाद ही उनकी माता का देहान्त हो गया। पिता तथा दादी के वात्सल्य की छाया में इनका प्रारंभिक लालन-पालन हुआ। पन्त जी ने सात वर्ष की अवस्था में ही काव्य रचना आरंभ कर दी थी। पन्त जी की शिक्षा का पहला चरण अल्मोड़ा में पूरा हुआ। यहीं पर उन्होंने अपना नाम गुसाईं दत्त से बदलकर सुमित्रानन्दन रख लिया। उन्होंने बनारस के क्वीन्स कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की। सन १९५० में वे ऑल इण्डिया रेडियो के परामर्शदाता पद पर नियुक्त हुए और सन १९५७ तक प्रत्यक्ष रूप से रेडियो से संबद्ध रहे। सरस्वती के इस पुजारी ने २८ दिसंबर १९७७ को इस भौतिक संसार से सदैव के लिए विदा ले ली। पंत जी बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। अपने विस्तृत साहित्यिक जीवन में उन्होंने विविध विधाओं में साहित्य रचना की। उनकी प्रमुख कृतियों में लोकायतन, वीणा, पल्लव, गुंजन, ग्रंथि, स्वर्णधूलि स्वर्णकिरण, युगपथ, उत्तरा, अत्रिमा, युगान्त, युववाणी, ग्राम्या इत्यादि उल्लेखनीय हैं। इन कृतियों में कवि ने दीन-हीन और शोषित वर्ग को अपने काव्य का आधार बनाया। उनकी प्रथम रचना सन १९१६ में सामने आयी। गिरजे का घण्टा नामक इस रचना के पश्चात वे निरन्तर काव्य साधना में तल्लीन रहे। सन १९२० में उनकी रचनाएं उच्छवास और ग्रन्थि प्रकाशित हुई। सन १९२१ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के आह्वान पर उन्होंने कॉलेज

छोड़ दिया और राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में शामिल हो गये परन्तु अपनी कोमल प्रकृति के कारण सत्याग्रह में सक्रिय रूप से सहयोग नहीं कर पाये और पुन: काव्य साधना में तल्लीन हो गये। इसके बाद सन १९२३ में कालाकांकर आकर उन्होंने मार्क्सवाद का अध्ययन आरंभ किया और इलाहाबाद आकर रूपाभा नामक एक प्रगतिशील विचारोंवाली पत्रिका का संपादन प्रकाशन प्रारंभ किया। सन १९४२ के पश्चात वे महर्षि अरविन्द घोष से मिले और उनसे प्रभावित होकर अपने काव्य में उनके दर्शन को मुखरित किया। उन्हें उनकी रचना कला और बूढ़ा चांद पर साहित्य अकादमी पुरस्कार, लोकायतन पर सोवियत पुरस्कार और चिदंबरा पर ज्ञानपीठ पुरस्कार मिले। सुमित्रानन्दन पंत के काव्य में कल्पना एवं भावों की सुकुमार कोमलता के दर्शन होते हैं। पंतजी असाधारण प्रतिभा से संपन्न साहित्यकार थे। काव्य के भाव एवं कला दोनों ही क्षेत्रों में वे एक महान कवि सिद्ध हुए। वे युगद्दष्टा एवं युगसृष्टा थे। छायावाद के युग प्रवर्तक कवि के रूप में उन्हें अपार ख्याति प्राप्त हुई है। उन्हें प्रकृति चित्रण एवं महर्षि अरविन्द के आध्यात्मिक दर्शन पर आधारित रचनाओं का श्रेष्ठ कवि माना जाता है।

२१ मई

शरद जोशी (जन्म- २१ मई)

शरद जोशी अपने समय के अनूठे व्यंग्य रचनाकार थे। अपने वक्त की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विसंगतियों को उन्होंने अत्यंत पैनी निगाह से देखा। अपनी पैनी कलम से बड़ी साफगोई के साथ उन्हें सटीक शब्दों में व्यक्त किया। शरद जोशी पहले व्यंग्य नहीं लिखते थे, लेकिन बाद में उन्होंने अपनी आलोचना से खिन्न होकर व्यंग्य लिखना शुरू कर दिया। वह भारत के पहले व्यंग्यकार थे, जिन्होंने पहली बार मुंबई में चकल्लस के मंच पर १९६८ में गद्य पढ़ा और किसी कवि से अधिक लोकप्रिय हुए।

गामा पहलवान (निधन- २१ मई)

शायद ही कोई ऐसा भारतीय खेल प्रेमी हो, जिसने रुस्तम-ए-जमां पहलवान का नाम न सुना हो। गामा पहलवान भारत में एक किंवदंती बन चुके हैं। शारीरिक ताकत के लिए जिस प्रकार आजकल दारा सिंह की मिसाल दी जाती है, इसी प्रकार कुछ समय पहले तक गामा पहलवान का नाम लिया जाता था। १५ अक्टूबर १९१० में गामा को विश्व हॅवीवेट चैम्पियनशिप (दक्षिण एशिया) में विजेता घोषित किया गया। अपने पहलवानी के दौर में गामा की उपलब्धियाँ इतनी आश्चर्यजनक एवं अविश्वसनीय हैं कि साधारणत: लोगों को विश्वास नहीं होता कि गामा पहलवान वास्तव में हुए थे।

२२ मई

श्रीपाद अमृत डांगे (निधन- २२ मई)

श्रीपाद अमृत डांगे का भारत के प्रारम्भिक कम्युनिस्ट नेताओं में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। श्रीपाद अमृत डांगे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्यों में से एक थे। वह द्वितीय और चौथी लोकसभा के सदस्य चुने गये। उन्होंने गांधी व लेनिन नामक पुस्तक भी लिखी जिसमें इन दोनों नेताओं तथा उनके विचारों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाता है।

शेरशाह सूरी (निधन- २२ मई)

शेरशाह सूरी का भारत के इतिहास में विशेष स्थान है। शेरशाह, सूर साम्राज्य का संस्थापक था। इसके पिता का नाम हसन खाँ था। शेरशाह को शेर खाँ के नाम से भी जाना जाता है। इतिहासकारों का कहना है कि अपने समय में अत्यंत दूरदर्शी और विशिष्ट सूझबूझ का आदमी था। इसकी विशेषता इसलिए अधिक उल्लेखनीय है कि वह एक साधारण जागीदार का उपेक्षित बालक था। उसने अपनी वीरता, अदम्य साहस और परिश्रम के बल पर दिल्ली के सिंहासन पर कब्जा किया था।

राजा राममोहन राय (जन्म- २२ मई)

राजा राममोहन राय को आधुनिक भारतीय समाज का जन्मदाता कहा जाता है। वे ब्रह्म समाज के संस्थापक, भारतीय भाषायी प्रेस के प्रवर्तक, जनजागरण और सामाजिक सुधार आंदोलन के प्रणेता तथा बंगाल में नव-जागरण युग के पितामह थे। धार्मिक और सामाजिक विकास के क्षेत्र में राजा राममोहन राय का नाम सबसे अग्रणी है। राजा राम मोहन राय ने तत्कालीन भारतीय समाज की कट्टरता, रूढ़िवादिता एवं अंध विश्वासों को दूर करके उसे आधुनिक बनाने का प्रयास किया। आज हमारे समाज में विधवा विवाह, सती प्रथा, बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियां पूर्णत: समाप्त हो चुकी हैं। राजा राममोहन राय इन कुप्रथाओं को समाप्त करनेवाले बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्तित्ववाले आधुनिक समाज के प्रणेता प्रथम भारतीय थे। उन्होंने अपने बाल जीवन में ही ऐसे कार्य किये जिनके बारे में आज से २०० साल पहले किसी ने सोचा तक न था।

ऐसे बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्तित्ववाले बालक राममोहन राय ने पश्चिम बंगाल में वर्द्धमान जिले के राधा नगर गांव में एक कट्टर ब्राह्मण श्री रमाकांत राय के यहां २२ मई सन १७७२ को जन्म लिया था आज से २४३ वर्ष पूर्व। इनके पिताश्री रमाकांत राय मुगल शासकों के यहां जागीरदार थे। इनके घर में धार्मिक कर्मकांड एवं नियमित पूजा पाठ हुआ करता था। प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत के साथ गांव में प्राप्त करके उच्च शिक्षा के लिए पटना भेजे गये, जहां पर श्रीराम मोहन राय ने अरबी, फारसी कुरान का गहन अध्ययन किया। एकेश्वर वाद में विश्वास करने पर उन्हें धार्मिक कर्मकांड एवं मूर्ति पूजा एक आडंबर लगने लगा। जब उन्होंने अपने पिता से इन विषयों की आलोचना की तो पिता ने नाराज होकर घर से निकला देने की धमकी दी और ध्यान वापिस करने हेतु शादी भी कर दी लेकिन बालक राम मोहन पर इसका कोई असर न पड़ा और वह १६ वर्ष की आयु में मूर्ति पूजा के खण्डन में लग गये, अत: पिता ने उन्हें सुधारने हेतु इनके दो विवाह और कर दिये। वयस्क राम मोहन राय जहां भी जाते, मूर्ति पूजा की और कर्मकांड की आलोचना करते और वहीं पर प्रतिष्ठित ब्राह्मण उनके साथ बदसलूकी करते एवं भला बुरा कहते थे। इन्होंने सन १७८८ में एक निबंध समाज में व्याप्त अंध विश्वास और धार्मिक कुरीतियों पर लिखा जो अरबी भाषा में था। इससे इनके घर-गांव वाले अति क्रोधित हुए व उन्हें मार-पीट करके घर से बाहर निकाल दिया। घर से बाहर निकल कर उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के लिए देश के कोने-कोने का भ्रमण किया। बालक के कारनामों से चिंतित होकर पंडित रमाकांत राय १८०३ में स्वर्ग सिधार गये। उसी समय इन्होंने तोहफतउल मुकदही नामक पुस्तक फारसी भाषा में लिखी। तब वे बनारस से लौटकर मुर्शिदाबाद आये थे। सन १८०४

में आर्थिक रूप से तंग आकर एक अंग्रेज अधिकारी के यहां नौकरी कर ली। राजा राममोहन राय बचपन से कुरीतियों के विरोधी थे। सन १८११ में इनके साथ ऐसी घटना घटित हुई कि इन्हें सदा के लिए समाज की उन्नति के लिए समर्पित होना पड़ा। हुआ यह कि इनके बड़े भाई जगमोहन की मृत्यु के बाद उनकी भाभी आलोक मंजरी भी उस समय की प्रथा के अनुसार पति के साथ सती होने को तैयार थी। राम मोहन राय के लाख मना करने पर भी वे नहीं मानी और पंडितों ने भी बलात उन्हें लंबे बांसों से दबाये रखा जिससे मंजरी भाग न सके। राममोहन राय ने पंडितों से भी विनती की कि वे निर्दोष भाभी की हत्या न करें। इस पर धर्मान्धों ने उन्हें मारा पीटा और भगा दिया तथा निर्दोष मंजरी की चीखें ढोल नगाड़ों के गंभीर आर्तनादों के बीच दब कर रह गई। वे चाहकर भी अपनी भाभी को बचा न सके लेकिन उन्होंने प्रण किया कि वे इस घृणित अमानवीय कुप्रथा को बंद करके ही रहेंगे। सन १८१२ से उन्होंने सतीप्रथा बंद कराने का बीड़ा उठाया। कलकत्ता वापिस लौटकर उन्होंने १८१५ में वेदों का बंगाली में अनुवाद किया और एक आत्मीय सभा का गठन किया जिसमें धर्म रहस्यों का विश्लेषण किया जाता था। उनकी योग्यता से प्रभावित होकर कंपनी सरकार ने इन्हें १८१५ में ही भूटान भेजा जहां उन्हें दीवान व राजदूत की उपाधि से अलंकृत किया गया। वहां पर उन्होंने वेदांत सार पर एक पुस्तक अंग्रेजी में लिखी। सन १८१७ में इन्होंने कठ व मंडूक उपनिषदों को बंगाली भाषा में अनुवाद किया एवं ईश व केन उपनिषदों पर भी एक पुस्तक अंग्रेजी में लिखी। उन्होंने सन १८१७ में कलकत्ता में हिंदू कॉलेज की स्थापना करके भारतीयों की उन्नति के द्वार खोल दिये। तत्पश्चात सतीप्रथा में विरोध एवं समर्थन में आलोचना की एक पुस्तक लिखी। पुस्तक पर हुए विवाद में आत्मीय सभा टूट गई, इसलिए १८१९ में सम्मिलित समिति की स्थापना उनके द्वारा की गयी। इसका उद्देश्य भी वही पुराना था। सन १८१९ में उन्होंने सम्वादकौमुदी साप्ताहिक पत्र भी निकाला। ईसाई ग्रीक भाषा सीखकर बाइबिल का अध्ययन भी रायसाहब ने किया। इन्होंने चमत्कार व कट्टरपंथ से हटकर ईसाई धर्म की मूल शिक्षा पर चलने की ओर जोर दिया। सन् १८२० में एक पुस्तक भी उक्त विषय पर लिखी, १८४२ में आपने दूसरा अखबार फारसी में मीरा तुला निकाला तथा एंग्लो हिंदू कॉलेज की स्थापना की। सन १८२२ तथा २३ में नारी दुर्दशा पर उन्होंने अंग्रेजी में दो पुस्तकें लिखीं। एक अन्य पुस्तक पथ्य प्रदान भी निकली। राजा राम मोहन राय ने फिर एक स्कूल १८२५ में वेदांत कॉलेज नाम से खोला तथा १८२६ में ब्राज सूचि नामक पुस्तक संस्कृत में लिखी जिसमें तत्कालीन समाज में प्रचलित वर्ण व्यवस्था पर आलोचनाएं की गयी थीं। ८ दिसंबर १८२८ को गवर्नर जनरल लार्ड विलियम वेतिक ने सतीप्रथा निषेध कानून पारित कर उनका सन १८११ वाला सपना साकार किया। इससे श्रीराम मोहन राय अत्यंत प्रसन्न हुए। राजा राममोहन राय अपने पुत्र के साथ १५ नवंबर १८३० को इंग्लैंड गये तथा १८ अप्रैल १८३१ को लीवर पूल में पदार्पण किया। इंग्लैंड की समुद्री यात्रा करके उन्होंने साबित कर दिया कि ब्राह्मणों को समुद्री यात्रा निषेध नहीं है। इंग्लैंड में उन्होंने हाउस आफ कामन्स (संसद) की प्रवर समिति में भारत के किसानों के उत्पीड़न एवं दोषपूर्ण लगान पर जोरदार भाषण दिया। ईस्ट इंडिया कंपनी के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स ने राजा राम मोहन राय के सम्मान में विशाल भोज का आयोजन भी किया था। सन १८३२ में उन्होंने फ्रांस की भी यात्रा की। वहां के सम्राट ने १४ अक्टूबर को उनका विशाल समूह के साथ भव्य स्वागत किया। विदेश में रहने के कारण उनकी शारीरिक हालत अच्छी नहीं रही। अत: वे इंग्लैंड में ही बीमार पड़ गये तो उनके एक इंग्लैंड के ही मित्र उन्हें ब्रिटतल लिवा ले गये। एक दिन एक अभागा क्षण ऐसा आया कि स्टेप लिटन शहर में

उन्हें तेज फीवर आया और गहन चिकित्सा उपचार के बाद भी उन्हें बचाया न जा सका। २७ सितंबर १८३३ को यह अमर समाजसेवी सदा के लिए स्वर्ग सिधार गया। उनके स्वर्गवास हो जाने पर भारतीय विद्वत समाज को भारी धक्का लगा। सन १८४२ में उनके शिष्यों एवं मित्रों ने अपने एक साथी ठाकुर द्वारकानाथ को इंग्लैंड भेजा था और उनकी कब्र से शरीर निकाल कर आर्जोन वेल में दफनाया गया। आज वे हमारे बीच नहीं हैं फिर भी भारत माता के उस वीर सपूत का नाम हमारे बीच सदा के लिये रहेगा।

२७ सितंबर १८३३ को आधुनिक भारतीय समाज की नींव रखनेवाले राजा राममोहन राय का निधन इंग्लैंड में हुआ था। २२ मई १७७२ को राधानगर (पं. बंगाल) में जन्मे राममोहन राय को मुगल सम्राट की ओर से राजा की उपाधि दी गयी थी। वे सती प्रथा के उन्मूलक के रूप में भी जाने जाते हैं। २० अगस्त १८२८ को उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना की। वे मूर्तिपूजा एवं कर्मकांडों के विरोधी थे। उन्होंने भारतीय समाज को कट्टरता, रूढ़िवादिता एवं अंधविश्वासों को दूर कर आधुनिक बनाने का प्रयास किया। वे पहले भारतीय थे जिनसे ब्रिटिश संसद परामर्श लेती थी।

सती प्रथा का उन्मूलन एवं विधवा पुनर्विवाह का मार्ग खोला था राजा राम मोहन राय ने

आधुनिक भारत के निर्माता कहे जानेवाले राजा राम मोहन रॉय ने महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष किया और सती प्रथा जैसी कुरीति के उन्मूलन एवं विधवा पुनर्विवाह का मार्ग प्रशस्त किया। राजा राम मोहन राय १९वीं सदी के प्रारंभ में उन बंग भद्र पुरुषों में थे जो अंग्रेजों के संपर्क में सबसे पहले आए। उन्होंने फ्रांसीसी क्रांति जैसी पश्चिमी उदारवादी विचारधारों से प्रेरणा ली लेकिन सामाजिक सुधार के संदर्भ में उसे भारतीय परिप्रेक्ष्य में ढाला। राजा राम मोहन राय ने लार्ड विलियम बेंटिक की मदद से कानून बनवाकर न केवल सती प्रथा को अवैध करार दिया बल्कि इस मुद्दे पर सामाजिक जागरूकता भी फैलाई। उनका जन्म बंगाल के राधानगर गांव में २२ मई, १७७२ को एक रूढ़ीवादी ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनके पिता रमाकांत राय वैष्णव थे ओर मां तारिणी शाक्त थीं। राजा राम मोहन रॉय को उच्च शिक्षा के लिए पटना भेजा गया। पंद्रह साल की उम्र में उन्होंने बांग्ला, पारसी, अरबी और संस्कृत भाषाएं सीखीं। जब वह २४ साल के थे, तब उन्होंने अंग्रेजी सीखने शुरू कर दी। पटना में उन्होंने अरस्तु और यूक्लिड के साहित्य के अनुवाद पढ़े। उनकी पुस्तकें पढ़कर वह स्वतंत्र चिंतन करने लगे। राजा राममोहन राय मूर्ति पूजा और कट्टरपंथी धार्मिक कर्मकांडों, धर्मांधता, अंधविश्वास के खिलाफ थे। धार्मिक मुद्दों पर पिता से पटरी नहीं बैठने पर उन्होंने घर छोड़ दिया। उन्होंने हिमालय में यात्रा की, वह तिब्बत चले गए। घर लौटने से पहले उन्होंने व्यापक भ्रमण किया। वापस आने पर उनके परिवार ने इस उम्मीद के साथ उनकी शादी करवा दी कि वजह बदल जायेंगे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। वह वाराणसी चले गए और वहां उन्होंने वेद, उपनिषद और हिंदू दर्शन का गहराई से अध्ययन किया। पिता की मौत के बाद वह लौट आए और उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के राजस्व विभाग में नौकरी शुरू कर दी। कंपनी में अंग्रेज अधिकारी जॉन डिग्बी के सहायक के तौर वह पश्चिमी संस्कृति और साहित्य से अवगत हुए। उन्होंने जैन विद्वानों से जैन धर्म का अध्ययन किया। उन्होंने मुस्लिम विद्वानों से सूफीवाद सीखा। वर्ष १८१४ में उन्होंने कंपनी छोड़ दी। उन्होंने आत्मीय समाज की स्थापना की और समाज में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार की शुरुआत की। उन्होंने विधवा पुनर्विवाह एवं संपत्ति में स्त्रियों के अधिकार समेत महिलाओं के अधिकार के पक्ष में अभियान चलाया। उनके अथक प्रयास से १८२९ में कानून बनाकर सती प्रथा अवैध

करार दिया गया। राजा राम मोहन राय मानते थे कि अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा पारंपरिक भारतीय शिक्षा प्रणाली से बेहतर है। वर्ष १८२२ में उन्होंने एंग्लो हिंदू स्कूल की स्थापना की और उसके चार साल बाद वेदांत कॉलेज खोला। जब पश्चिम बंगाल सरकार ने पारंपरिक कॉलेज का प्रस्ताव रखा तब उन्होंने उसका जोरदार विरोध किया। उन्होंने १८२८ में ब्रह्म समाज की स्थापना और उसके जरिये समाज सुधार को गति प्रदान की। जामिया मिलिया इस्लामिया के इतिहास के प्रोफेसर रिजवान कैसर कहते हैं कि आधुनिक ज्ञान विज्ञान के पैरोकार राजा मोहन राय ने कुरीतियां दूर की और कहा कि ऐसा करना धर्मानुकूल है। राजा राम मोहन राय ने ब्रिटिश उपनिवेश का विरोध नहीं किया बल्कि उसके अंतर्गत ही समाज सुधार, ज्ञानार्जन पर बल दिया। राजा राम मोहन राय ने १९वीं सदी में जो सामाजिक सुधार शुरू किया था, २०वीं सदी में उसकी गति धीमी पड़ गयी। वर्ष १८३० में राजा राम मोहन राय मुगल सम्राट के दूत के रूप उनकी पेंशन और भत्ते के बारे में पक्ष रखने ब्रिटेन गए। ब्रिस्टल के समीप स्टेप्लटन में २७ सितंबर, १८३३ को इस महान विभूति का निधन हो गया।

ब्रह्म समाज के संस्थापक, जनजागरण व सामाजिक सुधार के प्रणेता राजाराम मोहन राय बंगाल में नव जागरण दौर की महत्वपूर्ण हस्ती थे जिन्होंने सती प्रथा के उन्मूलन की दिशा में उल्लेखनीय भूमिका निभायी। भारतीय पुनर्जागरण का अग्रदूत माने जानेवाले राजाराम मोहन राय बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे, जिन्होंने एक साथ दो मोर्चा पर अपनी लड़ाइयां लड़ी। इतिहासकार आलोक कुमार के अनुसार एक ओर वह देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे, वहीं वह सामाजिक जकड़नों को दूर करने का भी प्रयास कर रहे थे। कुमार के अनुसार राजाराम ने जहां सती प्रथा को समाप्त करने में अहम भूमिका निभायी, वहीं उन्होंने बाल विवाह, जातिप्रथा, कर्मकांड का पुरजोर विरोध किया। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया वहीं बहुविवाह का विरोध किया। सामाजिक सुधार की दिशा में सक्रिय राजाराम को अपने अभियान में व्यापक विरोध का भी सामना करना पड़ा लेकिन धुन के पक्के व्यक्ति ने हार नहीं मानी। कुमार के अनुसार सामाजिक मोर्चे पर संघर्ष करने के अलावा राजाराम ने पत्रकारिता की दिशा में खासकर भाषायी पत्रकारिता में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने मिरात-उल-अखबार, बंगदूत, संवाद कौमुदी जैसे चर्चित एवं प्रभावशाली पत्रों को संपादन एवं प्रकाशन किया। अपने लेखों में राजाराम हमेशा निर्भीक एवं बेबाक बने रहे। उन्होंने जिसे गलत समझा, उसका विरोध किया और इसके लिए उन्होंने पत्रों का भी सहारा लिया। हिंदी के प्रति उनका विशेष प्रेम था। बंगाल के एक ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए राजाराम बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के थे।

कम उम्र में ही उन्होंने बंगाली, फारसी, संस्कृत, अरबी आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया। बाद में उन्होंने अंग्रेजी का भी ज्ञान हासिल किया। राजाराम बचपन से ही समाज में मौजूद विभिन्न कुरीतियों से दुखी थे और वह समाज को उन कुरीतियों से मुक्त करना चाहते थे। सामाजिक बुराइयों को दूर करने के उद्देश्य से उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना की। राजाराम मोहन राय का मानना था कि सामाजिक सुधारों और आम लोगों को जागरूक बनाने के लिए शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसे ध्यान में रखते हुए उन्होंने कई शिक्षण संस्थाएं स्थापित की, जहां आधुनिक शिक्षा की व्यवस्था थी। वह भारतीय शिक्षा के साथ-साथ पश्चिमी ज्ञान को भी शामिल करना चाहते थे। उन्होंने अंग्रेजी, विज्ञान, पश्चिमी चिकित्सा आदि के अध्ययन का व्यापक समर्थन किया। राजाराम ने अपने जीवन में काफी यात्राएं की। उन्होंने इंग्लैंड सहित कई देशों की यात्रा की।

गौतम बुद्ध और बौद्ध आंदोलन (जन्म- २२ मई)

बुद्ध जयंती वैशाख पूर्णिमा को मनाया जाता है। पूर्णिमा के दिन ही गौतम बुद्ध का स्वर्गारोहण समारोह भी मनाया जाता है। मान्यता है कि इसी दिन भगवान बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई थी।

बुद्ध का मार्ग ही सच्चे अर्थों में धर्म का मार्ग है। दोनों तरह की अतियों से अलग एकदम स्पष्ट और साफ। जिन्होंने इसे नहीं जाना उन्होंने कुछ नहीं जाना। बुद्ध को महात्मा या स्वामी कहने वाले उन्हें कतई नहीं जानते। बुद्ध सिर्फ बुद्ध जैसे हैं। अवतारों की कड़ी में बुद्ध अंतिम हैं। उनके बाद प्रलयकाल तक कोई अवतार नहीं होनवाला है। हिंदू और बौद्ध दोनों ही धर्मों के लिए बुद्ध का होना अर्थात धर्म का होना है। बुद्ध इस भारत की आत्मा हैं। बुद्ध को जानने से भारत भी जाना हुआ माना जाएगा। बुद्ध को जानना अर्थात धर्म को जानना है।

वैशाख पूर्णिमा के दिन बुद्ध का जन्म नेपाल के लुम्बिनी में ईसा पूर्व ५६३ को हुआ। इसी दिन ५२८ ईसा पूर्व उन्होंने बोधगया में एक वृक्ष के नीचे जाना कि सत्य क्या है इसी दिन वे ४८३ ईसा पूर्व को ८० वर्ष की उम्र में दुनिया को कुशीनगर में अलविदा कह गए।

बुद्ध का जन्म- गौतम बुद्ध का जन्म ईसा से ५६३ साल पहले नेपाल के लुम्बिनी वन मे हुआ। उनकी माता कपिलवस्तु की महारानी महामाया देवी जब अपने नैहर देवदह जा रही थीं, तो उन्होंने रास्ते में लुम्बिनी वन में बुद्ध को जन्म दिया। कपिलवस्तु और देवदह के बीच नौतनवा स्टेशन से ८ मील दूर पश्चिम में रुक्मिनदेई नामक स्थान के पास उस काल में लुम्बिनी वन हुआ करता था। उनका जन्म नाम सिद्धार्थ रखा गया। सिद्धार्थ के पिता शुद्धोदन कपिलवस्तु के राजा थे और उनका सम्मान नेपाल ही नहीं समूचे भारत में था। सिद्धार्थ की मौसी गौतमी ने उनका लालन-पालन किया क्योंकि सिद्धार्थ के जन्म के सात दिन बाद ही उनकी माँ का देहांत हो गया था।

बुद्ध की शिक्षा-दिक्षा- वैसे तो सिद्धार्थ ने कई विद्वानों को अपना गुरु बनाया किंतु गुरु विश्वामित्र के पास उन्होंने वेद और उपनिषद पढ़े, साथ ही राजकाज और युद्ध विद्या की भी शिक्षा ली। कुश्ती, घुड़दौड़, तीर-कमान, रथ हाँकने में कोई उनकी बराबरी नहीं कर सकता था।

बुद्ध का विवाह- शाक्य वंश में जन्में सिद्धार्थ का सोलह वर्ष की उम्र में दंडपाणि शाक्य की कन्या यशोधरा के साथ विवाह हुआ। यशोधरा से उनको एक पुत्र मिला जिसका नाम राहुल रखा गया। बाद में यशोधरा और राहुल दोनों बुद्ध के भिक्षु हो गए थे।

वैराग्य भाव- बुद्ध के जन्म के बाद एक भविष्यवक्ता ने राजा शुद्धोदन से कहा था कि यह बालक चक्रवर्ती सम्राट बनेगा, लेकिन यदि वैराग्य भाव उत्पन्न हो गया तो इसे बुद्ध होने से कोई नहीं रोक सकता और इसकी ख्याति समूचे संसार में अनंतकाल तक कायम रहेगी। राजा शुद्धोदन सिद्धार्थ को चक्रवर्ती सम्राट बनते देखना चाहते थे इसीलिए उन्होंने सिद्धार्थ के आसपास भोग विलास का भरपूर प्रबंध कर दिया ताकि किसी भी प्रकार से वैराग्य उत्पन्न न हो। तीन ऋतुओं के लायक तीन सुंदर महल बनवा दिए। वहाँ पर नाच गाना और मनोरंजन की सारी सामग्री जुटा दी गई। दास-दासी उनकी सेवा में रख दिए गए, लेकिन एक दिन वसंत ऋतु में सिद्धार्थ बगीचे की सैर करने निकले। रास्ते में सांसारिक दुःख देखकर विचलन हुआ और सब कुछ बदल गया।

गृह त्याग- मन में वैराग्य भाव तो था ही, इसके अलावा क्षत्रिय शाक्य संघ से वैचारिक मतभेद के चलते संघ ने उनके समक्ष दो प्रस्ताव रखे थे। वह यह कि फाँसी चाहते हो या कि देश छोड़कर जाना। सिद्धार्थ ने कहा कि जो आप दंड देना चाहे। शाक्यों के सेनापति ने सोचा कि दोनों ही स्थिति में कौशल नरेश को सिद्धार्थ से हुए विवाद का पता चल जाएगा और हमें दंड भुगतना होगा तब सिद्धार्थ ने कहा कि आप निश्चिंत रहें, मैं संन्यास लेकिन चुपचाप ही देश से दूर चला जाऊँगा। आपकी इच्छा भी पूरी होगी और मेरी भी। तब आधी रात को सिद्धार्थ ने अपनी पत्नी यशोधरा और बेटे राहुल को देखा जो सो रहे थे। दोनों के मस्तक पर हाथ रखा और फिर धीरे से किवाड़ खोलकर महल से बाहर निकले और घोड़े पर सवार हो गए। रातोरात वे ३० योजन दूर गोरखपुर के पास अमोना नदी के तट पर जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने राजसी वस्त्र उतारे और केश काटकर खुद को संन्यस्त कर दिया। उस वक्त उनकी आयु थी २९ वर्ष।

बुद्ध की तपस्या- जंगल जंगल और नगर नगर सिद्धार्थ भिक्षाटन करते और जब जो साधु या सिद्ध मिल जाता उससे योग साधना या ध्यान विधियां सीखकर कठोर तप करते। तप के दौरान वे एक वक्त सिर्फ तिल और चावल ही ग्रहण करते। फिर उन्होंने कठिन उपवास भी किए लेकिन फिर भी उससे उन्हें कोई शांति नहीं मिली। लेकिन एक दिन वे ध्यान में बैठे थे तभी कुछ स्त्रियाँ वहां से गाती हुई नगर की ओर लौट रही थीं। सिद्धार्थ ने उनका गीत सुना वीणा के तार को ढीला मत छोड़ो। ढीला छोड़ देने से उनका सुरीला स्वर नहीं निकलेगा। पर तारों को इतना कसो भी मत कि वे टूट जाएँ।

निर्वाण- सुजाता नाम की एक महिला ने वटवृक्ष से मन्नत माँगी थी कि मुझको यदि पुत्र हुआ तो खीर का भोग लगाऊँगी। उसकी मन्नत पूरी हो गई तब वह सोने की थाल में गाय के दूध की खीर लेकर वटवृक्ष के पास पहुंची और देखा कि सिद्धार्थ उस वट के नीचे बैठे तपस्या कर रहे हैं। सुजाता ने बड़े ही आदर सत्कार के साथ सिद्धार्थ को खीर भेंट की और कहा जैसे मेरी मनोकामना पूरी हुई है यदि तुम भी किसी मनोकामना से यहाँ बैठे हो तो तुम्हारी मनोकाना भी पूर्ण होगी।

बोधीवृक्ष- उसी रात को ध्यान लगाते समय सिद्धार्थ को सच्चा बोध हुआ। वही उन्हें भारत के बिहार में बोधगया में आज भी वह वटवृक्ष विद्यमान हैं जिसे अब बोधीवृक्ष कहा जाता है। इस वृक्ष को बचाने के लिए विदेशों से कई जाने माने वैज्ञानिक हर वर्ष इसका परीक्षण करने के लिए आते हैं और जो भी जरूरी होता है इस वृक्ष की उम्र बढ़ाने के उपाय करते हैं। इस वृक्ष को विश्व विरासत की सूची में भी शामिल किया गया है। सम्राट अशोक इस वृक्ष की एक शाखा श्रीलंका ले गए थे, वहाँ भी यह वृक्ष है। बोधी प्राप्ति की घटना ईसा से ५२८ वर्ष पूर्व की है जब सिद्धार्थ ३५ वर्ष के थै। इस बोधीवृक्ष के नीचे वे बोधी प्राप्ति के बाद चार सप्ताह तक बैठे रहे। इसके बाद वे सच्चे और सनातन धर्म का उपदेश करने निकल पड़े।

दुख मन में होता है और कष्ट शरीर में। महात्मा बुद्ध का यह यूनिवर्सल दृष्टिकोण है कि सारे संसार में सबका दु:ख सदा सदा के लिए कैसे दूर हो? यह सच है कि दु:ख ही जीवन की कथा और परेशानी है। मगर इस परेशानी का अंत कैसे होगा? यही शिक्षा महात्मा बुद्ध ने दी है। राजकुमार सिद्धार्थ महल से निकले, रास्ते में बूढ़े को देखा और झटका लगा कि वह भी बूढ़े होंगे। फिर उन्होंने बीमार को देखा, फिर उन्हें झटका लगा, उन्हें लगा कि वह भी बीमार पड़ेंगे। फिर उन्होंने मुर्दे को देखा उनकी आंखें खुल गईं। दु:ख ने उन्हें जगा दिया।

राजकुमार सिद्धार्थ अपने महल से निकले थे खुशी की तलाश में और रास्ते में उन्होंने दुखी लोगों को देखा। वह महल छोड़कर दु:ख दूर करने का उपाय ढूंढने निकल पड़े। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसी के दुख को देखकर

दु:खी होने से अच्छा है, उसके दुख को दूर करने के लिए उसे तैयार करना।

दु:ख से संदेश ग्रहण करने का चलन हमारे यहां नहीं है। दु:ख से संदेश तो कोई बुद्धिमान ही लेता है। महात्मा बुद्ध का एक मूल सवाल है। जीवन का सत्य क्या है? भविष्य को हम जानते नहीं है। अतीत पर या हम गर्व करते हैं या उसे याद करके पछताते हैं। भविष्य की चिंता में डूबे रहते हैं। दोनों दु:खदायी हैं।

महात्मा बुद्ध ने वर्तमान का सदुपयोग करने की शिक्षा दी है। बुद्ध ने अतीत के खंडहरों और भविष्य के हवा महल से निकाल कर मनुष्य को वर्तमान में खड़ा रहने की शिक्षा दी है। बौद्ध दर्शन की रेल, दया और बुद्धि की पटरी पर दौड़ती है। दया का मतलब है सबके लिए कल्याण की भावना। बिहार के बोधगया में बोधिवृक्ष के नीचे महात्मा बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई और उनके ज्ञान की रौशनी पूरी दुनिया में फैली।

बौद्ध धर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध का जन्म ५६३ ई.पू. बैसाख पूर्णिमा को हुआ। यह दिवस उनके और उनके अनुयायियों के साथ तब से आज तक जुड़ा हुआ है। भगवान बुद्ध ने बैसाख पूर्णिमा ४८३ ई.पू. में ८० वर्ष की आयु में, देवरिया जिले के कुशीनगर में निर्वाण प्राप्त किया। उनका परम प्रिय शिष्य आनन्द, पत्नी यशोधरा, सारथी चन्ना और यहाँ तक की अश्व कंटक भी अपनी जीवन यात्रा का प्रारम्भ करने के लिए इसी दिन जन्मे। जिस पीपल वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ ने कठिन तपस्या कर बोधिसत्व प्राप्त किया उसका रोपण भी बैसाख पूर्णिमा को ही हुआ था। इसी दिन समाज में पतिता समझी जानेवाली सुजाता ने तपस्या के जर्जर सिद्धार्थ को पूजा के लिए खीर अर्पित की थी।

सिद्धार्थ के रूप में भगवान गौतम बुद्ध का जन्म राजा शुद्धोधन के यहाँ लुम्बिनी नामक स्थान पर हुआ। नेपाल की तराई में स्थित यह स्थान उनकी राजधानी कपिलवस्तु के समीप ही है। राजा शुद्धाधन शाक्य क्षत्रिय वंश के एक अच्छे शासक थे। सिद्धार्थ की माता महामाया कौशल राजवंश की राजकुमारी थी। बचपन में ही सिद्धार्थ की माता का स्वर्गवास होने के कारण उनका लालन पालन विमाता महाप्रजापति गौतमी ने किया। राजवंशीय परम्पराओं के अनुरूप ही उनका लालन-पालन अति वैभवपूर्ण वातावरण में हुआ। बचपन से ही सिद्धार्थ परपीड़ा से विचलित हो उठते थे। किसी को भी कष्ट में देखकर उसकी सहायता करने की उनके मन में एक सहज ललक थी। ज्योतिषियों ने राजा शुद्धोधन को सचेत कर दिया था कि यदि उनका पुत्र चक्रवर्ती सम्राट नहीं बन पाया तो सन्यासी हो जाएगा। सिद्धार्थ का मन इसी दुनिया के भोग विलास में रम कर रह जाए इसके लिए हर प्रकार के साधन उपलब्ध कराए गए और १८ वर्ष की अवस्था में एक रूपमती कन्या यशोधरा से उनका विवाह कर दिया गया। जब उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई तो सिद्धार्थ ने उसका नाम राहुल अर्थात्त बन्धन रख दिया परन्तु यह बन्धन भी उनके लिए पगबाधा नहीं बन सका। सिद्धार्थ अपने जीवन में मोहमाया को बन्धन मानते थे फलत: शीघ्र ही उन्होंने परिवार के सब बन्धन तोड़ डाले और २१ वर्ष की युवावस्था में ज्ञान की खोज में घर से निकल पड़े।

गृह त्याग के पश्चात सिद्धार्थ ने निरंजना नदी के तट पर पीपल के एक वृक्ष के नीचे घोर तपस्या करके ज्ञान प्राप्त किया, इसी ज्ञान की ज्योति कालांतर में भारत ही नहीं विश्व के कोने कोने में फैली। आज भी मानवता इसके आलोक में आलोकित हो रही है। ज्ञान की इस दिव्य ज्योति के कारण राजकुमार सिद्धार्थ गौतम बुद्ध कहलाए। गौतम बुद्ध ने अपनी शिक्षाओं के संबंध में अपना पहला उपदेश सारनाथ में दिया। सारनाथ नामक ग्राम के एक उपवन में बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय का महामंत्र गूंज उठा, दु:ख, अज्ञान और परस्पर वैमनस्य से त्रस्त लोग इस अवतरित महापुरुष के समक्ष

नतमस्तक होने लगे। गौतम ने जन जन को अन्धविश्वासों, आतंक, हिंसा और स्वार्थ की संकुचित प्रवृत्तियों को उतार फेंकने का उपदेश दिया। उन्होंने सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिए सत्य, अहिंसा और प्रेम का सन्देश दिया।

बुद्ध पूर्णिमा के दिन भगवान बुद्ध को बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी। आज बौद्ध धर्म को माननेवाले विश्व में ५० करोड़ से अधिक लोग इस दिन को बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। हिंदू धर्मावलंबियों के लिए बुद्ध विष्णु के नौवें अवतार हैं। अत: हिन्दुओं के लिए भी यह दिन पवित्र माना जाता है। यह त्यौहार भारत, नेपाल, सिंगापुर, वियतनाम, थाइलैंड, कंबोडिया, मलेशिया, श्रीलंका, म्यांमार, इंडोनेशिया तथा पाकिस्तान में मनाया जाता है।

बुद्ध के ही बिहार स्थित बोधगया नामक स्थान हिन्दू व बौद्ध धर्मावलंबियों के पवित्र तीर्थ स्थान हैं। गृहत्याग के पश्चात सिद्धार्थ सात वर्षों तक वन में भटकते रहे। यहाँ उन्होंने कठोर तप किया और अंतत: वैशाख पूर्णिमा के दिन बोधगया में बोधि वृक्ष के नीचे उन्हें बुद्धत्व ज्ञान की प्राप्ति हुई। तभी से यह दिन बुद्ध पूर्णिमा के रूप में जाना जाता है। बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर बुद्ध की महापरिनिर्वाणस्थली कुशीनगर में स्थित महापरिनिर्वाण मंदिर पर एक माह का मेला लगता है। यद्यपि यह तीर्थ महात्मा बुद्ध से संबंधित है, लेकिन आस-पास के क्षेत्र में हिंदू धर्म के लोगों की संख्या ज्यादा है और यहां के मंदिरों में पूजा-अर्चना करने वे बड़ी श्रद्धा के साथ आते हैं। इस मंदिर का महत्व बुद्ध के महापरिनिर्वाण से है। इस मंदिर में भगवान बुद्ध की लेटी हुई (भू-स्पर्श मुद्रा) ६.१ मीटर लंबी मूर्ति है। जो लाल बलुई मिट्टी की बनी है। यह मंदिर उसी स्थान पर बनाया गया है, जहां से यह मूर्ति निकाली गयी थी। मंदिर के पूर्व हिस्से में एक स्तूप है। यहां पर भगवान बुद्ध का अंतिम संस्कार किया गया था। यह मूर्ति भी अजंता में बनी भगवान बुद्ध की महापरिनिर्वाण मूर्ति की प्रतिकृति है।

बुद्धं शरणं गच्छामि, एस धम्मो सनंतनो

बुद्धं शरणं गच्छामि- मैं बुद्ध की शरण लेता हूं। धम्मं शरणं गच्छामि- मैं धर्म की शरण लेता हूं। संघं शरणं गच्छामि- मैं संघ की शरण लेता हूं।

अवतारों की कड़ी में बुद्ध अंतिम हैं। उनके बाद प्रलयकाल तक कोई अवतार नहीं होनेवाला है। हिंदू और बौद्ध दोनों ही धर्मों के लिए बुद्ध का होना अर्थात धर्म का होना। बुद्ध इस भारत की आत्मा हैं। बुद्ध को जानने से भारत भी जाना हुआ माना जाएगा। बुद्ध को जानना अर्थात धर्म को जानना है। यह संयोग ही है कि वैशाख पूर्णिमा के दिन बुद्ध का जन्म नेपाल के लुम्बिनी में ईसा पूर्व ५६३ को हुआ। इसी दिन को ८० वर्ष की उम्र में दुनिया को कुशीनगर में अलविदा कह गए।

बुद्ध का जन्म- गौतम बुद्ध का जन्म इसा से ५६३ साल पहले नेपाल के लुम्बिनी वन में हुआ। उनकी माता कपिलवस्तु की महारानी महामाया देवी जब अपने नैहर देवदह जा रही थीं, तो उन्होंने रास्ते में लुम्बिनी वन में बुद्ध को जन्म दिया। कपिलवस्तु और देवदह के बीच नौतनवा स्टेशन से ८ मील दूर पश्चिम में रुक्मिनदेई नामक स्थान के पास उस काल में लुम्बिनी वन हुआ करता था। उनका जन्म नाम सिद्धार्थ रखा गया। सिद्धार्थ के पिता शुद्धोदन कपिलवस्तु के राजा थे और उनका सम्मान नेपाल ही नहीं समूचे भारत में था। सिद्धार्थ की मौसी गौतमी ने उनका पालन-पालन किया क्योंकि सिद्धार्थ के जन्म के सात दिन बाद ही उनकी माँ का देहांत हो गया था।

बुद्ध की शिक्षा दिक्षा- वैसे तो सिद्धार्थ ने कई विद्वानों को अपना गुरु बनाया किंतु गुरु विश्वामित्र के पास उन्होंने वेद और उपनिषद् पढ़े, साथ ही राजकाज और युद्ध विद्या की भी शिक्षा ली। कुश्ती, घुड़दौड़, तीर-कमान, रथ हाँकने में कोई

उनकी बराबरी नहीं कर सकता था।

बुद्ध का विवाह- शाक्य वंश में जन्मे सिद्धार्थ का सोलह वर्ष की उम्र में दंडपाणि शाक्य की कन्या यशोधरा के साथ विवाह हुआ। यशोधरा से उनको एक पुत्र मिला जिसका नाम राहुल रखा गया। बाद में यशोधरा और राहुल दोनों बुद्ध के भिक्षु हो गए थे।

वैराग्य भाव- बुद्ध के जन्म के बाद एक भविष्यवक्ता ने राजा शुद्धोदन से कहा था कि यह बालक चक्रवर्ती सम्राट बनेगा, लेकिन यदि वैराग्य भाव उत्पन्न हो गया तो इसे बुद्ध होने से कोई नहीं रोक सकता और इसकी ख्याति समूचे संसार में अनंतकाल तक कायम रहेगी। राजा शुद्धोदन सिद्धार्थ को चक्रवर्ती सम्राट बनते देखना चाहते थे इसीलिए उन्होंने सिद्धार्थ के आस-पास भोग विलास का भरपूर प्रबंध कर दिया ताकि किसी भी प्रकार से वैराग्य उत्पन्न न हो। तीन ऋतुओं के लायक तीन सुंदर महल बनवा दिए। वहाँ पर नाच-गाना और मनोरंजन की सारी सामग्री जुटा दी गई। दास दासी उनकी सेवा में रख दिए गए, लेकिन एक दिन वसंत ऋतु में सिद्धार्थ बगीचे की सैर करने निकले। रास्ते में सांसारिक दु:ख देखकर विचलन हुआ और सब कुछ बदल गया।

गृहत्याग- मन में वैराग्य भाव तो था ही, इसके अलावा क्षत्रिय शाक्य संघ से वैचारिक मतभेद के चलते संघ ने उनके समक्ष दो प्रस्ताव रखे थे। वह यह कि फाँसी चाहते हो या कि देश छोड़कर जाना। सिद्धार्थ ने कहा कि जो आप दंड देना चाहें। शाक्यों के सेनापति ने सोचा कि दोनों ही स्थिति में कौशल नरेश को सिद्धार्थ से हुए विवाद का पता चल जाएगा और हमें दंड भुगतना होगा तब सिद्धार्थ ने कहा कि आप निश्चिंत रहें, मैं सन्यास लेकिन चुपचाप ही देश से दूर चला जाऊंगा। आपकी इच्छा भी पूरी होगी और मेरी भी। तब आधी रात को सिद्धार्थ ने अपनी पत्नी यशोधरा और बेटे राहुल को देखा जो सो रहे थे। दोनों के मस्तक पर हाथ रखा और फिर धीरे से किवाड़ खोलकर महल से बाहर निकले और घोड़े पर सवार हो गए। रातोरात वे ३० योजन दूर गोरखपुर के पास अमोना नदी के तट पर जा पहुंचे। वहाँ उन्होंने अपने राजसी वस्त्र उतारे और केश काटकर खुद को संन्यस्त कर दिया। उस वक्त उनकी आयु थी २९ वर्ष।

बुद्ध की तपस्या- जंगल जंगल और नगर नगर सिद्धार्थ भिक्षाटन करते और जब जो साधु या सिद्ध मिल जाता उससे योग साधना या ध्यान विधियाँ सीखकर कठोर तप करते। तप के दौरान वे एक वक्त सिर्फ तिल और चावल ही ग्रहण करते। फिर उन्होंने कठिन उपवास भी किए, लेकिन फिर भी उससे उन्हें कोई शांति नहीं मिली। लेकिन एक दिन वे ध्यान में बैठे थे तभी कुछ स्त्रियाँ वहाँ से गाती हुई नगर की ओर लौट रही थीं। सिद्धार्थ ने उनका गीत सुना वीणा के तार को ढीला मत छोड़ो। ढीला छोड़ देने से उनका सुरीला स्वर नहीं निकलेगा। पर तारों को इतना कसो भी मत कि वे टूट जाएँ। सिद्धार्थ को यह बात जँच गई और यह समझ में आ गया कि किसी भी प्राप्ति के लिए मध्यम मार्ग ही श्रेष्ठ होता है।

निर्वाण- सुजाता नाम की एक महिला ने वटवृक्ष से मन्नत मांगी थी कि मुझको यदि पुत्र हुआ तो खीर का भोग लगाऊँगी। उसकी मन्नत पूरी हो गई तब वह सोने की थाल में गाय के दूध की खीर लेकर वटवृक्ष के पास पहुंची और देखा की सिद्धार्थ उस वट के नीचे बैठे तपस्या कर रहे हैं। सुजाता ने इसे अपना भाग्य समझा और सोचा कि वटदेवता साक्षात हैं तो सुजाता ने बड़े ही आदर सत्कार के साथ सिद्धार्थ को खीर भेंट की और कहा जैसे मेरी मनोकामना पूरी हुई है यदि तुम भी किसी मनोकामना से यहाँ बैठे हो तो तुम्हारी मनोकामना भी पूर्ण होगी।

बोधीवृक्ष- उसी रात को ध्यान लगाते समय सिद्धार्थ को सच्चा बोध हुआ। वहीं उन्हें बुद्धत्व उपलब्ध हुआ। भारत के बिहार में बोधगया में आज भी वह वटवृक्ष विद्यमान है जिसे अब बोधीवृक्ष कहा जाता है। इस वृक्ष को बचाने के लिए विदेशों से कई जाने माने वैज्ञानिक हर वर्ष इसका परीक्षण करने के लिए आते हैं और जो भी जरूरी होता है इस वृक्ष की उम्र बढ़ाने के उपाय करते हैं। इस वृक्ष को विश्व विरासत की सूची में भी शामिल किया गया है। सम्राट अशोक इस वृक्ष की एक शाखा श्रीलंका ले गए थे, वहाँ भी यह वृक्ष है। बोधी प्राप्ति की घटना ईसा से ५२८ वर्ष पूर्व की है जब सिद्धार्थ ३५ वर्ष के थे। इस बोधीवृक्ष के नीचे वे बोधी प्राप्ति के बाद चार सप्ताह तक बैठे रहे। इसके बाद वे सच्चे और सनातन धर्म का उपदेश करने निकल पड़े।

महापरिनिर्वाण- वैशाखी पूर्णिमा के दिन (जन्म और बोधी प्राप्तिवाले दिन ही) ईसा से ४८३ वर्ष पहले भगवान बुद्ध ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया। अर्थात देह छोड़ दी। देह छोड़ने के पूर्व उनके अंतिम वचन थे अप्प दिपो भव सम्मासती। अपने दीये खुद बनो, स्मरण करो कि तुम भी एक बुद्ध हो।

ईसा से पाँच सौ तिरेसठ वर्ष पूर्व कपिलवस्तु के महाराजा शुद्धोदन की धर्मपत्नी महारानी महामाया देवी की कोख से नेपाल की तराई के लुम्बिनी वन में जन्मे सिद्धार्थ ही आगे चलकर बुद्ध कहलाए। बुद्ध के जन्म, बोध और निर्वाण के संदर्भ में भारतीय पंचांग के वैशाख मास की पूर्णिमा की पवित्रता की प्रासंगिकता स्वयंसिद्ध है। वैसाखी पूर्णिमा पावनता की त्रयी है। इस पुनीत तिथि को ही बुद्ध का अवतरण हुआ, आत्मज्ञान अर्थात बोध हुआ और महापरिनिर्वाण हुआ।

गौतम बुद्ध ने अपने उपदेशों में संतुलन की धारणा को महत्व दिया। उन्होंने इस बात पर बहुत बल दिया कि भोग की अति से बचना जितना आवश्यक है उतना ही योग की अति अर्थात तपस्या की अति से भी बचना जरूरी है। भोग की अति से चेतना के चीथड़े होकर विवेक लुप्त और संस्कार सुप्त हो जाते हैं। परिणामस्वरूप व्यक्ति के दिल दिमाग की दहलीज पर विनाश डेरा डाल देता है। ठीक वैसे ही तपस्या की अति से देह दुर्बल और मनोबल कमजोर हो जाता है। परिणामस्वरूप आत्मज्ञान की प्राप्ति अलभ्य हो जाती है, क्योंकि कमजोर और मूर्च्छित से मनोबल के आधार पर आत्मज्ञान प्राप्त करना ठीक वैसा ही है जैसा कि रेत की बुनियाद पर भव्य भवन निर्मित करने का स्वप्न सँजोना।

गौतम बुद्ध का कहना है कि चार आर्य सत्य हैं- पहला यह कि दु:ख है। दूसरा यह कि दु:ख का कारण है। तीसरा यह कि दु:ख का निदान है। चौथा यह कि वह मार्ग है जिससे दु:ख का निदान होता है। गौतम बुद्ध के मत में मध्यम मार्ग है जिससे दु:ख का निदान होता है। अष्टांगिक मार्ग चूंकि ज्ञान, संकल्प, वचन, कर्मांत, आजीव, व्यायाम, स्मृति और समाधि के संदर्भ में सम्यकता से साक्षात्कार कराता है, अत: मध्यम मार्ग है। मध्यम मार्ग ज्ञान देनेवाला है, शांति देनेवाला है, निर्वाण देनेवाला है, अत: कल्याणकारी है और जो कल्याणकारी है वही श्रेयस्कर है। गौतम बुद्ध विश्वकल्याण के लिए मैत्री भावना पर बल देते हैं। ठीक वैसे ही जैसे महावीर स्वामी ने मित्रता के प्रसार की बात कही थी। गौतम बुद्ध मानते हैं कि मैत्री के मोगरों की महक से ही संसार में सद्भाव का सौरभ फैल सकता है। मित्रता ही सनातन नियम है। गौतम बुद्ध घृणा के घावों पर मोहब्बत का मरहम लगाते हैं। आज बेईमानी के बाजार में स्वार्थ के सिक्के चल रहे हैं।

पगड़ी उछाल की राजनीति अनैतिकता के आँगन में अठखेलियाँ कर रही हैं। अन्याय की आग में ईमान को ईंधन बनाया जा रहा है। दया का दम घुट रहा है। छल-छंद की छुरियों से विश्वसनीयता को घायल किया जा रहा है। ऐसी

त्रासद स्थिति से मुक्ति के लिए गौतम बुद्ध की शिक्षाओं को अपने आचरण में लाना आवश्यक भी है और महत्वपूर्ण भी।

गौतम बुद्ध का जन्म ईसा से ५६३ साल पहले कपिलवस्तु में हुआ था। इनका नाम सिद्धार्थ रखा गया। कपिलवस्तु नेपाल के तराई क्षेत्र में है। बचपन से ही मन में अपार करूणा थी। घुड़दौड़ में घोड़े दौड़ते और उनके मुंह से जब झाग निकलने लगती तो वे रास्ते में रोक देते और बाजी भी हार जाते। खेल में भी वे खुद हार जाना पसंद करते थे ताकि हारने की वजह से कोई दूसरा दुखी न हो। एक बार जंगल में तीर से आहत पक्षी इनके सामने आ गया तो उसे बचाने के लिए इन्होंने उठाया तथा चचेरा भाई देवदत्त आया और कहा कि इस शिकार पर उसका अधिकार है। सिद्धार्थ ने कहा कि मारनेवाले से ज्यादा हक बचानेवाले का है। शाक्य वंश में जन्म लिया और इनका विवाह १६ वर्ष की आयु में यशोधरा से हुआ। पिता शुद्धोदन ने इनके भोग-विलास के लिए रीतियों के अनुसार तीन सुंदर महल बनवाये जहां नाच-गाना एवं मनोरंजन की सारी व्यवस्था थी। दास-दासियां उनकी सेवा के लिए रखे गए, फिर भी सिद्धार्थ का इसमें मन नहीं लगा। एक दिन जब वे बाहर भ्रमण पर गए तो उन्होंने देखा कि मरे हुए मनुष्य को चार लोग दफनाने के लिए लेकर जा रहे थे। सिद्धार्थ दिन-प्रतिदिन दुखी होते गए। एक दिन एक संन्यासी को मस्त मुद्रा में विचरण करते हुए देखा तो उन्हें महसूस हुआ कि यह जीवन सही है जिसमें द्वेष एवं तृष्णा के लिए स्थान नहीं है। इसी समय खबर मिली कि उनको पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई इससे वे खुश होने की बजाय और खिन्न हो गए कि इससे मोहमाया का बंधन बढ़ता ही जा रहा है। सुंदर पत्नी, नवजात पुत्र आदि को छोड़कर तपस्या के लिए निकल पड़े। समाधि और तपस्या से उन्हें समस्या का समाधान नहीं दिखा तो उसे त्याग कर मध्यम मार्ग का उपदेश देने के लिए निकल पड़े। भगवान गौतम बुद्ध का यह महाअभियान या उपदेश का उद्देश्य न केवल संसार में व्यक्ति को दुखों से मुक्ति दिलाना है बल्कि उन्होंने सामाजिक स्तर पर भेदभाव व असमानता पर बराबर हमला किया। जातिवादी समाज या असमानता के आधार पर टिकी परंपराएं भी दुख का कारण हैं। उन्होंने प्रत्येक मनुष्य को बराबर समझा और कहा कि अपना दीपक खुद बनो। इसका आशय यह है कि मानव जन्म से ही आजाद है और तमाम सारी सड़ी-गली परंपराओं व मान्यताओं ने उसकी आजादी छीन ली।

बुद्ध किसी की दरिद्रता को देखकर उसे सम्यक मार्ग का अनुसरण करने को कहते थे लेकिन वे आवश्यकता से अधिक धन संग्रह की प्रवृत्ति के विरोधी थे। यदि तृष्णा होगी, तो बुराइयां पैदा होंगी। जीवन में अच्छा आचरण यानी सदाचार बौद्ध धर्म की आधारशिला है और सदाचार को ही शील कहा गया है।

पंचशील सदाचार के पांच सार्वभौम नियम हैं जीव हिंसा न करना, चोरी न करना, व्यभिचार न करना, झूठ न बोलना तथा नशाखोरी से दूर रहना। इन पांच नियमों को पंचशील कहा जाता है। सच्चे बुद्धिष्ट को बुद्ध, धम्म और संघ की शरण में जाने के साथ ही पंचशील पालन की प्रतिज्ञा करनी पड़ती है। बुद्ध ने समाज में व्याप्त जड़ता व धार्मिक दासता को खत्म कर व्यक्ति के स्वतंत्र चिंतन व विवेक पर जोर दिया। इसलिए बौद्ध धर्म एक बुद्धिवादी मार्ग है क्योंकि जो धर्म दिमागी गुलामी सिखाता है, चमत्कारों, कल्पनाओं व अंधविश्वासों के सहारे चलता है वह कतई आगे नहीं बढ़ सकता। समस्त संसार में इतनी भयमुक्त स्वतंत्र चिंतन की वाणी आपको शायद ही मिलेगी।

नई चेतना से युक्त दलित वर्ग बौद्ध धर्म अपनाना चाहता है, क्योंकि उसे बराबरी और सम्मान चाहिए। बौद्ध धर्म का मूल आधार यही है।

हिंसा और युद्ध से त्रस्त संसार के लिए गौतम बुद्ध का बताया मार्ग बेहद प्रासंगिक है। सच कहा जाए तो आज विश्व को युद्ध नहीं बुद्ध चाहिए। आज जब हर तरफ जाति, समुदाय, धर्म और नस्ल के आधार पर मारकाट चल रही है, तब बुद्ध के जीवन सूत्र तपती रेत पर बारिश की फुहार जैसे लगते हैं। धार्मिक आडंबरों और सामाजिक कुरीतियों से मुक्ति का मार्ग भी युद्ध के दर्शन का अभिन्न अंग है। यह अकारण नहीं है कि धर्म और वर्ण आधारित भेदभाव से पीड़ित जनसमुदाय को बौद्ध धर्म में अपने लिए एक नई संभावना दिखाई दे रही है। इसमें उन्हें सम्मानपूर्वक जीने का एक अवसर दिखाई पड़ रहा है। डॉ. भीमराव आंबेडकर की १२५वीं जयंती पर हैदराबाद सेंट्रेल युनिवर्सिटी के छात्र रोहित वेमुला की मां राधिका और छोटे भाई राजा ने मुंबई में बौद्ध धर्म अपना लिया। उसके पहले मार्च में बोधगया के ध्यान केंद्र में बिहार यूपी, उत्तराखंड व महाराष्ट्र से आए लगभग ३०० लोगों ने हिंदू धर्म को छोड़कर बौद्ध धर्म अपनाया था। इनका कहना था कि सनातन धर्म में भेदभाव व जाति को लेकर समाज बंटा हुआ है, इसलिए उन्होंने सनातन धर्म छोड़कर बुद्ध का मार्ग अपनाया।

स्पष्ट है, बौद्ध धर्म को नए सिरे से प्रतिष्ठा मिल रही है। लंबे समय तक ऐसा लगा कि बुद्ध की स्थापनाएं भारतीय सामाजिक जीवन के अनुकूल नहीं है। इसीलिए एक तरफ पूर्वी एशिया के ज्यादातर देश बुद्ध के रास्ते प जा रहे थे, दूसरी तरफ बुद्ध अपने ही घर में पराये हो चले थे। लेकिन लगता है, भारत में अब उनकी वापसी हो रही है। यह एक विडंबना है कि अपने समस्त उदार मूल्यों के बावजूद हिंदू धर्म ने वर्ण व्यवस्था के दुर्गुणों को मिटाने की कोई गंभीर कोशिश नहीं की। सामाजिक विकास की लंबी प्रकिया के बावजूद जाति और वर्ण आधारित शोषण का सिलसिला थमा नहीं है। ऐसे में नई शिक्षा और चेतना से युक्त हो रहा दलित और वंचित वर्ग बौद्ध धर्म अपनाना चाहता है, क्योंकि उसे सामाजिक बराबरी और सम्मान चाहिए। बौद्ध धर्म का मूल आधार यही है। बुद्ध ने प्राणिमात्र की समानता पर जोर दिया था। उनका दर्शन ठोस अनुभव और तर्क पर आधारित था। वह उन लोगों की मुक्ति का अजेंडा लेकर आए, जिनके लिए समाज के सारे दरवाजे बंद कर दिए गए थे। भगवान बुद्ध ने कहा था- अप्प दीपो भव। यानी अपना दीपक खुद बनो। हम जो करें, अपनी बुद्धि-विवेक से करें। किसी की बात पर आंख मूंदकर भरोसा न करें।

करीब ढाई हजार साल पहले लुंबिनी में राजपरिवार में जन्मे सिद्धार्थ ने जब देखा कि मानव रोग ग्रस्त हैं, मृत्यु ही उनका चरम गंतव्य है और वृद्धावस्था के कष्ट उनकी नियति, तब इन कष्टों से मुक्ति का मार्ग तलाशने वह अपने पिता राजा शुद्धोदन का राजमहल त्याग कर आर्य सत्यों की खोज में निकल पड़े। वर्षों की तपस्या और साधना के बाद बोधगया में उन्हें ज्ञान की नई दृष्टि प्राप्त हुई और वे सिद्धार्थ से बुद्ध बने। बोधगया से आगे भी उनकी यात्रा जारी रही और जब वे सारनाथ (वाराणसी) पहुंचे, तब उन्हें यहां आनंद आदि पांच सुयोग्य शिष्य मिले। बोधिवृक्ष के नीचे प्राप्त दिव्य ज्ञान को बुद्ध ने इन शिष्यों को प्रदान किया। यहीं से बौद्ध धर्म की ज्योति भारत और पूरी दुनिया में फैलने लगी।

भगवान बुद्ध के कुशीनगर (उत्तर प्रदेश) में परिनिर्वाण के बाद बौद्ध धर्म को वैश्विक स्वीकृति मिली और यह पूरी दुनिया में स्वीकृत और ग्राह्य हुआ। कलिंग युद्ध के बाद युद्ध की हिंसा से दुखी सम्राट अशोक ने शांति के लिए बुद्ध के बताए मार्ग का अनुसरण और प्रचार-प्रसार किया और बौद्ध धर्म के विश्वव्यापी प्रसार के लिए अपनी पुत्री संघमित्रा और पुत्र महेन्द्र को अलग-अलग दिशाओं में भ्रमण पर भेजा। स्वयं बौद्ध धर्म के सिद्धांतों को खरोष्ठी और ब्राह्मी लिपियों में शिलाओं और स्तंभों पर उत्कीर्ण कराया। भगवान बुद्ध ने कहा था कि तृष्णा ही सभी दुखों का मूल कारण है। इसके कारण मनुष्य संसार

की विभिन्न वस्तुओं की ओर प्रवृत्त होता है और जब उन्हें प्राप्त नहीं कर पाता अथवा जब वे प्राप्त होकर भी नष्ट हो जाती है, तब उसे कष्ट पहुंचता है। तृष्णा के साथ मृत्यु प्राप्त करनेवाला प्राणी उसकी प्रेरणा से फिर-फिर जन्म ग्रहण करता है और संसार के दु:खचक्र में पिसता रहता है। अत: तृष्णा पर प्रहार करने का जो मार्ग है, वही मुक्ति का मार्ग है। इसे दु:ख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा कहते हैं। भगवान बुद्ध ने इस मार्ग के आठ अंग बताए हैं जिसे अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। वे इस प्रकार है- सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वचन, सम्यक कर्म, सम्यक आजीविका, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि।

सम्यक दृष्टि का अर्थ है चार आर्य सत्यों में विश्वास। सम्यक संकल्प है मानसिक और नैतिक विकास की प्रतिज्ञा। सम्यक वचन यानी हानिकारक बातें और झूठ न बोलना। हानिकारक कर्म न करना सम्यक कर्म है। सम्यक जीविका से तात्पर्य है कोई भी स्पष्ट या अस्पष्ट हानिकारक व्यापार न करना। सम्यक प्रयास से उनका मतलब था अपने आपको सुधारने की कोशिश करना। सम्यक स्मृति का अर्थ है स्पष्ट ज्ञान से देखने की मानसिक योग्यता पाने का प्रयास करना। जबकि निर्वाण पाना ही सम्यक समाधि है। भगवान बुद्ध के उपदेशों और जीवन पर आधारित मूल पालि ग्रंथ धम्मपद तथा त्रिपिटक आज भी ज्ञान और जीवन मूल्यों के अनुपम स्रोत हैं।

जब भारत में घोर अंधविश्वास, धार्मिक पाखण्ड, जाति-प्रथा व बलि प्रथा जैसी अनेक अमानवीय कुरीतियां फल फूल रही थी, समाज की तार्किक शक्ति क्षीण हो गयी थी, मानव-मानव में भेद करनेवाली जाति व्यवस्था अपनी पराकाष्ठा पर थी, एकता, सामंजस्य और मेल मिलाप का नामोनिशान नहीं था, इन्हीं परिस्थितियों में, महामानव बुद्ध का आज से २५५० वर्ष पहले कपिलवस्तु के राजा सुदोधन के घर प्रादुर्भाव हुआ। २९ साल की उम्र में ही अपना राज-पाट तथा पत्नी और पुत्र राहुल को सोई अवस्था में त्यागकर दुनिया के दुख का कारण ढूंढने संसार में निकल पड़े।

विषम परिस्थितियों को झेलते हुए कठोर आत्मचिन्तन के बाद बोध गया में पीपलवृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ। उन्होंने पाया कि दुनिया में दुख हैं और दुख का कारण तीव्र इच्छा और मानसिक लगाव है। दु:ख से छुटकारा पाया जा सकता है। छुटकारा पाने के लिए इच्छाओं को वश में करना पड़ेगा। उन्होंने अष्टांग मार्ग पर चलने को कहा। उन्होंने कहा कि संसार अनित्य है। जिसकी उत्पत्ति हुई है उसका अन्त भी निश्चित है। यही संसार का नियम है। महामना बुद्ध ने तत्कालीन प्रचलित मान्यताओं को तर्क से काटा और दु:ख निवारण के सारे व्यावहारिक उपाय बताये। उन्होंने कहा कि अपनी तपस्या के दौरान ईश्वर जैसी कोई चीज नहीं देखी जो सर्वशक्तिमान हो और दुनिया को पैदा किया हो।

उन्होंने आत्मा और ईश्वर के अस्तित्व को तर्क से खण्डित कर दिया। उन्होंने अपने शिष्यों को निर्देश दिया कि दुनिया में अज्ञान के अंधकार को ज्ञान के प्रकाश से दूर करें। घृणा को प्रेम से, शत्रुता को मैत्री से, हिंसा को करुणा से दूर करें। उन्होंने बताया कि सारे मानव और जीव जन्तु प्रकृति प्रदत्त हैं और सभी समान हैं। कोई भी मनुष्य जन्म से न ऊंच है, न नीच। सभी बराबर हैं। मानव मात्र में भेद करने वाली सारी मान्यताओं को समाप्त करने को कहा। उन्होंने कहा कि कोई भी बात इसलिए मत मानो कि मैंने कहा है या पुराने धर्मशास्त्रों में लिखी गयी है या परम्परा से चली आ रही हैं बल्कि उसे अपनी तर्क की कसौटी पर कस कर देखो कि वह सही है और साथ ही मानव हित में है, तब तो उसे मानो अन्यथा छोड़ दो।

महामना बुद्ध ने कहा कि इस दुनिया को न किसी ने उत्पन्न किया और न कोई इसे खत्म कर सकता है। यह सिर्फ

रूपान्तरित हो सकती है जो आज के विज्ञान के मात्रा और ऊर्जा के संरक्षण के सिद्धांत पर आधारित है। बौद्धधर्म तर्क और कारण पर आधारित है। जिसका अस्तित्व है उसे जाना जा सकता है मगर जिसका अस्तित्व नहीं है उसे किसी भी तरीके से नहीं जाना जा सकता।

बौद्धधर्म का व्यापक प्रभाव सम्राट अशोक के बाद हुआ जब कलिंग युद्ध में लाखों सैनिकों की मौत के दर्दनाक दृश्य ने उन्हें द्रवित कर दिया। उन्होंने बौद्धधर्म की दीक्षा ले ली और समानता, भ्रातृत्व और करूणा पर आधारित इस धर्म को अपना राजधर्म बनाया। अशोक से लेकर उनके परपौत्र बृहद्रथ के शासनकाल तक बौद्धधर्म का देश विदेश में खूब प्रचार प्रसार हुआ। बुद्ध की ही भूमि से बौद्ध धर्म विलुप्त होने के करीब १२०० साल बाद बाबा साहब बी.आर.आंबेडकर का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने १४ अक्टूबर १९५६ को पांच लाख अनुयाइयों के साथ दीक्षा भूमि नागपुर में बौद्ध दीक्षा लेकर फिर से बौद्ध धर्म चक्र को गतिमय बना दिया।

बाबा साहब ने जाति व्यवस्था, छुआछूत, शोषण के शिकार बहुजन दलित शोषित समाज को समानता, भ्रातृत्व और करुणा पर आधारित बौद्धधर्म स्वीकार कर गुलामी की जंजीर तोड़ने का आहवान किया। इसीलिए आजादी के बाद से बौद्ध अनुयाइयों की संख्या बढ़ रही हैं।

ज्यादा लाभ के लिए शोषण से उत्पन्न तनाव ने व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक जीवन को कष्टमय बना दिया है। सम्पन्न देश अपनी आन की लड़ाई में इंसानों को भेड़ बकरी की तरह बलि चढ़ा रहे हैं। आज के इस वीभत्स युग में जरूरत है महामानव बुद्ध के मार्ग पर चलकर विश्व में युद्ध, आतंकवाद, मानव-मानव में भेद करनेवाली जाति व्यवस्था, धार्मिक दकोसले की जगह करुणा की शांति और प्रेम का वातावरण बनाया जाय। मानव मानव का मूल्य समझा जाय और अव्यवहारिक आकांक्षाओं पर काबू पाया जाय।

हिंदू धर्म में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ माने गए हैं जिनमें मोक्ष अंतिम और अनिवार्य है। हिंदू धर्म के अनुसार मोक्ष की प्राप्ति के लिए भक्ति मार्ग का अवलंबन लिया जाता है लेकिन बौद्ध मत के अनुसार मोक्ष अथवा मुक्ति के लिए किसी ईश्वरीय अथवा दैवी अनुकंपा की आवश्यकता नहीं। इसे निर्वाण कहा गया है। बौद्ध मत के अनुसार वस्तुओं और स्थितियों को उनके वस्तुओं और स्थितियों को उनके यथार्थ रूप में देखने की योग्यता उत्पन्न होना ही मुक्ति, मोक्ष अथवा निर्वाण है और इस निर्वाण में सहायक है विपश्यना।

अंत में यह भी उल्लेखनीय है कि गौतम बुद्ध ने क्रियात्मक हिंसा के साथ-साथ संरचनात्मक हिंसा से मुक्ति का भी संदेश दिया। वे व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में अहिंसा अपनाने के पक्षधर तो थे ही, साथ ही यह भी चाहते थे कि समाज एवं राष्ट्र की संरचना न्यायपूर्ण हो ताकि स्थायी शांति एवं समग्र विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके।

२३ मई

गायत्री देवी (जन्म- २३ मई)

महारानी गायत्री देवी जयपुर राजघराने की राजमाता थी। ये दुनिया की दस सबसे खूबसूरत महिलाओं में से एक थी। इन्होंने पहली बारह साल की उम्र में बघेरे का शिकार किया था। सन १९३९ से १९७० तक गायत्री देवी जयपुर की महारानी बनी रही।

अन्नाराम सुदामा (जन्म- २३ मई)

अन्नाराम सुदामा राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। सुदामा ने राजस्थान एवं हिन्दी में उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, निबंध, यात्रा संस्मरण, बाल साहित्य और अन्य विधाओं में २५ पुस्तकें लिखी हैं। इनका साहित्य अन्नाराम सुदामा समय के नाम से सात खण्डों में प्रकाशित किया जा रहा है। अकादमियों और संस्थाओं की ओर से इन्हें ११ पुरस्कार मिले हैं। उनकी साहित्यक रचनाएं विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल की गई है। इनकी सबसे प्रमुख रचना मेवे रा रुंख है जिसके लिये इनको साहित्य अकादमी पुरस्कार मिलपा।

राखालदास बंद्योपाध्याय (निधन- २३ मई)

राखालदास बंधोपाध्याय भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार और पुरातत्ववेत्ता थे। ये भारतीय पुराविदों के उस समूह में से एक व्यक्ति थे, जिसमें से अधिकांश ने २०वीं शती के प्रथम चरण में तत्कालीन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के महानिदेशक जॉन मार्शल के सहयोगी के रूप में पुरातात्विक उत्खनन, शोध तथा स्मारकों के संरक्षण में विशेष ख्याति प्राप्त की थी।

२४ मई

रंजन मथाई (जन्म- २४ मई)

रंजन मथाई भारत के पूर्व भारतीय विदेश सचिव हैं। सन १९७४ बैच के भारतीय विदेश सेवा के अधिकारी रंजन मथाई का कार्यकाल १ अगस्त, २०११ से १ अगस्त २०१३ तक रहा। उनका विचार है कि जनता की गरीबी, अशिक्षा, कृषि में पिछड़ापन और भ्रष्टाचार देश के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है।

बछेंद्री पाल (जन्म- २४ मई)

बछेंद्री पाल विश्व की सबसे ऊंची चोटी माउंट एवरेस्ट पर चढ़ने वाली प्रथम भारतीय महिला। पहाड़ों की रानी बछेंद्री पाल पर्वत शिखर एवरेस्ट की ऊंचाई को छूनेवाली दुनिया की ५ वीं महिला पर्वतारोही हैं। उन्होंने यह कारनामा २३ मई १९८४ को दिन के एक बजकर सात मिनट पर किया।

एवरेस्ट पर विजय प्राप्त करनेवाली पहली भारतीय महिला बछेन्द्री पाल ने अपने करियर के रूप में पर्वतारोहण जैसे खेल को चुना, जो कि अपने बड़े भाई से प्रेरित थीं। खुले विचारोंवाले परिवार में पली बढ़ीं बछेन्द्री शिक्षिका तो हैं ही, इसके अलावा वे पर्वतारोहियों का मार्गदर्शन भी करती हैं।

उनकी पर्वतारोहण की शुरुआत १२ वर्ष की उम्र में हुई। वो कुछ दोस्तों के साथ पिकनीक मनाने गई और चलते चलते १२ हजार फुट की ऊंचाई तक पहुंच गई। वापस लौटते समय शाम हो चुकी थी। वातावरण इतना बिगड़ा हुआ था और नीचे आना मुश्किल था। पहाड़ों पर रात बिताना बहुत खतरनाक था। वह अपने परिवारजनों की बहुत आभारी है जिन्होंने गांव में रहते हुए भी उन्हें किसी प्रकार के रोकठोक नहीं की। परिवारवालोंने उन्हें प्रोत्साहन दिया। एक जुझारू खिलाड़ी के रूप में गुण विकसित करने का सबसे ज्यादा श्रेय उनके बड़े भाई को है। वे एक उत्तम खिलाड़ी है और बीएसएफ में होने के कारण कई साहसी खेल खेलते हैं। पर्वतारोहण में एक व्यक्ति के रूप में आपकी कड़ी परीक्षा होती है। खुद के काम के

साथ ही आपकी टीम से आपके संबंध भी मायने रखते हैं। यदि आप एक टीम लीडर हैं तो एवरेस्ट समिट के समय, मुश्किलें आने पर अपनी टीम के लिए क्या निर्णय लेते हैं या ले सकते हैं, इसका भान होना जरूरी है। बछेन्द्री टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन के साथ पर्वतरोहियों के मार्गदर्शन का काम करती है। आजकल महिलाएं भी एवरेस्ट पर चढ़ाई करने में आगे आयी है। टाटा फाउंडेशन विशेषत: महिला प्रशिक्षुओं के लिए विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध हैं।

२५ मई

रास बिहारी बोस

महान क्रांतिकारी रास बिहारी बोस द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अंग्रेजों की ईंट सें ईंट बजा देनेवाली आजाद हिन्द फौज (आईएनए) के संस्थापक थे, जिसे सुभाष चंद्र बोस ने पुनर्गठित कर एक वास्तविक सेना का रूप प्रदान किया था। २५ मई १८८६ को जन्मे रास बिहारी बोस ने भारत में बहुत सी क्रांतिकारी घटनाओं को अंजाम दिया था और बाद में जापान जाकर देश की आजादी के लिए एक सशस्त्र सेना का गठन किया। इतिहासकार पी. हरीश के अनुसार अलीपुर बमकांड (१९०८) में जब पुलिस उनके पीछे लगी तो वह देहरादून आकर वन विभाग में हेड क्लर्क़ के रूप में काम करने लगे। वह तत्कालीन संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश और पंजाब) में भी अपनी गतिविधियों के चलते एक मशहूर क्रांतिकारी के रूप में प्रसिद्ध हो गए। अंग्रेजो ने १९१२ में कलकत्ता की जगह दिल्ली को भारत की राजधानी बना दिया। इस उपलक्ष्य में जब गवर्नर जनरल लॉर्ड हॉर्डिंग चांदनी चौक पर हाथी पर बैठकर एक विशाल जुलूस निकाल रहे थे तो रास बिहारी बोस ने अपने क्रांतिकारी साथियों के साथ मिलकर उस पर बम फेंक दिया। लेकिन इस हमले में हॉर्डिंग बाल-बाल बच गए। रास बिहारी ने इस घटना को मास्टर अमीर चंद्र, भाई बाल मुकुंद, बसंत कुमार विश्वास, गणेशीलाल और अन्य कई साथियों के साथ मिलकर अंजाम दिया। अंग्रेजों ने इनमें से कई को फांसी पर चढ़ा दिया।

लेकिन रास बिहारी उनके हाथ नहीं आए और उनकी पहुंच से दूर जापान चले गए।

ब्रितानिया हुकूमत उनके प्रत्यर्पण के लिए जापान पर दबाव बनाती रही लेकिन उसे कामयाबी नहीं मिल पाई। रास बिहारी जब जापान पहुंचे तो उनके इष्ट मित्रों ने उनके स्वागत में रात्रिभोज दिया। वहां भी वह चैन से नहीं बैठे और भारत की आजादी के लिए प्रयास करते रहे। उन्हें वहां रहनेवाले एशियाई लोगों और जापानी नेताओं का खूब समर्थन मिला। उन्होंने १९२३ में वहां जापान की नागरिकता भी हासिल कर ली। रास बिहारी ने १९४२ में २८ से ३० मार्च तक तोक्यो में एक सम्मेलन कर इंडियन इंडिपेंडेंस लीग की स्थापना का फैसला किया। सम्मेलन में इस महान क्रांतिकारी ने भारत की आजादी के लिए एक सशस्त्र सेना के गठन का प्रस्ताव रखा। लीग की दूसरी बैठक २२ जून १९४२ को बैंकाक में हुई और इसमें फैसला हुआ कि सुभाष चंद्र बोस को बुलाकर लीग की कमान उन्हें सौंप दी जाए। उन्होंने जनरल मोहन सिंह के साथ मिलकर एक सितंबर १९४२ को लीग की सशस्त्र इकाई इंडियन नेशनल आर्मी (आईएनए) की स्थापना की जिसे आजाद हिन्द फौज भी कहा जाता है। आजाद हिन्द फौज में उन भारतीय युद्धबंदियों ने शामिल होने में सबसे अधिक रुचि दिखाई जो मलाया और बर्मा (वर्तमान म्यामां) के मोर्चों पर अंग्रेजों की तरफ से लड़ रहे थे लेकिन जापानी फौज द्वारा पकड़ लिए गए थे। आईएनए के लिए चुने गए झंडे को आजाद नाम दिया गया। रास बिहारी के सामने उस

समय दुविधा की घड़ी आ पड़ी जब जापानी सेना ने उनके तथा जनरल मोहन सिंह के हाथों से आजाद हिन्द फौज की कमान छीन ली और उन्हें इस संगठन से अलग कर दिया। इस तरह भारत की मुक्ति के लिए बनी सेना कुछ करने से पहले ही बिखर गई। बाद में सुभाष चंद्र बोस ने वहां पहुंचकर आजाद हिन्द फौज को पुनर्गठित किया और अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई छेड़ी। रास बिहारी बोस २१ जनवरी १९४५ को दुनिया को अलविदा कह गए।

रास बिहारी बोस प्रख्यात वकील और शिक्षाविद थे। रास बिहारी बोस प्रख्यात क्रांतिकारी तो थे ही, सर्वप्रथम आजाद हिन्द फौज के निर्माता भी थे। देश के जिन क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा स्वतंत्र सरकार का संघटन करने के लिए प्रयत्न किया, उनमें श्री रासबिहारी बोस का नाम प्रमुख है। रास बिहारी बोस कांग्रेस के उदारवादी दल से सम्बद्ध थे। १९३७ में उन्होंने भारतीय स्वातंत्र्य संघ की स्थापना की और सभी भारतीयों का आह्वान किया तथा भारत को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर दिया।

आजादी की जंग के महानायक रास बिहारी बोस आजाद हिन्द फौज का आधार स्तम्भ थे जिन्होंने अंग्रेजों को देश से भगाने के लिए जापान में रहकर लड़ाई लड़ी। बंगाल के बर्द्धमान में २५ मई १८८६ को जन्मे रास बिहारी बोस ने बहुत सी क्रांतिकारी गतिविधियों को अंजाम दिया। उन्होंने जापान से ब्रितानिया हुकूमत के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष की शुरुआत की। इतिहासवेत्ता एमके कपूर के अनुसार रास बिहारी एक ऐसी शख्सियत थे, जिन्होंने आजादी हासिल करने के लिए पहली बार अंग्रेजों के खिलाफ बड़े युद्ध के रूप में एक व्यापक योजना तैयार की। उन्होंने कहा कि उनकी यही योजना आगे चलकर आजाद हिन्द फौज के रूप में फलीभूत हुई जिसने सुभाष चंद्र बोस के नेतृत्व में एक बड़ी लड़ाई लड़ी। वर्ष १९०८ में अलीपुर बम कांड के बाद रास बिहारी बोस देहरादून आ गए और वन अनुसंधान संस्थान में हैड क्लर्क के रूप में काम करने लगे। वहां वह गुप्त रूप से स्वतंत्रता संग्राम की योजनाएं भी तैयार करते थे। रास बिहारी बोस ने अपने साथियों के साथ मिलकर वायसराय लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका जो दिल्ली में एक बड़े जुलूस के साथ अपनी सवारी निकाल रहा था। क्रांतिकारी हार्डिंग की हेकड़ी निकालना चाहते थे, जो भारतीयों पर कहर बरपाने के लिए तरह-तरह के हुक्म जारी करता था। हार्डिंग इस हमले में मरते-मरते बच गया। इस घटना के बाद गोरी हुकूमत ने आजादी के दीवानों के खिलाफ अपने दमन चक्र को तेज कर दिया और चांदनी चौक की घटना में शामिल क्रांतिकारियों को पकड़ने के लिए व्यापक अभियान छेड़ा। इस बम कांड में शामिल सभी क्रांतिकारी पकड़ लिए गए। लेकिन रास बिहारी बोस हाथ नहीं आए और वह भेष बदलकर जापान जा पहुंचे। मास्टर अमीर चंद्र, भाई बाल मुकुंद और अवध बिहारी को आठ मई १९१५ को फांसी पर लटका दिया गया। वसंत कुमार विश्वास को अगले दिन नौ मई को फांसी दी गई। उधर जापान पहुंचे रास बिहारी ने दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में रह रहे भारतीयों को एकजुट करने का काम किया और उनके सहयोग से इंडियन इंडिपेंडेंस लीग की स्थापना की। सैन्य अधिकारी मोहन सिंह के सहयोग से उन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध के भारतीय युद्धबंदियों को लेकर इंडियन नेशनल आर्मी (आजाद हिन्द फौज) की स्थापना की। बाद में इसकी कमान नेताजी सुभाष चंद्र बोस को सौंप दी गई। कपूर के अनुसार आजाद हिन्द फौज द्वारा छेड़ी गई जंग हालांकि पूरी तरह सफल नहीं हो पाई, लेकिन इसने अंग्रेजों के लिए काम करनेवाले भारतीय सैनिकों में विप्लवी प्रवृत्ति भर दी। १९४६ के नौसैनिक विद्रोह को भी इसी विप्लवी कड़ी के रूप में देखा जाता है।

दाग देहलवी (जन्म- २५ मई)

दाग देहलवी को उर्दू जगत में एक शायर के रूप में बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है। उनके जीवन का अधिकांश समय दिल्ली में व्यतीत हुआ था, यही कारण है कि उनकी शायरियों में दिल्ली की तहजीब नजर आती है। दाग देहलवी की शायरी इश्क और मोहब्बत की सच्ची तस्वीर पेश करती है।

भगवत रावत (निधन- २५ मई)

भगवत रावत एक प्रगतिशील कवि एवं निबन्ध लेखक थे। भगवत रावत मध्य प्रदेश प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष और वसुधा पत्रिका के संपादक भी रहे। भगवत रावत समकालीन हिन्दी कविता के शीर्षस्थ कवि, साहित्यकार और मेहनतकश मजदूरों के प्रतिनिधि कवि के रूप में प्रसिद्ध रहे।

२६ मई

देश का पहला हॉकी स्वर्ण पदक

२६ मई, १९२८ को भारतीय हॉकी टीम ने एम्सटर्डम (हॉलैंड) में ओलिंपिक का पहला स्वर्ण पदक जीता था। रांची के जयपाल सिंह इस टीम के कप्तान थे। भारतीय ने १७ मई को ऑस्ट्रिया के विरुद्ध ४-० की जीत के साथ विजय अभियान की शुरुआत की, जिसमें ध्यानचंद की हैट्रिक शामिल थी। इसके बाद बेल्जियम को ९-० डेनमार्क को ५-० और स्विट्जरलैंड को ६-० से हराया। हॉलैंड के विरुद्ध फाइनल मैच में भारतीय कप्तान टीम छोड़कर जा चुके थे। खेले गये इस मैच को भारती टीम ने ३-० से जीत कर देश के लिए पहला ओलिंपिक स्वर्ण पदक जीता । ये तीनों गोल भी ध्यानचंद ने ही किये थे। इस टूर्नामेंट में ध्यानचंद ने कुल १४ गोल किये थे।

सरताज सिंह (जन्म- २६ मई)

सरताज सिंह भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेता हैं। वे मध्य प्रदेश की मौजूदा सरकार में वन विभाग के मंत्री हैं चौदहवीं लोकसभा के भी वे सदस्य रह चुके हैं। वे होशंगाबाद निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। सरताज सिंह ने तीन लोकसभा चुनावों में कांग्रेस के प्रत्याशी रामेश्वर नीखरा को लगातार पराजित किया था। २८ अक्टूबर, २००९ को उन्होंने मध्य प्रफदेश के मंत्रिमंडल में शपथ ग्रहण की और वे वनमंत्री नियुक्त किये गए।

सुशील कुमार पहलवान (जन्म- २६ मई)

सुशील कुमार एक कुश्ती पहलवान हैं, जिनका जन्म २६ मई, १९८३ को नजफगढ़ इलाके के एक गाँव दापरोला में हुआ था। बीजिंग ओलिंपिक खेलों में देश के लिए कांस्य पदक जीतकर सुशील कुमार नजफगढ़ के लिए सुल्तान बन गए। दिल्ली नजफगढ़ से भारतीय क्रिकेट को वीरेंद्र सहवाग जैसा नायाब हीरा मिला लेकिन अब दिल्ली के सुदूर पश्चिम में बसा यह स्थान पहलवान सुशील कुमार के कारण जाना जाता है।

मंगल ग्रह पर फिनिक्स यान

२६ मई २००८ को अंतरिक्ष यान फिनिक्स मंगल ग्रह पर सुबह पांच बजे उतरा था।

मानवरहित ३५० किलोग्राम वाले इस यान को मंगल ग्रह तक पहुंचने में दस महीने लगे थे। इसे चार अगस्त को फ्लोरिडा के केप केनेवरल अंतरिक्ष केंद्र से छोड़ा गया था।

इस यान का मुख्य उद्देश्य वहां जीवन की तलाश करना और पानी का पता करना था। शोध के लिए इस यान को तीन महीने के मिशन के तहत मंगल भेजा गया था।

सूचना के अनुसार मंगल ग्रह की सतह पर बर्फ है लेकिन वह सतह पर आने से पहले ही बाष्पीकृत हो जाती हैं। ११ नवंबर २००८ को पृथ्वी से संपर्क टूट जाने से ४७.५ करोड़ डॉलर की लागत वाले मिशन को समाप्त घोषित कर दिया गया।

२७ मई

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

२७ मई १८९४ को निबंधकार पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जन्म राजनांदगांव, छत्तीसगढ़ में हुआ। वे द्विवेदी युग के प्रमुख साहित्यकारों में एक हैं। कवि के रूप में वे साहित्य में आये, लेकिन आलोचक तथा निबंधकार के रूप में अधिक ख्याति मिली। आचार्य हजारीप्रऊसाद द्विवेदी ने उन्हें सरस्वती पत्रिका का सहायक संपादक बनाया। बाद में वे इसके प्रधान संपादक बने और चार साल तक इस पद पर रहे।

उनकी रचनाएं बख्शी ग्रंथावली आठ खंडों में प्रकाशित हुई हैं। प्रमुख निबंधों में मेरे प्रिय निबंध, समस्या और समाधान, नवरात्र अंतिम अध्याय आदि हैं। हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा १९४९ में उन्हें साहित्य वाचस्पति की उपाधि से अलंकृत किया गया। १८ दिसंबर १९७१ को रायपुर में उनका निधन हुआ।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी सरस्वती के कुशल संपादक, साहित्य वाचस्पति और मास्टरजी के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह एक प्रसिद्ध निबंधकार है। महाकौशल के रविवासरीय अंक का संपादन कार्य भी मास्टर जी ने १९५२ से १९५६ तक किया तथा १९५५ से १९५६ तक खैरागढ़ में रहकर ही सरस्वती का संपादन कार्य किया। तीसरी बार यह २० अगस्त, १९५९ में दिग्विजय कॉलेज राजनांदगांव में हिन्दी के प्रोफेसर बने और जीवन पर्यंत वहीं शिक्षकीय कार्य करते रहे। इसी मध्य १९४९ से १९५७ के दरमियान ही मास्टरजी की महत्वपूर्ण संग्रह कुछ, और कुछ, यात्री, हिन्दी साहित्य विमर्श, बिखरे पन्ने, तुम्हारे लिए, कथानक आदि प्रकाशित हो चुके थे। १९६८ का वर्ष उनके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा क्योंकि इसी बीच उनके प्रमुख और प्रसिद्ध निबंध संग्रह प्रकाशित हुए जिनमें हम मेरी अपनी कथा, मेरा देश, मेरे प्रिय निबंध, वे दिन, समस्या और समाधान, नवरात्र, जिन्हें नहीं भूलूंगा, हिंदी साहित्य एक ऐतिहासिक समीक्षा, अंतिम अध्याय को गिना सकते हैं।

रवि शास्त्री (जन्म- २७ मई)

रवि शास्त्री भारत के प्रसिद्ध पूर्व क्रिकेटर और वर्तमान समय में उम्दा कमेंटेटर हैं। रवि शास्त्री ने क्रिकेट से पहले बहुत से खेलों में हाथ आजमाए। जब वे बड़े हो रहे थे तब वे टेनिस भी खेलते थे। खेलों के प्रति रुचि जगाने में उनका स्कूल डॉन बॉस्को का भी बड़ा योगदान रहा, क्योंकि यहां उन्हें तरह-तरह के खेलों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। गिल्ली डंडा और टेनिस से होते हुए सबसे आखिर में उनकी गाड़ी क्रिकेट पर आकर रुकी।

नितिन गडकरी (जन्म- २७ मई)

नितिन गडकरी भारत के उद्योगपति और भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ राजनेता एवं वर्तमान सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री, जहाजरानी विभाग के केंद्रीय कैबिनेट मंत्री हैं। उन्हें दिसम्बर, २००९ में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नौवें राष्ट्रीय अध्यक्ष के रूप में चुना गया। नितिन गडकरी ५२ वर्ष की आयु में भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष बननेवाले पार्टी के सबसे कम उम्र के अध्यक्ष बनें।

बिपिन चन्द्र (जन्म- २७ मई)

बिनिप चन्द्र प्रख्यात इतिहासकार एवं राष्ट्रीय पुस्तक न्याय के पूर्व अध्यक्ष थे। प्रोफेसर बिपिन चन्द्र भारत के स्वतंत्रता संघर्ष और आधुनिक इतिहास लेखन परंपरा में मार्क्सवादी चिंतन धारा के इतिहासकार थे।

कंदुकूरी वीरेशलिंगम (निधन- २७ मई)

कंदुकूरी वीरशलिंगम तेलुगु भाषा के प्रसिद्ध विलान, जिन्हें आधुनिक तेलुगु साहित्य में गद्य ब्रह्मा के नाम से ख्याति मिली। सनातनपंथी ब्राह्मण परिवार में जन्मे वीरेशलिंगम जाति-पांति के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने जाति विरोध आंदोलन का सूत्रपात किया। वीरेशलिंगम का जीवन लक्ष्य आदर्श नहीं, बल्कि आचरण था। इसीलिए उन्होंने विधवा आश्रमों की स्थापना की। स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए उन्होंने १८७४ में राजमंड्री के समीप धवलेश्वरम में और १८८४ में इन्निसपेटा में बालिकाओं के लिए पाठशालाओं की स्थापना की। आधुनिक तेलुगु गद्य साहित्य के प्रवर्तक वीरेशलिंगम ने प्रथम उपन्यासकार, प्रथम नाटककार और आधुनिक पत्रकारिता के प्रवर्तक के रूप में ख्याति अर्जित की थी।

सरदार हुकम सिंह (निधन- २७ मई)

सरदार हुकम सिंह एक भारतीय राजनीतिज्ञ तथा सन १९६२ से १९६७ के बीच लोकसभा के तीसरे अध्यक्ष थे। वे राजस्थान के राज्यपाल (१९६७ से १९७२) भी रहे थे।

हुकुम सिंह ने शिरोमणि अकाली दल के माध्यम से राजनीति में पदार्पण किया और वह तीन वर्षों तक इसके अध्यक्ष रहे। वह मोंटगुमरी सिंह सभा के सदस्य भी थे और तीन वर्षों तक इसके अध्यक्ष रहें। हुकम सिंह को गुरुद्वारा सुधार आंदोलन के संबंध में १९२४ में गिरफ्तार किया था और लगभग दो वर्ष के कारावास का दंड दिया गया। देश के बंटवारे के समय हुकम सिंह अगस्त १९४७ में शरणार्थी के रूप में भारत आ गए। तथापि, उनकी प्रतिभा को शीघ्र मान्यता मिली और उन्हें दिसंबर १९४७ में राज्य उच्च न्यायायल, कपूरथला का कनिष्ठ न्यायाधीश नियुक्त किया गया।

२८ मई, १८८३

क्रांतिकारी दामोदर विनायक सावरकर

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों और अपनी कलम के तीखेपन के कारण विख्यात दामोदर विनायक सावरकर ने अंडमान में लंबे समय तक काले पानी की कठोर सजा काटी, लेकिन आजादी के बाद राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या मामले में उनका नाम आने से वह काफी विवादित भी हो गए।

सावरकर अपने समय के ऐसे मशहूर क्रांतिकारी थे। उन्होंने क्रांतिकारी संस्था अभिनव भारत का गठन किया था। इसमें मदनलाल ढींगरा समेत कई क्रांतिकारी उन्हें अपनी प्रेरणा के स्रोत मानते थे। लंदन में रहते समय उन्होंने अंग्रेज सरकार की नाक में इतना दम कर दिया कि उनके खिलाफ वारंट जारी किए गए। आजादी के आंदोलन के दौरान सावरकर का सबसे बड़ा कारनामा उस जहाज से निकल भागना है, जिसमें उन्हें कैद कर भारत लाया जा रहा था। यह जहाज मार्सिली के तट से निकला था, लेकिन वह बीच समुद्र में जहाज के शौचालय से भाग निकले और तैरते हुए वापस तट पर पहुंच गए। हालांकि उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया। सावरकर ही पहले ऐसे भारतीय इतिहास लेखक थे, जिन्होंने १८५७ के विद्रोह को भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की संज्ञा दी। इसी नाम से आई उनकी इस पुस्तक में इस बात के तमाम प्रामाणिक सबूत दिए गए हैं कि यह सैनिक विद्रोह न होकर स्वतंत्रता संग्राम था। कई इतिहासकार इसे १८५७ के बारे में भारतीय पक्ष से लिखी गई एक प्रामाणिक पुस्तक मानते हैं। सावरकर अपनी युवावस्था में गरम दल के नेताओं लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक और विपिन चंद्र पाल से काफी प्रभावित थे और उन्होंने इसी विचारधारा के साथ अनेक गतिविधियों में भाग लिया। २८ मई १८८३ को महाराष्ट्र में नाशिक के पास भागुर में जन्मे दामोदर विनायक सावरकर स्वदेशी और हिंदुत्व के भी कट्टर समर्थक थे। सावरकर को आज के समय के हिंदूवादी राजनीतिक दलों का आदर्श भी माना जाता है। सावरकर की क्रांतिकारी गतिविधियां भारत और ब्रिटेन में अध्ययन के दौरान शुरू हुईं। वह इंडिया हाउस से जुड़े हुए थे और उन्होंने अभिनव भारत सोसायटी समेत अनेक छात्र संगठनों की स्थापना की। क्रांतिकारी समूह इंडिया हाउस से संबंधों के कारण सावरकर को १९१० में गिरफ्तार भी किया गया था। काले पानी की कठोर कैद का सामना करनेवाले सावरकर ने हिंदू महासभा के अध्यक्ष के तौर पर भारत को हिंदू राष्ट्र की संज्ञा दी और वह तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मुखर विरोधी थे। उन्होंने १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन की भी प्रखर मुखालफत की थी। महात्मा गांधी के सिद्धांतों से परे रहनेवाले सावरकर को गांधीजी की हत्या में भी जिम्मेदार माना गया था। हालांकि एक अदालत ने उन्हें इस मामले में आरोपों से बरी कर यिा था। जीवन का अंतिम समय सावरकर ने साहित्य लेखन में बिताया।

मराठी चितपावन ब्राह्मण परिवार में जन्मे सावरकर ने १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम की तर्ज पर आजादी के लिए छापामार युद्ध का पक्ष लिया। उन्होंने द हिस्ट्री आफ द वार आफ इंडियन इंडिपेंडेंस पुस्तक के लेखन के साथ १८५७ के विद्रोह की परिस्थितियों का भी अध्ययन किया। सावरकर ने अनेक पुस्तकें भी लिखीं और मराठी माषा में भी काफी लेखन किया। कांग्रेस और गांधी जी से मतभेद रखनेवाले सावरकर ने १९११ में गठित हिंदू महासभा की सदस्यता ग्रहण करने के साथ अपनी अलग राजनीतिक राह पकड़ी। उन्होंने भारत के विभाजन के लिए कांग्रेस पर मौन सहमति का आरोप लगाते हुए पार्टी की कड़ी आलोचना की। इसके लिए सावरकर ने महात्मा गांधी को जिम्मेदार ठहराते हुए उन पर हिंदू समाज को कमजोर करने का आरोप लगाया। वीर सावरकर के नाम से पहचान पाने वाले दामोदर विनायक के जीवन पर कुछ फिल्में भी बनी हैं। १९९६ में प्रियदर्शन ने काला पानी नामक फिल्म बनाई थी, जिसमें अन्नू कपूर ने सावरकर की भूमिका निभाई थी। वर्ष २००१ में वेद राही और सुधीर फड़के ने फिल्म वीर सावरकर का निर्माण किया। इसके अलावा भी सावरकर पर फिल्में और वृत्तचित्र बनणए गए हैं।

स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर का जन्म महाराष्ट्र स्थित नासिक जिले के भगूर नामक ग्राम मे २८ मई १८८३

को हुआ था। इनके पिता का नाम दामोदर पंत था। नौ वर्ष की अल्पायु मे ही सावरकर की माता का देहावसान हो गया। इस समय वह कक्षा छह के छात्र थे। स्मरण शक्ति अत्यन्त विलक्षण थी। आगे की पढ़ाई के लिए सावरकर पूना गए। पूना मे वह तिलक जी से प्रभावित हुए। सावरकर ने फर्ग्यूसन कालेज पूना मे १९०२ मे प्रवेश लिया। शिवराम परांजपे का इन पर पूर्ण प्रभाव था। बंग भंग आंदोलन के समर्थन मे पूना की एक सभा मे इन्होने उद्‌बोधन दिया। इसमे विदेशी वस्त्रों की होली जलाने और विदेशी माल के बहिष्कार करने के प्रस्ताव और आयोजक सुप्रसिद्ध राष्ट्रभक्त पंडित श्यामजी कृष्णवर्मा द्वारा घोषित शिवाजी छात्रवृत्ति पाने के बाद विनायक दामोदर सावरकर सन् १९०६ मे इंग्लैंड गए। वहाँ इनके साथ इंडिया हाउस मे अभिनव भारत की क्रांतिकारी गतिविधियों मे भाई परमानन्द, मदनलाल ढीगरा, हरदयाल, हरनाम सिंह जुड़ने लगे। जहाँ प्रखर लेखनी, ज्वलन्त वाणी से सावरकर अभिनव भारत की क्रांति चला रहे थे, वही भारत मे अग्रज गणेशपन्त सावरकर संघर्षरत थे।

सावरकर ने १८५७ का स्वातंत्र्य समर नामक ग्रंथ को हॉलैंड से अंग्रेजी भाषा मे प्रकाशित करवाकर अनेक कठिनाइयों के साथ वितरित किया। बड़े ही गोपनीय ढंग से इसकी कुछ प्रतियाँ भारत भेजी गईं। किंतु पहुंचने के पूर्व ही भारत सरकार ने भारत लाने पर प्रतिबंधित कर दिया। फिर बाद मे प्रकाशित कर वितरण किया गया। इस समय सार्वजनिक आंदोलन करने के लिए सावरकरने फ्री इंडिया सोसायटी संस्था स्थापित करके दो बड़े समारोह मनाए। सावरकर के आलेखों से अंग्रेज अधिकारी क्रोधित रहते थे। अंग्रेजी शासन को समूल नष्ट करने के आरोपों मे संलिप्त मानने के कारण सावरकर को दोषी मानकर अंग्रेजों ने इनके दो बड़े भाइयों को काले पानी की सजा दी। विनायक सावरकर को खतरनाक क्रांतिकारी मानकर ५० वर्ष की सजा प्रदान की गई। इन्हे अंडमान कारागार मे क्रूरतम यातनाएं दी जाती रही।

२८ मई १८८३ को महाराष्ट्र के भागुर गाँव मे विनायक सावरकर का जन्म हुआ था। १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद देश स्वतंत्रता के लिए अंगड़ाई ले रहा था और विदेशी सत्ता को येन केन प्रकारेण उखाड़ फेकने के लिए उठ खड़ा हुआ था। तत्कालीन स्वतंत्रता आंदोलन के सूत्र-संचालक गोपालकृष्ण गोखले तथा लोकमान्य बालगंगाधर तिलक आदि समवेत स्वर से देश की आजादी के लिए जन-जागरण मे लगे हुए थे। उसी समय विनायक सावरकर शिक्षार्थी जीवन से ही परिवार से विरासत मे मिली राष्ट्र भक्ति भावना से प्रेरित होकर स्वतंत्रता-आन्दोलन में कूद पड़े। बाइस वर्ष की उम्र से ही विदेशी कपड़ों की होली जलाकर पूना शहर मे विदेशियों का विरोध करने मे प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे सावरकर।

विद्यार्थी जीवन मे ही मित्र मेला और अभिनव भारत जैसी संस्थाओं का गठन सावरकर ने किया था। लोकमान्य तिलक ने सावरकर को कानून की पढ़ाई के लिए विदेश जाकर वही पढ़ने की सलाह दी थी। लंदन के इण्डिया हाउस के सम्पर्क मे आने पर श्यामकृष्ण वर्मा के साथ मिलकर विनायक सावरकर सात समुंदर पार रहते हुए भारत को विदेशियों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए प्रयास करते रहे। वही पढ़ते हुए उन्होने मैजिनी व १८५७ का स्वातंत्र्य समर आदि पुस्तकों की रचना की। अंग्रेजी सरकार द्वारा सावरकर पर भारत मे विद्रोह फैलाने के जुर्म मे गिरफ्तार कर इंग्लैण्ड से भारत लाया जा रहा था। यात्रा, पानी वाले जहाज से हो रही थी।

विनायक सावरकर जैसे वीर-निर्भीक और साहसी ने एक तरकीब सोची। क्यो न इस जहाज से पलायन कर भारत माता को बंधन से मुक्त कराने मे फिर लगा जाए ? चिंतन चलता रहा। फ्रांस के मार्सलीन बंदरगाह के निकट जहाज के

रोशनदान से समुद्र के अथाह जल मे एक छलांग लगा दी और फ्रांस की जमीन पर पहुँच गए। भारत की परतंत्रता-मुक्ति की असीम चाह को महासागर की उत्ताल तरंगे भी सावरकर को रोक न सकी। जीवन को क्षण भंगुर मानते हुए मातृभूमि के लिए सर्वस्वार्पण का भाव लिए हुए विनायक सावरकर महासमुद्र मे कूद ही तो पड़े थे, लेकिन फ्रांस मे बंदी बना लिए गए और ५५ वर्ष का कठोर कारावास की सजा दी गयी। अण्डमान की जेल मे कठोर यातनाओं को झेलते हुए वीर सावरकर भारत माता को बंधन मुक्त कराने के लिए सब कुछ सहते रहे। ८३ वर्ष की अवस्था मे २६ जनवरी १९६६ को महान देशभक्त वीर सावरकर का जाज्वल्यमान जीवन-दीप हमेशा के लिए बुझ गया।

स्वातंत्र्यवीर कहे जानेवाले वीडी सावरकर एक महान क्रांतिकारी थे जिनका स्वतंत्रता संग्राम में अद्वितीय स्थान है। ब्रिटेन में भारतीय लोगों में आजादी की अलख जगाने का मामला हो या फिर भारत में क्रांति की लौ फूंकने की बात सावरकर ने हर जगह गौरवशाली भूमिका निभाई। २८ मई १८८६ को जन्मे सावरकर के मन में बचपन से ही देशप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी थी और वह बच्चों की मंडली एकत्र कर अंग्रेजों के खिलाफ भाषण दिया करते थे। डॉ. ज्योत्स्ना कामत ने लिखा है कि भारत के स्वाधीनता संग्राम में सावरकर का अद्वितीय स्थान है। उनका दृढ़ विश्वास था कि सिर्फ सशस्त्र क्रांति से ही भारत को मुक्त कराया जा सकता है। वह सिर्फ क्रांतिकारी ही नहीं बल्कि एक बहुत बड़े कवि और विद्वान भी थे। सावरकर उन लोगों में से थे जिन्होंने टेलीफोन, फोटोग्राफी और पालिर्यामेंट को भारतीय नाम दिए। सावरकर ने १८५७ की क्रांति पर जो पुस्तक लिखी वह आज भी देश के जांबाजों को प्रेरणा देती नजर आती है। उनके द्वारा लिखी गई इस पुस्तक ने अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था। इतिहासवेत्ता मालती मलिक का मानना है कि अंग्रेजों के चंगुल से छूटकर जहाज से समुद्र में कूद जाने और लगातार तैरते रहने की बात हो या अंग्रेजों के किसी दुष्प्रचार का जवाब देना हो सावरकर हर तरह से एक निडर योद्धा थे। उन्होंने कहा कि अंदमान निकोबार की सेल्युलर जेल की दीवारों पर वीर सावरकर ने देशभक्ति से ओतप्रोत जो कविताएं लिखीं वे आज भी उनके आजादी प्रेम की कहानी बयां करती नजर आती हैं। मलिक का कहना है कि काला पानी की सजा जहां अत्यंत कठिन थी वहीं सावरकर ने जेल की दीवारों को अपनी कविताओं से पाट कर भारतीय कैदियों में एक नया जोश भरने का काम किया था। सावरकर स्वातंत्र्य वीर कहलाए जाने के बावजूद अपने जीवन में आलोचनाओं और विवादों के शिकार भी हुए। महात्मा गांधी की हत्या के कारण भी वह काफी विवादों में घिरे। कभी हिन्दु-मुस्लिम स्थापित करने का प्रयत्न करनेवाले सावरकर को बाद में कट्टर हिन्दू विचारधारा का समर्थन करने के लिए आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। उन्होंने अपने जीवन में बहुत सी किताबें लिखीं। २६ फरवरी १९६६ को उनका निधन हो गया। सावरकर के जीवन पर कई फिल्में भी बन चुकी हैं।

२८ मई १८८३ को क्रांतिकारी वीर सावरकर का जन्म नासिक, महाराष्ट्र में हुआ था। उनका पूरा नाम विनायक दामोदर सावरकर है। उन्हें काले पानी की सजा के साथ-साथ दो बार आजीवन कारावास की सजा मिली थी। वे पहले भारतीय थे जिन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ लंदन में क्रांतिकारी आंदोलन संगठित किया और पूर्ण स्वतंत्रता की मांग की थी।

उन्होंने १८५७ की लड़ाई को भारतीय स्वाधीनता संग्राम बताते हुए एक किताब लिखी जिसे ब्रिटिश सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया था। उनकी लिखी पुस्तकों में द इंडियन वॉर ऑफ इंडिपेंडेंस १८५७ मेरा आजीवन कारावास, अंडमान की प्रतिध्वनियां प्रसिद्ध हैं। २६ फरवरी १९६६ को मुंबई में उनका निधन हो गया।

विनायक दामोदर सावरकार न सिर्फ एक क्रांतिकारी थे बल्कि एक भाषाविद, बुद्धिवादी, कवि, अप्रतिम क्रांतिकारी, दृढ़ राजनेता, समर्पित्त समाज सुधारक, दार्शनिक, द्रष्टा, महान कवि और महान इतिहासकार और ओजस्वी आदि वक्ता भी थे। उनके इन्हीं गुणों ने महानतम लोगों की श्रेणी में उच्च पायदान पर लाकर खड़ा कर दिया।

अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का बिगुल फूंकने वाले और हिन्दुत्व शब्द के प्रतिपादक स्वातंत्र्य वीर सावरकर ने अपने क्रांतिकारी कदमों से युवाओं में आजादी का जज्बा भरने के साथ ही ब्रितानिया हुकूमत की नाक में दम कर दिया था।

नासिक के नजदीक भागपुर (भगुर) गांव में २८ मई १८८३ को जन्मे सावरकर के व्यक्तित्व के साथ कई विवाद भी जुड़े हैं। एक ओर वह जहां सेल्युलर जेल की दीवारों को देशभक्ति की कविताओं से पाट देनेवाले और १८५७ की पहली जंग-ए-आजादी पर मशहूर किताब लिखनेवाले महान शख्स के रूप में नजर आते हैं, वहीं महात्मा गांधी की हत्या में उन पर लगे आरोप और रिहाई के लिए ब्रिटिश सरकार के साथ कथित समझौते को लेकर विवादित भी हो जाते हैं। महात्मा गांधी की हत्या में उन पर लगा आरोप हालांकि साबित नहीं हो पाया लेकिन यह आज भी उनके व्यक्तित्व का पीछा छोड़ता नजर नहीं आता। सावरकर को लेकर आज जहां राजनीतिक दल आपस में बंटे हैं, वहीं इतिहासकार भी उनक शख्सियत को अपने अपने ढंग से पेश करते नजर आते हैं। डॉ. ज्योत्स्ना कामत के अनुसार सावरकार एक महान क्रांतिकारी थे, जिन्होंने हमेशा देश की आजादी और देश के भले के लिए काम किया। कामत ने लिखा है कि सावरकर एक जन्मजात क्रांतिकारी थे।

सावरकर एक अत्यंत मेधावी छात्र थे, जिसके चलते उन्हें लंदन में पढ़ाई का मौका मिला। १८५७ के विद्रोह पर किताब लिखी और इसे आजादी की पहली लड़ाई करार दिया। उन्होंने जहां लंदन में भारत की आजादी का बिगुल फूंका, वहीं भारत में रहकर भी उन्होंने अंग्रेजों से जमकर लोहा लिया।

अंग्रेजों के लिखाफ विद्रोह का बिगुल फूंकनेवाले और हिन्दुत्व शब्द के प्रतिपादक स्वातंत्र वीर सावरकर ने अपने क्रांतिकारी कदमों से युवाओं में आजादी का जज्बा भरने के साथ ही ब्रितानिया हुकूमत की नाक में दम कर दिया था। उन्होंने जहां लंदन में भारत की आजादी का बिगुल फूंका, वहीं भारत में रहकर भी उन्होंने अंग्रेजों से जमकर लोहा लिया। स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में उनका अद्वितीय स्थान है। दिवंगत साहित्यकार कमलेश्वर ने सावरकर की संतुलित छवि पेश की है। उन्होंने लिखा है कि आजादी के संग्राम में सावरकर का प्रारंभिक काल जहां उन्हें नि:संदेह स्वातंत्र वीर कहलाने का हक देता है वहीं जेल से रिहाई के मामले में ब्रितानिया सरकार के साथ कथित समझौता उनके व्यक्तित्व पर सवाल खड़े कर देता है। इतिहासकार एसके शरण मुताबिक सावरकर एक अत्यंत मेधावी छात्र थे जिसके चलते उन्हें लंदन में पढ़ाई का मौका मिला। उन्होंने लंदन में भारतीय छात्रों को एकजुट कर भारत की आजादी के लिए सशस्त्र आंदोलन का रास्ता अख्तियार किया। इस किताब को जबर्दस्त सफलता मिली। सावरकार को १३ मार्च १९१० को लंदन में गिरफ्तार किया गया और मुकदमे के लिए भारत भेज दिया गया। इसी दौरान उनके जीवन की सबसे रोमांचक घटना घटित हुई। वह जहाज से समुद्र में कूद गए और काफी दूर तक ठंडे पानी में तैरते रहे। बाद में उन्हें फिर से पकड़ लिया गया और २४ दिसंबर १९१० को उन्हें ५० साल के सश्रम कारवास की सजा सुनाई गई। चार जुलाई १९११ को उन्हें अंडमान निकोबार की सेल्युलर जेल भेज दिया गया। १९२१ में उन्हें बंगाल की अलीपुर जेल और फिर महाराष्ट्र की रत्नागिरी जेल स्थानांतरित कर दिया गाय। छह जनवरी १९२४ को उन्हें अंडमान निकोबार की सेल्युलर जेल भेज दिया

गया। १९२१ में उन्हें बंगाल की अलीपुर जेल और फिर महाराष्ट्र की रत्नागिरी जेल स्थानांतरित कर दिया गया। छह जनवरी १९२४ को उन्हें इस शर्त के साथ रिहा कर दिया गया कि वह राजनीतिक गतिविधियों में भाग नहीं लेंगे। उनकी इस रिहाई के साथ ही उनके व्यक्तित्व के साथ विवादों की शुरुआत हो गई। जेल से रिहा होने के बाद सावरकर ने हिन्दू महासभा में अत्यंत सक्रिय भूमिका निभाई। बाद में महात्मा गांधी की हत्या से उनका नाम जुड़ा, लेकिन आरोप साबित नहीं हो पाया। २६ फरवरी १९६६ को सावरकर का निधन हो गया।

हिंदुत्व शब्द के प्रतिपादक विनायक दामोदर सावरकर ने युवाओं में आजादी का जज्बा भरकर अंग्रेजी हुकूमत को हिलाकर रख दिया था। अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए वह जहां स्वातंत्र वीर कहलाए, वहीं विवादों से भी उनका नाता रहा। सावरकर की शख्सियत को विभिन्न तबकों के लोग अपने अपने ढंग से पेश करते हैं। सावरकर ने हमेशा देश हित के लिए काम किया है। सावरकर जन्मजात क्रांतिकारी थे। उन्होंने लंदन में भारत की आजादी का बिगुल फूंका और भारत में रहकर भी अंग्रेजों को कड़ी टक्कर दी। दिवंगत साहित्यकार कमलेश्वर ने सावरकर की संतुलित छवि पेश करते हुए लिखा है कि आजादी के संग्राम में सावरकर का शुरुआती काल जहां उन्हें नि:संदेह स्वातंत्र्य वीर कहलाने का हक देता है, वहीं जेल से रिहाई के मामले में ब्रितानिया सरकार के साथ कथित समझौता उनके व्यक्तित्व को विवादित कर देता है।

मराठी के उनके लेखन से बहुत लोग वाकिफ हैं, पर यह जानकारी चौंकानेवाली है कि सावरकर ने उर्दू लिपि में गजलें लिखी हैं। स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर राष्ट्रीय स्मारक की ट्रेजरर ट्रस्टी मंजरी मराठी के मुताबिक, पुणे में उनके पिता श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम गोखले के घर की लायब्रेरी से एक किताब मिली है, जो ऊपर से स्क्रैप बुक की तरह नजर आती है। इसमें बुद्ध, स्वामी रामतीर्थ, गांधी, जॉर्ज वाशिंगटन, लाला लाजपत राय, जीसस क्राइस्ट और विवेकानंद आदि की तस्वीरे हैं। इन तस्वीरों पर कहीं-कहीं कुछ टिप्पणीनुमा भी लिखा है। इसके अलावा इसमें उर्दू और देवनागरी में गजलें भी हैं।

सावरकर ने उर्दू कब और किससे सीखी, इसका उल्लेख कहीं मिलता नहीं है, पर स्मारक के कार्याध्यक्ष रणजीत सावरकर बताते हैं कि उन्हें (सावरकर) जब दो उम्रकैद की सजा के तहत अंडमान में रखा गया था, वहीं किसी उर्दू भाषी कैदी से सीखी होगी। उल्लेखनीय है कि सावरकर को लगातार ग्यारह सालों तक अंडमान में रखा गया था।

वे बताते हैं कि किताब का कवर जेल के रजिस्टर के पन्नों को चिपका कर बनाया गया है। एक पन्ने के खुलने पर पाया गया कि पीछे हिस्ट्री टिकट शीर्षक से एक कैदी का विवरण लिखा हुआ है। उनके मुताबिक, प्यारे मोहन नामक व्यक्ति जेल ऑफिस में सेकेंड क्लर्क थे। सावरकर ने उन्हें यह किताब बाहर ले जाने के लिए दी थी। प्यारे मोहन ने रैंगलर परांजपे नामक व्यक्ति को और परांजपे ने श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम गोखले को यह किताब सौंपी थी।

इन गजलों में देशभक्ति और आजादी की लड़ाई का जज्बा उभरता है। चूंकि ये उर्दू लिपि में थीं, इसलिए शायर निदा फाजली को दिखाई गई, तो पता चला कि उर्दू लिपि के साथ इन्हें देवनागरी में भी इसी किताब में लिखा गया है। निदा फाजली कहते हैं, कोई भी भाषा कभी भी जाति या धर्म से विभाजित नहीं होती।

सावरकर की किताब से कुछ शेर

मुहिब्बाने वतन होंगे हजारों बेवतन पहले, फलेगा हिंद पीछे और भरेगा अंदमान पहले।

हमारा हिंद भी फूले फलेगा एक दिन लेकिन, मिलेंगे खाक में लाखों हमारे गुलबदन पहले।

मेरा है रक्त हिंदी जात हिंदी ठेठ हिंदी है, यही मजहब यह फिरका यही है खानदां मेरा।

विद्यार्थी जीवन से ही क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय १९०६ में उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड गए। वहां इंडिया हाउस में एक क्रांतिकारी दल बनाया। गदर पार्टी के सहयोगी रहे। इंग्लैंड में गिरफ्तार कर वहां से भारत लाए जा रहे थे लेकिन जुलाई १९०१ में मर्सेलीस, फ्रांस में पानी के जहाज से कूद गए। पुलिस द्वारा पकड़ लिए गए। बंदी के रूप में भारत लाए गए। देशद्रोह के आरोप में कालापानी की सजा। संपत्ति जब्त कर ली गई। १९३७ से १९४२ तक हिंदू महासभा के अध्यक्ष रहे। कई पुस्तकों के लेखक।

पंडित डीवी पलुस्कर

२८ मई, १९२१ को भजन व शास्त्रीय संगीत के गायक पंडित दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर का जन्म नासिक (महाराष्ट्र) में हुआ था। उन्होंने अपना पहला कार्यक्रम १४ वर्ष की आयु में पंजाब में आयोजित हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन में दिया। उन्हें फिल्म बैजू बावरा में उस्ताद अमीर खान के साथ एक अविस्मरणीय युगलबंदी के लिए भी जाना जाता है।

उनकी आवाज सरल, सहज व प्रत्यास्थता से पूर्ण थी। उनके गाये भजनों में ठुमक चलत रामचंद्र, रघुपति राघव राजा राम, पायोजी मैंने राम रतन धन पायो आदि प्रमुख है। २६ अक्टूबर, १९५५ को मात्र ३४ वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया। पंडित दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के गायक थे। उन्हें एक विलक्षण बालक के तौर पर जाना जाता है। डी.वी.पलुस्कर ने अपना पहला कार्यक्रम चौदह वर्ष की आयु में पंजाब में हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन में दिया। उत्तराधिकार में उन्हें ग्वालियर घराना और गंधर्व महाविद्यालय मिला, परंतु वे अन्य घरानों और शैलियों की सुंदर विशेषताओं को अपनाने के लिए हमेशा तैयार रहते थे।

गोपाल प्रसाद व्यास (निधन- २८ मई)

पंडित गोपाल प्रसाद व्यास भारत के प्रसिद्ध कवियों, लेखकों और साहित्यकारों में से एक थे। वे ब्रजभाषा के कवि, समीक्षक, व्याकरण, साहित्य-शास्त्र, रस-रीति, अलंकार, नायिका-भेद और पिंगल के मर्मज्ञ माने जाते थे। पंडित जी हिन्दी में व्यंग्य-विनोद की नई धारा के जनक थे। गोपाल प्रसाद व्यास हास्य रस में पत्नीवाद के प्रवर्तक माने जाते थे। वे सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक व्यंग्य-विनोद के प्रतिष्ठा प्राप्त कवि एवं लेखक थे। और हास्यरसावतार के नाम से प्रसिद्ध थे।

विजय सिंह पथिक (निधन- २८ मई)

विजय सिंह पथिक भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले वीर क्रांतिकारियों में से एक थे। इनके ऊपर अपनी माँ और परिवार की क्रान्तिकारी व देशभक्ति से परिपूर्ण पृष्ठ भूमि का बहुत गहरा असर पड़ा था। विजय सिंह पथिक अपनी युवावस्था में ही रासबिहारी बोस और शचीन्द्रनाथ सान्याल जैसे अमर क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आ गए थे। वैसे विजय सिंह पथिक जी का मूल नाम भूपसिंह था, किंतु लाहौर षड़यंत्र के बाद उन्होंने अपना नाम बदल कर विजय सिंह पथिक रख लिया और फिर अपने जीवन के अंत समय तक वे इसी नाम से जाने जाते रहे। महात्मा गाँधी के सत्याग्रह आन्दोलन से बहुत पहले ही पथिक जी ने बिजोलिया किसान आंदोलन के नाम से किसानों में स्वतंत्रता के प्रति अलख जगाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

२९ मई

पहली बार एवरेस्ट फतह

२९ मई, १९५३ को न्यूजीलैंड के सर एडमंड हिलेरी और नेपाल के शेरपा तेनजिंग नोर्गे ने दुनिया की सबसे ऊँची चोटी एवरेस्ट को पहली बार फतह किया था। वे सुबह ११.३० बजे एवरेस्ट पर पहुंचे थे। इस अभियान से २१ लोग जुड़े थे। इनमें से नौ लोग अभी जीवित हैं। इस दल के नौ पर्वतारोही शीर्ष तक पहुंचने में कामयाब रहे। इस दल में दो डॉक्टर और दो संचार प्रबंधक भी शामिल थे।

एवरेस्ट फतह करनेवाले पहले भारतीय मेजर एएस चीमा थे। भारतीय दल को १९५६ में सफलता मिली। १९८४ में एवरेस्ट फतह करनेवाली पहली भारतीय महिला बछेंद्री पाल बनीं।

१९२४ में जॉर्ज मैलरी और एंड्रयू इरविन चोटी से बस १००० फूट दूर थे। उसके बाद से उनका कुछ पता नहीं चला। इस कोशिश में सबसे अधिक नेपाल ने अपने नागरिकों को खोया है।

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर (जन्म- २९ मई)

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर हिन्दी के जाने-माने निबंधकार हैं जिन्होंने राजनीतिक और सामाजिक जीवन से संबंध रखनेवाले अनेक निबंध लिखे हैं। ज्ञनोदय पत्रिका का सम्पादन भी कन्हैयालाल कर चुके हैं। आपने अपने लेखन के अतिरिक्त अपने नये लेखकों को प्रेरित और प्रोत्साहित किया है। सहज, सरस संस्मरणात्मक शैली में लिखी गयी प्रभाकर जी की सभी कृतियाँ ज्ञानपीठ से प्रकाशित हैं।

२९ मई १९०६ को पत्रकार व निबंधकार कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर का जन्म देवबंद (सहारनपुर) में हुआ था।

उन्होंने युवावस्था में पढ़ाई छोड़, स्वाधीनता आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया और कई बार जेल भी गये। उन्होंने राजनीतिक और सामाजिक जीवन से संबंध रखनेवाले अनेक निबंध लिखे हैं। वे विकास, नया जीवन और ज्ञानोदय के संपादक भी रहे। १९९० में वे पद्मश्री से सम्मानित किये गए। उनकी कृतियों में जिंदगी मुसकायी, माटी हो गयी सोना, तपती पगडंडियों पर पदयात्रा, दीप जले शंख बजे आदि प्रमुख हैं। ९ मई १९९५ को उनका निधन हो गया।

प्रभाकर हिन्दी के श्रेष्ठ रेखाचित्रों, संस्मरण एवं ललित निबन्ध लेखकों में हैं। यह दृष्टव्य है कि उनकी इन रचनाओं में कलागत आत्मपरकता होते हुए भी एक ऐसी तटस्थता बनी रहती है कि उनमें चित्रणीय या संस्मरणीय ही प्रमुख हुआ है- स्वयं लेखक ने उन लोगों के माध्यम से अपने व्यक्ति को स्फीत नहीं करना चाहा है। उनकी शैली की आत्मीयता एवं सहजता पाठक के लिए प्रीतिकर एवं हृदयग्रहिणी होती है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर की सृजनशीलता ने भी हिन्दी साहित्य को व्यापक आभा प्रदान की। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने उन्हें शैलियों का शैलीकार कहा था।

सुनीति कुमार चटर्जी (निधन- २९ मई)

सुनीति कुमार चटर्जी को भारत के प्रसिद्ध भाषाविद, साहित्यकार तथा विद्याशास्त्री के रूप में जाना जाता है। वे एक लोकप्रिय कला प्रेमी भी थे। सुनीति कुमार की संस्कृत योग्यता को देखते हुए उन्हें जुबली शोध पुरस्कार दिया गया था।

उन्होंने विदेशों में भी भारतीय कला और संस्कृति पर अनेक व्याख्यान दिए थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर का सान्निध्य भी इन्हें प्राप्त था। सुनीति कुमार चटर्जी ग्रीक, इतालवी, लैटिन, फ्रेंच, अंग्रेजी, जर्मन, फारसी, संस्कृत तथा दर्जनों आधुनिक भारतीय भाषाओं के ज्ञाता थे।

चौधरी चरण सिंह (निधन- २९ मई)

चौधरी चरण सिंह भारत के पाँचवें प्रधानमंत्री थे। चरण सिंह किसानों की आवाज बुलन्द करनेवाले प्रखर नेता माने जाते थे। चौधरी चरण सिंह का प्रधानमंत्री के रूप में कार्यकाल २८ जुलाई, १९७९ से १४ जनवरी १९८० तक रहा। यह समाजवादी पार्टी तथा कांग्रेस (ओ) के सहयोग से देश के प्रधानमंत्री बने और दो बार उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री भी रहे। चरण सिंह एक कुशल लेखक की आत्मा भी रखते थे। उनका अंग्रेजी भाषा पर अच्छा अधिकार था। उन्होंने अबॉलिशन ऑफ जमींदारी लिजेण्ड प्रोपराइटरशिप और इंडियास पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशंस नामक पुस्तकों का लेखन भी किया। इतिहास में इनका नाम प्रधानमंत्री से ज्यादा एक किसान नेता के रूप में जाना जाएगा।

३० मई

गुरु अर्जुन देव (निधन- ३० मई)

गुरु अर्जुन देव सिक्खों के पाँचवे गुरु थे। ये १ सितम्बर, १५८१ ई. में गद्दी पर बैठे। गुरु अर्जुन देव का कई दृष्टियों से सिक्ख गुरुओं में विशिष्ट स्थान है। गुरु ग्रंथ साहब आज जिस रूप में उपलब्ध है, उसका संपादक इन्होंने ही किया था। गुरु अर्जुन देव सिक्खों के परम पूज्य चौथे गुरु रामदास के पुत्र थे। गुरु नानक से लेकर गुरु रामदास तक के चार गुरुओं की वाणी के साथ-साथ उस समय के अन्य संत महात्माओं की वाणी को भी इन्होंने गुरु ग्रंथ साहब में स्थान दिया।

उमाशंकर दीक्षित (निधन- ३० मई)

उमाशंकर दीक्षित भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के पुरोधा एवं मानवता के पुजारी और राष्ट्रवाद के अग्रदूत थे। उन्होंने भारत में उन्नाव के नाम का गौरव बढ़ाया। उमाशंकर दीक्षित ने केंद्रीय गृहमंत्री व राज्यपाल जैसे महत्वपूर्ण पदों पर रहकर स्वयं के हित लाभ को त्याग कर राष्ट्र की सच्ची सेवा की और उसके लिए सदैव समर्पित्त रहे। तमाम व्यस्तता के बाद भी वे लोगों से परिवार की तरह मिलते थे। वे कर्नाटक और पश्चिम बंगाल के राज्यपाल रहे थे।

रामविलास शर्मा (निधन- ३० मई)

डॉ. रामविलास शर्मा आधुनिक हिन्दी साहित्य में सुप्रसिद्ध आलोचक, निबंधकार, विचारक एवं कवि थे। डॉ. रामविलास शर्मा भारत के प्रथम व्यास सम्मान विजेता थे। रामविलास शर्मा हिन्दी में प्रगतिवादी समीक्षा- पद्धति के एक प्रमुख स्तम्भ थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के बाद डॉ. रामविलास शर्मा ही एक ऐसे आलोचक के रूप में स्थापित होते हैं, जो भाषा, साहित्य और समाज को एक साथ रखकर मूल्यांकन करते हैं। उनकी आलोचना प्रक्रिया में केवल साहित्य ही नहीं होता, बल्कि वे समाज, अर्थ, राजनीति, इतिहास को एक साथ लेकर साहित्य का मूल्यांकन करते हैं।

उदंत मार्त्तंड: हिंदी का पहला अखबार

३० मई, १८२६ के हिंदी का पहला अखबार उदंत मार्त्तंड का प्रकाशन कलकत्ता (अब कोलकाता) से शुरू हुआ था। इसकी शुरुआत पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने की थी। वे इसके संपादक थे।

इस पत्र ने समाज में चल रहे विरोधाभासों एवं अंग्रेजी शासन के विरुद्ध आम जन की आवाज को उठाने का कार्य किया था। इसमें ब्रज और खड़ी बोली दोनों के मिश्रित रूप का प्रयोग किया जाता था, जिसे इस पत्र के संचालक मध्यदेशीय भाषा कहते थे। हर मंगलवार को यह साप्ताहिक पत्र पुस्तक के आकार में प्रकाशित होता था। इसके ७९ अंक ही प्रकाशित हो पाये। आर्थिक परेशानियों के कारण १९ दिसंबर, १८२७ को इसे बंद करना पड़ा।

३१ मई

विनोद मेहता (जन्म- ३१ मई)

विनोद मेहता जाने माने पत्रकार, आउटलुक पत्रिका के संस्थापक एवं मुख्य संपादक थे। पत्रकारिता के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए विनोद मेहता को प्रतिष्ठित जी.के.रेड्डी मेमोरियल पुरस्कार और यश भारती पुरस्कार से सम्मानित किया गयाथा। संपादक, लेखक और टेलीविजन टिप्पणीकार की अपनी लंबी पारी के दौरान विनोद मेहता मेज पर हाजिरजवाबी, बेबाकी और निष्पक्षता लेकर आए। इस वजह से वह देशभर और पूरी दुनिया में अपने पाठकों एवं दर्शकों, यहां तक कि दोस्तों और दुश्मनों के भी चहेते बने रहे। ऐसा प्रतिद्वंद्वी विरला ही मिलेगा जिसके पास उनके लिए दो अच्छे शब्द न हों।

अहिल्याबाई होल्कर (जन्म- ३१ मई)

महारानी अहिल्याबाई होल्कर मल्हारराव होल्कर के पुत्र खंडेराव की पत्नी थी। अहिल्याबाई किसी बड़े राज्य की रानी नहीं थीं लेकिन अपने राज्य काल में उन्होंने जो कुछ किया वह आश्चर्य चकित करनेवाला है। वह एक बहादुर योद्धा और कुशल तीरंदाज थीं। उन्होंने कई युद्धों में अपनी सेना का नेतृत्व किया और हाथी पर सवार होकर वीरता के साथ लड़ी। रानी अहिल्याबाई ने भारत के भिन्न-भिन्न भागों में अनेक मन्दिरों, धर्मशालाओं और अन्नसत्रों का निर्माण कराया था। कलकत्ता से बनारस तक की सड़क, बनारस में अन्नपूर्ण का मन्दिर गया में विष्णु मंदिर उनके बनवाये हुए हैं। इन्होंने घाट बँधवाएं, कुओं और बावड़ियों का निर्माण करवाया, मार्ग बनवाए, भूखों के लिए सदाब्रत (अन्नक्षेत्र) खोले, प्यासों कें लिए प्याऊ बिठलाई, मंदिरों में विद्वानों की नियुक्ति शास्त्रों के मनन चिंतन और प्रवचन हेतु की। उन्होंने अपने समय की हलचल में प्रमुख भाग लिया। रानी अहिल्याबाई ने इसके अलावा काशी, गया, सोमनाथ, अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, लारिका, बद्रीनारायण, रामेश्वर, जगन्नाथ पुरी इत्यादि प्रसिद्ध तीर्थस्थानों पर मंदिर बनावाए और धर्मशालाएं खुलवायीं। कहा जाता है कि रानी अहिल्याबाई के स्वप्न में एक बार भगवान शिव आए। वे भगवान शिव की भक्त थीं और इसलिए उन्होंने १७७७ में विश्व प्रसिद्ध काशी विश्वनाथ मंदिर का निर्माण कराया। उनका निधन १३ अगस्त को हुआ।

अण्णा साहेब किर्लोस्कर (जन्म- ३१ मई)

अण्णा साहेब किर्लोस्कर का वास्तविक नाम बळवंत पांडुरंग किर्लोस्कर है। इन्होंने नाटकों के कलापक्ष को समृद्ध किया और मराठी रंगमंच की आधुनिक तकनीक आरंभ की। लोकमान्य तिलक के शब्दों में इन्होंने अपने नाटकों के द्वारा

भारतीय संस्कृति का पुनरूद्धार किया।

नूरजहाँ (जन्म- ३१ मई)

नूरजहाँ मुगल सम्राट जहाँगीर की पत्नी थी। उसका मूल नाम मेहरुन्निसा था। जब उसका पिता मिर्जा गियासबेग, जो कि फारस का निवासी था, अपने भाग्य की परीक्षा करने भारत आ रहा था, तभी मार्ग में नूरजहाँ का जन्म कंधार में हुआ था। गियासबेग अकबर के दरबार में एक उच्च पद पाने में सफल हुआ था और १६०५ ई. में जहाँगीर के राज्यारोहण के वर्ष ही वह मालमंत्री नियुक्त हो गया। उसे एत्मादुद्दोला की उपाधि दी गई थी। नूरजहाँ असाधारण व्यक्तित्व और बुद्धिमत्ता वाली स्त्री थी, जहाँगीर ने शासन का समस्त भार उसी पर छोड़ रखा था।

१ जून

कर्णम मल्लेश्वरी

१ जून १९७५ को महिला भारोत्तोलक (वेटलिफ्टर) कर्णम मल्लेश्वरी का जन्म श्रीकाकुलम (आंध्रप्रदेश) में हुआ था। वे पहली महिला खिलाड़ी हैं जिन्होंने देश के लिए ओलंपिक में कांस्य पदक जीता है।

२००० के सिड़नी ओलंपिक में उन्होंने २४० किग्रा वजन उठाते हुए ये गौरव हासिल किया था। इसके पहले उन्होंने जूनियर वेटलिफ्टिंग चैंपियनशिप जीतीं और एशियन चैंपियन व विश्व चैंपियनशिप में स्वर्ण पदक व रजत पदक प्राप्त किया। भारत सरकार ने उन्हें खेलों के लिए सर्वोच्च पुरस्कार राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार से सम्मानित किया। वे अर्जुन पुरस्कार १९९४ और पद्मश्री १९९९ से सम्मानित हुई।

सत्येंद्रनाथ टैगोर (जन्म- १ जून)

एक जून १८४२ को पहले भारतीय आइसीएस सत्येंद्रनाथ टैगोर का जन्म कोलकाता में हुआ था। वे गुरु रविंद्रनाथ टैगोर के बड़े भाई थे। वे एक लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने भारतीय महिलाओं के जीवनस्तर को उठाने में अहम भूमिका निभाई थी। इंडियन सिविल सर्विसेज एक्ट १८६१ के तहत भारतीय सिविल सेवा का गठन होने के बाद जून १८६३ में उन्होंने इसकी परीक्षा पास की और इंग्लैंड में प्रशिक्षण पूरा किया। तीस वर्षों की आइसीएस की सेवा पूरा करते हुए वे १८९७ में एक न्यायाधीश के रूप में सेवानिवृत्त हुए। नौ जनवरी १९२३ को कोलकाता में ही उनका निधन हुआ।

२ जून

बाबूलाल गौर (जन्म- २ जून)

बाबूलाल गौर भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक सदस्य है। वे मध्य प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री हैं, जिनका प्रदेश की राजनीति में प्रमुख स्थान रहा है। १९७४ में मध्य प्रदेश शासन द्वारा बाबूलाल गौर को गोवा मुक्ति आन्दोलन में शामिल होने के कारण स्वतंत्रता संग्राम सेनानी का सम्मान प्रदान किया गया था। उन्हें मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के मंत्रिमंडल में नगरीय प्रशासन एवं विकास भोपाल गैस त्रासदी, राहत एवं पुनर्वास विभाग का मंत्री बनाया गया था।

अनंत गीते (जन्म- २ जून)

अनंत गीते भारत के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ एवं वर्तमान भारी उद्योग और सार्वजनिक उद्यम विभाग के केंद्रीय मंत्री हैं। १६ वीं लोकसभा में उन्होंने रायगढ़ से कांग्रेस के विधायक व सिंचाई मंत्री सुनील दत्तात्रेय को कड़ी शिकस्त दी।

डोला बनर्जी (जन्म- २ जून)

डोला बनर्जी भारत की प्रथम तीरंदाज महिला खिलाड़ी हैं, जिन्हें ओलंपिक के लिए क्वालीफाई किया गया था। उन्होंने १८ वां गोल्डन एरो ग्रैंड प्रिक्स टूर्नामेंट जीता। डोला को वर्ष २००५ में अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

विश्वनाथ दास (निधन- २ जून)

विश्वनाथ दास भारतीय राजनीतिज्ञ थे। ये ब्रिटिश भारत के उड़ीसा प्रान्त के मुख्यमंत्री रहे। १९२० में उन्होंने मद्रास प्रेसीडेन्सी में किसान संघ की स्थापना की। १९२०-१९२९ तक वे मद्रास कॉन्सिल के सदस्य रहे। १९२९ में उन्होंने नमक आन्दोलन के दौरान अपनी सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान वे कई बार जेल गये। १९३६ में वे उड़ीसा के विधानसभा के सदस्य निर्वाचित हुए। १९३७-१९३९ तक वे उड़ीसा के मुख्यमंत्री रहे। युद्ध के मुद्दे पर उन्होंने मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया।

३ जून

ज्ञानपीठ से सम्मानित होनेवाले पहले रचनाकार थे जी शंकर कुरूप

भारतीय सहित्य के शीर्ष पुरस्कार ज्ञानपीठ से सम्मानित होनेवाले पहले रचनाकार और चर्चित मलयाली कवि जी शंकर कुरूप एक आध्यात्मिक कवि थे जिनकी रचनाओं में प्रतीकात्मकता विशेष रूप से उभर कर सामने आयी है तथा उनके साहित्य में प्राचीन एवं आधुनिक विचारों का अद्भुत मेल दिखायी देता है। कुरूप की कई कृतियों का अनुवाद कर चुके और उनके करीबी रहे सुधांशु चतुर्वेदी के अनुसार कुरूप आध्यात्मिक कवि थे और उनकी रचनाओं में प्रतीकात्मकता खपास रूप से उभर कर सामने आयी है। हिंदी और मलयालम दोनों भाषाओं में साहित्य रचनेवाले चतुर्वेदी के अनुसार कुरूप के आलोचक एक दौर में बहुधा आरोप लगाते रहे कि उनकी रचनाएं आम लोगों की समझ से बाहर हैं। लेकिन आलोचक पूरी तरह गलत थे और कुरूप की रचनाओं में प्रकृति का मानवीय चित्रण और मानवीय संवेदनाएं बेहतरीन रूप से उभर कर सामने आयी हैं जिसे बाद में काफी पसंद किया गया। चतुर्वेदी के अनुसार कुरूप एक भावुक कवि थे और इसे उनकी प्रसिद्ध रचना संध्या में महसूस किया जा सकता है। कुरूप के साहित्य में प्राचीन भारतीय मूल्यों और विचारों का सम्मान दिखायी देता है। समीक्षकों के अनुसार इसका कारण संस्कृत साहित्य में प्राचीन भारतीय मूल्यों और विचारों का सम्मान दिखायी देता है। समीक्षकों के अनुसार इसका कारण संस्कृति साहित्य में उनकी रुचि थी। दरअसल बचपन में पढ़ी संस्कृत रचनाओं से ही उन्हें साहित्य का चस्का लगा। बाद में उनका झुकाव अंग्रेजी साहित्य की ओर भी हुआ और उन्होंने वैज्ञानिक दृष्टिकोण के महत्व को समझते हुए आधुनिक युगबोध को अपनाया। मलयाली भाषा के इस विख्यात कवि का जन्म तीन जून १९०१ को केरल के एक गांव में हुआ। पारंपरिक शिक्षा पद्धति के अनुसार तीन वर्ष की आयु से ही उनका अक्षर ज्ञान शुरू हो गया और आठ वर्ष की आयु तक आते आते उन्होंने अमरकोष, श्रीरामोदंतम जैसे ग्रंथ ही नहीं महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य के कई श्लोक कंठस्थ कर लिये थे। पारंपरिक शिक्षा में काव्यों के कंठस्थ होने के साथ ही ११ वर्ष की आयु से जी के भीतर काव्य की धारा फूट पड़ी। छात्र जीवन में महज १७ वर्ष की आयु में उनका पहला काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ। उनके कुल मिलाकर २५ काव्य संग्रह मलयालम में प्रकाशित हुए। शिक्षा के बाद १९२१ में कुरूप माध्यमिक स्कूल में अध्यापक बने।

इसके बाद वह एरनाकुलम के महाराजा कॉलेज से जुड़ गए और इसी संस्थान से वह १९५६ में प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत्त हुए। कविताओं और निबंध के अलावा कुरूप ने उमर खैयाम की रूबाइयों का मलयालम में अनुवाद किया।

इसके अलावा उन्होंने कालिदास के मेघदूत और रविन्द्रनाथ टैगोर की प्रसिद्ध कृति गीतांजलि का अनुवाद कर अपनी मातृभाषा को समृद्ध किया। समीक्षकों के अनुसार कुरूप के साहित्य में महात्मा गांधी और गुरुदेव टैगोर के राष्ट्रभक्ति और मानवतावाद के विचार स्पष्ट तौर दिखायी देते हैं। इसके अलावा उन्होंने प्रकृति के सुंदर चित्रों को अपनी कविताओं के माध्यम से जीवंत किया। कुरूप की ओटक्कुषल अर्थात बांसुरी के लिए पहला ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। उन्हें सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। भारतीय साहित्य में उनके योगदान को देखते हुए सरकार ने उन्हें पद्मभूषण से विभूषित किया था। उन्होंने पी. जे. चेरियन की निर्मला फिल्म के लिए गीत भी लिखे। यह गीत संगीतवाली पहली मलयालम फिल्म थी। मलयालम के इस शीर्ष कवि का निधन ७६ वर्ष की उम्र में दो फरवरी १९७८ को हुआ। भारत सरकार ने उनकी याद में २००३ में पांच रुपये मूल्य का स्मारक डाक टिकट जारी किया था।

बालकृष्ण भट्ट (जन्म- ३ जून)

आज ही के दिन तीन जून १८८४ को हिंदी साहित्य के निबंधकार व पत्रकार बालकृष्ण भट्ट का जन्म इलाहाबाद में हुआ था। उन्हें गद्य प्रधान कविता का जनक माना जाता है। एक ऐसे निबंधकार थे, जिन्होंने आत्मपरक शैली का प्रयोग किया था। वे भारतेंदु युग के साहित्यकार थे और अपनी रचनाओं में शुद्ध हिंदी का प्रयोग करते थे। उन्होंने ३२ वर्षों तक हिंदी प्रदीप का संपादन किया और ३०० से अधिक निबंध लिखे। इसके अतिरिक्त उन्होंने उपन्यास, नाटक, अनुवादक और कहानियां भी लिखीं। उनकी कृतियों में साहित्य सुमन, भट्ट निबंधावली, सौ अजान एक सुजान, चंद्रसेन, स्वयंवर, पद्मावती आदि प्रमुख हैं। २० जुलाई १९१४ को उनका निधन हो गया था।

५ जून

रमेश कृष्णन (जन्म- ५ जून)

रमेश कृष्णन भारत के प्रसिद्ध टेनिस प्रशिक्षक और पूर्व टेनिस खिलाड़ी हैं। १९७० के दशक के अंत में कनिष्ठ खिलाड़ी के रूप में इन्होंने विंबल्डन और फ्रेंच ओपन में पुरुष एकल का खिताब जीता था। वर्ष १९८० के दशक में तीन ग्रैंड स्लीम के क्वार्टर फाइनल तक पहुंचे और डेविस कप टीम में भी फाइनल तक पहुंचे थे। रमेश कृष्णन २००७ में भारत के डैविस कप कप्तान रहे थे। ये रामनाथन कृष्णन के पुत्र हैं, जो भारत के प्रसिद्ध टेनिस खिलाड़ी रहे हैं। इन्हें १९९८ में भारत सरकार ने पद्मश्री सम्मान से सम्मानित किया था।

गोविंद शंकर कुरुप (जन्म- ५ जून)

गोविंद शंकर कुरूप ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित मलयाली भाषा के एक प्रसिद्ध साहित्यकार थे। उन्होंने कोचीन राज्य की पंडित परीक्षा पास करके अध्यापन की योग्यता प्राप्त की थी। उसके बाद दो वर्ष तक वे यहाँ-वहाँ अध्यापन कार्य भी करते रहे थे। महाकवि गोविंद शंकर कुरुप की ४० से अधिक मौलिक और अनूदित कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

विश्व पर्यावरण दिवस

पांच जून को पूरी दुनिया में विश्व पर्यावरण विस के रूप में मनाया जाता है।

पर्यावरण प्रदूषण की समया पर सन १९७२ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्टाकहोम (स्वीडन) में विश्वभर के देशों का पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया था। इसमें ११९ देशों ने भाग लिया और पहली बार एक ही पृथ्वी का सिद्धांत मान्य किया। इसी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनइपी) का जन्म हुआ। प्रति वर्ष पांच जून के पर्यावरण दिवस आयोजित करके नागरिकों को प्रदूषण की समस्या से अवगत कराने का निश्चय किया गया। १९७३ में पहली बार विश्व पर्यावरण दिवस मनाया गया था।

मास्टर मदन (निधन- ५ जून)

मास्टर मदन भारत की आजादी से पहले के एक प्रतिभाशाली गजल और गीत गायक थे। मास्टर मदन के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। मास्टर मदन एक ऐसे कलाकार थे जो १९३० के दशक में एक किशोर के रूप में ख्याति प्राप्त करके मात्र १५ वर्ष की उम्र में १९४० के दशक में ही स्वर्गवासी हो गए। ऐसा माना जाता है कि मास्टर मदन को आकाशवाणी और अनेक रियासतों के दरबार में गाने के लिए बहुत ऊँची रकम दी जाती थीं। मास्टर मदन उस समय के प्रसिद्ध गायक कुंदन लाल सहगल के बहुत करीब थे जिसका कारण दोनों का ही जालंधर का निवासीं होना था।

६ जून

मास्ति वेंकटेश अय्यंगार (जन्म- ६ जून)

मास्ति वेंकटेश अय्यंगार कन्नड़ कहानी के प्रवर्तक और कन्नड़ की संपत्ति के रूप में ख्याति प्राप्त कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार, अनुवादक और आलोचक थे। इनके लगभग १५ कहानी संग्रह प्रकाशित हुए थे। मास्ति की शैली को कम से कम शब्दों में एक संपूर्ण अनुभव संप्रेषित करने की विलक्षण क्षमता प्राप्त है। नवरात्रि एवं श्रीरामपट्टाभिषेक उनके दो महत्वपूर्ण काव्य हैं।

शौकबहराइची (जन्म- ६ जून)

शौकबहराइची का वास्तविक नाम रियासत हुसैन रिजवी था। वे बहुत प्रसिद्ध शायर थे। नेताओं व गलत कार्यों में लिप्त व्यक्तियों पर कटाक्ष करने के लिए नीचे दिया गया शेर देश में सर्वाधिक इस्तेमाल होता है पर बहुत कम ऐसे लोग हैं, जिन्हें यह पता होगा कि इस शेर को लिखनेवाले शायर का नाम शौकबहराइची है। बर्बाद गुलिस्तां करने को बस एक ही उल्लू काफी है हर शाख पे उल्लू बैठें हैं अंजाम ऐ गुलिस्ता क्या होगा।

७ जून

बी डी जत्ती (निधन- ७ जून)

बासप्पा दानप्पा जत्ती को श्री फखरुद्दीन अली अहमद की मृत्यु के बाद कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में नियुक्त किया गया था। यह भारतवर्ष के निर्वाचित राष्ट्रपति नहीं थे। अत: इन्हें कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में ही सम्बोधित किया जाता है। भारतीय संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार उपराष्ट्रपति को कार्यवाहक राष्ट्रपति बनाए जाने की व्यवस्था है, यदि किसी भी

कारणवश राष्ट्रपति का पद रिक्त हो जाए। फखरुद्दीन अली अहमद की मृत्यु के समय बी.डी.जत्ती देश के उपराष्ट्रपति पद पर थे। कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में इनका कार्यकाल ११ फरवरी १९७७ से २५ जुलाई १९७७ तक रहा। इस दौरान इन्होंने अपना दायित्व संवैधानिक गरिका के साथ पूर्ण किया।

८ जून

हबीब तनवीर (निधन- ८ जून)

हबीब तनवीर भारत के सबसे मशहूर पटकथा लेखक, नाट्य निर्देशक, कवि और अभिनेता थे। हबीब तनवीर हिन्दुस्तानी रंगमंच के शलाका पुरुष थे। उन्होंने लोकधर्मी रंगकर्म को पूरी दुनिया में प्रतिष्ठित किया और भारतीय रंगमंच को एक नया मुहावरा दिया।

वर्ल्ड ओशन-डे

आठ जून को पूरी दुनिया में वर्ल्ड ओशन-डे के रूप में मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा पांच दिसंबर २००८ को वर्ल्ड ओशन-डे मनाने की घोषणा की गई थी। २००९ में पहली बार इसे मनाया गया था। १९९२ में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में इसकी परिकल्पना की गई थी जिसमें समुद्र से लोगों के संबंध और मानव जीवन में समुद्र की महत्वपूर्ण भूमिका के संबंध में जागरूकता फैलाने के बारे में सोचा गया था। वर्षा, पीने का पानी, मौसम, जलवायु, बहुत तरह के भोजन और हवा में ऑक्सीजन की मात्रा में भी समुद्र की बहुत बड़ी भूमिका होती है। यह हमारी पृथ्वी पर जीवन का आधार है। इस वर्ष के लिए थीम है- हम सब में समुद्र को बचाने की शक्ति है।

९ जून

किरण बेदी (जन्म- ९ जून)

किरण बेदी सामाजिक कार्यकर्ता एवं भारतीय पुलिस सेवा की प्रथम वरिष्ठ महिला अधिकारी रही हैं। वर्ष २०१५ में उन्होंने भारतीय जनता पार्टी में शामिल होकर राजनीति में प्रवेश किया। उन्होंने विभिन्न पदों पर रहते हुए अपनी कार्यकुशलता का परिचय दिया है। वे संयुक्त आयुक्त पुलिस प्रशिक्षण तथा दिल्ली पुलिस स्पेशल आयुक्त (खुफिया) के पद पर कार्य कर चुकी हैं। इस समय वे संयुक्त राष्ट्र संघ के शांति स्थापना ऑपरेशन विभाग में नागरिक पुलिस सलाहकार के पद पर कार्यरत हैं। वह वर्ष २००२ के लिए भारत की सबसे प्रशंसित महिला चुनी गयी।

नंदिनी सत्पथी (जन्म- ९ जून)

नंदिनी सत्पथी भारत की प्रसिद्ध महिला राजनीतिज्ञ तथा लेखिका थीं। वे जून १९७२ से दिसम्बर, १९७६ तक उड़ीसा राज्य की मुख्यमंत्री रही थीं। भारत के प्रमुख राजनैतिक दल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से नंदिनी सत्पथी जुड़ी हुई थीं। देश की प्रसिद्ध महिला राजनीतिज्ञों में नंदिनी सत्पथी का नाम लिया जाता है।

चौधरी दिगम्बर सिंह (जन्म- ९ जून)

चौधरी दिगम्बर सिंह स्वतंत्रता सेनानी थे और चार बार लोकसभा सांसद रहे। इन्होंने सहकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया। किसानों की भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन का सबसे पहला प्रयास इनका ही था। किसानों की बात सांसद में कहने के लिए दिगम्बर सिंह प्रसिद्ध थे। राजा महेन्द्र प्रताप, मनीराम बागड़ी और राजा मानसिंह जैसा नेताओं को इन्होंने लोकसभा चुनावों में हराया था। लगभग २५ वर्ष ये मथुरा जिला सहकारी बैंक के अध्यक्ष रहे। मथुरा में आकाशवाणी की स्थापना करवाने का श्रेय इन्हें ही जाता है।

लक्ष्मण प्रसाद दुबे (जन्म- ९ जून)

लक्ष्मण प्रसाद दुबे भारत के स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। शिक्षकीय कर्तव्य को अपनी साधना माननेवाले लक्ष्मण प्रसाद दुबे का संपूर्ण जीवन एक शिक्षक के रूप में बीता था, जिस कारण उन्हें गुरुजी के रूप में जाना जाता रहा। उन्होंने अपने जीवन में कई लोगों को शिक्षित कर उनके मन में देशभक्ति की भावना को जागृत किया। वहीं कई लोगों को शिक्षक बनने हेतु प्रेरित भी किया। लक्ष्मण प्रसाद जी देश में नारी स्वतंत्रता एवं नारी शिक्षा के प्रबल पक्षधर थे।

१० जून

शिवदीन राम जोशी (जन्म- १० जून)

शिवदीन राम जोशी अपने समय के जाने-माने कवि थे। इनके द्वारा रची गई सभी रचनाएँ पद्यात्मक हैं। इनकी रचनाओं का मुख्य विषय ज्ञान, वैराग्य, प्रकृति चित्रण, प्रेम, हितोपदेश, भक्ति, भारतीय त्यौहार, देश चिंतन, पाखण्ड एवं समाज में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार आदि रहा है। शिवदीन राम जोशी की साहित्यिक भाषा ब्रज मिश्रित हिन्दी थी। उनका साहित्य कविता के रूप में उपलब्ध है।

एम.एस. गोपालकृष्णन (जन्म- १० जून)

एम.एस. गोपालकृष्णन भारत के प्रसिद्ध वायलिन वादकों में से एक थे। पद्मभूषण तथा अन्य पुरस्कारों से सम्मानित गोपालकृष्णन ने सात दशक तक वायलिन के सुरों से हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत के प्रेमियों को बांधे रखा था। उनको एमएसजी के नाम से भी जाना जाता था।

१० जून १९३१ को वायालिन वादक एमएस गोपालकृष्णन का जन्म मद्रास (अब चेन्नई) में हुआ था। उन्होंने सात दशकों तक वायलिन के सुरों से हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत के प्रेमियों को बांधे रखा था। उन्होंने परूर स्टाइल का वायोलिन वादन प्रस्तुत किया था। वे भारत सरकार द्वारा पद्मश्री १९७५ और पद्मभूषण २०१२ से सम्मानित किए गए। इसके अलावा वे केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार (१९८२) से भी सम्मानित हुए थे। ८ वर्ष की उम्र से ही वे अपने पिताजी के साथ कार्यक्रम प्रस्तुत करने लगे थे। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उत्तरी अमेरिका, यूरोप, ब्रिटेन, सिंगापुर, हांगकांग व दक्षिण अफ्रीका में भी कार्यक्रम प्रस्तुत किए। तीन जनवरी २०१३ को चेन्नई में उनका निधन हुआ था।

प्रकाश पादुकोण (जन्म- १० जून)

प्रकाश पादुकोण को बैडमिंटन का आज तक का भारत का सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी कहा जाए तो शायद अतिशयोक्ति नहीं

होगी। नियंत्रण और सटिकता का इस्तेमाल करते हुए वे खेल को धीमा करके अपनी गति पर ले आते थे और उनकी चतुराई उन्हें डगमगा देती थी। १९८१ में कुआलालंपुर में विश्व कप फाइनल में उन्होंने हान जियान को १५-० से ध्वस्त कर दिया था। वे लगातार नौ साल १९७० से १९७८ तक वरिष्ठ राष्ट्रीय चैंपियन रहे। प्रसिद्ध हिन्दी फिल्म अभिनेत्री दीपिका पादुकोण उन्हीं की बेटी हैं।

देवेन्द्र झाझरिया (जन्म- १० जून)

देवेन्द्र झाझरिया भारत के एथलीट हैं। उन्होंने ब्राजील के शहर रियो में आयोजित पैरालम्पिक खेलों (२०१६) की भाला फेंक स्पर्धा में स्वर्ण पदक जीता है। पैरालंपिक में यह उनका दूसरा स्वर्ण पदक है। १२ साल पहले २००१ के एथेंस पैरालंपिक में भी उन्होंने स्वर्णपदक जीतकर देश का मान बढ़ाया था।

भाई वीर सिंह (निधन- १० जून)

भाई वीर सिंह आधुनिक पंजाबी काव्य और गद्य के निर्माता के रूप में प्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने १८९४ ई. में खालसा ट्रैक्ट सोसाइटी की नींव डाली। फिर साप्ताहिक खालसा समाचार निकाला। भाई वीर सिंह को भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से सम्मानित किया गया।

दामोदर मेनन (जन्म- १० जून)

दामोदन मेनन भारत के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा महात्मा गांधी का इनके जीवन पर व्यापक प्रभाव था। १९५७ में इन्हें केरल विधान सभा का सदस्य चुना गया था। दामोदर मेनन की गिनती उच्च कोटि के पत्रकारों में भी की जाती है। इनके आर्थिक विचार बड़े ही उदार हुआ करते थे।

१० जून, १९०६ को स्वतंत्रता सेनानी व पत्रकार दामोदर मेनन का जन्म करमलूर (केरल) में हुआ था। वे गांधीजी और जवाहरलाल नेहरूजी से प्रेरित होकर स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े एवं नमक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन में सक्रियता से हिस्सा लिया। भारत छोड़ो आंदोलन में वे तीन साल तक जेल में रहे। उन्होंने मलयालम दैनिक मातृभूमि के संस्थापक के रूप में जन जागरण के लिए काम किया। इसके अलावा उन्होंने रामदर्शी, स्वतंत्र, कहालम और पावर शक्ति पत्रों का भी संपादन किया। वे अस्थायी लोकसभा के लिए चुने गये थे। वे कांग्रेस के टिकट पर केरल विधानसभा के सदस्य बने और सरकार में मंत्री हुए। एक नवंबर १९८० को उनका निधन हुआ।

गोपीनाथ बोरदोलोई (जन्म- १० जून)

गोपीनाथ बोरदोलोई भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और असम के प्रथम मुख्यमंत्री थे। इन्हें आधुनिक असम का निर्माता भी कहा गया है। गोपीनाथ ने असम के विकास के लिए अथक प्रयास किये थे। उन्होंने राज्य के औद्योगीकरण पर विशेष बल दिया और गौहाटी में कई विश्वविद्यालयों की स्थापना करवायी।

प्रसिद्ध उद्योगपति राहुल बजाज (जन्म- १० जून)

महात्मा गांधी के सचिव जमनालाल जी बजाज के सुपौत्र और कमलनयन जी बजाज के पुत्र श्री राहुल जी का जन्म १० जून १९३८ को हुआ। राहुल बजाज हमारे देश के सबसे बड़े उद्योगपतियों में से एक हैं। कुछ दिन पहले तक वे

राज्यसभा के सदस्य भी थे। २००१ में उन्हें भारत सरकार ने पद्मभूषण अवार्ड से विभूषित किया था। १९६५ में राहुल बजाज ने बजाज आटो कंपनी की जिम्मेदारी संभाली और बजाज आटो को बुलंदियों तक पहुंचाया। अभी कुछ ही दिन पहले राहुल बजाज की धर्मपत्नी रूपा बजाज का पुणे में निधन हुआ था। उनके दो सुपुत्र हैं, राजीव और संजीव बजाज। एक सुपुत्री भी हैं सुनयना केजरीवाल। सुनयना के पति मनीष केजरीवाल टेमसेक इंडिया के मालिक हैं। राहुल बजाज इस बात के लिए मशहूर हैं कि वे स्वतंत्र विचारोंवाले हैं और उद्योग समाज या देश के प्रति पूरी तरह निष्ठावान हैं और अपनी बात बेबाक और निर्भय होकर कहते हैं।

११ जून

रामप्रसाद बिस्मिल

११ जून १८९७ को स्वतंत्रता सेनानी राम प्रसाद बिस्मिल का जन्म शाहजहांपुर (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। बिस्मिल उनका उर्दू उपनाम था। उन्होंने ही अपने नौ साथियों की मदद से काकोरी कांड की योजना बनाई और अंजाम दिया था। उन्होंने ११ वर्ष के क्रांतिकारी जीवन में कई पुस्तकें लिखीं और स्वयं ही प्रकाशित किया। इससे मिले पैसों से हथियार खरीदे और ब्रिटिश राज के विरोध में उपयोग किया।

वंदे मातरम के बाद उनके लिखे सरफरोशी की तमन्ना गाते हुए कितने ही देशभक्त फांसी के तख्ते पर झूल गए। १९ दिसंबर १९२७ को वे शहीद हो गए जब गोरखपुर जेल में उन्हें फांसी दी गई।

राम प्रसाद बिस्मिल भारत के महान स्वतंत्रता सेनानी ही नहीं, बल्कि उच्च कोटि के कवि, शायर, अनुवादक, बहुभाषाविद व साहित्यकार भी थे जिन्होंने भारत की आजादी के लिये अपने प्राणों की आहुति दे दी। उनके लिखे सरफरोशी की तमन्ना जैसे अमर गीत ने हर भारतीय के दिल में जगह बनाई और अंग्रेजों से भारत की आजादी के लिए वो चिंगारी छेड़ी जिसने ज्वाला का रूप लेकर ब्रिटि शासन के भवन को लाक्षागृह में परिवर्तित कर दिया। ब्रिटिश साम्राज्य को दहला देनेवाले काकोरी काण्ड को रामप्रसाद बिस्मिल ने ही अंजाम दिया था।

राम प्रसाद बिस्मिल भारत के महान स्वतंत्रता सेनानी ही नहीं, बल्कि उच्च कोटि के कवि, शायर, अनुवादक, बहुभाषविद व साहित्यकार भी थे जिन्होंने भारत की आजादी के लिये अपने प्राणों की आहुति दे दी।

युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत थे बिस्मिल और उनकी रचनाएं (जन्म- ११ जून)

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान मैनपुरी में क्रांतिकारी घटनाओं और काकोरी कांड को अंजाम देनेवाले राम प्रसाद बिस्मिल और उनकी रचनाओं, दोनों ने ही युवाओं के मन में आजादी की अलख जगाई और उन्हें इस संघर्ष में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेने के लिए प्रेरित किया। हिंदू कॉलेज में इतिहास के प्रोफेसर डा. डी.एन. गुप्ता ने कहा कि रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद ये सभी क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। दरअसल इनका जोर केवल राजनीतिक स्वतंत्रता पर ही नहीं बल्कि आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता हासिल करने पर था। उन्होंने कहा कि यह धारणा बिल्कुल गलत है कि बिस्मिल और उनके साथी हथियारबंद क्रांति के समर्थक थे या उसमें विश्वास रखते थे वास्तव में वे आर्थिक समानता के पक्षधर थे इसलिए इन घटनाओं को अंजाम देते थे। जैसे काकोरी कांड जिसमें ट्रेन से ले जाए जा रहे सरकारी खजाने को

लूटने की योजना थी, पैसे की कमी को पूरा करने के लिए बनाई गई थी। भगत सिंह पर स्पीचेज एंड राइटिंग ऑफ शहीद भगत सिंह किताब लिखने वाले डॉ. गुप्ता ने कहा कि चूंकि क्रांतिकारी आंदोलन गुप्तरूप से चलाए जाते थे इसलिए इन्हें वित्तीय साधनों की कमी का सामना करना पड़ता था और इसी वजह से काकोरी कांड को अंजाम दिया गया था।

नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ एजेकेशन एंड प्लानिंग एडमिनिस्ट्रेशन में प्रोफेसर इरफान हबीब ने कहा कि बिस्मिल न केवल उस समय के युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत थे बल्कि आज के संदर्भ में भी उनका जीवन चरित्र समाज के लिए मिसाल हैं। उन्होंने कहा कि राम प्रसाद बिस्मिल आर्य समाज से जुड़े हुए धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। लेकिन इसके बावजूद उनके द्वारा अंजाम दी गई क्रांतिकारी घटनाओं में कहीं भी सांप्रदायिकता की झलक देखने को नहीं मिलती। बिस्मिल और अश्फाक उल्ला खान दोनों बहुत अच्छे दोस्त थे, दोनों धार्मिक प्रवृत्ति के थे और काकोरी कांड में शामिल थे। साथ ही दोनों का ही जीवन चरित्र इस बात की मिसाल है कि धार्मिक होने का मतलब सांप्रदायिक होना नहीं है। उनके कामों में कहीं भी सांप्रदायिकता की झलक नहीं मिलती। प्रो. हबीब ने कहा कि आज के समाज को बिस्मिल और अश्फाक उल्ला खान से धर्म को सांप्रदायिकता से दूर रखने और देशहित में मिलकर काम करने का सबक लेना चाहिए। डॉ. गुप्ता ने कहा कि एक ओर गांधी का आंदोलन था तो दूसरी ओर बिस्मिल जैस क्रांतिकारी विचारों से प्रेरित स्वतंत्रता सेनानियों का आंदोलन था। उनके कामों ने युवा वर्ग को खासा प्रभावित किया। साथ ही उनकी क्रांतिकारी और देश प्रेम की भावना से ओत प्रोत रचनाओं ने भी युवाओं को स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। उल्लेखनीय है कि बिस्मिल को सरफरोशी की तमन्ना जैसे कई गीतों का रचयिता माना जाता है। राम प्रसाद बिस्मिल का जन्म ११ जून १८९७ को उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर में हुआ। बिस्मिल शाहजहांपुर में आर्य समाज से भी जुड़े रहे और स्वामी दयानंद की किताब सत्यार्थ प्रकाश ने उन्हें खास प्रभावित किया। बिस्मिल लाला हरदयाल से भी संपर्क में थे और वह हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के संस्थापक सदस्यों में से एक थे। उन्होंने मैनपुरी में कई क्रांतिकारी घटनाओं और नौ अगस्त १९२५ को काकोरी कांड को अंजाम दिया। काकोरी कांड के लिए इन पर करीब १८ महीने तक मुकदमा चला और इन्हें मौत की सजा सुनाई गई। बिस्मिल को ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा गोरखपुर जेल में १९ दिसंबर १९२७ को फांसी दे दी गई।

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के साथ बेहतरीन कवि, शायर और लेखक, मैनपुरी षडयंत्र में शाहजहांपुर के ६ युवक पकड़ाए, जिनके लीडर रामप्रसाद बिस्मिल थे, लेकिन वे पुलिस के हाथ नहीं लग पाए। इस षडयंत्र का फैसला आने के बाद से बिस्मिल २ साल तक भूमिगत रहे और एक अफवाह के तरह उन्हें मृत भी मान लिया गया। इसके बाद उन्होंने एक गांव में शरण ली और अपना लेखन कार्य किया।

के.एस. हेगड़े (जन्म- ११ जून)

कावदूर सदानन्द हेगड़े एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ और शिक्षाशास्त्री थे। के.एस. हेगड़े भारतीय लोकसभा के अध्यक्ष थे। छठी लोकसभा के अध्यक्ष के रूप में कावदूर सदानन्द हेगड़े का चुनाव इस अर्थ में अभूतपूर्व था कि लोकसभा के सदस्य के रूप में अपने प्रथम कार्यकाल के दौरान ही उन्हें इस उच्च पद पर आसीन होने का अवसर प्राप्त हुआ। उनका व्यावसायिक जीवन भी अनूठा रहा है क्योंकि न्यायपालिका के क्षेत्र में प्रवेश करने से पहले वे राज्य सभा के सदस्य थे। उत्कृष्ट न्यायिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ विधायी अनुभव होने के कारण उन्होंने सभा की कार्यवाही का

संचालन इतनी कुशलता से किया कि इसके लिए लोकसभा के सभी सदस्यों की ओर से उन्हें प्रशंसा मिली।

वासुदेव वामन शास्त्री खरे (मृत्यु- ११ जून)

वासुदेव वामन शास्त्री खरे मराठी भाषा के सुप्रसिद्ध इतिहासकार कवि, नाटककार और जीवनी लेखक थे। उन्होंने ऐतिहासिक लेख संग्रह नामक बहुमूल्य ग्रंथ प्रस्तुत किया। इसमें १७६० से १८०० ई. तक के मराठों के इतिहास का तथ्यपरक निरूपण हैं। इस एक मात्र ग्रंथ से ही इतिहासकार के रूप में उनका प्रतिष्ठित स्थान बन गया। यशवंत राव नामक उनका महाकाव्य प्रसिद्ध है। गुणोत्कर्ष, तारामंडल, उग्र मंडल आदि उनके ऐतिहासिक नाटक हैं। नाना फड़नवीस चरित्र, हरिवंशाची बरवर, मालोजी व शहाजी आदि रचनाएँ भी उल्लेखनीय हैं।

वासुदेव वामन शास्त्री खरे मराठी भाषा के सुप्रसिद्ध इतिहासकार कवि, नाटककार और जीवनी लेखक थे। निष्ठापूर्वक २७ वर्षों तक अध्ययन करके उन्होंने ऐतिहासिक लेख संग्रह नामक बहुमूल्य ग्रंथ प्रस्तुत किया। इसमें १७६० से १८०० ई. तक के मराठों के इतिहास का तथ्यपरक निरूपण है। इस एक मात्र ग्रंथ से ही इतिहासकार के रूप में उनका प्रतिष्ठित स्थान बन गया। यशवंतराव नामक उनका महाकाव्य प्रसिद्ध है।

लालू प्रसाद यादव (जन्म- ११ जून)

लालू प्रसाद यादव भारत के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ एवं बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री हैं। लालू प्रसाद यादव भारत के सफल रेलमन्त्रियों में गिने जाते हैं। लालू प्रसाद यादव को चारा घोटाले के आरोप में ३ अक्टूबर २०१३ को रांची स्थित सीबीआई के विशेष अदालत ने ५ साल की सजा और २५ लाख का जुर्माने की सजा सुना दी। कोर्ट ने लालू प्रसाद को चाईबासा कोषागार से ३७ करोड़ ६८ लाख रुपए को गबन करने का आरोप में दोषी पाया था।

१२ जून

नरेन्द्र सिंह तोमर (जन्म- १२ जून)

नरेन्द्र सिंह तोमर भारतीय जनता पार्टी के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ हैं जो वर्तमान में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के मंत्रिमंडल में भारत के केंद्रीय ग्रामीण विकास, पंचायती राज, पेयजल और स्वच्छता मंत्री हैं।

गोपीनाथ कविराज (निधन- १२ जून)

गोपीनाथ कविराज संस्कृत के विद्वान और महान दार्शनिक थे। गोपीनाथ कविराज सेवानिवृत्ति के पश्चात अपना समय प्राचीन ज्ञान-विज्ञान, अध्यात्म आदि पर चर्चा और तांत्रिक साधना में ही बिताते रहे। १९३४ में सरकार ने उन्हें महामहोपाध्याय की उपाधि प्रदान की। भारत सरकार ने उन्हें पद्म विभूषण की उपधि से सम्मानित किया था।

१३ जून

ईएमएस नंबूदिरीपाद

१३ जून, १९०९ को मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेता व केरल के पहले मुख्यमंत्री इएमएस नंबूदिरीपाद का जन्म

एर्नाकुलम (केरल) में हुआ था। वे देश के पहले चुने हुए गैर कांग्रेसी सरकार के मुख्यमंत्री बने, उनके कार्यकाल में हुए भूमि, शिक्षा सुधारों की वजह से आज केरल देश का सर्वाधिक साक्षर व जागरूक प्रांत बना है। उन्हीं के नेतृत्व में चली एक्य केरलम मुहिम के कारण आजादी के बाद भाषा के आधार पर केरल राज्य का गठन हुआ। उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में द महात्मा एंड द इज्म (१९५८), कॉनफ्लिक्ट्स एंड क्राइसिस, इंडियन प्लानिंग इन क्राइसिस (१९७४), नेहरू आइडियोलॉजी एंड प्रैक्टिस (१९८८) और चार खंडों में प्रकाशित कम्युनिस्ट पार्टी के केरालिथल प्रमुख हैं। १९ मार्च, १९९८ को तिरूवनंतपुरम में उनका निधन हो गया।

मेहदी हसन (निधन- १३ जून)

मेहदी हसन एक प्रसिद्ध गजल गायक थे। इन्हें गजल का राजा माना जाता है। इन्हें खाँ साहब के नाम से भी जाना जाता है। वैसे तो गजल के इस सरताज पर पाकिस्तान फख्र करता था मगर भारत में भी उनके मुरीद कुछ कम न थे। मेहदी हसन को कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। जनरल अयूब खाँ ने उन्हें तमगा-ए-इम्तियाज, जनरल जिया उल हक ने प्राइड ऑफ परफॉर्मेंस और जनरल परवेज मुशर्रफ ने हिलाल-ए-इम्तियाज पुरस्कार से सम्मानित किया था। इसके अलावा भारत ने १९७९ में सहगल अवॉर्ड से सम्मानित किया।

१४ जून

असद अली खाँ (निधन- १४ जून)

उस्ताद असद अली खाँ को रुद्रवीणा वादक के नाम से आज पूरे भारत में जाना जाता है। उस्ताद असल अली खाँ को वर्ष २००८ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था। श्री असद अली खाँ आकाशवाणी और दूरदर्शन के उच्च श्रेणी के कलाकार थे।

कार्यमाणिवकम श्रीनिवास कृष्णन (निधन- १४ जून)

कार्यमाणिवकम श्रीनिवास कृष्णन प्रसिद्ध भौतिक वैज्ञानिक थे। मद्रास विश्वविद्यालय ने इनको डी. एस.सी. की उपाधि प्रदान की थी। श्रीनिवास कृष्णन सन १९४५-१९४६ में भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के अध्यक्ष चुने गए थे। भौतिकी की प्रत्येक दिशा में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा था। प्रकाशिकी, चुंबकत्व, इलेक्ट्रॉनिकी, ठोस अवस्था भौतिकी तथा विशेषकर धातु भौतिकी पर इन्होंने अनेक खोज की थीं। सी.वी. रमन के साथ रमण प्रभाव की खोज में भी इनका योगदान था।

गुरु हरगोबिंद सिंह (जन्म- १४ जून)

गुरु हरगोबिंद सिंह सिक्खों के छठे गुरु थे, जिनका जन्म माता गंगा व पिता गुरु अर्जुन सिंह के यहाँ १४ जून, सन १५९५ ई. में बडाली (भारत) में हुआ था। गुरु हरगोबिंद सिंह ने एक मजबूत सिक्ख सेना संगठित की और अपने पिता गुरु अर्जुन के (मुगल शासकों (१६०६) के हाथों पहले सिख शहीद) निर्देशानुसार सिक्ख पंथ को योद्धा-चरित्र प्रदान किया था।

१५ जून

जिया फरीदुद्दीन डागर (जन्म- १५ जून)

जिया फरीदुद्दीन भारत के मशहूर ध्रुपद गायक थे। शानदार ध्रुपदिया गायक उस्ताद जियाउद्दीन डागर के बेटे फरीदुद्दीन ने अपने दिवंगत भाई जिया मोहिउद्दीन डागर (मशहूर रुद्र वीणा वादक) के साथ मिलकर ध्रुपद शैली के गायन को पुनर्जीवित करने में अहम भूमिका निभाई है।

तारकनाथ दास (जन्म- १५ जून)

तारकनाथ दास भारत के प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक गिने जाते हैं। अरविन्द घोष, सुरेन्द्रनाथ बनजी तथा चित्तरंजन दास इनके घनिष्ठ मित्रों में से थे। क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण इन्होंने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी थी, लेकिन बाद में पुन: अध्ययन प्रारम्भ कर इन्होंने पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी। तारकनाथ दास पर अमेरिका में मुकदमा चला था, जहाँ इन्हें कैद की सजा सुनाई गई थी।

१६ जून

कैप्टन अवधेश प्रताप सिंह (निधन- १६ जून)

कैप्टन अवधेश प्रताप सिंह विध्य प्रदेश और महाकौशल के प्रमुख राजनैतिक और सामाजिक कार्यकर्ता थे। वे १९४६-१९५० में देश की संविधान सभा के भी सदस्य रहे। उन्होंने अपने सीमित समय के मुख्यमंत्री काल में शिक्षा के प्रसार के लिए काम किया।

चित्तरंजन दास (निधन- १६ जून)

चित्तरंजन दास एक महान स्वतंत्रता सेनानी थे, जिनका जीवन भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में युगांतकारी था। चित्तरंजन दास को प्यार से देशबंधु (देश के मित्र) कहा जाता था। ये महान राष्ट्रवादी तथा प्रसिद्ध विधि-शास्त्री थे। चित्तरंजन दास अलीपुर षड़यंत्र काण्ड (१९०८ ई.) के अभियुक्त अरविन्द घोष के बचाव के लिए बचाव पक्ष के वकील थे। असहयोग आंदोलन के अवसर पर इन्होंने अपनी वकालत छोड़ दी थी। १९२१ ई. में अहमदाबाद में हुए कांग्रेस के अधिवेशन के ये अध्यक्ष थे। ये स्वराज्य पार्टी के संस्थापक थे। इन्होंने १९२३ में लाहौर तथा १९२४ में अहमदाबाद में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की अध्यक्षता भी की थी।

१७ जून

गोपाल गणेश आगरकर (निधन- १७ जून)

गोपाल गणेश आगरकर का नाम भारत के प्रसिद्ध समाज सेवकों में लिया जाता है। एक पत्रकार के रूप में भी इन्होंने प्रसिद्धि पाई थी। ये प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के सहपाठी रहे थे। इन्होंने सुधारक नामक एक साप्ताहिक भी निकाला था। गोपाल गणेश आगरकर जी वर्ष १८९२ में फर्ग्युसन कॉलेज, पुणे के प्रधानाध्यापक बनाये गए थे और फिर इस पद पर वे अंत तक रहे।

गोपबंधु दास (निधन- १७ जून)

गोपबंधु दास प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार, कवि तथा साहित्यकार थे। ये उड़ीसा के प्रख्यात सामाजिक कार्यकता थे। गोपबंधु दास को उत्कल मणि के नाम से भी जाना जाता है। उड़ीसा राज्य में जब भी राष्ट्रीयता और स्वाधीनता संग्राम की बात की जाती है। तब लोग गोपबंधु दास का ही नाम लेते हैं। उड़ीसा के लोग इन्हें दरिद्र सखा अर्थात दरिद्र के सखा के रूप में याद करते हैं। गोपबंधु दास ने उत्कल के विभिन्न अंचलों को संघठित करके पूर्ण उड़ीसा राज्य बनाने की जी-जान से कोशिशें की थीं। उत्कल के दैनिक पत्र समाज के ये संस्थापक थे।

१८ जून

डॉ. अनुग्रह नारायण सिन्हा

१८ जून १८८७ को स्वतंत्रता सेनानी डॉ. अनुग्रह नारायण सिन्हा का जन्म पवई (औरंगाबाद, बिहार) में हुआ था। वे बिहार विभूति के नाम से भी लोकप्रिय थे। उन्होंने चंपारण के नील आंदोलन में गांधीजी के साथ लगन और निर्भीकता के साथ काम किया और आंदोलन को सफल बनाकर ही पटना लौटे। गांधीजी के साथ वे हर आंदोलन में साथ रहे और हर बार जेल भी गये। वे बिहार के पहले उप मुख्यमंत्री व वित्त मंत्री बनाये गये और जीवनपर्यंत बने रहे। उनके ही प्रयासों से पूसा में कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना हुई। वे आधुनिक बिहार के निर्माताओं में से एक थे। पांच जुलाई १९५७ को पटना में उनका निधन हो गया।

२० जून

लक्ष्मणराव काशीनाथ किर्लोस्कर

२० जून, १८६९ को उद्योगपति और किर्लोस्कर उद्योग समूह के संस्थापक लक्ष्मणराव काशीनाथ किर्लोस्कर का जन्म बेलगांव (कर्नाटक) में हुआ था।

उन्होंने सबसे पहले बेलगांव में एक साइकिल की दुकान खोली थी। अपने भाई के साथ शुरू किये गये किर्लोस्कर ब्रदर्स दुकान में वे साइकिल बेचते, मरम्मत करते और लोगों को साइकिल चलाना भी सिखाते थे। उन्होंने सबसे पहले लोहे का हल बनाने का कारखाना खोला। बाद में इसे वे महाराष्ट्र ले आये, जहां उन्होंने किर्लोस्कर वाडी नाम से देश की पहली औद्योगिक बस्ती की नींव डाली थी। उस रोड को किर्लोस्कर रोड कहा जाता है जिस रोड पर उनकी साइकिल की दुकान थी। २६ सितंबर १९५६ को उनका देहांत हो गया।

लक्ष्मण काशीनाथ किर्लोस्कर भारत के प्रसिद्ध उद्योगपतियों में से एक थे। किर्लोस्कर उद्योग समूह के वे संस्थापक थे। वे विक्टोरिया जुबली टेक्निकल इंस्टीट्यूट मुम्बई में अध्यापक भी नियुक्त हुए थे। अपने शुरुआती समय में लक्ष्मण काशीनाथ किर्लोस्कर जी ने एक साइकिल की दुकान खोलकर जीवन संघर्ष प्रारम्भ किया था। बाद के समय में अपनी मेहनत और कठिन लगन से उन्होंने किर्लोस्कर की कई औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की।

२१ जून

बी.जी. वर्गीज (जन्म- २१ जून)

बूबली जॉर्ज वर्गीज एक वरिष्ठ भारतीय पत्रकार हैं जो अग्रणी समाचार पत्र हिंदुस्तान टाइम्स (१९६९-१९७५) और इंडियन एक्सप्रेस (१९८२-१९८६) के सम्पादक रहे। आमतौर पर इन्हें बी जी वर्गीज के रूप में जाना जाता है। सन १९७५ में इनको पत्रकारिता में उत्कृष्ट योगदान के लिए रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

विष्णु प्रभाकर (जन्म- २१ जून)

विष्णु प्रभाकर अपने साहित्य में भारतीय वाग्मिता और अस्मिता को व्यंजित करने के लिये प्रसिद्ध रहे हैं। विष्णु प्रभाकर जी ने कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, निबंध, एकांकी, यात्रा-वृत्तांत और कविता आदि प्रमुख विधाओं में अपनी बहुमूल्य रचनाएँ की हैं। प्रभाकर जी ने आकाशवाणी, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाओं तथा प्रकाशन संबंधी मीड़िया के प्रत्येक क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की थी। देश विदेश की अनेक यात्राएँ करने वाले विष्णुजी जीवन-पर्यन्त पूर्णकालिक मसिजीवी रचनाकार के रूप में साहित्य साधना में लीन रहे थे।

२२ जून

जगन्नाथदास रत्नाकर (निधन- २२ जून)

जगन्नाथदास रत्नाकर भारत के प्रसिद्ध कवियों में से एक थे। उन्हें आधुनिक युग के श्रेष्ठ ब्रजभाषा के कवियों में गिना जाता है। प्राचीन संस्कृति, मध्यकालीन हिन्दी काव्य, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी, हिन्दी, आयुर्वेद, संगीत, ज्योतिष तथा दर्शनशास्त्र इन सभी की अच्छी जानकारी जगन्नाथदास जी को थी। इन्होंने प्रचुर साहित्य सेवा की थी। ब्रजभाषा काव्यधारा के अंतिम सर्वश्रेष्ठ कवि जगन्नाथदास रत्नाकर आधुनिक हिंदी साहित्य में अनुभूतियों के सशक्त चित्रकार, ब्रजभाषा के समर्थ कवि और एक अद्वितीय भाष्यकार के रूप में विख्यात हैं।

केदारनाथ अग्रवाल (निधन- २२ जून)

केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील काव्य-धारा के एक प्रमुख कवि हैं। उनका पहला काव्य-संग्रह युग की गंगा देश की आजादी के पहले मार्च, १९४७ में प्रकाशित हुआ। हिंदी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए वह संग्रह एक बहुमूल्य दस्तावेज है। केदारनाथ अग्रवाल ने मार्क्सवादी दर्शन को जीवन का आधार मानकर जनसाधारण के जीवन की गहरी व व्यापक संवेदना को अपने कवियों में मुखरित किया है।

२३ जून

श्रीप्रकाश (निधन- २३ जून)

श्रीप्रकाश भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और राष्ट्रीय नेता थे। वे पाकिस्तान में भारत के प्रथम उच्चायुक्त थे, जिन्होंने १९४७ से १९४९ तक देश की सेवा की। उन्हें एक अच्छे वक्ता और लेखक के रूप में भी जाना जाता था। वे सन १९४९ से १९५० तक असम, १९५२ से १९५६ तक मद्रास (आधुनिक चेन्नई) और १९५६ से १९६२ तक महाराष्ट्र के राज्यपाल रहे

थे। देश सेवा और सच्ची निष्ठा के लिए भारत सरकार ने उन्हें १९५७ में पद्मविभूषण से सम्मानित किया था।

चण्डी प्रसाद भट्ट (जन्म- २३ जून)

चण्डी प्रसाद भट्ट गांधीवादी विचारक और सामाजिक कार्यकर्ता हैं। चण्डी प्रसाद भट्ट ने सन १९६४ में गोपेश्वर में दशोली ग्राम स्वराज्य संघ की स्थापना की जो कालान्तर में चिपको आंदोलन की मातृ संस्था बनी और बाद में चण्डी प्रसाद भट्ट को इस कार्य के लिए सन १९८२ में रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

२४ जून

ओंकारनाथ ठाकुर (जन्म- २४ जून)

ओंकारनाथ ठाकुर भारत के प्रसिद्ध संगीतज्ञ एवं हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायक थे। पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर का जितना प्रभावशाली व्यक्तित्व था उतना ही असरदार उनका संगीत भी था। एक बार महात्मा गांधी ने उनका गायन सुनकर टिप्पणी की थी- पण्डित जी अपनी मात्र एक रचना से जन-समूह को इतना प्रभावित कर सकते हैं, जितना मैं अपने अनेक भाषणों से भी नहीं कर सकता। उन्होंने एक बार सर जगदीश चन्द्र बसु की प्रयोगशाला में पेड़-पौधों पर संगीत के स्वरों के प्रभाव विषय पर अभिनव और सफल प्रयोग किया था। जब वे सूरदास का पद- मैं नहीं माखन खायो, मैया मोरी... गाते थे तो पूरे श्रोता समुदाय की आंखें आंसुओं से भीग जाती थीं। इस पद को गाते समय पण्डित जी साहित्य के सभी रसों से साक्षात्कार कराते थे। २४ जून १८९७ को संगीतज्ञ व हिंदुस्तानी शास्त्रीय गायक पं. ओंकारनाथ ठाकुर का जन्म बड़ौदा (गुजरात) में हुआ था। वे ग्वालियर घराने के शीर्ष गायक थे। स्वतंत्र भारत के प्रथम सूर्योदय पर पंडित जी के स्वरों से अलंकृत होकर वंदे मातरम गीत रेडियो से प्रसारित हुआ था। उन्होंने पूरा गीत स्टूडियो में खड़े होकर गाया था। पं. मदनमोहन मालवीय के आग्रह पर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में संगीत के आचार्य पद की गरिमा में इजाफा किया। वे संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, संगीत मार्तण्ड और पद्मश्री से सम्मानित हुए। २९ दिसंबर १९६७ को वे संसार छोड़ गए। १५ अगस्त, १९४७ को प्रात: ६.३० बजे आकाशवाणी से पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर का राग-देश में निबद्ध वन्देमातरम के गायन का सजीव प्रसारण हुआ था। इस प्रसारण का पूरा श्रेय सरदार बल्लभ भाई पटेल को जाता है। पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर का यह गीत दि ग्रामोफोन कम्पनी ऑफ इंडिया के रिकॉर्ड संख्या एसटीसी ०४८ ७१०२ में मौजूद है।

तारा सिंह (जन्म- २४ जून)

मास्टर तारा सिंह प्रसिद्ध कट्टर सिक्ख नेता थे, जिन्होंने प्रथम विश्वयुद्ध के समय सिक्खों को सेना में भर्ती होने के लिए प्रेरित किया। इसी के परिणामस्वरूप ब्रिटिश सरकार ने १९१९ ई. के इण्डिया एक्ट में मुस्लिमों की भांति सिक्खों को भी पृथक साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया था। तारा सिंह एक सिक्ख नेता होने के साथ-साथ पत्रकार और लेखक भी थे। इन्होंने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन का भी समर्थन किया था। लायलपुर के स्कूल में प्रधान अध्यापक का कार्य इन्होंने किया था, जिस कारण इनके नाम के साथ मास्टर शब्द हमेशा के लिए जुड़ गया।

रानी दुर्गावती (निधन- २४ जून)

रानी दुर्गावती गोंडवाना की शासक थीं, जो भारतीय इतिहास की सर्वाधिक प्रसिद्ध रानियों में गिनी जाती हैं। दुर्गावती ने

१६ वर्ष तक जिस कुशलता से राज संभाला, उसकी प्रशस्ति इतिहासकारों ने की। आइना-ए-अकबरी में अबुल फजल ने लिखा है, दुर्गावती के शासनकाल में गोंडवाना इतना सुव्यवस्थित और समृद्ध था कि प्रजा लगान की अदायगी स्वर्णमुद्राओं और हाथियों से करती थीं। मंडला में दुर्गावती के हाथी खाने में उन दिनों १४०० हाथी थे। जबलपुर में स्थित रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय भी इनके नाम पर बना है। रानी दुर्गावती ने अपनी दासी के नाम पर चेरीताल, अपने नाम पर रानीताल तथा अपने विश्वस्थ दीवान आधारसिंह के नाम पर आधारताल बनवाया।

पंडित श्रद्धाराम शर्मा (निधन- २४ जून)

पंडित श्रद्धाराम शर्मा अथवा श्रद्धाराम फिल्लौरी एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे, किन्तु एक ज्योतिषी के रूप में इन्हें वह प्रसिद्धि नहीं मिली, जो इनके द्वारा लिखाई गई अमर आरती ओम जय जगदीश हरे के कारण मिली। सम्पूर्ण भारत में पंडित श्रद्धाराम शर्मा द्वारा लिखित ओम जय जगदीश हरे आरती गाई जाती हैं। श्रद्धाराम शर्मा जी ने इस आरती की रचना १८७० ई. में की थी। पंडित जी सनातन धर्म प्रचारक, ज्योतिषी, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी और संगीतज्ञ होने के साथ-साथ हिन्दी और पंजाबी के प्रसिद्ध साहित्यकार भी थे। अपनी विलक्षण प्रतिभा और ओजस्वी वाक्पटुता के बल पर उन्होंने पंजाब में नवीन सामाजिक चेतना एवं धार्मिक उत्साह जगाया था, जिससे आगे चलकर आर्य समाज के लिये पहले से निर्मित एक उर्वर भूमि मिली थी।

२५ जून

विश्वनाथ प्रताप सिंह

दिवंगत विश्वनाथ प्रताप सिंह २ दिसंबर १९८९ को देश के आठवें प्रधानमंत्री बने थे। उन्होंने ७ अगस्त १९९० को मंडल आयोग द्वारा सरकारी नौकरी में २२.५ फीसदी आरक्षण एससी व एसटी को और २७% पिछड़ों को देने की सिफारिश को लागू किया। जाति के आधार पर आरक्षण के इस निर्णय ने पूरे देश की राजनीति को प्रभावित किया। आज भी देश में मंडल आयोग की सिफारिशें लागू हैं, जिनके आधार पर पिछड़ी जातियों को आरक्षण का लाभ मिल रहा है।

राजीव गांधी सरकार के पतन के कारण बने विश्वनाथ प्रताप सिंह ने आम चुनाव के माध्यम से २ दिसम्बर, १९८९ को प्रधानमंत्री पद प्राप्त किया था। सिंह बेहद महत्वाकांक्षी होने के अतिरिक्त कुटिल राजनीतिज्ञ भी कहे जाते हैं।

चन्द्रशेखर पाण्डे (जन्म- २५ जून)

चन्द्रशेखर पाण्डे प्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। इन्होंने कई महत्वपूर्ण रचनाएँ की थीं, जिनमें आधुनिक हिन्दी कविता और रसखान तथा उनका काव्य आदि उल्लेखनीय हैं। कानपुर नवजीवन पुस्तकालय और श्री हिन्दी साहित्य मंडल से चन्द्रशेखर पाण्डे जी का घनिष्ठ संबंध रहा था।

सुचेता कृपलानी (जन्म- २५ जून)

सुचेता कृपलानी अथवा सुचेता मजूमदार एक प्रसिद्ध भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एवं राजनीतिज्ञ थीं। ये उत्तर प्रदेश की चौथी और भारत की प्रथम महिला मुख्यमंत्री थी।

मनोज कुमार पांडेय (जन्म- २५ जून)

कैप्टन मनोज कुमार पांडेय परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति है। इन्हें यह सम्मान सन १९९९ में मरणोपरांत मिला। पाकिस्तान के साथ कारगिल का युद्ध बहुत से कारणों से विशेष कहा जाता है। एक तो यह युद्ध बेहद कठिन और ऊँची चोटियों पर लड़ा गया, जो बर्फ से ढकी और दुर्गम थीं, साथ ही यह युद्ध पाकिस्तान की लम्बी तैयारी का नतीजा था जिसकी योजना उसके मन में बरसों से पल रही थीं। इसी युद्ध के कठिन मोर्चा में एक मोर्चा खालूबार का था जिसको फतह करने के लिए कमर कस कर कैप्टन मनोज कुमार पांडे अपनी १/११ गोरखा राइफल्स की अगुवाई करते हुए दुश्मन से जूझ गए और जीतकर ही माने। भले ही, इस कोशिश में उन्हें अपने प्राणों का बलिदान देना पड़ा।

२६ जून

बाल गन्धर्व (जन्म- २६ जून)

बाल गन्धर्व मराठी रंगमंच के महान नायक और प्रसिद्ध गायक थे। उन्होंने रंगमंच पर अपने अभिनय की शुरुआत सर्वप्रथम शकुंतला का चरित्र निभाकर की थी। नारायण श्रीपाद राजहंस को बाल गन्धर्व के नाम से अधिक जाना जाता है। यह नाम उन्हें भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानियों में से एक बाल गंगाधर तिलक ने दिया था। बाल गन्धर्व मराठी रंगमंच पर महिला चरित्रों को निभाते, क्योंकि तत्कालीन समय में महिलाएं रंगमंच पर किसी भी प्रकार की भूमिका नहीं निभाती थीं। संगीत नाटक अकादमी से उन्हें सर्वोत्तम अभिनेता का पुरस्कार मिला। १९६४ में राष्ट्रपति ने उन्हें पद्मभूषण के अलंकरण से सम्मानित किया था।

रामा राघोबा राणे (जन्म- २६ जून)

सेकेंड लेफ्टिनेंट रामा राघोबा राणे परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय सैनिक हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९४८ में मिला था। सेकेंड लेफ्टिनेंट रामा राघोबा राणे ने जिस बहादुरी धैर्य तथा कुशल नेतृत्व से यह काम पूरा किया और भारत को विजय का श्रेय दिलाया, उसके लिए उन्हें परमवीर चक्र प्रदान किया गया। यह सम्मान उन्होंने स्वयं प्राप्त किया।

२७ जून

पी.टी.उषा (जन्म- २७ जून)

पी.टी. उषा भारत के केरल राज्य की खिलाड़ी हैं। भारतीय ट्रैक एण्ड फील्ड की रानी माने जानेवाली पी.टी. उषा भारतीय खेलकूद में १९७९ से हैं। वे भारत के अब तक के सबसे अच्छे खिलाड़ियों में से हैं। नवें दशक में जो सफलताएँ और ख्याति पी.टी. उषा ने प्राप्त की हैं वे उनसे पूर्व कोई भी भारतीय महिला एथलीट नहीं प्राप्त कर सकी। वर्तमान में वे एशिया की सर्वश्रेष्ठ महिला एथलीट मानी जाती हैं। पी.टी. उषा को उड़न परी भी कहा जाता है। १९७६ में केरल राज्य सरकार ने महिलाओं के लिए एक खेल विद्यालय खोला और उषा को अपने जिले का प्रतिनिधि चुना गया।

अकिलन (जन्म- २७ जून)

अकिलन तमिल भाषा के सुविख्यात साहित्यकार, उपन्यासकार, लघु कहानी लेखक, पत्रकार, व्यंग्यकार, यात्रा लेखक, नाटककार तथा पटकथा लेखक थे। अकिलन लेखन कार्य अकिलन नाम विगम अखिलंदम (पी.वी. अखिलंदम) था। उन्होंने अपना अधिकांश लेखन कार्य अकिलन नाम से किया और इसी नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की। एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में भी वे जाने जाते थे।

बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय (जन्म- २७ जून)

बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय १९वीं शताब्दी के बंगाल के प्रकाण्ड विद्वान तथा महान कवि और उपन्यासकार थे। १८७४ में प्रसिद्ध देश भक्ति गीत वन्देमातरम की रचना की जिसे बाद में आनन्द मठ नामक उपन्यास में शामिल किया गया। प्रसंगत: ध्यातव्य है कि वन्देमारतम गीत को सबसे पहले १८९६ में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गाया गया था।

वन्दे मातरम के रचयिता प्रख्यात बांग्ला कवि बंकिमचंद्र चटोपाध्याय हैं। बंकिमचंद्र की गिनती देश के महान साहित्यकारों में होती है। बांग्ला में आधुनिक उपन्यास लेखन की शुरूआत भी उन्होंने ही की। नोबल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ टैगोर के वे प्रेरणा स्रोत थे। उनका जन्म १८३८ में हुआ था। कलकत्ता के हुगली कॉलेज तथा प्रसिद्ध प्रेसीडेंसी कॉलेज से उन्होंने पढ़ाई की। २० साल की उम्र में उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री ली। उस समय इस उपाधि को प्राप्त करनेवाले वे पहले भारतीय थे। बंकिम अंग्रजी भाषा के अच्छे जानकार थे। अंग्रेजी साहित्य का उन्होंने गहन अध्ययन किया था, लेकिन अपनी सारी रचनाएं उन्होंने बांग्ला भाषा में ही लिखीं। बंकिमचंद्र का पहला उपन्यास था दुर्गेशनंदिनी, जो बादशाह अकबर के समय की एक घटना पर आधारित है। उनका लोकप्रिय उपन्यास है आनंद मठ इसकी रचना बंकिमचंद्र ने १८८२ में की थी। इस उपन्यास की कहानी १७७० में बंगाल में आये भयंकर अकाल पर आधारित है। वंदे मातरम् इसी उपन्यास का एक गीत है, जो स्वतंत्रता संग्राम में प्रेरणा स्रोत बना।

बंगाल और समूचे भारत के साहित्यिक पुनर्जागरण काल की हस्ती के रूप में प्रख्यात और स्वतंत्रता सेनानियों को राष्ट्रप्रेम का जयघोष देनेवाले बंकिम चंद्र चटर्जी एक महान रचनाकार थे। प्रख्यात कवि, उपन्यासकार, लेखक और पत्रकार चटर्जी ने अपने जीवनकाल में कई प्रसिद्ध रचनायें दीं और आनंदमठ की रचना के साथ स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में अमर हो गए। १८८२ में लिखा गया यह वही उपन्यास था जिसमें उनके द्वारा उचित वंदे मातरम प्रकाशित हुआ। यह वह नारा था जो हर स्वतंत्रता सेनानी के लिए जयघोष और आजादी की लड़ाई का शंखनाद हुआ करता था। २७ जून १८३८ को जन्मे बंकिम चंद्र चटर्जी द्वारा लिखा गया वंदे मातरम जहां आजादी के दीवानों का विजयघोष हुआ करता था वहीं बाद में यह गीत भारत का राष्ट्रगीत बना। आज कुछ लोग धार्मिक कारणों से इसका बेशक विरोध कर रहे हों लेकिन यह आज भी राष्ट्रवासियों को मातृभूमि से प्यार करने का संदेश देता नजर आता है। इतिहासकार पी. हरिश का कहना है कि चटर्जी द्वारा रचित यह गीत न सिर्फ क्रांतिकारियों बल्कि समूचे हिन्दुस्तानियों के लिए देशभक्ति के जज्बे का स्रोत हुआ करता था। स्वतंत्रता नायक जब वंदे मातरम का शंखनाद किया करते थे तो इससे ब्रितानिया हुकूमत की नींद हराम हो जाती थी। चटर्जी कलकत्ता विद्यापीठ के प्रथम दो स्नातकों में से एक थे। बाद में उन्होंने कानून की उपाधि हासिल की। अपनी मेधा शक्ति के बल पर चटर्जी का डिप्टी मजिस्ट्रेट जैसे प्रतिष्ठित पद के लिए चयन हुआ। १८९१ में वह सेवानिवृत्त हो गए। उनके कार्यकाल के दौरान हुई घटनाओं से उनके मन में ब्रिटिश शासन के साथ संघर्ष की भावना

पैदा हो गई। चटर्जी ने मृणालिनी, विषवृक्ष, चंद्रशेखर, रजनी, आनंदमठ, देवी चौधरानी और सीताराम जैसे उपन्यासों से भारतीय साहित्य पर अमिट छाप छोड़ी। इसीलिये प्रमथनाथ बिशी जैसे आलोचकों ने चटर्जी को बांग्ला साहित्य का सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार करार दिया है। बंकिम चंद्र चटर्जी को अपने जीवनकाल में कई विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। जब वह ११ साल के थे तो घरवालों ने उनका विवाह कर दिया लेकिन १८५९ में उनकी पत्नी का निधन हो गया। चटर्जी ने बाद में दूसरी शादी कर राजलक्ष्मी देवी को अपनी जीवनसंगिनी बनाया जिनसे उन्हें तीन पुत्रियां हुई। आठ अप्रैल १८९४ को ५५ साल की उम्र में बंकिम चंद्र चटर्जी का निधन हो गया। देश का राष्ट्र गान जन गण मन रचनेवाले और नोबेल पुरस्कार विजेता रवींद्र नाथ टैगोर ने चटर्जी द्वारा रचित वंदे मातरम को सर्वप्रथम १८९६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में गाया। आगे चलकर वंदे मातरम को राष्ट्रगीत का दर्जा मिला। १९५२ में चटर्जी के आनंदमठ उपन्यास पर एक फिल्म बनाई गई जिसका निर्देशन हेमन गुप्ता द्वारा किया गया था। वंदे मातरम को जब ऑस्कर विजेता एआर हरमान ने अपनी आवाज और संगीत से संवारा तो यह दुनियाभर में प्रसिद्ध हो गया। २००२ में कराए गए एक सर्वेक्षण में इस गीत ने विश्वभर के लगभग सात हजार गीतों में से टॉप टेन की सूची में दूसरा स्थान हासिल किया।

राष्ट्रीय गीत वन्दे मातरम के रचयिता बंकिमचन्द्र जी का नाम इतिहास में युगों युगों तक अमर रहेगा क्योंकि यह गीत उनकी एक ऐसी कृति है जो आज भी प्रत्येक भारतीय के हृदय को आन्दोलित करने की क्षमता रखती है।

बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय १९ वीं शताब्दी के बंगाल के प्रकाण्ड विद्वान तथा महान कवि और उपन्यासकार थे। १८७४ में प्रसिद्ध देश भक्ति गीत वन्देमातरम की रचना की जिसे बाद में आनन्द मठ नामक उपन्यास में शामिल किया गया। प्रसंगत: ध्यातव्य है कि वन्देमातरम गीत को सबसे पहले १८९६ में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गाया गया था।

पूर्णिमा वर्मन (जन्म- २७ जून)

पूर्णिमा वर्मन एक पत्रकार के रूप में अपना कार्य जीवन प्रारंभ करके वेब पर हिंदी को स्थापित कर उसे लोकप्रिय बनाने के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। प्रवासी और विदेशी हिंदी लेखकों को प्रकाशित करने के लिए उन्होंने अभिव्यक्ति और अनुभूति जैसे साझा मंचों को तैयार किया, जो अपने स्वरूप में जाल पत्रिकाएं हैं।

२८ जून

प्लासी की लड़ाई (१७५७)

२८ जून, १७५७ को अंग्रेजों और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला के बीच मुर्शिदाबाद (पं. बंगाल) के प्लासी गांव के पास लड़ा गया था। रॉबर्ट क्लाइव अंग्रेजी सेना का नेतृत्व कर रहे थे। जबकि नवाब सिराजुद्दौला की सेना का नेतृत्व सेनापति मीरजाफर कर रहे थे।

अंग्रेजी सेना में मात्र ३००-३५० सैनिक थे जबकि सिराजुद्दौला की सेना में १८ हजार सैनिक थे। रॉबर्ट क्लाइव ने मीरजाफर को नवाब बनाने का लालच देकर युद्ध में आत्मसमर्पण करने के लिए राजी कर लिया था। इस कारण युद्ध समाप्त हो गया और अंग्रेजी सेना विजयी हो गयी। इसके बाद बंगाल पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया और फिर धीरे-धीरे पूरे भारत पर अंग्रेजी राज कायम हो गया।

मरियप्पन थंगावेलु (जन्म- २८ जून)

मरियप्पन थंगावेलु भारत के ऊँची कूद के खिलाड़ी हैं। ब्राजील के रियो डी जनेरियो में पैरालंपिक खेलों में पुरुषों के ऊँची कूद मुकाबले में मरियप्पन थंगावेलु ने स्वर्ण और वरूण भाटी ने कांस्य पदक जीता है। मरियप्पन थंगावेलु ने १.८९ मी. की जंप लगाते हुए सोना जीता। मरियप्पन थंगावेलु, मुरलीकांत पेटकर (तैराकी, १९७२ हेजवर्ग) और देवेंद्र झाझरिया (भाला फेंक, एथेंस, २००४) के बाद स्वर्ण जीतनेवाले तीसरे भारतीय हैं।

शिवप्रसाद गुप्त (जन्म- २८ जून)

शिवप्रसाद गुप्त हिन्दी के समाचार पत्र दैनिक आज के संस्थापक थे। देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले क्रांतिकारियों को इनका समर्थन प्राप्त था। अपनी राष्ट्रवादी गतिविधियों के लिए भी शिवप्रसाद गुप्त ने कई बार जेल की सजा काटी। वे काशी विद्यापीठ के संस्थापक थे। बनारस में भारत माता मंदिर का निर्माण भी इन्होंने करवाया था।

नरसिह राव पी.वी. (जन्म- २८ जून)

पी.वी. नरसिह राव भारत के नौवें प्रधानमंत्री के रूप में जाने जाते हैं। इनके प्रधानमंत्री बनने में भाग्य का बहुत बड़ा हाथ रहा है। २९ मई १९९३ को राजीव गांधी की हत्या हो गई थी। ऐसे में सहानुभूति की लहर के कारण कांग्रेस को निश्चय ही लाभ प्राप्त हुआ। १९९१ के आम चुनाव दो चरणों में हुए थे। प्रथम चरण के चुनाव राजीव गांधी की हत्या से पूर्व हुए थे और द्वितीय चरण के चुनाव उनकी हत्या के बाद में। प्रथम चरण की तुलना में द्वितीय चरण के चुनावों में कांग्रेस का प्रदर्शन बेहतर रहा। इसका प्रमुख कारण राजीव गांधी की हत्या से उपजी सहानुभूति की लहर थी। इस चुनाव में कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत नहीं प्राप्त हुआ लेकिन वह सबसे बड़े दल के रूप में उभरी। कांग्रेस ने २३२ सीटों पर विजय प्राप्त की थी। फिर नरसिम्हा राव को कांग्रेस संसदीय दल का नेतृत्व प्रदान किया गया।

राजीव गांधी की अकस्मात मौत के कारण ही नरसिम्हा राव को देश का प्रधानमंत्री बनने का अवसर प्राप्त हुआ। बेशक राजीव जी की मौत एक बेहद दु:खद हादसा थी लेकिन नरसिम्हा राव का देश का प्रधानमंत्री बनना इस देश का सौभाग्य रहा है। जब राव साहब ने देश की बागडोर अपने हाथ में ली उस समय देश के हालात बेहद गंभीर थे। उन्होंने अपनी असाधारण सूझबूझ से देश को उन गंभीर हालातों से बाहर निकला।

हमारा देश नेहरू जी की मिश्रित अर्थ व्यवस्था के आधार पर चल रहा था जिसे उन्होंने एक उदारवादी अर्थ व्यवस्था बना दिया। इस देश ने राव साहब को भुला दिया है क्योंकि उनकी ही पार्टी कांग्रेस ने उन्हें कभी कोई महत्व नहीं दिया। वह विडम्बना है कि कांग्रेस नेहरू गांधी परिवार से आगे सोच ही नहीं पाती। यही कारण है कि आज भी कांग्रेसी कभी राव साहब का नाम लेना पसंद नहीं करते। राव साहब को वो सम्मान प्राप्त नहीं हुआ है जिसके वो हकदार थे।

वास्तव में देश को उदारवादी व्यवस्था में ले जाने का सारा श्रेय मनमोहन सिंह बटोर ले गये और देश को यह संदेश देने की कोशिश की गई कि नरसिम्हा राव साहब के समय में जो भी काम हुए, वो सब मनमोहन सिंह जी द्वारा दिये गये थे। यह विचार का विषय है कि जो काम मनमोहन सिंह जी राव साहब के अधीन पांच साल में कर सके, वो काम वे दस साल खुद के शासनकाल में नहीं कर पाएं।

बेशक इस नीति को वाजपेयी जी और मनमोहन सिंह जी ने आगे बढ़ाया और आज मोदी जी इसी नीति को लेकर आगे चल रहे हैं लेकिन इसकी शुरूआत करने का पूरा श्रेय राव साहब को ही जाता है। १९९० से पहले का वो वक्त जब एक गैस कनेक्शन, टेलीफोन कनेक्शन लेना इस देश में एक जंग जीतने के बराबर था। कार तो उस वक्त अमीरों की जायदाद थी ही लेकिन एक स्कूटर भी लेना आम आदमी की बस की बात नहीं थी। इसका कारण था कि इस देश में लाइसेंस कोटा का राज चल रहा था। हर कंपनी को माल बनाने के लिये सरकार से इजाजत लेनी होती थी, उसे क्या बनाना है, कैसा बनाना है और कितना बनाना है, यह सब सरकार तय करती थी। सरकारी कंपनियों पर सरकारी अफसरों का कब्जा था, उनके बनाये हुए घटिया माल सरकारी विभागों को जबरदस्ती खरीदने पड़ते थे। इन्हीं सब कारणों से देश बर्बाद हो चुका था।

आज के मुकाबले में देश उस वक्त कहां खड़ा था। ऐसे हालातों में राव ने नई आर्थिक नीति की ओर जाने का रास्ता चुना। देश से निर्यात बढ़ाने के लिये उन्होंने भारी राजनीतिक विरोध के बावजूद रूपये के मूल्य में २० प्रतिशत की कटौती कर दी इसके लिये उन्हें पार्टी के भीतर भी भारी विरोध का सामना करना पड़ा। कई तरह की सब्सिडियों पर कैंची चलायी गई और व्यापारिक प्रतियोगिता को बढ़ावा दिया गया, सरकारी कंपनियों पर सरकारी नियंत्रण कम करके उन्हें लाभदायक बनाने की कोशिश की गई।

उदारीकरण को लेकर यह भ्रम फैलाया जा रहा था कि इसके कारण विदेशी कंपनियों का देश पर एकाधिकार हो जायेगा और देशी कंपनियां बन्द हो जायेंगी। ईस्ट इण्डिया कंपनी का उदाहरण देकर बताया जाता था अब देश फिर गुलाम हो सकता है क्योंकि विदेशी कंपनियां भारत आ रही हैं। मशीनीकरण के कारण बेरोजगारी बढ़ने का अंदेशा जताया जाता था लेकिन बाद में यह सारी धारणाएं निर्मूल साबित हुई और देशी कंपनियों ने विदेशी कंपनियों को कई क्षेत्रों में पीछे छोड़ दिया। देश में रोजगार बढ़ा और आर्थिक मजबूती आई, देश का विदेशी मुद्रा भण्डार भरने लगा।

नरसिम्हा राव ने एक नये रास्ते पर चलने की हिम्मत दिखायी जबकि वे एक अल्पमत सरकार का नेतृत्व कर रहे थे। उन्होंने मनमोहन सिंह को वित्त मंत्रालय सौंप दिया और उनको काम करने की पूरी छूट दी। राव एक चट्टान की तरह मनमोहन सिंह के पीछे खड़े हो गये। मनमोहन सिंह जी बड़े अर्थशास्त्री थे लेकिन वो कांग्रेस के नेता नहीं थे, इसके बावजूद उन्हें अपना काम करने की पूरी आजादी राव साहब की मेहरबानी से ही मिली थी जो आजादी उन्हें अपने दस साल के प्रधानमंत्री काल में यूपीए शासन के दौरान कभी नहीं मिली।

अपने दस साल के शासनकाल में मनमोहन जी उदारीकरण को भूलकर कांग्रेस की वोट राजनीति के तहत मुफ्त की खैरात बांटते रहे और देश का विकास लगभग रुक गया था। कोई भी विशेषज्ञ तभी बेहतर तरीके से काम कर सकता है जब उसे किसी बेहतर राजनीतिक शक्ति का मार्गदर्शन और संरक्षण प्राप्त होता है, जैसा कि राव साहब के समय मनमोहन जी को प्राप्त था लेकिन अपने स्वयं के शासनकाल में उन्हें गलत निर्देशों पर काम करने के लिये मजबूर किया गया।

राव साहब के कामों का पुरस्कार मनमोहन सिंह को मिला और राव साहब को इसके बदले तिरस्कार मिला, कांग्रेस ने मनमोहन सिंह जी के योगदान को तो स्वीकार कर लिया लेकिन उनके योगदान को कभी स्वीकार नहीं किया जबकि राव साहब ने भी शासन सोनिया जी से सलाह लेकर ही चलाया था। राव साहब के शासनकाल में बाबरी मस्जिद गिरा दी गई जिसे उनकी नाकामी माना गया क्योंकि उन्होंने हिंदू संगठनों के दिये गये आश्वासनों पर भरोसा किया था। उन पर सांसदों

की खरीद का भी आरोप लगा था क्योंकि उन्होंने विश्वास मत प्राप्त करने के लिये झारखण्ड मुक्ति मोर्चा के सांसदों का समर्थन प्राप्त किया था।

हर नेता के साथ कुछ सफलताएं और असफलताएं जुड़ी होती है लेकिन राव साहब की सफलताएं भुलाई नहीं जा सकती। आज मोदी जी विकास के जिस महल को खड़ा करना चाहते हैं उसकी नींव राव साहब ही रखकर गये हैं। वाजपेयी सरकार ने उसी नींव पर शाइनिंग इण्डिया का सपना देखा था, न तो वाजपेयी जी दोबारा चुनाव जीत पाये और न ही राव साहब को दोबारा जीत हासिल हुई।

२९ जून

पी.सी. महालनोबिस (जन्म- २९ जून)

प्रशान्त चन्द्र महालनोबिस एक प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक एवं सांख्यिकीविद थे। उन्हें दूसरी पंचवर्षीय योजना के अपने मसौदे के कारण जाना जाता है। भारत की आजादी के पश्चात नवगठित मंत्रिमंडल के सांख्यिकी सलाहकार बने तथा औद्योगिक उत्पादन की तीव्र बढ़ोतरी के जरिए बेरोजगारी समाप्त करने के सरकार के प्रमुख उद्देश्य को पूरा करने के लिए योजना का खाका खीचें।

वैज्ञानिक होने के अलावा श्री महालनोबिस की रुचि साहित्य में भी थी। उनके गुरु रवींद्रनाथ टैगोर के साथ काफी अच्छे संबंध थे। बचपन में वे अपने दादा, गुरु चंद्र महालनोबिस के साथ गुरुदेव के पिता देवेंन्द्रनाथ टैगोर के पास आते-जाते थे। प्रोफेसर महालनोबिस के संबंध गुरुदेव के साथ १९१० से ज्यादा प्रगाढ़ होने लगे जब वे पहली बार शांति निकेतन पहुंचे। वहां महालनोबिस ने टैगोर के साथ दो महीने का समय बिताया। इस दरम्यान टैगोर ने उन्हें आश्रमिका संघ का सदस्य बना दिया। बाद में जब टैगोर ने विश्व भारती की स्थापना की तो प्रोफेसर महालनोबिस को संस्थान का सचिव नियुक्त किया।

प्रोफेसर प्रशान्त चन्द्र महालनोबिस का सबसे बड़ा योगदान उनके द्वारा शुरू किया गया सैंपल सर्वे हैं, जिसके आधार पर आज बड़ी बड़ी नीतियां और योजनाएं बनाई जा रही हैं। उन्होंने इसकी शुरुआत एक निश्चित भूभाग पर होनेवाली जूट की फसल के आंकड़ों से की और यह बताया कि कैसे उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। हालांकि उनके काम के तरीकेपर शुरुआत में सवालिया निशान लगाए गए पर उन्होंने बार-बार खुद को सिद्ध किया और अंतत: उनके द्वारा किए गए कार्यों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी मान्यता मिली।

२९ जून १८९३ को संख्यिकीविद प्रशांत चंद्र महालनोबिस का जन्म कोलकाता में हुआ था। उन्होंने कैंब्रिज यूनिवर्सिटी के अपने शिक्षक डब्लूएच मैकाले के कहने पर बायोमेट्रिक किताब पढ़ी और यहीं से उनका रूझान सांख्यिकी की ओर होने लगा। उन्होंने एंग्लो इंडियंस के बारे में एकत्र किये गये आंकड़ों का विश्लेषण किया। इससे जो परिणाम आया वह भारत में सांख्यिकी का पहला शोध-पत्र माना जाता है। सैंपल सर्वे की शुरुआत उन्होंने ही की थी। उन्हें ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी द्वारा वेलडन मेडल पुरस्कार दिया गया। उनके ही प्रयास से देश में भारतीय सांख्यिकी संस्थान की स्थापना हुई। वे पद्म विभूषण से सम्मानित किये गये। २८ जून १९७२ को उनका निधन हुआ था।

महालनोबीस ने अपने जीवन में अनेक पुरस्कार और मेडल हासिल किए। उन्हें राष्ट्रसंघ के सांख्यिकी आयोग में भी

बतौर सदस्य रखा गया, जहां बाद में वह अध्यक्ष भी रहे। २९ जून १९७२ को कलकत्ता में उनकी मृत्यु हो गई।

गणितज्ञ, सांख्यिकीविद और थिंकटैंक प्रशान्त चन्द्र महालनोबीस नहीं होते तो शायद नेहरू का आर्थिक और औद्योगिक दर्शन कभी व्यावहारिक वास्तविकता नहीं हासिल कर पाता।

भारत के औद्योगिक विकास के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की रूपरेखा को अंतिम रूप देनेवाले महालनोबीस ही थे। भारत की दूसरी पंचवार्षिक योजना महालनोबीस मॉडल पर ही आधारित थी। नियोजित अर्थदर्शन के भारतीय भाष्यकार प्रशांत चन्द महालनोबीस का जन्म कलकत्ता में २९ जून १८९३ को हुआ। कलकत्ता विश्वविद्यालय से विज्ञान में ऑनर्स की डिग्री हासिल करनेवाले महालनोबीस ने सन १९१५ में कैमब्रिज से एमए किया। उन्हें देश के तमाम विश्वविद्यालयों ने बतौर सम्मान डाक्टरेट की डिग्री प्रदान की। महालनोबीस मूलत: सांख्यिकी और जनसंख्या अध्ययन क्षेत्र के विशेषज्ञ थे। उन्होंने कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में सन १९१५ से १९२२ तक भौतिक विज्ञान का अध्यापन किया और १९२२ से १९४५ तक वह इसी कॉलेज के भौतिकी विभाग के विभागाध्यक्ष रहे तथा १९४५ से १९४८ तक प्रिंसिपल रहे। महालनोबीस ने विश्वभारती में भी अध्यापन का काम किया। वह १९४१ से १९४५ तक कलकत्ता विश्वविद्यालय के सांख्यिकी विभाग के विभागाध्यक्ष रहे। १९४५ से १९४८ तक बंगाल सरकार के सांख्यिकी सलाहकार का पद भी सौंपा गया। वह भारतीय सांख्यिकीय संस्थान कलकत्ता के सचिव और महानिदेशक भी रहे। योजना आयोग में बतौर सदस्य महालनोबीस को १९५५ में लाया गया और वह यहां १९६७ तक रहे। इस दौरान उन्होंने भारत के योजना आयोग को स्थायी दिशा और दर्शन दिया।

राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी (जन्म- २९ जून)

राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी भारत के अमर शहीद प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक थे। आजादी के आन्दोलन को गति देने के लिये धन को तत्काल व्यवस्था की जरूरत के मद्देनजर शाहजहाँपुर में हुई बैठक के दौरान रामप्रसाद बिस्मिल ने अंग्रेजी खजाना लूटने की योजना बनायी थी। योजनानुसार दल के प्रमुख सदस्य राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी ने ९ अगस्त, १९२५ को लखनऊ के काकोरी रेल्वे स्टेशन से छूटी आठ डाउन सहारनपुर-लखनऊ पैसेन्जर ट्रेन को चेन खींच कर रोका और क्रांतिकारी बिस्मिल के नेतृत्व में अशफाक उल्ला खाँ, चन्द्रशेखर आजाद व छ: अन्य सहयोगियों की मदद से सरकारी खजाना लूट लिया गया। अंग्रेज सरकार ने मुकदमा चलाकर राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खाँ आदि को फाँसी की सजा सुनाई।

दामोदर धर्मानंद कोसांबी (निधन- २९ जून)

दामोदर धर्मानंद कोसांबी भारत के प्रसिद्ध विद्वान, भाषा-वैज्ञानिक और गणितज्ञ थे। गणित के अतिरिक्त भारत के इतिहास और संस्कृति में भी इनका अतुलनीय योगदान रहा है। दामोदर धर्मानंद जी ने सोलह वर्षों तक टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च में अपनी सेवाएं दी थीं। होमी भाभा के साथ अपने कुछ विवादों के चलते इन्हें संस्थान से हटा दिया गया था। इन्होंने कुछ ग्रंथ भी लिखे थे, जो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

माइकल मधुसूदन दत्त (निधन- २९ जून)

माइकल मधुसूदन दत्त बंगला भाषा के प्रसिद्ध कवि, साहित्यकार और नाटककार थे। उनका हिन्दु नाम मधुसूदन दत्त

था किंतु ईसाई धर्म स्वीकार कर लेने और एक ईसाई युवती से विवाह के बाद उनका नाम माइकल मधुसूदन दत्त हो गया। माइकल मधुसूदन बंगाल में अपनी पीढ़ी के उन युवकों के प्रतिनिधि थे, जो तत्कालीन हिन्दू समाज के राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन से क्षुब्ध थे। वे अतिशय भावुक व्यक्ति थे। यह भावुकता उनकी आरंभ की अंग्रेजी रचनाओं तथा बाद की बंगला रचनाओं में भी व्याप्त हुई।

गवरी देवी (निधन- २९ जून)

गवरी देवी राजस्थान की प्रसिद्ध लोक गायिका थीं। उन्होंने राष्ट्रीय तथा अंतराराष्ट्रीय स्तर पर मांड गायकी का जादू बिखेरा। अपनी खनकदार गायकी से गवरी देवी ने देश दुनिया में अपनी पहचान बनाई थी। गवरी देवी को मरु कोकिला के नाम से प्रसिद्ध प्राप्त है।

देवकीनन्दन खत्री (जन्म- २९ जून)

देवकीनन्दन खत्री हिन्दी के प्रथम तिलिस्मी लेखक थे। उन्होंने चंद्रकांता, चंद्रकांता संतति, काजर की कोठरी, नरेंद्र मोहिनी, कुसुम कुमारी, वीरेंद्र वीर, गुप्त गोंडा, कटोरा भर और भूतनाथ जैसी रचनाएँ की। हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में उनके उपन्यास चंद्रकांता का बहुत बड़ा योगदान रहा है। इस उपन्यास ने सबका मन मोह लिया था। इस किताब का रसास्वादन करने के लिए कई गैर-हिन्दी भाषियों ने हिन्दी भाषा सीखी।

३० जून

सी.एन.आर. राव (जन्म- ३० जून)

चिंतामणि नागेश रामचंद्र राव एक रसायन वैज्ञानिक हैं जिन्होंने घन-अवस्था और संरचनात्मक रसायन शास्त्र के क्षेत्र में मुख्य रूप से काम किया है। इन्हें सी.एन.आर. राव के नाम से अधिक जाना जाता है। वर्तमान में वह भारत के प्रधानमंत्री के वैज्ञानिक सलाहकार परिषद के प्रमुख के रूप में सेवा कर रहे हैं। इन्होंने लगभग १५०० शोध पत्र और ४५ वैज्ञानिक पुस्तकें लिखी हैं। १६ नवंबर २०१३ को भारत सरकार ने उन्हें भारत के सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार भारत रत्न से सम्मानित करने का निर्णय लिया। चंद्रशेखर वेंकट रामन और अब्दुल कलाम के बाद इस पुरस्कार से सम्मानित किये जानेवाले वे तीसरे वैज्ञानिक हैं।

नागार्जुन

३० जून १९११ को प्रगतिशील लेखक और कवि नागार्जुन का जन्म दरभंगा (बिहार) में हुआ था। उनका वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र था। वे हिंदी साहित्य में नागार्जुन और मैथिली मेंयात्री उपनाम से लिखा करते थे। उनकी रचनाओं में युगधारा, खिचड़ी विप्लव देखा हमने प्यासी पथराई आंखें, तुमने कहा था, इस गुबार की छाया में, बाबा बटेसरनाथ, पुरानी, जूतियों का कोरस, अभिनंदन आदि प्रमुख हैं।

पत्रहीन नग्न गाछ मौथिली काव्य संग्रह के लिए वे साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित हुए। पांच नवंबर १९९८ को उनका निधन हो गया था।

१ जुलाई

बिधान चंद्र राय

बिधान चंद्र राय को बहुमुखी प्रतिभा के धनी एक वरिष्ठ चिकित्सक, विलान शिक्षाविद, निर्भीक स्वतंत्रता सेनानी, कुशल राजनीतिज्ञ और प्रसिद्ध समाज सेवक के साथ साथ आधुनिक भारत के राष्ट्र निर्माता के रूप में भी बड़ी श्रद्धा व सम्मान के साथ स्मरण किया जाता है। विशेषकर बंगाल के प्रथम मुख्यमंत्री के रूप में उनके द्वारा किए गये उल्लेखनीय कार्यों के संदर्भ में उन्हें बंगाल का मसीहा भी कहा जाता है।

चन्द्रशेखर (जन्म- १ जुलाई)

चन्द्रशेखर सिंह भारत के आठवें प्रधानमंत्री थे। इन्हें युवा तुर्क का सम्बोधन इनकी निष्पक्षता के कारण प्राप्त हुआ था। वह मेधा प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। ऐसे बहुत ही कम लोग होते हैं जिन्हें विधाता कई योग्यता देकर पृथ्वी पर भेजता है और चंद्रशेखर का शुमार उन्हीं व्यक्तियों में करना चाहिए। विश्वनाथ प्रताप सिंह के बाद चंद्रशेखर ने ही प्रधानमंत्री का पदभार सम्भाला था। वह आचार्य नरेंद्र देव के काफी समीप माने जाते थे। उनके व्यक्तित्व एवं चरित्र से इन्होंने बहुत कुछ आत्मसात किया था। एक सांसद के रूप में चंद्रशेखर का वक्तव्य पक्ष और विपक्ष दोनों बेहद ध्यान से सुनते थे। इनके लिए प्रचलित था कि यह राजनीति के लिए नहीं बल्कि देश की उन्नति की राजनीति हेतु कार्य करने में विश्वास रखते थे।

समाजवाद को जीवन का मूलमंत्र मानने वाले दिवंगत पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर बदलते राजनीतिक और वैश्विक परिदृश्य के मद्देनजर समाजवाद के तात्कालिक स्वरूप में बदलाव लाना चाहते थे। चंद्रशेखर ऐसा समाजवाद चाहते थे जिसमें अमीरी गरीबी का अस्तित्व न हो, जिसमें सभी को बराबर हक मिले और असमानता न हो। वह कहते हैं आज नक्सलवाद जिस तेजी से बढ़ रहा है, उसे देखते हुए चंद्रशेखर के विचार प्रासंगिक हो जाते हैं। वह मानते थे कि असमानता कई समस्याओं की जड़ है और समाजवाद की पहली जरूरत इसी असमानता को खत्म करना है। चंद्रशेखर के पुत्र और बलिया के सांसद नीरज शेखर कहते हैं पहले समाजवाद की परिकल्पना समतामूलक समाज और सबके लिए समान अवसर के इर्दगिर्द घूमती थी। आजादी के बाद कांग्रेस से लेकर सभी राजनीतिक दलों ने कहीं न कहीं समाजवाद पर नजर जरूर डाली लेकिन उदारीकरण के बाद इसमें बदलाव आने लगा। नीरज शेखर के अनुसार, चंद्रशेखर भी चाहते थे कि बदलते राजनीतिक और वैश्विक परिदृश्य के मद्देनजर समाजवाद के तात्कालिक स्वरूप में बदलाव होना चाहिए। खास तौर पर वह १९९१ के बाद के हालात में इस बदलाव को जरूरी मान रहे थे। वह कहते हैं चंद्रशेखर मानते थे कि उदारीकरण और वैश्वीकरण के लाभ कम और हानियां अधिक हैं। उनका कहना था कि अगर विदेशी कंपनियों को देश में आने की अनुमति दी जाएगी तो इससे उन्हें लाभ और देश की कंपनियों को नुकसान होगा।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र के प्रोफेसर आनंद कुमार कहते हैं कि पूर्व प्रधानमंत्री की जीवन यात्रा में समाजवादी आंदोलन के संगठन, कांग्रेस पार्टी को समाजवादी कार्यक्रमों की ओर मोड़ने में सफलता, देश के लोकतंत्र को मजबूत करने तथा उस पर आसन्न खतरों के खिलाफ जन असंतोष को नेतृत्व देने का साहस दिखाने के अलावा संसद के बजाय सड़क की तरफ भारत यात्रा के जरिये हजारों लोगों को प्रेरित करने के चार अध्याय अविस्मरणीय हैं। प्रो.

आनंद कुमार के अनुसार, यह विडंबना है कि भारतीय लोकतंत्र में फैले अवसरवाद के इस दौर में आज चंद्रशेखर की कोई विरासत उल्लेखनीय रूप से नहीं बची है। फिर भी सांप्रदायिकता, जनतंत्र विरोध, गरीबों की उपेक्षा और अल्पसंख्यकों के उत्पीड़न के हर मौके पर चंद्रशेखर एक अच्छे नेता के रूप में याद किये जाएंगे। एक जुलाई १९२७ को उत्तर प्रदेश में बलिया जिले के इब्राहिमपट्टी में जन्मे चंद्रशेखर ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से परास्नातक की उपाधि हासिल की थी। उन्हें छात्र राजनीति का तेजतर्रार नेता माना जाता था। वह प्रखर समाजवादी आचार्य नरेंद्र देव के सम्पर्क में आए और समाजवाद का ककहरा सीखा। वह वर्ष १९६४ में कांग्रेस में शामिल हुए लेकिन उन्हें इंदिरा गांधी की गतिविधियों से कड़ा एतराज था। वह वर्ष १९७५ में पार्टी से अलग हो गए। चंद्रशेखर को आपातकाल के दौरान गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया था। आपातकाल के बाद चंद्रशेखर जनता पार्टी के अध्यक्ष बने और वर्ष १९७७ में देश में हुए चुनावों में उनकी पार्टी ने बेहतर प्रदर्शन करते हुए मोरारजी देसाई की अगुवाई में गठबंधन सरकार बनाने में भूमिका अदा की। वर्ष १९८८ में जनता पार्टी विश्वनाथ प्रताप सिंह की अगुवाई वाली सरकार में शामिल हुई लेकिन चंद्रशेखर को यह साथ भी रास नहीं आया। नवम्बर १९९० में राजीव गांधी की अगुवाई वाली कांग्रेस (आई) के समर्थन से चंद्रशेखर देश के प्रधानमंत्री बने।

चंद्रशेखर बलिया लोकसभा सीट से आठ बार चुने गए। वह सिर्फ एक बार वर्ष १९८४ में कांग्रेस के जगन्नाथ चौधरी के हाथों चुनाव हारे थे। जीवन के अंतिम दिनों में चंद्रशेखर को प्लाज्मा कोशिका में होनेवाला एक तरह का कैंसर माइलोमा हो गया। उन्हें तीन मई २००७ को गम्भीर हालत में अस्पताल में भर्ती कराया गया। आठ जुलाई २००७ को उन्होंने दुनिया को अलविदा कह दिया।

दिवंगत पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर एक ऐसे नेता थे जो सैद्धांतिक मतभेद और दलगत राजनीति को परे रखते हुए पक्की दोस्ती बनाये रखने के लिये जाने जाते थे। चाहे पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी हों या दिवंगत पूर्व उप राष्ट्रपति भैरोंसिंह शेखावत, हर दल के आला नेताओं से उनकी घनिष्ठ मित्रता थी, जिसे मिसाल माना जाता था। चंद्रशेखर (१९२७-२००७) करीब सात महीने ही प्रधानमंत्री पद पर रहे लेकिन इस दौरान भी उन्होंने अपनी सादगी बनाये रखी और लगभग हर सुबह अपने निवास पर आम जनता से मुलाकात करते रहे। उनके पुत्र और बलिया से सांसद नीरज शेखर के अनुसार, पूर्व प्रधानमंत्री की छवि मजबूत थी। वह जब कभी संसद में अपनी बात कहने के लिये खड़े होते थे, पूरा सदन उन्हें ध्यान से सुनता था। संसद में इस तरह का कद काफी कम नेताओं के पास रहता है। नीरज ने बातचीत में बताया कि भाजपा की विचारधारा और उसके सिद्धांतों के प्रति पिताजी के हमेशा मतभेद रहे। लेकिन इसके बावजूद इस पार्टी के दो कद्दावर नेताओं अटल बिहारी वाजपेयी और भैरोसिंह शेखावत से उनकी घनिष्ठ मित्रता रही। उन्होंने कहा कि चंद्रशेखर के सक्रिय राजनीति से दूर होने और अस्वस्थ हो जाने के बाद भी अटल जी और शेखावत उनकी मिजाजपुर्सी के लिये मिलने आते रहे। राजनीतिक सक्रियता कम हो जाने के बावजूद इन नेताओं के बीच दोस्ती कम नहीं हुई। नीरज बताते है कि उनके पिता जी अटल जी को गुरुजी कहकर बुलाते थे और सार्वजनिक रूप से कहते थे कि उन्होंने अटल जी से राजनीति के काफी गु र सीखे हैं। शिरोमणि अकाली दल के प्रमुख प्रकाश सिंह बादल, जनता दल (यूनाइटेड) के नेता जॉर्ज फर्नांडीस और जनता दल के नेता दिवंगत बीजू पटनायक से भी उनके पारिवारिक संबंध थे। उन्होंने कहा कि चंद्रशेखर जिस दौर में राजनीति में सक्रिय थे, वह वक्त देश में सियासी उथल-पुथल वाला था। इसके बावजूद मिसाल के तौर पर

उनकी अन्य नेताओं से दोस्ती कायम रही। उनकी अटल जी और शेखावत से वर्ष १९६२ से, जबकि पटनायक से जनता पार्टी के समय से दोस्ती थी। नीरज स्वीकार करते हैं कि अब ऐसा कम ही देखा जाता है और नेताओं के बीच उस तरह की मित्रता कायम नहीं हो पाती। आपातकाल के बाद चंद्रशेखर जनता पार्टी के अध्यक्ष बन गये और मोरारजी देसाई के नेतृत्व में इस पार्टी की सरकार बनी। इसके बाद फिर वर्ष १९८८ में जनता पार्टी ने अन्य दलों के साथ मिलकर विश्वनाथ प्रतानप सिंह के नेतृत्व में सरकार बनायी। बहरहाल, गठबंधन के दलों के बीच रिश्तों में खटास आने के बाद चंद्रशेखर ने जनता दल (सोशलिस्ट) गठन किया और कांग्रेस की मदद से १० नवंबर १९९० को प्रधानमंत्री पद छोड़ना पड़ा। नीरज बताते हैं कि प्रधानमंत्री बनने के बाद भी पिताजी के व्यवहार में कोई फर्क नहीं आया। प्रधानमंत्री के रूप में कार्यकाल के अलावा कम से कम ४४ साल तक वह रोज सुबह आम लोगों से मिलते रहे। चंद्रशेखर उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के इब्राहिम पट्टी गांव में एक जुलाई १९२७ को किसान परिवार में जन्मे। वह वर्ष १९७७ से १९८८ के बीच जनता पार्टी के अध्यक्ष रहे। चंद्रशेखर अपने छात्र जीवन से ही राजनीति के क्षेत्र में आ गये। वह जयप्रकाश नारायण और सोशलिस्ट नेता आचार्य नरेंद्र देव से प्रभावित रहे। वह पत्रिका यंग इंडियन का संपादन करते थे। अपाताकाल के दौरान उन्हें इस पत्रिका का प्रकाशन बंद करना पड़ा और वह जेल गये और अकाली नेता बादल एक ही जेल में रहे। इस दौरान उन्होंने मेरी जेल डायरी भी लिखी। चंद्रशेखर वृहद यात्रा के लिये भी जाने जाते हैं। छह जनवरी १९८३ से २५ जून १९८३ के बीच उन्होंने कन्याकुमारी से दिल्ली के बीच ४२६० किलोमीटर की पैदल यात्रा की ताकि विशेषकर ग्रामीण भारत में रह रहे लोगों की समस्याओं से वाकिफ हो सकें। पूर्व प्रधानमंत्री वर्ष १९८४ से १९८९ को छोड़कर वर्ष १९६२ से संसद सदस्य रहे। उन्होंने अपने राजनीतिक जीवन में समाजवादी जनता पार्टी, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी, जनता पार्टी और जनता दल का नेतृत्व किया। वह आठ बार बलिया से सांसद रहे। कर्करोग के कारण लंबे वक्त तक बीमार रहने के बाद आठ जुलाई २००७ को अस्सी वर्ष की उम्र में उन्होंने अंतिम सांस ली। वर्ष १९९५ में जब सर्वश्रेष्ठ सांसद पुरस्कार की स्थापना हुई तो पहली बार इस खिताब से चंद्रशेखर को ही नवाजा गया था।

राम नरेश यादव (जन्म- १ जुलाई)

राम नरेश यादव भारतीय राजनीति में एक राजनेता के रूप में जाना-पहचाना नाम है। एक शिक्षक और एक अधिवक्ता के रूप में सामाजिक रूप से प्रगति करते हुए राम नरेश यादव आगे चलकर एक ईमानदार और मूल्यों की राजनीति करनेवाले आम आदमी के मददगार और एक दिग्गज राजनीतिज्ञ कहलाए। पेशे से वकील श्री यादव राजनारायण के विचारों से प्रभावित होकर जनता पार्टी से जुड़े। १९७७ में आजमगढ़ लोकसभा सीट से जीतकर वे छठवीं लोकसभा के सदस्य बने। इसी दौरान वह २३ जून, १९७७ को उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने और इस पद पर १५ फरवरी, १९७९ तक रहे। बाद में श्री यादव कांग्रेस पार्टी से जुड़े और संगठन में विभिन्न पदों पर भी रहे।

२ जुलाई

आलोक धन्वा

आलोक धन्वा प्रसिद्ध हिन्दी जनकवि हैं। आलोक धन्वा हिन्दी के उन बड़े कवियों में हैं, जिन्होंने ७० के दशक में

कविता को एक नई पहचान दी। उनकी गोली दागो पोस्टर, जनता का आदमी, कपड़े के जूते और ब्रूनों की बेटियाँ जैसी कविताएं बहुचर्चित रही हैं। दुनिया रोज बनती है उनका बहुचर्चित कविता संग्रह है। इनकी कविताओं के अंग्रेजी और रूसी भाषा में अनुवाद भी हुये हैं।

३ जुलाई

मोहम्मद उस्मान (शहीद - ३ जुलाई)

ब्रिगेडियर मोहम्मद उस्मान भारतीय सेना के एक उच्च अधिकारी थे जो भारत और पाकिस्तान के प्रथम युद्ध (१९४७-४८) में शहीद हो गये। उस्मान नौशेरा के शेर के रूप में ज्यादा जाने जाते हैं। वह भारतीय सेना के सर्वाधिक प्रतिष्ठित और साहसी सैनिकों में से एक थे, जिन्होंने जम्मू में नौशेरा के समीप झांगर में मातृभूमि की रक्षा करते हुए अपने प्राण गंवा दिए थे।

मनोज कुमार पांडेय (शहीद - ३ जुलाई)

कैप्टन मनोज कुमार पांडेय परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९९९ में मरणोपरांत मिला। पाकिस्तान के साथ कारगिल का युद्ध बहुत से कारणों से विशेष कहा जाता है। एक तो यह युद्ध बेहद कठिन और ऊंची चोटियों पर लड़ा गया, जो बर्फ से ढकी और दुर्गम थीं, साथ ही यह युद्ध पाकिस्तान की लम्बी तैयारी का नतीजा था जिसकी योजना उसके मन में बरसों से पल रही थीं। इसी युद्ध के कठिन मोर्चों में एक मोर्चा खालूबार का था जिसको फतह करने के लिए कमर कस कर कैप्टन मनोज कुमार पांडे अपनी १/११ गोरखा राइफल्स की अगुवाई करते हुए दुश्मन से जूझ गए और जीत कर ही माने। भले ही, इस कोशिश में उन्हें अपने प्राणों का बलिदान देना पड़ा।

हंसा मेहता (जन्म- ३ जुलाई)

हंसा मेहता एक समाजसेवी, स्वतंत्रता सेनानी और शिक्षाविद के रूप में भारत में काफी प्रसिद्ध रही हैं। इनके पिता मनुभाई मेहता बडौदा और बीकानेर रियासतों के दीवान थे। हंसा मेहता का विवाह देश के प्रमुख चिकित्सकों में से एक तथा गांधी जी के निकट सहयोगी जीवराज मेहता जी के साथ हुआ था।

४ जुलाई

भगवतीचरण बोहरा का बलिदान

अमर शहीद भगवतीचरण बोहरा का जन्म लाहौर के ग्वालमंडी मुहल्ले मे ४ जुलाई, १९०४ को हुआ था। बचपन से ही वह एक होनहार, साहसी एवं प्रतिभाशाली छात्र थे। कालेज जीवन मे उनका साथ भगतसिंह तथा सुखदेव से हुआ। कालांतर मे वह क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व मे संगठित दल-हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ के सक्रिय सदस्य बन गए। भगवतीचरण बोहरा की पत्नी दुर्गा भाभी क्रांतिदल की सक्रिय सदस्य थी। बंबई गोली कांड मे वह अभियुक्त होने के कारण फरार रही। मेरठ कांड मे भगवतीचरण बोहरा का वारंट निकल चुका था। अतएव वह भी फरारी

अवस्था मे लुक-छिपकर दल का कार्य कर रहे थे। भगवतीचरण बोहरा दल के प्रमुख स्तंभों में से थे। वह बहुत योग्य और सूझबूझ के क्रांतिकारी थे।

यशपाल तथा भगवतीचरण के संयुक्त प्रयास से फिलासफी ऑफ द बम परिपत्र तैयार हुआ था जो क्रांतिदल के महत् उद्देश्यों को परिलक्षित करता था। भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को छुड़ाने हेतु दल द्वारा किए जाने वाले एक्शन मे भगवती चरण की प्रमुख भागीदारी थी। बताया जाता है कि एक्शन मे प्रयोग होने वाले बम के परीक्षण हेतु वह वैशंपायन तथा साथी सुखदेव राज के साथ २८ मई १९३० को रावी तट के घनघोर जंगल मे गए थे। बम की पिन ढीली होने के कारण अचानक बम फट जाने से उत्पन्न भय की ओर संकेत करते हुए जब साथियों ने उन्हे रोका तो उन्होंने उन्हे जो उत्तर दिया वह उनके अदम्य साहस एवं निर्द्वंद्व स्वभाव का द्योतक है। वह बोले- सुखदेव। जिस दिन मैने इस रास्ते पर पहला कदम रखा था उसी दिन हम यह भय का भूत गहराई मे, बहुत गहराई मे दफना आए थे। अंत मे हुआ वही जो होना था। उन्होंने ज्यो ही बम फेकने के लिए पिन निकाली, विस्फोट उनके हाथ मे ही हो गया। उनका एक हाथ कलाई से उड़ गया था, दूसरे हाथ की उंगलियां कट गई थी। उनके पेट मे बहुत बड़ा घाव हो गया था। उनका सारा शरीर क्षत-विक्षत, लहू-लुहान था। यह सब होते हुए भी उनके मुख मंडल पर वही तेज, वही सौम्यता और वही मुस्कान बिखर रही थी। वह बोले- भगत सिंह को छुड़ाने मे मै सहयोग न दे सका यही दु:ख है। काश। यह मृत्यु दो दिन बाद होती है। आप अपना आंदोलन मजबूती से चलाते रहना।

जीवन के अंतिम क्षणों मे उन्होंने याद किया तो सिर्फ इन्कलाब के लिए लडनेवाली अपनी पार्टी तथा पार्टी के सेनापति चंद्रशेखर आजाद को। वे ऐसे आदर्श देशभक्त थे, जिन्होंने नाम के लिए नही बल्कि सदा कर्तव्य समझकर काम किया। वे कहा करते थे- मै ऐसी जगह मरना चाहता हूँ जहाँ मुझे कोई न जाने, मेरी मृत्यु पर कोई आँसू न बहाए, मेरी प्रशस्ति के कोई गीत न गाए। क्रांतिकारी- इतिहास में इस महान देशभक्त का यह बलिदान एक अलग इतिहास रच गया।

अल्लूरी सीताराम राजू (जन्म- ४ जुलाई)

अल्लूरी सीताराम राजु भारत की आजादी के लिए अपने प्राणों का बलिदान करने वाले वीर क्रांतिकारी शहीदों में से एक थे। उन्हें औपचारिक शिक्षा बहुत कम मिल पाई थी। अपने एक संबंधी के संपर्क से वे अध्यात्म की ओर आकृष्ट हुए तथा १८ वर्ष की उम्र में ही साधु बन गए। सन १९२० में अल्लूरी सीताराम पर महात्मा गांधी के विचारों का बहुत प्रभाव पड़ा और उन्होंने आदिवासियों को मद्यपान छोड़ने तथा अपने विवाद पंचायतों में हल करने की सलाह दी। किंतु जब एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्ति का गांधीजी का स्वप्न साकार नहीं हुआ तो सीताराम राजू ने अपने अनुयायी आदिवासियों की सहायता से अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करके स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने के प्रयत्न आरंभ कर दिए।

७ मई को पुलिस रिकॉर्ड के अनुसार सीताराम राजू को पकड़ लिया गया। उस समय सीताराम राजू के सैनिकों की संख्या कम थी फिर भी गोरती नामक एक सैन्य अधिकारी ने सीताराम राजू को पेड़ से बांधकर उन पर गोलियाँ बरसाईं। अल्लूरी सीताराम राजू के बलिदान के बाद भी अंग्रेज सरकार को विद्रोही अभियानों से मुक्ति नहीं मिली।

गुलजारीलाल नन्दा (जन्म- ४ जुलाई)

गुलजारीलाल नन्दा भारत के तेरह प्रधानमंत्रियों के आंतरिक कार्यवाहक प्रधानमंत्री के रूप में अब तक के एकमात्र

ऐसे व्यक्ति रहे, जिन्होंने इस जिम्मेदारी को दो बार निभाया। भारत की संवैधानिक परम्परा में यह प्रावधान है कि यदि किसी प्रधानमंत्री की उसके कार्यकाल के दौरान मृत्यु हो जाए और नया प्रधानमंत्री चुना जाना तत्काल सम्भव न हो तो कार्यवाहक अथवा अंतरिम प्रधानमंत्री की नियुक्ति तब तक के लिए की जा सकती है, जब तक की नया प्रधानमंत्री विधिक रूप से नियुक्त नहीं कर दिया जाता। संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार प्रधानमंत्री के पद को रिक्त नहीं रखा जा सकता। इनका कार्यकाल दोनों बार उसी समय तक सीमित रहा जब तक कि कांग्रेस पार्टी ने अपने नए नेता का चयन नहीं कर लिया।

गांधीवादी राष्ट्रीय श्रमिक नेता श्रद्धेय श्री गुलजारी लाल नन्दा जी के विषय में ज्यादा कुछ बोलना या लिखना आसान नहीं है। उनके मस्तिष्क और हृदय की गहराई में डुबकी लगाकर इसकी तह तक पहुंचना सामान्य व्यक्ति के बस की बात नहीं है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के सिद्धांतों का पूर्णरूपेण अमल करते हुए उनके जीवन में सदाचार, अहिंसा के साथ अपरिग्रह की भावना कूट कूट कर भरी हुई थी। ज्ञान के भी वे प्रकाश पुंज थे। भारत की आजादी की लड़ाई के वरिष्ठ सेनानी होने के साथ भारतीय श्रमिक राजनीति के जनक श्री गुलजारी लाल नन्दा आध्यात्मिक समाजवाद के प्रखर सचेतक भी थे। नन्दा जी को गांधीजी के विचारों में ही मानवता की मुक्ति दिखाई दी। १५ जनवरी १९९८ को जब नन्दा जी की मृत्यु हुई, तब महामहिम राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन ने कहा कि नन्दा जी के निधन से देश ने संघर्ष तथा त्याग के गांधीवादी युग की कड़ी खो दी है जिसकी भरपाई संभव नहीं है। नन्दा जी की सात्विक जिज्ञासा ने अहंकार को कभी भी उनके व्यक्तित्व और जीवन के निकट नहीं आने दिया। वर्षों तक विभिन्न पदों पर केंद्रीय मंत्री रहे नन्दा जी दो बार भारत के प्रधानमंत्री पद के गौरवशाली पात्र बने। अहमदाबाद, इन्दौर के बाद उन्हें कुरुक्षेत्र अति प्रिय था। जीवन के अंतिम संघर्ष पड़ाव में उन्होंने हरियाणा की इसी महाभारत रणभूमि के विशाल धर्मक्षेत्र को कुरुक्षेत्र विकास बोर्ड का निर्माण कर विकसित किया, जो आज दुनिया के मानचित्र में आदर्श पर्यटन के धर्मक्षेत्र के रूप में प्रख्यात है और यहीं नन्दा जी की समाधि सदाचार स्थल के रूप में दुनिया के आनेवाले पर्यटकों को नैतिकता का संदेश देने के लिए खामोश पीड़ा लिए मौजूद है। नन्दा जी का जन्म ४ जुलाई १८९८ (आज के पाकिस्तान) पंजाब के स्याल कोट गुजरावालां में श्री बुलाकीराम नन्दा जी के घर हुआ था। वे सामान्य घर में जन्मे थे, कर्मठ थे वे लगन के पक्के थे। श्री नन्दा जी ने एम.ए. किया और कानून की उपाधि भी अर्जित की और कुछ समय काला कोट भी पहना पर वकालत का पेशा उनकी प्रकृति और प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं हुआ, इसलिए उन्होंने भारत माता के मंदिर का नि:स्वार्थ पुजारी बनने को अपने जीवन का ध्येय बनाया। इस ध्येय के पथिक नन्दा जी ने देश में अनेक ऐतिहासिक नवजीवन संघ, सिटीजन काउन्सिल, मानवधर्म मिशन, कुरूक्षेत्र विकास बोर्ड, श्री कृष्ण आदर्श आयुर्वेदिक फार्मेसी, भारतीय लोकमंच, भारतीय संस्कृति रक्षा संस्थान जैसी अनेक संस्थाओं का निर्माण कर देश को नैतिकता व सदाचार जैसे अनेक आंदोलनों से जोड़ा।

विमलेश कांति वर्मा (जन्म- ४ जुलाई)

डॉ. विमलेश कांति वर्मा ने पिछले चार दशकों से भी अधिक समय से निरंतर अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, कोश निर्माण, पाठालोचन, अनुवाद और सांस्कृतिक अध्ययन के क्षेत्र में अपनी देश-विदेश में सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है।

पिंगलि वेंकय्या (निधन- ४ जुलाई)

पिंगली वेंकैय्या भारत के राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा के अभिकल्पक हैं। वे भारत के सच्चे देशभक्त, महान स्वतंत्रता सेनानी एवं कृषि वैज्ञानिक भी थे। पिंगलि वेंकैया की संस्कृत, उर्दू एवं हिंदी आदि भाषाओं पर अच्छी पकड़ थी। इसके साथ ही वे भू-विज्ञान एवं कृषि के अच्छे जानकर भी थे। उन्होंने अमेरिका से कम्बोडिया नामक कपास की बीज का आयात और इस बीज को भारत के कपास बीज के साथ अंकुरित कर भारतीय संकरित कपास का बीज तैयार किया।

५ जुलाई

असगर वजाहत (जन्म- ५ जुलाई)

असगर वजाहत हिन्दी के प्राध्यापक तथा रचनाकार हैं। इन्होंने नाटक, कथा, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत तथा अनुवाद के क्षेत्र में अनेक रचनाएँ की हैं। ये दिल्ली में स्थित जामिला मिलिया इस्लामिया के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रह चुके हैं।

तोरु दत्त (निधन- ५ जुलाई)

तोरु दत्त अथवा तरु दत्त अंग्रेजी भाषा की सर्वश्रेष्ठ प्रतिभान्वित कवयित्री थीं। तोरु दत्त की ख्याति भारत की अंग्रेजी भाषा की श्रेष्ठ प्रतिभावान कवयित्री के रूप में है। इन्होंने साहित्य को अपने जीवन का मुख्य बनाया। ये संस्कृत साहित्य के आचार पर सीता, सावित्री, लक्ष्मण, ध्रुव, प्रल्हाद आदि की कथाओं को अपनी प्रतिभा का पुट देकर अंग्रेजी काव्य में व्यक्त करने लगीं।

अनुग्रह नारायण सिन्हा (निधन- ५ जुलाई)

अनुग्रह नारायण सिन्हा एक भारतीय राजनेता और बिहार के पहले उप मुख्यमंत्री, सह वित्तमंत्री (१९४६-१९५७) थे। अनुग्रह बाबू (१८८७-१९५७) भारत के स्वतंत्रता सेनानी, शिक्षक, वकील, राजनीतिज्ञ तथा आधुनिक बिहार के निर्माता रहे हैं। उन्हें बिहार विभूति के रूप में जाना जाता था। वह स्वाधीनता आंदोलन के योद्धा थे। स्वाधीनता के बाद राष्ट्र निर्माण व जनकल्याण के कार्यों में उन्होंने सक्रिय योगदान दिया। अनुग्रह बाबू ने महात्मा गांधी एवं डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के साथ राष्ट्रीय आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

पी. वी. सिंधु (जन्म- ५ जुलाई)

पुसरला वेंकट सिधु भारत की प्रसिद्ध बैडमिंटन खिलाड़ी हैं। सिंधु ने वर्ष २०१६ में ब्राजील में खेले गए रियो ओलम्पिक खेलों में एकल बैडमिंटन प्रतियोगिता में रजत पदक जीता। साथ ही सिंधु ओलम्पिक खेलों में रजत पदक जीतनेवाली भारत की पहली महिला खिलाड़ी हैं। पी.वी. सिंधु वर्तमान में भारत की राष्ट्रीय चैम्पियन हैं। वर्ष २०१२ में उन्होंने बैडमिंटन वर्ल्ड फेडरेशन की टॉप २० में जगह बनाई थी। १० अगस्त २०१३ में पी.वी. सिंधु ऐसी पहली भारतीय महिला बनीं, जिसने वर्ल्ड चैंपियनशिप में मेडल जीता था।

ज्योति खरे (जन्म- ५ जुलाई)

ज्योति खरे भारत के प्रतिष्ठित कवियों में माने जाते हैं। वे विगत तीस वर्षों से हिन्दी भाषा की साहित्यिक साधना में रत

हैं और भारत की लगभग सभी साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं, आकाशवाणी, दूरदर्शन और सोशल मीडिया आदि संचार माध्यमों में समान रूप से सक्रिय हैं। ज्योति खरे की प्रतिष्ठा सोशल मीडिया आदि माध्यमों से देश के कोने-कोने में फैले उनके हजारों प्रशंसकों के प्रेम-प्रदर्शनों द्वारा स्वत: ही स्पष्ट हो जाती है।

६ जुलाई

डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी

६ जुलाई १९०१ को भारतीय जनसंघ के संस्थापक डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी का जन्म लोककता में हुआ। ये सबसे कम उम्र (३३ वर्ष) में कलकत्ता विविध के कुलपति बनाये गये थे। जो रिकॉर्ड है।

देश की अंतरिम सरकार में वे मंत्री बने। २१ अक्टूबर १९५१ को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संघचालक गुरू गोलवलकर जी से परामर्श करने के बाद दिल्ली में भारतीय जनसंघ की नींव रखी और पहले अध्यक्ष बने। उन्होंने देश के विभाजन का पुरजोर विरोध किया था। उनके प्रयासों की वजह से ही आधा पंजाब और आधा बंगाल भारत में बना रह गया। उन्होंने कई आंदोलन भी चलाये। २३ जून १९५३ को रहस्यमय परिस्थितियों में उनकी मृत्यु जम्मू-कश्मीर में हुई थी। श्यामा प्रसाद मुखर्जी एक महान शिक्षाविद और चिंतक होने के साथ-साथ भारतीय जनसंघ के संस्थापक भी थे। उन्हें आज भी एक प्रखर राष्ट्रवादी और कट्टर देशभक्त के रूप में याद किया जाता है। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी सच्चे अर्थों में मानवता के उपासक और सिद्धांतों के पक्के इंसान थे। संसद में उन्होंने सदैव राष्ट्रीय एकता की स्थापना को ही अपना प्रथम लक्ष्य रखा था।

दलाईलामा तेनजिन ग्यात्सो (जन्म- ६ जुलाई)

बौद्ध धर्म दुनिया के धर्मों का चौथा सबसे बड़ा धर्म है जिसके ३७५ लाख अनुयायी है। बौद्ध धर्म के धर्मगुरु को दलाईलामा कहा जाता है। बौद्ध धर्म के १४वें दलाईलामा तिब्बती धर्मगुरु तेनजिन ग्यात्सो है। तेनजिन ग्यात्सो तिब्बत के राष्ट्राध्यक्ष और आध्यात्मिक गुरु हैं।

प्रताप नारायण मिश्र (निधन- ६ जुलाई)

प्रताप नारायण मिश्र को आधुनिक हिन्दी निर्माताओं में से एक माना जाता है। वे हिन्दी खड़ी बोली और भारतेन्दु युग के उन्नायक कहे जाते हैं। प्रताप नारायण मिश्र ने एक लेखक, कवि और पत्रकार के रूप में विशेष प्रसिद्धि पाई थी। मिश्र जी की भारतेन्दु हरिश्चन्द्र में अनन्य श्रद्धा थी। वह स्वयं को उनका शिष्य कहते थे तथा देवता के समान उनका स्मरण करते थे।

रामकृष्ण गोपाल भंडारकर (जन्म- ६ जुलाई)

रत्नागिरि जिले में जन्मे भंडारकर ने मुंबई के एलिफिंस्टन कॉलेज में पढ़ाई की। वे बॉम्बे यूनिवर्सिटी से १८६२ में ग्रेज्युएट होनेवाले पहले बैच में थे। स्नातकोत्तर की पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्होंने एलिफिंस्टन कॉलेज और डेक्कन कॉलेज में प्राध्यापकी की। १८९४ बॉम्बे यूनिवर्सिटी के कुलपति पद से सेवानिवृत्त हुए। वे आजीवन ओरिएंटल रिसर्च

और इतिहास लेखन में सक्रिय रहे। १८५३ में परमहंस सभा के सदस्य बने। समाजसुधार की दिशा में सतत प्रयत्नशील रहे। जाति प्रथा विरोध, विधवा विवाह समर्थन, स्त्री शिक्षा प्रोत्साहन और बालविवाह उन्मूलन आदि कार्यों में अग्रणी रहे।

७ जुलाई

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (जन्म- ७ जुलाई)

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी हिन्दी साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार थे। बीस वर्ष की उम्र के पहले ही उन्हें जयपुर की वेधशाला के जीर्णोद्धार तथा उससे सम्बन्धित शोधकार्य के लिए गठित मण्डल में चुन लिया गया था और कैप्टन गैरेट के साथ मिलकर उन्होंने द जयपुर ऑब्जरवेटरी एण्ड इट्स बिल्डर्स शीर्षक अंग्रेजी ग्रन्थ की रचना की। उन्हें अमर कहानी उसने कहा था के रचनाकार के रूप में अधिक जाना जाता है।

महेन्द्र सिंह धोनी (जन्म- ७ जुलाई)

महेन्द्र सिंह धोनी भारतीय क्रिकेट टीम के नियमित कप्तान एवं विकेटकीपर बल्लेबाज हैं। जिनकी कप्तानी में भारतीय क्रिकेट टीम क्रिकेट के तीनों प्रज्ञरूपों में नंबर एक का ताज हासिल कर चुकी है। पहले उन्होंने टी-ट्वेंटी विश्वकप २००७ में भारत को जीत हासिल करवाई फिर टेस्ट और एकदिवसीय में भी भारत नंबर एक तक पहुंचाया। सूझबूझ भरी कप्तानी, मैदान पर शांत रवैया और किसी भी तरह की जोखिम लेने के लिए हमेशा तैयार रहनेवाले कप्तान धोनी युवाओं में एक आदर्श के रूप में देखे जाते हैं।

राघवजी (जन्म- ७ जुलाई)

राघवजी भारत की राजनीतिक पार्टी भाजपा (भारतीय जनता पार्टी) के मंत्रालय में एक कैबिनेट मंत्री और राजनीतिज्ञ हैं। मध्य प्रदेश की राजनदीति में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। राघवजी मध्य प्रदेश राज्य के वित्तमंत्री है। वह विदिशा से मध्य प्रदेश विधानसभा के सदस्य हैं। राघवजी लोकसभा और राज्यसभा के भी सदस्य रह चुके हैं। वे छठी लोकसभा और नौवीं लोकसभा सांसद के सदस्य थे।

विक्रम बत्रा (शहीद - ७ जुलाई)

कैप्टन विक्रम बत्रा (शहीद- ७ जुलाई, १९९९ कारगिल) परमवीर चक्र से सम्मानित भारत के सैनिक थे। इन्हें यह सम्मान सन १९९९ में मरणोपरांत मिला।

गुरु हर किशन सिंह (जन्म- ७ जुलाई)

गुरु हर किशन सिंह सिक्खों के आठवें गुरु थे। वे ६ अक्टूबर, १६६१ ई. में गुरु बने थे और इस पद पर १६६४ ई. तक रहे। दिल्ली में जिस आवास में वो रहते थे आज वहाँ एक शानदार ऐतिहासिक गुरुद्वारा बन गया है जिसे सब श्री बंगला साहिब गुरुद्वारा के नाम से जानते हैं।

काला वेंकटराव (जन्म- ७ जुलाई)

काला वेंकटराव दक्षिण भारत के एक प्रमुख राजनैतिक कार्यकर्ता थे। इन्होंने गांधीजी के असहयोग आंदोलन में भाग

लिया था। काला वेंकटराव १९३७ में मद्रास विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे। १९४६ में वे देश की संविधान परिषद के सदस्य थे। १९४७ से १९५९ तक वे पहले मद्रास और फिर आंध्र प्रदेश बन जाने पर वहां विभिन्न विभागों के मंत्री रहे। काला वेंकटराव भूमि सुधार के विशेष ज्ञाता थे। वे पट्टाभि सीतारामेया के प्रमुख सहयोगी रहे थे।

श्यामा प्रसाद मुखर्जी (जन्म-६ जुलाई)

श्यामा प्रसाद मुखर्जी एक महान शिक्षाविद और चिन्तक होने के साथ-साथ भारतीय जनसंघ के संस्थापक भी थे। उन्हें आज भी एक प्रखर राष्ट्रवादी और कट्टर देशभक्त के रूप में याद किया जाता है। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी सच्चे अर्थों में मानवता के उपासक और सिद्धांतों के पक्के इंसान थे। संसद में उन्होंने सदैव राष्ट्रीय एकता की स्थापना को ही अपना प्रथम लक्ष्य रखा था। संसद में दिए अपने भाषण में उन्होंने पुरजोर शब्दों में कहा था कि राष्ट्रीय एकता के धरातल पर ही सुनहरे भविष्य की नींव रखी जा सकती है। भारतीय इतिहास में उनकी छवि एक कर्मठ और जुझारू व्यक्तित्ववाले ऐसे इंसान की है, जो अपनी मृत्यु के इतने वर्षों बाद भी अनेक भारतवासियों के आदर्श और पथप्रदर्शक हैं। इनका निधन २३ जून को हुआ।

८ जुलाई

ज्योति बसु

उत्तर भारत के राज्यों में पश्चिम बंगाल आज सबसे आगे माना जाता है। इस मुकाम तक बंगाल को ले जाने में अगर किसी व्यक्ति का नाम सबसे पहले आता है तो वो हैं ज्योति बसु। ज्योति दा न सिर्फ भारत के राजनीतिक इतिहास में २३ वर्ष तक शासन करनेवाले एक मात्र मुख्यमंत्री थे बल्कि इन्होंने पूरे भारत में बंगाल की एकदम अलग छवि बनाने में कामयाबी हासिल की थी। आज भी सामाजिक, सांस्कृतिक और विकास के मोर्चे पर बंगाल पूरे उत्तर भारत में अग्रणी है। जमींदारी उन्मूलन कानून पारित करनेवाला पहला राज्य भले ही बिहार हो लेकिन जमीन संबंधी समस्या को हल करने में बंगाल पहले कामयाब हुआ। २००९ के चुनाव परिणामों को छोड़ दें तो लगभग तीन दशक तक बंगाल की राजनीति में सिर्फ और सिर्फ माकपा की ही चली। भाकपा के विभाजन के बाद एक बार ऐसा लग रहा था कि वामपंथ की बहुत लंबी कहानी अब देश के भीतर नहीं है लेकिन इन आशंकाओं के विपरीत वामपंथी एक मजबूत ताकत बने रहे तो इसके पीछे ज्योति दा का सबसे बड़ा हाथ था। सारे समीकरण ज्योति बसु के बंगाल में आकर ध्वस्त हो जाते थे। लोग आश्चर्य व्यक्त करते थे कि आखिर ज्योति बसु में ऐसा क्या है कि वो हारते नहीं हैं। आज जब कामरेड चिर निद्रा में लीन हो गये तो पूरी दुनिया सम्मान में उठ खड़ी हुई। राजनीति में एक ऐसे सिपाही के रूप में उन्हें आज याद किया जा रहा है जिसने हर राजनीतिक लड़ाई को जीत में बदल दिया। यह अलग बात है कि ज्योति बसु कभी प्रधानमंत्री नहीं बन पाये। १९९६ में संयुक्त मोर्चे की सरकार में उन्हें प्रधानमंत्री के रूप में स्वीकार कर लिया था लेकिन वामपंथी राजनीति ने इन्हें यह मौका आजमाने का अवसर नहीं दिया। कुछ लोग तो यह कहते थे कि ज्योति बाबू की दृष्टि पूरे भारत को एक नयी राह पर ले आता। आज ध्वस्त होते वामगढ़ के कारण हम वाम नेताओं की चाहे लाख आलोचना कर लें लेकिन विकास के जिस मुकाम पर बंगाल आज खड़ा है, उसे वहां तक पहुंचाने में वामपंथियों ने बड़ा योगदान दिया है। इस बात से इंकार करना

मुश्किल है। अगर बंगाल आज किसी मुकाम पर खड़ा है कुछ हासिल किया है तो इसका श्रेय अपने आप ज्योति बसु को चला जाता है। आज जब ज्योति दा हमारे बीच नहीं हैं, यह सबसे बेहतर मौका होगा न सिर्फ वामपंथियों के लिए बल्कि देश के सभी राजनीतिज्ञों के लिए कि वे गहन मंथन करें और उस बीज मंत्र को आत्मसात करें जिसे ज्योति बसु ने आम आदमी के हित में सरकार को समर्पित करके बंगाल को नयी पहचान देने की लगातार कोशिश की थी। आज उनके लिए सच्ची श्रद्धांजलि यही हो सकती है कि देश के राजनीतिज्ञ बसु के मार्ग का अनुसरण करें और अपने आपको अंतिम आदमी के हित के लिए समर्पित करें। उम्मीद है कि वापमंथी अपने ध्वस्त होते किले को बचाने के लिए अपने ही नेता के सुझाए मार्ग पर पुन:वापसी की सबसे पहले पहल करेंगे।

ज्योति बसु ने पहली बार चाय का जायका २१ बरस की उम्र में लियाथा जब वह लंदन में थे क्योंकि इससे पहले पेशे से चिकित्सक उनके पिता निशिकांत बसु ने उन्हें इसकी इजाजत नहीं दी थी। इसके अलावा उन्हें दो अन्य बच्चों के साथ फिल्म और नाटक देखने से भी रोके रखा था। बसु तब यहां प्रदर्शित होनेवाले फिल्में अल्फैंड हिचकोंक की ब्लैकमेल, द फेंटम ऑफ द ओपेरा, द ब्लू एंजल और सिटी लाइट्स देखना चाहे थे लेकिन वह ऐसा नहीं कर सके। मुख्यमंत्री बनने के बाद उनकी सरकार ने वर्ष १९८० में सत्यजीत रॉय की हीरक राजार देश और बंगाल में तुकबंदी वाली कविताएं रचने के प्रणेता सुकुमार रॉय के जीवन पर १९८७ में एक वृत्तचित्र के निर्माण में आर्थिक मदद की थी। सुकुमार रॉय जाने माने फिल्मकारसत्यजीत रॉय के पिता थे।

भारत में वामपंथ की बात अगर की जाए तो ज्योति बसु एक ऐसा नाम है जिसके बिना इतिहास अधूरा रह जाए। पश्चिम बंगाल में दक्षिणपंथी दलों का वर्चस्व तोड़ वहां वामपंथी शासन कायम करनेवाले इस राजनेता ने २५ साल तक न केवल उस राज्य के मुख्यमंत्री का पद संभाला बल्कि वहां अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन किए। देश में सबसे लंबे समय तक किसी राज्य का मुख्यमंत्री बनने का गौरव हासिल करनेवाले एक जनवरी को उन्हें निमोनिया की शिकायत पर अस्पताल में भर्ती कराया गया था लेकिन पिछले कुछ दिन से उनके अधिकांश अंगों ने काम करना बंद कर दिया था और उन्हें जीवनरक्षक प्रणाली पर रखा गया। अगले दिन सुबह करीब ११.३० बजे उन्होंने अपनी आंखें मूंद लीं। बसु के निधन के साथ ही देश में वामपंथी आंदोलन का एक अध्याय समाप्त हो गया और उनके निधन से पैदा हुए शून्य को भर पाना शायद ही संभव हो। ९५ वर्षीय बसु ने लंदन के मिडिल टेम्पल में वकालत त्याग कर राजनीति को अपनाया और वह लगभग पांच दशक तक देश के राजनीतिक परिदृश्य पर छाए रहनेवाले एक ऐसे करिश्माई व्यक्तित्व थे जिन्हें थे जिन्हें दलगत भावना से ऊपर उठकर सभी दलों के नेताओं ने भरपूर सम्मान दिया। वर्ष १९७७ में मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में वाममोर्चा सरकार के अगुवा के रूप में राज्य की सत्ता संभालने वाले बसु पश्चिम बंगाल में सबसे अधिक समय तक इस पद पर रहनेवाले मुख्यमंत्री थे। गठबंधन की राजनीति के तहत जब उन्हें १९९६ में सुयक्त मोर्चा सरकार का प्रधानमंत्री बनने का प्रस्ताव दिया गया तो उनकी पार्टी ने इस पर सहमति नहीं दी और पार्टी ने सत्ता में भागीदारी करने से ही इंकार कर दिया। इस पेशकश को स्वीकार नहीं करने को बाद में बसु ने ऐतिहासिक गलती करार दिया था। पार्टी ने उनके इस विचार को हालांकि उनका व्यक्तिगत विचार बताते हुए इसे खारिज कर दिया। बसु मार्क्सवाद में पूरी तरह विश्वास करने के बावजूद व्यवहारिक थे और पार्टी की कट्टर विचारधारा के बीच उन्होंने अपने कार्यकाल के अंतिम दिनों

में विदेशी निवेश और बाजरोन्मुख नीतियां अपना कर अपने अद्‌भुत विवेक का परिचय दिया था। कुशल राजनीतिज्ञ, योग्य प्रशासक, सुधारवादी और अनेक मामलों में नजीर पेश करनेवाले बसु को १९५२ से पश्चिम बंगाल विधानसभा की सदस्यता लगातार हासिल करने का श्रेय जाता है। इसमें एक बार केवल १९७२ में व्यवधान आया था। बसु ने पंचायती राज और भूमि सुधार को प्रभावी ढंग से लागू कर निचले स्तर तक सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया। पूर्व प्रधानमंत्री स्व राजीव गांधी ने भी बसु के कामकाज की सराहना की थी और वर्ष १९८९ में पंचायती राज पर राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया था। बसु की पहल पर लागू किए गए भूमि सुधारों का ही नतीजा था कि पश्चिम बंगाल देश का ऐसा पहला राज्य बना फसल कटकर पहले बंटाईदार के घर जाती थी और इस तरह वहां बिचौलियों की भूमिका खत्म की गई। बसु ने राज्य को एक मजबूत उद्योग नीति भी दी। उन्हरों केन्द्र राज्य संबंधों को नए सिरे से परिभाषित करने के लिए आवाज उठाई जिसके चलते ८० के दशक के अंत तक सरकारिया आयोग का गठन किया गया। उन्होंने गैर कांग्रेसी मुख्यमंत्रियों को एकजुट कर केन्द्र के समक्ष अपनी मांगें भी रखी थीं। बसु ने राज्य में लोकतंत्र के दायरे में रहते हुए पार्टी को मजबूत करने के लिए भी अपने सहयोगियों और कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शन किया।

वामपंथी आंदोलन आज चौराहे पर आ गया है। तृणमूल कांग्रेस का प्रभाव बंगाल में बढ़ा है। आगे विधानसभा चुनाव की चुनौती भी है। ज्योति बसु पार्टी के संरक्षक या भीष्म पितामह थे जो जीवन भर प्रेरणा देते रहे। उन्होंने कहा था कि हम वामपंथी मौका परस्त नहीं हैं। हम लोगों की सेवा के लिए वामपंथी बने हैं। सामाजिक उत्थान, जातिवाद खत्म करने तथा महिलाओं को बराबरी का अधिकार देने में हम आगे रहे हैं।

माकपा के कद्दावर नेता ज्योति बसु के निधन के साथ ही राजनीति के एक युग का अंत हो गया। एक दृढ़निश्चयी और सिद्धांतवादी शीर्ष वामपंथी नेता के रूप में उनकी पहचान थी, जिन सुधारवादी नीतियों की उन्होंने शुरुआत की थी उन्हीं को बाद में अन्य पार्टियों ने भी अपनाया। आज पंचायती राज, गरीबी रेखा से नीचे जीवन बितानेवालों को रियायती दरों पर अनाज देने या राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना लागू है जिसकी दिशा आज से ३० साल पहले ज्योति बसु ने दिखाई थी। आज कांग्रेस तथा अन्य पार्टियां युवाओं के आगे आने की बात कर रही हैं। लेकिन १० साल पहले ज्योति बसु ने यह कर दिखाया और स्वयं मुख्यमंत्री पद से हटकर पार्टी के युवाओं का समग्र मूल्यांकन किया जाए तो यह पहलू चकित करता है कि राजनीति में नेहरू युग से भी अधिक लंबा ज्योति बसु का युग रहा। १९७७ से २००० तक वे ५ बार बंगाल के मुख्यमंत्री रहे। गैरकांग्रेस और गैरभाजपाई ताकतों के लिए उनका नेतृत्व अत्यंत प्रेरणादायी था। लगातार २३ साल तक उन्होंने अत्यंत कुशलतापूर्वक गठबंधन की राजनीति चलाई और वाम मोर्चा में शामिल पार्टियों का समन्वय बनाए रखा। उन्होंने अच्छे प्रशासन की मिसाल कायम की। निश्चित रूप से ज्योति बसु के लिए सत्ता से ज्यादा सिद्धांत महत्वपूर्ण थे। इस तरह का नेता मिल पाना आज कठिन है। ऐसा माना जाता है कि १९९६ में यदि ज्योति बसु देश के प्रधानमंत्री बनते तो हालात कुछ और होते। उस समय कांग्रेस की हार के बाद संयुक्त मोर्चा की बैठक बिहार भवन में हुई थी जिसमें लालू प्रसाद यादव, शरद यादव, बीजू पटनायक, एन.टी.रामाराव, वी.पी. सिंह, रामविलास पासवान आदि नेता मौजूद थे। बैठक में सर्वसम्मति से ज्योति बसु से आग्रह किया गया था कि वे प्रधानमंत्री बनना स्वीकार कर लें। ज्योति बसु की भी सहमति थी किंतु माकपा इसके लिए राजी नहीं हुई। ज्योति बसु ने पार्टी की मर्यादा के लिए प्रधानमंत्री पद का प्रस्ताव

ठुकरा दिया और पार्टी अनुशासन तथा विचारों के लिए प्रतिबद्धता की मिसाल कायम की। आखिर एच.डी. देवगौड़ा ने प्रधानमंत्री पद संभाला उसके बाद केन्द्र में संयुक्त मोर्चा सरकार बनाने में प्रमुख भूमिका निभाने के बावजूद उन्होंने बंगाल का नेतृत्व संभालना ही उचित समझा। जब गरीबी रेखा से नीचे जीवन बिता रहे करोड़ों लोगों को रियायती दामों पर अनाज उपलब्ध कराना था तो तत्कालीन प्रधानमंत्री देवगौड़ा दुविधा में थे लेकिन ज्योति बसु के जोर देने पर उन्होंने इस योजना को लागू किया। ज्योति बसु वामपंथी, धर्मनिरपेक्ष तथा लोकतांत्रिक ताकतों के शीर्ष नेता थे। उन्होंने बंगाल का नेतृत्व संभालते हुए भूमि सुधार, पंचायती राज प्रणाली लागू करने, सांप्रदायिक सौहार्द बनाए रखने की दिशा में उल्लेखनीय भूमिका निभाई। चाहे इंदिरा गांधी की हत्या के बाद की उत्तेजनापूर्ण स्थितियां हों या बाबरी ढांचा ढहाने के बाद उपजा उन्माद, ज्योति बसु ने अपने राज्य में कानून व्यवस्था को मजबूत बनाए रखा और कोई उपद्रव नहीं होने दिया। वे श्रमजीवी वर्ग के खिलाफ बलप्रयोग के खिलाफ थे। वे जनता के करीब जाकर राजनीति करने वाले नेता थे। उनकी विश्वसनीयता और सिद्धांतप्रियता हमेशा असंदिग्ध बनी रही। उनका वैज्ञानिक सोच में यकीन था इसलिए जाते-जाते भी वे अपनी पार्टी, देश और मानव जाति को इस रूप में संदेश दे गए कि उन्होंने अपनी आंखें दान दे दीं ताकि किसी नेत्रहीन को रोशनी मिल सके, शरीर दान कर दिया ताकि चिकित्सा छात्र उसके जरिए अध्ययन कर सकें। इस तरह न उनका अंतिम संस्कार होगा न बड़े बड़े नेताओं के समान समाधि बनाई जाएगी। ज्योति बसु यद्यपि लंबे समय से बीमार थे और मुख्यमंत्री पद भी उन्होंने १० वर्ष पहले ६ जनवरी २००० को छोड़ दिया था फिर भी पार्टीजनों के लिए चिंतक, मार्गदर्शक और संरक्षक रूप में उनकी प्रमुख भूमिका थी। वामपंथी आंदोलन आज चौराहे पर आ गया है। तृणमूल कांग्रेस का प्रभाव बंगाल में बढ़ा है। ज्योति बसु पार्टी के संरक्षक या भीष्म पितामह थे जो जीवन भर प्रेरणा देते रहे। उन्होंने कहा था कि हम वामपंथी मौका परस्त नहीं हैं। हम लोगों की सेवा के लिए वामपंथी बने हैं। सामाजिक उत्थान, जातिवाद खत्म करने तथा महिलाओं को बराबरी का अधिकार देने में हम आगे रहे हैं।

ज्योति बसु भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के अग्रणी नेताओं में से एक थे, जिन्होंने पश्चिम बंगाल में २३ वर्ष तक लगातार मुख्यमंत्री रहकर संसदीय राजनीति में विशेष ख्याति पायी। भारत में कम्युनिस्ट राजनीति को स्थापित करनेवालों में से बसु एक रहे।

गिरिराज किशोर (जन्म- ८ जुलाई)

गिरिराज किशोर हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार होने के साथ-साथ एक सशक्त कथाकार, नाटककार और आलोचक हैं। एक कहानीकार के रूप में भी इन्होंने पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। गिरिराज किशोर के सम-सामयिक विषयों पर विचारोत्तेजक निबंध विभिन्न पत्रपत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशित होते रहे हैं। इनका उपन्यास ढाई घर अत्यन्त लोकप्रिय हुआ था। वर्ष १९९१ में प्रकाशित इस कृति को १९९२ में ही साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कर दिया गया था। गिरिराज किशोर द्वारा लिखा गया पहला गिरमिटिया नामक उपन्यास महात्मा गांधी के अफ्रीका प्रवास पर आधारित था, जिसने इन्हें विशेष पहचान दिलाई।

चन्द्रशेखर (निधन- ८ जुलाई)

चन्द्रशेखर भारत के आठवें प्रधानमंत्री थे। इन्हें युवा तुर्क का सम्बोधन इनकी निष्पक्षता के कारण प्राप्त हुआ था। वह मेधा प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। चंद्रशेखर अपने विचारों की अभिव्यक्ति लेखन द्वारा बहुत समाचार पत्र का सम्पादन प्रकाशन किया। इसका सम्पादकीय स्वयं चंद्रशेखर के द्वारा लिखा जाता था, जो सारगर्भित और मर्मस्पर्शी होता था। वह समस्याओं को उठाते थे तथा उनकी समीक्षा बेबाकी के साथ करते थे। वह समस्या के समाधान भी सुझाते थे।

१० जुलाई

सुनील गावस्कर (जन्म- १० जुलाई)

सुनील गावस्कर भारतीय क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान हैं जिन्हें क्रिकेट के महानतम बल्लेबाजों में शुमार किया जाता है। इन्होंने बल्लेबाजी से संबंधित कई कीर्तिमान स्थापित किए। गावस्कर (अपने समय काल में) ने विश्व क्रिकेट में ३ बार, एक वर्ष में एक हजार रन, सर्वाधिक शतक (३४), सर्वाधिक रन (नौ हजार से अधिक), सर्वाधिक शतकीय भागीदारियां एवं प्रथम श्रृंखला में सर्वाधिक रन बनानेवाले एकमात्र बल्लेबाज थे। सनी गावस्कर की हर पारी एवं रन ऐतिहासिक होते हैं। उन्होंने भारतीय टीम का कुशल नेतृत्व किया और कई महत्वपूर्ण विजयें प्राप्त कीं, जिनमें एशिया कप एवं बेसन एण्ड हेजेस विश्वकप प्रमुख हैं।

राजनाथ सिंह (जन्म- १० जुलाई)

राजनाथ सिंह भारतीय जनता पार्टी के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री एवं वर्तमान भारत सरकार में गृहमंत्री हैं। राजनाथ सिंह पहले भाजपा के अध्यक्ष और भाजपा की उत्तर प्रदेश (जो उनका गृह राज्य भी है) ईकाई के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। प्रारंभ में वे भौतिकी के व्याख्याता थे, पर शीघ्र जनता पार्टी से जुड़ने के लिए उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से अपने दीर्घ संबंधों का उपयोग किया, जिसके कारण वे उत्तर प्रदेश में कई पदों पर विराजमान हुए।

११ जुलाई

सरदार बलदेव सिंह (जन्म- ११ जुलाई)

सरदार बलदेव सिंह भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ एवं प्रथम रक्षामंत्री थे। बलदेव सिंह ने अपनी शिक्षा अम्बाला में पूरी करके खालसा कॉलेज, अमृतसर में अपने पिताजी के साथ कार्य किया। १९३० में पंजाब लौटने पर सरदार बलदेव सिंह ने राजनीति में प्रवेश किया।

सी. शंकरन नायर (जन्म- ११ जुलाई)

सी. शंकरन नायर भारतीय न्यायविद एवं राजनेता थे, जिन्होंने अपने स्वतंत्र विचारों और स्पष्टवादिता के बावजूद उच्च सरकारी पद हासिल किए थे, जो उस समय भारतीयों को मुश्किल से मिलते थे। उन्होंने एक साथ मोहनदास करमचंद्र गांधी के नेतृत्व में चरम भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन तथा ब्रिटिश भारत सरकार द्वारा इसे बलपूर्वक कुचले जाने, दोनों का विरोध किया था।

भीष्म साहनी (निधन- ११ जुलाई)

भीष्म साहनी प्रसिद्ध भारतीय लेखक थे। उन्हें हिन्दी साहित्य मे प्रेमचंद की परंपरा का अग्रणी लेखक माना जाता है। वे आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख स्तंभों में से एक थे। भीष्म साहनी मानवीय मूल्यों के सदैव हिमायती रहे। भीष्म साहनी ने कई प्रसिद्ध रचनाएँ की थीं, जिनमें से उनके उपन्यास तमस पर वर्ष १९८६ में एक फिल्म का निर्माण भी किया गया था। उन्हें कई पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुए थे। १९९८ में भारत सरकार के पद्मभूषण अलंकरण से भी वे विभूषित किये गए थे।

रामा राघोबा राणे (निधन- ११ जुलाई)

सेकेंड लेफ्टिनेंट रामा राघोबा राणे परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय सैनिक हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९४८ में मिला था।

१२ जुलाई

सत्य नारायण सिन्हा (जन्म- १२ जुलाई)

सत्य नारायण सिन्हा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रसिद्ध राजनेता तथा संसदीय मामलों के मंत्री थे। ये वर्षों तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे थे। सत्य नारायण सिन्हा प्रथम लोकसभा, द्वितीय लोकसभा, तृतीय लोकसभा तथा चौटी लोकसभा के सदस्य भी रहे। वर्ष १९७१ से १९७७ तक इन्होंने मध्य प्रदेश के राज्यपाल का कार्यभार सम्भाला था। अपने राजनीतिक जीवन में सत्य नारायण सिन्हा कई महत्वपूर्ण पदों पर रहे।

अचंत शरत कमल (जन्म- १२ जुलाई)

अचंत शरत कमल भारतीय खिलाड़ी हैं, जिन्होंने राष्ट्रमंडल खेलों में टेबल टेनिस चैंपियनशिप में स्वर्ण पदक जीता था। अचंत शरत को वर्ष २००४ में अर्जुन पुरस्कार प्रदान किया गया था।

१३ जुलाई

सुनीता जैन (जन्म- १३ जुलाई)

सुनीता जैन हिन्दी और अंग्रेजी की आधुनिक कहानीकार और उपन्यासकार हैं। वे एक कवियत्री के रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी हैं। अम्बाला में जन्मी सुनीता जैन ने स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. किया था। इसके बाद उन्होंने यूनिवर्सिटी ऑफ नेब्रास्का से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। शिक्षा और साहित्य का पद्मश्री अलंकरण प्राप्त करनेवाली सुनीता जैन, अंग्रेजी और हिन्दी में बेहतरीन कविताएँ लिखती हैं। उनके उपन्यास, लघुकथाएँ, रचनात्मक अनुवाद और आलोचनात्मक विश्लेषण पाठकों की भरपूर सराहना अर्जित कर चुके हैं। कई पुरस्कारों और फैलोशिप उनके खाते में दर्ज हैं।

आशापूर्ण देवी (निधन- १३ जुलाई)

आशापूर्णा देवी बांग्ला भाषा की प्रख्यात उपन्यासकार हैं जिन्होंने मात्र १३ वर्ष की आयु में लिखना प्रारंभ कर दिया था और तब से ही उनकी लेखनी निरंतर सक्रिय बनी रही। आशापूर्णा के लेखन की विशिष्टता उनकी एक अपनी ही शैली है।

कथा का विकास, चरित्रों का रेखांकन, पात्रों के मनोभावों से अवगत कराना, सबमें वह यथार्थवादिता को बनाए रखते हुए अपनी आशामयी दृष्टि को अभिव्यक्ति देती हैं। इसके पीछे उनकी शैली विद्यमान रहती है। प्रथम प्रतिश्रुति (१९६४), आकाश माटी (१९७५), प्रेम ओ प्रयोजन (१९४४) आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

१४ जुलाई

अमर शहीद लाला हुकुम चंद जैन

१८५७ का क्रांति यज्ञ अपने जीवन की आहुति देने वालों मे हुकुम चन्द जैन भी थे। लाला हुकुम चंद जैन का जन्म १८१६ ई. मे हाँसी हरियाणा के प्रसिद्ध परिवार मे श्री गुनी चंद जैन के घर मे हुआ था। जन्मजात प्रतिभा के धनी हुकुम चंद जी को फारसी और गणित की विशेष रुचि थी। इन विषयों पर आपने कई पुस्तके भी लिखी थी। अपनी प्रतिभा के बल पर आपने मुगल बादशाह बहादुर शाह जफर के दरबार मे उच्च पद प्राप्त कर लिया था। १८४१ मे मुगल बादशाह ने आपको हाँसी व करनाल जिले के इलाकों का कानूनगो एवं प्रबंधकर्ता नियुक्त किया। कुछ समय बाद अंग्रेजों ने हरियाणा प्रांत को अपने अधीर कर लिया, किंतु आप ब्रिटिश शासन के कानूनगो बने रहे और आपकी भावनाएं सदैव अंग्रेजों के विरुद्ध थी।

लाला हुकुमचंद जैन उच्च कोटि के दानी उदारहृदयी और परोपकारी थे। आपने गावों में मंदिरों शिवालयों के कुओ व तालाबों का निर्माण कराया। १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम में दिल्ली मे आयोजित देशभक्त नेताओं के सम्मेलन मे श्री तात्याटोपे भी उपस्थित थे। आपने बहादुर शाह जफर को अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध करने की प्रेरणा दी और कहा कि मैं स्वतंत्रता संग्राम मे अपना तन मन धन सर्वस्व बलिदान करने को तैयार हूँ। हाँसी पहुँचकर आपने देशभक्त वीरों को एकत्र किया। जब अंग्रेजों की सेना हाँसी होकर दिल्ली पर धावा बोलने जा रही थी तो उस पर हमला करके भारी क्षति पहुँचाई। लाला हुकुम चंद व अनके साथी मिर्जा मुनीर बेग ने गुप्त रूप से एक पत्र फारसी भाषा मे मुगल सम्राट को लिखा जिसमे उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध पूर्ण सहायता का विश्वास दिलाया।

उपरोक्त पत्र में उन्होंने अंग्रेज शासकों के खिलाफ अपनी भावनाओं को भी व्यक्त खुलकर किया था। इसी बीच दिल्ली पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया और मुगल सम्राट गिरफ्तार कर लिए गए। १५ नवंबर १८५७ को बादशाह की व्यक्तिगत फाइलों की जांच के दौरान लाला हुकुमचंद और मिर्जा मुनीर बेग के हस्ताक्षरों वाला पत्र अंग्रेजों के हाथ लग गया। दिल्ली में तैनात अंग्रेज अधिकारी सांडर्स ने उक्त पत्र को कार्रवाई के लिए आगे बढ़ा दिया। अंतत: हुकुम चंद जैन और मिर्जा मुनीर के मकानों पर आनन-फानन मे छापे मारे गए और हिसार लाकर उन पर दिखावटी तौर एक मुकदमा चलाया गया। १८ जनवरी १९५८ को हिसार के मजिस्ट्रेट जॉन एकिसन ने लाला हुकुमचंद एवं मिर्जा मुनीर बेग को फांसी की सजा सुना दी। दोनो सेनानियों को १९ जनवरी को फांसी दे दी गई। लाला हुकुम चंद जैन जैसे अमर शहीदों पर संपूर्ण भारतीय समाज को गर्व है। श्री जैन की स्मृति मे हांसी नगर पालिका ने २२ जनवरी १९६१ को अमर शहीद हुकुम सिंह पार्क बनवाया, जिसमे लाला जी की आदम कद प्रतिमा विराजमान है।

ई.एम.एस. नंबूदरीपाद (जन्म- १४ जुलाई)

इलमकुलम मनक्कल शंकरन नंबूदरीपाद भारत के प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेताओं में से एक थे। केरल का प्रथम मुख्यमंत्री

बनने का सौभाग्य इन्हें मिला था। ई.एम.एस.नूंदरीपाद एक समाजवादी मार्क्सवादी विचारक, क्रांतिकारी, लेखक, इतिहासकार और सामाजिक टीकाकार के रूप में भी प्रसिद्ध थे। वे भारत में पहली गैर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मुख्यमंत्री के रूप में पहली लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार के नेता बने थे।

१४ जुलाई १९०९ को केरल के पहले मुख्यमंत्री ईएमएस नंबूदरीपाद का जन्म पालघाट (केरल) में हुआ था। वे भारत में पहली गैर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मुख्यमंत्री के रूप में पहली लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार के नेता थे। उनके चार बड़े कदम में पहला। जमीन पर जोतने वाले का अधिकार बढ़ाने की दिशा में भूमि सुधार। दूसरा, शिक्षा जैसे क्षेत्रों में निजी संस्थाओं को सामाजिक नियंत्रण के दायरे में लाने के लिए बदलाव। तीसरा, मेहनतकशों के पक्ष में पुलिस-प्रशासन के रूख में सुधार और चौथा, सत्ता का विकेंद्रीकरण।

वे एक समाजवादी मार्क्सवादी विचारक, लेखक, इतिहासकार और सामाजिक टीकाकार के रूप में भी प्रसिद्ध थे। १९ मार्च, १९९८ को तिरुवनंतपुरम में उनका निधन हो गया।

गोपाल गणेश आगरकर (जन्म- १४ जुलाई)

गोपाल गणेश आगरकर का नाम भारत के प्रसिद्ध समाज सेवकों में लिया जाता है। एक पत्रकार के रूप में भी इन्होंने प्रसिद्धि पाई थी। ये प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के सहपाठी रहे थे। इन्होंने सुधारक नाम एक साप्ताहिक भी निकाला था। गोपाल गणेश आगरकर जी वर्ष १८९२ में फर्ग्युसन कॉलेज, पुणे के प्रधानाध्यापक बनाये गए थे और फिर इस पद पर वे अंत तक रहे। तिलक, आगरकर और विष्णुशास्त्री चिपलूणकर ने डेक्कन एजुकेशन सोसायटी की स्थापना की थी। सातारा जिले में अत्यंत गरीब परिवार में जन्म हुआ था। कॉलेज के दिनों में स्ट्रीट लैंप की रोशनी में पढ़ते थे।

चन्द्रभानु गुप्त (जन्म- १४ जुलाई)

चन्द्रभानु गुप्त भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। उन पर आर्य समाज का बहुत गहरा प्रभाव था। वर्ष १९२६ से ही सी.बी. गुप्त उत्तर प्रदेश कांग्रेस और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य बन गए थे। कई विभागों में मंत्री रहने के बाद चन्द्रभानु जी वर्ष १९६० से १९६३ तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे। लखनऊ और गोरखपुर जैसे शहरों को आधुनिक व विकासशील बनाने की पहल करनेवाले सी.बी. गुप्त को लोग मजबूत प्रशासन, जुझारू नेतृत्व व बड़प्पन के लिए आज भी याद करते हैं।

१५ जुलाई

बादल सरकार (जन्म- १५ जुलाई)

बादल सरकार अभिनेता, नाटककार, निर्देशक और इन सबके अतिरिक्त रंगमंच के सिद्धांतकार थे। उन्होंने तीसरा रंगमंच का सैद्धांतिक प्रतिपादन किया और उसे मंच पर भी उतारा। बादल सरकार ने बैचलर ऑफ इंजीनियरिंग तथा टाउन प्लानिंग में डिप्लोमा की शिक्षा भारत और विदेशों में ली थी। वह भारत के बहुचर्चित नाटककारों में एक थे। सातवें दशक में पूरे देश में उनकी धूम मची थी। मोहन राकेश, विजय तेंडुलकर और गिरीश कर्नाड के साथ बादल सरकार को मिलाने के बाद ही उस

दौर का रंगपरिवेश संपूर्ण होता था। उनके नाटक भारी संख्या में हिंदी में और अन्य भारतीय भाषाओं में मंचित हुए और वे बांग्ला की परिधि से बाहर निकल समग्रता में भारत के नाटककार और भारतीय रंगमंच के अगुआ बने।

दुर्गाबाई देशमुख (जन्म- १५ जुलाई)

दुर्गाबाई देशमुख आंध्र प्रदेश की प्रथम महिला नेता जिनका जन्म १५ जुलाई, १९०९ ई. को राजामुंद्री में एक मध्यम स्तर के परिवार में हुआ था। दुर्गाबाई १९४६ में लोकसभा और संविधान परिषद की सदस्य चुनी गई। उन्होंने अनेक समितियों में महत्वपूर्ण योग दिया। १९५२ में दुर्गाबाई ने सी.डी. देशमुख के साथ विवाह कर लिया। वे अनेक समाजसेवी और महिलाओं के उत्थान से संबंधित संस्थाओं की सदस्य रही। उनकी मां राजनीति में भाग लेती थी और कांग्रेस कमेटी की सचिव थीं। इसका प्रभाव दुर्गाबाई पर भी पड़ा। दुर्गाबाई १९४६ में लोकसभा और संविधान परिषद की सदस्य चुनी गई। उन्होंने अनेक समितियों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनका निधन ९ अप्रैल को हुआ।

१६ जुलाई

के.वी. सुबन्ना (निधन- १६ जुलाई)

कुंटागोडू विभूति सुबन्ना भारत के जाने-माने नाटककार और निनासम धर्म संस्था के संस्थापक तथा रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ थिएटर के लिए मील का पत्थर थे।

धनराज पिल्ले (जन्म- १६ जुलाई)

धनराज पिल्ले भारत के प्रसिद्ध हॉकी खिलाड़ी हैं। हॉकी में सेंटर फारवर्ड खेलनेवाले धनराज पिल्ले के खेल में गति और स्ट्राइकिंग कौशल है। उन्होंने कॅरियर के शानदार वर्षों में अनेक पुरस्कार प्राप्त किए हैं। १९९१ में उन्हें महाराष्ट्र सरकार का शिव छत्रपति अवार्ड प्रदान किया गया था। इसके अतिरिक्त वह राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार, अर्जुन पुरस्कार व पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं।

जगदीशचन्द्र माथुर (जन्म- १६ जुलाई)

जगदीशचन्द्र माथुर हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों में से हैं जिन्होंने आकाशवाणी में काम करते हुए हिन्दी की लोकप्रियता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया। दूरदर्शन उन्हीं के जमाने में वर्ष १९४९ में शुरु हुआ था। हिन्दी और भारतीय भाषाओं के तमाम बड़े लेखकों को वे ही रेडियो में लेकर आए थे। सुमित्रानंदन पंत से लेकर रामधारी सिंह दिनकर और बालकृष्ण शर्मा नवीन जैसे दिग्गज साहित्यकारों के साथ उन्होंने हिंदी के माध्यम से सांस्कृतिक पुनर्जागरण का सूचना संचार तंत्र विकसित और स्थापित किया था।

१६ जुलाई, १९१७ को नाटककार व लेखक जगदीशचंद्र माथुर का जन्म खुर्जा (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उन्होंने ऑल इंडिया रेडियो के महानिदेशक के रूप में हिंदी की लोकप्रियता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान किया। उन्होंने ही एआइआर का नामकरण आकाशवाणी किया था। भारतीय भाषाओं के तमाम बड़े लेखकों को वे ही रेडियो पर लेकर आये थे। देश में दूरदर्शन शुरू होने के समय उन्होंने टीवी का नाम दूरदर्शन रखा, जिसका उद्घाटन पंडित जवाहरलाल नेहरू

ने किया था। उनकी कृतियों में भोर का तारा, कोणार्क, ओ मेरे सपने, शारदीया, दस तसवीरें, पहला राजा आदि प्रमुख हैं। १४ मई, १९७८ को उनका निधन हुआ था।

अरुणा आसफ अली (जन्म- १६ जुलाई)

अरुणा आसफ अली का नाम भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इन्होंने भारत को आजादी दिलाने के लिए कई उल्लेखनीय कार्य किये थे। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभानेवाली क्रांतिकारी, जुझारू नेता श्रीमती अरुणा आसफ अली का नाम इतिहास में दर्ज है। अरुणा आसफ अली ने सन १९४२ ई. के अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। देश को आजाद कराने के लिए अरुणा जी निरंतर वर्षों अंग्रेजों से संघर्ष करती रही थीं।

स्वाधीनता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाली अरुणा आसफ अली भारत छोड़ो आंदोलन की नायिका थीं, जिन्होंने अंग्रेजों के तमाम प्रयासों को धता बताते हुए मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में तिरंगा झंडा फहराया था। महात्मा गांधी ने १९४२ में जब भारत छोड़ो आंदोलन का आह्वान किया तो अरुणा आसफ अली ने इसमें अद्वितीय भूमिका निभाई। १६ जुलाई १९०९ को कालका हरियाणा में जन्मीं अरुणा १९२८ में कांग्रेस नेता आसफ अली से शादी करने के बाद पार्टी गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेने लगीं। इतिहासकार मालती मलिक के अनुसार महात्मा गांधी को जब लगा कि अंग्रेज किसी भी तरह देश छोड़ने को तैयार नहीं हैं तो उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन का आह्वान किया। अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ने आठ अगस्त १९४२ को बम्बई अधिवेशन में भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित किया। अंग्रेजों ने खतरे को भांप आनन-फानन में सभी महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया लेकिन अरुणा उनके हाथ नहीं आई। अगले दिन नौ अगस्त को उन्होंने शेष अधिवेशन की अध्यक्षता की और मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में तिरंगा फहराकर भारत छोड़ो आंदोलन का शंखनाद किया। ब्रितानिया हुकूमत के आदेश पर पुलिस ने अधिवेशन में शामिल लोगों पर गोलियां चलाई जिसका अरुणा के हौंसले पर कोई असर नहीं हुआ। इस तरह अरुणा आसफ अली भारत छोड़ो आंदोलन की नायिका बन गई। बाद के वर्षों में वह स्वतंत्रता संग्राम की ग्रांड ओल्ड लेडी कहलाई। अरुणा के भूमिगत होने के बाद उनके खिलाफ गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया और उनकी संपत्ति को जब्त कर नीलाम कर दिया गया लेकिन इस सबके बावजूद उनके इरादे बुलंद रहे। इसी दौरान उन्होंने राम मनोहर लोहिया के साथ कांग्रेस पार्टी की मासिक पत्रिका इंकलाब का संपादन भी किया। वर्ष १९४४ के संस्करण में अरुणा ने युवाओं का आह्वान किया कि वे हिंसा और अहिंसा के वाद-विवाद में न पड़कर क्रांति में शामिल हों और देश को आजाद कराएं। अंग्रेजों ने अरुणा के सिर पर पांच हजार रुपये का इनाम घोषित किया। वह बीमार पड़ गई। गांधीजी ने उन्हें पत्र लिखा कि वह सामने आए और समर्पण कर दें। इनाम में मिलनेवाली राशि को वह दलित कल्याण में खर्च कर सकती हैं। हालांकि अरुणा १९४६ में तभी सामने आई जब उनके लिखाफ जारी गिरफ्तारी वारंट वापस ले लिया गया। अरुणा १९४८ में नये दल सोशलिस्ट पार्टी में शामिल हो गई। इसके बाद वह भाकपा में शामिल हुई लेकिन १९५६ में वह इससे अलग हो गई। १९५८ में वह दिल्ली की पहली महापौर निर्वाचित हुई। वर्ष १९६४ में वह फिर से कांग्रेस में शामिल हो गई लेकिन सक्रिय राजनीति से दूर रहीं। इसी साल उन्हें अंतरराष्ट्रीय लेनिन शांति पुरस्कार मिला। अरुणा को १९९२ में भारत के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया। २९ जुलाई १९९६ को उनका निधन हो गया। १९९७ में उन्हें मरणोपरांत देश का सर्वोच्च

नागरिक सम्मान भारत रत्न मिला।

१७ जुलाई

इंदुलाल याज्ञिक (निधन- १७ जुलाई)

इंदुलाल याज्ञिक भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेनेवाले प्रमुख कार्यकर्ताओं में से एक थे। वे गुजरात प्रदेश के निर्माताओं में से एक और ऑल इंडिया किसान सभा के नेता थे। उन्होंने गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की योजना बनाई थी। इंदुलाल याज्ञिक गुजरात की सत्याग्रह कमेटी के सचिव भी बनाये गए थे। वर्ष १९२३ में उन्हें गिरफ्तार करके यरवदा जेल में महात्मा गांधी के साथ बंद किया गया था। यह बात भी उल्लेखनीय है कि उन्होंने अपनी पूरी संपत्ति महागुजरात सेवा ट्रस्ट को दान कर दी थी।

बेगम आबिदा अहमद (जन्म- १७ जुलाई)

बेगम आबिदा अहमद भारत के पाँचवें राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद की पत्नी थीं। ये बेहद सुलझे विचारोंवाली एक शिक्षित महिला के रूप में जानी जाती थीं। आबिदा बेगम सांस्कृतिक गतिविधियों में भी बड़े उत्साह के साथ भाग लेती थीं।

निर्मलजीत सिंह सेखों (जन्म- १७ जुलाई)

फ्लाइंग ऑफिसर निर्मजलीत सिंह सेखों परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९७१ में मरणोपरांत मिला। भारतीय वायु सेना से परमवीर चक्र के एकमात्र विजेता फ्लाइंग ऑफिसर निर्मलजीत सिंह सेखों ने १९७१ में पाकिस्तान के विरुद्ध लड़ते हुए उस युद्ध में वीरगति पाई जिसमें भारत विजयी हुआ और पाकिस्तान से टूट कर उसका एक पूर्वी हिस्सा, बांग्लादेश के नाम से स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। इस समय निर्मलजीत सिंह श्रीनगर वायु सेना के हवाई अड्डे पर मुस्तैदी से तैनात थे और नेट हवाई जहाजों पर अपने करिश्मे के लिए निर्मलजीत सिंह उस्ताद माने जाते थे।

१८ जुलाई

कादम्बिनी गांगुली (जन्म- १८ जुलाई)

कादम्बिनी गांगुली भारत की पहली महिला स्नातक और पहली महिला फिजीशियन थीं। यही नहीं कांग्रेस अधिवेशन में सबसे पहले भाषण देनेवाली महिला का गौरव भी कादम्बिनी गांगुली को ही प्राप्त है। कादम्बिनी गांगुली पहली दक्षिण एशियाई महिला थीं, जिन्होंने यूरोपियन मेडिसिन में प्रशिक्षण लिया था। इन्होंने कोयला खदानों में काम करनेवाली महिलाओं की लचर स्थिति पर भी काफी कार्य किया। बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय की रचनाओं से कादम्बिनी बहुत प्रभावी थीं। उनमें देशभक्ति की भावना बंकिमचन्द्र की रचनाओं से ही जागृत हुई थी।

मेहदी हसन (जन्म- १८ जुलाई)

मेहदी हसन एक प्रसिद्ध गजल गायक थे। इन्हें गजल का राजा माना जाता है। इन्हें खाँ साहब के नाम से भी जाना जाता है। वैसे तो गजल के इस सरताज पर पाकिस्तान फख्र करता था मगर भारत में भी उनके मुरीद कुछ कम न थे। मेहदी

हसन मूलत: राजस्थान के थे।

राजेश जोशी (जन्म- १८ जुलाई)

राजेश जोशी समकालीन साहित्यकारों में महत्वपूर्ण स्थान रखते है। राजेश जोशी को समकालीन कविता का महत्वपूर्ण हस्ताक्षर माना जाता हैं। राजेश जोशी इस दौर के सबसे मुखर युवा कवियों में से हैं। राजेश जोशी केन्द्रीय साहित्य अकादमी के प्रतिष्ठित सम्मान से सम्मानित किये गये हैं।

१९ जुलाई

मंगल पांडे (जन्म- १९ जुलाई)

मंगल पांडे का नाम भारतीय स्वाधीनता संग्राम में अग्रणी योद्धाओं के रूप में लिया जाता है, जिनके द्वारा भड़काई गई क्रांति की ज्वाला से अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन बुरी तरह हिल गया था। मंगल पांडे की शहादत ने भारत में पहली क्रांति के बीज बोए थे। ब्रह्मदेश (बर्मा वर्तमान म्यांमार) पर विजय तथा सिक्ख युद्ध की समाप्ति के पश्चात अंग्रेजों ने भारतवर्ष पर निष्कंटक राज्य करने के सपने देखे होंगे; पर उन्हें क्या पता था कि सन १८५७ का वर्ष उनकी आशाओं पर तुषारपात का वर्ष सिद्ध होगा।

जंग ए आजादी के पहले सेनानी मंगल पांडे ने १८५७ में ऐसी चिनगारी भड़काई, जिससे दिल्ली से लेकर लंदन तक की ब्रितानिया हुकूमत हिल गई। इस अकेले शख्स ने अपने प्रयास से अंग्रेजी हुक्मरानों को एक बात समझा दी कि अगर कोई एक हिन्दुस्तानी भी पूरे मन से प्रण ठान ले, तो ब्रितानिया हुकूमत की चूलें हिला सकता है। नगवा, बलिया में १९ जुलाई १८२७ को जन्मे मंगल पांडे बैरकपुर की सैनिक छावनी में ३४वीं बंगाल नेटिव इनफ्रैंट्री में तैनात थे जिन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को खुली चुनौती देकर आजादी की लड़ाई का शंखनाद किया। इतिहासकार मालती मलिक के अनुसार भारतीय सैनिकों में ब्रितानिया हुकूमत के खिलाफ व्याप्त असंतोष उस समय विद्रोह की चिंगारी में बदल उठा जब सेना में इनफील्ड पी-५३ राइफल शामिल की गई। इस राइफल में इस्तेमाल किए जानेवाले कारतूस के बारे में कहा जाता था कि इसमें गाय और सुअर की चर्बी लगी है जिससे हिन्दू और मुसलमानों का धर्म भ्रष्ट हो रहा है। इस कारण हिंदू और मुसलमान सिपाहियों ने इन कारतूसों का इस्तेमाल करने से इंकार कर दिया। असंतोष से उठी चिंगारी लावा बनने लगी और मंगल पांडे ने २९ मार्च १८५७ को लेफ्टिनेंट बॉग सहित अन्य अंग्रेज अधिकारियों पर हमला कर दिया लेकिन वह पकड़ लिए गए। छह अप्रैल १८५७ को कोर्ट मार्शल के फैसले में मंगल पांडे को फांसी देने के लिए १८ अप्रैल की तारीख मुकर्रर की गई। विद्रोह की चिंगारी भड़कती जा रही थी, जिससे अंग्रेजों को लगा कि यदि फांसी में देरी की गई तो बगावत ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को तबाह कर सकती है। इसलिये तय वक्त से १० दिन पहले आठ अप्रैल को ही मंगल पांडे को फांसी दे दी गई। इस खबर के चलते भारतीय सिपाहियों ने देशभर में विद्रोह का झंडा बुलंद कर दिया। महीनों तक लड़ाई चलती रही लेकिन अंतत: अंग्रेज इसे दबाने में कामयाब हो गए। आजादी की इस चिंगारी को शुरू में १८५७ का गदर नाम मिला लेकिन बाद में इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के रूप में मान्यता

मिल गई। मंगल पांडे द्वारा फूंकी गई आजादी की चिंगारी का परिणाम ९० साल बाद भारत की आजादी के रूप में निकला और अंग्रेज अपना बोरिया बिस्तर समेटकर चले गए।

१९ जुलाई १८२७ क्रांतिकारी मंगल पांडे का जन्म बलिया (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। उन्होंने ही १८५७ में आजादी की पहली जंग का आगाज किया था और अपनी बंदूक से अंग्रेज लेफ्टिनेंट बाग व सारजेंट मेजर हडसन को मार गिराया था। २९ मार्च १८५७ की इस घटना के बाद ईस्ट कंपनी के विरुद्ध भारतीय सैनिकों का विद्रोह तेजी फैल गया।

वे बैरकपुर की सैनिक छावनी में ३४वीं बंगाल नेटिव इन्फैंट्री की पैदल सेना के १४४६ नंबर के सिपाही थे। भारतीय सैनिकों के विद्रोह का मूल कारण सुअर और गाय की चर्बी से बने नये कारतूस का उपयोग था।

उन्हें कोर्ट मार्शल में फांसी की सजा देने की घोषणा की गयी। उनके द्वारा शुरू किये गये विद्रोह के फैलने के डर से उन्हें निर्धारित तिथि से दस दिन पहले ही आठ अप्रैल १८५७ को फांसी दे दी गयी।

मंगल पांडे स्वाधीनता संग्राम के इतिहास की एक ऐसी अमर हस्ती हैं जिन्होंने १८५७ में क्रांति का बिगुल फूंक कर भारत पर कब्जा किए बैठी गोरी हुकूमत की जड़ें हिला दी थीं। उन्नीस जुलाई १८२७ को नगवा, बलिया में जन्में मंगल पांडे ने ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन के खिलाफ विद्रोह का जो कदम उठाया, वह अंग्रेजों पर ज्वाला बनकर टूट पड़ा था। बैरकपुर की सैनिक छावनी में ३४वीं बंगाल नेटिव इनफैंट्री के इस जवान के मन में अंग्रेजी के खिलाफ धधक रही अग्नि उस समय और विकराल हो गई जब सेना में इनफील्ड पी ५३ राइफल शामिल की गई। इस राइफल के कारतूस के बारे में कहा गया था कि इसमें गाय सुअर की चर्बी लगी है और अंग्रेज ऐसा हिन्दू मुसलमानों का धर्म नष्ट करने के मकसद से कर रहे हैं। इतिहासकार वीके जैन का कहना है कि कारतूसों में गाय और सुअर की चर्बी लगे होने की बात ने आजादी की पहली लड़ाई को एक मजबूत आधार प्रदान कर दिया था। इसके चलते हिंदू और मुसलमान सिपाहियों ने अंग्रेजों को सबक सिखाने की ठान ली तथा उक्त कारतूसों का इस्तेमाल करने से इंकार कर दिया। गोरी हुकूमत को देश से बाहर का रास्ता दिखा देने के इरादे से मंगल पांडे ने २९ मार्च १८५७ को लेफ्टिनेंट बॉग सहित अन्य अंग्रेज अधिकारियों पर हमला कर दिया लेकिन वह पकड़ लिए गए। उनकी गिरफ्तारी की खबर देशभर की सैनिक छावनियों में जंगल में आग की तरह फैल गई और विप्लवी भारतीय सैनिकों ने बगावत का झंडा बुलंद कर दिया। कोर्ट मार्शल में छह अप्रैल १८५७ को मंगल पांडे को फांसी देने के लिए १८ अप्रैल की तारीख तय की गई। उनकी मौत की सजा की खबर ने देश के हर आदमी को उद्वेलित कर दिया। पूरे देश में अंग्रेजों के खिलाफ संग्राम छिड़ गया। मंगल पांडेय द्वारा लगाई गई चिनगारी को ज्वालामुखी बनते देख अंग्रेजों को लगा कि यदि फांसी में देरी की गई तो बगावत उनके शासन को तबाह कर सकती है। इसलिए तय वक्त से १० दिन पहले आठ अप्रैल को ही इस वीर पुरुष को फांसी दे दी गई। भारत के इस महान सेनानी की फांसी के बाद देश में महीनों तक आजादी की लड़ाई चलती रही, लेकिन अंतत: अंग्रेज इसे दबाने में कामयाब हो गए। स्वतंत्रता के लिए लड़े गए इस युद्ध को शुरू में १८५७ का गदर नाम मिला, लेकिन बाद में इसे पहली जंग-ए-आजादी के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई। मंगल पांडे के प्रयास का नतीजा ९० साल बाद १९४७ में भारत की आजादी के रूप में निकला और अंग्रेज अपना सबकुछ समेटकर चले गए।

२९ मार्च १८५७ का वो महान दिन था जिस दिन भारत माता के महान बेटे ने अपनी मां को गुलामी की जंजीरों से मुक्ति

दिलवाने का प्रथम प्रयास किया। उस भारत के महान सपूत, स्वाधीनता संग्राम के क्रांतिकारी मंगल पांडे ने सबसे पहले अंग्रेजों पर गोली चलाई। फिर इसी गोली की चिंगारी ज्वाला बनकर अंग्रेजों पर टूट पड़ी थी।

मंगल पांडे इस महान कार्य को अंजाम देकर अमर हो गए। उन्हें मालूम था कि अगर वे ऐसा करेंगे तो इसका नतीजा क्या हो सकता है परंतु फल की चिंता न करते हुए, गुलाबी की बेड़ियों के बोझ के दुख ने उन्हें ऐसा करने पर मजबूर कर दिया। अपने अंग्रेज अफसर पर गोली चलाकर उन्होंने भारत के स्वतंत्रता के इतिहास में अपना नाम सुनहरे शब्दों में अंकित करवा लिया। वे एक सीधे सादे ब्राह्मण थे न कि कोई महान नेता या परमवीर योद्धा। वे अंग्रेजों के एक मामूली सिपाही थे पर उनकी रगों में भारतीय खून बहता था और इसी खून की पुकार सुनकर वे स्वतंत्रता की बलिवेदी पर बलिदान हो गए। सन १८५७, जबकि देश दासता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, नाना साहब ने बहुत प्रयत्न करके भारत के सिपाहियों के दिलों में देश प्रेम की ज्योत प्रज्वलित कर दी और इसी जोत ने ज्वाला बनकर विद्रोह करने के लिए उकसाया। ३१ मार्च १८५७ का दिन निश्चित किया गया, अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजाने का। लेकिन किसी कारणवश मंगल पांडे ने २९ मार्च को ही इस महाक्रांति के यज्ञ का शुभारंभ कर दिया। कइयों के अनुसार उस दिन मंगल पांडे ने गोली चला कर भारी भूल की थी जिसके कारण १८५७ की क्रांति असफल हो गई। देखा जाए तो उन्होंने ऐसा जानबूझ कर नहीं किया था बल्कि उस समय परिस्थितियां ही ऐसी बन पड़ी थी कि विवश होकर वे गोली चलाने पर मजबूर हो गए थे। इस क्रांति की शुरुआत कलकत्ता से हुई। कलकत्ता के सैनिकों में यह अफवाह जोर पकड़ गई कि अंग्रेज जो कारतूस सैनिकों को देते हैं और जिन्हें वे अपने दांतों से काटकर खोलते हैं, उनमें सुअर तथा गाय की चर्बी भरी होती है। इस अफवाह से हिंदू तथा मुसलमान दोनों धर्मों के सैनिकों में रोष फैल गया। ये सैनिक अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह की भावना से भर उठे। उन्होंने निश्चय किया कि प्राण दे देंगे पर देश और धर्म का अपमान कदापि सहन नहीं करेंगे। विद्रोह की सूचना अंग्रेजों तक भी पहुंच गई। उन्होंने विद्रोह को दबाने का निश्चय किया। बर्मा से गोरी पलटन बुला भेजी तथा उन्होंने उन्नीस नम्बर की पलटन को भंग करने का निर्णय लिया। इसी के साथ इस पलटन का एक सिपाही था। इस फैसले से उनके दिल में आग का दरिया धधक उठा। उन्हें लगा ३१ मार्च अभी बहुत दूर है और अगर वे इस दिन का इंतजार करते रहे तो अंग्रेज अनर्थ कर देंगे। मंगल पांडे चाहते थे कि विद्रोह का बिगुल अभी से बजा दिया जाना चाहिए पर उनके साथियों ने उनकी बात का समर्थन करने से इंकार कर दिया। २९ मार्च १८५७ का दिन, करीब १० बज रहे थे। मंगल पांडे अपनी भरी हुई बंदूक लेकर मैदान में जा खड़े हो गए। वहां पर सैनिक परेड कर रहे थे। शेर के समान गरजते हुए उन्होंने अपनी साथियों से कहा, खामोश बैठे रहने से तुम्हें आजादी नहीं मिलेगी। तुम्हें देश और धर्म पुकार रहा है। किसी ने उनका साथ नहीं दिया। वे उसी प्रकार सिंह गर्जन करते रहे। तभी उधर से मेजर ह्यूसन उधर आया। मंगल पांडे के कर्ण भेदी स्वर उसके कानों में पड़ते ही उसने सैनिकों को उसे बंदी बनाने का हुक्म दिया पर कोई सैनिक अपनी जगह से न हिला। तभी ह्यूसन के शब्दों का उत्तर मंगल की बंदूक ने दे डाला। धांय धांय। बंदूक से गोली छूटी और ह्यूसन धरती पर कटे वृक्ष की भांति गिर पड़ा। ह्यूसन को गिरता देख दूसरा अंग्रेज अफसर लेक्टिनेंट बाग घोड़े पर सवार होकर आया। मंगल ने उसे भी अपनी बंदूक का निशाना बना दिया। जब मंगल अपनी बंदूक में पुन: गोली भरने लगा तो बाग ने अपनी पिस्तौल से उस पर फायर कर डाला परंतु भाग्य की बात, निशाना चूक गया। मंगल ने तलवार से उसे मार गिराया।

इसके पश्चात तीसरे को भी धराशायी कर दिया। परेड मैदान में तीन-तीन गोरों की लाशें बिखरी पड़ी थी और मंगल पांडे, भारत मां का लाल गर्जन किए जा रहा था। तभी कर्नल वीलर आया पर उसके भी हुक्म को सैनिकों ने मानने से इंकार कर दिया। उसके उपरांत कर्नल हियरसे ने गोरे सैनिकों के बल पर से बंदी बनाना चाहा। जब मंगल पांडे ने अपने चारों तरफ गोरे सैनिक देखे तो वे समझ गए कि अब उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाएगा लेकिन वे जीते जी अंग्रेजों के हाथ नहीं पड़ना चाहते थे। उन्होंने अपनी छाती में गोली दाग ली पर भाग्य धोखा दे गया। वे धरती पर गिर तो पड़े लेकिन मरे नहीं। उन्हें तुरंत अस्पताल ले जाया गया और वहां वे स्वस्थ हो गए। सैनिक अदालत में उन पर मुकदमा चलाकर मृत्यु दंड दिया गया और इस प्रकार उन्हें ८ अप्रैल १८५७ को फांसी दी गई। जब उन्हें फांसी देने का दिन आया तो बैरकपुर के जल्लादों ने उस महान सपूत को फांसी के फंदे पर लटकाने से साफ इंकार कर दिया। इस बात से अंग्रेज सरकार हतप्रभ रह गई। कलकत्ता से ४ जल्लादों को मंगवाया गया जिन्हें यह तक मालूम नहीं होने दिया गया कि वे किसको फांसी दे रहे हैं और उसका अपराध क्या है अर्थात उन जल्लादों से मंगल पांडे के विषय में जानकारी गुप्त रखी गई। इस तरह स्वाधीनता संग्राम के प्रथम क्रांतिकारी को फांसी दे दी गई पर वह शहीद मरकर भी अपने देशवासियों के दिलों में याद के रूप में जीवित है वो मर कर भी अमर है।

बैरकपुर छावनी में बंगाल नेटिव इंफ्रैंट्री की ३४वीं रेजीमेंट में सिपाही रहे, जहां गाय और सूअर की चर्बी वाले कारतूस और अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह का शंखनाद किया।

अल्तमस कबीर (जन्म- १९ जुलाई)

अल्तमस कबीर भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश थे। वे देश के ३९ वें मुख्य न्यायाधीश थे, जिनका कार्यकाल २९ सितम्बर, २०१२ से १८ जुलाई, २०१३ तक रहा।

बालमणि अम्मा (जन्म- १९ जुलाई)

नालापत बालमणि अम्मा मलयालम भाषा की प्रसिद्ध कवियित्री थीं। ये महादेवी वर्मा की समकालीन थीं, जो हिन्दी साहित्य में छायावादी युग के चार प्रमुख स्तम्भों में से एक थीं। नालापत बालमणि अम्मा की गणना बीसवीं शताब्दी की चर्चित व प्रतिष्ठित मलयालम कवयित्रियों में की जाती है। उनकी रचनाएँ एक ऐसे अनुभूति मंडल का साक्षात्कार कराती हैं, जो मलयालम में अदृष्टपूर्व है। आधुनिक मलयालम की सबसे सशक्त कवयित्रियों में से एक होने के कारण नालापत बालमणि अम्मा को मलयालम साहित्य की दादी कहा जाता है। उन्होंने ५०० से अधिक कविताएँ लिखीं।

२० जुलाई

बटुकेश्वर दत्त (निधन- २० जुलाई)

बटुकेश्वर दत्त एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी हैं जिनका जन्म नवम्बर, १९०८ में कानपुर में हुआ था। उनका पैत्रिक गाँव बंगाल के बर्दवान जिले था, पर पिता गोष्ठ बिहारी दत्त कानपुर में नौकरी करते थे। बटुकेश्वर ने १९२५ ई. में मैट्रिक की परीक्षा पास की और तभी माता व पिता दोनों का देहान्त हो गया। इसी समय वे सरदार भगतसिंह और चन्द्रशेखर आजाद

के सम्पर्क में आए और क्रांतिकारी संगठन हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन के सदस्य बन गए। सुखदेव और राजगुरु के साथ भी उन्होंने विभिन्न स्थानों पर काम किया।

कलिखो पुल (जन्म- २० जुलाई)

कलिखो पुल प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ तथा पूर्वोत्तर राज्य अरुणाचल प्रदेश के आठवें मुख्यमंत्री थे। उन्होंने फरवरी २०१६ से जुलाई २०१६ तक मुख्यमंत्री का पद सम्भाला। १३ जुलाई को उच्चतम न्यायालय के आदेश के पश्चात कलिखो पुल को मुख्यमंत्री का पद छोड़ना पड़ा था। कलिखों ने पांच बार कांग्रेस के टिकट पर विधानसभा चुनाव जीता था। साल २०१५ में वे कांग्रेस से निकल कर भारतीय जनता पाटी में चले गए। जब बीजेपी ने कांग्रेस के १२ विधायकों की मदद से सरकार बनाई, तब कलिखो पुल को अरुणाचल प्रदेश का मुख्यमंत्री बना दिया।

बालकृष्ण भट्ट (निधन- २० जुलाई)

बालकृष्ण भट्ट आधुनिक हिन्दी साहित्य के शीर्ष निर्माताओं में से एक थे। आज की गद्य प्रधान कविता का जनक इन्हें माना जाता है। बालकृष्ण भट्ट एक सफल नाटककार, पत्रकार, उपन्यासकार और निबन्धकार थे। भट्टजी ने निबन्ध, उपन्यास और नाटकों की रचना करके हिन्दी को एक समर्थ शैली प्रदान की। ये पहले ऐसे निबन्धकार थे, जिन्होंने आत्मपरक शैली का प्रयोग किया था।

२३ जुलाई

बाल गंगाधर तिलक

श्री बाल गंगाधर तिलक राजनीतिक, धार्मिक तथा भारतीय सांस्कृतिक जगत के सुविख्यात मानव थे। उनका जन्म एक संभ्रान्त एवं शिक्षित परिवार में महाराष्ट्र के जिला रत्नागिरी स्थित चिरवल नामक ग्राम में वर्ष १८५६ ई. की २३ जुलाई को हुआ।

उनके पूज्य पिता श्री गंगाधर पंत महान सनातनी एवं सुप्रसिद्ध विचारवान व्यक्ति थे। पाठशाला में गुरूपद की मर्यादा को निभाते हुए उन्होंने सादा जीवन उच्च विचार का उत्तम आदर्श उपस्थित किया थां ऐसे सुयोग्य पिता की छत्रछाया में बालक बाल गंगाधर तिलक की शिक्षा का शुभारंभ हुआ था। श्री तिलक जी की स्मरण शक्ति ईश्वरीय वरदान थी।

अपने छात्र जीवन में ही उन्होंने उत्तम स्वास्थ्य तथा राष्ट्रीयता के प्रति सराहनीय उदाहरण उपस्थित किया थां अपने अध्ययन के आधार पर इस बिंदु पर पहुंचे थे कि सबल स्वास्थ्य एवं सुदृढ़ राष्ट्रीयता के बल पर ही मिस्टर मेकाले की किरानीगिरी वाली शिक्षा से भारतीय छात्रों को त्राण मिल सकेगा। अपनी संगठन शक्ति का समुचित उपयोग कर के उन्होंने गणेश महोत्सव मनाने की परम्परा कायम की। उस पुनीत अवसर पर वाद-विवाद, विचार गोष्ठी तथा नाटकों के मंचन द्वारा व्यापक प्रचार होता था।

अधिकाधिक लोगों से सम्पर्क हेतु उन्होंने एक विचित्र कोष स्थापित किया, जिसका नाम ही था पैसा फंड। उस कोष में स्वेच्छा से एक पैसा भी जमा किया जा सकता था। उन्होंने अपने मित्र श्री गोपाल गणेश के साथ बहुसंख्यक लोगों के

सहयोग से न्यू इंग्लिश स्कूल के नाम से एक विद्यालाय की स्थापना कर, आर्थिक, सामाजिक तथा स्वास्थ्य विषयक मसलों को सुलझाने का जोरदार प्रयास किया। अपने अभिन्न मित्र श्री महादेव गोविन्द रानडे आदि के सहयोग से फर्गुसन कालेज नामक महाविद्यालाय की स्थापना कर सराहनीय राष्ट्रीय भावना का प्रचार किया। मराठी और अंग्रेजी पत्रों को प्रकाशित करके तिलक ने अपने विचारों का उत्तम प्रभाव जनमानस पर डाला।

बाल, पाल एवं लाल अर्थात श्री बाल गंगाधर तिलक, श्री विपिन चन्द्र पाल तथा श्री लाला लाजपत राय का मिलन राष्ट्र के लिए विशेष लाभप्रद रहा। तिलक पर ब्रिटिश अहलकारों की आंखें बराबर लगी रहती थी मगर वे विश्वविख्यात कृति गीता के सिद्धात को अपने अन्तर में स्थापित कर बिल्कुल निर्भय हो चुके थे। कर्जन महोदय के बंगभंग के वे प्रबल विरोधी थे और किसी काम को अपनाने के पश्चात पीछे हटना तिलक के लिए असंभव था। जेल को तो उन्होंने श्रीकृष्ण मंदिर जैसा आदर दे रखा था।

सन् १९०८ में तिलक ६ साल की सजा सुना कर मांडले जेल में भेज दिये गये। उस कठिन कारावास से उन्हें कुछ भी चिंता नहीं हुई। वहां पर उन्होंने मराठी भाषा में गीता पर सारगर्भित भविष्य लिखा जिसका अनुवाद श्री माधव राव सप्रे ने किया था। उसी महत्वपूर्ण कृति का नाम है गीता रहस्य। श्री बाल गंगाधर तिलक ने ऐसा महान कार्य किया कि उसी लोक कल्याणकारी भावना के चलते वे लोकमान्य हो गये।

सन् १८२० में कांग्रेस का ३५ वां अधिवेशन नागपुर में होने वाला था जिसके सदर लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक निर्वाचित हुए थे। विधाता का विधान बड़ा विचित्र होता है। उसी विधाननुकूल लोकमान्य जी की मृत्यु प्रथम अगस्त को ही हो गयी। उनके देहावसान के पश्चात नागपुर कांग्रेस की अध्यक्षता श्री विजय राघवाचार्य जी ने की थी उसी ऐतिहासिक समारोह में असहयोग आंदोलन का व्यापक स्वरूप साकार हुआ था। आंदोलन का माहौल खड़ा करने में लोकमान्य तिलक की सुदृढ़ अहम भूमिका थी। उस अनुष्ठान को सराहनीय ढंग से सफल बनाया प्रात: स्मरणीय महात्मा गांधी ने जिसमें राष्ट्र का पुरजोर सहयोग रहा।

२३ जुलाई, १८५६ को स्वतंत्रता सेनानी व समाज सुधारक बाल गंगाधर तिलक का जन्म रत्नागिरि (महाराष्ट्र) में हुआ था। उन्होंने सबसे पहले ब्रिटिश राज के दौरान पूर्ण स्वराज की मांग उठायी थी और स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूंगा का नारा दिया। उन्हें लोग आदर से लोकमान्य नाम से पुकार कर सम्मानित करते थे।

अंग्रेजों द्वारा देशद्रोह के मामले में उन्हें देश निकाला मिला, तो उन्होंने बर्मा (अब म्यांमार) की मांडले जेल में छह साल बिताये। उन्होंने मराठी में मराठा दर्पण और केसरी नाम से दो दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन शुरू किया था। १ अगस्त, १९२० को उनका निधन हुआ था।

गंगाधर तिलक कहते थे- कष्ट और विपत्ति मनुष्य को शिक्षा देनेवाले श्रेष्ठ गुण हैं। जो साहस के साथ उनका सामना करते हैं, वे विजयी होते हैं। अन्याय करनेवाला, उतना दोषी नहीं माना जा सकता जितना की उसे सहन करनेवाला।

समस्त दु:ख, अभाव, पीढ़ा और क्लेश के बावजूद साधारण जनता के जीवन में दुखहर्ता, लम्बोदर, विनायक के आराधना में दस दिन का महोत्सव आस्था और सार्वजनिक उल्लास से रंग में डूबे बाल गंगाधर तिलक ने गिरगांव में १५० किरायेदारों वाली केशवजी नायक चॉल में गणेश वंदना को १८९२ में एक सामूहिक उत्सव का रूप दिया। एक अभियान

की तरह यह उत्सव पूरे महाराष्ट्र में फैल गया। विदेशी दास्तां के जुए के नीचे पिसती साधारण जनता के मानस में भक्ति, आस्था, राजनैतिक चेतना और सामूहिक हिस्सेदारी के मिले-जुले रंगों को मूर्त करता हुआ यह पर्व एक खास भारतीय सामूहिक मनोविज्ञान को अभिव्यक्त करने लगा। ब्रिटिश हुक्मरानों को सार्वजनिक गणेशोत्सव की सामुहिकता और तिलक के इरादों को समझने में देर नहीं लगी। वेलेंटाइन किरोल पहला अंग्रेज अफसर था जिसने ब्रिटिश सत्ता द्वारा तिलक के बारे में तैयार की गई गोपनीय रिपोर्ट को एक लेखमाला के रूप में प्रस्तुत किया और सार्वजनिक किया। इस अफसर ने अपने उन लेखों में बड़े शरारतपूर्ण इरादे से तिलक को भारतीय अराजकता का पितामह कहा। उनका कहना था कि तिलक हिन्दु समाज में ब्राह्मणवादी वर्चस्व लाने के लिये प्रयासरत है और एक मुस्लिम विरोधी वातावरण बना रहे हैं। ब्रिटिश सत्ता का यह दुष्प्रचार हिंदुओं और मुसलमानों के बीच वैमनस्य पैदा कर फूट डालो और राज करो की नीति के तहत था।

१९०९ से १९१६ तक मुम्बई के पुलिस कमिश्नर रहे एस.एम.एडवर्डस ने कहा था कि ये सार्वजनिक गणेशोत्सव ब्रिटिश राज के खिलाफ छेड़े गए अभियान का प्रमुख अंग है। तिलक अंग्रेजों द्वारा मुस्लिम समुदाय को हिंदुओं के खिलाफ भड़काने के इस प्रपंच को समझ रहे थे। उन्होंने स्पष्ट किया कि सार्वजनिक गणेशोत्सव का उद्देश्य मुसलमानों के खिलाफ द्वेष नहीं, बल्कि हिंदू समाज में एकता स्थापित कर राष्ट्रीयता की भावना को जगाना है। तिलक चाहते थे दोनों समुदायों के बीच परस्पर सौहार्द और शांति के सम्बन्ध बने रहे। मुंबई शहर में सार्वजनिक गणेशोत्सव की शुरुआत ने पूरे राष्ट्रीय आंदोलन में एक निर्णायक मोड़ को जन्म दिया और यह गणेशोत्सव पूरे मुम्बई प्रांत में फैल गया।

तिलक का मत था कि इस औपनिवेशिक सत्ता के पास परोपकार जैसी कोई चीज और नीति नहीं है। इस सत्ता द्वारा भारत में विकास के लिए जो कुछ भी किया जा रहा है, वह सिर्फ गोरों के अपने निजी स्वार्थ से प्रेरित है। तिलक की रणनीति में स्वराज्य हासिल करना उनकी पहली प्राथमिकता थी। १९वीं सदी के उस भारतीय नवजागरण में धर्म ने एक केंद्रीय भूमिका अदा की। ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज जैसे पश्चिमी मूल्यों से पूरी तरह प्रभावित आंदोलन से तिलक की जो असहमतियां थीं वे आज महत्वपूर्ण लगती है क्योंकि यहां के देसी धार्मिक परंपराओं, भक्तिभावों, भावप्रणवता और सदियों से निर्मित एक जटिल सामूहिक मनोविज्ञान को समज नहीं पाया। आत्मगुरु की भावना ने जनसमाज में राजनीतिक विद्रोह की चेतना को जन्म दिया। तिलक विशुद्ध तर्कवाद के बजाय रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के आधुनिकता बोध को अपने ज्यादा निकट पाने लगे। अंग्रेजों की सारी दुर्नितीयों के बावजूद यह गणेशोत्सव शायद ही कभी सामुदायिक कटुता का आधार बना। इस उत्सव ने स्वदेशी भावना को अधिक मजबूत किया। हिंदुओं के सभी वर्गों के साथ इस धार्मिक उत्सव के जुलुसों, मेलों, संगीत सभाओं, नगाढ़े-ढोल वीणा बजानेवाले मुसलमान भी सहभागी रहे है। अंग्रेजों ने अपनी इस हताशा में इस उत्सव को कुचलने की तमाम कोशिशें की पर यह एक क्रांतिकारी आंदोलन का रूप लेता गया। पढ़ा लिखा तबका समाज के अशिक्षित जनसाधारण के सम्पर्क में आए और सामान्यजन की नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक आकांक्षाओं के साथ अपना सामंजस्य बिठाए।

बाल गंगाधर तिलक कहा करते थे- अपनी रोटी बांटकर खाओ ताकि तुम्हारा कोई भाई भूखा न रह पाए। तिलक राष्ट्र मत नामक अखबार निकालते थे और सीताराम दामले उसके संपादक थे लेकिन तिलक का हाथ हमेशा तंग रहता था। इसी आर्थिक तंगी के चलते उन्हें कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता था। एक बार अखबार के कार्यालय के रख

रखाव की शिकायत के बारे में सीताराम दामले ने तिलक को कहा- देखिये दफ्तर में बैठने, उठने, पढ़ने, लिखने, पुस्तकालय, मेहमानों की आव भगत करने का सामान तक नहीं है। ऐसे में काम करने में बड़ी लज्जा आती है। कृपया जल्दी से मेज, कुर्सियां, गद्दे, कागज, पुस्तकें और दफ्तर का जरूरी सामान मंगवा दीजिए। तिलक बोले, दामले भाई, मैं जानता हूं कि दफ्तर में अनेक चीजों की तुम्हें बहुत जरूरत है लेकिन लक्ष्य महान हो तो साधन खुद-ब-खुद निकल आते हैं। हमारे लेख चाहे मेज कुर्सियों पर बैठकर लिखे जायें या जमीन पर बैठकर लिखे जायें उन आलेखों में ऐसा कुछ छपकर नहीं आता। ऐसे महान क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी और कर्मठ व्यक्तित्व की ये बातें हर किसी लेखक, चिंतक, विचारक और पत्रकार के अंदर प्राण फूंक देनेवाली हैं। बाल गंगाधर तिलक विद्वान, गणितज्ञ, दार्शनिक और उग्र राष्ट्रवादी व्यक्ति थे जिन्होंने भारत की स्वतंत्रता की नींव रखने में सहायता की। उन्होंने इंडियन होमरूल लीग की स्थापना सन १९१४ ई. में की और इसके अध्यक्ष रहे तथा सन १९१६ में मुहम्मद अली जिन्ना के साथ लखनऊ समझौता किया, जिसमें आजादी के लिए संघर्ष में हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रावधान था।

श्री बाल गंगाधर तिलक राजनीतिक, धार्मिक तथा भारतीय सांस्कृतिक जगत के सुविख्यात मानव थे। उनका जन्म एक संभ्रांत एवं शिक्षित परिवार चिरवल नामक ग्राम में वर्ष १८५६ ई. का २३ जुलाई को हुआ था।

उनके पूज्य पिता श्री गंगाधर पंत महान सनातनी एवं सुप्रसिद्ध विचारवान व्यक्ति थे। पाठशाला में गुरू पद की मर्यादा को निभाते हुए उन्होंने सादा जीवन उच्च विचार का उत्तर आदर्श उपस्थित किया था। ऐसे सुयोग्य पिता की छत्रछाया में बालक बाल गंगाधर तिलक की शिक्षा का शुभारंभ हुआ था। श्री तिलक जी की स्मरण शक्ति ईश्वरीय वरदान थी।

अपने छात्र जीवन में ही उन्होंने उत्तम स्वास्थ्य तथा राष्ट्रीयता के प्रति सराहनीय उदाहरण उपस्थित किया था। अपने अध्ययन के आधार पर इस बिंदु पर पहुंचे थे कि सबल स्वास्थ्य एवं सुदृढ़ राष्ट्रीयता के बल पर ही मिस्टर मेकाले की किरानीगिरी वाली शिक्षा से भारतीय छात्रों को त्राण मिल सकेगा। अपनी संगठन शक्ति का समुचित उपयोग कर के उन्होंने गणेश महोत्सव मनाने की परंपरा कायम की। उस पुनीत अवसर पर वाद विवाद, विचार गोष्ठी तथा नाटकों के मंचन द्वारा व्यापक प्रचार होता था। अधिकाधिक लोगों से संपर्क हेतु उन्होंने एक विचित्र फंड स्थापित किया, जिसका नाम ही था पैसा फंड। उस फंड में स्वेच्छा से एक पैसा भी जमा किया जा सकता था।

उन्होंने अपने मित्र श्री गोपाल गणेश के साथ बहुसंख्यक लोगों के सहयोग से न्यू इंग्लिश स्कूल के नाम से एक विद्यालय की स्थापना कर, आर्थिक, सामाजिक तथा स्वास्थ्य विषयक मसलों को सुलझाने का जोरदार प्रयास किया। अपने अभिन्न मित्र श्री महादेव गोविन्द रानाडे आदि के सहयोग से फर्गुसन कॉलेज नामक महाविद्यालय की स्थापना कर सराहनीय राष्ट्रीय भावना का प्रचार किया। मराठी और अंग्रेजी पत्रों को प्रकाशित करके तिलक ने अपने विचारों का उत्तम प्रभाव जनमानस पर डाला।

बाल, पाल एवं लाल अर्थात श्री बाल गंगाधर तिलक, श्री विपिन चन्द्र पाल तथा श्री लाला लाजपत राय का मिलन राष्ट्र के लिए विशेष लाभप्रद रहा। तिलक पर ब्रिटिश अहलकारों की आंखें बराबर लगी रहती थी मगर वे विश्वविख्यात कृति गीता के सिद्धांत को अपने अन्तर में स्थापित कर बिल्कुल निर्भय हो चुके थे। कर्जन महोदय के बंगभंग के वे प्रबल विरोधी थे और किसी काम को अपनाने के पश्चात पीछे हटना तिलक के लिए असंभव था। जेल को तो उन्होंने श्रीकृष्ण

मंदिर जैसा आदर दे रखा था।

सन १९०८ में तिलक ६ साल की सजा सुनाकर मांडले जेल में भेज दिये गये। उस कठिन कारावस से उन्हें कुछ भी चिंता नहीं हुई। वहां पर उन्होंने मराठी भाषा में गीता पर सारगर्भित ग्रंथ लिखा जिसका अनुवाद श्री माधव राव सप्रे ने किया था। उसी महत्वपूर्ण कृति का नाम है गीता रहस्य। श्री बाल गंगाधर तिलक ने ऐसा महान कार्य किया कि उसी लोक कल्याणकारी भावना के चलते वे लोकमान्य हो गये।

सन १८२० में कांग्रेस का ३५ वां अधिवेशन नागपुर में होनेवाला था जिसके सदर लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक निर्वाचित हुए थे। विधाता का विधान बड़ा विचित्र होता है। उसी विधाननुकूल लोकमान्य जी की मृत्यु प्रथम अगस्त को ही हो गयी। उनके देहावसान के पश्चात नागपुर कांग्रेस की अध्यक्षता श्री विजय राघवाचार्य जी ने की थी। उसी ऐतिहासिक समारोह में असहयोग आंदोलन का व्यापक स्वरूप साकार हुआ था।

आंदोलन का माहौल खड़ा करने में लोकमान्य तिलक की सुदृढ़ भूमिका थी। उस अनुष्ठान को सराहनीय ढंग से सफल बनाया प्रात: स्मरणीय महात्मा गांधी ने जिसमें राष्ट्र का पुरजोर सहयोग रहा।

प्रखर क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद

हमारे देश के प्रखर क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद का जन्म २३ जुलाई सन १९०६ ई. को हुआ था। उनके पिता का नाम सीताराम तिवारी तथा माता का नाम जगरानी देवी था। इस प्रकार उनका पूरा नाम चंद्रशेखर सीताराम तिवारी था। कुछ लोग कहते हैं कि चंद्रशेखर आजाद का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के बदरका नामक गांव में हुआ था जबकि कुछ लोग उनका जन्म स्थान मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले के भांवरा गांव को मानते हैं।

कहा जाता है कि उनके पिता सीताराम तिवारी सन १८९९-१९०० ई. में अकाल के कारण अपना पैत्तृक गांव बदरका छोड़कर अलीराजपुर रियासत में चले गए और वहीं पर नौकरी करने लगे थे। बाद में पं. सीताराम तिवारी अलीराजपुर जिले के भांवरा गांव में जा बसे। इस प्रकार चंद्रशेखर आजाद का सही जन्म स्थान अलीराजपुर अथवा भांवरा गांव ही प्रतीत होता है। यद्यपि उन्नाव जिले के बदरका नामक गांव में चंद्रशेखर आजाद की प्रतिमा लगी हुई है लेकिन पैतृक गांव बदरका में प्रतिमा लगना वहीं जन्म होने का प्रमाण नहीं माना जा सकता।

बालक चंद्रशेखर का बचपन वहीं भांवरा गांव में आदिवासी भील बालकों तथा प्रकृति के मध्य गुजरा। वे उन्हीं की तरह साहसी और तीरंदाजी में भी माहिर हो गए। बाद में संस्कृत पढ़ने के लिए चंद्रशेखर को बनारस भेज दिया गया। चंद्रशेखर के स्वभाव अथवा चरित्र की विशेषता ये थी कि वे न तो किसी पर जुल्म कर सकते थे और न ही स्वयं जुल्म सह सकते थे। वे दूसरों पर जुल्म होते भी बरदाश्त नहीं कर सकते थे। यद्यपि उस समय चंद्रशेखर एक कम उम्र विद्यार्थी ही थे लेकिन स्वाभाविक ही है कि सन १९१९ ई. में अमृतसर के जलियांवाला बाग नरसंहार से उनके मन में अंग्रेजों के खिलाफ आग भड़क उठी।

सन १९२१ ई. में गांधीजी द्वारा असहयोग आंदोलन की शुरुआत की गई थी। तब केवल चौदह वर्ष की उम्र में चंद्रशेखर ने भी गांधीजी द्वारा चलाए जा रहे असहयोग आंदोलन में भाग लिया जिसके परिणामस्वरूप उन्हें गिरफ्तार करके मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। जब मजिस्ट्रेट ने चंद्रशेखर से उनका नाम पूछा तो उन्होंने अपना नाम आजाद

और पिता का नाम स्वतंत्रता बताया। तभी से चंद्रशेखर का नाम चंद्रशेखर आजाद पड़ गया और आज भी हम उन्हें इसी नाम से जानते हैं। असहयोग आंदोलन में भाग लेने के जुर्म में मजिस्ट्रेट ने चंद्रशेखर को पंद्रह दिन के कठिन कारावास की सजा सुनाई।

सन १९२२ ई. में गांधीजी द्वारा असहयोग आंदोलन स्थगित कर देने पर चंद्रशेखर आजाद को बहुत दु:ख हुआ लेकिन वह किसी भी तरह भारत को आजाद देखना चाहते थे। इसके लिए चंद्रशेखर आजाद ने क्रांति का रास्ता चुना। पहले वे रामप्रसाद बिस्मिल व अन्य क्रांतिकारियों के संपर्क में आए। रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में ९ अगस्त सन १९२५ को प्रसिद्ध काकोरी कांड के बाद चंद्रशेखर आजाद फरार हो गए लेकिन कई क्रांतिकारियों को अंग्रेजों ने फांसी पर चढ़ा दिया। लाला लाजपतराय की हत्या का बदला लेने के लिए चंद्रशेखर आजाद ने अपने साथियों के साथ मिलकर साण्डर्स की हत्या की। बाद में चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु के निकट आ गए और उनके साथ मिलकर अंग्रेजों को डराने और उन्हें भारत से खदेड़ने का हर संभव प्रयास किया।

२७ फरवरी सन १९३१ में चंद्रशेखर आजाद को इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में पुलिस ने घेर लिया। चंद्रशेखर आजाद ने अपने बचाव में पुलिस पर गोलियां चलाईं और जब बचने की कोई संभावना नहीं दिखाई दी तो अंतिम गोली स्वयं को मार ली क्योंकि उन्होंने प्रण किया था कि जीते जी कभी पुलिस के हाथ नहीं आएंगे। ऐसे देशभक्त और साहसी थे चंद्रशेखर आजाद और दूसरे क्रांतिकारी जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों तक का त्याग कर दिया। जिस अल्फ्रेड पार्क में चंद्रशेखर आजाद शहीद हुए थे, आज उस पार्क में चंद्रशेखर आजाद पार्क के नाम से जाना जाता है।

जिस चंद्रशेखर आजाद ने माँ भारती के लिए सोने पर गोली खायी उनकी मां को यह देश दो वक्त की रोटी नहीं दे सका, इससे ज्यादा शर्मनाक क्या होगा? जब देश के प्रधानमंत्री नेहरू थे उस देश के आजाद होने के बाद शर्मनाक दास्तान की चंद्रशेखर की मां जंगल में गोबर, लकड़ी इकट्ठा करके अपना पेट पालती थी।

पंडित चंद्रशेखर आजाद भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। १७ वर्ष के चंद्रशेखर आजाद क्रांतिकारी दल हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन में सम्मिलित हो गए। दल में उनका नाम क्विक सिल्वर (पारा) तय पाया गया। पार्टी की ओर से धन एकत्र करने के लिए जितने भी कार्य हुए चंद्रशेखर उन सबमें आगे रहे। सांडर्स वध, सेण्ट्रल असेम्बली में भगत सिंह द्वारा बम फेंकना, वाइसराय की ट्रेन बम से उड़ाने की चेष्टा, सबके नेता वही थे। इससे पूर्व उन्होंने प्रसिद्ध काकोरी कांड में सक्रिय भाग लिया और पुलिस की आंखों में धूल झोंककर फरार हो गए।

कुछ लोग इस जहां में आते हैं केवल अपने वास्ते तथा जीवन की विभिन्न अवस्थाओं को पूरा करते हुए कूच कर जाते हैं लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो औरों के लिए जीते और औरों के लिए मरते हैं। उन्हें अपनी वतन की मिट्टी से उतना ही प्रेम होता है जितना जन्म देनेवाली मां से।

ऐसे महान लोगों में से एक थे चन्द्रशेखर आजाद। उन्होंने वतन की खातिर जो किया, इस बात की कहानी इतिहास का हर पन्ना कह रहा है। यह गुरबत का मारा गुदड़ी का लाल भारत मां का सच्चा सपूत कहलाएगा, वतन की खातिर अपनी जान पर खेल जाएगा।

२३ जुलाई १९०६ को भारत मां के इस सपूत ने मध्य प्रदेश के मांवरा गांव में एक गरीब ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया।

बचपन से ही साहस का परिचय देकर पूत के पैर पालने वाली कहावत चरितार्थ कर दी।

१२ वर्ष की अल्पायु में ही आजाद वतन का सिपाही बनकर घर छोड़कर काशी भाग गए और राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय हो गए। १९१२ में एक सत्याग्रह करते वक्त जोश में आकर भीड़ पर लाठी बरसा रहे एक अंग्रेज सिपाही का सिर फोड़ दिया। यहीं से उनके दिल में जल रही आग ने विकराल रूप धारण कर लिया। इसी केस में उन्हें गिरफ्तार किया गया तथा जेल भेज दिया गया। यह उनकी पहली जेल यात्रा थी।

पहली बार मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। कटघरे में खड़ आजाद से मजिस्ट्रेट ने कुछ प्रश्न किए- मजिस्ट्रेट ने पूछा- तुम्हारा नाम?

मेरा नाम आजाद है आजाद ने कड़क कर जवाब दिया। मजिस्ट्रेट ने फिर पूछा तुम्हारे पिता का नाम?

प्रश्न पूरा होने से पहले ही आजाद का जवाब था- स्वतंत्र। मजिस्ट्रेट ने फिर आगे पूछा- तुम्हारा घर कहां है। आजाद ने सरल स्वभाव से कह दिया जेलखाना मजिस्ट्रेट आजाद के उत्तरों से क्षुब्ध हुआ। कड़क कर बोला इसे १५ बेंत मारे जाएं। बदले में आजाद मुस्कुरा दिए।

आजाद को पहला बेंत मारा तो उनके मुंह से निकला जय भारत मां और हर बेंत के साथ आजाद की आवाज बुलन्द होती चली गई। आजाद के जिस्म से खून बह निकला था पर भारत मां की जय जयकार बन्द न हुई।

९ अगस्त १९२५ के दिन लखनऊ से सोलह किलोमीटर पीछे काकोरी नामक स्थान पर आउटर सिगनल पर अंग्रेजी खजाना लेकर जा रही ट्रेन को लूट लिया। यह उनके अदम्य साहस का एक नमूना था। उनके २१ साथी पकड़े गये तथा चन्द्रशेखर आजाद अपने तीन साथियों बक्शी, के एल सरकार तथा अराफाम अली के साथ फरार हो गये। इस बीच भेष बदल कर आजाद अंग्रेजी सरकार को नुकसान पहुंचाते रहे।

२० अक्टूबर १९२८ को साइमन कमीशन लाहौर आया तो उसके खिलाफ प्रदर्शन हुआ। लाला लाजपत राय उस प्रदर्शन का नेतृत्व कर रहे थे। अंग्रेज पुलिस ने उन पर लाठियां बरसाई। लालाजी बुरी तरह घायल हो गये तथा १७ नवंबर १९२८ को उनका देहान्त हो गया। अब आजाद ने नई योजना बनाई। १५ दिसंबर १९२८ को मौका पाकर उस अंग्रेज अधिकारी को आजाद, भगत तथा बटुकेश्वर दत्त ने गोलियों से उड़ा दिया।

८ अप्रैल १९२९ को अंग्रेज सरकार को बौखला देने के लिए असेम्बली की धारा सभा गैलरी में बम फेंका। इसमें भगत सिंह, राजगुरू, सुखदेव इन्कलाम जिन्दाबाद, भारत माता की जय के नारे लगाते हुए पकड़े गये। उन्हें २५ मार्च को फांसी दे दी गई।

अब आजाद का खून खौल उठा। वे सहायता के लिए चीन जाने की तैयारी करने लगे। २७ फरवरी, १९३१ को चीन जाने के लिए अल्फ्रर्ड पार्क में बैठकर अपने दोस्तों से विचारमग्न थे। यकायक पूरे पार्क को पुलिस ने घेर लिया। आजाद ने अपने दोस्तों को भाग जाने को कहा। लंबे संघर्ष के बाद जब आजाद की पिस्तौल में अन्तिम गोली थी, स्वयं को भी आजाद कर लिया। उनके अदम्य साहस व चातुर्य से डर कर आजाद के मृत शरीर को भी पुलिस ने लंबे इंतजार के बाद छुआ। औरों के लिए जीनेवाला यह मसीहा दुनिया छोड़ गया।

पंडित चंद्रशेखर आजाद भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। १७ वर्ष के चंद्रशेखर आजाद क्रांतिकारी

दल हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन में सम्मिलित हो गए। दल में उनका नाम क्विक सिल्वर (पारा) तय पाया गया। सांडर्स वध, सेण्ट्रल असेम्बली में भगत सिंह द्वारा बम फेंकना, वाइसराय की ट्रेन बम से उड़ाने की चेष्टा, सबके नेता वही थे। इससे पूर्व उन्होंने प्रसिद्ध काकोरी कांड में सक्रिय भाग लिया। उनका निधन २७ फरवरी को हुआ।

दुश्मन की गोलियों का हम सामना करेंगे आजाद ही रहे हैं, आजाद ही रहेंगे।

ये पंक्तियां उस कविता से संबंधित हैं जिसे चन्द्रशेखर आजाद जिन्दगी में कुछ कर जाने की भावना से कहा करते थे। चन्द्रशेखर आजाद जीवन भर आजाद ही रहे थे। उनका जन्म वर्तमान मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले के भावना ग्राम में २३ जुलाई १९०९ को शुक्रवार के दिन हुआ था। उनके पिता पं. सीताराम जी तिवारी बड़े ही साहसी, हठी स्वाभिमानी तथा अपने वचन के पक्के थे। कहते हैं जब तिवारी जी भावरा में सरकारी बगीचे में चौकीदारी का कार्य करते थे तो एक बार चन्द्रशेखर ने बाग में से एक फूल बिना आज्ञा के तोड़ लिया। इस पर उनके पिता ने उन्हें बुरी तरह से पीटा था। आजाद को शिकार खेलने का शौक बचपन से ही था। वे अपने क्रांतिकारी दोस्तों से कहा करते थे कि उन्होंने बचपन में एक बार शेर का मांस खाया था। भीलों के साथ वे कई दफा जंगल के राजा का शिकार खेलते थे। उन्होंने अपनी धाक जमाने के लिए शेर का मांस खा लिया था। वैसे उनके इस कथन में सच्चाई थी क्योंकि आजाद कभी झूठ बोलना नहीं जानते थे। एक बार वे साधु के वेश में घूम रहे थे तो पुलिसवालों ने उन्हें पकड़ लिया। उनसे पूछताछ की जाने लगी। पुलिसवाले पूछने लगे- क्या तुम आजाद हो? इस पर भी आजाद ने झूठ नहीं बोला और बड़ी ही चतुराई से सच बोला भईया हम आजाद नहीं है तो क्या हैं। सभी साधु आजाद होते हैं। हम भी आजाद हैं। इतना सच बोलने के बाद भी वे पुलिस के चंगुल से निकल गए। कहीने को आजाद कुछ भी पढ़े लिखे नहीं थे क्योंकि भला शेरों को भी किसी ने पढ़ाया है। बस एक ही सबक उन्होंने अपने जीवन में पढ़ा था जिसे वे जिन्दगी भर न भुला पाए थे। यह सबक था कि गुलामी जिन्दगी की सबसे बड़ी बदकिस्मती है। जब उन्होंने क्रांतिकारी जीवन में कदम रखा था तो सबसे बड़ा और साहस भरा कार्य काकोरी षड्यंत्र था। ९ अगस्त १९२५ को सहारनपुर से लखनऊ जानेवाली गाड़ी को काकोरी के पास रोककर अंग्रेजी खजाना लूटने के पश्चात वे नौ दो ग्यारह हो गए थे। चाहे बाद में कईयों को पुलिस ने पकड़ कर फांसी की सजा दी थी पर आजाद आखिरी समय तक आजाद ही रहे थे। आजाद को गाना गाना नहीं आता था पर वे गाना सुनने के बड़े शौकीन थे। प्यार भरे गीत सुनने में तो उनकी दिलचस्पी नहीं थी पर वे देशभक्ति के गीतों को बड़े चाव से सुना करते थे। उनका एक मनपसंद गीत था जिसे वे कई बार अपने साथियों से सुना करते थे-

मां, हमें विदा दो, जाते हैं हम, विजय केतु फहराने आज। तेरी बलिवेदी पर चढ़कर।

उनके मन की मौज तथा अलमस्ती बड़ी ही प्रख्यात थी। झांसी में कई बार तो वे पुलिस वालों से थाने में जाकर घंटों बैठे मनोविनोद करते और उनसे कलाई पंजा तक लड़ाते रहते। वहीं पुलिस आजाद को गिरफ्तार करने के लिए गुफाओं में बांस तथा नदियों में जाल डालती फिरती और आजाद थे कि पुलिसवालों के साथ उठ बैठकर गप्पे हांकते। आजाद आजीवन अविवाहित रहे थे। वे कहा करते थे कि अपने सिर पर मौत का कफन बांधकर चलनेवाला व्यक्ति कभी शादी के बंधन में बंधने की कल्पना भी नहीं कर सकता। आजाद ही नहीं, उनके दल का हर कर सदस्य अपने घर बार को तिलांजलि देकर दल में शामिल हुआ था। वे कहा करते थे कि क्रांति की राह पर चलनेवालों की प्रणयिनी सिर्फ मौत हो

सकती है। जो व्यक्ति गुलामी की जंजीरें तोड़ने आया हो, वह किसी कुमारी की मृणाल बांहों में कैसे कस कर रह सकता था। एक बार दल के सदस्यों ने आजाद से पूछ ही लिया कि वे कैसी पत्नी की इच्छा करते हैं। तो आजाद ने बड़े ही सहज स्वच्छंदता के भाव से कहा था मेरे अनुसार मेरे लायक लड़की हिन्दुस्तान में तो क्या, सारी दुनिया में कहीं न मिलेगी क्योंकि मैं ऐसी बीवी चाहता हूं जो एक कंधे पर राइफल तथा दूसरे कंधे पर कारतूसों से भरा हुआ बोरा उठाकर पहाड़ से पहाड़ घूमती रहे और इसी तरह आजादी की जंग में जान दे दे। शुक्रवार २७ फरवरी १९३१ को वह महान दिन था जिस दिन आजाद ने अपने जीवन से आजादी पाई थी। वे अक्सर कहा करते थे कि किसी मां ने अभी वो लाल पैदा ही नहीं किया है जो आजाद को जीवित पकड़ सके। उन्होंने कसम खाई थी कि वे कभी पुलिस के हाथों जिंदा गिरफ्तार न होंगे। इसी कसम को निभाते हुए वे शहीद हुए थे। प्रयाग के अल्फ्रेड पार्क में वे अपने साथी सुखदेव राज के साथ बैठकर दल की कोई गुत्थी सुलझाने में लगे थे कि उनके एक क्रांतिकारी साथी ने चंद चांदी के टुकड़ों के लिए अपने राष्ट्र से विश्वासघात किया। वीरभद्र तिवारी नाम से उस साथी ने उनके बाग में बैठे होने की सूचना पुलिस को दे दी। पुलिस ने तीन ओर से घेर लिया। आजाद अकेले थे क्योंकि सुखदेव भी कोई बहाना कर कर खिसक गया था। इस युद्ध में दोनों ओर से गोलियों की बरसात होने लगी पर आजाद तो शेर थे। वे कब हार माननेवाले थे। उन्होंने अपने माऊजर से निशाना लगा कर सी.आई.डी. सुपरिटेंडेन्ट नाट बाबर की भुजा पर गोली मारकर नाकारा कर दिया। इसी प्रकार इन्स्पेक्टर विश्वेश्वर सिंह का जबड़ा भी उड़ा दिया। अचानक उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके पिस्तौल में एक ही गोली बची है। वे अजीब संकट में फंस गए। उन्हें अपनी कसम बार बार याद आने लगी कि जिंदा रहते हुए पुलिस के आदमी मुझे कभी हाथ नहीं लगाएंगे। उन्होंने अपनी कनपटी पर पिस्तौल की नाल लगा कर घोड़ा दबा दिया और आत्म बलिदान का गौरव प्राप्त किया। इस तरह से क्रांतिकारी गगन का यह धूमकेतू अस्त हो गया। आजादी का यह मस्त दीवाना मातृभूमि का अभिषेक अपने रक्त से करके अमर शहीदों की पंक्ति में जा बैठा।

ताराशंकर बंद्योपाध्याय (जन्म- २३ जुलाई)

ताराशंकर बंद्योपाध्याय बांग्ला भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। इन्हें इनके प्रसिद्ध उपन्यास गणदेवता के लिए १९६६ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। ताराशंकर बंद्योपाध्याय को साहित्य एवं शिक्षा क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६९ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

लक्ष्मण प्रसाद दुबे (निधन- २३ जुलाई)

लक्ष्मण प्रसाद दुबे भारत के स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। शिक्षकीय कर्तव्य को अपनी साधना माननेवाले लक्ष्मण प्रसाद दुबे का संपूर्ण जीवन एक शिक्षक के रूप में बीता था, जिस कारण उन्हें गुरुजी के रूप में जाना जाता रहा। उन्होंने अपने जीवन में कई लोगों को शिक्षित कर उनके मन में देशभक्ति की भावना को जागृत किया। वहीं कई लोगों को शिक्षक बनने हेतु प्रेरित भी किया। लक्ष्मण प्रसाद जी देश में नारी स्वतंत्रता एवं नारी शिक्षा के प्रबल पक्षधर थे।

२४ जुलाई

अजीम प्रेमजी (जन्म- २४ जुलाई)

अजीम हाशिम प्रेमजी बंगलोर स्थित विप्रो कॉर्पोरेशन के अध्यक्ष, जो कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर प्रोग्राम का विकास और उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन करती है। विश्व के सबसे धनी व्यक्तियों में से एक और अब तक के सबसे समृद्ध भारतीय माने जानेवाले अजीम प्रेमजी की २० वीं सदी के अन्त में अनुमानित निजी सम्पत्ति ३५ बिलियन डॉलर थी। प्रेमजी ने घी व तेल बनानेवाली कम्पनी को भारत की सबसे बड़ी सूचना प्रौद्योगिकी कम्पनियों में से एक के रूप में तब्दील कर दिया।

पंकज आडवाणी (जन्म- २४ जुलाई)

पंकज आडवाणी स्नूकर और बिलियर्ड्स के विश्व विजेता भारतीय खिलाड़ी हैं। पंकज आडवाणी अब तक कुल आठ विश्व खिताब जीत चुके हैं। पंकज ने पहला पेशेवर बिलियर्ड्स विश्व खिताब २००९ में जीता था। इससे पहले वह एमेच्योर विश्व बिलियर्ड्स और स्नुकर चैंपियनशिप जीत चुके थे। पंकज ने २००६ में दोहा में हुए एशियाई खेलों में स्वर्ण पदक जीता था।

नाजिश प्रतापगढ़ी (जन्म- २४ जुलाई)

नाजिश प्रतापगढ़ी उर्दू के सुप्रसिद्ध शायर व कवि थे। भारत भूमि से नाजिश को विशेष लगाव था। देश के बंटवारे के बाद उनके माता-पिता, भाई-बहन आदि सभी पाकिस्तान चले गए, लेकिन नाजिश ने भारत में ही रहना स्वीकार किया। हालांकि इस समय उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी और वे तंगी हालात में जी रहे थे। नाजिश प्रतापगढ़ी को साहित्य का हिमालय कहा जाता है। उन्होंने अपने नाम के साथ बेल्हा का नाम भी पूरी दुनिया में रोशन किया। उनके अब तक १२ संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं और सभी पर उन्हें एवार्ड प्राप्त हुआ है। सन १९८४ में नाजिश को उनकी सर्वश्रेष्ठ रचनाओं के लिए उर्दू साहित्य के सर्वश्रेष्ठ सम्मान गालिब से सम्मानित किया गया था।

पन्नालाल घोष (जन्म- २४ जुलाई)

पन्नालाल घोष भारत के प्रसिद्ध बाँसुरी वादक थे। पंडित पन्नालाल घोष बांसुरी के मसीला नयी बांसुरी के जन्मदाता और भारतीय शास्त्रीय संगीत का युगपुरुष जिसने लोक वाद्य बाँसुरी को, शास्त्रीय के रंग में ढालकर शास्त्रीय वाद्य यंत्र बना दिया।

२५ जुलाई

गोदावरीश मिश्र (निधन- २५ जुलाई)

गोदावरीश मिश्र उड़ीसा के प्रसिद्ध समाज सुधारक, साहित्यकार और सार्वजनिक कार्यकर्ता थे। इन्होंने कविता, नाटक, उपन्यास, कहानियाँ तथा जीवन चरित्र आदि लिखे हैं। भारतीय साहित्य अकादमी ने इनकी आत्मकथा को पुरस्कृत किया था। गोदावरीश मिश्र जी ने १९४१ में उड़ीशा के शिक्षामंत्री और वित्तमंत्री का पद भी सम्भाला था।

हरसिमरत कौर बादल (जन्म- २५ जुलाई)

हरसिमरत कौर बादल भारत की प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ हैं और वर्तमान में भारत सरकार के अंतर्गत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्री हैं। ये भटिंडा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से वर्ष २००९ से लगातार १५वीं और १६वीं लोकसभा की सांसद हैं। वे शिरोमणि अकाली दल की सदस्य और पंजाब के उप मुख्यमंत्री सुखबीर सिंह बादल की पत्नी हैं।

सोमनाथ चटर्जी (जन्म- २५ जुलाई)

सोमनाथ चटर्जी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख नेताओं में से एक हैं। वे चौदहवीं लोकसभा में पश्चिम बंगाल के बोलपुर लोकसभा क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं। श्री चटर्जी चौदहवीं लोकसभा के लोकसभा अध्यक्ष भी थे। विगत वर्षों में भारतीय संसद के कई प्रमुख अध्यक्ष हुए हैं, जिन्होंने अध्यक्षपीठ को गरिमा और सम्मान प्रदान किया है। सोमनाथ चटर्जी ४ जून, २००४ को इस सम्माननीय पद के लिए निर्विरोध निर्वाचित होकर अध्यक्षों के दीप्ति मंडल में सम्मिलित हुए। जैसा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा है कि, अध्यक्ष राष्ट्र, उसकी स्वतंत्रता और आजादी का प्रतिनिधित्व करता है।

चन्द्रशेखर पाण्डे (जन्म- २५ जून)

चन्द्रशेखर पाण्डे प्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। इन्होंने कई महत्वपूर्ण रचनाएँ की थीं, जिनमें आधुनिक हिन्दी कविता और रसायन तथा उनका काव्य आदि उल्लेखनीय है। सन १९२९ ई. में चन्द्रशेखर पाण्डे कानपुर के सनातन धर्म कॉलेज में संस्कृत विभागाध्यक्ष रहे। चन्द्रशेखर पाण्डे ने संस्कृत साहित्य के इतिहास की रूपरेखा नाम ग्रन्थ की रचना की।

विश्वनाथ प्रताप सिंह (जन्म- २५ जून)

विश्वनाथ प्रताप सिंह भारत के आठवें प्रधानमंत्री थे। राजीव गांधी सरकार के पतन के कारण बने विश्वनाथ प्रताप सिंह ने आम चुनाव के माध्यम से २ दिसम्बर, १९८९ को प्रधानमंत्री पद प्राप्त किया था। सिंह बेहद महत्वाकांक्षी होने के अतिरिक्त कुटिल राजनीतिज्ञ भी कहे जाते हैं।

सुचेता कृपलानी (जन्म- २५ जून)

सुचेता कृपलानी अथवा सुचेता मजूमदार एक प्रसिद्ध भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एवं राजनीतिज्ञ थीं। ये उत्तर प्रदेश की चौथी और भारत की प्रथम महिला मुख्यमंत्री थी। स्वतंत्रता आंदोलन में श्रीमती सुचेता कृपलानी के योगदान को हमेशा याद किया जाएगा। उनके निधन पर अपने शोक संदेश में श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा था कि सुचेता जी ऐसे दुर्लभ साहस और चरित्र की महिला थीं, जिनसे भारतीय महिलाओं को सम्मान मिलता है।

२६ जुलाई

छत्रपति साहू महाराज (जन्म- २६ जुलाई)

छत्रपति साहू महाराज को एक भारत में सच्चे प्रजातंत्रवादी और समाज सुधारक के रूप में जाना जाता था। वे कोल्हापूर के इतिहास में एक अमूल्य मणि के रूप में आज भी प्रसिद्ध हैं। छत्रपति साहू महाराज ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने राजा होते हुए भी दलित और शोषित वर्ग के कष्ट को समझा और सदा उनसे निकटता बनाए रखी। उन्होंने दलित वर्ग के बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करने की प्रक्रिया शुरू की थी। गरीब छात्रों के छात्रावास स्थापित किये और बाहरी छात्रों को शरण प्रदान करने के आदेश दिए। साहू महाराज के शासन के दौरान बाल विवाह पर ईमानदारी से प्रतिबंधित लगाया गया। उन्होंने अंतरजातिय विवाद और विधवा पुनर्विवाह के पक्ष में समर्थन की आवाज उठाई थी।

वासुदेव शरण अग्रवाल (निधन- २६ जुलाई)

वासुदेव शरण अग्रवाल भारत के प्रसिद्ध विद्वानों में से एक थे। वे भारत के इतिहास, संस्कृति, कला, साहित्य और प्राच्य विद्या आदि विषयों के विशेषज्ञ थे। वासुदेव शरण अग्रवाल हिन्दी विश्वकोश सम्पादक मण्डल के प्रमुख सदस्य थे। उन्होंने मथुरा संग्रहालय (उत्तर प्रदेश) के संग्रहाध्यक्ष के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान की थीं। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक पाणिनिकालीन भारतवर्ष में भारत की संस्कृति, कला और साहित्य आदि पर प्रकाश डाला गया है। उन्हें साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत भी किया गया था।

कारगिल विजय दिवस

२६ जुलाई, १९९९ को भारतीय सेना ने जम्मू और कश्मीर में नियंत्रण रेखा से लगी कारगिल की पहाड़ियों पर कब्जा जमाये आतंकियों और पाकिस्तानी सैनिकों को मार भगाया था। मई के महीने में ही पाकिस्तानी सैनिक व पाक समर्थित आतंकवादी भारत-पाकिस्तान की नियंत्रण रेखा के भीतर घुस आये थे।

दो महीने से अधिक समय तक चले इस युद्ध में भारतीय थलसेना और वायुसेना ने अपनी सीमा में रहते हुए विजय प्राप्त की और १६५०० फीट ऊंची टाइगर हिल पर भारतीय तिरंगा लहराया।

इस ऑपरेशन विजय में ५२७ से अधिक जवान शहीद हुए और १३०० से अधिक घायल हो गये। आज उन शहीदों को श्रद्धा सुमन अर्पित करने का दिन है।

२७ जुलाई

कल्पना दत्त (जन्म- २७ जुलाई)

कल्पना दत्त देश की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाली महिला क्रांतिकारियों में से एक थीं। इन्होंने अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों को अंजाम देने के लिए क्रांतिकारी सूर्यसेन के दल से नाता जोड़ लिया था। १९३३ ई. में कल्पना दत्त पुलिस से मुठभेड़ होने पर गिरफ्तार कर ली गई थीं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और रवींद्रनाथ टैगोर के प्रयत्नों से ही वह जेल से बाहर आ पाई थीं। अपने महत्वपूर्ण योगदान के लिए कल्पना दत्त को वीर महिला की उपाधि से सम्मानित किया गया था।

२७ जुलाई १९१३ को महिला क्रांतिकारी कल्पना दत्त का जन्म चटगांव (अब बांग्लादेश) में हुआ था। वे चटगांव में क्रांतिकारी सूर्य सेन के दल में शामिल हो गयीं। वेश बदलकर क्रांतिकारियों को गोला-बारूद पहुंचाया करती थीं। पुलिस और क्रांतिकारियों के बीच मई १९३३ में हुए सशस्त्र मुकाबले के बाद वे गिरफ्तार हो गयीं। उनपर मुकदमा चला और उन्हें आजीवन कारावस की सजा हो गयी। गांधी जी, रवींद्रनाथ टैगोर के प्रयास के बाद वे १९३७ में जेल से बाहर आयीं। फिर कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गयीं। १९७९ में कल्पना दत्त पुणे में वीर महिला की उपाधि से सम्मानित हुई थीं। आठ फरवरी १९९५ को उनका निधन हो गया।

सालिम अली (निधन- २७ जुलाई)

सालिम अली एक भारतीय पक्षी विज्ञानी और प्रकृतिवादी थे। सालिम अली को भारत के बर्डमैन के रूप में जाना जाता है। सालीम अली भारत के ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत भर में व्यवस्थित रूप से पक्षी सर्वेक्षण का आयोजन किया

और पक्षियों पर लिखी उनकी किताबों ने भारत में पक्षी-विज्ञान के विकास में काफी मदद की है। सन १९०६ में दस वर्ष के बालक सालिम अली की अटूट जिज्ञासा ने ही पक्षी शास्त्री के रूप में उन्हें आज विश्व में मान्यता दिलाई है। पक्षियों के सर्वेक्षण में ६५ साल गुजार देनेवाले इस व्यक्ति को परिंदों का चलता फिरता विश्वकोश कहा जाता था। पद्म विभूषण से नवाजे इस परिंदों के मसीहा के प्रकृति संरक्षण की दिशा में किए गए प्रयासों को कभी भुलाया नहीं जा सकता है।

पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल (निधन- २७ जुलाई)

पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल हिन्दी के ख्यातिप्राप्त साहित्यकार और विलान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के सहयोगी रहे थे। इन्होंने गोरख बानी और रामानन्द की रचना की थी। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रथम स्नातकोत्तर होने का गौरव इन्हें प्राप्त हुआ। डॉ. श्यामसुन्दर दास के निर्देशन में पीताम्बर दत्त जी ने डी. लिट् की उपाधि धारण की थी, यह उपाधि धारण करनेवाले आप प्रथम विद्वान थे। इनका शोध प्रबन्ध हिन्दी काव्य के निपुण सम्प्रदाय बहुत प्रसिद्ध हुआ था। आपने दो वर्ष तक हिन्दी विभाग में अध्यापन किया। नागरी प्रचारिणी सभा के शोध विभाग के अवैतनिक संचालक और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के सहयोगी के रूप में कई ग्रन्थों के संपादन और लेखन में भी पीताम्बर दत्त की उल्लेखनीय भूमिका रही थी।

अब्दुल कलाम (निधन- २७ जुलाई)

अवुल पकिर जैनुल्लाब्दीन अब्दुल कलाम, भारत के पूर्व राष्ट्रपति, प्रसिद्ध वैज्ञानिक और अभियंता के रूप में विख्यात हैं। इनका राष्ट्रपति कार्यकाल २५ जुलाई २००२ से २५ जुलाई २००७ तक रहा। इन्हें मिसाइल मैन के नाम से भी जाना जाता है। यह एक गैर राजनीतिक व्यक्ति रहे हैं। विज्ञान की दुनिया में चमत्कारिक प्रदर्शन के कारण ही राष्ट्रपति भवन के द्वार इनके लिए स्वत: खुल गए। यह एक ऐसे स्वीकार्य भारतीय हैं, जो सभी के लिए एक महान आदर्श बन चुके हैं।

२८ जुलाई

रामेश्वर ठाकुर (जन्म- २८ जुलाई)

रामेश्वर ठाकुर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं में से एक हैं। इन्होंने देश के कई प्रतिष्ठित संस्थानों में महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया है। रामेश्वर ठाकुर भारत के कई राज्यों में राज्यपाल के पद पर भी रह चुके हैं। आप वर्ष २००४ से २००६ तक उड़ीसा, २००६ से २००७ तक आंध्र प्रदेश, २००७ से २००९ तक कर्नाटक और २००९ से २०११ तक मध्य प्रदेश राज्य के राज्यपाल रहे। रामेश्वर ठाकुर शिक्षा के उत्थान, समाज सेवा और ग्रामीण विकास जैसे कार्यों ने सदैव संलग्न रहे। आदिवासियों, हरिजनों और अन्य सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के कल्याणार्थ भी इन्होंने काफी कार्य किया।

इबने अरबी (जन्म- २८ जुलाई)

इबने अरबी अरबी के प्रसिद्ध सूफी कवि, साधक और विचारक थे। इबने अरबी के सम्बन्ध में लोगों की अलग-अलग धारणाएं हैं। कुछ व्यक्तियों के विचार से वे सन्यासी (वली कामिल) थे और अध्यात्म पर उनका पूर्ण अधिकार था, जिसमें किसी की कोई आपत्ति नहीं हो सकती। दूसरी ओर एक ऐसा समुदाय भी था, जो उन्हें नास्तिक समझता

था। इबने अरबी की पुस्तकों के सम्बन्ध में आज भी ऐसी ही परस्पर विरोधी धारणाएं प्रचलित हैं। ये शेखुल अकबर के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

२९ जुलाई

जे.आर.डी. टाटा (जन्म- २९ जुलाई)

जे.आर.डी. टाटा का जन्म २९ जुलाई को पेरिस में हुआ। उनकी मां पेरिस की थी इसलिए उनका बचपन फ्रांस में बिता और फ्रेंच उनकी पहली भाषा थी। बाद में वो लंडन चले गए और इंजीनियर की पढ़ाई के लिए कैंम्ब्रिज स्कूल में भर्ती होना चाहते थे। स्कूल के नियमानुसार फ्रेंच लड़कों को कम से कम १२ महीने तक सेना में नौकरी करनी पड़ती थी। इसलिए जैसे ही सेना में उनका कार्यकाल समाप्त हुआ उनके पिता ने आग्रह किया कि वे भारत लौट जाएं। जे.आर.डी. ने टाटा कम्पनी में काम करना शुरू किया। १९२५ तक बिना वेतन के सीखने के रूप में काम किया। ३४ वर्ष की उम्र में १९३८ में उन्हें टाटा संस के चैयरमैन की जिम्मेदारी सौंपी गई। १९२९ में जेआरडी ने फ्रेंच की नागरिकता छोड़ दी और भारतीय बन गए। उनके नेतृत्व का अर्थ था दूसरों को प्रेरित करना यह उनकी मुख्य जिम्मेदारी थी अच्छा काम करनेवाले व्यक्तियों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करना। अपने ५० वर्ष के कार्यकाल में उन्होंने सैकड़ों वरिष्ठ डायरेक्टरों के साथ काम किया। उनसे बहुत कुछ सीखा। सफलता के लिए गुणवत्ता और नवाचार में तालमेल जरूरी है। यदि आप उत्कृष्टता चाहते है तो आपको पूर्णत: पर ध्यान देना चाहिए। पूर्णत: के लक्ष्य में कुछ खामियां होती है जिसमें काफी ऊर्जा खर्च भी होती है पर उत्कृष्टता को हासिल करने का यहीं एकमात्र उपाय है। किसी भी सफल श्रमनीति का निचोड़ श्रमिकों के अनुभवों में निहित होता है।

३१ जुलाई

साहित्य सर्जक मुनशी प्रेमचन्द

ग्राम लमही जिला वाराणसी मे उन दिनों हाईस्कूल नही था इसलिए आगे पढ़ने और घर मे आए दिन शादी का प्रस्ताव लाने वालों से बचने के लिए प्रेमचन्द (धनपतराय जन्म ३१ जुलाई, १८८०) को सुदूर गोरखपूर जाना पड़ा। जहाँ उन्होंने १० रुपये मासिक आय करके पढ़ाई की। उर्दू बाजार मे आश्रय स्थल से ५ कि.मी. दूर ट्यूशन पढ़ाने के लिए जाते और उतनी ही दूरी पार करके घर आने पर भी उन्हे चैन नही था। अपने पेट की भूख के लिए भोजन बनाना भी अपरिहार्य कार्य था। इन व्यस्तताओं का व्यूह उन्हे पढ़ाई के लिए हर दिन तोड़ना था। अपनी कोशिश से प्रेमचन्द ने नौकरी पाई। वह अध्यापक हो गए। योग्यता और परिश्रम से उन्होने उपजिला विद्यालय निरिक्षक का पद प्राप्त किया। नवाबराय के नाम से प्रेमचन्द का पहला लेख साप्ताहिक उर्दू पत्र आवाजे खल्क मे छपा।

उर्दू मे ही खड़ी रानी, किशना, प्रेमा आदि उपन्यास प्रकाशित हुए। अंग्रेजों ने उनके उर्दू मे प्रकाशित सोजेवतन पांच कहानियों के संकलन को बहुत गंभीरता से लिया। ये पांच कहानियां शेख मखमूद, दुनिया का सबसे अनमोल रतन, लाल फीता और सोजेवतन आग उगलती थी। इस पुस्तक की दीवाचा नाम से लिखी भूमिका मे प्रेमचंद ने लिखा था, ये चंद

कहानियां इसी प्रभाव का प्रारंभ हैं और यकीन है कि जैसे-जैसे हमारे विचार विस्तृत होते जाएंगे इसी रंग के साहित्य की दिन प्रतिदिन उन्नति होती जाएगी।

अंग्रेज जिल्हाधीश ने प्रेमचंद को अपने कार्यालय मे बुलाकर कहा कि सोजेवतन मे राजद्रोह है जिल्हाधीश ने पुस्तक की सात सौ प्रतियां आग मे झोक दी। प्रेमचंद की देशभक्ति का यह ठोस प्रमाण और प्रभाव था। मुंशी दयानारायण निगम कानपुर से उर्दू मासिक जमाना प्रकाशित करते थे। धनपतराय उर्दू के लेखक नवाबराय का नामकरण प्रेमचंद उन्होंने ही किया था। दिसंबर १९१० मे बड़े घर की बेटी शीर्षक से प्रेमचंद की पहली कहानी हिन्दी मे छपी। महात्मा गांधी ७ मार्च, १९२१ को गोरखपुर गए और उन्होंने गाजी मियां के मैदान मे भाषण दिया। प्रेमचंद अपनी पत्नी शिवरानी देवी के साथ उन्हे सुनने गए और गांधी जी तथा उनके विचारों के प्रचारक बन गए। हंस (जून १९३१) मे प्रेमचंद ने लिखा- हमे मनसा वाचा कर्मणा अहिंसा का अनुयायी होना पड़ेगा। मै लिखकर उनको उत्साह दे रहा हूँ। प्रेमचंद को प्रयत्न साध्य सरकारी नौकरी छोड़नी पड़ी। वे कानपुर मे मारवाड़ी हाईस्कूल मे प्रधानाचार्य बने और बाद में लखनऊ, काशी आदि मे स्वतंत्रत लेखन करते रहे। उन्होने स्वराज्य प्राप्ति के लिए कहानी तथा उपन्यास लेखन को हथियार बनाकर स्वयं को कलम का सिपाही कहा। सेवासदन, रंगभूमि, गबन, निर्मला, गोदान जैसे उनके उपन्यास चर्चा मे आ गए। उनकी कहानियों के आठ भाग मानसरोवर मे सम्मिलित है।

मुंशी प्रेमचंद भारत के उपन्यास सम्राट माने जाते हैं जिनके युग का विस्तार सन् ६६८ से ७१४ तक है। यह कालखण्ड भारत के इतिहास में बहुत महत्व का है। इस युग में भातर का स्वतंत्रता-संग्राम नई मंजिलों से गुजरा। प्रेमचंद्र का वास्तविक नाम धनपत राय श्रीवास्तव था। वे एक सफल लेखक, देशभक्त, नागरिक, कुशल वक्ता, जिम्मेदार संपादक और संवेदनशील रचनाकार थे। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में जब हिन्दी में काम करने की तकनीकी सुविधाएँ नहीं थीं फिर भी इतना काम करनेवाला लेखक उनके सिवा कोई दूसरा नहीं हुआ।

हिंदी उपन्यास साहित्य को प्रेमचंद ने जो गरिमा प्रदान की, उसके संबंध में जो कुछ भी कहा जाए, कम ही होगा। प्रेमचंद पूर्व युग पर एक सरसरी निगाह डाली जाए तो स्पष्ट रूप से यह बात सामने आ जायेगी।

प्रेमचंद से पूर्व का युग सन १८७० से १९१६ तक माना जाता है। इस युग में हिंदी उपन्यास की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। पाठकों के मनोरंजन का एक मात्र साधन तिलस्मी, ऐयारी एवं जासूसी के उपन्यास ही थे। सन् १८९१ में देवकी नंदन खत्री ने चंद्रकांता एवं चंद्रकांता संतति नामक दो उपन्यास लिखे। ये रचनाएं इतनी लोकप्रिय हुई कि जो हिंदी पढ़ना भी नहीं जानते थे, उन्होंने केवल इन उपन्यासों को पढ़ने के लिए हिंदी पढ़ना सीखा।

इस रचना से प्रभावित होकर अन्य उपन्यासकारों ने भी तिलस्मी और ऐयारी का प्रयोग किया। किशोरी लाल गोस्वामी जैसे प्रसिद्ध लेखक भी अपने स्वर्गीय कुसुम और लवंगलता नामक उपन्यासों को इस बीमारी से नहीं बचा सके। देवकीनंदन खत्री के अतिरिक्त देवी व प्रसाद शर्मा ने सुंदर सरोजनी, हरे कृष्ण जौहरी ने भयानक भ्रम आदि उपन्यास लिखकर हिंदी उपन्यास साहित्य में जासूसी एवं ऐयारी का ढेर लगा दिया। हिंदी उपन्यास साहित्य के जासूसी शाखा के सबसे प्रमुख लेखक गोपाल राय गहमरी थे। तिलस्मी और ऐयारी के उपन्यासों में प्रेम और रूप दर्शन ही होते थे।

भारत की सोंधी मिट्टी से था जिसको बेहद प्यार, आंसू-खूशियां-पनघट-कुआं और गांवों की मनुहार।

संस्कृति की खुशबू थी जिनमें, कलम का था मजदूर, प्रेमचंद हैं अमर कथाओं के अमर कहानीकार ।।

तुलसी और कबीर के बाद हिंदी पट्टी में लोक स्वीकृति मुंशी प्रेमचंद को ही प्राप्त है। मुंशी प्रेमचंद को यह लोक स्वीकृति उनकी छवि को नायक का दर्जा देती है। आज जिस दौर में हम जी रहे हैं वो नायक विहीन समय है। हमारे सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन में ऐसे किरदार नहीं रह गए, जिन्हें हम सहजता से नायक मान लें। नायक की तरह रंगमंच पर उपस्थित होनेवाले हर आदमी के पीछे एक छुपा हुआ खलनायक रहता है। जो कभी भी पर्दाफाश कर देता है।

वैसे मुंशी प्रेमचंद की छवि इतनी सामान्य है कि उसमें दूर दूर तक नायक होने की संभावना नहीं है। ऐसा कई बार हुआ कि प्रेमचंद से मिलने आनेवाले लोग उनसे ही पूछ बैठते थे कि यहां मुंशी प्रेमचंद कहां रहते हैं? उनकी व्यक्तित्व में ऐसी कोई खासियत नहीं थी, जो उन्हें दूसरों से अलग करे। अमृत राय, प्रेमचंद के बेटे हैं और कथाकार, आलोचक व अनुवादक भी हैं, इन्होंने अपने पिता का जो चित्र खींचा है, वह बताता है कि वे अपने साथ कुछ भी ऐसी कोई निशानी रखते नहीं थे, जिससे वो आम लोगों से अलग दिखें। कोई त्रिपुण्ड-तिलक से अपनी विशेषता की घोषणा करता है, कोई रेशम के कुरते और अपने ऐश्वर्य से, कोई अपनी साज-सज्जा के अनोखेपन से और कोई अपनी खास अदा या ढंग से अपने खास होने की बात जाहिर करता है। कुछ लोग बार बार यह कहते हुए भी दिखते हैं कि इतना बड़ा नामी आदमी होकर भी वे कितनी सादगी से रहते हैं। प्रेमचंद की सरलता एकदम सहज है। उसमें इस देश की पुरानी मिट्टी का संस्कार है और कुछ उनका स्वाभाविक शील है, संकोच है, कुछ उनकी गहरी जीवनदृष्टि है और कुछ उनका सच्चा आत्म गौरव है। असल में इस देश की पुरानी मिट्टी का संस्कार और उससे बनी गहरी जीवनदृष्टि ही उन्हें यह लोकस्वीकृति दिलाती है। इस गहरी जीवन दृष्टि में योगी प्रेमचंद की कहानियां भारत के आम आदमी को बार बार याद आती है। कफन कहानी में प्रेमचंद ने स्थापित समाज पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखा है कि जिसे जीते जी शरीर ढकने को कपड़े का टुकड़ा भी न मिले, उसे मरने पर नया कफन चाहिये। प्रेमचंद हमारी परंपरा के भीतरी आलोचक हैं। परंपरा में जो भी आलोचना करने लायक है वे आलोचना करते हैं। वे समाज और परंपरा से बाहर खड़े उपदेशक की तरह नहीं हैं। बल्कि परंपराओं में मौजूद संकीर्णताओं का दंश झेलते हुए सामान्य मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं। प्रेमचंद जाति, धर्म, स्त्री-पुरुष के नाम पर होनेवाले द्वेष पर मजबूती से लिखे थे। इसलिये शुरु में उन्हें घृणा का प्रचारक कहकर उन्हें अपमानित भी किया गया। प्रेमचंद ने निबंध लिखकर बताया कि सच्चा साहित्य घृणा करनेवाली वस्तु या प्रवृत्ति से घृणा करना सिखाता है। प्रेमचंद की एक कहानी नमक का दारोगा समय की सच्चाई है। ईमानदार और कर्तव्यनिष्ठ नमक के दरोगा वंशीधर को व्यवस्था भ्रष्ट और पतित अलोपीदीन का सेवक बना देती है। जब वंशीधर पढ़ाई पूरी करके काम की तलाश में निकलते हैं तो उनके अनुयायी पिता उनको सीख देते हैं कि नौकरी में पद की तरफ ध्यान मत देना, यह तो पीर की मजार है। नजर चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिये। ऊपरी कमाई का ध्यान रखना। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चांद है, जो एक दिन दिखाई देता है और फिर घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बढ़ता हुआ स्रोत है, जिससे सदैव प्यास बुझती है। अनुभवी पिता की इस सीख पर वंशीधर ने भले ही कान न दिया हो, लेकिन हमारे सामाजिक तंत्र में यह मामूली बात हो गई है। इस कहानी के शुरू में प्रेमचंद लिखते हैं- जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर की बनाई वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया, तो कुछ लोग चोरी छुपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार से भ्रष्टाचार होने लगा। कोई घूस

ले देकर काम करता कोई चालाकी से। प्रेमचंद की यह कहानी सारे भ्रष्ट तंत्र की कहानी बन गई। इसी तरह कुछ लोगों को ईदगाह कहानी याद रहती है। कहानी में हामिद अपनी बूढ़ी दादी अमीना के लिए अपने प्यार के बल पर चिमटे जैसी कुरूप और उपेक्षित वस्तु को सुंदर बना देता है। यह मानवीय प्यार हामिद के अंदर एक ऐसा जज्बा पैदा करता है, जो उसे पूरी दुनिया के खिलाफ तनकर खड़ा होने की ताकद देता है। इसी प्यार से सारे अभावों के बावजूद अपने तमाम हमउम्र और संपन्न बच्चों को अपना बना लेता हे। पंच परमेश्वर कहानी के जुम्मन शेख और अलगू चौधरी अपनी न्याय निष्ठा के लिये याद किए जाते हैं। लॉटरी कहानी लोभ और धार्मिक कर्मकांडों के संबंधों का पर्दाफाश करती है तो नशा कहानी झूठे दंश की पोल खोलती है।

प्रेमचंद के पूवर्वती उपन्यासों में औपचारिक तत्वों में समुचित सामंजस्य नहीं था। अधिकांश उपन्यास घटना प्रधान, मनोरंजक एवं कौतूहल वर्धक होते थे। फिर इसी युग के उपन्यासकारों को आगे के युग के लिए पाठकों को तैयार करने का श्रेय दिया जाता है। ऐसा समझा जाता है कि देवकी नंदन खत्री की व्यवहारिक भाषा को ही प्रेमचंद ने अपना आधार बनाया। प्रेमचंद के पूर्ववर्ती युग में हिंदी उपन्यास साहित्य की स्थिति अत्यंत दयनीय थी जिसे प्रेमचंद ने सुदृढ़ बनाया।

प्रेमचंद जब साहित्य में अवतीर्ण हुए तो उन्होंने हिंदी उपन्यास की इस दरिद्रता को समझा। प्रेमचंद प्रथम उपन्यासकार हैं जिन्होंने जीवन की विराट भूमि पर घटनाओं और चरित्रों की सृष्टि की। घटना और चरित्रों के सामंजस्य में जो सफलता प्रेमचंद को प्राप्त हुई, वह आज तक किसी अन्य उपन्यासकार को नहीं मिल सकी। प्रेमचंद एक मात्र उपन्यासकार थे जिन्होंने हिंदी साहित्य एवं मानव जीवन के गहरे संबंध को पूर्वत: पहचाना।

प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को एक नया मोड़ प्रदान किया। उन्होंने उपन्यास साहित्य को तिलस्मी एवं ऐयारी के दलदल से निकालकर मानव-जीवन दृढ़ नींव पर लाकर खड़ा कर दिया। प्रेमचंद के उपन्यासों की कथा वस्तु मानव जीवन से ओत प्रोत है। महलों से लेकर झोपड़ियों, खेतों से लेकर खलिहानों तक कुछ भी प्रेमचंद की पैनी दृष्टि से नहीं बच सका। प्रेमचंद रचित उपन्यासों ने उन्हें साहित्य के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचाया।

प्रेमचंद जी के मीठे उपन्यासों में सबसे मीठा गबन चुना गया है। तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन का चित्र रंगभूमि है। सूरदास गांधी जी का प्रतिनिधित्व कर रहा है। उसके रोम रोम में गांधीवाद भरा है। विस्तृतता के लिए गोदान पढ़ें। गंगा यमुना की दो धाराएं इसमें पायेंगे। भारत के किसानों का प्रतिनिधित्व होरी, गोवर्धन, धनियां कर रहे हैं। गोदान में धनी वर्ग का चित्र भी है। वह वर्ग परंपरा से विलासिता, आखेट आदि भारतीय जीवन से दूर रहा है। भारतीय जीवन धंधों का जीवन है। समय ही जीवन है और इस अर्थ में वह जीवन को नष्ट कर रहा है। उसके धरती पर आने का कोई माने नहीं निकलता। धंधा और संतौष भारतीय जीवन का ताना बाना है।

भारतीय महिला अलंकार प्रिय होती है। यह हमारी गरीबी में आटा गीला करनेवाली प्रवृत्ति है। चंद्रहार के गबन का नायक किस नारकीय मार्ग पर आ पहुंचता है, यह दिखाकर प्रेमचंद ने भारतीय युवाओं को सचेत किया है कि कभी अपनी अर्धांगिनी को आप बढ़ा-चढ़ा कर न कहें।

भारतीय महिला वर्ग को उपन्यासकार ने सचेत किया है कि अलंकार प्रियता नाशकारी होती है। इस मनोवृत्ति पर नियंत्रण रखें।

अत: उपन्यास विधा में प्रेमचंद ने जो मार्ग अपनाया, वह उपन्यास लेखकों के लिए आदर्श मार्ग बना। हिंदी साहित्य समृद्ध हुआ। हमारा जीवन परिमार्जित हुआ। हमारी दृष्टि गरीबों की झोपड़ियों में यह देखने के लिए बैठी कि रोटी पर नमक है कि नहीं।

भारत से अधिक रूस में प्रेमचंद की महिमा गायी जाती है। यह देखकर बहुतों को शक था कि प्रेमचंद्र साम्यवादी तो नहीं थे। यदि साम्यवादी ही थे तो इसमें डर की क्या बात है। आज का युग धर्म यही है कि हम अपना खाना बांट कर खाएं। अगर कोई इस युग धर्म को नहीं पहचानता तो नेत्र विहीनस्य की दर्पण कि करिष्यति।

प्रेमचन्द जी की कहानियां संस्कार देती हैं। आज की कहानियां सन्देशविहीन होती जा रही है। कथाकार मनुष्य को बेहतर बनाए रखनेवाली कहानियां ही लिखेंगे।

मोहनलाल सुखाड़िया (जन्म- ३१ जुलाई)

मोहन लाल सुखाड़िया राजस्थान के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों में से एक थे। उन्हें आधुनिक राजस्थान का निर्माता भी कहा जाता है। मोहन लाल सुखाड़िया सबसे लम्बे समय तक राजस्थान के मुख्यमंत्री रहे थे।

दामोदर धर्मानंद कोसांबी (जन्म- ३१ जुलाई)

दामोदर धर्मानंद कोसांबी भारत के प्रसिद्ध विद्वान, भाषा-वैज्ञानिक और गणितज्ञ थे। गणित के अतिरिक्त भारत के इतिहास और संस्कृति में भी इनका अतुलनीय योगदार रहा है। दामोदर धर्मानंद जी ने सोलह वर्षों तक टाटा इंस्टीट्यूफ ऑफ फंडामेंटल रिसर्च में अपनी सेवाएँ दी थीं। होमी भाभा के साथ अपने कुछ विवादों के चलते इन्हें संस्थान से हटा दिया गया था। इन्होंने कुछ ग्रंथ भी लिखे थे, जो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

ऊधम सिंह (शहादत- ३१ जुलाई)

ऊधम सिंह भारत की आजादी की लड़ाई में अहम योगदान करनेवाले पंजाब के महान क्रांतिकारी थे। अमर शहीद ऊधम सिंह ने १३ अप्रैल, १९१९ ई. को पंजाब में हुए भीषण जलियाँवाला बाग हत्याकांड के उत्तरदायी माइकल ओ डायर की लंदन में गोली मारकर हत्या करके निर्दोष भारतीय लोगों की मौत का बदला लिया था।

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर (निधन- ३१ जुलाई)

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर का बीसवीं शताब्दी के भारतीय सांस्कृतिक उन्नयन में विशेष योगदान रहा था। वे वेदों का अध्ययन करनेवाले शीर्षस्थ विद्वान थे। वैदिक साहित्य के संबंध में उन्होंने अनेक लेख लिखे और हैदराबाद में विवेकवर्धिनी नामक शिक्षा संस्था की स्थापना की। राष्ट्रीय विचारों से ओतप्रोत उनकी ज्ञानोपासना वहाँ के निजाम को अच्छी नहीं लगी, इसीलिए इनको शीघ्र ही हैदराबाद छोड़ देना पड़ा। श्रीपाद दामोदर सातवलेकर को साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए १९६८ में भारत सरकार ने पद्म भूषण से सम्मानित किया था।

१ अगस्त

पुरुषोत्तम दास टंडन (जन्म- १ अगस्त)

पुरुषोत्तद दास टंडन आधुनिक भारत के प्रमुख स्वाधीनता सेनानियों में से एक थे। वे राजर्षि के नाम से भी विख्यात थे। उन्होंने अपना जीवन एक वकील के रूप में प्रारम्भ किया था। हिन्दी को आगे बढ़ाने और इसे राष्ट्रभाषा का स्थान दिलाने के लिए पुरुषोत्तम दास जी ने काफी प्रयास किये थे। वर्ष १९५० में वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष नियुक्त हुए थे। पुरुषोत्तम दास टंडन को भारत के राजनीतिक और सामाजिक जीवन में नयी चेतना, नयी लहर, नयी क्रांति पैदा करनेवाला कर्मयोगी कहा गया है। वर्ष १९६१ में उन्हें देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से भी सम्मानित किया गया था।

कमला नेहरू (जन्म- १ अगस्त)

कमला कौल नेहरू जवाहर लाल नेहरू, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और भारत के पहले प्रधानमंत्री की पत्नी थीं। कमला नेहरू को आज भी सौम्यता और विनम्रता की प्रतिमूर्ति के रूप में याद किया जाता है। १९२१ के असहयोग आंदोलन में उन्होंने इलाहाबाद में महिलाओं का एक समूह गठित किया और विदेशी वस्त्र तथा शराब की ब्रिकी करनेवाली दुकानों का घेराव किया। इतिहासकारों का कहना है कि कमला नेहरू में गजब का आत्मविश्वास और नेतृत्व क्षमता थी। जब उनके पति को एक बार राष्ट्रद्रोही भाषण देने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया तो वह उनकी जगह गयीं और कमला जी ने नेहरू जी का भाषण पढ़ा।

२ अगस्त

रविशंकर शुक्ल (जन्म- २ अगस्त)

रविशंकर शुक्ल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता तथा स्वतंत्रता सेनानी थे। आप १ नवम्बर, १९५६ को अस्तित्व में आये नये राज्य मध्य प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री नियुक्त हुए थे। पण्डित रविशंकर शुक्ल को नये मध्य प्रदेश के पुरोधा के रूप में स्मरण किया जाता है।

पिंगलि वेंकय्या (जन्म- २ अगस्त)

पिंगलि वेंकय्या भारत के राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा के अभिकल्पक हैं। वे भारत के सच्चे देशभक्त, महान स्वतंत्रता सेनानी एवं कृषि वैज्ञानिक भी थे। पिंगलि वेंकैय्या की संस्कृत, उर्दू एवं हिंदी आदि भाषाओं पर अच्छी पकड़ थी। सन १९१६ में पिंगली वेंकैया ने एक ऐसे ध्वज की कल्पना की जो सभी भारतवासियों को एक सूत्र में बाँध दे। उनकी इस पहल को एस.बी. बोमान जी और उमर सोमानी जी का साथ मिला और इन तीनों ने मिलकर नेशनल फ्लैग मिशन का गठन किया। इसके साथ ही वे भू-विज्ञान एवं कृषि के अच्छे जानकर भी थे। राष्ट्रीय ध्वज बनाने के बाद पिंगली वेंकैय्या का झंडा झंडा वेंकैय्या के नाम से लोगों के बीच लोकप्रिय हो गया।

२ अगस्त, १८७८ को राष्ट्रीय ध्वज के अभिकल्पक पिंगलि वेंकैया का जन्म भटाला पेनमरु (आंध्र प्रदेश) में हुआ था। दक्षिण अफ्रीका में वे गांधीजी से मिले और उनके विचारों से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने ही सभी भारतीयों को एक सूत्र में बांधने के लिए एक ध्वज की कल्पना की और गांधीजी के सुझावों को लेते हुए उन्होंने तीन रंगों (केसरिया, श्वेत और हरा) वाला ध्वज बनाया जिसके बीच में चरखा था। बाद में चरखे की जगह अशोक चक्र लेकर उसे राष्ट्रीय झंडा घोषित कर दिया गया।

भारत सरकार ने उनके सम्मान में डाक टिकट जारी किया था जिसमें उनके झंडे (पिंगकलि झंडा) को दिखाया गया। ४ जुलाई १९६३ को उनका निधन हो गया।

विजय रूपाणी (जन्म- २ अगस्त)

विजय रूपाणी भारतीय राजनीतिज्ञ हैं। यह ७ अगस्त २०१६ से गुजरात के मुख्यमंत्री बने हैं। भारतीय जनता पार्टी के साथ रूपाणी का एक लंबा कार्यकाल रहा है, वह चार बार लगातार प्रदेश बीजेपी के जनरल सेक्रेटरी रह चुके हैं। विजय रूपाणी राजकोट पश्चिम में पार्टी के वर्तमान प्रदेश अध्यक्ष हैं और गुजरात विधानसभा के सदस्य हैं।

उमाकांत मालवीय (जन्म- २ अगस्त)

उमाकांत मालवीय हिंदी के प्रतिष्ठित कवि एवं गीतकार थे। पौराणिक सन्दर्भों की आधुनिक व्याख्या करते हुए उन्होंने अनेकानेक मिथकीय कहानियों और ललित निबंधों की रचना की है। उनकी बच्चों पर लिखी पुस्तकें भी बेजोड़ हैं। कवि सम्मेलनों का संचालन भी बड़ी संजीदगी से किया करते थे। डॉ. शम्भुनाथ सिंह उन्हें नवगीत का भागीरथ कहा करते थे। गीत-नवगीत के प्रस्थान बिंदु पर वह अलग से किनारे पर खड़े पेड़ नजर आते हैं। काव्य-क्षेत्र में मालवीय जी ने नवगीत

विधा को अपनाया। नवगीत आंदोलन के वे एक प्रमुख उन्नायक थे। इनका मत है कि आज के युग में भावों की तीव्रता को संक्षेप में व्यक्त करने में नवगीत पूर्णतया सक्षम है।

प्रफुल्ल चंद्र राय (जन्म- २ अगस्त)

आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय भारत में रसायन विज्ञान के जनक माने जाते हैं। वे एक सादगीपसंद तथा देशभक्त वैज्ञानिक थे। सादा जीवन उच्च विचार वाले उनके बहुआयामी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर महात्मा गांधी ने कहा था, शुद्ध भारतीय परिधान में आवेष्टित इस सरल व्यक्ति को देखकर विश्वास ही नहीं होता कि वह एक महान वैज्ञानिक हो सकता है। प्रफुल्लचंद्र राय की प्रतिभा इतनी विलक्षण थी कि उनकी आत्मकथा लाइफएण्ड एक्सपीरियेंसेस ऑफ बंगली केमिस्ट के प्रकाशित होने पर अतिप्रतिष्ठित अंतरराष्ट्रीय विज्ञान पत्रिका नेचर ने उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए लिखा था कि लिपिबद्ध करने के लिए संभवत: प्रफुल्लचंद राय से अधिक विशिष्ट जीवन चरित्र किसी और का हो ही नहीं सकता।

३ अगस्त

१) राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त

भारत भारती के अमर गायक मैथिलीशरण गुप्त का जन्म ३ अगस्त, १८८६ को चिरगाँव, झाँसी मे सेठ रामचरणदास कनकने के यहाँ हुआ था। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त के जीवन की पूरी पुस्तक खोलकर देखने से पता चलता है कि उन पर अनेक विश्वविद्यालयों मे शोध कार्य होने के उपरांत भी बाल्यकाल के कुछ ऐसे अनछुए पृष्ठ है जिनसे उनका संपूर्ण जीवन ही बदल गया था। उनकी साहित्यिक कृतियों पर सभी साहित्यकारों ने कलम चलाई है, पर बहुत कम स्थनों पर उनके परिवार की चर्चा हुई है। उनके वैयक्तिक जीवन के विषय में भी कम ही पढ़ने को मिलता है, लेकिन उनके जीवन की दिशा कैसे बदली और वह राष्ट्रकवि बने, इन सब बातों का खुलासा किया है। उनके बाल-सखा, अंतरंग मित्र एवं काव्य-सहयोगी मुंशी अजमेरी ने। मुंशी अजमेरी ने लिखा है- जिन दिनों मै मदरसे मे पढ़ता था, दो विद्यार्थी पढ़ने आए थे। ढीली-ढीली धोतियां, कुरतों के ऊपर देशी कोट, कलीदार और लाल मखमल की जरी के काम वाली टोपियां, यही उनकी पोशाक थी। मै उनसे आगे के दरजे मे था, उनके बड़े-बड़े बस्ते खुले पड़े रहते थे और वे प्राय: मदरसे से उठकर घर को चल दिया करते थे। दूसरे विद्यार्थी उनके बस्तों मे से कागज और कले निकाल लिया करते थे और उनकी दवातों मे से स्याही अपनी दवातों मे उड़ेल लेते थे, पर वे कभी किसी से कुछ नही कहते थे। मै उन्हे जानता था कि ये कनकने जी के लड़के है- रामकिशोर और मैथिलीशरण।

आपके यहाँ जमीदारी और घी की आढ़त का कार्य होता था। संपन्न व्यक्तियों मे आपके पिता रामचरण करकने की गिनती होती थी। अस्तु, मैथिलीशरण गुप्त का बचपन सुख पूर्वक बीता था। झाँसी मे मैकडोनल स्कूल मे पढ़ने गये पर वहाँ भी आपका मन अधिक नही लगा। थोड़े समय बाद ही आप चिरगाँव वापस आ गए। घर पर ही आपने संस्कृत, उर्दू और बंगला भाषा का अच्छा अध्ययन किया। अपने मुंशी अजमेरी के साथ आपके कविता को परिमार्जित रुप देना शुरू किया और झाँसी मे ही महावीर प्रसाद द्विवेदी, जो उन दिनों रेलवे मे सेवारत थे, के सानिध्य से हिंदी की खड़ी बोली मे लिखना प्रारंभ किया। बुंदेलखंड मे जन्म लेने के कारण गुप्त जी बोलचाल मे बुंदेली भाषा का अधिक प्रयोग करते थे। बुंदेलखंडी वेषभूषा धोती और बंडी पहनकर माथे पर तिलक लगाकर मसनद से टिक कर संत के रूप मे विशाल हृदय की तरह बड़े दरवाजे वाली अपनी हवेली मे बैठे रहा करते थे। मैथिलीशरण गुप्त का निधन १२ दिसंबर, १९६४ को चिरगाँव मे ही हुआ।

मैथिलीशरण गुप्त खड़ी बोली के प्रथम महत्वपूर्ण कवि थे। महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से आपने खड़ी बोली को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया और अपनी कविता के द्वारा खड़ी बोली को एक काव्य भाषा के रूप में निर्मित करने में अथक प्रयास किया। इस तरह ब्रजभाषा जैसी समृद्ध काव्य भाषा को छोड़कर समय और संदर्भों के अनुकूल होने के कारण नये कवियों ने इसे ही अपनी काव्य अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। हिन्दी कविता के इतिहास में गुप्त जी का यह सबसे बड़ा योगदान है। उनका निधन १२ दिसम्बर को हुआ।

श्रीप्रकाश (जन्म- ३ अगस्त)

श्रीप्रकाश भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और राष्ट्रीय नेता थे। वे पाकिस्तान में भारत के प्रथम उच्चायुक्त थे, जिन्होंने १९४७ से १९४९ तक देश की सेवा की। उन्हें एक अच्छे वक्ता और लेखकर के रूप में भी जाना जाता था। वे सन १९४९ से १९५० तक असम, १९५२ से १९५६ तक मद्रास (आधुनिक चेन्नई) और १९५६ से १९६२ तक महाराष्ट्र के राज्यपाल रहे थे। देश सेवा और सच्ची निष्ठा के लिए भारत सरकार ने उन्हें १९५७ में पद्मविभूषण से सम्मानित किया था।

छोटी-छोटी चीजों में आनंद खोजें- अनु आगा (जन्म- ३ अगस्त)

वे एक उद्योजिका नारी हैं, एक मां हैं और इसके अतिरिक्त उनके व्यक्तित्व का जो सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं, वह है उनकी मानवता। थरमैक्स कंपनी की पूर्व चेयरपर्सन रहीं अनु आगा सामाजिक कार्यों में भी अग्रणी हैं। राज्यसभा की सदस्यता से गौरवान्वित अनु आगा ने अपने एक भाषण में जीवन एवं प्रत्येक क्षण का महत्व समझाया है।

जब मैं छोटी थी तो मुझे लगता था कि खुशी केवल दूसरों द्वारा की गई प्रशंसा व शाबाशी से मिलती है। मैं जैसे-जैसे बड़ी हुई मुझे अहसास हुआ कि ये बातें केवल हमारे अहंकार से खेलती हैं। जब मैंने कुछ चीजें अपनी प्रतिष्ठा या दिखावे के लिए न करते हुए अपनी खुशी के लिए करनी शुरू कर दीं, तब मुझे सच्ची खुशी मिलने लगी।

बचपन में हमारे पास न तो फैन था और न ही फोन, लेकिन उससे कभी हमें फर्क नहीं पड़ा। तब हम छोटी-छोटी चीजों में खुश रहते थे। अब हम इतने आदती हो गए हैं कि यदि हमारा एकाध गैजेट बिगड़ जाएं या बंद पड़ जाए तो हम बेचैन हो जाते हैं। मानों इसके आगे जीवन ही खत्म होनेवाला है।

मैंने कहीं पढ़ा है कि हम अपने जीवन का ७५% समय गेम खेलने या अन्य कार्यो। में व्यतीत करते हैं और संवाद जैसे महत्वपूर्ण काम के लिए २५% समय भी मुश्किल से निकालते हैं। आज की परिस्थिति में यह कहना गलत नहीं होगा कि संवाद एक मूलभूत आवश्यकता है। हमें मशीन के व्यसन ने इतना अधिक जकड़ लिया है कि इसके बिना हम मनुष्य की कल्पना ही नहीं कर सकते।

दूसरी महत्वपूर्ण वस्तु है- पैसा। मेरा व्यवसाय सुदृढ़ स्थिति में है फिर भी मुझे पैसों के लिए असुरक्षा महसूस होती थी। अत: सामाजिक कार्यों में मेरा योगदान बहुत कम था। लेकिन एक समय मुझे अहसास हुआ कि मेरा यह निराधार है। यह भय केवल मेरे दिमाग में हैं। अपने इस भय पर विजय पाने के बाद मैं समाज से और अच्छी तरह से जुड़ गई। स्वयं को संतुष्ट करने के भ्रम में पड़कर हम छोटी-छोटी चीजों से मिलनेवाले आनंद से वंचित होते जा रहे हैं।

नाना पाटील (जन्म- ३ अगस्त)

क्रांतिसिंह के नाम से विख्यात स्वाधीनता सेनानी नाना पाटील ने भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान पतरी सरकारी के नाम से मशहूर समांतर सरकार की स्थापना की थी। क्रांतिकारी पतरी सरकार सातारा जिले के १५० गांवों में अगस्त १९४३ से मई १९४६ तक अस्तित्व में रही। महात्मा फुले के सत्यशोधक समाज से प्रेरित नाना स्वाधीनता संग्राम के दौरान कई बार जेल गए। कई वर्षों तक भूमिगत रहकर आजादी की लड़ाई में सक्रिय रहे। आजादी के बाद संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन में शिरकत की। १९५७ में उत्तरी सातारा लोकसभा क्षेत्र से सांसद चुने गए। संसद में मराठी में भाषण देनेवाले वे पहले सांसद थे।

४ अगस्त

फिरोजशाह मेहता (जन्म- ४ अगस्त)

फिरोजशाह मेहता भारतीय राजनेता, बंबई नगरपालिका के संविधान (चार्टर) के निर्माता तथा अंग्रेजी भाषा के अखबार बॉम्बे क्रॉनिकल के संस्थापक (१९१३) थे। १९०४ में उन्हें नाइट की उपाधि से विभूषित किया गया। उन्होंने मुंबई म्युनिसिपल बोर्ड के कार्यों में गहरी रूचि ली। उनका नगर में इतना प्रभाव था कि उन्हें मुंबई का मुकुटहीन राजा कहा जाता था। फिरोजशाह मेहता १८८६ में मुंबई लेजिस्लेटिव कॉंसिल के लिए मनोनीत किए गए। अपने जीवन के अंतिम दिनों में फिरोजशाह मेहता ने अंग्रेजी दैनिक पत्र बॉम्बे क्रॉनिकल का प्रकाशन आरम्भ किया। बाद में इस पत्र का देश के स्वतंत्रता संग्राम में बड़ा योगदान रहा। १८९३ में इंपीरियल विधान परिषद के सदस्य निर्वाचित हुए। उन्होंने इंग्लैंड में कांग्रेस प्रचार कार्य सफलतापूर्वक किया। बॉम्बे यूनिवर्सिटी के उपकुलपति रहे। उन्होंने सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना सन १९११ में की। उनकी गर्जना ब्रिटिश शासकों को भी कंपा देती थी। वे महानगरपालिका के अध्यक्ष और उसके कमिश्नर भी रहे है। बॉम्बे क्रॉनिकल की स्थापना १९१३ में की। १९१५ में उनका निधन हो गया।

राणा उदयसिंह (जन्म- ४ अगस्त)

राणा उदयसिंह मेवाड़ के राणा साँगा के पुत्र और राणा प्रताप के पिता थे। इनका जन्म इनके पिता के मरने के बाद हुआ था और तभी गुजरात के बहादुरशाह ने चित्तौड़ नष्ट कर दिया था। इनकी माता कर्णवती द्वारा हुमायूँ को राखीबंद भाई बनाने की बात इतिहास प्रसिद्ध है। पन्ना धाय ने अपने पुत्र चंदन का बलिदान देकर मेवाड़ के अभिशाप बने बनवीर से मेवाड़ के भविष्य के राणा उदयसिंह की प्राण रक्षा की थी और इन्हें सुरक्षित रूप में किले से निकालकर बाहर ले गयी थीं। उन्होंने नदी की बाढ़ रोक उदयसागर नामक सरोवर का निर्माण किया था। वही उदयसिंह ने अपनी नई राजधानी उदयपुर बसाई।

५ अगस्त

प्राण कुमार शर्मा (निधन- ५ अगस्त)

प्राण कुमार शर्मा जिन्हें कार्टूनिस्ट प्राण के नाम से भी जाना जाता है। भारतीय कॉमिक जगत के सबसे सफल और लोकप्रिय कार्टूनिस्ट प्राण ने १९६० से कार्टून बनाने की शुरुआत की। प्राण द्वारा बनाए सर्वाधिक लोकप्रिय पात्र चाचा चौधरी, साबू, रॉकेट, बिल्लू एवं श्रीमतीजी हैं।

गोपीनाथ बोरदोलोई (निधन- ५ अगस्त)

गोपीनाथ बोरदोलोई भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और असम के प्रथम मुख्यमंत्री थे। इन्हें आधुनिक असम का निर्माता भी कहा गया है। इन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में भी सक्रिय रूप से भाग लिया था। १९४१ ई. में व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने के कारण इन्हें कारावास जाना पड़ा थां वर्ष १९४२ ई. में भारत छोड़े आन्दोलन में भागीदारी के कारण गोपीनाथ बोरदोलाई को पुन: सजा हुई। गोपीनाथ ने असम के विकास के लिए अथक प्रयास किये थे। उन्होंने राज्य के औद्योगीकरण पर विशेष बल दिया और गौहाटी में कई विश्वविद्यालयों की स्थापना करवायी। असम के लिए उन्होंने जो उपयोगी कार्य किए उनके कारण वहाँ की जनता ने उन्हें लोकप्रिय की उपाधि दी थी। वस्तुत: असम के लिए उन्होंने जो कुछ भी किया, उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता।

दत्तो वामन पोतदार (जन्म- ५ अगस्त)

दत्तो वामन पोतदार साहित्यकार एवं प्रसिद्ध समाजसेवी थे। हिंदी को महाराष्ट्र की दूसरी सबसे बड़ी भाषा बनाने का श्रेय उनको ही है। इनको महाराष्ट्र का साहित्यिक भीष्म भी कहा जाता है। इस कार्य के लिए उन्होंने आजीवन अविवाहित रहकर सेवा करने का दृढ़ निर्णय लिया। उन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६७ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

द्वारका प्रसाद मिश्रा (जन्म- ५ अगस्त)

द्वारका प्रसाद मिश्रा भारत के प्रसिद्ध राजनेता, स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार और साहित्यकार थे। उन्होंने मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री पद को भी सुशोभित किया था। द्वारका प्रसाद मिश्रा महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन से जुड़ गये थे। राष्ट्रवादी आंदोलनों में उन्होंने सक्रियता से अपना योगदान दिया था। जवाहरलाल नेहरू से मतभेदों के कारण इन्हें तेरह वर्षों तक राजनीतिक वनवास भोगना पड़ा। इन्होंने कई ऐतिहासिक शोध ग्रंथ भी लिखे थे। हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू और संस्कृत साहित्य से द्वारका प्रसाद जी को बहुत लगाव था।

शिवमंगल सिंह सुमन (जन्म- ५ अगस्त)

शिवमंगल सिंह सुमन हिन्दी के शीर्ष कवियों में से एक थे। उन्हें सन १९९९ में भारत सरकार ने साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में पद्मभूषण से सम्मानित किया था। अध्यापन के अतिरिक्त विभिन्न महत्वपूर्ण संस्थाओं और प्रतिष्ठानों से जुड़कर

उन्होंने हिंदी साहित्य में श्रीवृद्धि की। सुमन जी प्रिय अध्यापक, कुशल प्रशासक, प्रखर चिंतक और विचारक भी थे। वे साहित्य को बोझ नहीं बनाते, अपनी सहजता में गंभीरता को छिपाए रखते। वह साहित्य प्रेमियों में ही नहीं अपितु सामान्य लोगों में भी बहुत लोकप्रिय थे।

५ अगस्त, १९१६ को हिंदी के शीर्ष कवियों में से एक शिवमंगल सिंह सुमन का जन्म उन्नाव (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। वे अध्यापक, प्रशिक्षक, प्रखर चिंतक और विचारक भी थे, वे एक कुशल व समृद्ध वक्ता भी थे। वे साहित्यप्रेमियों में ही नहीं, अपितु सामान्य लोगों में भी बहुत लोकप्रिय थे।

उनकी कृतियों में हिल्लोल, जीवन के गान, प्रलय-सृजन मिट्टी की बारात, वाणी की व्यथा आदि प्रमुख हैं। मिट्टी की बारात के लिए वे साहित्य अकादमी पुरस्कार और भारत भारती पुरस्कार से सम्मानित भी किये गये। भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री और पद्म भूषण से भी सम्मानित किया। २७ नवंबर २००२ को वे चिरनिद्रा में लीन हो गये।

समाजवाद के पुरोधा थे जनेश्वर मिश्र (जन्म- ५ अगस्त)

बहुमुखी व्यक्तित्व और प्रखर समाजवादी स्व. जनेश्वर मिश्र का जन्म ५ अगस्त, १९३३ को उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के शुभनथही गांव में हुआ था। २२ जनवरी २०१० को उन्होंने प्रयाग इलाहाबाद में अंतिम सांस ली थी। उनके पिता रणजीत मिश्र कट्टर समाजवादी थे। उनकी माता जी का नाम श्रीमती बासमती देवी था। परिवार में उनकी दो पुत्रियां, छोटे भाई उनका एक पुत्र व दो पुत्रियां हैं। राजनीति से उनकी नहीं बल्कि राजनीति की हैसियत उनसे बढ़ी थी। उन्होंने महात्मा गांधी और लोहिया के अंतिम व्यक्ति के दर्द को एहसास किया। उसकी बेहतरी का सपना संजोकर राजनीति करनेवाले राजनैतिक संत जनेश्वर जी कहते थे कि गरीब के हक की लड़ाई राजनीति का मकसद होना चाहिए। जनेश्वर जी का कोई विरोधी नहीं था। १९६७ में मीसा के तहत जेल मे बंद थे, उस समय उनकी पत्नी बहुत बीमार थीं, तत्कालीन मुख्यमंत्री सुचेता कृपलानी ने उन्हें पेरोल पर रिहा करने का आदेश दिया, लेकिन उन्होंने रिहा होने से मना कर दिया। उसके खिलाफ चुनाव लड़ रही जवाहरलालनेहरू की बहन श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित ने कहा कि अगर जनेश्वर जी जेल से रिहा नहीं होंगे तो मैं चुनाव नहीं लड़ूंगी। चुनाव आयोग के निर्देश पर रिहा हुए और पत्नी को देखने की बजाए सीधे पर्चा दाखिल करने चुनाव क्षेत्र में गए। सोसलिस्ट पार्टी ने उन्हें जवाहरलाल नेहरू की बहन श्रीमती विजयालक्ष्मी पंडित के लिखाफ उम्मीदवार बनाया था। जनेश्वर जी का जीवन संघर्षों से भरा था। संसद में अपने अंतिम भाषण में देश की युवा पीढ़ी को और १९ जनवरी को समाजवादी पार्टी के सत्याग्रह आंदोलन में इलाहाबाद की कचहरी में देश की अवाम को अपने संघर्षों की याद दिलाते हुए उन्होंने कहा था कि पुलिस के पास इतनी हिम्मत हो और उसके लाठी में इतना दम हो कि वो उन्हें मार दे और उनकी मौत हो जाए, जिससे समाजवादी आंदोलन और तेज हो जाए। जनेश्वर जी सदैव मुझे पुत्रवत स्नेह देते रहे उनके मन में एक अल्हड़ देवदूत समाहित था, जिसका स्वरूप सभी के बीच स्नेह, प्यार और कभी कभी दुलार भरी डांट में मुखरित होता था। वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व को लेकर आम जनता के दिलों में उतर जाते थे। छोटे लोहिया सदैव सत्ता की चमक दमक से दूर रहे। ऐसी राजनीति उन्हें लुभा नहीं पाई। उनकी सोच सदैव समाज में हाशिए पर खड़े लोगों के प्रति खुशहाली और उनके सपनों को साकार करने की रही। वह पद के मोह फांस में नहीं फंसे। उत्तर प्रदेश में जब रामनरेश यादव को हटाकर जनेश्वर मिश्र को मुख्यमंत्री बनाने की बात चली, तब उन्होंने यह कहते हुए मना किया कि इससे पिछड़ों में गलत संदेश जाएगा। जनेश्वर जी समाजवाद के कबीर थे। मनसा, वाचा,

कर्मणा उनका पूरा जीवन आम आदमी की पीड़ा और समाधान की दिशा में ईमानदारी से केंद्रित था। वे आत्मसम्मान के ऐसे पुरोधा थे जिनको अहंकार छू तक नहीं पाया। उनका रहन-सहन और देशी ठाठपन भारत की आम जनता की तस्वीर बयां करता था। वर्तमान की संक्रमण कालीन राजनीति के वे अपने सिद्धांतों और विचारधारा को लेकर अंतिम सांस तक कोई समझौता नहीं किए। कई मुद्दों पर उनकी जिद पानी की उस प्रवाह का द्योतक थी जो पत्थरों को तरासती थी, राष्ट्र की समाजवादी व्यवस्था और समतामूलक समाज बनाने के लिए राजनैतिक संत की आवश्यकता होती है। देश ने ऐसे समाजवादी चिंतक खो दिया। विश्वनाथ प्रताप सिंह और चंद्रशेखर जैसे पुरोधाओं के खिलाफ भी वह चुनाव लड़े थे। विश्वनाथ प्रताप सिंह को उन्होंने हराया भी था और उनकी कैबिनेट में मंत्री रहकर काम भी किया था। जब विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार को गिराकर कांग्रेस की मदद से सरकार बनाने की कवायद चल रही थी तो जनेश्वर जी इसके खिलाफ थे लेकिन पार्टी और नेतृत्व के प्रति समर्पण का यह हाल था कि मुलायम सिंह के आदेश को सर माथे पर लगाया। मोरारजी भाई की सरकार को गिराकर जब चौधरी चरण सिंह की सरकार बनाने की कवायद शुरु हुई तब जनेश्वर जी बीमारी की हालत में एम्स में आईसीयू में भर्ती थे। उनसे पूछे बिना लोकबंधु राजनरायन ने जनेश्वर जी की मोरारजी भाई की सरकार के मंत्री परिषद से इस्तीफे की घोषणा कर दी। चंद्रशेखर जी जनेश्वर जी के पास गये और पूछा कि क्यों उनके त्याग पत्र की घोषणा उनकी सहमति से की गई है, जनेश्वर जी ने कहा कि बिल्कुल नहीं मैं तो यहां बीमार पड़ा हूं। चंद्रशेखर जी ने कहा तब आप इसका खंडन कर दीजिए जनेश्वर जी का उत्तर था, त्यागपत्र का तो मैं खंडन कर दूं पर अपने नेता के विश्वास का खंडन कैसे करूं, ऐसे बड़े लोग राजनीति में न अब हैं और न ही होंगे। जनेश्वर जी राज्यसभा में समाजवादी पार्टी संसदीय दल के नेता थे पर बीमारी के कारण सदन में बिल्कुल नहीं जा पाते थे, लेकिन महत्वपूर्ण विषयों पर बोलने से नहीं चूकते थे। बहुत ही सहजतापूर्वक वह अपने वैचारिक विरोधियों को अपनी मारक क्षमता दिखलाते थे। वह शब्दों के प्रयोग व्यंजनों में माहिर थे, वे जब भी बोलते थे सदन उनका भाषण पूरे गौर से सुनता था। जनेश्वर जी शब्दश: जन नेता थे। एक आम आदमी के थे और हर आम आदमी से जुड़े थे खास होते हुए भी न कभी वे खास हुए और न ही किसी खास के लिए हुए। उनकी धारा प्रवाह भाषण शैली और अभिव्यक्ति कहने से ज्यादा लोगों के दिलों में उतर जाती थी, कथनी करनी की एकरूपता को व्यक्तित्व में समाहित किए छोटे लोहिया सचमुच पार्टी के बंधनों से उन्मुक्त थे और किसी राजनैतिक पार्टी के नहीं थे, वे कभी भी किसी राजनैतिक लक्ष्मण रेखा के अधीन नहीं हुए उनको नमन करना उस सोच को नमन करना है जिसमें राष्ट्र का सर्वहारा कैदी था। राजनीति में जब जब सुचिता सादगी तथा सिद्धांतों की बात होगी, जनेश्वर जी की मौजूदगी वहां जरूर होती। आज के राजनीतिक झंझावत के दौर में वह विराट पुरुष थे। उन जैसा सिद्धांतवादी नेता मिलना असंभव है। लोहिया का नाम लेकर राजनीति करनेवाले तो बहुत लोग हैं, किंतु उनके सही वारिश जनेश्वर ही थे। लोहिया जैसा प्रायोगिक सिद्धांतकार यदि राजनीति में कोई था तो वह सिर्फ व सिर्फ जनेश्वर जी ही थे। इसलिए अगर लोहिया होते तो उन्हें लोहिया ही कहते। उन्होंने प्रयाग से अपनी राजनीतिक यात्रा का आरंभ और समापन भी प्रयाग से ही किया। उनकी जिंदादिली की मिशाल आनेवाले समय में देश के आम आदमी के दिलों में सदैव जिंदा रहेगी। आज के युग में स्व. जनेश्वर मिश्र के विचार राजनीतिक धरोहर हैं वह निर्भिकता, निडरता, स्पष्टवादिता, अदम्य साहस एवं धैर्य की प्रतिमूर्ति थे। समाजवाद एवं समाजवादी मौलिक सोच के लिए समर्पित्त व्यक्तित्व रहा है। उनका व्यक्तित्व कृतित्व आज की राजनीति के लिए अनुकरणीय है।

६ अगस्त

के. एम. चांडी (जन्म- ६ अगस्त)

के. एम. चांडी स्वतंत्रता सेनानी तथा गुजरात और मध्य प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल थे। उन्होंने राजनीति में १७ वर्ष की उम्र से ही हिस्सा लेना शुरू कर दिया था। उस समय वे १२वीं कक्षा के छात्र थे। सन १९४६ में जब के. एम. चांडी मीनाचिल तालुक कांग्रेस कमेटी के सचिव थे, तब उन्हें राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने से प्रतिबंधित कर दिया गया, पर वे स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते ही रहे।

गुरदयाल सिंह ढिल्लों (जन्म- ६ अगस्त)

डा. गुरदयाल सिंह ढिल्लों भारत के पाँचवे लोकसभा अध्यक्ष थे। वे जी. एस. ढिल्लों नाम से भी प्रसिद्ध हैं। गुरदयाल सिंह ढिल्लों बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे जिन्हें कानून से लेकर पत्रकारिता तथा शिक्षा और खेलकूद से लेकर संवैधानिक अध्ययन में रुचि थी। अंतर-संसदीय संघ की अंतर संसदीय परिषद के अध्यक्ष के रूप में ढिल्लों का चुनाव न केवल उनके लिए बल्कि भारत की पूरी जनता तथा भारतीय संसद के लिए भी बहुत सम्मान की बात थी।

७ अगस्त

राजेंद्र माथुर

७ अगस्त १९३५ को पत्रकार व संपादक राजेंद्र माथुर का जन्म धार (मध्यप्रदेश) में हुआ था। हिंदी पत्रकारिता को मुख्य धारा में लाने का श्रेय उनको ही जाता है। उन्होंने इंदौर से प्रकाशित नयी दुनिया से अपनी पत्रकारिता की शुरुआत की थी और लगातार २७ वर्षों तक जुड़े रहे, उनकी पत्रकारिता निरपेक्ष पत्रकारिता थी। प्रेस आयोग के सदस्य बनने के पश्चात वे नवभारत टाइम्स के प्रधान संपादक बनकर दिल्ली आये। उनके लेखों के संग्रहों में गांधीजी की जेल यात्रा, नब्ज पर हाथ, भारत एक अंतहीन यात्रा, सपनों में बनता देश आदि प्रमुख हैं। अप्रैल १९९१ में उनका निधन हो गया।

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर (जन्म- ७ अगस्त)

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर भारत के प्रख्यात चित्रकार तथा साहित्यकार थे। उन्हें राष्ट्र से बड़ा प्रेम था। सांस्कृतिक गुलामी से मुक्ति के लिए उन्होंने अपने अग्रज गगनेन्द्रनाथ ठाकुर के सहयोग से १९०७ में कोलकाता (भूतपूर्व कलकत्ता) में इंडियन सोसायटी ऑफ ओरियण्टल आर्टस नामक संस्था की स्थापना की थी।

वासुदेव शरण अग्रवाल (जन्म- ७ अगस्त)

वासुदेव शरण अग्रवाल भारत के प्रसिद्ध विद्वानों में से एक थे। वे भारत के इतिहास, संस्कृति, कला, साहित्य और प्राच्य विद्या आदि विषयों के विशेषज्ञ थे। वासुदेव शरण अग्रवाल हिन्दी विश्वकोश सम्पादक मडल के प्रमुख सदस्य थे। उन्होंने मथुरा संग्रहालय (उत्तर प्रदेश) के संग्रहाध्यक्ष के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान की थीं। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक पाणिनिकालीन भारतवर्ष में भारत की संस्कृति, कला और साहित्य आदि पर प्रकाश डाला गया है। उन्हें साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत भी किया गया था।

एम.एस. स्वामीनाथन (जन्म- ७ अगस्त)

एम.एस. स्वामीनाथन अनुवांशिकी विशेषज्ञ और अंतर्राष्ट्रीय प्रशासक, जो भारत की हरित क्रांति में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए विख्यात हैं। भारत के कृषि पुनर्जागरण ने स्वामीनाथन को कृषि क्रांति आंदोलन के वैज्ञानिक नेता के रूप में ख्याति दिलाई। एम.एस. स्वामीनाथन को विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६७ में पद्मश्री, १९७२ में पद्मभूषण और १९८९ में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया था।

८ अगस्त

भीष्म साहनी ने साहित्य और रंगमंच को नई ऊंचाई दी

भीष्म साहनी साहित्य की दुनिया के उन गिनेचुने नामों में हैं, जिन्होंने रंगमंच को नयी ऊंचाई दी। कभी तमस जैसी रचना तो कभी कबीरा खड़ा बाजार में जैसे नाटक के जरिए उन्होंने अलग मुकाम बनाया। साहित्यकार रामदरश मिश्र ने बातचीत में कहा कि भीष्म साहनी एक बेहतरीन साहित्यकार थे। उनका उपन्यास तमस अपने आप में बेमिसाल है। मैं उन्हें प्रेमचंद्र की परंपरा का साहित्यकार मानता हूं। एक बड़े साहित्यकार होने के साथ ही वह एक अच्छे मनुष्य भी थे। साहनी की कई रचनाओं को रंगमंच पर उतारा गया। उनके नाटकों को एम के रैना और अरविंद गौर जैसे निर्देशकों ने निर्देशित किया। रंगकर्मी निसार अहमद उर्फ इकबाल कहते हैं कि मैंने उनके लिखे कई नाटकों को देखा और कुछ में काम भी किया। वह रंगमंच की नब्ज को बखूबी समझते थे। साहनी का जन्म ८ अगस्त, १९१५ को रावलपिंडी (पाकिस्तान) में हुआ था। लाहौर के गवर्नमेंट कॉलेज और अमृतसर के खालसा कॉलेज से तालीम हासिल करनेवाले साहनी ने स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। वर्ष १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में साहनी की अहम भूमिका रही। साहनी के भाई बलराज साहनी नामी अभिनेता थे। साहनी भाई के साथ मुंबई में रंगमंच लेखन से जुड़े और बाद में दिल्ली कॉलेज (अब जाकिर हुसैन कॉलेज) में प्राध्यापक बन गए। वर्ष १९५७ से १९६३ तक वह मास्को में रहे और उन्होंने कई रूसी पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद किया। वह हिंदी के अलावा उर्दू, अंग्रेजी और पंजाबी भाषा के अच्छे जानकार थे। उन्होंने हिंदी में कई रचनाएं लिखीं, लेकिन उनका तमस उपन्यास हमेशा के लिए लोगों के जेहन में घर कर गया। उनकी कुछ अन्य प्रमुख रचनाएं निशाचर और पहला पथ हैं। उन्होंने अपनी जीवनी आज का अतीत और अपने भाई बलराज ब्रदर लिखी। साहित्यकार प्रेम जनमेजय कहते हैं कि हिंदी साहित्य में भीष्म साहनी सबसे प्रखर लेखकों में थे। उनकी रचना तमस वाकई बेमिसाल है। इसके जरिए देश के बंटवारे की एक अलग तस्वीर नजर आती है। जनमेजय ने कहा कि मुझे कई बार साहनी से मिलने और उनके साथ वक्त गुजारने का मौका मिला। वह सादगी पसंद मनुष्य थे। यह बात लोगों को उनकी ओर खींचती थी। साहित्य में योगदान के लिए साहनी को कई सम्मान दिए गए। इनमें साहित्य अकादमी फेलोशिप और पद्मभूषण प्रमुख हैं। ११ जुलाई, २००३ को साहनी का निधन हो गया।

भीष्म साहनी प्रसिद्ध भारतीय लेखक थे। उन्हें हिंदी साहित्य में प्रेमचंद की परंपरा का अग्रणी लेखक माना जाता है। वे आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख स्तंभों में से एक थे। उन्हें उनके लेखन के लिए तो स्मरण किया ही जाता है, लेकिन अपनी सहृदयता के लिए भी वे चिरस्मरणीय है। भीष्म साहनी ने कई प्रसिद्ध रचनाएँ की थीं, जिनमें से उनके उपन्यास तमस पर वर्ष १९८६ में एक फिल्म का निर्माण भी किया था। उन्हें कई पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुए थे। १९९८ में भारत सरकार के पद्मभूषण अलंकरण से भी वे विभूषित किये गए थे।

भीष्म साहनी उन चुनिंदा शख्सियतों में शुमार हैं, जिन्होंने न सिर्फ साहित्य बल्कि रंगमंच को भी नयी ऊंचाई प्रदान की। कभी तमस धारावाहिक तो कभी कबीरा खड़ा बाजार में जैसे नाटक के जरिए उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। साहित्यकार प्रेम जनमेजय का कहना है कि हिंदी साहित्य में भीष्म साहनी सबसे प्रखर लेखकों में थे। उनकी रचना तमस वाकई बेमिसाल है। इसके जरिए देश के बंटवारे की एक अलग तस्वीर नजर आती है। साहनी का जन्म ८ अगस्त,

१९१५ को रावलपिंडी (पाकिस्तान) में हुआ था। लाहौर के गवर्नमेंट कॉलेज और अमृतसर के खालसा कॉलेज से तालीम हासिल करनेवाले साहनी ने स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। वर्ष १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में साहनी की अहम भूमिका रही। उनके भाई बलराज साहनी नामी अभिनेता थे। साहनी भाई के साथ मुंबई में रंगमंच लेखन से जुड़े और बाद में एक कॉलेज में प्राध्यापक बन गए। वर्ष १९५७ से १९६३ तक वह मास्को में रहे और उन्होंने कई रूसी पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद किया। वह हिंदी के अलावा उर्दू, अंग्रेजी और पंजाबी भाषा के अच्छे जानकार थे। साहनी ने हिंदी में कई रचनाएं लिखीं, लेकिन उनका तमस उपन्यास हमेशा के लिए लोगों के जेहन में घर कर गया। उनकी कुछ अन्य प्रमुख रचनाएं निशाचर और पहला पथ हैं। उन्होंने अपनी जीवनी आज का अतीत और अपने भाई के बलराम साहनी की जीवनी बलराम माई ब्रदर लिखी। वह एक बेहद सादगीपसंद मनुष्य थे। जनमेजय कहते हैं कि मुझे कई बार साहनी से मिलने और उनके साथ वक्त गुजारने का मौका मिला। वह सादगी पसंद करनेवाले इंसान थे। यह बात लोगों को उनकी ओर खींचती थी। साहनी की कई रचनाओं को रंगमंच पर उतारीा गया। उनके नाटकों को एम के रैना और अरविंद गौर जैसे निर्देशकों ने निर्देशित किया। रंगकर्मी निसार अहमद उर्फ इकबाल कहते हैं कि मैंने उनके लिखे कई नाटकों को देखा और कुछ में काम भी किया। वह रंगमंच की नब्ज को बखूबी समझते थे। साहित्य में योगदान के लिए साहनी को कई सम्मान दिए गए। इनमें साहित्य अकादमी फेलोशिप और पद्मभूषण प्रमुख हैं। ११ जुलाई, २००३ को साहनी का निधन हो गया।

८ अगस्त १९१५ को हिंदी के साहित्यकार भीष्म का जन्म रावलीपिंडी (अब पाकिस्तान) में हुआ था। वे प्रेमचंद्र परंपरा के अग्रणी लेखक माने जाते हैं। इनकी कहानियां सामाजिक यथार्थ की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती थीं। वे थिएटर की दुनिया से भी नजदीक से जुड़े रहे। छह वर्षों तक मॉस्को में रहकर रूसी भाषा साहित्यकार अनुवाद भी किया।

उनको तमस के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण से सम्मानित किया। उनकी कृतियों में झरोखे बसंती, भाग्यरेखा, कबीरा खड़ा बाजार में, मुआवाजे हनुष, पहला पथ आदि प्रमुख हैं।

कपिल सिब्बल (जन्म- ८ अगस्त)

कपिल सिब्बल एक भारतीय राजनीतिज्ञ, वकील हैं जो मनमोहन सिंह के प्रधानमंत्री कार्यकाल के दौरान कैबिनेट मंत्रिमंडल में संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री रहे। इससे पहले कपिल सिब्बल मानव संसाधन मंत्री भी रह चुके हैं।

एस. निजलिंगप्पा (निधन- ८ अगस्त)

एस. निजलिंगप्पा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के १९६८-१९६९ में अध्यक्ष थे। इन्हीं के कार्यकाल में कांग्रेस में विभाजन हुआ। एस. निजलिंगप्पा १९५६ में मैसूर के मुख्यमंत्री भी थे।

९ अगस्त

शिवपूजन सहाय (जन्म- ९ अगस्त)

आचार्य शिवपूजन सहाय हिन्दी साहित्य में एक उपन्यासकार, कहानीकार, सम्पादक और पत्रकार के रूप में प्रसिद्ध थे। इनके लिखे हुए प्रारम्भिक लेख लक्ष्मी, मनोरंजन तथा पाटलीपुत्र आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। शिवपूजन सहाय ने १९३४ ई. में लहेरियासराय (दरभंगा) जाकर मासिक पत्र बालक का सम्पादन किया। स्वतंत्रता के बाद शिवपूजन सहाय बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के संचालक तथा बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित साहित्य नामक शोध-समीक्षाप्रधान त्रैमासिक पत्र के सम्पादक थे।

अभिमन्यु अनत (जन्म- ९ अगस्त)

उपन्यास के क्षेत्र में अभिमन्यु अनत मॉरिशस के उपन्यास सम्राट हैं। उनके अभी तक २९ उपन्यास छप चुके हैं। पहला उपन्यास और नदी बहती रही सन १९७० में छपा था तथा उनका नवीनतम उपन्यास, अपना मन उपवन अभी इसी वर्ष में प्रकाशित हुआ है। उनका प्रसिद्ध उपन्यास लाल पसीना सन १९७७ में छपा था जो भारत से गये गिरमिटिया मजदूरों की मार्मिक कहानी है। अब इसका अनुवाद फ्रेंच भाषा में हो चुका है। इस उपन्यास की दो अन्य कड़ियां भी प्रकाशित हुई जिनके शीर्षक हैं गांधीजी बोले थे (१९८४) तथा और पसीना बहता रहा (१९९३)। भारत से बाहर हिन्दी में इस त्रिखंडी उपन्यास को लिखनेवाले वे एकमात्र उपन्यासकार है जिनमें भारतीय मजदूरों की महाकाव्यात्मक गाथा का जीवन्त वर्णन हुआ है।

मनोहर श्याम जोशी (जन्म- ९ अगस्त)

मनोहर श्याम जोशी आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध गद्यकार, उपन्यासकार, व्यंग्यकार, पत्रकार, दूरदर्शन धारावाहिक लेखक, जनवादी-विचारक, फिल्म पटकता लेखक, उच्च कोटि के संपादक, कुशल प्रवक्ता तथा स्तम्भ-लेखक थे। दूरदर्शन के प्रसिद्ध और लोकप्रिय धारावाहिकों- बुनियाद नेताजी कहिन, मुंगेरी लाल के हसीं सपने, हम लोग आदि के कारण वे भारत के घर-घर में प्रसिद्ध हो गए थे। उन्होंने धारावाहिक और फिल्म लेखन से संबंधित पटकथा-लेखन नामक पुस्तक की रचना की है। दिनमान और साप्ताहिक हिन्दुस्तान के संपादक भी रहे।

विनायक कृष्ण गोकाक (जन्म- ९ अगस्त)

विनायक कृष्ण गोकाक को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ भाषा के प्रमुख साहित्यकारों में गिरा जाता है। डॉ. विनायक कृष्ण गोकाक का कन्नड़ साहित्य में नि:संदेह एक विशिष्ट स्थान है। कवि, उपन्यासकार, समालोचक, नाटककार और निबंध लेखक के रूप में आधी से भी अधिक शताब्दी का उनका सक्रिय कार्यकाल १९३४ में आरम्भ हुआ, जब उनका प्रथम कविता संकल्प कलोपासक प्रकाशित हुआ था।

रंगनाथन, एस.आर. (जन्म- ९ अगस्त)

शियाली रामअमृता रंगनाथक एक विख्यात पुस्तकालाध्यक्ष और शिक्षाशास्त्री थे। जिन्हें भारत में पुस्तकालय विज्ञान का अध्यक्ष व जनक माना जाता है। पुस्तकालय विज्ञान के लिए रंगनाथन का प्रमुख तकनीकी योगदान वर्गीकरण और अनुक्रमणीकरण (इंडेक्सिंग) सिद्धांत था। उनके कॉलन क्लासिफिकेशन (१९३३) ने ऐसी प्रणाली शुरू की, जिसे विश्वभर में व्यापक रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस पद्धति ने डेवी दशमलव वर्गीकरण जैसी पुरानी पद्धति के विकास को प्रभावित किया। बाद में उन्होंने विषय अनुक्रमणीकरण प्रविष्टियों के लिए श्रृंखला अनुक्रमणीकरण की तकनीक तैयार की।

अगस्त क्रांति (९ अगस्त)

भारत के इतिहास में अगस्त क्रांति दिवस

भारत के इतिहास में ९ अगस्त का दिन अगस्त क्रांति दिवस के रूप में जाना जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध में समर्थन लेने के बावजूद जब अंग्रेज भारत को स्वतंत्र करने को तैयार नहीं हुए तो राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन के रूप में आजादी की अंतिम जंग का ऐलान कर दिया, जिससे ब्रिटिश हुकूमत में दहशत फैल गई।

ये आंदोलन मुम्बई के जिस पार्क से शुरू हुआ उसे अब अगस्त क्रांति मैदान के नाम से जाना जाता है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अंग्रेजों को देश से भगाने के लिए ४ जुलाई, १९४२ को एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें कहा गया कि यदि अंग्रेज भारत नहीं छोड़ते हैं तो उनके खिलाफ नागरिक अवज्ञा आंदोलन चलाया जाए।

पार्टी के भीतर इस प्रस्ताव को लेकर विरोध के सुर उठने लगे और प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने पार्टी छोड़ दी। पंडित जवाहरलाल नेहरू और मौलाना अबुल कलाम आजाद आंदोलन को लेकर शुरुआत में संशय में थे लेकिन उन्होंने महात्मा गांधी के कहने पर आंदोलन के समर्थन का फैसला किया। सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. राजेंद्रप्रसाद, अशोक मेहता और जयप्रकाश नारायण ने भी आंदोलन का खुलकर समर्थन किया।

हालांकि आंदोलन के लिए कांग्रेस को सभी दलों का समर्थन नहीं मिला। मुस्लिम लीग, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और हिन्दू महासभा विरोध में खड़े थे। ८ अगस्त १९४२ अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के बम्बई सत्र में भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित किया गया। भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित होने के बारे में ब्रितानिया हुकूमत पहले से ही सतर्क थी।

लिहाजा गांधीजी को अगले ही दिन पुणे के आगा खान पैलेस में कैद कर दिया गया। अहमदनगर किले में कांग्रेस कार्यकारी समिति के सभी सदस्यों को गिरफ्तार कर बंद कर दिया गया। इसके बाद युवा नेत्री अरुणा आसफ अली ने मुम्बई के गवालिया टैंक मैदान में तिरंगा फहराकर गांधीजी के भारत छोड़ो आंदोलन का शंखनाद कर दिया।

इस आंदोलन की खासियत ये थी कि इसका नेतृत्व किसी एक व्यक्ति के हाथ में नहीं था। गांधीजी अहिंसक आंदोलन केपक्ष में थे लेकिन अंग्रेजों को भगाने का देशवासियों में ऐसा जुनून पैदा हो गया कि कई जगहों पर बम विस्फोट हुए, सरकारी इमारतों को जला दिया गया, बिजली काट दी गई ओर तो और परिवहन और संचार सेवाओं को भी ध्वस्त कर दिया गया।

इस आंदोलन से अंग्रेज बुरी तरह बौखला गए। उन्होंने सैकड़ों प्रदर्शनकारियों और निर्दोष लोगों को गोली से भून डाला।

एक लाख से अधिक लोगों को देशभर में गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बावजूद आंदोलन पूरे जोश के साथ चलता रहा। जेल में गांधीजी की तबियत बिगड़ गई लेकिन फिर भी उन्होंने अपना आंदोलन जारी रखा और २१ दिन तक भूख हड़ताल की। आखिरकार अंग्रेजों को उन्हें रिहा करना पड़ा।

क्रिप्स मिशन द्वारा कांग्रेस पर असफलता पर असफलता का आरोप लगाए जाने के बाद भारतीयों को अत्यंत निराशा हुई। कांग्रेस को शासन के अयोग्य कहा गया। साम्प्रदायिकता की आड़ लेकर इंग्लैंड की सरकार भारत को स्वतंत्रता प्रदान नहीं करेगी, यह साफ दिखाई देने लगा। लेकिन गांधीजी द्वितीय विश्वयुद्ध में अंग्रेजों को सहायता देने के पक्ष में थे। लेकिन अपने विचारों और नीतियों में परिवर्तन के लिए विवश हो जाने के बाद उन्होंने भारत छोड़ों की अपील की। गांधीजी ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा- अंग्रेजों भारत छोड़ो, भारत भारतीयों के लिए है, व्यवस्थित रूप से छोड़ जाओ। उन्होंने अंग्रेजों को ललकारा-चले जाओ, भारत को भगवान के भरोसे छोड़ दो। गांधीजी का विचार था कि यदि भारत स्वतंत्र हो जाएगा तो उसे जापान से कोई खतरा नहीं रहेगा। क्योंकि जापान की दुश्मनी इंग्लैंड से थी न कि भारत से पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि सभी परंपराएं, छल-कपट जो शासन कार्यों को ढंके रखती है, दूर कर दी जाएं जो केवल एक नग्न शक्ति सत्ता का प्रतीक बन गई। स्मरणीय है कि १४ जुलाई १९४२ को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति में भारत छोड़ो प्रस्ताव पारित किया गया। इसमें कांग्रेसी नेताओं ने भाग लिया। समिति की बैठक ६ अगस्त १९४२ को मुंबई में हुई जिसमें प्रस्ताव ८ अगस्त को पारित कर दिया गया कि भारत में ब्रिटिश शासन का तुरंत अंत होना चाहिए। गांधीजी ने अपने उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा- यह आंदोलन कांग्रेस का अंतिम प्रयास है। ये मांगें सूचना पत्र द्वारा वाइसराय को दे दी गई। गांधीजी अपने विचारों पर इतने दृढ़ थे कि वे इसके लिए अनशन तथा आत्म बलिदान को तैयार थे।

नेताओं की गिरफ्तारियां- ८ अगस्त की रात ३ बजे मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान पर ए.आई.सी.सी. के प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। कांग्रेस के नेताओं को बंदी बना लिया गया जिसमें पंडित जवाहरलाल नेहरू, डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, अरुणा आसफ अली, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, आचार्य जे.बी. कृपलानी, अशोक मेहता, सैयद महमूद, गोविंद वल्लभ पंत, प्रफुल घोष, मोरारजी देसाई, पट्टामिसीतारमैया आदि का समावेश था और कांग्रेस को गैरकानूनी संस्था घोषित किया गया। सुभाषचंद्र बोस जर्मनी चले गए थे। उनके देशप्रेम के बारे में जरा भी शक नहीं था। गांधीजी का प्रभाव सर्वव्यापी था। इतना बड़ा आंदोलन शांतिपूर्ण नहीं चल सकता, यह गांधीजी जानते थे। उन्होंने शुरु में ही स्पष्ट कर दिया था कि गड़बड़ी होने पर भी इस बार संघर्ष से पीछे नहीं हटा जाएगा। भारत की आजादी का आंदोलन विश्व के सभी भागों में साम्राज्यवाद के अंत का मंगलाचरण था।

अगस्त क्रांति की शुरुआत के बाद पूरे देश में दंगे फैल गए, जिसका पूरा आरोप अंग्रेज शासन ने महात्मा गांधी और कांग्रेस पर मढ़ दिया। क्रांति के दौरान ब्रितानी हुकूमत ने ५०० से भी ज्यादा जगहों पर शांतिपूर्ण तरीके से जुलूस निकाल रही निहत्थी जनता पर गोलियां चलाई, जिसमें बहुत से लोग मारे गए और सैकड़ों घायल हुए।

महात्मा गांधी ने ८ अगस्त १९४२ को वायसराय से मुलाकात करने और उसके द्वारा कांग्रेस की मांगें माने जाने की प्रतीक्षा करने की घोषणा की, लेकिन महात्मा गांधी की वायसराय से मुलाकात के पहले ही गांधी समेत सभी अन्य कांग्रेसी नेताओं को नजरबंद कर लिया गया। सरकार के इस कदम के बारे में पता चलते ही जनता क्रोधित हो गई और

इस तरह भारत छोड़ो आंदोलन का आगाज हुआ और पूरे भारत में उपद्रव शुरू हो गए। स आंदोलन में स्कूलों और कॉलेजों के बच्चों तक ने सड़कों पर आंदोलन किए। देश के बड़े बड़े शहरों में जनता सड़कों पर उतर आई। व्यापारियों से लेकर गृहिणियों तक ने जुलूसों में भाग लिया। पूरे भारत में अभूतपूर्व हड़तालें, प्रदर्शन और जुलूस शुरू हो गए, जिनकी शुरुआत खास तौर पर बंबई, पूना और अहमदाबाद से हुई। इसके बाद धीरे धीरे छोटे स्थानों जैसे, रत्नागिरी, शोलापुर, बीजापुर जैसी जगहों पर भी आंदोलन भड़क गया। कोई ऐसा वर्ग नहीं बचा, जो अंग्रेजों की मुखालफत करने घरों से बाहर न निकल आया हो। इस प्रदर्शन का आलम ये था कि मध्यप्रदेश, बिहार, उत्तरप्रदेश और बंबई जैसे कई स्थानों पर प्रदर्शनकारियों ने सरकारी प्रतिष्ठानों, जैसे नगर निगम भवनों, रेल्वे स्टेशनों, पुलिस थानों और डाकखानों पर कब्जा जमा लिया। सरकार जनता के प्रदर्शन को देखते हुए बौखला सी गई। उसने स्थान स्थान पर स्वतंत्रता की मांग कर रही निहत्थी जनता को निशाना बनाना शुरू कर दिया।

गांधीजी का अनशन- कांग्रेस के पास निर्धारित कार्यक्रम नहीं था। गांधीजी ने भारत छोड़ो का नारा दिया था, परंतु जनता को याद रहा करो या मरो। गिरफ्तारी से बचे कांग्रेसियों में जयप्रकाश नारायण, डॉ. राममनोहर लोहिया, अरुणा आसफ अली आदि ने भूमिगत होकर आंदोलन को संचालित किया। इस आंदोलन में १२ सूत्रीय कार्यक्रम थे। संपूर्ण देश में हड़ताल करने, सार्वजनिक सभाएं, नमक बनाने, लगान न देने को कहा गया। ११ अगस्त, १९४२ को मुंबई पुलिस ने जनता पर गोलियां दागीं। जनता ने भारत छोड़ो के नारे लगाएं। सरकारी इमातों, डाकखानों, निगमों के भवनों, रेलवे स्टेशनों पर आक्रमण व आग लगाने के प्रयत्न किए गए। जेलों को तोड़ दिया गया। उत्तर प्रदेश, मद्रास में अस्थायी सरकारों की स्थापना हो गई। सितंबर १९४२ से फरवरी १९४३ तक आंदोलन दबाने के लिए पुलिस ने ५३८ बार गोलियां चलाई, इसमें ६००० व्यक्ति मारे गए, ६०२२९ व्यक्ति गिरफ्तार हुए। गांधीजी ने वाइसराय लार्ड लिनलियगो से कहा कि सरकार की दमन नीति ने जनसाधारण को हिंसा के रास्ते पर अग्रसर किया। १० फरवरी १९४३ से २१ दिन का उपवास गांधीजी ने प्रारंभ किया। गांधीजी की अस्वस्थता को देखते हुए मुस्लिम लीग के नेताओं ने सरकार से अनुरोध किया, तब जाकर उपवास समाप्त हुआ। मुस्लिम लीग ने इस आंदोलन में भाग नहीं लिया क्योंकि मोहम्मद अली जिन्ना का विचार था कि भारत में हिन्दू राज्य स्थापित हो जाएगा। नेहरूजी ने कहा कि आंदोलन अहिंसा न रह पाने के पीछे कारण रहा कि जनता तथा नेताओं के बीच समन्वय न हो सका, परंतु इसे असफल नहीं कहा जा सकता।

भारत के इतिहास में इस आंदोलन का स्वर्णिम अध्याय के रूप में प्रमुख महत्व है। इस आंदोलन ने स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि तैयार कर दी। यह जनता द्वारा किया गया आंदोलन था तथा जनता में नवीन विश्वास जागा। यह प्रत्यक्ष रूप से भारत को एक नई दिशा देने में सफल रहा।

१० अगस्त

श्यामलाल गुप्त पार्षद (निधन- १० अगस्त)

श्यामलाल गुप्त पार्षद भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक सेनानी, पत्रकार, समाजसेवी एवं अध्यापक थे। श्यामलाल गुप्त पार्षद, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उत्प्रेरक झण्डा गीत विजयी विश्व तिरंगा प्यारा के रचयिता थे।

हरिशंकर परसाई (निधन- १० अगस्त)

हरिशंकर परसाई हिंदी के प्रसिद्ध लेखक और व्यंगकार थे। ये हिन्दी के पहले रचनाकार थे, जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाया और उसे हल्के-फुल्के मनोरंजन की परंपरागत परिधि से उबारकर समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। उनकी व्यंग्य रचनाएँ हमारे मन में गुदगुदी ही पैदा नहीं करती, बल्कि हमें उन सामाजिक वास्तविकताओं के आमने-सामने खड़ा करती हैं, जिनसे किसी भी व्यक्ति का अलग रह पाना लगभग असंभव है। लगातार खोखली होती जा रही हमारी सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था में पिसते मध्यमवर्गीय मन की सच्चाइयों को हरिशंकर परसाई ने बहुत ही निकटता से पकड़ा है। सामाजिक पाखंड और रूढ़िवादी जीवनमूल्यों की खिल्ली उड़ाते हुए उन्होंने सदैव विवेक और विज्ञान सम्मत दृष्टि को सकारात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी भाषाशैली में एक खास प्रकार का अपनापन नजर आता है।

विष्णु नारायण भातखंडे (जन्म- १० अगस्त)

पंडित विष्णुनारायण भातखंडे भारत के हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विद्वान व्यक्ति थे। शास्त्रीय संगीत के सबसे बड़े आधुनिक आचार्य के रूप में उनका नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। पूरी तरह से नि:स्वार्थ और समर्पित संगीत साधक भातखंडे ने हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत को वैज्ञानिक पद्धति से व्यवस्थित, वर्गीकृत और मानकीकृत करने का पहला आधुनिक प्रयास किया था। उन्होंने देश भर में घूम-घूमकर उस्तादों से बंदिशें एकत्रित करने, विभिन्न रागों पर उनसे चर्चा करके उनके मानक रूप निर्धारित करने और संगीतशास्त्र के रहस्यों से पर्दा उठाते हुए अनेक विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें लिखने का महत्वपूर्ण कार्य किया था।

१० अगस्त, १८८० को हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विद्वान पंडित विष्णुनारायण भातखंडे का जन्म बालकेश्वर, मुंबई में हुआ था। उन्होंने हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत को वैज्ञानिक पद्धति से व्यवस्थित, वर्गीकृत और मानकीकृत करने का पहला आधुनिक प्रयास किया था। उन्होंने देशभर में भ्रमण कर उस्तादों से बंदिशें एकत्रित कीं व विभिन्न रागों पर चर्चा कर उनके मानक रूप निर्धारित किये। उन्होंने शास्त्रीय ज्ञान के लिए हिंदुस्तानी संगीत पद्धति के चार भाग मराठी भाषा में लिखे। यह हिंदी में भातखंडे संगीत शास्त्र के नाम से छपी। उनके ही प्रयत्नों से देश में कई संगीत विद्यालयों की स्थापना हुई। १९ सितंबर, १९३६ को उनका निधन हो गया।

वी.वी. गिरि (जन्म- १० अगस्त)

वाराहगिरि वेंकट गिरि भारत के चौथे राष्ट्रपति थे। भारत रत्न से सम्मानित वी.वी. गिरि भारत के कार्यवाहक राष्ट्रपति (कार्यकाल- ३ मई, १९६९-२० जुलाई, १९६९) के अतिरिक्त उपराष्ट्रपति (कार्यकाल- १३ मई, १९६७- ३ मई,

१९६९) उत्तर प्रदेश के राज्यपाल (कार्यकाल- १० जून, १९५६, ३० जून, १९६०) केरल के राज्यपपाल (कार्यकाल- १ जुलाई, १९६०- २ अपैल, १९६५) और कर्नाटक के राज्यपाल (कार्यकाल- २ अप्रैल, १९६५- १३ मई, १९६७) भी रहे। उनका निधन २३ जून को हुआ।

आजादी आंदोलन का आधार बनाया सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने

देश के आजादी के आंदोलन के लिए सशक्त आधार तैयार करनेवाले लोगों में से एक सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने नरमपंथी नेता के रूप में सदैव ब्रिटिश शासन का मुखर विरोध किया और देशवासियों के हितों को आगे बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहे। देश में १९०० के शुरुआती दशकों में कांग्रेस में बनर्जी, गोपालकृष्ण गोखले जैसे नेताओं का बोलबाला था। इनके विचारों और आजादी पाने के तौर-तरीकों से आज कई लोग भले ही सहमत न हो लेकिन इन नेताओं ने आजादी के आंदोलन को तेज करने के लिए एक सशक्त जमीन तैयार की।

वह अपने विचारों पर कायम रहनेवाले नेता थे। इनके इस रूख को ब्रिटेन के राजनीतिज्ञों की टिप्पणी से समझ सकते हैं जिसमें वे बनर्जी को प्राय: सरेंडर नाट बनर्जी (अपने पक्ष से नहीं झुकनेवाला व्यक्ति) कहकर पुकारते थे। इतिहासकार आलोक कुमार के अनुसार सुरेंद्र नाथ बनर्जी ने इंडियन नेशनल एसोसिएशन की स्थापना की जो अंग्रेजी शासन में शुरुआती राजनीतिक संगठनों में से एक था।

बाद में वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़े उसे और उसके प्रमुख नेताओं में से एक थे। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी सहित ये प्रमुख नरमपंथी नेता व्यवस्था के भीतर रहकर बदलाव चाहते थे। हालांकि इसका यह मतलब नहीं है कि वह बदलाव के समर्थक नहीं थे। उन्होंने हमेशा भारतवासियों के हितों के लिए कानून में बदलाव की मांग उठाई थी। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी का कांग्रेस पर काफी प्रभाव था और वह १८९४ तथा १९०४ में कांग्रेस के अध्यक्ष भी रहे। बनर्जी सहित नरमपंथी नेताओं का तिलक के नेतृत्ववाले गरमपंथी नेताओं से इसी बात को लेकर मतभेद था क्योंकि वे (गरमपंथी) व्यवस्था में परिवर्तन चाहते थे और देशवासियों को शासन का अधिकार दिलाना चाहते थे। बनर्जी का जन्म १० अगस्त १८४८ को कलकत्ता में एक संपन्न परिवार में हुआ था। स्नातक करने के बाद वह इंडियन सिविल सर्विसेज (आईसीएस) की परीक्षा में भाग लेने के लिए लंदन गए। उन्होंने परीक्षा पास भी कर ली लेकिन उनकी वास्तविक आयु को लेकर विवाद उत्पन्न हो गया। बाद में एक अदालती फैसले में उनके पक्ष को सही ठहराया गया। बनर्जी ने बाद में फिर यह परीक्षा उत्तीर्ण की और वह सिलहट में सहायक मजिस्ट्रेट बनाए गए।

ब्रिटिश शासन के बाद में उन पर नस्ली भेदभाव का आरोप लगा कर उन्हें सरकारी नौकरी से हटा दिया। सरकार के इस फैसले का उन्होंने इंग्लैंड जाकर विरोध किया, लेकिन उसका कोई नतीजा नहीं निकला। बाद में वह देश में लौटकर अंग्रेजी के प्राध्यापक बन गए। उन्होंने द बंगाली नामक समाचार पत्र शुरू किया और १८७६ में अपनी तरह के पहले राजनीतिक संगठन इंडियन नेशनल एसोसिएशन की स्थापना की, इसी के साथ उन्होंने ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा किए जाने वाले नस्ल भेद के खिलाफ घूम-घूमकर सार्वजनिक भाषण देने शुरू कर दिए। ब्रिटिश सरकार और अदालतों के खिलाफ भाषण देने के कारण बनर्जी की गिरफ्तारी की गई जिसका देशभर में विरोध हुआ। कांग्रेस की स्थापना होने के बाद बनर्जी ने अपने संगठन का उसमें विलय कर दिया। उन्होंने १९०५ के बंगाल विभाजन का जमकर विरोध किया। अपने राजनीतिक जीव के अंतिम दौर में १९०९ के मोंटे मलों सुधारों को स्वीकार करने जैसे कुछ निर्णयों के कारण

नरमपंथी धड़े की लोकप्रियता कुछ कम हुई। वह १९२३ में बंगाल विधानसभा का चुनाव भी हार गए। बनर्जी को ब्रिटिश राजनीतिज्ञ प्राय: सरेंडर नाट बनर्जी (अपने पक्ष से नहीं झुकनेवाला व्यक्ति) कहकर पुकारते थे। उनकी लिखी पुस्तक ए नेशन इन मेकिंग काफी चर्चित हुई।

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी प्रसिद्ध स्वाधीनता सेनानी थे, जो कांग्रेस के दो बार अध्यक्ष चुने गए। उन्हें १९०५ का बंगाल का निर्माता भी जाता है। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय समिति की स्थापना की, जो प्रारंभिक दौर के भारतीय राजनीतिक संगठनों में से एक था और बाद में वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता बन गए। उनका निधन ६ अगस्त १९२३ में हुआ।

११ अगस्त

खुदीराम बोस (शहीद- ११ अगस्त)

खुदीराम बोस भारतीय स्वाधीनता के लिये मात्र १९ साल की उम्र में हिंदुस्तान की आजादी के लिये फाँसी पर चढ़ गये। भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास क्रांतिकारियों के सैकड़ों साहसिक कारनामों से भरा पड़ा है। ऐसे ही क्रांतिकारियों की सूची में एक नाम खुदीराम बोस का है।

१२ अगस्त

भगवतशरण उपाध्याय (निधन- १२ अगस्त)

भगवतशरण उपाध्याय भारतविदू के रूप में देशी-विदेशी अनेक महत्वपूर्ण संस्थाओं से सक्रिय रूप से संबद्ध रहे तथा अंतराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय मनीषा का प्रतिनिधित्व किया। जीवन के अंतिम समय में वे मॉरिशस में भारत के राजदूत थे। भगवतशरण उपाध्याय का व्यक्तित्व एक पुरातत्वज्ञ, इतिहासवेत्ता, संस्कृति मर्मज्ञ, विचारक, निबंधकार, आलोचक और कथाकार के रूप में जाना-माना जाता है। वे बहुज्ञ और विशेषज्ञ दोनों एक साथ थे। उनकी आलोचना सामाजिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों के समन्वय की विशिष्टता के कारण महत्वपूर्ण मानी जाती है। संस्कृति की सामासिकता को उन्होंने अपने ऐतिहासिक ज्ञान लारा विशिष्ट अर्थ दिए हैं।

तेजी बच्चन (जन्म- १२ अगस्त)

तेजी बच्चन प्रसिद्ध साहित्यकार हरिवंश राय बच्चन की पत्नी और भारतीय सिनेमा के महानायक अमिताभ बच्चन की मां थी। तेजी एक अभिनेत्री भी थीं। वे कॉलेज के दिनों में नाटकों में भाग लेती थी। तेजी बच्चन अच्छी गायिका भी थीं और उन्होंने कई बार मंच पर अपनी कला का जौहर भी दिखाया था। यही नही विवाह के बाद भी वे इलाहाबाद और दिल्ली में कई बार मंचों पर अभिनय के लिए उतरी थी। हरिवंश राय बच्चन ने शेक्सपीयर के कई नाटकों का अनुवाद किया था और तेजी बच्चन ने कई नाटकों में अभिनय भी किया। इनका जन्म एक सिक्ख परिवार में हुआ था। तेजी बच्चन हनुमानजी की परम भक्त थीं। उन्हें अभिनय और गायिकी का भी शौक था। सदी के महानायक अमिताभ बच्चन में अभिनय के गुण अपनी माता तेजी बच्चन से ही आये थे। अपने समय में कवि हरिवंश राय बच्चन और तेजी बच्चन की जोड़ी भारत की चर्चित और लोकप्रिय जोड़ी मानी जाती थी। २००४ से तेजी बच्चन का अधिकतर समय बीमारी की वजह से अस्पताल में व्यतीत हुआ और दिसम्बर, २००७ में उनका निधन हो गया।

विक्रम साराभाई (जन्म- १२ अगस्त)

विक्रम साराभाई को भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम का जनक माना जाता है। इनका पूरा नाम डॉ. विक्रम अंबालाल साराभाई था। इन्होंने भारत को अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में नई ऊँचाइयों पर पहुंचाया और अंतर्राष्ट्रीय मानचित्र पर देश की उपस्थिति दर्ज करा दी। विक्रम साराभाई ने अन्य क्षेत्रों में भी समान रूप से पुरोगामी योगदान दिया। वे अंत तक वस्त्र, औषधीय, परमाणु ऊर्जा, इलेक्ट्रॉनिक्स और कई अन्य क्षेत्रों में लगातार काम करते रहे थे। डॉ. साराभाई एक रचनात्मक वैज्ञानिक, एक सफल और भविष्यद्दष्टा उद्योगपति, सर्वोच्च स्तर के प्रवर्तक, एक महान संस्थान निर्माता, एक भिन्न प्रकार के शिक्षाविद, कला के पारखी, सामाजिक परिवर्तन के उद्यमी, एक अग्रणी प्रबंधन शिक्षक तथा और बहुयामी व्यक्तित्व के व्यक्ति थे। उनका निधन ३० दिसंबर को हुआ। ,

भारतीय अंतरिक्ष के जनक डॉ. विक्रम साराभाई

डॉ. विक्रम अंबालाल साराभाई को भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का जनक माना जाता है। उन्होंने विविध क्षेत्रों में अनेक

संस्थाओं की स्थापना की या स्थापना में मदद की। कैम्ब्रिज से १९४७ में आजाद भारत में वापसी के बाद उन्होंने अपने परिवार और अपने मित्रों के सहयोग से ११ नवंबर, १९४७ को अहमदाबाद (पीआरएल) की स्थापना की। उस समय उनकी उम्र केवल २८ वर्ष थी। विक्रम साराभाई ने १९६६-१९७१ तक पीआरएल की सेवा की। वे परमानु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष भी थे।

अहमदाबाद में अन्य उद्योगपतियों के साथ मिलकर इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसके अलावा भी देश भर में कई महत्वपूर्ण शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना में उनकी अहम भूमिका रही। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) की स्थापना उनकी महान उपलब्धियों में एक थी। रूसी स्पुतनिक के प्रमोचर के बाद उन्होंने भारत जैसे विकासशील देश के लिए अंतरिक्ष कार्यक्रम के महत्व के बारे में सरकार को राजी किया। भारतीय परमाणु विज्ञान कार्यक्रम के जनक माने जानेवाले डॉ. होमी जहांगीर भाभा ने भारत में प्रथम राकेट प्रमोचन केन्द्र की स्थापना में डॉ. साराभाई का समर्थन किया। यह केन्द्र मुख्यत: अरब महासागर के तट पर तिरुवनंतपुरम के निकट थुम्बा में स्थापित किया गया।

१९६६ में नासा के साथ डॉ. साराभाई के संवाद के परिणामस्वरूप ही जुलाई, १९७६ के दौरान उपग्रह अनुदेशात्मक दूरदर्शन परीक्षण (एसआईटीइ) का प्रमोचन किया गया। डॉ. साराभाई ने भारतीय उपग्रहों के सविरचन और प्रमोचन के लिए परियोजना प्रारंभ की परिणामस्वरूप, प्रथम भारतीय उपग्रह, आर्यभट्ट, रूसी कॉस्मोड्रोम से १९७५ में कक्षा में स्थापित किया गया। डॉ. साराभाई को विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में १९६६ में भारत सरकार द्वारा पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था।

अहमदाबाद में एक समृद्ध परिवार में जन्मे डॉ. साराभाई शुरुआत से ही विज्ञान की शिक्षा में अत्याधिक दिलचस्पी रखते थे। गुजरात कॉलेज से इंटरमीडियट तक विज्ञान की शिक्षा पूरी करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए १९३७ में कैम्ब्रिज चले गये। वहां १९४० में प्राकृतिक विज्ञान में ट्राइपोज डिग्री प्राप्त की। द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने पर वे भारत लौट आये और बंगलौर स्थित भारतीय विज्ञान संस्थान में नौकरी करने लगे।

१३ अगस्त

भीकाजी कामा (निधन- १३ अगस्त)

भीकाजी रुस्तम कामा अथवा मैडम कामा का नाम क्रांतिकारी आंदोलन में विशेष उल्लेखनीय है, जिन्होंने विदेश में रहकर भी भारतीय क्रांतिकारियों की भरपूर मदद की थी। उनके ओजस्वी लेख और भाषण क्रांतिकारियों के लिए अत्यधिक प्रेरणा स्रोत बने। भीकाजी रुस्तम कामा भारतीय मूल की फ्रांसीसी नागरिक थीं जिन्होंने लंदन, जर्मनी तथा अमेरिका का भ्रमण कर भारत की स्वतंत्रता के पक्ष में माहौल बनाया। वे जर्मनी के स्टटगार्ट नगर में २२ अगस्त १९०७ में हुई सातवीं अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस में तिरंगा फहराने के लिए सुविख्यात हैं। उस समय तिरंगा वैसा नहीं था जैसा वर्तमान में है। ये मैडम कामा के नाम से प्रसिद्ध हैं।

रमेश चन्द्र दत्त (जन्म- १३ अगस्त)

रमेश चन्द्र दत्त अंग्रेजी और बंगला भाषा के प्रसिद्ध लेखक थे। वे धन के बहिर्गमन की विचारधारा के प्रवर्तक तथा महान शिक्षाशास्त्री थे। १८९९ ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन की अध्यक्षता इन्होंने की थी। इनकी रचनाओं में ब्रिटिश भारत का आर्थिक इतिहास, विक्टोरिया युग में भारत और प्राचीन भारतीय सभ्यता का इतिहास आदि शामिल हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में रमेश चन्द्र दत्त को विशेष ख्याति प्राप्त हुई थी।

गंगाप्रसाद वर्मा (जन्म- १३ अगस्त)

गंगाप्रसाद वर्मा १८८५ में कांग्रेस के प्रथम स्थापना अधिवेशन मुम्बई में उत्तर प्रदेश से भाग लेनेवाले मुख्य प्रतिनिधि थे। गंगाप्रसाद वर्मा आधुनिक लखनऊ नगर के निर्माता माने जाते हैं। शहर का वर्तमान रूप उन्हीं की देन है। उन्होंने नगर में २८ सड़कों का निर्माण करवाया और जल व मल निकासी की योजनाओं के लिए अन्य नगरों को भी परामर्श दिया। वे आर्यसमाज और होमरूल लीग से भी जुड़े थे। इलाहाबाद और काशी हिन्दु विश्वविद्यालय से भी उनका निकट का सम्बन्ध था। मालवीय जी, लाला लाजपत राय, एनी बेसेंट आदि से भी वे प्रभावित थे। उन्होंने १८८३ में एडवोकेट नामक द्वि-साप्ताहिक पत्र का सम्पादन करके अपना सार्वजनिक जीवन प्रारम्भ किया। फिर उर्दू में हिन्दुस्तानी निकाला। उनके निमंत्रण पर ही १८९२ में कांग्रेस का अधिवेशन इलाहाबाद में हुआ था। प्रदेश में कांग्रेस की स्थापना का श्रेय भी उन्हीं को है।

१४ अगस्त

कुलदीप नैयर (जन्म- १४ अगस्त)

कुलदीप नैयर भारत के प्रसिद्ध लेखक एवं पत्रकार है। भारत सरकार के प्रेस सूचना अधिकारी के पद पर कई वर्षों तक कार्य करने के बाद यू.एन.आई., पी.आई.बी. द स्टैट्समैन इण्डियन एक्सप्रेस के साथ लम्बे समय तक जुड़े रहे। कुलदीप नैयर २५ वर्षों तक द टाइम्स लन्दन के संवाददाता भी रहे।

खाशाबा जाधव (निधन- १४ अगस्त)

खाशाबा दादासाहेब जाधव भारत के प्रसिद्ध कुश्ती खिलाड़ी थे। वे पहले भारतीय खिलाड़ी थे, जिन्होंने सन १९५२ में हेलसिकी ओलम्पिक, फिनलैण्ड में देश के लिए कुश्ती की व्यक्तिगत स्पर्धा में सबसे पहले कांस्य पदक जीता था। वैसे तो १९५२ के हेलसिंकी ओलम्पिक में भारतीय हॉकी टीम ने फिर से स्वर्ण पदक हासिल किया था, लेकिन चर्चा सोने से अधिक उस कांस्य पदक की होती है, जिसे पहलवान खाशाबा जाधव ने जीता था। खाशाबा को पॉकेट डायनमो के नाम से भी जाना जाता है।

१५ अगस्त

शहादत भूलती पीढ़ी

आज के युवाओं की आजादी की परिषाभा अलग है। किसी के लिए आजादी के मायने भ्रष्टाचार से मुक्ति, किसी के लिए अपराध से मुक्ति तो किसी के लिए आजादी का मतलब बंधनों से मुक्ति है। आजादी का एक ही मतलब है राजनीतिक स्वतंत्रता, भ्रष्टाचारमुक्त राजनीति।

आजादी का जश्न मनाते हुए हमें कई वर्ष बीत गए। इतने वर्षों में भारत विश्व में प्रगतिशील देश बनकर विश्व पटल पर उभरा हैं। देश को प्रगति की राह में देखना हर भारतवासी की अभिलाषा रहती हैं। इस देश में रहनेवाले सभी लोगों से कि वह भाईचारे और अपनी आजादी को बचाए रखे व देश को फिर से गुलामी की जंजीरों में न धकेले। जो हमें पूर्ण आजादी मिली उसका मतलब तो यही है भारत के कोने कोने तक लोगों तक विकास की योजनाओं का पूरा लाभ मिले व उन्हें सरलता से अपने जीवन का निर्वाह करने के लिए रोटी कपड़ा, मकान मिल सके तभी यह आजादी पूर्ण कहलाई।

शहीदों की जाति बताने में कौन सा तुक

शहीद समूचे राष्ट्र के होते हैं, उन्हें किसी जाति, धर्म, भाषा या क्षेत्र की संकीर्णता में नहीं बाधा जा सकता। इसे टुच्चापन ही कहा जाएगा कि शहीदे आजम भगतसिंह तथा उनके साथी सुखदेव और राजगुरु की जाति का जानबूझकर उल्लेख किया गया।

भारत में स्वाधीनता संघर्ष करने के लिए कनाडा से अपने साथियों के साथ जापानी जहाज कामागाटामारू किराये से लेकर आए गदर पार्टी के नेता बाबा पृथ्वीसिंह आजाद के बारे में आज कितने लोग जानते हैं। क्रांतिकारी श्यामजी कृष्ण वर्मा, वीर सावरकर, खुदीराम बोस, जतिन्द्रनाथ दास, चंद्रशेखर आजाद, अशफाक उल्ला, रामप्रसाद बिस्मिल, बटुकेश्वर दत्त, सचिन्द्रनाथ लाहिड़ी को भी विस्मृत कर दिया गया। नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद फौज का उल्लेख भी नजरअंदाज कर दिया गया जो लड़ते लड़ते इम्फाल तक चली आई थी। इधर आजाद हिंद फौज का आना और उधर मुंबई में नौसेना की बगावत ने भी अंग्रेजों के लिए खतरे की घंटी बजा दी थी। १९४२ में बापू का करो या मरो आंदोलन अहिंसक नहीं रह गया था। अंग्रेज जाते जाते भारत का विभाजन कर गए। आजादी मिली लेकिन देश को तोड़कर और विभाजन के घावों के साथ। कांग्रेस चयनात्मक ढंग से इतिहास पेश कर क्रांतिकारियों की भूमिका नजरअंदाज करती आई है और अब तो उसने जातिगत उल्लेख कर शहीदों का अपमान भी कर दिया। जालियांवाला बाग हत्याकांड का बदला लेने के लिए लंदन में भरी सभा में जनरल माइकल ओ डायर को गोली मारनेवाले शहीद उधमसिंह को भुला दिया गया। उनके परिवारजन जूठे बर्तन धोकर और मेहनत मजदूरी कर गुजर बसर कर रहे हैं। शहादत को भूलने का ही नतीजा है कि देश में राष्ट्रीय चरित्र का पतन होकर व्यापक भ्रष्टाचार व्याप्त हो गया है।

१४ अगस्त १९४७ की यादगार रात

उस रात जब दिल्ली में स्वतंत्रता का जश्न मनाने की तैयारी जारी थी, तब महात्मा गांधी नोवाखाली में चरखा कात रहे थे।

१४ अगस्त १९४७ जिसकी रात में ब्रिटिश ध्वज हटाकर तिरंगा फहराया गया था और देश आजाद हुआ था। पूरे देश

में सुबह से प्रभात फेरियां निकलनी शुरू हो गई थीं। दिल्ली में १७ १७ यार्क रोड पर एक बंगले में साधु संतों ने नये भारत की समृद्धि के लिए यज्ञ किया था। यह जवाहर लाल नेहरू का बंगला था, जो बाद में तीनमूर्ति भवन के नाम से जाना गया। नेहरू जी ने यज्ञ में हिस्सा लिया। धर्म में ज्यादा विश्वास नहीं करनेवाले नेहरू जी ने भी इन लोगों की आस्था में विश्वास किया। सैनिक छावनियों में भी जलसे का माहौल था।

अंग्रेजों की राजधानी रहे कोलकाता के विलियम फोर्ट, मद्रास के जार्ज सेंट फोर्ट, शिमला के वायस रिगल लॉज, कश्मीर, नागालैंड और सिक्किम में ब्रिटिश झंडा यूनियन जैक दिन में ही उतार लिया गया था। माउंटबेटन ने आदेश दिया था कि झंडा उतारने का कोई समारोह नहीं होगा। यूनियन जैक वैसे भी हर शाम उतारा जाता था, पर १४ अगस्त को उतरा, तो दोबारा नहीं चढ़ा। उधर, दिल्ली में नेहरूजी रात दस बजे नहा धोकर तैयार हो गये थे। उसी समय फोन आया और फोन लाइन इतनी खराब थी कि नेहरूजी को बरामदे में चिल्लाकर बात करते देखा गया। इंदिरा गांधी वहां मौजूद थीं और उन्होंने देखा कि फोन सुनने के बाद नेहरूजी एक कुर्सी पर बैठ गये और माथा पकड़ लिया। नेहरूजी ने फोन पर जो सुना था, वह आजाद भारत में हुए सबसे बड़े कत्लेआम की पहली खबर थी।

दूसरी ओर, नई दिल्ली में डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद के बंगले में भी यज्ञ हो रहा था। वहां वे लोग मौजूद थे, जिन्हें भारत की पहली सरकार में मंत्री बनाना था। यज्ञ के बाद ये सब संविधान सभा यानी वर्तमान संसद के केंद्रीय कक्ष में चले गये। फिर जब आधी रात नेहरूजी बोलने के लिए खड़े हुए, तो दिन भर की घटनाओं के कारण उनका गला भरा था। उन्होंने जो भाषण दिया, वह इतिहास में तो दर्ज हो गया, पर वह सिर्फ नेहरूजी जानते थे कि वे कलेजे पर पत्थर रखकर बोल रहे हैं। कम लोग जानते हैं कि इस मौके पर इंदिरा गांधी भी बोली थीं और यह भी कि उस समय भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महानायक महात्मा गांधी बंगाल के नोवाखाली गांव में चरखा चला रहे थे।

पूरा देश १५ अगस्त १९४७ को जब आजादी का जश्न मना रहा था, उस समय एक शख्स ऐसा भी था जो ब्रिटिश शासन की गुलामी से मुक्ति के इस महोत्सव में शामिल नहीं था। वह बड़ी खामोशी से राजधानी दिल्ली से हजारों किलोमीटर दूर कलकत्ता में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच शांति और सौहार्द्र महात्मा गांधी थे, जिन्होंने आजादी के दिना को अनशन करके मनाने का फैसला किया। आजादी से कुछ सप्ताह पहले की बात है। पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभभाई पटेल ने कलकत्ता में गांधी जी के पास अपना दूत भेजा, जो आधी रात वहां पहुंचा।

उसने गांधी जी से कहा कि वह पंडित नेहरू और सरदार पटेल का एक महत्वपूर्ण पत्र लाया है। उसमें लिखा था- बापू आप राष्ट्रपिता हैं। १५ अगस्त १९४७ पहला स्वाधीनता दिवस होगा। हम चाहते हैं कि आप दिल्ली आकर हमें आशीर्वाद दें। पत्र पढ़ने के बाद महात्मा गांधी ने कहा कितनी मूर्खतापूर्ण बात है। बंगाल जल रहा है। हिन्दू और मुस्लिम एक दूसरे की हत्याएं कर रहे हैं और मैं कलकत्ता के अंधकार में उनकी मर्मान्तक चीखें सुन रहा हूं, तब मैं कैसे दिल में रोशनी लेकर दिल्ली जा सकता हूं। बंगाल में शांति कायम करने के लिए मुझे यहीं रहना होगा और जरूरत पड़े तो सौहार्द्र और शांति के लिए जान भी देनी होगी। गांधी जी उस दूत को विदा करने बाहर निकले। वह एक पेड़ के नीचे थे, तभी एक सूखा पत्ता टूटकर गिरा। गांधीजी ने उसे उठाया और अपनी हथेली पर रखकर कहा, मित्र तुम दिल्ली लौट रहे हो, पं. नेहरू और पटेल को गांधी क्या उपहार दे सकता है। मेरे पास न सत्ता है और न संपत्ति। पहले स्वतंत्रता दिवस पर मेरे उपहार के रूप में यह सूखा पत्ता उन्हें दे देना। जब वह यह बात कर रहे थे, दूत की आंखें सजल हो गईं। गांधी जी बोले भगवान् कितना दयालु

है। वह नहीं चाहता कि गांधी सूखा पत्ता भेजें। इसलिए उसने इसे गीला कर दिया। यह खुशी से दमक रहा है। अपने आंसुओं से भीगे इस पत्ते को उपहार के रूप में ले जाओ।

१४ अगस्त १९४७ की मध्यरात्रि ही तो थी जब पंडित नेहरू ले लालकिले पर पहली बार तिरंगा फहराया था। १५ अगस्त की सुबह जब देशवासियों ने सूर्य के दर्शन किए तो वह आजादी की पहली सुबह की पहली किरण के दर्शन ही थे। १४ अगस्त १९४७ की वह जोशीली रात आज भी हमारे बुजुर्गों के जेहन में दफन है। २१वीं सदी में जन्मे उन करोड़ों युवाओं को कहां पता है कि कितनी लंबी लड़ाई के बाद भारत को अंग्रेजी राज से मुक्ति मिली थी। बड़ी आसानी से हम असंख्य वीर जवानों और देशभक्तों की उस शहादत को भूल गए जिनके त्याग, बलिदान की बदौलत ही हमें आजादी नसीब हो पायी। आजादी का वह पावन राष्ट्रीय पर्व बुढ़ाती आंखों की रोशनी की तरह धुंधलाता जा रहा है। न खुशी रही, न मनानेवाले आज हमारे पास हैं। आजादी के वे सभी नारें, वे सभी गीत, वे सभी उद्घोष अब सुनाई ही नहीं देते। स्वतंत्रता दिवस को राजनेताओं ने महज सरकारी दिवस बनाकर रख दिया है। राजधानी दिल्ली में लालकिले पर प्रधानमंत्री जी तिरंगा फहराते हैं। स्कूल, कॉलेज भी स्वतंत्रता दिवस पर सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करते हैं। संस्थान प्रमुख तिरंगा फहराते हैं। शासकीय, गैर-शासकीय निजी संस्थानों में भी तिरंगा फहराया जाता है। एक छोटे से कार्यक्रम के बाद समूचा राष्ट्र राष्ट्रीय पर्व पर घोषित सरकारी अवकाश का लुत्फ उठाता है। सत्तर के दशक तक गांव की गलियों से शहरों की सड़कों पर १५ अगस्त की शुभ बेला पर सुबह प्रभातफेरी निकला करती थी। छोड़े बड़े सभी के हाथों में तिरंगा हुआ करता था। गली, मोहल्ले सभी भारतमाता की जय, गांधी जी की जय, इंकलाब जिन्दाबाद के नारों से गूंज उठते थे। जिन स्वतंत्रता सेनानियों ने हमें एक बंधन में बांधे रखने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी, हमें वही अनेकता में एकता का सिद्धांत अब याद नहीं रहा है। काश, हमारे राजनेता भूलती पीढ़ी को शहादत याद दिलाने हेतु रचनात्मक आंदोलन शुरू करते, कुछ नये उदाहरण प्रस्तुत करते तो हालात इतने बिगड़े हुए कतई नजर नहीं आते। राष्ट्रधर्म पर्व के रूप में पूरे देश में स्वतंत्रता दिवस की वर्षगांठ मनायी जानी चाहिए। आज हमारे पास न तो साधनों का अभाव है और न ही संसाधनों की कमी है। सभी स्कूल, कॉलेज यदि चाहें तो अपने-अपने संस्थान के सदन में टीवी स्क्रीन पर राजधानी दिल्ली की स्वतंत्रता दिवस समारोह का सीधा प्रसार प्रसारित कर जनसंचेतना प्रवाहित करने का कार्य कर सकते हैं। चूंकि स्कूली बच्चे स्कूल से जब घर लौटते हैं तो राजधानी दिल्ली के स्वतंत्रता दिवस समारोह का समापन हो चुका होता है। स्कूली बच्चों को स्वतंत्रता संग्राम की वे सभी झलकियां स्कूलों में संगणक द्वारा दिखाई जानी चाहिए। वैसे भी ३६५ दिन में मात्र २०० से २२० दिन ही स्कूल चलते हैं। छुट्टियों की भरमार है और छुट्टियां दिनों दिन बढ़ती जा रही हैं। त्योहारों की सर्वाधिक संख्या हमारे देश में ही है। दुर्भाग्य यह है कि राष्ट्रीय पर्व के दौरान भी विद्यार्थियों की शत प्रतिशत उपस्थिति दर्ज नहीं हो पाती। कॉलेज में तो हालात और भी बुरे हैं। हमारी घटिया सोच का दुष्परिणाम ही है कि आजादी मिले ७० वर्ष बीत जाने के बाद भी आधी से अधिक आबादी को यह नहीं पता है कि गणतंत्र दिवस और स्वतंत्रता दिवस में क्या फर्क है। देश का प्रथम प्रधानमंत्री कौन था और प्रथम राष्ट्रपति कौन था, प्रश्न के जवाब में उठनेवाले असंख्य हाथ महात्मा गांधी को प्रथम प्रधानमंत्री और प्रथम राष्ट्रपति बताते हुए नहीं लजाते। इतिहास एवं भूगोल का ज्ञान शायद अभिभावक भी जरूरी नहीं मानते। तभी तो गणित, विज्ञान और इंग्लिश की पढ़ाई को ही सभी सहमति प्रदान करते हैं। ऐसे हालात यही

दर्शाते हैं कि हमारी अपनी जनता को अपनी महान सभ्यता एवं संस्कृति के संदर्भ में बहुत अधिक जानने की उत्सुकता नहीं है।

हम आजाद हैं या गुलाम?

अंग्रेजों की राजनीतिक गुलामी से स्वतंत्र हुए हमें अर्द्ध शताब्दी से अधिक समय हो गया है, लेकिन हम आज भी मानसिक गुलामी में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यह ज्ञातव्य है कि राजनीतिक गुलामी से मानसिक गुलामी भयंकर होती है। यह मानसिक गुलामी है- अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य सभ्यता की। भारत में अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है और उनसे यदि अंग्रेजी बोलने की आशा की जाये तो? युवा जहां कहीं भी रोजगार प्राप्ति हेतु शहर में जाते हैं तो अपने आप को हीन समझते हैं। इसका कारण यही है कि उन्हें अंग्रेजी बोलना नहीं आता और हीन भावना विकास के लिए सदैव घातक होती है। यदि उच्च अध्ययन के पाठ्यक्रम पर भी नजर डाली जाए तो स्पष्ट होता है कि हिन्दी माध्यम वाले विद्यार्थियों को (विशेषकर विज्ञान वर्ग) भी विवश होकर अंग्रेजी माध्यमवाली पुस्तकें पढ़नी पड़ती है। अधिकांश विद्यार्थी माध्यमिक या उच्च माध्यमिक परीक्षा में अंग्रेजी की अनिवार्यता के कारण सम्मिलित नहीं होते। फलत: उनका जीवन अन्धकारमय हो जाता है। आखिर स्वतंत्र लोकतंत्र शासित भारत में कैसी अनिवार्यता? वस्तुत: इस शिक्षा का श्रेय मैकाले को है। उन्होंने भारत में यह शिक्षा पद्धति लागू करने से पहले कहा था कि हम भारत को छोड़कर जाने से पहले यहां पर ऐसी शिक्षा पद्धति विकसित करेंगे कि ये लोग अपनी ही संस्कृति से घृणा करेंगे। राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हुए भी हमारी मानसिक गुलामी तो सहेंगे ही। आज की युवा पीढ़ी उक्त कथन का शत प्रतिशत अनुसरण कर रही है। उन्हें अपनी ही संस्कृति से घृणा हो रही है। माता-पिता और गुरु का सम्मान करने की बजाय उनसे कलह करते हैं और उन्हें अपमानित करने की कोशिश करते हैं। कोई भी भारतीय पारम्परिक पोशाक पहनना पसन्द नहीं करता। इस शिक्षा पद्धति में जो रट कर डिग्रियों का अम्बार लाग लेता है, वही व्यक्ति सर्वोच्च माना जाता है। यह हमारी गुलामी की मानसिकता का ही प्रतीक है कि कोई भी अंग्रेजी शिक्षित व्यक्ति हिन्दी में बातचीत करना पसन्द नहीं करता। यदि कोई व्यक्ति या राजनेता अपने वक्तव्य में आधे से अधिक अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग नहीं करेगा तो वह स्वयं भी अपने आपको ऊंचा महसूस नहीं करेगा। आखिर हम कब तक यह मानसिक गुलामी सहते रहेंगे? क्या हम अपनी भाषा का उपयोग नहीं कर सकते? क्या हमें अपनी संस्कृति गर्व के साथ नहीं अपनानी चाहिए? क्या कमी है हमारी संस्कृति में?

भ्रष्टाचार से कैसे आजाद होगा भारतवर्ष

जवाहर लाल नेहरू ने अपनी किताब-लड़खड़ाती दुनिया में लिखा है- आजादी के बाद, इन जमींदारों और सामंतों को सड़कों पर गड़े लैम्प पोस्टों में लटका कर मृत्युदंड दिया जायेगा। इन सामंतों, राजाओं, महाराजाओं, जमींदारों के विरुद्ध उनका ऐसा आक्रोश इसीलिए था क्योंकि ये लोग आजादी की लड़ाई के दिनों में अंग्रेजों के सहयोगी और समर्थक थे। इसीलिए नेहरू की नजर में ये सब देशद्रोहीं थे। आज भ्रष्टाचार के जो गड़े मुर्दे उखड़ते हैं, उनकी दुर्गंध से भारत का राजनीतिक पर्यावरण इतना प्रदूषित हो गया है कि आज नेता देश के बड़े बड़े नौकरशाहों द्वारा किये जा रहे भ्रष्टाचार राजद्रोह के अपराध की सीमा में आ जाये और इन भ्रष्टाचारियों को राजद्रोहियों की तरह सजा मिले। जब तक कानून कड़े नहीं होंगे और उन्हें कठोरता से लागू नहीं किया जायेगा, भ्रष्टाचार की सुरसा मुंह फैलाए भारत की संपत्तियों को निगलती रहेगी। जब भी कोई घोटाला या मामला सामने आता है, उसमें अरबों-खरबों का घपला होता है। एक तरफ कर्ज के बोझ

में दबे किसान फांसी लगाने लगे हैं, पेट की आग बुझाने के लिए अभागिन मां अपने बच्चों को बेचने पर मजबूर हो रही है, दहेज के रूपये नहीं जुटा पाने के कारण मां-बाप, आत्महत्या कर रहे हैं और दूसरी ओर नेताओं, दलालों और बड़े बड़े नौकरशाहों के घरों और लॉकरों से अरबों-खरबों निकल रहे हैं। भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने के लिए अन्ना हमारे ने जन लोकपाल कानून बनाने के लिए आंदोलन चलाया है। अन्ना हजारे चाहते हैं- लोकपाल कानून ऐसा हो जिसको राजनीतिक रूप से प्रभावित नहीं किया जा सके। जन लोकपाल का गठन, संचालन तथा सजा का प्रावधान इस प्रकार का हो कि उसमें सर्वोच्च न्यायालय तथा प्रधानमंत्री भी उसके दायरे में हो। सजा आजीवन कारावास तक हो। बाबा रामदेव और अन्ना हजारे ने यद्यपि भ्रष्टाचार उन्मूलन अभियान की शुरूआत की मगर अब यह आंदोलन राष्ट्रीय आंदोलन बन गया है। जब भी कोई बड़ा आंदोलन खड़ा होता है तो वह किसी नेता का मोहताज नहीं होता। नेता उसमें कूद पड़ते हैं। वैसे ही इस देश में जो भ्रष्टाचार का आंदोलन चल रहा है। वह आगे चलकर क्या रूप ले लेगा, कोई नहीं जानता है। सरकार ऐसा न समझ ले कि बाबा रामदेव और अन्ना हजारे को धमका के यह आंदोलन समाप्त हो जायेगा। यह आंदोलन जो चल पड़ा है, उसका गर्जन मंद पड़नेवाला नहीं है। भ्रष्टाचार से भारत कैसे आजाद होगा, जब तक उसका उत्तर नहीं मिल जाता, यह आंदोलन रुकनेवाला नहीं है।

स्वतंत्रता दिवस का महत्व

भारत में स्वतंत्रता दिवस १५ अगस्त को मनाया जाता है। १५ अगस्त १९४७ को भारत ने ब्रिटिश राज्य से मुक्त होकर स्वतंत्रता प्राप्त की थी। अंग्रेजों के अत्याचारों और अमानवीय व्यवहारों से त्रस्त भारतीय जनता एकजुट हो इससे छुटकारा पाने हेतु कृतसंकल्प हो गई। सुभाषचंद्र बोस, भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद ने क्रांति की आग फैलाई और अपने प्राणों की आहुति दी। तत्पश्चात सरदार वल्लभभाई पटेल, गांधीजी, नेहरू जी ने सत्य अहिंसा और बिना हथियारों की लड़ाई लड़ी। सत्याग्रह आंदोलन किए, लाठियां खाईं, कई बार जेल गए और अंग्रेजों को हमारा देश छोड़कर जाने पर मजबूर कर दिया। इस तरह १५ अगस्त १९४७ का दिन हमारे लिए स्वतंत्रता का दिन बना। हम, हजारा देश स्वतंत्र हो गए। इस दिन को राष्ट्र पर्व के रूप में मनाया जाता है। स्वतंत्रता दिवस का दिन पूरे देश में बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है।

हमारा पुनीत कर्तव्य है कि हम हमारे स्वतंत्रता की रक्षा करें। देश का नाम विश्व में रोशन हो, ऐसा कार्य करें। देश की प्रगति के साधक बनें न कि बाधक। घूस, जमाखोरी, कालाबाजारी को देश से समाप्त करे। भारत के नागरिक होने के नाते स्वतंत्रता का न तो स्वयं दुरुपयोग करें और न दूसरों को करने दें। एकता की भावना से हरें और अलगाव, आंतरिक कलह से बचें। हमारे लिए स्वतंत्रता दिवस का बड़ा महत्व है। हमें अच्छै कार्य करना है और देश को आगे बढ़ाना है।

आज साधन हैं, सुविधाएं हैं फिर भी हम लेखन से अपना हाथ पीछे खींच रहे हैं। हम अपने राष्ट्र ध्वज, गान, राष्ट्रीय नदी, पशु पक्षी जल जीव, फूल आदि के बारे में सोचकर अनजान बन रहे हैं। हमारी यह बदलती सोच राष्ट्र को आघात पहुंचा रही है। स्वतंत्र भारत की इस बदलती तस्वीर को देखकर कविवर धूमिल की पंक्तियां भी याद आती हैं।

क्या आजादी सिर्फ तीन थके रंगों का नाम है, जिन्हें एक पहिया ढोता है या इसका कोई खास मतलब होता है।

देखा और सोचा जाए तो आज लोगों के दिलो दिमाग से स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस का मतलब व अर्थ धीरे धीरे कम हो रहा है। भागम भागी के इस दौर में बीत गई सो बात गई की परिभाषा सफल सिद्ध हो रही है। राष्ट्रीय झंडा हमारा प्यारा तिरंगा, केवल संसद, लालकिले, राष्ट्रपति भवन, कुछ सरकारी कार्यालयों और कुछ एक राजनेताओं के घर व गाड़ी

पर फहर कर ही रह गया है। तिरंगे के प्रति प्रेमभाव के बदले लोगों का राजनीति चमकाने का दौर चल निकला है। इसका ताजा उदाहरण है अभी पिछले दिनों २६ जनवरी को भाजपा द्वारा जम्मू कश्मीर में लाल चौक पर तिरंगा झंडा फहराने पर जो बवाल मचा है, उसे सभी जानते हैं। इस स्वतंत्र भारत में अब कौन सा राजनैतिक दल ठीक है और कौन सा गलत, यह कहना संभव नहीं है पर लगता है कि तिरंगा इनके बीच बेजान है। आश्चर्य कि बात तो यह भी है कि तिरंगा फहराने के बाद और स्कूलों में रोजाना प्रार्थना के बाद गाया जानेवाला राष्ट्रीय गान आज बहुत से लोगों को पूरा याद नहीं है, साथ ही यह भी पता नहीं है कि इसको किसने लिखा है। यह सोचने की बात है। भारत अपने बदलते ऋतुचक्र अर्थात मौसम के चलते बहुत भाग्यशाली है। यहां की नदियां अमृत बहानेवाली हैं और राष्ट्रीय नदी गंगा तो सभी के पापों को हर लेनेवाली है लेकिन आज इस स्वतंत्र भारत में राष्ट्रीय नदी गंगा की जो हालत है, उसे बयान करना संभव नहीं है। अमृत बहानेवाली यह पवित्र नदी अब धीरे धीरे गंदा नाला बनने के मुहाने पर खड़ी है। इसमें चलाए गए सफाई अभियान के नाम पर केवल पैसा खाया जा रहा है जबकि कोई काम ठीक से नहीं हो रहा है। राष्ट्रीय जल जीव डाल्फिन गंगा नदी में अच्छी खासी संख्या में होती थी पर अब गंगा ही अपनी सफाई के लिए लड़ाई लड़ रही हैं तो डाल्फिन के रहने की बात तो नहीं के बराबर है पर हां, भारतीय सरकारी कंपनी एम टी एनएल द्वारा डाल्फिन का नंबर और डाल्फिन का फोटो दोनों मिल जाते हैं। राष्ट्रीय जानवर पशु बाघ की संख्या दिन प्रतिदिन घटती जा रही है। ताजा आंकड़ों के अनुसार इनकी संख्या ३००० थी। दूरदर्शन पर विज्ञापनों द्वारा बाघों को बचाने की बात जनता तक पहुंचाई जा रही है लेकिन लोग मान नहीं रहे है और जंगली जानवरों का वध धड़ल्ले से कर रहे हैं। राष्ट्रीय पक्षी मोर की बात करें तो पिछले दिनों समाचारों में बताया व दिखाया गया कि कैसे लोग थोड़े से पैसे के लालच में उन्हें मार कर, उनके पंख निकालकर बाजार में बेच देते हैं। राष्ट्रीय फूल कमल तो नजरों से नदारद हो गया है। बच्चे केवल पुस्तकों में ही इस फूल को देख रहे हैं और हिन्दी व्याकरण में कमल के दो पर्यायवाची याद कर लेते हैं लेकिन यह वास्तव में कैसा है, इस बात को बहुत कम छात्र व लोग जानते हैं। पर हां वेलेंटाइन डे को गुलाब का फूल देना और उसका अर्थ अच्छी तरह समझते हैं। राष्ट्रीय खेल हॉकी तो मानो प्राणहीन सा हो गया है। बीते जमाने में कभी भारत ने ओलंपिक में २४ मैच खेले और सारे जीते लेकिन अब हॉकी ओलंपिक में खेलने के लिए अपनी जगह बनाने में मशक्कत करनी पड़ रही है। बच्चों को भारतीय हॉकी की टीम के खिलाड़ियों के नाम तक पता नहीं। यह हाल अब राष्ट्रीय खेल हॉकी का है। राष्ट्रपति महात्मा गांधी और अन्य भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में हुए शहीद आज जिंदा होते और अपने इस उभरते भारत की यह तस्वीर देखते तो शायद वे ग्लानि से भर जाते कि क्या हमने यही सोचकर इस देश को स्वतंत्र कराया था। हम अपने हाथों अपने देश को ऐसे बर्बाद करेंगे? स्वार्थ की इस निद्रा से जागकर राष्ट्र का स्वाभिमान बढ़ाना होगा। यही सबका प्रण होगा तो राष्ट्र विकास करेगा और शांति बनी रहेगी।

पहली भारतीय फ्लाइट- १५ अक्टूबर १९३२ को देश की पहली निजी वायुसेना कंपनी के जहाज ने पहली उड़ान भरी थी। टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी के मालिक जेआरडी टाटा ने कराची से एक हवाई जहाज में उड़ान भरी और मुंबई आ पहुंचे। इसमें डाक थी। कंपनी के पास मात्र दो जहाज थे और यह केवल कराची और मद्रास के बीच एक साप्ताहि सेवा चलाती थी। पहले वर्ष कंपनी के विमानों ने २.५ लाख किमी उड़ान भरी जिसमें १०.७१ टन डाक और १५५ यात्री शामिल थे। इसने पहले साल में ६० हजार रुपया मुनाफा कमाया, १९३७ तक यही मुनाफा बढ़ कर छह लाख पहुंच गया। सरकार द्वारा अधिग्रहण करने के बाद यह एयर इंडिया बनी।

यह पावन पर्व हमारा है

भूल न जाना, इस दिन को, यह पावन पर्व हमारा है।
स्वतंत्रता पाने को हमने, अपना सब कुछ वारा था।
भारत मां की लाज बचे, बस यही हमारा नारा था।।
हमने लौह श्रृंखला तोड़ी, पाने को स्वाधीनता।
शत्रु भगाया था, स्वदेश से, काटने को वह खिन्नता।।
हम भारत के, देश हमारा, यही हमारा बाना है।
भूल न जाना, इस दिन को, यह पावन पर्व हमारा है।।
क्या दधीचि, क्या हरिश्चंद्र, क्या शिबि और भगीरथ।
मर्यादा के पालन में ये सदा रहे, अविरत रत।।
रामकृष्ण की भूमि हमारी, वसुधा का यह स्वर्ग है।
इसकी उन्नति से हो जाता, लज्जित वह अपवर्ग है।।
स्वतंत्रता का पाठ न छोड़ें, यही हमारा नारा है।
भूल न जाना, इस दिन को, यह पावन पर्व हमारा है।।
जन्म-सिद्ध स्वातंत्र्य बना था, लोकमान्य का नारा।
लौह पुरुष से बापू तक ने, हम पर सब कुछ वारा।।
उन पुरुषों के आदर्शों पर, हम चलते जाएंगे।
देश राष्ट्र की उन्नति में अब, नहीं ढील लाएंगे।।
श्रम-कौशल का ताना बाना, बुनना काम हमारा है।
भूल न जाना, इस दिन को, यह पावन पर्व हमारा है।।

जब हमें भ्रष्टाचार और नक्सलवाद जैसे दीमक से आजादी मिलेगी तब सच्ची आजादी होगी। इस आजादी का मतलब है कि जब देश का पूरा युवा आत्मनिर्भर हो। इन सभी युवाओं के मन में अपने देश के प्रति जज्बा और इज्जत है। यह राष्ट्रीय छुट्टी का दिन नहीं है बल्कि देश की तरक्की में कंधे से कंधा मिलाकर चलने का दिन है।

आजादी का मतलब मानसिक आजादी, आर्थिक स्वावलंबन, स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग एवं राष्ट्र रक्षा है। गरीबी, भूखमरी, घूसखोरी, जमाखोरी, जुर्म और धर्म के ठेकेदारों से आजादी ही असल मायने में आजादी है। जिस दिन हम मानसिक रूप से आजाद होंगे वो दिन हमारी आजादी का असली दिन होगा। हम आज भी डर के जी रहे हैं, जीयो और जीने दो के सिद्धांत पर आम हिंदुस्तानी आज भी नहीं चल पा रहा है। इस आजादी को नए तरीके से परिभाषित करने की आवश्यकता है।

दार्शनिक अरविंद घोष (जन्म- १५ अगस्त)

महान क्रांतिकारी, दार्शनिक, देशभक्त एवं योगी अरविंद का मानना था कि योग की मदद से मानव अतिमानव बन सकता है लेकिन इसमें हजारों वर्ष का समय लग सकता है। अरविंद आश्रम से निकलनेवाली पत्रिका कर्मधारा के सहसंपादक त्रियुगी नारायण के अनुसार अरविंद विभाजन के समय हिंदू मुसलमान दंगे से काफी चिंतित थे। उनका मानना था कि दोनों समुदायों के बीच सौहार्द से ही इनका विकास संभव है। उन्होंने कहा कि प्रकृति में गहन विश्वास करनेवाले अरविंद का मानना था कि जैसे हजारों वर्षों के बाद जानवर से विकसित होकर मनुष्य बना वैसे ही वह कई पीढ़ियों बाद अतिमानव भी बन सकता है लेकिन इसके लिए उसे योग साधना का सहारा लेना होगा। हालांकि यह प्रक्रिया काफी जटिल है और इसमें काफी समय भी लगेगा लेकिन यह प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। अतिमानव बनने के बाद मनुष्य विभिन्न बंधनों से मुक्त होगा। जामिया विश्वविद्यालय में इतिहास के प्राध्यापक रिजवान कैसर ने कहा कि अरविंद का चरित्र कई हिस्सों में बंटा हुआ है। शुरु में वह एक दार्शनिक थे और बाद में वह क्रांतिकारी बने और देश की आजादी के लिए काम किया। अरविंद घोष का जन्म कलकत्ता में १५ अगस्त १८७२ में हुआ था। अरविंद के पिता डॉ. कृष्णधन घोष अंग्रेजी शिक्षा के कट्टर समर्थक थे। इसलिए उन्होंने अरविंद को सात वर्ष की आयु में ही शिक्षा ग्रहण करने के लिए उनके भाइयों के साथ ब्रिटेन भेज दिया। कैसर के अनुसार, ब्रिटेन में शिक्षा पूरी करने के बाद अरविंद अपने पिता की इच्छा के अनुरूप, आईसीएस परीक्षा में बैठे लेकिन दो वर्ष की परिक्षा अवधि के दौरान उन्होंने तय किया कि वे ब्रिटिश सरकार की सेवा नहीं करेंगे। इसलिए वह जानबूझकर आईसीएस के लिए होनेवाली घुड़सवारी की परीक्षा में शामिल नहीं हुए जिसके उन्हें ब्रिटिश प्रशासनिक सेवा के लिए नहीं चुना गया। उन्होंने बताया कि अरविंद फरवरी १८९३ में भारत लौट आये। भारत में उनका इंतजार कर रहे उनके पिता को मुम्बई स्थित उनके एजेंट ने गलत सूचना दे दी कि जिस जहाज में अरविंद भारत आ रहे थे वह पुर्तगाल तट के पास डूब गया है। अरविंद के पिता यह सदमा बर्दाश्त नहीं कर पाये और उनका निधन हो गया। अरविंद को बड़ौदा में स्टेट सेवा की नौकरी मिली। उन्होंने पहले सर्वेक्षण एवं चकबंदी विभाग में नौकरी की। बाद में वह राजस्व विभाग में स्थानांतरित हो गए और उसके बाद वह सचिवालय में पहुंच गए जहां वह बड़ौदा के महाराज सयाजीराव गायकवाड तृतीय के लिए सचिवालय में पहुंच गए जहां वह बड़ौदा के महाराज सयाजीराव गायकवाड़ तृतीय के लिए भाषण लिखा करते थे। बड़ौदा में अरविंद ने भारतीय संस्कृति, संस्कृत, हिंदी और बंगाली भाषाओं का गहन अध्ययन किया। उन्होंने १९०६ तक बड़ौदा स्टेट की नौकरी की। नौकरी के दौरान उनका झुकाव स्वतंत्रता आंदोलन की तरफ हुआ। उन्होंने कहा कि अरविंद ने स्वतंत्रता आंदोलन में भी अहम भूमिका निभायी। बड़ौदा से कलकत्ता आने के बाद अरविंद स्वतंत्रता आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़ गए। कलकत्ता में उनके भाई बारिन ने उन्हें बाघा जतीन, जतीन बनर्जी और सुरेंद्रनाथ टैगोर जैसे क्रांतिकारियों से मिलवाया। वर्ष १९०२ में उन्होंने उनशीलन समिति ऑफ कलकत्ता की स्थापना में मदद की। उन्होंने लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के साथ कांग्रेस में गरमपंथी धड़े की विचारधारा को भी हवा दी। अरविंद ने बंगाल विभाजन के खिलाफ आंदोलन में बढ़चढ़ हिस्सा लिया और इसके लिए लोगों को एकजुट करने के लिए उन्होंने राखियां बंधवाने का कार्यक्रम चलाया एवं हिंदु मुस्लिम एकता की अच्छी मिसाल पेश की। अरविंद घोष के विचार बहुत ही क्रांतिकारी थे। उन्होंने लिखा है, राजनीतिक स्वतंत्रता राष्ट्र की प्राण वायु है। राजनीतिक स्वतंत्रता के लक्ष्य के बगैर सामाजिक सुधार, शैक्षणिक सुधार, औद्योगिक विस्तार और नस्ल का नैतिक सुधार बहुत बड़ी लापरवाही और व्यर्थ है। अरविंद का नाम १९०५ के बंगाल विभाजन के बाद हुए क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़ा और उन पर १९०८-०९ में अलीपुर बम कांड में मुकदमा चला। इस दौरान जेल में रहने के समय उन्हें विशिष्ट

आध्यात्मिक अनुभूतियां हुई। जेल से निकलने के बाद वह १९१० में चंदननगर होते हुए पांडिचेरी चले गये। उन्होंने पांडिचेरी में अपने को सार्वजनिक जीवन से पूरी तरह अलग करते हुए आध्यात्मिक साधना और लेखन तक सीमित कर लिया। पांडिचेरी में १९१४ में मीरा नामक फ्रांसीसी महिला की अरविंद से पहली बार मुलाकात हुई जिन्हें बाद में अरविंद ने अपने आश्रम के संचालन का कार्यभार सौंप दिया। अरविंद का देहांत पांच दिसंबर १९५० को हुआ। बताया जाता है कि निधन के बाद चार दिन तक उनके पार्थिव शरीर में दिव्य आभा बने रहने के कारण उनका अंतिम संस्कार नहीं किया गया और नौ दिसंबर को उन्हें आश्रम में समाधि दे दी गयी।

१६ अगस्त

सुभद्रा कुमारी चौहान (जन्म- १६ अगस्त)

सुभद्रा कुमारी चौहान हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री और लेखिका थीं। उन्होंने लगभग ८८ कविताओं और ४६ कहानियों की रचना की। किसी कवि की कोई कविता इतनी अधिक लोकप्रिय हो जाती है कि शेष कविता प्राय: गौण होकर रह जाती है। बच्चन की मधुशाला और सुभद्रा जी की इस कविता के समय यही हुआ। यदि केवल लोकप्रियता की दृष्टि से ही विस्तार करें तो उनकी कविता पुस्तक मुकुल १९३० के छह संस्करण उनके जीवन काल में ही हो जाना कोई सामान्य बात नहीं है। इनका पहला काव्य-संग्रह मुकुल १९३० में प्रकाशित हुआ। इनकी चुनी हुई कविताएं त्रिधारा में प्रकाशित हुई हैं। झाँसी की रानी इनकी बहुचर्चित रचना है। राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भागीदारी और जेल यात्रा के बाद भी उनके तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हुए- बिखरे मोती (१९३२) उन्मादिनी (१९३४) सीधे-सादे चित्र (१९४७)। इन कथा संग्रहों में कुछ ३८ कहानियाँ (क्रमश: पंद्रह, नौ और चौदह)। सुभद्रा जी की समकालीन स्त्री कथाकारों की संख्या अधिक नहीं थी।

वीर रस से ओत प्रोत इन पंक्तियों की रचयिता सुभद्रा कुमारी चौहान को राष्ट्रीय वसंत की प्रथम कोकिला का विरुद्ध दिया गया था। यह वह कविता है जो जन-जन का कंठहार बनी। कविता में भाषा का ऐसा ऋजु प्रवाह मिलता है कि वह बालकों-किशोरों को सहज ही कंठस्थ हो जाती हैं। कथनी-करनी की समानता सुभद्रा जी के व्यक्तित्व का प्रमुख अंग है।

१७ अगस्त

अमृतलाल नागर (जन्म- १७ अगस्त)

१७ अगस्त १९१६ को हिंदी साहित्यकार अमृतलाल नागर का जन्म गोकुलपुरा आगरा में हुआ था। उनकी प्रारंभिक कविताएं मेघराज इंद्र के नाम से, कहानियां अपने नाम से और व्यंगपूर्ण रेखाचित्र-निबंध आदि तस्लीम लखनवी के नाम से लिखी हुई है।

बूंद और समृद्ध के प्रकाशन के साथ वे हिंदी के प्रथम श्रेणी के उपन्यासकारी माने गये। उनकी कृतियों में वाटिका, महाकाल, अमृत और विष मानस का हंस, सुहाग के नूपुर आदि प्रमुख हैं।

वे पद्मभूषण, प्रेमचंद पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार व सेवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से सम्मानित हुए। २३ फरवरी १९९० में उनका निधन हुआ।

अमृतलाल नागर हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। इन्होंने नाटक, रेडियोनाटक, रिपोर्ताज, निबन्ध, संस्मरण, अनुवाद, बाल साहित्य आदि के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन्हें साहित्य जगत में उपन्यासकार के रूप में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हुई तदपि उनका हास्य-व्यंग्य लेखन कम महत्वपूर्ण नहीं है।

मदन लाल ढींगरा (शहीद-१७ अगस्त)

मदन लाल ढींगरा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान क्रान्तिकारी थे। स्वतंत्र भारत के निर्माण के लिए भारत माता के कितने शूरवीरों ने हंसते-हंसते अपने प्राणों का उत्सर्ग किया था, उन्हीं महान शूरवीरों में अमर शहीद मदन लाल ढींगरा का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य हैं। अमर शहीद मदनलाल ढींगरा महान देशभक्त, धर्मनिष्ठ क्रांतिकारी थे- वे भारत माँ की आजादी के लिए जीवन पर्यंत अनेक प्रकार के कष्ट सहन किए परन्तु अपने मार्ग से विचलित न हुए और स्वाधीनता प्राप्ति के लिए फांसी पर झुल गए।

१८ अगस्त

विष्णु दिगम्बर पलुस्कर (जन्म- १८ अगस्त)

विष्णु दिगम्बर पलुस्कर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में एक विशिष्ट प्रतिभा थे, जिन्होंने भारतीय संगीत में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वे भारतीय समाज में संगीत और संगीतकार की उच्च प्रतिष्ठा के पुनरुद्धारक, समर्थ संगीतगुरु, अप्रतिम कंठस्वर एवं गायनकौशल के घनी भक्त हृदय गायक थे। विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में महात्मा गांधी की सभाओं सहित विभिन्न मंचों पर रमधुन गाकर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाया। पलुस्कर ने लाहौर में गंधर्व महाविद्यालय की स्थापना कर भारतीय संगीत को एक विशिष्ट स्थान दिया। इसके अलावा उन्होंने अपने समय की तमाम धुनों की स्वरलिपियों को संग्रहित कर आधुनिक पीढ़ी के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान दिया।

विजयलक्ष्मी पण्डित (जन्म- १८ अगस्त)

विजयलक्ष्मी पण्डित संपन्न, कुलीन घराने से ताल्लुक रखनेवाली और पण्डित जवाहरलाल नेहरू की बहन थीं। सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लेने के कारण उन्हें जेल में बंद किया गया था। विजयलक्ष्मी एक पढ़ी-लिखी और प्रबुद्ध महिला थीं और विदेशों में आयोजित विभिन्न सम्मेलनों में उन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया था। भारत के राजनीतिक इतिहास में वह पहली महिला मंत्री थीं। संयुक्त राष्ट्र की पहली भारतीय महिला अध्यक्ष भी वही थीं। विजयलक्ष्मी पण्डित स्वतंत्र भारत की पहली महिला राजदूत थीं, जिन्होंने मॉस्को, लंदन और वॉशिंगटन में भारत का प्रतिनिधित्व किया था।

१९ अगस्त

हजारी प्रसाद द्विवेदी

आधुनिक हिन्दी में हजारी प्रसाद द्विवेदी ऐसे रचनाकार थे जिनकी कृतियों में रोचक शैली के साथ मानवीय पहलू हमेशा केंद्र में रहा और वह पाठकों के साथ आत्मीयता कायम करने में कामयाब रहे वहीं व्यक्तिगत जीवन में भी निर्मल परिहास भाव और विनोद के कारण हमेशा आकर्षण का केंद्र बन रहे। कम उम्र में ही शांति निकेतन से बतौर शिक्षक जुड़ गए हजारी प्रसाद द्विवेदी विशाल व्यक्तित्व के स्वामी थे जिनकी रचनाओं में मानवीय सरलता, संस्कृति का ज्ञान, विचारों की मौलिकता एवं रोचक शैली का बेहतरीन समन्वय परिलक्षित होता है। उत्तर प्रदेश में बलिया के एक गांव में १९ अगस्त १९०७ को पैदा हुए हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों बाणभट्ट, पुनर्नवा, चारू चंद्रलेख और अनामदास का पोथा में से पहले तीन सीधे तौर पर भारत के मध्यकालीन इतिहास से जुड़े हुए हैं वहीं अनामदास का पोथा पौराणिक इतिहास से संबंधित है। एक बार उन्होंने एक साक्षात्कार में अपने उपन्यासों को शुद्ध गल्प माना था। लेकिन उनके पात्र इतिहास को पेश करते हैं जो सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश को संपूर्णता के साथ अभिव्यक्त करता है। अपनी कृतियों को लेकर चर्चा में रहे हजारी प्रसाद द्विवेदी में भाषण की अद्भुत कला देखने को मिलती थी वह जब भाषण करते तो लोग तल्लीन होकर सुनते। उनके व्याख्यानों से प्रभावित होनेवालों में रचनाकार ममता कालिया भी शामिल हैं। ममता कालिया के अनुसार असाधारण साहित्यकार हजारी प्रसाद द्विवेदी बेहतरीन वक्ता भी थे वहीं वह नए लोगों को मौका देने में भी आगे रहते। अपने संस्मरणों का जिक्र करते हुए ममता कालिया ने बताया कि वह द्विवेदी जी का व्याख्यान काफी सुना करती थीं। अंग्रेजी की विद्यार्थी होने के बावजूद हिंदी में साहित्य रचने का चस्का लगा, इसमें हजारी प्रसाद द्विवेदी की भी अहम भूमिका थी। उनसे यह सीखा जा सकता था कि अपनी बात कैसे सरल और स्पष्ट तरीके से रखी जा सकती है। ममता कालिया के अनुसार यशस्वी साहित्यकार द्विवेदी जी की भाषा जहां निराली थी, वहीं उनकी विनोदशैली भी लोगों को आकर्षित करनेवाली थी। तमाम ऊंचाइयों के बावजूद वह जमीन से जुड़े रहे और सादगीपसंद बने रहे। ममता कालिया के अनुसार ठहाके और उन्मुक्त हंसी उनकी एक ओर खासियत थी। उन्मुक्त हंसी में वह अपनी परेशानियों और उलझनों को बाधा नहीं बनने देते थे। उन्होंने कहा कि द्विवेदी जी की रचनाओं में जीवन के तथ्य खूबसूरत तरीके से सामने आते हैं। फिल्म अभिनेता बलराज साहनी ने भी हजारी प्रसाद द्विवेदी की चर्चा करते हुए एक बार लिखा था, अगर उनके जैसा व्यक्ति नहीं हंसे तो कौन हंसेगा। हंस के मार्च १९३९ अंक में प्रकाशित एक आलेख में बलराम साहनी ने उनके शांतिनिकेतन के जीवन का जिक्र करते हुए लिखा था, जिस मंडली के साथ शाम को सैर करने निकल पड़े, उसका

२० अगस्त

१) राजीव गांधी

लोकप्रिय नेता थे राजीव गांधी

कुछ लोग जमीन पर राज करते हैं और कुछ लोग दिलों पर। मरहूम राजीव गांधी एक ऐसी शख्सियत थे, जिन्होंने जमीन पर ही नहीं बल्कि दिलों पर भी हुकूमत की। वह भले ही आज इस दुनिया में नहीं हैं लेकिन दिलों में आज भी जिंदा है।

राजीव गांधी ने उन्नीसवीं सदी में इक्कीसवीं सदी के भारत का सपना देखा था। स्वभाव से गंभीर लेकिन आधुनिक सोच और निर्णय लेने की अद्‌भुत क्षमतावाले राजीव गांधी देश को दुनिया की उच्च तकनीकों से पूर्ण करना चाहते थे। वे बार-बार कहते थे कि भारत की एकता और अखंडता को बनाए रखने के साथ ही उनका अन्य बड़ा मकसद इक्कीसवीं सदी के भारत का निर्माण है। अपने इसी सपने को साकार करने के लिए उन्होंने देश में कई क्षेत्रों में नई पहल की जिनमें संचार क्रांति और संगणक क्रांति, शिक्षा का प्रसार, १८ साल के युवाओं को मताधिकार, पंचायती राज आदि शामिल हैं।

वे देश की संगणक क्रांति के जनक के रूप में भी जाने जाते हैं। वे युवाओं के लोकप्रिय नेता थे। उनका भाषण सुनने के लिए लोग घंटों इंतजार किया करते थे। उन्होंने अपने प्रधानमंत्री काल में कई ऐसे महत्वपूर्ण फैसले लिए, जिसका असर देश के विकास में देखने को मिल रहा है। आज हर हाथ में दिखनेवाला मोबाइल उन्हीं फैसलों का नतीजा है।

चालीस साल की उम्र में प्रधानमंत्री बननेवाले श्री राजीव गांधी देश के सबसे कम उम्र के प्रधानमंत्री थे और दुनिया के उन युवा राजनेताओं में से एक हैं जिन्होंने सरकार की अगुवाई की है। उनकी मां श्रीमती इंदिरा गांधी १९६६ में जब पहली बार प्रधानमंत्री बनी थीं, तब वह उनसे उम्र में आठ साल बड़ी थीं। उनके नाना पंडित जवाहरलाल नेहरू ५८ साल के थे जब उन्होने आजाद भारत के पहले प्रधानमंत्री के तौर पर शपथ ली। देश में पीढ़ीगत बदलाव के अग्रदूत श्री राजीव गांधी को देश के इतिहास में सबसे बड़ा जनादेश हासिल हुआ था। अपनी मां के कत्ल के बाद ३१ अक्टूबर १९८४ को वे कांग्रेस अध्यक्ष और देश के प्रधानमंत्री बने थे। अपनी मां की मौत के सदमे से उबरने के बाद उन्होंने लोकसभा के लिए चुनाव कराने का आदेश दिया।

दु:खी होने के बावजूद उन्होंने अपनी हर जिम्मेदारी को बखूबी निभाया। महीने भर की लंबी चुनावी मुहिम के दौरान उन्होंने पृथ्वी की परिधि के डेढ़ गुना के बराबर दूरी की यात्रा करते हुए देश के तकरीबन सभी हिस्सों में जाकर २५० से ज्यादा जनसभाएं कीं और लाखों लोगों से रू-ब-रू हुए। उस चुनाव में कांग्रेस को बहुमत मिला और पार्टी ने रिकार्ड ४०१ सीटें हासिल कीं। सात सौ करोड़ भारतीयों के नेता के तौर पर इस तरह की शानदार शुरूआत किसी भी हालत में काबिले-तारीफ मानी जाती है। यह इसलिए भी बेहद खास है, क्योंकि वे उस सियासी खानदान से ताल्लुक रखते थे, जिसकी चार पीढ़ियों ने जंगे-आजादी के दौरान और इसके बाद हिन्दुस्तान की खिदमत की थी। इसके बावजूद श्री राजीव गांधी सियासत में नहीं आना चाहते थे। इसीलिए वे सियासत में देर से आए।

राजीव गांधी का जन्म २० अगस्त, १९४४ को मुंबई में हुआ था। वे सिर्फ तीन साल के थे, जब देश आजाद हुआ और उनके नाना आजाद भारत के पहले प्रधानमंत्री बने। उनके माता-पिता लखनऊ से नई दिल्ली आकर बस गए। उनके

पिता फिरोज गांधी सांसद बने जिन्होंने एक निडर तथा मेहनती सांसद के रूप में ख्याति अर्जित की।

राजीव गांधी ने अपना बचपन अपने नाना के साथ तीन मूर्ति हाउस में बिताया जहां इंदिरा गांधी ने प्रधानमंत्री की परिचारिका के रूप में काम किया। वे कुछ वक्त के लिए देहरादून के वेल्हम स्कूल गए लेकिन जल्द ही उन्हें हिमालय की तलहटी में स्थित आवासीय दून स्कूल में भेज दिया गया। वहां उनके कई दोस्त बने जिनके साथ उनकी ताउम्र दोस्ती बनी रही। बाद में उनके छोटे भाई संजय गांधी को भी इसी स्कूल में भेजा गया। जहां दोनों साथ रहे। स्कूल से निकलने के बाद श्री राजीव गांधी कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कॉलेज गए लेकिन जल्द ही वे वहां से हटकर लंदन के इम्पीरियल कॉलेज चले गए। उन्होंने वहां से मैकेनिकल इंजीनियरिंग की पढ़ाई की।

उनके सहपाठियों के मुताबिक उनके पास दर्शन, राजनीति या इतिहास से संबंधित पुस्तकें न होकर विज्ञान एवं इंजीनियरिंग की कई पुस्तकें हुआ करती थीं। हालांकि संगीत में उनकी बहुत दिलचस्पी थी। उन्हें फोटोग्राफी और रेडियो सुनने का भी खासा शौक था। हवाई उड़ान उनका सबसे बड़ा जुनून था। इंग्लैंड से घर लौटने के बाद उन्होंने दिल्ली फ्लाइंग क्लब की प्रवेश परीक्षा पास की और व्यावसायिक पायलट का लाइसेंस हासिल किया। इसके बाद वे १९६८ में घरेलू राष्ट्रीय जहाज कंपनी इंडियन एयरलाइंस के पायलट बन गए।

कैम्ब्रिज में उनकी मुलाकात इतालवी सोनिया मैनो से हुई थी जो उस वक्त वहां अंग्रेजी की पढ़ाई कर रही थीं। उन्होंने १९६८ में नई दिल्ली में शादी कर ली। वे अपने दोनों बच्चों राहुल और प्रियंका के साथ नई दिल्ली में श्रीमती इंदिरा गांधी के निवास पर रहे। वे खुशी-खुशी अपनी जिन्दगी गुजार रहे थे लेकिन २३ जून १९८० को एक जहाज हादसे में उनके भाई संजय गांधी की मौत ने सारे हालात बदल कर रख दिए। उन पर सियासत में आकर अपनी मां की मदद करने का दबाव बन गया। फिर कई अंदरूनी और बाहरी चुनौतियां भी सामने आईं।

पहले उन्होंने इन सबका काफी विरोध किया लेकिन बाद में उन्हें अपनी मां की बात माननी पड़ी और इस तरह वे न चाहते हुए भी सियासत में आ गए। उन्होंने जून १९८१ में अपने भाई की मौत की वजह से खाली हुए उत्तर प्रदेश के अमेठी लोकसभा क्षेत्र का उपचुनाव लड़ा जिसमें उन्हें जीत हासिल हुई। इसी महीने वे युवा कांग्रेस की राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य बन गए। उन्हें नवंबर १९८२ में भारत में हुए एशियाई खेलों से संबंधित महत्वपूर्ण जिम्मेदारी दी गई जिसे उन्होंने बखूबी अंजाम दिया। साथ ही कांग्रेस के महासचिव के तौर पर उन्होंने उसी लगन से काम करते हुए पार्टी संगठन को व्यवस्थित सक्रिय किया।

अपने प्रधानमंत्री काल में राजीव गांधी ने नौकरशाही में सुधार लाने और देश की अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के लिए कारगर कदम उठाए लेकिन पंजाब और कश्मीर में अलगाववादी आंदोलन को नाकाम करने की उनकी कोशिश का बुरा असर हुआ। वे सियासत को भ्रष्टाचार से मुक्त करना चाहते थे लेकिन यह विडंबना है कि उन्हें भ्रष्टाचार की वजह से ही सबसे ज्यादा आलोचना का सामना करना पड़ा।

उन्होंने कई साहसिक कदम उठाए जिनमें श्रीलंका में शांति सेना का भेजा जाना, असम समझौता, पंजाब समझौता, मिजोरम समझौता आदि शामिल हैं। इसकी वजह से चरमपंथी उनके दुश्मन बन गए। नतीजतन, श्रीलंका में सलामी गारद के निरीक्षण के वक्त उन पर हमला किया गया लेकिन वे बाल-बाल बच गए। साल १९८९ में उन्होंने प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया लेकिन वह कांग्रेस के नेता पद पर बने रहे। वे आगामी आम चुनाव के प्रचार के लिए २१ मई, १९९१ को तमिलनाडु के श्रीपेराम्बदूर गए, जहां एक आत्मघाती हमले में उनकी मौत हो गई। देश में शोक की लहर दौड़ पड़ी।

राजीव गांधी की देश सेवा को राष्ट्र ने उनके दुनिया से विदा होने के बाद स्वीकार करते हुए उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया जिसे श्रीमती सोनिया गांधी ने ६ जुलाई, १९९१ को अपने पति की ओर से ग्रहण किया।

आजाद भारत स्वर्गीय राजीव को महत्वपूर्ण योगदान के लिए हमेशा उनका ऋणी रहेगा। कांग्रेस स्वर्गीय राजीव गांधी की पुण्यतिथि २१ मई को बलिदान दिवस के रूप में मनाती है।

राजीव गांधी का पंचायती राज का सपना- कुछ पूरा-बाकी अधूरा (जन्म- २० अगस्त)

राजीव गांधी पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पुत्र थे। पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के शासनकाल में त्रिस्तरीय पंचायती राज संबंधी जो ऐतिहासिक कानून बनाया गया उसके बारे में आज विशेषज्ञों का मानना है कि इससे भले ही सत्ता के विकेन्द्रीकरण और महिलाओं के सशक्तीकरण में काफभ मदद मिली हो लेकिन आज भी कई लक्ष्य हासिल किये जाने बाकी हैं तथा इसके लिए मजबूत निगरानी प्रणाली की जरूरत है। त्रिस्तरीय पंचायती राज लागू होने के कारण लोकतंत्र को लोगों के द्वार तक पहुंचा दिया गया। इससे निर्णय प्रक्रिया में जनभागीदारी बढ़ी है। लेकिन राजीव गांधी सहित जिन लोगों ने पंचायती राज व्यवस्था के लिए जो लक्ष्य सोचे थे वे अभी तक भ्रष्टाचार, लालफीताशाही आदि के कारण दूर का ख्याब बने हुए हैं। पूर्व पंचायत राज्य मंत्री मणिशंकर अय्यर ने इस संबंध में प्रश्न किये जाने पर बताया कि निस्संदेह राजीव गांधी सरकार के शासनकाल में पारित किये गये पंचायती राज संबंधी कानून के कारण लोकतंत्र को चुस्त बनाने में काफी मदद मिली।

आज देश में ढाई लाख पंचायतें एवं ३२ लाख चुने हुए प्रतिनिधि हैं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि इनमें १२ लाख महिलाएं चुनकर आयी हैं। राज्यसभा सदस्य अय्यर ने कहा कि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं, अनुसूचित जाति एवं जनजाति के उम्मीदवारों की भागीदारी काफी बढ़ी है, जो हमारे लोकतंत्र की मजबूती का संकेत है। उन्होंने कहा कि इन सबके बावजूद पंचायती राज के बारे में राजीव गांधी का जो सपना था, वह अभी तक अधूरा है। उन्होंने कहा कि व्यावहारिक स्तर पर देखने में आता है कि पंचायती राज संस्थाओं की विकास योजनाओं में नोकरशाही अड़चनें पैदा करती है। इसके अलावा पंचायती राज संस्थाओं के मामले में कई राज्य सरकारों का रवैया उपेक्षापूर्ण रहता है। उन्होंने कहा कि यदि सांसद, विधायक एवं राज्य सरकारें पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से जमीनी स्तर पर विकास के कार्यों को तेज गति से अंजाम दिया जा सकता है।

भाकपा नेता अंतुल अंजान के अनुसार भले ही सरकार के शासनकाल में पंचायती राज संबंधी कानून संसद में पारित किया गया हो लेकिन इसका सारा श्रेय उन्हें ही नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी सहित देश के प्रमुख नेताओं ने इसका स्वप्न देखा था। उन्होंने कहा कि यदि पंचायती राज संस्थाएं आज ढंग से काम नहीं कर पा रही हैं तो इसके लिए कांग्रेस अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकती क्योंकि कानून लागू होने के बाद करीब सवा दशक तक उनकी सरकार केन्द्र में रही। अंजान ने कहा कि राजीव गांधी कहते थे कि केन्द्र से जारी किये गये एक रुपये में से मात्र १५ पैसे ही जनता तक पहुंच पाते हैं। अब उनके पुत्र राहुल गांधी कह रहे हैं कि जनता तक मात्र दस पैसे ही पहुंच पा रहे हैं। स्थिति में जो गिरावट आयी है क्या कांग्रेस शासित सरकारें उसके लिए दोषी नहीं हैं। उन्होंने कहा कि आज इस बात की बेहद जरूरत है कि पंचायती राज संस्थाओं द्वारा कराये जानेवाले कामकाज की सोशल आडिट हो। इससे उनकी जवाबदेही बढ़ेगी। उन्होंने कहा कि सोशल ऑडिट नौकरशाहों की बजाय उन प्रतिनिधियों, विशेषज्ञों से करवाया जाना

चाहिए। पूर्व केन्द्रीय मंत्री मोहसिना किदवई के अनुसार ग्रामीण आबादी शहरों की तरफ नहीं भागे, यह सुनिश्चित करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाना बेहद जरूरी है।

राजीव गांधी ने इसी लक्ष्य के साथ संबंधित कानून बनाने की पहल की थी। उन्होंने कहा कि राजीव गांधी चाहते थे कि पंचायती राज संस्थाओं को विकास के विभिन्न कार्यक्रमों में शामिल किया जाये। इसके लिए जरूरी है कि विभिन्न मंत्रालयों की योजनाओं को इन संस्थाओं के जरिये लागू करवाया जाये। इससे गांवों के विकास में मदद मिलेगी। राज्यसभा सदस्य किदवई ने कहा कि आज जमीनी स्तर पर इस बात की जरूरत महसूस की जा रही है कि पंचायती राज संस्थाओं द्वारा खर्च किये जा रहे धन और कराये जा रहे कार्यों की कड़ी निगरानी करवायी जाये। उन्होंने कहा कि इस पर निगरानी से ठोस कार्य सुनिश्चित होंगे। इनका निधन २१ मई, १९९१ को हुआ।

भारतीय राजनीति की शिखर पुरुष परम्परा इसे पश्चिमी लोकतंत्र से अलग करती है। जहां यूरोप व पश्चिमी देशों में शिखर पुरुष जैसा कोई मिथक लम्बे समय तक नहीं चल पाता और वहां का शिखर पुरुष भी न जाने कब अध:पतन में सना मिले, वहीं भारतीय राजनीति की परम्परा प्रथमपूज्य सर्वदा पूज्य होकर रही है (यद्यपि अब ऐसा नहीं रह गया है)। यहां गांधी, नेहरू, पटेल, प्रसाद आदि नाम आज भी उसी आदर से लिए जाते हैं जितने तब लिए जाते थे जब राजनीति के अधिकांश महारथी अपने आदर्श के लिए ही जाने जाते थे।

नेहरू युग के बाद थोड़े समय शास्त्री जी का कालखण्ड छोड़ दें तो परवर्ती राजनीति कीचड़ सनी ज्यादा हो गई थी। उसी परम्परा में अनेक चमकदार नाम भी आए और गए इन्हीं नामों की फेहरिस्त में अंकित है राजीव रत्न गांधी का नाम। राजीव मूलत: राजनीतिक रंग के व्यक्ति नहीं थे। इंदिरा पुत्र राजीव ने राजनीति के बजाय विमान उड़ाने में अपना भवितव्य बनाया। अन्तर्मुखी स्वभाव के राजीव ने राजनीति तेज तर्रार छोटे भाई संजय गांधी पर छोड़ इटली की (सोनिया मैनो) से शादी रचा अपने राजनीति प्रवेश पर लगभग पूर्णविराम ही लगा लिया था।

पर होइहिं वही जो राम रचि राखा। १९८० में विमान दुर्घटना में संजय गांधी के निधन से उपजी रिक्तता और टूटती-बिखरती मां इंदिरा को सहारा देने राजीव को उसी क्षेत्र में आना पड़ा जिसे वे हिकारत की दृष्टि से देखते थे।

भारतीय राजनीति में राजीव ताजी हवा के झोंके से आये। बिना दन्द-फन्द, लाग लपेट तोड़मरोड़ कर बात कहने के अपने स्वभाव के चलते अल्प भाषी और फरटिदार व मुहावरों की हिन्दी में तंग हाथ राजीव जल्द ही कांग्रेस (इंदिरा) के महासचिव बना दिए गए। फिर ३१ अक्टूबर १९८४ के स्याह इंदिरा हत्याकांड के हादसे के बाद बिना किसी अनुभव के भी आग की दरिया पार करने और दंगों में बहे लहू का हिसाब चुकता करने के लिए उनके सर पर मां की विरासत की जिम्मेदारी यानी प्रधानमंत्री का पद आन पड़ा। महज ५७ वर्ष की उम्र में वे भारत के सबसे कम उम्र के प्रधानमंत्री बने, पर उनके इर्दगिर्द बूढ़ों की बड़ी तेज दिमाग जुंडली भी जुटी थी जिसमें से हरेक की निगाह प्रधानमंत्री पद पर थी। प्रणव मुखर्जी तो अपनी इच्छा व्यक्त कर चुके थे। १९८५ का चुनाव सहानुभूति की लहर पर सवार होकर राजीव ने तीन चौथाई बहुमत हासिल कर ४०० से ज्यादा सीटें पाने का रिकार्ड तो बनाया पर अपनी हम देखेंगे, हमें देखना है। जैसी अपरिपक्व भाषा के चलते एक बारगी लगा कि वे देश के बजाय विमान ही चलाते तो शायद बेहतर होता मगर जल्द ही सेना में जासूसी कांड का भंडाफोड़ कर राजीव ने संकेत दे दिए कि वे निपट अनाड़ी प्रधानमंत्री नहीं रहनेवाले हैं।

राजीव भारतीय राजनीति के परम्परागत मिथक व दायरे को तोड़नेवाले पहले प्रधानमंत्री बनकर उभरे। कुर्ते पायजामे से लेकर जीन्स-टी शर्ट तक वे जरा हटकर दिखनेवाले प्रधानमंत्री बने। उन्होंने संसद में स्वीकार किया कि देश के विकास पर खर्च होनेवाला पैसा महज १५ प्रतिशत ही सही ढंग से काम में लगता है, ८५ प्रतिशत तो बीच में ही डकार लिया जाता है। आम भारतीयों को तो यह साफगोई पसंद आई मगर नेताओं ने हंगामा खड़ा कर दिया। सैम पित्रोदा को अमेरिका से भारत लाकर उन्हें दूर संचार की कमान सौंपने के निर्णय पर भी बहुत चिल्लपों मची पर परिणाम आज सामने हैं देश भर की कनेक्टिविटी के रूप में। आज जिस मोबाइल इंडिया पर हम सवार हैं वह राजीव की ही देन है। संगणक पर काम करनेवाले सम्भवत: वह पहले प्रधानमंत्री थे और भारत में संगणक

क्रांति का श्रेय भी उन्हें ही जाता है।

राष्ट्रीय विकास दर का ३-४ प्रतिशत प्रगति की सीमा रेखा को लांघने का श्रेय भी राजीव के ही नाम जाता है तो महिला उत्थान व महिला आरक्षण जैसे विचार को भी आधुनिक विचारों के राजीव ने ही मूर्त रूप दिया। मगर राजनीति की काजल की कोठरी किसे बख्शाती है। सयाने से सयाने पर भी एक लीक काजल ही लग जाती है। राजीव को उन्हीं के रक्षामंत्री व चुनाव में रणनीतिकारों के प्रमुख विश्वनाथ प्रताप सिंह ने ही उन पर तोप तान दी तो भारतीय राजनीति में तूफान खड़ा हो गया। बोफोर्स तोप खरीद कांड में किकबैक खाने का आरोप राजीव की लोकप्रियता को लील गया। स्विस बैंक में लोटस नामक खाते को उनके नाम (राजीव/कमल का पर्याय समझा गया। इटली से तार जुड़े होने से शक सोनिया के परिवार पर भी प्रश्न उछले। राजीव की कोई सफाई जनता ने स्वीकार नहीं की और १९८९ के चुनाव में फकीर बने राजा को नया राजा बना दिया गया। सत्ताच्युत होकर राजीव एक बार नेपथ्य में जाने लगे पर जनमोर्चा सरकार की परफारमेंस, सरफुटौवल और देवी लाल का झगड़ालू ताऊ बनना जनता के कोप का कारण बना। राजीव ने मध्यावधि चुनाव; १९९१ में जिस तरह चुनाव प्रचार की बागडोर संभाली, उससे लगा कि ताजी हवा का झोंका अब राजनीति का धुरंधर हो चुका मगर २१ मई १९९१ का श्रीपरेम्बुदूर का बम विस्फोट राजीव को सत्ता की बजाय इतिहास में ले गया।

अस्तु राजीव इफेक्ट आज भी संप्रग सरकार की ताकत है और प्रधानमंत्री भले ही मनमोहन हों पर नीतियां राजीव सरकार वाली ही हैं। बेशक विपक्ष की नजर में राजीव दूध के धुले न रहे हों (हालांकि आरोप सिद्ध भी नहीं हुए)। वे बहुत छोटे से कार्यकाल में ही प्रधानमंत्री रहे, राजनेता के ऊपर में भी उनका कार्यकाल महज ग्यारह वर्ष रहा पर आज के भारत पर राजीव गांधी छाप स्पष्ट देखी जा सकती है। आज विनिवेश आई.टी. दूरसंचार, क्षेत्रों की समृद्धि के पीछे राजीव का अक्स जरूर नजर आता है और यही है ताजा हवा के झोंके की महत्ता कि उसकी खुशबू उसके गुजर जाने के बाद भी मौजूदगी का अहसास कराती है।

अक्षय ऊर्जा के प्रेरणा स्रोत- राजीव गांधी (इतिहास)

कम्प्यूटीकरण, संचार सेवाएं और नवीन कार्यशैली को सामने रखकर उन्होंने जो भविष्य के भारत का सपना देखा- उसका यदि आज विश्लेषण करने बैठें तो उनकी व्यावहारिक कार्यशैली का एक-एक गुण भारत के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत सिद्ध होगा। उन्होंने देखा कि भारत में बिजली की कमी विकास की राह में चलने की गति को बाधित करेगा। तभी उन्होंने वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की खोज कराने, संभावनाओं को कार्यरूप देने पर बल दिया। उनके कार्यकाल में ही वैकल्पिक ऊर्जा संबंधी प्रकल्पों की पृष्ठभूमि तैयार हुई। आज केंद्र सरकार में वैकल्पिक ऊर्जा मंत्रालय कार्य कर रहा है तो यह उनकी ही परिकल्पना का सुफल है। मानव संसाधन मंत्रालय का होना भी उनके ही कार्यकाल की एक सार्थक परिणति है।

राजीव गांधी- राजनीति के क्षितिज पर उभरा एक ऐसा सितारा जिसकी चमक ने २१ वीं सदी के एक ऐसे भारत का भविष्य विश्व के सामने, भारतीय जनता के सामने प्रकाशित किया जो महाशक्ति बनने की क्षमता रखता है। आधुनिक विज्ञान के संसाधनों से परिपूर्ण भारत ही विश्व की महाशक्ति बन सकता है- इस संकल्प सूत्र के साथ उन्होंने २१ वीं सदी के भारत का सपना देखा। हालांकि मात्र पांच वर्षों तक ही वे भारत के प्रधानमंत्री रहे, किंतु उन्होंने जो कुछ अवदान इस देश को दिया है वह भारत को महाशक्ति बनाने के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत है। स्व. राजीव गांधी का जन्मदिन अक्षय ऊर्जा दिवस के रूप में मनाया जा रहा है तो यह प्रासंगिक ही कहा जाएगा।

स्व. राजीव गांधी राजनीति में आने के इच्छुक नहीं थे, लेकिन अपनी मां श्रीमती इंदिरा गांधी के आदेश की शिरोधार्य करके वे राजनीति में आये तो एक राजनेता बनकर नहीं बल्कि एक स्वप्नदृष्टा प्रशासक के रूप में। स्वप्नदृष्टा यदि कोई हो तो वह अच्छा प्रशासक भी होगा, यह आवश्यक नहीं। कोई अच्छा प्रशासक हो तो यह जरूरी नहीं कि वह स्वप्नदृष्टा भी हो। परंतु राजीव गांधी स्वप्नदृष्टा होने के साथ एक प्रशासक और सक्रिय कार्यदर्शी के रूप में उभरे। उन्होंने भारत को, भारत की जनता को, भारत की क्षमता को, भारतीय जनता की क्षमता को एक अक्षय ऊर्जा के रूप में देखा। उन्होंने अपनी दृष्टि दौड़ाई उन देशों की तरफ जिन्होंने आधुनिक विज्ञान के बल पर विकास किया है- अमेरिका, जर्मनी, जापान, इंग्लैंड आदि। उन्होंने दृष्टि दौड़ाई अपने देश की हालत और संसाधनों

की क्षमताओं पर। उन्होंने देखा कि वह सब कुछ तो है हमारे पास जो विकास के लिए चाहिए, फिर क्यों हम पिछड़े हैं। भारत की गौरवशाली क्षमता से वे गौरवान्वित हुए तो भारत की दैन्य-दशा से वे दुखी भी हुए। परंतु उन्होंने देखा कि यदि आधुनिक वैज्ञानिक साधनों को भारत के संसाधनों (नैसर्गिक व मानव संसाधन) से जोड़ दिया जाए तो इस देश को विकसित होने में देर नहीं लगेगी। कम्प्यूटीकरण, संचार सेवाएं और नवीन कार्यशैली को सामने रखकर उन्होंने जो भविष्य के भारत का सपना देखा- उसका यदि आज विश्लेषण करने बैठें तो उनकी व्यावहारिक कार्यशैली का एक-एक गुण भारत के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत सिद्ध होगा। उन्होंने देखा कि भारत में बिजली की कमी विकास की राह में चलने की गति को बाधित करेगा। तभी उन्होंने वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की खोज कराने, संभावनाओं को कार्यरूप देने पर बल दिया। उनके कार्यकाल में ही वैकल्पिक ऊर्जा संबंधी प्रकल्पों की पृष्ठभूमि तैयार हुई। आज केंद्र सरकार में वैकल्पिक ऊर्जा मंत्रालय कार्य कर रही है तो यह उनकी ही परिकल्पना का सुफल है। मानव संसाधन मंत्रालय का होना भी उनके ही कार्यकाल की एक सार्थक परिणति है।

यह एक सचाई है कि राजीव गांधी राजनीतिज्ञ नहीं थे। राजनीति के दांव-पेंच खेलना, सत्ता की राजनीति करना उनके स्वभाव में ही नहीं था। वे युवक थे, युवा प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने पदभार संभाला था। एक युवा की विशेषता होती है कि उसमें जीवन ऊर्जा लहराती रहती है। उस जीवन ऊर्जा का जैसा उपयोग किया जाएगा- वैसा ही फल वह देगी। उन्होंने अपने युवापन की ऊर्जा को देश के लिए रचनात्मक राजनीति की ओर मोडा। यही कारण है कि उन्होंने जो कुछ भी इस देश के लिए चिन्तन-मनन किया, जो कुछ भी व्यवस्थाएं बनाई, जो कुछ भी कार्य संचालित किए उसमें उनकी रचनात्मकता और सृजनशीलता झलकती है। रचनात्मक व सृजनशील व्यक्तित्व का गुणधर्म ही यही होता है कि वह अक्षय ऊर्जा का स्रोत होता है।

कहा गया है कि धन के तीन रूप होते हैं। एक होता है सामान्य धन, दूसरा होता है- साधन और तीसरा होता है- आराधन। धन खर्च हो सकता है किंतु उस धन से तरक्की के साधन विकसित कर लिए जाएं तो धन की निरंतरता बनती है। इस धन और साधन को आराधन के रूप में-एक विशिष्ट संकल्प एवं मिशन के रूप में इस्तेमाल किया जाए तो वह अक्षय भंडार बन जाता है। वह कभी समाप्त नहीं होता। स्व. राजीव गांधी ने अपने को प्राप्त राजसत्ता को देश के लिए विकास के संसाधन सृजित करने का मिशन मानकर कार्य किया और यही कारण है कि अल्पकाल में ही वे देश के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत बन गए तथा बने रहेंगे।

भारत के पास अक्षय ऊर्जा के सभी स्रोत इस तरह उपलब्ध हैं जैसा अन्य देशों के पास नहीं। साल के नौ महीने यहां सूरज की धूप उपलब्ध है जिससे सौर ऊर्जा प्राप्त होती रहेगी। भारत के पास हवा उस रूप में उपलब्ध है जिससे पवन ऊर्जा निरंतर प्राप्त हो सकती है। भारत तीन ओर से समुद्र से घिरा है जिससे समुद्री बिजली बनाई जा सकेगी। भारत में सदानीरा नदियों का जाल फैला है जिससे जल विद्युत प्राप्त की जा सकती है। भारत के पास वनस्पतिक ऊर्जा बनाने के लिए भी संसाधन की कमी नहीं है। वैकल्पिक ऊर्जा के लिए जितना नैसर्गिक संसाधन चाहिए वह है, फिर भी हम ऊजा की कमी के शिकार क्यों हो रहे हैं ? यह चिन्तन दिया। स्व. राजीव गांधी ने और निर्देशित किया कि वे साधन जुटाए जाएं जिनसे वैकल्पिक ऊर्जा तैयार की जाए। देश के लोगों को इसके लिए प्रशिक्षित किया जाए, प्रेरित कि;या जाए।

इसका नतीजा आज यह है कि वैकल्पिक ऊर्जा के लिए सार्थक कार्य देश में भविष्य आशादायक और उज्ज्वल है। राजीव गांधी के जन्मदिवस को अक्षय ऊर्जा दिवस के रूप में मनाकर देश की जनता को प्रेरित किया जाना समयोचित है कि हम अक्षय ऊर्जा के स्रोत विकसित करें। निश्चय ही यह देश की ओर से उन्हें एक प्रेरणास्पद श्रद्धांजलि है।

राजीव गांधी भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पुत्र और भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के पौत्र और भारत के नौवें प्रधानमंत्री थे। इनका पूरा नाम राजीव रत्न गांधी था। राजीव गांधी भारत की कांग्रेस (इ) पार्टी के अग्रणी महासचिव (१९८१ से) थे और अपनी मां की हत्या के बाद भारत के प्रधानमंत्री (१९८४-१९८९) बने। ४० साल की उम्र में देश के सबसे युवा और नौवें प्रधानमंत्रभ होने का गौरव हासिल करनेवाले राजीव गांधी आधुनिक भारत के शिल्पकार कहे जा सकते हैं। उनका निधन २१ मई को हुआ।

राजीव गांधी एक ऐसे प्रधानमंत्री के रूप में याद किये जाते हैं जिन्होंने देश में क्रीड़ाजगत और संगणक, संचार सुविधा के लिए बहुत कुछ प्रयत्न कर नया किया।

इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सहानुभूति लहर में राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस प्रचंड बहुमत से जीती। राजीव राजनीति में नौसिखिए थे। फिर भी एक युवा प्रधानमंत्री के रूप में बहुत कुछ करने की इच्छा रखते थे। उन्होंने सैम पित्रोदा को बुलाकर सी-डाट तकनीक शुरू करवाई। आज देश में संचार सुविधाओं का इतना विकास राजीव की पहल से ही हो सका है।

त्रिलोचन शास्त्री (जन्म- २० अगस्त)

कवि, शिक्षक, पत्रकार और लेखक त्रिलोचन शास्त्री का रचनाकर्म ग्राम्य समाज और लोकभाषा पर आधारित है। बतौर कवि उनकी कविताएं आत्मकथात्मक लगती है, लेकिन इसमें गरीबी एवं बदहाली का मर्मस्पर्शी वर्णन है। हिन्दी के प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह ने कहा कि त्रिलोचन अपनी अनेक कविताओं का केंद्रीय चरित्र खुद हैं। उनकी कई कविताएं आत्मकथात्मक हैं। इतनी आत्मचर्चा या तो निराला ने की है या फिर तुलसीदास ने। इतना अनात्म और निर्वैयक्तिक कवि और दूसरा नहीं है।

त्रिलोचन की कई कविताओं में गरीबी और बदहाली के कई प्रसंग हैं, लेकिन कहीं भी दीनता और भावुकता नहीं है। उनकी काव्य भाषा में सहजता का सबसे बड़ा कारण उसका अवधीपन है। कवि त्रिलोचन का जन्म उत्तर प्रदेश में सुल्तानपुर की कादीपुर गांव के कटघरापट्टी-चिरानीपट्टी में २० अगस्त १९१७ को हुआ था और उनका निधन १० दिसंबर २००७ को गाजियाबाद में हुआ था। पारिवारिक विरोधों के बावजूद मीलों पैदल जाकर पढ़ाई लिखाई करना उन्होंने पसंद किया। बालपन में ही उन्होंने अरबी फारसी और संस्कृत पढ़ी। बाद में उन्होंने अंग्रेजों में एम.ए. किया। वरिष्ठ कवि केदारनाथ सिंह ने कहा कि त्रिलोचन अपने गांव, उसके बाशिंदों और जनपद को कभी भूल नहीं पाये। उनकी कविताओं में उनका जनपद उभरकर सामने आता है। यह वैसा ही है जैसे अंग्रेजी के उपन्यासकार टामस हार्डी के उपन्यास उसके जनपद वेसेक्स पर ही केंद्रित हैं। त्रिलोचन ने अपनी घुमक्कड़ प्रवृत्ति के कारण ग्रामीण समाज, लोकभाषाओं और उसके शब्दों के प्रयोग एवं उसके अर्थों की गहराई को बहुत करीब से समझा। उनकी चुनी हुई कविताओं के संपादक सुरेश सलिल ने बताया, बाबा नागार्जुन त्रिलोचन को पंचमुख कहते थे और शमशेर ने त्रिलोचन को निराला के बाद सबसे ऊपर बताया है। ऐसा इसलिए कहा गया क्योंकि त्रिलोचन ने अपनी अवधी से लेकर नागर हिन्दी और बरवै से लेकर गीत गजल, रूबाई तक अपनी कविताओं का विस्तार दिया। इसी कारण वे महाकवि हैं। उनकी कविताओं में प्रेम जीवन, सामाजिक चिंतन, राजनीतिक चेतना और गहरी दृष्टि दिखाई देती है, जो उन्हें अपने समकालीन कवियों से अलग और विशिष्ट पहचान दिलाता है। कवि त्रिलोचन की कविताओं के पंद्रह संग्रह हैं। इसके अलावा उनकी कहानियों का एक संग्रह देशकाल भी है। उनके लिखे साहित्यिक लेखों व निबंध का भी एक संग्रह प्रकाशित है। उन्होंने मुक्तिबोध की कविताओं का चयन किया, जिसे साहित्य अकादमी ने प्रकाशित किया। उन्होंने हिन्दी के समकालीन आधुनिक कविता के कवियों को तैयार करने का काम किया, वह अंग्रेजी व यूरोपीय साहित्यिक आंदोलन और उसके कवियों की खासियत बताने के साथ तुलसी, कबीर एवं निराला की परंपरा भी समझाते थे और साहित्य परंपरा व आधुनिकता को बताना अपनी जिम्मेदारी मानते थे।

बिरजिस (जन्म- २० अगस्त)

बिरजिस ने सुलह करके स्वदेश लौट आने के अंग्रेजों के प्रस्ताव को ठुकरा दिया। अवध पर अंग्रेजों के अधिकार को मान्यता देकर उसे वैध ठहराना उन्हें मंजूर नहीं था।

अवध के नवाबों की विलासिता के कई सच्चे झूठे किस्से आज भी आम हैं, लेकिन १८५७ में देश की आन पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर पूरी जिंदगी साजिशों का सामना करते रहनेवाले आखिरी नवाब बिरजिस कदर की ट्रैजडी किसी को भी याद नहीं। लखनऊ के कैसरबाग स्थित नगीने वाली बारादरी में २० अगस्त, १८४५ को पैदा हुए बेगम हजरतमहल और युवराज वाजिदअली शाह के पहले बेटे जिर्मा मोहम्मद रमजान अली को उसके बाबा बादशाह अमजद अली ने बिरजिस नाम दिया तो सपने में भी नहीं सोचा था कि उनका पोता अपने बचपन की खुशियां इतनी जल्दी गंवा देगा। लेकिन फरवरी, १८५६ में जब बिरजिस ग्यारह साल के भी नहीं थे, अंग्रेजों ने एक साजिश के तरत अवध का राजपाट हड़प लिया और वाजिदअली शाह को निर्वासित कर कलकत्ता स्थित मटियाबुर्ज भेज दिया।

अगले ही बरस १८५७ में अंग्रेजों के इस कृत्य के खिलाफ बगावत भड़की और बागियों ने बिरजिस को नया नवाब बनाया तो उनकी ताजपोशी के जश्न में २१ तोपें दागीं ताकि उस पस्तहिम्मती की छुट्टी कर सकें, जो २२ अक्टूबर, १७६४ को बक्सर के युद्ध में नवाब शुजाउद्दौला की शर्मनाक पराजय के बाद से ही समूचे अवध में छाई हुई थी।

दरअसल, उस शिकस्त से अंग्रेजों से किसी भी तरह पार पा सकने का अवध के नवाबों का विश्वास ही जाता रहा था। इसी कारण अंग्रेजों ने वाजिदअली शाह को अपदस्थ किया तो एक भी बूंद खून नहीं बहा। ऐसे में बेगम हजरतमहल ने अपनी ओर से पहल कर अवयस्क बिरजिस को कांटों भरा ताज पहनाने का हौसला दिखाया तो स्वाभाविक ही जोशे खरोश से भरे बाबियों ने अवध से अंग्रेजी राज का खात्मा कर डाला। लेकिन आगे चलकर लखनऊ का पतन उनके टाले नहीं टला तो बिरजिस को १५ मार्च, १८५८ को सुबह मुंहअंधेरे उसे छोड़ देना पड़ा। फिर भी उनका मनोबल इतना ऊंचा था कि बौंडी रियासत में जब उन्होंने वह घोषणा सुनी, जिसमें महारानी विक्टोरिया ने ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन खत्म करके सत्ता अपने हाथ लेने और बागियों क्षमा करने की बात कही थी, तो जवाबी घोषणा में देशवासियों को सचेत करने से नहीं चूके कि अंग्रेज कभी क्षमा नहीं करते। इसलिए महारानी पर विश्वास न कर यह पूछें कि वे इतनी ही उदार हैं तो हमारा देश हमें क्यों नहीं वापस कर देतीं?

फिर तो अंग्रेजों ने उनकी जिंदगी और दूभर कर दी। जैसे-तैसे वे नेपाल पहुंचे तो वहां के राणा ने बेहद अपमानजनक शर्तों पर उन्हें तब शरण दी जब बेगम हजरतमहल ने अनेक बहुमूल्य भेटों के साथ लिखकर दिया कि हमारा अंग्रेजों से कोई बैर नहीं है। फिर भी बिरजिस ने सुलह करके स्वदेश लौट आने और सम्मानजनक पेंशन लेकर सुख-शांति से जीने के अंग्रेजों के प्रस्ताव को दृढ़तापूर्वक ठुकरा दिया। अवध के सिंहासन पर अंग्रेजों के अधिकार को मान्यता देकर उसे वैध ठहराना उन्हें कतई मंजूर नहीं था।

अलबत्ता, १८७९ में बेगम हजरतमहल और १८८७ में वाजिदअली शाह नहीं रहे तो बिरजिस की नियति उन्हें बरबस कलकत्ता खींच लाई। वहां अंग्रेजों ने वाजिदअली शाह का निधन होते ही उनकी पंद्रह लाख रुपये की सालाना पेंशन बंद कर दी थी और उनकी बेगमों, संतानों, परिजनों और आश्रितों वगैरह के जीवन निर्वाह का सवाल सामने आ गया, तो १८९२ में उन्होंने वहां पहुंचकर अब उन्हें दी जाए। लेकिन साजिशें इस मोड़ पर भी उनसे खेल करने से नहीं चूंकीं। १४

अगस्त, १८९३ को पेंशन के दावे की पैरवी हेतु लंदन रवाना होने से ऐन पहले एक दावत में उन्हें जहर दे दिया गया। बेटे खुरशीद कदर, एक बेटी और पांच वफादारों समेत उनके प्राण पखेरु उड़ गए तो अवध में इसकी प्रतिक्रिया से डरे अंग्रेजों ने मटियाबुर्ज में दफन के वक्त कब्रिस्तान के दस्तावेजों में उनके इंतकाल की सही वजह तक दर्ज नहीं होने दी। यहां मौत की वजह बुखार को बताया गया।

ईश्वरी कुमारी

मुट्ठी भर सैनिक होने के बावजूद उन्होंने प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक बिरजिस और बेगम सुरक्षित निकल नहीं जाते, वे फिरंगियों को तुलसीपुर में घुसने नहीं देगी।

सन् १८५७ में बागी हुए अवध के राजे-रजवाड़ों में से कई लखनऊ के पतन के बाद हवा का रुख देखकर बदल गए और अंग्रेजों से जा मिले। फिर भी कई ऐसे थे, जिनका राजपाट और प्राणों समेत अभय कर देने के महारानी विक्टोरिया के वादे पर भी आत्मसमर्पण गवारा नहीं हुआ। वे आखिरी सांस तक जोर आजमाने और वतन की आन पर अपना सब कुछ लुटाने में लगे रहे। इन्हीं में से एक थीं गोंडा जिले में स्थित तुलसीपुर की रानी ईश्वरी कुमारी, जिन्हें इतिहासकार अवध की रानी लक्ष्मीबाई कहते हैं।

लखनऊ के बाद बहराइच जिले की बौंडी रियासत से भी दर-ब-दर होने को मजबूर अवध के अंतिम नवाब बिरजिस कदर व उनकी माता बेगम हजरत महल ने इन्हीं ईश्वरी कुमारी की रियासत की ऐतिहासिक अचवागढ़ी में शरण ली थी। यों, तुलसीपुर की रियासत पहले से ही अंग्रेजों की आंखों में खटकती आ रही थी। क्योंकि वह न तो उनके मित्र बलरामपुर नरेश दिग्विजय सिंह से बनाकर रखती थी, न ही उनकी सत्ता स्वीकार करती थी। इसीलिए दिग्विजय सिंह के उकसावे पर अंग्रेजों ने बगावत से पहले ही एक बड़े ऑपरेशन को अंजाम देकर तुलसीपुर के राजा दृगनारायण सिंह को गिरफ्तार कर लखनऊ के बेलीगारद में नजरबंद कर दिया था। बगावत भड़कने पर उन्होंने उन पर दबाव डाला कि वे उसे कुचलने में मदद करें। लेकिन नजरबंदी की यातनाएं भी दृगनारायण की नैतिक दृढ़ता के आड़े नहीं आ सकीं और उन्होंने प्राण देकर भी फिरंगियों की मदद करना स्वीकार नहीं किया। खीझकर अंग्रेजों ने बेलीगारद में ही गोली मारकर उन्हें शहीद कर दिया।

तुलसीपुर पर कब्जे का अंग्रेजों का सपना फिर भी पूरा नहीं हो सका। क्योंकि दृगनारायण की विरासत पच्चीस वर्षीया रानी ईश्वरी कुमारी के हाथ आई तो अवध को बेगम हजरत महल जैसी ही ओज और तेज से भरी एक और वीरांगना मिल गई। इस वीरांगना ने अंग्रेजों से लोहा लेते हुए न सिर्फ सेना को संचालित करने में बल्कि आसपास के राजाओं से, जिनमें गोंडा के देवीबख्श सिंह प्रमुख थे, समन्वय बनाए रखने में भी अद्भुत कौशल का परिचय दिया। अंग्रेजों ने ईश्वरी कुमारी पर बार बार हमले किए, मगर उन्हें परास्त नहीं कर सके। वे अंत तक उनसे लड़की रहीं।

बिरजिस कदर और बेगम हजरत महल को दबोचने के लिए अंग्रेज सेनापतियों जनरल होपग्रांट व ब्रिगेडियर रोक्राफ्ट ने तुलसीपुर का रुख क्किया तो यह विकल्प खुला रखा कि ईश्वरी कुमारी बेगम व बिरजिस को उन्हें सौंप दें और निर्भय राज करें। लेकिन ईश्वरी कुमारी ने उनके इस आशय के प्रस्ताव का जवाब देने में भी अपनी तौहीन समझी और सहयोगियों मेंहदी हसन व बालाराव के साथ उन्हें रोकने निकल पड़ीं। यह जानते हुए भी कि उस दुर्दिन में उनके मुट्ठीभर सैनिक विशाल अंग्रेजी सेना का कुछ बिगाड़ नहीं पाएंगे, उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक बिरजिस और बेगम अचवागढ़ी से सुरक्षित निकल नहीं जाते, वे फिरंगियों को तुलसीपुर में घुसने नहीं देंगी।

इस बेहद विषम मुकाबले में, जब तुलसीपुर के सैनिकों पर एक-एक पल भारी था और अंग्रेज हर हाल में जीतने पर आमादा थे, जैसे ही संदेशवाहकों ने ईश्वरी कुमारी को बताया कि बिरजिस वे बेगम गढ़ी से सकुशल निकल गए हैं, उन्होंने अचानक सैनिकों के साथ कदम पीछे खींचे, दुधमुंहे बेटे के साथ घोड़े की पीठ पर बैठीं और अपनी धरती को अंतिम प्रणाम करके सुराही दर्रे से नेपाल सीमा पर स्थित दांग-देवखुर की घाटियों में जा समाईं।

दांग-देवखुर की घाटियां उन दिनों बिरजिस कदर व बेगम हजरत महल समेत अवध के तकरीबन सारे पराजित बागियों का अभयारण्य थीं, क्योंकि प्राय: फैले रहनेवाले मलेरिया के डर से अंग्रेज सेनाएं उनमें प्रवेश नहीं करती थीं। लेकिन अवध की इस रानी लक्ष्मीबाई का आगे क्या हुआ, अब तक का ज्ञात इतिहास इस बारे में कुछ खास नहीं बताता।

२१ अगस्त

वामनराव बलिराम लाखे (निधन- २१ अगस्त)

वामनराव बलिराम लाखे भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाले छत्तीसगढ़ राज्य के स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। १९१३ में लाखे जी ने अपना कार्य क्षेत्र सहकारी आंदोलन को बनाया था, जिससे वे जीवन पर्यंत जुड़े रहे। सहकारिता आंदोलन के द्वारा दु:खी और शोषित किसानों की सेवा तथासहयोग करना उनका प्रमुख उद्देश था। सन १९१५ में रायपुर में होमरूल लीग की स्थापना की गई थी। वामनराव बलिराम लराखे जी उसके संस्थापक थे। छत्तीसगढ़ में शुरू में जो राजनीतिक चेतना फैली, उसमें लाखे जी का बहुत बड़ा योगदान था। उन्होंने अपना सारा जीवन राष्ट्रीय आन्दोलन और सहकारी संगठन में बिताया।

वीनू मांकड़ (निधन- २१ अगस्त)

वीनू मांकड़ भारत के महान क्रिकेट खिलाड़ियों में से एक हैं। इनका नाम विश्व के महान ऑलराउंडरों में गिना जाता है। १९५६ में पंकज राय के साथ मिलकर उन्होंने ४१३ रन की ओपनिंग साझेदार की। यह रेकॉर्ड ५२ साल बाद टूटा। इनके बेटे अशोक मांकड़ ने भी भारत क्रिकेट टीम का प्रतिनिधित्व किया।

वीनू मांकड़ भारत के महान क्रिकेट खिलाड़ियों में से एक हैं। वीनू मांकड़ ने प्रमुख टीमों में भारत, बंगाल, गुजरात, हिंदुओं, महाराष्ट्र मुंबई, राजस्थान, पश्चिमी भारत का प्रतिनिधित्व किया। वीनू मांकड़ ने भारत के लिए ४४ टेस्ट मैचों में ३१.४७ की औसत से पांच टेस्ट शतक और ६ अर्द्धशतक सहित २१०९ रन बनाए।

कुर्रतुलऐन हैदर (निधन- २१ अगस्त)

कुर्रतुलऐन हैदर ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित उर्दू की प्रसिद्ध लेखिका थीं। कुर्रतुलऐन की पहली मौलिक कहानी प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका साकी में प्रकाशित हुई। संपादकीय में इसकी प्रशंसा विशेष उल्लेख के साथ की गई थी। इस कहानी से कुर्रतुलऐन हैदर को काफी प्रोत्साहन मिला और वह निरंतर लिखती चली गई। अपने लेखन में उन्होंने कभी किसी के अनुकरण का प्रयास नहीं किया, जो कुछ भी लिखा अपने जीवनानुभव, कल्पना और चिंतन के आधार पर ही लिखा। कुर्रतुलऐन हैदर १९५० से १९६० के मध्य लंदन में रहीं। भारत लौटने के बाद उन्होंने बम्बई में इम्प्रिंट के प्रबंध संपादक का पद संभाला। उसके बाद लगभग सात वर्ष वह इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया के संपादन विभाग के संबद्ध में रही। कथा लेखन के अलावा ललित कलाओं, खासकर संगीत और चित्रकला में भी उनकी गहरी रुचि थी। गर्दिशे रंगे चमन में उनके रेखांकन प्रकाशित हुए हैं। कुर्रतुलऐन हैदर को साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९६७) सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार (१९६९), गालिब अवार्ड (१९८५), इकबाल सम्मान (१९८७) और ज्ञानपीठ पुरस्कार (१९९१) से सम्मानित किया गया है।

बिस्मिल्लाह खाँ (निधन- २१ अगस्त)

उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ भारत रत्न से सम्मानित प्रख्यात शहनाई वादक थे। सन १९६९ में एशियाई संगीत सम्मेलन

के रोस्टम पुरस्कार तथा अनेक अन्य पुरस्कारों से सम्मानित बिस्मिल्लाह खाँ ने शहनाई को भारत के बाहर एक विशिष्ट पहचान दिलवाने में मुख्य योगदान दिया। वर्ष १९४७ में देश की आजादी की पूर्व संध्या पर जब लालकिले पर भारत का तिरंगा फहरा रहा था, तब बिस्मिल्लाह खान की शहनाई भी वहाँ आजादी का संदेश बाँट रही थी। तब से लगभग हर साल १५ अगस्त को प्रधानमंत्री के भाषण के बाद बिस्मिल्लाह खान का शहनाई वादन एक प्रथा बन गयी।

काका कालेलकर (निधन- २१ अगस्त)

काका कालेलकर भारत के प्रसिद्ध गांधीवादी स्वतंत्रता सेनानी, शिक्षाविद, पत्रकार और लेखक थे। काका कालेलकर देश की मुक्ति के लिए सशस्त्र संघर्ष के पक्षपाती थे। १९१५ ई. में गांधी जी से मिलने के बाद ही इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन गांधी जी के कार्यों को समर्पित कर दिया। गुजराती भाषा पर भी इनका अच्छा ज्ञान था। १९२२ में ये गुजराती पत्र नवजीवन के सम्पादक भी रहे थे।

२२ अगस्त

व्यंग्य के महारथी थे हरिशंकर परसाई (जन्म- २२ अगस्त)

हरिशंकर परसाई आधुनिक युग के उन चुनिंदा साहित्यकारों में शामिल हैं, जिन्होंने लेखन में व्यंग्य को एक नई ऊंचाई दी। साहित्यकार प्रेम जनमेजय ने बातचीत में कहा कि परसाई व्यंग्य के महारथी थे। उन्होंने हिंदी साहित्य में व्यंग्य लेखन को एक नयी दशा और दिशा दी। उन्होंने कहा कि परसाई लेखन में हमेशा विषयों की असीम संभावनाएं तलाशते थे। यही बात वह नए लेखकों को कहते थे। उन्हें व्यंग्य का आदर्श रचनाकार कहा जा सकता है। परसाई का जन्म २२ अगस्त, १९२४ को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमनिया गांव में हुआ था। नागपुर विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में स्नात्तकोत्तर करनेवाले परसाई ने हिंदी लेखन का रुख किया। लेखन के प्रति लगाव की वजह से वह जबलपुर में रहने लगे। जबलपुर में रहकर उन्होंने वसुधा नामक एक साहित्यिक पत्रिका की शुरुआत की और यहीं से हिंदी साहित्य में उनके सुनहरे सफर की शुरुआत हुई। हिंदी साहित्य में एक प्रखर व्यंग्यकार के रूप में उन्होंने अपना लोहा मनवाया। जनमेजय कहते हैं कि परसाई ने उस वक्त व्यंग्य लेखन शुरू किया, जब व्यंग्य दिशा से भटक गया था। व्यंग्य का मतलब लोग हास्य समझने लगे थे। उन्होंने अपनी रचनाओं और कथन से व्यंग्य को नयी ऊंचाई दी। उन्होंने कहा कि मुझे परसाई से कई बार मिलने का मौका मिला। वह बातचीत के दौरान भी व्यंग्य का इस्तेमाल करते थे। हम सभी इससे हैरान रह जाते थे। परसाई ने अपने लंबे साहित्यिक जीवन में कई रचनाएं की। इनमें जैसे उनके दिन फिरे, तिरछी रेखाएं, विकलांग श्रद्धा का दौर, पगडंडियों का जमाना और अपनी अपनी बीमारी प्रमुख हैं। परसाई को १९८२ में उनके व्यंग्य विकलांग श्रद्धा का दौर के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया। १० अगस्त, १९९५ को उनका निधन हो गया।

गिरिजाकुमार माथुर (जन्म- २२ अगस्त)

गिरिजाकुमार माथुर एक कवि, नाटककार और समालोचक के रूप में जाने जाते हैं। लम्बे अरसे तक इन्होंने आकाशवाणी की सेवा की। इनकी कविता में रंग, रूप, रस, भाव तथा शिल्प के नए-नए प्रयोग हैं। मुख्य काव्य संग्रह हैं, नाश और निर्माण, मंजीर, धूप के धान, शिलापंख चमकीले, जो बंध नहीं सका, साक्षी रहे वर्तमान, भीतर नदी की यात्रा, मैं वक्त के हूं सामने तथा छाया मत छूना मन आदि। इन्होंने कहानी, नाटक तथा आलोचनाएं भी लिखी हैं। गिरिजाकुमार माथुर की मैं वक्त के हूँ सामने नामक काव्य संग्रह साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित है।

आनन्द कुमारस्वामी (जन्म- २२ अगस्त)

आनन्द कुमारस्वामी सुविख्यात कलामर्मज्ञ भारत चिंतक थे। कुमार स्वामी ने लंदन विश्वविद्यालय से भू-विज्ञान और वनस्पतिशास्त्र की शिक्षा पाई और इंग्लैंण्ड के मिनरॉजिकल सर्वे के निर्देशक हो गए। १९०६ ई. में लंदन से डी.एस.सी करने के बाद उनकी रुचि ललित कलाओं की ओर झुकी और भारत तथा दक्षिण पूर्व एशिया का भ्रमण करके प्राचीन मूर्तियों और चित्रों का अध्ययन करने लगे। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। धर्म, दर्शन, पराविद्या, मूर्ति और चित्रकला, भारतीय साहित्य, इस्लामी कला, संगीत, विज्ञान सभी क्षेत्रों की खोज में उन्होंने अपनी मौलिकता का परिचय दिया। उनकी एक विशिष्ट देन है- कला के सन्दर्भ में उपनिषदों के भावतत्व का निरूपण।

२३ अगस्त

टी. प्रकाशम (जन्म- २३ अगस्त)

टंगटूरी प्रकाशम प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और आंध्र राज्य के प्रथम मुख्यमंत्री थे। देश में व्याप्त गरीबी को टी. प्रकाशम ने काफी करीब से देखा था, इसीलिए गांधीजी के प्रथम आन्दोलन के समय इन्होंने अपनी लाखों रुपये की बैरिस्टरी का त्याग कर दिया। आंदोलनों में भाग लेने के कारण उन्हें जेल की सजाएं मिलीं। १९२७ में साइमन कमीशन के विरोध में आयोजित प्रदर्शन पर पुलिस द्वारा की गई गोलाबारी के बीच से मृत और घायल व्यक्तियों को निकालने के लिए वे ही आगे बढ़े थे। तभी से वे आंध्र केसरी के नाम से प्रसिद्ध हो गए। १९३७ में जब देश में पहले कांग्रेसी मंत्रिमंडल स्थापित हुए तो टी. प्रकाशन सी. राजगोपालाचारी के मंत्रिमंडल में राजस्व मंत्री में सम्मिलित हुए।

बलराम जाखड़ (जन्म- २३ अगस्त)

बलराम जाखड़ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के वरिष्ठ नेता और पूर्व लोकसभा अध्यक्ष हैं। बलराम जाखड़ में मध्य प्रदेश राज्य के राज्यपाल भी रहे हैं। डॉ. बलराम जाखड़ ने सातवीं लोकसभा के लिए अपने सर्वप्रथम निर्वाचन के तुरन्त बाद अध्यक्ष पद प्राप्त करके अपने संसदीय जीवन की शुरुआत करने का गौरव प्राप्त किया। उन्हें लगातार दो बार लोकसभा में पूर्ण अवधि के लिए सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुने जाने का अनूठा सम्मान भी प्राप्त हुआ। कृषक से राजनीतिज्ञ बने बलराम जाखड़ ने लोकसभा अध्यक्ष पद की चुनौतियों का पूरी जीवंतता से मुकाबला किया और पूर्ण गरिमा, शालीनता और निष्पक्षता से सभा की कार्यवाही का संचालन किया।

विनायकराव पटवर्धन (निधन- २३ अगस्त)

विनायकराव पटवर्धन हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के गायक थे। पं. विष्णुदिगंबर पलुस्कर के शिष्यों में विनायकराव पटवर्धन अपने समय के महान गायक थे। सन १९७२ में इनकी भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण की उपाधि से विभूषित किया गया।

२४ अगस्त

राधाकमल मुखर्जी (निधन- २४ अगस्त)

राधाकमल मुखर्जी आधुनिक भारतीय संस्कृति और समाजशास्त्र के विख्यात विद्वान थे। उनकी अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, सौंदर्यशास्त्र आदि विषयों में गहरी रुचि थी। डॉ. राधाकमल मुखर्जी ने विविध विषयों में ५० से अधिक ग्रंथों की रचना की थी। वे प्राच्य और पाश्चात्य दोनों विचार धाराओं में समन्वय के समर्थक थे।

बाल गंगाधर खेर (जन्म- २४ अगस्त)

बालासाहब गंगाधर खेर भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेताओं में से एक थे। वे दो बार महाराष्ट्र प्रदेश के मुख्यमंत्री भी बने। एक वकील और सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में वे जाने जाते थे। गंगाधर खेर १९५२ से १९५४ तक ब्रिटेन में भारत के उच्चायुक्त भी रहे। उन्हें भारत सरकार द्वारा सन १९५४ में पद्मविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया था।

नर्मद (जन्म- २४ अगस्त)

नर्मद अथवा नमर्दाशंकर दवे गुजराती भाषा के युग प्रवर्तक माने जानेवाले रचनाकार थे। जिस प्रकार हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल के आरंभिक अंश को भारतेंदु युग संज्ञा दी जाती है, उसी प्रकार गुजराती में नवीन चेतना के प्रथम कालखंड को नर्मद युग कहा जाता है। भारतेंदु की तरह ही उनकी प्रतिभा भी सर्वतोमुखी थी। उन्होंने गुजराती साहित्य को गद्य, पद्य सभी दिशाओं में समृद्धि प्रदान की, किंतु काव्य के क्षेत्र में उनका स्थान विशेष है। लगभग सभी प्रचलित विषयों पर उन्होंने काव्य रचना की।

राजगुरु (जन्म- २४ अगस्त)

शिवराम हरि राजगुरु भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थे। वे सरदार भगत सिंह और सुखदेव के घनिष्ठ मित्र थे। इस मित्रता को राजगुरु ने मृत्यु पर्यंत निभाया। देश की आजादी के लिए दी गई राजगुरु की शहादत ने इनका नाम भारतीय इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित करवा दिया। राजगुरु, भगत सिंह और सुखदेव की शहादत आज भी भारत के युवकों को प्रेरणा प्रदान करती है।

चंद्रसिंह बिरकाली (जन्म- २४ अगस्त)

चंद्रसिंह बिरकाली आधुनिक राजस्थान के सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रकृति प्रेमी कवि थे। इनकी सबसे प्रसिद्ध प्रकृति परक रचनाएं लू, डाफर व बादली हैं। चंद्रसिंह बिरकाली ने महाकवि कालिदास के कई नाटकों का राजस्थानी में अनुवाद किया था। बादली और लू उनकी दो महान काव्य रचनायें हैं, जिन्होंने सारे देश का ध्यान राजस्थान की ओर आकर्षित किया था।

बीना दास (जन्म- २४ अगस्त)

बीना दास भारत की महिला क्रांतिकारियों में से एक थीं। इनका रुझान प्रारम्भ से ही सार्वजनिक कार्यों की ओर रहा था। पुण्याश्रम संस्था की स्थापना इन्होंने की थी, जो निराश्रित महिलाओं को आश्रय प्रदान करती थी। बीना दास का सम्पर्क युगांतर दल के क्रांतिकारियों से हो गया था। एक दीक्षांत समारोह में इन्होंने अंग्रेज गवर्नर स्टनली जैक्सन पर गोली चलाई, लेकिन इस कार्य में गर्वनर बाल-बाल बच गया और बीना गिरफ्तार कर ली गई। १९३७ में कांग्रेस की सरकार बनने के बाद कई राजबंदियों के साथ बीना दास को भी रिहा कर दिया गया। १९४६ से १९५१ तक बीना दास बंगाल विधान सभा की सदस्य रही थीं। गांधीजी की नौआखाली यात्रा के समय लोगों के पुनर्वास के काम में बीना ने भी आगे बढ़कर हिस्सा लिया था।

२५ अगस्त, १९६२
तसलीमा नसरीन

तसलीमा नसरीन जो एक एक बंगला लेखिका हैं और चिकित्सक हैं जो १९९४ से बांग्लादेश से निकाल दी गई हैं। वे पहले के पूर्वी पाकिस्तान और अब बांग्लादेश के मयमन सिंह शहर में २५ अगस्त, १९६२ में पैदा हुई और वहां की मेडिकल कॉलेज से १९८६ में चिकित्सक की उपाधि ली। फिर सरकारी चिकित्सक के रूप में और पुरुषों को मालिक के रूप में देखा जाता है। तब से आज तक धार्मिक आचार-व्यवहार भी पुरुषों के पक्ष में ही हैं। ऐसी समाज व्यवस्था और धार्मिक आडम्बर तथा लोगों के अवैज्ञानिक दृष्टिकोण नरे तसलीमा नसरीन को विद्रोही बना दिया और उन्हें सोचने पर मजबूर कर दिया, जिसके कारण वे दुनिया की एक बड़ी लेखिका के रूप में मशहूर हो गई।

तसलीमा नसरीन को अपने ही बांग्लादेश के कट्टरपंथी लोगों ने फतवा दे दिया कि तसलीमा नसरीन की हत्या कर दी जाये। इसी कारण तसलीमा नसरीन को अपना देश छोड़कर विदेश में शरण लेनी पड़ी, मगर फिर भी उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए आज तक भी कोई समझौता नहीं किया। अपनी जान को संकट में डालकर सच कहने और सच लिखनेवाले लोग, इस भरी दुनिया में ही बहुत कम देखने को मिलते हैं। खासकर महिला लेखिका के रूप में तो यह अकेला सबसे बड़ा उदाहरण है। औरत होते हुए भी तसलीमा नसरीन (उम्र ५५) ने खुद को कभी कमजोर नहीं समझा, बल्कि इसी बात को उसने अपनी ताकत बनाकर पुरुष समाज के ढकोसलों और शोषण का विरोध किया। दुनिया आज एक दबंग लेखिका के रूप में भी उनकी प्रशंसा करती है। तसलीमा नसरीन की लिखी कई किताबों में उन्होंने वक्त की सच्चाई को बड़ी हिम्मत के साथ लिखा है। वैज्ञानिक दृष्टि से विचारों को परखनेवाले कट्टरपंथी लोग तस्लीमा की सच्चाई का सामना नहीं कर पाये। अभी हाल ही में तसलीमा नसरीन ने अपने एक लेख में लिखा है कि मेरा कुछ भी व्यक्तिगत नहीं है, सब राजनीतिक है। मैंने अब तक अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में जो भी बताया है या जिस भी पंथ या मत की बात कही है, वे सब मेरे निजी जीवन से परे हैं। भगवान की बनाई इस इतनी बड़ी धरती पर मेरे रहने के लिए कोई घर नहीं है। इस बात पर यकीन करने पर दुख तो होता है, मगर ये सच है।

जिस महिला लेखक ने कई बेस्ट सेलर किताबें लिखी हैं, जिसे यूरोप और अमेरिका के कई पुरस्कार मिले हैं, उसका अपना कहने को कोई घर नहीं है। इतना ही नहीं, ऐसा कोई आदमी भी नहीं है, जो मुझे अपना घर भाड़े पर देने को तैयार हो। पिछली सदी के अंतिम १० सालों के शुरुआत में मैंने बांग्लादेश के ढाका शहर में एक फ्लैट खरीदा था। ३० साल की उम्र में हॉस्पिटल में चिकित्सक की नौकरी के वेतन से फ्लैट खरीदना आसान नहीं था। असल में एक प्रकाशक ने रॉयल्टी की एडवांस रकम मुझे दी थी, मैंने उसी रकम से यह फ्लैट खरीदा था। लेकिन उस फ्लैट में मैं छह महीने भी नहीं रह पाई। कट्टर मुसलमानों के दबाव में आकर उस वक्त की बांग्लादेश सरकार ने मुझे देश छोड़ने पर मजबूत कर दिया था।

आज पिछले चौबीस सालों से मैं अपने बांग्लादेश से बाहर निर्वासित का जीवन बिता रही हूं। इन चौबीस सालों में दुनिया के किसी देश में मेरा अपना कोई घर नहीं हो पाया। इस बीच कई बड़े देशों के राष्ट्रप्रमुख या प्रधानमंत्रियों से मेरी मुलाकात हुई। पर उन लोगों ने मुझै कहा कि आपके इस संघर्ष में हम आपके साथ हैं, हम आपकी मदद भी करना चाहते

हैं, बताओ आपको क्या चाहिए? इस पर मैंने उन्हें कहा कि आपके प्रेम और समर्थन के अलावा मुझे कुछ नहीं चाहिए। इस तरह मैंने कभी किसी की मदद नहीं ली। न किसी व्यक्ति की और न किसी देश की। राजनीतिक शरणार्थियों को जितनी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक मदद नियम से मिलती है, मैंने वह भी नहीं ली। मेरी लिखी किताबों और पुरस्कारों से मुझे जो पैसा मिला, उसी के सहारे मैं अपना जीवन चला रही हूं। तीस साल की उम्र में निर्वासित जीवन की लड़ाई में मैं कूद पड़ी, तब से आज तक मैं इस लड़ाई में अकेली हूं। कोई दोस्त, कोई पति, कोई भाई मेरे जीवन का सहारा नहीं बना। मुझे तोड़ देने या खत्म कर देने के बड़े-बड़े षडयंत्र रचे गये। पर मैं झुकी नहीं और टूटी भी नहीं। किसी एक शहर से भगा देने पर मैं दूसरे शहर गई, एक देश से भाग देने पर मैंने दूसरे देश में जाकर शरण ली। इतने सालों में मैंने यह अनुभव किया कि इस जुल्मी दुनिया में जिसे एक बार भगाया जाता है, वह जीवन भर भगाया जाता रहता है। अपने पूरे निर्वासित जीवन पर विचार करते हुए आज मुझे लगता है कि बांग्ला और बंगालियों के आकर्षण के कारण यूरोप और अमेरिका छोड़कर मैं भारत में आई, लेकिन भारत ने भी मुझे क्या दिया? शुरू में मैं कोलकाता में रही, लेकिन फिर वहां से भी मुझे बाहर निकाल दिया गया। बंगाल के कम्युनिस्टों ने मुस्लिम वोट के कारण मुझे वहां से भगा दिया, मगर इसके बाद भी कम्युनिस्ट लोग चुनाव नहीं जीत पाए और उसकी लंबी सत्ता का अंत हो गया। मगर इसके बाद भी पश्चिम बंगाल में मरे लिए वहां का दरवाजा बंद ही रहा। बल्कि ममता सरकार ने तो उस दरवाजे पर डबल ताला लगवा दिया।

दिल्ली में रहते हुए बांग्ला संस्कृति से जुड़ने की इच्छा रही। इसीलिए चित्तरंजन पार्क मेरे लिए सही जगह है। पिछले कई सालों से मैं चित्तरंजन पार्क में किराये का फ्लैट ढूंढ रही हूं। फ्लैट के मालिक फ्लैट दिखाते भी हैं, मगर जब एग्रीमेंट करने की बात आती है तो बंगाली मकान मालिक भी इन्कार कर देते हैं। ये लोग मेरी किताबों के प्रशंसक हैं, मेरा सम्मान भी करते हैं, लेखक व व्यक्ति के तौर पर मेरी बहुत तारीफ भी करते हैं, लेकिन मुल्ला-मौलवियों का फतवा, मेरे सिर की कीमत और मेरे साथ की जेड़ सुरक्षा से ये सब लोग डरते हैं। सिर्फ बंगाली ही नहीं पंजाबी और गुजराती मकान मालिकों के साथ भी यही समस्या है कि मैं तसलीमा नसरीन हूं। लोग मुझे सलाम करते हैं, लेकिन जिस मकान में वे रहते हैं उसमें मुझे रहने की इजाजत नहीं देते। कारण वे कोई झंझट नहीं चाहते। कोई कट्टरपंथी मेरी हत्या कर देगा, मुझे निशाना बनाकर बम फेंकेगा, तो उससे उनके मकान को नुकसान पहुंचेगा। फिलहाल मैं जिस घर में रहती हूं वो मेरे एक दोस्त का घर है। दोस्त की मृत्यु हो चुकी है। अब उसका बेटा वो मकान बेचना चाहता है, बस। इसीलिए मुझे वो घर छोड़ देना पड़ा। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने चुनाव के दौरान कहा था कि तसलीमा को पश्चिम बंगाल से क्यों भगाया गया था? अगर तस्लिमा चाहें तो हम गुजरात में उन्हें सुरक्षा देंगे।

असल में सारी समस्या मेरे नाम को लेकर है। अनेक मकान मालिक मुझे किराये पर मकान नहीं देना चाहते क्योंकि मेरे साथ सुरक्षाकर्मी रहते हैं पर मेरे लिए आज सुरक्षाकर्मी से ज्यादा घर जरूरी है। महिलाओं को अपने लिए अलग घरों की जरूरत है, जहां वे निश्चित होकर अपना लेखन कार्य कर सकें, पढ़ सकें, सोच सकें। मुझे कई बार अपनी नियति पर दुख होता है। मैंने इस भरी दुनिया में एक सुंदर, स्वस्थ समाज की कामना की थी, बस। यही मेरा गुनाह था, जिसकी सजा के रूप में आज मैं दर दर भटक रही हूं।

अल्लामा मशरिकी

२५ अगस्त १८८८ को गणितज्ञ, राजनीतिज्ञ सिद्धांतकार व इस्लाम के विद्वान इनायतुल्ला खान मशरिकी (अल्लामा

मशरिकी) का जन्म अमृतसर में हुआ था। १९२४ में उन्होंने तजकिराह नामक किताब लिखी जो विज्ञान की दृष्टि से कुरान पर की गयी टिप्पणी थी। यह किताब १९२५ में नोबेल पुरस्कार के लिए नामित हुई थी। उन्होंने तहरीक आंदोलन की शुरुआत की, जिसका मूल उद्देश्य मुस्लिमों को ऊपर उठाते हुए समाज में व्यापक परिवर्तन लाना था। उन्हें ३३ वर्ष की उम्र में ही अफगानिस्तान का राजदूत और सर की उपाधि दी गयी थी जिसे उन्होंने मना कर दिया। २७ अगस्त १९६३ को लाहौर में उनका निधन हुआ।

हरिभाऊ उपाध्याय (निधन- २५ अगस्त)

हरिभाऊ उपाध्याय भारत के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा राष्ट्रसेवी थे। उनकी हिन्दी साहित्य को विशेष देन उनके द्वारा बहुमूल्य पुस्तकों का रूपांतरण है। कई मौलिक रचनाओं के अतिरिक्त उन्होंने जवाहरलाल नेहरू की मेरी कहानी और पट्टाभि सीतारमैया द्वारा लिखित कांग्रेस का इतिहास का हिन्दी में अनुवाद किया। हरिभाऊ जी की अनेक पुस्तकें आज हिन्दी साहित्य जगत को प्राप्त हो चुकी हैं। महात्मा गांधी से प्रभावित होकर हरिभाऊ उपाध्याय राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े थे। पुरानी अजमेर रियासत में उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा।

अहमद फराज (निधन- २५ अगस्त)

अहमद फराज पैदाइश से हिन्दुस्तानी और विभाजन की त्रासदी की वजह से पाकिस्तानी के उन उर्दू कवियों में थे जिन्हें फैज अहमद फैज के बाद सबसे अधिक लोकप्रियता मिली। अहमद फराज का असली नाम सैयद अहमद शाह अली था। भारतीय जनमानस ने उन्हें अपूर्व सम्मान दिया, पलकों पर बिठाया और उनकी गजलों के जादुई प्रभाव से झूम झूम उठा।

बैरिस्टर वीरचंद राघव गांधी (जन्म- २५ अगस्त)

११ सितम्बर १८९३ को अमेरिका के शिकागो में विश्व बंधुत्व के प्रचार हेतु विश्व धर्म परिषद का आयोजन किया था। इस धर्म परिषद में विश्व के विभिन्न धर्म एवं संप्रदाय के करीबन ३ हजार प्रतिनिधियों ने शिकस्त की थी। भारत की ओर से इस परिषद में कुल १२ प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे, जिसमें से एक जैन धर्म का प्रतिनिधित्व करनेवाले बैरिस्टर वीरचंद राघवजी गांधी भी थे।

गांधी की उम्र मात्र २९ वर्ष की थी तब वीरचंद गांधी ने जब विश्व धर्म परिषद में अपना भाषण दिया और अपने विचार प्रदर्शित किये। अपने भाषण में उन्होंने अति मधुर वाणी में जैन धर्म का तत्वज्ञान, जैन धर्म के मूल तत्व, जैन आचार-विचार, रहन-सहन एवं जैन सिद्धांतों का प्रभावी रूप से निरूपण किया। गांधजी के भाषण की विशेषता यह रही कि उन्होंने किसी भी अन्य धर्म के बारे में किसी भी प्रकार की कोई टिप्पणी नहीं की।

अपने भाषण में उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति अहिंसा में विश्वास करता हो, विचारों में अनेकांतवाद पालता हो, वही सही मायने में जैन है। इस जगत में जो अच्छा एवं सुंदर है, उसे निर्मल भावनाओं से देखिये और सभी धर्मों के प्रति एक समान आदर रखना चाहिए ऐसे उनके विचार थे। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर समयोपरांत उन्होंने क्रिश्चन धर्म का अभ्यास किया और दि अननोन लाइफ ऑफ जेसस क्रिस्ट नामक किताब लिखी।

वीरचंद गांधी भारतीय संस्कृति और जैन धर्म, हिंदू धर्म तथा बौद्ध धर्म के अभ्यासक एवं विचारक थे। उम्र के २१वें साल में वें भारत जैन संघ के पहले सचिव निर्वाचित हुए। पालिताना में अंग्रेजों ने यात्रा में आनेवालों पर जो कर लगाया था, उसे १८८५ में गांधी ने बंद कराया था।

२६ अगस्त

एन.एस. हार्डिकर (निधन- २६ अगस्त)

नारायण सुब्बाराव हार्डिकर भारत के स्वतंत्रता सेनानी और कांग्रेस के प्रसिद्ध राजनेता थे, जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में प्रसिद्ध हिन्दुस्तान सेवादल की स्थापना की थी। बंगाल विभाजन के विरोध में नारायण सुब्बाराव ने आर्य बाल सभा का गठन किया था। आजादी के बाद वर्ष १९५२ में उन्हें राज्य सभा का सदस्य चुना गया था। देश के प्रति निष्ठा और सेवा भावना को देखते हुए भारत सरकार ने नारायण सुब्बाराव को पद्मभूषण से सम्मानित किया था।

मेनका गांधी (जन्म- २६ अगस्त)

मेनका गांधी भारत की प्रसिद्ध राजनेत्री, पर्यावरणवादी कार्यकर्ता एवं पशु-अधिकारवादी हैं। भारत में पशु अधिकारों के प्रश्न को मुख्यधारा में लाने का श्रेय मेनका गांधी को ही जाता है। सन १९९२ में इन्होंने पीपल फार अनिमल्स नामक एक गैर-सरकारी संगठन आरम्भ किया जो पूरे भारत में (पशु) आश्रय चलाता है।

चतुरसेन शास्त्री (जन्म- २६ अगस्त)

आचार्य चतुरसेन शास्त्री हिन्दी साहित्य के एक महान उपन्यासकार थे। इनका अधिकांश लेखन ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित था। आचार्य चतुरसेन के उपन्यास रोचक और दिल को छूनेवाले होते हैं। देवकीनन्दन खत्री जी की चन्द्रकान्ता उपन्यास तो लोगों को इतनी भाया कि लाखों लोगों ने उसे पढ़ने के लिए हिन्दी सीखी। इनकी सर्वाधिक चर्चित कृतियां वैशाली की नगरवधू, वयं रक्षाम और सोमनाथ हैं। आचार्य चतुरसेन की पुस्तक वयं रक्षाम: का मुख्य पात्र रावण है न कि राम। यह रावण से संबंधित घटनाओं का जिक्र करती है और उनका दूसरा पहलू दिखाती है। इसमें आर्य और संस्कृति के संघर्ष के बारे में चर्चा है।

बंसीलाल (जन्म- २६ अगस्त)

चौधरी बंसीलाल हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री और स्वतंत्रता सेनानी भी थे। अपने मुख्यमंत्रित्व में बंसीलाल ने हरियाणा में कृषि, सिंचाई, विद्युत, शिक्षा, स्वास्थ्य और यातायात के क्षेत्र में इतना काम किया कि, उससे हरियाणा उन्नति के मार्ग में कई कदम आगे बढ़ गया।

मदर टेरेसा- सिस्टर से संत तक

वेटिकन सिटी में रविवार को आयोजित एक कार्यक्रम में मदर टेरेसा को संत की उपाधि दी गई। यह भारत के लिए भी गर्व की बात है क्योंकि मदर टेरेसा का जन्म तो कहीं और हुआ, लेकिन उन्होंने अपनी कर्मभूमि हिंदुस्तान को बनाया और यहीं अपना जीवन उन्होंने मानव सेवा को समर्पित कर दिया। चूंकि संत टेरेसा का रिश्ता भारत से है तो भारत में ऐतिहासिक पल को लेकर जोश दुनिया से निराला था। कोलकाता में उनकी मिशनरी से लेकर बैंगलोर, रांची और जगह-जगह संत टेरेसा की प्रार्थना की जा रही थी। दरअसल मानवता की सेवा करनेवाली संत टेरेसा का पूरा जीवन ही दीन-

दुखियों के लिए था। संत टेरेसा जैसी शख्सियत मरती नहीं। आज से ईश्वर का हिस्सा बनीं ममतामयी मदर टेरेसा ने दो बार अपने चमत्कार से दुनिया को विस्मृत किया और आज भी करोड़ों लोगों के जेहन में जिंदा हैं। इसीलिए हम उन्हें संत कहते हैं। संत यानी सीधे ईश्वर का हिस्सा, जिनके आदर्श और बातें सीधे ईश्वर की बातें मानी जाती हैं। संत टेरेसा का जीवन एक मिसाल है। कैसे अकाल और युद्ध में घायलों के लिए उन्होंने अपनी जिंदगी दे दी। मां तो ममतामयी होती ही है, लेकिन मां जब संत की उपाधि से सम्मानित हुई तो हमेशा के लिए अमर हो गईं। भारत के लिए मदर को मिलनेवाली संत की उपाधि एक बड़े सम्मान की बात है। मदर टेरेसा का निधन पांच सितंबर, १९९७ को हुआ था। इसी कारण पोप फ्रांसिस ने उनकी १९वीं पुण्यतिथि की पूर्वसंध्या पर मास (विशेष प्रार्थना) का आयोजन किया और इसी दौरान उन्हें संत की उपाधि दी गई। मदर टेरेसा के मिशनरीज ऑफ चैरिटी से दुनिया भर की तीन हजार से ज्यादा नन जुड़ी हुई हैं। कुष्ठ रोगियों की बस्तियां, गरीबों के लिए रसोई, स्कूल, आश्रम, अनाथ बच्चों के लिए घर आदि ऐसी सेवाएं हैं जो मदर टेरेसा ने शुरू की थी। ऐसा माना जाता है कि दुनिया में लगभग सारे लोग सिर्फ अपने लिए जीते हैं, लेकिन मानव इतिहास में ऐसे कई मनुष्यों के उदाहरण हैं जिन्होंने अपना तमाम जीवन परोपकार और दूसरों की सेवा में अर्पित्त कर दिया। मदर टेरेसा भी ऐस ही महान लोगों में से थीं जो सिर्फ दूसरों के लिए जीवन जिया। मदर टेरेसा ऐसा नाम है जिसका स्मरण होते ही हमारा हृदय श्रद्धा से भर उठता है और चेहरे पर एक खास आभा उमड़ जाती है। मदर टेरेसा एक ऐसी महान आत्मा थीं जिनका हृदय संसार के तमाम दीन-दरिद्र, बीमार, असहाय और गरीबों के लिए धड़कता था और इसी कारण उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन उनके सेवा और भलाई में लगा दिया। मदर टेरेसा का जन्म २६ अगस्त १९१० को स्कॉप्जे (अब मसेदोनिया में) में हुआ। उनके पिता निकोला बोयाजू एक साधारण व्यवसायी थे। सिस्टर टेरेसा आयरलैंड से ६ जनवरी, १९२९ को कोलकाता में लोरेटो कॉन्वेंट पहुंची। वह एक अनुशासित शिक्षिका थीं और विद्यार्थी उनसे बहुत स्नेह करते थे। वर्ष १९४४ में वह हेडमिस्ट्रेस बन गई। उनका मन शिक्षण में पूरी तरह रम गया था, लेकिन उनके आस-पास फैली गरीबी, दरिद्रता और लाचारी उनके मन को बहुत अशांत करती थी। १९४३ के अकाल में शहर में बड़ी संख्या में मौतें हुईं और लोग गरीबी से बेहाल हो गए। १९४६ के हिन्दू-मुस्लिम दंगों ने तो कोलकाता शहर की स्थिति और भयावह बना दी। जब वह भारत आई तो उन्होंने यहां बेसहारा और विकलांग बच्चों और सड़क के किनारे पड़े असहाय रोगियों की दयनीय स्थिति को अपनी आंखों से देखा। इन सब बातों ने उनके हृदय को इतना द्रवित किया कि वे उनसे मुंह मोड़ने का साहस नहीं कर सकीं। इसके पश्चात उन्होंने जनसेवा का जो व्रत लिया, जिसका पालन वो अनवरत करती रहीं। मदर टेरेसा ने जिंदगी भर लोगों की सेवा की, लेकिन कई बार उनकी आलोचना भी की गई। उन्होंने इसका परवाह किये बिना मानवता की सेवा की और आखिरकार उन्हें संत घोषित किया गया। वो सही मायने में मानवता का आराधना करनेवाली एक महान संत थी।

२७ अगस्त

देश की पहली महिला मरीन इंजीनियर सोनाली बनर्जी

२७ अगस्त १९९९ कलकत्ता का (अब कोलकाता) में सोनाली बनर्जी देश की पहली महिला मरीन इंजीनियर बनीं। मात्र २५ वर्ष की उम्र में मरीन इंजीनियर रिसर्च इंस्टीट्यूट से सर्टिफिकेट प्राप्त किया। पुरुषों के वर्चस्व वाले इस क्षेत्र में यह सबसे कठिन परीक्षा होती है जिसे सोनाली ने पहले प्रयास में ही पास किया।

इसके लिए उन्हें बहुत कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा। इस सफलता के साथ ही भारत भी उन चुनिंदा देशों के समूह में शामिल हो गया, जहां महिला नेवी ऑफिसर जहाज में अपनी सेवाएं दे रही हैं।

२८ अगस्त

आबिदा सुल्तान (जन्म- २८ अगस्त)

आबिदा सुल्तान भोपाल रियासत की राजकुमारी थी। आबिदा सुल्तान को भारत की पहली महिला पायलट होने का गौरव प्राप्त था। इन्हें २५ जनवरी, १९४२ को उड़ान लाइसेंस मिला था।

राजेंद्र यादव (जन्म- २८ अगस्त)

राजेंद्र यादव हिन्दी साहित्य की सुप्रसिद्ध पत्रिका हंस के सम्पादक और लोकप्रिय उपन्यासकार थे। राजेंद्र यादव ने १९५१ ई. में आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिन्दी) की परीक्षा प्रथम श्रेणी, प्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की। जिस दौर में हिन्दी की साहित्यिक पत्रिकाएं अकाल मौत का शिकार हो रही थीं, उस दौर में भी हंस का लगातार प्रकाश राजेंद्र यादव की वजह से ही संभव हो पाया। उपन्यास, कहानी, कविता और आलोचना सहित साहित्य की तमाम विधाओं पर उनकी समान पकड़ थी।

एम.जी.के. मेमन (जन्म- २८ अगस्त)

एम.जी.के. मेनन भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के भूतपूर्व अध्यक्ष हैं। वे अंतरिक्ष विभाग, इसरो के परामर्शदाता हैं। मेनन जी भारतीय सांख्यिकीय संस्थान, कोलकाता के अध्यक्ष हैं। प्रोफेसर मेनन ने १९५३ में ब्रिस्टोल विश्वविद्याल, यू.के. से पी.एच.डी की उपाधि ग्रहण की थी। उन्हें भारत और विदेशों से असंख्य मानद डॉक्टरेट आदि की उपाधियाँ हासिल हुई हैं। प्रोफेसर मेनन भारत में सभी तीनों विज्ञान अकादमियों के फेलो हैं और वे प्रत्येक के अध्यक्ष रह चुके हैं।

२९ अगस्त

सिस्टर यूप्रासिआ (निधन- २९ अगस्त)

सिस्टर यूपासिआ भारतीय ईसाई महिला संत थीं। २३ नवम्बर, २०१४ को वेटिकन शहर में पोप फ्रांसिस ने सेंट पीटर स्क्वयर पर उन्हें मरणोपरान्त संत की उपाधि दी। वे जीवन भर त्रिशूर के आश्रम में ही रहीं।

बनारसी दास गुप्ता (निधन- २९ अगस्त)

बनारसी दास गुप्ता हरियाणा राज्य के भूतपूर्व मुख्यमंत्री थे। उन्होंने स्वतंत्रता सेनानी होते हुए सामाजिक, राजनीतिक एवं सार्वजनिक जीवन को अपने अंदाज में जिया। बनारसी दास गुप्ता हिन्दी भाषा के पक्षधर और यथार्थवादी आदर्श जननायक थे। उन्होंने राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को मजबूत बनाकर हरियाणा की प्रगति में अपना बहुमूल्य योगदान दिया था।

के. राधाकृष्णन (जन्म- २९ अगस्त)

के. राधाकृष्णन भारत के शीर्ष वैज्ञानिकों में से एक हैं। वे भारत सरकार के अंतरिक्ष आयोग के अध्यक्ष, अंतरिक्ष विभाग के सचिव और इसरो (भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन) के अध्यक्ष रह चुके हैं। एक तकनीकी तंत्र विशेषज्ञ, उत्तम वैयक्तिक और अंतर-वैयक्तिक विशेषताओं से युक्त सक्रिय और परिणामोन्मुख प्रबंधक, महत्वपूर्ण दृष्टिकोण सहित विदग्ध संस्था-निर्माता, सकारात्मक रवैये सहित एक सक्षम प्रशासक और युवा पीढ़ी में नेतृत्व कौशल प्रदान करने के लिए के. राधाकृष्णन जाने जाते हैं। यह श्रेय पानेवाले वे प्रेरक नेता हैं। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, उपयोग और अंतरिक्ष कार्यक्रम प्रबंधन में ४० वर्षों से भी अधिक विस्तृत उनका लब्धप्रतिष्ठ कैरियर कई उपलब्धियों से सुसज्जित रहा है।

ध्यान चन्द (जन्म- २९ अगस्त)

मेजर ध्यानचन्द एक भारतीय हॉकी खिलाड़ी थे, जिनकी गिनती श्रेष्ठतम कालजयी खिलाड़ियों में होती है। मानना होगा कि हॉकी के खेल में ध्यानचंद ने लोकप्रियता का जो कीर्तिमान स्थापित किया है उसके आसपास भी आज तक दुनिया का कोई खिलाड़ी नहीं पहुंच सका।

माधव श्रीहरि अणे (जन्म- २९ अगस्त)

माधव श्रीहरि अणे भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाले स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। इनके पिता एक विद्वान व्यक्ति थे। माधव श्रीहरि अणे लोकमान्य तिलक से अत्यधिक प्रभावित थे। ये कुछ समय तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य भी रहे। गाँधीजी के नमक सत्याग्रह के समय इन्होंने भी जेल की सजा भोगी। १९४३ से १९४७ ई. तक ये श्रीलंका में भारत के उच्चायुक्त भी रहे। आजादी प्राप्त करने के बाद इन्हें बिहार का राज्यपाल भी बनाया गया था।

जीवराज मेहता (जन्म- २९ अगस्त)

जीवराज मेहता भारत के एक प्रमुख चिकित्सक और देश सेवक थे। इन्हें गुजरात राज्य का प्रथम मुख्यमंत्री बनने का गौरव प्राप्त हुआ था। मेहता जी अपने विद्यार्थी जीवन से ही बहुत मेधावी और प्रतिभाशाली छात्र थे। इन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन में ही इण्डियन एसोसिएशन का गठन किया था। यहीं इनका सम्पर्क राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से हुआ और ये गांधी जी के सहयोगी बन गये। गांधीजी अपना हर चिकित्सीय परामर्श डॉक्टर जीवराज मेहता से लिया करते थे। गाँधी जी और मेहता जी का यह सम्बन्ध जीवन पर्यंत बना रहा था।

मदर टेरेसा

२९ अगस्त १९१० को करुणा व सेवा की मूर्ति भारत रत्न मदर टेरेसा का जन्म मेसिडोनिया (यूगोस्लाविया) की राजधानी स्कोप्जे में हुआ था। उनका पूरा नाम अग्नेस गोंनक्शा बोजाक्शिहउ है।

मात्र १८ वर्ष की उम्र में दीक्षा लेकर वे सिस्टर टेरेसा बनीं और १९२९ में कोलकाता आयीं। शिक्षिका का काम करने के बाद वे नर्सिंग की ट्रेनिंग पूरी कर गरीबों व अनाथों की सेवा में लग गयीं। उन्होंने मिशनरीज ऑफ चैरिटी की स्थापना की और निर्मल हृदय और निर्मल शिशु भवन के नाम से आश्रम खोला। पीड़ित मानवता की सेवा के लिए उन्हें पद्मश्री, नोबेल शांति पुरस्कार, भारत रत्न सहित अनेक अंतर्राष्ट्रीय सम्मान व पुरस्कार दिये गये, पांच सितंबर १९९७ को कोलकाता में उनका निधन हो गया।

३० अगस्त

गोविंद वल्लभ पंत

पंत जी ने पहाड़ी क्षेत्र को मुख्यधारा की राजनीति में लाने में अहम भूमिका निभाई

उत्तर प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री और भारत रत्न गोविंद वल्लभ पंत को राजनीतिक मानचित्र पर जगह दिलाने का श्रेय जाता है। इंदिरा गांधी अंतराष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सुभाष धूलिया के शब्दो में, पंत जी ने तत्कालीन उत्तर प्रदेश की राजनीतिक सत्ता में पहाड़ी क्षेत्र की उपस्थिति दर्ज कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उन्होंने कहा कि राजनीतिक रूप से पिछड़े पहाड़ी क्षेत्र को मुख्यधारा में लाने और उसके दखल को दर्ज कराने का श्रेय पंत जी को ही जाता है। धूलिया के अनुसार ऐसे राजनेताओं की सूची बड़ी छोटी है, जिन्होंने राजनीति के साथ साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में भी अपना योगदान दिया। उन्होंने का कि उत्तराखंड ने शिक्षा के क्षेत्र में जो भी उपलब्धियां हासिल की हैं, पंत जी ने उनकी आधारशिला रखी। ३० अगस्त १८८७ को उत्तराखंड के अल्मोड़ा स्थित खूंट गांव में जन्मे गोविंद वल्लभ पंत ने वर्ष १९०५ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और १९०९ में उन्होंने कानून की परीक्षा उत्तीर्ण की। काकोरी मुकदमे ने एक वकील के तौर पर उन्हें पहचान और प्रतिष्ठा दिलाई। वर्ष १९३७ में पंत जी संयुक्त प्रांत के प्रथम प्रधानमंत्री बने और १९४६ में उत्तर प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री बने। १० जनवरी १९५५ को उन्होंने भारत के गृह मंत्री का पद संभाला। पंत जी को काफी करीब से देखनेवाले वरिष्ठ पत्रकार नरेश मिश्र ने बताया कि पंत जी स्वतंत्रता संग्राम के जुझारू नेता और अनेक विषयों के जानकार भी थे। मिश्र ने कहा कि चीन से सीमा संबंधी विवाद के निपटारे में पंत जी ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पहाड़ी क्षेत्र के बारे में उनके व्यापक ज्ञान और उनकी विश्वदृष्टि को देखते हुए ही उन्हें यह जिम्मेदारी सौंपी गई थी, जिसका उन्होंने पूरी कुशलता से निर्वाहन किया। उन्होंने कहा पंत जी के राजनीतिक सिद्धांत का आवश्यक अंग यह था कि वह अपने क्षेत्र में सीमित नहीं रहते थे, बल्कि वह सभी क्षेत्रों को समान भाव से देखते थे। हालांकि उन्होंने कभी भी अपने क्षेत्र को नजरअंदाज नहीं किया। हिन्दी को राजकीय भाषा का दर्जा दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले पंत जी का देहांत सात मार्च १९६१ को हुआ।

दारा शिकोह (निधन- ३० अगस्त)

दारा शिकोह मुगल बादशाह शाहजहाँ और मुमताज बेगम का सबसे बड़ा पुत्र था। शाहजहाँ अपने इस पुत्र को बहुत अधिक चाहता था और इसे मुगल वंश का अगला बादशाह बनते हुए देखना चाहता था। शाहजहाँ भी दारा शिकोह को बहुत प्रिय था। दारा बहादुर इन्सान था और बौद्धिक दृष्टि से उसे अपने प्रपितामह अकबर के गुण विरासत में मिले थे। ३० अगस्त, १६५९ ई. को सजा के तहत दारा शिकोह का सिर काट लिया गया।

बिपिन चन्द्र (निधन- ३० अगस्त)

बिपिन चन्द्र प्रख्यात इतिहासकार एवं राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के पूर्व अध्यक्ष थे। प्रोफेसर बिपिन चन्द्र भारत के स्वतंत्रता संघर्ष और आधुनिक इतिहास लेखन परंपरा में मार्क्सवादी चिंतन धारा के इतिहासकार थे। वह इन दिनों शहीदे आजम भगत सिंह पर जीवनी लिख रहे थे। इसके अलावा वह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सदस्य भी थे। उन्होंने इतिहास

पर करीब २० पुस्तकें लिखी है। जिनमें आधुनिक भारत का इतिहास, आधुनिक भारत और आर्थिक राष्ट्रवाद, सांप्रदायिकता, भारतीय वामपंथ पर उनकी पुस्तकें चर्चित थी। उन्होंने जयप्रकाश नारायण और आपातकाल पर भी किताबें लिखी थीं।

कनाईलाल दत्त (जन्म- ३० अगस्त)

कनाईलाल दत्त भारत की आजादी के लिए फाँसी के फंदे पर झूलनेवाले अमर शहीदों में से एक थे। इन्होंने १९०५ में बंगाल के विभाजन का पूर्ण विरोध किया था। अपनी स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करके कनाईलाल कोलकाता आ गये थे और बारीन्द्र कुमार के दल में शामिल हो गए। १९०८ में मुजफ्फरपुर के अंग्रेज अधिकारी किंग्सफोर्ड पर हमला किया गया। इस हमले में कनाईलाल दत्त, अरविन्द घोष, बारीन्द्र कुमार आदि पकड़े गये। इनके दल का एक युवक नरेन गोस्वामी अंग्रेजों का सरकारी मुखबिन बन गया। क्रांतिकारियों ने इससे बदला लेने का निश्चय कर लिया था। अपना यह कार्य पूर्ण करने के बाद ही कनाईलाल पकड़े गए और उन्हें फांसी दे दी गई।

सरदार हुकम सिंह (जन्म- ३० अगस्त)

सरदार हुकम सिंह एक भारतीय राजनीतिज्ञ तथा सन १९६२ से १९६७ के बीच लोकसभा के तीसरे अध्यक्ष थे। वे राजस्थान के राज्यपाल (१९६७ से १९७२) भी रहे थे। हुकम सिंह दोनों सभाओं की उस संसदीय समिति के भी सभापति थे, जिसे पंजाबी सूबा के मामले पर सद्भावना और तर्कसंगत दृष्टिकोण के आधार पर कोई समाधान ढूंढने के लिए अक्टूबर १९६५ में गठित किया गया था।

भगवतीचरण वर्मा (जन्म- ३० अगस्त)

भगवतीचरण वर्मा हिन्दी जगत के प्रमुख साहित्यकार हैं। इन्होंने लेखन तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में ही प्रमुख रूप से कार्य किया। इसके बीच बीच में इनके फिल्म तथा आकाशवाणी से भी सम्बन्ध रहे। बाद में यह स्वतंत्र लेखन की वृत्ति अपनाकर लखनऊ में बस गये। इन्हें राज्यसभा की मानद सदस्यता प्राप्त करायी गई। भगवतीचरण वर्मा मुख्यतया उपन्यासकार हों या कवि, नाम उनका उपन्यासकार के रूप में ही अधिक हुआ है, विशेषतया चित्रलेखा के कारण।

उपन्यास लेखन को नयी दिशा देनेवाले रचनाकार भगवती चरण वर्मा को हिन्दी साहित्य ने भूले बिसरे चित्र बना दिया। भाषा पर गहरी पकड़ रखनेवाले वर्मा की रचनाएं आज भी प्रासंगिक हैं लेकिन साहित्य जगत में आज वह लगभग बिसर से गए हैं। ज्ञानपीठ के निर्देशक और वरिष्ठ साहित्यकार रवींद्र कालिया ने कहा कि भगवती चरण वर्मा हिन्दी के महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं। मगर हिन्दी ने उन्हें लगभग भुला सा दिया और यह कुछ उनके उपन्यास भूले बिसरे चित्र के जैसा ही हुआ। उन्होंने कहा कि भगवतीचरण वर्मा, यशपाल और अमृतलाल नागर की त्रयी के बेहद अहम रचनाकार थे, जिनके लेखन का प्रभाव आनेवाली पीढ़ियों पर काफी दूर तक दिखाई देता है। उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के साफीपुर में ३० अगस्त १९०३ को जन्में वर्मा ने विभिन्न पत्र पत्रिकाओं के लिए लेखन करने के बाद १९५७ से स्वतंत्र लेखन शुरू किया। वर्ष १९६१ में उन्हें पांच खंडों में लिखे गए उनके उपन्यास भूले बिसरे चित्र के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। १९७१ में उन्हें पद्मभूषण सम्मान प्रदान किया गया और १९७८ में वह राज्यसभा के लिए मनोनीत किए गए। पांच अक्टूबर १९८१ को उनका निधन हो गया। साहित्यकार विलास गुप्ते ने कहा, भगवती चरण वर्मा

ने चित्रलेखा लिखा था, तब प्रेमचंद का साहित्य लोगों के जेहन में था। समसामयिक जीवन की वास्तविकताओं से इतर उस दौर में इतिहास को आधार बनाते हुए संस्कृत के शब्दों का इस्तेमाल कर चित्रलेखा की रचना करने का साहस सिर्फ वही दिखा सकते थे। वह कहते हैं, हालांकि चित्रलेखा में पाप और पुण्य को लेकर सवाल उठाए गए थे, लेकिन आध्यात्मिक और नैतिकता की दृष्टि से यह एक उत्तम उपन्यास था। आज भी यह बेहद महत्वपूर्ण है। गौरतलब है कि चित्रलेखा पर १९४१ मेंऔर १९६४ में इसी नाम से दो फिल्में बनाई गई। वह कहते हैं टेढ़े मेढ़े रास्ते उपन्यास में आजादी के ठीक पहले और बाद के हालात का जिक्र है। इस उपन्यास में एक लय है और वास्तविकता का सटीक चित्र भी है। इसकी भाषा आधुनिक है। भूले बिसरे चित्र और चित्रलेखा के अलावा उनके अन्य प्रमुख उपन्यास कहीं ना जाए का कहिये, रेखा, सबहीं नचावत राम गोसाई, सामर्थ्य और सीमा, संपूर्ण नाटक, सीधी सच्ची बातें, टेढ़े मेढ़े रास्ते और वह फिर नहीं आई हैं।

कवि के रूप में भगवतीचरण वर्मा के रेडियो रूपक महाकाल, कर्ण और द्रौपदी- जो १९५६ ई. में त्रिपथगा के नाम से एक संकलन के आकार में प्रकाशित हुए हैं, उनकी विशिष्ट कृतियां हैं। यद्यपि उनकी प्रसिद्ध कविता भैंसागाड़ी का आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में अपना महत्व है। उनका पहला कविता संग्रह मधुकण के नाम से १९३२ ई. में प्रकाशित हुआ। तदनन्तर दो और काव्य संग्रह प्रेम संगीत और मानव निकले। इन्हें किसी वाद विशेष के अंतर्गत मानना गलत है। रूमानी मस्ती, नियतिवाद, प्रगतिवाद, अन्ततः मानववाद इनकी विशिष्टता है। उनका निधन ५ अक्तूबर को हुआ।

३१ अगस्त

अमृता प्रीतम

३१ अगस्त १९१९ को कवयित्री, उपन्यासकार व निबंधकार अमृता प्रीतम का जन्म गुजरांवाला, पंजाब (पाकिस्तान) में हुआ था। वे पंजाबी भाषा की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री मानी जाती हैं। उन्होंने लगभग १०० पुस्तकें लिखीं, इनमें रसीदी टिकट, पिंजर, कागज ते कैनवास आदि प्रमुख हैं। विभाजन की पीड़ा को लेकर उनके उपन्यास पिंजर पर एक फिल्म भी बनी थीं, इनकी पुस्तकों का विदेशी भाषाओं में भी अनुवाद हुआ है। वे साहित्य अकादमी पुरस्कार, पद्मश्री, पद्मविभूषण व ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित हुई। ३१ अक्टूबर २००५ को उनका निधन हो गया।

अमृता प्रीतम प्रसिद्ध कवयित्री, उपन्यासकार और निबंधकार थीं जिन्हें २०वीं सदी की पंजाबी भाषा की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री माना जाता है। इनकी लोकप्रियता सीमा पार पाकिस्तान में भी बराबर है। इन्होंने पंजाबी जगत में छः दशकों तक राज किया। अमृता प्रीतम ने कुल मिलाकर लगभग १०० पुस्तकें लिखी हैं जिनमें उनकी चर्चित आत्मकथा रसीदी टिकट भी शामिल है। अमृता प्रीतम उन साहित्यकारों में थीं जिनकी कृतियों का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। अपने अंतिम दिनों में अमृता प्रीतम को भारत का दूसरा सबसे बड़ा सम्मान पद्म विभूषण भी प्राप्त हुआ। उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से पहले ही अलंकृत किया जा चुका था।

हिंदी तथा पंजाबी लेखन में स्पष्टवादिता और विभाजन के दर्द को एक नए मुकाम पर ले जानेवाली अमृता प्रीतम ने अपने साहस के बल पर समकालीनों के बीच बिल्कुल अलग जगह बनाई। अमृता ने ऐसे समय में लेखनी में स्पष्टवादिता दिखाई, जब महिलाओं के लिए समाज के हर क्षेत्र में खुलापन एक तरह से वर्जित था। अमृता का साहस और बेबाकी ही थी जिसने उन्हें अन्य महिला लेखिकाओं से अलग पहचान दिलाई। ममता ने कहा कि जिस जमाने में महिला लेखकों में बेबाकी कहीं नहीं थी, उस समय उन्होंने स्पष्टवादिता दिखाई, जो अन्य महिलाओं के लिए किसी आश्चर्य से कम नहीं था। ममता ने अमृता से जुड़ा एक किस्सा याद करते हुए बताया वर्ष १९६३ में हम विज्ञान भवन में एक सेमिनार में अमृता जी से मिले। हमने उनसे पूछा कि आपकी कहानियों में ये इंदरजीत कौन है, इस पर उन्होंने एक दुबले-पतले लड़के को हमारे आगे खड़े करते हुए कहा, इंदरजीत, ये है मेरा इमरोज। ममता ने कहा हम उनके इस तरह खुले तौर पर इमरोज को मेरा बताने पर चकित रह गए क्योंकि उस समय इतना खुलापन नहीं था और खास तौर पर महिलाओं के बीच तो बिल्कुल नहीं। वहीं लेखिका सरोजिनी कुमुद का मानना है कि अमृता की रचनाएं बनावटी नहीं होती थीं और यही उनकी लेखनी की खासियत थी। सरोजिनी ने कहा अमृता जी जो भी लिखतीं थीं, उनमें आम भाषा की सरलता झलकती थी। उनके लेखन में जरा भी बनावटीपन नहीं था। यही उनकी रचनाओं की लोकप्रियता का कारण था। इसके उलट बाकी लोग अपनी लेखनी में क्लिष्ट भाषा का उपयोग करके खुद को दार्शनिक बताने का प्रयास करते थे। अमृता प्रीतम को पंजाबी भाषा की पहली अग्रणी कवयित्री, उपन्यासकार और लेखिका माना जाता है। विभाजन के बाद अमृता लाहौर से भारत आई थीं लेकिन उन्हें दोनों देशों में अपनी रचनाओं के लिए ख्याति मिली। पंजाबी साहित्य में महिलाओं की सबसे लोकप्रिय आवाज के तौर पर पहचानी जानेवाली अमृता साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९५६) पानेवाली पहली महिला थीं। अमृता को पद्मश्री (१९६९) और पद्मविभूषण से भी नवाजा गया। वर्ष १९८२ में उन्हें कागज ते कैनवास के लिए

साहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार, ज्ञानपीठ भी मिला। अमृता वर्ष १९८६ से १९९२ के बीच राज्यसभा की सदस्य भी रहीं। वर्ष २००३ में उन्हें पाकिस्तान की पंजाबी अकादमी ने भी पुरस्कार दिया जिस पर उन्होंने टिप्पणी की बड़े दिनों बाद मेरे मायके को मेरी याद आई, उन्हें सबसे ज्यादा उनकी कविता अज अक्खां वारिस शाह नू के लिए जाना जाता है, जिसमें उन्होंने विभाजन के दर्द को मार्मिक तौर पर पेश किया। ममता के मुताबिक अमृता की हर रचना विभाजन के दर्द को अलग तरह से दिखाती थी, भले ही वह उपन्यास पिंजर हो या कविता अज अक्खां वारिस शाह नू। अमृता ने कई वर्षों तक पंजाबी की साहित्य पत्रिका नागमणि का संपादन किया। उन्होंने कई आध्यात्मिक किताबों की भी रचना की। इसी दौरान उन्होंने ओशो की कई किताबों के लिए काम किया। उनकी आत्मकथा रसीदी टिकट उनकी कालजयी रचनाओं में से एक है।

शिवाजी सावंत (जन्म- ३१ अगस्त)

शिवाजी सावंत पूरा नाम शिवाजी गोविन्दराव सावंत, मराठी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। वर्षों के चिंतन मनन के उपरान्त २७ वर्ष की अवस्था में ही प्रथम मराठी उपन्यास मृत्युंजय का प्रकाशन हुआ। यह उपन्यास उनकी लोकप्रियता का प्रतिमान बना।

१ सितम्बर

गुरु अमरदास (निधन-१ सितम्बर)

गुरु अमरदास सिक्खों के तीसरे गुरु थे जो ७३ वर्ष की उम्र में गुरु नियुक्त हुए। गुरु अमरदास पंजाब को २२ सिक्ख प्रांतों में बांटने की अपनी योजना तथा धर्म प्रचारकों को बाहर भेजने के लिए प्रसिद्ध हुए। वह अपनी बुद्धिमत्ता तथा धर्मपरायणता के लिए बहुत सम्मानित थे। कहा जाता था कि मुगल शहंशाह अकबर उनसे सलाह लेते थे और उनके जाति-निरपेक्ष लंगर में अकबर ने भोजन ग्रहण किया था। गुरु अमरदास के मार्गदर्शन में गोइंदवाल शहर सिक्ख अध्ययन का केंद्र बना।

विजयदान देथा (जन्म- १ सितम्बर)

विजयदान देथा जिन्हें बिज्जी के नाम से भी जाना जाता है, राजस्थान के प्रसिद्ध लेखक और पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित व्यक्ति थे। उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और साहित्य चुड़ामणी पुरस्कार जैसे विभिन्न अन्य पुरस्कार से भी समानित किया जा चुका था। विजयदान देथा की राजस्थानी भाषा में चौदह खड़ों में प्रकाशित बाताँ री फुलवारी के दसवें खण्ड को भारतीय राष्ट्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया, जो राजस्थानी कृति पर पहला पुरस्कार है।

फादर कामिल बुल्के (जन्म- १ सितंबर)

१ सितंबर १९०९ को बहु-भाषाविद फादर कामिल बुल्के का जन्म बेल्जियम की फ्लैंडर्स स्टेट के रम्सकपैले गांव में हुआ था।

वे यूवेन यूनिवर्सिटी से अभियांत्रिकी की शिक्षा लेने के बाद १९३५ में भारत आये। दार्जिलिंग में कुछ समय बिताने के बाद रांची पहुंचे। वे मातृभाषा फ्लेमिश के अलावा अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, लैटिन, ग्रीक, संस्कृत और हिंदी में भी संपूर्ण अधिकार रखते थे। उन्हें १९५१ में भारत की नागरिकता और १९७४ में हिंदी में उनके योगदान के लिए पद्मभूषण से नवाजा गया।

वे १९५० में बिहार राष्ट्रभाषा परिषद और सन् १९७२ से १९७७ तक भारत सरकार की केंद्रीय हिंदी समिति के सदस्य रहे। १७ अगस्त १९८२ को दिल्ली में गैंग्रीन की वजह से उनका निधन हो गया।

रंगमंच की महान हस्ती थे हबीब तनवीर (जन्म- १ सितंबर)

हबीब तनवीर रंगमंच की महान हस्ती थे जिन्होंने ग्रामीण और शहरी कलाकारों को मंच पर एक साथ लाकर नाटक की दुनिया में एक मिसाल कायम की। छत्तीसगढ़ से निकलकर न सिर्फ देश, बल्कि विदेशों में भी उन्होंने अपनी प्रतिभा का डंका बजाया। रायपुर में एक सितंबर १९२३ को जन्मे हबीब तनवीर उर्दू और हिन्दी के अत्यधिक लोकप्रिय नाटककार थे। रंगमंच निर्देशक होने के साथ ही वह कवि और कलाकार भी थे जिन्होंने रंग कर्म में न जाने कितनी मिसालें कायम की जो आज भी कलाकारों को प्रेरणा देती नजर आती हैं। चरनदास चोर, आगरा बाजार, मिट्टी की गाड़ी, जहरीला हवा, उत्तर राम चरित्र, पोंगा पंडित, फुटपाथ कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना और गांधी जैसे असंख्य नाटक आज भी हबीब

की शान में कसीदे काढ़ते नजर आते हैं। जाने-माने अभिनेता नसीरुद्दीन शाह का मानना है कि हबीब रंगमंगच से जुड़ी एक महान शख्सियत थे जिन्होंने थिएटर को हमेशा कुछ न कुछ नया दिया। हबीब थिएटर कंपनी नया थिएटर में छत्तीसगढ़ी आदिवासियों के साथ काम करने के लिए जाने जाते थे। उन्होंने इस ग्रुप की स्थापना १९५९ में भोपाल में की थी। वरिष्ठ रंगकर्मी सौरभ कौशिक का कहना है कि हबीब रंगमंच के एक ऐसे शिखर पुरुष थे जिनकी तारीफ के लिए शब्द भी कम पड़ जाएंगे। चरनदास चोर, कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना, गांव का नाम ससुराल और मोर नाम दामाद जैसे नाटक उनके रंगमंच जीवन में मील का पत्थर साबित हुए। हबीब तनवीर ने अपने नाटकों में ग्रामीण कलाकारों को भरपूर मौका दिया। वह कहा करते थे कि लोगों का सच्चा रंगमंच गांव में निवास करता है। वह ग्रामीण कलाकारों को शहर लेकर आए और शहरी कलाकारों के साथ उन्हें रोजगार दिया। चरनदास चोर की आर्केस्ट्रा पार्टी में जहां मंच पर ७२ लोग हुआ करते थे, वहीं आगरा बाजार में ५२ लोग मंच पर होते थे। उन्होंने अपने जीवन में अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार जीते। हबीब को १९६९ में संगीत नाटक अकादमी अवार्ड मिला तो १९८३ में उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया गया। १९९० में कालिदास सम्मान, १९९६ में नाटक अकादमी फेलोशिप और २००२ में उन्हें पद्मभूषण मिला। हबीब १९७२ से १९७८ तक राज्यसभा के सदस्य रहे। उनके नाटक चरनदास चोर ने उन्हें अंतरराष्ट्रीय एडिनबर्ग नाटक समारोह में फ्रिंज फर्स्ट अवार्ड दिलाया। हबीब ने अपने कैरियर में नौ फिल्मों में भी अभिनय किया। १९९० के दशक में उन्हें उस सम विवादों का समाना करना पड़ा जब उन्होंने पोंगा पंडित नाम से नाटक तैयार किया लोगों के एक तबके में इस नाटक के खिलाफ रोष फैल गया था। हबीब को १९९५ में शिकागो के अभिनेता एंसेंबल ने अमेरिका आमंत्रित किया। इसके अतिरिक्त रंगमंच की इस महान शख्सियत ने कई देशों का दौरा किया और वहां के लोगों की संस्कृति को जाना तथा अपने देश की संस्कृति से उन्हें अवगत कराया। आठ जून २००९ को हबीब दुनिया को अलविदा कह गए लेकिन उनके नाटक और उनका रंगकर्म आज भी रंगमंच से जुड़े लोगों के लिए एक प्रेरणा है।

२ सितम्बर

अमरनाथ झा (निधन- २ सितम्बर)

अमरनाथ झा भारत के प्रसिद्ध विद्वान, साहित्यकार और शिक्षा शास्त्री थे। वे हिन्दी के प्रबल समर्थकों में से एक थे। हिन्दी को सम्माननीय स्तर तक ले जाने और उसे राजभाषा बनाने के लिए अमरनाथ झा ने बहुमूल्य योगदान दिया था। उन्हें एक कुशल वक्ता के रूप में भी जाना जाता था। उन्होंने कई पुस्तकों की रचना भी की। शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान को देखते हुए उन्हें वर्ष १९५४ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

विष्णु सखाराम खांडेकर (निधन- २ सितम्बर)

विष्णु सखाराम खांडेकर मराठी भाषा के सुप्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। उनके ललित निबन्ध उनकी भाषा शैली आदि के कारण बहुत पसन्द किये जाते हैं। उन्होंने उपन्यासों और कहानियों के अतिरिक्त नाटक, निबन्ध तथा आलोचनात्मक निबन्ध आदि लिखे थे। विष्णु सखाराम खांडेकर को साहित्य आकादमी पुरस्कार, पद्मभूषण और ज्ञानपीठ पुरस्कार (१९७४) से भी सम्मानित किया गया था।

३ सितम्बर

किशन महाराज (जन्म- ३ सितम्बर)

पंडित किशन महाराज भारत के सुप्रसिद्ध तबला वादक थे। ये बनारस घराने के वादक थे। इन्हें कला क्षेत्र में योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा सन १९७३ में पद्म श्री और सन २००२ में पद्मविभूषण से भी सम्मानित किया गया था। किशन महाराज तबले के उस्ताद होने के साथ साथ मूर्तिकार, चित्रकार, वीर रस के कवि और ज्योतिष के मर्मज्ञ भी थे।

३ सितंबर १९२३ को देश के सुप्रसिद्ध तबला वादक किशन महाराज का जन्म काशी (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। वे बनारस घराने के तबला वादक थे। संगीत और नृत्य के कई महारथियों के साथ उन्होंने तबले पर संगत की। उन्हें कला के क्षेत्र में योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री और पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। वे संगीत नाटक अकादमी सम्मान से भी नवाजे गये।

वे तबला वादक के साथ-साथ मूर्तिकार, चित्रकार, कवि व ज्योतिष के मर्मज्ञ भी थे। युवावस्था में उन्होंने कई फिल्मों में तबला वादन किया। चार मई २००८ को वे हमेशा के लिए विदा हो गये।

४ सितंबर
दादाभाई नौरोजी

विदेशी साम्राज्यवाद के खिलाफ पृष्ठभूमि तैयार की थी दादा भाई नौरोजी ने

स्वाधीनता आंदोलन में अहम भूमिका निभानेवाले और कांग्रेस के संस्थापक सदस्यों में से एक दादाभाई नौरोजी ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ आजादी की जमीन तैयार करने में अहम भूमिका निभाई थी। नौरोजी पारसी समुदाय से ताल्लुकात रखते थे। उनका नाम देश के उन शीर्ष नेताओं में लिया जाता है। जिन्होंने भारत की आजादी की नींव रखी। दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहासवेत्ता अनिल राय ने कहा कि कांग्रेस के ग्रांड ओल्ड मैन कहे जानेवाले दादा भाई नौरोजी ने अंग्रेजों द्वारा भारत से नियोजित तरीके से धन लूटने पर शोध किया और अपनी प्रामाणिक पुस्तक पॉवर्टी एड अनब्रिटिश रूल इन इंडिया लिखी। डॉ. राय कहते हैं कि नौरोजी ने बताया कि कैसे ब्रिटिशों ने भारत की संपदा से ब्रिटेन में औद्योगिकीरण को आगे बढ़या एवं भारत को और कृषिमूलक बनाया। ब्रिटिश निर्मित उत्पाद को भारत में खपाते थे। नौरोजी ने व्यवस्थित ढंग से ब्रिटिश नीति की आलोचना की। उनकी यह पुस्तक रमेशचंद्र दत्त की स्वतंत्रता आंदोलनों पर पुस्तकों का आधार बनी। दादा भाई नौरोजी का जन्म चार सितंबर १८२५ को एक गरीब पारसी परिवार में हुआ था। उन्होंने एलीफिस्टन कॉलेज से शिक्षा ग्रहण की और बाद में शिक्षक बने। सन १८५५ में वह गणित एवं प्राकृतिक दर्शन के प्रोफेसर बने। बाद में वह इंग्लैंड चले गए और वहां यह यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन में गुजराती के प्रोफेसर बन गए। सन १८६७ में नौरोजी ने ईस्ट इंडिया एसोसिएशन के गठन में मदद की। उसके बाद १८७४ में वह बड़ौदा के प्रधानमंत्री बने। वह बंबई विधानसभा के भी सदस्य (१८८५-८८) रहे। उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से कुछ साल पहले कलकत्ता में इंडियन नेशनल एसोसिएशन बनाया। बाद में इस संगठन का राष्ट्रीय कांग्रेस में विलय हो गया। नौरोजी १८८६ में राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। नौरोजी एक बार फिर ब्रिटेन चले गए और वहां वह राजनीतिक रूप से सक्रिय हुए। वह लिबरल पार्टी की ओर से सांसद चुने गए। वह पहले भारतीय ब्रिटिश सांसद थे। पहली बार ब्रिटेन के हाउस ऑफ कामन्स में भारत का प्रतिनिधित्व करनेवाले नौरोजी ने देश की आवाज बनकर तत्कालीन भारतीय समस्याओं को फिरंगी शासकों के सामने बखूबी रखा। वर्ष १८९२ से लेकर १८९५ तक एक सांसद के तौर पर हाउस ऑफ कामन्स का प्रतिनिधित्व करनेवाले दादा भाई ने इतने कम समय में न केवल भारत के कल्याण और उन्नति के लिए संघर्ष किया, बल्कि भारत के प्रति की गयी ज्यादतियों के खिलाफ भी जोरदार तरीके से आवाज उठाई। दिल्ली विश्वविद्यालय के जाकिर हुसैन कॉलेज (सांध्य) में राजनीति विज्ञान के सहायक प्रोफेसर संजय कुमार ने कहा दादा भाई नौरोजी ने उस समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अन्दर और सरकार के समक्ष जो लोकतांत्रिक प्रणाली अपनायी उसका पालन आज तक किया जा रहा है। प्रोफेसर कुमार ने कहा कि दादा भाई ने ही लोकतांत्रिक तरीके से सरकार के समक्ष अपनी बात रखने, नेताओं को ज्ञापन सौंपने, वार्ता करने, संसद तक अपनी बात पहुंचाने जैसे नये तरीकों की शुरूआत की। दादा भाई ने अपने विभिन्न पत्रों और लेखों के माध्यम से आजादी की लड़ाई में पारसी समुदाय की दूर रहने की प्रवृत्ति की काफी आलोचना की। डॉ. राय के अनुसार इतना ही नहीं, नौरोजी ने अपने पारसी समाज के लिए काफी काम किया और उसके अंतर्विरोधों को दूर किया। उन्होंने महिलाओं के उत्थान, शिक्षा आदि पर उल्लेखनीय कार्य किया। एक महान शिक्षाविद दादा भाई ने जिस

वक्त राजनीति में प्रवेश किया, वह भारतीय राजनीति का शैशवकाल था। उन्होंने भारतीय राजनीति का जो मार्ग प्रशस्त किया बाद में उस पर चलकर देश को स्वराज और आजादी हासिल हुई। दादा भाई नौरोजी का ९१ वर्ष की आयु में ३० जून १९१७ को निधन हो गया।

दादाभाई नौरोजी को भारतीय राजनीति का पितामह कहा जाता है। वह दिग्गज राजनेता, उद्योगपति, शिक्षाविद और विचारक भी थे। दादाभाई कितने प्रखर देशभक्त थे, इसका परिचय १९०६ ई. की कोलकाता कांग्रेस में मिला। यहां उन्होंने पहली बार स्वराज शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने कहा, हम कोई कृपा की भीख नहीं माँग रहे हैं। हमें तो न्याय चाहिए। लार्ड सैलसिबरी ने उन्हें ब्लैक मैन कहा था। हालांकि वह बहुत गोरे थे। उन्होंने संसद में बाइबिल से शपथ लेने से इंकार कर दिया था। अंग्रेजों की कारस्तानियों को बयान करने के लिए उन्होंने एक पत्र रस्त गीतार शुरू किया जिसे सच बातों को कहनेवाला पत्र कहा जाता था। वर्ष १८७४ में वह बड़ौदा के प्रधानमंत्री बने और तब वे तत्कालीन बंबई के लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य चुने गये। उन्होंने मुंबई में इंडियन नेशनल एसोसिएशन की स्थापना की जिसका बाद में कांग्रेस में विलय कर दिया गया।

१८६७ में ईस्ट इंडिया एसोसियेशन बनाई। अन्यत्र लन्दन के विश्वविद्यालय में गुजराती के प्रोफेसर बने। १८६९ में भारत वापस आए। यहाँ पर उनका ३०००० रु. की थैली व सम्मान पत्र से स्वागत हुआ। १८८५ में बम्बई विधान परिषद के सदस्य बने। १८८६ में होलबार्न क्षेत्र से पार्लियामेंट के लिए चुनाव लड़ा, लेकिन असफल रहे। १८८६ में फिन्सबरी क्षेत्र से पार्लियामेंट के लिए निर्वाचित हुए। पावटी एण्ड अनब्रिटिश रूल इन इण्डिया पुस्तक लिखी, जो अपने समय की महती कृति थी। १८८६ ई. में वह इंडियन नेशनल कांग्रेस के अध्यक्ष बनाए गए। १८२५ में जन्में श्री दादाभाई नौरोजी १८४५ में एल्फिंस्टन कॉलेज में प्राध्यापक बने।

देश के संस्थापक डॉ. दादाभाई नौरोजी एलफस्टीन कॉलेज के पहले भारतीय प्रोफेसर और लंदन के यूनिवर्सिटी कॉलेज में गुजराती के प्रोफेसर होने के साथ मुंबई की असेंबली और ब्रिटेन की संसद के सदस्य भी रहे। मुम्बई में ही नहीं बल्कि कराची और लंदन में भी नौरोजी के नाम पर एक सड़क है।

द ग्रैंड ओल्ड मैन ऑफ इंडिया दादाभाई नौरोजी

द ग्रैंड ओल्डमैन आफ इंडिया के नाम से मशहूर दादा भाई नौरोजी ब्रिटिश संसद में चुने जानेवाले पहले एशियाई थे। संसद सदस्य रहते हुए उन्होंने ब्रिटेन में भारत के विरोध को प्रस्तुत किया। उन्होंने भारत की लूट के संबंध में ब्रिटिश संसद में सिद्धांत पेश किये। इस ड्रेन थ्योरी में भारत से लूटे हुए धन को ब्रिटेन ले जाने का उल्लेख था। कांग्रेस का इतिहास लिखनेवाले प्रो. एसआर मेहरोत्रा ने बताया कि नौरोजी अपनी वाक्कला से लोगों को अचंभित करते थे। वह जब ब्रिटिश संसद के लिए सदस्य चुने गए तो उन्होंने संसद में कहा, कि मैं धर्म और जाति से परे एक भारतीय हूं। वह कहा करते थे कि जब एक शब्द से काम चल जाए तो दो शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। एक लिबरल के रूप में वह १८९२ में हाउस आफ कामंस के लिए चुने गये। वे एक कुशल उद्यमी थे। १९३९ में पहली बार नौरोजी की जीवनी लिखनेवाले आरपी मसानी ने जिक्र किया है कि नौरोजी के बारे में ७० हजार से अधिक दस्तावेज थे जिनका संग्रह ठीक ढंग से नहीं

किया गया।

मेहरोत्रा के मुताबिक वेडबर्न डब्ल्यू सी बनर्जी और एओ ह्यूम की तरह दादा भाई नौरोजी के बिना कांग्रेस का इतिहास अधूरा है। उन्होंने जो पत्र लिखे हैं उनका संग्रह और संरक्षण किया जाना जरूरी है। वे ३० जून १९१७ को दुनिया को अलविदा कह गए। नौरोजी गोपाल कृष्ण और महात्मा गांधी के गुरु थे। नौरोजी सबसे पहले इस बात को दुनिया के सामने लाए कि ब्रिटिश सरकार किस प्रकार भारतीय धन को अपने यहां ले जा रही है। उन्होंने गरीबी और ब्रिटिशों के राज के बिना भारत नामक किताब लिखी। वह १८९२ से १८९५ तक ब्रिटिश संसद के सदस्य रहे। एओ ह्यूम और दिनशा एडुलजी वाचा के साथ मिलकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना का श्रेय उन्हें जाता है। मनेकबाई और नौरोजी पालनजी डोर्डी के पुत्र दादा भाई नौरोजी का जन्म एक गरीब पारसी परिवार में चार सितंबर १८२५ को गुजरात के नवसारी में हुआ। वे शुरुआत से काफी मेधावी थे।

कांग्रेस के लिये राजनीति की जमीन तैयार की दादाभाई नौरोजी ने

भारतीय राजनीति के पितामह कहे जानेवाले प्रख्यात राजनेता, उद्योगपति, शिक्षाविद और विचारक दादाभाई नौरोजी ने ब्रिटिश उपनिवेश के प्रति बुद्धिजीवी वर्ग के सम्मोहन के बीच उसकी स्याह सचाई को सामने रखने के साथ ही कांग्रेस के लिये राजनीतिक जमीन भी तैयार की थी। जिंदगी में शुरूआती कठिनाइयों से पार पाकर कामयाबी का फलक छूनेवाले नौरोजी वर्ष १८९२ में हुए ब्रिटेन के आम चुनावों में लिबरल पार्टी के टिकट पर फिन्सबरी सेंट्रल से जीतकर भारतीय मूल के पहले ब्रितानी सांसद बने थे। नौरोजी ने ब्रितानी हुकूमत के पैरों तले रौंदे जा रहे भारत की दुर्दशा को एक सच्चे भारतीय के रूप में देखा और उसके खिलाफ अलग अंदाज में आवाज उठाई। नौरोजी ने पावर्टी एण्ड अन ब्रिटिश रूल इन इंडिया किताब लिखकर भारत में ब्रितानी उपनिवेश की लूट-खसोट को जगजाहिर किया। उस वक्त का बुद्धिजीवी वर्ग ब्रिटेन की उपनिवेश नीति का समर्थन करता था लेकिन नौरोजी की किताब ने उसकी आंखें खोल दीं। नौरोजी ने देश में कांग्रेस की राजनीति का आधार तैयार किया था। उन्होंने कांग्रेस के पूर्ववर्ती संगठन ईस्ट इंडिया एसोसिएशन के गठन में मदद की थी। बाद में वर्ष १८८६ में वह कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। उस वक्त उन्होंने कांग्रेस की दिशा तय करने में अहम भूमिका निभाई। वर्ष १९०६ में नौरोजी दोबारा कांग्रेस के अध्यक्ष बने और देश की तत्कालीन परिस्थितियों का गहराई से अध्ययन करके पार्टी को उसके मुताबिक मिजाज दिया। नौरोजी गोपाल कृष्ण गोखले और महात्मा गांधी के सलाहकार भी थे। चार सितम्बर १८२५ को गुजरात के नवसारी में जन्मे नौरोजी का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था लेकिन तमाम दुश्वारियों पर विजय प्राप्त करके उन्होंने शिक्षा ग्रहण की और महज २५ बरस की उम्र में एलफिनस्टोन इंस्टीट्यूट में लीडिंग प्रोफेसर के तौर पर नियुक्त होनेवाले पहले भारतीय बने। उन्होंने वर्ष १८५५ तक बम्बई में गणित और दर्शन के प्रोफेसर के रूप में काम किया। बाद में वह कामा एण्ड कम्पनी में साझेदार बनने के लिए लंदन गए। वर्ष १८५९ में उन्होंने नौरोजी एण्ड कम्पनी के नाम के कपास का व्यापार शुरू किया। कांग्रेस के गठन से पहले वह सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी द्वारा स्थापित इंडियन नेशनल एसोसिएशन के सदस्य भी रहे। यह संगठन बाद में कांग्रेस में विलीन हो गया। नौरोजी का ३० जून १९१७ को ९२ वर्ष की उम्र में मुंबई में निधन हो गया।

नौरोजी, दादाभाई का जन्म ४ सितम्बर १८२५ में हुआ एवं मृत्यु ३० जून १९१७ में हुई। विश्वविद्यालयों की स्थापना के पूर्व के दिनों में एलफिंस्टन इंस्टीट्यूट में इन्होंने शिक्षा पाई जहां के ये मेधावी छात्र थे। उसी संस्थान में अध्यापक के

रूप में जीवन आरंभ कर आगे चलकर वहीं वे गणित के प्रोफेसर हुए, जो उन दिनों भारतीयों के लिए शैक्षणिक संस्थाओं में सर्वोच्च पद था। साथ में उन्होंने समाजसुधार कार्यों में अग्रगामी और कई धार्मिक तथा साहित्य संघटनों के, यथा स्टूडेंट्स लिटरेरी ऐंड साइंटिफिक सोसाइटी के प्रतिष्ठाता के रूप में अपना विशेष स्थान बनाया। उसकी दो शाखाएँ थीं, एक मराठी ज्ञानप्रसारक मंडली और दूसरी गुजराती ज्ञानप्रसारक मंडली। रहनुमाई सभी की भी स्थापना इन्होंने की थी। पारसियों के इतिहास में अपनी दानशीलता और प्रबुद्धता के लिए प्रसिद्ध कैमासफ बंधुओं ने दादाभाई को अपने व्यापार में भागीदार बनाने के लिए आमंत्रित किया। तदनुसार दादाभाई लंदन और लिवरपूल में उनका कार्यालय स्थापित करने के लिए इंग्लैंड गए। विद्यालय के वातावरण को छोड़कर एकाएक व्यापारी बन जाना एक प्रकार की अवनति या अपवतन समझा जा सकता है, परंतु दादाभाई ने इस अवसर को इंग्लैंड में उच्च शिक्षा के लिए जानेवाले विद्यार्थियों की भलाई के लिए उपयुक्त समझा। इसके साथ ही साथ उनका दूसरा उद्देश्य सरकारी प्रशासकीय संस्थाओं का अधिक से अधिक भारतीयकरण करने के लिए आंदोलन चलाने का भी था। जो विद्यार्थी उन दिनों उनके संपर्क में आए और उनसे प्रभावित हुए उनमें सुप्रसिद्ध फीरोजशाह मेहता, मोहनदास कर्मचंद गांधी और मुहम्मद अली जिन्ना का नाम उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त दादाभाई का एक और उद्देश्य ब्रिटिश जनता को ब्रिटिश शासन से उत्पीड़ित भारतीयों के दु:खों की जानकारी कराना और उन्हें दूर करने के उनके उत्तरदायित्व की ओर ध्यान आकर्षित कराना भी था, उन दिनों भारतीय सिविल सेवाओं में सम्मिलित होने के इच्छुक अभ्यर्थियों के लिए सबसे कठिनाई की बात यह थी कि उन्हें प्रतिकूल परिस्थितियों में ब्रिटिश अभ्यर्थियों से स्पर्धा करनी पड़ती थी।

इस असुविधा को दूर करने के लिए दादा भाई का सुझाव इंग्लैंड और भारत में एक साथ सिविल सर्विस पीरक्षा करने का था। इसके लिए उन्होंने १८९३ तक आंदोलन चलाया जबकि उन्होंने वहाँ लोकसभा (हाउस आव कामन्स) में उस सदन के एक सदस्य की हैसियत से अधिक संघर्ष किया और सभा ने भारत तथा इंग्लैंड में एक साथ परीक्षा चलाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उन दिनों दूसरी उससे भी बड़ी परिवेदना भारतीयों की भयानक दरिद्रता थी।

हालांकि दादाभाई ही पहले व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने इसके लिए दु:ख की अभिव्यक्ति की हो किंतु वे पहले व्यक्ति अवश्य थे जिन्होंने उसके उन्मूलन के लिए आंदोलन चलाया। उन्होंने तथ्यों और आँकड़ों से यह सिद्ध कर दिया कि जहाँ भारतीय दरिद्रता में आकंठ डूबे थे, वहीं भारत की प्रशासकीय सेवा दुनियाँ में सबसे महँगी थी। सरकारी आँकड़े उन दिनों नहीं के समान थे और जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई गैर सरकारी साधन भी नहीं था। भारतीयों की आर्थिक स्थिति के संबंध में प्रारंभिक सर्वेक्षण के बाद यही निष्कर्ष निकला कि देश में एक व्यक्ति की औसत वार्षिक आय कुल बीस रुपए थी। इन्हीं सब आँकड़ों के आधार पर ईस्ट इंडिया एसोसिएशन के सामने उन्होंने वांट्स एंड मीन्स आव इंडियाफ नामक निबंध २७ जुलाई, १८७० को पढ़ा। १९वीं शताब्दी के अंत तक दादाभाई ने अनेक समितियों और आयोगों के समक्ष ही नहीं वरन् ब्रिटिश पार्लमेंट के सामने भी भारत के प्रति की गई बुराइयों को दूर करने के लिए वकालत की और उच्चाधिकारियों को बराबर चेतावनी देते रहे कि यदि इसी प्रकार भारत की नैतिक और भौतिक रूप से अवनति होती रही तो भारतीयों को ब्रिटिश वस्तुओं का ही नहीं वरन् ब्रिटिश शासन का भी बहिष्कार करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, किंतु इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

धर्मवीर भारती (निधन- ४ सितम्बर)

डॉ. धर्मवीर भारती आधुनिक हिन्दी साहित्य के सम्पादक, कवि, नाटककार और सामाजिक विचारक थे। वे

साप्ताहिक पत्रिका धर्मयुग के प्रधान संपादक भी रहे। डॉ. धर्मवीर भारती को १९७२ में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। उनका उपन्यास गुनाहों का देवता हिन्दी साहित्य के इतिहास में सदाबहार माना जाता है।

सियारामशरण गुप्त (जन्म- ४ सितम्बर)

सियारामशरण गुप्त हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार और राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे। उन पर गांधीवाद का विशेष प्रभाव रहा है। इसलिये उनकी रचनाओं में करुणा, सत्य-अहिंसा की मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है। हिन्दी साहित्य में उन्हें एक कवि के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई लेकिन एक मूर्धन्य कथाकार के रूप में भी उन्होंने कथा-साहित्य में भी अपना स्थान बनाया।

ज्ञानचंद्र घोष (जन्म- ४ सितम्बर)

ज्ञानचंद्र घोष भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में से एक थे। वे अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं के संस्थापक और सदस्य रहे थे। घोष के अनुसंधान कार्यों से ही उनका यश विज्ञान जगत में फैला था। ज्ञानचंद्र घोष द्वारा स्थापित तनुता का सिद्धांत, घोष का तनुता सिद्धांत के नाम से सुप्रसिद्ध है, यद्यपि इसमें पीछे बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा।

५ सितंबर

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (जन्म- ५ सितंबर)

स्वतंत्र भारत के पहले उपराष्ट्रपति और दूसरे राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन का शुरूआती जीवन तिरुतनी और तिरुपति जैसे धार्मिक स्थलों पर ही बीता। १९०२ में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा अच्छे अंकों में उत्तीर्ण की जिसके लिए उन्हें छात्रवृत्ति प्रदान की गई। उन्होंने दर्शनशास्त्र में स्नातकोत्तर किया और मद्रास रेजीडेंसी कॉलेज में दर्शनशास्त्र के सहायक प्राध्यापक नियुक्त हुए। डॉ. राधाकृष्णन ने अपने लेखों और भाषणों के माध्यम से विश्व को भारतीय दर्शन शास्त्र से परिचित कराया। राधाकृष्णन ने जल्द ही वेदों और उपनिषदों का भी गहन अध्ययन कर लिया। आज भी इनका जन्मदिवस शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है।

उनकी शिक्षा-दीक्षा एक क्रिश्चियन स्कूल में हुई थी और उस समय पश्चिमी जीवन मूल्यों को विद्यार्थियों में गहरे तक स्थापित किया जाता था। यही कारण है कि क्रिश्चियन संस्थाओं में अध्ययन करते हुए राधाकृष्णन के जीवन में उच्च गुण समाहित हो गए। शिक्षा के प्रति रुझान ने उन्हें एक मजबूत व्यक्तित्व प्रदान किया था। डॉ. राधाकृष्णन बहुआयामी प्रतिभा के धनी होने के साथ ही देश की संस्कृति को प्यार करनेवाले व्यक्ति भी थे।

उनकी योग्यता को देखते हुए ही उन्हें संविधान निर्मात्री सभा का सदस्य बनाया गया था। वह १९४७ से १९४९ तक इसके सदस्य रहे। इसी बीच वह ख्याति प्राप्त विश्वविद्यालयों के चेयरमैन भी नियुक्त किए गए। जब भारत को स्वतंत्रता मिली उस समय जवाहरलाल नेहरू ने राधाकृष्णन से यह आग्रह किया कि वह विशिष्ट राजदूत के रूप में सोवियत संघ के साथ राजनयिक कार्यों की पूर्ति करें। १९५२ तक वह राजनायक रहे। इसके बाद उन्हें उपराष्ट्रपति के पद पर नियुक्त किया गया। संसद के सभी सदस्यों ने उन्हें उनके कार्य व्यवहार के लिए काफी सराहा। १९६२ में राजेन्द्र प्रसाद का कार्यकाल समाप्त होने के बाद राधाकृष्णन ने राष्ट्रपति का पद संभाला। उनका कार्यकाल काफी चुनौतियों से भरा था। क्योंकि जहां एक ओर भारत के चीन और पाकिस्तान के साथ युद्ध हुए जिसमें चीन के साथ भारत को हार का सामना करना पड़ा। वहीं दूसरी ओर दो प्रधानमंत्रियों का देहांत भी इन्हीं के कार्यकाल के दौरान ही हुआ था। १९६७ के गणतंत्र दिवस पर डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने देश को सम्बोधित करते हुए यह स्पष्ट किया था कि वह अब किसी भी सत्र के लिए राष्ट्रपति नहीं बनना चाहेंगे। यद्यपि कांग्रेस के नेताओं ने उनसे काफी आग्रह किया कि वह अगले सत्र के लिए भी राष्ट्रपति का दायित्व ग्रहण करें, लेकिन राधाकृष्णन ने अपनी घोषणा पर पूरी तरह से अमल किया। शिक्षा और राजनीति में उत्कृष्ट योगदान देने के लिए भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने महान शिक्षाविद और लेखक डॉ. राधाकृष्णन को देश का सर्वोच्च अलंकरण भारत रत्न प्रदान किया। राधाकृष्णन` मरणोपरांत उन्हें मार्च १९७५ में अमेरिकी सरकार द्वारा टेम्पलटन पुरस्कार से सम्मानित किया गया, जो कि धर्म के क्षेत्र में उत्थान के लिए प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार को ग्रहण करनेवाले यह प्रथम गैर-ईसाई सम्प्रदाय के व्यक्ति थे। उन्हें आज भी शिक्षा के क्षेत्र में एक आदर्श शिक्षक के रूप में याद किया जाता है। आज भी उनके जन्मदिवस के उपलक्ष्य में संपूर्ण भारत में ५ सितंबर को शिक्षक दिवस मनाकर डॉ. राधाकृष्णन के प्रति सम्मान व्यक्त किया जाता है। इस दिन देश के विख्यात और उत्कृष्ट शिक्षकों को उनके योगदान के लिए पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन भारतीय संस्कृति के ज्ञानी, एक महान शिक्षाविद, महान दार्शनिक, महान वक्ता होने के साथ ही विज्ञानी हिन्दू विचारक भी थे। राधाकृष्णन ने अपने जीवन के

४० वर्ष एक शिक्षक के रूप में व्यतीत किए थे। वह एक आदर्श शिक्षक थे। डॉ. राधाकृष्णन के पुत्र डॉ. एस.गोपाल ने १९८९ में उनकी जीवनी का प्रकाशन भी किया। इसके पूर्व डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के व्यक्तित्व तथा जीवन की घटनाओं के सम्बन्ध में किसी को भी आधिकारिक जानकारी नहीं थी। स्वयं उनके पुत्र ने भी माना कि उनके पिता की व्यक्तिगत जिन्दगी के विषय में लिखना एक बड़ी चुनौती थी और एक नाजुक मामला भी। लेकिन डॉ. एस. गोपाल ने १९५२ में न्यूयार्क में लाइब्रेरी ऑफ लिविंग फिलासफर्स के नाम से एक श्रृंखला पेश की जिसमें सर्वपल्ली राधाकृष्णन के बारे में आधिकारिक रूप से लिखा गया था। स्वयं राधाकृष्णन ने उसमें दर्ज सामग्री का कभी खंडन नहीं किया।

शिक्षा के प्रति समर्पित राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन

भारत के द्वितीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन का जन्म ५ सितंबर १८८८ को चेन्नई से चालीस मील दूर उत्तर-पूर्व के गांव तिरूत्तनी में हुआ। प्रारंभिक पढ़ाई के बाद उन्होंने उच्च शिक्षा मद्रास विश्वविद्यालय से प्राप्त की। वह पढ़ने में इतने तेज थे कि पढ़ाई पूरी करते ही केवल २० वर्ष की उम्र में मद्रास प्रेसिडेंसी कॉलेज में पढ़ाने लगे। दर्शनशास्त्र पर उनकी बेहतरीन पकड़ थी। इस विषय पर लिखी गई उनकी पुस्तकें विश्व प्रसिद्ध हैं।

शुरू से पढ़ाई में रुचि होने के कारण पढ़ना और पढ़ाना जीवन भर उनका ध्येय रहा। देश-विदेश में पढ़ाने के बाद १९३९ से १९४८ तक वह बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के उप कुलपति भी रहे। उसके बाद वह राजनीति की तरफ मुड़े और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें सोवियत संघ भेजा, जहां वह १९४९ से १९५२ तक राजदूत रहे। वहां से लौटे, तो उन्हें भारत का प्रथम उप राष्ट्रपति बनाया गया। इस पद पर दस साल रहने के बाद मई १९६२ में वह भारत के दूसरे राष्ट्रपति बने। पढ़ाई को लेकर उनकी सोच बिल्कुल साफ थी। उनका मानना था कि समाज में फैली बुराइयों को शिक्षा के माध्यम से ही दूर किया जा सकता है। बच्चों के लिए सिर्फ पढ़ने के लिए पढ़ाई और शिक्षक के लिए पढ़ने के लिए पढ़ाना गलत है। हर काम किसी न किसी लक्ष्य को लेकर करना चाहिए। उनका मानना था कि देश की तरक्की के लिए बेहतर दिमाग तैयार करना जरूरी है और यह तभी हो सकता है, जब शिक्षक और छात्र दोनों ही लक्ष्य के प्रति समर्पित हों। वह कहते थे कि जब तक शिक्षक पढ़ाई के प्रति समर्पित और प्रतिबद्ध नही होंगे, तब तक भारत में बढ़िया शिक्षा-प्रणाली तैयार नहीं होगी। इसलिए लक्ष्य तक पहुंचने के लिए शिक्षक और छात्र में बेहतर संबंध होना जरूरी है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन का कहना था कि भारत के सबसे बेहतर दिमाग शिक्षा से जुड़ें, तो भारत को आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता। शायद यही आज हो रही है, जब अपने क्षेत्र में सफल व्यापारी, डॉक्टर, इंजीनियर, कंपनी-प्रबंधक आदि कॉलेजों में बच्चों से मिलते हैं और अपनी सफलता का राज उनसे बांटकर, उन्हें भी आगे पढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। शिक्षा के प्रति इतना समर्पित होने के कारण ही उनके जन्मदिन को शिक्षक दिवस घोषित किया गया। देश के प्रति वह इतने समर्पित थे कि राष्ट्रपति के रूप में हर महीने मिलनेवाले वेतन का तीन-चौथाई हिस्सा वह प्रधानमंत्री राहत कोष में दान दे दिया करते थे।

शास्त्रों में गुरु को परमब्रह्म कहा गया है

शिक्षक दिवस वैसे तो पूरे विश्व में मनाया जाता है लेकिन अलग-अलग तिथियों को। भारत में यह दिवस पूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्मदिवस पांच सितम्बर को मनाया जाता है। देश में शिक्षक दिवस मनाने की परम्परा तब शुरु हुई जब डॉ. राधाकृष्णन १९६२ में राष्ट्रपति बने और उनके छात्रों एवं मित्रों ने उनका जन्मदिन मनाने की उनसे

अनुमति मांगी।

स्वयं ४० वर्षों तक शिक्षण कार्य कर चुके राधाकृष्णन ने कहा कि अनुमति तभी मिलेगी जब केवल मेरा जन्मदिन मनाने के बजाय देशभर के शिक्षकों का दिवस आयोजित करें। बाद से प्रत्येक वर्ष शिक्षक दिवस मनाया जाने लगा।

राधाकृष्णन का जन्म पांच सितम्बर १८८८ को मद्रास (चेन्नई) के तिरुत्तानी कस्बे में हुआ था। उनके पिता वीरा समय्या एक जमींदारी में तहसीलदार थे। उनका बचपन एवं किशारोवस्था तिरुत्तानी और तिरुपति (आंध्र प्रदेश) में बीता। उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय से एम.ए. की पढ़ाई पूरी की तथा वेदांत के नीतिशास्त्र पर शोधपत्र प्रस्तुत कर पी.एच.डी. की उपाधि हासिल की।

मद्रास प्रेसीडेंसी कॉलेज के दर्शनशास्त्र विभाग में १९०९ में वह व्याख्याता नियुक्त किए गए। फिर १९१८ में मैसूर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बने। लंदन के ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में वह १९३६ से ३९ तक पूर्व देशीय धर्म एवं नीतिशास्त्र के प्रोफेसर रहे। राधाकृष्णन १९३९ से ४८ तक बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। वर्ष १९४६ से ५२ तक राधाकृष्णन को यूनेस्को के प्रतिनिधिमंडल के नेतृत्व का अवसर मिला। वह रूस में १९४९ से ५२ तक भारत के राजदूत रहे। १९५२ में ही उन्हें भारत का उपराष्ट्रपति चुना गया। मई १९६२ से मई १९६७ तक उन्होंने राष्ट्रपति पद को सुशोभित किया।

राधाकृष्णन ने कहा था, शिक्षकों को देश का मार्गदर्शक होना चाहिए। शिक्षक दिवस शिक्षकों के लिए गर्व का दिन होता है। इस दिन छात्र अपने गुरुओं के मनोरंजन के लिए नृत्य एवं नाटक प्रस्तुत करते हैं। कहीं-कहीं छात्र शिक्षकों की वेशभूषा में अपने स्कूल या कॉलेज जाते हैं और अध्यापक की भूमिका अदा करते हैं। इससे शिक्षकों का मनोरंजन तो होता ही है, वे अतीत के सुनहरे पलों में खो जाते हैं।

शिक्षिका प्रवेश प्रांजल कहती हैं, हमें बच्चों का अच्छा दोस्त बनकर उन्हें सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करना चाहिए लेकिन जब किसी शिक्षक द्वारा छात्र या छात्रा की बेरहमी से पिटाई की खबर सुनती हूं तो बहुत दुख होता है। ऐसे शिक्षक कभी सम्मान अर्जित नहीं कर सकते। शिक्षक दिवस विभिन्न देशों में अलग अलग तिथि को मनाया जाता है। पड़ोसी देश पाकिस्तान और रूस में पांच अक्टूबर, चीन में १० सितम्बर, अमेरिका में छह मई, ईरान में दो मई, सीरिया, मिस्र, लीबिया और मोरक्को में २८ फरवरी, थाईलैंड में १६ जनवरी, इंडोनेशिया में २५ नवम्बर तथा दुनिया के अधिकांश देशों में पांच अक्टूबर को शिक्षक दिवस मनाने की परम्परा है।

६ सितंबर

धन सिंह थापा (निधन- ६ सितम्बर)

मेजर धन सिंह थापा परमवीर चक्र से सम्मानित नेपाली मूल के भारतीय व्यक्ति है। इन्हें यह सम्मान सन १९६२ में मिला। १९६२ के भारत-चीन युद्ध में जिन चार भारतीय बहादुरों को परमवीर चक्र प्रदान किया गया, उनमें से केवल एक वीर उस युद्ध को झेलकर जीवित रहा उस वीर का नाम धन सिंह थापा था जो १/८ गोरखा राइफल्स से, बतौर मेजर इस लड़ाई में शामिल हुआ था। धन सिंह थापा भले ही चीन की बर्बर सेना का सामना करने के बाद आज भी जीवित रहे, लेकिन युद्ध के बाद चीन के पास बन्दी के रूप में जो यातना उन्होंने झेली उसकी स्मृति भर भी थरथरा देनेवाली है। धन सिंह थापा इस युद्ध में पान गौंग त्सो (झील) के तट पर सिरी जाप मोर्चे पर तैनात थे, जहां उनके पराक्रम ने उन्हें परमवीर चक्र के सम्मान का अधिकारी बनाया।

❊ अलाउद्दीन खाँ (निधन- ६ सितम्बर)

अलाउद्दीन खाँ सरोद वादक थे और उन्होंने भारतीय संगीत के सबसे बड़े घरानों में से एक मैहर घराने की भी नींव रखी थी। अलाउद्दीन खाँ को सन १९५८ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था। उस्ताद अली अकबर खाँ भारत में शास्त्रीय संगीत परंपरा के पितामह कहे जानेवाले बाबा अलाउद्दीन खाँ साहेब के बेटे हैं, उन्हीं के संरक्षण में मैहर घराने की विरासत संभालते हुए अली अकबर खान ने अपने पिता से संगीत सीखा। अलाउद्दीन खाँ ने पंडित रविशंकर और अल्ला रक्खा खाँ को भी शास्त्रीय संगीत सिखाया था। इन्होंने संगीत को देश के बाहर पूरी दुनिया में प्रचार-प्रसार करने का काम किया था।

दलीप सिंह (जन्म- ६ सितम्बर)

दलीप सिंह पंजाब के महाराज रणजीत सिंह का सबसे छोटे पुत्र थे। इन्हें १८४३ ई. में नाबालिग अवस्था में अपनी माँ रानी जिन्दा की संरक्षकर्ता में राजसिंहासन पर बैठाया गया। दलीप सिंह की सरकार प्रथम सिक्ख युद्ध (१८४५-४६) में शामिल हुई। जिसमें सिक्खों की हार हुई और उसे सतलुज नदी के बायीं ओर का सारा क्षेत्र एवं जलंधर दोआब अंग्रेजों को समर्पित करके डेढ़ करोड़ रुपया हर्जाना देकर संधि करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

७ सितंबर

नीरजा भनोट (जन्म- ७ सितम्बर)

नीरजा भनोट मुंबई में पैन एम एअरलाइन्स की विमान परिचारिका थीं। ५ सितंबर १९८६ के पैन एम उड़ान ७३ के अपहृत विमान में यात्रियों की सहायता एवं सुरक्षा करते हुए वे आतंकवादियों की गोलियों का शिकार हो गई थीं। नीरजा वास्तव में स्वतंत्र भारत की महानतम वीरांगना है। आतंकियों से लगभग ४०० यात्रियों की जान बचाते हुए अपना जीवन बलिदान कर दिया था। नीरजा भनोट अशोक चक्र पाने वाली पहली महिला थी।

गोपीनाथ कविराज (जन्म- ७ सितम्बर)

गोपीनाथ कविराज संस्कृत के विद्वान और महान दार्शनिक थे। गोपीनाथ कविराज सेवानिवृत्ति के पश्चात अपना समय प्राचीन ज्ञान-विज्ञान, अध्यात्म आदि पर चर्चा और तांत्रिक साधना में ही बिताते रहे। सरकार ने उन्हें महामहोपाध्याय की उपाधि सन्नाटेदार प्रदान की। भारत सरकार ने उन्हें पद्म विभूषण की उपाधि से सम्मानित किया था।

इला रमेश भट्ट (जन्म- ७ सितम्बर)

इला रमेश भट्ट अंतरराष्ट्रीय श्रम, सहकारिता, महिलाओं और लघुवित्त आंदोलनों की एक सम्मानित नेता हैं, जिन्हें कई राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। वे भारत में सेल्फ एम्प्लएड वुमन एसोसिएशन (एस.ई.डब्ल्यू.ए) की संस्थापक हैं, जिसे कई प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए है। यह संस्था लघु ऋण देने, स्वास्थ्य और जीवन बीमा और बच्चों की देखभाल के कामों में संलग्न है। एस.ई.डब्ल्यू.ए. सौ से अधिक सहकारी समितियों की देखरेख में चलती है, जिन्हें महिलाएँ संचालित करती हैं। जनवरी २०१० में एस.ई.डब्ल्यू.ए. की सदस्य संख्या १२ लाख तक पहुंच गई है।

ममूटी (जन्म- ७ सितम्बर)

ममूटी (पूरा नाम- मुहम्मदकुट्टी परपराम्बिल) दक्षिण भारतीय सिनेमा के प्रसिद्ध अभिनेता हैं। ममूटी ने सबसे लोकप्रिय मलयाली के एक विश्वव्यापी सर्वेक्षण में मोहनलाल और रेसुल पूकुट्टी को पीछे छोड़ दिया है। एशियन टेलीविजन अवार्डस २०१० द्वारा कराए सर्वेक्षण में सबसे लोकप्रिय मलयाली ममूटी को घोषित किया गया है। तीन राष्ट्रीय पुरस्कारों के साथ उन्होंने केरल सरकार के सात पुरस्कार और फिल्मफेयर के ११ पुरस्कार हासिल किए हैं। इस प्रतिष्ठा के बावजूद उनकी विनम्रता प्रभावित करती है।

८ सितंबर

भूपेन हजारिका (जन्म- ८ सितंबर)

८ सितंबर, १९२६ को गीतकार, संगीतकार व गायक भूपेन हजारिका का जन्म शदिया (असम) में हुआ था। वे ऐसे कलाकार थे जो अपने गीत खुद लिखते, संगीतबद्ध करते और गाते थे। वे पहली शख्सीयत थे जिन्होंने असमियां संस्कृति को विश्व मंच तक पहुंचाया था। उन्होंने गीत संगीत को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया और ६० साल तक लगातार भारतीय संगीत में सक्रिय योगदान दिया। उनके गंगा नदी पर लिखे और गाये गीत काफी प्रसिद्ध हुए। वे राष्ट्रपति सम्मान से भी नवाजे गये। फिल्म जगत के सर्वोच्च दादा साहेब फाल्के पुरस्कार के साथ-साथ वे पद्मभूषण, असम रत्न और संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से नवाजे गये। पांच नवंबर २०११ को मुंबई में उनका निधन हो गया।

९ सितंबर

आनंद कुमारस्वामी (निधन- ९ सितंबर)

आनन्द कुमारस्वामी सुविख्यात कलामर्मज्ञ भारत-चिन्तक थे। १९११ ई. में उन्होंने इंग्लैण्ड में इंडियन सोसायटी की नींव डाली। १९१७ ई. में वे बोस्टन के ललित कला संग्रहालय के भारतीय विभाग के अध्यक्ष नियुक्त हुए और मृत्युपर्यंत उस पद पर रहे। न्यूयार्क में भी उन्होंने इंडियन कल्चर सेंटर स्थापित किया। भारतीय कला तथा दर्शन पर उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकों की रचना की।

रामवृक्ष बेनीपुरी (निधन- ९ सितंबर)

रामवृक्ष बेनीपुरी भारत के प्रसिद्ध उपन्यासकार, निबंधकार और नाटककार थे। ये एक महान विचारक, चिन्तक, मनन करनेवाले क्रान्तिकारी, साहित्यकार, पत्रकार और संपादक के रूप में भी अविस्मरणीय हैं। बेनीपुरी जी हिन्दी साहित्य के शुक्लोत्तर युग के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। वे एक सच्चे देशभक्त और क्रांतिकारी भी थे। इन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आठ वर्ष जेल में बिताये। हिन्दी साहित्य के पत्रकार होने के साथ ही इन्होंने कई समाचार पत्रों, जैसे- युवक (१९२९) आदि भी निकाले। इसके अलावा कई राष्ट्रवादी और स्वतंत्रता संग्राम संबंधी कार्यों में भी संलग्न रहे।

मणि मधुकर (जन्म- ९ सितंबर)

मणि मधुकर हिंदी एवं राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध कवि और लेखक हैं। मणि मधुकर ने अनेक रचनाओं का संपादन किया। अनेक रचनाओं का बंगला, कन्नड़, उड़िया, मराठी, पंजाबी, डोगरी, असमिया, गुजराती इत्यादि देशी व रूसी, जर्मन, पौलिश, फ्रेंच व अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओं में।

कान्तिकुमार जैन (जन्म- ९ सितंबर)

प्रो. कान्तिकुमार जैन हिन्दी के वरिष्ठ रचनाकार हैं। कान्तिकुमार जैन, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (मध्य प्रदेश) में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रह चुके हैं। कान्तिकुमार जैन ने बुंदेलखंड की संस्कृति पर केंद्रित ईसुरी नामक शोध पत्रिका का संपादन किया है। डॉक्टर जैनने भारतीय लेखक के परसाई अंक का परसाई की खोज के नाम से अतिथि संपादन भी किया है।

गोपाल चंद्र प्रहराज (जन्म- ९ सितंबर)

गोपाल चंद्र प्रहराज भारत के प्रसिद्ध साहित्यकारों में से एक थे। वे उड़िया भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा भाषाविद थे। सरल भाषा के गम्भीर विचार युक्त व्यंग्य लेखक के रूप में गोपाल चंद्र प्रहराज की काफी प्रसिद्धि थी।

१० सितंबर

सुकुमार राय (निधन- १० सितम्बर)

सुकुमार राय बांग्ला भाषा के प्रसिद्ध कवि, लेखक एवं चित्रकार थे। ये बच्चों के लिए हास्य कविता एवं कहानियाँ लिखते थे। सुकुमार राय अपने समय के प्रमुख लेखक-पत्रकार एवं चित्रकार थे। सुकुमार राय गुरु रवींद्रनाथ टैगोर के शिष्य थे। इनके पिता उपेंद्रनाथ चौधरी बाल साहित्य में सिद्धहस्त एवं कट्टर ब्रह्मसमाजी थे। सुकुमार राय की बेतुकी कविताएँ अपनी कल्पनाशीलता छंदबद्धता और अंवेषणशक्ति वर्णन के कारण बंगाली बच्चों द्वारा आज भी याद की जाती है। सुकुमार राय विश्व में भारतीय फिल्मों को नई पहचान दिलानेवाले भारत रत्न सम्मानित सत्यजित राय के पिताजी थे।

अब्दुल हमीद (निधन- १० सितम्बर)

वीर अब्दुल हमीद भारतीय सेना के प्रसिद्ध सिपाही थे जिन्होंने अपने सेवाकाल में सैन्य सेवा मेडल, समर सेवा मेडल और रक्षा मेडल से सम्मान प्राप्त किया था। १९६५ में भारत-पाकिस्तान युद्ध में असाधारण बहादुरी के लिए महावीर चक्र और परमवीर चक्र प्राप्त हुआ।

जतीन्द्रनाथ मुखर्जी (निधन- १० सितम्बर)

जतीन्द्रनाथ मुखर्जी अथवा बाघा जतीन ब्रिटिश शासन के खिलाफ एक बंगाली क्रांतिकारी थे। इनकी अल्पायु में ही इनके पिता का देहांत हो गया था। इनकी माता ने घर की समस्त जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली और उसे बड़ी सावधानीपूर्वक निभाया। जतीन्द्रनाथ मुखर्जी के बचपन का नाम जतीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय था। अपनी बहादुरी से एक बाघ को मार देने के कारण ये बाघा जतीन के नाम से भी प्रसिद्ध हो गये थे। जतीन्द्रनाथ ब्रिटिश शासन के विरुद्ध कार्यकारी दार्शनिक क्रान्तिकारी थे। वे युगान्तर पार्टी के मुख्य नेता थे। उस समय युगान्तर पार्टी बंगाल के क्रांतिकारियों का प्रमुख संगठन थी।

चित्रा मुदगल (जन्म- १० सितम्बर)

चित्रा मुद्गल आधुनिक हिंदी कथा-साहित्य की बहुचर्चित और सम्मानित लेखिका हैं। बकौल चित्रा मुदगल, विद्रोह, संघर्ष और कायरता, मनुष्य को ये सभी चीजें घर से वातावरण से ही मिलती हैं। मुझे भी घर के माहौल ने विद्रोही बनाया। संयोग देखिए कि इसी विद्रोह ने चित्रा मुदगल को रचना संसार की राह भी दिखाई। पहली कहानी स्त्री-पुरुष संबंधों पर थी जो १९५५ में प्रकाशित हुई।

महान राजनेता एवं हिन्दी प्रेमी थे पंडित गोविन्द बल्लभ पंत

भारत रत्न पंडित गोविन्द बल्लभ पंत एक महान राजनेता और स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही एक बहुत बड़े हिन्दी प्रेमी भी थे। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्थापित कराने के आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले में दस सितंबर १८८७ को जन्मे गोविंद बल्लभ पंत ने एक वकील के रूप में अपने कैरियर की शुरुआत

की। १९२१ में उन्होंने राजनीति में प्रवेश किया और विधानसभा सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए। गांधी जी के आह्वान पर नमक सत्याग्रह में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए पंत को १९३० में गिरफ्तार कर लिया गया और ब्रितानिया हुकूमत ने उन्हें कई हफ्तों तक जेल में बंद रखा। १९३३ में प्रांतीय कांग्रेस के सत्र में भाग लेने की वजह से उन्हें दोबारा गिरफ्तार कर लिया गया और सात महीने तक कैद में रखा गया। १९३४ में पंत केंद्रीय विधानसभा के लिए निर्वाचित हुए। राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर केपी सिंह के अनुसार पंत अपने राजनीतिक चातुर्य और कुशलता के चलते कांग्रेस पार्टी में काफी लोकप्रिय थे। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में महती भूमिका अदा करने के साथ ही हिन्दी को राजकीय भाषा के रूप में स्थापित कराने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत सरकार अधिनियम १९३५ के तहत १९३७ में हुए प्रांतीय चुनावों में कांग्रेस को बहुमत मिला और गोविन्द वलभ पंत यूनाइटेड प्रांत के मुख्यमंत्री बने। वह १९३९ तक इस पद पर रहे। वायसराय ने जब १९३९ में कांग्रेस से सलाह मशविरा किए बिना द्वितीय विश्व युद्ध में शामिल होने की घोषणा की तो कांग्रेस के सभी प्रांतीय मंत्रियों ने इस्तीफा दे दिया। १९४६ में फिर से प्रांतीय विधानसभाओं के चुनाव कराए गए जिनमें कांग्रेस को बहुमत मिला। पंत एक बार फिर मुख्यमंत्री बने और देश को १९४७ में स्वतंत्रता मिलने के बाद भी वह इस पद पर रहे। पंत अपनी राजनीतिक क्षमता के चलते पार्टी के उप नेता चुने गए। १९४० में सत्याग्रह आंदोलन का समर्थन करने के लिए गोरी हुकूमत ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। सन १९४२ में गांधीजी के भारत छोड़ो आंदोलन प्रस्ताव पर दस्तखत करने के लिए उन्हें फिर से गिरफ्तार कर लिया गया और १९४५ तक उन्हें अहमदनगर किले में बंद रखा गया। बाद में पंडित जवाहर लाल नेहरू स्वास्थ्य कारणों के आधार पर उन्हें रिहा कराने में सफल रहे। सन १९५५ में उन्हें केंद्र में गृहमंत्री का पदभार मिला। उन्होंने हिन्दी को राजकीय भाषा के रूप में स्थापित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस दौरान उन्हें भारत रत्न से नवाजा गया। १९६० में उन्हें दिल का दौरा पड़ा। इसके बाद उनका स्वास्थ्य खराब होता चला गया और सात मार्च १९६१ को उनका निधन हो गया।

११ सितंबर

१) आचार्य विनोबा भावे

विनोबा जी के जीवन पर महात्मा गाँधी का व्यापक प्रभाव पड़ा और गाँधी जी भी विनोबा जी पर बहुत विश्वास करते थे। इसी कारण वे प्रमुख विषयों पर विनोबा जी से परामर्श भी करते थे। इसी निकटता के चलते गाँधी जी के प्रमुख शिष्यों में थे विनोबा जी। नैतिक मूल्यों और बापू के आदर्शों पर चलने वाले विनोबा जी ने अपना सर्वस्व राष्ट्रहित व समाज के लिए अर्पित कर दिया। विनोबा जी का पूरा नाम विनायक नरहरि भावे था। कोलाबा (महाराष्ट्र) के गागोदा ग्राम मे ११ सितम्बर १८९५ को इनका जन्म हुआ था। यह तीन भाई थे। इनके पिता का नाम नरहरि तथा रघुमाई देवी माता का नाम था जो अत्यन्त धार्मिक थी। बालक विनायक पर माता के आदर्शों का गहरा प्रभाव पड़ा जो उनके जीवन के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त करता रहा। विनोबा भावे सही अर्थों में संत, महापुरुष व दार्शनिक थे। उनकी पुस्तक गीता प्रवचन उनकी गहन आध्यात्मिकता का प्रमाण है। उनके समाजसुधार की दिशा मे उठाये गये कदम सराहनीय है।

विनोबा जी के जीवन पर महात्मा गाँधी का व्यापक प्रभाव पड़ा और गाँधी जी भी विनोबा जी पर बहुत विश्वास करते थे। इसी कारण वे प्रमुख विषयों पर विनोबा जी से परामर्श भी करते थे। इसी निकटता के चलते गाँधी जी के प्रमुख शिष्यों मे थे विनोबा जी। नैतिक मूल्यों और बापू के आदर्शों पर चलने वाले विनोबा जी ने अपना सर्वस्व राष्ट्रहित व समाज के लिए अर्पित कर दिया।

विनोबा जी का पूरा नाम विनायक नरहरि भावे था। कोलाबा (महाराष्ट्र) के गागोदा ग्राम मे ११ सितम्बर १८९५ को इनका जन्म हुआ था। यह तीन भाई थे। इनके पिता का नाम नरहरि तथा रघुमाई देवी माता का नाम था जो अत्यन्त धार्मिक थी। बालक विनायक पर माता के आदर्शों का गहरा प्रभाव पड़ा जो उनके जीवन के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त करता रहा। विनोबा भावे सही अर्थों मे संत, महापुरुष व दार्शनिक थे। उनकी पुस्तक गीता प्रवचन उनकी गहन आध्यात्मिकता का प्रमाण है। उनके समाजसुधार की दिशा मे उठाये गये कदम सराहनीय है। उन्होने मानव जीवन की वास्तविकता और सत्यता को भलीभाँति जाना और पहचाना इसीलिए उन्होने स्वतंत्रता मिलने के पश्चात सन् १९५१ से लेकर अगले तीस वर्षों तक भूदान यज्ञ का प्रवर्तन किया। समाज मे सुख-शांति और समृद्धि एवं आत्मीयता के प्रसार के लिए विनोबा जी ने सन् १९४८ मे सर्वोदय समाज की स्थापना की। विनोबा जी ने हरिजनों, गरीब मजदूरों और किसानों की आर्थिक स्थिति मे सुधार लाने की दिशा मे सम्पूर्ण राष्ट्र का भ्रमण करके भूदाय यज्ञ के अंतर्गत भूमिहीनों को खेती योग्य भूमि दिलायी। यह गरीबों और भूमिहीनों के लिए ठोस और बहुत बड़ा काम था। उनके सर्वोदय समाज और भूदान आंदोलन के लिए जयप्रकाश नारायण ने भी अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया। विनोबा जी गाँवों के विकास और गरीब ग्रामीणों एवं हरिजनों की प्रगति के लिए सदैव प्रयासरत रहते थे। वे वसुधैव कुटुम्बकम् के प्रबल पक्षधर थे। पोच्चंपलि के हरिजनों और किसानों की गरीबी देखकर विनोबा जी को बहुत दु:ख हुआ। इसके निवारण के लिए भूदान यज्ञ एक सार्थक प्रयास था।

विनोबा जी के जीवन पर महात्मा गांधी का व्यापक प्रभाव पड़ा और गांधीजी भी विनोबा जी पर बहुत विश्वास करते थे। इसी कारण वे प्रमुख विषयों पर विनोबा जी से परामर्श भी करते थे। इसी निकटता के चलते गांधीजी के प्रमुख शिष्यों में थे विनोबा जी। नैतिक मूल्यों और बापू के आदर्शों पर चलने वाले विनोबा जी ने अपना सर्वस्व राष्ट्रहित व समाज के लिए अर्पित कर दिया।

विनोबा जी का पूरा नाम विनायक नरहरि भावे था। कोलाबा (महाराष्ट्र) के गागोदा ग्राम में ११ सितंबर १८९५ को इनका जन्म हुआ था। यह तीन भाई थे। इनके पिता का नाम नरहरि तथा रघुमाई देवी माता का नाम था जो अत्यन्त धार्मिक थी। बालक विनायक पर माता के आदर्शों का गहरा प्रभाव पड़ा जो उनके जीवन के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त करता रहा। विनोबा भावे सही अर्थों में संत, महापुरुष व दार्शनिक थे। उनकी पुस्तक गीता प्रवचन उनकी गहन आध्यात्मिकता का प्रमाण है। उनके समाज सुधार की दिशा में उठाए गए कदम सराहनीय हैं। उन्होंने मानव जीवन की वास्तविकता और सत्यता को भलीभांति जाना और पहचाना इसीलिए उन्होंने स्वतंत्रता मिलने के पश्चात सन् १९५१ से लेकर अगले तीस वर्षों तक भूदान यज्ञ का प्रवर्तन किया। समाज में सुख-शांति और समृद्धि एवं आत्मीयता के प्रसार के लिए विनोबा जी ने सन् १९४८ में सर्वोदय समाज की स्थापना की। विनोबा जी ने हरिजनों, गरीब मजदूरों और किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने की दिशा में सम्पूर्ण राष्ट्र का भ्रमण करके भूदान यज्ञ के अंतर्गत भूमिहीनों को खेती योग्य भूमि दिलाई।

यह गरीबों और भूमिहीनों के लिए ठोस और बहुत बड़ा काम था। उनके सर्वोदय समाज और भूदान आंदोलन के लिए जयप्रकाश नारायण ने भी अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया। विनोबा जी गांवों के विकास और गरीब ग्रामीणों एवं हरिजनों की प्रगति के लिए सदैव प्रयासरत रहते थे। वे वसुधैव कुटुम्बकम् के प्रबल पक्षधर थे। पोच्चंपल्लि के हरिजनों और किसानों की गरीबी देखकर विनोबा जी को बहुत दु:ख हुआ। इसके निवारण के लए उनका भूदान यज्ञ एक सार्थक प्रयास था। जिसमें दान स्वरूप मिली भूमि को विनोबा जी गरीबों में बांट कर उन्हें खेती के लिए प्रोत्साहित करना उनका उद्देश्य था। ताकि हरिजन व गरीब किसान अपना तथा अपने परिवार का भरण-पोषण कर सकें। विनोबा जी ने अपने जेल यात्रा के दौरान कई भाषाएं सीखीं। इसके अतिरिक्त कई विदेशी भाषाओं की भी जानकारी की। विनोबा जी की सादगी से गांधी जी अभिभूत थे। वे आश्रम की देखभाल में भी अपना शारीरिक श्रम व समय का योगदान करते थे। विनोबा जी की नियमित दिनचर्या के प्रभाव ने उनके शरीर को आजीवन सक्रिय रखा। महान व्यक्तित्व विनोबा भावे १५ नवम्बर १९८२ को सदा-सदा के लिए इस संसार से विदा हो गए। आज उनके बताए रास्ते पर चलना ही हमारी उनके प्रति श्रद्धा है।

विनोबा भावे महात्मा गांधी के आदरणीय अनुयायी, भारत के एक सर्वाधिक जाने-माने समाज सुधारक एवं भूदान यज्ञ नामक आन्दोलन के संस्थापक थे। इनकी समस्त जिंदगी साधु सन्यासियों जैसी रही, इसी कारणवश ये एक संत के तौर पर प्रख्यात हुए। विनोबा भावे अत्यंत विद्वान एवं विचारशील व्यक्तित्ववाले शख्स थे। महात्मा गांधी के परम शिष्य जंग ए आजादी के इस योद्धा ने वेद, वेदांत, गीता, रामायण, कुरआन, बाइबिल आदि अनेक धार्मिक ग्रंथों का उन्होंने गहन गंभीर अध्ययन मनन किया। अर्थशास्त्र, राजनीति और दर्शन के आधुनिक सिद्धातों का भी विनोबा भावे ने गहन अवलोकन चिंतन किया गया।

बाबा हरभजन सिंह (निधन- ११ सितम्बर)

बाबा हरभजन सिंह भारतीय सेना का एक ऐसा सैनिक, जिसके बारे में यह माना जाता है कि अपनी मृत्यु के बाद आज भी वह देश की सरहद की रक्षा कर रहा है। इस सिपाही को अब लोग कैप्टन बाबा हरभजन सिंह के नाम से पुकारते हैं। हरभजन सिंह की मृत्यु ११ सितम्बर, १९६८ में सिक्किम के साथ लगती चीन की सीमा के साथ नाथूला दर्रे में गहरी खाई में गिरने से हो गई थी।

महादेवी वर्मा (निधन- ११ सितम्बर)

महादेवी वर्मा हिन्दी भाषा की प्रख्यात कवयित्री हैं। महादेवी वर्मा की गिनती हिन्दी कविता के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभ सुमित्रानन्दन पंत, जयशंकर प्रसाद और सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के साथ की जाती है। आधुनिक हिन्दी कविता में महादेवी वर्मा एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरी। महादेवी वर्मा ने खड़ी बोली हिन्दी को कोमलता और मधुरता से संसिक्त कर सहज मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का द्वार खोला, विरह को दीपशिखा का गौरव दिया, व्यष्टिमूलक मानवतावादी काव्य के चिंतन को प्रतिष्ठापित किया। महादेवी वर्मा के गीतों का नाद-सौंदर्य, पैनी उक्तियों की व्यंजना शैली अन्यत्र दुर्लभ है।

कन्हैयालाल सेठिया (जन्म- ११ सितम्बर)

कन्हैयालाल सेठिया आधुनिक काल के प्रसिद्ध हिन्दी व राजस्थानी लेखक थे। इनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध काव्य रचना पाथल व पीथल है। राजस्थान में सामंतवाद के खिलाफ इन्होंने जबदरस्त मुहिम चलायी थी और पिछड़े वर्ग को आगे लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, समाज सुधारक, दार्शनिक तथा राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के कवि एवं लेखक के रूप में कन्हैयालाल सेठिया को अनेक सम्मान, पुरस्कार एवं अलंकरण प्राप्त हुए थे। भारत सरकार द्वारा इन्हें पद्मश्री से भी सम्मानित किया जा चुका है।

आत्माराम रावजी देशपांडे (जन्म- ११ सितम्बर)

आत्माराम रावजी देशपांडे मराठी भाषा के प्रसिद्ध कवि थे। ये कवि अनिल नाम से अधिक प्रसिद्ध है। समाजशिक्षा, विशेषज्ञ विदर्भ के प्रसिद्ध मराठी कवि अनिल के प्रसिद्ध कविता-संग्रह के फलवात, भग्नभूर्ति, पेतेंव्हा, सांगाती, दशपदी अनिल मालवाण के मराठी साहित्य सम्मेलन के सभापति थे। उनके गीतों के कई रिकॉर्ड भी बने हैं। इनकी पत्नी श्रीमती कुसुमावती देशपांडे भी बड़ी विदुषी थी। दोनों का पत्र व्यवहार कुसुमानिल नाम से छपा है।

१२ सितम्बर

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (निधन- १२ सितम्बर)

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी हिन्दी साहित्य के प्रख्यात साहित्यकार थे। बीस वर्ष की उम्र के पहले ही उन्हें जयपुर की वेधशाला के जीर्णोद्धार तथा उससे सम्बन्धित शोधकार्य के लिए गठिन मण्डल में चुन लिया गया था और कैप्टन गैरेट के साथ मिलकर उन्होंने द जयपुर ऑब्जरवेटरी एण्ड इट्स बिल्डर्स शीर्षक अंग्रेजी ग्रन्थ की रचना की। उन्हें अमर कहानी उसने कहा था के रचनाकार के रूप में अधिक जाना जाता है। उन्हें संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, पालि, प्राकृत, मराठी, बंगला, लैटिन, फ्रैंच, जर्मन आदि भाषाओं का ज्ञान था।

रांगेय राघव (निधन- १२ सितम्बर)

रांगेय राघव असाधारण प्रतिभा के धनी रचनाकार थे। हिन्दी के विशिष्ट और बहुमुखी प्रतिभावालों में से एक थे। इनका मूल नाम टी.एन.बी. आचार्य (तिरुमल्लै नंबकम वीरराघव आचार्य) था। हिन्दी साहित्य का संभवत: ऐसा कोई अंग नहीं है, जहाँ हिन्दी साहित्य के साधक डॉ. रांगेय राघव ने अपनी साधना का प्रयोग न किया हो। ये हिन्दी साहित्य के अनन्य उपासक थे। वे रामानुजाचार्य परम्परा के तमिल देशीय आयंगर ब्राह्मण थे।

फीरोज गांधी (जन्म- १२ सितम्बर)

फीरोज गाँधी प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनान और लोकसभा के प्रभावशाली सदस्य थे। फीरोज गाँधी भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पति थे। १९४६ में उन्होंने लखनऊ के दैनिक पत्र नेशनल हेराल्ड के प्रबन्ध निर्देशक का पद सम्भाला। १९५२ के प्रथम आम चुनाव में वे लोकसभा के सदस्य चुने गए। १९५७ में वे पुन: लोकसभा के सदस्य निर्वाचित हुए। इस बार उन्होंने संसद में भ्रष्टाचार के कई मामले उठाए। इन्हीं के कारण वित्त मंत्री टी.टी. कृष्णमाचारी को अपने पद से हटना पड़ा। वे नेहरू परिवार से अपने सम्बन्धों की परवाह किए बिना प्रधानमंत्री की कई नीतियों, विशेषत: औद्योगिक नीतियों की कटु आलोचना करते थे। वे बड़े लोकप्रिय सांसद थे।

१३ सितम्बर

जतीन्द्रनाथ दास (शहादत: १३ सितम्बर)

जतीन्द्रनाथ दास भारत के प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों में से एक थे, जिन्होंने देश की आजादी के लिए जेल में अपने प्राण त्याग दिए और शहादत पाई। इन्हें जतिन दास के नाम से भी जाना जाता है, जबकि संगी साथी इन्हें प्यार से जतिन दा कहा करते थे। जतीन्द्रनाथ दास कांग्रेस सेवादल में सुभाषचन्द्र बोस के सहायक थे। भगत सिंह से भेंट होने के बाद वे बम बनाने के लिए आगरा आ गये थे। भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त ने जो बम केन्द्रीय असेम्बली में फेंके थे, वे इन्हीं के द्वारा बनाये गए थे। जेल में क्रांतिकारियों ने १३ जुलाई, १९२९ से अनशन आरम्भ कर दिया। जतीन्द्रनाथ भी इसमें सम्मिलित हुए। अनशन के ६३वें दिन जेल में ही इनका देहान्त हो गया।

भगवत रावत (जन्म- १३ सितम्बर)

भगवत रावत एक प्रगतिशील कवि एवं निबन्ध लेखक थे। भगवत रावत मध्य प्रदेश प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष और वसुधा पत्रिका के संपादक भी रहे। भगवत रावत समकालीन हिन्दी कविता के शीर्षस्थ कवि, साहित्यकार और मेहनतकश मजदूरों के प्रतिनिधि कवि के रूप में प्रसिद्ध रहे।

रामास्वामी परमेस्वरन (जन्म- १३ सितम्बर)

मेजर रामास्वामी परेस्वरन परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९८७ में मरणोपरांत मिला। भारत की सेनाओं ने हमेशा युद्ध के लिए हथियार नहीं उठाए बल्कि ऐसा भी मौका आया जब उसकी भूमिका विश्व स्तर पर शांति बनाए रखने की रही। श्रीलंका में ऐसे ही उदाहरण के साथ भारत का नाम जुड़ा हुआ है। विस्तृत इतिहास के बीच एक प्रसंग ऑपरेशन पवन का है जो १९८७ से १९९० तक श्रीलंका में चला, जिसमें भारतीय सेना के वीर मेजर रामास्वामी परमेस्वरन ने शांति विरोधी तत्वों के हाथों अपने प्राण गँवाए और इसके लिए उन्हें भारत सरकार द्वारा परमवीर चक्र प्रदान किया गया।

नगेन्द्र बाला (जन्म- १३ सितम्बर)

नगेन्द्र बाला भारत की प्रसिद्ध महिला स्वतंत्रता सेनानी थीं। वे देश में जिला प्रमुख बननेवाली प्रथम महिला थीं। वे दो बार विधायक के पद पर भी रहीं। उन्होंने १९४१ से १९४५ तक किसान आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई। नगेन्द्र बाला राजस्थान के हाड़ौती क्षेत्र की पहली महिला थीं, जिन्होंने महिलाओं में राष्ट्रीय चेतना का प्रसार किया। वह सदैव महिला कल्याण कार्यों से जुड़ी रहीं।

श्रीधर पाठक (निधन- १३ सितंबर)

श्रीधर पाठक भारत के प्रसिद्ध कवियों में से एक थे। वे स्वदेश प्रेम, प्राकृतिक सौंदर्य तथा समाजसुधार की भावनाओं के कवि थे। वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के पाँचवे अधिवेशन (१९१५, लखनऊ) के सभापति हुए थे। उन्हें कविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया था। हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी पर श्रीधर पाठक का समान अधिकार था।

१४ सितम्बर

ॲड. राम जेठमलानी (जन्म- १४ सितंबर)

राम जेठमलानी, जन्म- १४ सितंबर, १९२३, जन्म स्थान- पाकिस्तान के सिन्ध में शिखरपुर। कहते हैं उस वक्त वहां जेठमल नाम की एक बड़ी हस्ती थी, जो बाद में अफगानिस्तान का मंत्री बन गया था, उसी के नाम पर इनके परिवार का सरनेम जेठमलानी हुआ। उस परिवार में राम जेठमलानी नाम का यह बालक अपने स्कूल टाइम में बहुत तेज बुद्धिवाला छात्र था। इसलिये स्कूल को इन्हें तब डबल प्रमोशन देना पड़ा। सिर्फ १३ बरस की उम्र में ही इस बालक ने मैट्रिक पास कर ली और १७ साल की उम्र में एल.एल.बी. की उपाधि हासिल कर ली। तब राम जेठमलानी को वकीली की सनद दे दी। १८ की उम्र में ही राम जेठमलानी की रत्ना नाम की लड़की से शादी हो गई। फिर १९४७ में भारत पाकिस्तान बंटवारे के समय जब ये २४ के थे, इन्हें कोर्ट में प्रेक्टिस करते हुए आज राम जेठमलानी को ७० साल हो गये हैं। इतनी ज्यादा प्रेक्टिस वाले राम जेठमलानी भारत में अकेले वकील हैं और आज सबसे महंगे भी हैं। मुंबई में जब शुरु शुरु में प्रेक्टिस कर रहे थे, तब दुर्गा नाम की महिला वकील से इन्होंने दूसरी शादी की। पहली पत्नी रत्ना से एक जनक नाम का बेटा हुआ, तो दूसरी पत्नी दुर्गा से इन्हें तीन बच्चे हुए, रानी, शोभा और महेश। राम जेठमलानी कायदे कानून के मामले में किसी चमत्कार से कम नहीं हैं। वे हमेशा प्रवाह के विरुद्ध चलते हैं। किसी बात पर अड़ना और अड़कर खड़े रहना, इनकी खासियत है। किसी के आगे झुकना इन्हें मंजूर नहीं। बात सही हो या गलत, वे अपनी बात मनवाकर ही छोड़ते हैं। यही कारण है कि भाजपा के महान नेता अटल बिहारी वाजपेयी के खिलाफ २००४ में लखनऊ में चुनाव लड़ने के बाद भी आज भाजपा का टिकट लेकर वे राज्यसभा में पहुंच गये हैं। भाजपा के लोग उन्हें कोई कीमत दें या ना दें, मगर वे आज भाजपा के सांसद जरूर हैं। इतना ही नहीं आतंकवादी अफजल गुरु को फांसी होनी चाहिये ऐसा भाजपा कहती है और उसी पार्टी के सांसद होकर राम जेठमलानी अफजल गुरु को फांसी नहीं होनी चाहिये, ऐसा कहते हैं। राम जेठमलानी ने हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े विवादास्पद कोर्ट केस लड़े हैं। पहले पहल इन्होंने हमेशा बड़े गैंगस्टर तथा स्मगलर लोगों के केस चलाये जिनमें इनको मुह मांगी रकम मिलती थी। अपनी तेज बुद्धि, अनुभव और हिम्मत के कारण राम जेठमलानी हिन्दुस्तान के सबसे महंगे वकील बन गये। उनकी फीस एक लाख रुपए प्रति घंटा होती थी, जो आज दस लाख रुपए प्रति घंटा होती है। अवसरवादी होने तथा बार बार पैंतरा बदलने के कारण राम जेठमलानी की एक अच्छे राजनीतिज्ञ के रूप में आज तक कभी प्रतिष्ठा नहीं हुई। १९७१ में उल्हासनगर से पहली बार अपक्ष के रूप में चुनाव लड़ा मगर हार गए। फिर १९७५ से १९७७ की इमरजेन्सी के दौरान तब की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की खूब आलोचना करने के कारण इनके खिलाफ अरेस्ट वारन्ट भी निकला, मगर तब नानी पालखीवाला ने इन्हें बचा लिया। फिर रामजेठमलानी कॅनाडा चले गए। इमरजेन्सी खत्म होने के १० महीने बाद वापस भारत आए। अटल बिहारी वाजपेयी जब दूसरी बार प्रधानमंत्री बने तब न चाहते हुए भी गृहमंत्री एल.के. आडवाणी के बहुत कहने पर इन्हें मंत्री बना लिया गया। वाजपेयी को राम जेठमलानी पर कभी विश्वास नहीं था। राम जेठमलानी ने १९८७ में अलग से भारत मुक्ति मोर्चा नाम की पार्टी बनाई। आगे जाकर १९९५ में भी फिर से पवित्र हिन्दुस्तान कसम नाम की पार्टी बनाई। राम जेठमलानी ने इंदिरा गांधी की हत्या करनेवाले आरोपी की भी वकालत की। हर्षद मेहता तथा केतन पारेख जैसे बड़े घोटालेबाजों के भी सारे कोर्ट केस राम जेठमलानी ने ही चलाए थे। जिस पाकिस्तानी आतंकवादी अफजल गुरु ने २००१ में हमारे देश की संसद पर हमला किया था, कोर्ट

में आरोपी की ओर से केस लड़नेवाले यही राम जेठमलानी वकील थे। जेसिका लाल हत्याकांड में भी आरोपी मनु शर्मा के वकील राम जेठमलानी ही थे। जिसमें वे हार गए। आजकल आईपीएल, चेयरमन ललित मोदी के ये ही वकील हैं। २जी स्पेक्ट्रम घोटाले में करुणानिधि की लड़की कनीमोझी करोड़ों के घोटाले में फंसी है, आज तिहाड़ जेल में बंद हैं। उसको बचाने का काम भी राम जेठमलानी ही कर रहे हैं। राम जेठमलानी की निंदा करनेवालों की भी संख्या कोई कमी नहीं है, मगर राम जेठमलानी कभी किसी की परवाह नहीं करते। ७० साल के अनुभवी होने के कारण राम जेठमलानी की अग्यूमेंट सुनते वक्त सुप्रीम कोर्ट के जज भी सोच में पड़ जाते हैं। राम जेठमलानी आज भी मानसिक तौर पर एकदम फिट हैं। वे आज भी बिनधास्त कहते हैं कि मैं हमेशा आजाद रहकर सोचता हूं। मैंने अपनी आत्मा या बुद्धि कभी किसी को गिरवी नहीं रखी है। मेरी अन्तर-आत्मा जिसके लिए (?) कहती है, मैं उसके लिए ही कोर्ट में लड़ता हूं। वैसे राम जेठमलानी को आंदोलनबाज भी कहा जाता है। एक बार जब वी.पी. सिंह को प्रधानमंत्री बनाने के लिए वे चन्द्रशेखर के बंगले के सामने धरने पर बैठे थे, तब चन्द्रशेखर के कार्यकर्ताओं ने इनकी खूब पिटाई की थी और इनके कपड़े भी फाड़ डाले थे। एक बार तो राम जेठमलानी ने राष्ट्रपति पद का चुनाव भी लड़ा था। आज ८८ की उम्र में भी वे बेहद ज्यादा दिमागी काम करते हैं, यह किसी चमत्कार से कम नहीं है। अच्छा वकील कैसा होना चाहिये? इस पर राम जेठमलानी का कहना था, अच्छा वकील पेशेवर ही होना चाहिये, किसी भी हालत में वो व्यापारिक नहीं होना चाहिए। उस वक्त बहुत सही बात कही थी उन्होंने। मगर क्या खुद राम जेठमलानी पर यह बात कभी लागू हुई? सारे देश के कोर्ट कम्पाउण्ड में इस देश के २० करोड़ पक्षकार देश के कुल १२ लाख वकीलों का जो नजारा देख रहे हैं उसमें तो यही दिखता है कि आज के हमारे अधिकतर वकील प्रोफेशनल बहुत कम और कमर्शियल बहुत ज्यादा हैं। खुद राम जेठमलानी ने हमेशा अन्याय के खिलाफ नहीं बल्कि अन्याय करनेवालों के पक्ष में ही सारे केस लड़े हैं।

मोहनलाल विष्णु पंड्या (निधन- १४ सितंबर)

मोहनलाल विष्णु पंड्या का भारतेंदु कालीन हिन्दी सेवियों में प्रमुख स्थान है। इन्होंने रासो संरक्षा नामक पुस्तक लिखी थी। अपने लेखों के कारण मोहनलाल विष्णु पंड्या नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित होनेवाले पृथ्वीराज रासो के प्रधान संपादक मनोनीत हुए थे।

ज्ञानचंद्र घोष (जन्म- १४ सितंबर)

ज्ञानचंद्र घोष भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में स एक थे। ये अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं के संस्थापक और सदस्य रहे थे। घोष के अनुसंधान कार्यों में ही उनका यश विज्ञान जगत में फैला था। ज्ञानचंद्र घोष द्वारा स्थापित तनुता का सिद्धांत, घोष का तनुता सिद्धांत के नाम से सुप्रसिद्ध है, यद्यपि इसमें पीछे बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा।

ताराशंकर बंद्योपाध्याय (निधन- १४ सितंबर)

ताराशंकर बंद्योपाध्याय बंगला भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। उन्हें उनके प्रसिद्ध उपन्यास गणदेवता के लिए १९६६ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। ताराशंकर बंद्योपाध्याय को साहित्य एवं शिक्षा क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६९ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था। वे पश्चिम बंगाल से थे।

१५ सितम्बर

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (जन्म- १५ सितम्बर)

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना प्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार थे। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना तीसरे सप्तक के महत्वपूर्ण कवियों में से एक हैं। कविता के अतिरिक्त इन्होंने कहानी, नाटक और बाल साहित्य भी रचा। इनकी रचनाओं का अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। आकाशवाणी में सहायक निर्माता; दिनमान के उपसंपादक तथा पराग के संपादक रहे। यद्यपि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का साहित्यिक जीवनकाव्य से प्रारंभ से प्रारंभ हुआ तथापि चरचे और चरखे स्तम्भ में दिनमान में छपे आपके लेख विशेष लोकप्रिय रहे। सन १९८३ में कविता संग्रह खूँटियों पर टंगे लोग के लिए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया।

अलबेरूनी (जन्म- १५ सितम्बर)

अलबेरूनी (९७३-१०४८ ई.) एक फारसी विद्वान लेखक, वैज्ञानिक, धर्मज्ञ तथा विचारक था। अलबेरूनी रबीवा का रहनेवाला था। इसका जन्म ख्वारिज्म में हुआ था। १०१७ ई. में ख्वारिज्म को महमूद गजनवी द्वारा जीत लिया गया। सुल्तान महमूद गजनवी के सामने अलबेरूनी को एक कैदी के रूप में गजनी लाया गया था। उसकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर महमूद गजनवी ने उसे अपने राज्य का राज ज्योतिष नियुक्त कर दिया। अलबेरूनी ने किताब-उल-हिन्द नामक पुस्तक की भी रचना की थी। अलबरूनी अरबी, फारसी, तुर्की, संस्कृत, गणित, खगोल का प्रमुख जानकार था।

करम सिंह (जन्म- १५ सितंबर)

लांस नायक करम सिंह भारत के दूसरे परमवीर चक्र से सम्मानित व्यक्ति थे। इन्हें यह सम्मान सन १९४८ में मिला। वे दूसरे विश्व युद्ध में भी अपनी वीरता का परचम लहरा चुके थे जिसके लिए इन्हें १४ मार्च १९४४ को सेना पदक मिला और इस सम्मान के साथ ही इन्हें पदोन्नति देकर लांस नायक भी बनाया गया।

रामकुमार वर्मा (जन्म- १५ सितम्बर)

रामकुमार वर्मा आधुनिक हिन्दी साहित्य में एकांकी सम्राट के रूप में जाने जाते हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा हिन्दी भाषा के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, व्यंग्यकार और हास्य कवि के रूप में जाने जाते हैं। रामकुमार वर्मा की हास्य और व्यंग्य दोनों विधाओं में समान रूप से पकड़ है। नाटककार और कवि के साथ साथ उन्होंने समीक्षक, अध्यापक तथा हिन्दी-साहित्य के इतिहास-लेखक के रूप में भी हिन्दी साहित्य सर्जन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। रामकुमार वर्मा एकांकीकार, आलोचक और कवि हैं। इनके काव्य में रहस्यवाद और छायावाद की झलक है।

शरत चंद्र चट्टोपाध्याय (जन्म- १५ सितम्बर)

शरत चंद्र चट्टोपाध्याय बांग्ला के अमर कथाशिल्पी और सुप्रसिद्ध उपन्यासकार थे। शरत चंद्र चट्टोपाध्याय की कथा साहित्य की प्रस्तुति जिस रूप स्वरूप में हुई, लोकप्रियता के तत्त्व ने उनके पाठकीय आस्वाद में वृद्धि ही की है। शरत चंद्र चट्टोपाध्याय अकेले ऐसे भारतीय कथाकार भी हैं, जिनकी अधिकांश कालजयी कृतियों पर फिल्में बनीं तथा अनेक धारावाहिक सीरियल भी बने। इनकी कृतियाँ देवदास, चरित्रहीन और श्रीकांत के साथ तो यह बार बार घटित हुआ है।

१६ सितम्बर

ज्वालाप्रसाद (निधन- १६ सितंबर)

ज्वालाप्रसाद प्रसिद्ध भारतीय इंजीनियर तथा वर्ष १९३६ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रत्युकुलपति थे। प्रथम और द्वितीय दिल्ली दरबार की तैयारियों में भी इन्होंने कार्य किया था। विश्वविद्यालय के भवनों पर भारतीय स्थापत्य का जो प्रभाव आज दृष्टिगत होता है, वह सब इन्हीं की सूझबूझ का परिणाम है। काशी के मणिकर्णिका घाट तथा हरिश्चंद्र घाट के सुधार में इनका महत्वपूर्ण योगदान था।

एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी (जन्म- १६ सितंबर)

मदुरै षण्मुखवडिवु सुब्बुलक्ष्मी अथवा एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी को कर्नाटक संगीत का पर्याय माना जाता है और भारत की वह ऐसी पहली गायिका थीं जिन्हें सर्वोच्च नागरिक अलंकरण भारत रत्न से सम्मानित किया गया। उनके गाये हुए गाने, खासकर भजन आज भी लोगों के बीच काफी लोकप्रिय हैं। देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें संगीत की रानी बताया तो वहीं स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर ने उन्हें तपस्विनी कहा।

श्यामलाल गुप्त पार्षद (जन्म- १६ सितंबर)

श्यामलाल गुप्त पार्षद भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक सेनानी, पत्रकार, समाजसेवी एवं अध्यापक थे। श्यामलाल गुप्त पार्षद, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उत्प्रेरक झण्डा गीत विजयी विश्व तिरंगा प्यारा के रचयिता थे।

बलवंत सिंह (जन्म- १६ सितंबर)

शहीद बलवंत सिंह एक स्वतंत्रता सेनानी थे। बलवंत सिंह बैंकाक गए हुए थे कि उन पर कनाडा के सिखों के विरुद्ध काम करनेवाले हॉपकिन्सन की हत्या में सम्मिलित होने का आरोप लगाया गया। १९१५ में गिरफ्तार हुए और ब्रिटिश सरकार को सौंप दिए गए। दूसरे लाहौर षड्यंत्र केस में उन पर भी मुकदमा चला और मार्च, १९१७ में लाहौर जेल में फांसी दे दी गई।

१७ सितम्बर

नरेन्द्र मोदी (जन्म- १७ सितम्बर)

नरेन्द्र मोदी भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री हैं। नरेन्द्र मोदी भारतीय जनता पार्टी के प्रसिद्ध नेता और गुजरात के पूर्व मुख्यमंत्री हैं। नरेंद्र मोदी गुजरात के सबसे ज्यादा लंबे समय तक शासन करनेवाले मुख्यमंत्री हैं। नरेंद्र मोदी को वर्ष २०१४ के लोकसभा चुनाव में भारत की प्रमुख पार्टी भारतीय जनता पार्टी की ओर से प्रधानमंत्री पद का प्रत्याशी घोषित किया गया तथा इन्होंने उत्तर प्रदेश की सांस्कृतिक नगरी वाराणसी एवं अपने गृहराज्य गुजरात के वड़ोदरा संसदीय क्षेत्र से चुनाव लड़ा और दोनों जगह से चुनाव भारी मतों के अंतर से जीता। नरेंद्र मोदी स्वतंत्र भारत में जन्मे पहले व्यक्ति हैं जो भारत का प्रधानमंत्री नियुक्त हुए हैं। इन्होंने २६ मई, २०१४ शाम ६ बजे राष्ट्रपति भवन में भारत के प्रधानमंत्री पद की शपथ ग्रहण की। ८ नवम्बर २०१६ में पुराने ५०० और १००० के नोट बंदी कर भ्रष्टाचार और काले धन पर अंकुश लगाया। १ जुलाई २०१७ से देश में एक देश एक कर (जीएसटी) लागू कर अर्थव्यवस्था को नया आयाम दिया। विदेशी देशों में जाकर उनसे अच्छे सम्बन्ध बनाये। देश के विकास को ऊंचाईयों पर छू लेने का काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके कार्यों में किसान ऋण माफी की योजना सर्वोपरि सराहनीय रही। मोदी सरकार ने १२०० पुराने कानूनों को रद्द किया और भारत में व्यवसाय करने के लिए माहौल को सुधारकर अनुकूल बनाया। इसके चलते बिजनेस रँकिंग में भारत ने ३० पायदान की छलांग लगायीं जो पिछले साल किसी भी देश द्वारा लगायी गयी सबसे ऊंची छलांग है जिसे विश्व बैंक ने भी स्वीकार किया है। आर्थिक और सैन्य शक्ति के रूप में भारत की वैश्विक भूमिका के लिए स्पष्ट रूप से अमेरिकी समर्थन है।

लालगुड़ी जयरमण (जन्म- १७ सितम्बर)

लालगुड़ी जयरमण भारत के जाने माने वायलिन वादक थे। तेलुगू, तमिल, कन्नड़ और संस्कृत के संगीतकार के रूप में उनकी विशेष पहचान थी। संगीत के क्षेत्र में उनके विशेष योगदान के लिए उन्हें वर्ष १९७२ में पद्मश्री से एवं वर्ष २००१ में पद्मभूषण सम्मान से सम्मानित किया गया था।

वामनराव बलिराम लाखे (जन्म- १७ सितम्बर)

वामनराव बलिराम लाखे (जन्म- १७ सितम्बर, १८७२, रायपुर, छत्तीसगढ़, मृत्यु २१ अगस्त, १९४८) भारत की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाले छत्तीसगढ़ राज्य के स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। १९१३ में लाखे जी ने अपना कार्यक्षेत्र सहकारी आंदोलन को बनाया था, जिससे वे जीवन पर्यंत जुड़े रहे। सहकारिता आंदोलन के द्वारा दु:खी और शोषित किसानों की सेवा तथा सहयोग करना उनका प्रमुख उद्देश्य था। सन १९१५ में रायपुर में होमरूल लीग की स्थापना की गई थी। वामनराव बलिराम लाखे जी उसके संस्थापक थे।

मकबूल फिदा हुसैन

१७ सितंबर १९१५ को चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन का जन्म महाराष्ट्र के पंढरपुर में हुआ था। फोर्ब्स पत्रिका ने उन्हें

भारत का पिकासो घोषित किया। उन्होंने अपने कला जीवन की शुरुआत मुंबई में फिल्मों के होर्डिंग पेंट करके की। उनकी पेंटिंग्स को लेकर विवाद भी हुए, जिसके चलते उन्हें २००६ से निर्वासित जीवन जीना पड़ा उन्हें कतर की नागरिकता भी प्राप्त हुई थी। बर्लिन फिल्म समारोह में थ्रू द आईज ऑफ पेंटर फिल्म के लिए उन्हें गोल्डन बीयर पुरस्कार मिला। वे १९९५ में पद्मश्री, १९७३ में पद्मभूषण और १९९१ में पद्मविभूषण से नवाजे गये। १९८६ में उन्हें राज्य सभा के लिए नामित किया गया। निर्वासन के दौरान ही नौ जून २०११ को लंदन में निधन हुआ।

मकबूल फिदा हुसैन महाराष्ट्र के प्रसिद्ध चित्रकार जिनका पूरा जीवन चित्रकला को समर्पित था और जिन्हें प्रगतिशाली चित्रकार माना जाता है। मकबूल फिदा हुसैन को कला के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९९१ में भारत के दूसरे सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया।

१८ सितम्बर

काका हाथरसी (जन्म- १८ सितम्बर)

काका हाथरसी भारत के प्रसिद्ध हिन्दी हास्य कवि थे। उन्हें हिन्दी हास्य व्यंग्य कविताओं का पर्याय माना जाता है। काका हाथरसी की शैली की छाप उनकी पीढ़ी के अन्य कवियों पर तो पड़ी ही थी, वर्तमान में भी अनेक लेखक और व्यंग्य कवि काका की रचनाओं की शैली अपनाकर लाखों श्रोताओं और पाठकों का मनोरंजन कर रहे हैं। उनकी रचनाएँ समाज में व्याप्त दोषों, कुरीतियों, भ्रष्टाचार और राजनीतिक कुशासन की ओर सबका ध्यान आकृष्ट करती हैं।

श्रीकांत वर्मा (जन्म- १८ सितम्बर)

श्रीकांत वर्मा हिन्दी साहित्य में कथाकार, गीतकार और एक समीक्षक के रूप में विशेष तौर पर जाने जाते हैं। राजनीति से भी ये जुड़े हुए थे और १९७६ में राज्यसभा में निर्वाचित हुए थे। श्रीकांत वर्मा दिल्ली में पत्रकारिता से भी जुड़ गये थे। वर्ष १९६५ से १९७७ तक उन्होंने टाइम्स ऑफ इण्डिया से निकलने वाली पत्रिका दिनमान में संवाददाता की हैसियत से कार्य किया। श्रीकांत वर्मा को कई पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया था।

शिवाजी सावंत (निधन- १८ सितम्बर)

शिवाजी सावंत पूरा नाम शिवाजी गोविन्दराव सावंत, मराठी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। वर्षों के चिन्तन-मनन के उपरान्त २७ वर्ष की अवस्था में ही प्रथम मराठी उपन्यास मृत्युंजय का प्रकाशन हुआ। यह उपन्यास उनकी लोकप्रियता का प्रतिमान बना। इसका अनुवाद अंग्रेजी एवं हिन्दी, गुजराती, राजस्थानी, कन्नड़, तेलुगु, मलयालम, बांग्ला आदि अनेक भाषाओं में भी हो चुका है।

१९ सितंबर

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर (जन्म- १९ सितंबर)

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर का बीसवीं शताब्दी के भारतीय सांस्कृतिक उन्नयन में विशेष योगदान रहा था। वे वेदों का अध्ययन करनेवाले शीर्षस्थ विद्वान थे। वेदों के अर्थ और आशय का जितना गंभीर अध्ययन और मनन सातवलेकर जी ने किया था, उतना कदाचित ही किसी अन्य भारतीय ने किया हो। वैदिक साहित्य के संबंध में उन्होंने अनेक लेख लिखे और हैदराबाद में विवेकवर्धिनी नामक शिक्षा संस्था की स्थापना की। राष्ट्रीय विचारों से ओतप्रोत उनकी ज्ञानोपासना वहाँ के निजाम को अच्छी नहीं लगी, इसीलिए इनको शीघ्र ही हैदराबाद छोड़ देना पड़ा।

कुंवर नारायण (जन्म- १९ सितंबर, निधन- १५ नवम्बर)

कुंवर नारायण हिन्दी के सम्मानित कवियों में गिने जाते हैं। कुंवर नारायण को अपनी रचनाशीलता में इतिहास और मिथक के माध्यम से वर्तमान को देखने के लिए जाना जाता है। उनका रचना संसार इतना व्यापक एवं जटिल है कि उसको कोई एक नाम देना सम्भव नहीं है। फिल्म समीक्षा तथा अन्य कलाओं पर भी उनके लेख नियमित रूप से पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे हैं। आपने अनेक अन्य भाषाओं के कवियों का हिन्दी में अनुवाद किया है और उनकी स्वयं की कविताओं और कहानियों के कई अनुवाद विभिन्न भारतीय और विदेशी भाषाओं में छपे हैं।

यह दुर्विदित था कि हिंदी और भारत के शीर्षस्थ कवि-चिंतक-संस्कृति-समीक्षक कुंवर नारायण पिछले कुछ महीनों से गंभीर रूप से अस्वस्थ थे, किंतु उनकी दुर्दम्य जिजीविषा उन्हें बार-बार मृत्यु के द्वार से लौटा लाती थी। उनकी पत्नी भारती जी, बेटे अपूर्व और समूचे हिंदी-जगत को यह विश्वास था कि अंतत: वह अपनी सर्जना और चिंतन के संसार में स्वस्थतर लौट आएंगे। ऐसी आशा कई बार बंधी किंतु मृग-मरीचिका ही सिद्ध हुई।

यह एक रहस्य ही है की अयोध्या-लखनऊ के एक संपन्न व्यापारिक घराने का एकमात्र वारिस कब और कैसे लेखक और विचारक बना। युवावस्था तक पहुंचते पहुंचते कुंवर नारायण हिंदी लेखन में एक सुपरिचित नाम बन चुके थे, जबकि एम.ए. उन्होंने अंग्रेजी में किया, जिसे वह बेहतरीन लिखते थे।

निस्संदेह उनके कवि-चिंतक बनने में छायावादोत्तर हिंदी साहित्य, कथित नई कविता, द्वितीय विश्व युद्ध और बाद में १९४७ के बाद की भू-राजनीति, मार्क्सवाद, गांधीवाद, कर्मभूमि लखनऊ की गंगा जमुनी संस्कृति, राममनोहर लोहिया, जवाहरलाल नेहरू, आचार्य नरेंद्रदेव आदि की गहरी भूमिका रही। वह रघुवीर सहाय, कृष्ण नारायण कक्कड़, अमृतलाल नागर, यशपाल, श्रीलाल शुक्ल, कैलाश वाजपेयी आदि वरिष्ठ समवयस्क रचनाकारों के सौहार्दपूर्ण संपर्क में भी आए। धर्मवीर भारतीय, विजय देव नारायण साही, जगदीश गुप्त, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना जैसे मित्र उन्हें मिले। सर्वोपरि, शायद गजानन माधव मुक्तिबोध और अज्ञेय के व्यक्तित्व और लेखन से उनका परिचय रहा।

कुंवर नारायण का निधन दिल्ली में न हुआ होता, यदि उन्हें मुलायमसिंह सरकार के जमाने में जानलेवा माफियाई धमकियों के कारण यूपी-लखनऊ का अपना पूरा घर-संसार छोड़ कर दिल्ली न आना पड़ता। वहाँ किसी ने उनका बचाव नहीं किया। यह मुक्तिबोध की कालजयी कविता अँधेरे में का दुस्वप्न था। कुंवर जी केवल अध्यात्म, केवल इतिहास, केवल समाज के कवि कभी नहीं थे। उनमें वामपंथी रुझान और सहानुभूति स्पष्ट देखे जा सकते हैं। यह कोई

रणनीति नहीं थी, बल्कि बौद्धिक और भावनात्मक विकास के तकाजे थे।

कुंवर नारायण की कविता के स्रोत यदि वैदिक-पौराणिक-औपनिषदिक परंपरा में देखे जा सकते हैं, तो वे मध्ययुगीन इस्लामी सिलसिले में भी मौजूद हैं। एक प्रबुद्ध भारतीय के रूप में यह आकस्मिक नहीं है कि उनकी गहरी रुचि संगीत, चित्रकला और सिनेमा में रही। उनके पास हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की लाइव रिकॉर्डिंग्स का दुर्लभ निजी संग्रह था।

कई प्रबुद्ध पाठक कवि और समीक्षक ऐसा मानते हैं कि यदि भारत से किसी कवि को नोबेल पुरस्कार मिल सकता था, तो वह कुंवर नारायण ही थे। उनके कई अनुवाद अंग्रेजी और अन्य भारतीय भाषाओं में तो हुए ही, इतालियन, फ्रेंच, जर्मन, पोलिश तथा कई अन्य यूरोपीय भाषाओं में भी उनकी कविताएं प्रकाशित हुईं और सराही गईं। कुंवर नारायण की कहानियां भी हिंदी में बेमिसाल मानी गईं हैं।

प्रमुख पुस्तकें- चक्रव्यूह, आत्मजयी, अपने सामने, आकारों के आसपास, कोई दूसरा नहीं, वाजश्रवा के बहाने, हाशिये का गवाह, कुमारजीव, शब्द और देशकाल, दिशाओं का खुला आकाश और रूख।

प्रमुख पुरस्कार और सम्मान- ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, हिंदुस्तानी अकादमी पुरस्कार, प्रेमचंद पुरस्कार, तुलसी पुरस्कार, कुमारन आशन पुरस्कार, साहित्य अकादमी महत्तर सदस्यता, प्रीमिओ फेरोनिआ और पद्म भूषण।

सुनीता विलियम्स (जन्म- १९ सितंबर)

सुनीता विलियम्स अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के माध्यम से अंतरिक्ष जानेवाली भारतीय मूल की दूसरी महिला हैं। यह भारत के गुजरात के अहमदाबाद से ताल्लुक रखती है। इन्होंने एक महिला अंतरिक्ष यात्री के रूप में १९४ दिन, १८ घंटे रहकर नया विश्व कीर्तिमान स्थापित किया है। उनके पिता दीपक पांड्या अमेरिका में एक डॉक्टर हैं।

२३ सितम्बर

❋ सत्यनारायण शास्त्री (निधन- २३ सितंबर)

सत्यनारायण शास्त्री आधुनिक आयुर्वेद जगत के प्रख्यात पंडित और चिकित्साशास्त्री थे। आयुर्वेद की धवल परंपरा को सजीव बनाए रखने के लिए आपने जीवन भर कार्य किया। सन १९५० ई. में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के ये निजी चिकित्सक नियुक्त हुए थे। सत्यनारायण शास्त्री जी को वर्ष १९५४ में चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

❋ सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (निधन- २३ सितंबर)

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना प्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार थे। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना तीसरे सप्तक के महत्वपूर्ण कवियों में से एक हैं। कविता के अतिरिक्त इन्होंने कहानी, नाटक और बाल साहित्य भी रचा। इनकी रचनाओं का अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। आकाशवाणी में सहायक निर्माता; दिनमान के उपसंपादक तथापराग के संपादक रहे। यद्यपि सर्वेश्वर दयालु सक्सेना का साहित्यिक जीवन काव्य से प्रारंभ हुआ तथापि चरखे स्तम्भ में दिनमान में छपे आपके लेख विशेष लोकप्रिय रहे। सन १९८३ में कविता संग्रह खूँटियों पर टंगे लोग के लिए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एक कथाकार एवं उपन्यासकार के रूप में भी हिंदी साहित्य संसार में समादृत हुए। विश्वविद्यालयीन जीवन में ही उन्हें उनकी कहानियों के लिए पुरस्कार मिले। अपना लेखक जीवन उन्होंने वस्तुत: कहानियों के लिए पुरस्कार मिले। अपना लेखक जीवन उन्होंने वस्तुत: एक कथाकार के रूप में आरंभ किया। सन १९५० तक वे कहानियां लिखते रहे। तीन-चार सालों बाद उन्होंने फिर कहानियां लिखीं। इसी समय उनका लघु उपन्यास सोया हुआ जल छपकर आया, फिर उनका उपन्यास उड़े हुए रंग छपा। एक अन्य कथा संग्रह अंधेरे पर अंधेरा की खासी चर्चा हुई। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने एक नाटककार के रूप में अपनी अलग पहचान दर्ज कराई। उनके नाटकों में राजनीतिक विद्रूपताओं एवं यथास्थितिवाद के खिलाफ तीखा व्यंग्य मिलता है। वे अपने पात्रों के माध्यम से देश की सड़ांध मारती राजनीतिक व्यवस्था पर सीधी चोट करते नजर आते हैं। इसके अलावा उन्होंने लड़ाई, अब गरीबी हटाओ, कल भात आएगा, हवालात, रूपमती बाजबहादुर, होरी घूम मचोरी नामक नाटक एवं एकांकी लिखे। बच्चों के लिए उन्होंने भों-भों-खों-खों तथा लाख की नाक नामक नाटक लिखे।

रामधारी सिंह दिनकर (जन्म- २३ सितंबर)

रामधारी सिंह दिनकर हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक, कवि एवं निबंधकार हैं। राष्ट्रकवि दिनकर आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं। दिनकर जी की प्राय: ५० कृतियां प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी काव्य छायावाद का प्रतिलोम है, यह कहना तो शायद उचित नहीं होगा पर इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी काव्य जगत पर छाये छायावादी कुहासे को काटने वाली शक्तियों में दिनकर की प्रवाहमयी, ओजस्विनी कविता के स्थान का विशिष्ट महत्व है। दिनकर छायावादोत्तर काल के कवि हैं, अत: छायावाद की उपलब्धियां उन्हें विरासत में मिलीं पर उनके काव्योत्कर्ष का काल छायावाद की

रंगभरी सन्ध्या का समय था।

दिनकर के प्रथम तीन काव्य-संग्रह प्रमुख हैं, रेणुका (१९३५ ई.), हुंकार (१९३८ ई.) और रसवन्ती (१९३९ ई.) उनके आरम्भिक आत्म मंथन के युग की रचनाएँ हैं। इनमें दिनकर का कवि अपने व्यक्ति परक, सौन्दर्यान्वेषी मन और सामाजिक चेतना से उत्तम बुद्धि के परस्पर संघर्ष का तटस्थ द्रष्टा नहीं, दोनों के बीच से कोई राह निकालने की चेष्टा में संलग्न साधक के रूप में मिलता है।

२३ सितंबर १९०८ को राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर का जन्म बिहार के बेगूसराय (तत्कालीन मुंगेर) जिले के सिमरिया गांव में हुआ था। वे लंगट सिंह कॉलेज के स्नातकोत्तर विभाग में विभागाध्यक्ष बने। फिर भागलपुर विश्वविद्यालय में कुलपति बने। १९५२ में ये राज्यसभा के सदस्य बने। १९६५ से १९७१ तक भारत सरकार के हिंदी सलाहकार रहे, काव्य-संग्रह उर्वशी के लिए १९७२ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से नवाजे गये। उनकी कृतियों में उर्वशी, हिमालय, रश्मिरथी, कुरुक्षेत्र रेणुका, हूंकार, रसवन्ता आदि प्रमुख हैं। २४ अप्रैल १९७४ को उनका निधन हो गया।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने हिंदी साहित्य में न सिर्फ वीर रस के काव्य को एक नयी ऊंचाई दी, बल्कि अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का भी सृजन किया। इसकी एक मिसाल ७० के दशक में संपूर्ण क्रांति के दौर में मिलती है। दिल्ली के रामलीला मैदान में लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने हजारों लोगों के समक्ष दिनकर की पंक्ति सिंहासन खाली करो कि जनता आती है का उद्घोष करके तत्कालीन सरकार के खिलाफ विद्रोह का शंखनाद किया था। मौजूदा दौर के मशहूर कवि प्रेम जनमेजय भी मानते हैं कि दिनकर ने गुलाम भारत और आजाद भारत दोनों में अपनी कविताओं के जरिये क्रांतिकारी विचारों को विस्तार दिया। जनमेजय ने बातचीत में कहा कि आजादी के समय और चीन के हमले के समय दिनकर ने अपनी कविताओं के माध्यम से लोगों के बीच राष्ट्रीय चेतना को बढ़ाया। दिनकर का जन्म २३ सितंबर, १९०८ को बिहार के बेगूसराय जिले में हुआ। हिंदी साहित्य में एक नया मुकाम बनानेवाले दिनकर छात्रजीवन में इतिहास, राजनीतिक शास्त्र और दर्शन शास्त्र जैसे विषयों को पसंद करते थे, हालांकि बाद में उनका झुकाव साहित्य की ओर हुआ। वह अल्लामा इकबाल और रवींद्रनाथ टैगोर को अपना प्रेरणा स्रोत मानते थे। उन्होंने टैगोर की रचनाओं का बांग्ला से हिंदी में अनुवाद किया। दिनकर का पहला काव्यसंग्रह विजय संदेश वर्ष १९२८ में प्रकाशित हुआ। इसके बाद उन्होंने कई रचनाएं की। उनकी कुछ प्रमुख रचनाएं परशुराम की प्रतीक्षा, हुंकार और उर्वशी हैं। उन्हें वर्ष १९५९ में साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया। पद्म भूषण से सम्मानित दिनकर राज्यसभा के सदस्य भी रहे। वर्ष १९७२ में उन्हें ज्ञानपीठ सम्मान भी दिया गया। २४ अप्रैल, १९७४ को उनका देहावसान हो गया। दिनकर ने अपनी ज्यादातर रचनाएं वीर रस में कीं। इस बारे में जनमेजय कहते हैं कि भूषण के बाद दिनकर ही एकमात्र ऐसे कवि रहे, जिन्होंने वीर रस का खूब इस्तेमाल किया। वह एक ऐसा दौर था, जब लोगों के भीतर राष्ट्रभक्ति की भावना जोरों पर थी। दिनकर ने उसी भावना को अपने कविता के माध्यम से आगे बढ़ाया। वह जनकवि थे इसीलिए उन्हें राष्ट्रकवि भी कहा गया। देश की आजादी की लड़ाई में भी दिनकर ने अपना योगदान दिया। वह बापू के बड़े मुरीद थे। हिंदी साहित्य के बड़े नाम दिनकर उर्दू, संस्कृत, मैथिली और अंग्रेजी भाषा के भी जानकार थे। वर्ष १९९९ में उनके नाम से भारत सरकार ने डाक टिकट जारी किया।

यूसुफ मेहरअली (जन्म- २३ सितंबर)

कई किसान व मजदूर आंदोलनों में शिरकत। स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भागीदारी। आठ बार जेल में बंद किए गए। साइमन गो बैक नारे के प्रणेता। १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी दौरान जेल में रहते हुए मुंबई के मेयर निर्वाचित। नैशनल मिलिशिया, बॉम्बे यूथ लीग और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापकों में शामिल। समाजवादी आंदोलन के एक महत्वपूर्ण नेता।

२४ सितंबर

प्रताप नारायण मिश्र (जन्म- २४ सितंबर)

प्रताप नारायण मिश्र को आधुनिक हिन्दी निर्माताओं में से एक माना जाता है। वे हिन्दी खड़ी बोली और भारतेन्दु युग के उन्नायक कहे जाते हैं। प्रताप नारायण मिश्र ने एक लेखक, कवि और पत्रकार के रूप में विशेष प्रसिद्धि पाई थी। मिश्र जी की भारतेन्दु हरिश्चन्द्र में अनन्य श्रद्धा थी। वह स्वयं को उनका शिष्य कहते थे तथा देवता के समान उनका स्मरण करते थे। भारतेन्दु जैसी रचना शैली, विषयवस्तु और भाषागत विशेषताओं के कारण ही प्रताप नारायण मिश्र को प्रतिभारतेन्दु या द्वितीयचन्द्र आदि कहा जाने लगा था। मिश्र जी द्वारा लिखे हुए निबंधों में विषय की पर्याप्त विविधता है। देश-प्रेम, समाज-सुधार एवं साधारण मनोरंजन आदि उनके निबंधों के मुख्य विषय थे। उन्होंने ब्राह्मण नामक मासिक पत्र में हर प्रकार के विषयों पर निबंध लिखे थे।

भीकाजी कामा (जन्म- २४ सितंबर)

उनका जन्म मुंबई में हुआ था। इंग्लैंड में इंडिया हाउस, पेरिस इंडियन सोसायटी तथा इंडियन नेशनल कांग्रेस में सक्रिय रही। भीकाजी रुस्तम कामा अथवा मैडम कामा का नाम क्रांतिकारी आंदोलन में विशेष उल्लेखनीय है, जिन्होंने विदेश में रहकर भी भारतीय क्रांतिकारियों की भरपूर मदद की थी। उनके ओजस्वी लेख और भाषण क्रांतिकारियों के लिए अत्यधिक प्रेरणा स्रोत बने। भीकाजी रुस्तम कामा भारतीय मूल की फ्रांसीसी नागरिक थीं जिन्होंने लंदन, जर्मनी तथा अमेरिका का भ्रमण कर भारत की स्वतंत्रता के पक्ष में माहौल बनाया। वे जर्मनी के स्टुटगार्ट नगर में २२ अगस्त १९०७ में हुई सातवीं अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस में तिरंगा फहराने के लिए सुविख्यात हैं। उस समय तिरंगा वैसा नहीं था जैसा वर्तमान में है। ये मैडम कामा के नाम से प्रसिद्ध हैं। १९३५ तक यूरोप में निर्वासित जीवन व्यतीत करना पड़ा। १९३५ में भारत लौटी। इसके नौ महीने बाद मुंबई के पारसी जनरल हॉस्पिटल में उनका निधन हो गया।

१९०१ में बीमारी से इलाज के सिलसिले में ही इंग्लैंड जाना हुआ। मैडम कामा का सौभाग्य था कि उन्हें दादा भाई नौरोजी (वे उनकी सेक्रेटरी थीं) जैसे नेताओं की मार्ग-निर्देशन मिला। वहां पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, सरदार सिंह राणा, आदि क्रांतिकारियों से परिचय हुआ। १० मई, १९०५ को १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम के सिलसिले में जो सभा हुई श्यामजी ने सिर्फ उन्हें उसका अध्यक्ष, बल्कि इंडियन सोशियोलॉजिस्ट अखबार की मुख्य लेखिका और होम रूल सोसायटी का पदाधिकारी भी बनाया। १९०८ में लंडन के टैक्सटॉन हॉल में उनके द्वारा आयोजित एक सम्मेलन में लाला लाजपत राय, बिपिनचंद्र पाल, खापर्डे, आगा खां, गोगुलचंद्र नारंग सरीखे शिखर के भारतीय नेता मौजूद थे। ब्रिटेन सरकार व मीडिया के शत्रुतापूर्ण रवैये से परेशान होकर जब श्यामजी ठिकाना पेरसि शिफ्ट करने को मजबूर हो गए तो वे भी वहां चली गईं। वहां १९०५ में दो मित्रों के साथ पेरिस इंडिया सोसायटी कायम कीं उनके जीते ही ब्रिटेन में उनकी संपत्ति जब्त कर ली गई।

मदन लाल धींगड़ा को लगी फांसी ने मैडम कामा क्रांतिकारियों की मदद का उनका संकल्प और पुख्ता किया। जब नाशिक षडयंत्र हुआ तो उन्होंने यूरोप में बैठे ही मुंबई में अभियुक्तों के लिए बैरिस्टर का प्रबंध किया। विदेशों में गदर के

सेनानी उन दिनों चोरी-छिपे भारत में पिस्तौल, रिवॉल्वर, आदि भेजने की कोशिश किया करते थे। वीर सावरकर, सरदार सिंह राणा आदि क्रांतिकारियों ने फरवरी, १९०९ में छत्रभुज अमीन नामक रसोइए के हाथ २० आटोमैटिक ब्राउनिंग पिस्तौलें गोलियों के साथ मुंबई भेजीं। अमीन पकड़ा गया तो मैडम कामा सीधे कौंसुल जनरल से मिलने पहुंच गई कि दोषी मैं हूं, चाहो तो पकड़ लो। इसी लॉट की एक पिस्तौल बाद में २१ दिसंबर को नाशिक के गोरे मजिस्ट्रेट जैक्सन की हत्या में काम आई थीं।

अंग्रेजों को संसार में स्वतंत्रता का सबसे बड़ा दुश्मन माननेवाली मैडम कामा ने पत्रकारिता में भी जुझारू पारी खेली। उनके साप्ताहिक वंदे मातरम, मदन तलवार और इंडियन फ्रीडम को भारतीय क्रांतिकारी गीता की तरह पढ़ा करते थे। पत्रकारिता के ही जरिए उनका संपर्क सोवियत संघ, आयरलैंड, मिस्र, तुर्की, मोरक्को हर देश के स्वतंत्रता सेनानियों से हुआ। महान रूसी लेखक मैक्सिम गोर्की को सावरकर की लिखी पुस्तकें भेंटकर उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता के लिए उनका योगदान मांगा था। लेनिन ने तो उन्हें सोवियत में बस जाने के लिए प्रस्ताव भेजा था।

द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत हुई थी और पूरी आशंका थी कि मैडम भीकाजी कामा फिर नजरबंद कर ली जाएंगी। ऐसे में पेरिस स्थित उनके कई मित्रों ने कोशिशें कीं कि उन्हें भारत लौटने की अनुमति मिल जाए। नवंबर, १९३५ में मुंबई लौटकर दादाभाई नौरोजी के संबंधियों के यहां ठहरीं। पहले से ही लकवाग्रस्त मैडम कामा की तबीयत यहां बहुत खराब हो गई। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा की तरह उनके अंतिम दिन अस्पताल (पारसी जनरल हॉस्पिटल) में ही गुजरे। नौ महीने बाद, १३ अगस्त, १९३६ को, अपनी ज्यादातर संपत्ति अवाबाई पेटिट ऑर्फनेज फॉर दिन गर्ल्स और फ्रामजी नौशेरवानजी पेटेल आगियारी के नाम कर, ७४ की उम्र में हमेशा के लिए आंख मूंद गईं वे चुपचाप। न किसी ने उन्हें जाना, न ही किसी ने आंसू बहाए। आज मुंबई सहित कई शहरों में उनके नाम पर सड़कें हैं। इंडियन कोस्ट गार्ड ने १९९७ में अपना एक गश्ती पोत का नाम भी उन्हींके नाम पर रखा है।

पचास साल से पहले मैडम भीकाजी कामा पर डाक टिकट जारी हुआ तो लोग पूछते रहे, कौन? दक्षिण मुंबई की एक सड़क को छोड़ दें तो उनके कृतित्व की याद दिलानेवाला मुंबई में कोई स्मारक नहीं। मुंबई के लोगों ने उनका नाम क्यों बिसरा दिया जिसने १०६ साल पहले अंग्रेजों के देश में फहराया था भारतीय स्वतंत्रता ध्वज।

२२ अगस्त, १९०७ को जर्मनी के स्टुटगार्ड में इंटरनैशनल सोशलिस्ट कांफ्रेंस में अपने सबसे जोशीले भाषण में भारतीयों से अंग्रेजों से असहयोग और उनके बॉयकाट की अपील करते हुए मैडम कामा ने भारतीय स्वतंत्रता ध्वज फहराया और देश कीस्वतंत्रता के लिए दुनिया भर के स्वतंत्रता प्रेमियों से सहयोग मांगा। यह ध्वज उन्होंने सावरकर और श्यामजी से मिलकर खुद डिजाइन किया और अपने हाथ से बनाया था। इंदुलाल याज्ञिक इसे चोरी छिपे से भारत ले आए। आज भी यह पुणे की मराठा और केसरी लाइब्रेरियों में रखा है। उनका यह भाषण बहुत लोकप्रिय हुआ। अफ्रीकी अमेरिकी लेखक डब्ल्यू.ई.बी. डु बोई का १९२८ का लोकप्रिय उपन्यास डार्क प्रिंसेज इसी घटना से प्रेरित माना जाता है।

२५ सितम्बर

सतीश धवन (जन्म- २५ सितम्बर)

सतीश धवन भारत के प्रसिद्ध रॉकेट वैज्ञानिक थे। देश के अंतरिक्ष कार्यक्रम को नई ऊँचाईयों पर पहुंचाने में उनका बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान था। एक महान वैज्ञानिक होने के साथ-साथ प्रोफेसर सतीश धवन एक बेहतरीन मनुष्य और कुशल शिक्षक भी थे। उन्हें भारतीय प्रतिभाओं पर बहुत भरोसा था। सतीश धवन को विक्रम साराभाई के बाद देश के अंतरिक्ष कार्यक्रम की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। वे इसरो के अध्यक्ष भी नियुक्त किये गए थे। प्रोफेसर धवन ने इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस में कई सकारात्मक बदलाव किए थे। उन्होंने संस्थान में अपने देश के अलावा विदेशों से भी युवा प्रतिभाओं को शामिल किया। उन्होंने कई नए विभाग भी शुरू किए और छात्रों को विविध क्षेत्रों में शोध के लिए प्रेरित किया। सतीश धवन के प्रयासों से ही संचार उपग्रह इन्सैट, दूरसंवेदी उपग्रह आईआरएस और ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान पीएसएलवी का सपना साकार हो पाया था।

चौधरी देवी लाल (जन्म- २५ सितम्बर)

चौधरी देवी लाल भारत के पूर्व उप प्रधानमंत्री एवं भारतीय राजनीति के पुरोधा, किसानों के मसीहा, महान स्वतंत्रता सेनानी, हरियाणा के जन्मदाता, राष्ट्रीय राजनीति के भीष्म पितामह, करोड़ों भारतीयों के जननायक थे। आज भी चौधरी देवी लाल का महज नाम मात्र लेने से ही, हजारों की संख्या में बुजुर्ग एवं नौजवान उद्वेलित हो उठते हैं। उन्होंने आजीवन किसान, मुजारों, मजदूरों, गरीब एवं सवर्हारा वर्ग के लोगों के लिए लड़ाई लड़ी और कभी भी पराजित नहीं हुए। आज उनका कद भारतीय राजनीति में बहुत ऊंचा है। उन्हें लोग भारतीय राजनीति के अपराजित नायक के रूप में जानते हैं। उन्होंने भारतीय राजनीतिज्ञों के सामने अपना जो चरित्र रखा वह वर्तमान दौर में बहुत प्रासंगिक है।

दीनदयाल उपाध्याय (जन्म- २५ सितम्बर)

पंडित दीनदयाल उपाध्याय भारतीय जनसंघ के नेता थे। पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक प्रखर विचारक, उत्कृष्ट संगठनकर्ता तथाएक ऐसे नेता थे जिन्होंने जीवनपर्यंत अपनी व्यक्तिगत ईमानदारी व सत्यनिष्ठा को महत्व दिया। पंडित दीनदयाल उपाध्याय मजहब और संप्रदाय के आधार पर भारतीय संस्कृति का विभाजन करनेवालों को देश के विभाजन का जिम्मेदार मानते थे। वह हिन्दू राष्ट्रवादी तो थे ही, इसके साथ ही साथ भारतीय राजनीति के पुरोधा भी थे। दीनदयाल की मान्यता थी कि हिन्दू कोई धर्म या संप्रदाय नहीं, बल्कि भारत की राष्ट्रीय संस्कृति हैं।

पं. दीनदयाल उपाध्याय का जन्म २५ सितंबर, १९१६ को मथुरा जिले में हुआ था। वह भारतीय जनसंघ के संस्थापकों में से थे। पढ़ाई के बाद नौकरी छोड़कर उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लिए काम करना शुरू कर दिया और उसका हिस्सा बन गये। १९६८ में वे जनसंघ के अध्यक्ष बने। उन्होंने लखनऊ में राष्ट्रधर्म प्रकाशन संस्थान की स्थापना की और मासिक पत्रिका राष्ट्र धर्म शुरू किया। फिर पांचजन्य (साप्ताहिक) तथा स्वदेश (दैनिक) की शुरूआत की। वह ११ फरवरी १९६८ को ट्रेन में मृत पाये गये थे।

कन्हैयालाल नंदन (निधन- २५ सितम्बर)

कन्हैयालाल नंदन वरिष्ठ पत्रकार और साहित्यकार, मंचीय कवि और गीतकार के रूप में मशहूर रहे। नंदन ने पत्रकारिता और साहित्य के क्षेत्र में अपना अलग मुकाम बनाया। पराग, सारिका और दिनमान जैसी पत्रिकाओं में बतौर संपादक अपनी छाप छोड़नेवाले नंदन ने कई किताबें भी लिखीं। कन्हैयालाल नंदन को भारत सरकार के पद्मश्री पुरस्कार के अलावा भारतेन्दु पुरस्कार और नेहरू फेलोशिप पुरस्कार से भी नवाजा गया।

२६ सितम्बर

ईश्वरचंद्र विद्यासागर (जन्म- २६ सितम्बर)

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर भारत के प्रसिद्ध समाज सुधारक, शिक्षा शास्त्री व स्वाधीनता सेनानी थे। वे गरीबों व दलितों के संरक्षक माने जाते थे। उन्होंने स्त्री-शिक्षा और विधवा विवाह पर काफी जोर दिया। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने मेट्रोपोलिटन विद्यालय सहित अनेक महिला विद्यालयों की स्थापना करवायी तथा वर्ष १८४८ में वैताल पंचविशति नामक बंगला भाषा की प्रथम गद्य रचना का भी प्रकाशन किया।

२६ सितंबर, १८२० को प्रसिद्ध समाज सुधारक, शिक्षा शास्त्री व स्वाधीनता सेनानी ईश्वर चंद विद्यासागर का जन्म मेदिनीपुर (पश्चिम बंगाल) में हुआ था। उन्होंने स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह की वकालत की और कई महिला विद्यालयों की स्थापना करवायी। उनकी विद्वत्ता के कारण ही विद्यासागर की उपाधि दी गयी। उनके प्रयास से ही विधवा पुनर्विवाह कानून १८५६ बन सका। अपने इकलौते पुत्र का विवाह भी उन्होंने एक विधवा से ही कराया। वे बहुपत्नी प्रथा और बाल विवाह के खिलाफ थे। उनका निधन २९ जुलाई १८९१ को कोलकाता में हुआ।

नैतिक मूल्यों के संरक्षक और शिक्षाविद विद्यासागर जी का मानना था कि अंग्रेजी और संस्कृत भाषा के ज्ञान का समन्वय करके ही भारतीय और पाश्चात्य परंपराओं के श्रेष्ठ को हासिल किया जा सकता है।

मनमोहन सिंह (जन्म- २६ सितम्बर)

मनमोहन सिंह भारत के १३ वें प्रधानमंत्री थे। मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री की कुर्सी पर बैठनेवाले पहले सिख हैं। मनमोहन सिंह की अपने कुशल और ईमानदार छवि के कारण सभी राजनीतिक दलों में अच्छी साख है। जब कांग्रेस और उसके सहयोगियों को २००४ के चुनाव के बाद बहुमत मिला तो मनमोहन सिंह को कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी की इच्छा से प्रधानमंत्री चुना गया था।

जोगिन्दर सिंह (जन्म- २६ सितम्बर)

सूबेदार जोगिन्दर सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय सैनिक थे। इन्हें यह सम्मान सन १९६२ में मरणोपरांत मिला। स्वतंत्र भारत ने चीन से बस एक युद्ध १९६२ में लड़ा जिसने उसे बहुत सारे अनुभव दिए। ये अनुभव फौजी हकीकत से तो जुड़े हुए थे ही इनमें राजनैतिक तौर पर भी बहुत कुछ आँख खोल देनेवाला था। इस युद्ध में चीन के साथ लड़ते हुए भारत के चार पराक्रमी योद्धाओं ने परमवीर चक्र प्राप्त किए।

२७ सितम्बर

राधानाथ राय (जन्म- २७ सितम्बर)

राधानाथ राय उड़िया भाषा साहित्य के प्रमुख कवि थे। स्वाध्याय से राधानाथ राय ने अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया। काव्य की प्रतिभा उनमें नैसर्गिक थी। उनकी मनोरम काव्य कृति चिलिका बहुत प्रसिद्ध हुई। उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक आधार पर केदारगौरी, चंद्रभागा, महायात्रा, ऊषा आदि काव्य ग्रंथों की रचना की। उनकी रचनाओं से देश प्रेम और गरीबों के प्रति सहानुभूति का परिचय मिलता है।

विट्ठलभाई पटेल (जन्म- २७ सितम्बर)

विट्ठलदास झवेरभाई पटेल भारत के प्रमुख राष्ट्रीय नेता और सरदार वल्लभ भाई पटेल के बड़े भाई थे। अपनी बैरिस्टरी की पढ़ाई पूरी करने के बाद ही ये देश को आजादी दिलाने के कार्य में जुट गये। इन्होंने १९३० ई. में कांग्रेस नेताओं के नजरबंद कर दिये जाने के विरोधस्वरूप केन्द्रीय असेम्बली के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया और इसके बाद ही स्वयं इनको भी नजरबंद कर दिया गया।

दुष्यंत कुमार (जन्म- २७ सितंबर)

दुष्यंत कुमार एक हिंदी कवि और गजलकार थे। समकालीन हिन्दी कविता विशेषकर हिन्दी गजल के क्षेत्र में जो लोकप्रियता दुष्यंत कुमार को मिली वो दशकों बाद विरले किसी कवि को नसीब होती है। दुष्यंत एक कालजयी कवि हैं और ऐसे कवि समय काल में परिवर्तन हो जाने के बाद भी प्रासंगिक रहते हैं। दुष्यंत का लेखन का स्वर सड़क से संसद तक गूंजता है। इस कवि ने कविता, गीत, गजल, काव्य, नाटक, कथा आदि सभी विधाओं में लेखन किया लेकिन गजलों की अपार लोकप्रियता ने अन्य विधाओं को नेपथ्य में डाल दिया।

२८ सितंबर

१) शहीद भगत सिंह

शहीदे आजम भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरू

दोस्त तो दोस्त रोये थे तेरी रुखसती पर देख दुश्मन भी आज शर्मिंदा है। हर दौर के तुम शहँशाह हो भगत सिंह हर दिल में तेरा इंकलाव जिंदा है- माफीनामा तो दूर माँ के आँसू भी शोले से लगे बीच तूफानों के, तेरी मशाल जिंदा है- हर ओहदा छोटा है तुम्हारी शख्सियत से फख्र है हर दिल में तेरी तलवार जिंदा है।

भगत सिंह को परिवार से मिली थी देश पर कुरबान होने की प्रेरणा

ब्रितानिया शासन को झकझोर कर रख देनेवाले शहीद ए आजम भगत सिंह को देश के लिए कुरबान हो जाने की प्रेरणा अपने परिवार से मिली थी। भगत सिंह आजादी के आहुति यज्ञ में कूदनेवाले अपने परिवार के अकेले व्यक्ति नहीं थे, बल्कि उनके परिवार का हर सदस्य भारत मां की गुलामी की जंजीरों को तोड़ने के लिए अपने अपने तरीके से लड़ रहा था। भगत सिंह के पिता किशन सिंह, चाचा सवरण सिंह और चाचा अजीत सिंह अलग अलग मोर्चों के जरिए अंग्रेजों से लोहा ले रहे थे। भगत सिंह पर असहयोग आंदोलन वापस लिए जाने से पहले महात्मा गांधी का काफी प्रभाव था, लेकिन चौरी चौरा की घटना के बाद असहयोग आंदोलन वापस लिए जाने से भगत सिंह का मन काफी दुखी हुआ और वह क्रांतिकारी विचारधारा की ओर मुड़ गए। भगत सिंह अपने चाचा सवरण सिंह और चाचा अजीत सिंह से भी काफी प्रभावित थे। सवरण सिंह का अंग्रेजों ने काले पानी की सजा सुनाई थी। वहां टीबी की बीमारी के चलते उनका निधन हो गया। शहीद ए आजम के दूसरे चाचा अजीत सिंह ने किसानों से लगान वसूले जाने के खिलाफ पगड़ी संभाल जट्टा आंदोलन चलाया था। इसका देश के किसानों पर गहरा असर पड़ा और वे ब्रिटिश शासन के खिलाफ उठ खड़े हुए। इस आंदोलन से अंग्रेज इस कदर भयभीत हो उठे कि उन्होंने अजीत सिंह को ४० साल के लिए देश निकाला दे दिया। इसके बाद अजीत सिंह ने अफगानिस्तान, ईरान, इटली और जर्मनी आदि देशों से भी आजादी की लड़ाई को जारी रखा। भगत सिंह का मानना था कि देश जल्द आजाद होगा और उनके चाचा अजीत सिंह वापस लौटेंगे। उनका सपना सच साबित हुआ और अजीत सिंह स्वदेश वापस आ गए। उन्होंने कहा कि अजीत सिंह वापस तो आ गए, लेकिन भारत के बंटवारे ने उन्हें इतना तोड़ दिया कि वे इससे उबर नहीं पाए। ऐसा माना जाता है अजीत सिंह ने देश के विभाजन के विरोध में हीरा चाट लिया था जिससे पारे का विष उनके शरीर में फैल गया और उनकी जान नहीं बच सकी। इस घटना के वक्त अजीत सिंह डलहौजी में थे।

पंजाब के कल्याणपुर जिले के सुप्रसिद्ध सिक्ख परिवार में सन् १९०७ को अक्टूबर में जन्मे सरदार भगतसिंह में बाल्यकाल से ही देशभक्ति और स्वतंत्र चिंतन की प्रवृत्ति थी। महानता, क्रांतिकारिता और दृढ़ता के लक्षण उनमें बाल्यकाल से ही दृष्टिगोचर होने लगे थे। सरदार भगतसिंह अभी १५ वर्ष के किशोर भी पूरी तरह नहीं हो पाए थे कि उन्होंने पंजाब की गुप्त क्रांतिकारी संस्थाओं में सक्रिय हिस्सा लेना शुरू कर दिया।

क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण भगत सिंह को पंजाब छोड़ना पड़ा, वह लाहौर से चलकर कानपूर आ गए, यहां उनका परिचय गणेशशंकर विद्यार्थी और बटुकेश्वर दत्त से हुआ। घटना ८ अप्रैल १९२९ की है। उस समय की केन्द्रीय

असेम्बली में पब्लिक सेफ्टी नामक एक बिल विचारार्थ उपस्थित था। इसके अलावा दूसरा बिल औद्योगिक विवाद से संबंधित था। भगतसिंह का सदा जागरूक ध्यान इस बात पर गया कि केन्द्रीय असेम्बली के कांग्रेसी सदस्य कुछ दूसरे प्रगतिशील सदस्यों के साथ मिलकर इन कानूनों को पास नहीं होने देंगे। उन्होंने अपनी पार्टी की मीटिंग में प्रस्ताव किया कि जब वायसराय की इन बिलों को पास करने की घोषणा असेम्बली में हो, उसी समय बम फेंके जाए और अपने उद्देश्य को स्पष्ट करने वाले पर्चे भी। मान लिया गया था कि जो जाएगा वह लौटेगा नहीं, वहीं गिरफ्तार होगा। इसलिए दल की केन्द्रीय समिति में भगतसिंह की जगह बटुकेश्वर दत्त और विजय सिन्हा का नाम निश्चित हुआ। जब सुखदेव को यह खबर मिली तो वह बौखलाए हुए भगतसिंह के पास आए और बहुत देर तक जाने क्या क्या कहते रहे, जब भगतसिंह ने अनुशासन के कारण साथियों का निर्णय मानने की बात कही तो गुस्से में भरकर सुखदेव ने कहा- इस निर्णय के लिए इतिहास तुम्हें कायर कहेगा। उस समय भगतसिंह ने उन्हें झिड़क दिया। पर दूसरे ही दिन केन्द्रीय समिति की बैठक फिर बुलाई गई और जिद करके असेम्बली में बम फैंकने के लिए अपना और बटुकेश्वर का नाम निश्चित कराया। ८ अप्रैल, १९२९ को ज्यों ही विशेषधिकार से बिलों को पास करने की घोषणा होने को हुई, भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त अपने स्थान पर खड़े हो गए। फुर्ती के साथ अखबार में लिपटा हुआ बम भगतसिंह ने अपने हाथ में लिया और सरकारी बैंचों के पीछे वाली खाली जगह पर लकड़ी की दीवार के पास फेंक दिया। उन्होंने पूरे जोर से नारा लगाया- इन्कलाब जिन्दाबाद, जब पुलिस ने उनसे अपना बयान देने को कहा तो उन्होंने जवाब दिया कि हमें पुलिस के सामने कोई बयान नहीं देना है। जो कुछ भी हमें कहना है हम अदालत के सामने कहेंगे।

७ अक्टूबर १९३० को सरदार भगतसिंह को फांसी की सजा हुई। उनके साथ राजगुरू और सुखदेव को भी सांडर्स की हत्या के संदर्भ में फांसी की सजा हुई। २३ मार्च १९३१ को भगतसिंह और उनके साथी सुखदेव, राजगुरु, तीनों ने अपना अपना फंदा पकड़ा और चूमकर अपने ही हाथ से गले में डाल लिया। यह संध्या के ७ बजकर ३३ मिनट का समय था।

भगतसिंह का नाम सुनते ही हर देशभक्त का सिर श्रद्धानत हो जाता है। वे अल्पायु में ही देशहित में शहीद हो गये। वह जोशीला नौजवान था, लेकिन उसके मन में मानवता के प्रति अटूट प्रेम था। भगत सिंह तरक्की के लिए परिवर्तन के पक्षधर थे। इस मामले में वे नौजवानों की भूमिका को महत्व देते थे।

नौजवानों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था- नौजवानों को वे इस समय बम व पिस्तौल उठाने की सीलाह नहीं दे सकते। उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हौसले वाला कार्य है कि वह इंकलाब का संदेश देश के कोने-कोने में पहुंचाए कारखानों में कार्यरत मजदूरों के पास, गांवों में टूटी झोपड़ियों में रहनेवाले किसानों के पास पहुंचाए। उनके जागरूक होने से जो स्वतंत्रता आएगी वह मनुष्य के हाथों मनुष्य की लूट को असंभव बना देगी। वे आगे कहते है बम व पिस्तौल कभी इंकलाब नही लाते। यह भगत सिंह की मानवता के प्रति प्रेम व दृढ़ता ही थी कि जेल कोठरी में इस नौजवान को मिलने के लिए अंग्रेज अधिकारियों की पत्नियां व बच्चे आया करते थे। भगत सिंह भारत में अंग्रेज राज को क्रूर, लूटने वाला, काले कानून थोपने वाला व स्वतंत्रता का हनन करने वाला होने के कारण समाप्त करना चाहते थे। परंतु अंग्रेज जाति के एक व्यक्ति को इनसानी समानता के हिस्सेदार के नाते प्रेम भी करते थे। जिस प्रकार वे भारतीय लोगों के साथ करते थे।

भगत सिंह की लड़ाई एक तौर तरीके के विरुद्ध लड़ाई थी जिसे साम्राज्यवाद तथा पूंजीवाद के नाम से जाना जाता

है। इस लड़ाई में व्यक्तिगत घृणा के लिए कोई स्थान नहीं है।

अत: आज भगत सिंह जैसे शहीदों के विचारों की जरूरत आन पड़ी है। क्योंकि पूंजीवाद बढ़ रहा है और गरीबी की रेखा धरातल पर पहुंच गई लगती है। देश का हर नागरिक उस नौजवान के सपनों को साकार करने के लिए एकजुट हो। जिससे मानव का मानव के प्रति प्यार बरकरार रह सके।

एक ही तस्वीर आंखों के सामने घूमती है और एक ही बात जेहन में कौंधती है-

मर कर भी न जाएगी, दिल से वफा की उल्फत, मेरी मिट्टी से भी खुशबू- ए-वतन आएगी।

ये थे भगत सिंह के आखिरी शब्द। शहीदे आजम-भगत सिंह। साथ में थे उनके दो साथी राजगुरु और सुखदेव। उनकी शहादत भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी भगत सिंह की।

इतिहास में इन शहादतों का जिक्र ज्यादा तफसील से नहीं मिलता। १९४७ के बाद रचा गया स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास अंग्रेजों के घृणित षड्यंत्र से उपजा एक लाल रंगी जहर है, जिसे जबरदस्ती पिला कर आने वाली नस्लों को सत्य से विमुख करने का बार-बार प्रयत्न किया गया, पर सत्य की अपनी ही ताकत होती है, सत्य छिपाया नहीं जा सकता। अभी अचानक एक-डेढ़ वर्ष पहले भगत सिंह पर तीन फिल्में बनीं। उनके कथानक में दौर की नाटकीयता चाहे जितनी भी थी, कुछ प्रश्न सत्य का उद्घोष कर रहे थे-

विश्व के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि २४ मार्च को फांसी की तिथि तय हुई, ऐसा फैसला भी हुआ, परंतु एक दिन पहले उन्हें फांसी के फंदे पर चढ़ा दिया गया।

ऐसा क्यों हुआ और किसकी सलाह पर हुआ ? गांधी-इर्विन पैक्ट में क्रांतिकारी क्यों नहीं छोड़े गए ?

यह सत्य के अनावृत होने का समय है। यह वह समय है जब झूठे इतिहास और झूठे प्रशस्ति गानों की बैसाखियों पर टिके हुए तथाकथित महापुरुष भूलुंठित हों और राष्ट्र के इतिहास में क्रांतिकारियों के योगदान का सही चित्रण हो सके।

ब्रिटिश राजसत्ता ने फैसला किया था कि अगर भारत पर ज्यादा जुल्म किया गया तो सारे देश में बगावत हो जाएगी। उधर गांधी जी द्वारा आहूत अवज्ञा आंदोलन के कारण नेहरू-गांधी सहित कई नेता जेल के अंदर थे। क्राउन को पता था कि ये जेल का दुख उठाने लायक न थे। ब्रिटिश राजसत्ता ने हुक्मनामा भेजा कि अगर गांधीजी अवज्ञा आंदोलन वापस लेलें और राउंड टेबल कांफ्रेंस (द्वितीय) में उपस्थित होने के लिए तैयार हो जाएं और ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार बंद कर दें तो उन्हें छोड़ दिया जाएगा। मध्यस्थ बने सर तेज बहादुर सप्रू और डा. जयकर। सर सप्रू ने संदेश सुनाया और गांधीजी ने कहा, मैं तीनों मांगे वापस लेता हूं पर मुझे रिहा किया जाए। सारे अहिंसक जेल से निकल गए। उनमें नेहरू जी भी थे। अब बाकी रह गए क्रांतिकारी। भगत सिंह के क्रांतिकारी इतिहास से इर्विन परिचित था। उसे पता था कि इस क्रांतिकारी ने जानबूझ कर किसी को मारने के लिए बम नहीं फैंका था। इर्विन क्रांतिकारियों को छोड़ना चाहता था। पर महात्मा जी व्यवधान बन गए। अपने ही लोगों के समक्ष हीन भावना से उपजी हताशा के कारण महात्मा गांधी अड़ गए कि क्रांतिकारियों को भी छोड़ा गया तो वह फिर अपना अनशन प्रारंभ कर देंगे।

महात्मा गांधी ने कहा, स्वतंत्रता संग्राम में उग्रवादियों की कोई भूमिका हो, उससे मैं सहमत नहीं। भगत सिंह ने जेल के अंदर से तब एक ही बात कही थी- हमारी क्रांति कायरों और डरपोकों की भीख और याचना की मोहताज नहीं, हम कोई समझौता नहीं करेंगे। वीर फांसी के तख्ते पर झूल गए। आह तक न की। वह बात पूरी हो गई जो भगत सिंह

अपनी मां को कह कर आए थे- हम भी आराम उठा सकते थे घर पे रह कर, हमें भी मां-बाप ने पाला था बड़े दुख सहकर।

वक्त चलने के, इतना भी न आए कहकर, कि आंख से आंसू जो निकले कभी यूं ही बहकर।

तिफ्ल (बच्चा) इनको ही समझ लेना दिल बहलाने को, हमने जब वादिए उल्फत में कदम रखा था, दूर तक आई थीं, यादें चमन समझाने को।

इस घटना पर सुभाष चंद्र बोस की क्या प्रतिक्रिया थी उसे अक्षरश: जानना जरूरी है। इर्विन को सिजदा करते महात्मा गांधी को देखकर सुभाषजी ने लिखा - यह ब्रिटिश राजसत्ता से तथाकथित अहिंसक संग्राम कर रहे थे। यह देश को आजाद कराना चाहते थे, लेकिन आज इनकी हालत उस सेना की तरह हो गई है जिसके कमांडर ने बिना शर्त हथियार डाल दिए हैं। हथियार इसलिए नहीं डाले कि राष्ट्र ने ऐसा कहा, या इनकी रसद घट गई हो, या सेना ने लड़ने से इन्कार कर दिया, बल्कि इसलिए कि इनके नेता का दिमाग भूखे-प्यासे उपवास रख कर खराब हो गया था और कठिनाइयों से जूझने का मादा नहीं रहा। सरदार भगत् सिंह की शहादत पर सुभाष बोले- भगत सिंह क्रांति की ऐसी ज्वाला थी जिसने सारे राष्ट्र को अपनी शहादत से नई दिशा दी है। यह ज्वाला अब तक शांत नहीं होगी जब तक भारत आजाद नहीं हो जाता।

कौन बताएगा यह इतिहास। किसने छिपाया इस इतिहास को ? आज वास्तविक शहीद दिवस है। हम दसों दिशाओं से इन शहीदों को नमन करते हैं।

दोस्तों, यदि मेरा विवाह गुलाम भारत में हुआ तो मेरी वधु की केवल मौत होगी। बारात जुलूस के रूप में होगी और बाराती देश के लिए मर मिटनेवाले परवाने होंगे।

एक बार आजादी की राह पर पैर रखने के बाद पीछे मुड़कर कभी मत देखों। मैं एक क्रांतिकारी हूं, जिसके पास कार्यक्रम के बारे में सुनिश्चित और विस्तृत विचार हैं। मेरा मतलब यह नहीं कि बम और पिस्तौल बेकार हैं, लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि सिर्फ बम फेंकना न केवल बेकार है, बल्कि कई बार नुकसानदेह भी है। आजादी के लिए हम इंसान का खून बहाने की अपनी विवशता पर दु:खी है, मगर क्रांति में खून बहाने की अपनी विवशता पर दु:खी हैं, मगर क्रांति में खून बहाना जरूरी है। बिना क्रांति के, बिना बलिदान के आजादी नहीं मिल सकती। मैं अपना जीवन देकर भी यदि देश के कोने-कोने तक इंकलाब जिंदाबाद का नारा पहुंचा सका तो मैं समझूंगा, मुझे जीवन का मूल्य मिल गया। आज जेल की कोठरी में मैं आजादी के दीवानें करोड़ों देशवासियों के कंठो से उठते नारे की हुंकार तो सुन सकता हूं। मुझे फांसी हो जाने के बाद मेरे ये विचार आजादी के दीवानें नौजवानों को सहयोग करेंगे।

वे देश के लिए कुछ भी करने को तैयार थे

भारत वर्ष की आजादी के लिए किसी सब्र या वक्त का इंतजार न कर दिल में तूफानी जज्बात लिए अपने फर्ज को पूरा करनेवालों में अमर शहीद सरदार भगतसिंह और वीर बटुकेश्वरदत्त के नाम सबसे ऊपर हैं। उन्होंने अपनी दिलेरी की मिसाल के बतौर आठ अप्रैल १९२९ को नयी दिल्ली के केंद्रीय असेम्बली हॉल में एक-एक बम फेंककर इंकलाब-जिन्दाबाद का नारा बुलंद किया था।

इसी मौके पर इन दो जांबाजों ने हॉल में एक पर्चा भी फेंका था। उनकी दलील थी कि बहरों को सुनाने के लिए जोर का धमाका करना जरूरी हो जाता है। इन वीरों के आदर्शों का अनुसरण भारत की एकता और अखंडता का इरादा रखनेवाले किसी भी इंसान के लिए आज सांस की तरह जरूरी है।

सरदार भगतसिंह और वीर बटुकेश्वरदत्त ने केंद्रीय असेंबली हॉल में बमों के साथ फेंके गये पर्चे में कहा था कि ये

अमर शब्द हैं, जो फ्रांस के अराजकतावादी शहीद बेला ने ऐसे ही एक अवसर पर कहे थे और इसी आधार पर हम अपने इस कार्य को बलपूर्वक न्यायोचित ठहराते हैं। गत १० वर्षों में जिस प्रकार से प्रशासनिक सुधारों की ओट में जो किया गया है, उस अपनाजनक निंदनीय कहानी को, हम दुहराना नहीं चाहते और हम भारतीय राष्ट्र के नेताओं के साथ किये गये हैं, जिसे भारतीय पार्लियामेंट कहा जाता है।

तब भी इम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि इस समय भी कुछ लोग साइमन कमीशन द्वारा सुधारों के नाम पर जो जूठन मिलने की संभावना है, उसी से आशा लगाये हुए हैं और चिचोड़ी हुई हड्डियों के बंटवारे के लिए झगड़ा तक करने लग गये हैं। इसी समय सरकार भी भारतीय जनता पर दमनकारी करानून लादती जा रही है। जैसे कि पब्लिक सेफ्टी बिल, ट्रेड डिस्प्यूट बिल, इसी के साथ-साथ उसने प्रेस एडीशन बिल को असेंबली के अगल अधिवेशन के लिए सुरक्षित रख लिया है। मजदूर नेता जो खुले रूप में अपना कार्य कर रहे थे, उनकी अंधाधुंध गिरफ्तारियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकार का इरादा क्या है।

इन अत्यंत उत्तेजनात्मक परिस्थितियों में हिंदुस्तान रिपब्लिकन सोशलिस्ट एसोसिएशन ने पूर्ण गंभीरता के साथ अपना पूरा उत्तरदायत्वि अनुीव करते हुए यह निश्चय किया है और अपनी सेना को आदेश दिया है कि वह इस धोखे का अंत करने के लिए सब प्रकार की कार्रवाई करें, विदेशी सरकार और उसके शोषक नौकरशाह जो कुछ भी उनके मन में आये करे, लेकिन हमारा सबका (भारतीय क्रांतिकारियों का) यह कर्तव्य है कि जनसाधारण के सामने विदेशी सरकार के काले कारनामों का सही चित्र प्रस्तुत करते रहें। जनता के प्रतिनिधियों का यह सबसे पहला कर्तव्य है कि वह अपने-अपने क्षेत्रों को दौरा करके जनता जनार्दन को आने वाली क्रांति के लिए तैयार करें। भारतीय जनता अपने सशक्त विरोध द्वारा अन्याय पर टिकी हुई हत्यारी ब्रिटिश सरकार को यह बता दे कि पब्लिक सेफ्टी बिल, टेड डिस्प्यूट बिल और लाला लाजपतराय की नृशंस हत्या हमें हमारे मार्ग से, स्वाधीनता के पवित्र संकल्प से नहीं डिगा सकती।

शहीद भगत सिंह हमारे देश की वह महान आत्मा है, जो देश की आजादी की खातिर हंसते-हंसते फांसी के फंदे पर झूल गये, शहीद भगत सिंह का जन्म २७ सितंबर १९०७ को लायलपुर, जो कि पंजाब में स्थित है के अंगा नामक गांव में हुआ था, उनके भगत सिंह नाम के पीछे भी एक रोचक घटना है, भगत सिंह का परिवार वीरों का परिवार था, उनके पिता और चाचा भी अंग्रेजों के विरूद्ध थे, जिसकी वजह से उन्हें कारावास में भी रहना पड़ा था, जिस दिन भगत सिंह का जन्म हुआ, उसी दिन उन दोनों को जेल से मुक्ति मिली थी, इसीलिए उनकी दादी उनको भागोवाला अर्थात भाग्यवान कहने लगी थी, यही भागो वाला आगे चलकर भगत सिंह के रूप में मशहूर हुआ, उनके पिता सरदार किशनसिंह तथा चाचा स्वर्ण सिंह तो क्रांतिकारी थे ही भगतसिंह के जन्म से इस वीर परिवार की परंपरा में एक और कड़ी जुड़ गई।

१३ अप्रैल १९१९ को बैसाखी के दिन जलियांवाला बाग में एक आम सभा का आयोजन हुआ, जिसके अध्यक्ष थे सत्य प्रकाश किचलू, बर्बर पुलिस अधिकारी जनरल ओ डायर ने वहां निरपराध लोगों को घेर कर उन्हें गोलियों से भूल डाला, जिससे बहुत लोग मारे गये, इस घटना ने सारे देश को झकझोर कर रख दिया, इसी घटना ने भगत सिंह के हृदय में भी क्रांति की आग फूंक दी।

गुलामी की बेड़ियों से जकड़ी भारत माता को मुक्त कराने हेतु तथा समाज में मनुष्य शोषण का अंत करने, आततायी गोरों को भारत से भगाने के लिए क्रांतिकारी एक झंडे के नीचे इकट्ठे होने लगे, सरदार भगत सिंह भी चंद्रशेखर

आजाद द्वारा बनाये गये संगठन से आ जुड़े ३ दिसंबर १९२७ को फिरोजशाह किले के खंडहर में भारत के प्रमुख क्रांतिकारियों की एक बैठक में निश्चत किया गया कि, विभिन्न प्रांतों के दलों को एक सूत्र में बांधकर एक केंद्रीय समिति गठित की जाये, सर्वसम्मति से जो इस समिति के सात सदस्य चुने गये वह थे- सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव, शिव वर्मा, विजय कुमार, कुंदन लाल और फणींद्रनाथ घोष, पंजाब की जिम्मेदारी सरदार भगत सिंह को ही सौंपी गई, इस संगठन ने बहुत-सी क्रांतिकारी घटनाओं को अंजाम देकर अंग्रेज सरकार को हिला कर रख दिया।

अंग्रेज सरकार ने सार्वजनिक सुरक्षा कानून तथा औद्योगिक विवाद बिल बनाने की कोशिश की, जिसका भारत की जनता तथा कांग्रेस के नरम दल ने भी विरोध किया। चंद्रशेखर इस पक्ष में थे कि, बम फेंकने के बाद भगत सिंह आदि सुरक्षित निकाल लिए जाएं, किंतु भगत सिंह गिरफ्तार होना अधिक उचित मानते थे, उनका मानना था, इससे सारे देश में एक कई जागृति आयेगी, ८ अप्रैल १९२९ को उन्होंने असेम्बली में बम फेंका, भागने की बजाय वह नारे लगाते हुये असेम्बली हाल में पर्चे फेंकने लगे, जिसमें दर्ज था, हम देश की जनता की ओर से कदम उठा रहे हैं, इस घटना ने मानों रख झपकी लेते ही जनमानस को झकझोर कर रख दिया।

भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को गिरफ्तार कर ७ मई १९२९ को असेम्बली बम कांड के नाम से मुकदमा चलाया गया, भगत सिंह ने अदालत में जितना हृदयस्पर्शी तथा ओजस्वी भाषण दिया व शायद ही किसी और ने दिया होगा। उन्होंने अपने बयान में क्रांति की परिभाषा देते हुये कहा, क्रांति का विरोध करनेवाले लोग केवल पिस्तौल, बम, तलवार, और रक्तचाप को ही क्रांति का नाम दे देते हैं, परंतु क्रांति उन चीजों में ही सीमित नहीं, ये चीजें क्रांति का उपकरण हो सकती हैं, इन उपकरणों के उपयोग के पीछे क्रांति की वास्तविक शक्ति जनता द्वारा की आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था में परिवर्तन कर के नैतिक व्यवस्था में परिवर्तन करने की इच्छा ही होती है।

भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को इस केस में काले पानी की सजा हुई, लाहौर लाकर उन पर लाहौर षडयंत्र केस का मुकदमा भी शुरू हुआ, भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त सेंट्रल जेल में रखे गये थे, अंग्रेज सरकार का एक विशेष दूत उन्हें अदालत का फैसला सुनाने जेल आया, सरदार भगत सिंह सुखदेव और राजगुरु को फांसी की सजा तथा दत्त को काले पानी की सजा सुनाई गई, जिसे सुनकर वह देश के लिए मर मिटने की अपनी इच्छा को पूर्ण होते देख खुशी से झूम उठे। भगत सिंह के अदालती बयान (बम कांड में) इतने विस्फोटक थे कि, अंग्रेजों ने उसे जनता के बीच फैलने से भी रोका, फांसी की सजा पाकर भी उन्हें तनिक भी डर न लगा, वह यह भी न चाहते थे कि, उनके बाद कोई उनकी मौत पर आंसू बहाये, अपनी अंतिम इच्छा प्रकट करते हुये उन्होंने कहा- कोई आरजू नहीं है, आरजू है तो बस यही है-

रख दे कोई जरा-सी खाके वतन कफन में- कैदियों को फांसी प्रात: काल दी जाती है, किंतु भगत सिंह की लोकप्रियता से भयभीत अंग्रेज सरकार ने २३ मार्च १९३२ की सायं ७ बजकर २८ मिनट पर उनके चेहरे पर काली नकाब उठा दी, सात बजकर तीस मिनट पर उन्हें फांसी दे दी गई। जनता के भय से चोरी-छिपे उनकी लाश फिरोजपुर के निकट सतलज नदी के किनारे जला दी गई तथा अधजली दशा में ही लाश को नदी में बहा दिया गया।

अंग्रेजी सरकार ने भले ही चोरी-छिपे उनकी लाश को जलाया और बहा दिया, किंतु उनके विचारों को जला और बहा नहीं पाये, उनकी मौत से उद्वेलित लोगों ने आजादी की खातिर अपनी जी-जान लगा दी, आखिरकार १५ अगस्त १९४७ को भगत सिंह का सपना सच हुआ, उनकी समाधि पर अंकित यह पंक्तियां सतलज की हर लहर तेरी है आरती उतारती। बाहें फैलाकर तुमको यह धरती पुकारती। तूने वतन के नाम पर मिटकर दिखा दिया। कुर्बानियों का सबको

रास्ता दिया।

२३ मार्च १९३१ को शाम के ७ बजकर ३३ मिनट पर ब्रिटिश साम्राज्य के निरंकुश शासकों ने भारत माता के उन तीन महान सपूतों सरदार भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को फांसी दे दी, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया था और जाते-जाते फांसी की काल कोठरी से एक नये शोषणमुक्त भारत के नव-निर्माण का अमर संदेश हमें दे गये।

सरदार भगत सिंह तथा उनके क्रांतिकारी सहयोगियों ने हर प्रकार के सामाजिक उत्पीड़न तथा जोर-जुल्म के खिलाफ आजीवन संघर्ष की रणभेरी बजाई। अपने वीरतापूर्ण कारनामों से ब्रिटिश साम्राज्य की नींद हराम कर दी तथा हंसते हुए फांसी के फंदे को चूम लिया।

सर्वहारा वर्ग को शोषकों के चंगुल से मुक्त करवाकर शोषण विहीन जनवादी आदर्शों की स्थापना के लक्ष्य को लेकर अपने युग की दुर्दांत ब्रिटिश साम्राज्यवादी शक्ति को चुनौती देते हुए आजीवन जूझते रहकर अपने प्राण उत्सर्ग करनेवाले इन अमर वीरों का बलिदान दिवस मनाने में हम सबको गर्व का अनुभव करना चाहिए।

राजगुरु और सुखदेव उन क्रांतिकारियों में हैं जिनका भगत सिंह से चोली दामन का साथ रहा और तीनों को फांसी भी एक साथ दी गई। सन् १९२० में महात्मा गांधी द्वारा चलाये गये असहयोग आंदोलन में भगत सिंह ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था और तभी से अंग्रेज उन्हें अपने रास्ते का कांटा समझने लगे थे। शहीदे आजम सरदार भगतसिंह का जन्म गांव बंगा चक्क नंबर १०५ जी.बी. जिला लायलपुर (अब पाकिस्तान में) १६ सितंबर १९०७ हुआ। भगत सिंह की दादी ने उन्हें भागां वाला कहा क्योंकि उनके जन्म के शुभ अवसर पर उनके चाचा अजीत सिंह की मांडले जेल से तथा उनके पिता स. किशन सिंह की लाहौर जेल से रिहाई का समाचार प्राप्त हुआ था। इसलिए उनका नाम भागां वाला से भगत सिंह रखा गया। भगत सिंह ने प्राथमिक शिक्षा बंगा जिला जालंधर (अब जिला नवां शहर) से प्राप्त की। उच्च शिक्षा के समय उनका संपर्क मेहता आनंद किशोर, लाला पिंडी दास, सूफी अम्बा प्रसाद तथा लाला लाजपत राय जैसे प्रसिद्ध देशभक्तों से हुआ। उनके पिता स. किशन सिंह से संपर्क रखनेवाले गदर पार्टी के नायकों करतार सिंह सराभा, रास बिहारी बोस से भी संपर्क हुआ। जब भगत सिंह अभी आठ वर्ष के ही थे तो १६ नवंबर सन् १९०५ को करतार सिंह सराभा की शहीदी का उनके कोमल मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस घटना ने उनके मन में देश की खातिर मर मिटने का जज्बा पैदा कर दिया। जब पुलिस ने पहली बार उन्हें गिरफ्तार किया तो उनकी जेब से करतार सिंह सराभा का फोटो निकला था।

सन् १९२६ में भगत सिंह ने नौजवान भारत सभा का गठन किया। ३० अक्टूबर १९२८ को साइमन कमीशन के विरोध प्रदर्शन में लाला लाजपत राय के नेतृत्व में यह नौजवान भारत सभा में सबसे आगे था। जनसमूह के प्रचंड विरोध से बौखला कर अंग्रेज सिपाहियों ने लाला जी पर अंधाधुंध लाठियां बरसाईं जिससे वह वीरगति को प्राप्त हुए। लाला लाजपत राय के इस बलिदान का बदला शहीद भगत सिंह तथा उनके साथियों ने अंग्रेज अधिकारी सांडर्स का वध करके लिया। ८ अप्रैल १९२९ की घटना भगत सिंह के साढ़े तेईस वर्ष के अल्प जीवन की महानतम घटना कही जा सकती है। जब अंग्रेज सरकार के बहरे कानों तक अपनी आवाज पहुंचाने के लिए भगत सिंह ने अपने साथियों के साथ असैम्बली हाल में बम फेंकने की योजना बनाई। बटुकेश्वर दत्त के साथ असैम्बली हाल की दर्शक दीर्घा में दाखिल होकर हाल में बम फेंक कर सनसनी फैला दी तथा कायर की भांति भागने की बजाय खुद को शान से पुलिस के हवाले कर दिया। असैम्बली

कांड के सिलसिले में भगत सिंह तथा उनके पंद्रह क्रांतिकारी साथियों पर मुकदमा चलाया गया। इनमें राजगुरु तथा सुखदेव भी शामिल थे। मुकदमे के दौरान अपना पक्ष पेश करते हुए उन्होंने कहा कि बम विस्फोट करने का उद्देश्य किसी को शारीरिक क्षति पहुंचाना नहीं, बल्कि अंग्रेज शासकों को यह चेतावनी देना था कि वे भारत से चले जायें।

आखिर लंबे समय के उपरांत ब्रिटिश न्याय के नाटक का अंत हुआ और ७ अक्टूबर १९३० को भगत सिंह, राजगुरु तथा सुखदेव को मृत्यु दंड सुना दिया गया।

चूंकि अंग्रेज सरकार के व्यवहार से क्षुब्ध ये क्रांतिकारी इन दिनों अदालत का बहिष्कार कर रहे थे अत: तीनों को जेल में एक संदेशवाहक ने अदालत के इस क्रूर फैसले के बारे में बताया। तीनों क्रांतिकारी इस फैसले से कतई विचलित नहीं हुए बल्कि भारत माता जिंदाबाद तथा इंकलाब के नारों से आकाश गुंजा दिया।

इस फैसले को अत्यंत गुप्त रखा गया लेकिन जनता सशंकित हो गई तथा सरकार के विरुद्ध लामबंद होने लगी। तत्कालीन प्रेस भी इस एक तरफा निर्णय के विरुद्ध था। अंतत: २३ मार्च १९३१ का वह मनहूस दिन भी आ गया जब इन तीनों शूरवीरों को फांसी पर लटकाया जाना था। तीनों ने इंकलाब जिंदाबाद तथा साम्राज्यवाद मुर्दाबाद के नारों के बीच फांसी के फंदे को चूम कर अपने गले में डाला मानो रणभूमि में जाने के लिए फूलों की माला पहन रहे हों। भारत माता की स्वाधीनता के लिए तीनों वीरों ने हंसते-हंसते मृत्यु का वरण कर लिया।

एक महान विभूति थे सरदार भगत सिंह

अमर शहीद भगत सिंह को हमेशा एक क्रांतिकारी देशभक्त के रूप में जाना जाता है लेकिन वे इसके अतिरिक्त एक उच्चकोटि के अध्ययनशील विचारक कलम के धनी, दार्शनिक, चिंतक, लेखक-पत्रकार एवं महान विभूति थे।

इस महापुरुष ने मात्र २३ वर्ष की अल्पायु में ही फ्रांस, आयरलैंड एवं रूस की क्रांतियों का विशद् अध्ययन किया। उनका अध्ययन नेशनल कॉलेज से लेकर फांसी की कोठरी तक निरंतर जारी रहा जिसके आधार पर वे गंभीर चिंतक एवं महान क्रांतिकारी दार्शनिक के रूप में जाने गए।

वे उर्दू, अंग्रेजी, हिन्दी, पंजाबी एवं संस्कृत के साथ-साथ आयरिश भाषा के विद्वान थे जिन्होंने अकाली एवं कीर्ति नामक दो पत्रों का संपादन किया। इसके पश्चात् स्व. इन्द्र विद्या वाचस्पति के अर्जुन तथा स्व. गणेश शंकर विद्यार्थी के प्रताप में संवाददाता का कार्य किया। चांद मासिक का जब्तशुदा फांसी अंक उनकी संपादन दक्षता का उत्कृष्ट उदाहरण है।

इतना ही नहीं, वे साहित्य सृजन व दल के सारे पर्चे-पोस्टर्स का कार्य स्वयं करते थे। इसके अतिरिक्त वे कुशल अनुवादक भी थे। उनके द्वारा जेल में अनुदित आयरिश क्रांतिकारी डेनब्रीन की आत्मकथा, मेरी कहानी के रूप में भारती भवन, उज्जैन से प्रकाशित होने के बाद जब्त भी हो गयी लेकिन खेद का विषय तो यह है कि इस उच्चकोटि के विचारक की अमर रचनाएं राष्ट्र के कर्णधारों के षडयंत्रों के परिणामस्वरूप अभी तक हमारे बीच पहुंचने ही नहीं दी गई। उनके आदर्श, सिद्धान्त व विचारों को आम जनता तक शायद इसलिए नहीं पहुचने दिया जाता कि वैचारिक क्रांति की ज्वाला एक बारगी पुन: न भड़क उठे।

शहीदे आजम भगत सिंह ने लाहौर षडयंत्र केस के समय अदालत में जो विचारोत्तेजक बयान दिए एवं इसके साथ ही उन्होंने जो लेख व पत्र लिखे, उन्हें गोपनीय दस्तावेज समझ कर राष्ट्रीय अभिलेखागार में छिपाकर रखा गया है। उनके मर्मस्पर्शी व क्रांतिकारी विचार पत्र-पत्रिकाओं से प्रसारित नहीं होते। आदर्श विचारों के लिए समर्पित्त वे मनुष्य द्वारा

मनुष्य का रक्त बहाए जाने के घोर विरोधी थे।

असेम्बली बम विस्फोट के समय फेंके गये पर्चे में उनके दल की ओर से महत्वपूर्ण वाक्य था- हम देश की जनता की ओर से यह कदम उठा रहे हैं। बहरी ब्रितानी हकूमत को सुनाने के लिए धमाके की नितांत आवश्यकता महसूस करनेवाले फांसी के फंदे को विचार का मंच मानते थे।

फांसी के ठीक एक दिन पूर्व २२ मार्च १९३१ को सेन्ट्रल जेल के १४ नंबर वार्ड से रहनेवाले बंदियों ने क्रांतिकारी भगतसिंह के पास एक पर्ची भेजी, जिसमें लिखा था- सरदार, यदि आप फांसी से मुक्त होना चाहते हो तो बताएं ताकि इस क्षण भी उपाय हो सके।

इस पर्ची के उत्तर में उन्होंने अत्यंत संयत, शिष्ट, शालीन और संतुलित होकर मर्मस्पर्शी विचार दिए। वह दुर्लभ दस्तावेज है। उन्होंने पत्र लिखा-

साथियों, जिंदा रहने की कुदरती ख्वाइश मुझमें भी होनी चाहिए। मैं इसे छिपाना नहीं चाहता लेकिन मेरा जिंदा रहना मशरूत (एक शर्त पर) है। मैं कैद या पाबंद होकर जिंदा नहीं रहना चाहता। मेरा नाम हिंदुस्तानी इंकलाब पार्टी (भारतीय क्रांति) का निशान (मध्य बिन्दु) बन चुका है और इंकलाब पसंद पार्टी (क्रांतिकारी दल) के आदर्शों और बलिदानों ने मुझे बहुत ऊंचा कर दिया है, इतना ऊंचा कि जिंदा रहने की सूरत में इससे ऊंचा मैं हरगिज नहीं हो सकता।

आज मेरी कमजोरियां लोगों के सामने नहीं हैं मगर मैं फांसी से बच पाया तो वे जाहिर हो जायेंगी और इंकलाब का निशान मद्धिम पड़ जायेगा या शायद मिट ही जाये लेकिन मेरे दिलेराना ढंग से हंसते-हंसते फांसी पाने की सूरत में हिंदुस्तानी माताएं अपने बच्चों के भगतसिंह बनने की आरजू किया करेंगी और देश की आजादी के लिए बलिदान होनेवालों की तादाद इतनी बढ़ जायेगी कि इंकलाब को रोकना साम्राज्यवाद की संपूर्ण शैतानी शक्तियों के बस की बात न रहेगी।

हां, एक विचार आज भी मेरे दिल में चुटकी लेता है। देश और इंसानियत के लिए जो कुछ हसरत मेरे दिल में थी, उसका हजारवां हिस्सा भी मैं पूरा नहीं कर पाया। अगर जिंदा रहता या रह सकता तो शायद इनको पूरा करने का मौका मिलता और मैं अपनी हसरत पूरी कर सकता। इसके सिवा कोई लालच मेरे दिल में फांसी से बचे रहने के लिए कभी नहीं आया।

मुझसे ज्यादा खुशकिस्मत कौन होगा? मुझे आजकल अपने आप पर बहुत नाज (गर्व) है। अब तो बड़ी बेताबी से आखिरी इम्तिहां (परीक्षा) का इंतजार है। आरजू है कि यह और करीब हो जाये।

इस पत्र को लिखने के पश्चात् उन्होंने अपने अनुज कुलतार सिंह को उसी रात जीवन का अंतिम पत्र लिखा- अजीज कुलतार, आज तुम्हारी आंखों में आंसू देखकर बहुत दु:ख हुआ। आज तुम्हारी बातों में बड़ा दर्द था। तुम्हारे आंसू मुझसे सहन नहीं होते। बरखुरदार, हिम्मत से शिक्षा प्राप्त करना और सेहत का ख्याल रखना। हौसला रखना और क्या कहूं?

संसार भर के सारे जेल नियमों के विरुद्ध २३ मार्च १९३१ को सुबह के बजाय शाम ही भारत के कार्ल मार्क्स सरदार भगत सिंह को फांसीघर में बुलाने का आदेश हुआ। वे फंदे को चूमते हुए खुद ही फांसी पर झुल गए। ब्रिटिश शासन ने हिंसा भड़कने एवं हुकूमत के विरुद्ध क्रांति सुलगने के भय से शव को चोरी-छिपे फिरोजपुर के निकट सतलुज नदी के किनारे पेट्रोल छिड़क कर आग लगा दी और अधजली अवस्था में नदी में फेंक दिया।

क्या इससे वे उनके अमर विचारों को जला या बहा पाये? हरगिज नहीं, उनके आदर्श व प्रासंगिक विचार अभी भी

दिलो-दिमाग में आशा की चिंगारी बनकर बरबस फूट पड़ते हैं, जय हिंद का उद्घोष करते हुए।

कहा जाता है कि जन-आक्रोश के भय से तीनों वीरों को फांसी निर्धारित समय से पहले ही दे दी गई तथा इनके शवों को इनके परिजनों को न सौंप कर फिरोजपुर के निकट हुसैनीवाला में मिट्टी का तेल डालकर जला दिया गया।

इस स्थान पर अब इन वीरों की स्मृति में एक स्मारक का निर्माण किया गया है जहां प्रति वर्ष इनकी स्मृति में मेला लगता है जो इन पंक्तियों को सार्थक करता है-

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले। वतन पर मिटनेवालों का यही बाकी निशां होगा।

भारत के गुलाम रहते यदि कभी मेरी शादी हुई तो मृत्यु ही मेरी पत्नी होगी और मेरी अर्थी का जुलूस मेरी बारात होगी। भारत पर प्राण न्योछावर करने वाले शहीद मेरे बाराती होंगे। यह घोषणा करने वाले शहीद भगत सिंह का मानना था कि प्रेम के लिए समाज में स्वतंत्रता का वातावरण होना चाहिए।

एक बार भगत सिंह से उनके एक क्रांतिकारी मित्र ने पूछा कि क्रांति ही करते रहोगे अथवा कभी शादी करने की बात भी सोचो। इस पर भगत सिंह ने कहा कि मेरी रगों में भी गर्म खून बहता है। मेरे मन में भी भावनायें जोर मारती हैं। इस जन्म में तो हमें देश के लिए अपना बलिदान करना ही है, फांसी का फंदा भी चूमना पड़ सकता है। ऐसे वातावरण और मन:स्थिति में हम प्रेम की ओर कैसे जा सकते हैं। इस जन्म में तो हमें फांसी पर झूलना है। देश के आजाद होने पर जब मैं दूसरा जन्म लूंगा, तब किसी प्रेमिका के प्रेम में सराबोर हो जाऊंगा। शहीदे आजम कहा करते थे कि उच्चकोटि के प्रेम को करने के लिए समाज में स्वतंत्रता का वातावरण होना चाहिए। जहां युवक-युवतियां प्रेममय जीवन बिता सके और कोई उनकी ओर अंगुली नहीं उठा सके। हम गुलामी के वातावरण में पैदा हुए हैं। हमारा समाज ऐसा नहीं है, जहां युवक-युवती वास्तविक प्रेम करने के लिए स्वतंत्र हो। भगत सिंह चाहते थे कि जिन लोगों ने देश की स्वतंत्रता के लिए अपने जीवन को न्योछावर कर शहादत प्राप्त की है, उनके सिद्धांतों की ओर युवकों को आकर्षित किया जाना चाहिए। इस ध्येय से उन्होंने देश के बलिदानी वीरों के चित्र इकट्ठे किए और उनके लघु जीवन वृत्त तैयार कराये। उसके बाद उन्हें विभिन्न नामों से इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाले चांद के फांसी अंक में प्रकाशियत कराया। वर्ष १९२६ में नौजवान भारत सभा की स्थापना की गयी। यह क्रांतिकारी पार्टी का खुला मंच था। नौजवान भारत सभा की रीति, नीति और विचारों को जो मानते थे अथवा उनसे सहानुभूति रखते थे, उन सबके लिए उसके दरवाजे खुले हुए थे। भगत सिंह कांग्रेस के कट्टर आलोचक थे। उन्हें अंदेशा था कि एक न एक दिन कांग्रेस अंग्रेजी सरकार से प्रशासन संबंधी कुछ सुधार कराकर उनसे समझौता कर लेगी। इसलिए आम जनता और विशेषकर नवयुवकों के सामने नये आदर्श और नया नेतृत्व प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है। इस कारण नौजवान भारत सभा की स्थापना के समय उसके लक्ष्य को लेकर काफी बहस हुयी थी।

भगत सिंह हिन्दुस्तानियों के लिए ही नहीं बल्कि पाकिस्तान के बहुत से लोगों के लिए भी आदर्श हैं। देश को आजादी मिलते ही मुल्क का बंटवारा बेशक हो गया, लेकिन शहीद-ए-आजम के प्रति आज भी बहुत से पाकिस्तानियों के मन में अगाध श्रद्धा है।

भगत सिंह को जिस तरह भारत में महान क्रांतिकारी देशभक्त माना जाता है, उसी तरह पाकिस्तान के बहुत से लेखक

और सामाजिक कार्यकर्ता उन्हें पाकिस्तान का सबसे बड़ा क्रांतिकारी मानते हैं। इनमें से एक हैं सईदा दीप। दीप लाहौर के इंस्टिट्यूट फॉर सेक्यूलर स्टडीज की प्रमुख हैं। उनका कहना है कि वह भगत सिंह से बचपन से ही प्रभावित रही हैं। वह भगत सिंह से जुड़े स्थलों को पुन: पुराना गौरव दिलाने के लिए भी संघर्ष कर रही हैं। वह ब्रैडला हाल का नाम भगत सिंह के नाम पर रखने के लिए अभियान चला रही हैं। यह हाल पंजाब कांग्रेस का मुख्यालय हुआ करता था और इसमें स्थापित नेशनल कॉलेज में शहीद-ए-आजम ने शिक्षा पाई थी। उनका कहना है कि इस हाल को १९४७ जैसा गौरव मिलना चाहिए जिससे यह एक शैक्षणिक संस्थान के रूप में तब्दील हो सके। यह इमारत अब जर्जर हो चुकी है जिससे सईदा दीप बेहद व्यथित हैं। उनका मानना है कि भगत सिंह हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की साक्षी विरासत हैं।

ब्रैडला हाल को पुराना रूप देने के साथ ही वह इसमें एक संग्रहालय स्थापना की मांग भी कर रही हैं जो भगत सिंह को समर्पित हो। उनका कहना है कि शादमान चौराहे का नाम भगत सिंह चौक रखा जाना चाहिए जहां (लाहौर सेंट्रल जेल) उन्हें फांसी दी गई थी। पाकिस्तान सरकार ने लाहौर सेंट्रल जेल को तुड़वा दिया था और अब वहां शादमान नाम से एक कॉलोनी स्थापित है। शादमान चौक वाली जगह पर ही भगत सिंह और राजगुरु ने हंसते-हंसते फांसी का फंदा चूमा था। दीप का कहना है कि भगत सिंह जैसे जांबाज कभी कभार ही पैदा होते हैं। पाकिस्तान के जाने माने अधिवक्ता आबिद हसन मिंटो भी भगत सिंह के प्रशंसक हैं। उनका कहना है कि पाकिस्तान में शहीद-ए-आजम से जुड़े सभी स्थलों को पुराना रूप मिलना चाहिए जो इस महान क्रांतिकारी को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में भारतीय भाषा केंद्र के पूर्व अध्यक्ष प्रोफेसर चमन लाल का कहना है कि पाकिस्तान में भगत सिंह के लिए चल रहे अभियान से अब बहुत से लोग जुड़ चुके हैं। पाकिस्तान के बहुत से कवियों और लेखकों ने शहीद-ए-आजम को अपनी रचनाओं में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। भगत सिंह के जीवन पर शोध करनेवाले चमन लाल ने अपनी नई किताब क्रांतिवीर भगत सिंह, अभ्योदय और भविष्य में शहीद-ए-आजम की फांसी के बाद देश में पैदा हुई स्थिति का जिक्र किया है।

मेरी जिन्दगी में नहीं आराम और दुनियादारी का आकर्षण

शहीद ए आजम भगत सिंह का समूचा जीवन उनके साहस और देशप्रेम की कहानियों से भरा पड़ा है। उनके द्वारा लाहौर सेंट्रल जेल से परिवार और साथियों को लिखे गए पत्र आज भी उनके महान व्यक्तित्व की कहानी कहते नजर आते हैं। २७ सितंबर १९०७ को लायलपुर जिले (वर्तमान में पाकिस्तान का फैसलाबाद) के बांगा गांव में जन्मे शहीद ए आजम ने १९ मार्च १९३० को जेल से अपने पिता किशन सिंह को एक पत्र लिखा था जिसमें वतन के लिए उनके दिल की मुहब्बत किसी को भी अपना बना लेती है। उर्दू में लिखे इस पत्र का विवरण शहीद ए आजम द्वारा जेल में लिखी गई डायरी के प्रकाशित अंशों में भी है। भगत सिंह ने इसमें लिखा था जनाब वालिद शाह (पूज्य पिताजी) मेरी जिन्दगी का मकसद आजाद हिन्द के सिद्धांत में आराम और दुनियादारी का आकर्षण नहीं है। उन्होंने आगे लिखा आपको याद होगा कि जब मैं छोटा था तो बापू (दादा अर्जुन सिंह) ने मेरे नामकरण के वक्त ऐलान किया था कि मुझे देश सेवा के लिए दान कर दिया है लिहाजा मैं उस वक्त की प्रतिज्ञा पूरी कर रहा हूं। आपका तावेदार भगत सिंह। शहीद ए आजम के पौत्र (भतीजे बाबर सिंह संधु के पुत्र) यादविंदर सिंह ने बताया कि बचपन में भगत सिंह के नामकरण के समय उनके दादा अर्जुन सिंह ने संकल्प लिया था कि वह अपने इस पोते को देश सेवा के लिए समर्पित्त कर रहे हैं।

यादविंदर ने कहा कि भगत सिंह ने अपने दादा के संकल्प को पूरा किया और इसका जिक्र उन्होंने अपने पत्र में भी किया। फांसी से एक दिन पहले २२ मार्च १९३१ को शहीद ए आजम ने अपने साथियों के नाम पत्र लिखा और अपने दिल की बातों को बेबाकी से स्पष्ट करते हुए कहा जीने की इच्छा मुझमें भी होनी चाहिए जिसे मैं छिपाना नहीं चाहता लेकिन एक शर्त पर जिन्दा रह सकता हूं कि मैं कैद या पाबंद होकर जीना नहीं चाहता। भगत सिंह ने इस पत्र में आगे लिखा मेरा नाम हिन्दुस्तानी क्रांति का प्रतीक बन चुका है और क्रांतिकारी दल के आदर्शों तथा कुरबानियों ने मुझे ऊंचा उठा दिया है इतना ऊंचा कि जीवित रहने की स्थिति में इससे ऊंचा मैं हरगिज नहीं हो सकता। उन्होंने आगे लिखा अगर मैं फांसी से बच गया तो क्रांति का प्रतीक चिह्न मद्धिम पड़ जाएगा। लेकिन दिलेराना ढंग से हंसते हंसते मेरे फांसी पर चढ़ने की सूरत में हिन्दुस्तानी माताएं अपने बच्चों के भगत सिंह बनने की आरजू किया करेंगी और देश के लिए कुरबानी देनेवालों की तादाद इतनी बढ़ जाएगी कि क्रांति को रोकना तमाम शैतानी शक्तियों के बूते की बात नहीं रह जाएगी।

शहीद ए आजम ने यह भी लिखा हां एक विचार आज मेरे मन में आता है कि देश और मानवता के लिए जो कुछ करने की हसरत मेरे दिल में थी, उसका हजारवां हिस्सा भी पूरा नहीं कर सका। अगर स्वतंत्र जिन्दा रह सकता, तब शायद उन्हें पूरा करने का अवसर मिलता। वे (अंग्रेज) मुझे मार सकते हैं, लेकिन मेरे विचारों को नहीं। भगत सिंह के इस पत्र का उल्लेख भी उनके परिवार द्वारा प्रकाशित कराई गई डायरी में देखने को मिलता है। शहीद ए आजम हिंसा के समर्थक हरगिज नहीं थे जिसका उल्लेख उन्होंने कुछ यूं किया है क्रांति का मतलब रक्त संघर्ष से नहीं है। क्रांति पिस्तौल और बंदूक की संस्कृति नहीं है। इसका मतलब है जुल्म करनेवाली सत्ता बदलनी चाहिए। यादविंदर का कहना है कि सांडर्स हत्याकांड को छोड़कर भगत सिंह के जीवन में ऐसी कोई घटना नजर नहीं आती जब उन्होंने हिंसा का सहारा लिया हो। लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेने की खातिर क्रांतिकारियों के लिए ब्रिटिश अधिकारी को मारना जरूरी हो गया था ताकि ब्रितानिया सल्तनत को करारा जवाब दिया जा सके। भगत सिंह ने पब्लिक सेफ्टी और ट्रेड डिस्प्यूट बिल के विरोध में आठ अप्रैल १९२९ को जब सेंट्रल असेंबली में बम फेंका तो वह भी ऐसी जगह फेंका जिससे किसी की जान न जाए। २३ मार्च १९३१ को लाहौर षड्यंत्र (सांडर्स हत्याकांड) में भारत मां के इस महान सपूत को फांसी दे दी गई जिसे उन्होंने हंसते हंसते चूम लिया।

आज ही के दिन २७ सितंबर, १९०७ को शहीद-ए-आजम सरदार भगत सिंह का जन्म लायलपुर, पंजाब (अब पाकिस्तान में) हुआ था।

१४ वर्ष की उम्र में ही वे क्रांतिकारी संस्थाओं से जुड़ गये। उन्होंने भारत में गणतंत्र की स्थापना के लिए चंद्रशेखर आजाद के साथ मिलकर हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ का गठन किया।

उन्होंने लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेने के लिए पुलिस अधिकारी सॉन्डर्स की हत्या की और बटुकेश्वर दत्त के साथ मिलकर केंद्रीय विधानसभा में बम फेका। २३ मार्च १९३१ को लाहौर जेल में उन्हें राजगुरु और सुखदेव के साथ फांसी दे दी गयी।

आखिर भगत सिंह को शहीद

कितने आश्चर्य की बात है कि समूचा देश जिस महान क्रांतिकारी को सिर्फ शहीद नहीं बल्कि शहीदे-आजम कहता है,

उन्हें अब तक सरकार ने शहीद का दर्जा नहीं दिया है। भारत को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष करने वाले क्रांतिकारियों के बलिदान का सुनहरा इतिहास रहा है। शहीदे-आजम भगतसिंह एक बुद्धिजीवी भी थे जिन्होंने फ्रांसीसी और बोल्शेविक क्रांति के इतिहास का विषद अध्ययन किया था। मेजिनी और गैरीबाल्डी की जीवनी पढ़ी थी। उन्होंने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी नामक क्रांतिकारी संगठन बनाया था। उनके साथियों में चंद्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खान, शचिंद्रनाथ लाहिड़ी, भगवतीचरण वोहरा, मन्मथनाथ गुप्त आदि शामिल थे।

जलियांवाला बाग में अंग्रेजों ने जिस तरह भीषण नरसंहार किया था, तभी से इन नौजवानों के दिलों में इसका प्रतिशोध लेने की आग सुलग रही थी। जब साइमन कमीशन भारत आया तो उसके खिलाफ निकाले गए जुलूस का नेतृत्व कर रहे लाला लाजपतराय पर अंग्रेजी हुकुमत ने लाठियां बरसाईं। इससे बुरी तरह घायल लालाजी का देहावसान हो गया। इसका बदला लेने के लिए भगतसिंह ने स्काट नामक अफसर के धोखे में सैंडर्स पर गोली चला दी। बाद में भगतसिंह ने खुद सेंट्रल असेम्बली में धमाका कर आत्मसमर्पण कर दिया। उन्होंने कहा कि यह धमाका किसी की जान लेने के लिए नहीं बल्कि ब्रिटिश सरकार के बहरे कानों को सुनाने के लिए था। अंग्रेजो ने शहीदे-आजम भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी दे दी। शहीदों के बलिदान से भारतीयों में आजादी की भावना जागृत हुई। यह कहना गलत होगा कि आजादी सिर्फ अहिंसक आंदोलन से आई। क्रांतिकारियों की जीवनी और उनके बलिदान को जानबूझकर भुलाया जाता रहा। कहा जाता था कि शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले, वतन पे मरनेवालों की यही बाकी निशां होगा। इसके विपरीत शहीदों की उपेक्षा की गई और उन्हें भूला-बिसरा बना दिया गया।

शहीद भगतसिंह ने कठोर शक्ति पर टीका की। इतना ही नहीं स्वतंत्रता की लड़ाई के मंच पर भी उन्होंने किसी धर्म का सहारा नहीं लिया। भगतसिंह की नास्तिकता ही मानवता की स्थापना करनेवाली थी।

भगतसिंह का विज्ञाननिष्ठ परंपरा पर नितांत विश्वास था। वे नास्तिकता की राह पर चलते थे और किसी भी धर्म को नहीं मानते थे। मनुष्य को स्वयं की पहचान बनाते हुए दिन प्रतिदिन के जीवनचर्या में उपयोगी पड़नेवाले मूल्यों का निर्माण उनकी रचनाओं ने की। भगतसिंह की नास्तिकता वैश्विक स्तर पर मानवता की प्रतीक है।

शहीदे आजम भगतसिंह ने कहा- किसी को क्रांति शब्द की व्याख्या शाब्दिक अर्थ में नहीं करनी चाहिए। जो लोग इस शब्द का उपयोग या दुरुपयोग करते हैं, उनके फायदे के हिसाब से इसे अलग-अलग अर्थ और मायने दिए जाते हैं।

भगत सिंह व्यवस्था बदलने की लड़ाई लड़ते रहे। उन्होंने आजादी के बाद एक ऐसे देश का सपना देखा था जिसमें कोई किसी पर राज नहीं करेगा। वह इस बात को लेकर हमेशा चिंतित रहते थे कि कहीं गोरों के जाने के बाद देश के ही ताकतवर लोग सत्ता पर काबिज न हो जाएं। हालांकि उन्हें पूरी तरह से निराशा नहीं हुई। लोकतंत्र है और सूचना के अधिकार तक के हक मिले हुए हैं। यह उनके सपनों के काफी करीब है। भगत सिंह जातपात और धर्म के नाम पर किसी भी तरह झगड़े फसाद के सख्त खिलाफ थे और हमेशा ही ऐसा करनेवालों को मानवता के खिलाफ बताते रहे। उन्होंने एक बार अपनी जेल डायरी में लिखा था कि मैं एक मनुष्य हूं और मुझे हर उस बात से सरोकार है जो इंसानियत के लिए नुकसानदायक है।

भगतसिंह कलम के सिपाही भी थे

भगतसिंह का नाम सुनते ही हमारे जेहन में एक रणबांकुरे की छवि उभरती है जो आजादी की चाहत दीवानगी की हद

तक रखता था। लंबी तनी मूंछें, ऊंची गर्दन, विशाल सीना, गहरी आंखें और सिर पर इंग्लिश राउण्डर हैट और बम से क्रांति की इबारत लिखनेवाला योद्धा था।

लेकिन बहुत कम लोग जानते हैं उस नौजवान का दर्शन बम की क्रांति पर आकर ठहर नहीं जाता है। जो लोग यह मानते हैं कि भगतसिंह केवल खून खराबे और बमगोली से क्रांति लाना चाहते थे वे शायद भगत के बारे में भली प्रकार नहीं जानते। ऐसे में उनकी पंक्तियां ह्यबमपिस्तौल की संस्कृति क्रांति नहीं है, क्रांति से हमारा तात्पर्य वर्तमान शोषण और अन्याय की व्यवस्था में परिवर्तन लाना है यह सिद्ध करती हैं कि वे भारतीयों को जागृत करना चाहते थे, अधिकारों के लिए लड़ने की आग फूंकना चाहते थे। वे देश के भविष्य के प्रति चिंतित थे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि उस प्रखर बुद्धि के मालिक को आतंककारी जैसे शब्दों से नवाज कर उज्ज्वल प्रतिष्ठा को दाग लगाने का असफल प्रयास किया गया। ९वीं कक्षा में अध्ययन छोड़ आजादी की लड़ाई में कूदने के बाद १९२२ में गांधी द्वारा असहयोग आंदोलन वापिस ले लिए जाने से व्यथित हो भगत सिंह ने काशी विश्वविद्यालय में पुन: प्रवेश लिया और लेखन को अपनाया। यहीं से शुरू हुआ पिस्तौल और कलम का साथ-साथ सफर। प्रताप के संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी से पत्रकारिता का बाकायदा प्रशिक्षण प्राप्त कर सक्रिय रूप से बलवंत तथा विद्रोही के नाम से लेखन प्रारंभ कर दिया और तत्कालीन समाचार पत्रों में लेख लिखे। भगत ने आत्मकथा, डोर टू डेथ, दि आइडियल ऑफ सोशलिज्म, एवं द रिवोल्यूशनरी मूवमेंट इन इंडिया शीर्षक से चार पुस्तकें भी लिखी लेकिन अफसोस उपर्युक्त चारों पुस्तकों की प्रतियां आज नहीं हैं जिसे मौलिक माना जा सके। अगर हैं तो उनका प्रचार प्रसार नहीं। ८ अप्रैल १९२९ को केन्द्रीय असेम्बली में बम फेंकने के बाद अपने साथी बटुकेश्वर दत्त सहित आत्मसमर्पण कर दिया। २३ मार्च १९३१ तक लाहौर जेल में एक डायरी लिखी। उन्होंने देश व समाज की तत्कालीन परिस्थितियों पर कलम चलाने के साथ जेल में पढ़ी पुस्तकों पर टिप्पणियां लिखीं। उनकी कलम ने समाज, राज्य और क्रांति की भावी योजनाओं पर विचार उस डायरी पर उतारे। कितना जांबाज और जीवट होगा वह आजादी का दीवाना जिसको यह जानकर भी कि उसकी मौत फांसी के रूप में दरवाजे पर खड़ी है और वह भावी योजनाओं के निर्माण पर अपनी कलम से इतिहास रच रहा है। मौत के भय से मुक्त हो ऐसा करना उसकी आजादी के प्रति श्रद्धा की पराकाष्ठा थी। भगतसिंह को पुस्तकें पढ़ने में रूचि थी, इस बात का अनुमान लगाना आसान है क्योंकि जहां कहीं जेल के तनाव के क्षण होने चाहिए, उन्होंने वहां कार्ल मार्क्स, ट्राटस्की, हसैल, गोर्की, टैगोर, सुकरात तथा प्लेटो जैसे देशविदेश के अनेक दार्शनिकों को न केवल पढ़ा अपितु उनके दर्शन पर अपने विाचर भी जेल डायरी में लिखे। अध्ययन की पैरवी करते हुए उन्होंने लिखा, परिवर्तन की ताकतों को समझने के लिए अध्ययन करें, अपने विरोधी के प्रश्नों और तर्कों का उत्तर देने के लिए अध्ययन करें। उन्होंने साहित्य की महता पर प्रकाश डालते हुए लिखा, राष्ट्र का उदय तथा साहित्य की प्रगति समानान्तर चलते हैं। यदि लेखक तत्कालीन परिस्थितियों तथा समस्याओं का चित्रण करने में असमर्थ है तो उसके प्रयास अस्थाई ही होंगे। भगतसिंह का दर्शन, उनका आदर्श जीवन और भविष्य के प्रति दृष्टिकोण यदि उन्हीं के लिखित शब्दों में मौजूद है तो वह साहित्य और समाज की अमूल्य धरोहर है। जिस उम्र में आज का नौजवान अपने कैरियर निर्माण में इतना डूब जाता है कि उससे सामाजिकता, मानवता और देश प्रेम न जाने कहां छूट जाता है, वहीं देशपर न्यौछावर होनेवाला वह सिपाही मात्र २३ वर्ष की उम्र में हंसते-हंसते शहीद हो गया। तत्कालीन संकटकालीन परिस्थितियों से हंसते-हंसते जूझना स्वार्थी विचारधारा से संभव नहीं था। यह त्याग, तपस्या, बलिदान और सच्चाई के दम पर ही संभव था जिसमें भगत ने कोई कोर कसर नहीं छोड़ी तुझै शतशत सलाम।

नौजवान भारत सभा, हिंदुस्तान सोशलिस्ट, प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी, उनका विश्वास था कि उनकी शहादत से भारतीय जनता और उग्र हो जाएगी, लेकिन जबतक वह जिंदा रहेंगे ऐसा नहीं हो पाएगा। इसी कारण उन्होंने मौत की सजा सुनाने के बाद भी माफीनामा लिखने से साफ मना कर दिया था।

आजादी अतीत के आईने से

देश के लिए जान लुटानेवालों में सबसे बड़ा नाम है शहीद भगत सिंह। घर-परिवार, पढ़ाई, सब कुछ देश की आजादी के लिए न्योछावर करनेवाले गरम दल के नेताओं में भगत सिंह का नाम चिर स्मरणीय रहेगा। २८ सितंबर १९०७ को पैदा हुए भगत सिंह ने हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन की स्थापना की। जो ब्रिटिश हुकूमत बहरी हो चुकी थी, उन्हें अपनी आजादी की आवाज पहुंचाने के लिए ८ अप्रैल १९२९ को राजदेव और सुखदेव के साथ उन्होंने सेंट्रेल असेंबली में बम फेंका। वहां से वे भागे नहीं बल्कि खुद को गिरफ्तार हो जाने दिया। २३ मार्च १९३१ को लाहौर में उन्हें फांसी पर लटका दिया गया।

तुझे जिबह करने की खुशी और मुझे मरने का शौक, है मेरी भी मर्जी वही जो मेरे सैयाद की है। इन पंक्तियों का एक-एक लफ्ज उस महान देशभक्त को वतन पर मर मिटने की ख्वाहिश जाहिर करता है, जिसने आजादी की राह में हंसते-हंसते फांसी के फंदे को चूम लिया। देशभक्ति की यह तहरीर भगत सिंह की उस डायरी का हिस्सा है जो उन्होंने लाहौर जेल में लिखी थी। शहीद ए आजम ने आजादी का ख्वाब देखते हुए जेल में जो दिन गुजारे, उन्हें पल-पल अपनी डायरी में दर्ज किया। ४०४ पृष्ठ की यह मूल डायरी आज भगत सिंह के पौत्र (भतीजे बाबर सिंह संधु के पुत्र) यादविंदर सिंह के पास है, जिसे उन्होंने अनमोल धरोहर के रूप में संजोकर रखा है।

दिल्ली के नेहरू मेमोरियल म्यूजियम में इस डायरी की प्रति भी उपलब्ध है, जबकि राष्ट्रीय संग्रहालय में इसकी माइक्रो फिल्म रखी है। उच्चतम न्यायालय में लगी एक प्रदर्शनी में भी इस डायरी को प्रदर्शित किया जा चुका है। डायरी के पन्ने अब पुराने हो चले हैं, लेकिन इसमें उकेरा गया एक-एक शब्द देशभक्ति की अनुपम मिसाल के साथ ही भगत सिंह के सुलझे हुए विचारों की तस्वीर पेश करता नजर आता है।

शहीद-ए-आजम ने यह डायरी अंग्रेजी भाषा में लिखी हैं, लेकिन बीच बीच में उन्होंने उर्दू भाषा में वतन परस्ती से ओत-प्रोत पंक्तियां भी लिखी हैं। भगत सिंह का सुलेख इतना सुंदर है कि डायरी देखनेवालों की निगाहें ठहर जाती है। डायरी उनके समूचे व्यक्तित्व के दर्शन कराती है। इससे पता चलता है कि वह महान क्रांतिकारी होने केसाथ ही विहंगम दृष्टा भी थे। बाल मजदूरी हो या जनसंख्या का मामला, शिक्षा नीति हो या फिर सांप्रदायिकता का विषय, देश की कोई भी समस्या डायरी में भगत सिंह की कलम से अछूती नहीं रही है। उनकी सोच कभी विदेशी क्रांतिकारियों पर जाती है तो कभी उनके मन में गणित-विज्ञान, मानव और मशीन की भी बात आती है। डायरी में पेज नंबर ६० पर उन्होंने लेनिन द्वारा परिभाषित साम्राज्यवाद का उल्लेख किया है तो पेज नंबर ६१ पर तानाशाही का। इसमें मानव मशीन की तुलना के साथ ही गणित के सूत्र भी लिखे हैं। इन ४०४ पन्नों में भगत के मन की भावुकता भी झलकती है जो बटुकेश्वर दत्त को दूसरी जेल में स्थानांतरित किए जाने पर सामने आती है। मित्र से बिछुड़ते समय मन के किसी कोने में शायद यह अहसास था कि अब मुलाकात नहीं होगी, इसलिए निशानी के तौर पर डायरी में भगत सिंह ने बटुकेश्वर दत्त के ऑटोग्राफ ले लिए थे।

बटुकेश्वर ने ऑटोग्राफ के रूप में बी.के. दत्त के नाम से हस्ताक्षर किए। अंग्रेजी पर अच्छी पकड़ होने के साथ ही भगत सिंह इतिहास और राजनीति जैसे विषयों में भी पारंगत थे। सभी विषयों की जबर्दस्त जानकारी होने के चलते ही हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी (एचएसआरए) के प्रमुख चंद्रशेखर आजाद ने उन्हें अंग्रेजों की नीतियों के विरोध में ८ अप्रैल १९२९ को सेंट्रल असेंबली में बम फेंकने की इजाजत दी थी। २७ सितंबकर १९०७ को जन्मे भगत सिंह २३ मार्च १९३१ को मात्र २३ साल की उम्र में ही देश के लिए फांसी के फंदे पर झूल गए। देशवासियों के दिलों में वह आज भी जिन्दा हैं।

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में शहीद-ए-आजम भगत सिंह एक ऐसा नाम हैं जिनके बिना शायद आजादी की कहानी अधूरी रहती हैं। वह सिर्फ युवाओं ही नहीं, बल्कि बुजुर्गों और बच्चों के भी आदर्श हैं। लाहौर सेंट्रल जेल में उनके द्वारा लिखी गई ४०० पृष्ठ की डायरी उनके विहंगम व्यक्तित्व की कहानी बयां करती है। वह लेखकों, रचनाकारों, इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों सबके लिए प्रेरणास्त्रोत रहे हैं। भगत सिंह को जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर चमनलाल क्रांतिवीर मानने के साथ ही वैचारिक क्रांति का पुरोधा भी मानते हैं। उनका कहना है कि मात्र २३ साल की उम्र में शहीद हो जानेवाले इस युवा के बिना शायद आजादी की कहानी अधूरी कहलाती। चमनलाल ने अपनी पुस्तक क्रांतिवीर भगत सिंह- अभ्युदय और भविष्य में शहीद-ए-आजम के विहंगम व्यक्तित्व, कृतित्व और उनकी लोकप्रियता का व्यापक वर्णन किया है। उनका कहना है कि यदि भगत सिंह न होते तो आज देश के लिए शायद कोई ऐसा आदर्श न होता जिसने वैचारिक क्रांति के दम पर ऐसे शासन की नींव हिला दी जिसका साम्राज्य दुनियाभर में फैला था। उन्होंने बताया कि २३ मार्च १९३१ को भगत सिंह की फांसी के बाद भारत का पत्रकारिता जगत उनसे संबंधित खबरों से अटा पड़ा रहता था। शहीद-ए-आजम की जीवनी लिखने के लिए जितेंद्रनाथ सान्याल को गोरी हुकूमत ने दो साल कैद की सजा सुनाई थी। चमनलाल के अनुसार भगत सिंह ने जहां क्रांतिवीर के रूप में दुनिया के मानसपटल पर अपनी छाप छोड़ी, वहीं पत्रकार के रूप में भी उन्होंने अपनी भूमिका बखूबी निभाई। उन्होंने कहा कि अलीगढ़ के शादीपुर गांव में स्थित स्कूल आज भी इस बात का गवाह है कि देश के लिए मर मिटने वाला यह नौजवान एक कुशल शिक्षक भी था। समाजशास्त्री स्वर्ण सहगल के अनुसार भगत सिंह के लिए क्रांति का मतलब हिंसा से नहीं, बल्कि वैचारिक परिवर्तन से था। बहरों को सुनाने के लिए सेंट्रल असेंबली में धमाका कर वह दुश्मन को उसी की भाषा में जवाब देनेवाले योद्धा के रूप में नजर आते हैं। लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेने के लिए सांडर्स को गोली से उड़ा देना भी उनके इसी जज्बे का प्रतीक था। शहीद-ए-आजम के पोते (भतीजे बाबर सिंह संधु के पुत्र) यादविंदर सिंह ने कहा कि उनके दादा द्वारा लाहौर सेंट्रल जेल में लिखी गई डायरी इस बात की गवाह है कि उनके बिना भारत का स्वाधीनता संग्राम संभवत: अधूरा कहलाता। उन्होंने कहा कि भगत सिंह की इस डायरी में जहां वैचारिक तूफान दिखाई देता है, वहीं उनके द्वारा लिखे गए गणित और राजनीति के सूत्र उनके व्यक्तित्व की विशालता को दर्शाते हैं। यादविंदर के अनुसार उनके दादा द्वारा जेल में की गई लंबी भूख हड़ताल उनकी दृढ़ इच्छाशक्ति का प्रतीक थी जो युवाओं को देश के लिए अपने भीतर संकल्प शक्ति पैदा करने की सीख देती है।

भारत की क्रांति में अमरता का पर्याय बन चुके शहीद ए आजम भगत सिंह आर्य समाजी रीति रिवाज माननेवाले

परिवार में जन्मे थे, लेकिन जब उन्होंने समाज में व्याप्त जुल्म, शोषण और असमानता को देखा तो उनका विश्वास ईश्वर से उठ गया। शहीद ए आजम ने अपनी आत्मकथा मैं नास्तिक क्यों हूं में ईश्वरीय सत्ता को नहीं मानने के विस्तृत कारण बताए हैं। उनके साथी शिव वर्मा ने कुछ लोगों के साथ ईश्वर और भाग्य को लेकर हुई भगत सिंह की चर्चा के हवाले से इस क्रांति नायक के नास्तिक होने की वजहों का बखूबी चित्रण किया है। सफलता और असफलता को सर्वशक्तिमान ईश्वर के हाथ में बताए जाने पर शहीद ए आजम ने जवाब दिया, तुम्हारा रास्ता अकर्मण्यता का है। यह रास्ता किस्मत की घुट्टी पिलाकर देश के नौजवानों को अकर्मण्य बनाने का है। यह कभी भी मेरा रास्ता नहीं हो सकता। इस दुनिया को मिथ्या बताने वाले और इस देश को परछाई या मायाजाल समझने वाले कभी दुनिया की भलाई या इस देश की आजादी के लिए सत्यनिष्ठा से नहीं लड़ सकते। भगत सिंह ने आगे कहा कि जो मिथ्या और परछाई हो, उसके लिए संघर्ष कैसा। मेरा देश तो एक जीवित और हसीन हकीकत है तथा मैं इसे मुहब्बत करता हूं। भगत सिंह ने अपने नास्तिक होने की वजह बताते हुए कहा, आप सर्वशक्तिमान परमेश्वर की बात करते हैं। मैं पूछता हूं कि सर्वाधिक शक्तिशाली महामारी, हिंसा और युद्ध का अंत क्यों नहीं कर देते? मित्र फणींद्र के यह कहे जाने पर कि इस धरती को स्वर्ग बनाने कितने मसीहा आए और हारकर चले गए। अब तुम आए हो सो दो चार दिन में तुम्हारे हौसलों का भी पता चल जाएगा, शहीद ए आजम ने जवाब दिया, हो सकता है मेरा जीवन चार दिन का हो लेकिन मेरे हौसले आखिरी सांस तक मेरा साथ नहीं छोड़ेंगे, इसका मुझे यकीन है। उन्होंने कहा कि और यदि कल मैं नहीं भी रहा तो तब भी मेरे हौसले देश के हौसले बनकर साम्राज्यवादी शोषकों के खात्मे के लिए उनका पीछा करते रहेंगे। मुझे अपने देश के भविष्य पर यकीन है। भगत ने आगे कहा कि हर बात के लिए ईश्वर की ओर ताकना भाग्यवाद और निराशावाद है। भाग्यवाद कर्म से भागने का रास्ता है। यह निर्बल, कायर और पलायनवादी व्यक्तियों की आखिरी शरण है।शहीद ए आजम ने लाहौर जेल में अपने द्वारा लिखी गई डायरी में भी अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित किया है। उनकी सोच काफी आगे तक जाती है और वह कहते हैं कि क्रांति का मतलब बम और पिस्तौल की संस्कृति से नहीं है। क्रांति के लिए रक्त संघर्ष आवश्यक नहीं है और न ही इसमें व्यक्तिगत प्रति हिंसा का कोई स्थान है। उन्होंने अपनी लेखनी से स्पष्ट किया है कि क्रांति से हमारा मतलब अन्याय पर टिकी वर्तमान व्यवस्था को बदलने से है। पिस्तौल और बम इंकलाब नहीं लाते, बल्कि इंकलाब की तलवार तो विचारों की सान पर तेज होती है। भगत सिंह ने कहा है कि लोगों को समझना पड़ेगा कि भारतीय क्रांति क्या होगी। इसका मतलब केवल मालिकों की तब्दीली से नहीं, बल्कि एक नयी व्यवस्था कायम करने से होगा।

शहीद भगत सिंह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के कुछ गिने-चुने ऐसे योद्धाओं में से थे जो दिन-रात सिर्फ मुक्ति के बारे में ही सोचा करते थे। भगत सिंह २४ घंटों में से १३ से २० घंटे तक नियमित काम करते थे। जाहिर है, श्रम के प्रति इतनी निष्ठा रखनेवाला कोई व्यक्ति दूसरे से भी ऐसी ही निष्ठा चाहेगा। लेकिन भगत सिंह हमेशा अपने क्रांतिकारी साथियों से कहते थे कि कोई भी काम तभी किया जाये जब उसके प्रति आपकी आस्था हो और उसे आप सही मानते हों। एक बार उन्होंने कुछ नये साथियों को दीवार में कुछ नारे लिखने का काम सौंपा। आजादी के आंदोलन के दौरान दीवारों में नारे वगैरह लिखने का काम आमतौर पर रात में ही होता था इसलिए रात में २ नये साथियों को यह काम सौंपा गया। लेकिन दूसरे दिन भगत सिंह ने उन दोनों को नारे लिखने के लिए नहीं भेजा। चन्द्रशेखर ने उनसे पूछा कि ऐसा क्यों? भगत सिंह ने कहा कि दरअसल उन दोनों का इस काम में मन ही नहीं लगता। हालांकि उन लोगों ने एक बार भी यह काम करने के

लिए मना नहीं किया मगर बेहतर यही है कि उन दोनों से यह काम न कराया जाए नहीं तो उनका यह सारा परिश्रम व्यर्थ जाएगा। बिना लगन और आस्था के किए गए काम में आमतौर पर सफलता भी नहीं मिलती।

रावी नदी के किनारे हुआ था भगत सिंह का अंतिम संस्कार

भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु को अंग्रेजों ने फांसी के तय समय से एक दिन पहले ही फांसी पर लटका दिया था और फिर बर्बर तरीके से उनके शवों के टुकड़े-टुकड़े कर सतलुज नदी के किनारे स्थित हुसैनीवाला के पास जला दिया था, लेकिन बाद में लोगों ने अगाध सम्मान के साथ इन तीनों वीर सपूतों का अंतिम संस्कार लाहौर में रावी नदी के किनारे किया था। अंग्रेज २३ मार्च १९३१ को इन तीनों सेनानियों को फांसी पर लटकाने और शवों के टुकड़े करने के बाद चुपचाप उन्हें सतलुज के किनारे स्थित हुसैनीवाला के पास ले गए थे और वहां बहुत ही अमानवीय तरीके से उनके शवों को जला दिया था।

उसी दौरान वहां लाला लाजपत राय की बेटी पार्वती देवी और भगत सिंह की बहन बीबी अमर कौर सहित हजारों की संख्या में लोग पहुंच गए। इससे वहां मौजूद अंग्रेज पुलिसकर्मी शवों को अधजला छोड़कर भाग गए। शहीद-ए-आजम भगत सिंह पर कई पुस्तकें लिख चुके प्रोफेसर चमनलाल ने बताया कि लोगों ने तीनों शहीदों के अधजले शवों को आग से निकाला और फिर उन्हें लाहौर ले जाया गया। लाहौर में तीन अर्थियां बनाई गई और २४ मार्च की शाम हजारों की भीड़ ने पूरे सम्मान के साथ उनकी शव यात्रा निकाली तथा उनका अंतिम संस्कार रावी नदी के किनारे उस स्थल के नजदीक किया गया जहां लाला लाजपत राय का अंतिम संस्कार हुआ था। चमन लाल के अनुसार रावी नदी के किनारे हुए इस अंतिम संस्कार का व्यापक वर्णन सुखदेव के भाई मथुरा दास थापर की किताब मेरे भाई सुखदेव में है। उन्होंने कहा कि नौजवान भारत सभा चाहती थी कि इन शहीदों का स्मारक रावी नदी के किनारे बने, लेकिन राजनीतिक कारणों से ऐसा नहीं हो पाया।

भगत सिंह के विचार को ठीक से समझने की जरूरत है

भगत सिंह की शख्सियत के कई पहलुओं को हम अब भी ठीक से समझ नहीं पाए हैं। उनके हर फैसले में, हर कदम में एक संदेश छिपा है। फांसी पर चढ़ने के कुछ मिनट पहले तक वह लेनिन को पढ़ रहे थे। अंतिम दिनों में उनकी इच्छा थी कि जेल की एक महिला सफाई कर्मचारी के हाथ से दिया खाना खाएं। २४ साल की कम उम्र में इतना पढ़ा कि तीन बार पीएचडी हो जाए। फांसी के तीन दिन पहले उन्होंने चिट्ठी लिखी कि तीनों क्रांतिकारियों (उनके साथ सुखदेव और राजगुरु) पर ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ युद्ध छेड़ने का दोषी ठहराकर गोली मार दी जाए न कि अंग्रेज पुलिस अधिकारी सांडर्स की हत्या के जुर्म में सजा दी जाए। उनका मानना था कि कोई भी आंदोलन या कोई भी संघर्ष तब तक अधूरा है जब तक कि यथास्थिति को ध्वस्त करते हुए नवनिर्माण की नींव न रखी जाए। नवनिर्माण का एक नक्शा भगत सिंह के पास था।

भगत सिंह मानव मुक्ति की ऐसी विचारधारा की खोज में थे, जो न सिर्फ व्यावहारिक हो बल्कि वैश्विक स्तर पर उसके अनुभव भी मौजूद हों। उनकी ये खोज स्कूल के दिनों से ही शुरू हुई जो लाहौर के नेशनल कॉलेज तक पहुंची। कॉलेज में ही वह कार्ल मार्क्स, मेजिनी और गैरीबाल्डी की जीवनी पढ़ चुके थे। मार्क्स, एंगल्स, लेनिन और ट्राटास्की के लेखन से

वह परिचित हो चुके थे। स्पष्ट है उनके व्यक्तित्व पर इन सबका गहरा असर पड़ा। उनके विचारों का सफर गांधीवादी राष्ट्रवाद से शुरू होकर एक रोमँटिक क्रांतिकारी के विचारों तक पहुंचा। ऐसा नहीं है कि वह लेनिन या मार्क्सवादियों के रास्ते पर ही भारत का भविष्य देखते थे, लेकिन समाजवाद की अवधारणा के समर्थक तो वो थे ही। आज जो वामपंथ हम अपने देश में देखते हैं वह भारतीय परिवेश में बिलकुल अप्रासंगिक है। भारतीय मानस अर्थ से ज्यादा एक ऐसे आध्यात्मिक संसार की तरफ देखता रहता है जहां ऊँच-नीच, जात-पांत, राजा-रंक यह सामाजिक व्यवस्था नहीं बल्कि किसी और की बनाई व्यवस्था है जिसे हमें नहीं छोड़नाचाहिए। मामला पूरी तरह आर्थिक तानेबाने में ही नहीं गुंथा है। भगत सिंह यह अच्छी तरह समझ चुके थे।

लाहौर में डीएसपी सांडर्स की हत्या के बाद गांधी जी ने अपना एक मशहूर लेख लिखा द कल्ट ऑफ बम यानी बम की पूजा। जाहिर है गांधी जी ने क्रांति के इस रास्ते से अपना असहमति जताई थी। इस आलोचना के बाद भगत सिंह के साथ भगवतीचरण वोहरा ने एक पर्चा लिखा- फिलॉस्फी ऑफ बम यानी बम का दर्शन। इसमें उन्होंने लिखा कि जब भी हिंसा को एक भयानक जरूरत के रूप में इस्तेमाल किया गया वह न्यायसंगत था, लेकिन तय है कि सभी प्रकार के जनांदोलनों के लिए एक नीति के रूप में अहिंसा अनिवार्य थी।

एक आर्यसमाजी परिवार से आनेवाले भगत सिंह ने संपूर्ण आजादी के अजेंडे में उस सामाजिक असमानता को प्रमुखता के शामिल किया था जिसमें अछूतों के लिए बराबर का अधिकार और बराबर के मौके हो। अपने मशहूर लेख अछूतों की समस्या में उन्होंने लिखा था कि मौजूदा पूंजीवादी नौकरशाही से किसी तरह की उम्मीद बेकार है। ऐसे में रास्ता एक ही है कि एकजुटता के साथ एक सामाजिक और आर्थिक क्रांति का हिस्सा हो।

भगत सिंह ने सवाल किया था कि क्या मानसिक मेहनत करनेवाले, शारीरिक मेहनत करनेवालों से ज्यादा उत्पादक हैं यानी क्या किसी इमारत के निर्माण में लगे एक मजदूर का श्रम किसी सरकारी दफ्तर में काम करनेवाले बाबू से सस्ता है? समस्या का समाधान तभी हो सकता है जब दोनों वर्गों को उत्पादनकारी श्रम समझा जाए। सिर्फ भगत सिंह का नाम लेने से बात नहीं बनेगी। आज उनके विचार के प्रसार की जरूरत है।

पहलें कहा जाता था- शहीदों की चिंताओं पर लगेंगे हर बरस मेले, वतन पर मरनेवालों का यही बाकी निशां होगा। वास्तव में ऐसा कुछ नहीं हुआ। आजाद भारत में शहीदों की कुर्बानी को भुला दिया गया और उनके परिजनों की भी सुध नहीं ली गई। बेबसी और मुफलिसी में शहीदों के परिवारजनों ने अपनी बची खुची जिंदगी जैसे-तैसे काटी। जान बुझकर ऐसा आभास निर्मित किया गया कि भारत को स्वाधीनता अहिंसक आंदोलन के माध्यम से ही मिली। सत्याग्रह और असहयोग के जरिये अंग्रेजों को बाध्य किया गया कि वे भारतवासियों को आजादी देकर यहां से चले जाएं। जुझारू क्रांतिकारियों की गाथाएं जानबूझकर भुला दी गई या वे पुरानी पुस्तकों के पत्रों में सिसकती रह गई। जनता ने गांधी-नेहरू के बारे में तो भरपूर जाना लेकिन भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु के बलिदान, खुदीराम बोस, जतिनदास, चंद्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खान, सचीन्द्रनाथ लाहिड़ी, भगवतीशरण वर्मा जैसे क्रांतिकारियों की कुर्बानी, वीर सावरकर के अंदमान के सेल्युलर जेल में काला पानी की सजा भोगने के वृत्तांत से नई पीढ़ी को वंचित रखा गया।

नेताजी सुभाषचंद्र बोस और उनकी आजाद हिंद फौज की भी स्वाधीनता के इतिहास में उपेक्षा की गई क्योंकि उन्होंने

गुलामी से देश को आजाद करने के लिए हिंसा का मार्ग अपनाया था। पं. नेहरू से लेकर आज तक के सभी प्रधानमंत्रभ १५ अगस्त को राष्ट्र के नाम संबोधन के बाद जयहिंद का नारा लगाने आए जो कि नेताजी सुभाषचंद्र बोस का दिया हुआ नारा था। बहुत कम लोगों को याद होगा कि जब लाल किले में विशेष कोर्ट बनाकर आजाद हिंद फौज के सेनानियों सहगल, ढिल्लों और शाहनवाज पर अंग्रेज सरकार ने देशद्रोह का मुकदमा चलाया था तो पं. जवाहरलाल नेहरू बैरिस्टर की पोशाक पहनकर उनकी पैरवी के लिए उतरे थे। तब समूचे देश में नारा गूंजा था- लाल किले से आई आवाज, सहगल, ढिल्लों, शाहनवाज। देश में क्रांतिकारी आंदोलन बंगाल, महाराष्ट्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश में विशेष रूप से पनपा। लोकमान्य तिलक से प्रेरणा लेकर युवक क्रांतिकारी आंदोलन में उतरे। पंजाब में लाला लाजपतराय क्रांतिकारियों के प्रेरक रहे। जब साइमन कमीशन के खिलाफ आंदोलन करने पर लाला लाजपतराय पर लाठियां चलाई गई तो उन्होंने कहा था कि मेरी छाती पर लाठी का एक एक वार अंग्रेजी हुकूमत के कफन की कील साबित होगा। लाला लाजपतराय की मौत का बदला लेने के लिए भगतसिंह ने अंग्रेज सार्जेंट सैंडर्स को गोली से उड़ा दिया और बाद में आजादी के नारे लगाते हुए अंग्रेजों के बहरे कानों को सुनाने के लिए असेंबली में बम फेंका और निर्भीकता से खुद को गिरफ्तार करवाया। भगतसिंह सिर्फ शहीद नहीं, बल्कि शहीदे आजम कहलाए। उन्हें सुखदेव और राजगुरु को लाहौर जेल में अंग्रेजों ने फांसी पर लटका दिया। महात्मा गांधी चाहते तो अंग्रेजों पर जोर देकर यह फांसी रुकवा सकते थे लेकिन उन्होंने कहा कि मेरा मार्ग अलग है और क्रांतिकारियों का अलग। मैं उनके मार्ग का समर्थन नहीं करता। क्रांतिकारी होने के साथ भगत सिंह उच्च कोटि के बुद्धिजीवी थे। उन्होंने महात्मा गांधी के प्रति पूरी श्रद्धा रखते हुए उनके साथ पत्रव्यवहार भी किया था।

दुनिया के विभिन्न देशों (रूस, फ्रांस आदि) की क्रांति का इतिहास उन्होंने पढ़ा था। देश को जल्दी आजाद करने की ललक उनके नौजवान मन में थी। यह शर्मनाक है कि भगतसिंह को शहीद का दर्जा दिए जाने का कोई रिकार्ड सरकार के पास नहीं है जबकि समूचा देश उन्हें शहीदे आजम कहता है। यदि सरकार ने क्रांतिकारियों की उपेक्षा की तो इसके लिए जिम्मेदार कौन है? यदि उनकी जीवनी अनिवार्य रूप से बच्चों को पढ़ाई जाती तो राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता, लोग आजादी की कीमत जानते और देश भ्रष्टाचारियों के चंगुल में नहीं फंसता। यह अच्छा हुआ कि कहीं तो शहीद भगतसिंह के मामले में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह अधिकारिक रूप से बोले। उन्होंने जोर देकर कहा कि शहीद ए आजम किसी सरकारी रिकार्ड के मोहताज नहीं हैं।

भगत सिंह ही शहीद-ए-आजम क्यों?

भगत सिंह ने देश के लिए जो किया उसे कम करके नहीं आंका जा सकता लेकिन उनके चाहनेवाले यह भूल जाते हैं कि ऐसा करनेवाले क्रांतिकारी तो और भी कई थे। कई बार उनका महिमामंडन करने के लिए लोग गांधी को गलत ठहराने की भी कोशिश करते हैं जिसकी वजह है जानकारी का अभाव।

आधुनिक भारत की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक शख्सियतों में भगतसिंह उसी वक्त शुमार हो गए, जब २३ मार्च १९३१ को देश की आजादी के लिए उन्होंने फांसी के फंदे को चूम लिया। तब से उनके आत्म-बलिदान को लेकर लगातार लिखा जाता रहा है। यह निश्चय ही एक कृतज्ञ राष्ट्र का अपने एक महान शहीद के प्रति कृतज्ञता का सबूत है।

२४ साल की उम्र में पहुंचा युवक जहां आमतौर पर यौवन की कुदरती मांग पर गृहस्थी बसाने की इच्छा रखता है, वहां भगत सिंह जैसे युवक ने इस उम्र में पहुंच कर देश की आजादी के लिए फांसी के फंदे को अपनी नियति बना लिया।

इसके लिए वह निस्संदेह हम सबकी दृष्टि में आदर के पात्र हैं, लेकिन ऐसा करने में भगतसिंह न अकेले थे, न पहले। उनसे पहले देश की आजादी के लिए १६ साल के किशोर खुदीराम बोस, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खान, रोशन सिंह, राजेन्द्र लाहिड़ी जैसे युवक फांसी पर लटकाए जा चुके थे। यही नहीं, हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी जिसके सदस्य भगतसिंह भी थे, के प्रणेता माने जानेवाले चन्द्रशेखर आजाद भी उनकी फांसी से पहले ही इलाहाबाद के एक पार्क में शहीद हो चुके थे। देश के लिए जान देनेवाले इन सभी युवकों का जीवन, विवाह और रोमांस से अछूता रहा। २३ मार्च १९३१ को भी लाहौर जेल में जब भगतसिंह को फांसी दी गई, तब उनके साथ फांसी पर लटकनेवाले राजगुरु और सुखदेव जैसे दो और क्रांतिकारी युवक भी थे। देश की आजादी के लिए जान देनेवाले ये सभी शहीद हमारे लिए समान रूप से अभिनंदनीय हैं।

भगत सिंह के विचारों को प्रकाश में लाने के लिए जगमोहन और चमनलाल द्वारा भगत सिंह उनके साथियों के दस्तावेज नाम से जो किताब तैयार की गई है, उसमें कुछ लेख ही भगत सिंह के नाम से हैं।

भगत सिंह अपने विचारों और कामों में अकेले नहीं थे और वैसा कहने और करने में भी वह पहले नहीं थे। उनके साथ प्रतिबद्ध साथियों का दल था जिसके ज्यादातर सदस्यों ने समाजवाद का सपना देखते हुए शहादत के रास्ते को चुना इसलिए इन सबका एक जैसा महत्व है।

गांधी के साथ उनके मतभेदों को उछाल कर वे यही साबित करते हैं कि गेांधी का मुख्य काम ही था। गांधीजी का सिर्फ भगत सिंह से मतभेद नहीं था, मतभेद था तो उन सभी क्रांतिकारियों से जो देश को आजाद कराने के लिए हिंसा और आतंक में विश्वास करते थे। अहिंसा को अपने जीवन दर्शन का अभिन्न अंग माननेवाले गांधी ने इसे कभी पसंद नहीं किया। गांधी हमेशा कहते रहे कि वे अहिंसा के सवाल को आजादी से ज्यादा महत्वपूर्ण मानते हैं।

तो गांधी का अपना यह जीवन दर्शन था और इसीलिए उन्होंने हिंसा और आतंक के रास्ते पर चलनेवाले क्रांतिकारियों की देशभक्ति का आदर करते हुए भी, उनके साधनों का समर्थन नहीं किया। आज की तारीख में जब हम हिंसा बनाम अहिंसा के प्रश्न पर विचार करते हैं, तो गांधी का मार्ग ही सही साबित होता है। भगतसिंह आदि रूसी क्रांति और रूसी समाजवाद, लेनिनवाद के मॉडल पर भारत में क्रांति करना चाहते थे, लेकिन वह सब आज इतिहास की चीजें बन चुकी हैं, पूंजीवादी उपभोक्तावाद के सामने रूसी समाजवाद ने दम तोड़ दिया और चीनी समाजवाद ने पूंजीवाद को अपने अन्दर बसा लिया। आज विश्व पैमाने पर गांधी के अहिंसा-अपरिग्रह सिद्धान्तों के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है। इसलिए क्रांतिकारी की हिंसक गतिविधियों का गांधी द्वारा विरोध किया जाना सही काम था। भगत सिंह को लेकर गांधी पर जो सबसे बड़ा आरोप रहा है, वह यह कि उन्होंने भगत सिंह और उनके साथियों को फांसी की सजा से बचाने के लिए अपने प्रभाव का जरा भी इस्तेमाल नहीं किया। २३ मार्च १९३१ को जब इन्हें फांसी दी गई, उसके कुछ ही दिनों पहले यानी ५ मार्च को गांधी और वायसराय इर्विन के बीच वह समझौता हुआ था जिसके अनुसार १९३० में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान गिरफ्तार किए गए लाखों सत्याग्रहियों को जेल से छोड़ा गया था। लेकिन सच्चाई इसके विपरीत है। गांधी ने काफी कोशिश की कि इनके मृत्युदंड को किसी और सजा में बदल दिया जाए।

इसके बाद भी गांधी चुप नहीं बैठे रहे। २४ मार्च को सुबह फांसी दी जानी थी, सो गांधी ने जो उस समय दिल्ली में ही थे। वायसराय को २३ मार्च को पत्र लिखकर फिर इस विचार करने का अनुरोध किया लेकिन उनकी अपील का कोई असर नहीं हुआ।

भगत सिंह अद्‌भुत युवा थे, वे जितने साहसी थे, उतने ही समझदार भी थे

२९ सितंबर

बृजेश मिश्र (जन्म- २९ सितंबर)

बृजेश मिश्र भारत के पहले राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार और भूतपूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के प्रधान सचिव थे।

३० सितंबर

गुरुजाड़ा अप्पाराव (जन्म-३० सितम्बर)

गुरुजाड़ा अप्पाराव आधुनिक तेलुगु भाषा के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि थे। गुरुजाड़ा अप्पाराव राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत बड़े ओजस्वी कवि थे। उनकी कविताओं के अनेक संग्रह प्रकाशित हुए। उन्होंने जाति भेद, वर्ण भेद आदि का विरोध किया। धर्म के ब्रह्माचार और मूर्ति पूजा में उनका विश्वास नहीं था। कविता के साथ उन्होंने नाटकों, कहानियों और आलोचनाओं की भी रचना की।

पंडित श्रद्धाराम शर्मा (जन्म- ३० सितम्बर)

पंडित श्रद्धाराम शर्मा अथवा श्रद्धाराम फिल्लौरी एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे, किंतु एक ज्योतिषी के रूप में उन्हें वह प्रसिद्धि नहीं मिली, जो इनके द्वारा लिखी गई अमर आरती ओम जय जगदीश हरे के कारण मिली। सम्पूर्ण भारत में पंडित श्रद्धाराम शर्मा द्वारा लिखित ओम जय जगदीश हरे की आरती गाई जाती है।

दीपा मलिक (जन्म- ३० सितम्बर)

दीपा मलिक भारत की शॉटपुट एवं जेवलिन थ्रो की खिलाड़ी हैं। इसके साथ ही वे तैराकी एवं मोटर रेसलिग से जुड़ी विकलांग भारतीय खिलाड़ी हैं। भातर की दीपा मलिक ने ब्राजील के शहर रियो में पैरालम्पिक खेलों (२०१६) में शॉटपुट में रजत पदक जीता है। उन्होंने ४.६१ मीटर तक गोला फेंका और दूसरे स्थान पर रहीं। पैरालिपिक खेलों में मेडल जीतनेवाली दीपा मलिक पहली भारतीय महिला हैं।

१ अक्टूबर

एनी बेसेंट

भारत की मिट्टी से गहरा लगाव रखने वाली ब्रिटिश मूल की भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एनी बेसेंट का जन्म एक अक्टूबर १८४७ को लंदन में हुआ था।

पहले इनका नाम एनी वुड्स था। वे २१ मई, १८८९ को हिंदू धर्म से प्रभावित होकर थियोसोफिकल सोसायटी से जुड़ीं। १८९३ में वे भारत आयीं और भारत की ही होकर रह गयीं। १९१४ में वे भारतीय राजनीति में आयीं और १९१७ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष चुनी गयीं। उन्होंने होम रूल आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। महिला हितों की रक्षा व अन्याय के खिलाफ भी लड़ती रहीं। उनका निधन २० सितंबर, १९३३ को मद्रास में हुआ।

महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद

महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने एक अक्टूबर १९४५ को कानपुर देहात जिला के डेरापुर तहसील के गांव परौख में मिट्टी की एक झोपड़ी में फूलमती व मैकूलाल के वहां कनिष्ठतम संतान के रूप में जन्म लिया। इनका जन्म एक बहुत ही साधारण परिवार में हुआ। उस वक्त देश अंग्रेजों का गुलाम था। उस समय दलित होना किसी अपराध से कम नहीं था। उनका बचपन गरिबी में गुजरा। कोविंद अपनी सादगी के लिए मशहूर थे। वे बेहद साधारण परिवार में आनेवाले कोविंद में पांचवी तक की पढ़ाई कसबे की ही सरकारी स्कूल में की। उनके भाई प्यारेलाल झोंझक कस्बे में परचून की दुकान चलाते है। वो अपनी राह में आनेवाले तमाम मुसीबतों और विरोधियों को पीछे छोड़ चुके है। सबसे पहले कोविंद ने अपने गांव की गरीबी को पछाड़ा। गरीबी की वजह से बचपन में ही रामनाथ कोविंद ६ किलोमीटर स्कूल आते और पैदल ही घर वापस आते थे। गांव के सभी लोग कोविंद की दरियादिली के कायल है। गरीबी में पैदा हुए रामनाथ कोविंद आगे चलकर एक नामवंत वकील हुए। इतना बड़ा बनने के बाद भी जायदाद के नाम पर उनके पास आज भी कुछ नहीं है। एक घर था वो भी गांववालों को दान कर दिया। कोविंद आज उस मुकाम पर खड़े हो गये है कि उनकी कलम से हिन्दुस्तान की तकदीर लिखी जायेगी। उनका यह गांव भी खुद को इतिहास के पन्नों में देख रहा है। वे बीजेपी का दलित चेहरा है। कोविंद दलित बीजेपी के मोर्चा के अध्यक्ष रहे व ऑल इंडिया कोली समाज के प्रेसिडेंट रहे। कोविंद १९९४ से २००० तक और उसके बाद २००० से २००६ तक राज्यसभा सदस्य रहे। अगस्त २०१५ में बिहार के राज्यपाल नियुक्त हुए। सन १९९० में घाटमपुर से सांसद का चुनाव लड़े लेकिन वे हार गए। बाद में २००७ में यू.पी. भोगनीपुर सीट से चुनाव लड़े व चुनाव में हार गए। वे तीनों भाइयों में सबसे छोटे थे। कोविंद कोली जाति से ताल्लुक रखते हैं जिसे दलितों में अल्पसंख्याक माना जाता है। १९९४ वें सांसद बनने के बाद वे कोविंद कल्याणपुर में किराए के घर में रहते थे। वे आम आदमी का काम कर देते थे। उनसे कोई भी आदमी आसानी से मिल सकता था। आम आदमी का गैस का कनेक्शन और छोटी मोठी समस्याएं वे तुरंत दूर कर देते थे। कोविंद पढ़ने लिखने के काफी शौकिन थे। अक्टूबर २०१६ में एक कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में चौबीपुर आए थे। उस कार्यक्रम में महिलाओं को कम्बल बांटे जाने थे। कोविंद ने उस कार्यक्रम के प्रयोगता से खुद कहां कि आज महिलाओं को कम्बल नहीं देंगे उसके बाद वे स्वयं कम्बल बांटकर ही गए। संदलपुर के खानपुर गांव के परिषदीय विद्यालय से प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद कानपुर के बी.एन.एस.डी.इंटर

कालेज से इंटर व डी.ए.वी. कॉलेज कानपुर विश्वविद्यालय कानपुर से बी.कॉम., एल.एल.बी किया व आई.ए.एस. के तीसरे प्रयास में सफलता प्राप्त की परन्तु रैंक अच्छा न आने के कारण कस्टम में चयनित होने से अप्रसन्न कोविंद ने उच्च न्यायालय में वकालत शुरू कर दी।

१९७१ में दिल्ली बार काउंसिल में वकील बने। १९७७ से १९७९ तक दिल्ली उच्च न्यायालय में केन्द्र सरकार के वकील बने। १९७८ में उच्चतम न्यायालय के वकील बने। १९८० से १९९३ तक उच्चतम न्यायलय में केन्द्र सरकार की स्टैंडिंग कौंसल रहे। इस प्रकार १६ साल वकालत कीं। १९७७-७८ तक मोरारजी देसाई के निजी सचिव रहे। १९९१ में भाजपा में शामिल हुए। १९९० में घाटमपुर से चुनाव लड़े परन्तु जीते नहीं। १९९४ में उत्तर प्रदेश से राज्य सभा में सदस्य मनोनीत हुए। २००६ तक दो बार (१२ वर्ष तक) राज्य सभा के सदस्य रहे। २००२ में संयुक्त राष्ट्र में भारत का प्रतिनिधित्व किया और संयुक्त राष्ट्र महासभा को संबोधित किया। २००७ में भोगनीपुर से चुनाव में पराजित हुए।

राज्यसभा में ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के लिए बुनियादी सुविधाओं के विकास पर जोर दिया। उत्तर प्रदेश व उत्तराखंड के स्कूल भवनों के निर्माण में योगदान दिया। दिल्ली की फ्री लीगल एड सोसायटी के माध्यम से समाज के वंचितों को नि:शुल्क कानूनी सलाह देते रहे। १९९८ से २००२ तक भाजपा दलित मोर्चा और अखिल भारतीय कोली समाज के अध्यक्ष रहे। कोलकाता के इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट के बोर्ड ऑफ गवर्नर्स के सदस्य रहे।

२०१५ में बिहार प्रदेश के राज्यपाल बनाया गया तो नीतीश व लालूप्रसाद यादव ने विरोध किया। छात्र जीवन में वे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यकों और महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़ते रहे। ३० मई १९७४ को सविता कोविंद जो टेलीफोन विभाग में कार्यरत थीं, से विवाह कर प्रशांत व स्वाति के पिता बने।

रामनाथ कोविंद लखनऊ स्थित डॉ. बी.आर. आम्बेडकर विद्यापीठ के बोड ऑफ मैनेजमेंट के सदस्य भी रह चुके है। उनके व्यक्तित्व की खास बात यह है उन्होंने अपने पैतृत घर को बारात घर और सामुदायिक भवन के लिए दान कर दिया।

हमारे देश के अब तक के सारे राष्ट्रपतियों को देखें तो शैक्षणिक योग्यता, सामाजिक या राजनीतिक पृष्ठभूमि का कोई पैटर्न नहीं दिखता। हमारे यहां सर्वपल्ली राधाकृष्णन जैसे विराट बौद्धिक व्यक्तित्व राष्ट्रपति हुए तो ज्ञानी जैल सिंह जैसे चौथी पास कम पढ़े-लिखे भी राष्ट्रपति बने। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, प्रणव मुखर्जी और आर. वेंकटरामन जैसे महान राजनेता भी हुए और नीलम संजीव रेड्डी, वी.वी. गिरी और शंकर दयाल शर्मा जैसे साधारण लोग भी राष्ट्रपति बने। डॉ. जाकिर हुसैन जैसे सराहे गए मुस्लिम राष्ट्रपति और फखरुद्दीन अली अहमद जैसे मुस्लिम राष्ट्रपति भी हुए, जिन्हें भुलाया भी जा सकता है। हमने दो पेशेवर बड़े नेता विदेश सेवा से आए के. आर. नारायणन और साइन्स ब्यूरोक्रेट एपीजे अब्दुल कलाम को भी राष्ट्रपति बनते देखा।

हम ये बात गर्व से कह सकते हैं कि इनमें ऐसा कोई भी नहीं है, जो राष्ट्रपति पद के लिए जरूरी गरिमा बनाये न रख सका हो। इनमें दो अपवाद जरूर हैं- फखरुद्दीन अली अहमद ने इंदिरा गांधी सरकार के अध्यादेश पर बिना पढ़े हस्ताक्षर किये थे और ज्ञानी जैलसिंह ने अपने दफ्तर को राजीव गांधी के विरुद्ध इस्तेमाल होने दिया।

पिछले ५० सालों में हमारे देश में पैदा हुए लोग और नई सदी के लोगों को भी शायद ही याद हो कि देश में वी. वी. गिरी नामक राष्ट्रपति हुए बावजूद इस तथ्य के कि वे इंदिरा गांधी के कांग्रेस विभाजन में महत्वपूर्ण मोहरे की तरह इस्तेमाल किये गए। फखरुद्दीन अली अहमद भी गलत वजहों से याद आते हैं। यादगार राष्ट्रपतियों में हमें सबसे पहले कलाम याद आते

हैं। बिहार में उनके अहम हस्तक्षेप और कुछ न्यायिक नियुक्तियों पर दिखाई दृढ़ता के कारण ही नहीं बल्कि गुजरात दंगों के बाद उनके व्यक्तित्व के शांतिदायक प्रभाव के कारण। यह वो दौर था जब शल्यचिकित्सा पराक्रम के कारण सीमा पर युद्ध जैसी परिस्थितियाँ भी थीं। वेंकटरामन और शंकर दयाल शर्मा ने राजनीतिक अस्थिरता और अल्पकालिक सरकारों के दौर में देश को व्यवस्था की मजबूती का भरोसा दिलाया। नारायणन ने इस पद की नैतिक और बौद्धिक गरिमा कुछ इस तरह बढ़ाई, जिसकी तुलना राधाकृष्णन से की जा सकती है। वाजपेयी सरकार के एक वोट से गिर जाने और काम चलाऊ सरकार के रूप में कारगिल जंग लड़ने के दौर में नारायणन का आत्मविश्वास देखने लायक था।

हमारे राष्ट्रपतियों के इतिहास का संबंध शैक्षणिक योग्यता, राजनीतिक रिकॉर्ड, जाति, धर्म अथवा सामाजिक पृष्ठभूमि से नहीं है। संक्षेप में कहें तो कभी किसी राष्ट्रपति के प्रदर्शन या उसकी विरासत का आकलन उसके सीवी से नहीं हुआ। असल में यह अलग ही गुण था, जैसे कि कलाम, वेंकट रामन और नारायणन का अपना कद था जबकि वी.वी. गिरी, फखरूद्दीन अली अहमद और प्रतिभा पाटिल में उसका अभाव था। संविधान की व्यवस्था में राष्ट्रपति का पद राज्यपाल की तुलना में भी कम महत्व का है। कम से कम एक राज्यपाल राजनीतिक खेल तो खेल सकता है और राष्ट्रपति शासन के दौरान अपने अधिकार भी प्रयोग में ला सकता है। देश के निर्माताओं की कामना थी कि राष्ट्रपति संरक्षक और संविधान के प्रतीक के रूप में काम करे। बावजूद सारी राजनीति के राष्ट्रपति के रूप में कोविंद पूरे राष्ट्र के सम्मान के हकदार हैं। उम्मीद है कि वे सारे शंकालुओं को चकित कर देंगे।

ज्ञानी जैल सिंह की स्कूली पढ़ाई बेशक बहुत कम थी, मगर उनकी हाजिरजवाबी और उनकी राजनीतिक समझ जबरदस्त थी। फरवरी १९८७ में उस वक्त पाकिस्तानी राष्ट्रपति जिया उल हक भारत में आये थे, वे क्रिकेट मैच देखने आए थे। लेकिन असल में वे ऑपरेशन ब्रास टैक्स की पृष्ठभूमि में उस वक्त के हमारे प्रधानमंत्री राजीव गांधी को शांत करने आए थे। तब उन्होंने हमारे राष्ट्रपति जैल सिंह को चुटकी लेते हुए कहा था कि अब उनके देश में भी जुनेजो के रूप में एक प्रधानमंत्री है और जैल सिंह की तरह वे भी नाम मात्र के राष्ट्रपति हैं। उस वक्त उसके जवाब में जैल सिंह ने कहा, एक फर्क है कि मैं इस पद पर कुछ समय तक हूं और आप जब तक चाहें राष्ट्रपति की कुर्सी पर बैठे रह सकते हैं। उसी साल जुलाई में ज्ञानी जैल सिंह राष्ट्रपति पद से मुक्त हो गये, पर पाकिस्तान में जिया उल हक ही राष्ट्रपति तब तक बने रहे, जब तक उनका विमान दुर्घटना में निधन हो गया।

भारत के १४ वें महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद (७१) जिस प्रकार फर्श से फलक के सितारे बने, वह भारत की मजबूत होती लोकतांत्रिक व्यवस्था का प्रतीक है। भारत की स्वतंत्रता के ७० वर्ष पार होते-होते वह स्थिति आ गई जिस तक विरोधी व विपक्ष दल को सत्ता में आकर राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। कोविंद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक रहे पहले राष्ट्रपति है। इनके राजनीतिक सफल में कई मोड़ आए, जिसमें इन्होंने कई तरह की भूमिका निभायी है। यह एक समाजसेवी, एक वकिल और एक राज्यसभा सांसद के तौर पर काम किए हैं। अगर इनकी पृष्ठभूमि देखी जाए तो वे एक बहुत ही साधारण इन्सान रहे है।

महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) की ओर से प्रत्याशी रहते हुए ६५.६५ प्रतिशत वोट प्राप्त कर वर्षों तक सत्ता में रही कांग्रेस के नेता बाबू जगजीवनराम की सुपुत्री श्रीमती मीरा कुमार जो कांग्रेस व संयुक्त विपक्ष की प्रत्याशी थीं, ३४.३५ प्रतिशत प्राप्त पर पराजित कर दिया।

हालांकि महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद को मिले ६५.६५ प्रतिशत मत अच्छे माने जा सकते हैं परन्तु महामहिम

राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद निर्वतमान राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी से पीछे ही रहे। १९७४ में कांग्रेस के फखरूद्दीन अली अहमद को ५६.२३ प्रतिशत मत मिले थे।

वर्ष १९९७-२००२ में के. आर. नारायणन दलित वर्ग से थे और कांग्रेस के द्वारा राष्ट्रपति बनाया गया था। हालांकि वर्तमान में जातिवाद को सभी राजनीतिक दल अस्वीकार करते हैं परन्तु जातिवादी वोट बैंक की विचारधारा सभी राजनीतिक दलों ने पुष्ट की है। स्वतंत्रता के ७० वर्ष के जीवन में जातिवादी राजनीति का चिन्तन न केवल विदा हो पाया अपितु उसमें थोड़ी बहुत मजबूती ही आयी है।

एक विचार और इस चुनावी वातावरण में तैर गया, वह था कि जिस प्रकार मुख्तार अब्बास नकवी के भाजपा में रहने से मुसलमानों को कोई फायदा नहीं हो पाया, वैसे ही महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद के बनने से दलितों को कोई फायदा नहीं हो पायेगा। किसी भी जाति व संप्रदाय विशेष को विशेष फायदे की सोच ही बहुत खतरनाक व त्रुटिपूर्ण सोच होती है। केवल एक जाति व संप्रदाय का चिन्तन अन्य जातियों व संप्रदाय के साथ भारी अन्याय होता है।

देश में सरकारी नीति व रीति इस प्रकार की बने कि देश की एक अरब ३५ करोड़ जनता को लाभ हो। जाति की बात करना व जाति व संप्रदाय को फायदा पहुंचाना अन्य जातियों व संप्रदाय के अधिकारों का हनन होता है।

नये महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद से यही उम्मीद की जा रही है कि जिस प्रकार उनका बचपन भारी गरीबों में बीता वैसा बचपन भारत के अन्य किसी बच्चे का न बीते। वे पूरे भारत के केवल गरीबों का ही चिन्तन न करें अपितु अन्याय में घिरे अमीरों का भी चिन्तन करें, तभी राजधर्म का पालन होगा। सर्वे भवन्तु सुखिन: का सूत्र ही राजधर्म है। महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद भारत की आत्मा को जानते हैं क्योंकि उन्होंने गरीबी को जिया है और अमीरी को भी जिया है। वे गरीबों के दर्द व अमीरों की परेशानी दोनों को ही बराबर व भली प्रकार जानते हैं।

महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद कहते हैं कि बगैर थके सेवा करना भारत की परंपरा है। वे भारत के एक-एक नागरिक के अधिकारों का चिन्तन करेंगे, किसी एक वर्ग, जाति व संप्रदाय का चिन्तन नहीं। भारत व भारत की अर्थव्यवस्था को फलक तक पहुंचाने में उनकी व्यापक सोच कारगर साबित होगी, यह आशा की जानी चाहिए। तभी भारत से वैमनस्यकारी व विद्वेष फैलानेवाली जातिवादी राजनीति विदा हो सकेगी।

राष्ट्रपति की शपथ लेने के बाद कोविंद ने देश को सम्बोधित किया और कहा- जिस पद का गौरव डॉ. राजेंद्र प्रसाद, सर्वपल्लि राधाकृष्णन, एपीजे अब्दुल कलाम जी और प्रणब मुखर्जी ने बढ़ाया है, उस पद पर रहना मेरे लिए गौरव की बात और जिम्मेदारी का एहसास करा रहा है। मेरे लिए ये भावुक क्षण है। जब मैं अपने पैतृक गांव में रहता था घर कच्चा था, मिट्टी की दीवारें थी, फूस की छत थी तब काफी तेज बारिश होती थी, तो हम सब भाई बहन दीवार के किनारे खड़े होकर बारिश के रूकने का इंतजार करते थे। आज देश में ऐसे कितने ही रामनाथ कोविंद होंगे, जो भीग रहे होंगे कोई खेती कर रहा होगा, शाम को भोजन खाना है इसके लिए प्रबंध कर रहे होंगे। मैं उन सभी से कहना चाहता हूं कि परौख गांव का ये रामनाथ कोविंद उनका प्रतिनिधि बनकर जा रहा है।

मुझे ये जिम्मेदारी दिया जाना देश के ऐसे हर व्यक्ति के लिए संदेश है जो ईमानदारी और प्रामाणिकता के साथ अपना काम करता है। इस पद पर चुना जाना ना ही मेरा लक्ष्य था और ना ही मैंने सोचा था। लेकिन अपने समाज और देश के लिए अथक सेवा भाव मुझे यहां तक ले आया है, यही सेवा भाव का ही नतीजा है। यही सेवा भाव हमारे देश की परंपरा भी है, राष्ट्रपति के पद पर मेरा चयन भारतीय लोकतंत्र का प्रतीक है। इस पद की गरिमा बनाए रखना मेरा पहला लक्ष्य है,

संविधान की मर्यादा को बनाए रखना मेरा कर्तव्य है। मैं देश के सभी लोगों को नमन करते हुए ये विश्वास दिलाता हूं कि मैं सर्वे भवन्तु सुखिन: के भाव के साथ मैं निरंतर लगा रहूंगा। मैं देश के लोगों का, सभी राजनीतिक दल और आप सभी का बहुत बहुत आभार व्यक्त करता हूं।

उन्होंने कहा- राष्ट्र के निर्माण में भारत के हरेक नागरिक की बराबर भूमिका है। खेतों में काम करनेवाली महिलाएं, पर्यावरण की रक्षा कर रहे आदिवासी, किसान, वैज्ञानिक, स्टार्टअप कारोबारी से लेकर सुरक्षाबल तक, सभी राष्ट्र निर्माता है। वह छोटे से एक गांव से आए हैं। वह मिट्टी के घर में पले-बढ़े। जाहिर है, उन्होंने न सिर्फ अपनी जड़ों को याद रखा है बल्कि उसके प्रति उनमें सम्मान का भाव है। उन्होंने विनम्रतापूर्वक संकेत करना चाहा है कि हमारी व्यवस्था हर व्यक्ति को आगे बढ़ने के अवसर उपलब्ध कराती है। अगर किसी नागरिक में असाधारण कार्य करने का जज्बा हो और वह जीतोड़ मेहनत करने के लिए तैयार हो, तो वह शिखर पर पहुंच सकता है। रामनाथ कोविंद का जीवन इसका एक उदाहरण है। आज उन्हें देखकर समाज का वंचित तबका खुद को गौरवान्वित महसूस कर रहा होगा। न जाने कितने लोग मन ही मन कोविंद से प्रेरित हो रहे होंगे। उनका स्वाभिमान बढ़ा होगा। लोकतंत्र के लिए यह एक बड़ी बात है। महामहिम ने इस बात पर जोर दिया कि हाशिए के लोगों को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाना हम सबका फर्ज है। उन्होंने कहा कि हमें इस बात का लगातार ध्यान रखना चाहिये कि हमारे प्रयास से समाज की आखिरी पंक्ति में खड़े व्यक्ति के लिए और गरीब परिवार की बेटी के लिए भी नई संभावनाओं और नए अवसरों के द्वार खुलें। हमारे प्रयत्न आखिरी गांव के आखिरी घर तक पहुंचने चाहिए। इसमें न्याय प्रणाली के हर स्तर पर, तेजी के साथ, कम खर्च पर न्याय दिलानेवाली व्यवस्था को भी शामिल किया जाना चाहिए। कुछ समय पहले तक कोविंद की चर्चा एनडीए से जोड़कर हो रही थी, पर अब वह तमाम दलगत विभाजन से ऊपर उठकर हमारी व्यवस्था के अभिभावक के रूप में सामने आए हैं और देश उनसे यही अपेक्षा रखेगा कि वह अभिभावक की तरह ही हरेक नागरिक की आकांक्षा का ध्यान रखें। उन्होंने सबको साथ लेकर चलने की बात कही भी है। उन्होंने कहा है कि हमें सभी समस्या का हल बातचीत से करना होगा। यह सही है कि राष्ट्रपति पद की अपनी सीमा होती है, लेकिन पूर्व राष्ट्रपतियों ने अपनी टिप्पणियों से सरकार को हमेशा ही उसके कर्तव्यों की याद दिलाई। उम्मीद की जानी चाहिए कि नए राष्ट्रपति भी सरकार को नागरिकों खासकर समाज के कमजोर वर्ग के प्रति उसके दायित्वों को लेकर सचेत करते रहेंगे। उनकी विनम्रता और सहज व्यवहार से हर नागरिक उनके प्रति आत्मीयता का भाव महसूस करता है। आशा है यह भाव आगे भी बना रहेगा।

भारत के १४ वें राष्ट्रपति के रूप में २५ जुलाई को औपचारिक रूप से हिन्दुस्तान को रामनाथ कोविंद के रूप में दूसरा दलित महामहिम मिल गया है। पूर्व राष्ट्रपति के.आर. नारायणन के बाद वे दलित वर्ग से दूसरे ऐसे चेहरे हैं जो देश के सर्वोच्च पद पर पहुंचे। इस प्रकार अब दलित और मुसलमान इस मायने में बराबरी पर कहे जा सकते हैं। नए महामहिम ने खुद के राष्ट्रपति भवन में पहुंचने को दुनिया के दूसरे सबसे बड़े लोकतंत्र की महानता बताया है। अब से एक कच्चे घर में पला-बढ़ा, समाज की उपेक्षा सहनेवाला गरीब घर का बेटा अब भारत के लोगों की उपेक्षा का नहीं वरन अपेक्षा का पात्र होगा।

यूं इस सबसे बड़े पद को दलित, अल्पसंख्यक या अगड़े-पिछड़े की सीमा में बांधना उचित नहीं है। वैसे भी यह पद सीधे राजनीति या चुनाव से नहीं अपितु अप्रत्यक्ष रूप से और सत्तारूढ़ दलों के अपने दलहित के नजरिए से चुना जाता है। एक दलित अब दलहित से ऊपर उठकर कार्य करेगा और उसके लिए अब दलहित नहीं अपितु हर हाल में देशहित ही

सर्वोपरि रह जाएगा। बिना यह सोचे कि उसे किस किस में चुना है और किसने उसका विरोध किया था उसे कार्य करना है। अब तक इस पद पर पहुंचे किसी एक ने नहीं, हर एक ने इसी परंपरा का शानदार और गरिमा पूर्ण ढंग से पालन किया है और ऐसी कोई वजह नहीं है कि अब तक निष्पक्ष तरीके से काम करनेवाले, विद्वान वकील, कानून के जानकार, राजनेता, सांसद और राज्यपाल रह चुके रामनाथ कोविंद की नीयत या काबिलियत पर शक किया जाए। बेशक वे उस पद के सर्वथा योग्य हैं।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद से इस समृद्ध परंपरा की शुरुआत हुई और डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, जाकिर हुसैन, डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम जैसे प्रकांड विद्वान व वैज्ञानिक इसमें शामिल हुए तो वीवी गिरी, फखरुद्दीन अली अहमद, ज्ञानी जैल सिंह, नीलम संजीव रेड्डी, शंकर दयाल शर्मा, आर के वेंकटरमन व प्रणव मुखर्जी जैसे राजनेता भी इसके हिस्सा रहे हैं और इस श्रृंखला में दलित केआर नारायणन हैं तो महिला प्रतिभा देवी सिंह पाटिल का नाम भी शामिल है। कुल मिलाकर भारत ने अब तक करीब-करीब हर क्षेत्र से देश का सर्वोच्च नायक चुना है और रामनाथ कोविंद इसी श्रृंखला के नवीनतम नगीने हैं। २० जुलाई को परिणाम आते ही सारा देश उनका स्वागत कर चुका है और अब शपथ लेने के बाद उनका दायित्वकाल शुरू हो गया है। एक तरह से एक और नए युग का आरंभ करेंगे अब देश के नए महामहिम।

एक बात और राष्ट्रपति पद के बारे में आम आदमी के मन जहां देश के सबसे उच्च व शक्तिशाली व्यक्ति का ख्याल आता है वहीं राजनीति के कच्चे जानकार मानते हैं कि राष्ट्रपति भारत में महज एक रबर स्टॅम्प है और वह अपने संवैधानिक अधिकारों को केवल मंत्रिमंडल की संस्तुति पर ही कर पाता है यानी राष्ट्रपति केवल सजावटी पद मात्र है पर ऐसा है नहीं। वह लोकतांत्रिक मर्यादाओं में बंधा जरूर रहता है, मगर उसे स्वविवेक के आधार पर बहुत सारे अधिकार प्राप्त भी हैं जिनका उपयोग वह राष्ट्रीय संकट काल या संवैधानिक पेचीदगियां पैदा होने पर करता है। अब चूंकि रामनाथ कोविंद खुद एक संविधान विशेषज्ञ हैं सो उन्हें अपनी ताकत व मर्यादाओं का भी अच्छे से ज्ञान व भान है। उस दृष्टि से वे केवल गरिमा या अनपेक्षित हस्तक्षेप से दूर ही रहेंगे जैसे कि राज्यपाल रहते हुए सदा रहे हैं।

रामनाथ कोविंद ने जिस तरह से अपने निर्वाचन के तुरंत बाद अपनी भावनाएं व्यक्त की थीं उससे साफ लग रहा है कि अपनी पृष्ठभूमि को न तो भूले हैं और न ही भूलना चाहते हैं और उन्होंने जिस तरह कहा कि वे राष्ट्रपति भवन में एक गरीब के बेटे की हैसियत से पहुंचे हैं और हर तरह से गरीबों के हितों की रक्षा करेंगे, वह दलित और वंचित तबके के लोगों के लिए आश्वस्तकारी कहा जा सकता है। आज वे बेशक नरेंद्र मोदी और भाजपा के प्रति कृतज्ञता से भरे हैं जिन्होंने उन्हें उस पद तक पहुंचाने के लिए चुना जिसकी कल्पना भी शायद उन्होंने नहीं की होगी। महज १९९१ में राजनीति में भाजपा का दामन थामनेवाले रामनाथ १२ वर्ष तक राज्यसभा में रहे तो उससे पहले मोरारजी देसाई के निजी सचिव भी रहे यानी उन्होंने पक्के गांधीवादी को भी और भाजपा को भी दोनों को बहुत नजदीक से देखा परखा है। जब कभी निर्णय लेने की घड़ी आई तो उसका लाभ उन्हें मिलेगा।

रामनाथ कोविंद कभी भी किसी गहरे विवाद में नहीं रहे, न ही उन पर किसी घोटाले या पक्षपात के आरोप लगे हैं। निर्विवाद छवि, सौम्य व मृदुल व्यवहार, उच्च शिक्षित, मेहनतकश की पृष्ठभूमि, गरीब व गरीबी की गहरी समझ, देश की समस्याओं का ज्ञान, शिक्षा के प्रति अनुराग और परौंख जैसे छोटे से गांव से रायसीना हिल तक का सफर हमारे नए महाहिम की समृद्ध पुंजी है। अब जब वे हर सुख साधन से परिपूर्ण राष्ट्रपति भवन में जा पहुंचे हैं तो देश यह भी देखेगा कि वे महज उसकी चारदीवारी में रहकर अपना कार्यकाल पूरा करते हैं या फिर लीक व परंपराएं तोड़ते हुए पूर्व राष्ट्रपति

कलाम की तरह विवादों से दूर रहकर एक नई छवि गढ़ते हैं।

चन्दन सिंह गढ़वाली (निधन- १ अक्टूबर)

चन्दन सिंह गढ़वाली भारत के क्रांतिकारियों में से एक थे। चन्दन सिंह गढ़वाल रेजीमेंट के प्रमुख थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान जब उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत में अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व में ब्रिटिश विरोधी संघर्ष जोरों पर था, तो उसके दमन हेतु ब्रिटिश सरकार ने चन्दन सिंह की गढ़वाल रेजीमेंट को नियुक्त किया। आन्दोलन के दौरान जब अंग्रेज अधिकारियों ने अहिंसक प्रदर्शन कर रहे आन्दोलनकारियों पर गोलियाँ चलाने की आज्ञा दी, तब चन्दन सिंह ने गोली चलाने से इंकार कर दिया। इस पर उन्हें पदच्युत करके दण्डित किया गया।

प्रताप सिंह कैरों (जन्म- १ अक्टूबर)

प्रताप सिंह कैरों प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, पंजाब के भूतपूर्व मुख्यमंत्री एवं प्रमुख नेता थे। उस समय पंजाब के अन्तर्गत हरियाणा और हिमाचल प्रदेश भी थे। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के लिये अमरीका में गदर पार्टी के नाम से जो संस्था स्थापित हुई थी, उसके कार्यों में सक्रिय रूप से भाग लिया। भारत वापस आने पर १८९२६ ई. में वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल हुए और तब से स्वतंत्रता प्राप्त होने तक कांग्रेस के आंदोलनों में निरंतर भाग लेते रहे और जेल गए।

ए.के. गोपालन (जन्म- १ अक्टूबर)

ए.के. गोपालन भारत के स्वतंत्रता सेनानियों में से एक और केरल के प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता थे। जब महात्मा गांधी ने सत्याग्रह आंदोलन शुरू किया, तब ए.के. गोपालन ने अध्यापक का पद त्याग दिया। वर्ष १९३४ में कांग्रेस समाजवादी पार्टी बनने पर वे उसके सदस्य बन गए थे। बाद में उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर ली। १९६४ में जब कम्युनिस्ट पार्टी का विभाजन हुआ तो गोपालन ने कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) में रहना पसन्द किया। अपनी आत्मकथा सहित उन्होंने कई पुस्तकें भी लिखी हैं।

एस. सुब्रह्मण्य अय्यर (जन्म- १ अक्टूबर)

सर सुब्बियर सुब्रह्मण्य अय्यर की गणना अपने समय के दक्षिण भारत के प्रमुख नेताओं में होती है। प्रादेशिक कौंसिल के सदस्य के रूप में, वकील के रूप में, एक जज के रूप में, कांग्रेस जन के रूप में, शिक्षाविद और सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में लगभग ३० वर्षों तक वे सार्वजनिक जीवन में व्यस्त रहे। वे एस.मनी अय्यर के नाम से अधिक प्रसिद्ध थे।

२ अक्टूबर

१) लालबहादुर शास्त्री

भारत मां का लाल-लाल बहादुर शास्त्री आदर्श प्रधानमंत्री

भारत के लाल स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री ने देश की बागडोर ऐसे समय में संभाली जब प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के निधन के बाद देश कुशल नेतृत्व के संकट से जूझ रहा था। दूसरे प्रधानमंत्री के रूप में लाल बहादुर शास्त्री ने राष्ट्र को एक गरिमामय नेतृत्व प्रदान कियां लाल बहादुर शास्त्री का जन्म दो अक्टूबर १९०४ को उत्तर प्रदेश के मुगलसराय में एक गरीब परिवार में हुआ। बचपन से ही संघर्षशील रहे शास्त्री जी ने देश की आजादी की लड़ाई में जमकर भाग लिया और आजादी के बाद भारतीय राजनीति प्रोफेसर आनंद कुमार ने बताया कि भारतीय राजनीति में समय बीतने के साथ ही अपने अद्भुत मानवीय गुणों के कारण शास्त्री जी पहले से कहीं अधिक प्रभावी और आकर्षक राजनेता के तौर पर याद किये जाने लगे हैं। प्रधानमंत्री के पद पर बैठनेवाले भारतीयों की कतार में सादगी, सदाचार, सेवा और शिष्टाचार के चार आभूषणों से सुसज्जित लाल बहादुर शास्त्री सबसे प्रभावशाली और सम्मानित प्रधानमंत्री नजर आते हैं, जो अपने आप में अतुलनीय हैं। उन्होंने कहा कि सत्ता और भ्रष्टाचार के बीच चोली दामन के साथ के इस दौर में लाल बहादुर शास्त्री का उज्ज्वल चरित्र और सदाचार उन्हें बुलंदी के एक अलग मुकाम पर पहुंचाते हैं और लोग उनमें एक आदर्श प्रधानमंत्री की छवि देखते हैं। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में अंतर्राष्ट्रीय मामलों के प्रोफेसर पुष्पेश पंत ने बताया कि शास्त्री जी का कार्यकाल काफी छोटा था, लेकिन उस छोटे से समय में ही उन्होंने विदेश नीति को एक नयी दिशा और गति प्रदान की। पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध में उन्होंने ऐसे कदम उठाए जो काफी प्रशंसनीय रहे। इससे लगा कि भारत बल प्रयोग करने में नहीं हिचकेगा और इसके बाद जय किसान के साथ-साथ जय जवान भी कहा जाने लगा। उन्होंने बताया कि इसके अलावा शास्त्रीजी को दो और बातों के लिए याद किया जाएगा। पहला, प्रधानमंत्री सचिवालय की स्थापना और दूसरा परमाणु को अस्त्र के रूप में प्रयोग को उन्होंने नयी दिशा दी। इससे पहले भारत परमाणु का प्रयोग शांति के साथ विकास में करता था। शास्त्री जी ने बचपन में काफी कठिनाइयों का सामना किया। शायद यही वजह थी कि उन्होंने जीवन में कभी भी हार मानना नहीं सीखा। उनके शासन काल में पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध में उन्होंने उसे करारी शिकस्त दी। भारत पाकिस्तान युद्ध के बाद शांति समझौते के लिए ताशकंद गये तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री का ६१ वर्ष की आयु में दिल का दौरा पड़ने के कारण ११ जनवरी १९६६ को निधन हो गया। वह भारत के एक मात्र प्रधानमंत्री हैं, जिनका कार्यकाल के दौरान निधन हुआ।

शहर बनारस, बनारस में हरिश्चन्द्र हाईस्कूल के स्काउट मास्टर श्री निष्कामेश्वर मिश्र ने बच्चों को आगरा का ताजमहल दिखाने की योजना बनाई। आगरा जाने के लिए प्रति छात्र २० रुपये इकट्ठा किये गये। कक्षा में सभी बच्चों ने अपने अपने, बीस-बीस रुपये जमा कर दिये।

एक छात्र जिसे सभी नन्हें कहा करते थे, ने बीस रुपये जमा नहीं किये। श्री मिश्र जानते थे कि यह बच्चा मेधावी और अध्ययनशील है। नन्हे के पिता का स्वर्गवास हो गया है। कुछ विशेष लगाव था उन्हें नन्हे के प्रति।

मिश्र जी ने नन्हें से पूछा बेटा नन्हें तुम तो किसी से पीछे नहीं रहते, फिर इस बार २० रुपये जमा करने में पीछे क्यों? गुरुजी, मैं आगरा नहीं जाना चाहता। नन्हे बोला।

सभी तो जा रहे हैं, फिर तुम क्यों नहीं? जी मेरा मन नहीं करता। क्या मां ने मना कर दिया? नहीं तो, मां भला क्यों मना करने लगी। गुरु जी ने बड़े प्यार से नन्हे के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा। नन्हें, क्या पैसे नहीं है? गुरुजी, पैसे तो हैं। लाओ मुझको दिखाओ।

नन्हें ने एक पैसा निकालकर गुरु जी के हाथ पर रखा और मुंह फेरकर आंसुओं को रोकने की असफल चेष्टा करने लगा। गुरुजी का गला भी भर गया और आंखें भी छलछला उठी। गुरुजी ने कहा, नन्हें तू महान हे। मैं तेरे दिल की बात न जान सका। तू निश्चित ही एक दिन बड़ा आदमी बनेगा। माह का अन्तिम सप्ताह है। जब वह घर पहुंचे तो उनका पोता बाबाजी आ गये, बाबाजी आ गये कहते हुए उनकी ओर दौड़ा। बाबा ने प्यार से उसे गोदी में उठाया और उसके मुख पर चुंबन जड़ दिया। बाबा ने कहा, जाओ बेटे, जाकर पढ़ो। लेकिन क्या बेटे, बताओ। मुझे एक स्लेट चाहिए, बाबाजी।

ठीक है, तीन चार दिन में अपने राजा बेटे को एक स्लेट ला देंगे। परन्तु बाबाजी, मुझे तो आज ही चाहिए।

आज, कुछ सोचने के अंदाज में क्या सोचने लगे बाबा। यही कि अभी पहली तारीख के तीन-चार दिन हैं। तनख्वाह भी अभी चार दिन बाद मिलेगी। तभी.. क्या आप जानते हैं कि पहली घटनावाला बालक नन्हें और दूसरी के बाबाजी कौन हैं? ये दोनों एक ही हैं। इनका नाम था लाल बहादुर शास्त्री। ये हमारे देश के दूसरे प्रधानमंत्री थे। शास्त्रीजी ने अपना जीवन यापन बड़ी ही सादगी से किया। श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म वाराणसी से छह किलोमीटर दूर २ अक्टूबर सन १९०४ को हुआ था। बाल्यकाल में ही उनके पिता का निधन हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अध्ययन में जुटे शास्त्रीजी, जीवन में प्रगति पथ पर आगे बढ़े। भारत के प्रधानमंत्री पद को भी सुशोभित किया। वे जून १९६४ से मात्र १८ माह की भारत के प्रधानमंत्री रहे। इसी बीच भारत पाक युद्ध भी हुआ। इन्होंने देश को एक नारा दिया जय जवान, जय किसान। एक बार पुरुषोत्तम दास टण्डन ने कहा था शास्त्रीजी सच्चे अर्थों में स्वयं उन्नति करनेवाले व्यक्ति हैं।

४६ वर्ष बाद भी लाल बहादुर...

कुछ मौतें ऐसी होती हैं जो ताउम्र रहस्य बनी रहती हैं- गुदड़ी के लाला बहादुर शास्त्री की ताशकंद में मौत ऐसा ही एक रहस्य है जो आज भी रहस्य ही बना हुआ है। सरकार गोपनीयता एवं विदेशी संबंधों का हवाला देकर इसे उजागर करने से इंकार कर रही है, लेकिन उनके परिवार के सदस्य इस रहस्य पर से पर्दा उठाने की मांग कर रहे हैं।

लाल बहादुर शास्त्री के पुत्र एवं कांग्रेस नेता अनिल शास्त्री ने कहा कि मेरी मां (ललिता) को शुरू से ही संदेह था कि उनका (शास्त्री जी का) निधन स्वभाविक नहीं है। इस मामले में जांच में काफी विलम्ब हो चुका है लेकिन अभी भी काफी कुछ किया जा सकता है। सच तो बाहर आना ही चाहिए। उन्होंने संदेह जताया कि उस समय शास्त्रीजी की देखरेख में लापरवाही बरती गई क्योंकि यह कैसे संभव है कि प्रधानमंत्री के कमरे में टेलीफोन और चिकित्सा सुविधा नहीं हो। उन्होंने कहा कि ७० के दशक में जनता पार्टी की सरकार ने आश्वासन दिया था कि सच सामने लाया जायेगा। लेकिन तत्कालीन गृहमंत्री चरण सिंह ने उस समय कहा था कि ऐसे कोई प्रमाण नहीं है। अनिल शास्त्री ने कहा कि इस मामले में आज की तारीख में शास्त्री जी के साथ कई लोग जीवित नहीं हैं। उनके चिकित्सक रहे डॉ. चुग के पूरे परिवार की दिल्ली

के रिंग रोड़ में सड़क दुर्घटना में मौत हो चुकी है। अनिल शास्त्री ने कहा कि उनके साथ के मास्टर अर्जन सिंह और शास्त्री जी के संयुक्त सचिव रहे सी.पी. श्रीवास्तव अभी जीवित हैं जो अब विदेश में रहते हैं। श्रीवास्तव ने इस विषय पर एक पुस्तक लाइफ ऑफ ट्रूथ इन पॉलिटिक्स लिखी है। उन्होंने कहा कि ऐसे लोगों में वरिष्ठ पत्रकार कुलदीप नैय्यर भी शामिल हैं जो उनके साथ ताशकंद गए थे। उनको शास्त्रीजी के निधन की परिस्थितियों पर गंभीर संदेह है और इसका उल्लेख उन्होंने अपनी पुस्तक में भी किया है। उन्होंने कहा कि इन सभी परिस्थितियों का खुलासा होना चाहिए और संदेह के बादल छंटने चाहिए। शास्त्री ने कहा कि कुछ समय पहले सूचना के अधिकार कानून के तहत इस बारे में मांगी गई जानकारी के जवाब में सरकार ने कहा था कि ये दस्तावेज सार्वजनिक नहीं किये जा सकते क्योंकि इससे विदेश संबंध प्रभावित होंगे और यह देशहित में नहीं होगा।

उन्होंने कहा कि कम से कम दस्तावेज तो सार्वजनिक किये ही जा सकते हैं, इसमें कोई हर्ज नहीं होना चाहिए। सूचना के अधिकार के तहत अनुज धर ने शास्त्री जी के निधन के बारे में जानकारी मांगी थी। सरकार से जानकारी नहीं मिलने के बाद अब अनुज धर एंड दी सिक्रेसी डॉट कॉम ब्लॉग के माध्यम से अभियान चला रहे हैं। गौरतलब है कि ११ जनवरी १९६६ को लाल बहादुर शास्त्री की तत्कालीन सोवियत संघ के ताशकंद में रहस्यमय परिस्थितियों में मौत हो गई थी। वह पाकिस्तान के साथ संधि करने वहां गए थे। इस मामले में वहां उनकी सेवा में लगाए गए एक बावर्ची को हिरासत में लिया गया था, लेकिन बाद में उसे छोड़ दिया गया।

*** भारत एक कृषि प्रधान देश है, इस वाक्य की मर्यादा का अगर किसी ने सम्मान किया वो महापुरुष श्री लाल बहादुर शास्त्री जी हैं।**

लालबहादुर शास्त्री (२ अक्टूबर १९०४, निधन ११ जनवरी १९६६) छोटे कद में चरित्र की ऊंचाई, समझदारी की गहराई और राष्ट्रनिष्ठा के अनन्त अंतरिक्ष थे। इन पर लोगों की अनन्य आस्था थी। वह जनशक्ति से सम्पन्न थे। ऐसा अनोखा व्यक्तित्व, साधारण व्यक्तियों जैसी सामान्य परिस्थितियों से जूझकर दिनकर की तरह गगन मंडल का शिखर-पुरुष बन गया।

माता रामदुलारी और पिता शारदा प्रसाद की संतान, पुकारने का नाम नन्हा मुगलसराय के ग्राम रामनगर मे जन्म हुआ था। पिता के देहान्त के बाद माँ ने शिशु का पालन पोषण किया और स्कूल मे पढ़ने भेजा। लालबहादुर का अंग्रेजीवाचन स्पष्ट और शुद्ध था इसीलिए आदर्शपाठ के तौर पर इंसपेक्टर के मुआयने के समय लालबहादुर से ही वाचन कराया जाता था। वे शास्त्रों के पढ़ने के साथ उनके मर्म को हृदयंगम करने और उस पर व्यवहार करने वाले शास्त्री थे। गाँधी जी के आह्वान पर उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और असहयोग आंदोलन के अंतर्गत १७ वर्ष की उम्र में ही जेलयात्रा की। उन्होंने ललिता देवी से विवाह किया। लाला लाजपतराय की संस्था सर्वेन्टस् ऑफ दि पीपुल्स सोसाइटी की सदस्यता २५ साल की अवस्था मे ही ले ली और पुरुषोत्तम दास टंडन ने उनको इलाहाबाद कार्यालय का प्रभार संभालने का कार्य सौंप दिया। सन् १९३० में स्वरूपरानी नेहरू पुलिसिया अत्याचार से लहूलुहान हो गई तो उस समय लालबहादुर शास्त्री ने ही उनको संभाला और आनंद भवन पहुंचाया साथ ही प्रतिदिन देखने जाते रहे। इससे जवाहरलाल नेहरू का नैकट्य उन्हें मिला और दोनों की दोस्ती जीवनभर निभी। अपनी योग्यता से वे इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किए गए। शास्त्री जी नौ साल जेल मे रहे और आठ बार गिरफ्तार हुए। सन् १९६१ में उ.प्र. सरकार मे गृह विभाग सौंपा गया। बड़ी सादगी से रहकर उन्होंने अपना कर्तव्य पालन निष्ठा से किया। सन् १९५२ में उनको केंद्रीय रेलमंत्री बनाया गया।

उन्होंने डीलक्स गाड़िया जहाँ चलवाई वही जनता एक्सप्रेस का प्रवर्तन किया। दक्षिण के अरियालूर मे रेल दुर्घटना होने पर उन्होंने इसके लिए जिम्मेदार स्वयं को माना और त्यागपत्र दे दिया। उन्होंने विश्व शांति स्थापना प्रयत्नों में कई देशों की यात्रा की। नेहरू जी के निधन के उपरांत देश की जनता की इच्छा रखते हुए २ जून १९६४ को उन्हें प्रधानमंत्री बनाया गया। इस अवसर पर उनकी माता जी ने उन्हे आशीर्वाद इन शब्दों मे दिया, बेटा देश की हिफाजल पूरी तरह होनी चाहिए और गरीबों को आराम मिलना

चाहिए। शास्त्री जी ने रूस तथा अमरीका से अपने और देश के संबंध मधुर बनाए। अपने सैनिकों का मनोबल बढ़ाने के लिए उन्होंने निजी खर्चों में कटौती की।

रक्षा उत्पादन के आवंटन में वृद्धि की। रूस के प्रधानमंत्री कोसीजिन ने समझौता कराने की जिम्मेदारी लेकर उनको ताशकंद आमंत्रित किया। उन्होंने समझौते पर हस्ताक्षर किए। विद्वान राजनीतिक मीनू मथानी ने इसे सराहा, लिखा, उन्होंने जो कुछ किया, वह उनकी सबसे बड़ी सफलता थी। ११ जनवरी १९६६ को प्रात:काल १ बजकर ३२ मिनट पर उनका दुखद देहावसान हो गया।

शास्त्रीजी का जीवन गांधीवादी सिद्धान्तों के व्यावहारिक रूप का एक दृष्टांत रहा है। गरीब और उपेक्षित वर्ग का भी उन्हें विश्वास प्राप्त था। शास्त्री जी को प्रधानमंत्री के रूप में हिमालय से कन्याकुमारी तक, पंजाब से असम तक जनता के प्रत्येक वर्ग से विश्वास एवं प्रेम प्राप्त था।

निश्चय ही शास्त्री जी जैसी आध्यात्मिकता, सरलता, नैतिकता, सहायता एवं दृढ़ता अत्यंत दुर्लभ थी तभी तो साधारण वर्ग में जन्म लेने के बाद भी वह अपनी कार्यकुशलता एवं योग्यता के कारण प्रधानमंत्री के महत्वपूर्ण पद को प्राप्त कर सके। वे बाह्य और आंतरिक दोनों रूपों में सच्चे सेवक थे।

मानवता एवं कर्तव्यनिष्ठा की दृष्टि से शास्त्री जी बेजोड़ थे। वास्तव में वे शब्दश: अजात शत्रु थे। राष्ट्र की सेवा के आगे उनकी व्यक्तिगत जिज्ञासा कुछ भी न थी। यहां तक कि उन्होंने देश की सेवा के आगे अपने परिवार को कुछ भी महत्व नहीं दिया। बात १९३६ की है। शास्त्री जी अपने बच्चों को देखने के लिये एक सप्ताह के लिये पैरोल पर रिहा होकर आये थे। लड़के को टाइफाइड हो गया था। टाइफाइड में एक हफ्ते का वक्त होता ही क्या है। ज्यों-ज्यों पैरोल के दिन घटते जाते थे, त्यों-त्यों बच्चे का बुखार बढ़ता जाता था। यहां तक कि बुखार १०६ डिग्री तक पहुंच गया। बच्चे की हालत दिन पर दिन बिगड़ती जाती थी। एक ओर सिद्धांत और दूसरी ओर जिगर के टुकड़े की खस्ता हालत।

बाबूजी, मत जाइये, बाबूजी। निश्चेतप्राण बच्चे के होठों से परिक्लान्त स्वर उभर रहे थे और दूसरी ओर जेल अधिकारी पैरोल बढ़ाने को तैयार नहीं थे। श्रीमती ललिता शास्त्री की आंखें भर आयी थीं। स्वयं शास्त्री जी की आंखे तरबतर थीं। पर अपने को सम्भालते हुए और ललिता जी को समझाते हुए उन्होंने कहा- भारत माता की सेवा करना उसके हर बेटे का फर्ज है। अपने आंसू पोंछ लो और मुझे वचन दो कि राष्ट्र की सेवा के मार्ग में तुम कभी भी मेरे लिये बाधक नहीं बनोगी।

तभी तो पं. नेहरू ने कहा था, उच्चतम व्यक्तित्ववाले निरंतर सजग और कठोर श्रम करने वाले व्यक्ति का नाम है लाल बहादुर शास्त्री। शास्त्री जी की मां रामदुलारी देवी का आशीर्वाद- मैं लाल बहादुर से यही चाहती हूं कि चाहे जान चली जाये मगर देश बना रहे। सदैव शास्त्री जी को प्रेरणा देता रहा। शास्त्री जी के अनोखे व्यक्तित्व में दृढ़ता, विनम्रता, समझाने-बुझाने की कला तथा न झुकने वाली संकल्पशीलता का विवेकपूर्ण मिश्रण था। निश्चय ही वे अशिष्ट व दंभी भी नहीं थे। वे लोगो के प्रश्नों का इतनी सूझबूझ से उत्तर देते थे कि लोग अपने आप में पानी-पानी हो जाते थे।

शास्त्री जी के इन शब्दों ने भारतीय जीवन के साथ उनका गहरा तादात्म्य व्यक्त किया।

सन् १९२१ की बात है। वाराणसी में गांधी जी एक सभा को संबोधित कर रहे थे। सभा में उन्होंने भारत को आजाद कराने के लिये नौजवानों को आहवान किया। इस पर एक सोलह-सत्रह वर्ष के लड़के ने अपने को मातृभूमि की सेवा के लिये प्रस्तुत किया। वह बालक और कोई नहीं बल्कि लालबहादुर शास्त्री थे। ऐसे थे हमारे शास्त्री जी।

शिशु हृदय और वज्र संकल्पवाला विराट व्यक्तित्व

धरती के लालबहादुर शास्त्री ने बाइबिल की उक्ति-विनम्र ही पृथ्वी के वीरस होंगे को अपने राजनीतिक जीवन में साकार कर दिखाया। उनके विनम्र व्यक्तित्व में मानवीय संवेदनाओं के संदर्भ में आंसू बहाकर रो पड़नेवाला शिशु हृदय और जम्मू कश्मीर में पाकिस्तान की दगाबाजी की सजा देने के लिए भारतीय सेना को राष्ट्रीय सीमा पार करके पश्चिमी पाकिस्तान में घुस जाने का आदेश देनेवाला वज्र संकल्प एक साथ मौजूद था।

आज हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। ऐसे समय में बहुत से लोगों की यह बात चौंकानेवाली लग सकती है कि देश के

विभिन्न महत्वपूर्ण पदों के बाद प्रधानमंत्री पद पर पहुंचे इस महान व्यक्ति का जब निधन हुआ, तब उनके पास अपना खुद का मकान तक नहीं था। जब शास्त्रीजी प्रधानमंत्री थे, तब उनकी माता किराए के कमान में रहती थीं और रिक्शे में चला करती थीं। ऐसी थीं उनमे नैतिक मूल्यों के प्रति दृढ़ आस्था और उस पर आचर करने का दृढ़ संकल्प।

शास्त्रीजी का देश के युवा वर्ग के संदर्भ में वैचारक मंथन स्वामी विवेकानंद से समरूपता रखता था। जब देश पर आक्रमण हुआ था, तब शास्त्रीजी ने दृढ़ता और कुशल नेतृत्व का परिचय देते हुए, राष्ट्र के नाम (१३ अगस्त १९६५) को अपने संदेश में युवा वर्ग में विश्वास व्यक्त करते हुए कहा था कि मैं जानता हूं कि हमारे देश का हर युवा व्यक्ति आज अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार है ताकि भारत अपना सिर और अपना झंडा ऊँचा करके रह सके। जब आजादी को चुनौती दी जा रही हो तथा क्षेत्रीय अखंडता खतरे में हो, तब केवल एक ही कर्तव्य है कि हम उस चुनौती का अपनी पूरी ताकत के साथ मुकाबला करें। शास्त्रीजी देश की सेवा व सुरक्षा के संदर्भ में प्रत्येक देशवासी से अपेक्षा करते थे। लालकिले की प्राचीर से १५ अगस्त १९६५ को उन्होंने पुन: दोहराया, हम रहें या न रहें लेकिन यह झंडा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि झंडा रहेगा, हम और आप रहें न रहें, लेकिन भारत का सर ऊँचा होगा। शास्त्रीजी ने देश की आजादी की लड़ाई में भाग लेने के लिए गांधीजी के असहयोग आंदोलन में १९२१ में स्कूल छोड दिया था। देश सेवा की उनकी भावना का अनुमान इसी बात से लगा सकते है कि सन् १९३० से १९४५ के १५ वर्षों में वे ७ बार जेल गए थे तथा कुल ९ वर्ष तक जेल में बंद रहे।

शास्त्रीजी शांति और प्रेम के प्रबल समर्थक थे। लेकिन रक्षा, अर्थपयवस्था व परमाणु शास्त्रों संबंधी उनके विचार आज भी अपनी प्रासंगिकता सिद्ध करते हैं। १० दिसंबर १९६५ को संसद के भाषण में उन्होंने कहा था, भारत का शांति और अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव में अडिग विश्वास है। हम सभी से विशेषत: अपने पड़ोसियों से मित्रता चाहते हैं। हम अपनी शक्ति को अपने देश की आर्थिक व्यवस्था को सुधारने और अपने लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के बड़े काम में लगाना चाहते हैं। जो धन आज रक्षा के काम में खर्च होता है, हम उसे गरीबी से लड़ने में खर्च करना चाहते हैं, यदि हमारे देश को भारी खतरा न होता। वर्तमान में सत्तालोलुपता राजनीति का केन्द्र बन चुका है। प्रत्येक व्यक्ति पद (कुर्सी) रूपी अर्थ के बिना सब कुछ व्यर्थ बताता है। ऐसे समय में नैतिकता के नाम पर इस्तीफा देना तो दूर, बल्कि विपक्षद्वारा इस्तीफा मांगने पर भी शर्म महसूस नहीं हो पाती। ऐसे समय में शास्त्रीजी की घटना याद आती है। जब शास्त्रीजी रेल मंत्री थे, तब दक्षिण भारत में अलियालूर में एक रेल दुर्घटना हो गई थी। उस दुर्घटना की नैतिक जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते हुए उन्होंने त्यागपत्र दे दिया था।

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने उनके त्यागपत्र की सूचना लोकसभा में देते हुए उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। उनमें ऊँचे दर्जे की ईमानदारी, आदर्श के प्रति निष्ठा, अंतरात्मा की आवाज सुनने और कड़ी मेहनत करने की आदत है। चूंकि वे आत्मा की आवाज सुननेवाले शख्स थे इसलिए जब उनको सौंपी गई जिम्मेदारी में कमी आई, तब उनको गहरी भावनात्मक ठेस लगी। क्या वर्तमान में इस तरह के सिद्धान्तों का पालन करनेवाले नेता सामने आएंगे ?

भारत मां का लाल-लाल बहादुर शास्त्री (पढ़के हो गया)

शहर बनारस। बनारस में हरिश्चन्द्र हाईस्कूल। हरिश्चन्द्र हाईस्कूल के स्काउट मास्टर श्री निष्कामेश्वर मिश्र ने बच्चों को आगरा का ताजमहल दिखाने की योजना बनाई। आगरा जाने के लिए प्रति छात्र २० रुपये इकट्ठा किये गये। कक्षा में सभी बच्चों ने अपने-अपने, बीस-बीस रुपये जमा कर दिये। एक छात्र जिसे सभी नन्हें कहा करते थे, ने बीस रुपये जमा नहीं किये। श्री मिश्र जानते थे कि यह बच्चा मेधावी और अध्ययनशील है। नन्हे के पिता का स्वर्गवास हो गया है। कुछ विशेष लगाव था उन्हें नन्हे के प्रति। मिश्र जी ने नन्हें से पूछा- बेटा नन्हें तुम तो किसी से पीछे नहीं रहते, फिर इस बार २० जमा करने में पीछे क्यों ?

गुरुजी, मैं आगरा नहीं जाना चाहता। नन्हा बोला।

सभी तो जा रहे है, फिर तुम क्यों नहीं ?

जी, मेरा मन नहीं करता।

क्या मां ने मना कर दिया ?

नहीं तो, मां भला क्यों मना करने लगी।

गुरुजी ने बड़े प्यार से नन्हे के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा- नन्हें, क्या पैसे नहीं हैं ?

गुरुजी, पैसे तो हैं।

लाओ मुझको दिखाओ।

नन्हें ने एक पैसा निकालर गुरुजी के हाथ पर रखा और मुंह फेर कर आंसुओं को रोकने की असफल चेष्टा करने लगा। गुरुजी का गला भी भर गया और आंखें भी छलछला उठी। गुरुजी ने कहा- नन्हें, तू महान है। मैं तेरे दिल की बात न जान सका। तू निश्चित ही एक दिन बड़ा आदमी बनेगा। माह का अन्तिम सप्ताह है। जब वह घर पहुंचे तो उनका पोता बाबा जी आ गये, बाबा जी आ गये कहते हुए उनकी ओर दौड़ा। बाबा ने प्यार से उसे गोदी में उठाया और उसके मुख पर चुम्बन जड़ दिया।

बाबा ने कहा- जाओ बेटे, जाकर पढ़ो।

लेकिन, बाबा जी। पोता बोला।

लेकिन क्या बेटे, बताओ।

मुझे एक स्लेट चाहिए, बाबा जी।

ठीक है। तीन-चार दिन में अपने राजा बेटे को एक स्लेट ला देंगे।

परन्तु बाबा जी, मुझे तो आज ही चाहिए।

आज। कुछ सोचने के अंदाज में बाबा का माथा सिकुड़ा।

क्या सोचने लगे बाबा।

यही कि अभी पहली तारीख के तीन-चार दिन है। तनख्वाह भी अभी चार दिन बाद मिलेगी। तभी....।

क्या आप जानते हैं कि पहली घटना वाला बालक नन्हे और दूसरी घटना के बाबा जी कौन हैं ? ये दोनों एक ही हैं। इनका नाम था- लाल बहादुर शास्त्री। ये हमारे देश के दूसरे प्रधानमंत्री थे। शास्त्री जी ने अपना जीवन यापन बड़ी ही सादगी से किया। श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म वाराणसी से छह किलोमीटर दूर २ अक्टूबर सन् १९०४ को हुआ था। बाल्यकाल में ही उनके पिता का निधन हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अध्ययन में जुटे शास्त्री जी, जीवन में प्रगति पथ पर आगे बढ़े। भारत के प्रधानमंत्री पद को भी सुशोभित किया। वे जून १९६४ से मात्र १८ माह ही भारत के प्रधानमंत्री रहे। इसी बीच भारत पाक युद्ध भी हुआ। इन्होंने देश को एक नारा दिया- जय जवान, जय किसान। एक बार पुरुषोत्तम दास टण्डन ने कहा था- शास्त्रीजी सच्चे अर्थों में स्वयं उन्नति करने वाले व्यक्ति हैं। उनकी पत्नी का नाम ललिता शास्त्री था।

लाल बहादुर शास्त्री एक प्रसिद्ध भारतीय राजनेता, महान स्वतंत्रता सेनानी और जवाहरलाल नेहरू के बाद भारत के दूसरे प्रधानमंत्री थे। लाल बहादुर शास्त्रभ एक ऐसी हस्ती थे जिन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में देश को न सिर्फ सैन्य गौरव का तोहफा दिया बल्कि हरित क्रांति और औद्योगीकरण की राह भी दिखाई। शास्त्री जी किसानों को जहां देश का अन्नदाता मानते थे, वहीं देश के सीमा प्रहरियों के प्रति भी उनके मन में अगाध प्रेम था जिसके चलते उन्होंने जय जवान, जय किसान का नारा दिया। ११ जनवरी को उनका निधन हुआ।

शहर बनारस, बनारस में हरिश्चन्द्र हाईस्कूल, हरिश्चन्द्र हाईस्कूल के स्काउट मास्टर श्री निष्कामेश्वर मिश्र ने बच्चों को आगरा का ताजमहल दिखाने की योजना बनाई। आगरा जाने के लिए प्रति छात्र से २० रुपए लिए गये। कक्षा में सभी बच्चों ने अपने-अपने, बीस-बीस रुपए जमा कर दिये। एक छात्र जिसे सभी नन्हे कहा करते थे, ने बीस रुपए जमा नहीं

किये। श्री मिश्र जानते थे कि यह बच्चा मेधावी और अध्ययनशील है। नन्हे के पिता का स्वर्गवास हो गया है। कुछ विशेष लगाव था उन्हें नन्हे के प्रति।

मिश्र जी ने नन्हे से पूछा- बेटा नन्हे तुम तो किसी से पीछे नहीं रहते, फिर इस बार २० जमा करने में पीछे क्यों?

नन्हा बोला- गुरुजी, मैं आगरा नहीं जाना चाहता।

सभी तो जा रहे हैं, फिर तुम क्यों नहीं?

जी, मेरा मन नहीं करता।

क्या मां ने मना कर दिया?

नहीं तो, मां भला क्यों मना करने लगी?

गुरुजी ने बड़े प्यार से नन्हें के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा- नन्हें, क्या पैसे नहीं है।

गुरुजी, पैसे तो हैं।

लाओ मुझको दिखाओ।

नन्हे ने एक पैसा निकालकर गुरूजी के हाथ पर रखा और मुंह फेरकर आंसुओं को रोकने की असफल चेष्टा करने लगा। गुरूजी का गला भी भर गया और आंखें भी छलछला उठी।

गुरूजी ने कहा- नन्हे, तू महान है। मैं तेरे दिल की बात न जान सका। तू निश्चित ही एक दिन बड़ा आदमी बनेगा।

माह का अंतिम सप्ताह है। जब वह घर पहुंचे तो उनका पोता बाबा जी आ गये, बाबा जी आ गये कहते हुए उनकी ओर दौड़ा। बाबा ने प्यार से उसे गोदी में उठाया और उसके मुख पर चुम्बन जड़ दिया।

बाबा ने कहा- जाओ बेटे, जाकर पढ़ो।

लेकिन, बाबा जी। पोता बोला।

लेकिन क्या बेटे, बताओ।

मुझे एक स्लेट चाहिए, बाबाजी।

ठीक है। तीन-चार दिन में अपने राजा बेटे को एक स्लेट ला देंगे।

परन्तु बाबा जी, मुझे तो आज ही चाहिए।

आज। कुछ सोचने के अंदाज में बाबा का माथा सिकुड़ा।

क्या सोचने लगे बाबा।

यही कि अभी पहली तारीख के तीन-चार दिन है। तनख्वाह भी अभी चार दिन बाद मिलेगी। तभी...

क्या आप जानते हैं कि पहली घटना वाला बालक नन्हे और दूसरी घटना के बाबा जी कौन हैं? ये दोनों एक ही हैं। इनका नाम था- लाल बहादुर शास्त्री। ये हमारे देश के दूसरे प्रधानमंत्री थे। शास्त्री जी ने अपना जीवन यापन बड़ी ही सादगी से किया।

श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म वाराणसी से छह किलोमीटर दूर २ अक्टूबर सन् १९०४ को हुआ था। बाल्यकाल में ही उनके पिता का निधन हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अध्ययन में जुटे शास्त्री जी जीवन में प्रगति पथ पर आगे बढ़े।

भारत के प्रधानमंत्री पद को भी सुशोभित किया। वे जून १९६४ से मात्र १८ माह ही भारत के प्रधानमंत्री रहे। इसी बीच भारत पाक युद्ध भी हुआ। इन्होंने देश को एक नारा दिया- जय जवान, जय किसान। एक बार पुरूषोत्तम दास टण्डन ने कहा था- शास्त्री जी सच्चे अर्थों में स्वयं उन्नति करनेवाले व्यक्ति हैं।

२ जून १९६४ को लाल बहादुर शास्त्री देश के दूसरे प्रधानमंत्री बने। नेहरू जी की मृत्यु के बाद कांग्रेस में नये नेता के सवाल पर कोई सहमति बनती नहीं दिख रही थी। मोरारजी देसाई खुद को सबसे बड़ा दावेदार बता रहे थे। कोई सहमति नहीं बनने पर कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक बुलायी गयी। इसमें भी सफलता नहीं मिली। तब पार्टी अध्यक्ष काम राज अगले तीन दिन तक देश भर के कांग्रेसी नेताओं से मिलकर आम राय बनाने में जुट गये थे।

अंत में एक जून को कामराज ने मोरारजी देसाई को उनके घर जाकर कांग्रेस नेताओं की आम राय के बारे में बताया। मोरारजी खफा हुए पर बहुत को नकार नहीं सके और मान गये।

सही मूल्यांकन नहीं हुआ शास्त्री के योगदान का

बेहद कम समय के लिए प्रधानमंत्री की कुर्सी संभालने के बावजूद भारतीय राजनीति में अपना खास मुकाम बनाने वाले लाल बहादुर शास्त्री के बारे में राजनीतिक विश्लैषकों का मानना है कि देश के प्रति उनके योगदान का सही तरीके से मूल्यांकन नहीं हो पाया है।

देश की आजादी के आंदोलन में भाग लेनेवाले और जय जवान जय किसान जैसा लोकप्रिय नारा देनेवाले शास्त्री के योगदान का सही मूल्यांकन नहीं होने का एक बड़ा कारण देश और कांग्रेस की राजनीति शास्त्र के प्राध्यापक शम्सुल इस्लाम ने भाषा को बताया कि लाल बहादुर शास्त्री की राजनीति का मूल्यांकन हो ही नहीं सकता क्योंकि इस कथित सुधारवादी युग में भारतीय राजनीति में शास्त्री की ईमानदार राजनीति अप्रासंगिक हो गई है। इस्लाम ने कहा कि आजादी के समय कांग्रेस की गरीबों और जनता से जुड़ने की जो विरासत थी, पूर्व प्रधानमंत्री के निधन के साथ ही उसकी भी मौत हो गई। शास्त्रीजी के अप्रासंगिक होने का सबसे बड़ा कारण कांग्रेस की राजनीति में नेहरू गांधी परिवार का बोलबाला हैं, आज के युग में ऐसा कोई सांसद नहीं है जो कम से कम करोड़पति नहीं हो। ऐसे में शास्त्रीजी जैसे ईमानदार नेता को कैसे कोई अपना आदर्श बना सकता है। उन्होंने कहा कि पूर्व प्रधानमंत्री ने गरीबी को नजदीक से देखा है। उन्होंने इसे महसूस किया है। लोगों की समस्याओं को खुद महसूस किया है। आज के दौर में नेता ऐसा कुछ भी नहीं करते और न ही करना चाहते हैं यही कारण है कि वर्तमान राजनीतिक परिदृष्य में वह अप्रासंगिक हो गए हैं। वरिष्ठ लेखक तथा बी.आर. आंबेडकर बिहार विश्वविद्यालय के लक्ष्मी नारायण दुबे कॉलेज में अंग्रेजी के पूर्व विभागाध्यक्ष एस.के. प्रसून कहते हैं, भारतीय राजनीति और व्यवसाय में उनका योगदान अमूल्य है। लेकिन हमेशा ऐसा हुआ है कि विभिन्न घटनाओं और परिस्थितियों के कारण उनकी भूमिका और योगदान को उतनी तवज्जो नहीं मिली जितनी मिलनी चाहिए थी। उन्होंने कहा कि उनका सरल किंतु दृढ़ चरित्र भले ही राजनेताओं को अधिक प्रेरित न कर पा रहा हो लेकिन आमजन के बीच उन्हें हमेशा एक बड़े नेता के रूप याद किया जाता रहेगा। प्रसून ने कहा कि पूर्व प्रधानमंत्री अपने विद्यार्थी जीवन से ही स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े। उन्होंने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में हिस्सा लिया और पढ़ाई छोड़ दी। भारतीय राजनीति और जनमानस में ईमानदार नेता के रूप अपनी छाप छोड़नेवालो लाल बहादुर शास्त्री १९६४ से १९६६ तक प्रधानमंत्री पद रहें और ताशकंद में ११ जनवरी १९६६ को प्रधानमंत्री पद पर रहते हुए रहस्यपूर्ण परिस्थितियों में उनका निधन हो गया।

वामन ने बलि से तीन पग भूमि मांगी, उसने हामी भर दीं पग बढ़े और तीन लोक उसमें समा गये, तीनों लोगों में वामन का यश फैल गया। ऐसे ही थे लाल बहादुर शास्त्री। लगभग पांच फिट, नाटे डील डौल और दुबले तन के, साधारण रूप। कोई विशेष प्रभाव नहीं, न धन का, न ऊंची विद्या का और न ही कुल का। १८ वर्ष तक स्वतंत्र भारत पर एकछत्र शासन करने के बाद जब पं. जवाहरलाल नेहरू स्वर्ग सिधारे तो सब लोग उलझन में पड़ गये कि अगला प्रधानमंत्री कौन होगा? देश के जानकार लोग अटकलें लगाते थे, विदेशों में सूझबूझ वाले सिर खपाते थे क्योंकि अखबारों, रेडिया और टेलीविजन ने नेहरू जी की अतिमानवीय छवि बना दी थी। प्रचार की हवा भरकर गुब्बारे को इतना फुला दिया था कि लोग हैरानी से पूछते थे- नेहरू जी नहीं रहे तो इस देश का क्या होगा? इसका नेतृत्व कौन संभालेगा? प्रधानमंत्री पद के प्रमुख उम्मीदवार मोरारजी देसाई थे। इन्दिरा गांधी भी प्रधानमंत्री बनना चाहती थीं परन्तु पिता की मृत्यु के तुरन्त बाद प्रधानमंत्री पद के लिए चुनाव लड़ना उन्हें अशोभन लगा। लाल बहादुर शास्त्री ने कहा- इन्दिरा जी प्रधानमंत्री पद की उम्मीदवार हों तो मैं चुनाव नहीं लडूंगा। उनका मुकाबला मैं नहीं कर सकता पर यदि वे उम्मीदवार न हों और केवल मोरारजी देसाई ही उम्मीदवार हों तो मैं चुनाव लडूंगा। चुनाव की नौबत नहीं आई, कामराज ने सांसदों से पूछताछ करके यह घोषणा कर दी कि आम सहमति लालबहादुर के पक्ष में है और इस प्रकार ९ जून १९६४ को लाल बहादुर शास्त्री एकमत से प्रधानमंत्री चुन लिये गये। स्वभाव से सीधे सच्चे, रहन-सहन में साधारण और कद में छोटे होने के कारण कई बार बहुत लोगों ने धोखा खाया। सबसे बड़ा धोखा खाया पाकिस्तान के सैनिक राष्ट्रपति जनरल अयूब खां ने। १ सितम्बर १९६५ को पाकिस्तान ने कश्मीर के छम्ब जोड़ियां नामक स्थान पर टैंकों से भारी हमला कर दिया, असावधान भारत पकड़ा गया। १९९९ में कारगिल में यही हुआ मगर आज की तरह शास्त्री जी केवल आर-पार की ही लड़ाई की घोषणा नहीं करते रहे बल्कि उन्होंने कहा- जीतने के लिए जो भी जरूरी हो तुरन्त करो क्योंकि हमें हारना नहीं है इसलिए युद्ध बाकायदा ही होना चाहिए और घुसपैठिया लड़ाई खत्म होनी चाहिए। १९६५ के बाकी युद्ध का हाल सर्वविदित है। पाकिस्तान के पहले डिवीजन ने कसूर से अमृतसर की ओर धावा बोला। जनरल अयूब खां का ख्याल था कि उनके नये बढ़िया टैंक दिल्ली जाकर ही रूकेंगे, उन्हें रोक पाने का भारत के पास कोई उपाय नहीं होगा पर वे खेमकरण से आगे नहीं बढ़ पाये। भारत के पुराने जंग लगे टैंकों ने ही उनका भुर्ता बना दिया। दो सप्ताह के युद्ध में ही पाकिस्तान का लड़ाई का जोश ठंडा हो गया। उसके समर्थक ब्रिटेन और अमेरिका ने युद्ध विराम के लिए जोर डालना शुरू किया। उन दिनों भारत में अनाज की कमी थी। अमेरिका घटिया गेहूं भारत को बेचता था जिससे बढ़ती हुई जनसंख्या जीवित रहती थी। अमेरिका ने वह भी बन्द करने की धमकी दी। लाल बहादुर शास्त्री ने राष्ट्र का दृढ़ता के लिए आहवान करते हुए कहा, हम एक वक्त भूखे पेट रह लेंगे पर अपनी आन पर आंच नहीं आने देंगे।

युद्धकाल में जब देश आर्थिक संकट के दौर से गुजर रहा था और अनाज की किल्लत का सामना कर रहा था तो उन्होंने लोगों से सप्ताह में एक दिन उपवास करने की अपील की और लोगों ने उसका पालन भी किया। शास्त्रीजी एक आह्वान पर लोगों ने अपने घरों से गहने, पैसे दान कर देश की मदद की थी।

केंद्र की मौजूदा संप्रग सरकार वैश्विक आर्थिक मंदी के मद्देनजर मितव्ययता पर जोर दे रही है लेकिन देश के तीसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री के एक आह्वान मात्र पर समूचा देश मितव्ययता अभियान में जी जान से इसमें जुट गया था। जवाहरलाल नेहरू और कार्यवाहक प्रधानमंत्री गुलजारीलाल नंदा के बाद शास्त्रीजी देश के तीसरे प्रधानमंत्री बने थे।

इतिहासकार एसआर मेहरोत्रा कहते हैं कि शास्त्री ऐसे साधारण व्यक्ति थे जिन्होंने अपनी असाधारण क्षमता के कारण देश का प्रधानमंत्री बनने का गौरव प्राप्त किया। शास्त्री जी का जन्म और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी दोनों का जन्म एक ही दिन अर्थात २ अक्टूबर को हुआ। शास्त्रीजी १९०४ में जन्मे थे। कद में छोटे लेकिन सीधे-सादे दिखनेवाले शास्त्रीजी में असाधारण सूझबूझ थी। १९६५ में भारत पाकिस्तान युद्ध में उन्होंने जिस धैर्य और सूझबूझ का परिचय दिया वह काबिले तारीफ है। मेहरोत्रा ने बताया कि तत्कालीन सेनाध्यक्ष जनरल जे. एन. चौधरी को शास्त्री ने पाकिस्तान को मुंहतोड़ जवाब देने की छूट दे दी थी। शास्त्री के कार्यकाल में ही सेना और कृषि क्षेत्र की ताकत को यथोचित महत्व दिया गया जिसकी बुनियाद पर आनेवाले समय में भारत में हरित क्रांति हुई और अन्न उत्पादन के क्षेत्र में भारत स्वावलंबी बना। हरित क्रांति को भी बढ़ावा दिया। गुजरात का १९६४ में उन्होंने दौरा किया और आणंद की सफलता से प्रेरित हो उन्होंने शेष भारत को इसे दोहराने को कहा।

१९६५ में शास्त्री के कार्यकाल में नेशनल डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड की स्थापना हुई। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता सत्यव्रत चतुर्वेदी कहते हैं कि शास्त्री जी ने पहली हरित क्रांति की बुनियाद डाली थी और अब भारत दूसरी हरित क्रांति के लिए कृषि उत्पादकता को और ठोस बनाने के काम में लगा है। चुनौतियों से निपटने की प्रेरणा शास्त्री जी ने ही दी थी। चतुर्वेदी के अनुसार १९६६ के बाद से अब तक भारत ने सैन्य बल बढ़ोतरी में उल्लेखनीय प्रगति की है। जय जवान जय किसान का नारा प्रेरणास्रोत है। उन्होंने कहा कि अनाज, दूध, फलोत्पादन सहित कई क्षेत्रों में उत्पादन में भारत आत्मनिर्भर बन सका है और यह शास्त्री जी के सपनों का पूरा होना है। ताशकंद में ११ जनवरी १९६६ को शास्त्रीजी का निधन हो गया। मरणोपरांत उन्हें १९६६ में भारत रत्न से सम्मानित किया गया। हालांकि शास्त्रीजी ९ जून १९६४ से ११ जनवरी १९६६ तक बहुत अल्पकाल के लिए देश के प्रधानमंत्री रहे लेकिन उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। मेहरोत्रा के अनुसार, शास्त्री ईमानदारी की प्रतिमूर्ति थे। १९५१ से १९५६ तक वह रेलमंत्री रहे। आंध्र प्रदेश के महबूबनगर में रेल दुर्घटना की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। मेहरोत्रा कहते हैं कि १९६५ के युद्ध में भारतीय सेना ने पाकिस्तान को जबरदस्त शिकस्त दी। भारत चाहता तो लाहौर तक कब्जा कर सकता था, लेकिन शास्त्री जी ने ऐसा न कर सूझबूझ का परिचय दिया क्योंकि ऐसा करने पर बहुत खून खराबा होता।

सादगी की प्रतिमूर्ति थे लालबहादुर शास्त्रीजी

लालबहादुर शास्त्री भारत के एकमात्र ऐसे प्रधानमंत्री हुए जो सादगी की प्रतिमूर्ति थे। उन्हें प्रधानमंत्री पंडित नेहरू के निधन के बाद देश का दूसरा प्रधानमंत्री दो जून १९८४ चुना गया था। बदकिस्मती से वे सिर्फ १९ महीने ही प्रधानमंत्री रहे। भारत पाकिस्तान की जंग के बाद ताशकंद में एक समझौता वार्ता हुई जिसमें शास्त्रीजी भी मौजूद थे। इस वार्ता में भारत को जीती हुई जमीन लौटानी थी। शास्त्रीजी यह सदमा बर्दाश्त न कर सके और वहीं उनका हृदयाघात के बाद निधन हो गया। लेकिन उन्हें सादगी और ईमानदारी के कारण आज भी राष्ट्र सच्चे मन से याद करता है। उनका जन्म २ अक्टूबर १९०४ को वाराणसी जिले में मुलगसराय के अत्यंत साधारण परिवार में हुआ था। पिता श्री शारदाप्रसाद शिक्षक थे। वे जब मात्र दस वर्ष के थे तभी पिता का निधन हो गया। उनकी परवरिश ननिहाल में हुई। परिवार की गरीबी, सादगी उनकी आत्मा से हमेशा चिपकी रही।

प्रधानमंत्री जैसे ओहदे पर रहने के बाद भी वे एक आम आदमी की तरह ही अपने को मानते थे। वे जितने अच्छे वे नेक इंसान थे उतने ही आला दर्जे के कुशल प्रशासक भी थे। उनके प्रधानमंत्री काल में सूखा पड़ गया तो खुद सप्ताह में एक

दिन व्रत रखते थे। इसका असर लोगों में भी दिखाई दिया और देश में कई लोग शास्त्रीजी के संकल्प का पालन करने लगे। इस समय देशवासियों को शास्त्रीजी ने जय जवान, जय किसान का नारा देकर देश के खाद्यान्न संकट का मुकाबला करने की प्रेरणा दी। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी शास्त्रीजी की सक्रिय भूमिका रही। १९३७ में कन्नूर से मद्रास (चेन्नई) तक सात सौ पचास मील का पैदल भूख मार्च किया था।

लाल बहादुर शास्त्री एक ऐसी हस्ती थे जिन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में अपनी दूरदर्शिता से देश को न सिर्फ वीरतापूर्ण विजय का तोहफा दिया बल्कि हरित क्रांति को भी अंजाम दिया। भारत और पाकिस्तान के बीच १९६५ की लड़ाई में छोटे कद के शास्त्रीजी विश्व मंच पर एक साहसिक नेता के रूप में उभर कर सामने आए। महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर रजनीश सिंह के अनुसार लाल बहादुर शास्त्री के छोटे कद को देखकर ही शायद पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति अयूब खान उनके व्यक्तित्व की महानता को पहचानने में गलती कर गए थे। उन्होंने बताया कि जुलाई १९६४ में शास्त्री जी जब राष्ट्रमंडल प्रमुखों की बैठक में भाग लेने लंदन गए तो रास्ते में ईंधन भरने के लिए उनका विमान कराची शहर में उतरा जहां उनका स्वागत अयूब खान ने किया। उनके अनुसार अयूब खान ने शास्त्री जी के छोटे कद को देखकर अपने एक सहयोगी से पूछा था कि क्या यही आदमी जवाहर लाल नेहरू का वारिस है। इस घटना का महत्व इसलिए बहुत अधिक था क्योंकि उसके बाद के साल १९६५ में अयूब खान ने कश्मीर घाटी को भारत को छीनने के लिए हमले की योजना बनाई थी। पाकिस्तान ने योजना के अनुसार कश्मीर में नियंत्रण रेखा से घुसपैठिए भेजे और पीछे पीछे पाकिस्तानी फौज भी आ गई। इस पर शास्त्रीजी ने मेजर जनरल हरबख्श सिंह की सलाह पर पंजाब में दूसरा मोर्चा खुलवा दिया। अपने अत्यधिक महत्वपूर्ण शहर लाहौर को भारत के कब्जे में जाते देख पाकिस्तान ने कश्मीर से अपनी सेना वापस बुला ली। इस तरह लाल बहादुर शास्त्री ने अयूब खान का सारा गुरुर तोड़ दिया। अपनी नाक बचाने के लिए अयूब खान ने सोवियत नेताओं से संपर्क साधा जिनके आमंत्रण पर शास्त्री जी १९६६ में पाकिस्तान के साथ शांति समझौता करने के लिए ताशकंद गए। वहां दिल का दौरा पड़ने से उनका निधन हो गया। हालांकि उनकी मौत की आधिकारिक रिपोर्ट आज तक जारी नहीं हुई है। सिंह के अनुसार शास्त्री जी ने अयूब खान जैसे घमंडी शासक का गुरुर ही नहीं तोड़ा बल्कि उन्हें अपने सामने गिड़गिड़ाने पर भी मजबूर कर दिया था। ताशकंद मेंखान ने शास्त्री जी से कहा कि कुछ ऐसा कर दीजिए जिससे वह पाकिस्तान में अपने लोगों को मुंह दिखा सकें। प्रोफेसर नीरकंवर ने कहा कि देश में हरित क्रांति की नींव रखने का श्रेय भी शास्त्री जी को जाता है जिन्होंने जय जवान जय किसान का नारा दिया। उन्होंने प्रधानमंत्री बनते ही कृषि क्षेत्र की शक्ल सूरत बदलनी शुरू कर दी थी और उद्योगों को सरकारी नियंत्रण से बाहर निकलवाने के लिए भी काम किया।

यह आदर्श सिलसिला लोकमान्य तिलक, गोपालकृष्ण गोखले, महात्मा गांधी, पं. मदन मोहन मालवीय, लाला लाजपतराय, सरदार पटेल, डॉ. राजेंद्रप्रसाद, पुरुषोत्तम टंडन, आचार्य कृपलानी जैसे पुराने नेताओं तक देखा गया। आजादी के बाद देश में कुछ ऐसे प्रधानमंत्री बने जो अपने स्वदेशी विचारों और रहन-सहन के लिए जाने जाते रहे।

लाल बहादुर शास्त्री एक प्रसिद्ध भारतीय राजनेता, महान स्वतंत्रता सेनानी और जवाहरलाल नेहरू के बाद भारत के दूसरे प्रधानमंत्री थे। लाल बहादुर शास्त्री एक ऐसी हस्ती थे जिन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में देश को न सिर्फ सैन्य गौरव का तोहफा दिया बल्कि हरित क्रांति और औद्योगीकरण की राह भी दिखाई।

लाल बहादुर शास्त्री का जन्म २ अक्टूबर, १९०४ को मुगलसराय, उत्तर प्रदेश में मुंशी शारदा प्रसाद श्रीवास्तव के यहां हुआ था। इनके पिता प्राथमिक विद्यालय में शिक्षक थे। अत: सब उन्हें मुंशी जी ही कहते थे। बाद में उन्होंने राजस्व विभाग में लिपिक (क्लर्क) की नौकरी कर ली थी। लालबहादुर की माँ का नाम रामदुलारी था। परिवार में सबसे छोटा होने के कारण बालक लालबहादुर को परिवार वाले प्यार से नन्हें कहकर ही बुलाया करते थे। जब नन्हें अठारह महीने का हुआ तब दुर्भाग्य से पिता का निधन हो गया। उसकी माँ रामदुलारी अपने पिता हजारीलाल के घर मिर्जापुर चली गयीं। कुछ समय बाद उसके नाना भी नहीं रहे। बिना पिता के बालक नन्हें परवरिश करने में उसके मौसा रघुनाथ प्रसाद ने उसकी मां का बहुत सहयोग किया। ननिहाल में रहते हुए उसने प्राथमिक शिक्षा ग्रहण की। उसके बाद की शिक्षा हरिश्चंद्र हाईस्कूल और काशी विद्यापीठ में हुई। काशी विद्यापीठ से शास्त्री की उपाधि मिले ही प्रबुद्ध बालक ने जन्म से चला आ रहा जातिसूचक शब्द श्रीवास्तव हमेशा के लिये हटा दिया और अपने नाम के आगे शास्त्री लगा लिया। इसके पश्चात शास्त्री शब्द लालबहादुर के नाम का पर्याय ही बन गया।

भारत में ब्रिटिश सरकार के खिलाफ महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए असहयोग आंदोलन के एक कार्यकर्ता लाल बहादुर थोड़े समय (१९२१) के लिये जेल गए। रिहा होने पर उन्होंने एक राष्ट्रवादी विश्वविद्यालय काशी विद्यापीठ (वर्तमान महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ) में अध्ययन किया और स्नातकोत्तर शास्त्री (शास्त्रों का विद्वान) की उपाधि पाई। स्नातकोत्तर के बाद वह गांधी के अनुयायी के रूप में फिर राजनीति में लौटे, कई बार जेल गए और संयुक्त प्रांत, जो अब उत्तर प्रदेश है, की कांग्रेस पार्टी में प्रभावशाली पद ग्रहण किए। १९३७ और १९४६ में शास्त्री प्रांत की विधायिका में निर्वाचित हुए। १९२८ में उनका विवाह गणेशप्रसाद की पुत्री ललिता से हुआ। ललिता जी से उनके छ: सन्तानें हुई, चार पुत्र-हरिकृष्ण, अनिल, सुनील व अशोक और दो पुत्रियाँ- कुसुम व सुमन। उनके चार पुत्रों में से दो-अनिल शास्त्री और सुनील शास्त्री अभी भी हैं, शेष दो दिवंगत हो चुके हैं।

१९२९ में इलाहाबाद आने के बाद उन्होंने श्री टंडन जी के साथ भारत सेवक संघ के इलाहाबाद इकाई के सचिव के रूप में काम किया। यहीं उनकी नजदीकी नेहरू जी से भी बढ़ी। इसके बाद से उनका कद निरंतर बढ़ता गया जिसकी परिणति नेहरू मंत्रिमंडल में गृहमंत्री के तौर पर उनका शामिल होना था। इस पद पर वे १९५१ तक बने रहे।

भारत की स्वतंत्रता के पश्चात शास्त्री जी को उत्तर प्रदेश के संसदीय सचिव के रूप में नियुक्त किया गया था। वो गोविंद बल्लभ पंत के मुख्यमंत्री के कार्यकाल में प्रहरी एवं यातायात मंत्री बने। यातायात मंत्री के समय में उन्होंने प्रथम बार किसी महिला को संवाहक (कंडक्टर) के पद में नियुक्त किया। प्रहरी विभाग के मंत्री होने के बाद उन्होंने भीड़ को नियंत्रण में रखने के लिए लाठी के जगह पानी की बौछार का प्रयोग प्रारंभ कराया। १९५१ में जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में वह अखिल भारत कांग्रेस कमेटी के महासचिव नियुक्त किये गये। १९५२ में वह संसद के लिये निर्वाचित हुए और केंद्रीय रेलवे व परिवहन मंत्री बने।

भारत के दूसरे प्रधानमंत्री- १९६१ में गृहमंत्री के प्रभावशाली पद पर नियुक्ति के बाद उन्हें एक कुशल मध्यस्थ के रूप में प्रतिष्ठा मिली। ३ साल बाद जवाहरलाल नेहरू के बीमार पड़ने पर उन्हें बिना किसी विभाग का मंत्री नियुक्त किया गया और नेहरू की मृत्यु के बाद ९ जून १९६४ में वह भारत के प्रधानमंत्री बने। भारत की आर्थिक समस्याओं से प्रभावी ढंग से न निपट पाने के कारण शास्त्री जी की आलोचना हुई, लेकिन जम्मू कश्मीर के विवादित प्रांत पर पड़ोसी पाकिस्तान के साथ वैमनस्य भड़कने पर (१९६५) उनके द्वारा दिखाई गई दृढ़ता के लिये उन्हें बहुत लोकप्रियता मिली। ताशकंद में

पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान के साथ युद्ध करने की ताशंकद घोषणा के समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद उनकी मृत्यु हो गई।

धोती कुर्ते में सिर पर टोपी लगाए गांव गांव किसानों के बीच घूमकर हाथ को हवा में लहराता, जय जवान, जय किसान का उद्घोष करता। ये उसके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू है। भले ही इस महान व्यक्ति का कद छोटा हो लेकिन भारतीय इतिहास में उसका कद बहुत ऊंचा है। उनका कार्यकाल राजनीतिक सरगर्मियों से भरा और तेज गतिविधियों का काल था। पाकिस्तान और चीन भारतीय सीमाओं पर नजरें गड़ाए खड़े थे तो वहीं देश के सामने कई आर्थिक समस्याएं भी थीं। लेकिन शास्त्री जी ने हर समस्या का हल निकाल दिया जय जवान, जय किसान के उद्घोष के साथ उन्होंने देश को आगे बढ़ाया।

लाल बहादुर शास्त्री एक ऐसी हस्ती थे जिन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में देश को न सिर्फ सैन्य गौरव का तोहफा दिया, बल्कि हरित क्रांति और औद्योगिकरण की राह भी दिखाई। ईमानदारी की मिसाल माने जानेवाले शास्त्री जी किसानों को जहां देश का अन्नदाता मानते थे, वहीं देश के सीमा प्रहरियों के प्रति भी उनके मन में अगाध प्रेम था जिसके चलते उन्होंने जय जवान जय किसान का नारा दिया। पाकिस्तान ने १९६५ में यह सोचकर भारत पर हमला किया कि १९६२ में चीन से लड़ाई के बाद भारत की ताकत कमजोर हो गई होगी, लेकिन शास्त्री जी के कुशल नेतृत्व ने पाक ने नापाक इरादों को नाकाम कर दिया और उसे करारी शिकस्त भी दी। महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर रजनीश सिंह के अनुसार पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति अयूब खान को लाल बहादुर शास्त्री के उन बुलंद हौसलों का अंदाज नहीं था जिनके चलते पाकिस्तानी हुक्मरान को भारत के नेता के सामने गिड़गिड़ाना पड़ा।

अयूब खान की पाकिस्तान में काफी थू थू हुई और शास्त्री जी विश्व मंच पर एक प्रभावशाली नेता के रूप में स्थापित हो गए। पाक हुक्मरान ने अपनी इज्जत बचाने के लिए तत्कालीन सोवियत संघ से संपर्क साधा जिसके आमंत्रण पर शास्त्री जी १९६६ में पाकिस्तान के साथ शांति समझौता करने के लिए ताशकंद गए। इस समझौते के तहत भारत पाकिस्तान के वे सभी हिस्से लौटाने पर सहमत हो गया जहां भारतीय फौज ने विजय के रूप में तिरंगा झंडा गाड़ दिया था। इस समझौते के बाद दिल का दौरा पड़ने से ११ जनवरी १९६६ को ताशकंद में ही शास्त्री जी का निधन हो गया। उनकी मौत की आधिकारिक रिपोर्ट आज तक जारी नहीं हुई है। उनके परिजन मौत के कारणों पर सवाल उठाते रहे हैं। प्रोफेसर सत्यप्रकाश का कहना है कि शास्त्रीजी ने देश को सैन्य गौरव का तोहफा ही नहीं दिया बल्कि हरित क्रांति का सूत्रपात कर कृषि क्षेत्र में भारत को आत्मनिर्भर बनाने का काम भी किया। उनके दिए गए जय जवान जय किसान नारे ने देश के सैनिकों और किसानों में एक नयी उमंग और नया जज्बा भरने का काम किया। शास्त्रीजी ने देश के विकास की रफ्तार बढ़ाने के लिए उद्योगों को सरकारी नियंत्रण से बाहर निकालने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लाल बहादुर शास्त्री देश में सादगी भरे और ईमानदार व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं जो अपने खर्चों के लिए खुद को मिलनेवाली तनख्वाह पर निर्भर रहते थे।

जय जवान, जय किसान का नारा देनेवाले लाल बहादुर शास्त्री अत्यंत ईमानदार और सादगी पसंद नेता थे। दे में आए खाद्यान्न संकट के दौरान उन्होंने हर सोमवार को स्वयं उपवास रखकर देशवासियों को खाद्य बचत के लिए प्रेरित किया। देश में गेस्ट कंट्रोल ऑर्डर लागू हुआ ताकि खाद्यान्न की बरबादी न हो। यह चुनौती चल ही रही थी कि १९६५ में

पाकिस्तान ने हमला कर दिया। पाक के सैनिक तानाशाह अयूब खान को लगा कि भारत का नेतृत्व कमजोर हो गया है और छोटे कद के शास्त्री को वह दबाने में सफल हो जाएंगे। ऐसे मौके पर लाल बहादुर शास्त्री ने अत्यंत दृढ़ता का परिचय देकर राष्ट्र को समर्थ नेतृत्व दिया। भारतीय फौजों ने हमलावर को छठी का दूध याद दिला दिया। हमारी सेना इछोगिल नहर तक जा पहुंची थी और उसे रुकने का आदेश न दिया जाता तो लाहौर फतह कर लेती। पाकिस्तान के गुहार करने पर युद्धविराम हुआ और दोनों देशों के बीच रूसी नेता कोसिगिन ने ताशकंद समझौता कराया। भारत जीती हुई जमीन को वापस करने पर राजी हो गया। सबसे बड़ी शोकांतिका यह हुई कि शास्त्री का रहस्यमय स्थितियों में ताशकंद में निधन हो गया। समूचा देश शोक में डूब गया। अयूब ने दिल्ली पहुंचकर शास्त्री के पार्थिव शरीर को कंधा दिया।

अमरीका घटिया गेहूं भारत को बेचता था। अमरीका ने वह भी बंद करने की धमकी दी। शास्त्री जी ने राष्ट्रवासियों का आह्वान करते हुए कहा, हम एक वक्त भूखे पेट रह लेंगे पर अपनी आन पर आंच नहीं आने देंगे। सप्ताह में एक समय अन्न न खाने की उनकी अपील को लोगों ने खुशी से स्वीकार किया। भारत में जय जवान, जय किसान का नारा देनेवाले स्वर्गीय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री जी के स्वभाव से सीधे-सच्चे, रहन-सहन में साधारण और कद में छोटे होने के कारण कई बार बहुत लोगों ने धोखा खाया। सबसे बड़ा धोखा खाया पाकिस्तान के सैनिक राष्ट्रपति जनरल अयूब खां ने। १ सितम्बर १९६५ को पाकिस्तान ने कश्मीर पर टैंकों से भारी हमला कर दिया तो शास्त्री जी ने कहा, जीतने के लिए जो भी जरूरी हो करो क्योंकि हमें हारना नहीं है। १९६५ के उस युद्ध का हाल सर्वविदित है। जनरल अयूब खां का ख्याल था कि उनके नए बढ़िया टैंक दिल्ली जाकर ही रुकेंगे पर भारत के पुराने टैंकों ने ही उनका भुर्ता बना दिया। दो सप्ताह के युद्ध में ही पाकिस्तान का लड़ाई का जोश ठंडा हो गया। उसके समर्थक ब्रिटेन और अमरीका ने युद्ध विराम के लिए जोर डालना शुरू किया। उन दिनों भारत में अनाज की कमी थी।

लड़ाई का अंत समझौते से होता है। रूस ने मध्यस्थ बनकर ताशकन्द में भारत-पाकिस्तान का एक सम्मेलन बुलाया, जिसमें जनरल अयूब खां और शास्त्री जी ने भाग लिया। उस समझौते में भारत में उन प्रदेशों को खाली कर देने को कहा गया, जिन्हें उसने जीत लिया था। रूसी प्रधानमंत्री कोसीगिन ने यह पंच फैसला थोपा।

शास्त्री जी को इससे बहुत आघात पहुंचा। यह सम्मेलन ६ से १० जनवरी तक चला था। शास्त्री जी ताशकन्द में शांति की खोज में गए थे, उसके द्वार पर पहुंच भी गए थे किन्तु भागवान ने उसकी स्थापना का काम उनके लिए नहीं रखा था। राष्ट्रपति और गृहमंत्री को ताशकंद के रेडियो टेलीफोन ने झकझोर दिया। दिल्ली एक साथ चीख पड़ी। कुछ लोगों का कहना है कि वह पहले से ही हृदय के रोगी थे। कुछ अन्य को संदेह है कि उनकी मृत्यु स्वाभाविक नहीं थी।

२) महात्मा गाँधी

काठियावाड़ (गुजरात) में पोरबंदर, सुदामापुरी नाम की एक जगह है। २ अक्टूबर, १८६९ में यहीं गांधी जी का जन्म हुआ था। माता का नाम पुतली बाई और पिता का नाम करमचंद था। पिता पोरबंदर के दीवान थे बाद में राजकोट व वांकानेर के दीवान रहे। वे कुटुंबप्रेमी, सत्यप्रिय शूर, उदार पर क्रोधी स्वभाव के थे। वे भ्रष्टाचार से दूर भागते थे। शुद्ध न्याय करनेवाले उनकी शिक्षा बहुत नहीं थी मात्र अनुभव की थी। व्यवहारिक ज्ञान कुछ प्रकार का था। सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रश्नों को सुलझाने में सक्षम थे। धार्मिक शिक्षा नहीं के बराबर थी। उनमें द्रव्य एकत्र करने का लोभ भी नहीं था। इसलिये गांधीजी को विरासत में कोई धन, दौलत सम्पत्ति नहीं मिली।

२ अक्टूबर को सारा राष्ट्र राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जन्म दिवस पर उनको याद करके, उनके प्रति अपना प्रेम एवं सम्मान प्रकट कर रहा है। महात्मा गांधी एक ऐसा नाम है जिसका भारत में ही नहीं अपितु सारे संसार में एक विशिष्ट एवं सम्मानित स्थान है।

वैसे तो गांधी जी की अनेक उपलब्धियां एवं विशेषताएं हैं जिनसे कोई भी व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। इसी प्रकार ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहां महात्मा गांधी ने अपनी अमिट छाप न छोड़ी हो। शिक्षा, अर्थशास्त्र, राजनीति, समाज, स्त्री, जाति व्यवस्था धर्म आदि हर विषय पर महात्मा जी के अपने स्वतन्त्र एवं सबल विचार थे जिसने विश्व की हर शक्ति एवं विचारक को प्रभावित किया। अहिंसा महात्मा गांधी को एकदम नया एवं सबसे प्रभावी विचार था। महात्मा गांधी से पहले शायद ही किसी ने इस हथियार का इतने प्रभावी ढंग से उपयोग किया हो। अहिंसा के हथियार के बल पर ही गांधीजी ने देश को स्वतन्त्रता दिलवाई तथा विश्व की सबसे बड़े महाशक्ति को घुटने टेकने पर विवश किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हालांकि महात्मा गांधी ज्यादा दिन नहीं रहे परन्तु राष्ट्र के नीति निर्धारकों एवं विचारकों ने गांधीजी के मार्गदर्शन को ही अपना आदर्श बनाया।

माता पिताने गांधीजी का नाम मोहनदास रखा। इनके दादा औता गांधी थे। माता-पिता का खान-पान और रहन-सहन बहुत ही सादा था। माता सादगी स्त्री थी, बहुत श्रद्धालु थी। हमेशा मंदिर में जाती थी। गांधी जी का बचपन इसी सादगी में पनपा। उनके जीवन पर इसका बहुत असर पड़ा। जब उनके पिताजी राजकोट में थे तो उनकी उम्र कोई ७ साल की होगी तब उन्हें गांव की पाठशाला में भरती किया गया। १२ वर्ष की उम्र में उन्होंने हायस्कूल पास की। गांधीजी बहुत ही शर्मिले स्वभाव के थे। अपने काम से काम रखते, स्कूल समय पर पहुंचते और पाठशाला खत्म होनेपर घर आ जाते। उन्होंने शिक्षा के प्रति अपनी विनय कभी न चूकी। बड़ों के दोष न देखने का उनमें सहज गुण था। बड़ों की आज्ञा का पालन करते थे। पाठशालाओं की पुस्तकों के सिवा कुछ पढ़ने का शौक भी नहीं था। उन्होंने हरिश्चंद्र नाटक देखा और उससे बहुत प्रभावित हुए और उनके मन में एक ही धुन रहती मैं हरिश्चंद्र की तरह सत्यवादी एकनिष्ठ क्यों नहीं हो सकता। हरिश्चंद्र पर जैसी विपत्तियां पढ़ी वैसी ही विपत्तियों को सहना और सत्य का पालन करना ही वास्तविक सत्य है।

गांधी जी ने सत्य को ही परमेश्वर माना और इसी सत्य रूपी परमेश्वर को उन्होंने अपने जीवन भर कभी नहीं छोड़ा। जब वह बहुत छोटे थे और किसी छोटी कक्षा में पढ़ते थे तब एक बार इंस्पेक्टर उनकी कक्षा का मुआयना करने आया। इंस्पेक्टर ने विद्यार्थियों से पांच शब्द लिखवाए। चार शब्द तो सभी विद्यार्थियों ने ठीक लिखे, लेकिन पांचवां शब्द गांधी जी गलत लिख गए। कक्षा के अध्यापक की नजर जब गांधी जी की स्लेट पर पड़ी तो उसके चेहरे का रंग उड़ गया। इंस्पेक्टर की नजर बचाकर अध्यापक ने गांधीजी के पैर में ठोकर मारी और इशारा किया कि वह आगेवाले लड़के की नकल कर ले लेकिन गांधी जी ने नकल नहीं की।

अपने बचपन की इस घटना के बारे में गांधी जी ने खुद लिखा है कि यह बात किसी प्रकार मेरी समझ में आ ही नहीं सकती थी कि मेरा अध्यापक यह चाहता है कि मैं अपने साथी की स्लेट से अक्षरौटी नकल कर लूं। मेरे विचार में तो अध्यापक वहां था ही इसलिए कि वह हमें एक-दूसरे की नकल न करने दे।

गांधीजी में वैसे अनेक गुण थे लेकिन उनका सबसे बड़ा गुण था सत्य की पूजा। सत्य के बारे में उन्होंने लिखा है कि आमतौर पर सत्य का अर्थ हम केवल सच बोलना लेते हैं लेकिन हमने सत्य शब्द का इस्तेमाल बड़े अर्थ में किया है। विचार में, बोलने में और बरतने में सच्चाई रखना ही सत्य है। इस सत्य को पूरा समझनेवाले के लिए जगत में और कुछ जानने को नहीं रहता। समूचा ज्ञान इसमें समाया हुआ है। सत्य को सही बरतना सीख जाएं तो हमें तुरंत मालूम हो जाएगा कि कौन-सा काम करने लायक है और कौन-सा छोड़ने लायक है।

१३ वर्ष में ही उनका विवाह पौरबंदर में कस्तुरबा से हो गया। तब तक वो शादी का अर्थ भी नहीं समझते थे बस यही एक धुन थी कि अच्छे अच्छे कपड़े मिलेंगे, बाजे बजेंगे, अच्छा मिष्ठान्न मिलेगा और एक नयी लड़की के साथ विनोद करने का अवसर मिलेगा। शादी का अर्थ ही दो निर्दोष बालकों ने अंजाने संसार में प्रवेश किया। गांधीजी एक पत्नीव्रत निष्ठ थे और साथ में यह भी बात थी कि जैसे पत्नी के साथ विश्वासघात हो नही सकता वैसे पत्नी भी एकनिष्ठ हो। अपनी पत्नी को एक आदर्श स्त्री बनाना चाहते थे। वे अपनी पत्नी के प्रति विषयासक्त थे। वह कर्तव्यपरायण थी। शादी के बाद भी उनकी पढ़ाई जारी रही। कभी भी माता पिता के पास उनके खराब अभ्यास या आचरण के लिए प्रमाणपत्र नहीं गया। गणित मे कमजोर विद्यार्थी थे। अध्यापक ने इन्हें दो क्लास की एकसाथ तैयारी करने के लिए प्रोत्साहित किया। प्रयत्न करते करते उन्हें गणितशास्त्र का भी अभ्यास हो गया पर संस्कृत ने गणित से

भी अधिक परेशान किया। यह समझकर कि फारसी भाषा आसान है वे इस भाषा की ओर लग जाए। पर शिक्षक के सुझाव से संस्कृत भी सिखना जारी रखा। गांधीजी बचपन में बहुत डरपोक थे। चोर, भूत, सांप के डर उन्हें घेरे रहती थी। रात को अकेले जाने की हिम्मत नहीं करते थे। उनके किसी एक संगी साथी को उनकी कमजोरियों का पता था। उसने उनको सुझाव दिया कि मांसाहार करोगे तो आप इन कमजोरियों से मुक्त हो जाओगे। उनके संस्कार बिलकुल ही इसके विपरित थे। गांधी परिवार वैष्णव संप्रदाय का था। माता-पिता बहुत ही कट्टर माने जाते थे पर गांधीजी का अपने माता पिता पर अनन्य प्रेम था और वे डरते थे कि मांसाहार की बात कई उनको न मालूम पड़े। इसलिए मांसाहार करने का निश्चय उनके लिए गंभीर और भयंकर था। मांसाहार का शौक नहीं था पर बलवान और हिम्मतवाला बनने के सुधार में इस जोश में होश खो बैठे। गांधीजी ने मांसाहार शुरू किया। वर्ष में २-४ बार ही मांस खाया पर उनका मन बार बार कचोटता रहा कि माता-पिता को धोखा देना और झूठ बोलना अति हानिकारक है। जब तक माता पिता जीवित है मैं यह काम नहीं करूंगा और मांसाहार छोड़ दिया। ईश्वर जिसे बचाना चाहता है वे गिरना चाहे तो भी पवित्र रह सकता है। इस तरह बच जाने के लिए उन्होंने सदा ईश्वर का आभार माना और उन्होंने यह समझा कि इस मित्र की मित्रत्वता मेरे लिए अनिष्ठ है। इस मित्र के कारण पति पत्नी के नाते भी दोनों के बीच दुराव पैदा हुआ, कलह जगा। इस मित्र की बात मानकर उन्होने अपनी धर्मपत्नी को भी दु:ख पहुंचाया। गांधीजी जब ब्रह्मचारी की महिमा समझ गये तो यह समझा कि पत्नी पति की दासी नहीं होती बल्कि उसकी सहचारिणी है। गांधीजी जब सोलह वर्ष के थे तो उनके पिताजी की मृत्यु हो गयी। वो काफी लम्बे समय तक बीमार रहे। उन्होंने उनकी खूब सेवा की। माता पिता के प्रति भक्ति की इनकी कोई सीमा नहीं थी। उनके लिए वे सबकुछ छोड़ सकते थे पर मृत्यु के समय गांधीजी उनके निकट नहीं थे। उन्हें अपने एक रिश्तेदार के साथ धूम्रपान करने का शौक हो गया। कालांतर उन्होंने धूम्रपान छोड़ दिया और प्रतिज्ञा की भविष्य में कभी धूम्रपान नहीं करेंगे। १६ बरस की उम्र तक उनकी पढ़ाई हुई उसमें उन्होंने कहीं भी धर्म की शिक्षा प्राप्त नहीं की। धर्म अर्थात आत्मबोध, आत्मज्ञान। उनकी दाई रंभा से उन्होंने रामायण का अर्थ समझा। भूत प्रेम का डर, राम नाम की औषधि है। भूत प्रेम के भय से बचने के लिए राम नाम का जप शुरू किया। बचपन में जो बीज बोया वह नष्ट नहीं हुआ। राम नाम उनके लिए एक अमूक शक्ति थी।

गांधी जी उन ऐसी महान विभूतियों में से हैं जिनके मुंह से मरते समय हे राम निकला था और यह इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि गांधी जी राम नाम का अभ्यास करते रहे हैं। इसीलिए यह कहने में कोई अतिशयोक्ति न होगी कि गांधी जी वास्तव में ही महात्मा थे। यदि उनका जन्म स्वतंत्र भारत में हुआ होता तो जो समय उनको स्वतंत्रता के लिए देना पड़ा वह समय वह देश अथवा विश्व के उत्थान में लगाते और इससे देश की अवस्था आज से भिन्न होती। गांधीवादी राजनीतिज्ञों को उनके जीवन से सीख लेते हुए उनके बताए हुए मार्ग पर चलकर सांप्रदायिकता व भ्रष्टाचार जैसे जहर को समाप्त करना चाहिए।

बापू की भजनों मे विशेष रुचि थी, सबमे ईश्वर का अंश मानते हुए प्रेम व अहिंसा का मार्ग उन्हें प्रिय था और षट्रिपु उनसे सर्वथा विलग थे। वे उच्चकोटि के साधक भक्त थे। उनके विचार में- सत्य ही परमेश्वर है, और सत्य की आराधना ही भक्ति। परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्म-शुद्धि अनिवार्य आवश्यकता है, जिसे भगवन्नाम का आश्रय लेकर सहजतापूर्वक प्राप्त किया जा सकाता है। बचपन मे भूत-प्रेत से डरने पर रम्भा दाई द्वारा उन्हे राम-नाम का मंत्र दिया गया। स्कन्दपुराण मे द्वयक्षर-मंत्र राम को मंत्रराज कहा गया है, जो पापों का विनाश कर अन्त:करण को शुद्ध करता है। गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था कि भगवन्नाम की महिमा बुद्धिगम्य नही, अपितु अनुभव-साध्य है। वे रात-बिरात चुपके-चुपके माला भी जपते थे। उनका स्पष्ट मत था- अनेक संकटों से राम-नाम ने मेरी रक्षा की है। यदि मै व्यभिचारी होने से बचा हूँ, तो राम-नाम की बदौलत। जापानी पर्यटक- दल द्वारा उन्हे भेट किए गए तीन बंदरों की प्रतिकृतियों के आधार पर गाँधीजी ने बुरा न देखने, बुरा न सुनने व बुरा न कहने को आत्म-शुद्धि का साधन माना। गाँधीजी जगत् की सभी वस्तुओं मे परमात्मा का ही स्वरूप देखते थे (सर्व खल्विंद ब्रह्म), जिसे गोस्वामी तुलसीदासजी ने सीय-राममय सब जग

जानी व हरिव्यापक सर्वत्र समाना कहकर, वर्णित किया है। गाँधीजी गीता को सद्गुरु तथा माता का रूप मानते थे, और अपनी समस्त कठिनाइयों का निवारण उसमे पाते थे। गीता से उनका परिचय सर्वप्रथम एड्विन ऑर्नोल्ड के पद्यानुवाद से सन् १८८८-८९ में हुआ था। उन्होंने बाल गंगाधर तिलक की लिखी गीता रहस्य भी पढ़ी। टॉल्स्टॉय की लिखी पुस्तक- बैकुण्ठ तुम्हारे हृदय में है (द किंगडम ऑफ गॉड इज् विदिन यू) ने भी उन्हे बहुत प्रभावित किया। सन् १९२९ मे बापू ने कौसानी में गीता का हिन्दी अनुवाद- अनासक्ति योग लिखा, और सन् १९३० मे यरवदा जेल मे संपूर्ण गीता का सार- गीताबोध गुजराती मे लिखा।

कभी कभी घर में ही भागवत का ग्रंथ पढ़ने का मौका मिला। जिसे पढ़कर धर्मरस उत्पन्न हुआ। राजकोट में ही उन्हें सब सम्प्रदायों के प्रति समान भाव रखने की शिक्षा मिली। उनके पिताजी के मुसलमान और पारसी मित्र थे। वे अपने अपने धर्म की बातें करते। उनके पिताजी उनकी बातों को सम्मानपूर्वक सुनते थे। ऐसे वार्तालापों के समय गांधीजी वहां उपस्थित रहते थे। इसी कारण सब धर्मों के प्रति उनका समान भाव पैदा हो गया। मनुस्मृति पढ़कर उन्होंने जाना संसार नीति पर टीका हुआ है। नीतिमात्र का समावेश सत्य में है। इसप्रकार दिनों दिन सत्य की महिमा उनकी दृष्टि में बढ़ती गयी। सत्यकी व्याख्या विस्तृत हो गयी। जीवन में मनुस्मृति से यह बदलाव हृदय में घर कर गया कि अपकार का बदला अपकार नहीं उपकार ही हो सकता है। उनके हृदय में विचार हो गया- जो हमें पानी पिलावे, उसे हम भोजन करावें। जो हमारे सामने शीश झुकावे, उसे हमत उमंग से दण्डवत् प्रणाम करें। जो हमारे प्राण बचाए, उसके दु:ख को दूर करने में हम अपने प्राण न्यौछावर कर दें। उपकार करनेवाले के प्रति तो मन, वाणी और कर्म से दस गुना सपकार करना चाहिए। लेकिन जग में सच्चा और सार्थक जीना उसी का है, जो अपकार करनेवाले के प्रति भी उपकार करता है।

सन १८८७ में मॅट्रीक परीक्षा पास की। परिवारवाले चाहते थे कि कॉलेज में आगे बढ़े। इसलिए उन्होंने भावनगरी के शामलदास कॉलेज में प्रवेश लिया। अध्यापकों की व्याख्यानों में ना तो रस आता था ना कुछ समझ पड़ता था। पहली टर्म पूरी करके भावनगर से घर आए। मावजी दवे परिवार के पुराने मित्र सलाहकार तथा विद्वान कुशल ब्राह्मण थे। माताजी और बडे भाई के साथ बातचीत कर आग्रहपूर्वक सलाह दी कि इस लड़के को बॅरिस्टर बनने के लिए विलायत भेजना चाहिए। बड़े भाई सोच में पड़ गये। आर्थिक समस्या है। कैसे यह पूरा होगा। माताजी कहती थी इस नवयुवक को इतनी दूर कैसे भेजा जाएं। पोरबन्दर के एडमिनिस्ट्रेटर गांधी परिवार के लिए अच्छी राय रखते थे। उनके बड़े भाई ने सोचा उनके द्वारा राज्य की ओर से थोड़ी बहुत मदद मिल सके तो ली जाए। गांधीजी के काकाजी ने अपनी मां की इजाजत लेने को कहा। गांधीजी पोरबंदर कि एडमिनिस्ट्रेटर से मिले। उन्होंने कहा पहले तू स्नातक की उपाधि ले बाद में कोई रास्ता निकालेंगे। अभी कोई मदद नहीं मिलेगी। गांधीजी वापस लौट आए और जोशी दवे ने सलाह दी कि कर्ज लेकर भी विलायत जाना चाहिए। कईयों ने उनकी मां को समझाया। नौजवान बच्चे विलायत जाकर बिगड़ जाते है। किसी ने कहा यह बच्चे मांसाहार करने लगते है, किसी ने कहा बिना शराब के काम नहीं चलता क्योंकि वहांपर बहुत ठंड है। गांधीजी ने माता को आश्वासन दिया कि वे तुम्हें धोखा नहीं देंगे और हमेशा इन चीजों से बचेंगे। वे बेचरजी स्वामी से पूछने गई। वे परिवार के सलाहकार थे। उन्होंने तीन प्रतिज्ञा करायी मांस, मदिरा तथा स्त्री सेवन से दूर रहेंगे। इसके पश्चात उनकी माता ने आज्ञा दे दी। गांधीजी के विदेश जाने के इस सूचना से जाति में खलबली मची। उस समय विदेश जाने के लिए जातिवालों का विरोध था, लेकिन गांधीजी ने अपना निश्चय नहीं बदला। जाति के पंचों ने कहा- क्या तू जाति का हुकूम नहीं मानेगा। गांधी जी ने जवाब दिया कि वे लाचार है और जाति को बीच में नहीं पडना चाहिए। जाति के पंच ने इसको जाति बहिष्कार कर दिया। १८८८ के सितंबर महीने की चार तारीख को उन्होंने मुम्बई गवर्नर छोड़ा।

स्टीमर में सवार हो गए। पुरी तरह से अंग्रेजी नहीं आती थे। उनके साथ बातचीत करना, कांटे -चम्मचद्वारा खाना वो नहीं जानते थे। मुसाफिरों ने कहा- कि अमिष भोजन के बिना आपका जीवन नहीं चल पायेगा। गांधीजी ने सोच- अगर अमिष भोजन के बिना नहीं चलता तो वे वापिस हिंदुस्तान लौट जाएंगे। सुख दु:ख के साथ उनकी समुद्री यात्रा पूरी हुई। साउदेम्टन बंदरगाह उतरे। वहां उन्हें डॉ. प्राणजीवन मेहता मिले। वहां के लोग अजीब लोग थे। अजीब रहन-सहन था। घर भी अजीब ही थे। खाने पीने का परहेज और जो

भी पदार्थ मिले वो रूखे और रसहीन लगते थे। किसी तरह तीन साल पूरा करने का निश्चय किया। डॉ. प्राणजीवन मेहता ने उन्हें एक मित्र के यहां ठहराया। अंग्रेजी सीखायी और बात करने की आदत डाली। अपनी प्रतिज्ञा से बंधे रहने के कारण आमिष आहार नहीं किया। इसके बाद डॉ. मेहता ने उन्हें एक परिवार के घर में रख दिया। गांधीजी ने वहां निरामिष आहार देनेवाला भोजन गृह ढूंढ लिया। स्वयं अन्नाहारी रह और दूसरों को भी वैसा बनाने का उपदेश देने लगे।

मित्रों के विचार और आचार की भिन्नता रहते हुए भी गांधीजी का उनमें प्रेम बढ़ा। सभ्य पुरुष के लक्षण अपनाने के लिए अपनी हैसियत से बाहर का रास्ता अपनाया और आर्मी ॲण्ड नेवी स्टोअर में अपने कपड़े सिलवाये। विदेशियों में सभ्य पुरुषों के लिये नाचना आना चाहिए, फ्रेंच भाषा ठीक से जाननी चाहिए और लच्छेदार भाषण करना आना चाहिए। यह सब सीखने के लिए गांधीजी विद्यार्थी बने रहे। गांधीजी भी अपने खर्चे के लिए पायी पायी का हिसाब रखते थे। एक भाड़े का कमरा लेकर उसमे रहना शुरु किया और काम के स्थल पर पैदल ही जाया करते थे। इसके लिए वे हमेशा स्वस्थ्य रहते थे। लैटिन भाषा की परीक्षा में नापास हुए फिर भी इसके लिए दोबारा परीक्षा देने की तैयारी की। सादा जीवन बीता रहे थे। भाई की तंगदस्ती और उनकी उदारता के विचार ने गांधीजी को व्याकुल बना दिया। सादगी के कारण गांधीजी का जीवन रसहीन बना रहा। इसी प्रकार उन्होंने अपनी परिवार की स्थिति के साथ रहन सहन का मेल बिठा लिया। जीवन अधिक सारमय बना। उबली हुई सब्जी स्वादिष्ट लगने लगी। अनेक अनुभवों ने गांधीजी को सिखाया स्वाद का सच्चा स्थान जीभ नहीं बल्कि मन है।

अन्नाहारी मंडली की कार्यकारिणी समिति चुन लिये गये, लेकिन उसमें बोलने के लिए अभ्यास नहीं था। इस मंडल का हेतू केवल अन्नाहार का प्रचार करना था अन्य नीतियों का नहीं। विदेश छोड़ने की तैयारी होने लगी। उनकी भाषण देने की शर्म दक्षिण अफ्रीका में छूटी। उन्हें अपने विचारों पर काबू पाने की आदत पड़ी और बिना सोचे या बिना तोले कोई भी शब्द नहीं बोलते थे। इसी कारण परिपक्व जीवन व्यतीत करने में उन्हें लाभ हुआ और सत्य की पूजा निष्ठ रहने में सहायता मिली। गांधीजी एक पुत्र के पिता होते हुए भी विलायत में अपने आपको कुंवारा बता देते थे। विलायत रहने तक एक विधवा बूढ़ीया के साथ उनकी मित्रता हुई। उस शुद्र महिला को उन्होंने बताया वे शादीशुदा है। लगभग लौटती डाक से विधवा मित्र का उन्हें जवाब मिला, उनका मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता हमारी मित्रता तो जैसी थी वैसी बनी रहेगी। गांधीजी के मन में जो असत्य का जहर घुस गया था वो बाहर निकला। विलायत में रहते करीबन एक साल बीत गया। वहींपर उन्हें मित्रोंके साथ गीता का अध्ययन विस्तृत रूप से हुआ और यह आभास हुआ कि भगवद्गीता अमूल्य ग्रंथ है। धीरे धीरे उनकी मान्यता बढ़ती गयी और तत्वज्ञान के लिये उसे सर्वोत्तम ग्रंथ माना। निराशा की घड़ियों में इस ग्रंथ ने उनकी अमूल्य सहायता की। इसाई मित्रों ने बाइबल पढ़ने की सलाह दी और गांधीजी ने उसका अध्ययन किया। बाइबल से उन्होंने सीखा जो तुझसे कुर्ता मांगे, उसे तू अंगरखा देना, जो तेरे दाहिने गाल पर तमाचा मारे, उसके सामने बायां गाल भी कर देना। गांधीजी ने अनुरोध किया त्याग में धर्म है और दूसरे धर्म के बारे में पढ़ने की इच्छा हुई। गांधीजी ने पैगम्बर सम्बन्धी पुस्तकें भी पढ़ी। उनकी महत्ता का, वीरता का और तपस्या का ज्ञान प्राप्त हुआ। उन दिनों श्रीमती बेसेंट की कीर्ति खूब फैली हुई थी। वे नास्तिक न रहकर आस्तिक हो गयी थी। इस नास्तिक वाद के प्रति वे उदासीन हो गये। १८९० में पोर्टस्मर्थ के सम्मेलन में गांधीजी अपने आचरण से गिरते गिरते बचे और ईश्वर का धन्यवाद करते हुए बोले कि ईश्वर ने उन्हें गिरने से बचा लिया।

बैरिस्टर बनने के बाद मित्रों के साथ बैठने पर खाने पीने में अच्छे से पदार्थ और पीने के लिए शराब होती थी। पर गांधीजी ने शराब को नहीं छुआ। कानून की पढ़ाई आसान थी। परीक्षा की पुस्तकें नीयत थी। लेकिन उन्हें तो कभी कभार ही पढ़ता था। रोमन कायदे पर और इंग्लैंड की कानून पर छोटी छोटी टिप्पणियां मिलती थी। उन्हें पढ़कर ही परीक्षा पास की जाती थी। गांधीजी तो मूल पुस्तकें ही खरीदी और पढ़ाई की। १० जून १८९१ में वे बैरिस्टर बने और ११ जून को इंग्लैंड के हाईकोर्ट में रजिस्ट्रेशन करवाया तथा १२ जून को हिन्दुस्तान लौट पडे। बॅरिस्टरी पास करना आसान था लेकिन बॅरिस्टरी करना कठिन था। कानून तो पढ़े लेकिन वकालात करने का अभ्यास नहीं था। पढ़े हुए कानूनों में हिंदुस्तान के कानून अलग थे। मित्रों ने सुझाया फिरोजशाह और बदरुद्दीन की सहायता लो। साधारण प्रामाणिकता और लगन से मनुष्य वकालात का धन्धा अवश्य कर सकता है। इन सब की आशा से गांधीजी आसाम स्टीमर से बम्बई बंदरगाह पर लौट आये।

हिंदुस्तान में धंधे की चिंता थी। जैसे ही हिंदुस्तान में उतरे वे अपने माता को देखने के लिए अधीर थे। मुंबई पहुंचने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि पीछे से उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। इस मृत्यु के समाचार से उन्हें सबसे बड़ा आघात पहुंचा। डॉ. मेहता के भाई रेवाशंकर जगजीवन से उनकी जन्म की मित्रता थी जो कि कवी रायचंद डॉक्टर के बड़े भाई के जमाई थे। रेवाशंकर जगजीवन की पेढ़ी के भागीदार और कार्यकर्ता थे। उस समय उनकी आयु २५ वर्ष की रही होगी। वे बड़े चरित्रवान और ज्ञानी थे। गांधीजी उनके व्यापकशास्त्र जानकर मुग्ध हो गये। उनके शुद्ध चारित्र और आत्मदर्शन की उनकी जबरदस्त लगन पर। वे स्वयं हजारों का व्यापार करते थे। हीरा मोती की परख करना जानते थे और व्यापार की उलझने सुलझाते थे। गांधीजी के साथ धर्म चर्चा करते थे। रायचंद भाई के प्रति आदर रखते हुए भी अपने हृदय में धर्मगुरु का स्थान नहीं दे सके। गांधीजी के जीवन में गहरी छाप डालनेवाले रायचंद भाई टॉलस्टॉय की पुस्तक, स्वर्ग तेरे हृदय में है और रस्किन की पुस्तक अन्टु दिस लास्ट नामक अपनी पुस्तक गांधीजी पर गहरा असर पड़ा।

गांधीजी जाति, बहिष्कार किये हुए थे वहां भी दो पक्ष खड़े हुए। एक पक्ष ने गांधीजी को जाति में शामिल कर लिया। दूसरे पक्ष में गांधीजी को स्वीकार नहीं किया। जिस पक्ष ने उनको जाति बहिष्कार किया उस पक्ष में प्रवेश करने का कभी प्रयत्न भी नहीं किया। जाति बहिष्कार के पक्ष का नियम कायदों का पूरा आदर करते थे इसलिए वे अपने सास ससुर और बहन के घर भी पानी तक नहीं पीते थे जबकि रिश्तेदारी लोग छिपे तौर पर पानी पिलाने को तैयार होते। जो बात खुले में नहीं की जा सके उसे छिपकर करने के लिए गांधीजी का मन तैयार नहीं होता था। गांधीजी को अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में सुधार करना था। गांधीजी के एक पुत्र था। परिवार का साथ उन्हें बहुत अच्छा लगता था। गांधीजी ओटमिल, दलिया और चाय-कॉफी का सेवन करते थे। मित्रों ने सलाह दी की उन्हें मुम्बई कानून हायकोर्ट का अनुभव लेना चाहिए और गांधीजी मुंबई के लिए रवाना हो गए और गांधीजी ने मुंबई में अपना घर बसाया। लेकिन चार पांच महिने से अधिक मुंबई में रहना संभव नहीं हुआ क्योंकि खर्च बढ़ता गया और आमदनी कुछ भी नहीं थी।

स्मॉल कॉज कोर्ट का एक केस मिला लेकिन दलाल को कमिशन देने का सवाल उठा तो गांधीजी को कतई स्वीकार नहीं हुआ। तब गांधीजी को सिर्फ उस केस के तीस रुपये मिले। केसों की अर्जी तैयार का काम मिला। उनका उद्योग बढ़ता गया। पर उससे भी उचित आमदनी नहीं थी। मुंबई से निराश होकर वापस राजकोट चले गए। हर महीने तीन सौ रुपये की औसत आमदनी होने लगी। राजकोट में रहते हुए पोरबंदर की मेमन पेढ़ी का भाई के पास संदेश आया कि उनका व्यापार दक्षिण अफ्रीका में है। उनकी पेढ़ी वहां है और उनका एक केस बहुत समय से चल रहा है। अगर आप वहांपर आपके भाई को भेज दे तो हमारी मदद भी हो जाएगी उसके लिए भी कुछ आर्थिक मदद भी हो जायेगी। हमारा केस हमारे वकील को समझाया भी जाएगा। गांधी जी ने अपने बड़े भाई से इसकी चर्चा की। गांधी के बड़े भाई ने दादा अब्दुल्ला के भागीदार सेठ अब्दुलकरीम झवेरी से मिला दिया। करीम सेठ ने कहा आपको आने जाने का फर्स्ट क्लास का किराया और रहने खाने के लिए १०५ पौंड मिलेंगे। गांधीजी ने प्रस्ताव स्वीकार किया और दक्षिण अफ्रीका जाने को तैयार हुए।

कुछ लोग व्रत का मतलब केवल उपवास समझते हैं। गांधी जी भी इस तरह के व्रत रखते थे। वह हफ्ते में एक दिन उपवास करते थे। उस दिन वह मौन भी रहते थे। उनका कहना था कि ऐसे व्रतों में शरीर, मन और आत्मा की शुद्धि होती है लेकिन वह केवल उपवास और मौन को ही व्रत नहीं मानते थे। व्रत का बहुत बड़ा अर्थ लेते थे। उनका कहना था कि किसी भी अच्छी बात को पूरा करने का अडिग निश्चय व्रत है। वह जब देखते कि कोई आदमी बुरे मार्ग पर चल रहा है तो उसे ठीक रास्ते पर लाने के लिए व्रत रख लिया करते थे।

गांधीजी ने लिखा है- किसी को भी न मारना, यह तो अहिंसा है ही। तमाम खराब विचार हिंसा है, द्वेष, बैर, डाह हिंसा है। किसी का बुरा चाहना हिंसा है। झूठ बोलना हिंसा है। जिन चीजों की पूरे जगत को जरूरत है, उन पर कब्जा रखना हिंसा है। जो आदमी अहिंसा की राह पर चलता है वह कभी दूसरे को पीड़ा नहीं पहुंचाता। इस संबंध में गांधी जी ने लिखा है- हमें चोर सताते हैं, तब उनसे बचने के लिए हम उन्हें सजा देते हैं। उस क्षण वे भाग जरूर जाते हैं, पर दूसरी जगह जाकर डाका डालते हैं। लेकिन वह दूसरी जगह भी हमारी है, इसलिए हम तो अंधेरी गली में टकराए। इससे बेहतर तो यह है कि चोरों में भाई बंधु की भावना पैदा करें। उन्हें अपनाने का तरीका ढूंढने की तकलीफ उठाएं। यह है अहिंसा की राह। इस प्रकार गांधीजी न सिर्फ सिद्धांत बनाए बल्कि उन्हें अपने व्यावहारिक जीवन में भी उतारा। वह दूसरों को उपदेश देने से पहले उसे अपने जीवन में प्रयोग करते थे। ३० जनवरी १९४८ को इस महान व्यक्तित्व की गोडसे ने गोली मारकर हत्या कर दी। तब से यह दिन शहीद दिवस के रूप में मनाया जाता है।

बड़ा ही अजीब हाल है। एक तरफ तो पर्दे के सामने गाली दी जा रही है और दूसरी तरफ आड़ में उसी व्यक्ति सा बनने के लिए आपा-धापी मची हुई है। हर कोई उस व्यक्ति सी नकल करता है और उसके जैसा व्यवहार करने का प्रयत्न करता है लेकिन जनता के सामने उसी के आदर्शों को गर्त में ढकेलता दिखता है। वही महात्मा गांधी, हाड़-मांस का धोती लपेटे एक ऐसा मनुष्य जिसने सहकर संयम के सहारे सारी दुनिया पलटकर रख दी। जिसके आदर्शों को विश्व के कोने-कोने में पूजा जा रहा है। एक ऐसा व्यक्ति जिसके हर कदम का दुनिया लोहा मानती है। हर गली, रास्ते और चौक का नाम देकर उनकी कृति का स्मरण करती है तो यहां उनकी मातृभूमि में कुछ टुच्चे और भटके स्वार्थी उन्हें गालियां सुनाते हैं।

कोई क्या जाने कि गांधी बनना एक प्रक्रिया का नाम है। एक सतत समरसता। एक आदर्श सरिता का कल-कल करते हुए बहना, जिसमें सारे गंदे नाले और मल आकर उस ओज और पवित्रता के जल में शुद्ध होते हैं। गांधी के आदर्शों की व्याप्ति जितनी थी और आज है, उतनी शायद विश्व में कभी नहीं थी। पूरब से पश्चिम तक और यासर अराफात से लेकर नेल्सन मंडेला तक, जिसने भी गांधी को अपना आदर्श माना वह लिविंग लीजेंड बन गया। गांधी से कइयों की असहमतियां थी और हैं, इसके बावजूद वे गांधी को आदर्शतम वजूद मानते रहे क्योंकि वे जानते थे कि गांधी कुंठित नहीं थे, साम्प्रदायिक नहीं थे। मनुष्यों के बीच गांधी की गहरे पैठ थी। गांधी ने देश और देशवासियों को समझने की कोशिश की और उनसे एकाकार होने की चेष्टा की। गांधी की भारी आलोचना हो सकती है और होती भी है। कई की नजर में गांधी का अर्थशास्त्र गलत है लेकिन उनके महामानवी व्यक्तित्व के आगे सभी नतमस्तक हो जाते हैं। वर्तमान प्रपंची से उनकी तुलना एक अक्षम्य अपराध है। एक मायावी व्यवसायी की तुलना गांधी से करना पूरी उस पीढ़ी को गाली देने के बराबर

है।

गांधी एक अकादमी थे, जिन्हें पृथ्वी पर विचार का विशाल सागर माना गया। वे किसी भी जाति धर्म वर्ग से परे हटकर राजनीति के विकार मुक्त विचारक और मार्गदर्शक थे। इससे पहले भी कुछ अलग विचारधारा वाले आए जिनका गांधी से विरोध था लेकिन किसी ने खुद को गांधी कहलवाने की कोशिश नहीं की। दरअसल ये एक सोची समझी योजना के तहत इतिहास को अपने ढंग से बदलने की कोशिश है जिसकी शुरुआत हो चुकी है। आज हमें विदेश से नहीं बल्कि देश के इस तथाकथित बौद्धिक वर्ग से सबसे बड़ा खतरा है। आज जरूरत है कि सत्य को सामने रखकर इस तरह के कुत्सित प्रयासों को खत्म करवाया जाए वरना यह एक झूठ हजार बार बोले जाने पर सार्वभौमिक सत्य बनकर उभरेगा और गांधी भी विदेशियों के बीच उसी स्थिति में पहुंचकर पूजनीय हो जायेंगे जिस प्रकार महात्मा बुद्ध हो गए हैं।

महात्मा गांधी आज भी उतना ही संदर्भ रखते हैं, जितना पहले रखते थे। यह भी कहा जा सकता है कि आज उनकी आवश्यकता न केवल भारत बल्कि समूचे विश्व को कहीं ज्यादा है। आज जीवनमूल्य क्षीण हो गए हैं, राजनीति सिद्धांतविहीन हो चली है। राष्ट्रीय चरित्र खोता चला जा रहा है। आज ऐसे नेता नजर नहीं आते जिन्हें लेकर कोई विद्यार्थी लाइफ आफ ए ग्रेट मैन शीर्षक से निबंध लिखे। भारत की आत्मा को यदि किसी ने पहचाना था तो युगपुरुष महात्मा गांधी ने। बापू इसलिए संदर्भ रखते हैं क्योंकि उन्हीं के अहिंसक सत्याग्रह रूपी अस्त्र को आज भी बखूबी इस्तेमाल किया जा रहा है। अण्णा हजारे ने गांधीवादी मूल्यों को रेखांकित करते हुए लोकपाल बिल की मांग को लेकर आंदोलन किया। धरना-प्रदर्शन की जिस बुनियाद को महात्मा गांधी ने रखा, वह केजरीवाल के समय भी इतना ही सशक्त प्रतीत हो रही है। इसके बावजूद कुछ प्रश्न ऐसे हैं जो अपना जवाब मांगते हैं।

आज की राजनीति में इतना छल और वादाखिलाफी आ गई है कि सिद्धांतों को खोजना घास के ढेर में सुई तलाशने के समान है। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त बेरोजगारी की वजह यह है कि बापू के ग्रामोद्योग तथा गांवों को आत्मनिर्भर बनाने की सीख को नहीं माना गया। सादगी और स्वदेशी की विचारधारा अपनाई जाती तो देश पर विदेशी कर्ज का इतना बोझ नहीं बढ़ता तथा सरकारी खजाने का इतना अपव्यय नहीं होता। बापू ऐसा भारत कदापि नहीं चाहते थे जिसमें राजनेताओं के पास बेहिसाब संपत्ति का अंबार हो, काले धन की समानान्तर अर्थव्यवस्था हो, कदम-कदम पर भ्रष्टाचार हो। उनका अपरिग्रह और ट्रस्टीशिप का विचार आज भी राष्ट्र के लिए उपयोगी हो सकता है। बापू ने समाज के हर वर्ग किसान, मजदूर और महिलाओं के बारे में भी उपयोगी विचार व्यक्त किए थे। यदि उनके सिद्धांतों का किंचित भी अनुसरण किया जाता तो आज के समान दुर्दशा का सामना नहीं करना पड़ता।

यह एक विचित्र संयोग ही है कि आज ११ सितम्बर को अमरीका पर आतंकवादी हमले के काले दिन के रूप में याद किया जाता है, जबकि ठीक इसी दिन १०० साल पहले महात्मा गांधी ने सत्याग्रह का ब्रह्मास्त्र दुनिया को सौंपा था। सत्याग्रह नामक यह ब्रह्मास्त्र न केवल भारत की स्वतंत्रता का आधार बना बल्कि विश्व ने अनेक देशों के लिए इसने प्रेरणास्त्रोत का काम किया।

१०० साल पहले सन् १९०६ में अफ्रीका की अंग्रेज सरकार ने वहां की शोषित भारतीय जनता को और दबाने के लिए उनके पंजीकरण के लिए एक कानून बनाया तो भारतीय जनता ने उसे खूनी कानून करार दिया। उन दिनों वहां कार्यरत ३६ वर्षीय वकील मोहनदास करमचंद गांधी ने उस कानून को समाप्त करने का बीड़ा उठाया। दक्षिण अफ्रीका की राजधानी जोहांसबर्ग में उन्होंने करीब ३००० भारतीयों की सभा आयोजित की, जिसमें किसी भी जुल्म के सामने सिर नहीं

झुकाने संबंधी प्रस्ताव पारित किया गया। उस ऐतिहासित सभा की अध्यक्षता ट्रांसवाल कांग्रेस के नेता अब्दुल गनी ने की थी और इस प्रस्ताव का सुझाव एक अन्य भारतीय सेठ हाजी हबीब ने दिया था। दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार ने विरोध के इस सिलसिले को देखते हुए गांधीजी सहित २७ व्यक्तियों को गिरफ्तार करके उन पर मुकदमा चलाया और उन्हें देश छोड़ने का आदेश दिया, लेकिन गांधीजी ने उस आदेश का भी उल्लंघन किया। अंतत: उन्हें जेल भेज दिया गया। इसके बाद दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने भारतीयों के पंजीकरण को स्वैच्छिक बनाने का वादा तो जरूर किया, लेकिन उसे पूरा नहीं किया। वर्ष १९१३ में महात्मा गांधी ने प्रवास की निर्धारित अवधि के बाद भी दक्षिण अफ्रीका में रहनेवाले भारतीयों पर ३ पौंड का कर लगाने, वहां भारतीय पद्धतियों से किए गए विवाहों को अवैध करार देने और भारतीयों के पंजीकरण जैसे कई मुद्दों को लेकर पुन: सत्याग्रह का रास्ता अपनाया जिसके आगे अंतत: दक्षिण अफ्रीकी सरकार को झुकना ही पड़ा। आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक सत्याग्रह आज के युग में भी उतना ही प्रासंगिक है जितना कि यह औपनिवेशिक युग में था। महात्मा गांधी की सत्याग्रह की अवधारणा में मुख्य रूप से तीन सूत्र निहित हैं। पहला अन्याय के प्रतिरोध के रूप में असहयोग, दूसरा सविनय अवज्ञा और तीसरा रचनात्मक कार्यक्रम के जरिए विकल्प का निर्माण। महात्मा गांधी ने गोरो की व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा की अवधारणा को सामाजिक शक्ति में बदलकर ऐसा बेमिसाल जनजागरण पैदा किया जो विफल हो ही नहीं सकता था। सत्याग्रह मनुष्य और समाज के नैतिक और आध्यात्मिक बल में वृद्धि करता है तथा सामाजिक मूल्यों को शक्ति प्रदान करता है। सत्याग्रह दीर्घकाल तक चल सकता है लेकिन असफल नहीं होता। महात्मा गांधी ने गौतम बुद्ध, महावीर और गुरु नानक के सदियों पुरने अहिंसा के सिद्धांत को सामाजिक और राष्ट्रीय शक्ति में परिवर्तित किया। सत्य, प्रेम, अहिंसा, विनयशीलता और सहिष्णुता पर आधारित महात्मा गांधी के सत्याग्रह, असहयोग और अवज्ञा के क्रांतिकारी मार्गों पर चलकर हम आज भी देश में फैली अन्याय, असमानता, शोषण, भ्रष्टाचार, दुराचार, आतंकवाद, नक्सलवाद और बढ़ते अपराध जैसी बुराइयों को नियंत्रित कर सकते हैं। घरेलू आतंकवाद और नक्सलवाद से निपटने में आज रचनात्मक कार्यक्रम जितने कारगर हो सकते हैं उतना बलप्रयोग नहीं हो सकता। सैद्धा.तिक रूप से यह बात हमारी सभी राज्य सरकारें समझती हैं, जरूरत उस पर अमल करने की है।

गाँधीजी की नजर में आध्यात्मिक प्रबंधन

प्रकृति का शाश्वत नियम है कि वह नित उतना उपजाती है जितना हमें प्रतिदिन लगता है। यदि प्रत्येक मनुष्य आवश्यकता से अधिक न लें, तो दुनिया में गरीबी रहेगी ही नहीं, कोई भूख से नहीं मरेा।

भारत में आदिसभ्य गुरुदेश माना गया, जिसका राज प्रकृति प्रदत्त शाश्वत ज्ञान को आत्मसात करना रहा है। गांधीजी ने भी उसे आत्मसात कर जगत गुरु का स्थान पाया है। वर्तमान पीढ़ी इस सत्य से अवगत न होने के कारण गांधीजी का नाम आते ही हमारे अंगने में तुम्हारा क्या काम है तर्ज पर छिटकने लगती है। वह सादा जीवन उच्च विचार के बजाए उच्च जीवन सादा विचार में विश्वास करती है। गांधीजी की बुनियादी शिक्षा बागवानी से प्रारंभ होकर आत्मनिर्भरता के मार्ग को प्रशस्त कर सबको रोटी, कपडा व आसरा मिले, ऐसे समाज की बुनियाद डालती है।

आजादी के बाद गांधीजी की मृत्यु के साथ ही हमने उन्हें सत्ता प्राप्ति का साधन मात्र मानकर साध्य के रूप में सदा के लिए बिदा करने का भ्रम पाल लिया। हम यह भूल गए कि मरता सिर्फ शरीर है, विचार व आत्मा अमर रहती है। बदलती दुनिया में नए विचार व जीवन पद्धति अपनाने की होड़ में हम भारतीय सांस्कृतिक समाज की बुनियाद ही हिलाने का प्रयास कर बैठे। दुनिया से सीखने, सिखाने की अकल लगाने के बजाए हम नकल में लग गए।

हम दिन शुरू करते हैं, हाय (मेरी ओर देखा, कैसा/कैसी लगता/लगती हूं) से और अंत बायबाय (आध्यात्मिक सुख से बिदा) से। हम अपने को प्रबंधन विशेषज्ञ मानते हैं, क्योंकि लाखों रुपए खर्च कर विदेशों में शिक्षण जो पाया है और दुनिया चलाने की कला व विज्ञान आता है। पश्चिम का सोच अपने स्थान पर गलत नहीं लगता पर सच भी नहीं क्योंकि वे भौतिकवादी संसार को चलाने की सभी चालबाजियों में पारंगत हो गए हैं। परंतु आध्यात्मिक सत्यों की ओर से आंख मूंद ली और यह भूल गए कि भौतिकवादी जगत का एक अध्यात्मवादी नियंता भी है।

ऋषियों व संतों ने जताया और गांधीजी ने भी समझा कि इस जग का एक महाप्रबंधक भी है, जिसके अति सरल परंतु शाश्वत सिद्धांत हैं, जिनसे यह सारा जगत अनादिकाल से चलायमान है। पवित्रता/स्वच्छता उसका दूसरा नाम है, जो प्रकृति की गोद में पलती है। जल व वायु उसके साकार रूप हैं। दाना-पानी, पेड़-पौधे व फल-फूल उसके प्रसाद व प्रासाद (निवास) हैं। इन्हीं में ईश्वर के प्राण बसते हैं। मनुष्य उसके द्वारा नियुक्त उसका रखवाला है। प्रकृति उसका पालना है, जिसके प्रदूषण मात्र से वह मुरझा जाता है, अप्रसन्न हो जाता है। प्रकृति मां जब रूठ जाती है, संसार सर्वनाश के मार्ग पर चल पड़ता है। हमारे जग का महाप्रबंधन हम किसे सौंपे व किनके निर्देशों का पालन करें। इस जगत के आध्यात्मिक प्रबंधन के विचारों से अवगत होने पर ही गांधीजी ने कहा, हम सब एक मायने में चोर हैं। जब हम वह ग्रहण कर लेते हैं, जिसकी हमें तत्काल आवश्यकता नहीं होती, हम उसे दूसरों से चुराते हैं। प्रकृति का शाश्वत नियम है कि वह नित उतना उपजाती है जितना हमें प्रतिदिन लगता है। यदि प्रत्येक मनुष्य आवश्यकता से अधिक न ले, तो दुनिया में गरीबी रहेगी ही नहीं, कोई भूख से नहीं मरेगा। जब तक दूसरों को खाना व कपड़ा नहीं मिलता, आपको व मुझे संग्रह करने का अधिकार नहीं है।

हम आज अनंत चाह की राह पर, चाह व आवश्यकता के बीच खाई को पाटे बिना भौतिक सुख प्राप्ति हेतु दौड़ रहे हैं, इस सत्य को भुलाकर कि भौतिक जीवन क्षण भंगुर है व ईश्वर ने हमें इस जग में किसी प्रयोजन से भेजा है। यदि हम पर्यावरण को पवित्र नहीं रख सकते, तो उसे प्रदूषित करने का अपराध न करें। पेड़ नहीं लगा सके तो उसे काटने का पाप न करें। कम से कम भौतिक आवश्यकताओं पर आधारित जीवनक्रम ही श्रेष्ठ जीवन जीने की कला में हमें पारंगत कराएगा।

सत्य पर आधारित राजनीति गांधी जी की सबसे बड़ी देन

महात्मा गांधी जी के जीवन का उद्देश्य मोक्ष, आत्मज्ञान व ईश्वर प्राप्ति था जिसका उल्लेख उन्होंने अपने भाषणों में किया था, किंतु परतंत्र भारत को स्वाधीनता दिलाने को भी उन्होंने भगवत प्राप्ति के साधन का एक पड़ाव मान लिया था। उनकी सत्यवादिता और अहिंसा के जीवन एवं सादा जीवन यापनता के प्रभाव के कारण ही तो भारतवासी उनके स्वतंत्रता आंदोलन में उनके पीछे हो लिए थे। उन्हें अहिंसा के मार्ग को छोड़कर स्वाधीनता स्वीकार्य नहीं थी। उनसे इस बारे में जब एक बार ईसाई पत्रकार ने पूछा कि क्या उन्हें विश्वास है कि अहिंसात्मक आंदोलन के सामने झुककर अंग्रेज आपके देश को छोड़कर चले जाएंगे तो गांधी जी ने दृढ़ता पूर्वक कहा था कि हाँ और इसका कारण उन्होंने भगवान की न्यायकारिता के प्रति अपनी निष्ठा व पूर्ण विश्वास बताया था। इस पर उस पत्रकार ने उन्हें सच्चे ईसाई की संज्ञा दी। सत्य पर प्रतिष्ठित राजनीति और अहिंसा पर प्रतिष्ठित रणनीति गांधी जी की जगत को सबसे बड़ी देन है। उनका कहना था कि ईश्वर निष्ठा से रहित सत्य और अहिंसा की कोरी बातें कोई अर्थ नहीं रखतीं और न कोई महत्त्व का कार्य करने में समर्थ होती हैं।

बापू के ग्यारह व्रत

बापू ने अपने जीवन में ग्यारह व्रत लिए और उनका पूरी तरह पालन किया। ये व्रत थे यथाक्रम से सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शरीर-श्रम, अस्वाद, अभय, सर्वधर्म समभाव, स्वदेशी और अस्पृश्यता। इन ग्यारह व्रतों की व्याख्या करते हुए बापू ने कहा था- सत्य- सोचने, बोलने और व्यवहार में सच्चाई ही सत्य है। ईश्वर का सही नाम ही सत्य है इसलिए सत्य ही ईश्वर है, ऐसा कहना अधिक ठीक है।

अहिंसा- संसार युद्ध के नाम से बचना चाहता है लेकिन कैसे बचें, इसका उसे पता नहीं चलता। यह चाबी भारत (हिन्दुस्तान) के

हाथ में हैं। अहिंसा का अर्थ केवल शारीरिक हानि न पहुंचाने तक सीमित नहीं है बल्कि कठोर शब्दों या कटु व्यवहार द्वारा मानसिक कष्ट न पहुंचाना भी अहिंसा में आता है। शत्रु के साथ भी होनहार मित्र जैसा भाव हमें रखना है।

अस्तेय- अस्तेय का अर्थ है चोरी न करना। यानी आज हमें जिन चीजों की जरूरत नहीं, उसे संग्रह करने की इच्छा या पाने की इच्छा नहीं करना। इससे किसी दूसरे को आवश्यक वस्तुओं का अभाव न होगा। आवश्यकता से अधिक संग्रह करना भी चोरी है।

ब्रह्मचर्य- ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इंद्रियों का संयम, किंतु यह इसका अधूरा अर्थ है। ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्म (सत्य) की खोज में आचार-व्यवहार इस मूल अर्थ में सभी इन्द्रियों का संयम शामिल है।

अपरिग्रह- सच्चा सुधार का, सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह (संचय) बढ़ाना नहीं है बल्कि उसका विचारपूर्वक त्याग करना है।

शरीर-श्रम- शरीर-श्रम न करनेवाले को खाने का क्या अधिकार हो सकता है ? जीविकोपार्जन के लिए हर आदमी को शरीर-श्रम करना उसका अनिवार्य धर्म है। समाज से विषमता और शोषण दूर करने के लिए यह जरूरी है।

अस्वाद- हर एक मनुष्य को भोजन करने में, शरीर के पोषण के लिए ही एकमात्र लक्ष्य रखना है। जीभ के चटोरेपन से प्रभावित भोजन नहीं होना चाहिए। किसी भी वस्तु को केवल स्वाद के लिए चखना व्रत का भंग है। ब्रह्मचर्य-पालन भी इसके बिना संभव नहीं।

अभय- उच्च गुणों के विकास के लिए अभय अनिवार्य है। निर्भयता के बगैर कोई सत्य की खोज कैसे कर सकता है?

सर्व धर्म समभाव- हमें दुनिया के सभी धर्मों का समान रूप से आदर करना चाहिए।

स्वदेशी- स्वदेशी की व्यापक व्याख्या यह है कि हम विदेशी वस्तुओं को छोड़ें और सारी वस्तुएं देश की बनी हुई इस्तेमाल करें।

९५ वर्ष पहले गांधी ने दिनांक २२ सितंबर १९२१ को अपने पहनावे में परिवर्तन करने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया। उन्होंने केवल एक साधारण धोती एवं शाल पहनने का फैसला किया। गांधी ने यह युगांतरकारी निर्णय मदुरई में तब लिया जब उन्होंने फैसला किया कि उन्हें भारत के निर्धनों के लिये उनके साथ मिलाकर कार्य करना है और उनसे अलग कपड़े पहनकर वे स्वयं की पहचान कैसे बना पाएंगे। यहां तक कि उन्होंने विदेश में भी और जीवन के अंतिम समय तक यही वेशभूषा बनाये रखी तथा उनको अपने निर्णय पर कभी अफसोस नहीं हुआ।

गांधीजी अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि अपने जीवन में मैंने जितने भी परिवर्तन किये हैं वे सभी महत्वपूर्ण अवसरों से प्रभावित रहे हैं और वे इतना सोच विचार कर लिये गये हें कि मैं उन पर कदाचित ही अफसोस करता हूं और मैंने वह फैसले लिये क्योंकि उनको लिये बगैर मैं नहीं रह सकता था। अपने पहनावे में इतना बड़ा परिवर्तन मैंने मदुराई में किया। निर्धन जनता के साथ स्वयं को खड़ा करने का गांधी का निर्णय क्षणिक निर्णय नहीं था। इस बारे में वे लंबे समय से विचार कर रहे थे। इससे पहले दो अवसरों पर उन्होंने आम आदमी का पहनावा अपनाने के बारे में सोचा किंतु अंतत: मदुरई (तमिलनाडु) में उन्होंने एक गरीब किसान का पहनावा अपनाने का फैसला लिया। बाद में उन्होंने टिप्पणी की कि मदुरई ही वह स्थान था जिसने उनको अपने पहनावे के बारे में निर्णय लेने की शक्ति प्रदान की, हालांकि इससे पहले कुछ एक अवसरों पर वे यह निर्णय लेने के करीब आए किंतु पूरी तरह इस पहनावे को नही अपना सके।

महात्मा ने कहा कि अंतत: मदुरई ने उनको अपने परम्परागत पहनावे को धोती में तब्दील करने के लिये आवश्यक शक्ति प्रदान की। गांधी ने उस घटना का विवरण दिया जिसने उनको अपने औपचारिक पहनावे को बदलने के लिये बाध्य किया। मद्रास (अब चेन्नई) से ट्रेन में मदुरई आते समय मैंने वह भीड़ देखी जिसको जो हुआ उससे लेशमात्र भी सरोकार नहीं था। वे सभी लोग बिना किसी अपवाद के विदेशी परिधान पहने थे। मैंने उनमें से कुछ लोगों से बातचीत की और खादी पहनने की प्रार्थना की। उन्होंने सहमति में सिर हिलाया और कहा, खादी खरीदने के लिहाज से हम अत्यंत गरीब हैं और यह बहुत प्रिय वस्त्र है। मुझे इस प्रतिक्रिया में छुपी हुई सच्चाई का अहसास हुआ। मैं अपनी गंजी, टोपी और धोती

पहने था। यह केवल अधूरा सच बयां करते थे, अधनंगा रहने के लिये बाध्य लाखों लोग जो चार इंच चौड़ी और इतने ही फीट लंबी लंगोटी के लिये धन की बचत करते हैं, अपने इन उघड़े हुए अंगों के माध्यम से नग्च सच दर्शाते हैं। अपने वस्त्रों को परिवर्तित करने के सिवाय मैं उनको और कौन सा प्रभावशाली उत्तर दे सकता था और मैंने अगली ही सुबह मदुरई की बैठक में बाद यह किया। इस यात्रा के दौरान मदुरई तक यह विचार उनके मन में बार-बार कौंधता रहा जहां २२ सितंबर १९२१ को गांधी ने हमेशा के लिये एक साधारण धोती और एक शाल का पहनावा अपनाने का निर्णय लिया। वे मदुरई की वेस्ट मासी स्ट्रीट पर अपने एक अनुयायी के घर (दरवाजा नंबर २५१) के ऊपरी भाग पर ठहरे थे। इस शहर में उनकी यह दूसरी यात्रा थी, बाद में वे यहां तीसरी बार आए। उस सुबह जैसे ही गांधी रामंद (रामनाथपुरम) और उसके बाद तिरुनेवेली जाने के लिये बाहर आए, वे नये अवतार में दिखे जो स्वयं में एक फैशन स्टेटमेंट था, यदि ऐसा कहा जा सके। संयोगवश, यही मकान आज खादी एम्पोरियम के पास है।

जब मदुरई से वे अपनी यात्रा पर आगे बढ़े तो उनको रास्ते में लोगों की बधाइयां स्वीकार करने के लिये रुकना पड़ा और वह स्थान जहां वे पहली बार अपने नये पहनावे धोती में सार्वजनिक रूप में प्रस्तुत हुए उसको अब गांधी पोतल (खुला मैदान) कहा जाता है। मदुरई में कामराज रोड पर अलंकार थियेटर के पास गांधी की एक भव्य प्रतिमा भी है। यद्यपि गांधी यह नहीं चाहते थे सभी उनकी इतनी साधारण वेशभूषा को अपनाएं। उन्होंने नवजीवन में लिखा- मैं नहीं चाहता कि मेरे सहकर्मी या पाठक धोती को अपनाएं, किंतु मेरी प्रबल इच्छा है कि वे विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार और खादी का उत्पादन सुनिश्चित करने हेतु अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयास करें। मेरी इच्छा है कि वे यह समझें कि स्वदेशी ही सब कुछ है।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा विदेशी वस्त्रों का संपूर्ण बहिष्कार करने के लिये हमारे पास केवल चंद दिन बचे हैं। लाखों लोग छोड़े गए वस्त्र का खादी से विस्थापन करने के दृष्टिकोण से काफी निर्धन हैं। मैं उनके लिये मद्रास तट पर दी गई अपनी सलाह दोहराता हूं। उनको केवल धोती से ही संतुष्ट रहना चाहिये। हमारे यहां के मौसम में वर्ष के गर्म महीनों में अपने शरीर की रक्षा के लिये हमें शायद ही अधिक वस्त्रों की आवश्यकता है। वेशभूषा के लिये कोई पाखंड न होने दीजिये। सांस्कृतिक रूप से भारत में पुरुषों के लिये संपूर्ण शरीर को ढकने पर कभी भी जोर नहीं दिया गया है। मैं पूर्ण उत्तरदायित्व बोध के साथ यह सलाह देता हूं। अतएव ३१ अक्टूबर तक उदाहरण प्रस्तुत करने के लिये मैं गंजी और टोपी त्यागने का प्रस्ताव करता हूं एवं जब भी शरीर को ढकने की आवश्यकता प्रतीत होगी, स्वयं को केवल एक धोती और चादर (शाल) तक सीमित करता हूं।

अस्पृश्यता- खूब अच्छा यह सोच- समझकर, बिना किसी तरह के संकोच के, मैं यह कह रहा हूं कि अगर हम हिंदू लोग छुआछूत के इस पिशाच को सर्वथा नष्ट न कर देंगे तो यह पिशाच, हिंदुओं और हिंदू-धर्म दोनों को खा जाएगा।

गांधीजी के प्रभाव के कारण भारत में मुसलमान काफी हद तक सुरक्षित रहे परन्तु पाकिस्तान एवं पूर्वी पाकिस्तान में हिन्दुओं का भारी कत्ले आम हुआ लेकिन अहिंसा के सिद्धान्त के कारण भारत सरकार कोई भी प्रभावी कदम नहीं उठा सकीं। इसके बाद १९४८ में पाकिस्तान ने कश्मीर पर हमला कर दिया तथा कबायलियों के भेष में पाक सेना ने कश्मीर में भारी नरसंहार किया। तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने पाक को कश्मीर से भगाने के स्थान पर संयुक्त राष्ट्र संघ में पाकिस्तान की शिकायत की। संयुक्त राष्ट्र पाकिस्तान का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाया तथा नर संहार आज भी आतंकवाद के रूप में चल रहा है। १९५० में संविधान लागू करते समय भारत ने धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था लागू की तथा मुसलमानों को भारी विशेष अधिकार दिये जिसके कारण देश में आज मुसलमानों की आबादी १९४७ के बाद से चार गुनी बढ़ी है। इसके विपरीत पाकिस्तान इस्लामिक राष्ट्र हो गया तथा वहां से हिन्दुओं का लगभग सफाया हो गया तथा देश आंख बंद करके सब कुछ देखता रहा।

गांधीजी हमारे देश के बँटवारे से बेहद नाराज थे। उन्होंने मन मारकर खुद को दिल्ली की हरिजन कॉलोनी में समेट लिया और वहीं से कांग्रेस के भविष्य का खाका खींचने में लग गये। इस दौरान पाकिस्तान ने कबाइलियों को भेजकर कश्मीर पर अपना कब्जा जमाने की कोशिश की। इस विश्वासघात से खिन्न होकर हमारे पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और उनके सहयोगियों ने पाकिस्तान को प्रस्तावित ५५ करोड़ रुपये की अगली किस्त रोक दी। बँटवारे की शर्तों के तहत पाकिस्तान को भारत से ७५ करोड़ रुपये की अगली किस्त रोक दी। बँटवारे की शर्तों के तहत पाकिस्तान को भारत से ७५ करोड़ रुपए मिलने थे। इनमें से २० करोड़ रुपए पहले ही दिये जा चुके थे। हैरान परेशान पाकिस्तान की सरकार ने लॉर्ड माउंटबेटन के दरबार में अपनी बात रखी। माउंटबेटन पाकिस्तान की शिकायत लेकर गांधीजी के पास गये। उन्होंने अपने प्रभाव का उपयोग करके पाकिस्तान को भारत से ५५ करोड़ रुपयों की रकम दिलवा दी। नथूराम गोडसे की गाँधीजी के प्रति जो शिकायतें थीं, उनमें ५५ करोड़ रुपये देने की शिकायत नंबर एक पर थी। गांधीजी अपनी जान तक गंवाकर भी पाकिस्तानियों के हित पर कोई चोट नहीं पहुंचाना चाहते थे। देश के कुछ कट्टरपंथी लोगों को छोड़ दें, तो भारत में सभी विचारधाराओं के लोग यह मनोकामना रखते थे।

लोकप्रियता के शिखर पर बैठे मोहम्मद अली जिन्ना विरोधाभासों के अजीब से नेता थे। स्वभाव से एक अच्छे वकील होने के बावजूद अपनी महत्वकांक्षाओं ने उन्हें एक धूर्त राजनेता बना दिया था। इन्हें तब कायदे आजम कहा जाता था। वे एकदम जोश में भाषण देते, मगर तब उनका शरीर टीबी से खोखला हो चुका था। बँटवारे के वक्त किसी को भी अंदाजा नहीं था कि वे अब कुछ ही दिनों के मेहमान हैं। जिन्ना मुस्लिमों के भलाई की बात करते थे, पर उनका खाना-पीना और जीवनशैली एकदम अलग थी। वे लगातार धूम्रपान करने थे यानी लगातार सिगरेट पीते थे, शराब पीते थे और उन्हें औरतों का भी शौक था। इस्लाम के नाम पर अलग देश बनानेवाले मोहम्मद अली जिन्ना के पूर्वज हिन्दू थे और उनकी पत्नी पारसी थी। मोहम्मद अली जिन्ना का वादा था कि पाकिस्तान सभी का है, मगर उनकी आँखों के सामने ही सब खत्म हो चुका था। भारत से आये मुसलमानों को वहां मुहाजिर कहा गया। वहाँ जो थोड़े से हिन्दू, सिख, इसाई बचे थे, उनके लिये पाकिस्तान का निर्माण कभी खत्म न होनेवाली तकलीफें लेकर आयी थी।

मोहम्मद अली जिन्ना के काम करने का तरीका विरोधाभासी था। वहाँ का बलूचिस्तान इसका बड़ा उदाहरण है। जिन्ना ने बलूचिस्तान के नवाब से अपने वजन के बराबर का सोना लिया था। यह जिन्ना की कोशिशों का ही नतीजा था कि पाकिस्तान के जन्म लेने से तीन दिन पहले ही अंग्रेज सरकार ने बलूचिस्तान को एक आजाद देश का दर्जा दे दिया था। बदनसीब बलूच लोगों की यह आजादी सिर्फ २२७ दिन यानी साढ़े सात महीने ही चली। इसे कहते हैं बलूचिस्तान का विश्वासघात करना, जो जिन्ना ने किया था।

इन बातों से दुखी पाकिस्तानी कहते हैं कि भारत ने कश्मीर, हैदराबाद और जूनागढ़ पर बंदूकों के दम पर कब्जा किया, मगर यह बात गलत है। हैदराबाद के निजाम के खिलाफ उसकी जनता ही, विद्रोह कर उठी थी। क्योंकि उसके रजाकार उन पर जुल्म ढा रहे थे। जूनागेढ़ का नवाब तो इतना बे गैरत था कि वो अपना सारा माल समेट कर चुपचाप पाकिस्तान भाग गया था। उस वक्त वो अपने साथ अपनी कुतिया को तो ले गया, मगर अपनी बेगम को यहीं छोड़ गया। जो बेशर्म नवाब घर की औरत और प्रजा का ही ख्याल नहीं रखते हों, वो जनता पर क्या राज करेंगे।

कश्मीर की भी यही बात है। पाकिस्तान पहले दिन से ही कश्मीर पर कब्जा करने या वहाँ तोड़फोड़ करने के षडयंत्र में लगा हुआ है। बलूचिस्तान में वो सफल रहा, पर हमारा भारत अपने कश्मीरी भाइयों के लिए हर कीमत देने को तैयार खड़ा

रहा। यही वजह है कि १९६५ में जब पाकिस्तानी फौज कश्मीर में घुसी तो रावलपिंडी में बैठे मार्शल अय्यूब खान और जुल्फिकार अली भुट्टो को यह जानकर झटका लगा कि कश्मीरियों ने उनकी फौज का जी-जान से विरोध किया है। उस वक्त भुट्टो ने जनरल को बरगला रखा था कि हमारे फौजी दस्तों को कश्मीरी फूलों के हार से स्वागत करेंगे। पर कश्मीर का हर आदमी भारत के साथ रहा। इसीलिये पाक प्रेरित हुर्रियत या अन्य अलगाववादी कश्मीर में गड़बड़ी कर लेते हैं, पर वे हर बार नाकाम रहते हैं। इसके उलट पाकिस्तान ने ग्वादर तट को चीन के हवाले करके साबित कर दिया कि वह बलूच लोगों को परदेशियों के यहाँ गिरवी रखने को तैयार हैं। बलूच इससे चोट खाये हुए हैं, इसीलिये अब वे हमारे मोदीजी के समर्थन में आ गये हैं। अब यह कभी भी हो हो सकता है कि बलूचिस्तान भी बांग्लादेश की तरह पाकिस्तान के खूनी पंजे से मुक्त हो जाये। अगर ऐसा हुआ तो पाकिस्तान सिर्फ रएक तिहाई की बचा रह जायेगा। इसके जिन्ना की धार्मिक आधार पर देश बनाने की नीति भी खत्म हो जायेगी। धर्म और समाज एक-दूसरे के पूरक होते हैं, पर वे देश की नीति बनानेवाले बन जायें, यह जरूरी नहीं होता। पाकिस्तान में इस वक्त गंभीर आत्मचिंतन की जरूरत है। उनकी आनेवाली पीढ़ी के लिये यह सही वक्त है, कुछ सही करने का।

यह उस वक्त की बात है जब हमारा देश आजाद तो हो गया था, पर बँटवारे की पीड़ा झेल रहा था। भारत और पाकिस्तान की उस वक्त की खुशहालियाँ और दुश्वारियां १४-१५ अगस्त, १९४७ के तुरन्त बाद किए गये फैसलों की देन है। ये फैसले उन हुक्मरानों की देन थे, जिन पर दोनों देशों की जनता ने आंखें मूंदकर भरोसा किया था। अफसोस की बात है कि पाकिस्तान के शासकों में अपनी प्रजा के प्रति वो संवेदनशीलता नहीं थी, जो होनी जरूरी थी। पाकिस्तान की आज की खराब हालत का बड़ा कारण भी यही है।

१९४७ में बँटवारे के वक्त हमारे पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू हरिद्वार के एक रिफ्यूजी कैम्प में बंटवारे से दुखी लोगों को देखने गये थे। कुछ नौजवान, जिनके माँ बाप को कत्ल कर दिया गया था और जिनकी बहने या बेटियां पाकिस्तान में ही छूट गई थीं, वे पंडित नेहरू के घेरे हुए थे। तभी वहां एक नौजवान अपना आपा खो बैठा और उसने पंडितजी को एक थप्पड़ मार दिया। नौजवान जोर से चिल्लाकर बोल रहा था, मेरी माँ मुझे वापस दो, मेरी बहन को लेकर आओ। इस पर हमारे प्रधानमंत्री को जरा भी गुस्सा नहीं आया, पर उनकी आँखें रो पड़ी। उन्होंने नौजवान की पीठ पर हाथ रखकर कहां, बेटा। तुम्हारा गुस्सा जायज है। लेकिन चाहे भारत हो या पाकिस्तान, जिस दुख से हम घिरे हुए हैं, वो दोनों ही जगह एक जैसा है, हम दोनों को इससे पार पाना है।

नये बने हुए देशों को अपने राजनेताओं से ऐसी ही संवेदनशीलता की जरूरत होती है। जैसे जन्म लेने के बाद इन्सान के लिये शुरू के कुछ हफ्ते बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं, वैसे ही नए-नए आजाद हुए देशों के शुरू के कुछ महीने उनका भविष्य निर्धारित करते हैं।

एक अन्य पड़ोसी चीन के साथ भी भारत ने अहिंसा एवं पंचशील के सिद्धान्त को दोहराया परन्तु चीन ने १९५९ से १९६२ के बीच में तिब्बत पर पूर्ण कब्जा कर लिया तथा भारत के एक बड़े भू-भाग को भी अपने कब्जे में लिया। भारत एक दब्बू देश की तरह अपनी बर्बादी को स्वयं देखता रहा।

१९६५ में एक बार फिर पाकिस्तान ने भारत पर हमला बोल दिया। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री भी अहिंसा व मित्रता के पुजारी थे, इस कारण उन्होंने भारतीय सैन्य बलों को काफी समय तक पाकिस्तान पर हमले की इजाजत नहीं दी जिसके कारण देश को भारी नुकसान उठाना पड़ा।

इसी प्रकार १९७१ में एक बार फिर पाकिस्तान ने भारत पर हमला बोल दिया। इस बार देश की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी थी परन्तु श्रीमती गांधी ने भी श्री लाल बहादुर शास्त्री की गलती को दोहराया तथा पाकिस्तान को उसकी भूमि तथा एक लाख युद्धबन्दी लौटा दिये परन्तु श्रीमती गांधी भी अपना कश्मीर वापस लेने में घबराती रहीं।

इसके बाद पाकिस्तान ने पंजाब एवं कश्मीर में आतंकवादियों के द्वारा भारी कत्ले आम प्रारंभ करा दिया। इसके साथ चीन एवं बंगला देश ने उत्तरपूर्व के राज्यों में एवं नक्सली आतंकवादियों के द्वारा देश में भारी हिंसा फैला रखी है। तथा यह खूनी खेल बदस्तूर चल रहा है इस सारे आतंकवाद में कई लाख भारतीय नागरिकों की हत्या हो चुकी है तथा भारत सरकार आज भी अहिंसा एवं प्रेम के सिद्धान्त पर चल रही है। इस सारे वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि आज के इस युग में गांधी जी एवं अहिंसा के सिद्धान्त पर चलने के कारण देश को भारी कीमत चुकानी पड़ रही है। सारा विश्व देश को एक अत्यन्त कमजोर राष्ट्र के रूप में मानता है। बंगलादेश जैसा छोटा राष्ट्र भी भारत को कोई महत्व नहीं देता।

तात्पर्य यह है कि महात्मा गांधी एवं अहिंसा का सिद्धान्त इतना उच्च श्रेणी का है कि आज के इन असभ्य एवं हिंसक समाजों की समझ से यह दर्शन कोसों दूर है। इस फासिज्म ने महात्मा एवं अहिंसा को अप्रासंगिक बना दिया है। राष्ट्र का भला भी इसी में है कि बदले हालात में राष्ट्र एवं समाज की सुरक्षा के लिए महात्मा गांधी एवं अहिंसा का मोह त्याग कर बुश, ब्लेयर एवं पुतिन से कुछ सीखने का प्रयत्न करें तथा इजरायल के समान राष्ट्र के दुश्मनों को दंड दे। महात्मा गांधी के लिए आज यही सबसे बड़ा सम्मान होगा अन्यथा जब यह राष्ट्र ही सबल नहीं होगा तो गांधीजी और उनके सिद्धान्तों का कोई भी नाम लेनेवाला नहीं होगा।

दो अक्टूबर महात्मा गांधी की जयंती है। इस अवसर पर उन्हें याद किया जाता है और उनके रास्ते पर चलने की बातें भी होती हैं। लेकिन आज कल जो कुछ सामने है, उससे लगता है कि गांधी जी अप्रासंगिक हो गए हैं। कोई मजबूरी है जो उनका नाम लेने के लिए मजबूर करती है। मजबूरी भी यही है कि आजादी के आंदोलन में उनकी अविस्मरणीय तथा ऐतिहासिक भूमिका रही है और जन-मन में गांधी जी इस तरह समाए हुए हैं कि समय-समय पर उनकी जय बोलना जरूरी है। यह जय बोलना भी एक तरह से औपचारिकता ही है। सहमति-असहमति के बावजूद आजादी के आंदोलन में उनकी ऐतिहासिक भूमिका पर प्रश्न उठाना मुश्किल है। इसके साथ ही गांधी जी ने आजादी के महान आंदोलन को नए आदर्श दिए थे। आंदोलक तथा जन-नेता के रूप में उनके कुछ सिद्धांत हैं और इन सिद्धांतों को उन्होंने आचरण स्तर पर पालन किया। उन्होंने कभी कोई द्वैत नहीं पाला। सोचना पड़ता है कि आज उनके आदर्श और सिद्धांत हमारे जीवन, व्यवस्था तथा कार्यप्रणाली में कहां हैं ? उनके सत्य, अहिंसा, तथा प्रेम का लोप हो चुका है। उनके सिद्धांतों तथा आदर्शों से हमारी राजनीति में अरुचि है। शायद इन सिद्धांतों तथा आदर्शों से हमारी राजनीति डरती है। आजादी के बाद उसने अपना जो रूप बनाया है उसके नग्न हो जाने का खतरा है। गांधीजी ने स्वतंत्रता संग्राम में स्वदेशी को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उसे उन्होंने एक नए जागरण का माध्यम नहीं बनाया, बल्कि एक दर्शन भी रचा। उन्होंने देशप्रेम को भावनात्मक दुनिया से अलग कर एक नया रचनात्मक धरातल भी दिया। आज उनका स्वदेशी मरणासन्न है। विदेशी की हवा बह रही है। हमारी राजनीति के विकास ने स्वदेशी ताने-बाने को छिन्न-भिन्न किया और विदेशी आधार अपना कर अंतत: बाजारवाद तथा उपभोक्तावादी संस्कृति को देश के सामने खड़ा कर दिया। भारतीयता तथा भारतीय संस्कृति के सवाल पीछे छोड़ दिए गए। सामान्य जन, मजदूर और किसान जो आज भी महात्मा गांधी को छाती से लगाकर बैठे हैं, उनके साथ बहुत बड़ा छल हुआ। लगता है जैसे एक नई पराधीनता का आगमन है ? स्वतंत्रता संग्राम हमारे इतिहास का गौरवमय अध्याय है उसने नए मूल्य दिए थे और नई आशा, लेकिन आज कहां हैं मूल्य और कहां है वह आशा। उस मूल्य और आशा ने लगता है कि कहीं दम तोड़ दिए।

आज हम महात्मा गांधी को याद करते हैं। उनके सत्याग्रह की शताब्दी भी मनाते हैं। अभी-अभी वंदे मातरम् की शताब्दी मनाई गई। क्या यह सचमुच इतिहास तथा उन मूल्यों से जुड़ना है ? यह है एक तरह के भाववाद से जुड़ना और उसका अपने हक में इस्तेमाल करना। हमारी सत्तावादी राजनीति इस्तेमाल में माहिर है। लगता है कि सारे त्याग और समर्पण अब सत्ता केंद्रित हो गए हैं। मौजूदा भ्रष्टाचार, अपराध, विवशता और पीड़ा आदि कहीं आसमान से नहीं आए हैं। यह हमारे नवनिर्मित समाज से पैदा हुए हैं और हमारी राजनीति आराम से यह सब देखती है। आजादी के आंदोलन के इतिहास तथा महात्मा गांधी की पीड़ा से जुड़िए, बहुत कुछ

मालूम हो जाएगा। इस्तेमाल की राजनीति अंतत: खतरनाक है।

साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल

राष्ट्रपिता के रूप में सम्मानित, बेलगाम कांग्रेस अधिवेशन (१९२४) के अध्यक्ष रहे गौतम बुद्ध और महावीर स्वामी के अहिंसा के विश्वव्यापी दर्शन को राजनीति की प्रयोगशाला में ले जाने वाले मोहनदास करमचन्द गाँधी का जन्म पोरबंदर गुजरात में हुआ। १८८८ में वे कानून पढ़ने इंग्लैंड गए और बार-एट-लॉ होकर १८९१ में स्वदेश लौटे। वहाँ से लौटकर उन्होंने वकालत शुरु की।

१८९३ में अफ्रीका जाकर गाँधीजी ने भारतीयों के नागरिक अधिकारों के लिए आंदोलन किए। वहाँ से १९०३ में उन्होंने इंडियन ओपीनियन नामक अखबार निकाला और सत्साग्रह आश्रम के जरिये सात्विक जीवन बिताने की प्रेरणा दी। १९१४ में जोहांसबर्ग में सत्याग्रह शिबिर की शुरुआत कर १९ दिसम्बर, १९१४ को वे स्वदेश लौटे।

गाँधीजी १९१५ से महात्मा के रूप में विश्व में पहचाने गए। इसके बाद उन्होनें सत्याग्रह आश्रम की शुरुआत की। १९१७ में चंपारण में उन्होंने नील की खेती करनेवाले किसानों के आंदोलन को संगठित किया। १९२०-२२ के अहिंसक असहयोग आंदोलन, १९३०-३२ के दांडी मार्च (नमक सत्याग्रह) और सविनय अवज्ञा आंदोलनों और १९४०-४२ के एकल सत्याग्रह और भारत छोडो आंदोलनों में महात्मा गाँधी शीर्षस्थ राष्ट्रनायक के रूप में स्वीकारे गए। ९ अगस्त, १९४२ को उन्होंने बंबई में करो या मरो का आह्वान किया। गाँधीजी गिरफ्तार किए गए और आगा खाँ महल पुणे में नजरबंद रखे गए, जहाँ से ६ मई, १९४४ को रिहा किए गए। उन्होंने अनेक बार उपवास किए और स्वतंत्रता बहाल करने के लिए कई बार जेल यात्राएँ की। गाँधीजी की शहादत तिथि (३० जनवरी) समूचा राष्ट्र कृतज्ञ होकर शहीद दिवस के रूप में मनाता है। आइंस्टीन ने गाँधीजी के बारे में एक बार कहा था कि आनेवाली पीढ़ी शायद ही यह विश्वास कर पाएगी कि हाड़-माँस का यह मानव धरती पर पैदा हुआ था। आप पूछ सकते है कि केवल दक्षिण ही में हिन्दी प्रचार के लिए क्यों ? मेरा उत्तर यह है कि दक्षिण भारत कोई छोटा प्रदेश नहीं है। वह तो एक महाद्वीप-सा है। वहाँ चार प्रान्त और चार भाषाएँ हैं- तमिल, तेलुगू, मलयालम और कन्नड़। वहाँ की आबादी करीब सवा सात करोड़ है। इतने लोगों में यदि हम हिन्दी प्रचार की नीव मजबूत कर सकें तो अन्य प्रांतों में बहुत ही सुभीता हो जाएगा। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इंदौर में २० अप्रैल १९३५ को दिए गए भाषण से।

गांधी व्यक्ति नहीं विचारधारा है

संत का अंत नहीं होता बल्कि संत देहमुक्त होकर अनंत हो जाता है। आज आदमी, आदमी के बीच नफरत, जाति-जाति के बीच दुश्मनी और घृणा तथा मुल्क-मुल्क के बीच आतंक, तनाव और एक-दूसरे को मिटा देने की कट्टरता व्याप्त है। आखिर इतने सारे धर्म, मजहब पालनेवाले दुनिया की छ: अरब आबादी के लोगों ने अपने संतो से क्या पाया, क्या सीखा और क्या समझा ? बीसवीं सदी के महान उपन्यासकार जॉर्ज ऑरवेल ने अपने एक निबंध, गाँधी- कुछ विचार में कहा है- संतों को हमेशा ही तब तक दोषी मानना चाहिए, जब तक वे अपने को दोषरहित साबित न कर दें, लेकिन इसके लिए जो परीक्षण अपनाए जाएँ, वे सभी के लिए समान नहीं होते हैं। गाँधी को लेकर सवाल यह है कि गाँधी किस हद तक ऐसे संतत्व से एक विनम्र और चेतनाशील फकीर के रूप में संचालित थे, जो बिना संत हुए भी चटाई पर बैठकर प्राथ्ना गाते-गाते दुनिया के सबसे बड़े, तगड़े और ताकतवर साम्राज्य को अपनी आत्मा की ताकत से हिला रहे थे। गाँधी ने साम्राज्य को आत्मा की ताकत से हिलाया, प्रार्थना से हिलाया, सामान्य मनुष्य की तरह जीकर और अपना काम करते हुए बिना संतत्व का बाना पहने, बिना अवतार, पीर, पैगम्बर कहलाए, बिना किसी धर्म, मजहब या रिलीजन को छोटा या बड़ा बताए। शस्त्र और शास्त्र में कितना अंतर है ? दुनिया के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र ने सबसे शक्तिशाली शस्त्र बनाए मगर ग्यारह सितंबर की सुबह शस्त्र और शक्ति के दुर्ग भेद दिए गए। जिस अमेरिका का नाम लेकर दुनिया के कई मुल्क थर्राते थे, वह स्वयं थर्रा उठा। पता नहीं शस्त्रों की होड़ और मजहबी नफरतों की दौड़ में शामिल अब भी शस्त्र और संत में फर्क करेगी या नहीं, बंदगी और जिंदगी को एक मानेगी या नहीं, सेवा और साधना को एक समझेगी या नहीं। गाँधी इस पूरी धरती का स्वाभिमान थे। वे सेवा की साधना थे। वे ईश्वर, देवता, अवतार, संत कुछ नहीं थे। वे तो इंसान और इंसानियत के नए संस्करण थे। उन्होंने शस्त्र की

ताकत को सत्य की ताकत के सामने झुका दिया। गाँधी को समझा नहीं गया, इसलिए गाँधी को माना नहीं, गाँधी को माना नहीं गया इसलिए गाँधी को मार डाला गया। सच पूछा जाए तो हमने हत्या गाँधी की नहीं की, बल्कि एक प्रकार से आत्महत्या की। गाँधी को मारकर राजनीति से हमने नीति को मार डाला, धर्म से धर्म के आदर्श की हत्या कर दी। चरखे से उसका कर्म और हाथों से पैदा होता स्वाभिमान छीन लिया और इंजीनियरिंग कॉलेजों, मैनेजमेंट संस्थानों, चिकित्सा महाविद्यालयों, स्कूलों, कॉलेजों सब जगह बेकारों की ऐसी भीड़ खड़ी कर दी, जिसके पास काम नहीं, जिसके पास स्वावलंबन नहीं। इसलिए देश में एक स्वाभिमानी पीढ़ी बनने से वंचित होती जा रही है। गाँधी ने नारी को देवी बनाने के बजाए सहकर्मिणी बनाया। गाँधी ने शिक्षा में सरस्वती पूजन के लिए मूर्ति या फोटो नहीं लगाया बल्कि ज्ञान की सरस्वती का अध्ययन और कर्म से पूजन करना सिखाया। गाँधी गीता, बाइबिल, कुरान पढ़ते ही नहीं थे बल्कि उनके रास्ते पर चलते भी थे। उन्होंने पराई पीर को जानने और दूर करने का धर्म अपनाया था और दुनिया में कोई देश, धर्म या समाज नहीं, जिसकी पीड़ा न हो। गाँधी चेतना का चिंतन थे और चिंतन की चिंता थे। वे मानते थे कि जिस देश या समाज के पास चिंतन और चेतना नहीं, वह ज्ञान और सेवा का देश या समाज नहीं बन सकता। गाँधी में अनेक महान आत्माएँ एकाकार होती थीं। उनमें महर्षि अरविंद का मानस था, रामकृष्ण परमहंस-सी भक्ति, विवेकानंद-सा देशप्रेम, रामतीर्थ-सी मेधा, क्रांतिकारियों के जैसा साहस और राममोहन राय, गोखले, तिलक जैसी ज्ञान के प्रति आस्था। इन सबका समन्वय थे गाँधी। इसलिए गाँधी प्रकृति भी थे, पुरुष भी, नैतिक भी थे और नेतत्व में नीतिवान भी। संयम उनकी साधना थी, नियम उनकी नैतिकता थी और यम उनका लोक व्यवहार था। गाँधी एक लोकसत्ता है। यदि गाँधी की लोकसत्ता सुरक्षित रखनी है तो गाँधी को संगणक की किसी वेबसाइट या इंटरनेट की खिड़की में बंद करने के बजाए मैदान में उतारना होगा। ईसा जिस तरह से पुनर्जीवित हो उठे थे, उसी तरह हमें अपनी चेतना में गाँधी को भी पुनर्जीवित करना होगा।

गांधीजी को केवल सत्य और अहिंसा के पुजारी के रूप में ही नहीं देखा जाना चाहिए। वे मानवता के प्रतिनिधि थे। उनकी दृष्टि में मानवता का अर्थ मनुष्य का सामर्थ्य था जिसे उन्होंने उसके स्वावलंबन के रूप में देखा था। उनके अनुसार जो व्यक्ति जितना ही स्वावलंबी है, उतना ही वह स्वतंत्र और शक्तिशाली है और यही धारणा उनकी राष्ट्र के सामर्थ्य को लेकर भी थी। गांधीजी का सत्य केवल सच बोलने तक ही सीमित नहीं था। सभी मनुष्य समान है, उपनिषदों का यह चिरंतन सत्य ही गांधीजी का सच्चा सत्य था। उनके प्रेम और अहिंसा के आदर्श इसी सत्य से उत्पन्न थे। गांधीजी की दृढ़ मान्यता थी कि यदि मनुष्य-मनुष्य में प्रेम हो तो हिंसा के लिए कोई स्थान रह ही नहीं जाता है। गांधीजी की नजर में अहिंसा भी केवल मारघाड़ या कत्लेआम के विरोध तक ही सीमित नहीं थी। कोई ऐसा अनावश्यक शब्द जो दूसरों को दु:ख पहुंचाता हो, गांधीजी के अनुसार हिंसा है। परंतु उनकी अहिंसा कायरता का प्रदर्शन नहीं था। उन्होंने एक बार कहा था- किसी समय यदि हिंसा और कायरता में से किसी एक को चुनना पड़े तो मैं हिंसा को चुनूंगा। गांधीजी का यह विचार पाकिस्तान के संदर्भ में भारत के लिए कितना प्रासंगिक है, यह बताने की आवश्यकता नहीं। गांधीजी के लिए अहिंसा अन्याय का प्रचंड विरोध करने का एक मानवतावादी हथियार था। परंतु वहीं तक जहां तक उसे मानवता समझा जाए कायरता नहीं। संपूर्ण मानव जाति को मानवतावाद की एक नजर से देखना गांधीजी का सामर्थ्य था।

इसी तरह गांधीजी के लिए शास्त्र और धर्म केवल बोलने और चर्चा करने के विषय नहीं थे। उनके लिए धर्म एक जीवन पद्धति थी जिसका उन्होंने जीवनपर्यंत पालन किया। धर्म का एक ही कारण है और वह है धर्म के अनुसार जीना। गांधीजी के लिए यही धार्मिकता थी। आज भारत और विश्व में गांधीजी जैसे इतने कम व्यक्ति हैं कि उन्हें गिनने के लिए उंगलियों के पोर भी अधिक सिद्ध होंगे। गांधीजी का संपूर्णरूप से अनुसरण करके जीनेवाला कोई व्यक्ति को आज ढूंढ़े भी नहीं मिलेगा। यही कारण है कि विश्व पिछले १४७ वर्षों में कोई दूसरा गांधी पैदा नहीं कर सका, शायद कभी पैदा भी नहीं कर

सकेगा। गांधीजी की विचारधारा पर अमल की बात करें तो कड़वी सच्चाई यह है कि गांधीजी आज केवल आदर्शों और पुस्तकों में ही सीमित रह गए हैं। दुनिया उनके आदर्शों के विपरीत आचरण कर रही है। गांधीजी ने व्यक्ति को स्वावलंबी बनना सिखाया था। परंतु उसने विज्ञान का भी भोगविलास के लिए उपयोग करके परावलंबी जीवन स्वीकार किया है। गांधीजी के सुझाए मार्ग से विपरीत चलकर उसने न केवल अपना मूल सामर्थ्य गवां दिया है बल्कि अपने स्वास्थ्य और पर्यावरण को भी खतरे में डाल दिया है। जो धर्म मनुष्य को एक करने के लिया था, उसी धर्म के नाम पर मनुष्य ने मानव समाज को टुकड़ों में बांट दिया है। इस तरह गांधीजी के विचार दुर्भाग्य से आज अमल में नहीं हैं, पर वे आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने पहले थे, बल्कि यह कहना अधिक सही होगा कि उनके विचार वर्तमान परिस्थितियों में पहले से भी अधिक प्रासंगिक हो गए हैं।

आज पूरा विश्व आतंक के साये में है। आतंकवाद को गांधीजी की ओर से जवाब है- प्रेम और अहिंसा। पृथ्वी पर खतरनाक ढंग से बढ़ रहे तापमान (ग्लोबल वॉर्मिंग) को गांधजी की ओर से जवाब है- सादगी और स्वावंलबन। इससे मनुष्य को तकनीकी की गुलामी से आजादी मिलेगी। कारखानों में प्राकृतिक गैस और प्रेट्रोलियम का उपयोग कम होगा तो कार्बन का उत्सर्जन भी कम होगा। गांधीजी द्वारा बताए मार्ग पर चलते हुए यदि हर व्यक्ति सादा जीवन जिए और विलासिता की अपनी जरूरतें कम करे तो इस दुनिया में इतने संसाधन तो हैं ही कि किसी व्यक्ति को कभी भूखे पेट न सोना पड़े। विश्व की नब्बे प्रतिशत संपत्ति पर आज दस प्रतिशत लोगों का कब्जा है। भोगविलास की उनकी मानसिकता ने पूंजीवाद को जन्म दिया है, जिसने गरीबी को जन्म दिया है। इन सभी विसंगतियों का जवाब गांधीजी के सादगी और स्वावलंबन के सिद्धांत में है। धर्म के विषय में देश की भोलाभाली जनता को गांधीजी का एक ही संदेश है- धर्म कोई कथाओं, क्रियाकांडों और तर्क-वितर्कों का विषय नहीं है। धर्म आचरण का विषय है और आचरण द्वारा ही उसे जीवन और समाज में स्थापित किया जा सकता है, इसलिए हर व्यक्ति को धर्म के सनातन सिद्धांतों को जीवन में उतारने पर ध्यान देना चाहिए। देश में इस समय भारतीय संस्कृति बनाम विदेशी संस्कृति को लेकर जो बवाल मचा है, उस बारे में भी गांधीजी की मान्यता एकदम स्पष्ट थी। उनका कहना था- मैं चाहता हूं कि जितने देशों की संभव हो, उतने देशों की संस्कृतियां हमारे देश में आए, पर किसी भी संस्कृति के द्वार पर मेरी संस्कृति असहाय बन कर जाए, यह मुझे स्वीकार्य नहीं।

इसी तरह गांधीजी का मानना था कि चाहे जितनी भी संस्कृतियां इस देश में आ जाएं, पर उनके समक्ष हमारी अपनी संस्कृति पंगु बन जाए यह स्वीकार्य नहीं। अन्य अनेक संस्कृतियों को हम अपने देश में भले ही स्थान दें, पर उससे हमारी संस्कृति का प्रवाह तनिक भी बाधित नहीं होना चाहिए। हमें अपनी संस्कृति को ही मुख्य सांस्कृतिक प्रवाह के रूप में स्वीकार करना है, जिससे भविष्य में हमें किसी अन्य संस्कृति के घर में किसी दास, याचक या घुसपैठिया बनकर रहना न पड़े। इस तरह से देखें तो वर्तमान विश्व और वर्तमान भारत की ऐसी कोई भी समस्या नहीं, जिसका समाधान गांधीजी के जीवन-दर्शन में न मिलता हो। गांधीजी की महानता इस बात में है कि उनके वचनों और उनके कर्मों में कहीं कोई विरोधाभास नहीं दिखाई देता है। इन कर्मों के अनुसरण में ही आधुनिक विश्व की तमाम समस्याओं का समाधान है। संक्षेप में गांधीजी की विचारधारा आज पहले से भी अधिक प्रासंगिक है।

गांधीजी के जाने का मतलब

शुक्रवार ३० जनवरी १९४८ की शुरुआत एक आम दिन की तरह हुई। हमेशा की तरह महात्मा गांधी तड़के साढ़े तीन

बजे उठे। प्रार्थना की, दो घंटे अपनी डेस्क पर कांग्रेस की नई जिम्मेदानिरयों के मसौदे पर काम किया और इससे पहले कि दूसरे लोग उठ पाते, छह बजे फिर सोने चले गए।

काम करने के दौरान वह आभा और मनु का तैयार किया हुआ नींबू और शहद का गरम पेय और मीठा नींबू पानी पीते रहे। दोबारा सो कर आठ बजे उठे। दिन के अखबारों पर नजर दौड़ाई और फिर ब्रजकृष्ण ने तेल से उनकी मालिश की। नहाने के बाद उन्होंने बकरी का दूध, उबली सब्जियां, टमाटर और मूली खाई और संतरे का रस भी पिया।

शहर के दूसरे कोने में पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन के वेटिंग रूम में नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे और विष्णु करकरे अभी भी गहरी नींद में थे।

डर्बन के उनके पुराने साथी रुस्तुम सोराबजी सपरिवार गांधीजी से मिलने आए। इसके बाद रोज की तरह वो दिल्ली के मुस्लिम नेताओं से मिले। उनसे बोले, मैं आप लोगों की सहमति के बगैर वर्धा नहीं जा सकता। सुधीर घोष और गांधीजी के सचिव प्यारेलाल ने नेहरू और पटेल के बीच मतभेदों पर लंदन टाइम्स में छपी एक टिप्पणी पर उनकी राय मांगी। इस पर गांधी ने कहा कि वह यह मामला पटेल के सामने उठाएंगे जो चार बजे उनसे मिलने आ रहे हैं और फिर वह नेहरू से भी बात करेंगे जिनसे शाम सात बजे उनकी मुलाकात तय थी।

उधर बिर्ला हाउस के लिए निकलने से पहले नाथूराम गोडने से कहा कि उनका मूंगफली खाने का जी चाह रहा है। आप्टे उनके लिए मूंगफली ढूंढने निकलने लेकिन थोड़ी देर बाद आकर बोले- पूरी दिल्ली में कहीं भी मूंगफली नहीं मिल रही। क्या काजू या बादाम से काम चलेगा? लेकिन गोडसे को सिर्फ मूंगफली ही चाहिए थी। आप्टे फिर बाहर निकले और इस बार वो मूंगफली का बड़ा लिफाफा लेकर वापस लौटे। गोडसे मूंगफलियों पर टूट पड़े। तभी आप्टे ने कहा कि अब चलने का समय हो गया है। चार बजे वल्लभभाई पटेल अपनी पुत्री मनीबेन के साथ गांधी से मिलने पहुंचे और प्रार्थना के समय यानी शाम पांच बजे के बाद तक उनसे मंत्रणा करते रहे।

सवा चार बजे गोडसे और उनके साथियों ने कनॉट प्लेस के लिए एक तांगा किया। वहां से फिर उन्होंने दूसरा तांगा किया और बिर्ला हाउस से दो सौ गज पहले उतर गए। उधर पटेल के साथ बातचीत के दौरान गांधी चर्खा चलाते रहे और आभा का परोसा शाम का खाना बकरी का दूध, कच्ची गाजर, उबली सब्जियां और तीन संतरे खाते रहे।

आभा को मालूम था कि गांधी को प्रार्थना सभा में देरी से पहुंचना बिल्कुल पसंद नहीं था। वह परेशान हुई, पटेल को टोकने की उनकी हिम्मत नहीं हुई, आखिरकार वो भारत के लौह पुरुष थे। उनकी ये भी हिम्मत नहीं हुई कि वह गांधी को याद दिला सकें कि उन्हें देर हो रही है। बहरहाल उन्होंने गांधी की जेब घड़ी उठाई और धीरे से हिला कर गांधी को याद दिलाने की कोशिश की कि उन्हें देर हो रही है। अंतत: मणिबेन ने हस्तक्षेप किया और गांधी जब प्रार्थना सभा में जाने के लिए उठे तो पांच बजकर दस मिनट होने को आए थे।

गांधी ने तुरंत अपनी चप्पल पहनी और अपना बांया हाथ मनु और दायां हाथ आभा के कंधे पर डालकर सभा की ओर बढ़ निकले। रास्ते में उन्होंने आभा से मजाक किया। गाजरों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि आज तुमने मुझे मवेशियों का खाना दिया। आभा ने जवाब दिया, लेकिन बा इसको घोड़े का खाना कहा करती थीं। गांधी बोले, मेरी दरियादिली देखिए कि मैं उसका आनंद उठा रहा हूं जिसकी कोई परवाह नहीं करता।

आभा हंसी लेकिन उलाहना देने से भी नहीं चूकीं, आज आपकी घड़ी सोच रही होगी कि उसको नजरअंदाज किया जा रहा है। गांधी बोले, मैं अपनी घड़ी की तरफ क्यों देखूं। फिर गांधी गंभीर हो गए, तुम्हारी वजह से मुझे दस मिनट की देरी

हो गई है। नर्स का यह कर्त्तव्य होता है कि वह अपना काम करे चाहे वहां ईश्वर भी क्यों न मौजूद हो। प्रार्थना सभा में एक मिनट की देरी से भी मुझे चिढ़ है।

यह बात करते करते गांधी प्रार्थना स्थल तक पहुंच चुके थे। दोनों बालिकाओं के कंधों से हाथ हटाकर गांधी ने लोगों के अभिवादन के जवाब में उन्हें जोड़ लिया। बाईं तरफ से नाथूराम गोडसे उनकी तरफ झुका और मनु को लगा कि वह गांधी के पैर छूने की कोशिश कर रहा हे। आभा ने चिढ़कर कहा कि उन्हें पहले ही देर हो चुकी है, उनके रास्ते में व्यवधान न उत्पन्न किया जाए। लेकिन गोडसे ने मनु को धक्का दिया और उनके हाथ से माला और पुस्तक नीचे गिर गई। वह उन्हें उठाने के लिए नीचे झुकीं तभी गोडसे ने पिस्टल निकाल ली और एक के बाद एक तीन गोलियां गांधीजी के सीने और पेट में उतार दीं।

उनके मुंह से निकला, राम... राम... और उनका जीवनहीन शरीर नीचे की तरफ गिरने लगा।

३० जनवरी, यानी शहिद दिवस दुनिया से एक ऐसी रोशनी के बुझने का दिन था जिसने न केवल भारत अपितु सारी दुनिया को एक अद्‌भुत एवं अपूर्ण रास्ता दिखाया।

नाथू राम गोडसे नामक शख्स की पिस्तौल से निकली गोलियों की ध्वनि महज बिरला मंदिर के प्रांगण तक ही सिमट कर नहीं रही वरन चीत्कारों, हाहाकारों, सिसकियों तथा रूदन मिश्रित अपराध बोध के साथ सारे देश में सुनाई पड़ी। सारा देश पश्चात्ताप, भर्त्सना और हत्यारी प्रवृत्ति की निंदा करते हुए स्तब्ध था मगर रक्त रंजित एक देह पड़ी थी शांत, बिल्कुल शांत, एक दम निर्विकार एवं निस्पृह जैसे कुछ हुआ ही न हो। यह देह थी अहिंसा के प्रवर्तक महात्मा कहे जानेवाले बापू की। गांधीजी, बापू, महात्मा के संबोधन पाने उस कृशकाय एवं कर्मठ तथा निर्लेपी युग प्रवर्तक को आज भी सारी दुनिया मान देती है, आश्चर्य करती है उनकी उपलब्धियों और उपलब्धियों के लिए अपनाए गये रास्तों और तरीकों पर। आइंस्टीन जैसे वैज्ञानिक ने तभी तो टिप्पणी की थी कि आनेवाले समय में लोग विश्वास नहीं करेंगे कि कभी इस धरती पर गांधी जैसा व्यक्ति पैदा भी हुआ था।

आज भी यह टिप्पणी एकदम सटीक और सारगर्भित लगती है। आज की पीढ़ी जब आतंकवाद का घृणित से घृणिततम होता होता चेहरा देखती है, हर दूसरे व्यक्ति को हिंसक या हिंसा से ग्रसित पाती है, सामूहिक नरसंहारों, दंगों व धार्मिक उन्मादों का तांडव भोगती है तब बेशक अहसास होता है गांधी के चले जाने की शून्यता का। यही है गांधी के जाने का मतलब।

उस दिन राजधानी में सूरज नहीं निकला था। कोहरे और जाड़े के कारण सड़कों पर ज्यादा लोग नहीं थे।

गांधीजी जब बिड़ला हाउस से प्रार्थना सभा में शामिल होने निकले, तब ५.१६ का वक्त था। हालांकि कहा जाता है कि ५.१७ पर उनपर गोली चली। ५.१० पर ही निकले होंगे। उस दिन बापू से मिलने सरदार पटेल आए थे, कुछ जरूरी बात करने के लिए। आमतौर पर बापू ५.१० पर प्रार्थना के लिए आ जाते थे। लेकिन उस दिन कुछ देर हो गई थी। तो उन्होंने सरदार पटेल को खुद ही कहा कि आप जाइए, मेरी प्रार्थना का वक्त हो गया है। मुझे जाना है। वो ५.१० पर निकले होंगे।

रोज की तरह आभा और मनु उनके साथ थीं। तभी पहली गोली की आवाज आई। वहां बहुत से लोग इकट्ठा थे और तभी दूसरी गोली चली। तीसरी गोली चली। बाद में पता चला कि गोली मारनेवाले का नाम नाथूराम गोडसे था। उसने खाकी कपड़े पहने थे। तीसरी गोली चलाने के बाद उसने दुबारा से हाथ जोड़े। उसके बाद लोगों ने उसे पकड़ लिया। उसने किसी भी तरह का विरोध नहीं किया, बल्कि अपनी जो रिवाल्वर थी उसे भी उनके हवाले कर दिया।

गांधीजी का आदेश था कि कोई भी पुलिसवाला उनकी प्रार्थना सभा में नहीं होगा। लेकिन जब से हादसा हुआ तो कुछ लोगों ने पुलिस को इत्तिला की होगी और पुलिस वहां आ गई और हत्यारे को पुलिस के हवाले कर दिया गया। अचानक वहां पर पुलिसकर्मी इसलिए नजर आए क्योंकि वहां पर संसद मार्ग थाने में तैनात डीएसपी जसवंत सिंह और तुगलक रोड थाने के इंस्पेक्टर दसौंदा सिंह पहुंच गए थे। जसवंत सिंह के पुत्र गुरुदयाल सिंह ने बताया कि ये दोनों पुलिस अफसर तुगलक रोड थाने से बिड़ला हाउस साथ-साथ इसलिए आए थे कि चलो देख लेते हैं वहां पर क्या चल रहा है। ये दोनों पुलिस अफसर पंजाब के होशियारपुर से थे। दोनों में गहरी मित्रता थी। उस दिन दोनों गांधीजी की सभा को देखने के बाद गुरुद्वारा सीसगंज जाना चाह रहे थे। वे मोटरसाइकिल से बिड़ला हाउस आए थे।

जैसे ही वे गेट पर पहुंचे वैसे ही गोली चलने की आवाज आई। किसी अज्ञात आशंका से ग्रस्त दोनों भागकर अंदर गए। वहां भगदड़ का मंजर था। गांधी जी को बिड़ला हाउस के अंदर लेकर जाया जा रहा था। दोनों ने वहां लोगों के साथ मिलकर तुरंत गोडसे को पकड़ लिया।

जग में कोई जिया है तो बापू तू ही जिया, तूने वतन की राह पे सब कुछ लुटा दिया।
साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल, दुनिया में तू बेजोड़ था इन्सान बेमिसाल,
जिस दिन तेरी चिता जली रोया था महाकाल।

७० साल पहले एक सिरफिरे नौजवान नथूराम गोडसे ने उनकी हत्या कर दी। यह दुर्भाग्य ही है कि बापू की हत्या करनेवाला ये सिरफिरा नौजवान पुणे का ही था। तब ३० जनवरी १९४८ को शुक्रवार का दिन था। शाम के ५ बजकर दस मिनट हो चुके थे। आभा और मनु के कंधों पर हाथ रखकर गांधीजी अपने जीवन की अंतिम पद यात्रा पर चल पड़े थे, जो बिड़ला-हाउस के उनके कमरे से शुरू हुई और उसी बिड़ला हाउस के लॉन में समाप्त होनेवाली थी। अपनी भजन मंडली सहित गांधीजी प्रार्थना सभा के उस लॉन में पहुंचे, जहां श्रद्धालुओं की भीड़ उनकी प्रतीक्षा कर रही थी और वहीं पर उनके हत्यारे नत्थूराम गोडसे, आपटे और करकटे भी बेसब्री से उनका रास्ता देख रहे थे। नत्थूराम ने जेब से पिस्तौल को निकालकर अपनी दोनों हथेलियों में छिपा लिया। जब गांधीजी केवल तीन कदम के फासले पर रह गए, तो नत्थूराम दो कदम आगे आकर गांधीजी के ठीक समाने खड़ा हो गया। उसने नमस्कार की मुद्रा में हाथ जोड़े। उन्हीं हथेलियों के बीच पिस्तौल छुपा था। वो थोड़ा झुका और बोला, नमस्ते गांधीजी। मनु को लगा कि शायद वह गांधीजी के पांव छूना चाहता है। मनु हाथ से उसे हटाते हुए बोली, भाई। बापू को पहले ही दस मिनट की देरी हो चुकी है। उसी क्षण नत्थूराम गोडसे ने अपने बाएं हाथ से मनु को जोर का धक्का दिया और दाहिने हाथ की पिस्तौल से उसने तीन गोलियां चलाईं। प्रार्थना-सभा के शांत मैदान में गोली के तीन धमाके सुनाई दिए। नत्थूराम गोडसे अपना काम कर चुका था। गांधीजी की छाती में तीनों गोलियां घुस चुकी थीं। गांधीजी बस इतना ही बोल सके, हे राम। और वे निर्जीव होकर जमीन पर गिर पड़े। जीवन की अंतिम सांस लेते हुए भी बापू ने अपने हत्यारे को नमस्कार किया था। खून से सनी गांधीजी की धोती में उलझी घड़ी मनु को दिखाई पड़ी, जिसमें इस समय पांच बजकर सत्रह मिनट हुए थे। इसके बाद लगभग छह बजे दिल्ली रेडियो स्टेशन से इस सदी की सबको रुला देनेवाली खबर प्रसारित हुई कि आज नई दिल्ली में, शाम के पांच बजकर सत्रह मिनट पर महात्मा गांधी की हत्या हो गई। उनका हत्यारा पुणे का एक हिंदू ब्राह्मण नथूराम गोडसे है। महात्मा गांधी का शव तुरंत बिड़ता हाउस के अंदर लाया गया। पूरा कमरा शोक संतप्त लोगों से भर चुका था। पंडित नेहरू सुबकते हुए चेहरे के साथ फर्श पर बैठे थे, थोड़े फासले पर सरदार वल्लभभाई पटेल बैठे थे, जैसे अभी अभी उन पर बिजली गिरी हो। सारे कमरे में

सिसकियों की आवाज थी। बापू के शव को घेरकर बैठी महिलाएं गीतापाठ कर रही थीं। मनु चुपचाप रोए जा रही थी। अपने लाड़ले बापू का सिर उसने गोद में ले रखा था। वही सिर अब निर्जीव हो गया था। रोती हुई मनु उस सिर को धीरे धीरे सहला रही थी, जिसमें न जाने कितने मौलिक विचार संपूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए उदित होते रहे थे। तभी सारे देश में गांधीजी की हत्या की खबर सुनकर देश की जनता ने वही किया, जो आजादी की खातिर गांधीजी ने जनता से करवाया था। उन्होंने जनता को हड़ताल का हथियार दिया था, जिससे जनता आजादी की राह पर आगे बढ़ी और आजादी हासिल भी कर ली। अब वही हड़ताल देशभर में हो गई थी। देखते ही देखते पूरा देश बंद हो गयां बापू का शरीर ठंडा होने के साथ ही पूरे देश के चूल्हे भी ठंडे हो गये थे। देश के अधिकातर शहरों और गांव में खाना नहीं बना। जिन देशवासियों पर गांधीजी ने अपना सारा जीवन न्यौछावर किया था, उन्हीं में से एक देशवासी ने उनकी हत्या कर दी थी। सलीब पर एक और ईसा के चढ़ जाने की यह घटना भी शुक्रवार को ही घटी थी। गाँधी की हत्या के तुरंत बाद नत्थूराम गोडसे को गिरफ्तार कर लिया गया। घटनास्थल पर खड़े प्रत्यक्षदर्शी साक्षीदार नंदलाल मेहनता ने तुगलक रोड पुलिस स्टेशन में एफआयआर दर्ज कराई। एफआयआर उर्दू में लिखी गई थी। नत्थूराम गोडसे और इस हत्या के षडयंत्र में शामिल उसके सहयोगियों पर लालकिले में मुकदला चला। यह केस २७ मई १९४८ को शुरू हुआ और १० फरवरी १९४९ तक लगभग सालभर चला। कोर्ट के फैसले में नन्थूराम गोडसे को फांसी और उसके सहयोगियों को उम्रकैद की सजा सुनाई गई।

बेशक गांधीजी कोई देवपुरुष या देवदूत या पैगम्बर नहीं थे वरन वह भी हाड़मांस के बने साधारण मानव थे मगर कुछ ऐसा तो था ही उनमें कि वे मानव से महामानव हो गये। व्यष्टि से समष्टि मूलक हो गये। आज के आत्माघाती युग में जहां अपने लक्ष्य हासिल करने के लिए व्यक्ति किसी भी हद तक गिरने को तत्पर है, अपने छोटे से क्षुद्र स्वार्थो। की पूर्ति के लिए यह किसी का गला काटने, पीठ में छुरा घोंपने में जरा भी नहीं हिचकिचाता, तब याद आते हैं महात्मा गांधी। तब अहसास होता है कितना कुछ खोया था इस देश मे आज के ही दिन १९४८ को ग्यारह बजकर दो मिनट पर। दोपहर से पहले ही ढल गये सूरज ने पीछे छोड़ा था रोशनी का कारवां मगर हम सहेजते, समेटते रह गये अंधेरा, घना अंधेरा। तो क्या यही है गांधी के जाने का मतलब।

वह गांधी ही थे जो साध्य के साथ-साथ साधन की पवित्रता पर अडिग रह सकते थे। आजादी पाने को दृढ़ होने पर भी उतावलेपने से दूर और शुचिता पर हर हाल में अडिग रहने के संकल्पी। साफ कहां था साबरमती के संत ने, मुझे लाशों के ऊपर चलकर आई आजादी स्वीकार्य नहीं होगी। इसी मुद्दे पर प्राय: आलोचना का शिकार होने के बावजूद भी अप्रभावित, रहने वाले थे गांधी। आज कहां है यह दृढ़वृत। जरा-जरा सी बातें पर तड़कना-भड़कना, बिदकना, विचलित होना आज गांधी की कमी का अहसास कराता है। यही तो है गांधी होने का अर्थ। गांधी ने महज देश की आजादी का शंखनाद ही नहीं किया, केवल लड़े ही नहीं आततताईयों से वरन उनका हृदय परिवर्तन करने में जुटे रहे। पापी से नहीं, पाप से घृणा करने के सिद्धांत पर अडिग रहे। शत्रु में भी मित्र ढूंढ़ते रहना गांधी जैसा महामानव ही कर सकता है। उन्होंने केवल सपने ही नहीं देखे वरन सपनों को ठोस धरातल पर लाने का कर्मठ प्रयास भी किया। शायद नारी व दलितों की शक्ति को पहचाननेवाले अपनी शताब्दी के पहले सूत्रधार थे गांधी। शिक्षा, रोजगार, अर्थ व्यवस्था सभी पर पैनी नजर रखनेवाले गांधी को तीन तो क्या असंख्य गोलियां भी मार नहीं सकती। उनकी देह तो छलनी हो गयी मगर विचार आज भी ठोस रूप में जिंदा हैं। वस्तुत: मर ही नहीं सकते कभी गांधी। आज जब भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण सूचना क्रांति एवं तकनीक का

युग है ऐसे में गांधी की बुनियादी शिक्षा, कुटीर उद्योगों की स्थापना, कृषि आधारित अर्थव्यवस्था हर हाथ को रोजगार का संकल्प समय की कसौटी पर आऊटडेटेड लगने लगे हैं तो यह गांधी की नाकामयाबी नहीं वरन समय के परिवर्तन का परिणाम है। गांधी सदैव समय से आगे चलने वाले शख्स थे। यदि आज वे होते तो बेशक नए गांधी के रूप में होते। बेशक काल निरपेक्ष हैं गांधी और गांधीवाद।

भुला दिया जाना हर मनुष्य की अंतिम नियति है। याद करते रहने के भार से मुक्ति पाने की कोशिश करना हर एक की सहज प्रवृत्ति है। घोर श्रद्धालु हिंदू भी पितृपक्ष में अपनी तीन पीढ़ियों तक के पुरखों को ही याद करते हैं। नेता भी इस नियति चक्र से बच नहीं सकता भले ही वह अपने समय का महापुरुष क्यों न रहा हो। बहुत हुआ तो हम उसे देवता मानकर मंदिर के किसी एक कोने में प्रतिष्ठित कर देंगे और कुछ लोग उसके नाम की महंतगिरी करके सत्ता प्रतिष्ठान से अपने गुजर-बसर के लिए अच्छा दान उगाह सकते हैं।

महात्मा गांधी जी के संदर्भ में भी यही हुआ। गांधीजी ने हमें स्वराज दिया लेकिन हमने स्वराज को गांधी नहीं दिया। हमने उनके नाम पर मंदिर बनवाये, राष्ट्रपिता साबरमती के संत महात्मा जैसे विशेषणों से इन्हें विभूषित किया लेकिन उनकी छाप से राष्ट्र को वंचित ही रखा। इनकी परंपरा हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक अंग नहीं बन सकी।

जब हम इस तथ्य पर विचार करते हैं तो एक आश्चर्य में डाल देनेवाला तथ्य हमारे सामने आ धमकता है। भारतीय स्वाधीनता संघर्ष और भारतीय नवजागरण से जितने भी महापुरुषों के नाम जुड़े हैं, आज हमारे बीच सच्चे अर्थ में उनका नाम लेनेवाला कोई नहीं है। इसे देख ऐसा लगता है कि उन महापुरुषों ने जो कुछ भी कहा, किया, वह हमारे लिए शुद्ध प्रतीकात्मक रहा। हमने उनका अपने यथार्थ जीवन से कभी किसी प्रकार का संबंध नहीं माना। अगर यह बात नहीं रही होती तो दांत की तरह दिखाने का दर्जा दिया जाता। गांधीजी की हर योजना स्वाधीन भारत में प्रतीक पूजन के कर्मकाण्ड का अंग बनी। जिन मुट्ठी भर लोगों ने गांधी दर्शन को राजनीति का अंग बनाया, वे झटपट समाज में महत्वहीन मान लिये गये। आज सब कुछ राजनीति ने अपने में समेट लिया है। जहां गांधीजी ने कहा और माना था कि राजनीति धर्म की दासी है वहीं राजनीति धर्म को अपना दास बनाने का प्रयत्न कर रही है। गांधी के विचारों पर प्राय: प्रतिदिन चर्चाएं और गोष्ठियां होती हैं, शिबिर आयोजित किये जाते हैं। देश में, विदेश में उनके शुभ संदेशों का आदान-प्रदान होता है लेकिन इन तमाम आयोजनों की भाषा ऐसी होती है कि साधारण आदमी इसे समझ ही नहीं पाता।

आज चाटुकारिता बेहद बढ़ गई है प्राय: सभी की गर्दन सत्ता के आगे झुकी रहती है। लेखक, कवि, शिक्षक, पत्रकार, प्रकाशक सभी अपने अपने रूप में चाटुकारिता की बीमारी से ग्रस्त हैं। देश की अवस्था बिगड़ती जा रही है। इसके लिए हम सभी भारतीय जिम्मेदार हैं। शक्ति का संचय हमने नहीं किया, पुरुषार्थ को नहीं जगाया और हर काम में मुखापेक्षी बन गये। खुशामद करना हमारी नीति बन गई।

इसका परिणाम जो होना था, वही हुआ। शारीरिक काम को स्वयं ईमानदारी से बिना अपनाये गरीबी हटाओ, बेकारी दूर करो, ऐसे उपदेशात्मक नारों का कोई अर्थ नहीं है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि नवजागरण के अन्य नेताओं की तरह गांधी भी हमारे लिए पुराण पुरुष बन गये। दु:ख है कि हमने उन्हें इतिहास पुरुष नहीं बनाया।

स्वराज के बाद सब कुछ ले देकर हमने यह तय कर लिया कि सत्ता सबसे बड़ी सच्चाई है और इसके बाद भी कोई सच्चाई है तो वह है पैसा। सिद्धांत मानने के लिए नहीं, धौंस दिखाने के लिए होते हैं। आदर्शों की वर्षा अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए की जाती है। प्रगति व्यक्तिगत ही हो सकती है, सामूहिक नहीं।

गांधी जी ने समाज की कमजोरियों को जड़ से उखाड़ने का व्रत लिया था। मिशन भावना की प्रतिष्ठा कर उन्होंने सामंती आलस्य में खोये देश में कर्म के कौशल की अलख जगाई। पूर्व और पश्चिम के आदर्शों का समन्वय किया। लगता है कि हमारी सामंती सुविधा को यह समन्वय अच्छा नहीं लगा और गांधी की आंधी को हमारे सिर के ऊपर से होकर जाने दिया गया।

मेरे विचार से हर कोई नहीं तो कुछ लोग तो अपने ऊपर थोड़ा सा दायत्वि लेकर इतना कुछ कर सकते हैं कि हम अपने व्यक्तिगत जीवन को यथा संभव निष्कपट, निर्भय और विनम्र बनायें। कथनी और करनी के अंतर को पाटें। अत्याचार से समझौता न करें। अच्छे साध्य के लिए साधन भी अच्छे हों, इस पर ध्यान दें। स्वयं को आगे लायें। नाम जाप को छोड़ गांधी जी के दिखाये मार्ग को अपनायें। हमेशा अपने आप का निरीक्षण और परीक्षण करते रहें। आत्मनिर्भरता हमारी पूंजी बने। हम यह शपथ लें तो मुझे विश्वास है कि गांधी जी की आत्मा को संतोष होगा। भगवान करे कि हम ऐसा कर सकें।

क्यों भूले गांधी जी की राह?

गांधी जी और पं. जवाहर लाल नेहरू में बहुत फर्क था। दोनों की जीवनशैली अलग थी। विचारधारा अलग थी। मोहनदास करमचंद गांधी जी की प्रासंगिकता का सवाल उनकी जन्म और पुण्यतिथि पर हमेशा उठता है लेकिन गांधीजी तो आजादी के समय से ही अलग पड़ गए थे। उनके सहयोगियों ने उनके मूल्यों और कार्यक्रमों को तिलांजलि दे दी। सरकार के कामकाज में गांधीवादी सरोकारों और लक्ष्यों को देखना निराश करता है।

आजादी के बाद आधुनिक भारत का निर्माण करनेवालों ने आधुनिक शिक्षा का ढांचा बनाने की आड़ में गांधीजी के विचारों को दरकिनार कर दिया। शिक्षा पद्धति को लेकर जितनी भी खुली बहस हुई, चर्चाएं हुईं, उनमें भी गांधीजी के विचारों की जबरदस्त उपेक्षा हुई।

गांधीजी ने लिखा था कि जब तक शिक्षा भारत की परिस्थिति के अनुरूप नहीं दी जाती, तब तक राष्ट्रीय जीवन का विकास नहीं हो सकता। वे ऐसी शिक्षा के पक्षधर थे जो बच्चों में सर्वोत्तम शरीर, मन और आत्मा निखार सके।

गांधीजी के अनुसार शिक्षा का अर्थ ककहरा सीखकर बैठ जाना नही है बल्कि यह जानना है कि हमारे अधिकार क्या हैं? यह समझना है कि अधिकारों के साथ हमारे उत्तरदायित्व और कर्तव्य क्या है। विडंबना यह है कि आजादी के बाद शिक्षा प्रणाली में हम गांधीजी के शिक्षा दर्शन को नकारने लगे। आम जीवन में काम में न आनेवाली शिक्षा विलासिता विकसित करेगी।

बुनियादी शिक्षा को दर किनार कर हमने गांधी जी को भूलने की राह पर कदम बढ़ा लिए हैं। पाठ्यक्रम में चित्रकला, संगीत, सामान्य ज्ञान, पी. टी, शारीरिक शिक्षण कार्यानुभव सम्मिलित क्रिया गया है किन्तु विद्यार्थियों को इन सभी विषयों से कुछ खास लेना देना नहीं।

गांधी जी संस्कारों को महत्व दिया करते थे। उनका कहना था कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे हम अपनी संस्कृति की रक्षा कर सकें न कि हम हीन भावना से ग्रस्त होकर पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध का आंख मूंदकर अनुकरण करें। हमारी अपनी तहजीब रही है। सभ्यता और संस्कृति से विमुख करनेवाली शिक्षा नुकसान ही पहुंचाएगी, वर्तमान में भी और भावी भविष्य में भी। नतीजा आंखों के सामने है।

गांधी जी की अर्थ नीति ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को प्राथमिकता देती रही। यह बात अलग है कि कांग्रेस ने गांधी को बतौर वोट बैंक ही इस्तेमाल किया। शराबबंदी, नशाखोरी, दहेज पर गांधी के विचारों का विगत वर्षों में कितना सम्मान

हुआ, जगजाहिर है। रंग भेद, वर्णभेद, जाति, ऊंच-नीच के विरूद्ध गांधी जी ने संघर्ष किया। उनके लाडलों ने उन्हीं के सपनों को चकनाचूर कर दिया।

जिस चरखे और खादी से उन्होंने जन-जन को जागरूक किया था वही आज कोने में पहुंचा दिया गया है। खादी पहनने वाले खादी की लाज भूल चुके हैं। उनके लिए खादी स्वयं को नेता सिद्ध करनेवाली पोशाक है।

सरकार को राजस्व की चिन्ता है इसलिए गांव-गांव में शराब बन रही है, बिक रही है। गांधी के पुतले के नीचे या पीछे बैठकर ही मदिरा प्रेमी रसपान करते हैं। बड़ी श्रद्धा के साथ वे खाली बोतलें गांधी के सुपूर्द कर घर लौट जाते हैं। आधुनिकता की आड़ में विलासिता को गले लगानेवालों ने गांधी जी को पाठ दिखाकर अपना फर्ज पूरा किया।

शिक्षा पद्धति की खूबियां व खामियां स्वयं ही स्पष्ट हो गई। दुनिया गांधी जन्म दिवस को अहिंसा दिवस के रूप में मनाएगी। हम भी मनायेंगे किंतु महज औपचारिकता वश। सत्य नजर नहीं आता जबकि हिंसा हर चौराहे पर कानून व्यवस्था का मजाक उड़ा रही है। घरेलू हिंसा के विकृत रूप ने वैसे भी सभी को चिन्तित कर रखा है। काश गांधी को भुलाने की गलती में हम सुधार लाने का प्रयास करें।

९ बातें जो गांधीजी से सीख सकते हैं

मोहनदास करमचंद गांधी को हम महात्मा गांधी के नाम से जानते हैं। उन्हें प्यार से बापू भी कहा जाता है।

हम वही बनते हैं जो हम सोचते हैं- गांधीजी कहते हैं, जैसे हमारे विचार हैं, हम वैसे ही बनेंगे। यदि हम सोचते हैं कि हम फेल हो जाएंगे तो यह निश्चित है कि हम अपने लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंचेंगे। जरूरत है कि हम नकारात्मक विचारों को बाहर निकालें, सकारात्मक को रखें।

कभी हार मत मानो, स्थिर रहो- गांधी ने कभी हार नहीं मानी। वे कई बार जेल गए लेकिन आजादी का संग्राम उन्होंने चलाए रखा। कितनी ही मुश्किलें आएं, अपने सपनों को नहीं छोड़े।

लक्ष्य साधना है तो प्रयास करें- उनकी क्रिया बताते हैं कि जिंदगी में क्या जरूरी है। सबसे पहले अपनी प्राथमिकताएं तय करें। लक्ष्य निर्धारित करने के बाद उसे पाने के प्रयासों में जुट जाएं।

नैतिक राह पर चलें- गांधी की आजादी पाने की राह इतनी आसान नहीं थी। लेकिन ब्रिटिश हुकूमत से लड़ने के लिए उन्होंने हिंसा के बजाय अहिंसा का रास्ता चुना।

ईमानदारी से ना कहना सीखें- गांधी के अनुसार, जिस काम को आप नहीं करना चाहते, उसके लिए ईमानदारी से बेझिझक ना कहें। यह उस हां से कई गुना बेहतर है जो आपको किसी मंजिल पर नहीं ले जाता।

आंतरिक शांति प्रभावित नहीं होती- हम किसी से मिलें और उसके विचार हमारे आत्मविश्वास पर संदेह उत्पन्न करें, यह गांधीजी के अनुसार गलत है। वे कहते हैं, मन पर अपना एकाधिकार होना चाहिए और हमें अंतरात्मा की आवाज सुननी चाहिए, बाहरवालों की नहीं।

क्षमादान कमजोरी नहीं, सामर्थ्य है- किसी को क्षमा करना आसान नहीं है। बहुत साहस की जरूरत होती है। यदि हम किसी को माफ नहीं करते हैं तो हम अपने चारों ओर ऐसा घेरा बना लेते हैं, जो हमें जीने नहीं देता। जिंदगी सही तरीके से बितानी है तो लोगों और उनकी भूलों को क्षमा कर दें।

मेंटल स्ट्रेंथ ज्यादा जरूरी- सामर्थ्य, शक्ति या इच्छाशक्ति आपको कई रूपों में मिल सकती है। यदि इच्छाशक्ति हो तो मनुष्य पहाड़ हिला सकता है। गांधीजी शारीरिक रूप से बलशाली भले नहीं थे, लेकिन उनकी मानसिक शक्ति इतनी

जबरदस्त थी कि ब्रिटिश हुकूमत भी उनके आगे झुक गई।

पहले खुद बदलें- गांधी कहते थे कि हम अपनी सोची हुई गुणवत्ता दूसरों में देखना चाहते हैं। लेकिन हमें दूसरों को बदलने की बात छोड़ देनी चाहिए, बजाय इसके पहले खुद में बदलाव लाने चाहिए।

गांधी जी की गीता माता

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भगवद्गीता को अत्यधिक महत्त्व दिया है। उन्होंने इस ग्रंथ को माता कहा है। उन्होंने गीता माता के संबंध में लिखा है, गीता शास्त्रों का दोहन है। सारे उपनिषदों का निचोड़ उसके सात सौ श्लोकों में आ जाता है, कुछ न हो सके तो भी गीता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। आज गीता गांधीजी के लिए केवल बाइबिल नहीं है, केवल कुरान नहीं है। उनके लिए वह माता हो गयी है। उनको जन्म देनेवाली माता तो चली गई पर संकट के समय गीता-माता के पास जाना सीख गये। जो कोई इस माता की शरण जाता है, उसे ज्ञानामृत से वह तृप्त करती है।

महान स्वतंत्रता सेनानी दादाभाई नौरोजी कहते हैं जो कुछ मैं हूं, वह मां का बनाया हुआ हूं। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने लिखा है, मैं जो कुछ भी हूं या होने की आशा करता हूं, उसका श्रेय मेरी दिव्य माता को है। अमेरिका के ही छठे राष्ट्रपति जॉन क्विन्सी एडम्स ने लिखा है, मैं जो कुछ भी हूं मातृ निर्मित हूं।

इसलिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जब भगवदगीता को माता कहते हैं तो समझना चाहिए कि वे गीता के महत्व को तो स्थापित करना ही चाहते हैं, मां के रूप में नारी शक्ति को भी अत्यन्त महत्वपूर्ण घोषित करना चाहते हैं। जैसा कि गांधीजी ने लिखा है, मुझे जन्म देनेवाली माता तो चली गई वह सच है। हर मां को जाना है पर गीता माता हमारा मार्गदर्शन करने को सदा उपस्थित है। इसलिए गांधी जी ने नारी शक्ति के रूप में गीता से सबक सीखते रहने का आह्वान किया।

गीता के संबंध में गांधी जी ने लिखा है वन्दनीय (गीता) माता द्वारा उपदिष्ट सनातन धर्म के अनुसार जीवन का लक्ष्य बाह्य आचार और कर्मकाण्ड नहीं बल्कि मन को अधिक से अधिक शुद्धि और तन, मन और आत्मा से अपने को दिव्य तत्व में विलीन कर देना है। गीता के इसी संदेश को अपने जीवन में उतारकर मैं लाखों, करोड़ों के पास गया हूं।

उपरोक्त घोषणा सत्य है। गांधीजी ने स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में जेल में रहकर जहां आम व्यक्तियों के लाभार्थ गीता-पदार्थ कोश तैयार किया, वहीं गीता संबंधी लेख भी लिखे। गीता पदार्थ कोश में गीता में उपयोग किए गए शब्दों का हिन्दी में भावान्तर है। गांधीजी ने गीता की अपनी टीका भी लिखी और अनेक स्त्री पुरुषों को गीता माता के मार्गदर्शन के लिए प्रेरित भी किया।

गांधीजी ने अनेक युवक युवतियों को इस संबंध में पत्र भी लिखे। एक आश्रम की बहन के पत्र के उत्तर में लिखते हैं बहन ने लिखा है गीता की बजाय अन्य पुस्तकें पढ़ना मुझे अच्छा लगता है।

तूने तो ऐसी बात लिखी है कि मुझे पकौड़ियां खाना अच्छा लगता है और रोटी अच्छी नहीं लगती किंतु जिसका शरीर ऐसा हो जाए, वह रोगी माना जाएगा। निरोगी का पेट पकौड़ियों से कभी भर नहीं सकता। वह तो रोटी से ही भरेगा। इसी तरह गीता को समझ है।

इसी तरह २४ फरवरी १९३३ को मीरा बहन को लिखे एक पत्र में गांधीजी लिखते हैं मैं गीता माता के सन्देश को हृदय में धारण करूंगा। यह विलक्षण माता है। मेरा खयाल है, तुम जानती हो कि वह माता कहलाती है। गीता का अर्थ है गेय, वह शब्द विशेषण के रूप में उपनिषद के साथ प्रयुक्त होता है, जो स्त्रीलिंग है। गीता कामधेनु की भांति है जो पूर्ण इच्छाओं की पूर्त्ति करती है इसलिए वह माता कहलाती है। अपने आध्यात्मिक जीवन को कायम रखने के लिए हमें जितने दूध की

आवश्यकता है, उसके लिए अगर हम याचक दुधमुंहे बच्चे की तरह मांग करें तो वह अमर माता हमें संपूर्ण दूध दे देती है। उसमें अपने लाखों बच्चों को अपने अजस्त्र थनों से दूध देने की क्षमता है।

गांधीजी ने ऐसे कई पत्र लिखे हैं। गीता जयंती पर उन्होंने लिखा हजारों के लिए गीता ही सच्ची माता है क्योंकि वह कठिनाइयों में सांत्वना रूपी पौष्टिक दूध देती है। मैंने उसे अपना आध्यात्मिक कोटा कहा है क्योंकि दु:ख में मैं उससे कभी निराश नहीं हुआ हूं। इसके अतिरिक्त यह एक ऐसी पुस्तक है जिसमें सांप्रदायिकता और धार्मिक अधिकारवाद का नाम भी नहीं है। यह मनुष्य मात्र को प्रेरणा देती है।

गांधीजी गीता माता में सत्य, अहिंसा और प्रेम का सन्देश पाते हैं। यह ग्रंथ हमारे आत्मविश्वास को बढ़कर आत्मदर्शन कराता है। इसके माध्यम से ईमानदारी, नैतिकता और आदर्श फलते फूलते हैं। माता यही तो कराती है। मां यानी गीता, गीता यानी मां, इस तरह मां नारी शक्ति का प्रतीक हो जाती है। भगवदगीता के अध्याय दस में श्लोक क्रमांक ३४ में भगवान श्रीकृष्ण स्वयं को स्त्रियों में मैं कीर्ति, लक्ष्मी, वाणी, स्मृति, बुद्धि तथा क्षमा हूं, कहकर नारी जाति के गुणों की घोषणा करते हैं। यही गुण तो मां की महत्ता बताते हैं।

प्रार्थना सभा के बाद एक वकील ने महात्मा गांधी से पूछा, आप प्रार्थना में जितना समय व्यतीत करते हैं, अगर उतना ही समय देश सेवा में लगाया होता, तो अभी तक कितनी सेवा हो जाती? महात्मा गांधी गंभीर हो गए और बोले, वकील साहब, आप भोजन करने में जितना समय बर्बाद करते हैं, अगर वही समय कामकाज में लगाया होता तो अभी तक आपने अनेक अतिरिक्त मुकदमों की तैयारी कर ली होती। वकील चकित होकर बोला, महात्माजी अगर भोजन नहीं करूंगा तो मुकदमों की तैयारी कैसे करूंगा? तब महात्मा गांधी बोले, जैसे आप बिना भोजन के बिना मुकदमे की तैयारी नहीं कर सकते, वैसे ही मैं बिना प्रार्थना के देश की सेवा नहीं कर सकता। प्रार्थना मेरी आत्मा का भोजन है। इससे मेरी आत्मा को शक्ति मिलती है, जिससे कि मैं देश की सेवा कर सकूं।

इन लोगों ने जेल में रचा इतिहास

जेल का नाम कुछ नकारात्मकता लिए हुए रहता है। जेल जानेवाले मनुष्य को अपराधी समझा जाता है। परंतु कुछ ऐसे प्रसिद्ध लोग हैं जिनकी प्रसिद्धि की असली वजह जेल में बिताया गया वक्त और उसी दौरान किया गया काम है। इनमें दुनिया के सबसे बेहतरीन कवि, लेखक, कलाकार, संगीतकार और राजनेता शामिल हैं।

गांधी के आगे झुकी सरकार- महात्मा गांधी जेल के अंदर बाहर होते रहे। जब भी वे जेल में रहें उन्होंने इसका भरपूर लाभ उठाया। इसमें १९३२ का साल सबसे अधिक महत्वपूर्ण रहा। गांधीजी ने भूख हड़ताल शुरू की। वह ब्रिटिश सरकार के भारत में जाति के अनुसार चुनाव कराने के फैसले का विरोध कर रहे थे। यह भूख हड़ताल ६ दिन चली। अंत में ब्रिटिश सरकार को अपना फैसला बदलना पड़ा।

गांधीजी राजनीतिज्ञ भी शिक्षा शास्त्री भी

अधिकांश लोग गांधीजी को एक महान राजनीतिज्ञ या देश की आजादी का सूत्रधार ही मानते हैं परन्तु गांधीजी ने इसके साथ-साथ शिक्षा के विकास पर भी बल दिया और वे सामाजिक उत्थान के भी हिमायती थे। गांधीजी के अनुसार साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न आरंभ। यह केवल एक साधन है जिसके द्वारा पुरुष तथा स्त्री को शिक्षित किया जा सकता है।

उनका तर्क था कि शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे बालक की समस्त शक्तियों का विकास हो सके जिससे

वह पूर्ण मानव बन जाए। पूर्ण मानव का तात्पर्य है कि शरीर हृदय, मन तथा आत्मा का समुचित विकास होना है। अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति गांधीजी कुछ इस प्रकार करते हैं कि शिक्षा से मेरा तात्पर्य है बालक और मनुष्य के शरीर मस्तिष्क और आत्मा में पाये जानेवाले सर्वोत्तम गुणों का चहुंमुखी विकास।

प्रचलित शिक्षण पद्धतियों से अलग होकर उन्होंने अपनी एक शिक्षण पद्धति बनाई जिसके अनुसार-

मस्तिष्क की शिक्षा के लिए शारीरिक अंगों का समुचित विकास होना आवश्यक है।

लिखने से पहले पढ़ना सिखाया जाए।

वर्णमाला के अक्षर सिखाने से पहले चित्रकला सिखाई जाए।

करके सीखने के अवसर प्रदान किए जाएं।

सीखने की प्रक्रिया में समन्वय स्थापित किया जाए।

ऐसी बात नहीं है कि गांधीजी शिक्षा को सिर्फ पढ़ाई-लिखाई ही मानते हों। वे शिक्षा को अन्य पहलुओं में भी आवश्यक और उपयोगी मानते थे। प्रत्येक बालक नियिमत शिक्षा प्राप्त करके किसी व्यवसाय के द्वारा अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके अर्थात शिक्षा ग्रहण करने का उद्देश्य जीविकोपार्जन भी होना नितान्त आवश्यक है। शिक्षा के द्वारा हमें अपनी संस्कृति का विकास करना चाहिए। संस्कृति शिक्षा का आधार तथा विशेषांग है। गांधीजी ने शिक्षा के पूर्ण विकास के उद्देश्य पर बल देते हुए अपनी शिक्षा पद्धति को विकसित किया जिसके द्वारा बालकों के शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास को प्रोत्साहन मिले। शिक्षा के उद्देश्यों में चरित्र निर्माण एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। उनके शिक्षा दर्शन को आदर्शवादी इसलिए कह सकते हैं क्योंकि वह जीवन के अन्तिम लक्ष्य यानी सत्य को प्राप्त करने की प्रेरणा प्रदान करता है, प्रकृतिवादी इसलिए क्योंकि वह बालक को उसकी प्रकृति के अनुसार विकसित करना चाहता है और प्रयोजनवादी इसलिए क्योंकि वह बालक की उसकी रुचि के अनुसार क्रिया करके सीखने पर बल देता है। गांधीजी पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने भारतीय जीवन को दृष्टि में रखते हुए वातावरण के अनुसार ऐसी शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिसको कार्य रूप में परिणित करने से भारतीय समाज में एक नया जीवन आने की संभावना है।

गांधीजी ने कहा था- किसी भी कीमत पर स्वतंत्रता का मोल नहीं किया जा सकता। वह जीवन है। भला जीने के लिए कोई क्या मोल नहीं चुकाएगा? जब तक गलती करने की स्वतंत्रता न हो तब तक स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है।

बापू को द. अफ्रीका में ट्रेन से फेंका था

७ जून १८९३ की रात में महात्मा गांधी को दक्षिण अफ्रीका के पीटरमारित्सबर्ग रेलवे स्टेशन पर प्रथम श्रेणी के डिब्बे से बाहर फेंका गया था।

वे प्रथम श्रेणी के डिब्बे में सवार थे। रात में पीटरमारित्सबर्ग रेलवे स्टेशन पर एक अंग्रेज यात्री ने उन्हें तृतीय श्रेणी के डिब्बे में जाने को कहा। गांधीजी ने टिकट दिखाते हुए विरोध किया। परंतु अश्वेत होने के कारण उन्हें डिब्बे से बाहर धकेल दिया गया। वे फ्लेटफॉर्म पर गिर पड़े। उस ठंडी रात में गांधी जी ने स्टेशन के प्रतीक्षालय में जमीन पर सोकर समय बिताया।

इस घटना ने गांधी जी को बदल दिया और उन्होंने नस्लभेद का विरोध करने का निर्णय लिया। ऐसा मानना है कि इस घटना ने मोहनदास करमचंद गांधी को महात्मा गांधी बना दिया। उस रेलवे स्टेशन पर इस नस्लभेद घटना का ब्योरा दर्ज है।

महात्मा गांधी (निधन- ३० जनवरी) महात्मा गांधी को ब्रिटिश शासन के खिलाफ भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का नेता और राष्ट्रपिता माना जाता है। राजनीतिक और सामाजिक प्रगति की प्राप्ति हेतु अपने अहिंसक विरोधक के सिद्धांत के लिए उन्हें अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। मोहनदास करमचंद गांधी भारत एवं भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के एक प्रमुख राजनीतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे। साबरमती आश्रम से उनका अटूट रिश्ता था। इस आश्रम से महात्मा गांधी आजीवन जुड़े रहे, इसीलिए उन्हें साबरमती का संत की उपाधि भी मिली।

गांधी ने भले ही कोई नया विचार न दिया हो, जैसा कि वह खुद भी कहा करते थे, लेकिन उन्होंने काम ऐसे जरूर किए जो मानव इतिहास में नए थे और इस नजर से वह कई कामों में पहले और अकेले थे। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ खड़े होनेवाले वह पहले व्यक्ति थे और अकेले थे, तो भारत में १९१७ में चम्पारण में किसानों पर होनेवाले जुल्म के खिलाफ सरकारी आदेश की अवज्ञा कर खुद को जेल जाने के लिए पेश करनेवाले वह पहले भारतीय नेता थे। असहयोग के रूप में पहली बार पूरे देश में राष्ट्रीय आंदोलन खड़ा करनेवाले पहले नेता गांधी ही थे।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी महात्मा गांधी के पूर्व भी शान्ति और अहिंसा के बारे में लोगे जानते थे, परंतु उन्होंने जिस प्रकार सत्याग्रह, शांति व अहिंसा के रास्तों पर चलते हुए अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया, उसका कोई दूसरा उदाहरण विश्व इतिहास में देखने को नहीं मिलता।

महात्मा गांधी को अलविदा हुए ७० वर्ष हो गए हैं। आजादी के आंदोलन में महात्मा गांधी की गिनती नरम नेता के रूप में होती थी लेकिन उक्त आंदोलन के गरम दल के नेता भी उनका उतना ही सम्मान करते थे जितना नरम दल के लोग उनका आदर भाव करते थे।

गरम दल के नेता के रूप में चर्चित रहे नेताजी सुभाष चन्द्र बोस भी उन्हें अपना नेता मानते थे। यही गांधीजी की अहिंसा की सबसे बड़ी कामयाबी थी। बैरिस्टर जैसे सम्मानजनक व्यवसाय को छोड़कर देश के लिए वे आजादी के आंदोलन में कूद पड़े थे। उनका एक ही नारा था कि जैसे भी हो, हम हथियार नहीं उठायेंगे और बिना हथियार ही भारत मां को आजादी दिलायेंगे। इसके लिए उन्होंने स्वयं भी अंग्रेजों की लाठिया खायी और उन्हें बहुत सी यातना भी सहन करनी पड़ी लेकिन देश की खातिर उन्होंने कभी उफ तक नहीं की। महात्मा गांधी विश्व के ऐसे महान व्यक्ति थे जो घोर तपश्चर्या का जीवन व्यतीत करते थे। करोड़ों देशवासी उन्हें महान सन्त मानते थे। लक्ष्य साधन में उनकी सच्चाई और निष्ठा पर उंगली नहीं उठाई जा सकती थी। महात्मा गांधी के जीवित रहने से सारा संसार सम्पन्न था और उनके निधन से दुनिया भर को लगा कि पूरा संसार ही विपन्न हो गया है। महात्मा गांधी एक ऐसे विजयी योद्धा थे जिसने बल प्रयोग का सदा निरादर किया। वे बुद्धिमान, नम्र, दृढ़संकल्पी और निश्चय के धनी थे। आधुनिक इतिहास में किसी भी एक व्यक्ति ने अपनी चरित्र की वैयक्तिक शक्ति, ध्येय की पावनता और अंगीकृत उद्देश्य के प्रति निस्वार्थ निष्ठा से लोगों के दिमागों पर इतना असर नहीं डाला जितना महात्मा गांधी का असर दुनिया पर हुआ था। देश और दुनिया के लिए महात्मा गांधी उन महान व्यक्तित्वों में से एक थे जो अपने विश्वास पर हिमालय की तरह अटल और दृढ़ रहते थे। महात्मा गांधी की यह भी विशेषता थी कि वह चाहे कहीं भी रहें और चाहें जिस तरह के काम में व्यस्त हों लेकिन हर रोज सुबह सबसे पहले प्रार्थना जरूर करते थे। अपने देश के लोगों में भी महात्मा गांधी शीर्ष स्तर पर छाये रहे। प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू उन्हें एक उच्च सिद्धान्तवादी और सत्य का अनुयायी सन्त मानते थे। उनकी नजर में गांधी जनता की नब्ज को

खूब पहचानते थे। वे कहा करते थे कि वास्तव में यदि कोई सार रूप में भारत का प्रतिनिधित्व करने में योग्य था तो वह सिर्फ और सिर्फ महात्मा गांधी थे। बहुत सी बातों में लोगों का गांधी जी से मतभेद हो सकता है और बहुत से लोग उनसे अधिक विद्वान हो सकते हैं परन्तु उनमें चरित्र की जो महानता है उसके कारण वह सब लोगों के आदर्श बन गये थे। गांधीजी निस्संदेह उस धातु के बने हुए थे जिस धातु से शूरमा और बलिदानी लोगों का निर्माण होता है। आत्मिक शक्ति के बल पर महात्मा गांधी विश्व भर में छाये रहे।

गांधीजी के नजदीकी मित्रों और जानकारों, अन्य अधिकांश भारतीयों द्वारा, जिसमें उनके आलोचक भी शामिल हैं, बापूजी का संबोधन दिया गया है। शेष दुनिया उन्हें महात्मा गांधी के नाम से जानती है। राष्ट्रपिता शांति और मानवता का प्रतीक हैं।

१९४२ में, उनके भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान करो या मरो का नारा भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के लिए एक अंतिम संकेत बना। भारत को १५ अगस्त, १९४७ को आजादी मिली। परंतु भारत और पाकिस्तान का विभाजन गांधीजी के लिए एक व्यक्तिगत आघात के रूप में आया। जब राष्ट्र स्वतंत्र की खुशियां मना रहा था तब वे नाओ खाली में साम्प्रदायिक हिंसा के पीड़ितों की परिस्थितियों को देखने के लिए गए। नई दिल्ली में ३० जनवरी, १९४८, को महात्मा गांधी की हत्या कर दी गई।

महात्मा गांधी को कोई बापू कहता है, तो कोई अहिंसा के पुजारी। राष्ट्रपिता के रूप में आज भी वे दुनिया भर में विख्यात हैं। सभी उन्हें अहिंसावादी आचरण और अपनी वचनबद्धता के लिए याद करते हैं।

ऐसे महान राष्ट्रपिता गांधीजी ने अपने जीवन में १६ आदर्शों को खास तवज्जो दी, इनमें से तीन सूत्रों को उन्होंने मुख्यत: लिया।

पहला- सामाजिक गंदगी को दूर करने के लिए झाड़ू का सहारा, दूसरा- सामूहिक प्रार्थना को बल देना, जिससे एकजुट होकर व्यक्ति जात-पात और धर्म की बंदिशों को दूरकिनार कर प्रार्थना करें। तीसरा- आखिरी रास्ता चरखा। यह आत्मनिर्भर और एकता का प्रतीक माना जाने लगा था।

अहिंसा के रास्ते पर चलने की बात गांधीजी ने आजादी की लड़ाई में शामिल हर शख्स से कही थी। गांधीजी ने भगवान महावीर के रास्ते पर चल कर त्याग को अपने जीवन में सदा अपनाए रखा और सादगीभरे जीवन के साथ-साथ कम से कम चीजों से अपना जीवनयापन किया। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी हमेशा ही नई तालीम को जानने और उसे अपनाने के समर्थन में रहे। इसी बल पर आजादी की लड़ाई में सफलता हासिल की। शाकाहारी भोजन को गांधीजी ने अपने जीवन का एक अभिन्न अंग बना लिया था। महात्मा गांधी हर धर्म और जाति से जुड़े हुए थे। सभी धर्मों के प्रति विशेष आस्था रखते थे। गांधीजी ने सत्य की राह पर चल कर सत्याग्रह की नींव रखी। उनके जीवन में कई कठिन मोड़ आए किंतु उन्होंने सत्य का साथ कभी नहीं छोड़ा।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अहिंसा, सत्याग्रह, असहयोग और सविनय अवज्ञा आंदोलन द्वारा बिना एक बूंद रक्त बहाए देश को अंग्रेजों की दासता से मुक्ति दिलाई, यह एक अद्‌भुत और संपूर्ण विश्व को चमत्कृत कर देनेवाली ऐतिहासिक घटना थी। यह महात्मा गांधी का ही जादू था कि, अंग्रेज जिनके बारे में कहा जाता था कि उनके राज में कभी सूरज नहीं

डूबता था, भारत को छोड़कर चले जाने को विवश हो गए थे। अपनी आंतरिक शक्ति के चलते महात्मा गांधी आम लोगों के लिए पूजा के पात्र बन गए थे और आज जबकि वे हमारे बीच नहीं हैं अभी भी हम सभी के लिए पूजनीय और अनुकरणीय बने हुए हैं। गांधी का महत्व उन्होंने हमें अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति दिलाई थी बल्कि इस बात में भी है कि उन्होंने सामान्य लोगों के जीवन में रोशनी भरी, आशा का नवसंचार किया और जीने की नई राह दिखाई। सामान्य से सामान्य व्यक्ति के मन में उन्होंने आत्मविश्वास भरकर उसे अपना जीवन अर्थपूर्ण बनाने की प्रेरणा दी। अपनी मृत्यु के ७० साल बाद भी गांधी सबको कुछ न कुछ देने की क्षमता रखते हैं। इस क्षमता के कारण ही आधी शताब्दी से अधिक समय बीत जाने के बावजूद चाहते और न चाहते हुए भी गांधी को हाशिये पर नहीं किया जा सका है जबकि उनके समकालीनों में से अधिकांश नेता सारी दुनिया वसे या तो गायब हो गए हैं या भुला दिए गए हैं। यह एक कड़वी सच्चाई है कि इस उपभोक्तावादी दुनिया में केवल वही टिकता है जो काम का हो। इसमें संदेह नहीं कि गांधी के विचार और उनके द्वारा सुझाए गए मार्ग आज के भ्रष्ट और द्वेषपूर्ण वातावरण में शांति और समृद्धि तक पहुंचा सकते हैं। आवश्यकता है तो बस अपने अंदर की हीनता, स्वार्थपरता और द्वेष को त्यागकर सच्चे मन से उनके द्वारा सुझाए हुए मार्ग पर चलने की। इससे न केवल देश की प्रगति होगी बल्कि व्यक्तिगत जीवन में भी हम सुख, शांति और संतोष अनुभव कर सकेंगे। समय के साथ गांधी की उपयोगिता घटती-बढ़ती रही है। उनके विचार आज के संदर्भों के साथ शत-प्रतिशत मेल खाएं यह आवश्यक नहीं। यही कारण है कि आज के परिप्रेक्ष्य में गांधी का नये सिरे से पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए और किया भी जा रहा है। पर गांधी में कुछ तो ऐसा जरूर रहा है जो लोगों की स्मृति में उन्हें आज भी न केवल जिंदा रखे है बल्कि सारा विश्व ससम्मान आज भी उन्हें याद कर रहा है। यही तो है गांधी के सार्वभौम और श्रद्धापात्र होने का रहस्य।

आतंकवाद से त्रस्त विश्व के अनेक देश आतंकवाद पर अंकुश लगाने का हुनर सीखने के लिए गांधी से ऊर्जा और प्रेरणा ले रहे हैं। इसका फायदा भी उन्हें मिल रहा है। अपने जीवनकाल में गांधीजी अपने द्वारा निश्चित किए हुए सिद्धांतों से कभी विचलित नहीं हुए। लोगों की आलोचनाओं से निष्पृह रहकर वही करते रहे जो उनकी आत्मा को स्वीकार्य था। इसी आत्मबल के चलते वे देश को अपनी ही शर्तों पर आजादी दिलवाने में सफल हुए। महात्मा गांधी ने सामान्य लोगों को आत्मोत्थान का मार्ग बताया। उन्होंने बताया कि आत्मशोध का श्रेष्ठ मार्ग दूसरों की सेवा में खो जाना है। गांधीजी का कहना था कि भय मात्र शरीर को ही नहीं बल्कि आत्मा को भी मार डालता है। हम जो कर रहे हैं और जो करने में समर्थ हैं, इन दोनों के बीच का अंतर दुनिया की अधिकांश समस्याओं को हल करने के लिए पर्याप्त है। गांधीजी प्राय: कहा करते थे- मैं जब घोर निराशा अनुभव करता हूं तब याद करता हूं कि इतिहास में सदा विजय सत्य और प्रेम की ही हुई है। क्रूर, अत्याचारी और अन्यायी शासक समाज में होते हैं और कुछ समय के लिए अजेय भी लगते हैं पर अंतत: उनका विनाश होता ही है, यह शाश्वत सत्य है। गांधीजी का कहना था कि ईश्वर यदि किसी पर आशीर्वाद की झड़ी बरसानेवाले होते हैं तो ऐसा करने के पहले वे उसकी कठिन परीक्षा लेते हैं। उनका कहना था कि सुख का अनुभव तभी किया जा सकता है जब आप जो सोचते हैं, जो बोलते हैं और जो करते हैं वह सुसंगत हो। गांधीजी ने हमें सिखाया कि आपको मनुष्यता में से अपना विश्वास गवां नहीं देना चाहिए क्योंकि मानवता तो महासागर समान है। महासागर में कुछ बूंदें खराब हों तो संपूर्ण महासागर कोई खराब नहीं हो जाता है। इसमें संदेह नहीं कि गांधीजी राजनेता से बढ़कर एक महान संत थे,

महात्मा थे। यही कारण है कि देश और विश्व की राजनीति में व्यापक बदलाव आ जाने के बावजूद गांधीजी आज भी प्रासंगिक हैं, एक राजनेता के रूप में न सही, एक महात्मा के रूप में वे आज पहले से भी अधिक प्रासंगिक हैं। आवश्यकता है उन्हें अच्छी तरह समझने की है।

गांधीजी को हम सब राष्ट्रपिता मानते हैं। देश के करोड़ों लोग प्यार से उन्हें बापूजी कहते हैं। १४४ साल पहले २ अक्टूबर १८६९ में उनका जन्म हुआ और ३० जनवरी १९४८ में जब उनकी उम्र ७९ वर्ष थी, तब पुणे के ही एक हिंदू राष्ट्रवादी नाथूराम गोडसे ने बापू की छाती में तीन गोली मारकर उनकी हत्या कर दी। असल में महात्मा गांधी एक व्यक्ति का नाम नहीं बल्कि एक संस्कृति, एक विरासत का नाम है। सारी दुनिया के महान लोगों की प्रेरणा के रूप में गांधीजी आज भी जिंदा है। गांधीजी के हर सिद्धांत के साथ कई प्रयोग और कई अनुभव जुड़े हैं।

अगर गांधीजी मजबूरी का प्रतीक होते तो वे नमक के कानून को तोड़ने के लिए अंग्रेजी सरकार के आदेश को तोड़ने की हिम्मत नहीं करते। अन्याय और भेदभाव के विरुद्ध तन कर खड़ा होनेवाला यह निर्णायक क्षण ही गांधीजी को महात्मा गांधी बनाता है। गांधीजी का व्यक्तित्व ही हर इंसान को अन्याय अत्याचार के विरुद्ध लड़ने का साहस और आत्मबल देता है। कुछ लोग गांधीजी के अहिंसा की नीति को उनकी कमजोरी कहते हैं। ऐसे लोगों का तर्क है कि गांधीजी के कारण अंग्रेजी सरकार के खिलाफ हमारे लोगों ने बल का प्रयोग नहीं किया। लेकिन गांधीजी की सोच इस पर बिल्कुल साफ थी। गांधीजी का कहना था कि अगर उन्हें हिंसा और कायरतापूर्ण लड़ाई में से किसी एक को चुनना हो तो वे कायरता की बजाय हिंसा को चुनते। वे किसी कायर या डरपोक आदमी को अहिंसा का पाठ नहीं पढ़ाना चाहते थे। उनके लिए यह ऐसा ही था जैसे किसी अंधे को लुभावने दृश्य दिखाना गांधीजी को अगर हम सही में समझ लें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अहिंसा ही सबसे बड़ी बहादुरी है। खुद गांधीजी ने भी अहिंसा का महत्व तभी जाना, जब उन्होंने कायरता को छोड़ दिया।

अहिंसा को अपना धर्म माननेवाले मोहनदास कर्मचंद गांधी स्वाधीनता संग्राम के राजनैतिक और आध्यात्मिक नेता थे। सत्याग्रह और सादगी को ही एक सफल मनुष्य जीवन का मूलमंत्र माननेवाले गांधीजी के इन्हीं आदर्शों से प्रभावित होने के बाद रवींद्रनाथ टैगोर ने पहली बार उन्हें महात्मा अर्थात महान आत्मा का दर्जा दिया था। गांधीजी ने अपना जीवन सम्य की खोज को समर्पित्त कर दिया था। अपने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने खुद अपनी गलतियों पर प्रयोग करना शुरू किया। अपने अनुभवों को उन्होंने अपनी आत्मकथा माय एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रूथ में लिखा था। अंग्रेजी राज में गांधीजी के नेतृत्व में देशभर में महिलाओं के अधिकारों और धार्मिक तथा जातीय एकता को बढ़ावा देने के लिए कई आंदोलन चलाए गये। गांधीजी ने अस्पृश्यता को जड़ से खत्म करने के लिए भी कई यात्राएं कीं। लेकिन अंग्रेजी राज से मुक्ति दिलाकर देश की जनता को आजाद कराना गांधीजी का सबसे बड़ा मकसद था। गांधीजी ने अंग्रेज सरकार द्वारा देशवासियों पर लगाये गये नमक पर कर के विरोध में १९३० में दांडी यात्रा की और फिर १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन में स्वतंत्रता सेनानियों का नेतृत्व किया। गांधीजी ने जीवन में मूलभूत जरूरतों को पूरा करने और कम से कम खर्चे में जिंदा रहने के लिए खुद के भोजन पर भी प्रयोग किये। सैद्धांतिक रूप से वे फल, बकरी का दूध और जैतून के तेल पर ही अपना जीवन निर्वाह करते थे। गांधीजी जब देश के बारे में बात करते थे तो समाज के अंतिम छोर पर खड़ा आदमी उनकी नजर से ओझल नहीं हो पाता था। उनकी नजरों में देश का गरीब से गरीब आदमी भी उतना ही महत्वपूर्ण था जितना की

राष्ट्र महत्वपूर्ण है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जीवन दर्शन इच्छाओं की उच्छृंखलता के विरुद्ध उन पर नियंत्रण तथा भौतिकता की पूजा करने के विरुद्ध आध्यात्मिक साधना का है। गांधीजी ने उच्छृंखलता और भौतिकता से लड़ने के लिए विश्व को सत्य और अहिंसा के सक्षम हथियार दिए। सत्य और अहिंसा उन्हें इतने प्रिय थे कि इनके मूल्य पर उन्हें स्वाधीनता भी नहीं चाहिए थी। देश के हजारों लोगों ने अपने व्यक्तिगत जीवन में गांधीजी के इस आदर्श को उतारा, लाखों लोगों ने गांधीजी की इस सीख में अपना विश्वास प्रकट किया और करोड़ों लोग उनके भक्त और प्रशंसक बने। इतिहास ने इन तीन-चार दशकों के काल को गांधी युग के नाम से दर्ज किया। स्वाधीनता के बाद कांग्रेस ने जब देश के विभाजन की बात स्वीकार की तो महात्मा गांधी को अपने सिद्धांतों और मान्यताओं की व्यवहार्यता को लेकर पहला झटका लगा। गांधीजी के बार बार यह कहने के बावजूद कि देश का विभाजन मेरी लाश पर होगा आखिर विभाजन होकर ही रहा। लेकिन उनके सभी सेनाध्यक्षों ने जब उनका साथ छोड़ दिया और सत्य व अहिंसा की राजनीति करने के बजाए वे सत्ता लोलुपता के शिकार बन गए, तब गांधीजी का आत्मविश्वास डगमगाया गया। गांधीजी को अपने जीवन का सबसे बड़ा झटका तब लगा जब सांप्रदायिक दंगे में एक दूसरे का खून बहानेवालों ने उनकी अपील नहीं सुनी। गांधी देश भर में घूम-घूम कर हिंसा के विरुद्ध तथा प्रेम व भाईचारे के पक्ष में बोल रहे थे पर कोई उनकी सुन नहीं रहा था। इस खून खराबे को देखकर गांधीजी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इतने वर्षों तक लोग उनके पीछे चल नहीं रहे थे बल्कि चलने का नाटक कर रहे थे। सांप्रदायिक हिंसा ने गांधीजी को यह एहसास कराया कि उन्हें माननेवालों के भीतर कितनी हिंसा भरी हुई थी। वास्तव में आजादी के बाद भारत ने आर्थिक क्षेत्र में संयम और सादगी का रास्ता चुनने के बजाय संपन्नता और शाहखर्ची का रास्ता चुना। समता के बजाए विषमता बढ़ानेवाली नीति अपनाई। कुछ मुट्ठी भर लोगों की सुख-सुविधा बढ़ाने और बाकी सभी लोगों को उनकी किस्मत पर छोड़ देने की क्रूर नीति अपनाई गई, जो आज तक कायम है।

गांधीजी के विचारों की प्रशंसा तो बहुत की जाती है, लेकिन उनके अनुसार जीना बहुत कठिन जान पड़ता है। गांधीजी राजनीतिज्ञ से अधिक संत थे, ऐसा बहुतों का मानना है। सामान्य लोगों की नजर में सुख इच्छाओं को दबाने में नहीं बल्कि उन्हें पूरा करने में है। यही कारण है कि एक ओर बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह आदि की पूजा होती रहती है, दूसरी ओर भोग की संस्कृति पुष्ट होती जाती है। यह द्वंदात्मकता ही जीवन की मूल समस्या है। महात्मा गांधी कहा करते थे धरती के पास इतना है कि वह सबकी जरूरतें पूरी कर सके, पर इतना नहीं कि एक आदमी की भी लालच को संतुष्ट कर सके। लोभ हमसे छूटता नहीं और भौतिक उपलब्धियों की प्रतिद्वंदिता जारी रहती है। यह मनुष्य की मूल प्रवृत्ति है। अर्थ यह नहीं कि गांधीजी के विचार और उनका जीवन दर्शन आज अप्रासंगिक हो गए हैं। गांधीजी के दर्शन की प्रासंगिकता आज भी उतनही ही है बल्कि यह कहना अधिक सही होगा कि उनकी प्रासंगिकता आज पहले से भी अधिक है। पूरे विश्व में हिंसा का दौर बढ़ता जा रहा है और जितना ही यह बढ़ेगा उतनी ही बढ़ेगी गांधीजी के अहिंसा के सिद्धांत की प्रासंगिकता।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी एक वर्ग हिंसा का समर्थक तो दूसरा उदारवादी था। हिंसा का समर्थन करनेवाले आज भी हैं जिनके लिए भारतीय अध्यात्म ज्ञान पूराना पड़ चुका है। उदारवादी विचारधारा के लोगों के लिए राजनैतिक आजादी का कभी महत्व नहीं रहा है। आज के समाज में गरीबी, भ्रष्टाचार, भय और अपराध के विरुद्ध चलनेवाले

आंदोलनों को इसी अहिंसा के मार्ग पर चलना चाहिए। महात्मा गांधी आज के लोकतांत्रिक समाज में राज्य का विरोध करने के लिए हिंसा के पुरने तरीकों की जगह इसे सही मानते थे। कार्ल मार्क्स के चेलों के विपरीत महात्मा गांधी ने आंदोलनों को अहिंसा का मार्ग दिखाया। गांधीजी के अहिंसक आंदोलन के चलते अंग्रेजों को यहां से जाना पड़ा पर जाते-जाते वे यहां हिंसा का ऐसा बीज बो गए, जिसका खामियाजा हम आज भी भोग रहे हैं।

महात्मा गांधी आधुनिक समाज के संघर्षों में हिंसक के बजाए अहिंसक आंदोलन के प्रणेता थे। हथियारों के पश्चिमी सौदागर और विचारों के पूर्वी विक्रेता, इसीलिए उनसे खौफ खाते हैं। महात्मा गांधी राज्य चलाने के किसी सिद्धांत के प्रवर्तक नहीं थे क्योंकि उसके लिए आपको सत्ता की राजनीति करनी पड़ती है, जिसका आंदोलन की राजनीति से दूर दूर तक कोई वास्ता नहीं होता। पर हिंसक या अहिंसक आंदोलन चलाकर सत्ता परिवर्तन करना एक बात है किंतु राज्य को सुचारूप से चलाना एकदम दूसरी बात है। महात्मा गांधी इस विषय में कोई ज्ञान नहीं रखते थे, यही कारण है कि उन्हें पूर्ण राजनेता नहीं कहा जा सकता है।

सफलता हमेशा तभी मिलती है जब सफलता के लिए समर्पित व्यक्ति आशान्वित हो। गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में जब पहली बार अदालत में वकालत के लिए खड़े हुए तो जज ने उनसे पूछा कि आपने सिर में पहनी हुई अपनी पगड़ी क्यों नहीं उतारी? तो उन्होंने कहा, मुझे ऐसा अपने आप के प्रति अपमान लगता है, यह कहकर वह अदालत छोड़कर चले आये। उनके कुछ हिन्दुस्तानी दोस्तों ने उनसे कहा, ऐसे में तो आप अपना मुकदमा हार जाएंगे। गांधीजी ने एक क्षण सोचा और फिर मुस्कुराते हुए जवाब दिया कि मुकदमा मैं किसी भी कीमत पर नहीं हारूंगा। प्रवासी भारतीयों ने पूछा, इस विश्वास की वजह क्या है? गांधीजी ने कहा मेरा परिश्रम और मेरा मन। वास्तव में मन से किया गया परिश्रम कभी भी असफल नहीं होता। एक नहीं अनेक मिसालें हैं। तमाम वैज्ञानिक, कलाकार, खिलाड़ी और पेशेवर इसके उदाहरण हैं।

देव भूमि उत्तरांचल की तीर्थ नगरी हरिद्वार ने ही बापू को महात्मा की उपाधि दी थी। उत्तर प्रदेश सूचना विभाग से प्रकाशित पुस्तक उत्तर प्रदेश और डॉ. कृष्ण कुमार द्वारा संपादित पुस्तक सहारनपुर संदर्भ के अनुसार स्वामी श्रद्धानंदजी ने हरिद्वार में प्रवास पर आए गांधीजी को सर्वप्रथम महात्मा के नाम से संबोधित किया था। तब से गांधीजी महात्मा गांधी कहलाने लगे। गांधीजी को महात्मा की पदवी १९१५ में उनके हरिद्वार प्रवास के दौरान गुरुकुल कांगड़ी में आने पर स्वामी श्रद्धानंद ने दी थी। आठ अप्रैल १९१५ को जब गुरुकुल कांगड़ी में संतों और ब्रह्मचारियों का समारोह हो रहा था, तब गाँधीजी भी स्वामी श्रद्धानंद से भेंट करने वहाँ पहुंचे। भरी सभा में गांधीजी के कार्यों की सराहना करते हुए स्वामी श्रद्धानंद ने उन्हें महात्मा की पदवी से नवाजा था।

स्वामी श्रद्धानंद गांधी जी के सत्याग्रह आंदोलन से बहुत प्रभावित थे। गांधीजी को अपना समर्थन देते हुए इसे स्वामी श्रद्धानंद ने इसे धर्मयुद्ध की संज्ञा दी थी। उन्होंने इस धर्मयुद्ध से अपने आपको भी सम्बद्ध करते हुए इसमें शामिल होने की प्रतिज्ञा का लिखित संदेश भी गाँधीजी को भेजा था। हरिद्वार का गुरुकुल कांगड़ी स्वतंत्रता संग्राम का एक प्रमुख केंद्र था। गांधी जी के अलावा भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे नेता गुरुकुल में आकर स्वतंत्रता संग्राम की रणनीति बनाया करते थे।

गांधीजी ने अपनी आत्मकथा में स्वयं लिखा है कि वह स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन में क्या करें तथा भविष्य में किस रणनीति पर काम करें इसकी प्रेरणा उन्हें हरिद्वार में १९१५ में एक कुंभ के अवसर पर संतों, महापुरुषों से मिली।

गांधी होने का क्या मतलब है, इसे समझना बहुत जरूरी है। गांधी होने का मतलब लाभ पाना या फायदा उठाना नही है। गांधी होने का मतलब है दुनिया को राह दिखाकर खुद कहीं किसी कोने में चले जाना या फिर खुद को ही खत्म कर देना ताकि आनेवाली नस्लें अपना रास्ता खुद बनाना सीख लें। वे खुद एक लंगोटी में सारा जीवन काट सके, तब तक कपड़े स्वीकार न करने का व्रत निबाह सके जब तब आखिरी आदमी को वस्त्र नसीब नहीं होते हैं। गांधी होने का मतलब सत्ता पाना व उसका सुख भोगना नहीं हैं। आम आदमी के पैसों से अपना घर भरना नही हैं। ताकत पाकर घमंड में फूलना व पड़ोसी पर चढ़ाई करना भी गांधी होने का मतलब नहीं हैं। गांधी होने का मतलब सब कुछ दूसरे के लिए लुटा देना है। खुद को दुःख की कसौटी पर तोलना व दूसरों के लिए सुख जुटाने का दूसरा नाम ही है गांधी। गांधी का जीने का अंदाज- गांधी जब तक जिए, अपने ढंग से जिए, कोई कुछ भी कहता रहा, गांधी पर कोई प्रभाव नहीं ही पड़ा। वे अपने तय सिद्धांतों पर चलते रहे। गांधी निस्पृह रह कर वही करते रहे जो उन्हें ठीक लगा बिना हानि लाभ की परवाह किए। गांधी का यही अंदाज जीने की ताकत देता है। गांधी अब राजनीति या फिर अन्य निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिये बहुत ज्यादा उपयोगी नहीं ही रहे हैं। दुनिया गांधी से प्रेरणा लेती है- समय के साथ हर चीज के महत्व पर असर होना लाजिमी है और समय के साथ गांधी की उपयोगिता भी घटी और बढ़ी है। गांधी भी काल के प्रभाव से नहीं ही बच सकते और न ही बचे हैं। गांधी में कुछ तो ऐसा जरूर है जो दुनिया उन्हें याद कर रही है। गांधी के विरोधी अक्सर उन्हें भीरू कहते रहे पर पूरे प्रयासों के बाद भी गांधी की हैसियत पर ना के बराबर प्रभाव भी नहीं पड़ा और यही तो है गांधी होने का मतलब। गांधी आज भी काम के हैं पर जरूरत उन्हें समझने की है। जब समझ में आ जाते हैं तब बहुपयोगी हो जाते हैं। आज उनकी शिक्षा को समझने की जरूरत है। यदि यह देश ऐसा कर पाया तो आतंकवाद जैसी अनेक समस्याओं का हल भी सामने खड़ा दिखाई देगा। पर गांधी, गांधी हैं और गांधी ही रहेंगे। वे अहिंसा का पर्याय हैं, देश की जड़ों का नाम हैं, उनके बगैर भारत की पहचान नहीं है।

दर्द की दौलत नहीं हर दिल में पाई जाएगी ये बात कुछ खास लोगों को ही सुनाई जाएगी।
जिंदगी भर जो दुहाई पेट की देता रहा, मरते लम्हों में उसे गीता सुनाई जायेगी।।

कुछ लोग उन्हें ईश्वर अवतार मानते हैं, तो कुछेक लोग ऐसे भी हैं जो उनमें बहुत सारी खामियाँ ढूंढ़ते हैं। बस, यही गांधीजी की शक्ति है। हम सबके बापू जीते जी व्यक्ति से एक महान विचार में बदल गये थे। इसीलिए उन पर होनेवाली हर बहस उनके अमर होने को मजबूत करती है।

गांधीजी नाटे कद के थे पाँच फीट से कुछ ही ज्यादा और उनका वजन सिर्फ ५० किलो से कुछ ज्यादा। उनके हाथ-पैर जरूरत से ज्यादा लम्बे थे। शायद प्रकृति ने चाहा बड़े बड़े कान। इसके बावजूद गांधीजी के चेहरे से सादगी, ईमानदारी और इन्सानियत की जो किरणें लगातार निकलती रहती थीं। उनकी इन्सानियत, उनकी जिद्द, उनकी मसखरी, अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की उनकी अलौकिक क्षमता, उनकी नारी सुलभ स्नेहशीलता, उनके चेहरे में सौंदर्य का सागर लहराता था।

उन दिनों जब हिंसा की प्रतिष्ठा अपने चरम पर थी, उस वक्त गांधीजी ने अहिंसा का एक ऐसा सिद्धांत सामने रखा,

जिसमें सम्पूर्ण मानव जाति के लिए आशा की नई किरणें थीं। उन्होंने कहा था- हथियार से नहीं, अपने मनोबल से लड़ो। मशीनगन की गोलियों से नहीं, प्रार्थनाओं से लड़ो। बम-बारी और चीख पुकार से नहीं, खामोशी और धैर्य से लड़ो। उनके इस सन्देश ने भारत के भीड़-भड़क्के में जैसे बिजली दौड़ा दी और करोड़ों भारतीय लोग अंग्रेजों के खिलाफ उठ खड़े हुए।

उस वक्त जब गाँधीजी ७७ वर्ष के बुजुर्ग थे, तब हम अंग्रेजों के गुलाम थे। उस समय पश्चिम यूरोप में जब तानाशाह गला फाड़-फाड़कर चिल्ला रहे थे। धू-धू करके जलती इमारतें भयानक शोर शराबे के साथ गिर रही थीं, तब भारत में जो दुनिया का सबसे घनी आबादी का देश था, तब गाँधीजी ने एक-एक आदमी तक अपना संदेश ऐसी शान्ति के साथ पहुंचाया था कि उन्हें अपनी आवाज भी ऊँची करने की जरूरत नहीं पड़ी थी।

देश के लोगों को एकजुट करने के लिये गांधीजी ने कोई झूठे वादे नहीं किये, बल्कि उन्होंने साफ-साफ कहा था कि जो लोग मेरे साथ आना चाहते हैं, उन्हें नंगे फर्श पर सोना पड़ेगा, यहाँ तक कि उन्हें शौच भी खुद ही साफ करनी पड़ेगी। गांधीजी ने अपने अनुयायियों को हाथ से कते, हाथ से बुने और हाथ से सिले हुए खादी के कपड़े पहनाये। जिस जिस आदमी ने खादी के कपड़े पहने वे एक दूसरे का भाई बन गये। एकता और भाईचारे का मनोवैज्ञानिक असर खादी ने उसी तरह पैदा किया, जिस तरह यूरोप के तानाशाहों ने अपने लोगों को काली शर्ट पहनाकर उन्हें एक ही छत के नीचे लाते समय किया था। उन दिनों हमारे देश में आधुनिक संचार साधन बिल्कुल नहीं थे, फिर भी गांधीजी का संदेश बच्चे बच्चे और बूढ़े बूढ़े तक पहुंच गया। गांधीजी अपनी अधिकतर चिट्ठियाँ खुद अपने हाथों से ही लिखते थे। अपने बेहद सादे, सरल, ग्रामीण उपायों से गाँधीजी देश की जनता को झिंझोड़कर रख देते थे।

गांधीजी ने ब्रिटिश साम्राज्य को भी झिंझोड़ कर रख दिया। गाँधीजी ने अपनी भूख को भी एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया- उस भूख को जिसने सदियों से भारत के सामान्य आदमी को परेशान कर रखा था। गांधीजी उपवास रखते तो खाना बिल्कुल नहीं खाते थे, सिर्फ पानी और सोडा पीते थे। गाँधीजी जहाँ भी गए, जनता उनके पीछे गई। गाँधीजी अपनी शताब्दी के सबसे प्रभावशाली व्यक्ति थे। सारी दुनिया के लिए वे महात्मा थे, पर हम भारतीयों के लिए वे बापू थे, राष्ट्रपिता थे। महात्मा गांधी सबसे बड़ा कारण बने, कि अंग्रेजी को जल्दी से जल्दी भारत छोड़कर जाना पड़ा।

बीसवीं शताब्दी के सबसे ज्यादा दूरदर्शी व्यक्ति महात्मा गांधी ही थे। १९३० में ही यानी आजादी मिलने से १७ साल पहले ही गाँधीजी ने भविष्यवाणी कर दी थी कि आजादी की लड़ाई के बाद अगर वे जिन्दा रहे तो अंग्रेजों के साथ जिस तरह लड़ाई लड़नी पड़ी, वैसी ही अनेक अहिंसा की लड़ाइयाँ स्वराज के बाद भी लड़नी पड़ेंगी।

महात्मा गांधी के सम्पूर्ण जीवन और चिन्तन का लक्ष्य एक अहिंसक समाज की रचना करना था। मोटे तौर पर इस अहिंसक समाज के तीन मुख्य आधार माने जा सकते हैं। पहला है राजनीतिक विकेन्द्रीकरण अर्थात ग्राम-स्वराज्य पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था, दूसरा आर्थिक विकेन्द्रीकरण अर्थात स्वदेशी और ट्रस्टीशिप के आधार पर विकसित अर्थव्यवस्था और तीसरा आधार है उन उद्देश्यों को प्राप्त करने की अहिंसक पद्धति अर्थात्त सत्याग्रह। गांधी विचार में आस्था रखनेवाले समूहों द्वारा इन उद्देश्यों की सिद्धि के लिए चिन्तन और कर्म दोनों ही स्तरों पर क्या प्रयत्न किये गये और किस सीमा तक सफल या असफल रहे? गांधीजली ने जवाहरलाल नेहरू को जब अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था, तब कहीं न कही उनके मन में यह विश्वास रहा होगा कि स्वराज्य के बाद उनके उद्देश्यों के सबसे बड़े वाहक पंडित नेहरू ही होंगे।

गांधीजी ने कई बार यह बात कही है कि अगर इस दुनिया की कहानी लड़ाई से शुरू होती, तो आज एक भी आदमी जिन्दा नहीं होता, मगर आज यह दुनिया लड़ाई के बावजूद भी टिकी हुई है। इसलिये लड़ाई की ताकत की बजाय मनुष्य की दूसरी ही ताकत इसका आधार है। लाखों करोड़ों लोग प्यार की ताकत पर अपना जीवन बसर करते हैं। जब इस दया की, प्यार की और सत्य की धारा रुकती है, टूटती है, तभी इतिहास में वह लिखा जाता हैं। गांधीजी ने बहुत पहले ही यह कह दिया था कि समाज का अंतिम आदमी ही हमारे कार्यक्रम की कसौटी हो सकता है। इस दृष्टि से देखेंगे तो राष्ट्रीय उत्पादन और राष्ट्रीय आय लगातार बढ़ोतरी के बाद भी किसी देश को विकसित नहीं कहा जा सकता, क्योंकि विकसित माने जानेवाले देशों में भी गरीबी और बेकारी तो है ही, साथ ही असमानता भी लगातार बढ़ती रही है।

गांधीजी बहुत अच्छे संपादक थे। अगर वे राष्ट्रवादी आंदोलन के अगुआ न होते तो इस शताब्दी के महानतम भारती संपादक होते। अपने छात्र जीवन से ही उन्हें लिखने व ऐतिहासिक, साहित्यिक व अन्य विषयों की पुस्तकें पढ़ने का चाव था। उनके स्कूल व कॉलेज के लाइब्रेरियन उनसे खीझ जाते थे कि यह छात्र पता नहीं कहां-कहां से ढूंढ कर पुस्तक सूची लाता है और किताबें मांगता रहता है। भारत का शायद ही कोई ऐसा राजनेता हो जिसने गांधीजी से अधिक पुस्तकें पढ़ी हों। यूं तो गांधीजी को हरेक स्वदेशी वस्तु ज्यादा पसंद थी, मगर वे अधिकांशत: अंग्रेजी की पुस्तकें पढ़ा करते थे।

लिखने का चाव गांधीजी को कितना अधिक था, वे अपने सीधे व उल्टे दोनों हाथों से लिखा करते थे। यही नहीं वे समुद्र पर हिचकोले लेते, जहाज पर, चलती रेल में और संकरे रास्ते पर चलती मोटरगाड़ियों में भी लिख लिया करते थे। लिखते-लिखते जब एक हाथ थक जाता था तो वे दूसरे हाथ से लिखना प्रारंभ कर देते थे। १८९६ में जब गांधीजी इंग्लैंड से दक्षिण अफ्रीका वापस आ रहे थे जो जहाज पर उन्होंने एक पुस्तक ग्रीन पैम्फलेट की रचना की। इसी प्रकार जहाज में ही उन्होंने प्रसिद्ध पुस्तक हिन्द स्वराज लिखी। जब वह बाएं हाथ से लिखते तो अंग्रेजी लिखते और दाएं हाथ से लिखते तो गुजराती और उर्दू। लिखने की रफ्तार कहीं उससे तेज होती जैसे कि वे चला करते थे। इसी प्रकार आवश्यकता पड़ने पर वे स्वयं टाइप भी कर लिया करते थे। गांधीजी जो पुस्तकें पढ़ते थे, उनसे न केवल स्वयं सीखते थे बल्कि दूसरों को भी उसकी अच्छी बातें बताते थे।

कलकत्ता के ३२ ब्राइट स्ट्रीट, पार्क सर्कस वाले मौलाना आजाद के भतीजे नूरूद्दीन अहमद (इन पंक्तियों के लेखक के पिता) के मकान पर पुरानी पुस्तकों के भंडार में मौलाना आजाद के कुछ पत्र ऐसे मिले, जिनमें गांधीजी की लेखनशैली पर विचार व्यक्त किए थे। बकौल मौलाना, गांधीजी का लिखने की शैली बड़ी ही स्वच्छ और दिल के तारों को झंकृत करनेवाला था। उनकी अंग्रेजी की ड्राफ्टिंग के संबंध में तो स्वयं कई अंग्रेज वायसराय और अफसर भी कहते थे कि उसका कोई सानी नहीं।

जो लेख या पुस्तकें गांधीजी ने लिखीं, उनमें कहीं भी लाल निशान नहीं लगा होता था, न ही कोई तथ्य बदला जाता था। सर पेथिक लारेंस ने तो यहां तक कह दिया था कि भारत में गांधी से अच्छा अंग्रेजी लेखक कोई नहीं है। उनकी यह विशेषता थी कि वे एक शब्द भी अपने कलम या मुंह से अनावश्यक नहीं कहते थे। लिखते ऐसे थे मानो सामने बैठकर बातें कर रहे हों।

सर एव.वी. अलेक्जेंडर ने कहा था कि गांधीजी के संपादकीय लेखों का एक-एक वाक्य थॉट फार द डे के लिए मुनासिब था। हर वाक्य को पढ़कर ऐसा प्रतीत होता था मानो उसे दस दस बार गांधीजी यात्राओं के दौरान भी लिखने और

संपादन का काम जारी रखते थे। जब वे मध्य भारत के छोटे कस्बों और देहातों में बैलगाड़ियों में यात्रा करते, तो अपनी गुजराती पत्रिका का बड़ी तत्परता के साथ पूर्ण संपादन भी किया करते थे और राजनीति के दांव पेचों से भी निपटा करते थे। उनके पास इस पत्रिका की कई फाइलें होती थीं। रात को जब सब सो जाते थे तो दो तीन बजे तक संपादन कार्य चलता था। सारा कार्य वे स्वयं करते, किसी की सहायता नहीं लेते। १९०४ में गांधीजी ने इंडियन ओपीनियन का संपादन शुरू किया। इसका उद्देश्य था दक्षिण अफ्रीका में रहनेवाले भारतीय मूल के लोगों को स्वतंत्र जीवन के महत्व को समझाना। इसी के द्वारा उन्होंने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का प्रचार भी प्रारंभ किया। १९०६ में जब जोहान्सबर्ग की जेल में उन्हें बंद कर दिया गया तो वहीं से उन्होंने अपना संपादन कार्य जारी रखा। अपनी पत्रिका इंडियन ओपीनियन के लिये गांधीजी ने कभी चंदा नहीं लिया और न ही विज्ञापन स्वीकार किए। अखबार की आजादी के लिए इसे वे जरूरी मानते थे।

विश्व में गांधी ने युद्धों के खिलाफ जो आवाज उठाई- ऐसी पहले कभी सुनाई नहीं दी। गांधी ने अहिंसा, सत्य प्रेम एवं स्नेह को नये हथियार के रूप में प्रयोग किया।

आज भौतिकवादी युग में भी गांधी की अहिंसा सर्वाधिक प्रासंगिक है। अहिंसा ही एक ऐसा अस्त्र है जो विश्व समुदाय के बीच समभाव, सद्भाव, प्रेम एवं भाईचारे की ज्योति जलाकर विश्व की रक्षा कर सकता है। आज के युद्धोन्मादकारी युग में अहिंसा को धारण करना हमारा प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए।

गांधीजी भी फिजूलखर्ची के विरोधी थे। लन्दन में गोलमेज परिषद के समय गांधीजी भोजन के लिए गये। वे जो कुछ भारत में खाते थे, वहीं चीज वहां भी खाते थे। उस दिन मीरा बहिन शहद की बोतल साथ ले जाना भूल गई। खाने के समय उन्हें इसकी याद आई तब उन्होंने तुरंत किसी को बाजार भेजकर शहद की एक बोतल मंगवा ली। गांधी भोजन करने बैठे। उस बोतल में से उन्हें शहद परोसा गया। उसे देखकर वह तुरन्त बोले- यह बोतल तो नई दिखाई देती है। पुरानी बोतल कहां गई? मीरा बहने ने डरते-डरते कहा- बाबू वह बोतल में भूल आई थी। यह बाजार से नई मंगाई है। गांधीजी सहस गंभीर हो गये। कई क्षण बाद उन्होंने कहा- एक दिन शहद न मिला होता तो मैं भूखा नहीं मर जाता। तुमने नई बोतल क्या मंगाई हम जनता के पैसे पर जीते हैं। जनता के पैसों की फिजूल खर्ची नहीं होनी चाहिए। गांधीजी का यह प्रसंग हमें प्रखरता से फिजूलखर्ची रोकने का संदेश देती है।

वैज्ञानिक उन्नति के कारण दुनिया छोटी हो गई है। वैज्ञानिक अनुसंधान के कारण हम परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बन गये हैं, लेकिन हम विनाश के कगार पर भी खड़े हैं। क्षण भर का प्रमाद और असावधानी भरा कदम हमें पतन के गर्त में ढकेल सकता है। हथियारों के जखीरे पर बैठे राष्ट्र अपने हथियारों को हमारे पड़ोसी देश को बेच रहे हैं। जिससे हमारे राष्ट्र के समक्ष विषम परिस्थिति उत्पन्न हो रही है। युद्धों की समाप्ति के लिए गांधीजी की अहिंसा एक ऐसा अस्त्र हैं- जो अनेक रूपों में प्रकट होकर अपनी धार बनाये रखता है।

दुनिया भर में अपने आपको महाशक्ति बतानेवाला राष्ट्र अमेरिका इसकी अनदेखी कर रहा था लेकिन जब दिल दहला देनेवाली घटना ११ सितम्बर को खुद अमकेरिका के वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर पर घटी तब अमेरिका की नींद खुली और उसने आतंकवाद के सफाये के लिए बिगुल बजाया। पूरे विश्व को इस अभियान में शामिल होने को कहा लेकिन यह साफ है कि जब तक महात्मा गांधी की अहिंसक नीति नहीं अपनाते तब तक आतंकवाद का सफाया नहीं किया जा सकता।

अपने जीवन काल में गांधी अपने ही ढंग से चले और जीये, कोई कुछ भी कहता या करता रहा, गांधी पर कतई कोई प्रभाव नहीं ही पड़ा, वे अपने ही तय किये गये सिद्धांतों पर अविचलित चलते रहे। भले ही सारी दुनिया ने गांधी की आलोचना के भंडार खोल दिये हों पर गांधी सबसे निस्पृह रहकर वह करते रहे जो उनकी आत्मा उनसे करवाती रही। बेखौफ जीने का यही अंदाज गांधी की ताकत बना। गांधी का आचरण भी कई बार विवादों का सबब बना पर चूंकि गांधी, गांधी थे सो सब जो जी में आया कहते रहे और गांधी जो मन में आया, वहीं करते रहे। इसी आत्मबल के चलते, बावजूद सारी बाधाओं के गांधी ने न केवल आजादी दिलवाई बल्कि अपनी ही शर्तों पर दिलवाई। गांधी की इन्हीं खूबियों को अपने में समाने में जहां हमारे नेता और कर्णधार लगभग लगभग नाकामयाब रहे और उन्होंने एक तरह से गांधी को खारिज करके ताक पर ही रख दिया था, एक तरह से ऐसा लगने लगा था कि गांधी अब कालपार यानी कि डेटएक्स्पायर हो गए हैं, तब उन्हें अपना आदर्श माननेवाले रालेगण सिद्धि जैसे छोटे से गांव के बाबूराव हजारे उर्फ अन्ना हजारे ने गांधी जी के एक छोटे से हथियार अनशन से ताकतवर व जिद्दी केंद्र की सरकार को एक तरह से परास्त करके जनलोकपाल बिल का रास्ता कालपार होनेवाली चीज नहीं है। वास्तव में अन्ना को गांधीजी की वापसी का पूरा श्रेय दिया जाना चाहिए। गांधी की सबसे खास बात यही थी कि वे बात कम और काम ज्यादा करते थे। बुरा न देखने, न करने और न ही बोलने की बात केवल उनके भाषणों का ही हिस्सा नहीं होती थी बल्कि वे अपने आचरण में भी उसे पूरी तरह उतारते थे। विरोधी के अति की सीमा तक भी हिंसक हो जाने पर भी अहिंसक ही रहने का गुर न केवल जानते थे बल्कि उसे इस तरह उपयोग में लाते थे कि सामनेवाला बेबस ही होकर रह जाता था। सियासत के मोर्चे पर अनेक बार ऐसा लगा कि गांधी अब चुक गये हैं। जब बाकी नेता और अनुयायी धीरज खो देते या धीरज खोने के कगार पर होते तब गांधी मुस्कुराते हुये अपना काम कर जाते थे। गांधी पर लगनेवाले सबसे गंभीर आरोपों में एक आरोप यह है कि वे गर्म मिजाज के स्वाधीनता सेनानियों की बलि चढ़ाते चले गये और अपनी बातें मनवाने पर ही अड़े रहे। इतिहास के रोज खुलते राज तो कुछ और ही बयान करते दिखाई दे रहे हैं। आज भगतसिंह को फांसी से बचाने के लिए गांधीजी ने अथक प्रयास किये, ये तथ्य आज एक एक करके सामने आ रहे हैं। यही बात देश के विभाजन के संदर्भ में सामने आ रही है और यह बात गलत साबित हो रही है कि वे देश के विभाजन के हामी हो गए थे। वे तो आखिरी दम तक अड़े व लड़े पर दो बड़े नेताओं की जिद के चलते उन्हें खून खराबा रोकने के लिए वह कदम उठाना पड़ा। अहिंसा के रास्ते पर एक बार निकल लेने के बाद गांधी पूरी तरह उसी के होकर रहे। उन्होंने यहां तक कह डाला कि यदि आजादी शवों पर सवार होकर आती है तो वह उन्हें मंजूर नहीं होगी। एक बार गांधी जब समझ में आ जाते हैं तब गांधी बहुपयोगी हो जाते हैं। आज इसी उपयोगिता को अन्ना ने फिर से सिद्ध भी करके दिखा दिया है। यदि यह देश अपनी समस्याओं से सचमुच ही मुक्ति चाहता है तो ठीक है। यदि उन्हें केवल दिखावे के लिए ही काम में लाया गया तो न तो गांधी कुछ कर सकते हैं और न ही कुछ होने जानेवाला है।

३० जनवरी १९४८ को कुछ कट्टरवादी धर्मांध लोगों और संगठनों से दुष्प्रेरित होकर नाथूराम गोडसे नामक एक सिरफिरे युवक ने इस महान विभूति की उस समय गोली मारकर हत्या कर दी थी जब वे अपने सहयोगियों और अनुयायियों के साथ प्रार्थना कर रहे थे। स्वतंत्रता के बाद की यह सबसे अधिक त्रासद और दुर्भाग्यपूर्ण घटना कही जा सकती है। गांधी जी की हत्या से समग्र देश निराशा और शोक के गहरे अंधकार में डूब गया था। इस काले अंधकार में भी महात्मा गांधी के विचारों

ने ही हमें राह दिखाई। उनके द्वारा दिए गए प्रकाश के सहारे हमारे नेता देश को सही दिशा में अग्रसर कर सके। जब हम महात्मा गांधी को शांति, अहिंसा और मानवीय प्रेम के अग्रदूत के रूप में स्मरण करते हैं तो उनका एक उज्ज्वल एवं असाधारण विश्व महामानवीय व्यक्तित्व हमारे समक्ष साकार हो जाता है। महात्मा गांधी ने सत्य की शोध और उसके प्रयोग के लिए अपना संपूर्ण जीवन समर्पित्त कर दिया था। सत्य के शोधक, धारक और प्रचारक हर युग में होते रहे हैं। पूरे विश्व ने जिसे एकमत से इस सहस्त्राब्दी का सर्वश्रेष्ठ महामानव स्वीकार किया है, ऐसा सत्य का प्रयोगधर्मी व्यक्तित्व महात्मा गांधी हमारे देश में हुए, इसका हमें गर्व है। महात्मा गांधी में हम मानवता की ऊंचाई और गहराई दोनों का दर्शन कर सकते हैं। मनुष्य की महानता और गंभीरता दोनों से उनका व्यक्तित्व अप्रतिम रूप से ओत-प्रोत है। महात्मा गांधी के बहुआयामी व्यक्तित्व ने समूचे विश्व को प्रभावित ही नहीं, चमत्कृत भी किया है और विश्व ने पांच हजार वर्षों की संस्कारित जीवन विधि को गांधी में फलित और व्याख्यायित होते पाया है। महात्मा गांधी देश और काल में अवस्थित होते हुए भी आज कालातीत हो गए हैं।

सत्य के प्रति आग्रह और उसका महत्व महात्मा गांधी के लेखों में मानवीय मूल्य बनकर आए हैं। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, मैत्री, प्रेम, आत्मबल, संयम और राम, इन तत्वों से गांधी जी का जीवन और चिंतन रचा-बसा है। ये मूल्य और ये तत्व जीवन में गांधी से पूर्व भी थे। गांधी जी ने इन्हें युगानुकूल नवीनता और व्यवहारशीलता प्रदान कर मनुष्य के और अधिक निकट लाने की अनिवार्यता सिद्ध की। गांधी भारत की सांस्कृतिक एकता के मूल भलीभांति जान चुके थे। यही कारण है कि उन्होंने मनुष्य के बाहरी स्वरूप-रंग, जाति, धर्म, पहनावा, रहन-सहन आदि को कभी अधिक महत्व नहीं दिया। गांधीजी जब सामंजस्य की बात करते थे तो उसका अर्थ होता था: मनुष्य-मनुष्य का, मनुष्य और प्रकृति का, एक दूसरे से इस भाव से संबंध होना कि हम एक दूसरे के आश्रित हैं, यही समान भाव है, समता है और सामंजस्य है। गांधी अपने जीवनकाल में ही एक दर्शन बन गए थे। यह अकारण नहीं कि सदी के श्रेष्ठ वैज्ञानिक अल्बर्ट आइस्टीन ने उनके विषय में कहा था- आनेवाली पीढ़ियों को विश्वास ही नहीं होगा कि गांधी जैसा व्यक्ति भी कभी धरती पर जन्मा था। गांधीवाद नई ऊंचाइयों को छू रहा है। आनेवाली पीढ़ी ने गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धांत को स्वीकार किया। शासकों को वह सीमा का अतिक्रमण न करने की सीख देता है तो गरीबों को अभिशाप न समझने की सीख देता है। गरीबों को वह विश्वास दिलाता है कि उनमें धरती पर स्वर्ग उतारने का सामर्थ्य है। गांधीवाद शासकों को आगाह करता है कि तुम जो चाहे करो, पर इतना ध्यान रखो कि एक दिन तुम्हारे क्रिया-कलापों का लेखा-जोखा अवश्य होगा। गांधीवाद की विशेषता है कि वह अपने विरोधाभासों को भी अपने में समेट लेता है। इसमें अनेकता में एकता और एकता में अनेकता समाहित है। गांधी दर्शन से प्रेरणा लेनेवालों में दलाई लामा, डेसमंड टूटू, लूथर किंग जूनियर जैसे धर्मगुरु और नेल्सन मंडेला, सान सू की और अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा जैसे विश्व के महान नेता शामिल हैं तो महाराष्ट्र के मामूली गांव रालेगण सिद्धि के एक मंदिर में एक प्याली, एक कटोरी, एक वक्त की रोटी से गुजारा करनेवाले अन्ना हजारे जैसे सामाजिक कार्यकर्ता भी शामिल हैं।

महात्मा गांधी के अनुसार असहिष्णुता भी अपने आप में एक प्रकार की हिंसा ही है। असहिष्णुता को वे लोकतांत्रिक विकास के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा मानते थे। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के अनुसार गांधी के अनुयाइयों की सूची बहुत लंबी ही नहीं, बल्कि प्रभावशाली भी है। गांधी को अपना आदर्श माननेवाले आधे दर्जन से भी अधिक विश्व नेता नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किए जा चुके हैं। इनमें से कुछ गांधी जी से प्रत्यक्ष मिले भी नहीं थे। पर उनके पास थी गांधी

जी के विचारों की मशाल, जिसे थाम कर वे अपने महान लक्ष्य की ओर बढ़ते गए। यह अपने आप में गांधी और उनके विचारों की प्रासंगिकता के लगातार बढ़ते जाने के सबूत है। आज पूरे विश्व में धार्मिक-सांप्रदायिक असहिष्णुता और धार्मिक उन्माद व आतंकवाद का बोलबाला है। पूरा विश्व आज परमाणु शस्त्रों के प्रभाव में है। दूसरे शब्दों में कहें तो विश्व विनाश की दिशा में तेजी के साथ अग्रसर है। ऐसी स्थिति में महात्मा गांधी के विचार ही उसे बचा सकते हैं। इस दृष्टि से गांधी और उनके सत्य, अहिंसा एवं सहिष्णुता के सिद्धांत पहले से भी अधिक प्रासंगिक हो गए हैं।

भारत को अंग्रेजों की दासता से मुक्ति दिलानेवाले महात्मा गांधी का नाम न केवल इतिहास के पन्नों में अमर है बल्कि ब्राजील, रूस, मैक्सिको, घाना, अमेरिका, मिस्र, अरब देशों, जापान और यहां तक कि ब्रिटेन के साहित्य में स्वप्न सुमन फैला रहे हैं। ब्राजील की कवयित्री सिसीलिया मेयरलीज ने बापू का जिक्र अपनी कविताओं में इस प्रकार किया है, मायावनियों के नीले, मोहक स्वर, पर फैलाकर उड़ जानेवाले वे घोड़े। पहुचं रही है यह खबर, माया गया वह दुआ देता लोगों को। आह संघर्ष के वे दिन घर में घरघराते हुए चरखे। सुनहरे खादी के परिवेश में, दार्जिलिंग की चाय में गुलाब की महक। घाना के पूर्व राष्ट्रपति और अफ्रीकी स्वतंत्रता संघर्ष के अप्रतिम सेनानी और कवि नक्रुमा ने अपने स्वतंत्रता संघर्ष पर अपनी कविता में कहा, घने जंगल में थका हारा सिपाही, हताश सो गया। उसके सपने को कृतार्थ किया एक महात्मा ने, एक गुरुदेव ने। एक ने मुस्कराते हुए अग्निपथ पर चलने की प्रेरणा दी। एक ने अमृतवाणी से मूच्छित चेतना को झकझोर दिया। मेरा नमन लो महात्मा। प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टीन ने कहा, आनेवाला पीढ़ी आश्चर्य करेगी और विस्मयपूर्वक पूछेंगी, क्या ऐसा हांड़ मांस वाला व्यक्ति कभी किसी युग में इस धरती पर चलता फिरता भी था। वे मुश्किल से यह विश्वास करेंगी कि आदमी के शरीर में ऐसा संभव हुआ। अमेरिका में अश्वेतों के अधिकारों के लिए संघर्ष करनेवाले मार्टिन लूथर किंग ने अपनी पुस्तक स्ट्राइड्स टुवर्ड्स फ्रीडम में लिखा, मैं कई महीनों से सामाजिक सुधार की जिस पद्धति की तलाश में था, वह मुझे प्रेम और अहिंसा पर गांधीवादी दर्शन में मिली। मुझे लगा कि दलितों के लिए उनके मुक्ति संघर्ष का तरीका नैतिक और व्यवहारिक दृष्टि से ठीक है। अमेरिका में अश्वेतों के हक की लड़ाई लड़नेवाले नायक मार्टिन लूथर किंग जूनियर को बचपन में ही काले गोरे के भेद के कारण अपमान का घूंट पीना पड़ा था। मार्टिन को स्कूल व कॉलेज के दौरान भी काली चमड़ी की कीमत चुकानी पड़ी। इस दौरान हुई कई वाक्य मार्टिन के अन्तर्मन को झकझोरते रहे। पीएचडी करते हुए उनपर महात्मा गांधी के अहिंसावादी विचारों का काफी प्रभाव पड़ा। यहीं से मार्टिन के जीवन में सकारात्मक बदलाव शुरू हुआ। जब उन्होंने महात्मा गांधी मे बारे में सुना जो अहिंसा के दम पर भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने की लड़ाई लड़ रहे थे। उन्होंने भी गांधी की तरह अहिंसा को अपनाया। मार्टिन लूथर के घर पर बम से हमला हुआ फिर भी उन्होंने अहिंसा का रास्ता नहीं छोड़ा। यह गांधी का ही प्रभाव था कि उन्होंने अपने समर्थकों से कहा कि वे हथियार न उठाएं।

न्यूयार्क कम्युनिटी चर्च में तत्कालीन वक्ता, चिंतक डॉ. जे.एच. होम्स ने चार अप्रैल १९२१ को विश्व के महानतम व्यक्ति की व्याख्यानमाला में गांधी जी को संसार के श्रेष्ठतम व्यक्तियों में स्थान देते हुए उनकी तुलना ईसा से की थी। मिस्र के चिंतक, विचारक, मनीषी कवि डॉ. ताहा हुसैन ने चौरी चौरा कांड के पश्चात गांधी जी द्वारा आंदोलन वापस लेने पर कहा था, कथनी और करनी का योग, उपदेश और आचरण का संगम। उसका नाम है, मोहनदास करमचंद गांधी। अंग्रेज कवि ब्रेल्सफोर्ड ने अपनी रचना ए हिस्टोरिक मार्च में कहा, यह कौन दु:साहसी है, यह कौन योद्धा है। जो अपने प्यार से, अपनी नि:सीम सद्भावना से। अपने सत्य से, संसार के सर्वाधिक शक्तिशाली साम्राज्य को चुनौती दे रहा है। महात्मा

गांधी से मिलने के बाद अमेरिकी पत्रकार लुई फिशर ने अपनी पुस्तक सेवेन डेज विद महात्मा गांधी में लिखा, गांधी जी से हाथ मिलाते ही मेरे भीतर अहंकार की ग्रंथि पिघलने लगी। उन्होंने मुझे बात करने के लिए एक घंटे का समय दिया और अपराह्न साढ़े तीन बजे से शुरू वार्तालाप जैसे ही साढ़े चार बजे पहुंचा उन्होंने बीच में टोकते हुए कहा बस समय हो गया, अब बात बंद। उन्होंने कहा मैंने संसार के कई महान और व्यस्त लोगों से बात की लेकिन वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने मुझे इस तरह टोका। इतने समय के पाबंद थे महात्मा गांधी।

जिस व्यक्ति ने अपने जीवन को मानव समाज और देश को समर्पित कर अहिंसा की ताकत का मूल्य समझाया आखिर उसकी सोच, दर्शन और सिद्धांत क्या थे, समाज रचना की तकनीक क्या रही होगी, उसका सत्याग्रह कितना प्रासंगिक रहा होगा। विचार दर्शन से प्रवाह हुआ करता है और गांधी दर्शन के मूल में आपको सत्य, अहिंसा, सादगी, अस्तेय, अपरिग्रह, श्रम और नैतिकता मिलेगी- जहां से स्थानीय स्वशासन, स्वावलंबन, स्वदेशी विकेन्द्रीकरण, ट्रस्टीशिप परस्परावलम्बन, सहअस्तित्व, शोषणमुक्त व्यवस्था और सहयोग, सहभाव एवं समानता पर आधारित जागृति ढांचे का अभ्युदय होगा। दरअसल गांधी जी के सत्याग्रह का व्यापक अर्थ है अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, दमन करनेवाली जनद्रोही भ्रष्ट और शोषण व्यवस्थाओं से असहयोग तथा समाज में शुभ चिंतन और कर्म करनेवाले लोगों और संगठनों के बीच समन्वय सहकार। आज जरूरत है कि हम अपने ढंग से ईमानदारी के साथ सत्याग्रह का सम्यक प्रयोग करें। मूल हम सत्य पर अडिग हों, साधन शुद्धि पर हमारा भरोसा हो और व्यापक लोकहित पर हमारा बराबर ध्यान लगा रहे। वास्तव में सत्याग्रह होना चाहिए समाज को बेहतर बनाने के लिए, निरंकुश राजसत्ता पर जनता के प्रभावी अंकुश के लिए, नया समाज गढ़ने के लिए, जड़ीभूत मूल्यों और ढांचे के ध्वंस के लिए और स्वयं अपने भीतर के कलुषों को भगाने के लिए। वास्तव में भारतीय राजनीति में जिस महापुरुष का नाम सर्वाधिक आदर और निष्ठा से लिया जाता है, वे हैं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी। महात्मा गांधी को भारतीय जनमानस अत्यधिक प्रतिष्ठा देता है तथा उन्हें बापू कह कर पुकारता है। बापू भारतीय राजनीति के उस धवल नक्षत्र का नाम है, जिसने पहली बार सत्य और अहिंसा को राजनीति का आयाम निर्धारित किया। गांधीजी पहले राजनेता थे, जिन्होंने जनता की शक्ति को पहचाना। जनता पर उनका असीम विश्वास था। वे मानते थे कि आम आदमी यदि सत्यनिष्ठा से अपने अधिकार के लिए संघर्ष करे तो बड़ी से बड़ी शक्ति को झुकने में अधिक समय नहीं लगता है। महात्मा गांधी ने अपनी राजनीति दक्षिण अफ्रीका से शुरू की। रंगभेद के विरुद्ध आंदोलन का नेतृत्व करते हुए, उन्होंने समाज के वृहद् वर्ग को संघर्ष की चेतना प्रदान की। सत्य और अहिंसा के माध्यम से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जनमानस को तैयार किया। १९१५ में भारत आने पर गांधी जी के सामने गुलाम भारत की पीड़ित जनता थी। किसान मजदूर विविध समस्याओं से पीड़ित थे। ऐसे में जाहिर है उस दौरान गरीबी और बेरोजगारी के बीच स्वराज्य की बुनियाद डालना कठिन था। दरिद्रता से जकड़ी जनसंख्या को स्वतंत्रता के लिए जागृत करना आसान नहीं था। गांधी जी ने इस समस्या को चुनौती के रूप में स्वीकार करते हुए भारतीय जनता में नया उत्साह तथा नवीन जोश भरने का कार्य किया। सबसे पहले गांधी जी ने चम्पारण में किसानों के हक की लड़ाई लड़ी। गांव गांव में घूम घूम कर किसानों के दु:ख-दर्द को समझा। उनकी पीड़ा को भावनात्मक रूप में अपनाया। इसका भरपूर असर हुआ और गांधी जी देश के सर्वाधिक प्रभावी नेता बन गए। स्वतंत्रता आंदोलन को महात्मा गांधी ने जन-आंदोलन बनाया। यह उनकी नेतृत्व क्षमता का ही प्रभाव था कि कांग्रेस ने उन्हें अपना सर्वमान्य नेता मान लिया। देश की जनता ने गांधी जी को

राष्ट्रपिता, बापू इत्यादि उपनामों से प्रतिष्ठित किया। महात्मा गांधी ने गांवों की आत्म निर्भरता व ग्रामीण कुटीर उद्योगों पर बहुत बल दिया। आज भूमंडलीकरण और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की दुनिया में बहुत से लोगों को लगता है कि गांधी जी के आर्थिक विचार तो अब प्रासंगिक नहीं रहे, लेकिन वास्तविकता तो यह है कि गांधीजी के यह विचार तो पहले से और अधिक प्रासंगिक हो गए हैं क्योंकि वैश्विकरण के आज के दौर में भारत जैसे देशों को पहले अपनी जड़ों को मजबूत करना है और इन जड़ों को मजबूत करने का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि गांवों की आत्म निर्भरता को बढ़ाएं। इस संदर्भ में महात्मा गांधी के विचारों की सार्थकता मजबूत हुई है। गांधी जी ने स्वतंत्रता की लड़ाई में सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन जैसे अनूठे प्रयोग किए थे। उन्होंने मानवता को शाश्वत शांति का पथ दिखाया। वे अपने आचरण से सिखाते थे। गांधीजी ने कहा था कि हर देशवासी एक काम ऐसा जरूर करे जिससे गरीब और पीड़ितों की सेवा हो। गांधी जी के आदर्श हमें आचरण में शुद्धता और जीवन में प्रामाणिकता लाने का संदेश देते हैं। इस तरह गांधी की अहिंसा ने एक तरह से भारत को गौरवान्वित किया है।

गांधी तो वह प्रकाशपुंज हैं जो हमेशा ही देश और दुनिया में शोषण और अन्याय के खिलाफ उठनेवाली हर आवाज का मार्गदर्शन करते रहे हैं। लेकिन यह एक अजीब विडंबना है कि अपने ही देश में उन्हें मजबूरी का नाम महात्मा गांधी, लेकिन क्या सचमुच गांधी मजबूरी का नाम हैं। क्योंकि जिस शख्स ने अहिंसा और सत्याग्रह की ताकत से उस ब्रिटिश साम्राज्य को इस देश से उखाड़ फेंका जिसके बारे में कहा जाता था कि उसका सूरज कभी अस्त नहीं होता, तो वह मजबूरी का नहीं मजबूती का ही प्रतीक हो सकता है। वैसे भी समय के साथ-साथ चीजें बदलती हैं। आज हम एक वैश्विक दुनिया में जी रहे हैं। आज गांधीजी के प्रतीक हू-ब-हू वैसे ही लागू नहीं हो सकते, लेकिन उनके सत्याग्रह और अहिंसा के सिद्धांतों की मूल आत्मा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी पहले थी। यही कारण है कि आज दुनिया में अन्याय और तानाशाही के खिलाफ चल रहे तमाम आंदोलनों को प्रेरणा गांधी से ही मिल रही है। फिर चाहे वह तहरीर चौक का आंदोलन हो, वालस्ट्रीट का आंदोलन हो, तानाशाही के खिलाफ आंग सांग सू की का सत्याग्रह हो।

गांधी जी का विश्वास था कि भारत का ध्येय दूसरे देशों के ध्येय से कुछ भिन्न है। भारत में ऐसी योग्यता है कि वह धर्म के क्षेत्र में दुनिया में सबसे बड़ा हो सकता है।

स्वदेशी की भावना का अर्थ है हमारी वह भावना, जो हमें दूर को छोड़कर अपने समीपवर्ती प्रदेश का ही उपयोग और सेवा करना सिखाती है। सन १८९३ में गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में नागरिक अधिकारों के लिए लड़ाई की शुरुआत की। १९१५ को गांधीजी भारत लौटे और किसानों को संगठित कर आजादी के आंदोलन से जुड़े।

गांधीजी की राय में भारत नहीं बल्कि सारी दुनिया की अर्थरचना ऐसी होनी चाहिये कि किसी को भी अन्न और वस्त्र के अभाव का कष्ट न सहना पड़े। १९१८ में सर्वप्रथम बिहार के चंपारण से किसानों के अधिकारों की लड़ाई शुरू की। १९२१ में उनके नेतृत्व में कांग्रेस का नया संविधान बना और स्वराज को लक्ष्य बनाया गाय। १९३० में नमक सत्याग्रह किया और ३८८ किमी लंबी पदयात्रा कर दांडी में नमक कानून तोड़ा। १९३२ अलग निर्वाचन की मांग के खिलाफ अनशन। फिर पूना पैक्ट के जरिये समझौता। १९४२ में अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन की ऐतिहासिक घोषणा की। १९४८ ३० जनवरी को एक कट्टर हिंदूवादी ने गोली मारकर हत्या कर दी। अंतिम शब्द थे हे राम।

गांधीजी का कहना था की भारत अपने कुछ शहरों में नहीं बल्कि गांवों में बसा हुआ है। शहर अपनी हिफाजत आप कर सकते हैं। हमें तो अपना ध्यान गांवों की ओर लगाना चाहिये। हमें उनकी संकुचित दृष्टि उनके पूर्वाग्रहों और वहमों आदि से मुक्त करने के सिवा इसके और कोई तरीका नहीं है कि हम उनके साथ उनके बीच में रहें, उनके सुख दुख में हिस्सा लें और उनमें शिक्षा का तथा उपयोगी ज्ञान का प्रचार करें। हमें आदर्श ग्रामवासी बनना है।

ग्रामोद्योगों की योजना के पीछे उनकी कल्पना तो यह थी कि अपनी दैनिक आवश्यकतायें गांवों की बनी चीजों से ही पूरी करनी चाहिये और जहां यह मालूम हो कि अमुक चीजें गांवों में मिलती ही नहीं, वहां यह देखना चाहिये कि उन चीजों को थोड़े परिश्रम और संगठन से बनाकर गांववाले कुछ मुनाफा उठा सकते हैं या नहीं। हमें गांववाला भारत और शहरोंवाला भारत, इन दोनों से एक को चुन लेना हैं। गांवों का शोषण स्वयं एक संगठित हिंसा है। हमें स्वराज्य की रचना अहिंसा के पाये से करनी है।

हमारे सपनों के स्वराज्य में जाति या धर्म के भेदों को कोई स्थान नहीं हो सकता। उस पर शिक्षितों या धनवानों का एकाधिकार नहीं होगा। वह स्वराज्य सबके लिए सबके कल्याण के लिए होगा। सबकी गिनती में किसान तो आते ही हैं, किन्तु लूले, अंधे और भूख से मरनेवाले लाखों करोड़ों मेहनतकश मजदूर भी जरूर आते हैं। स्वराज्य का अर्थ है देश की बहुसंख्यक जनता का शासन। जाहिर है कि जहां बहुसंख्यक जनता नीतिभ्रष्ट हो या स्वार्थी हो, वहां उसकी सरकार अराजकता की ही स्थिति उत्पन्न कर सकती है।

गांधीजी के लिए देशप्रेम और मानव प्रेम में कोई भेद नहीं है, दोनों एकसमान है। गांधीजी देशप्रेमी थे, क्योंकि वे मानव प्रेमी थे। जीवन की उनकी योजना में साम्राज्यवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। जिस तरह देशप्रेम का धर्म हमें आज यह सिखाता है कि व्यक्ति को परिवार के लिए, परिवार को ग्राम के लिए, ग्राम को जनपद के लिए और जनपद को प्रदेश के लिए मरना सीखना चाहिये, उसी प्रकार किसी देश को स्वतंत्र इसलिए होना चाहिये कि वह आवश्यकता होने पर संसार के कल्याण के लिए अपना बलिदान दे सके। हमारा राष्ट्रप्रेम ऐसा ही हो।

मनुष्य की बनाई हुई कोई भी संस्था ऐसी नहीं है जिसमें खतरा न हो। संस्था जितनी बड़ी होगी, उसके दुरुपयोग की संभावनायें भी उतनी ही बड़ी होगी। लोकतंत्र एक बड़ी संस्था है, अत: उसका दुरुपयोग भी बहुत हो सकता है। लेकिन उसका इलाज लोकतंत्र से बचना नहीं, बल्कि दुरुपयोग की संभावना को कम से कम करना है। जनता की राय के अनुसार चलनेवाला राज्य जनमत से आगे बढ़कर कोई काम नहीं कर सकता। राग-द्वेष, अज्ञान और अन्धविश्वास आदि दुर्गुणों से ग्रस्त जनतंत्र अराजकता के गड्ढे में गिरता है।

सत्याग्रह शब्द का उपयोग प्राय: बहुत शिथिलतापूर्वक किया जाता है और छिपी हुई हिंसा को भी यह नाम दे दिया जाता है। प्रतिपक्ष का बुरा चाहना या उसे नुकसान पहुंचाने के इरादे से उससे या उसके बारे में बुरा बोलना सत्याग्रह का उल्लंघन है। सत्याग्रह एक सौम्य गतिविधि है, वह कभी चोट नहीं पहुंचाता। उसके पीछे क्रोध या द्वेष नहीं होनाचाहिये। सत्याग्रह सीधी कार्यवाही के अत्यंत बलशाली उपायों में से एक है, अत: सत्याग्रही सत्याग्रह का आश्रय लेने से पहले और सब उपाय आजमा कर देख लेता है। इसके लिए वह हमेशा सत्ताधारियों के पास जायेगा।

सच्चा समाजवाद तो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है, जो हमें यह सिखा गया है, कि सब भूमि गोपाल की है, इसमें कहीं मेरी और तेरी की सीमायें नहीं हैं। ये सीमायें तो आदमियों ने बनाई हैं और इसलिए वे इन्हें तोड़ भी सकते हैं। गांधीजी हमेशा मानते आये है की नीचे से नीचे और कमजोर से कमजोर के प्रति जोर- जबरदस्ती से सामसाजिक न्याय का

पालन नहीं कर सकते। गांधी जी मानते थे कि पतित से पतित लोगों को भी मुनासिब तालीम दी जाये, तो अहिंसक साधनों द्वारा सब तरह के अत्याचारों का प्रतिकार किया जा सकता है।

गांधीजी भारत को स्वतंत्र और बलवान हुआ देखना चाहता थे क्योंकि वह दुनिया के भले के लिए स्वेच्छापूर्वक अपनी पवित्र आहुति दे सके। भारत की स्वतंत्रता से शांति और युद्ध के बारे में दुनिया की दृष्टि में जड़मूल से क्रांति हो जायगी। उसकी मौजूदी लाचारी और कमजोरी का सारी दुनिया पर बुरा असर पड़ता है। वे ऐसे संविधान की रचना करवाने का प्रयत्न किया, जो भारत को हर प्रकार की गुलामी और परावलम्बन से मुक्त कर दे, और जिसमें गरीब से गरीब लोग भी यह महसूस करेंगे।

यदि भारतीय समाज को शान्तिपूर्ण मार्ग पर सच्ची प्रगति करनी है, तो धनिक वर्ग को निश्चित रूप से स्वीकार कर लेना होगा कि किसान के पास भी वैसी ही आत्मा है जैसी उनके पास है और अपनी दौलत के कारण वे गरीब से श्रेष्ठ नहीं हैं। किसानों का, फिर वे भूमिहीन मजदूर हों या मेहनत करनेवाले जमीन- मालिक हों- स्थान प्रथम है। उनके परिश्रम से ही पृथ्वी फली और समृद्ध हुई है। यदि हमने अपनी स्वतंत्रता अहिंसा से पायी तो अवश्य ऐसा ही होगा, तो उसमें किसानों के पास राजनीतिक सत्ता के साथ हर किस्म की सत्ता होनी चाहिये।

गांधीजी का विश्वास था कि भारत का धेय दूसरे देशों के ध्येय से कुछ भिन्न है। भारत में ऐसी योग्यता है कि वह धर्म के क्षेत्र में दुनिया में सबसे बड़ा हो सकता है। भारत ने आत्मशुद्धि के लिए स्वेच्छापूर्वक जैसा प्रयत्न किया है, उसका दुनिया में कोई अन्य उदाहरण नहीं मिलता। भारत को फौलाद के हथियारों की उतनी आवश्यकता नहीं है, वह दैवी हथियारों से लड़ा है और आज भी वह उन्हीं हथियारों से लड़ सकता है। दूसरे देश पशुबल के पुजारी रहे हैं। भारत अपने आत्मबल से सबको जीत सकता है।

यह बात उस डेढ़ पसली के कृशकाय, लंगोटी धारी आदमी की हो रही है जिसे दुनिया मोहनदास कर्मचंद गांधी के नाम से कम और महात्मा या सिर्फ गांधी के नाम मात्र से ही जान जाती है। यही व्यक्ति है जो सांप सपेरों के देश में पैदा हुआ, प्रथम श्रेणी के डब्बे में चढ़ने पर उतारकर फेंक दिया गया, न सूट, न बूट, नंगे बदन दो गज की एक धोती और दो गज की ही एक लाठी लेकर जब निकला तो दुनिया के वे देश हंसे जिनकी तूती कभी संसार भर में बोलती थी, जिनके साम्राज्य में कभी भी सूर्यास्त न होने का दंभ पल रहा था, पर इस हिन्दुस्तानी ने तोप, गोलों बंदूकों को धता बता गुलामी की जंजीरों में फंसे देश को आजाद करा लिया। तब ही नहीं, आज भी इस घटना को एक चमत्कार ही कहा जाता है। संगणक और ए.सी. में पलती इस पीढ़ी के प्रतिनिधि चीनी तो खाते हैं पर चीनी खेत में उगती है या पेड़ पर लगती है, उन्हें क्या पता, क्योंकि अब उनके लिए मिट्टी प्रदूषण और गंदगी का नाम है। उसमें उन्हें गंध या गांधी दोनों का ही आभास नहीं होता। चर्खे और संगणक दोनों ही अपने वक्त के हथियार हैं, साधन हैं, एक जमीन से जुड़ा, धीमी गति का, कम उत्पादक पर यथार्थवादी सोच का प्रतीक है तो दूसरा फर्राटेदार ढंग से चलनेवाला, अत्याधुनिक वैज्ञानिक प्रगति का सूचक, स्टेट्स सिम्बल का प्रतीक है मगर जमीनी सच से काफी दूर का विचार तंतु है। आज चर्खे के सहारे वर्ल्डवाईड सिविलाइजेशन से नहीं जुड़ा जा सकता पर अपना आधार छोड़कर दूसरों की बैसाखी से चलनेवाली सभ्यताएं अधिक दूर तक नहीं जाती, इस तथ्य को यदि किसी ने पहचाना तो वह गांधी थे। तत्कालीन समय के भारत में, जहां मशीनें या तकनीक दोनों ही न के बराबर थी, वहां गांधी ने समझा कि अगर हिन्दुस्तान नाम के इस देश को उठ खड़ा होना है, अड़ना, लड़ना और स्थापित होना है तो शारीरिक श्रम के साथ-साथ मानसिक दृढ़ता का परिचय भी देना होगा। इसी दृढ़ता का दूसरा नाम थे

गांधी। नई पीढ़ी को इस बात को समझने की जरूरत है कि गांधी कोई दिव्य या चमत्कारी पुरुष नहीं वरन् एक साधारण मानव थे, यदि उनमें और दूसरों में कोई फर्क था तो बस सिर्फ इस बात का कि उनके पास एक दृष्टि थी, जो दूर और पास दोनों ही तरीके से स्पष्ट देख सकती थी। गांधी जानते थे कि प्रबल साम्राज्यवादी ब्रिटेन से सीमित हथियारों के बल पर विद्रोह या मुकाबला करके जीतना असंभव प्राय: था और हर हार का मतलब था नई बेड़ियां, अत्याचार और आम आदमी पर करों की मार, इसलिए गांधी ने वह रास्ता अपनाया जिससे खर्चा तो न के बराबर था ही, अहिंसक आंदोलनों को बर्बरता से दबाने, कुचलने पर ब्रिटिश सरकार को दुनिया का जवाब देना भी भारी पड़ना था और पड़ा भी। इसलिए जब आज की उग्र और व्यग्र पीढ़ी जब गांधी पर डरपोक या कमजोर का लेबल लगाती है तो इससे स्पष्ट उभर कर आता है कि यह पीढ़ी गांधी को अभी तक समझ ही नहीं पायी है। कई बार गांधी की प्रासंगिकता पर सवाल खड़े किये जाते हैं और मान लिया जाता है कि आज के संदर्भों में गांधी बेकार की चीज हो चुके हैं। भले ही ऊपर से देखने पर यह तथ्य सच लगता हो पर यदि गहरे तक झांकें तो आज के राष्ट्रीय एवं वैश्विक परिदृश्य में गांधी की महत्ता और जरूरत और भी ज्यादा नजर आती है। दुनिया भर में फैली हिंसा का मुकाबला करने में जितना धन, हथियार व सैन्य बल तथा पुलिस बल उपयोग में लाया जा रहा है उतने धन को यदि किसी सार्थक मुहिम, विकास या मूलभूत सुविधाओं पर लगा दिया जाए तो गरीब दुनिया की तस्वीर ही बदल जाये। आंदोलन को कुचलने पर उतारू सरकारें यदि समस्या की जड़ में जाकर देखें तो शायद गांधी का दर्शन वहां सबसे कामयाब दर्शन नजर आए। भारत में आज नक्सली, मार्क्सी, माओवादी, संस्कृतियों को आतंक का प्रतिनिधि मान लिया गया है पर ये किस क्रिया की प्रतिक्रिया में हिंसक हुये, इस पर कम ही ध्यान दिया गया है। नक्सल इलाके में यदि शुरू से ही मूलभूत सुविधाएं व विकास पहुंच जाती तो निहित स्वार्थी तत्व भोले आदिवासियों को अपना औजार शायद नहीं बना पाते। कमोबेश यही कहानी छत्तीसगढ़, झारखंड, कश्मीर या पंजाब में भी रही। सत्ता या बल के मद में भूले लोग जब आम आदमी की पीड़ा को दर किनार कर देते हैं तब आतंकी उसकी अंतिम परिणिति होता है, गांधी इस बात को समझते थे इसीलिए वे आखिरी आदमी और सर्वहारा वर्ग के उत्थान को प्रयासरत रहते थे, अपने सबसे प्रिय लोगों और सत्ता प्रतिष्ठान की खिलाफत के बावजूद। आज सरकार में बैठे मंत्री, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री व अधिकारी यदि इसी गांधी दृष्टि से देखें व चलें तो कोई वजह नहीं कि भारत इक्कीसवीं सदी के गांधी को प्रगतिवादी व अत्याधुनिक न पाए।

यह वही गांधी हैं जिन्हें कवियों ने कलियुग का राम कहा तो दुनिया भर के राजनेताओं ने एक अविश्वसनीय रचना करार दिया। उनके जाने के आधी सदी बाद भी जिनसे प्रेरणा पाकर मंडेला ने अफ्रीका को आजाद करा लिया तो संयुक्त राष्ट्रसंघ ने उन्हें एक चमत्कार कहा।

आज का युग उनके सिद्धांतों का युग नहीं है। यह युग उपभोक्तावाद का युग है जिसमें आदमी भी वस्तुओं की तरह काम का होने पर ही सराहा व चाहा जाता है और संभवत: गांधी की उपयोगिता अब उतनी नहीं रह गई है। दूसरे शब्दों में कहें तो दुनिया जिस शख्स को याद कर रही है उसे उसका ही देश भुलाता जा रहा है।

ऐसा इसलिए भी है क्योंकि अहसानों को याद रखने का जमाना भी अब नहीं है गांधी का अवदान इस देश के लिये अमूल्य है, मगर जो लोग गांधी व उनके अवदान के बारे में जानते हैं, वे या तो किनारे पर लगा दिये गये हैं या इतना बदल गये हैं कि गांधी को याद नहीं करते।

आज के युग का जो सिद्धांत है कि जो बिकता है वही टिकता है। जो काम का है, वही सराहा तथा चाहा जाता है और बदकिस्मती से नई पीढ़ी के लिये गांधी अब बहुत ज्यादा महत्व नहीं ही रखते लग रहे, सो धीरे-धीरे उन्हें भुलाया जा रहा है।

लेकिन इतना होने के बाद भी आम आदमी के लिए गांधी पूज्य हैं, जब गांधी के अधिकांश समकालीन या परवर्ती महान नाम या तो गायब हो चुके हैं या भुला दिये गये हैं। गांधी में कुछ तो ऐसा जरूर है जो उन्हें बहुत ज्यादा उपयोगी न होने के बावजूद भी न केवल जिंदा रखे हैं बल्कि पूरे सम्मान के साथ दुनिया उन्हें याद भी कर रही है।

एक वजह तो यही है कि गांधी अपने सिद्धांतों पर अविचलित रहे। भले ही सारी दुनिया ने उनकी आलोचना की हो पर गांधी वही करते रहे जो उनकी आत्मा ने स्वीकारा। बेखौफ जीने का यही अंदाज गांधी की ताकत थी। भले ही गांधी कई बार विवाद के सबब बने पर गांधी अपने मन की करते रहे और इस पर आज भी बहस की जा सकती है कि वे सही थे या गलत पर गांधी का अहिंसावाद, उनका गरीब के प्रति प्रेम, आधी दुनिया यानी स्त्री के प्रति लगाव, बेसिक शिक्षा का सिद्धांत, गांव को व आखिरी जन तक आजादी का सुख पहुंचाने का संकल्प, किसी भी कीमत पर हिंसा का सहारा न लेने का जिद भरा दु:साहस गांधी को सबसे अलहदा खड़ा करता है।

गांधी जो कहते थे वैसा ही करते भी थे। अहिंसा के रास्ते पर एक बार निकल लेने के बाद गांधी पूरी तरह उसी के हो कर रहे। उन्होंने यहां तक कहा कि शवों पर सवार होकर आती आजादी उन्हें मंजूर नहीं होगी पर खेद कि उनके जीते ही हमने शव बिछा डाले।

गांधी आज भी पूरी तरह प्रासंगिक हैं। जरूरत सिर्फ उन्हें समझने भर की है। यदि यह देश गांधी के सिद्धांतों को समझ ले तो भ्रष्टाचार अनैतिकता व आतंकवाद जैसी अनेक समस्याओं का स्वत: हल निकल जाए। गांधी को कितना ही क्यों न काटें छांटें पर गांधी हैं और रहेंगे। वस्तुत: गांधी, हिंदुस्तान की जड़ों का दूसरा नाम है।

आखिर गांधीजी एकमात्र ऐसे नेता थे, जिन्होंने देशभर के करोड़ों लोगों के मर्म को छुआ और इतिहास में पहली बार करोड़ों लोगों को राजनीतिक लक्ष्यों के लिए लड़ने को प्रेरित किया। वे भारत के एकमात्र ऐसे नेता हैं, जिन्होंने इस देश की जमीन पर राजनीतिक प्रयोग किया और उसे सफल कर दिखाया।

देश के निर्माण में

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का महत्व केवल इसीलिए नहीं है कि उन्होंने शक्तिशाली अत्याचारी ब्रिटिश शासन से हमें मुक्ति दिलाई, बल्कि इसलिए भी है कि अत्याचार से लड़ने के लिए उन्होंने गरीब और कमजोर के हाथ में सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन का अमोघ अस्त्र थमा दिया और पूरे विश्व को यह संदेश दिया कि अत्याचार के विरुद्ध विना हथियार उठाए युद्ध न केवल लड़ा जा सकता है, बल्कि जीता भी जा सकता है। पर इससे भी बढ़कर महात्मा गांधी का महत्व इस बात में है कि उन्होंने समग्र विश्व को नई जीवन दृष्टि दी। एक श्रेष्ठ और अर्थपूर्ण जीवन कैसे जिया जा सकता है।

भारत की आजादी की लड़ाई के समय गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में सफल सत्याग्रह किया और वापस आकर भारत में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध असहयोग का अहिंसक आंदोलन शुरू किया। इसी दौरान चौरी चौरा कांड हुआ जिसमें पुलिस द्वारा की गई गोलीबारी में चार स्वतंत्रता सेनानी शहीद हो गए। लोगों में इसकी उग्र प्रतिक्रिया हुई। उग्र भीड़ ने पुलिस स्टेशन में आग लगा दी और २२ पुलिसकर्मियों को जिंदा जला दिया गया। पर गांधीजीने इस घटना पर गहरा दु:ख प्रकट

करते हुए कहा नेता के रूप में मेरी यह निष्फलता ही कही जाएगी कि मेरी अहिंसक लड़ाई हिंसक लड़ाई के रूप में बदल गई। इस घटना के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी रूप में जिम्मेदार न होने के बावजूद गांधीजी ने उपवास किया और खुद को अंग्रेजों के हवाले कर दिया। जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें दो वर्ष जेलवास करना पड़ा। किसी भी परिस्थिति में वे सत्य और अहिंसा का दामन छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। गांधीजी ने व्यसनमुक्ति, अस्पृश्यता-निवारण, विधवा-विवाह, अंधश्रद्धा निवारण, बुनियादी शिक्षा, निरक्षरता उन्मूलन, नारी सशक्तिकरण जैसे तमाम मोर्चों पर उल्लेखनीय कार्य किए थे। यह अकारण नहीं कि वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मंडेला से लेकर बराक ओबामा जैसे विश्व नेताओं के आज भी आदर्श बने हुए हैं।

नई पीढ़ी को गांधीजी बोरिंग और बकवास लगते हैं और अनेक लोगों में गांधीजी की आलोचना करना आज फैशन बन गया है। आज की परिस्थितियों में गोंधीजी की प्रासंगिकता को लेकर सवाल खड़े किए जाते हैं। गांधीजी की उचित आलोचना हो तो गलत नहीं है, उलटे यह जरूरी है। स्वस्थ लोकतंत्र का यह आधार है। पूरी बेबाकी से गांधीजी ने अपनी ढेर सारी बातें बिना छिपाए प्रकट की है, जिससे उनके आलोचकों को उनके विरुद्ध पर्याप्त मसाला भी मिल जाता है। गांधीजी के ब्रह्मचर्य, चरखे की अर्थनीति, अहिंसा के अतिरेक, प्राकृतिक उपचार, उपवास आदि की आलोचना तो उनके जीवनकाल में ही होने लगी थी, होनी भी चाहिए। पर आलोचना करने के पहले गांधीजी को पढ़ना और समझना जरूरी है। गांधीजी ने देश की गरीबी और सामाजिक संरचना का गहन अध्ययन किया था। चरखे के पीछे उनकी दो रणनीति थी- अंग्रेजों की कपड़ा मिलों के कपड़ों को खरीदे जाने से रोकना और देश के बेरोजगार लोगों को स्वावलंबी बनाना। माना कि ये दोनों मुद्दे अब अप्रासंगिक हो गए हैं, पर उस समय अप्रासंगिक नहीं थे।

सादगी, सेवा, समर्पण, सत्य जैसे सद्‌गुणों की विरुदावली में गांधीजी के नेतृत्व गुणों की चर्चा अक्सर नहीं होती है। गांधीची उच्चकोटि के कूटनीतिज्ञ थे पर अपनी कूटनीति को उन्होंने देशहित और सिद्धांतों तक ही सीमित रखा था। निजी स्वार्थ के लिए कूटनीति का उपयोग उन्होंने कभी नहीं किया था। सिद्धांतों के खातिर उन्होंने अपनी संतानों को छोड़ा था। संतानों को सत्ता में घुसाने का प्रयास उन्होंने कभी नहीं किया। वस्तुत: उन्होंने इस बात का ध्यान रखा था कि उनकी कोई भी संतान राजनीति में न आए। कौमी एकता के बिना देश की प्रगति नहीं हो सकती, यह उन्हें पता था, इसीलिए उन्होंने खिलाफत आंदोलन को समर्थन देकर आम मुस्लिमों से संवाद स्थापित करने का प्रयास किया।

मोहनदास करमचंद गांधी भारत एवं भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के एक प्रमुख राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे। वे सत्याग्रह (व्यापक सविनय अवज्ञा) के माध्यम से अत्याचार के प्रतिकार के अग्रणी नेता थे, उनकी इस अवधारणा की नींव सम्पूर्ण अहिंसा के सिद्धान्त पर रखी गयी थी जिसने भारत को आजादी दिलाकर पूरी दुनिया में जनता के नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता के प्रति आन्दोलन के लिए प्रेरित किया। उन्हें दुनिया में आम जनता महात्मा गांधी के नाम से जानती है। संस्कृत भाषा में महात्मा अथवा महान आत्मा एक सम्मान सूचक शब्द है। गांधी को महात्मा के नाम से सबसे पहले १९१५ में राजवैद्य जीवराम कालिदास ने संबोधित किया। उन्हें बापू (गुजराती भाषा में बापू यानी पिता) के नाम से भी याद किया जाता है। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने ६ जुलाई १९४४ को रंगून रेडियो से गांधीजी के नाम जारी प्रसारण में उन्हें राष्ट्रपिता कहकर सम्बोधित करते हुए आजाद हिन्द फौज के सैनिकों के लिए उनका आशीर्वाद और शुभकामनाएं मांगी थीं।

बापू का चरित्र किसी परिचय का मोहताज नहीं है। बापू के सिद्धांत किसी से छुपे नहीं हैं। बापू को देश का नायक माना जाता है, देश का निर्माता कहा जाता है और देश की आजादी में सर्वप्रमुख भूमिका निभानेवाला शख्स भी कोई और नहीं, बापू ही था लेकिन फिर भी देश की आजादी के वक्त उन्होंने कोई भी पद लेने से इंकार कर दिया लेकिन आज के नेता तो नैतिकता, आदर्श, मूल्य, सिद्धांत, परंपराएं, मर्यादाएं, नीतियां, सभ्यताएं सब कुछ भुलाकर मात्र कुर्सी से चिपक कर बैठना चाहते हैं।

आम लोगों के अंतर्मन को छूनेवाले बापू को आज के दौर में अधिक प्रासंगिक करार देते हुए हमारे आसपास की दुनिया में जबरदस्त बदलाव के बाद भी सभी स्थानों पर विश्व शांति एवं समावेशी विकास के लिए बापू के विचारों को प्रखरता से रखा जा रहा है।

हमारे आसपास की दुनिया में जबर्दस्त बदलाव के बावजूद सभी लोग गांधी की चर्चा करते हैं। दुनिया में आतंकवाद, हथियारों की होड़ और पूंजी आधारित बाजार व्यवस्था में आम लोगों के प्रभावित होने दुनिया में कहीं भी, कभी भी चाहे मौका सुखद हो या दु:खद। विश्व शांति और विकास के लिए बापू के विचार केंद्र में रहते हैं। दुनिया में अमन-चमन, सहयोग और समावेशी विकास के लिए बापू के संदेश पहले से अधिक प्रासंगिक हो गए हैं क्योंकि उनके विचार आम लोगों के अंतर्मन को छूनेवाले हैं। आज जब हम २१वीं शताब्दी की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, उस समय महिलाओं के उत्थान पर विशेष ध्यान दिये जाने की जरूरत है क्योंकि दुनिया यह आधी आबादी आज भी उपेक्षित है। दक्षिण अफ्रीका में अपने आंदोलन से ही बापू ने महिला सशक्तिकरण पर जोर दिया था लेकिन लड़के और लड़कियों में आज भी फर्क किया जा रहा है। जब तक महिलाएं एकजुट नहीं होंगी तब तक मानवता के इस बड़े हिस्से के पक्ष में महात्मा गांधी के संघर्ष को अंजाम तक नहीं पहुंचाया जा सकता है। शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है जिसके लिए पूरी दुनिया में जोरदार अभियान चलाने की जरूरत है। बापू ने किसी राष्ट्र के विकास के लिए शिक्षित आबादी को सबसे महत्वपूर्ण कारक बताया था, लेकिन यह कार्य आज भी अधूरा है विशेष तौर पर महिलाओं में अशिक्षा का स्तर अधिक है जबकि हमारा भविष्य उसी महिला के आंचल की छांव में पलता है।

परिवार का ख्याल रखते थे बापू- व्यस्तताओं के कारण महात्मा गांधी द्वारा अपने बच्चों को पूरा समय नहीं देने की आम धारणा के विपरीत बापू अपने पोते-पोतियों, पुत्र-पुत्रवधुओं समेत परिवार के सभी लोगों की छोटी छोटी बातों का ध्यान रखते थे। तमाम व्यस्तताओं के बावजूद गांधी जी अपने पत्रों के माध्यम से अपने बेटों और बहुओं का मार्गदर्शन करते थे और उन्हें अपने बहुमूल्य सुझाव देते थे। गांधी पत्र व्यवहार के जरिये नियमित रूप से बच्चों से सम्पर्क में रहते थे और वह बच्चों से भी पत्र की उम्मीद रखते थे। बापू ने अपने पुत्र हरिलाल को लिखा तुम्हारा पत्र कोई नहीं पढ़े, ऐसी तुम्हारी इच्छा ठीक है लेकिन पत्रों में कुछ भी गुप्त नहीं होता है। तुम्हारे बारे में सब लोग जानना चाहेंगे तो आश्रम के लोगों के लिए एक ऐसा पत्र तुम्हें जरूर लिखना चाहिए। मैं चाहे कितना भी नाखुश क्यों न होऊं तो भी तुम लोगों के पत्रों की प्रतीक्षा तो करता ही रहता हूं। मुझे माह में एक पत्र लिखने और एक पत्र पाने का हक है। बापू ने अपनी पुत्रवधु को लिखे पत्र में कहा हिन्दू संसार में तो कन्या का व्यवस्थित पालन पोषण और विकास शादी के बाद ही पूर्ण होता है। रामदास, देवदास की पढ़ाई ठीक से होती होगी। क्या रामदास का कफ ठीक हो गया है। उन्होंने लिखा तुम्हारी मंगवाई हुई किताबें

भेज दी हैं। उनके पैसे तुरंत भेज देना। आश्रम में उधार के खाते नहीं रहने चाहिए क्योंकि उनके पास निजी मिल्कियत नहीं है। अपना खर्च और सजधज ऐसी न रखना कि दूसरों की ईर्ष्या का पात्र बन जाओ। गांधीजी ने अपनी पुत्रवधू को लिखा खानपान का नियमित ध्यान रखना। दूध और साबूदाने की कांजी नियमित रूप से लेना। अपने पुत्र और पुत्रवधुओं से बापू ने पत्र के माध्यम से कहा याद रखो कि अपने भाग्य में गरीबी ही रहनेवाली है। इस बारे में जितना अधिक सोचता हूं, उतना मुझे लगता है कि धनी होने की तुलना में गरीब रहना अधिक कल्याणकारी है। महिला सशक्तिकरण के पक्षधर महात्मा गांधी ने लिखा स्त्री का सृजन केवल रसोई करने के लिए नहीं हुआ है। जिस हद तक यह आवश्यक है उस हद तक स्त्री पुरुष दोनों इसमें भाग लेकर सेवाभावी रहें। परिवार के वारिस के बारे में बापू ने लिखा तुममें ऐसा अभिमान होना चाहिए कि तुम अपने पिता की विरासत को आगे न बढ़ा सको तो बर्बाद नहीं करोगे। वैसे सच्चा वारिस वह है जो विरासत में वृद्धि करे।

इसे भारतीय जीवन की विडंबना समझें या खोखलापन कि जिस व्यक्ति को देश के इतिहास, विधान और साहित्य में सर्वोच्च स्थान देने की कोशिश की गयी, उसे ही वास्तविक जीवन में सर्वाधिक उपेक्षित बनाकर छोड़ दिया।

भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के साथ ऐसा ही हुआ। देश का सर्वोत्तम पद देकर राष्ट्र ने उनकी सेवाओं व सिद्धांतों से इति श्री कर ली। गांधीजी ने एक ऐसी राह दिखाई, एक ऐसा सिद्धांत हमारे सामने रखा और उस पर पहले खुद चले, वह अपने आप में एक मिसाल है। उन्होंने यह नहीं किया कि कहा कुछ और, और किया कुछ और। करनी और कथनी में उन्होंने कोई फर्क न समझा और न किसी को समझने दिया। गांधीजी ने न केवल पूरे देश को एकता के सूत्र में बांधने की कोशिश की बल्कि वर्ग भेद, छूआछूत, गरीबी-अमीरी की खाई खत्म करने का प्रयास भी किया। उन्होंने ग्राम सुधार, हरिजनोद्धार, नशाबंदी आदि कार्यों को अपने हाथ लया और सभी को सेवा भावना की ओर अग्रसर किया। गांधीजी ने कांग्रेस को रचनात्मकता की ओर बढ़ाया और उन्हें जन-मानस के ज्यादा नजदीक होने में मदद की। वे देश को आत्मनिर्भर देखना चाहते थे जिसमें आपसी दूरियां न हों। वे नहीं चाहते थे कि भारत के गांव सामन्तों और जमींदारों की बपौती बनें या किसी का शोषण हो। सामाजिक असमानता को खत्म करने की दृष्टि से गांधीजी हरिजनों के घर जाते और उनके साथ बैठकर भोजन तक करते। अगर वे कहते थे कि छूआछूत खत्म करो तो उसके लिये उन्होंने पहले खुद ऐसे काम किये जिससे छुआछूत खत्म हो और फिर औरों से भी यही अपेक्षा उन्होंने की। उन्होंने अहिंसा का मानवता को संदेश दिया और अपने सारे आंदोलन अहिंसा की राह पर चलते ही उन्होंने चलाये। पूरे ब्रिटिश साम्राज्य को उन्होंने अहिंसा के रास्ते चलकर हिलाकर रख दिया। गांधीजी हिंदू और मुसलमानों में टकराव नहीं चाहते थे। यही कारण था कि भारत पाक विभाजन के समय वे जिन्ना की मांगों के आगे झुकते ही चले गये जो कुछ भारतवासियों को पसंद नहीं आया। ३० जनवरी १९४८ को अहिंसा के पुजारी महामानव की गोली मारकर हत्या कर दी गयी। गांधीजी के सहयोगी गांधीजी के पीछे टूट से गये और राजनीति के विवादों में उलझ कर रह गये। आज भी उनके सिद्धांत बेहोशी की इस लम्बी तंद्रा को तोड़ने के लिये कसमसाते रहते हैं।

महात्मा गांधी नि:संदेह बीसवीं सदी के न सिर्फ एक महान राजनेता और चिंतक थे, बल्कि रोजमर्रा को लेकर उनके प्रयोग और विचार भी बहुत ईमानदार, दिलचस्प और गहन अध्ययन के योग्य थे, पर उन प्रयोगों की सार्थकता पर विचार किया जाना भी जरूरी है। गांधीजी की व्यक्तिगत ईमानदारी और चट्टान सरीखी संकल्प शक्ति पर कोई संदेह नहीं किया जा

सकता। उनके सत्याग्रह की पवित्रता पर कोई दुराग्रही व्यक्ति ही सवाल उठा सकता है। गांधीजी ने अहिंसा को परम धर्म के रूप में अपनाया था। उनका सोचना था कि कोई साहसी व्यक्ति ही अहिंसक हो सकता है। यह सही है, पर साथ ही गांधी गीता को अपनी मां की तरह मानते थे जिसमें युद्ध को रोकने के लिए नहीं, बल्कि उसमे जोर शोर से शामिल होने के लिए कहा गया है।

उनकी हत्या के बाद इस घर को स्मारक में बदल दिया गया। सफेद रंग के इस बंगले में एक संग्रहालय, आर्ट गैलरी और बुक स्टोर हैं। इस घर को गांधी स्मृति के नाम से जाना जाता है। अमेरिकी विदेश मंत्री टिलरसन की यात्रा दौरान उनके साथ गांधी स्मृति के निदेशक दीपांकर श्री ज्ञान मौजूद थे। निर्देशक ने कहा, अमेरिकी विदेश मंत्री करीब १० मिनट तक यहां रहे। टिलरसन ने कहा गांधीजी कितने सादगी पसंद इंसान थे। गांधीजी का जीवन निश्चित तौर पर दो दुर्लभ गुणों- सादगी और प्रेरणा से भरा हुआ है। टिलरसन शहीद स्तंभ की तरफ हुए बीच में रूक गए और वहां बने पत्थर के पदचिन्हों के बारे में पूछा जिनपर गुलाब की पंखुड़ियां डाली गयी थीं।

ज्ञान ने कहा, उन्होंने मुझसे पदचिन्हों के बारे में पूछा और मैंने उन्हें बताया कि गांधीजी हत्या से पहले इसी रास्ते से गए थे और ये उनके पदचिन्हों को दर्शाते हैं। इसके बाद टिलरसन ने कहा कि, गांधी उन १० वैश्विक नेताओं में से एक हैं जिन्होंने दुनिया को बदल दिया।

आज से ७० साल पहले हमारे देश की जनसंख्या सिर्फ ३३ करोड़ थी। तब महात्मा गांधी ने अपनी हरिजन पत्रिका में यह लिखा था, गरीबी की मार झेलता एक ऐसा भारत जहां लाखों की संख्या में अनपढ़ लोग हों- भारत की ऐसी तस्वीर मेरे मन में नहीं है। मेरे मन में एक ऐसे भारत की तस्वीर है, जो प्रगति के रास्ते पर अपनी प्रतिभा के अनुकूल दिशा पकड़कर लगातार आगे बढ़े। भारत की यह तस्वीर ऐसी बिल्कुल नहीं है कि वह पश्चिमी देशों की मरणासन्न सभ्यता के तीसरे दर्जे की नकल जान पड़े। अगर मेरा सपना पूरा होता है, तो भारत के सात लाख गांवों में से हर गांव खुद में एक जीवंत गणतंत्र होगा। एक ऐसा गांव जहां कोई भी अनपढ़ नहीं होगा, जहां कोई भी काम के अभाव में खाली हाथ नहीं बैठेगा। जहां सबके पास रोज की सेहतमंद रोटी, साफ हवादार मकान और तन ढंकने के लिए जरूरत भर कपड़ा होगा। एक ऐसा भारत जहां का हर आदमी साफ-सफाई के नियमों को जानता और मानता होगा और सरकार हर सूरत में लोगों की बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा करेगी। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की लिखी यह बातें पढ़ते ही हमारे ध्यान में आज का भारत आता है।

बापू के सिद्धांत शाश्वत और दूरगामी सोचवाले हैं तथा आगे आनेवाली कितनी ही पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायी हैं। उनके आदर्श वैश्विक तथा मानवता से जुड़े हैं तभी तो दुनिया के कितने ही देशों में महात्मा गांधी की प्रतिमा लगाई गई और उन पर डाकटिकट जारी किए गए।

आज भी उनके द्वारा प्रतिपादित सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, अपरिग्रह, ट्रस्टीशिप के सिद्धांतों का हर समाज व हर देश में औचित्य है क्योंकि इनमें इंसानियत का संदेश निहित है। तब कोई सोच नहीं सकता था कि दो सदियों से भी ज्यादा समय तक भारत में हुकूमत करनेवाले अंग्रेजों को अहिंसक सत्याग्रह से झुकाकर आजादी हासिल की जा सकेगी लेकिन बापू ने यह कर दिखाया। जिस जमाने में आज की तरह दूरदर्शन के खबरियां चैनल, मोबाइल, सोशल मीडिया जैसी सुविधाएं नहीं थीं तब भी करोड़ों लोग महात्मा गांधी के मुरीद थे और उनका संदेश गांव गांव में पहुंच जाता था। तब कांग्रेस कोई

पार्टी नहीं बल्कि जनआंदोलन था जो देश की आजादी के लिए समर्पित था। महात्मा गांधी १९२० से भारतीय राजनीति के मंच पर सक्रिय हुए। इसके पहले कांग्रेस के नरम दलीय नेता ब्रिटिश शासकों को पिटीशन देकर सुविधाओं की मांग करते थे।

महात्मा गांधी भले ही नरम दलीय गोपाल कृष्ण गोखले के शिष्य थे परंतु व्यवहार में उन्होंने गरम दलीय लोकमान्य तिलक की विचारधारा को आगे बढ़ाया। तिलक ने कहा था- स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। बापू ने भी स्वराज्य हासिल करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया। उनका अंग्रेजों भारत छोड़ो, करो या मरो आंदोलन गोखले की बजाय तिलक की विचारधारा के अनुरूप था। बापू के जीवन व सिद्धांतों से प्रेरणा लेकर मार्टिन लूथर किंग ने अमेरिका में अहिंसक तरीके से सिविल राइट्स आंदोलन किया। भारी दमनचक्र से भी वे विचलित नहीं हुए और अश्वेतों को गोरों के बराबरी के अधिकार दिलाए। द. अफ्रीका में नेल्सन मंडेला ने भी रंगभेद के खिलाफ गांधीवादी सत्याग्रह का रास्ता अपनाया था। म्यांमार में आंग सान सू की के अहिंसक आंदोलन के पीछे भी बापू के सिद्धांतों की प्रेरणा थी। पठानों को अहिंसक आंदोलन की सीख देनेवाले खान अब्दुल गफ्फार खान सीमांत गांधी कहलाएं।

बापू की खादी को नए सिरे से बढ़ावा दिया जा रहा है। महात्मा गांधी गांवों को स्वावलंबी व स्वयंपूर्ण बनाना चाहते थे। वर्तमान सरकार भी जन धन योजना तथा अन्य स्कीमों से ग्रामीणों व गरीबों की दिशा सुधारना चाहती है। गांधी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत यह था कि समाज के संपन्न लोग अपनी अतिरिक्त संपत्ति लोककल्याण में लगाएं तथा उस संपत्ति के मालिक न होकर ट्रस्टी बनें। महिलाओं को शिक्षा व बराबरी का हक दिए जाने के भी बापू प्रबल समर्थक थे। यद्यपि चरखे को उन्होंने स्वावलंबन और आजादी की लड़ाई का अस्त्र बनाया लेकिन वे तकनीक तथा वैज्ञानिक प्रगति के विरोधी नहीं थे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एक ऐसे चिंतक थे जो दूसरों को उपदेश देने के पहले स्वयं उसे अपने आचरण में ढालते थे। इसलिए बापू और उनके सिद्धांत सदैव प्रासंगिक बने रहेंगे।

३ अक्टूबर

लक्ष्मी नारायण साहू (जन्म- ३ अक्टूबर)

लक्ष्मी नारायण साहू उड़ीसा के समाजसेवी और सार्वजनिक कार्यकर्ता थे। उनका जन्म एक धनी परिवार में हुआ था। लक्ष्मी नारायण ने पाँच विषयों में एम.ए. की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। वे उदार विचारों के व्यक्ति थे। उनके अन्दर ईसाई, ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसफी आदि धर्मों और विचार धाराओं के प्रति समान का भाव था। आन्ध्र प्रदेश के इतिहास शोध संस्थान ने उन्हें भारत तीर्थ से, कुछ अन्य संस्थाओं ने इतिहास रत्न और विद्या रत्न के अलंकरणों से तथा भारत सरकार ने पद्म सम्मान से सम्मानित किया था।

कादम्बिनी गांगुली (निधन- ३ अक्टूबर)

कादम्बिनी गांगुली भारत की पहली महिला स्नातक और पहली महिला, फिजीशियन थीं। यही नहीं कांग्रेस अधिवेशन में सबसे पहले भाषण देनेवाली महिला का गौरव भी कादम्बिनी गांगुली को ही प्राप्त है। कादम्बिनी गांगुली पहली दक्षिण एशियाई महिला थीं, जिन्होंने यूरोपियन मेडिसिन में प्रशिक्षण लिया था। इन्होंने कोयला खदानों में काम करने वाली महिलाओं की लचर स्थिति पर भी काफी कार्य किया। बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय की रचनाओं से कादम्बिनी बहुत प्रभावित थीं। उनमें देशभक्ति की भावना बंकिमचन्द्र की रचनाओं से ही जागृत हुई थी।

४ अक्टूबर

श्यामजी कृष्ण वर्मा (जन्म- ४ अक्टूबर)

श्यामजी कृष्ण वर्मा भारत के उन अमर सपूतों में हैं जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन भारत की आजादी लिए लगा दिया। ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों से त्रस्त होकर भारत से इंग्लैंण्ड चले गये श्यामजी कृष्ण वर्मा ने अपना सारा जीवन भारत की स्वतंत्रता के लिए माहौल बनाने में और नवयुवकों को प्रेरित करने में लगाया। स्वामी दयानंद सरस्वती के सान्निध्य में रहकर मुखर हुए संस्कृत व वेदशास्त्रों के मूर्धन्य विद्वान के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त श्यामजी कृष्ण वर्मा १८८५ में तत्कालीन रतलाम राज्य के १८८९ तक दीवान पद पर आसीन रहे।

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा अंग्रेजी शिक्षा हासिल करने और यूरोप बस जाने के बाद जेहादी बने। उद्भट संस्कृत विद्वान, समाज सुधारक, वकील, पत्रकार और ऑक्सफोर्ड के पहले भारतीय स्नातक। श्यामजी १९वीं सदी के उत्तरार्ध व २० सदी के पूर्वार्ध के सारे क्रांतिकारियों के अनुप्रेरक और सही अर्थों में भारत के पहले आधुनिक क्रांतिकारी थे।

गदर के वर्ष १८५७ की ४ अक्टूबर को गुजरात के मांडवी में जन्में श्यामजी। भुज में प्राथमिक शिक्षा के बाद जब ११वर्ष के थे, माता गोमतीबाई का साया उनके सिर से उठ गया और रोजी-रोटी की तलाश पिता करसन भानुशाली को मुंबई ले आई। यहां एक भाटिया व्यापारी की मदद से विल्सन स्कूल में अंग्रेजी और संस्कृत पाठशाला में देवभाषा पढ़ते श्यामजी ने ऐसी पारंगतता हासिल कर ली कि दोनों भाषाओं में धाराप्रवाह भाषण देने लगे। कच्छ राज्य की ओर से छात्रवृत्ति का आश्वासन मिला और मार्च, १८७९ में संस्कृत मनीषी मोनियर विलियम्स के निमंत्रण पर वे इंग्लैंड में थे। चार वर्ष बाद ऑक्सफोर्ड (बलियोल कॉलेज) से स्नातक बनने वाले वे पहले भारतीय थे। १८८३ में भारत आकर ३१ महीने गुजारने के बाद लौटे पत्नी भानुमति को साथ लेकर। बैरिस्टरी की उपाधि से लैस होकर एक बार फिर स्वदेश आए और १८८५ की १९ जनवरी को हाई कोर्ट में रजिस्ट्री कराकर मुंबई में वकालत करने लगे। १८५७ के पहल स्वतंत्रता संग्राम की विफलता के बाद भारत में अंग्रेजों का दमनचक्र चमन पर था। श्यामजी मुंबई में रहते क्रांतिकारी विचारधारा का खुलकर प्रचार करते थे। १८९७ में नाटू बंधु गिरफ्तार हो गए। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक पर पुणे के आततायी प्लेग कमिश्नर की हत्या करनेवाले चाफेकर बंधुओं को अंग्रेज अफसर रैंड की हत्या के लिए भड़काने के लिए मुकदमा चला। ब्रिटिश न्याय की पोल-पट्टी समझकर, अंतत: इंग्लैंड लौटने का मन बनाने से पहले कुछ वर्ष उन्होंने अजमेर में बैरिस्टरी और रतलाम, उदयपुर व जूनागढ़ रियासतों में दीवानी करते हुए निकाले।

भारत में स्वामी दयानंद सरस्वती और इंग्लैंड में हर्बर्ट स्पेंसर जैसे महापुरुषों की संगत वरदान बनी। दकियानूसी और कुसंस्कारों का विरोध और विधवा विवाह जैसी प्रगतिशील प्रथाओं के समर्थन के कारण यूरोप जाने से पहले ही श्यामजी ने काफी ख्याति हासिल कर ली थी। दो वर्ष देशभर का भ्रमण कर धर्म और संस्कृत साहित्य पर व्याख्यान देने में निकाले। वे पहले ऐसे गैर ब्राह्मण थे, जिन्हें काशी के विद्वतसमाज ने १८७७ में पंडित की उपाधि से विभूषित किया। यूरोप जाकर उनका पहला काम था बर्लिन और हॉलैंड में होनेवाली प्राच्य कांग्रेस में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में भाग लेना। १८८३ में रॉयल एशियाटिक सोसायटी के नॉन रेजिडेंट मेंबर चुने गए। जनवरी, १९०५ में श्यामजी ने इंडियन सोशियोलॉजिस्ट नामक मासिक पत्र निकाला। क्रांतिकारी जन आंदोलन को बल पहुंचाने के उद्देश्य से जो उन दिनों बंग भंग जैसे आंदोलनों से मुखर होने लगा था। राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सुधारों और उग्र देश भक्ति पूर्ण विचारों

और दुनिया भर के क्रांतिकारी आंदोलनों, पैसिव रिसेस्टेंस और समानांतर सरकार की पैरवी करते उनके लेखों को देश के क्रांतिकारी उसे बहुत ध्यान से पढ़ते थे। इन्हीं कोशिशों का अगला कदम था इसी साल लंदन में स्वराज के लिए होम रूल सोसायटी और नस्लवाद के शिकार भारतीय विद्यार्थियों के लिए छात्रावास के रूप में इंडिया हाउस की स्थापना। इंडिया हाउस में १८५७ के गदर की स्वर्ण जयंती और लाला लाजपत रॉय की गिरफ्तारी व सरदार अजीत सिंह (सरदार भगत सिंह के चाचा) के देश-निकाले का विरोध जैसे आयोजन होते रहते थे और उनमें भाग लेने और उनसे राय-बात करने दादाभाई नौरोजी, लाला परमानंद, विट्ठलभाई पटेल, वीरेंद्रनाथ चट्टोपाध्याय, महात्मा गांधी, लाला लाजपत राय, गोपाल कृष्ण गोखले के साथ लेनिन जैसे लोग भी आया करते थे। बुअर युद्ध में अंग्रेजों का समर्थन करने के लिए उन्होंने महात्मा गांधी को भी आड़े हाथों लिया। तिलक ने उनके सहयोग से चाफेकर बंधुओं को सेना में भर्ती कराने की कोशिश भी की थी।

श्यामजी कृष्ण वर्मा ने कॉटन प्रेस और शेयर मार्केट में निवेश से विदेशों में रहते हुए प्रचुर मात्रा में धन कमाया, पर शायद ही कभी उनका निजी इस्तेमाल किया हो। शैक्षिक और शोध कार्यों के लिए श्यामजी ने शहीदों दयानंद सरस्वती, खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी, कन्हैयालाल दत्त और सत्येंद्रनाथ बसु, हेमचंद्र दास, और गणेश सावरकर सरीखों के नाम पर कई छात्रवृत्तियां कायम कीं और भारत से आनेवाले विद्यार्थियों के लिए स्टडी सेंटर खोले। इन सब कामों में उनका साथ देते रहे मैडम भीकाजी कामा, सरदार सिंह राणा, वीरचंद गांधी, जे.एम. पारीख, अब्दुल्ला, सुहरावर्दी, गाडरेज और जे.सी. मुखर्जी। उनकी यह दानी प्रवृत्ति उनकी पत्नी को भी मिली जो २३ अगस्त, १९३३ को आंखें मूंदने से पहले भारतीय विद्यार्थिनियों के लिए वसीयत करके गईं।

भारत सचिव के एडीसी कर्जन वाइली पर गोली चलाने वाले मदन लाल धींगड़ा के समर्थन और फ्रांसीसी सिपाहियों द्वारा अंतरराष्ट्रीय कानूनों के विरुद्ध वीर सावरकार को ब्रिटिश पुलिस को सौंपे जाने के विरुद्ध आंदोलन श्यामजी ने डंके की चोट पर चलाए। अपने इन दुस्साहसों के लिए उन्हें आजीवन खामियाजा भुगतना पड़ा। ब्रिटिश अखबार उनकी मुखालफत में खड़े हो गए, वहां की सरकार ने उनके पीछे जासूस छोड़ दिए, आखिर सदस्यता समाप्त कर बैरिस्टरी से भी वंचित कर दिया गया। आखिर एक दिन जब उन्हें गिरफ्तार किया जाना तय था, वे लंदन छोड़ चुपचाप पेरिस रवाना हो गए। यहां क्रांतिकारियों को संगठित करते और भारतीय स्वतंत्रता के लिए यूरोपीय देशों का समर्थन जुटाने के साथ उन्होंने लाला हरदयाल को रखकर वंदे मातरम जैसा अखबार निकाला। आखिर, पेरिस भी निरापद न लगने पर २३ अप्रैल, १९१४को जीजीवा की शरण लेनी पड़ी। प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो चुका था। स्विट्जरलैंड सरकार ने राजनीतिक प्रतिबंध लगाते हुए क्रांतिकारी साथियों की किसी तरह प्रत्यक्ष मदद करने से उनके हाथ बांध दिए। यहां उनका ज्यादातर समय जिनेवा की प्रो इंडिया कमिटी के अध्यक्ष डॉ. ब्रियेस की संगत में गुजरते थे। जिंदगी के आखिरी दिनों यह जानकारी उनके लिए किसी सदमे से कम नहीं थी कि जिस ब्रियेस को उन्होंने परम मित्र समझा वह तो ब्रिटिश सरकार का पेड एजेंट था। जहां पत्नी के साथ, लगभग निस्संग जीवन बिताते हुए एक अस्पताल में ३० मार्च, १९३० को रात्रि ११.३० बजे उनका देहांत हो गया। उस वक्त उनकी उम्र थी ७३ वर्ष।

श्यामजी सदेह स्वदेश नहीं लौट पाए, लौटा उनका और उनकी पत्नी का अस्थिकलश। देश की स्वतंत्रता का उन्हें इतना विश्वास था कि इसका प्रबंध वे जीते-जी जीनीवा सरकार और सेंट जॉर्ज सिमेंट्री को पत्र लिख गए थे कि उनकी अस्थियों को सौ वर्ष सुरक्षित रखा जाए और भारत के स्वतंत्र होते ही वहां भेज दिया जाए। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा

गांधी, मुंबई के श्यामजी कृष्ण वर्मा स्मारक समिति, बीजेपी नेता किरीट सोमैया व अन्य लोगों की पहल और पेरिस के इतिहासकार डॉच पृथ्वींद्र मुखर्जी के प्रयासों से यह अवसर आया ५५ वर्ष बाद, जब गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी २२ अगस्त, २००३ को जिनीवा जाकर यह अस्थि कलश लाए जिसके दर्शन आप मांडवी स्थित उनके पैत्रिक घर में कर सकते हैं। ७० के दशक में कच्छ में उनके नाम से शहर, १३ दिसंबर, २०१० को मस्का (मांडवी) में स्मारक क्रांति तीर्थ और संसद की दीर्घा में उनके तैल चित्र की स्थापना की गई। किरीट सोमैया बताते हैं, मुंबई में भी सड़क के नामकरण सहित कुछ प्रयास, पर व्यक्तिगत स्तर पर हुए ताकि क्रांति नायकों की स्मृति अक्षुण्ण रहे।

सरला ग्रेवाल (जन्म- ४ अक्टूबर)

सरला ग्रेवाल भारतीय प्रशासनिक सेवा में भारत की दूसरी महिला अधिकारी थीं। उन्होंने पंजाब के अन्तर्गत अनेक महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर कार्य किया था। सरला ग्रेवाल १९५६ में शिमला की डिप्टी कमिश्नर बनाई गई थीं। वे देश में इस पद पर दायित्व निभानेवाली पहली महिला अधिकारी थीं। १९६३ में वे पंजाब सरकार के स्वास्थ्य विभाग की सचिव नियुक्त हुई थीं। उन्होंने पंजाब के विकास आयुक्त के रूप में १९७१ से १९७४ तीन वर्षों तक इस पद की जिम्मेदारी का निर्वहन किया था। इसके अन्तर्गत कृषि और उससे संबंधित विभागों का दायित्व शामिल था। सरला ग्रेवाल मध्य प्रदेश के राज्यपाल पद पर भी रहीं।

५ अक्टूबर

रानी दुर्गावती (जन्म- ५ अक्टूबर)

रानी दुर्गावती गोंडवाना की शासक थीं, जो भारतीय इतिहास की सर्वाधिक प्रसिद्ध रानियों में गिनी जाती हैं। दुर्गावती ने १६ वर्ष तक जिस कुशलता से राज संभाला, उसकी प्रशस्ति इतिहासकारों ने की। आइना-ए-अकबरी में अबुल फजल ने लिखा है, दुर्गावती के शासनकाल में गोंडवाना इतना सुव्यवस्थित और समृद्ध था कि प्रजा लगान की अदायगी स्वर्णमुद्राओं और हाथियों से करती थीं। मंडला में दुर्गावती के हाथी खाने में उन दिनों १४०० हाथी थे।

राम चतुर मल्लिक (जन्म- ५ अक्टूबर)

पंडित राम चतुर मल्लिक भारतीय शास्त्रीय संगीत की ध्रुपद-धमार शैली के प्रसिद्ध गायक थे। इन्होंने ध्रुपद-धमार गायन शैली में सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी ख्याति प्राप्त की थी और देश का नाम रोशन किया। मल्लिक जी ध्रुपद, खयाल, ठुमरी और मैथिली लोकगीतों के अनुपम गायक थे।

दुर्गा प्रसाद खत्री (निधन- ५ अक्टूबर)

दुर्गा प्रसाद खत्री हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यास लेखकों में से एक थे। ये ख्याति प्राप्त देवकीनन्दन खत्री के पुत्र थे, जिन्हें भारत ही नहीं, अपितु पूरे विश्व में भी तिलिस्मी उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त थी। तिलस्मी उपन्यास में इन्होंने अपने पिता की परंपरा का बड़ी सूक्ष्मता के साथ अनुकरण किया है। जासूसी उपन्यासों में राष्ट्रीय भावना और क्रांतिकारी आंदोलन प्रतिबिम्बित हुआ है। सामाजिक उपन्यास प्रेम के अनैतिक रूप के दुष्परिणाम उद्घाटित करते हैं। लेखक का महत्व इस बात में भी है कि उसने जासूसी वातावरण में राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत किया।

जोगेन्द्र नाथ मंडल (निधन- ५ अक्टूबर)

जोगेन्द्र नाथ मंडल बंगाल के प्रसिद्ध समाज सुधारक और राजनीतिज्ञ थे। इन्हें सुभाष बाबू की मदद से कोलकाता नगरपालिका के लिए चुना गया था। वर्ष १९३७ में जोगेन्द्र नाथ जी को कांग्रेस ने जिला कौंसिल में मनोनीत किया था। जोगेन्द्र नाथ जी ने सभी वर्गों के लिए बराबर संघर्ष किया। एक समाज सुधारक के रूप में इन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों और भेदभाव आदि का सदा विरोध किया था।

६ अक्टूबर

मेघनाथ साहा (जन्म- ६ अक्टूबर)

मेघनाथ साहा गणित व भौतिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करनेवाले भारतीय वैज्ञानिक थे। इनके अथक प्रयासों से ही इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स की स्थापना हुई थी। डॉ. मेघनाथ साहा ने तारों के ताप और वर्णक्रम के निकट संघर्ष के भौतकीय कारणों को खोज निकाला था। अपनी इस खोज के कारण २६ वर्ष की उम्र में ही इन्हें अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। इन्हें ३४ वर्ष की उम्र में लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी का फैलो चुना गया था।

खगोलविज्ञानी और स्वतंत्रता सेनानी थे साहा

मेघनाद साहा खगोलविज्ञानी के साथ ही स्वतंत्रता सेनानी भी थे। यही कारण है कि वे अपने कार्यों से भारतीय इतिहास में अमर हो गए हैं।

मेघनाद साहा का जन्म बंगाल के शिओरताली गांव में हुआ था। उनके पिता का नाम जगन्नाथ साहा तथा माता का नाम भुवनेश्वरी देवी था। गरीबी के कारण साहा को आगे बढ़ने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा। उनकी आरंभिक शिक्षा ढाका कॉलेजिएट स्कूल में हुई। उनकी अध्यक्षता में गठित विद्वानों की एक समिति ने भारत के राष्ट्रीय शक पंचांग का भी संशोधन किया।

इसके अलावा साहा इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स तथा इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टीवेशन ऑफ साइंस नामक दो महत्वपूर्ण संस्थाओं की स्थापना की। साहा इलाहाबाद व कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्राध्यापक रहे और रॉयल सोसायटी के फेलो भी चुने गए थे।

देश की आजादी में योगदान

वे भारतीय विज्ञान कांग्रेस के अध्यक्ष भी बने। उनको प्रतिभाशाली अध्यापक एवं सहपाठी का सहयोग मिला। उन्होंने देश की आजादी में भी योगदान दिया था। अंग्रेज सरकार ने बंगाल के आंदोलन को तोड़ने के लिए जब इस राज्य का विभाजन कर दिया तो मेघनाद भी इससे अछूते नहीं रहे। उस समय पूर्वी बंगाल के गवर्नर सर बामिफल्डे फुल्लर थे।

अशांति के इस दौर में जब फुल्लर मेघनाद के ढाका कालिजिएट स्कूल में मुआयने के लिए आए तो उन्होंने साथियों के साथ फुल्लर का बहिष्कार किया। इससे मेघनाद को स्कूल से बाहर का रास्ता भी दिखा दिया। प्रेसीडेंसी कॉलेज में पढ़ते हुए ही मेघनाद क्रांतिकारियों के संपर्क में आए। उस समय आजादी के दीवाने नौजवानों के लिए अनुशीलन समिति से जुड़ना देश सेवा का पहला पाठ माना जाता था। मेघनाद साहा भी इस समिति से जुड़ गए। उनका देहांत दिल्ली में हृदयाघात से हुआ। उनका जीवनकाल- १८९३-१९५६ था।

गुरु हरराय (निधन- ६ अक्टूबर)

गुरु हरराय सिक्खों के सातवें गुरु थे। गुरु हरराय अपने पितामह, महान योद्धा गुरु हरगोविंद सिंह के विपरीत थे, गुरु हरराय शांति के समर्थक थे, जो मुगल उत्पीड़न का विरोध करने के लिए उपयुक्त नहीं था।

वी.के. कृष्ण मेनन (निधन- ६ अक्टूबर)

वेड्डालिल कृष्णन कृष्ण मेनन एक भारतीय राष्ट्रवादी, राजनीतिज्ञ, कूटनीतिज्ञ और भारत के पूर्व रक्षा मंत्री थे। वी.के. कृष्ण मेनन १९५४ में भारत के दूसरे सर्वश्रेष्ठ नागरिक पुरस्कार पद्म विभूषण से सम्मानित होनेवाले पहले व्यक्ति थे।

दत्तो वामन पोतदार (निधन- ६ अक्टूबर)

दत्तो वामन पोतदार साहित्यकार एवं प्रसिद्ध समाजसेवी थे। हिंदी को महाराष्ट्र की दूसरी सबसे बड़ी भाषा बनाने का श्रेय उनको ही है। इनको महाराष्ट्र का साहित्यिक भीष्म भी कहा जाता है। इस कार्य के लिए उन्होंने आजीवन अविवाहित रहकर सेवा करने का दृढ़ निर्णय लिया। उन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन १९६७ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

गोकुलभाई भट्ट (निधन- ६ अक्टूबर)

गोकुलभाई भट्ट भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। इन्हें एक सच्चे समाज सेवक के रूप में भी जाना जाता था। इसके साथ ही वे एक कुशल वक्ता, कवि, पत्रकार, बहुभाषाविद और लेखक भी थे। इनका पूरा नाम गोकुलभाई दौलतराम भट्ट था। वर्ष १९३९ में गोकुलभाई की प्रेरणा से ही लोग झण्डे वाली टोपियाँ पहनने लगे थे। गोकुलभाई भट्ट १९४८ में जयपुर कांग्रेस की स्वागत समिति के अध्यक्ष रहे थे।

७ अक्टूबर

गुरु गोबिन्द सिंह (निधन- ७ अक्टूबर)

गुरु गोबिन्द सिंह सिक्खों के दसवें व अंतिम गुरु जाने जाते थे और सिक्खों के सैनिक संगति, खालसा के सृजन के लिए प्रसिद्ध थे। कुछ ज्ञानी कहते हैं कि जब-जब धर्म का ऱ्हास होता है, तब-तब सत्य एवं न्याय का विघटन भी होता है तथा आतंक के कारण अत्याचार, अन्याय, हिंसा और मानवता खतरे में होती है। उस समय दुष्टों का नाश एवं सत्य, न्याय और धर्म की रक्षा करने के लिए ईश्वर स्वयं इस भूतल पर अवतरित होते हैं। गुरु गोबिन्द सिंह जी ने भी इस तथ्य का प्रतिपादन करते हुए कहा है, जब जब होत अरिष्ट अपारा। तब-तब देह धरत अवतारा।

विजयदेव नारायण साही (जन्म- ७ अक्टूबर)

विजयदेव नारायण साही हिंदी साहित्य के नई कविता के दौर के प्रसिद्ध कवि, एवं आलोचक थे। वे तार सप्तक के कवियों में शामिल थे। जायसी पर दिए गए इनके व्याख्यायान एवं नई कविता संबंधी आलेख इनकी प्रखर आलोचकीय क्षमता के परिचायक हैं। साही की कविताओं में मर्मस्पर्शी व्यंग्य हैं। मछली घर तथा साखी इनकी काव्य-कृतियां हैं। ये तीसरे सप्तक के चर्चित प्रयोगवादी कवि हैं। इन्होंने निबंध तथा समालोचना भी लिखी है।

९ अक्टूबर

गोपबंधु दास (जन्म- ९ अक्टूबर)

गोपबंधु दास प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार, कवि तथा साहित्यकार थे। ये उड़ीसा के प्रख्यात सामाजिक कार्यकर्ता थे। गोपबंधु दास को उत्कल मणि के नाम से भी जाना जाता है। उड़ीसा के लोग इन्हें दरिद्र सखा अर्थात दरिद्र के सखा के रूप में याद करते हैं। गोपबंधु दास ने उत्कल के विभिन्न अंचलों को संघठित करके पूर्ण उड़ीसा राज्य बनाने की जी-जान से कोशिशें की थीं। उत्कल के दैनिक पत्र समाज के ये संस्थापक थे।

अमजद अली खाँ (जन्म- ९ अक्टूबर)

अमजल अली खाँ एक प्रसिद्ध भारतीय सरोद वादक हैं, जो अपनी वंशावली को सेनिया घराने से जोड़ते हैं और जिन्हें भारत का अग्रणी शास्त्रीय संगीतकार माना जाता है। १९६३ में मात्र १८ वर्ष की आयु में उन्होंने पहली अमेरिका यात्रा की थी। इस यात्रा में पण्डित बिरजू महाराज के नृत्य दल की प्रस्तुति के साथ अमजद अली खाँ का सरोद वादन भी हुआ था।

मिनजुर भक्तवत्सलम (जन्म- ९ अक्टूबर)

मिनजुर भक्तवत्सलम प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और मद्रास प्रांत (अब तमिलनाडु) के पूर्व मुख्यमंत्री थे। १९३७ के मद्रास मंत्रिमंडल में भक्तवत्सलम ने सभा सचिव के रूप में प्रवेश किया। फिर वे मंत्री बन गए। १९४६ में टी. प्रकाशूय के मंत्रिमंडल में बाद में राजा जी और कामराज के मंत्रिमंडल में भी वे केबिनेट मंत्री थे। जब कामराज ने कामराज योजना के अंतर्गत अपना पद छोड़ दिया तो भक्तवत्सलम तमिलनाडु के मुख्यमंत्री बने। वे १९६७ तक इस पद पर रहे।

कांशी राम (निधन- ९ अक्टूबर)

कांशी राम बहुजन समाज पार्टी के संस्थापक और दलित राजनीति के सबसे बड़े नेता थे। दलितों के उत्थान की छटपटाहट और उनके हाथ में सत्ता होने का सपना देखनेवाले कांशी राम ने ही मायावती की क्षमता को पहचाना और उन्हें राजनीति में आने को प्रेरित किया।

१० अक्टूबर

बदरुद्दीन तैय्यबजी (जन्म- १० अक्टूबर)

श्री बदरूद्दीन तैय्यबजी का जन्म १८४४ में हुआ। शिक्षा लंदन में प्राप्त की। १८८० में अंजुमन-ए-इस्लाम के मंत्री नियुक्त हुए। अप्रैल १८६७ में वकालत शुरू की। बंबई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन के अध्यक्ष बने। कांग्रेस की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान रहा और कांग्रेस के अध्यक्ष भी बने। सर सैयद अहमद की कांग्रेस विरोधी नीतियों के कट्टर विरोधी रहे। श्री तैय्यबजी का आग्रह था कि मुसलमान कांग्रेस से पृथक नहीं है। १८९५ में बॉम्बे हाईकोर्ट में न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति हुई। वे बॉम्बे हाईकोर्ट के पहले भारतीय मुख्य न्यायाधीश बने।

११ अक्टूबर

१) लोकनायक जयप्रकाश नारायण

यद्यपि राजनीति के चश्मो से क्रांतिकारियों के अवदान को देखने परखने वालों ने जयप्रकाश नारायण (११ अक्टूबर १९०२ से ८ अक्टूबर १९७९) के साथ कही पक्षपात किया तो कही अवमूल्यन भी तथापि स्वराज्य के लिए उनके प्रयत्नो और सुराज्य स्थापना हेतु कार्यों को किसी भी तरह दृष्टि ओझल नही किया जा सकता। विद्यार्थी आंदोलन, गरम दल के क्रांतिकारियों, गाँधी, नेहरू, इंदिरा का संग साथ, आचार्य विनोबा भावे, राममनोहर लोहिया और मोरारजी देसाई जैसे अपनी-अपनी समझ से लगे देश कल्याण मे ये लोग, जयप्रकाश नारायण की जीवन -यात्रा का मार्गदर्शन करते रहे। उनका निरंतर संघर्ष कभी भुलाया नही जा सकता।

बलिया और भोजपुर राज्यों की सीमाओं पर सिताब दियारा गाँव पावन गंगा के कटाव मे उनकी जन्मभूमि थी। माता फुलरानी और पिता हरसूदयाल की संतति जयप्रकाश नारायण ने सन् १९१९ मे प्रथम श्रेणी मे हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। ब्रजकिशोर प्रसाद की पुत्री प्रभावती के साथ उनका विवाह १६ मई १९२० को संपन्न हुआ। सन् १९२१ मे इण्टरमीडिएट परीक्षा न देकर उन्होने गाँधीजी के असहयोग अवज्ञा आंदोलन में प्रतिभागिता की। विदेश जाने की बलवती इच्छा मे इन्होने स्वावलंबन से अमरीका प्रवास (१६ मई १९२२ सितंबर १९२९) किया और समाजशास्त्र से स्नातकोत्तर उपाधि ओहियो विश्वविद्यालय से अर्जित की। स्वदेश लौटने पर इलाहाबाद मे वे जवाहरलाल नेहरू के साथ आनंद भवन में पारिवारिक सदस्य बनकर रहे। उनका काम था कांग्रेस संगठन को मजबूत बनाना, लेकिन यह काम अंग्रेजों की नजर में संगीन जुर्म था। अत: उनको नजरबंद (सन् १९३२) रखा गया। बिहार भूकंप की त्रासदी के पश्चात कांग्रेस समाजवादी पार्टी का उद्घाटन-अधिवेशन १८ मई १९३४ को पटना में हुआ, जिसमे आचार्य नरेंद्रदेव को अध्यक्ष और जे.पी. (जयप्रकाश नारायण) को महासचिव बनाया गया। सन् १९४२ की प्रसिद्ध क्रांति मे जे.पी. को अभियुक्त बनाकर देवलीकैप, हजारीबाग, नासिक आदि कई जेलों मे रखा गया। हजारीबाग में उन्हें आजाद दस्ते ने मुक्त कराया। सन् १९४७ मे कानपुर में डॉ. राममनोहर लोहिया की अध्यक्षता मे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का अधिवेशन हुआ, जिसमे सोशलिस्ट पार्टी ने कांग्रेस से अपना संबंध विच्छेद कर लिया और सोशलिस्ट पार्टी के रूप मे कांग्रेस के समानांतर संगठन बनाने का प्रयत्न किया। (१९४८-५१) नवंबर में पटना में किसान मार्च का नेतृत्व जे.पी. ने संभाला। जे.पी. ने चंबल के डाकुओं का हृदय परिवर्तन का कठिन काम किया। आचा र्य विनोबा भावे के साथ जे.पी. को श्रेय मिला। जवाहरलाल नेहरू (२७ मई १९६४) डा. राममनोहर लोहिया (१२ अक्टूबर १९६६) और जीवनसंगिनी प्रभावती (१५ अपैल १९७३) के निधन से दुखी जे.पी. ने राजनीति मे दूना जोश दिखाया और संपूर्ण क्रांति का आहवान (१९७४-१९७९) किया। जनता पार्टी सरकार बनवाने मे जे.पी. के प्रयत्न भी थे। लोकनायक जयप्रकाश नारायण निधन के बाद भी, चर्चा में है और उनकी यशकाया अमर है।

आज पूरे देश और प्रांतों का जो इतिहास हम पढ़ रहे हैं उसका अधिकांश भाग अंग्रेजों के समय में लिखा गया। इतिहास लेखन में भी अंग्रेजों की भूमिका रही। राजस्थान का जो इतिहास हमें मालूम२ है उसे सुस्थापित करने का श्रेय मूलत: कर्नल जेम्स टॉड को जाता है। उन्होंने जैन-यति ज्ञानचंद की सहायता से १८२९ में एनल्स एंड एंटीकिटीज ऑफ राजस्थान नामक विशाल एवं विश्वविख्यात ग्रंथ प्रकाशित कर राजस्थान को विश्व के मानचित्र पर प्रतिष्ठित किया। इस ग्रंथ में उदयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, जयपुर, कोटा और बूंदी के राजवंशों का विस्तृत इतिहास समाहित उपस्थित किया। कर्नल टॉड के ग्रंथ से प्रभावित होकर बंगाल के लेखकों, कवियों ने राजस्थान को अपने लेखन का केंद्र बिंदु बनाया। बंगला के काव्य, नाटक, उपन्यास, गल्प साहित्य की विधाएं राजस्थान के सौंदर्य, शौर्य और बलिदान के कथानकों से जगमगा उठीं और राष्ट्रप्रेम की धारा अजस्त्र वेग से प्रवाहित हो चली, जो आप भी रुकी नहीं है। राजस्थान की प्रशंसा में चाहे कुछ भी लिखा जाए, उसका शीर्षक टॉड की मृत्युंजयी वाणी ही रहती आई है।

कर्नल टॉड के महत्व को रेखांकित करते हुए पुरातत्वविद् मुनि विजय जी ने लिखा है- नूतन भारत के मानचित्र में पक्षिमोत्तर

विभाग वाले कोण में राजस्थान के नाम से जो विशाल भूखंड अंकित है और क्षेत्रफल की दृष्टि से नवीन भारत के १५ महाजनपदों में जिसको द्वितीय स्थान प्राप्त है उस विशाल एवं महान राजस्थान के भव्य नाम आद्य निर्माता और उसके जनपदीय गौरव को संसार के सम्मुख प्रथमत: सुप्रसिद्ध करने वाले स्वर्गीय कर्नल टॉड थे। वह केवल राजस्थान की संतानों के लिए ही नहीं, अपितु सारे भारत की प्राणवान संतानों के लिए सदा स्मरणीय और पुण्यश्लोक महान ग्रंथकार तथा परमहितैषी के रूप में ज्ञात एवं उल्लेखनीय रहेंगे। स्वतंत्र भारत को राजस्थान नामक नूतन भद्रजनक की कल्पना देने का श्रेय कर्नल जेम्स टॉड को है। उन्होंने विश्व के इतिहास विषयक समग्र वाङ्मय के असंख्य ग्रंथ रत्नें के पुंज में, सर्वप्रथम राजस्थान के नाम से अंकित और उसके अतीत के इतिवृत्त से अलंकृत एक अपूर्व और अकल्पित ग्रंथ रत्न को समर्पित्त किया है ?

जयप्रकाश नारायण (जन्म- ११ अक्टूबर)

जयप्रकाश नारायण राजनीतिज्ञ और सिद्धांतवादी नेता थे। मातृभूमि के वरदपुत्र जयप्रकाश नारायण ने हमारे देश की सराहनीय सेवा की है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण त्याग एवं बलिदान की प्रतिमूर्ति थे। ये अत्यन्त परिश्रमी व्यक्ति थे। इनकी विलक्षणता की तारीफ स्वयं गांधीजी और नेहरू जैसे लोग किया करते थे। भारत माता को आजाद कराने हेतु इन्होंने तरह-तरह की परेशानियों को झेला।

कभी घोर मार्क्सवादी थे लोकनायक जयप्रकाश नारायण

देश में संपूर्ण क्रांति की अलख जगानेवाले लोकनायक जयप्रकाश नारायण कभी घोर मार्क्सवादी हुआ करते थे, लेकिन महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू से मिलने एवं आजादी की लड़ाई में सक्रिय भूमिका निभाने के बाद उनकी विचारधारा में बदलाव आया। इसके बाद उन्होंने अंग्रेजी शासन के खिलाफ अहिंसक संघर्ष की पुरजोर पैरवी की और उनके क्रांतिकारी नेतृत्व ने १९७० के दशक में भारतीय राजनीतिक की दशा-दिशा ही बदल दी। वरिष्ठ पत्रकार और उनके साथ लंबे समय तक जुड़े रहे रामबहादुर राय कहते हैं कि अमेरिका से पढ़ाई करने के बाद जेपी १९२९ में स्वदेश लौटे। उस वक्त वह घोर मार्क्सवादी हुआ करते थे। वह सशस्त्र क्रांति के जरिए अंग्रेजी सत्ता को भारत से बेदखल करना चाहते थे, हालांकि बाद में बापू और नेहरू से मिलने एवं आजादी लड़ाई में भाग लेने पर उनके इस दृष्टिकोण में बदलाव आया। जेपी का जन्म ११ अक्टूबर, १९०२ को बिहार में सारन के सिताबदियारा में हुआ था। पटना से शुरुआती पढ़ाई करने के बाद वह शिक्षा के लिए अमेरिका भी गए, हालांकि उनके मन में भारत को आजाद देखने की लौ जल रही थी। यही वजह रही कि वह स्वदेश लौटे और स्वाधीनता आंदोलन में सक्रिय हुए। राय ने कहा कि जेपी अपनी पत्नी प्रभावती के कहने पर गांधी से मिलने साबरमती आश्रम गए। यह इत्तेफाक था कि वहां उस वक्त नेहरू भी मौजूद थे। यहीं से नेहरू और जेपी के बीच नजदीकी बढ़ी। नेहरू के कहने पर जेपी कांग्रेस के साथ जुड़े, हालांकि आजादी के बाद वह आचार्य विनोबा भावे से प्रभावित हुए और उनके सर्वोदय आंदोलन से जुड़े। उन्होंने लंबे वक्त के लिए ग्रामीण भारत में इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। उन्होंने आचार्य भावे के भूदान के आहवान का पूरा समर्थन किया। जेपी ने १९५० के दशक में राज्यव्यवस्था की पुनर्रचना नामक एक पुस्तक लिखी। कहा जाता है कि इसी पुस्तक को आधार बनाकर नेहरू ने मेहता आयोग का गठन किया। इससे लगता है कि सत्ता के विकेंद्रीकरण की बात शायद सबसे पहले जेपी ने उठाई थी। लोकनायक के बेमिसाल राजनीतिक जीवन का सबसे बड़ा पहलू यह है कि उन्हें सत्ता का मोह नहीं था, पत्रकार रामबहादुर राय कहते हैं कि जेपी में सत्ता के प्रति कोई मोह नहीं था। वह सत्ता में पारदर्शिता और जनता के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित करना चाहते थे। १९६०-६१ में नेहरू ने उन्हें अपने मंत्रिमंडल में शामिल करने की कोशिश की, लेकिन वह तैयार नहीं

हुए। जेपी ने पांच जून १९७५ को पटना के गांधी मैदान में विशाल जनसमूह को संबोधित किया। यहीं उन्हें लोकनायक की उपाधि दी गई। इसके कुछ दिनों बाद ही दिल्ली के रामलीला मैदान में उनका ऐतिहासिक भाषण हुआ। उनके इस भाषण के कुछ ही समय बाद इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लगाया। दो साल बाद लोकनायक के संपूर्ण क्रांति आंदोलन के चलते देश में पहली बार गैर कांग्रेसी सरकार बनी। जयप्रकाश मैगसायसाय पुरस्कार के सम्मानित हुए और मरणोपरांत उन्हें भारत रत्न से विभूषित किया गया। जेपी ने आठ अक्टूबर १९७९ को पटना में अंतिम सांस ली।

कर्मयोगी थे नानाजी देशमुख (जन्म- ११ अक्टूबर)

नानाजी देशमुख राष्ट्रीय देश के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्मविभूषण से नवाजे गए नानाजी देशमुख शिक्षा, स्वास्थ्य और ग्रामीण लोगों के बीच स्वावलंबन के लिए किए गए कार्यों के लिए सदैव याद किए जाते हैं। भारतीय जनसंघ के संस्थापक रहे नानाजी ने ६० साल की आयु के बाद राजनीति से सन्यास ले लिया था। अपना शेष जीवन उन्होंने चित्रकूट के गाँवों का कल्याण करने में बिताया और उनके विकल्प की एक नई गाथा लिखी।

नानाजी देशमुख अथवा चंडिकादास अमृतराज देशमुख राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मजबूत स्तंभ और प्रख्यात समाजसेवक थे। देश के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्मविभूषण से नवाजे गए नानाजी देशमुख शिक्षा, स्वास्थ्य और ग्रामीण लोगों के बीच स्वावलंबन के लिए किए गए कार्यों के लिए सदैव याद किए जाते हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक, संघ के विचारों के प्रमुख प्रवर्तक देश में कांग्रेस विरोधी राजनीतिक दलों को एकजुट करके आपतकालीन समय विरोधी संघर्ष को अंजाम तक पहुंचानेवाले नानाजी देशमुख का चित्रकूट में ९४ की आयु में निधन हो गया। परभणी जिले कडोली गांव में जन्मे नानाजी देशमुख बचपन से ही लोकमान्य तिलक के विचारों से प्रभावित थे। वे एक सफल राजनीतिक संगठक थे पर अपनी साठ वर्ष की आयु पूरी करने के बाद उन्होंने स्वयं को समाजसेवा के लिए समर्पित कर दिया। वर्ष १९६९ में उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की और अंतिम सांस तक उन्होंने उसका सफल संचालन किया। सामान्य परिवारों में आत्मनिर्भरता का विश्वास जगाने के लिए समर्पित प्रचारकों की पीढ़ी तैयार करने का अभिनव प्रयोग इस केंद्र में अनेक वर्षों से किया जा रहा है। कृषि विकास केंद्र, गोशाला, जलसंरक्षण, ऊंची किस्म के बीजों का उत्पादन और आपूर्ति तथा कृषि में संशोधन के विविध प्रयोग करके देश को कृषि क्षेत्र की महासत्ता बनाने का स्वप्न नानाजी ने देखा था और दीनदयाल शोध संस्थान के विविध केंद्र उनके इस स्वप्न को साकार करने के लिए प्रयासरत है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. हेगडेवार के साथ नानाजी का बचपन से ही संपर्क था। १९४० में डॉ. हेगडेवार के निधन के बाद नानाजी ने स्वयं को संघ के कार्यों में झोंक दिया। उत्तर प्रदेश के साथ नानाजी का निकट का संबंध था। संघ के पूर्णकालिक कार्यकर्ता के रूप में काम करते हुए प्रतिकूलताओं के बावजूद उन्होंने संघ के विचार उत्तर प्रदेश के गांव-गांव तक पहुंचाए। पहले तीन महीने में ही नानाजी ने असंख्य सामान्य परिवार से नाता जोड़ लिया और घर-घर जाकर शिक्षा का महत्व समझाया। १९५० में उन्होंने देश का पहला बालमंदिर शुरू किया। संघ ने १९४७ में राष्ट्रधर्म और पांचजन्य नियतकालीन पत्रिकाओं और स्वदेश नामक दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन शुरू करने का निश्चय

किया। अटल बिहारी वाजपेयी को संपादक और नानाजी को मार्गदर्शक नियुक्त किया गया। नानाजी को इन प्रकाशनों की व्यवस्थापकीय संचालन की जिम्मेदारी सौंपी गई। आर्थिक व सामाजिक सभी प्रकार की चुनौतियों का सहज भाव से सामना करते हुए उन्होंने इस परियोजना को सफल व लोकप्रिय बनाया। १९४८ में संघ पर लगे प्रतिबंध के दौरान नानाजी को भूमिगत होना पड़ा पर उन्होंने कुछ प्रकाशनों का कार्य यथावत जारी रखा। प्रतिबंध हटने के बाद जनसंघ की स्थापना हुई और नानाजी उत्तर प्रदेश में एक प्रबल राजनैतिक दल के रूप में उभरकर सामने आया। १९६७ में उत्तर प्रदेश में बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए चौधरी चरण सिंह के नेतृत्व में बनी पहली गठबंधन सरकार में नानाजी ने जनसंघ को महत्वपूर्ण स्थान दिलाकर अपने राजनीतिक कौशल्य का परिचय देते हुए भारतीय राजनीति में चाणक्य की उपाधि प्राप्त की। उत्तर प्रदेश में पहली गैर-कांग्रेसी सरकार की स्थापना नानाजी के राजनीतिक कुशलता का ही परिणाम थी। दीनदयाल उपाध्याय के मार्गदर्शन, अटल बिहारी वाजपेयी के वक्तृत्व और नानाजी की राजनीतिक रणनीति व संगठनात्मक कुशलता के चलते उत्तर प्रदेश में जनसंघ प्रबल होता गया और नानाजी को उत्तरप्रदेश का नाना फणनवीस कहा जाने लगा। डॉ. राम मनोहर लोहिया और नानाजी देशमुख की प्रगाढ़ मैत्री के कारण जनसंघ और समाजवादी पार्टी एक दूसरे के निकट आए। इस निकटता से भारतीय राजनीति को नई दिशा मिली।

इस बीच नानाजी को विनाबा भावे से संपर्क का अवसर मिला और उनसे प्रभावित होकर उन्होंने भूदान आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया और उससे प्रेरित होकर उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन में खुद को झोंक दिया। आपातकाल में जयप्रकाश नारायण की छाया बनकर नानाजी ने देशभर में कांग्रेस विरोधी लहर का निर्माण किया। आपातकाल के दौरान ही जनता पार्टी की स्थापना हुई जिसके नानाजी एक प्रमुख शिल्पकार थे। मोरारजी देसाई के नेतृत्व में केंद्र में जनता पार्टी की सरकार बनी तो नानाजी को मंत्री पद का प्रस्ताव दिया गया जिसे उन्होंने विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार उन्होंने यह सिद्ध किया कि राजनीति उनके लिए भवितव्य बनाने का साधन नहीं बल्कि समाजसेवा का साधन था। यह अकारण नहीं कि देश के सभी राजनेताओं में नानाजी का एक अलग आदरपूर्ण स्थान था। आयु के साठ वर्ष पूरे होने के बाद उन्होंने सक्रिय राजनीति से संन्यास लेकर खुद को सामाजिक कार्यों में लगा दिया। तब से वे दीनदयाल शोध संस्थान के विविध सामाजिक उपक्रमों को दिशा देते रहे। उनके निधन से भारतीय जनता पार्टी का ही नहीं बल्कि सामाजिक कार्यों का आधार स्तंभ टूट गया है।

नानाजी देशमुख के निधन के साथ ही देश ने एक प्रेरणास्पद, निर्भीक एवं कर्मठ व्यक्तित्व खो दिया है। वे ऐसे आत्मार्पित कार्यकर्ता थे जो राजनीति में रहने के बाद भी उसके दोषों से पूरी तरह अलिप्त रहे। वे सदैव मूल्यों और सिद्धांतों के लिए जिए। उनकी सक्रियता और कर्मठ जीवन ने असंख्य लागों को अनुप्रणित किया। महाराष्ट्र के परभणी जिले के कडोली गांव में ११ अक्टूबर १९१६ को नानाजी देशमुख का जन्म हुआ। वे संघ के संस्थापक सदस्यों में से एक थे तथा डॉ. हेडगेवार व गुरुजी गोलवलकर के निकटवर्तियों में थे। उन्होंने अपना करियर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचार के रूप में उत्तर प्रदेश से शुरू किया था। वे संगठन क्षमता के धनी थे और सिर्फ ३ वर्षों में उन्होंने उत्तर प्रदेश में संघ की २५० से ज्यादा शाखाएं बना डालीं। जब १९७५ में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आपातकाल लागू किया था तो उसके खिलाफ आंदोलन करनेवालों में नानाजी देशमुख प्रमुख थे। उन्होंने स्व. जयप्रकाश नारायण से कहा था कि आपके पास नेता तो हैं, कार्यकर्ता नहीं हैं। हमारे संघ के कार्यकर्ताओं की मदद लीजिए और लोकतंत्र का गला घोटनेवाली इमरजेंसी

के खिलाफ संघर्ष छेड़ दीजिए। जयप्रकाश नारायण के सच्चे साथी के रूप में नानाजी ने आपातकाल का तुमुल विरोध किया। उन्होंने भूमिगत रहकर आंदोलन किया तथा गैर कांग्रेसी ताकतों को एकजुट किया। नानाजी की विशेषता थी कि संघ, जनसंघ में रहने पर भी अन्य पार्टियों के नेताओं से उनकी मित्रता व अपनत्व था। अन्य दलों के नेता भी उनका बहुत आदर करते थे। नानाजी ने आचार्य विनोबा भावे के भूदान आंदोलन में काम किया तथा जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन में भी सहभागी हुए। जनता पार्टी के गठन में उनका बहुत बड़ा योगदान था। वे बलरामपुर से लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए थे परंतु भारी आग्रह के बावजूद उन्होंने मंत्री पद स्वीकार नहीं किया। ६० वर्ष की आयु में सक्रिय राजनीति से हटकर उन्होंने एक मिसाल कायम की। उन्होंने अपनी सारी ऊर्जा रचनात्मक कार्यों में लगा दी। उन्होंने उत्तर प्रदेश के गोंडा जिले के महाराजगंज को जयप्रकाश नारायण और उनकी पत्नी प्रभावती के नाम पर जयप्रभा ग्राम में बदल दिया। उसे आदर्श ग्राम का रूप दिया जो अपने आप में स्वयंपूर्ण था। वहां लोगों को सहकारिता व सहयोग की सीख देते हुए नानाजी ने अपना आश्रम बना लिया था। दीनदयाल शोध संस्थान के अंतर्गत रचनात्मक कार्यकलापों की व्यापक श्रृंखला उन्होंने आगे बढ़ाई। इसके बाद नानाजी ने चित्रकूट में अपने सपनों का भारत खोजने का प्रयास किया। वहां उन्होंने ग्रामोदय विद्यापीठ स्थापित किया जिसके वे कुलपति थे। नागपुर के लक्ष्मीनगर में नानाजी देशमुख की प्रेरणा से बालजगत का निर्माण हुआ जिसके लिए नानाजी के साथ उनके मित्र तथा तत्कालीन प्रधानमंत्री चंद्रशेखर भी आए थे। लेखन और पत्रकारिता से भी उन्हें चाव था। काफी समय तक वे संघ के मुखपत्र के मार्गदर्शक रहे। डॉ. राममनोहर लोहिया व चौधरी चरणसिंह से भी उनकी निकटता थी। उनके सामाजिक कार्यों को देखते हुए १९९९ में उन्हें राज्यसभा में मनोनीत किया गया तथा चित्रकूट में रेनवॉटर हार्वेस्टिंग में काम के लिए उन्हें पद्मविभूषण देकर गौरवान्वित किया गया। नानाजी ने दधीचि मुनि के आदर्शों के अनुरूप अपने शरीर का मोह नहीं रखा। उनकी इच्छानुरूप उनका पार्थिव शरीर एम्स को दान कर दिया गया जिससे चिकित्सा शास्त्र के विद्यार्थी शरीर रचना का अध्ययन कर सकेंगे। ऐसे कर्मयोगी और अजात शत्रु का सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। पं. दीनदयाल उपाध्याय के बाद नानाजी देशमुख ही ऐसे परिवर्तन पसंद, सिद्धांतवादी नेता हुए जिन्होंने हजारों लोगों के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया। पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को अपने चित्रकूट दौरे में इस बात से गहरा आश्चर्य हुआ था कि वहां आसपास के ८० गांव मामले-मुकदमे से पूरी तरह मुक्त हैं। यह नानाजी के कारण ही संभव हो सका जिन्होंने कहा था कि लोग यदि मुकदमेबाजी में फंसे रहेंगे तो विकास कैसे होगा। वे समाजसेवा की जीती जागती मिसाल थे जिन्होंने पं. दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद को निरंतर आगे बढ़ाया।

सिस्टर निवेदिता (निधन- ११ अक्टूबर)

सिस्टर निवेदिता का पूरा नाम मार्गेट एलिजाबेथ नोबल था। इन्हें १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना और राष्ट्रीय चेतना, एकता, पुनर्जागरण व राष्ट्रीय स्वाधीनता के नए विचार, जो १९४७ में भारत की स्वतंत्रता में फलीभूत हुए, को बढ़ावा देनेवाले प्रखर वक्ताओं में से एक माना जाता है।

१२ अक्टूबर

शिवराज पाटिल (जन्म- १२ अक्टूबर)

शिवराज विश्वनाथ पाटिल एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, वर्तमान पंजाब राज्य के राज्यपाल, केंद्रशासित प्रदेश चंडीगढ़ के प्रशासक और पूर्व लोकसभा अध्यक्ष हैं। शिवराज पाटिल सर्वसम्मति से दसवीं लोकसभा के अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे जिसका गौरव बहुत कम लोगों को ही प्राप्त हुआ है। अपने उदार दृष्टिकोण, सौम्य स्वभाव और अनुकरणीय धैर्य व सदैव निष्पक्षता बरतने के गुण के कारण सभी की कार्यवाहियों को चलाने में वह उत्कृष्ट संचालक साबित हुए। ये प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की सरकार में गृहमंत्री भी रहे हैं।

निदा फाजली (जन्म- १२ अक्टूबर)

निदा फाजली आधुनिक उर्दू शायरी के बहुत ही लोकप्रिय शायर हैं। यह शायर हिन्दी के पाठकों के लिए भी उतना ही सुपरिचित है जितना उर्दू के पाठकों के लिए। इनका पूरा नाम मुकितदा हसन निदा फाजली है, जो बाद में निदा फाजली के रूप में प्रसिद्ध हुआ। निदा फाजली इनका लेखन का नाम है। निदा का अर्थ है स्वर/आवाज। फाजिला कश्मीर के एक इलाके का नाम है जहाँ से निदा के पूर्वज आकर दिल्ली में बस गए थे, इसलिए उन्होंने अपने उपनाम में फाजली जोड़ा।

आत्माराम (जन्म- १२ अक्टूबर)

डॉ. आत्माराम अर्थपरक वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी के पक्षधर एक भारतीय वैज्ञानिक थे, जिनका चश्मे के काँच के निर्माण में सराहनीय योगदान रहा था। इनकी स्मृति में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा आत्माराम पुरस्कार दिया जाता है।

१३ अक्टूबर

सी.के. नायडू (जन्म- १३ अक्टूबर)

कोट्टारी कंकैया नायडू भारत की क्रिकेट टीम के प्रथम टेस्ट कप्तान रहे थे। सी.के. नायडू उस उम्र तक क्रिकेट खेलते रहे, जिसके बारे में सोचना भी आज के खिलाड़ियों के लिए दिवास्वप्न है। नायडू की उस समय की फिटनेस आज के उन खिलाड़ियों के लिए एक सबक है, जो दूसरे तीसरे मैच के बाद ही चोटिल हो जाते हैं। ३७ साल की उम्र में जब आज खिलाड़ी सेवानिवृत्त होने लगते हैं, तब सी.के. नायडू ने टेस्ट मैच खेलना शुरू किया था। वह ६८ साल तक स्वस्थ रहकर क्रिकेट खेलते रहे थे।

भुलाभाई देसाई (जन्म- १३ अक्टूबर)

स्वतंत्रता सेनानी और विख्यात वकील। आजाद हिंद फौज के तीन अफसरों शाहहनवाज खान, प्रेमकुमार सहगल और गुरबख्श सिंह ढिल्लों पर लालकिले में देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया, उनकी पैरवी देसाई ने की। ऐनी बेसेंट के ऑल इंडिया होमरूल लीग से अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत की थी। स्वदेशी सभा की स्थापना की और विदेश कंपनियों के सामानों का बहिष्कार किया। १९३२ में गिरफ्तार कर मुकदमा चलाया गया और जेल की सजा हुई। सेंट्रेल लेजिस्लेटिव असेंबली में कांग्रेस पार्टी के नेता निर्वाचित। आजादी के ठीक पहले मृत्यु हो गई।

१४ अक्टूबर

लाला हरदयाल

१४ अक्टूबर १८८४ को क्रांतिकारी व गदर पार्टी के संस्थापक लाला हरदयाल का जन्म दिल्ली में हुआ था। वे पंजाब नामक अंग्रेजी पत्र के संपादक बने। गिरफ्तारी से बचने के लिए वे पेरिस चले गये और वहां वंदे मातरम और तलवार का संपादन किया। वे १९१० में सेनफ्रांसिस्को में गदर नामक पत्र निकाला और भारत में अंग्रेजी अत्याचार की ओर दुनिया का ध्यान खींचा। इसके बाद उन्होंने गदर पार्टी की स्थापना की। इसकी शाखाएं कनाडा, चीन, जापान में भी खोली गयीं। वे इसके महासचिव थे। उन्होंने भारत में सशस्त्र क्रांति के लिए दो जहाजों में भरकर बंदूकें बंगाल भेजी थीं जो मुखबिरों की सूचना पर पकड़ ली गई। चार मार्च १९३९ को अमेरिका में ही उनका निधन हुआ।

लाला हरदयाल प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। लाला हरदयाल जी ने गदर पाटी की स्थापना की थी। विदेशों में भटकते हुए अनेक कष्ट सहकर लाला हरदयाल जी ने देशभक्तों को भारत की आजादी के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित किया।

बहादुर शाह प्रथम (जन्म- १४ अक्टूबर)

बहादुर शाह प्रथम का जन्म १४ अक्टूबर, सन १६४३ ई. में बुरहानपुर, भारत में हुआ था। बहादुर शाह प्रथम दिल्ली का सातवाँ मुगल बादशाह (१७०७-१७१२ ई.) था। शहजादा मुअज्जम कहलाने वाले बहादुरशाह, बादशाह औरंगजेब के दूसरे पुत्र थे। अपने पिता के भाई और प्रतिलंली शाहशुजा के साथ बड़े भाई के मिल जाने के बाद शहजादा मुअज्जम ही औरंगजेब के संभावी उत्तराधिकारी थे। बहादुर शाह प्रथम को शाहआलम प्रथम या आलमशाह प्रथम के नाम से भी जाना जाता है।

निखिल बैनर्जी (जन्म- १४ अक्टूबर)

निखिल रंजन बैनर्जी २० वीं सदी में भारत के प्रमुख सितार वादकों में से एक थे। निखिल रुंजन बैनजी को १९८७ में भारत सरकार ने कहा के क्षेत्र में पद्मभूषण, १९६८ में पद्म श्री और १९७४ में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया था।

मोहन धारिया (निधन- १४ अक्टूबर)

मोहन धारिया भारत के पूर्व केंद्रीय मंत्री, वकील एवं सामाजिक कार्यकर्ता थे। लोकसभा और राज्यसभा के दो बार सदस्य रह चुके मोहन धारिया राज्य स्तरीय व राष्ट्र स्तरीय राजनीति का जाना-पहचाना नाम है। वह १९७१ में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के कार्यकाल में राज्य मंत्री रहे लेकिन १९७५ में आपातकाल लागू होने के बाद उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी थी। इसके बाद वे भारतीय लोकदल में शामिल हो गए थे और १९७७ में प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के कार्यकाल में वाणिज्य मंत्री बने थे।

अरुण खेत्रपाल (जन्म- १४ अक्टूबर)

सेकेंड लेफ्टिनेंट अरुण खेत्रपाल परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति है। इन्हें यह सम्मान सन १९७१ में मरणोपरांत मिला। १९७१ में हुआ भारत-पाकिस्तान युद्ध, जिसमें बांग्लादेश पाकिस्तान से छूटकर एक स्वतंत्र देश की तरह जन्मा, भारत के इतिहास में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

१५ अक्टूबर

अब्दुल कलाम (जन्म- १५ अक्टूबर)

अब्दुल पकिर जैनुल्लाब्दीन अब्दुल कलाम जिन्हें डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के नाम से जाना जाता है, भारत के पूर्व राष्ट्रपति, प्रसिद्ध वैज्ञानिक और अभियंता के रूप में विख्यात है। इनका राष्ट्रपति कार्यकाल २५ जुलाई २००२ से २५ जुलाई २००७ तक रहा। इन्हें मिसाइल मैन के नाम से भी जाना जाता है। यह एक गैर राजनीतिक व्यक्ति रहे हैं। विज्ञान की दुनिया में चमत्कारिक प्रदर्शन के कारण ही राष्ट्रपति भवन के द्वार इनके लिए स्वत: खुल गए। जो व्यक्ति किसी क्षेत्र विशेष में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करता है, उसके लिए सब सहज हो जाता है और कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता। अब्दुल कलाम इस उद्धरण का प्रतिनिधित्व करते नजर आते हैं।

उत्कृष्ट शिक्षक भी थे डॉ. कलाम

भारतरत्न, मिसाइलमैन देश के ११ वें राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म १५ अक्टूबर १९३१ को धनुषकोटि गांव, रामेश्वरम तमिलनाडु के एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। अपनी लगन, मेहनत व कर्म के प्रति निष्ठा के बल पर कलाम जी ने देश के राष्ट्रपति पद को सुशोभित किया। वे २५ जुलाई २००२ से २५ जुलाई २००७ तक भारत के राष्ट्रपति रहे।

अपने कार्यकाल के दौरान उन्होंने विभिन्न योजनाओं को देश की प्रगति के लिए प्रस्तुत किया। अपनी सेवानिवृत्ति के बाद एक शिक्षक के रूप में वे निरंतर सक्रिय रहे। २७ जुलाई २०१५ को भी वह शिलांग में आई.आई. एम. के छात्रों को संबोधित करने गये थे और उन्हें संबोधित करते हुए ही बेहोश होकर गिरे तथा अनंत की यात्रा पर निकल गये।

एक शिक्षक के रूप में उन्हें देखने और सुनने का अवसर इन पंक्तियों के लेखक को उनकी मृत्यु के एक सप्ताह पूर्व २१ जुलाई २०१५ को बिजनौर (उ.प्र.) स्थित आर.वी.आई.टी कॉलेज में मिला। उनके व्याख्यान में छात्रों के अभिभावकों को भी बुलाया गया था। यहां लेखक का पुत्र अमन पालिटेक्निक अंतिम वर्ष का छात्र है। इसलिए लेखक को यह अवसर प्राप्त हुआ। उनके आते ही हाल में सब दर्शक छात्र श्रद्धावश खड़े हो गये। हाथ हिलाकर सबका अभिवादन करते व स्वीकारते कलाम जी के दर्शन मात्र ने ही रोमांचित कर दिया। रोम-रोम पुलकित था, नयन खुशी व रोमांच से छलक उठे। उस अनुभूति को शब्दों में बांधना सरल नहीं।

जब डॉ. अब्दुल कलाम जाकिर जैनुलाबदीन अब्दुल कलाम जी बोलने खड़े हुए तो वातावरण में शांत माहौल हो गया। उन्होंने बच्चों को शपथ दिलायी।

डॉ. कलाम का संबोधन अंग्रेजी में था। उन्होंने सात शपथ दिलायी थीं। तकनीक और प्रोद्योगिकी जीवन भर का मिशन है, इसलिए मैं काम करूंगा और सफलता पाऊंगा। यदि मेरे मन में कोई विचार आता है तो मैं उस पर आविष्कार करूंगा, खोज करूंगा। मुझे अपना बड़ा तकनीकी लक्ष्य तय करना है। मेरे दोस्त भी महान वैज्ञानिक होंगे। मैं यह विश्वास करता हूं कि कोई भी समस्या मुझे हरा नहीं सकती, हर समस्या को मैं अच्छे से हल कर सकता हूं। मैं अपनी समस्या को समाप्त करने के लिए काम ही काम करता रहूंगा। मेरा राष्ट्रीय ध्वज मेरे हृदय में रहेगा और मैं राष्ट्र पर गौरव करूंगा।

इस शपथ के माध्यम से उन्होंने छात्रों को सहज रूप से जमीन की प्रगति व राष्ट्र की प्रगति के मूलमंत्र से अवगत करा

दिया था। डॉ. कलाम ने कल की शिक्षा व्यवस्था व वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का अंतर स्पष्ट करते हुए संस्थान को भी उसके कर्तव्यों व दायित्वों से परिचित कराया था। उन्होंने कहा कि कल प्राकृतिक संसाधन ही शक्ति थे, आज ज्ञान ही शक्ति है। संस्थान ज्ञान के साथ स्वयं ही सफल होता है। कल पाठ्यक्रम ही माडल था। आज तालमेल जरूरी है। संस्थान का उद्देश्य तालमेल व जोड़ना ही होना चाहिए।

डॉ. कलाम ने आगे कहा कि कल नेतृत्वकर्ता ही नियंत्रण करते थे। आज नेतृत्वकर्ता सशक्त बनाते हैं। शिक्षित करते हैं। संस्थान की उन्नति स्थायी विकास के द्वारा स्वयं ही होती है। कल हिस्सेदारी की प्राथमिकता थी। आज ग्राहक की हिस्सेदारी प्राथतमिक है। संस्थान को सबकी हिस्सेदारी के प्रति संवेदनशील होना चाहिए। कल कर्मचारी आर्डर लेते थे, आज सहयोगी दल की भागीदारी से कोई निर्णय होता है। संस्थान को सहयोगी दल भावना पैदा करनी चाहिए। कल वरिष्ठता से प्रतिष्ठा की पहचान होती थी, आज सृजनशीलता से प्रतिष्ठा की पहचान होती है। संस्थान नवपरिवर्तन व रचनात्मकता द्वारा पहचाना जाएगा। कल आवश्यकतानुसार उत्पादन होता था, आज प्रतिस्पर्धा में उत्पादन होता है। संस्थान ज्ञान, प्रबंधन व तकनीकी अधिकता के महत्व से ही चलेगा। कल मूल्य अतिरिक्त थे। आज मूल्य ही सब कुछ है। संस्थान को हर स्तर पर मूल्यों को ही प्राथमिकता देनी होगी। कल प्रत्येक प्रतिस्पर्धी था, आज हर कोई ग्राहक है। संस्थान आपके सुझाव लेकर उन पर कार्य करेगा। पहले वृद्धि से मुनाफा होता था, आज ईमानदारी से कार्य व सफलता मिलती है। संस्थान को कार्य व सफलता का ईमानदारी से आत्मसात करना चाहिए और अपने विद्यार्थियों में इस प्रकार की संस्कृति पैदा करनी चाहिए। इस प्रकार डॉ. कलाम ने एक शिक्षक के रूप में न केवल छात्रों को सफलता के मूल मंत्र दिए वरन संस्थान की भी सफलता के लिए टिप्स दिए।

विशाल व्यक्तित्व और विकासशील विचारों से युवा वर्ग के दिल दिमाग में गहरी पैठ बनानेवाले पूर्व राष्ट्रपति और मिसाइलमैन डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की जयंती पर वाचन प्रेरणा दिवस मनाया जा रहा है। सरकार ने गैरकृषि कॉलेजों को वाचन संबंधी कार्यक्रमों को आयोजित करने का आदेश दिया है।

डॉ. कलाम ने अपने विचारों व कर्तव्यों के बल पर भारतीयों में देश को महासत्ता बनाने के लिए आत्मविश्वास भरा था। डॉ. कलाम ने अपने लेखन से सभी को प्रेरणा दी है। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य है कि अधिक से अधिक संख्या में स्कूली छात्र उनकी किताबों को पढ़ें। उच्च व तकनीकी शिक्षा विभाग के अधीन १४ गैरकृषि विश्वविद्यालयों में डॉ. कलाम की दी विंग्स ऑफ फायर, इगनाइटेड माइंड, इंडोमिटेबल इंडिया और इंडियरा २०२० जैसी अनेक पुस्तकों का पठन कर उनके विचारों पर चर्चासत्र, सेमिनार आदि का आयोजन करने के लिए कहा गया है। वहीं दुनिया भर के लेखकों से स्कूली बच्चे परिचित हों इसके लिए स्कूलों को देश-विदेश की किताबों की प्रदर्शनी लगाने कहा गया है। साथ ही स्कूलों को बुक फेयर, लाइब्रेरी अपडेट, किसी किताब पर विचार-विमर्श आदि करने के भी निर्देश दिए गए हैं। इसके अलावा, ज्यादा किताबें पढ़नेवाले शिक्षकों और छात्रों को सम्मानित करने के लिए भी स्कूलों को कहा गया है।

विद्यार्थियों को कितनी देर और कितनी पुस्तकें पढ़ी जाएं, कॉलेजों को इसका प्रारूप तैयार करने के आदेश दिए गए हैं और छात्रों को सूचित करने के लिए कहा गया है। इसके अलावा वाचन और प्रबोधन कार्यक्रमों के आयोजन का भी आदेश है। समाज के दूसरे वर्ग में वाचन के प्रति प्रेरित करने के लिए पुस्तकालयों का सहयोग आवश्यक है। इस आदेश के अनुसार व्वाट्सएप, इंटरनेट, फेसबुक और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया के माध्यम से ऐसी सूचनाओं को फैलाने के लिए कहा गया जिससे लोगों को पठन की प्रेरणा मिले। विद्यार्थी, शिक्षक, सर्वसामान्य वाचक के अलावा दोस्त, परिवार के

सदस्य आदि को एक पुस्तक उपहार स्वरूप प्राथमिकता के तौर देने के लिए कहा गया है।

पठन प्रेरणा दिवस मनाने के पीछे का उद्देश्य यही है कि डॉ. कलाम के विचारों का प्रसार किया जा सके। स्कूलों में १५ अक्टूबर समारोह का आयोजन लगभग सभी स्कूलों में होंगे। राज्य सरकार ने कक्षा तीन से लेकर आठवीं तक के सभी छात्रों को स्कूलों में इस दिन बैग लेकर आने से मना किया गया है। इस दिन को सफल बनाने में सभी लोगों का योगदान महत्वपूर्ण है।

मनुष्य को कठिनाइयों की आवश्यकता होती है, क्योंकि सफलता का आनंद उठाने के लिए ये जरूरी हैं।

इससे पहले कि सपने सच हों, आपको सपने देखने होंगे। महान सपने देखनेवालों के महान सपने हमेशा पूरे होते हैं। अपने उद्देश्य में कामयाब होने के लिए आपको अपने लक्ष्य के प्रति एकचित्त निष्ठावान होना पड़ेगा।

सपना वो नहीं है जो आप नींद में देखें, सपने वो हैं जो आपको नींद ही नहीं आने दें। कठिनाइयों को यह जान लेने दो कि आप उससे भी ज्यादा कठिन हो। जीवन में कठिनाइयां हमें बर्बाद करने नहीं आती हैं, बल्कि यह हमारी छुपी हुई सामर्थ्य शक्तियों को बाहर निकलने में हमारी मदद करती है। आत्मविश्वास और कड़ी मेहनत, असफलता नामक बीमारी को मारने के लिए सबसे बढ़िया दवाई है। ये आपको एक सफल व्यक्ति बनाती है।

भारत के पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, गरीब मछुआरे के बेटे थे। बचपन में अखबार बेचा करते थे। आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद वे पढ़ाई करते रहे। सकारात्मक विचारों के कारण ही उन्होंने भारत की प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनेक सफलताएं हासिल की। अपने आशावादी विचारों से वे आज भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में वंदनीय हैं। उन्हें मिसाइल मैन के नाम से जाना जाता है। हमारे देश में ही नहीं अपितु पूरे विश्व में ऐसे अनेक लोग हैं जिन्होंने विपरीत परिस्थिति में भी अपनी सकारात्मक वैचारिक शक्ति से इतिहास रचा है।

रमन सिंह (जन्म- १५ अक्टूबर)

रमन सिंह एक भारतीय राजनेता और छतीसगढ़ के वर्तमान मुख्यमंत्री हैं। भारतीय जनता पार्टी के नेता रमन सिंह १९९० और १९९३ में मध्य प्रदेश विधानसभा के सदस्य रहे। उसके बाद सन १९९९ में वे लोकसभा के सदस्य चुने गये। १९९९ और २००३ में उन्होंने भारत सरकार में राज्य मंत्री का भी पद संभाला। १२ दिसम्बर २०१३ को रमन सिंह ने लगातार तीसरी बार छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री पद की शपथ ली।

१६ अक्तूबर

ऑस्कर वाइल्ड

अंग्रेजी लेखन के इतिहास में ऑस्कर वाइल्ड एक महान नाम हैं। उन्हें होमोसेक्सुएलिटी (आदमियों के साथ संबंध) के आरोप में जेल भेज दिया गया था। इस दौरान ऑस्कर वाइल्ड ने अपने पार्टनर के नाम केहतरीन खत लिखे। इन पत्रों की स्टाइल प्रेम से भरी हुई थी और बाद में बहुत पसंद की गई।

नवीन पटनायक (जन्म- १६ अक्टूबर)

नवीन पटनायक भारत के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ एवं ओड़ीशा के वर्तमान मुख्यमंत्री हैं। वर्ष २०१४ में ओडिशा विधानसभा चुनावों में बीजू जनता दल (बीजद) को शानदार जीत दिलानेवाले नवीन पटनायक ने लगातार चौथे कार्यकाल के लिए २१ मई, २०१४ मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। लगातार चौथी बार मुख्यमंत्री बननेवाले नवीन पटनायक ओड़िशा के पहले मुख्यमंत्री हैं। उड़ीसा के बाजू जनता दल संस्थापक और दिग्गज नेता नवीन पटनायक पूर्व मुख्यमंत्री बीजू पटनायक के पुत्र हैं।

विनय मोहन शर्मा (जन्म- १६ अक्टूबर)

विनय मोहन शर्मा का वास्तविक नाम पं. शुकदेव प्रसाद तिवारी है। वैसे वीरात्मा उपनाम से भी इन्होंने कुछ कविताएँ लिखी हैं। अपने शोध-ग्रंथ एवं कुछ निबन्धों में उन्होंने अंतरप्रांतीय साहित्यों (हिन्दी और मराठी) के तुलनात्मक अध्ययन को उपस्थित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

लच्छू महाराज (जन्म- १६ अक्टूबर)

लच्छू महाराज भारत के जानेमाने तबला वादक थे। उन्होंने बनारस घराने की तलबा बजाने की परम्परा को आगे बढ़ाया था। उनके कई शिष्य देश-विदेश में तबला बजा रहे हैं। लच्छू महाराज बेहद सादगी पसंद व्यक्ति थे, यही कारण था कि उन्होंने कभी कोई सम्मान ग्रहण नहीं किया।

१७ अक्टूबर

हिंदी उपन्यासकार शिवानी

१७ अक्टूबर, १९२३ को हिंदी उपन्यासकार शिवानी का जन्म राजकोट (गुजरात) में हुआ था। उनका मूल नाम गौरा पंत था। वे मूलरूप से कुमाऊं (उत्तराखंड) की निवासी थीं, परंतु जीवन का अधिकांश समय लखनऊ में बिताया। शांति निकेतन से शिक्षा ग्रहण करने के कारण उनके जीवन पर बांग्ला साहित्य और संस्कृति का गहरा प्रभाव था। साहित्यिक सेवाओं के लिए भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया। उनकी कृतियों में आमादेर शांति निकेतन, स्मृति कलश, कृष्णकली, कालिंदी, भैरवी, स्वयं सिद्धा आदि प्रमुख हैं। २१ मार्च, २००३ को दिल्ली में उनका निधन हुआ।

हिन्दी की सुप्रसिद्ध उपन्यासकार थीं। हिंदी साहित्य जगत में शिवानी एक ऐसी शख्सियत रहीं जिनकी हिंदी, संस्कृत, गुजराती, बंगाली, उर्दू तथा अंग्रेजी पर अच्छी पकड़ रही और जो अपनी कृतियों में उत्तर भारत के कुमायूँ क्षेत्र के आसपास की लोक संस्कृति की झलक दिखलाने और किरदारों के बेमिसाल चरित्र चित्रण करने के लिए जानी गई। महज १२ वर्ष की उम्र में पहली कहानी प्रकाशित होने से लेकर उनके निधन तक उनका लेखन निरंतर जारी रहा। उनकी अधिकतर कहानियां और उपन्यास नारी प्रधान रहे। इसमें उन्होंने नायिका के सौंदर्य-और उसके चरित्र का वर्णन बड़े दिलचस्प अंदाज में किया।

स्वामी रामतीर्थ (निधन- १७ अक्टूबर)

स्वामी रामतीर्थ एक हिन्दू धार्मिक नेता थे, जो अत्यधिक व्यक्तिगत और काव्यात्मक ढंग के व्यावहारिक वेदांत को पढ़ाने के लिए विख्यात थे। रामतीर्थ वेदांत की जीती जागती मूर्ति थे। उनका मूल नाम तीरथ राम था। वह मनुष्य के दैवी स्वरूप के वर्णन के लिए सामान्य अनुभवों का प्रयोग करते थे। रामतीर्थ के लिए हर प्रत्यक्ष वस्तु ईश्वर का प्रतिबिंब थी। अपने छोटे से जीवनकाल में उन्होंने एक महान समाज सुधारक, एक ओजस्वी वक्ता, एक श्रेष्ठ लेखक, एक तेजोमय सन्यासी और एक उच्च राष्ट्रवादी का दर्जा पाया। स्वामी रामतीर्थ जिसने अपने असाधारण कार्यों से पूरे विश्व में अपने नाम का डंका बजाया।

दूधनाथ सिंह (जन्म- १७ अक्टूबर)

दूधनाथ सिंह हिन्दी के प्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार एवं कवि है। दूधनाथ सिंह ने अपनी कहानियों के माध्यम से साठोत्तरी भारत के पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक एवं मानसिक सभी क्षेत्रों में उत्पन्न विसंगतियों को चुनौती दी। उन्हें भारतेंदु सम्मान, शरद जोशी स्मृति सम्मान, कथाक्रम सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान प्राप्त हैं।

सिस्टर यूप्रासिआ (जन्म- १७ अक्टूबर)

सिस्टर यूप्रासिआ भारतीय ईसाई महिला संत थीं। २३ नवम्बर, २०१४ को वेटिकन शहर में पोप फ्राँसिस ने सेंट पीटर स्क्वायर पर उन्हें मरणोपरान्त संत की उपाधि दी।

सर सैयद अहमद खाँ (जन्म- १७ अक्टूबर)

मुस्लिम शिक्षक, विधिवेत्ता और लेखक, ऐंग्लो-मोहमडन ओरिएंटल कॉलेज अलीगढ़, उत्तर प्रदेश के संस्थापक थे। सर सैयद अहमद खाँ ऐसे महान मुस्लिम समाज सुधारक और भविष्यद्दढ़ा थे, जिन्होंने शिक्षा के लिए जीवन भर प्रयास किया। सर सैयद अहमद खाँ ने लोगों को पारंपरिक शिक्षा के स्थान पर आधुनिक ज्ञान हासिल करने के लिए प्रेरित किया क्योंकि वह जानते थे कि आधुनिक शिक्षा के बिना प्रगति संभव नहीं है। सर सैयद अहमद खाँ मुसलमानों और हिन्दुओं के विरोधात्मक स्वर को चुप-चाप सहन करते रहे। इसी सहनशीलता का परिणाम है कि आज सर सैयद अहमद खाँ को एक युग पुरुष के रूप में याद किया जाता है और हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही उनका आदर करते हैं। सर सैयद अहमद खाँ ने सदा ही यह बात अपने भाषणों में कही थी कि, हिन्दू और मुसलमान भारत की दो आँखें हैं।

१८ अक्टूबर

विश्वनाथ सत्यनारायण (निधन- १८ अक्टूबर)

विश्वनाथ सत्यनारायण एक तेलुगु भाषा के साहित्यकार थे। इन्हें १९७१ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। ये आंध्र प्रदेश राज्य से हैं।

नारायण दत्त तिवारी (जन्म- १८ अक्टूबर)

नारायण दत्त तिवारी उत्तर प्रदेश और उत्तराखण्ड के भूतपूर्व मुख्यमंत्री थे। वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता हैं। एन.डी.तिवारी उत्तर प्रदेश के चार बार मुख्यमंत्री रहे और उत्तरांचल प्रदेश बनने के बाद वहाँ के तीसरे मुख्यमंत्री बने।

१९ अक्टूबर

मातंगिनी हजारा (जन्म- १९ अक्टूबर)

मातंगिनी हजारा भारत की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों की आहूति देनेवाली बंगाल की वीरांगनाओं में से थीं। भारतीय इतिहास में उनका नाम बड़े ही मान-सम्मान के साथ लिया जाता है। मातंगिनी हजारा विधवा स्त्री अवश्य थीं, किंतु अवसर आने पर उन्होंने अदम्य शौर्य और साहस का परिचय दिया था।

भारत छोड़ो आंदोलन के तहत ही सशस्त्र अंग्रेज सेना ने आन्दोलनकारियों को रुकने के लिए कहा। मातंगिनी हजारा ने साहस का परिचय देते हुए राष्ट्रीय ध्वज को अपने हाथों में ले लिया और जुलूस में सबसे आगे आ गई। इसी समय उन पर गोलियां दागी गईं और इस वीरांगना ने देश के लिए अपनी कुर्बानी दी। उनका निधन २९ सितंबर को हुआ।

निर्मला देशपांडे (जन्म- १९ अक्टूबर)

निर्मला देशपांडे गांधीवादी विचारधारा से जुड़ी हुई प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता थीं। उन्होंने अपना जीवन साम्प्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने के साथ-साथ महिलाओं, आदिवासियों और अवसर से वंचित लोगों की सेवा में अर्पण कर दिया। निर्मला जी बहुआयामी प्रतिभा की धनी थीं। उन्होंने अनेक उपन्यास, नाटक, यात्रा तथा वृत्तान्त, विनोबा भावे की जीवनी भी लिखी। उन्हें पद्म विभूषण भी मिला था। २००७ में राष्ट्रपति पद के लिए यूं तो कई नामों पर चर्चा की गई, लेकिन अन्त में दो नाम रह गए थे, जो यू.पी.ए. और वाम मोर्चा द्वारा अन्तिम रूप से विचारित होने थे। दोनों नाम महिला उम्मीदवारों के थे-एक, गांधीवादी विचारधारा वाली निर्मला देशपांडे और दूसरी, राजस्थान की तत्कालीन राज्यपाल श्रीमती प्रतिभा पाटिल।

मजाज लखनवी

१९ अक्टूबर १९११ को उर्दू शायर मजाज लखनवी का जन्म रूदौली, बाराबंकी (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। इनका मतूल नाम असरारूल हक मजाज था। वे उर्दू शायरी के कीट्स कहे जाते हैं, उन्होंने अपनी उम्र से बड़ी रचनाओं की सौगात दी है। वे इश्किया गजलकार तो थे ही, साथ ही इन्कलाबी रंग में भी शायरी करते थे। उन्होंने रात और रेल, अलीगढ़, नजर खालिदा, अंधेरी रात का मुसाफिर, सरमायादारी जैसी रचनाएं दीं।

वे ऑल इंडिया रेडिया की पत्रिका आवाज के सहायक संपादक बन दिल्ली आये। यहां वे नाकाम इश्क के दर्द में डूबकर वापस लखनऊ चले आये और शराब के नशे में डूब गये।

पांच दिसंबर १९५५ को वे हमेशा के लिए विदा हो गये।

सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर (जन्म- १९ अक्टूबर)

२० वीं शताब्दी के महानतम वैज्ञानिकों में से एक वैज्ञानिक सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर अपने जीवन काल में ही एक किंवदंती बन गए थे। कामेश्वर सी.वाली चन्द्रशेखर के जीवन के बारे में लिखते हैं कि विज्ञान की खोज में असाधारण समर्पण और विज्ञान के नियमों को अमली रूप देने और जीवन में निकटतम संभावित सीमा तक उसके मानों को

आत्मसात करने में वह सबसे अलग दिखाई देते हैं। उसके बहुसर्जक योगदानों का विस्तार खगोल-भौतिक, भौतिक-विज्ञान और व्यवहारिक गणित तक था। उनका जीवन उन्नति का सर्वोत्तम उदाहरण है जिसे कोई भी व्यक्ति प्राप्त कर सकता है बशर्ते कि उसमें संकल्प, शक्ति, योग्यता और धैर्य हो। उनकी यात्रा आसान नहीं थी। उन्हें सब प्रकार की कठिनाइयों से जूझना पड़ा। वह एक ऐसा व्यक्तित्व था जिसमें भारत, जहां उनका जन्म हुआ, इंग्लैंड और यू.एस.ए. करी तीन अत्यधिक भिन्न संस्कृतियों की जटिलताओं द्वारा आकार मिला।

सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर खगोल भौतिकी शास्त्री थे और सन १९८३ में भौतिक शास्त्र के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता भी थे। उनकी शिक्षा चेन्नई के प्रेसीडेंसी कॉलेज में हुई। वह नोबेल पुरस्कार विजेता सर सी.वी. रमण के भतीजे थे। बाद में डॉ. चंद्रशेखर अमेरिका चले गए। जहाँ उन्होंने खगोल भौतिक शास्त्र तथा सौरमंडल से संबंधित विषयों पर अनेक पुस्तकें लिखीं। सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर ने व्हाइट ड्वार्फ, यानी श्वेत बौने नाम के नक्षत्रों के बारे में सिद्धांत का प्रतिपादन किया। इन नक्षत्रों के लिए उन्होंने जो सीमा निर्धारित की है, उसे चंद्रशेखर सीमा कहा जाता है।

२० अक्टूबर

वीरेन्द्र सहवाग (जन्म- २० अक्टूबर)

वीरेंद्र सहवाग भारत के क्रिकेट खिलाड़ी हैं, जो वर्तमान समय में विश्व के सबसे आक्रामक बल्लेबाज के रूप में प्रसिद्ध हैं। सहवाग भारतीय टीम को बहुत तेज शुरूआत देते हैं और गेंदबाजों पर शुरू से ही हावी हो जाते हैं। सहवाग अगर अपने लय में हो तो किसी भी आक्रमण को ध्वस्त करने की क्षमता रखते हैं। सहवाग जब क्रीज पर रहते हैं, तब तक विरोधियों के माथे पर उनकी क्रीज पर मौजूदगी का खौफ साफ-साफ देखा जा सकता है।

गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठी (जन्म- २० अक्टूबर)

गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठी का नाम आधुनिक गुजराती साहित्य में कथाकार, कवि, चिंतक, विवेचक, चरित्र लेखक तथा इतिहासकार इत्यादि अनेक रूपों में मान्य हैं। उनको सर्वाधिक प्रतिष्ठा द्वितीय उत्थान के सर्वश्रेष्ठ कथाकार के रूप में ही प्राप्त हुई है। संस्कृत साहित्य के गंभीर अनुशीलन तथा रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद आदि विभूतियों के विचारों के प्रभाव से उनके हृदय में प्राचीन भारतीय आर्य संस्कृति के पुनरूत्थान की तीव्र भावना जाग्रत हुई। उनका अधिकांश रचनात्मक साहित्य मूलत: इसी भावना से संबद्ध एवं उद्भूत है। जिस प्रकार आधुनिक गुजराती साहित्य की पुरानी पीढ़ी के अग्रणी नर्मद माने जाते हैं, उसी प्रकार उनके बाद की पीढ़ी का नेतृत्व गोवर्धनराम के द्वारा हुआ।

एच.सी. दासप्पा (निधन- २० अक्टूबर)

एच.सी. दासप्पा का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और देश के नव-निर्माण में समान योगदान रहा था। दासप्पा वर्ष १९२७ से १९३८ तक मैसूर असेम्बली के सदस्य रहे थे। भारत की आजादी के बाद वे मैसूर मंत्रिमण्डल में वित्त और उद्योग मंत्री भी रहे। गांधीजी के रचनात्मक कामों के प्रति दासप्पा की बड़ी श्रद्धा थी।

निरंजन नाथ वांचू (निधन- २० अक्टूबर)

निरंजन नाथ वांचू वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी थे। बाद में वे केरल और मध्य प्रदेश के राज्यपाल पद पर रहे। वर्ष १९३४ में निरंजन नाथ वांचू ने भारतीय प्रशासनिक सेवा में प्रवेश किया और बिहार में सब कलेक्टर के रूप में अपनी सेवाएँ प्रारंभ की।

सुदर्शन भगत (जन्म- २० अक्टूबर)

सुदर्शन भगत वर्तमान नरेन्द्र मोदी का कैबिनेट मंत्रिमण्डल में कृषि और किसान कल्याण राज्य मंत्री हैं। ये भारतीय जनता पार्टी के लोकसभा सांसद हैं, जिनका चुनाव क्षेत्र लोहरदगा (झारखंड) है। राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता में जब नैतिकता को ताक पर रख चारित्रिक दोषारोपण की तस्वीरें देश में देखने को मिली है तब वैसी परिस्थिति में भी विपक्ष की ओर से उनके व्यक्तित्व की प्रशंसा करना सुदर्शन भगत की बड़ी उपलब्धि है। वे एक स्वच्छ, ईमानदार व निर्विवादित छविवाले सांसद रहे हैं।

२२ अक्टूबर

अशफाक उल्ला खां

२२ अक्टूबर १९०० को क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खां का जन्म शाहजहांपुर (उत्तर प्रदेश) में हुआ था।

वे पहले मुसलिम थे जिन्हें षड्यंत्र के मामले में फांसी की सजा हुई थी।

उन्होंने रामप्रसाद बिस्मिल, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, चंद्रशेखर आजाद व अन्य साथियों के साथ मिलकर काकोरी में ट्रेन रोककर सरकारी खजाने को लूटा था।

इस कांड के दस महीने के बाद जब वे विदेश जाने के लिए दिल्ली में अपने पठान मित्र के संपर्क में आये, तो उनके मित्र ने विश्वासघात किया और वे गिरफ्तार कर लिये गये। १९ दिसंबर १९२७ को वे फैजाबाद जेल में फांसी पर चढ़ शहीद हो गये।

आजादी शब्द जितना सुन्दर एवं मनोहारी है, उसे भोगना उससे अधिक स्वाभिमान एवं शान का परिचायक है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि हमारी मातृभूमि एक लम्बे समय तक पराधीनता के अभिशाप को झेलती रही। हालांकि ऐसा कोई समय नहीं रहा जब इसके बच्चों ने इसके अस्तित्व की रक्षा के लिए अपने खून की धाराएं न बहायी हों, फिर भी एक बार स्वाधीनता गई तो अनगिनत शहीदों के आत्मोत्सर्ग के एवज में वापस आयी। माता के उन बेटों में अशफाक उल्लाह खान का नाम गौरवपूर्ण है।

वह ९ अगस्त १९२५ की शाम थी। शाम के छ: बज रहे थे। काकोरी लखनऊ स्टेशन के बीच आउटर सिग्नल के करीब आठ डाउन पैसेन्जर अवध-रूहेलखण्ड को रोककर क्रांतिकारियों द्वारा उसे लूटा गया। इसके बाद अंगरेजी सरकार स्वतंत्रता सेनानियों के पीछे हाथ धोकर पड़ गई। इन लुटेरों में एक बनवारी लाल भी था। वह पकड़ा गया। लालच और डर के फेरे में पड़कर उसने सभी क्रांतिकारियों के नाम बताए दिए। इनमें सर्वश्री मन्मथनाथ गुप्त, राजेन्द्र लाहिड़ी, चन्द्रशेखर आजाद, मुरारी शर्मा, केशवचन्द्र मुखर्जी, कुन्दनलाल गुप्त, रोशन सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक उल्लाह खान थे। सब इधर-उधर छुपते भागते रहै। अशफाक पहले अपने गांव शाहजहांपुर गये लेकिन उन्हें लगा कि यहां भी उनकी खोज स्वाभाविक रूप से होगी। वहां से वे बनारस के क्रांतिकारियों के अड्डे पर पहुंचे लेकिन वहां स्थिति पहले ही से अच्छी नहीं थी। सरकार को अड्डे का पता चल गया था। वहां कोई नहीं मिला तो वे बिहार के डालटनगंज पहुंचे। डालटनगंज में उन्होंने मथुरा के लाला जी (कायस्थ) के रूप में लोगों से परिचय किया और वहां के एक इंजीनियर के कार्यालय में नौकरी कर ली। इंजीनियर रूमानी मिजाज का आदमी था उसे शेरो-शायरी से काफी लगाव था। अशफाक शायरी बढ़िया कर लेते थे, इसलिए इंजीनियर से उनकी काफी मैत्री हो गई थी। एक दिन उनके गांव का एक पठान दोस्त किसी काम से डालटनगंज आया। वह उन्हें पहचान गया। काफी देर तक अंतरंग बातचीत के बाद दोस्त ने दोस्ती के बदले गद्दारी प्रस्तुत की। उसने पुरस्कार के लोभ में पुलिस को उनके पते की सूचना दे दी। वे गिरफ्तार कर लिये गये। उनको अपनी गिरफ्तारी का दु:ख नहीं था। जिगरी दोस्त की गद्दारी से उन्हें चोट लगी थी। सचमुच विश्वास की हत्या सबसे जघन्य अपराध है। देश की गुलामी का सबसे बड़ा कारण जयचन्द, दूल्हा सिंह, बनवारी लाल और अशफाक के उक्त दोस्त पठान जैसों के जन्म हैं। इन गद्दारों पर भारत की प्रत्येक पीढ़ी थूकेगी। काकोरी काण्ड के अधिकांश अभियुक्त पकड़े गये लेकिन मुकदमे के अंत तक सर्वश्री मुरारी शर्मा, केशवचन्द्र मुखर्जी, चन्द्रशेखर आजाद, ुन्दनलाल गुप्त आदि

फिरंगियों के हाथ नहीं आये। मुकदमा चलता रहा। वे कचहरी जाते रहे। उन्हें सब नाटक लग रहा था। पंडित मोतीलाल नेहरू ने बहुत कोशिश की कि आनन्द नारायण मुल्ला क्रांतिकारियों की वकालत करें लेकिन वे सरकार के पक्ष में ही रहे। मुकदमे के फैसले का आखिरी दिन आया। मुख्य अभियुक्त पंडित रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी, रोशन सिंह और अशफाक उल्लाह के लिए फांसी की सजा निश्चित हुई। अन्य साथियों को लम्बी कैद की सजा हुई। अशफाक उल्लाह को १६ दिसम्बर को फांसी दी जाएगी, यह निश्चित हुआ। तब तक उन्हें फैजाबाद जेल में बंद रखा गया। उनके लिए उसके पूर्व भी तीन फांसी और दो कालेपानी की सजा सुनाई जा चुकी थी। उस समय अशफाक नहाकर अपनी कोठरी में आये थे। वे बहुत खुश थे, यह सोचकर कि उनकी जान मातृभूमि के काम आयी। उनसे मिलने के लिए उनके दो बड़े भाई रियासत उल्ला खान तथा दो छोटे भतीजे आये। अशफाक को देखकर उनके भाइयों की आंखें आंसू बरसाने लगीं, दोनों भतीजे तो रोने लगे। भाई-भतीजों को रोते हुए देखकर उन्होंने कहा आप लोग खुशियां मनाएं। यह तो खुशी का मौका है। अशफाक कोई गलत काम के लिए फांसी नहीं चढ़ रहा है। अपनी मातृभूमि के लिए मर मिटना हर किसी का कर्तव्य है। आप लोग देखिए, कितने हिन्दुओं ने देश के लिए फांसी चढ़ने का गौरव प्राप्त कर लिया। खुद्दीराम बोस, कन्हाईलाल आदि कई नाम हैं। शायद, मुसलमानों में मैं पहला खुशनसीब हूं। अशफाक के मन में देश के लिए पवित्र प्रेम बचपन ही से था। उनके बड़े भाई भोपाल में एक सरकारी पद पर कार्य करते थे। उनके पास अधिकृत बंदूक थी। उसी से अशफाक ने बंदूक चलाना सीख लिया था। वे इंसान का खून बहाना और लूटपाट मचाना अनुचित समझते थे लेकिन राष्ट्रहित में उन्हें सब ठीक लगता था। पंडित रामप्रसाद बिस्मिल के संपर्क में आते ही वे पढ़ाई छोड़कर उस कच्ची उम्र में आजादी की रणभूमि में कूद पड़े थे। श्री अशफाक अच्छे कवि एवं लेखक थे। वे हसरत तथा वारसी उपनामों से हमदम आदि पत्रपत्रिकाओं में छपा करते थे। १९ दिसंबर १९२७ को उन्होंने खुशीखुशी फांसी को चूम लिया। इन देशप्रेमियों की बातें पढ़ते सुनते वक्त आंखें नम हो जाती हैं और सहसा मन पुकार उठता है।

जिसने हिला दिया था, दुनिया को एक पल में। अफसोस क्यों नहीं है, वह सह अब वतन में।

अशफाक उल्ला खाँ को भारत के प्रसिद्ध अमर शहीद क्रांतिकारियों में गिना जाता है। देश की आजादी के लिए हंसते-हंसते प्राण न्यौछावर करनेवाले अशफाक उल्ला खाँ हिंदू मुस्लिम एकता के प्रबल पक्षधर थे। काकोरी कांड़ के सिलसिले में १९ दिसम्बर, १९२७ ई. को उन्हें फैजाबाद जेल में फांसी पर चढ़ा दिया गया। अशफाक उल्ला खाँ ऐसे पहले मुस्लिम थे, जिन्हें षडयंत्र के मामले मे फाँसी की सजा हुई थी। उनका हृदय बड़ा विशाल और विचार बड़े उदार थे। हिन्दू मुस्लिम एकता से सम्बन्धित संकीर्णता भरे भाव उनके हृदय में कभी नहीं आ पाये। सब के साथ सम व्यवहार करना उनका सहज स्वभाव था।

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के साथ हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी में लेखन कार्य, देश में चल रहे आंदोलनों और क्रांतिकारि घटनाओं से प्रभावित अशफाक के मन में भी क्रांतिकारी भाव जागे और उसी समय उनकी मुलाकात मैनपुरी षड्यंत्र के मामले में शामिल रामप्रसाद बिस्मिल से हुई और वे भी क्रांति के जश्न में शामिल हो गए। इसे बाद वे ऐतिहासिक काकोरी कांड में सहभागी रहे।

त्रिभुवनदास कृषिभाई पटेल (जन्म- २२ अक्तूबर)

त्रिभुवनदास पटेल भारत में दुग्ध क्रांति, जिसे श्वेत क्रांति भी कहा जाता है, के जनक माने जाते हैं। भारत को दुनिया का सर्वाधिक दुग्ध उत्पादक देश बनाने के लिए श्वेत क्रांति लानेवाले त्रिभुवनदास कृषिभाई पटेल को देश में सहकारी

२३ अक्टूबर

रानी चेन्नम्मा (जन्म- २३ अक्टूबर)

रानी चेन्नम्मा का दक्षिण भारत के कर्नाटक में वही स्थान है जो स्वतंत्रता संग्राम के संदर्भ में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का है। चेन्नम्मा ने लक्ष्मीबाई से पहले ही अंग्रेजों की सत्ता को सशस्त्र चुनौती दी थी और अंग्रेजी की सेना को उनके सामने दो बार मुँह की खानी पड़ी थी।

खंडू भाई देसाई (जन्म- २३ अक्टूबर)

खंडू भाई देसाई एक प्रसिद्ध श्रमिक नेता थे। खंडू भाई देसाई के जीवन पर रमण महर्षि, रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के विचारों का प्रभाव था। खंडू भाई देसाई गांधीजी के प्रमुख अनुयायी थे।

आर.के.लक्ष्मण (जन्म- २३ अक्टूबर)

रासीपुरम कृष्णस्वामी लक्ष्मण को भारत के एक प्रमुख व्यंग-चित्रकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त है। अपने कार्टूनों के जरिए आर.के.लक्ष्मण ने एक आम आदमी को एक व्यापक स्थान दिया और उसके जीवन की मायूसी, अँधेरे, उजाले, खुशी और गम को शब्दों और रेखाओं की मदद से समाज के सामने रखा। असाधारण व्यक्तित्व के धनी आर. के. लक्ष्मण ने वक्त की नब्ज को पहचान कर देश, समाज और स्थितियों की अक्कासी की। लक्ष्मण के कार्टूनों की दुनिया व्यापक है और इसमें समाज का चेहरा तो दिखता ही है, साथ ही भारतीय राजनीति में होनेवाले बदलाव भी दिखाई देते हैं।

भैरोंसिंह शेखावत (जन्म- २३ अक्टूबर)

भैरोंसिंह शेखावत भारत के ग्यारहवें उपराष्ट्रपति और राजस्थान के पूर्व मुख्यमंत्री थे। वे राजस्थान के राजनीतिक क्षितिज पर काफी लम्बे समय तक छाये रहे। राजस्थान की राजनीति में उनका जबर्दस्त प्रभाव था। राजस्थान में जब वर्ष १९५२ में विधानसभा की स्थापना हुई थी, तब भैरोंसिंह शेखावत ने अपना भाग्य आजमाया और विधायक बने। इसके बाद उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा और सफलताएँ अर्जित करते हुए विपक्ष के नेता, फिर मुख्यमंत्री और उपराष्ट्रपति के पद तक पहुँच गए। भारतीय जनता पार्टी के सम्माननीय नेताओं में से वे एक थे।

सुनील मित्तल (जन्म- २३ अक्टूबर)

सुनील मित्तल एक भारतीय उद्योगपति, समाजसेवी और भारत के सबसे बड़े टेलीकॉम कंपनी एयरटेल के चेयरमैन हैं। उनका नाम दुनिया के गिने-चुने टेलीकॉम उद्यमियों में शुमार किया जाता है। सुनील की कंपनी भारतीय एयरटेल दुनिया के सबसे बड़े टेलीफोन कंपनियों में से एक है, जिसका व्यापार लगभग १९ देशों में फैला है। एयरटेल जीएसएम मोबाइल सेवा के साथ-साथ इंटरनेट ब्रॉडबैंड सेवाएं भी प्रदान करती है और करीब २० करोड़ ग्राहक उसकी सेवाएं लेते हैं। सुनील ने ये सफलता अपनी कड़ी मेहनत, सच्ची लगन और दूरदृष्टि की बदौलत हासिल किया है।

जोगिंदर सिंह (शहादत- २३ अक्टूबर)

सूबेदार जोगिन्दर सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय सैनिक थे। इन्हें यह सम्मान सन १९६२ में मरणोपरांत मिला। चीन के साथ लड़ते हुए भारत के चार पराक्रमी योद्धाओं ने परमवीर चक्र प्राप्त किए। इन चारों में से तीन को तो यह यश मरणोपरान्त मिला और केवल एक वीर सारी कथा को बताने के लिए जीवन बचा रहा। उन तीनों योद्धाओं में जो रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हुए, एक सूबेदार जोगिन्दर सिंह भी थे जो एक सिख रेजिमेंट के सेनानी थे और टोंगपेन ला, नेफा में बूमला मोर्चे पर लड़ रहे थे।

२४ अक्टूबर

इस्मत चुगताई (निधन- २४ अक्टूबर)

अपनी शिक्षा पूर्ण करने के साथ ही इस्मत चुगताई लेखन क्षेत्र में आ गई थीं। उन्होंने अपनी कहानियों में स्त्री चरित्रों को बेहद संजीदगी से उभारा और इसी कारण उनके पात्र जिंदगी के बेहद करीब नजर आते हैं। इस्मत चुगताई ने ठेठ मुहावरेदार गंगा-जमुनी भाषा का इस्तेमाल किया, जिसे हिन्दी उर्दू की सीमाओं में कैद नहीं किया जा सकता। उनका भाषा प्रवाह अद्‌भुत था। इसने उनकी रचनाओं को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन (जन्म- २४ अक्टूबर)

कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज (एनआईएएस), बेंगलूर के निर्देशक, भौतिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद और जवाहरलाल नेहरू सेन्टर फॉर एडवांस्ड रिसर्च बेंगलूर में भौतिकी के अवैतनिक प्रोफेसर हैं। वे भारतीय संसद के उच्च सदन के सदस्य भी हैं। वर्ष २००३ तक ९ वर्ष की अवधि के लिए, डॉ. कस्तूरीरंगन ने भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। इनके इन प्रयासों से भारत पूर्व लब्धप्रतिष्ठ उन छः देशों की श्रेणी में आ गया है जिनके यहां बड़े अंतरिक्ष कार्यक्रम हैं।

२५ अक्टूबर

मुकुंदी लाल श्रीवास्तव (जन्म- २५ अक्टूबर)

मुकुंदी लाल श्रीवास्तव भारत के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा लेखक थे। इनकी प्रथम रचना सन १९१२ ई. के बाल हितैषी (मेरठ) में प्रकाशित हुई थी। इसके बाद इनके कई लेख और कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। मुकुंदी लाल ने ज्ञानमण्डल एवं काशी विद्यापीठ में रहकर लगभग २० पुस्तकों का सम्पादन करने के अतिरिक्त ग्रीस और रोम के महापुरुष एवं पश्चिमी यूरोप के द्वितीय भाग के अर्धांश का अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने तथा राजवल्लभ सहाय ने कई वर्षों के कठिन परिश्रम के बाद हिन्दी शब्द संग्रह नामक एक बहुमूल्य कोश भी तैयार किया।

मृदुला गर्ग (जन्म- २५ अक्टूबर)

मृदुला गर्ग हिंदी की सबसे लोकप्रिय लेखिकाओं में से एक हैं। मृदुला जी ने एम.ए. तो किया था अर्थशास्त्र में, पर उनका मन रमा हिंदी साहित्य में। कथानक की विविधता और विषयों के नएपन ने उन्हें अलग पहचान दी। शायद यही वजह थी कि उनके उपन्यासों को समालोचकों की सराहना तो मिली ही, वे खूब पसंद भी किए गए।

उनकी रचनाओं के अनुवाद जर्मन, चेक, जापानी और अंग्रेजी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में हो चुके हैं। मृदुला गर्ग को हिंदी अकादमी द्वारा १९८८ में साहित्यकार सम्मान, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा साहित्य भूषण सम्मान, २००३ में सूरीनाम में आयोजित विश्व हिन्दी सम्मेलन में आजीवन साहित्य सेवा सम्मान, २००४ में कठगुलाब के लिए व्यास सम्मान तथा २००३ में कठगुलाब के लिए ही ज्ञानपीठ का वाग्देवी पुरस्कार, वर्ष २०१३ का साहित्य अकादमी पुरस्कार हिन्दी उनकी कृति मिलजुल मन उपन्यास के लिए प्रदान किया गया है। उसके हिस्से की धूप उपन्यास को १९७५ में तथा जादू का कालीन को १९९३ में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

निर्मल वर्मा (निधन- २५ अक्टूबर)

निर्मल वर्मा हिन्दी के आधुनिक साहित्यकारों में से एक थे। हिन्दी साहित्य में नई कहानी आंदोलन के प्रमुख ध्वजवाहक निर्मल वर्मा का कहानी में आधुनिकता का बोध लानेवाले कहानीकारों में अग्रणी स्थान है। निर्मल वर्मा इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज शिमला के फेलो (१९७३), निराला सृजनपीठ, भोपाल (१९८१-८३) और यशपाल सृजनपीठ (शिमला) के अध्यक्ष रहे। १९८८ में इंग्लैंड के प्रकाशक रीडर्स इंटरनेशनल लारा उनकी कहानियों का संग्रह द वर्ल्ड एल्सव्हेयर प्रकाशित हुआ। इसी समय बीबीसी लारा उन पर एक डाक्यूमेंट्री फिल्म भी प्रसारित हुई। रात का रिपोर्टर, एक चिथड़ा सुख, लाल टीन की छत और वे दिन, निर्मल वर्मा के चर्चित उपन्यास हैं। उनका अंतिम उपन्यास अंतिम अरण्य १९९० में प्रकाशित हुआ। उनकी सौ से अधिक कहानियां कई कहानी संग्रहों में प्रकाशित हुई। १९५८ में परिंदे, कहानी से प्रसिद्ध पानेवाले निर्मल वर्मा ने धुंध से उठती धुन और चीड़ों पर चांदनी यात्रा वृत्तांत भी लिखे, जिसने उनकी लेखन विधा को नये मायने दिए।

२६ अक्टूबर

गणेशशंकर विद्यार्थी (जन्म- २६ अक्टूबर)

गणेशशंकर विद्यार्थी एक निडर और निष्पक्ष पत्रकार तो थे ही, इसके साथ ही वे एक समाजसेवी, स्वतंत्रता सेनानी और कुशल राजनीतिज्ञ भी थे। भारत के स्वाधीनता संग्राम में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा था। गणेशशंकर विद्यार्थी ऐसे पत्रकार थे, जिन्होंने अपनी कलम की ताकत से अंग्रेजी शासन की नींव हिला दी थी। गणेशशंकर विद्यार्थी एक ऐसे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे, जो कलम और वाणी के साथ-साथ महात्मा गांधी के अहिंसक समर्थकों और क्रांतिकारियों को समान रूप से देश की आजादी में सक्रिय सहयोग प्रदान करते रहे।

पत्रकार व स्वतंत्रता सेनानी गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म २६ अक्टूबर, १८९० को इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उनका पहला लेख आत्मोत्सर्ग सरस्वती में छपा था। महावीर प्रसाद द्विवेदी की सरस्वती में काम किया। फिर मदन मोहन मालवीय के पत्र अभ्युदय के उप संपादक बने। १९१३ में उन्होंने प्रताप साप्ताहिक कानपुर से शुरू किया, जो क्रांतिकारी विचारों व स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति का माध्यम बना। भगत सिंह भी इससे जुड़े थे। अंग्रेजों ने इसे बंद करवा दिया था, लेकिन जनता की पहल पर यह दैनिक बना। २५ मार्च, १९३१ को दंगों के दौरान लोगों को बचाने की कोशिश में उनकी मृत्यु हो गयी।

प्रतिवर्ष २५ मार्च का दिन जब आता है तो दुखियों की ढाल और मातृभूमि के मान स्व. श्री गणेश शंकर विद्यार्थी की स्मृति अनायास मनोमस्तिष्क में कौंध जाती है। इस दिन हिंदी-संसार ने वास्तव में एक अद्‌भुत अमूल्य रत्न खो दिया था। वे एक निर्भीक पत्रकार थे। प्रताप उनकी संचेतना का वाहन था। शासन का आक्रोश भी उनकी तेजस्विता को पराजित नहीं कर सका। स्व. माखन लाल चतुर्वेदी के अनुसार- प्रताप एक दिन उनकी शक्ति था, दूसरे दिन हिंदी जनता की श्रद्धा और आज वह उनकी शुभ स्मृति है। पत्रकार कला के हिंदी स्वरूप के प्रताप नामक राष्ट्रमंच से कायरों को, देश घातकों को, अत्याचारियों को और स्वार्थियों को लगातार उन्होंने चुनौतियां दीं और परिणाम में तलाशियां, अपमान, अर्थ हानि और कारागार सब सहे। १९१३ में विद्यार्थी जी ने १६ पृष्ठ का प्रताप निकाला। प्रताप को अगर हम गणेश जी का ही प्रतिबिंब कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी प्रताप का संचालन व संपादन होता रहा। लिखने का सारा काम विद्यार्थी जी करते थे और पंडित शिवनारायण जी मिश्र प्रताप का पुलिंदा अपने सिर पर लाद कर डाकखाने ले जाते थे। ऐसे कर्मयोगी क्या आज कहीं देखने को मिलते हैं? इस समय में प्रताप के ग्राहकों की संख्या ५ हजार तक पहुंच गई थी। २५ मार्च १९३१ को कानपुर में हिंदू-मुस्लिम एकता की वेदी पर अपने प्राणों को अर्पित कर देनेवाला महान बलिदानी क्या स्मृति पटल से कभी विस्मृत हो सकता है? उनके स्वयं के शब्द थे- जीवन भर अमानुषिकता, असज्जनता के विरुद्ध लड़ता रहा। ईश्वर बल दे कि आगे लड़ सकूं और वास्तव में ही उनकी मनोकामना पूर्ण हुई। प्रताप शब्द की तेजस्विता, ऊष्मा और शौर्य मानो उनकी रग-रग में समाया हुआ था। उनकी संपादन कला में सत्यनिष्ठा, निष्पक्षता और निर्भीकता के गुण विद्यमान थे। युगल किशोर सिंह शास्त्री ने अपने लेख संपादकाचार्य विद्यार्थी जी में लिखा है- अगर वे किसी स्वतंत्र देश में पैदा हुए होते तो विश्व विख्यात संपादक स्व.सी.पी. स्काट आदि से इनका स्थान किसी हालत में कम न होता। भाषा के प्रसार के क्षेत्र में उनका व्यक्तिगत योगदान अभूतपूर्व है ही पर उन्होंने अपने सहयोगियों को इतना कुशल प्रशिक्षण दिया कि कालांतर में वे लोग बहुत प्रसिद्ध हुए। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि बाल

कृष्ण शर्मा नवीन और बनारसी दास चतुर्वेदी आदि ने उन्हीं से पत्रकारिता सीख कर इस क्षेत्र में यश अर्जित किया था। गूढ़ से गूढ़ तत्वों को सीधे-सादे ढंग से अभिव्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता उनके अंदर थी। उनकी एक-एक पंक्ति राष्ट्रीयता से परिपूर्ण हुआ करती थी। गांधी जी के अनुसार विद्यार्थी जी ने सारी पत्रकार परंपरा का मस्तक ऊंचा किया था। महादान की दधीचि से शुरू हुई परंपरा को विद्यार्थी जी ने अपने बलिदान से प्रवाह प्रदान किया था। स्व. माखन लाल चतुर्वेदी के शब्दों में- हिंदी जगत् की तरुणाई को याद रहे तो २५ मार्च की स्मृति कभी अपमानित न हो और क्रांति की क्यारियां कभी सूखी न दिखाई दें। गणेश जी को याद करते समय हम एक बार यह सोच लिया करें कि हमारे सिर भी हैं और हममें रक्त भी है और युग का आमंत्रण हम पर न जाने कब से उधार है।

गणेशशंकर विद्यार्थी भी ऐसे ही पत्रकार थे, जिन्होंने अपनी कलम की ताकत से अंग्रेजी शासन की नींव हिला दी थी। गणेशशंकर विद्यार्थी एक ऐसे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे, जो कलम और वाणी के साथ-साथ महात्मा गांधी के अहिंसक समर्थकों और क्रांतिकारियों को समान रूप से देश की आजादी में सक्रिय सहयोग प्रदान करते रहे। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर विद्यार्थी जी के विचार बड़े ही निर्भीक होते थे। विद्यार्थी जी ने देशी रियासतों की प्रजा पर किये गये अत्याचारों का भी तीव्र विरोध किया। गणेशशंकर विद्यार्थी कानपुर के लोकप्रिय नेता तथा पत्रकार, शैलीकार एवं निबन्ध लेखक रहे थे। वह अपनी अतुल देशभक्ति और अनुपम आत्मोसर्ग के लिए चिरस्मरणीय रहेंगे। विद्यार्थी जी ने प्रेमचन्द की तरह पहले उर्दू में लिखना प्रारम्भ किया था। उसके बाद हिन्दी में पत्रकारिता के माध्यम से वे आये और आजीवन पत्रकार रहे।

गोदावरीश मिश्र (जन्म- २६ अक्टूबर)

गोदावरीश मिश्र उड़ीसा के प्रसिद्ध समाज सुधारक, साहित्यकार और सार्वजनिक कार्यकर्ता थे। इन्होंने कविता, नाटक, उपन्यास, कहानियाँ तथा जीवन चरित्र आदि लिखे हैं। भारतीय साहित्य अकादमी ने इनकी आत्मकथा को पुरस्कृत किया था। गोदावरीश मिश्र जी ने १९४१ में उड़ीसा के शिक्षामंत्री और वित्तमंत्री का पद भी सम्भाला था।

डी.वी. पलुस्कर (निधन- २६ अक्टूबर)

पंडित दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के गायक थे। उन्हें एक विलक्षण बालक के तौर पर जाना जाता है। डी.वी.पलुस्कर ने अपना पहला कार्यक्रम चौदह वर्ष की आयु में पंजाब में हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन में दिया। उत्तराधिकार में उन्हें ग्वालियर घराना और गंधर्व महाविद्यालय मिला, परंतु वे अन्य घरानों और शैलियों की सुंदर विशेषताओं को अपनाने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। डी.वी. पलुस्कर की आवाज बहुत मधुर और सुरीली थी। उनके आलाप उनके गाये राग का स्पष्ट रेखांकन करते थे; इसके बाद उनकी सहज शैली की तानों से सुसज्जित बंदिशें आती थीं। उन्हें थोड़ी ही अवधि में राग का संपूर्ण आकर्षक चित्र प्रस्तुत करने में महारत हासिल थी। शुद्ध शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त वे महान भजन गायक भी थे। उन्हें फिल्म बैजू बावरा (१९५२) में उस्ताद अमीर खान के साथ एक अविस्मरणीय युगलबंदी के लिए भी जाना जाता है।

मन्मथनाथ गुप्त (निधन- २६ अक्टूबर)

मन्मथनाथ गुप्त भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक प्रमुख क्रांतिकारी तथा सिद्धहस्त लेखक थे। इन्होंने हिन्दी, अंग्रेजी तर्ा बांग्ला में आत्मकथात्मक, ऐतिहासिक एवं गल्प साहित्य की रचना की है। ये मात्र १३ वर्ष की आयु में ही स्वतंत्रता संग्राम में कूद गये और जेल गये। बाद में वे हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के सक्रिय सदस्य भी बने और १७ वर्ष की आयु में उन्होंने सन १९२५ में हुए काकोरी काण्ड में सक्रिय रूप से भाग लिया।

डी.आर. बेंद्रे (निधन- २६ अक्टूबर)

दत्तात्रेय रामचन्द्र बेंद्रे कन्नड़ भाषा के प्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने कन्नड़ काव्य को सम्माननीय ऊँचाई दिलवाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। उनका प्रथम कविता संग्रह प्रकाशित होने से पूर्व ही समाज ने उन्हें एक कवि के रूप में अंगीकार कर लिया था। दत्तात्रेय जी के विशिष्ट योगदान को देखते हुए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९५८) और पद्मश्री (१९६८) भी प्रदान किया गया था।

२७ अक्टूबर

के. आर. नारायणन (जन्म- २७ अक्टूबर, निधन- ९ नवम्बर)

श्री नारायणन २१ अगस्त १९९२ को डॉ. शंकर दयाल शर्मा के राष्ट्रपतित्व काल में उपराष्ट्रपति निर्वाचित हुए। उपराष्ट्रपति पद हेतु वह सर्वसम्मति से उम्मीदवार बने। १४ जुलाई, १९९७ को हुए राष्ट्रपति चुनाव का नतीजा जब १७ जुलाई, १९९७ को घोषित हुआ तो पता चला कि श्री नारायणन को कुल वैध मतों का ९५ प्रतिशत प्राप्त हुआ था। यह एकमात्र ऐसा राष्ट्रपति चुनाव था जो कि केन्द्र में अल्पमत सरकार के रहते हुए भी समाप्त हुआ। इसमें पूर्व चुनाव आयुक्त टी.एन. शेषन प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार थे।

जतीन्द्रनाथ दास (जन्म- २७ अक्टूबर)

जतीन्द्रनाथ दास भारत के प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों में से एक थे, जिन्होंने देश की आजादी के लिए जेल में अपने प्राण त्याग दिए और शहादत पाई। इन्हें जनित दास के नाम से भी जाना जाता है, जबकि संगी साथी इन्हें प्यार से जतिन दा कहा करते थे। जतीन्द्रनाथ दास कांग्रेस सेवादल में सुभाषचंद्र बोस के सहायक थे। भगत सिंह से भेंट होने के बाद ये बम बनाने के लिए आगरा आ गये थे। भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त ने जो बम केन्द्रीय असेम्बली में फेंके थे, वे इन्हीं के द्वारा बनाये गए थे। जेल में क्रांतिकारियों के साथ राजबन्दियों के समान व्यवहार न होने के कारण क्रांतिकारियों ने १३ जुलाई, १९२९ से अनशन आरम्भ कर दिया। जतीन्द्रनाथ भी इसमें सम्मिलित हुए। अनशन के ६३ वें दिन जेल में ही इनका देहान्त हो गया।

२८ अक्टूबर

सिस्टर निवेदिता (जन्म- २८ अक्टूबर)

२८ अक्टूबर १८६७ को सिस्टर निवेदिता का जन्म डेंगागेन (आयरलैंड) में हुआ था। इनका पूरा नाम मार्गरिट एलिजाबेथ नोबल था। स्वामी विवेकानंद ने इनका नाम निवेदिता दिया था। १८९५ में इंग्लैंड में स्वामी विवेकानंद से मिलीं और पूरा जीवन भारतीयों की सेवा में लगा दी। वह वेदान्त के सार्वभौम सिद्धांन्तों विवेकानन्द की मीमांसा और वेदान्त दर्शन की मानववादी शिक्षाओं की ओर आकर्षित हुईं तथा उन्होंने विवेकानन्द के १८९६ में भारत आने से पहले तक वह इंग्लैंड में वेदान्त आंदोलन के लिए काम करती रही। उनके सम्पूर्ण समर्पण के कारण विवेकानन्द ने उन्हें निवेदिता नाम दिया, जिसका अर्थ है, जो समर्पित है।

१८९८ में कोलकाता में भारतीय महिलाओं के उत्थान और शिक्षा के लिए एक स्कूल की स्थापना की। वे पहली विदेशी महिला थी जिसे भारतीय मठ में स्थान मिला। १३ अक्टूबर १९११ को उनका निधन दार्जिलिंग में हुआ।

उर्जित पटेल (जन्म- २८ अक्टूबर)

उर्जित पटेल भारतीय रिजर्व बैंक के २४वें गवर्नर हैं। उन्होंने २३वें गवर्नर रघुराम राजन का कार्यकाल पूर्ण होने के पश्चात यह पद ग्रहण किया है। उर्जित अभी तक आरबीआई के डिप्टी गवर्नर थे। उन्हें ११ जनवरी, २०१३ को रिजर्व बैंक में डिप्टी गवर्नर नियुक्त किया गया था और जनवरी २०१६ में उन्हें सेवाविस्तार दिया गया। उर्जित पटेल स्वतंत्र विचारोंवाले एकाग्रचित्त व्यक्तित्व के मालिक हैं। वे किसी भी चीज के बारे में पूरी तरह विस्तार से जानने में यकीन रखते हैं।

२९ अक्टूबर

विजेन्द्र कुमार सिंह (जन्म- २९ अक्टूबर)

विजेन्द्र कुमार सिंह एक सुप्रसिद्ध भारतीय मुक्केबाज हैं। विजेन्द्र सिंह ने वर्ष २००४ के एथेंस ओलम्पिक में सर्वप्रथम भाग लिया, किन्तु वह वेल्टर वेट वर्ग में तुर्की के मुस्तफा कारागोलेयू से २०-२५ से पराजित हो गये। राष्ट्रमण्डल खेल वर्ष २००६ में इंग्लैंण्ड के नील पिरकिन्स को सेमीफाइनल में पराजित कर फाइनल में प्रवेश किया, किन्तु दक्षिण अफ्रीका के बोनगानी मविलासी से पराजित हो गए और कांस्य पदक ही जीत सके। दोहा ओलम्पिक खेल वर्ष २००६ में मुक्केबाजी मिडिल वेट वर्ग में कजाकिस्तान के बख्तियार अरतायेव से सेमीफाइनल में २४-२९ से पराजित होकर कांस्य पदक जीत सके।

कमलादेवी चट्टोपाध्याय (निधन- २९ अक्टूबर)

कमलादेवी चट्टोपाध्याय भारत की समाजसुधारक, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, तथा भारतीय हस्तकला के क्षेत्र में नवजागरण लानेवाली गांधीवादी महिला थीं। उन्हें समाज सेवा के लिए १९५५ में पद्मभूषण और सामुदायिक नेतृत्व के लिए सन १९६६ में रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

जामिया मिलिया इसलामिया स्थापना दिवस

२९ अक्टूबर १९२० को जामिया मिलिया इसलामिया की स्थापना अलीगढ़ में की गयी थी। मौलाना महमूह हसन ने इसकी नींव रखी थी। इसकी शुरूआत आजादी से पहले एक छोटी संस्था से हुई थी जिसे देश का प्रमुख विश्वविद्यालय बनने का गौरव प्राप्त हुआ।

२२ नवंबर १९२० को हकीम अजमल खान जामिया के पहले चांसलर बने। मोहम्मद अली जौहर पहले कुलपति बने। डॉ. जाकिर हुसैन इसके दूसरे कुलपति बने थे। १९२५ में जामिया को अलीगढ़ से दिल्ली शिफ्ट किया गया। १९६२ में इसे डीम्ड विविध का दर्जा दिया गया। इसके नौ संकार्यों में ३६ विभाग हैं, जिनमें १६० पाठ्यक्रमों की शिक्षा दी जाती है।

अली सरदार जाफरी

२९ नवंबर १९१३ को कवि, क्रांतिकारी आलोचक व चिंतक अली सरदार जाफरी का जन्म गोंडा (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उनके काव्य संकलन सरहद को तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी अपनी लाहौर की बस यात्रा में साथ लेकर गये थे।

उर्दू कविता और भारतीय साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें वर्ष १९९७ का ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। उनकी कविता रूसी, उजबेकी, फारसी, अंग्रेजी, फ्रेंच, अरबी और कई भारतीय भाषाओं में अनुवादित हुई। पहली अगस्त २००० को उनका मुंबई में देहांत हो गया।

३० अक्टूबर

होमी जहाँगीर भाभा (जन्म- ३० अक्टूबर)

होमी जहाँगीर भाभा भारत के एक प्रमुख वैज्ञानिक थे जिन्होंने भारत के परमाणु उर्जा कार्यक्रम की कल्पना की थी। उनके मन में अपने देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक क्रांति लाने का जुनून था। यह डॉ. भाभा के प्रयासों का ही प्रतिफल है कि आज विश्व के सभी विकसित देशों भारत के नाभिकीय वैज्ञानिकों की प्रतिभा एवं क्षमता का लोहा माना जाता है।

३० अक्टूबर १९०९ को देश के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के जनक पद्मभूषण होमी जहांगीर भाभा का जन्म मुंबई में हुआ। १५ वर्ष की आयु में अध्ययन के लिए केंब्रिज विश्वविद्यालय गये और वहां से डॉक्टरेट की उपाधि हासिल की। १९३९ में भारतीय विज्ञान संस्थान बैंगलोर (अब बेंगलुरु) में सर सीवी रमण के साथ काम शुरू किया।

नाभिकीय विज्ञान के क्षेत्र में टाटा ट्रस्ट से मदद लेकर टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेटल रिसर्च की स्थापना की। वे रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन के फेलो चुने गये। भाभा स्कैटरिंग और भाभा हेइटलर थ्योरी खोज से भी जुड़े रहे। २४ जनवरी १९६६ को एयर क्रैश में उनकी मौत हो गयी।

डॉ. भाभा जब कैम्ब्रिज में अध्ययन और अनुसंधान कार्य कर रहे थे और छुट्टियों में भारत आए हुए थे तभी सितंबर १९३९ में द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया। इस समय हिटलर पूरे यूरोप पर तेजी से कब्जा करता जा रहा था और इंग्लैंड पर हमला सुनिश्चित दिखाई दे रहा था। इंग्लैंड के अधिकांश वैज्ञानिक युद्ध के लिये सक्रिय हो गए और पूर्वी यूरोप में मौलिक अनुसंधान लगभग ठप्प हो गया। ऐसी परिस्थिति में इंग्लैंड जाकर अनुसंधान जारी रखना डॉ. भाभा के लिए संभव नहीं था। डॉ. भाभा के सामने यह प्रश्न था कि वे भारत में क्या करें? उनकी प्रखर प्रतिभा से परिचित कुछ विश्वविद्यालयों ने उन्हें अध्यापन कार्य के लिये आमंत्रित किया। अंतत: डॉ. भाभा ने भारतीय विज्ञान संस्थान बैगलोर को चुना जहां वे भौतिक शास्त्र विभाग के प्राध्यापक के पद पर रहे। यह उनके जीवन का महत्वपूर्ण परिवर्तन था।

उनके पिता बैरिस्टर थे। डॉक्टर भाभा ने ब्रह्मांड किरणों पर अनुसंधान किया। इसके अलावा परमाणु के अन्दर सूक्ष्म कणों की भी खोज की। परमाणु भौतिकी के क्षेत्र में यह खोज बहुत ही महत्वपूर्ण थी। १९५४ में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने डॉक्टर होमी जहांगीर भाभा की मदद से भारत में परमाणु शक्ति विभाग की स्थापना की। परमाणु शक्ति अनुसंधान का प्रमुख केंद्र बंबई के पास ट्राम्बे में बनाया गया। इस केंद्र का उद्घाटन नेहरू जी ने २० जनवरी १९५७ को किया था। यह परमाणु शक्ति केंद्र जो कुछ भी है वह डॉक्टर भाभा और उनके साथी वैज्ञानिकों के श्रम और कल्पना की वजह से है। इस केंद्र ने भारत को परमाणु के क्षेत्र में बड़े देशों के बराबर लाकर खड़ा कर दिया। अहमदाबाद के पास तारापुर में पहले परमाणु बिजलीघर का निर्माण भी डॉक्टर भाभा की ही कल्पना और मेहनत का परिणाम है। यदि कह जाए कि देश में परमाणु शक्ति का विकास डॉक्टर भाभा की मेहनत और श्रम से हुआ है तो यह गलत नहीं होगा। यदि डॉक्टर भाभा हमारे बीच कुछ वर्ष और रहते तो यह देश समृद्धि की दिशा में बहुत अधिक आगे बढ़ जाता और परमाणु शक्ति के क्षेत्र में हम बहुत ही आगे होते। अफसोस वे अब इस दुनिया में नहीं हैं, लेकिन उन्हें अभी भी भारत में और भारत से बाहर के देशों में याद किया जाता है।

भाई महावीर (जन्म- ३० अक्टूबर)

भाई महावीर भारतीय जनता पार्टी से जुड़े हुए नेता हैं। ये मध्य प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल रह चुके हैं। डॉ. भाई महावीर भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी भाई परमानन्द के पुत्र हैं। आप भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्यों में से एक हैं। इन्हें भारतीय जनसंघ का प्रथम महासचिव बनने का श्रेय मिला था।

बरुन डे (जन्म- ३० अक्टूबर)

बरुन डे एक प्रमुख इतिहासकार और शिक्षाविद थे। मशहूर विद्वान बरून डे के अनुसंधान का मुख्य क्षेत्र आधुनिक भारत रहा। १७वीं एवं १८वीं सदी के भारत के आर्थिक इतिहास, बंगाल नवजागरण और ब्रिटिश संविधान के इतिहास के विशेषज्ञ थे।

सुकुमार राय (जन्म- ३० अक्टूबर)

सुकुमार राय बांग्ला भाषा के प्रसिद्ध कवि, लेखक एवं चित्रकार थे। ये बच्चों के लिए हास्य कविता एवं कहानियां लिखते थे। सुकुमार राय अपने समय के प्रमुख लेखक-पत्रकार एवं चित्रकार थे। सुकुमार राय गुरु रवींद्रनाथ टैगोर के शिष्य थे। इनके पिता उपेंद्रनाथ चौधरी बाल साहित्य में सिद्धहस्त एवं कट्टर ब्रह्मसमाजी थे। सुकुमार राय की बेतुकी कविताएँ अपनी कल्पनाशीलता छंदबद्धता और अंवेषणशक्ति वर्णन के कारण बंगाली बच्चों द्वारा आज भी याद की जाती है।

प्रमोद महाजन (जन्म- ३० अक्टूबर)

प्रमोद व्यंकटेश महाजन एक भारतीय राजनीतिज्ञ थे। प्रमोद महाजन भारतीय जनता पार्टी के शीर्ष नेताओं में से एक थे। प्रमोद महाजन अपने गृहराज्य महाराष्ट्र और भारत के पश्चिमी क्षेत्र में काफी लोकप्रिय थे।

३१ अक्टूबर

सरदार वल्लभ भाई पटेल- आधुनिक राष्ट्र निर्माता (जन्म- ३१ अक्टूबर)

सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्म ३१ अक्टूबर १८७५ को गुजरात में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा काल में ही उन्होंने एक ऐसे अध्यापक के विरुद्ध आंदोलन खड़ा कर उन्हें सही मार्ग दिखाया जो अपने ही व्यापारिक संस्थान से पुस्तकें क्रय करने के लिए छात्रों को बाध्य करते थे।

सन् १९०८ में वे विलायत की अंतरिम परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास कर बैरिस्टर बन गए। फौजदारी वकालत में उन्होंने खूब यश और धाक जमाई। महात्मा गांधी ने जब पूरी शक्ति से अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन चलाने का निश्चय किया तो पटेल ने अहमदाबाद में एक लाख जन समूह के सामने लोकल बोर्ड के मैदान में इस आंदोलन की रूपरेखा समझाई। उन्होंने पत्रकार परिषद में कहा, ऐसा समय फिर नहीं आएगा, आप मन में भय न रखें। आपको यही समझकर यह लड़ाई छेड़नी है कि महात्मा गांधी और अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया जाएगा, तो आप यह न भूलें कि आपके हाथ में वह शक्ति है कि २४ घंटे में ब्रिटिश सरकार का शासन खत्म हो जाएगा। सितंबर १९४६ में जब नेहरू जी की अस्थाई राष्ट्रीय सरकार बनी तो सरदार पटेल को गृहमंत्री नियुक्त किया गया। अत्यधिक दूरदर्शी होने के कारण भारत में विभाजन के पक्ष में पटेल का स्पष्ट मत भा कि जहरवाद फैलने से पूर्व गले-से अंग को शल्यचिकित्सा कर कटवा देना चाहिए। नवंबर १९४७ में संविधान परिषद की बैठक में उन्होंने अपने इस कथन को स्पष्ट किया, मैंने विभाजन को अंतिम उपाय के रूप में तब स्वीकार किया था, जब संपूर्ण भारत के हमारे हाथ से निकल जाने की संभावना हो गई थी। मैंने यह भी शर्त रखी कि देशी राज्यों के संबंध में ब्रिटेन हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस समस्या को हम स्वयं सुलझाएंगे और निश्चय ही देशी राज्यों के एकीकरण की समस्या को पटेल ने बिना खून-खराबे के बड़ी खूबी से हल किया। देशी राज्यों में राजकोट, जूनागढ़, वहालपुर, बड़ौदा, कश्मीर, हैदराबाद को भारतीय महासंघ में सम्मलित करने में सरदार को कई पेचीदगियों का सामना करना पड़ा। जब चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई ने नेहरू को पत्र लिखा कि वे तिब्बत को चीन का अंग मान लें तो पटेल ने नेहरू से आग्रह किया कि वे तिब्बत पर चीन का प्रभुत्व कतई न स्वीकारें, अन्यथा चीन भारत के लिए खतरनाक सिद्ध होगा। नेहरू नहीं माने बस इसी भूल के कारण हमें चीन से पिटना पड़ा और चीन ने हमारी सीमा की ४० हजार वर्ग गज भूमि पर कब्जा कर लिया।

सरदार पटेल के ऐतिहासिक कार्यों में सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण, गांधी स्मारक निधि की स्थापना, कमला नेहरू अस्पताल की रूपरेखा आदि कार्य सदैव स्मरण किए जाते रहेंगे। उनके मन में गोवा को भी भारत में विलय करने की इच्छा कितनी बलवती थी, इसका उदाहरण ही काफी है। जब एक बार वे भारती युद्धपोत द्वारा बंबई से बाहर यात्रा पर थे, तो गोवा के निकट पहुंचने पर उन्होंने कमांडिंग अफसरों से पूछा इस युद्धपोत पर तुम्हारे कितने सैनिक हैं, जब कप्तान ने उनकी संख्या बताई तो पटेल ने फिर पूछा- क्या वह गोवा पर अधिकार करने के लिए पर्याप्त हैं। सकारात्मक उत्तर मिलने पर पटेल बोले- अच्छा चलो, जब तक हम यहां हैं गोवा पर अधिकार कर लो।

किंकर्तव्यविमूढ़ कप्तान ने उनसे लिखित आदेश देने की विनती की तब पटेल चौंके, फिर कुछ सोचकर बोले-ठीक है चलो हमें वापस लौटना होगा। जवाहरलाल इस पर आपत्ति करेंगे। सरदार पटेल और नेहरू के विचारों में काफी मतभेद था फिर भी गांधी से वचनबद्ध होने के कारण वे नेहरू को सदैव सहयोग देते रहे। गंभीर बातों को भी वे विनोद से कह देते थे।

कश्मीर की समस्या को लेकर उन्होंने कहा था, जवाहरलाल के ससुराल में मेरा वश नहीं चलेगा।

सरदार पटेल (जन्म- ३१ अक्टूबर)

सरदार वल्लभभाई पटेल प्रसिद्ध स्वतंत्रता संग्राम सेनानी तथा स्वतंत्र भारत के प्रथम गृहमंत्री थे। वे सरदार पटेल के उपनाम से प्रसिद्ध हैं। सरदार पटेल भारतीय बैरिस्टर और प्रसिद्ध राजनेता थे। भारत के स्वाधीनता संग्राम के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं में से वे एक थे। १९४७ में भारत की आजादी के बाद पहले तीन वर्ष वे उप प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, सूचना मंत्री और राज्यमंत्री रहे थे।

३१ अक्टूबर, १८७५ को लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्म नाडियाड (गुजरात) में हुआ था। भारत को एक विशाल राष्ट्र बनाने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। उन्होंने ६०० देशी रियासतों का भारतीय संघ विलय कराया था। हैदराबाद और कश्मीर का भारत में विलय भी इन्हीं की नेतृत्व कौशल की वजह से हुआ। वे देश के गृहमंत्री और पहले उपप्रधानमंत्री थे। गुजरात के बारदोली ताल्लुका के लोगों ने उन्हें सरदार नाम दिया था। उनका निधन १५ दिसंबर, १९५० को मुंबई में हुआ था। १९९१ में उन्हें मरणोपरांत भारत-रत्न दिया गया।

स्वतंत्र भारत के इतिहास में सरदार पटेल के प्रति इस देश के जनमानस में जो श्रद्धा है उसका मुकाबला शायद ही कोई राजनेता कर सकता है। वाास्तव में वल्लभ भाई पटेल एक नेता नहीं, एक ऐसे राष्ट्रनायक थे जिसने सालभर में इतना बड़ा चक्रवर्ती अखंड राज्य स्थापित कर दिया है कि जितना न रामचंद्र का था, न कृष्ण का, न अशोक का था न अकबर का और न ही अंग्रेजों का।

भारत निर्माण की भूमिका में वे शिवाजी जैसे दूरदर्शी, चाणक्य जैसे कुशल राजनीतिज्ञ और कुशल शासन के आकांक्षी थे। अपनों के विरोध के बावजूद उन्होंने विदेशी आक्रांता द्वारा ध्वस्त किए गए सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण कराया जिसका उद्घाटन नेहरू के विरोध के बावजूद देश के प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्र बाबू ने किया। कोई आश्चर्य नहीं कि लौहपुरुष ने कभी भी किसी कार्य का श्रेय नहीं लिया।

आजादी के बाद की स्थिति से वे प्रसन्न नहीं थे। एक ही वर्ष में उनकी निराशा बार-बार सामने आती। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था, अब तो ऐसा मालूम होता है कि हमें जालसाजियां करने और सत्ता की दौड़धूप में आनंद आता है। आज जो मुकाबले होते हैं, उनमें खेल के स्वस्थ नियमों को ध्यान में न रखकर हम उन्हें गंदा बना देते हैं। केवल चाल के रूप में सत्य को सराहते हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस चित्र में कोई बात बढ़ा चढ़ाकर नहीं दिखा रहा हूं।

अपने विरोधी कम्युनिस्टों को करारा जवाब देते हुए उन्होंने एक बार कहा था, मुझे किसी से सोशलिज्म सीखने की जरूरत नहीं। मैने वर्षों पहले ही फैसला किया था कि यदि जनता की सेवा में काम करना हो तो अपनी मिल्कियत नहीं रखनी चाहिए। तब से आज तक मैंने अपनी कोई चीज नहीं रखी, न मेरा कोई बैंक एकाउंट है, न मेरे पास कोई जमीन है और न मेरे पास अपना कोई मकान है।

स्पष्टता से अपनी बात रखनेवाले सरदार ने एक भाषण में यहाँ तक कहा, यदि सच्चा स्वराज चाहिए तो हमें गांधीजी की बतायी समाज रचना करनी पड़ेगी। इसलिए मैं पुकार-पुकार कर सब जगह कह रहा हूं कि आप गलत रास्ते पर चल

रहे हैं। यदि इसी तरह से चलते रहेंगे तो कुछ दिन बाद लोग कहने लगेंगे कि इससे तो अंग्रेजों का राज अच्छा था। तब कम से कम खाना तो मिलता था।

पूर्व विदेश सचिव की पुस्तक फारेन पॉलिसी राजा राममोहन राय टू सिंहा, में प्रकाशित पटेल का नवम्बर, १९५० में नेहरू जी को लिखा पत्र प्रमाण है कि पटेल बहुत दूरदर्शी थे। उन्होंने उस पत्र के माध्यम से नेहरू को चीन द्वारा तिब्बत को हड़पने की तैयारी के प्रति सावधान किया था। सीमाओं की सुरक्षा और गुप्तचर व्यवस्था मजबूत करने, सेना को आधुनिक बनाने, यातायात, संचार, वायरलैंस, पूर्वोत्तर राज्यों की ओर विशेष ध्यान देने पर बल दिया था। इतिहास साक्षी है कि पटेल की चेतावनी की ओर ध्यान न देना हमें कितना महंगा पड़ा।

पंडित जवाहरलाल नेहरू से उनके अनेक मसलों पर मतभेद थे लेकिन वह कहते थे, यदि मैं अपने नेता का साथ न दे सकू तो मैं एक मिनट भी सरकार में नहीं रहूंगा। इस तरह की बेवफाई मेरे चरित्र में नहीं, प्रसिद्ध अमेरिकी पत्रकार एडगर स्नो के एक प्रश्न के उत्तर में स्वयं नेहरू जी ने भी उनके इस गुण को स्वीकारते हुए कहा था, मैं जानता हूं कि मैं इशारा कर दूं, तो सरदार मंत्रिमंडल छोड़ देंगे। यही क्यों, नेहरू के जन्मदिन पर बिस्तर पर लेटे-लेटे ही उन्होंने बधाई-पत्र लिखा तो एक सप्ताह बाद नेहरू स्वयं उनसे मिलने आ गए। तब पटेल ने कहा था, मेरा स्वास्थ्य थोड़ा ठीक हो जाये, मैं आपसे अकेले में बात करना चाहता हूं। मुझे ऐसा लग रहा है कि आप मुझमें अपना विश्वास खोते जा रहे हैं। इसके जवाब में नेहरू ने कहा था, मुझे तो यह लगता है कि मैं अपने आप में यकीन खोता जा रहा हूं। यह विधि की विडंबना ही कही जाएगी कि उसके तीन सप्ताह बाद ही सरदार पटेल अनंत की यात्रा पर निकल गए।

सरदार पटेल अपने कर्तव्य और धुन के पक्के थे। ईमानदारी उनका प्रथम प्रतिमान थी। महान स्वतंत्रता सेनानी महावीर त्यागी ने अपने एक संस्मरण में लिखा है, एक बार मणिबेन कुछ दवाई पिला रही थी। मैंने कमरे में दाखिल होते ही देखा कि मणिबेन की साड़ी में एक बहुत बड़ी थेगली (पैबंद) लगी है। मैंने जोर से कहा, मणिबेन, तुम तो अपने बाप को बहुत बड़ा आदमी मानती हो। तुम एक ऐसे बाप की बेटी हो फिर ऐसे बड़े राजों-महाराजों के सरदार की बेटी होकर तुम्हें शर्म नहीं आती? बहुत मुंह बनाकर और बिगड़ कर मणि ने कहा, शर्म आये उनको जो झूठ बोलते और बेईमानी करते हैं। हमको क्यों शर्म आये? पर मैं उस समय शर्म से डूब मरा जब सुशीला नायर से पता चला कि मणिबेन दिनभर सरदार साहब की खड़ी सेवा करती हैं। फिर डायरी लिखती हैं और फिर नियम से चरखा कातती हैं। जो सूत बनता हैं, उसी से सरदार के कुर्तेधोती बनते हैं। जब वे धोती-कुर्ते फट जाते हैं, तब उन्हीं को काट सीकर मणिबेन अपनी साड़ी-कुर्ती बनाती हैं। मैं उस देवी के सामने अवाक खड़ा रह गया। कितनी पवित्र आत्मा है, मणिबेन। उनके पैर छूने से हम जैसे पापी पवित्र हो सकते हैं। फिर सरदार बोल उठे, गरीब आदमी की लड़की है। अच्छे कपड़े कहां से लाये? उसका बाप कुछ कमाता थोड़े ही है। सरदार के चश्मे का केस बीस बरस पुराना था। तीसियों बरस पुरानी घड़ी और कमानी का चश्मा जिसके दूसरी ओर धागा बंधा था।

वह उदारता या बड़प्पन, यह जीवन दृष्टि आज किसी नेता में दिखती है? रियासतों के भारत विलय के लिए जब वे निकलते तो एक थैला अपने पास रखते। लौटने पर लोग पूछते, आज कितनी रियासतें हैं आपके थैले में? महज पटेल की चर्चा या तप, त्याग, आदर्श औ योगी या स्वभाव भारतीय राजनीति में कहीं जगह पा सके, इसके लिए नेता कोशिश करें, तो मुल्क का भला होगा। आश्चर्य होता है आज सरदार की कुर्सी पर बैठनेवाले लाखों के डिजाइनर कुर्ते पहनते हैं तो महंगे चश्मे और घड़ियों का अंबार है उनके पास।

जिस राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिए सरदार ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया, उसके संकीर्ण नेताओं ने ही उनके साथ में बात न्याय नहीं किया। देश की मुख्य केंद्रीय योजनाओं में से १६ राजीव गांधी के नाम पर, ६ इंदिरा जी के नाम पर और ३ नेहरू जी के नाम हैं परंतु सरदार पटेल के नाम पर मात्र एक। देश के बड़े संस्थानों के नाम एक परिवार की बपौती बन कर रह गए। जो कभी भी किसी संवैधानिक पद पर नहीं था, उसके नाम पर अनेक अस्पताल, कॉलेज। जिस महापुरुष ने ५६२ रियासतों को भारत में विलय कराया, वहीं व्यक्ति आखिर कश्मीर पर धारा ३७० के विरोध में क्यों नहीं बोला। बिल के पास होने पर उनसे पूछा गया। आप जैसे राष्ट्रवादी से देश को यह आशा नहीं थी। इस पर पटेल ने उत्तर दिया, यदि आज मैंने ३७० के विरोध में अपना मत नहीं दिया होता तो नेहरू को यह कहने का मौका मिलता कि उनके संसद में न रहने पर मैंने उनका विरोध किया। काश, भीष्म प्रतिज्ञाबद्ध न होते तो महाभारत न होता। काश सरदार पटेल को महात्मा गांधी न रोकते तो देश का इतिहास ही नहीं, भूगोल भी कुछ और ही होता।

राष्ट्रीय एकता के शिल्पकार सरदार पटेल (जन्म- ३१ अक्टूबर)

सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्म ३१ अक्टूबर १८७५ को गुजरात में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा में ही उन्होंने एक ऐसे अध्यापक के विरुद्ध आंदोलन खड़ा कर उन्हें सही मार्ग दिखाया, जो अपने ही व्यापारिक संस्थान से पुस्तकें क्रय करने के लिए छात्रों को बाध्य करते थे।

सन १९०८ में वे विलायत की अंतरिम परीक्षा प्रथम में पास कर बैरिस्टर बन गए। फौजदारी वकालत में उन्होंने खूब यश प्राप्त किया और अपनी धाक जमाई। महात्मा गांधी ने जब पूरी शक्ति से अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन चलाने का निश्चय किया तो पटेल ने अहमदाबाद में एक लाख के जनसमूह के सामने लोकल बोर्ड के मैदान में इस आंदोलन की रूपरेखा समझाई। उन्होंने पत्रकार परिषद में कहा, ऐसा समय फिर नहीं आएगा, आप मन में भय न रखें। चौपाटी पर दिए गए भाषण में उन्होंने कहा कि आपको यही समझकर यह लड़ाई छेड़नी है कि महात्मा गांधी और अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया जाएगा तो आप यह न भूलें कि आपके हाथ में ऐसी शक्ति है कि २४ घंटे में ब्रिटिश सरकार का शासन खत्म हो सकता है।

सितंबर १९४६ में जब नेहरूजी की अस्थाई राष्ट्रीय सरकार बनी तो सरदार पटेल को गृहमंत्री नियुक्त किया गया। अत्यधिक दूरदर्शी होने के कारण भारत में विभाजन के पक्ष में पटेल का स्पष्ट मत था कि जहरबाद फैलने से पूर्व गले-से अंग को ऑपरेशन कर कटवा देना चाहिए। नवंबर १९४७ में संविधान परिषद की बैठक में उन्होंने अपने इस कथन को स्पष्ट किया, मैंने विभाजन को अंतिम उपाय के रूप में तब स्वीकार किया था जब सम्पूर्ण भारत के हमारे हाथ से निकल जाने की संभावना हो गई थी। मैंने यह भी शर्त रखी कि देशी राज्यों के संबंध में ब्रिटेन हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस समस्या को हम सुलझाएंगे और निश्चय ही देशी राज्यों के एकीकरण की समस्या को पटेल ने बिना खून-खराबे के बड़ी खूबी से हल किया। देशी राज्यों में राजकोट, जूनागढ़, वहालपुर, बड़ौदा, कश्मीर, हैदराबाद को भारतीय महासंघ में सम्मिलित करने में सरदार को कई पेचीदगियों का समाना करना पड़ा।

सरदार पटेल के ऐतिहासिक कार्यों में सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण, गांधी स्मारक निधि की स्थापना, कमला नेहरू अस्पताल की रूपरेखा आदि कार्य सदैव स्मरण किए जाते रहेंगे। उनके मन में गोवा को भी भारत में विलय करने की इच्छा कितनी बलवती थी, इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है।

जब एक बार वे भारतीय युद्धपोत द्वारा मुंबई से बाहर यात्रा पर थे तो गोवा के निकट पहुंचने पर उन्होंने कमांडिंग अफसरों से पूछा, इस युद्धपोत पर तुम्हारे कितने सैनिक हैं? जब कप्तान ने उनकी संख्या बताई, तो पटेल ने फिर पूछा, क्या वह गोवा पर अधिकार करने के लिए पर्याप्त है। सकारात्मक उत्तर मिलने पर पटेल बोले, अच्छा चलो जब तक हम यहां हैं गोवा पर अधिकार कर लो। किंकर्तव्यविमूढ़ कप्तान ने उनसे लिखित आदेश देने की विनती की। तब तक पटेल भी चौंके, फिर कुछ सोचकर बोले- ठीक है, चलो हमें वापस लौटना होगा।

सरदार पटेल और नेहरू के विचारों में मतभेद था, फिर भी गांधीजी से वचनबद्ध होने के कारण वे नेहरूजी को सदैव सहयोग देते रहे। गंभीर बातों को भी वे विनोद से कह देते थे। कश्मीर की समस्या को लेकर उन्होंने कहा था, सब जगह तो मेरा वश चल सकता है पर जवाहरलाल की ससुराल में मेरा वश नहीं चलेगा।

१५ दिसंबर १९५० को प्रात:काल इस महापुरुष का ७६ वर्ष की आयु में निधन हो गया, जिसकी क्षति पूर्ति होना दुष्कर है। यह भी सच है कि गांधी ने कांग्रेस में प्राणों का संचार किया तो नेहरू ने उस कल्पना और दृष्टिकोण को विस्तृत आयाम दिया। इसके अलावा जो शक्ति और संपूर्णता कांग्रेस को प्राप्त हुई वह सरकार पटेल की कार्यक्षमता का ही परिणाम था। उनकी सेवाओं, दृढ़ता व कार्यक्षमता के कारण ही उनको लौहपुरुष कहा जाता है।

आजादी के बाद भी सैकड़ों रियासतों के रूप में बंटे भारत को अखंड भारत बनाने में सरदार वल्लभ भाई पटेल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। अपने बहादुरी भरे कार्यों और दृढ़ इच्छाशक्ति के दम पर लौह पुरुष का दर्जा हासिल करनेवाले पटेल की स्वतंत्रता आंदोलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। गुजरात के नाडियाड में ३१ अक्टूबर १८७५ को जन्मे पटेल जहां एक सफल वकील थे, वहीं वह जमीन से जुड़े नेता और महान राष्ट्रवादी भी थे। शुरुआत में उनके मन पर गांधी जी के दर्शन का गहरा प्रभाव था और आजादी की लड़ाई में वह कई बार जेल गए। ब्रिटिश राज की नीतियों के विरोध में उन्होंने अहिंसक और नागरिक अवज्ञा आंदोलन के जरिए खेड़ा बोरसाद और बारदोली के किसानों को एकत्र किया। अपने इस काम की वजह से वह गुजरात के महत्वपूर्ण जननेता बने। जनकल्याण और आजादी के लिए चलाए जानेवाले आंदोलनों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाओं के चलते उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में महत्वपूर्ण स्थान मिला। इतिहासवेत्ता मालती मलिक के अनुसार पटेल को सरदार नाम गुजरात के बारदोली तालुका के लोगों ने दिया और इस तरह वह सरदार वल्लभ भाई पटेल कहलाने लगे। पंद्रह अगस्त १९४७ को भारत जब आजाद हुआ तो पटेल के ऊपर ५६५ अर्द्ध स्वायत्त रियासतों और ब्रिटिश युग के उपनिवेशीय प्रांतों को भारत में मिलाने की जिम्मेदारी आ गई। पटेल ने अपने कूटनीतिक और रणनीतिक चातुर्य से इस कर्तव्य को बखूबी निभाया और जरूरत पड़ने पर बल प्रयोग से भी नहीं चूके। हैदराबाद के निजाम ने जब एक भारत की अवधारणा को नहीं माना तो पटेल ने सेना उतारकर उसका घमंड चूर कर दिया। ऑपरेशन पोलो नाम का यह सैन्य अभियान पूरी तरह सफल रहा और इस तरह हैदराबाद भारत का हिस्सा बन गया। जूनागढ़ के लिए भी उन्होंने यही रास्ता अख्तियार किया। लक्षद्वीप समूह को भारत के साथ मिलाने में भी पटेल की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इस क्षेत्र के लोग देश की मुख्यधारा से कटे हुए थे और उन्हें भारत की आजादी की जानकारी १५ अगस्त १९४७ के बाद मिली। हालांकि यह क्षेत्र पाकिस्तान के नजदीक नहीं था, लेकिन पटेल को लगता था कि इस पर पाकिस्तान दावा कर सकता है। इसलिए ऐसी किसी भी स्थिति को टालने के लिए पटेल ने लक्षद्वीप में राष्ट्रीय ध्वज फहराने के लिए भारतीय नौसेना का एक जहाज भेजा। इसके कुछ घंटे बाद ही पाकिस्तानी नौसेना के जहाज लक्षद्वीप के पास मंडराते

देखे गए लेकिन वहां भारत का झंडा लहराते देख वे वापस कराची चले गए। राष्ट्र के एकीकरण में महान योगदान देनेवाले भारत के प्रथम उप प्रधानमंत्री का पंद्रह दिसंबर १९५० को निधन हो गया।

१) सरदार वल्लभभाई पटेल

परिस्थितियां महान व्यक्तियों का सृजन करती हैं और महान व्यक्तित्व परिस्थितियों को बदल देते हैं। भारतीय स्वतंत्रता के गौरवशाली संघर्ष का साफल्य भारतभूमि की स्वतंत्रता के रूप में परिलक्षित हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत इस विशाल भूभाग के एकीकरण और सशक्तीकरण के लिए अतिशय सबल और मजबूत हाथों की जरूरत थी जो सरदार पटेल के रूप में मिला। भारत के लौहपुरुष के उपनाम से विख्यात सरदार वल्लभभाई पटेल स्वतंत्रता आंदोलन में प्रथम पंक्ति के नेता थे मगर उनकी क्षमता को पूरी तरह स्वतंत्रता के बाद ही पहचाना गया जब वे स्वतंत्र भारत के प्रथम उपप्रधानमंत्री और गृहमंत्री के पद पर आसीन हुए।

सरदार पटेल का जन्म ३१ अक्टूबर सन् अठारह सौ पचासी में करमसद ग्राम (गुजरात) में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के बाद बैरिस्टरी पढ़ने इंग्लैण्ड गए। वल्लभभाई उन्नीस सौ तेरह में स्वदेश लौटे और यहां वकालत की प्रेक्टिस शुरू की। मगर गुलाम मातृभूमि को अपने इस नौनिहाल की दूसरी भूमिका की प्रतीक्षा थी। नियति अंतत: वल्लभभाई पटेल को स्वाधीनता आंदोलन के कटंकाकीर्ण पथ पर ले ही आयी, जहां इतिहास अपने इस अजेय नायक की आधीरता से प्रतीक्षा कर रहा था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहमदाबाद में मजदूरों की विशाल हड़ताल की सफलता में वल्लभभाई पटेल का योगदान अविस्मरणीय रहा। यह सन् उन्नीस सौ अठारह का समय था। तब वल्लभभाई पटेल को सरदार नहीं कहा जाता था। यह उपाधि उन्हें मिली दस बरस बाद बारदोली की महिलाओं द्वारा। उन्नीस सौ अठाईस में बारदोली का प्रसिद्ध किसान आंदोलन वल्लभभाई पटेल की अगुवाई में शुरु हुआ। सूरत के बारदोली तालुका में सरकार द्वारा लगान में भारी बढ़ोत्तरी के विरोध में पटेल ने लगान न देने आंदोलन शुरू किया और उनकी दृढ़ संकल्प शक्ति तथा जुझारू तेवरों के सम्मुख सरकार को झुकना पड़ा। किसानों को उनका हक मिला और पटेल को सरदार पटेल के रूप में मिली राष्ट्रीय ख्याति। स्वतंत्रता संग्राम के इस अद्वितीय योद्धा से सहमी अंग्रेज हुकूमत ने सन् उन्नीस सौ तीस में उन्हें गिरफ्तार किया मगर लौहपुरुष के फौलादी इरादे हिलाए नहीं जा सके। इसके बाद सरदार का एक पैर हमेशा जेल में ही रहा। सन् इकतीस में वे कांग्रेस के अध्यक्ष बने और अपनी अद्‌भुत संगठन क्षमता की छाप छोड़ी। सन् सैंतीस में कांग्रेस की आठ प्रांतों में सरकार बनी। आठों प्रांतों में सरकारों के कार्य पर प्रभावी नियंत्रण के लिए पटेल की अध्यक्षता में कांग्रेस का संसदीय बोर्ड गठित किया गया। सन् बयालीस में स्वतंत्रता आंदोकन का चरम काल देश के क्षितिज पर उपस्थित हुआ। पटेल समेत सारे बड़े नेता जेल में डाल दिए गए। गांधी, नेहरू, पटेल की त्रयी कांग्रेस की रीढ़ थी। बारदोली का विजेता इस संघर्ष में भी विजयी रहा। सन् छियालीस में नेहरू के नेतृत्व में बनी अंतरिम सरकार में पटेल उपप्रधानमंत्री बने। उन्हें गृह विभाग तथा रियासतों एवं सूचना संबंधी कार्य का मंत्री पद सौंपा गया। गृहमंत्री की हैसियत से सरदार ने देश की जो सेवा की, वह स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। तमाम रियासतों के भारतीय संघ में विलीनीकरण के मामले में सरदार पटेल ने अद्‌भुत कूटनीतिक क्षमता और दृढ़प्रतिज्ञ मानसिकता का परिचय दिया। हैदराबाद निजाम के खिलाफ पुलिस कार्यवाही का निर्णय लेकर उन्होंने अपने कुछ सहयोगियों को रुष्ट भले ही कर दिया पर भारत का भाग्य सदियों के लिए सुरक्षित कर दिया। कहना न होगा कि सरदार पटेल के बिना अखंड भारत का स्वप्न कभी साकार नहीं हो पाता। यदि पं. नेहरू ने कश्मीर मामला गृह मंत्रालय के अधिकार से हटाकर विदेश मंत्रालय के सुपूर्द न कर दिया होता तो पटेल ने निश्चित रूप से कश्मीर समस्या हल कर दी होती और कश्मीर के एक तिहाई हिस्से पर आज दुश्मनों का कब्जा न होता। पंद्रह दिसंबर सन् पचास को इस अप्रतिम सेनापति ने आंखें मूंद लीं और देश को लौहपुरुष के बगैर यात्रा जारी रखनी पड़ी। निर्बल सत्ताधीशों और ढुलमुल नीति वाले राजपुरुषों में लौहपुरुष की क्षमता और साहस का शतांश भी नहीं था। भारतवर्ष में फिर ऐसा कोई गृहमंत्री नहीं हो सकता जो अविचलित होकर केवल देशहित में निर्णय ले सके। प्रख्यात अर्थशास्त्री और गोरक्षा आंदोलन के सूत्रधार प्रोफेसर रामचंद्र सिंह के शब्दों में, आज का युग और वर्तमान परिवेश आतंकवाद, अराजकता व विदेशी जासूसी गतिविधियों से आक्रांत हैं क्योंकि राष्ट्रीय

राजनीति में सरदार पटेल सा कोई व्यक्तित्व नहीं है। आज की विभाजित और विश्रृंखलित राजनीति में हमें गांधी या नेहरू से ज्यादा पटेल जैसे सक्षम और दृढ़ नेता की जरूरत है। पटेल दस वर्ष और जीवित रह जाते तो शायद देश का नक्शा कुछ और होता।

लौहपुरुष की पुण्यतिथि पर उनकी स्मृति हमारे वर्तमान शासकों को जीजिविषा और देशहित में सख्त निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करे, अभिलाषा के साथ सौ करोड़ से अधिक देशवासी उस महान आत्मा के प्रति नतशिर हैं।

सरदार वल्लभभाई पटेल प्रसिद्ध स्वतंत्रता संग्राम सेनानी तथा स्वतंत्र भारत के प्रथम गृहमंत्री थे। वे सरदार पटेल के उपनाम से प्रसिद्ध हैं। सरदार पटेल भारतीय बैरिस्टर और प्रसिद्ध राजनेता थे। भारत के स्वाधीनता संग्राम के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं में से वे एक थे। १९४७ में भारत की आजादी के बाद पहले तीन वर्ष वे उप प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, सूचना मंत्री और राज्य मंत्री रहे थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद करीब पाँच सौ से भी ज्यादा देसी रियासतों का एकीकरण एक सबसे बड़ी समस्या थी। कुशल कूटनीति और जरूरत पड़ने पर सैन्य हस्तक्षेप के जरिए सरदार पटेल ने उन अधिकांश रियासतों को तिरंगे के तले लाने में सफलता प्राप्त की। इसी उपलब्धि के चलते उन्हें लौह पुरुष या भारत का बिस्मार्क की उपाधि से सम्मानित किया गया। उन्हें मरणोपरांत वर्ष १९९१ में भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न दिया गया। उनका निधन १५ दिसम्बर को हुआ।

सरदार पटेल को भारत का लौह पुरुष भी कहा जाता है। गृहमंत्री बनने के बाद भारतीय रियासतों के विलय की जिम्मेदारी उनको ही सौंपी गई। उन्होंने अपने दायित्वों का निर्वहन करते हुए छह सौ छोटी बड़ी रियासतों का भारत में विलय कराया। देशी रियासतों का विलय स्वतंत्र भारत की पहली उपलब्धि थी और निर्विवाद रूप से पटेल का इसमें विशेष योगदान था। नीतिगत दृढ़ता के लिए राष्ट्रपिता ने उन्हें सरदार और लौह पुरुष की उपाधि दी। बिस्मार्क ने जिस तरह जर्मनी के एकीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई उसी तरह वल्लभ भाई पटेल ने भी आजाद भारत को एक विशाल राष्ट्र बनाने में उल्लेखनीय योगदान दिया। बिस्मार्क को जहां जर्मनी का आयरन चांसलर कहा जाता है वहीं पटेल भारत के लौह पुरुष कहलाते हैं। सरदार पटेल ने देश का एकीकरण किया। सरदार पटेल को आधुनिक भारत का निर्माता कहते है।

सरदार पटेल विवादप्रिय व्यक्ति नहीं थे और इसी गुणवत्ता के आधार पर बिना किसी खून खराबे के ५५० से अधिक रियासतों का भारतीय संघ में विलय किया। जनवरी १९१७ में वल्लभभाई पटेल ने म्युनिसिपलिटी का चुनाव एक वोट से ही जीता था। १९२८ के बारदोली सत्याग्रह में उनकी संवेदनशील नेतृत्व क्षमता को उजागर किया उन्हें नई पहचान दी। बारदोली की महिलाओं ने ही उन्हें सरदार की उपाधि दी। पटेल उन नेताओं में से एक थे जिन्होंने राजनीति में महिलाओं के साथ भेदभाव का खुलकर विरोध किया। उन्होंने ही डिस्ट्रिक्ट म्युनिसिपल एक्ट से उस सेक्शन १५ (१) सी को खत्म कराया था जो उस वक्त महिलाओं को चुनाव लड़ने से रोकता था। उनका कहना था कि निर्वाचित सदन से महिलाओं को बाहर रखने का अर्थ अहमदाबाद की आधी आबादी के प्रतिनिधित्व को समाप्त करना है। इस निर्णय के ठीक ४० साल बाद अर्थात सन १९६६ में भारत की महिला इंदिरा गांधी ने प्रधानमंत्री की खुर्सी सम्भाली।

लौह पुरुष माने जानेवाले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी और भारत के पहले उपप्रधानमंत्री, सबसे बड़ा योगदान बंटवारे के बाद भारतीय रियासतों के भारत में विलय का है। इसके अलावा सूखाग्रस्त खेड़ा क्षेत्र के किसानों के लिए

अंग्रेज सरकार से कर में छूट देने की मांग की। जब अंग्रेज सरकार ने इस मांग को स्वीकार नहीं किया, तो सरदार पटेल, महात्मा गांधी और अन्य लोगों ने किसानों का नेतृत्व किया और उन्हें कर नहीं देने के लिए प्रेरित किया। अंत: में सरकार को झुकना पड़ा और किसानों को कर में राहत दे दी गई।

नरेन्द्र देव (जन्म- ३१ अक्टूबर)

नरेन्द्र देव भारत के प्रसिद्ध विद्वान, समाजवादी, विचारक, शिक्षाशास्त्री और देशभक्त थे। अपने पिता के प्रभाव से ही इनका राजनीति की ओर झुकाव हुआ था। नरेन्द्र देव गरम विचारों के व्यक्ति थे। वे सन १९१६ से १९४८ तक ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे थे। देश की आजादी के लिए इन्होंने कई बार जेल यात्राएँ भी कीं और जवाहरलाल नेहरू के साथ अहमदनगर किले में भी बन्द रहे। नरेन्द्र जी का व्यक्तित्व बड़ा ही असाधारण था। वे हिन्दी, संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी, पाली आदि भाषाओं पर समान अधिकार रखते थे। बौद्ध दर्शन के अध्ययन आदि में उनकी विशेष रूचि थी।

जी. माधवन नायर (जन्म- ३१ अक्टूबर)

जी. माधवन नायर भारत के प्रमुख व सम्मानित वैज्ञानिकों में से एक हैं। ये इसरो (भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन) के अंतरिक्ष विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष और सचिव पद पर कार्यरत थे। इनका ध्यान हमेशा उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में आत्म-निर्भरता हासिल करने और राष्ट्रीय विकास के लिए अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के लाभों को पहुंचाने, विशेषकर समाज के ग्रामीण और निधन वर्गों की जरूरतों को लक्षित करने पर केंद्रित रहा। वे इसरो की गतिविधियों के भावी विकास के लिए पथ प्रशस्त करने, विशेष रूप से प्रमोचन यानों के क्षेत्र में अंतरिक्ष तक कम लागत में पहुंच को सुसाध्य बनाने के लिए जिम्मेदार थे। जी. माधवन नायर ने अपने छह वर्षों के कार्यकाल के दौरान २५ सफल मिशन पूरे किए थे।

१ नवम्बर

दामोदर मेनन (निधन-१ नवंबर)

दामोदर मेनन भारत के प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों में से एक थे। पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा महात्मा गांधी का इनके जीवन पर व्यापक प्रभाव था। १९५७ में इन्हें केरल विधान सभा का सदस्य चुना गया था। दामोदर मेनन की गिनती उच्च कोटि के पत्रकारों में भी की जाती है। इनके आर्थिक विचार बड़े ही उदार हुआ करते थे। इन्होंने विभिन्न समयों में समदर्शी, स्वतंत्र, कहालम और पावर शक्ति पत्रों का भी संपादन किया। उनकी गणना केरल के प्रथम कोटि के पत्रकारों में होती थी।

प्रभा खेतान (जन्म- १ नवंबर)

प्रभा खेतान प्रभा खेतान फाउन्डेशन की संस्थापक अध्यक्षा, नारी विषयक कार्यों में सक्रिय रूप से भागीदार, फिगरेट नामक महिला स्वास्थ्य केद्र की स्थापक, १९६६ से १९७६ तक चमड़े तथा सिले-सिलाए वस्त्रों की निर्यातक, अपनी कंपनी न्यू होराईजन लिमिटेड की प्रबंध निदेशिका, हिन्दी भाषा की लब्ध प्रतिष्ठित उपन्यासकार, कवयित्री तथा नारीवाद चिंतक तथा समाज सेविका थीं। उन्हें कलकत्ता चैंबर ऑफ कॉमर्स की एकमात्र महिला अध्यक्ष होने का गौरव प्राप्त था। वे केन्द्रीय हिन्दी संस्थान की सदस्या थीं।

२ नवम्बर

अरुण शौरी (जन्म- २ नवंबर)

अरुण शौरी भारत के अदम्य निर्भीकता वाले पत्रकार, बुद्धिजीवी, प्रसिद्ध लेखक और राजनेता हैं। अरुण शौरी को उनकी पत्रकारिता के लिए १९८२ का मेग्सेसे पुरस्कार प्रदान किया गया। वह तीन बार राज्य सभा के सदस्य भी रहे। सन १९९० में उन्हें जर्नलिस्ट ऑफ द ईयर चुना गया था। इसी वर्ष (१९९०) में उन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए पद्मभूषण सम्मान भी प्राप्त हुआ। १९६८ से १९७२ और फिर १९७५ से १९७७ तक एक अर्थशास्त्री के रूप में इन्होंने विश्व बैंक में अपनी महत्वपूर्ण सेवाएँ दी हैं। भारत के योजना आयोग में सलाहकार के पद पर भी वे काम कर चुके हैं। प्रसिद्ध अंग्रेजी समाचार पत्र इंडियन एक्सप्रेस और द टाइम्स ऑफ इंडिया के सम्पादक भी अरुण शौरी रहे हैं। सन १९९८-२००४ तक भारत सरकार में मंत्री के पद को भी अरुण शौरी सुशोभित किया है।

अण्णा साहेब किर्लोस्कर (निधन- २ नवंबर)

अण्णा साहेब किर्लोस्कर का वास्तविक नाम बळवंत पांडुरंग किर्लोस्कर है। इन्होंने नाटकों के कलापक्ष को समृद्ध किया और मराठी रंगमंच की आधुनिक तकनीक आरंभ की। लोकमान्य तिलक के शब्दों में इन्होंने अपने नाटकों के द्वारा भारतीय संस्कृति का पुनरूद्धार किया। इनकी प्रेरणा से किर्लोस्कर नाटक मंडली की स्थापना हुई। उस मंडली ने पहला नाटक संगीत शाकुंतलम ही प्रस्तुत किया। नाटक अत्यधिक सफल रहा।

ममता कालिया (जन्म- २ नवंबर)

ममता कालिया समकालीन हिंदी लेखन जगत की अग्रणी हस्ताक्षर हैं। ममता कालिया ने कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक, संस्मरण और पत्रकारिता अर्थात साहित्य की लगभग सभी विधाओं में अपनी कलम का जादू बिखेरा। उन्होंने अपने लेखन में रोजमर्रा के संघर्ष में युद्धरत स्त्री का व्यक्तित्व उभारा। अपनी रचनाओं में वह न केवल महिलाओं से जुड़े सवाल उठाती हैं, बल्कि उन्होंने उनके उत्तर देने की भी कोशिश की हैं।

योगेश्वर दत्त (जन्म- २ नवंबर)

योगेश्वर दत्त भारत के प्रसिद्ध पहलवान तथा कुश्ती के खिलाड़ी हैं। उन्होंने वर्ष २०१२ में ग्रीष्मकालीन ओलम्पिक में कुश्ती की ६० कि.ग्रा. भारवर्ग की फ्रीस्टाइल प्रतियोगिता में देश के लिए काँस्य पदक जीता था। वर्ष २०१४ में योगेश्वर दत्त ने स्कॉटलैण्ड, ग्लास्गो में आयोजित कॉमनवेल्थ खेलों में ६५ कि.ग्रा. भारवर्ग की फ्रीस्टाइल कुश्ती में कनाडा के पहलवान को परास्त करके भारत को स्वर्ण दिलाया था। उनकी खेल उपलब्धियों पर भारत सरकार ने उन्हें राजीव गांधी खेल रत्न से सम्मानित किया था।

३ नवंबर

अमर्त्य सेन (जन्म- ३ नवंबर)

अमर्त्य सेन अर्थशास्त्र के लिये १९९८ का नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेवाले पहले एशियाई हैं। शांति निकेतन में जन्मे इस विद्वान अर्थशास्त्री ने लोक कल्याणकारी अर्थशास्त्र की अवधारणा का प्रतिपादन किया है। उन्होंने कल्याण और विकास के विभिन्न पक्षोंपर अनेक पुस्तकें तथा पर्चे लिखे हैं। प्रो. अमर्त्य सेन आम अर्थशास्त्रियों के सम्मान के समान नहीं हैं। वह अर्थशास्त्री होने के साथ-साथ, एक मानववादी भी हैं। इन्होंने अकाल, गरीबी, लोकतंत्र, स्त्री-पुरुष असमानता और सामाजिक मुद्दों पर जो पुस्तकें लिखी हैं, वे अपने आप में बेजोड़ हैं। अमर्त्य सेन हार्वड विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हैं। वे जादवपुर विश्वविद्यालय, दिल्ली स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स और ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में भी शिक्षक रहे हैं। अमर्त्य सेन ने एम.आई.टी. स्टैनफोर्ड, बकली और कॉरनेल विश्वविद्यालयों में अतिथि अध्यापक के रूप में भी शिक्षण कार्य किया है।

सोमनाथ शर्मा (शहीद- ३ नवंबर)

मेजर सोमनाथ शर्मा भारतीय सेना की कुमाऊ रेजिमेंट की चौथी बटालियन की डेल्टा कंपनी के कंपनी कमांडर थे जिन्होंने अक्टूबर-नवम्बर १९४७ के भारत-पाक संघर्ष में अपनी वीरता से शत्रु के छक्के छुड़ा दिये। उन्हें भारत सरकार ने मरणोपरान्त परमवीर चक्र से सम्मानित किया। परमवीर चक्र पाने वाले ये प्रथम व्यक्ति हैं।

चिदंबरम पिल्लई (निधन- ३ नवंबर)

चिदंबरम पिल्लई तमिल भाषा के विद्वान और प्रख्यात समाज-सुधारक थे। प्रसिद्ध तमिल ग्रन्थ तिरुकुरल पर उनका भाष्य बहुत प्रसिद्ध हुआ था। बंग-भंग के विरुद्ध आंदोलन में चिदंबरम पिल्लई ने स्वदेशी का प्रचार-प्रसार किया और लोगों को विदेशी सरकार के विरुद्ध प्रेरित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मानवजीत सिंह संधू (जन्म- ३ नवंबर)

मानवजीत सिंह सिंधू भारतीय निशानेबाज हैं, जो मुख्यत: ट्रेप शूटिंग के लिए जाने जाते हैं। २००६ में उन्होंने जागरेब में हुई विश्व चैंपियनशिप में ट्रैप शूटिंग में स्वर्ण पदक जीता था। वे दूसरे भारतीय हैं, जिन्होंने विश्व व स्तर पर हुई चैंपियनशिप प्रतियोगिता में स्वर्ण पदक जीता था। इस जीत के साथ ही मानवजीत ट्रैप शूटिंग की विश्व रैंकिंग में एक नम्बर पर आ गए थे। उन्हें इस उपलब्धि के लिए वर्ष २००६ के लिए राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

४ नवंबर

भाई परमानन्द (जन्म- ४ नवम्बर)

भाई परमानन्द अथवा पण्डित परमानन्द (जन्म- ४ नवम्बर, १८७६- मृत्यु- ८ दिसम्बर, १९४७) भारत के स्वतंत्रता संग्राम के महान क्रांतिकारी थे। वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी और एक महापुरुष थे। परमानन्द जी जहाँ आर्य समाज और वैदिक धर्म के सच्चे प्रचारक थे, वहीं दूसरी ओर एक इतिहासकार, साहित्यकार और प्रसिद्ध शिक्षाविद के रूप में भी उन्होंने ख्याति अर्जित की थी। भारत की स्वतंत्रता में मुख्य भूमिका निभानेवाले सरदार भगत सिंह, सुखदेव, रामप्रसाद बिस्मिल और करतार सिंह जैसे ना जाने कितने राष्ट्रभक्त युवकों ने इनसे प्रेरणा पाई थी। उनका निधन ८ दिसम्बर १९४७ में हुआ।

शकुन्तला देवी (जन्म- ४ नवम्बर)

शकुन्तला देवी जिन्हें आमतौर पर मानव संगणकों के रूप में जाना जाता है, बचपन से ही अद्भुत प्रतिभा की धनी एवं मानसिक परिकलित्र (गणितज्ञ) थी। उनकी प्रतिभा को देखते हुए उनका नाम १८९२ में गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्डस में भी शामिल किया गया। शकुन्तला देवी के अंदर पिछली सदी की किसी भी तारीख का दिन क्षणभर में बताने की क्षमता थी। उन्होंने कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। वह ज्योतिषी भी थीं। इनके ८४ वें जन्मदिन पर ४ नवम्बर २०१३ को गूगल ने उनके सम्मान में उन्हें गूगल डूउल समर्पित किया। उनका निधन २१ अप्रैल को हुआ।

वासुदेव बळवंत फड़के (जन्म- ४ नवम्बर)

वासुदेव बळवंत फड़के का जन्म ४ नवम्बर १८४५ को महाराष्ट्र में हुआ था। ये ब्रिटिश सरकार के खिलाफ सशस्त्र लड़ाई की शुरुआत करनेवाले भारत के पहले क्रांतिकारी थे। फड़के नौकरी करते थे। १८७१ में एक दिन वासुदेव बळवंत फड़के को अपनी मां की गंभीर बीमारी का तार मिला। तार लेकर वे अंग्रेज अधिकारी के पास छुट्टी मांगने के लिए गए, लेकिन उन्हें छुट्टी नहीं मिली। फड़के दूसरे दिन अपने गांव चले आए। गांव आने पर उन्होंने देखा कि उनका मुंह देखे बिना ही मां चल बसी है। इस घटना के बाद वासुदेव फड़के ने नौकरी छोड़ दी और अंग्रेजों के खिलाफ क्रांति की तैयारी करने लगे। उन्होंने पूरे महाराष्ट्र में घूम-घूम कर नवयुवकों को संगठित करने का प्रयास किया, पर सफलता नहीं मिली। तब उन्होंने वनवासी जातियों को संगठित किया और अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई को आगे बढ़ाया। फड़के बीमारी की हालत में २० जुलाई १८७९ को गिरफ्तार कर लिए गए। उन पर राजद्रोह का मुकदमा चला और आजन्म कालापानी की सजा देकर उन्हें जेल भेज दिया गया। जेल में फड़के को कड़ी शारीरिक यातनाएं दी गईं। इन यातनाओं के कारण १७ फरवरी १८८३ को उनकी मृत्यु हो गई।

वासुदेव बलवन्त फड़के ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध सशक्त विद्रोह का संगठन करनेवाले भारत के प्रथम क्रांतिकारी थे। वासुदेव बलवन्त फड़के का जन्म महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिल्हे के शिरढोणे नामक गांव में हुआ था। फड़के ने १८५७ ई. की प्रथम संगठित महाक्रांति की विफलता के बाद आजादी के महासमर की पहली चिनगारी जलायी थी। देश के लिए अपनी सेवाएं देते हुए १८७९ ई. में फड़के अंग्रेजोंद्वारा पकड़ लिये गए और आजन्म कारावास की सजा देकर इन्हें अंदर

भेज दिया गया। यहाँ पर फड़के को कड़ी शारीरिक यातनाएँ दी गईं। इसी के फलस्वरूप १८८३ ई. को इनकी मृत्यु हो गई। वासुदेव बलवंत फड़के भारत के स्वतंत्रता संग्राम के आदि क्रांतिकारी है जिन्होंने महाराष्ट्र की कोळी, भील तथा धांगड़ जातियों को एकत्र कर रामोशी नाक का क्रांतिकारी संगठन खड़ा कर ब्रिटिश शासन की चूलें हिला दी। मुक्ति संग्राम के लिए धन एकत्र करने के लिए उन्होंने धनी अंग्रेज सावकार को लूटा। पुणे नगर पर कब्जा करना उनका सबसे साहसी कारनामा था जिसके कारण ब्रिटिश सरकार उनके पीछे पड़ गयी। २० जुलाई, १८७९ को वे बीजापुर में पकड़े गए और अंग्रेजों ने उन्हें काले पानी का दंड दिया। निर्मम अत्याचार से एडन के कारागृह में उन्होंने दम तोड़ दिया।

भाई परमानन्द (जन्म- ४ नवंबर)

भाई परमानन्द अथवा पण्डित परमानन्द भारत के स्वतंत्रता संग्राम के महान क्रांतिकारी थे। वे बहुतआयामी व्यक्तित्व के धनी और एक महापुरुष थे। परमानन्द जी जहाँ आर्य समाज और वैदिक धर्म के सच्चे प्रचारक थे, वहीं दूसरी ओर एक इतिहासकार, साहित्यकार और प्रसिद्ध शिक्षाविद के रूप में भी उन्होंने ख्याति अर्जित की थी। भारत की स्वतंत्रता में मुख्य भूमिका निभानेवाले सरदार भगत सिंह, सुखदेव, रामप्रसाद बिस्मिल और करतार सिंह जैसे ना जाने कितने राष्ट्रभक्त युवकों ने इनसे प्रेरणा पाई थी।

५ नवम्बर

देशबंधु चितरंजन दास

देशबंधु, जिन्हें गांधीजी ने दी थी महानतम व्यक्ति की संज्ञा

देश के स्वाधीनता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले और अपनी तेजधार कलम से देशवासियों में आजादी की अलख जगानेवाले देशबंधु चितरंजन दास के प्रशंसकों में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का नाम भी लिया जाता है। गांधीजी देशबंधु को स्वतंत्रता का स्वप्नदृष्टा मानने के साथ ही एक सुलझा हुआ विचारक और महानतम व्यक्ति मानते थे। पांच नवम्बर १८७० को विक्रमपुर, ढाका (अब बांग्लादेश) के तेलिरबाग में जन्मे चितरंजन की शिक्षा इंग्लैंड में हुई जहां वह एक वकील के रूप में सामने आए। वकालत के क्षेत्र में उनका सफल कैरियर १९०९ में उस समय शुरु हुआ जब उन्होंने अलीपुर बम मामले में अरविन्दो घोष की सफल पैरवी की।

देश में गांधीजी के नेतृत्व में चले असहयोग आंदोलन के दौरान चितरंजन दास बंगाल में काफी सक्रिय रहे। इतिहासकार पी. हरीश के अनुसार उन्होंने ब्रिटिश कपड़ों के बहिष्कार को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और खुद भी अपने विदेशी कपड़ों की होली जलाकर खादी के कपड़े पहनने लगे। उन्होंने फॉरवर्ड नाम से एक अखबार निकाला लेकिन बाद में इसका नाम बदलकर लिबर्टी कर दिया जो लोगों को स्वतंत्रता की ओर प्रेरित करता था। कलकत्ता में जब नगर निगम की स्थापना हुई तो चितरंजन शहर के मेयर बने। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गया अधिवेशन में अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया और वरिष्ठ नेता मोती लाल नेहरू के साथ मिलकर स्वराज पार्टी का गठन किया। देशबंधु सांप्रदायिक सौहार्द के प्रबल पक्षधर थे और वह चाहते थे कि देश के हर कोने में शिक्षा का प्रचार प्रसार हो।

उनकी विरासत को बाद में उनके अनुयायियों खासकर सुभाष चंद्र बोस ने आगे बढ़ाया। साल १९२५ में देशबंधु का स्वास्थ्य बिगड़ गया और दार्जिलिंग में महात्मा गांधी उन्हें देखने गए। १६ जून १९२५ को तीव्र ज्वर के कारण उनका निधन हो गया। महात्मा गांधी ने उनकी शव यात्रा का नेतृत्व किया और कहा कि देशबंधु महानतम व्यक्तियों में से एक थे। उन्होंने हमेशा भारत की आजादी का ख्वाब देखा तथा इसके सिवाय और कोई बात नहीं की।

चित्तरंजन दास एक महान स्वतंत्रता सेनानी थे, जिनका जीवन भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में युगांतकारी था। चित्तरंजन दास को प्यार से देशबंधु (देश के मित्र) कहा जाता था। ये महान राष्ट्रवादी तथा प्रसिद्ध विधि-शास्त्री थे। चित्तरंजन दास अलीपुर षडयंत्र काण्ड (१९०८ ई.) के अभियुक्त अरविन्द घोष के बचाव पक्ष के वकील थे। असहयोग आंदोलन के अवसर पर इन्होंने अपनी वकालत छोड़ दी थी। १९२१ ई. में अहमदाबाद में हुए कांग्रेस के अधिवेशन के ये अध्यक्ष थे। ये स्वराज्य पार्टी के संस्थापक थे। इन्होंने १९२३ में लाहौर तथा १९२४ में अहमदाबाद में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की अध्यक्षता भी की थी।

बनारसी दास गुप्ता (जन्म- ५ नवंबर)

बनारसी दास गुप्ता हरियाणा राज्य के भूतपूर्व मुख्यमंत्री थे। उन्होंने स्वतंत्रता सेनानी होते हुए सामाजिक, राजनीतिक एवं सार्वजनिक जीवन को अपने अंदाज में जिया। बनारसी दास गुप्ता हिन्दी भाषा के पक्षधर और यथार्थवादी आदर्श

जननायक थे। उन्होंने राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को मजबूत बनाकर हरियाणा की प्रगति में अपना बहुमूल्य योगदान दिया था।

फिरोजशाह मेहता (निधन- ५ नवंबर)

फिरोजशाह मेहता भारतीय राजनेता, बंबई नगरपालिका के संविधान (चार्टर) के निर्माता तथा अंग्रेजी भाषा के अखबार बॉम्बे क्रॉनिकल के संस्थापक (१९१३) थे। १९०४ में उन्हें नाइट की उपाधि से विभूषित किया गया। १९११ में उन्होंने उस सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना में योगदान किया, जो भारतीयों द्वारा वित्त पोषित तथा नियंत्रित था।

फिरोजशाह मेहता शिक्षा पर बहुत जोर देते थे। नौकरशाही को जनता की मां-बाप समझने की प्रवृत्ति का उन्होंने सदा विरोध किया। वे अपने समय के उन थोड़े से नेताओं में से थे, जिनका जनता और अंग्रेज सरकार दोनों सम्मान करते थे। समय-समय पर वे सरकार से भिड़ भी जाते थे।

फैयाज खां (निधन- ५ नवंबर)

फैयाज खां ध्रुपद तथा ख्याल गायन शैली के श्रेष्ठतम गायक थे। पिछली शताब्दी के पूर्वार्द्ध के जिन संगीतज्ञों की गणना शिखर पुरुष के रूप में की जाती है, उनमें फैयाज खां का नाम भी शामिल है। ध्रुपद, खयाल, तराना और ठुमरी आदि, इन सभी शैलियों की गायकी पर उन्हें कुशलता प्राप्त थी। प्रकृति ने उन्हें गंभीर कण्ठ का उपहार तो दिया ही था, इसके साथ ही वह अपने मधुर स्वरों से श्रोताओं पर रस वर्षा कर देते थे।

भूपेन हजारिका (निधन- ५ नवंबर)

भूपेन हजारिका भारत के ऐसे विलक्षण कलाकार थे जो अपने गीत खुद लिखते थे, संगीतबद्ध करते थे और गाते थे। भूपेन हजारिका को दक्षिण एशिया के श्रेष्ठतम सांस्कृतिक दूतों में से एक माना जाता है। उन्होंने कविता लेखन, पत्रकारिता, गायन, फिल्म निर्माण आदि अनेक क्षेत्रों में काम किया है। भूपेंद्र हजारिका पहले शख्सियत थे जिन्होंने असमिया संस्कृति को विश्व मंच तक पहुंचाया था।

६ नवम्बर

सिद्धार्थ शंकर राय - (निधन- ६ नवंबर)

सिद्धार्थ शंकर राय पश्चिम बंगाल के भूतपूर्व मुख्यमंत्री और कांग्रेस के वरिष्ठ नेता थे। वे सन १९७२ से १९७७ तक पश्चिम बंगाल राज्य के मुख्यमंत्री रहे थे। सिद्धार्थ शंकर राय भारत के क्रांतिकारी और स्वतंत्रता सेनानी देशबंधु चितरंजन दास के पोते थे। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी केशासन काल में वे २ अप्रैल, १९८६ से ८ दिसंबर, १९८९ तक पंजाब के राज्यपाल पद पर नियुक्त थे।

७ नवम्बर

सी.वी. रमण

ब्रिटिश काल में भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय वैज्ञानिकों को सम्मान दिलाने के लिए डॉ. सी वी रमण ने जो परिश्रम किया वह एक जुझारू व्यक्तित्व का अनुपम उदाहरण है। वर्ष १९३० में डॉ. सी. वी. रमण पहले गैर श्वेत एशियाई और भारतीय बने जिन्हें उनके कार्य के लिए भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। प्रकाश के प्रकीर्णन और रमण प्रभाव की खोज के लिए उन्हें यह प्रतिष्ठित सम्मान प्रदान किया गया। रमण के लिए समर्थन जुटाना और नोबेल देने के लिए नामांकित करना एक कठिन कार्य था। लेकिन अपनी खोज के दो वर्ष बाद रिकार्ड समय में उन्होंने यह सम्मान प्राप्त किया। वर्ष १९३० में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार की दौड़ में ३९ लोग थे। २१ वैध सिफारिशें थी। इसमें से अधिक सिफारिशें परमाणु सिद्धांत या परमाणु भौतिकी से संबद्ध थी। चरण दर चरण प्रक्रिया में रमण को सबसे योग्य माना गया।

१९२९ में सी. फेब्रे ने मांटपेलियर के जे कैबानेस और कोलकाता के रमण को भौतिकी के लिए नोबेल पुरस्कार देने सिफारिश की वहीं प्रसिद्ध वैज्ञानिक नील्स बोर ने आर. डब्ल्यू. वुड या रमण में से किसी को पुरस्कार देने की सिफारिश की। उस वर्ष ४८ सिफारिशें भेजी गई थी जिसमें रमण को सफलता हाथ नहीं लगी। भारतीय खगोल वैज्ञानिक डॉ. मेघनाद साहा और प्रतिष्ठित परमाणु वैज्ञानिक डब्ल्यू हाइजेनबर्ग भी इस दौड़ में सबसे बड़े दावेदार थे। इस दौड़ में वह पीछे रह गए थे। ७ नवंबर १८८८ को रमण का जन्म चेन्नई में हुआ था। बाद में उनका परिवार आंध्र प्रदेश के विशाखापत्तनम आ गया। यहां उनके पिता गणित के व्याख्याता नियुक्त हुए। रमण एक कुशाग्र छात्र थे। वर्ष १९०७ में उन्होंने वित्तीय सिविल सेवा ग्रहण की और कोलकाता में सहायक महालेखा अधिकारी नियुक्त हुए। खाली वक्त में रमण ध्वनि के क्षेत्र में इंडियन एसोसिएशन फोर द कल्टीवेशन आफ साइंस में काम करने लगे। यह एक अग्रणी संस्था थी जो लंदन स्थित रॉयल इंस्टीट्यूशन की तर्ज पर स्थापित हुई थी। रमण ने करीब १० वर्ष तक वहां स्वतंत्र रूप से कार्य किया। १९१७ में वह कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रोफेसर नियुक्त हुए और १९२१ में वह कलकत्ता विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व करते हुए ब्रिटेन में आक्सफोर्ड गए। हालांकि वह भौतिकी में ध्वनिशास्त्र के प्रोफेसर थे लेकिन उन्होंने प्रकाश के क्षेत्र में भी बहुत काम किया। प्रकाश का प्रकीर्णन इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह एक प्रचलित धारणा थी। पहले माना जाता था कि महासागरों का पानी नीला दिखता है क्योंकि जल में निलंबित कण प्रकाश का अवशोषण कर लेते हैं। लेकिन रमण ने सबसे पहले बताया कि यह प्रकाश के परावर्तन से स्वतंत्र होता है बल्कि यह आणविक विवर्तन पर निर्भर करता है। कलकत्ता में किए इस प्रयोग से प्रकाश से संबंधित प्रयोग की दिशा में नई नींव पड़ी। रमण ने बोर को एक जवाबी खत लिखा था, जिसमें उन्होंने कहा था कि विकिरण से संबंधित मेरे प्रयोगों ने वैज्ञानिक समुदाय को बहुत उत्साहित किया है और मैं समझता हूं कि आप अपने प्रभाव का उपयोग नोबेल पुरस्कार समिति के समक्ष करेंगे ताकि १९३० में भारत को पहली बार यह पुरस्कार मिल सके। क्वांटम मैकेनिक्स के क्षेत्र में रमण के योगदान को आर.डब्ल्यू. वुड के इस बयान से समझा जा सकता है जिसमें उन्होंने कहा था, ऐसा लगता है कि यह बहुत सुंदर खोज है जो रमण के लंबे और धैर्य से किए गए प्रयोग से निकली है। क्वांटम सिद्धांत के अस्तित्व के बारे में इससे बड़े प्रयोग नहीं हो सकता। परमाणु संरचना और उनसे विकिकरण की खोज करनेवाले नील्स बोर के रमण से संपर्क थे और समय समय पर दोनों विचार-विमर्श करते थे। २१ नवंबर १९७० को रमण का निधन हो गया। रमण ने १९०२ में कोलकाता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में दाखिला लिया

था। प्रकाशिकी और ध्वनिकी से उन्होंने अपने वैज्ञानिक कैरियर की शुरुआत की और आजीवन इसीसे जुड़े रहे।

संयुक्त राज्य अमेरिका के १६ वें राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन लोकतंत्र के मसीहा माने जाते हैं। राष्ट्रपति बनने से पहले भी वे बहुत लोकप्रिय नेता थे। वे हमेशा जनमत का आदर करते थे। साधारण व्यक्ति के अच्छे सुझाव को भी मान लेने में उन्हें संकोच नहीं होता था। उनका बचपन अभावों में बीता। कभी नाव चलाकर, तो कभी लकड़ी काटकर भी उन्हें जीविका चलानी पड़ती थी। उनकी उदारता का परिचय एक छोटी-सी कहानी से मिलता है।

एक बार उन्हें पता चला कि एक पड़ोसी के पास जॉर्ज वॉशिंगटन की जीवनी वाली एक किताब है। लिंकन के लिए पुस्तक खरीद कर पढ़ना भी मुमकिन नहीं था। मगर पड़ोसी से किताब मांगने में उन्हें हिचक महसूस हुई। पड़ोसी ने उनकी रुचि को देखते हुए वह पुस्तक उन्हें दे दी। लिंकन ने उसे जल्दी ही लौटाने का वादा किया। एक दिन जोरों की बारिश हुई। चूंकि लिंकन झोपड़ी में रहते थे, जिसकी छत बारिश का पानी नहीं रोक पाती थी।

बारिश में वह पुस्तक पूरी तरह भीग गयी। लिंकन ने वह पुस्तक पूरी तरह पढ़ी भी नहीं थी फिर भी दुखी मन से पड़ोसी के पास जाकर बोले, आपकी पुस्तक को ठीक से संभाल नहीं पाने का मुझसे अपराध हुआ है, किंतु मैं आपको नयी पुस्तक लाकर दूंगा। पड़ोसी ने उनकी गरीबी को देखते हुए सवाल किया, नयी पुस्तक किस तरह लाकर दोगे? लिंकन बोले, मुझे अपनी मेहनत पर पूरा विश्वास है। मैं आपके खेत में मजदूरी कर पुस्तक के दोगुने दाम का काम कर दूंगा। पड़ोसी मान गया। लिंकन ने काम करके पुस्तक के दाम की भरपाई कर दी और वॉशिंग्टन की जीवनी वाली किताब उन्हीं की संपत्ति हो गयी।

इस प्रकार अपनी मेहनत से लिंकन ने अपने पुस्तकालय की पहली पुस्तक प्राप्त की थी। लिंकन के जीवन की यह घटना सिखाती है कि हमें जीवन की यह घटना सिखाती है कि हमें जीवन में अगर कुछ हासिल करना है, तो अपने श्रम पर ही भरोसा करना चाहिए, न किस किसी दूसरे पर।

खुद के मेहनत से जो उपलब्धि प्राप्त होती है, उसमें ही आप प्रशंसा के पात्र होते हैं। अपने ऊंचे विचारों और महान व्यक्तित्व के कारण ही एक दिन लिंकन अमेरिका के राष्ट्रपति पद तक पहुंचे।

रमन प्रभाव का है अणुओं और परमाणुओं की संरचना का पता लगाने में विशेष योगदान

जाने माने वैज्ञानिक चंद्रशेखर वेंकटरमन द्वारा प्रतिपादित रमन प्रभाव का अणुओं और परमाणुओं की संरचना पता लगाने में काफी योगदान है। किरोडीमल कॉलेज में भौतिक शास्त्र के प्रोफेसर अगम कुमार झा ने कहा कि रमन स्केटरिंग प्रभाव या रमन प्रभाव फोटोन कणों की इनलैस्टिक स्केटरिंग या वितरण से संबंधित है। उन्होंने कहा कि जब प्रकाश किसी क्रिस्टल पर पड़ता है तो उसके तरंगदैर्ध्य और आवृत्ति में बदलाव आता है। इससे उस क्रिस्टल के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां जैसे आण्विक संरचना, गुण आदि की जानकारी हासिल करने में मदद मिलती है। इस संबंध में किरोडीमल कॉलेज में भौतिक शास्त्र के प्रोफेसर डॉ. इंद्र मोहन कपाही ने कहा कि रमन प्रभाव ने आइन्स्टाइन के फोटोन सिद्धांत को प्रमाणित किया। उन्होंने कहा कि आइन्सटाइन ने कहा था कि प्रकाश में कणों (पार्टिकल) के गुण भी पाए जाते हैं। न्यूटन का कहना था कि प्रकाश एक तरंग है और इसमें कणों के गुण नहीं पाए जाते जबकि आइंसटाइन का सिद्धांत इसके विपरीत था। यह फोटोन की मौजूदगी की बात कहता था रमन प्रभाव ने आइंसटाइन के सिद्धांत को प्रमाणित किया। प्रसिद्ध वैज्ञानिक चंद्रशेखर वेंकटरमन का जन्म सात नवंबर १८८८ को तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली में हुआ था। उनके

पिता चंद्रशेखर अय्यर कॉलेज में भौतिक के प्राध्यापक थे। वेंकटरमन की प्रारंभिक शिक्षा विशाखापट्टनम में हुई। उन्होंने महज १२ वर्ष की आयु में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। वेंकटरमन के पिता उन्हें पढ़ाई के लिए विदेश भेजना चाहते थे किंतु एक डॉक्टर ने स्वास्थ्य कारणों के चलते उन्हें देश से बाहर न भेजने की सलाह दी। उन्होंने १९०३ में प्रेसिडेंसी कॉलेज में प्रवेश लिया। विश्वविद्यालय में बीए की परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त करनेवाले वह एकमात्र छात्र थे। उन्हें भौतिकी में स्वर्ण पदक भी मिला। वर्ष १९०६ में वेंकटरमन का विवर्तन पर एक शोध लंदन की फिलोसोफिकल पत्रिका में प्रकाशित हुआ। वेंकटरमन की सबसे महत्वपूर्ण खोज रमन स्केटरिंग है जिसे रमन प्रभाव के नाम से जाना जाता है। इस खोज के लिए उन्हें १९३० में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से नवाजा गया। रमन प्रभाव की खोज २८ फरवरी १९२८ को होने के कारण इस तारीख को भारतीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाया जाता है। वेंकटरमन का २१ नवंबर १९७० में ८२ वर्ष की आयु में निधन हो गया।

रामन पहले एशियाई और अश्वेत थे, जिन्होंने विज्ञान में नोबेल पुरस्कार जीता था। यह उपलब्धि वास्तव में एक ऐतिहासिक घटना थीं। पुरस्कार की घोषणा के बाद वेंकटरामन ने अपनी प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि जब नोबेल पुरस्कार की घोषणा की गई थी तो मैंने इसे अपनी व्यक्तिगत विजय माना, मेरे लिए और मेरे सहयोगियों के लिए एक उपलब्धि एक अत्यंत असाधारण खोज को मान्यता दी गई है, उस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए जिसके लिए मैंने सात वर्षों से काम किया है। लेकिन जब मैंने देखा कि उस खचाखच हॉल में मेरे इर्द-गिर्द पश्चिमी चेहरों का समुद्र है और मैं, केवल एक ही भारतीय, अपनी पगड़ी और बन्द गले के कोट में था, तो मुझे लगा कि मैं वास्तव में अपने लोगों और अपने देश का प्रतिनिधित्व कर रहा हूं। जब किंग गुस्टाव ने मुझे पुरस्कार दिया तो मैंने अपने आपको वास्तव में विनम्र महसूस किया, यह भावप्रवण पल था लेकिन मैं अपने ऊपर नियंत्रण रखने में सफल रहा। जब मैं घूम गया और मैंने ऊपर ब्रिटिश यूनियन जैक देखा जिसके नीचे मैं बैठा था और तब मैंने महसूस किया कि मेरे गरीब देश, भारत का अपना ध्वज भी नहीं है।

चंद्रशेखर वेंकट रामन (जन्म- ७ नवंबर)

चंद्रशेखर वेंकट रामन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वैज्ञानिक संसार में भारत को ख्याति दिलाई। प्राचीन भारत में विज्ञान की उपलब्धियाँ थीं जैसे- शून्य और दशमलव प्रणाली की खोज, पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के बारे में तथा आयुर्वेद के फारमूले इत्यादि। मगर पूर्णरूप से विज्ञान के प्रयोगात्मक कोण में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई थी। रामन ने उस खोये रास्ते की खोज की और नियमों का प्रतिपादन किया जिनसे स्वतंत्र भारत के विकास और प्रगति का रास्ता खुल गया।

बिपिन चन्द्र पाल (जन्म- ७ नवम्बर)

बिपिन चंद्र पाल का नाम भारत के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में क्रांतिकारी विचारों के जनक के रूप में आता है, जो अंग्रेजों की चूलें हिला देनेवाली लाल बाल पाल तिकड़ी का एक हिस्सा थे। बिपिन चन्द्र कांग्रेस के क्रांतिकारी देशभक्तों लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक और बिपिन चन्द्र पाल (लाल बाल पाल) की तिकड़ी का हिस्सा थे। वंदे मातरम पत्रिका के संस्थापक रहे बिपिन चंद्र पाल एक समाज सुधारक भी थे, जिन्होंने परिवार के विरोध के बावजूद

एक विधवा से शादी की थी।

स्वतंत्रता आंदोलन की बुनियाद तैयार करने में प्रमुख भूमिका निभानेवाली लाल बाल पाल की तिकड़ी में से एक विपिनचंद्र पाल राष्ट्रवादी नेता होने के साथ-साथ शिक्षक, पत्रकार, लेखक व बेहतरीन वक्ता भी थे और उन्हें भारत में क्रांतिकारी विचारों का जनक भी माना जाता है। इस तिकड़ी ने १९०५ में बंगाल विभाजन के विरोध में अंग्रेजी शासन के खिलाफ आंदोलन किया जिसे बड़े पैमाने पर जनता का समर्थन मिला। तिकड़ी के अन्य नेताओं में लाला लाजपत राय और बाल गंगाधर तिलक शामिल थे।

गरम विचारों के लिए मशहूर इन नेताओं ने अपनी बात तत्कालीन विदेशी शासक तक पहुंचाने के लिए कई ऐसे तरीके इजाद किए जो एकदम नए थे। इन तरीकों में ब्रिटेन में तैयार उत्पादों का बहिष्कार, मैनचेस्टर की मिलों में बने कपड़ों से परहेज, औद्योगिक तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में हड़ताल आदि शामिल हैं। उन्होंने महसूस किया कि विदेशी उत्पादों की वजह से देश की अर्थव्यवस्था खस्ताहाल हो रही है और यहां के लोगों का काम भी छिन रहा है। उन्होंने अपने आंदोलन में इस विचार के दौरान गरम धड़े के अभ्युदय को महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि इससे आंदोलन को एक नई दिशा मिली और इससे लोगों के बीच जागरूकता बढ़ी। गांधी स्मारक निधि के सचिव रामचंद्र राही के अनुसार राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान जागरूकता पैदा करने में उनकी अहम भूमिका रही। उनका यकीन था कि सिर्फ प्रेयर पीटिशन से स्वराज नहीं हासिल होनेवाला है।

रामचंद्र राही के अनुसार आंदोलन में महात्मा गांधी के शामिल होने के पहले विदेशी शासन के प्रति लोगों में जो नाराजगी एवं रोष था, वह विभिन्न तरीके से अभिव्यक्त किया जा रहा था। उन्हीं रूपों में से एक गरम दल के नेताओं का तरीका था। उसे जनता के एक बड़े वर्ग के बीच पसंद किया जा रहा था।

राही के अनुसार स्वतंत्रता आंदोलन की बुनियाद तैयार करने में इस तिकड़ी की प्रमुख भूमिका रही। हालांकि बाद में महात्मा गांधी ने महसूस किया कि हिंसा या टकराव के माध्यम से शक्तिशाली ब्रिटिश शासन से निजात पाना कठिन है और उन्होंने सत्याग्रह एवं अहिंसा का रास्ता अपनाया।

राही का मानना है कि गांधी युग के पहले के दौर में राष्ट्रीय आंदोलन पर इस तिकड़ी का काफी प्रभाव रहा। ७ नवंबर १८५८ को अविभाजित भारत के हबीबगंज जिले में (अब बांग्लादेश में) एक संपन्न घर में पैदा विपिनचंद्र पाल सार्वजनिक जीवन के अलावा अपने निजी जीवन में भी अपने विचारों पर अमल करनेवाले और स्थापित दकियानूसी मान्यताओं के खिलाफ थे। उन्होंने एक विधवा से विवाह किया था जो उस समय दुर्लभ बात थी। इसके लिए उन्हें अपने परिवार से नाता तोड़ना पड़ा। लेकिन धुन के पक्के पाल ने दबावों के बावजूद कोई समझौता नहीं किया। किसी के विचारों से असहमत होने पर वह उसे व्यक्त करने में पीछे नहीं रहते।

यहां तक कि सहमत नहीं होने पर उन्होंने महात्मा गांधी के कुछ विचारों का भी विरोध किया था। केशवचंद्र सेन, शिवनाथ शास्त्री जैसे नेताओं से प्रभावित पाल को श्री अरविन्द के खिलाफ गवाही देने से इंकार करने पर छह महीने की सजा हुई थी। इसके बाद भी उन्होंने गवाही देने से इंकार कर दिया था। जीवन भर राष्ट्रहित के लिए काम करनेवाले पाल का २० मई १९३२ को निधन हो गया।

बिपिन चंद्र पाल क्रांतिकारी तिकड़ी लाल, बाल, पाल के अहम किरदार थे जिन्होंने ब्रितानिया हुकूमत की चुलें हिलाकर रख दी थीं। उन्हें गांधी जी के प्रथम आलोचकों में से एक माना जाता है।

बिपिन चंद्र पाल का जन्म सात नवम्बर, १८५८ को हबीबगंज जिले के पोइल गांव में हुआ था जो वर्तमान में बांग्लादेश में पड़ता है। वह एक शिक्षक, पत्रकार, लेखक और मशहूर वक्ता होने के साथ ही एक क्रांतिकारी भी थे जिन्होंने लाला लाजपत राय (लाल) और बाल गंगाधर तिलक (बाल) के साथ मिलकर अंग्रेजी शासन से जमकर संघर्ष लिया। इतिहासकार सर्वदानंदन के अनुसार इन तीनों क्रांतिकारियों की जोड़ी आजादी की लड़ाई के दिनों में लाल, बाल, पाल के नाम से मशहूर थी। इन्हीं तीनों ने सबसे पहले १९०५ में अंग्रेजों के बंगाल विभाजन का जमकर विरोध किया और इसे एक बड़े आंदोलन का रूप दे दिया। पाल राष्ट्रवादी पत्रिका वंदे मातरम के संस्थापक भी थे। उन्होंने जब एक विधवा को अपनी जीवनसंगिनी बनाया तो घरवालों से उन्हें जबर्दस्त विरोध का सामना करना पड़ा। बाल गंगाधर तिलक की १९०७ में गिरफ्तारी और ब्रिटिश सरकार द्वारा दमन की कार्रवाई शुरू किए जाने के बाद वह इंग्लैंण्ड चले गए जहां वह इंडिया हाउस से जुड़े और स्वराज पत्रिका की स्थापना की। हालांकि १९०९ में मदन लाल ढींगरा द्वारा कर्जन वाइली को मौत के घाट उतार दिए जाने के बाद यह पत्रिका बंद हो गई। पत्रिका के बंद हो जाने से पाल को लंदन में मानसिक तनाव के दौर से गुजरना पड़ा और नतीजतन वह कट्टर चरण से पूरी तरह दूर हो गए। उन्होंने आजाद देशों का एक संघ बनाने की परिकल्पना का सूत्रपात किया जो किसी एक देश की सीमा से काफी परे हो। पाल गांधीजी की सबसे पहले आलोचना करनेवालों में शामिल थे। जब गांधी जी भारत पहुंचे तब भी उन्होंने उनकी आलोचना जारी रखी। १९२१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सत्र में अपने अध्यक्षीय भाषण में पाल ने गांधीजी की खुलेआम तीखी आलोचना की। उन्होंने गांधी जी की आलोचना करते हुए कहा, आप जादू चाहते हैं। मैंने आपको तर्क देने की कोशिश की। आप मंत्र चाहते हैं मैं कोई ऋषि नहीं हूं जो मंत्र दे सकूं। जब मैं सच जानता हूं तो मैंने कभी आधा सच नहीं बोला। इसके लिए पाल को भी राष्ट्रवादियों की आलोचना का शिकार होना पड़ा। पाल १९२२ में राजनीतिक जीवन से अलग हो गए और फिर कभी इस तरफ मुड़कर नहीं देखा। २० मई १९३२ को उनका निधन हो गया। प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने १९५८ में पाल की जन्मशती पर उन्हें ऐसा महान व्यक्ति करार दिया जिसने राजनीतिक और धार्मिक, दोनों ही क्षेत्रों में उच्चस्तरीय भूमिका निभाई। पाल को भारत में क्रांतिकारी विचारों का जनक भी कहा जाता है।

एन.जी. रंगा (जन्म- ७ नवंबर)

एन.जी. रंगा भारत के स्वतंत्रता सेनानी, सांसद तथा प्रसिद्ध किसान नेता थे। एन.जी. रंगा उन चंद नेताओं में से एक थे, जिन्हें कृषि की समस्याओं का गहन ज्ञान था। उन्होंने कांग्रेस में कई महत्वपूर्ण पद प्राप्त किए, लेकिन सहकारी कृषि पर नेहरू जी के साथ विवाद होने के कारण उन्होंने त्यागपत्र दे दिया था। एन.जी.रंगा ने कृषिकर लोक पार्टी के नाम से किसानों की एक पार्टी की स्थापना की थी, जिसका बाद में स्वतंत्र पार्टी में विलय हो गया, जिसके वे संस्थापक सदस्य और अध्यक्ष थे।

सी. सुब्रह्मण्यम (निधन- ७ नवम्बर)

सी. सुब्रह्मण्यम की कृषि नीतियों के कारण १९७२ में खाद्यान्न का जो रिकॉर्ड उत्पादन हुआ, इस घटना को हरित क्रांति

की संज्ञा दी गई। कृषि नीति में आपके योगदान के लिए डॉ. बोरलाग का कहना है कि सी. सुब्रह्मध्यम की दूरदृष्टि और प्रभाव के कारण कृषि सम्बन्धी यह महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। किसी भी कार्य के लिए जो राजनीतिक निर्णय लिए जाते हैं, उनको लागू करने के लिए पूर्ण प्रयत्न १९६४-१९६७ के उस काल में हुआ, जब सी. सुब्रह्मण्यम राजनीतिक परिदृश्य को बदलने का प्रयत्न कर रहे थे।

जीवराज मेहता- (निधन- ७ नवम्बर)

जीवराज मेहता ने १९३०, १९४३ और १९४५ में इंडियन मेडिकल एसोसिएशन की अध्यक्षता की। १९४६ ई. में वे स्वास्थ्य सेवाओं के डायरेक्टर जनरल बनाये गए। राज्यों के पुनर्गठन के समय वे बड़ौदा रियासत के दीवान बने थे। १९४९ में जीवराज मेहता मुंबई राज्य के लोक निर्माण मंत्री और १९५२ में वित्तमंत्री बने। १९६० में जब गुजरात नवगठित राज्य बना तो जीवराज मेहता को वहां का पहला मुख्यमंत्री बनाया गया। इस पद पर वह सितम्बर १९६० से अप्रैल १९६३ तक रहे। बाद में वह यूनाइटेड किंगडम में भारतीय उच्चायुक्त के रूप में १९६३ से १९६६ तक रहे। १९७१ में वे लोकसभा के सदस्य भी चुने गए थे।

अश्विनी कुमार दत्त (निधन- ७ नवम्बर)

१८८० ई. से ही अश्विनी कुमार दत्त ने सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना शुरू कर दिया था। सर्वप्रथम उन्होंने बारीसाल में लोकमंच की स्थापना की। वर्ष १८८६ में कांग्रेस के दूसरे कोलकाता अधिवेशन में प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। १८८७ की अमरावती कांग्रेस में उन्होंने कहा- यदि कांग्रेस का संदेश ग्रामीण जनता तक नहीं पहुंचा तो यह सिर्फ तीन दिन का तमाशा बनकर रह जाएगी। उनके इन विचारों का प्रभाव ही था कि वर्ष १८९८ में उनको पंडित मदनमोहन मालवीय, दीनशावाचा आदि के साथ कांग्रेस का नया संविधान बनाने का काम सौंपा गया था।

८ नवम्बर

लालकृष्ण आडवाणी (जन्म- ८ नवंबर)

लालकृष्ण आडवाणी भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता और भारत के पूर्व उप प्रधानमंत्री हैं। भारतीय जनता पार्टी को भारतीय राजनीति में एक प्रमुख पार्टी बनाने में उनका योगदान सर्वोपरि कहा जा सकता है। वे कई बार भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रह चुके हैं। भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार में दो बार (१९९८ और १९९९) केंद्रीय गृहमंत्री नियुक्त हुए। आडवाणी ने पार्टी को पुनर्जीवित कर मजबूत बनाने का प्रमुख रूप से उत्तरदायित्व निभाया।

सितारा देवी (जन्म- ८ नवंबर)

सितारा देवी भारत की प्रसिद्ध नृत्यांगना थीं। उनका नाम कथक नृत्यांगना के रूप में किसी परिचय का मोहताज नहीं है। मात्र सोलह साल की उम्र में उनका नृत्य देखकर गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने उन्हें कथक क्वीन के खिताब से सम्मानित किया था। आज भी लोग इसी खिताब से उनका परिचय कराते हैं। इसके अतिरिक्त सितारा देवी के खाते में पद्मश्री और कालिदास सम्मान भी है, जो कथक के प्रति उनकी सच्ची लगन और मेहनत को दर्शाते हैं।

लोचन प्रसाद पाण्डेय (निधन- ८ नवम्बर)

लोचन प्रसाद पाण्डेय प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार थे। इन्होंने हिन्दी एवं उड़िया, दोनों भाषाओं में काव्य रचनाएँ भी की हैं। सन १९०५ से ही इनकी कविताएँ सरस्वती तथा अन्य मासिक पत्रिकाओं में निकलने लगी थीं। लोचन प्रसाद पाण्डेय की कुछ रचनाएँ कथाप्रबंध के रूप में हैं तथा कुछ फुटकर। भारतेंदु साहित्य समिति के भी ये सदस्य थे। मध्य प्रदेश के साहित्यकारों में इनकी विशेष प्रतिष्ठा थी। आज भी इनका नाम बड़े आदर से लिया जाता है।

गुरु हर राय (निधन- ८ नवंबर)

गुरु हर राय सिखों के सातवें गुरु थे। वे न केवल एक महान आध्यात्मिक और राष्ट्रवादी महापुरुष थे, बल्कि महान योद्धा भी थे। उनका जन्म सन १६३० में कीरतपुर, रोपड़ में हुआ था। वह बाबा गुरदित्ता जी एवं माता निहाल कौर जी के पुत्र तथा गुरु हरगोविंद साहिब जी के पोते थे। गुरु हरगोविंद साहिब जी ने ही अपने पोते हर राय जी को १४ वर्ष की छोटी सी आयु में सप्तम नानक के रूप में स्थापित किया था। गुरु हर राय साहिब जी के दो पुत्र थे, श्री रामराय जी तथा श्री हरिकिशान साहिब जी, जो कि सिखों के अष्टम गुरु हैं। गुरु हर राय साहिब जी ने अपने दादा गुरु हरगोविंद साहिब जी के सान्निध्य में रहकर सिख योद्धाओं के दल को पुनर्गठित कर उनमें नई ऊर्जा का संचार किया था। उन्होंने कीरतपुर में एक आयुर्वेदिक अस्पताल एवं अनुसंधान केंद्र स्थापित किया था। एक बार मुगल शासक शाहजहां का पुत्र दारा शिकोह किसी बीमारी से पीड़ित हुआ। कई हकीमों से उसका इलाज किया गया, लेकिन उसकी हालत नहीं सुधरी। अंतत: गुरु साहिब जी की कृपा से उसका इलाज हुआ और दारा शिकोह मौत के मुंह से बच गया। गुरु हर राय साहिब ने अपने गुरु पद काल के दौरान बहुत सी कठिनाइयों का सामना किया। इसी बीच शाहजहां की मृत्यु हुई। उनके बाद सत्ता पर आसिन हुए शासक औरंगजेब ने गुरु साहिब पर कई बेबुनियाद आरोप लगाए थे। अपने जीवन संघर्ष के दौरान कई आयामों को देखनेवाले गुरु हर राय जी ने अपने अंतिम समय को नजदीक आते देख अपने छोटे पुत्र हरकिशन जी को अष्टम नानक के रूप में स्थापित किया और कार्तिक वदी ९ बिक्रम संवत १७१८ (८ नवंबर १६६१) को कीरतपुर साहिब में वह ज्योति जोत समा गए।

९ नवम्बर

इन्द्र विद्यावाचस्पति (जन्म- ९ नवंबर)

इन्द्र विद्यावाचस्पति एक प्रसिद्ध पत्रकार, राष्ट्रीय कार्यकर्ता और भारतीयता के समर्थक थे। इन्होंने क्रांतिकारी गतिविधियों में भी भाग लिया और गांधीजी के नमक सत्याग्रह के समय जेल की यात्रा भी की। इन्होंने कई पुस्तकों की भी रचना की थी। इन्द्र विद्यावाचस्पति जीवन में सत्य और अहिंसा के स्थान को सर्वश्रेष्ठ मानते थे।

इन्द्र विद्यावाचस्पति जीवन में सत्य और अहिंसा के स्थान को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। कांग्रेस संगठन में सम्मिल्लित होकर उन्होंने दिल्ली को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। १९२०-१९२१ में उनकी गणना दिल्ली के प्रमुख कांग्रेसजनों में होती थी। गुरुकुल के वातावरण के कारण वे आर्य समाज से प्रभावित थे। बाद में उनके ऊपर हिन्दू महासभा का भी प्रभाव पड़ा। पत्रकार के रूप में उन्होंने दिल्ली के विजय और सर्वधर्म प्रचारक का सम्पादन किया। उनको सर्वाधिक ख्याति वीर अर्जुन के सम्पादक के रूप में मिली। वे इस पत्र के २५ वर्ष तक सम्पादक रहे।

पंचानन माहेश्वरी (जन्म- ९ नवंबर)

पंचानन माहेश्वरी सुप्रसिद्ध वनस्पति विज्ञानी थे। माहेश्वरी की अपने क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय ख्याति थी। इन्होंने पादप भ्रूणविज्ञान पर विशेष कार्य किया। भ्रूणविज्ञान और पादप क्रियाविज्ञान के सम्मिश्रण से इन्होंने एक नई शाखा का विकास किया। इससे फूलों के विभिन्न भागों की कृत्रिम पोषण द्वारा वृद्धि कराने में पर्याप्त सफलता मिली। पंचानन माहेश्वरी ने अपने विषय के अनेक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भारत का प्रतिनिधित्व किया। आपको अनेक देशी और विदेशी सम्मान भी प्राप्त हुए।

गंगानाथ झा (निधन- ९ नवंबर)

गंगानाथ झा संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पंडित थे। इन्होंने हिन्दी, अंग्रेजी और मैथिली भाषा में दार्शनिक विषयों पर उच्च कोटि के मौलिक ग्रन्थों की रचना की है। इनके अनेक स्मारकों में इलाहाबाद विश्वविद्यालय का गंगानाथ झा रिसर्च इंस्टीट्यूट (स्थापित १७ नवंबर, १९४३) प्रमुख हैं।

मोहम्मद इकबाल (जन्म- ९ नवंबर)

मोहम्मद इकबाल एक आधुनिक भारतीय प्रसिद्ध मुसलमान कवि थे। इकबाल ने अपनी अधिकांश रचनाएँ फारसी में की हैं। सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा यह मशहूर गीत इकबाल का ही लिखा हुआ है।

१० नवम्बर

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी (जन्म- १० नवंबर)

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी प्रसिद्ध स्वाधीनता सेनानी थे, जो कांग्रेस के दो बार अध्यक्ष चुने गए। उन्हें १९०५ का बंगाल का निर्माता भी जाना जाता है। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय समिति की स्थापना की, जो प्रारंभिक दौर के भारतीय राजनीतिक संगठनों में से एक था और बाद में वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता बन गए। १८८५ ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (इण्डियन नेशनल कांग्रेस) की स्थापना के बाद उन्होंने अखिल भारतीय राष्ट्रीय (ऑल इंडिया नेशनल कांफ्रेंस) का उसमें विलय कराने में प्रमुख भाग लिया और उसके बाद से उनकी गिनती कांग्रेस के प्रमुख नेताओं में होने लगी।

बनर्जी ने नस्लवाद को लेकर खोला था...

नस्लवाद को लेकर अंग्रेजों के खिलाफ मोर्चा खोलनेवाले सुरेंद्र नाथ बनर्जी एक नरमपंथी नेता थे जिन्होंने बहुत से सुधारवादी कार्य किए। बनर्जी ब्रितानिया हुकूमत में भारतीयों के साथ किए जानेवाले दोयम दर्जे के व्यवहार को देखकर काफी द्रवित रहते थे और इसी कारण उन्होंने देशभर में अपने भाषणों के जरिए भारतीय जनमानस को जागरूक बनाने का काम किया। दस नवम्बर १८४८ को कलकत्ता में जन्मे बनर्जी स्नातक करने के बाद इंडियन सिविल सर्विसेज (आईसीएस) की परीक्षा देने १८६८ में इंग्लैण्ड गये। उन्होंने १८६९ में परीक्षा पास की लेकिन उनकी आयु को लेकर विवाद पैदा हो गया। बाद में अदालत ने उनके पक्ष में फैसला दिया। बनर्जी इस परीक्षा में १८७१ में फिर से सफल हुए और सिलहट में सहायक मजिस्ट्रेट बन गए। ब्रिटिश शासन ने बाद में उन पर नस्ली भेदभाव का आरोप लगाकर उन्हें नौकरी से बर्खास्त कर दिया। सरकार के इस फैसले का उन्होंने इंग्लैंड जाकर विरोध किया लेकिन इसका कोई फायदा नहीं हुआ। बाद में वह देश में लौटकर अंग्रेजी के प्राध्यापक बन गये। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी व्यवस्था के भीतर रहकर बदलाव चाहते थे। उन्होंने हमेशा देश के लोगों के हितों के लिए कानून में बदलाव की मांग उठाई। सुरेंद्रनाथ बनर्जी १८९५ में पूना में तथा १९०२ में अहमदाबाद में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। उन्होंने द बंगाली नामक अखबार शुरू किया और अपनी तरह के पहले भारतीय राजनीतिक संगठन इंडियन नेशनल एसोसिएशन की स्थापना की। इसी के साथ उन्होंने ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा किये जानेवाले नस्लभेद के खिलाफ देश में घूम घूमकर भाषण देने शुरू कर दिये। ब्रिटिश सरकार और अदालतों के खिलाफ भाषण देने के कारण उनकी गिरफ्तारी की गयी जिसका देशभर में विरोध हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना होने के बाद बनर्जी ने इंडियन नेशनल एसोसिएशन का विलय इसमें कर दिया। उन्होंने १९०५ के बंगाल विभाजन का जमकर विरोध किया। मोंट-चेम्सफोर्ड सुधारों को स्वीकार करने जैसे कुछ फैसलों के कारण बनर्जी की लोकप्रियता कुछ कम हुई। १९२३ में बंगाल विधानसभा के चुनाव में उन्हें हार का सामना करना पड़ा। उनके द्वारा लिखी गई किताब ए नेशन एन मेकिंग काफी लोकप्रिय पुस्तक थी। छह अगस्त १९२५ को बैरकपुर में बनर्जी का निधन हो गया।

नए राजनीतिक सशक्तीकरण की राह...

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक सदस्य सुरेंद्रनाथ बनर्जी भारत की अग्रिम राजनीतिक पंक्ति के नेता थे। उन्होंने न सिर्फ भारतीय राजनीतिक सशक्तीकरण की राह दिखाई, अपितु अपने कार्यकलापों से राष्ट्रगुरु भी कहलाए। दस नवम्बर

१८४८ को कोलकाता में जन्मे बनर्जी उदार और प्रगतिशील विचारधारा के वाहक थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक करने के बाद वह १८६८ में भारतीय सिविल सेवा की परीक्षा देने इंग्लैंड गए। हालांकि विवादास्पद आधार पर उन्हें जल्द ही बर्खास्त कर दिया गया। बनर्जी अपनी बर्खास्तगी का विरोध करने इंग्लैंड गए, लेकिन असफल रहे। इंग्लैण्ड में १८७४ से १८७५ तक अपने प्रवास के दौरान उन्होंने एडमंड बुर्के और अन्य उदार विद्वानों के कार्य का अध्ययन किया। इससे उन्हें ब्रितानिया हुकूमत का विरोध करने की दिशा मिली। बनर्जी जून १८७५ में भारत लौट आए और अंग्रेजी के प्रोफेसर के रूप में काम करने लगे। उन्होंने राष्ट्रवादी और उदारवादी राजनीतिक प्रणाली तभा भारतीय इतिहास पर सार्वजनिक व्याख्यान देना शुरू किया। बनर्जी ने आनंदमोहन बोध के साथ मिलकर २६ जुलाई १८७६ को अपने आप में एक तरह के पहले भारतीय राजनीतिक संगठन इंडियन नेशनल एसोसिएशन की स्थापना की। इस संगठन का इस्तेमाल उन्होंने भारतीय सिविल सेवा परीक्षा में भारतीय छात्रों की आयु सीमा से संबंधित विवादों को निपटाने के लिए किया। अपने भाषणों के जरिए उन्होंने ब्रितानिया हुकूमत द्वारा भारत में किए जानेवाले नस्ली भेदभाव का जमकर विरोध किया। इससे वह देशभर में लोकप्रिय हो गए। वर्ष १८७९ में उन्होंने द बंगाली नाम के अखबार की शुरुआत की। अखबार में अपनी टिप्पणियों के लिए जब १८८३ में बनर्जी को गिरफ्तार किया गया तो बंगाल राज्य ही नहीं, अपितु आगरा, फैजाबाद, अमृतसर, लाहौर और पुणे जैसे शहरों में व्यापक विरोध प्रदर्शन और हड़ताल हुई। धीरे-धीरे इंडियन नेशनल एसोसिएशन का काफी विस्तार होता गया और कलकत्ता में हुए इसके वार्षिक सम्मेलन में देशभर से सैकड़ों प्रतिनिधि भाग लेने आए। बम्बई में १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद बनर्जी ने इंडियन नेशनल एसोसिएशन का विलय इसमें कर दिया। वह १८९५ के पूना अधिवेशन और १९०२ में अहमदाबाद अधिवेशन में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। बनर्जी १९०५ में बंगाल विभाजन का विरोध करनेवाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण जन नेताओं में से एक थे। वह स्वदेशी आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले नेताओं में शामिल थे। उन्होंने विदेशी वस्तुओं की जगह भारत में निर्मित चीजों के इस्तेमाल पर जोर दिया। हालांकि बाद में उदारवादी भारतीय राजनीतिज्ञों की लोकप्रियता में गिरावट के साथ ही भारतीय राजनीति में बनर्जी की भूमिका भी प्रभावित हुई। उन्होंने मार्ले मिंटो सुधार (१९०९) का समर्थन किया। इसकी अधिकतर राष्ट्रवादी राजनीतिज्ञों ने आलोचना की। बनर्जी महात्मा गांधी के नागरिक अवज्ञा आंदोलन के प्रस्तावित तौर तरीकों के अलोचक थे। बंगाल सरकार में मंत्री पद स्वीकार किए जाने के कारण राष्ट्रवादियों और जनता के मन में बनर्जी के प्रति नाराजगी हो गई और वह १९२३ के बंगाल विधानसभा चुनाव में हार गए। इसके साथ ही उनका राजनीतिक कैरियर समाप्त हो गया। बनर्जी ने बंगाल सरकार में मंत्री रहते हुए कलकत्ता नगर निगम को और अधिक लोकतांत्रिक इकाई बनाया। उन्हें आज भारतीय राजनीतिक सशक्तीकरण की राह दिखानेवाले अग्रणी भारतीय राजनीतिज्ञ के रूप में जाना जाता है।

दत्तोपन्त ठेंगडी (जन्म- १० नवंबर)

दत्तोपन्त ठेंगडी भारत के राष्ट्रवादी ट्रेड यूनियन नेता एवं भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक थे। भारत के ज्येष्ठ स्वतंत्रता सेनानी, उज्ज्वल राष्ट्रनिर्माण की अभिलाषा रखकर उसके लिए सदैव प्रयत्नरत रहनेवाले कुशल संघटक, राष्ट्रप्रेमी संगठनों के शिल्पकार, द्रष्टा विचारवंत, लेखक, संतों के समान त्यागी और संयमित जीवन जीनेवाले आदरणीय दत्तोपन्त ठेंगडी ने

भारतीय किसानों को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर देने के साथ, राष्ट्र के उत्थान प्रक्रिया में सहयोगी बनने की प्रेरणा देने के मूल विचार से भारतीय किसान संघ की स्थापना की।

कनाईलाल दत्त (शहीद- १० नवंबर)

कनाईलाल दत्त भारत की आजादी के लिए फाँसी के फंदे पर झूलनेवाले अमर शहीदों में से एक थे। इन्होंने १९०५ में बंगाल के विभाजन का पूर्ण विरोध किया था। १९०८ में मुजफ्फरपुर के अंग्रेज अधिकारी किंग्सफोर्ड पर हमला किया गया था। इस हमले में कनाईलाल दत्त, अरविन्द घोष, बारीन्द्र कुमार आदि पकड़े गये। इनके दल का एक युवक नरेज गोस्वामी अंग्रेजों का सरकारी मुखबिर बन गया। क्रांतिकारियों ने इससे बदला लेने का निश्चय कर लिया था। अपना यह कार्य पूर्ण करने के बाद ही कनाईलाल पकड़े गए और उन्हें फाँसी दे दी गई।

विजयदान देथा (निधन- १० नवंबर)

विजयदान देथा जिन्हें बिज्जी के नाम से भी जाना जाता है, राजस्थान के प्रसिद्ध लेखक और पद्म श्री पुरस्कार से सम्मानित व्यक्ति थे। उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और साहित्य चुड़ामणी पुरस्कार जैसे विभिन्न अन्य पुरस्कारों से भी सम्मानित किया जा चुका था। विजयदान देथा की राजस्थानी भाषा में चौदह खंडों में प्रकाशित बाताँ री फुलवारी के दसवें खण्ड को भारतीय राष्ट्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया, जो राजस्थानी कृति पर पहला पुरस्कार है।

इबने अरबी (निधन- १० नवंबर)

इबने अरबी के प्रसिद्ध सूफी कवि, साधक और विचारक थे। इबने अरबी के सम्बन्ध में लोगों की अलग-अलग धारणाएं हैं। कुछ व्यक्तियों के विचार से वे सन्यासी (वली कामिल) थे और अध्यात्म पर उनका पूर्ण अधिकार था, जिसमें किसी की कोई आपत्ति नहीं हो सकती। दूसरी ओर एक ऐसा समुदाय भी था, जो उन्हें नास्तिक समझता था। इबने अरबी की पुस्तकों के सम्बन्ध में आज भी ऐसी ही परस्पर विरोधी धारणाएं प्रचलित हैं। ये शेखुल अकबर के नाम से भी प्रसिद्ध है।

टीपू के राकेटों से हैरान थे अंग्रेज

मैसूर का शेर कहे जानेवाले टीपू सुल्तान की असली ताकत उनकी राकेट प्रौद्योगिकी थी। उनके राकेट अंग्रेजों के लिए अनुसंधान का विषय बन गए थे। पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने एक बार बेंगलूर के टीपू सुल्तान शहीद मेमोरियल में आयोजित एक कार्यक्रम में टीपू को विश्व का सबसे पहला राकेट आविष्कारक करार दिया था। इतिहास के प्रोफेसर के.के. उपाध्याय के अनुसार टीपू की सबसे बड़ी ताकत उनकी राकेट प्रौद्योगिकी थी। टीपू की सेना ने राकेटों के जरिए अंग्रेजों और निजामों को तितर बितर कर दिया था। टीपू की शहादत के बाद अंग्रेजों ने रंगपट्टनम में दो राकेटों पर कब्जा कर लिया था और वे इन्हें ब्रिटेन स्थित वूलविच म्यूजियम आर्ट गैलरी में प्रदर्शनी के लिए ले गए थे। बीस नवम्बर १७५० को देवनहल्ली (वर्तमान में कर्नाटक का कोलर जिला) में जन्मे टीपू सुल्तान के पिता का नाम हैदर अली था। वह बहादुर और रण चातुर्य में दक्ष थे। टीपू ईस्ट इंडिया कंपनी के सामने कभी नहीं झुके और अंग्रेजों से जमकर संघर्ष किया। मैसूर

की दूसरी लड़ाई में अंग्रेजों को शिकस्त देने में उन्होंने अपने पिता हैदर अली की काफी मदद की। उन्होंने अंग्रेजों ही नहीं, बल्कि निजामों को भी धूल चटाई। अपनी हार से बौखलाए हैदराबाद के निजाम ने टीपू से गद्दारी की और अंग्रेजों से मिल गया। मैसूर की तीसरी लड़ाई में जब अंग्रेज टीपू को नहीं हरा पाए तो उन्होंने टीपू के साथ बेंगलूर संधि की, लेकिन इसके बावजूद अंग्रेजों ने उन्हें धोखा दिया। ईस्ट इंडिया कंपनी ने हैदराबाद के निजाम से मिलकर चौथी बार टीपू पर भीषण हमला कर दिया और आखिरकार चार मई १७९९ को श्रीरंगपट्टनम की रक्षा करते हुए मैसूर का यह शेर शहीद हो गया। टीपू ने १७८२ में अपने पिता के निधन के बाद मैसूर की कमान संभाली थी। उन्होंने सड़कों, सिंचाई व्यवस्था और अन्य विकास कार्यों की झड़ी लगाकर अपने राज्य को समृद्ध क्षेत्र में तब्दील कर दिया था और यह व्यापार क्षेत्र में काफी आगे था। उन्होंने कावेरी नदी पर एक बांध की नींव रखी। इसी जगह पर आज कृष्णासागर बांध है।

१० नवंबर को टीपू सुल्तान का जन्म देवहल्ली (कर्नाटक) में हुआ था। उनका पूरा नाम फतेह अली टीपू था। १८ वर्ष की उम्र से युद्ध में हिस्सा लिया। मैसूर की तीसरी लड़ाई में भी अंगरेजों को हराया।

उन्होंने कावेरी नदी पर बांध की नीव रखी, जहां आज कृष्णराज सागर बांध है। उन्होंने आधुनिक कैलेंडर की शुरुआत की, सिक्का ढलाई तथा नाप-तौल की नयी प्रणाली का प्रयोग किया। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने उन्हें विश्व का पहला रॉकेट अविष्कारक बताया है। अंगरेजों ने मेंगलूर की संधि तोड़ गद्दारी की। मैसूर के इस चौथे युद्ध में ४ मई १७९९ को वे वीरगति को प्राप्त हुए।

टीपू सुल्तान भारतीय इतिहास के प्रसिद्ध योद्धा हैदर अली का पुत्र था। पिता की मृत्यु के बाद पुत्र टीपू सुल्तान ने मैसूर सेना की कमान को संभाला था, जो अपनी पिता की ही भांति योग्य एवं पराक्रमी था। टीपू को अपनी वीरता के कारण ही शेर-ए-मैसूर का खतिब अपने पिता से प्राप्त हुआ था। टीपू द्वारा कई युद्धों में हारने के बाद मराठों एवे निजाम ने अंग्रेजों से संधि कर ली थी। ऐसी स्थिति में टीपू ने भी अंग्रेजों से संधि का प्रस्ताव किया और चूंकि अंग्रेजों को भी टीपू की शक्ति का अहसास हो चुका था, इसलिए छिपे मन से वे भी संधि चाहते थे। दोनों पक्षों में वार्ता मार्च, १७८४ में हुआ और इसी के फलस्वरूप मंगलौर की संधि सम्पन्न हुई।

टीपू सुल्तान काफी बहादुर होने के साथ ही दिमागी सूझबूझ से रणनीति बनाने में भी बेहद माहिर थे। अपने शासनकाल में भारत में बढ़ते ईस्ट इंडिया कंपनी के साम्राज्य के सामने वह कभी नहीं झूके और उन्होंने अंग्रेजों से जमकर लोहा लिया। मैसूर की दूसरी लड़ाई में अंग्रेजों को खदेड़ने में उन्होंने अपने पिता हैदर अली की काफी मदद की। उन्होंने अपनी बहादुरी से जहां कई बार अंग्रेजों को पटखनी दी, वहीं निजामों को भी कई मौकों पर धूल चटाई। अपनी हार से बौखलाए हैदराबाद के निजाम ने टीपू सुल्तान से गद्दारी की ओर अंग्रेजों से मिल गया।

११ नवम्बर

राष्ट्रीय सौहार्द का उदाहरण थे मौलाना आजाद

हिन्दुस्तान के जर्रे-जर्रे से मोहब्बत की इन्तेहा रखनेवाले देश भक्त मौलाना अबुल कलाम आजाद की यौम-ए-पैदाइश ११ नवम्बर का दिन पूरे हिन्दुस्तान में शिक्षा दिवस के रूप में मनाया जाता है। मौलाना आजाद के इन्तकाल के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि अब मौलाना आजाद जैसा काबिल व्यक्ति और देशभक्त कभी पैदा नहीं होगा। यह मौलाना आजाद का लिखने पढ़ने का शौक ही था कि उनकी मुलाकात महात्मा गांधी से हुई। दरअसल सन १९१२ में मौलाना आजाद ने एक उर्दू साप्ताहिक अल हिलाल शुरू किया। इस में तरह-तरह के लेख प्रकाशित हेाते थे, विशेष रूप से देश प्रेम और भारत की आजादी के सम्बन्ध में। गांधी जी को मौलाना का यह कार्य बहुत पसन्द आया। बस महात्मा गांधी का मौलाना से मिलना जुलना होने लगा और बहुत ही थोड़े वक्त में मौलाना आजाद गांधी जी के प्रिय हो गये। हिन्दुस्तान पाकिस्तान विभाजन के जनक लियाकत मोहम्मद अली जिन्ना को मौलाना आजाद ने बहुत समझाया कि विभाजन की बात ठीक नहीं है। मुसलमानों कि विभाजन की बात ठीक नहीं है। मुसलमानों को आजाद भारत में पूरा मान सम्मान दिया जायेगा किन्तु मि. जिन्ना ने एक नहीं मानी और भड़काऊ भाषण दे देकर लोगों को जुनून की हद तक विभाजन के लिये तैयार कर लिया। जिन्ना के भड़काए लोगों को बार बार मौलाना आजाद ने समझाया कि जिन्ना के द्वारा दिखाया जा रहा बंटवारे का ख्वाब झूठा है, जिन्ना का यह सौदा घाटे का सौदा है पर तब लोग होश की नहीं, जोश की बात कर रहे थे। मौलाना आजाद की बात नहीं मानी गई। उधर जिन्ना ने नफरत और बटवारे कि आग उगलते भड़काऊ भाषणों से कुछ मुस्लिमों की बुद्धि भ्रष्ट कर दी थी। जिस वक्त देश का विभाजन हुआ, मौलाना आजाद ने दिल्ली की जामा मस्जिद की सीढ़ीयों से पूरे देश के मुसलमानों को खिताब किया और जाते हुए लोगों के बारे में कहा कि जो लोग पाकिस्तान जा रहे हैं, या पाकिस्तान का ख्वाब देख रहे हैं, वे लोग राह से भटक गये हैं। उनके दिमाग सो गये हैं। उन्हें भूलना ही बेहतर है। मौलाना आजाद का यह भाषण बहुत ही भावुक था जो लोगों के दिलों को छू गयां उनके इस भाषण को सुन कुछ लोगों ने अपने कदम रोक लिये लेकिन कुछ लोग जिन्ना के साथ पाकिस्तान चले गये थे। इंडिया विन्स फ्रीडम में मौलाना आजाद ने लिखा था कि जिन लोगों ने विभाजन का सपना देखा है, ये सपना सिर्फ सपना रहेगा और २५-३० वर्ष में ही टूट जायेगा। ऐसा हुआ भी। जो मुसलमान पाकिस्तान नये-नये ख्वाब लेकर गये थे, कुछ ही दिनों में उन लोगों के सारे ख्वाब टूट गये। मौलाना आजाद आजादी के बाद देश के शिक्षामंत्री बने। १९५२ में रामपुर व १९५७ में गुड़गांव से वे चुनाव जीते। मौलाना आजाद ने कुरान मजीद का अंग्रेजी में तर्जुमा भी किया। मौलाना आजाद ने उच्च पदों पर पर रहते हुए अपने कार्यकाल में अनेक संगीत, नाटक अकादमियां, विज्ञान विभाग व महाविद्यालय खोले। २२ फरवरी १९५८ को भारत का यह महान स्वतंत्रता सेनानी भारत माता की गोद में हमेशा के लिये जाकर सो गया।

मौलाना ने अपना उपनाम आजाद रख लिया था जबकि उनका असली नाम मुहिउद्दीन अहमद था। आजाद नाम रखने का कारण लोगों को इस बात का संदेश देना था कि उनको परंपरा में जो विश्वास, मान्यताएं तथा मूल्य मिले थे, वे अब उनसे बंधे हुए नहीं रहे हैं। यही कारण था कि उन्होंने अपने पिता की तरह पीरी-मुरीदी का सिलसिला जारी रखने से परहेज

किया। वे यह ठीक नहीं समझते थे कि मुरीदों के मुरीद उनके हाथ चूमें या नजराने पेश करें। इस बात पर उनकी अपने पिता मौलाना खैरुद्दीन से कई बार बहस भी हो जाती थी। पिता बेटे के इस रवैये से दु:खी तो थे मगर कुछ कर नहीं सकते थे।

गुबार-ए-खातिर में मौलाना अबुल कलाम आजाद लिखते हैं- मजहब इंसान को उसकी खानदानी विरासत के साथ मिलता है। मुझे भी मिला परंतु मैं परंपरागत विश्वास की विरासत पर कायम न रह सका।

मेरी प्यास उससे कहीं ज्यादा निकली जितनी वह प्यास बुझा सकते थे। लिहाजा मुझे पुरानी राहों से निकलकर नई राहें ढूंढनी पड़ीं। अभी १५ बरस ही बीते थे कि तबीयत का जुस्तजुओं से मिलन हो गया। इसी सिलसिले में पहले इस्लाम के अंदरूनी भेदभाव सामने आए तो उनके दावों प्रतिदावों, आरोपों तथा प्रत्यारोपों ने मुझे हैरान व परेशान कर दिया। फिर कदम कुछ आगे बढ़े तो मजहब की सार्वभौमिकता ने मुझे हैरानी, हैरानगी से शक तक तथा शक से इंकार तक पहुंचा दिया।

फिर इसके बाद मजहब और इल्म के बाहरी आडंबर प्रकट हुए तो उनसे मैंने रहा-सहा विश्वास ही खो दिया।

कट्टरपंथी मौलवी, मुल्लाओं से वे बहुत दूर रहना चाहते थे। इस्लामी शिक्षा को मौलाना आजाद ने एक नई दिशा दी। उन्होंने इस्लाम की देशभक्ति और भारत के सांप्रदायिक सौहार्द का समन्वय बिठाकर एक सर्वधर्म समभाव वाली सभ्यता को जन्म दिया। बतौर शिक्षामंत्री मौलाना ने आईसीसीआर, आईसीएसआर, यूजीसी, तकनीकी विज्ञान के संस्थानों आदि की नींव रखी। यदि आज भारत में शिक्षा का विस्तार हुआ है तो वह मौलाना आजाद की शिक्षा नीतियों की ही देन है। मौलाना आजाद ने अपने जीवन का ध्येय यह बनाया कि वे इस्लाम का स्वच्छ रूप जनता को समझाएंगे और इसके लिए उन्होंने पत्रकारिता को अपना माध्यम बनाया। मौलाना आजाद की लेखनी में ऐसा जादू था जो सर चढ़कर बोलता था। उससे भी भारत की आजादी के लिए मौलाना ने बहुत बड़ा आंदोलन चलाया। लिखने पढ़ने का चाव आजाद को पागलपन की हद तक था। १९१२ में उन्होंने अल हिलाल अखबार प्रकाशित किया जिसका ध्येय अंग्रेजों के खिलाफ भारतवासियों में राष्ट्रीय भावना जगाना था जिसमें वे पूरी तरह सफल रहे। मगर हिन्दू-मुस्लिम संप्रदाय की आपसी सद्भावना को पनपते देख अंग्रेज सरकार ने इसे जब्त कर लिया। १९१६ में पुन: अल बलाग के नाम से इसे मौलाना ने प्रकाशित किया और उस समय इसकी प्रसार संख्या २९००० पहुंच गई।

फिर अंग्रेजों ने एक बार और उसे बंद कर दिया। उनके लेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे वर्षों पूर्व उन्हें इस बात का आभास हो गया था यदि भारत का विभाजन हुआ तो उससे न तो पाकिस्तान में मुसलमान और न ही भारत में हिंदू खुश रहेगा। आज के नेताओं को मौलाना आजाद के जीवन से सबक लेना चाहिए कि किस प्रकार से देश की आन-बान के लिए वे सब कुछ लुटाने के लिए तैयार थे।

वर्ष १९९२ में मरणोपरान्त अबुलकलाम आजाद को भारत रत्न से सम्मानित किया गया। एक इंसान के रूप में मौलाना महान थे, उन्होंने हमेशा सादगी का जीवन पसंद किया। उनमें कठिनाइयों से जूझने के लिए अपार साहस और एक संत जैसी मानवता थी।

उनकी मृत्यु के समय उनके पास कोई संपत्ति नहीं थी और न ही कोई बैंक खाता था। उनकी निजी अल्मारी में कुछ सूती अचकन, एक दर्जन खादी के कुर्ते पायजामें, दो जोड़ी सैंडल, एक पुराना ड्रेसिंग गाऊन और एक उपयोग किया हुआ ब्रुश मिला किंतु वहां अनेक दुर्लभ पुस्तकें थीं जो अब राष्ट्र की सम्पत्ति हैं।

जे.बी. कृपलानी (जन्म- ११ नवंबर)

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से जे.बी. कृपलानी का निकट सम्पर्क था। वे गुजरात विद्यापीठ के प्राचार्य भी रहे थे, तभी से उन्हें आचार्य कृपलानी पुकारा जाने लगा था। सन १९२७ के बाद आचार्य कृपलानी का जीवन पूर्ण रूप से स्वाधीनता संग्राम और गांधीजी की रचनात्मक प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाने में ही बीता। उन्होंने खादी और ग्राम उद्योगों को पुनर्जीवित करने के लिए उत्तर प्रदेश में गांधी आश्रम नामक एक संस्था की स्थापना भी की।

१२ नवम्बर

सालिम अली (जन्म- १२ नवंबर)

सालिम अली एक भारतीय पक्षी विज्ञानी और प्रकृतिवादी थे। सालिम अली को भारत के बर्डमैन के रूप में जाना जाता है। सालीम अली भारत के ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत भर में व्यवस्थित रूप से पक्षी सर्वेक्षण का आयोजन किया और पक्षियों पर लिखी उनकी किताबों ने भारत में पक्षी-विज्ञान के विकास में काफी मदद की है। सन १९०६ में दस वर्ष के बालक सालिम अली की अटूट जिज्ञासा ने ही पक्षी शास्त्री के रूप में उन्हें आज विश्व में मान्यता दिलाई है। पक्षियों के सर्वेक्षण में ६५ साल गुजार देनेवाले इस शख्स को परिंदों का चलता फिरता विश्वकोष कहा जाता था। पद्म विभूषण से नवाजे इस परिंदों के मसीहा के प्रकृति संरक्षण की दिशा में किए गए प्रयासों को कभी भुलाया नहीं जा सकता है।

१२ नवंबर १८९६ को सालिम मोइजुदीन अब्दुल अली का जन्म मुंबई में हुआ था। उन्हें बर्ड मैन ऑफ इंडिया कहा जाता है। बिना कष्ट पहुंचाये चिड़ियों को पकड़ने की गॉग एंड फायर व डेक्कन विधि इनकी ही खोज है।

राजस्थान में भरतपुर पक्षी विहार की स्थापना में उनका प्रमुख स्थान था। उनकी पुस्तक द बुक ऑफ इंडियन बड्र्स १९४१ में चर्चित रही। वे १९५८ में पद्मभूषण और १९७६ में पद्म विभूषण से सम्मानित हुए। पक्षियों के सर्वेक्षण में उन्होंने जीवन के ६५ वर्ष लगा दिये। उन्हें परिंदा का विश्वकोष कहा जाता था। २७ जुलाई १९८७ को उनका निधन हुआ।

सेनापति बापट (जन्म- १२ नवम्बर)

एडिनबर्ग में शिक्षा प्राप्त की। इंग्लैंड प्रवास के दौरान इंडिया हाउस से संबद्ध रहे। उन्होंने बम बनाना सीखा। १९०८ में अलीपुर बम कांड के सिलसिले में ब्रिटिश सरकार उन्हें गिरफ्तार करना चाहती थी लेकिन वे चार वर्षों तक भूमिगत रहे। फिर पकड़े गए और जेल की सजा मिली। दूसरी बार टाटा मुलशी डैम के विरुद्ध आंदोलन के सिलसिले में जेल की सजा मिली। तीसरी बार नेताजी सुभाषचंद्र बोस द्वारा आयोजित एक सार्वजनिक सभा में भाषण देने के सिलसिले में जेल भेजे गए। उन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया था।

एस.एम.जोशी (जन्म- १२ नवंबर)

पुणे में विद्यार्थी जीवन से स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी। १९४० में गांधीजी के सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लेने के लिए सजा काटी। भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रहे। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और राष्ट्र सेवा दल के संस्थापकों में अग्रणी आजादी के बाद १९५७ में विधानसभा और १९६७ में लोकसभा के लिए निर्वाचित। संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन और जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन में भी जोरशोर से हिस्सा लिया।

१३ नवम्बर

रणजीत सिंह (जन्म- १३ नवंबर)

रणजीत सिंह को एक उपनाम शेरे पंजाब के नाम से भी जाना जाता था। इनका जन्म १३ नवम्बर, १७८० में, बदरूखाँ या गुजरांवाला, भारत में हुआ था। रणजीत सिंह पंजाब के सिक्ख राज्य के संस्थापक और महाराज (१८०१-१८३९) थे। रणजीत सिंह सिक्खों के बारह मिसलों में से एक सुकर चाकिया से सम्बन्धित थे। उन्होंने १७९७ ई. में रावी नदी एवं चिनाब नदी के प्रदेशों के प्रशासन का कार्यभार संभाला था। रणजीत सिंह का प्रशासन भी महत्वपूर्ण रहा। वह निरंकुश होते हुए भी खालसा के नाम पर शासन करते थे। उनकी सरकार को सरकार खालसा कहा जाता था। उन्होंने गुरु नानक और गुरु गोविन्द सिंह के नाम के सिक्के चलाये, किन्तु उन्होंने गुरुमत को प्रोत्साहन नहीं दिया। उन्होंने डोगरों एवं मुसलमानों को उच्च पद प्रदान किये। १२ अप्रैल, सन १८०१ को रणजीत सिंह ने महाराजा की उपाधि ग्रहण की थी। इनका निधन २७ जून को हुआ।

राय कृष्णदास (जन्म- १३ नवंबर)

राय कृष्णदास कहानी सम्राट प्रेमचन्द के समकालीन कहानीकार और गद्य गीत लेखक थे। इन्होंने भारत कला भवन की स्थापना की थी, जिसे वर्ष १९५० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को दे दिया गया। आज भारत कला भवन शोधार्थियों के लिए किसी तीर्थ स्थल से कम नहीं है। राय कृष्णदास को साहित्य वाचस्पति पुरस्कार तथा भारत सरकार द्वारा पथ विभूषण की उपाधि मिली थी।

गजानन माधव मुक्तिबोध (जन्म- १३ नवंबर)

गजानन माधव मुक्तिबोध की प्रसिद्धि प्रगतिशील कवि के रूप में है। मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य की स्वातंत्र्योत्तर प्रगतिशील काव्यधारा के शीर्ष व्यक्तित्व थे। हिन्दी साहित्य में सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र में रहनेवाले मुक्तिबोध कहानीकार भी थे और समीक्षक भी। उन्हें प्रगतिशील कविता और नयी कविता के बीच का एक सेतु भी माना जाता है।

मुकुन्द रामाराव जयकर (जन्म- १३ नवंबर)

मुकुन्द रामाराव जयकर आरम्भ से ही कांग्रेस से जुड़ गए। जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड की जाँच के लिए बनाई गई कांग्रेस समिति में ये सदस्य थे। मुकुन्द रामाराव जयकर पुणे विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे। मुकुन्द रामाराव जयकर ने १९३० ई. में लंदन में प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लिया। ये नेहरू कमेटी, जो भारत के संविधान की रचना करने के लिए १९२८ ई. में गठित की गई थी, उसके भी सदस्य रहे। मुकुन्द रामाराव जयकर के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा शिक्षा संबंधी कार्यों का मूल्यांकन किए बिना भारत का आधुनिक इतिहास अधूरा रहेगा। इस दृष्टि से उनके भाषणों, पत्रों तथा लेखों का अध्ययन आवश्यक है। सन १९१७ के बाद से भारत का ऐसा कोई आंदोलन नहीं था, जिससे मुकुन्द रामाराव जयकर का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में न रहा हो।

१४ नवम्बर

१) पंडित जवाहर लाल नेहरू

पंडित जवाहर लाल नेहरू को कौन नहीं जानता। उनका बचपन और जवानी अमीरी के ठाठ-बाठ और ऐशो-आराम में बीता था लेकिन जब वह गांधी जी के सम्पर्क में आए तो उनकी काया कल्प हो गई। गांधी जी ने उनमें देश सेवा की लौ जलाई तो वे सब कुछ त्याग कर कांटों की राह पर चल पड़े।

देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के व्यक्तित्व में गांभीर्य, सरलता व कोमलता का समावेश था। बच्चों में वे भारत का भविष्य देखते थे। अपने सहज व्यक्तित्व के कारण वे बच्चों में चाचा नेहरू के नाम प्रसिद्ध थे।

सन् १९१२ में वे तेइस वर्ष की अवस्था में बार एट ला की शैक्षणिक उपाधि लेकर स्वदेश वापस आये थे। पं. मोती लाल नेहरू भारत के सुप्रसिद्ध वकील थे। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेना शुरू कर दिया था। उनका अनुसरण करते हुए पं. जवाहर लाल नेहरू भी स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े। उन्हें देशबन्धु चितरंजन दास की सहायता करने का कार्य सौंपा गया था।

नेहरू परिवार महात्मा गांधी से अत्यंत प्रभावित था। पं. जवाहर लाल नेहरू ने उत्तर प्रदेश में किसान आंदोलन का नेतृत्व किया था। इलाहाबाद में प्रिन्स आफ वेल्स के आगमन पर प्रिन्स आफ वेल्स का स्वागत काले झंडों से करने में वे पं. मोतीलाल नेहरू के साथ थे। इस जुर्म में उन्हें पिता के साथ कैद हुई थी। पं. मोतीलाल नेहरू के साथ उन्होंने यूरोप के देशों की यात्रायें की थी। सोवियत सरकार की दसवीं वर्षगांठ के अवसर पर वे पं. मोतीलाल नेहरू के साथ उपस्थित थे।

पं. जवाहर लाल नेहरू पर साम्यवाद का प्रभाव था। पं. जवाहर लाल नेहरू के जीवन पर पं. मोतीलाल नेहरू व महात्मा गांधी का सर्वाधिक प्रभाव था। २८ फरवरी १९३६ को श्रीमती कमला नेहरू की मृत्यु से उन्हें अपने अस्तित्व के एक अंग के लुप्त हो जाने की पीड़ा हुई थी।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जेल उनका घर बन गया था। ८ अगस्त १९४२ को कांग्रेस ने भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव पारित किया था। पं. जवाहर लाल नेहरू को अन्य दिग्गज नेताओं के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। तीन वर्षों की जेल के बाद १८४५ में वे रिहा किये गये। सन् १९४५ में पं. जवाहर लाल नेहरू ने आजाद हिन्द फौज के सेनानिया की तरफ से पैरवी की थीं।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात परिस्थितियां अंग्रेजों के अनुकूल नहीं थी। महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलाये गये भारत छोड़ो आंदोलन से हर समुदाय व हर वर्ग के लोग जुड़ गये थे। किसानों और व्यापारियों ने सरकार को कर देना बंद कर दिया था। विवश होकर अंग्रेजों ने शासन व्यवस्था भारतीयों को सौंपकर वापस लौटने का मन बना लिया था।

पूज्य बापू के नेतृत्व में स्वतंत्रता आंदोलन के संघर्ष के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता हासिल हुई थी। अंग्रेज सरकार ने कांग्रेस के प्रतिनिधियों को शासन व्यवस्था सौंप दी। पं. जवाहर लाल नेहरू को देश का प्रथम प्रधानमंत्री चुना गया। १५ अगस्त १९४६ को लाल किले की प्राचीन से राष्ट्र को संबोधित करते हुए उन्होंने राष्ट्र निर्माण के लिये एकजुट होने की अपील की थी।

महात्मा गांधी ने उन्हें अपना उत्तराधिकारी चुना था। इसका कारण संभवत: उनकी विकास की अवधारणा थी। वे भारत को कृषित के क्षेत्र में उन्नत करना चाहते थे तथा पश्चिमी राष्ट्रों की भांति औद्योगिकरण भी चाहते थे। समाजवाद कांग्रेस के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है। औद्योगीकरण व समाजवाद के संयुक्त दृष्टिकोण के प्रतिफल स्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों का जन्म हुआ। उन्होंने सिंचाई के लिये बड़े बांधों के निर्माण की शुरूआत की थी। भारत के त्वरित विकास के लिये वे कुटीर उद्योगों के साथ बड़े उद्योगों के निर्माण के पक्षधर थे।

पं. जवाहर लाल नेहरू का शांति और सद्भावना में पूर्ण विश्वास था। विश्व स्तर पर शांति और गुट निरपेक्षता के पक्षधर थे। युद्ध व उपनिवेशवाद का उन्होंने सदैव विरोध किया था। गुटनिरपेक्ष आंदोलन में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन के संस्थापक राष्ट्रों में से एक है।

प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में उनके समक्ष राष्ट्र निर्माण की चुनौती थी। उन्हें लौह पुरुष सरदार बल्लभ भाई पटेल, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद जैसे देशभक्त सहयोगियों का सानिध्य प्राप्त था। विदेश विभाग लम्बे समय तक उनके पास रहा। भारत की विदेश नीति आज भी उनके द्वारा निर्धारित मार्ग पर चल रही है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान अमेरिका नेताओं ने भारत का समर्थन किया था।

जवाहरलाल नेहरू

भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को उनकी लेखन काबिलियत के लिए हमेशा जाना जाएगा। उन्हें ब्रिटिशराज के दौरान १९४२-४६ में जेल भेज दिया गया था। इसी दौरान उन्होंने डिस्कवरी ऑफ इंडिया जैसी अनूठी किताब लिखी। इसमें भारत की संस्कृति और विविधता का विस्तृत वर्णन है।

प्रधानमंत्री बनने के बाद स्व. पं. जवाहर लाल नेहरू ने अपने पहले रेडियो प्रसारण में कहा था कि अंतर्राष्ट्रीय मामलों में अमेरिका को प्रमुख भूमिका निभानी है। पं. जवाहर लाल नेहरू अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जान एफ कैनेडी के मध्य मैत्री पूर्ण संबंध थे। कालांतर में भारत अमेरिका संबंध में अंतर आया, इसका कारण इस क्षेत्र में अमेरिका की भेदभावपूर्ण नीतियां हैं।

पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाने के लिए वे प्रयत्नशील रहे। ३० दिसंबर १९४९ को भारत ने चीन को मान्यता प्रदान कर दी। इससे भारत व चीन के संबंध मजबूत व मैत्रीपूर्ण बने थे। २९ अप्रैल १९५४ को भारत व चीन के मध्य तिब्बत के बारे में एक समझौता हुआ था। यह समझौता पंचशील के सिद्धांतों पर आधारित था।

जून १९५४ में चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई भारत यात्रा पर आये थे। भारत व चीन के प्रधानमंत्रियों के संयुक्त वक्तव्य में पंचशील के प्रति प्रतिबद्धता जाहिर की गई थी। कालांतर में चीन ने तिब्बत की समस्या हल करने हेतु बल प्रयोग किया। यह पंचशील के सिद्धांतों के विपरीत था। पं. जवाहर लाल नेहरू चीन के इस कदम से असहमत थे। भारत ने इस पर अपना विरोध प्रकट किया।

आधुनिक भारत के निर्माता और शांतिदूत कहलानेवाले देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू पर तोहमत लगाई गई है कि १९६२ में चीन से हुई हार के लिए वह जिम्मेदार थे। नेहरू के साथ चीन ने नीचतापूर्ण विश्वासघात किया। रक्षा मंत्री वी.के. कृष्ण मेनन पर आंख मूंद कर भरोसा करना उन्हें बहुत महंगा पड़ा। वे मानकर चल रहे थे कि चीन के तत्कालीन प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच शांति व सहयोग के लिए हस्ताक्षरित पंचशील समझौते का पालन करेंगे। चीन ने छल किया और यह दिखाने के लिए एशिया में वही बिगब्रदर की हैसियत रखता है, उसने भारतीय स्वाभिमान को रौंदने के लिए उत्तरी सीमा पर हमला किया। चूंकि इसके पूर्व इतिहास में कभी भी हिमालय पार कर किसी ने हमला नहीं किया था इसलिए उत्तरी सीमा पर कोई रक्षा तैयारी नहीं थी। हिमालय को भारत का प्राकृतिक प्रहरी माना जाता था। बांडुंग सम्मेलन के बाद गुटनिरपेक्ष आंदोलन के अगुआ के रूप में पं. नेहरू जिस तरह उभरे थे, वह बात चीन को बुरी तरह खल गई। माओत्से तुंग और चाऊ एन लाई ने शांति, सहयोग व सभी के साथ मैत्री का संदेश देनेवाले पं. नेहरू को नीचा दिखाने के लिए यह हमला किया। चूंकि भारत को उत्तर दिशा से किसी हमले का अंदेशा नहीं था इसलिए सैनिकों के पास गर्म कपड़े, बर्फ में पहनने के जूते तथा आधुनिक शस्त्र नहीं थे। इतने पर भी हमारे जवानों ने वीरतापूर्वक मुकाबला कर देश के लिए अपने प्राण न्यौछावर किए। इस युद्ध में राजनीतिक नेतृत्व और सेना के उच्चाधिकारियों की विफलता सामने आई। पं. नेहरू को इतना आघात लगा कि चीनी हमले के २ वर्ष बाद उनका निधन हो गया।

१९६२ में चीन ने भारत पर आक्रमण किया था। इसके उपरान्त भारत व चीन के संबंध में कटुता आ गई। स्व. राजीव गांधी के कार्यकाल में भारत-चीन संबंधों को सामान्य बनाने की पहल की गई थी। इस दिशा में प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंह राव की चीन यात्रा महत्वपूण थी।

भारत में विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों, भाषाओं और बोलियों का समावेश है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने भारत को

धर्मनिरपेक्ष गणराज्य बनाया। सन् १९६२ में चीन के साथ युद्ध में भारत की पराजय का कारण देश का सैन्य दृष्टि से मजबूत नहीं हो पाना था।

चीन के साथ युद्ध में भारत को कॉफी नुकसान उठाना पड़ा था। पराजय की जिम्मेदारी लेकर नैतिकतावश तत्कालीन रक्षा मंत्री कृष्ण मेनन ने मंत्रिमंडल से अपना त्याग पत्र दे दिया। नेहरू जी ने जहां कृष्णमेनन का सम्मान बरकरार रखना था, वहीं नैतिकतावश उनका त्यागपत्र भी मंजूर करना था। वे चाहते थे कि मेनन का इस्तीफा मंजूर करने पर वे खुद को अपमानित और उपेक्षित महसूस न करें, इसलिए उन्होंने संसद में कृष्णमेनन की जमकर प्रशंसा की और जनमत का आदर करते हुए उनका त्यागपत्र भी मंजूर कर लिया।

कांग्रेस पार्टी के अंतर्गत, आजाद भारत के पहले प्रधानमंत्री, नेहरू पाकिस्तान और चीन के साथ भारत के संबंधों में सुधार नहीं कर पाए। उन्होंने चीन की तरफ मित्रता का हाथ भी बढ़ाया, लेकिन १९६२ में चीन ने धोखे से आक्रमण कर दिया। चीन का आक्रमण जवाहरलाल नेहरू के लिए एक बड़ा झटका था।

इसके पश्चात पं. जवाहर लाल नेहरू ने सेना को आधुनिक सैन्य सामग्री से सुसज्जित करने का कार्य प्रारंभ किया था। पं. जवाहर लाल नेहरू का अनुसरण करते हुए भारत आज भी विश्व शांति का पक्षधर है। भारत की समृद्धि उनका सपना था। वे भारत के हर नागरिक को सुखी देखना चाहते थे। विकास के लिये पंचवर्षीय योजना की शुरुआत उनके कार्यकाल में हुई थी।

२७ मई १९६४ को भारत के नागरिकों के लिये वह क्षण अत्यंत पीड़ादायक था जब उन्हें पं. जवाहर लाल नेहरू की दु:खद मृत्यु का समाचार मिला था। पूरे देश में शोक की लहर छा गयी थी। उनकी वसीयत के अनुसार उनकी भस्म की एक मुट्ठी इलाहाबाद में गंगा नदी में डाली गई। शेष हवाई जहाज से खेतों में बिखेर दी गई।

७४ वर्ष की आयु में उनकी कार्यक्षमता विलक्षण थी। भारतीय संस्कृति से उन्हें लगाव था किन्तु कुरीतियों व अंधविश्वास को जो विकास में बाधक मानते थे। उनके आदर्श भारत की राजनीति व नागरिकों को सदैव प्रभावित करते रहेंगे।

पंडित जवाहरलाल नेहरू भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान सेनानी एवं स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री (१९४७-१९६४) थे। जवाहरलाल नेहरू, संसदीय सरकार की स्थापना और विदेशी मामलों में गुटनिरपेक्ष नीतियों के लिए विख्यात हुए। १९३० और १९४० के दशक में भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख नेताओं में से वह एक थे।

नेहरू जी कहते थे- महान ध्येय के प्रयत्न में ही आनंद है, उल्लास है और किसी अंश तक प्राप्ति की मात्रा भी है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान सेनानी एवं स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री (१९४७-१९६४) थे। जवाहर लाल नेहरू, संसदीय सरकार की स्थापना और विदेशी मामलों में गुटनिरपेक्ष नीतियों के लिए विख्यात हुए। १९३० और १९४० के दशक में भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख नेताओं में से वह एक थे। उनका निधन २७ मई को हुआ।

कृषि क्षेत्र में अनुसंधान के लिए नेहरू ने देशभर में कृषि विद्यालय खुलवाए जिनका देश के कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान है। पूर्व प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू को बच्चों से बहुत प्यार था। बच्चे भी उन्हें प्यार से चाचा नेहरू कहते थे। उनके जन्मदिन को इसीलिए बाल दिवस के रूप में मनाया जाता है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान सेनानी एवं स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री (१९४७-१९६४) थे। जवाहर लाल नेहरू, संसदीय सरकार की स्थापना और विदेशी मामलों में गुटनिरपेक्ष नीतियों के लिए विख्यात हुए। १९३० और १९४० के दशक में भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख नेताओं में से वह एक थे। देशभर

में जवाहरलाल नेहरू का जन्मदिन १४ नवंबर बाल दिवस के रूप में मनाया जाता है। नेहरू बच्चों से बेहद प्यार करते थे और यही कारण था कि उन्हें प्यार से चाचा नेहरू बुलाया जाता था। १७ वर्षों तक सत्ता में रहने के दौरान उन्होंने लोकतांत्रिक समाजवाद को दिशा-निर्देशक माना। उनके कार्यकाल में संसद में कांग्रेस पार्टी के जबरदस्त बहुमत के कारण वह अपने लक्ष्यों की ओर अग्रसर होते रहे। लोकतंत्र, समाजवाद, एकता और धर्मनिरपेक्षता उनकी घरेलू नीति के चार स्तंभ थे। जवाहरलाल नेहरू ने जमींदारी प्रथा का खात्मा किया था।

नेहरू ने रखी थी बुलंद नींव- आधुनिक भारत के निर्माता कहे जानेवाले स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू १५ अगस्त १९४७ से लेकर २७ मई १९६४ तक लगभग १७ वर्ष प्रधानमंत्री पद पर रहे। अत्यंत आकर्षक व्यक्तित्व के धनी पं. नेहरू भारतीय विदेश नीति के शिल्पकार, गुटनिरपेक्ष आंदोलन के आधार स्तंभ तथा समाजवादी नीतियों के प्रणेता थे। भारत को औद्योगीकरण के मार्ग पर उन्होंने ही प्रवृत्त किया। पंचवर्षीय योजनाओं का सूत्रपात तथा परमाणु कार्यक्रम शुरू कर राष्ट्र के विकास की आधारशिला रखी। पं. नेहरू देश की आजादी के आंदोलन में १६ साल से अधिक समय तक जेल में रहे। उन्हें जन-जन का विश्वास और आदर प्राप्त था। वे समूचे देश को कर्मठ बनाना चाहते थे कि एक बार गुस्से में कह दिया कि भ्रष्टाचार को बिजली के खम्बे से लटका कर फांसी दे देनी चाहिए। पं. नेहरू ने चीन के तत्कालीन प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई के साथ पंचशील समझौता किया। देश हिंदी-चीनी भाई भाई के नारों से गूंज उठा लेकिन उसी चीन ने विश्वासघात किया। पहले तिब्बत को हड़पा और फिर १९६२ में भारत पर हमला कर हमारी २२००० वर्ग मील जमीन पर कब्जा कर लिया। पं. नेहरू को चीन ने अपनी दगाबाजी से ऐसा आघात पहुंचाया कि इसके दो वर्ष बाद ही उनका स्वर्गवास हो गया। उन्होंने चीनी हमले के बाद अपने अत्यंत निकटवर्ती रक्षामंत्री वीके कृष्ण मेनन को बर्खास्त कर दिया और उनकी जगह महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री यशवंतराव चव्हाण को दिल्ली बुलाकर यह पद सौंपा। चूंकि शीतयुद्ध के दौर में पं. नेहरू ने नासर, टीटो और सुकार्णो को साथ लेकर गुटनिरपेक्ष आंदोलन की आधारशिला रखी इसलिए अमेरिका का रूख सहयोगात्मक नहीं था। अमेरिका की इस बेरुखी की वजह से ही रूस से सहयोग बढ़ाना भारत की बाध्यता हो गई थी।

पं. नेहरू के मंत्रिमंडल में जान मथाई, सीडी देशमुख, टीटी कृष्णमाचारी, मोरारजी देसाई जैसे काबिल वित्तमंत्री, विधिमंत्री डॉ. आंबेडकर, गुलजारीलाल नंदा जैसे गृहमंत्री, मौलाना आजाद जैसे शिक्षामंत्री, सरदार बलदेवसिंह से लेकर यशवंतराव चव्हाण जैसे रक्षा मंत्री थे। विदेश मंत्रालय नेहरू स्वयं संभालते थे।

प्रजातांत्रिक समाजवाद के पक्षधर थे पंडित नेहरू

नेहरू की यथार्थवादिता और मानवता उनके धार्मिक दृष्टिकोण में व्यक्त होती है। वह वाल्टेयर के इस कथन से पूर्ण सहमत थे कि यदि ईश्वर नहीं है तो हमें उसका आविष्कार करना होगा परंतु साथ ही वे यह भी कहते थे कि ईश्वर पर इतना निर्भर भी न हुआ जाये कि मनुष्य का आत्मविश्वास ही समाप्त हो जाये। यद्यपि नेहरू ने ईश्वर के अस्तित्व में संशय प्रकट किया, पर वे नास्तिक नहीं थे, बल्कि उनकी ईश्वरीय कल्पना और आस्था उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के अनुरूप थी। उनका कहना था कि ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन की समस्याओं के हल के लिए हमारे भौतिक जीवन के बारे में जो सूक्ष्म वस्तुएं हैं उनमें विश्वास जरूरी है। उनका यह भी कहना था कि ईश्वर में विश्वास करें या न करें पर हमें सृजनात्मक शक्ति देनेवाली किसी न किसी चीज में तो विश्वास करना ही पड़ेगा जिसे हम नाम कुछ भी दें परंतु हमें यह मानना पड़ेगा

कि यह एक ऐसी वस्तु है जिसकी सत्ता और असलियत है, ठीक उसी प्रकार जैसे जिंदगी मौत के सापेक्ष एक वास्तविकता है, परंतु निरपेक्ष रूप से जिसका पता नहीं चलता। इस प्रकार नेहरू नास्तिक नहीं थे बल्कि राजनीति में धर्मनिरपेक्षता और पाखंडवाद के विरोध के कारण उन्हें नास्तिक कह दिया जाता है। वस्तुत: उनका धर्म मानव धर्म था और मानवतावादी संदर्भ में वे आस्तिक भी तथा टैगोर के निम्न कथन में उनकी पूर्ण आस्था थी ईश्वरीय सत्ता से हम इंकार कर सकते हैं, परंतु यदि मनुष्य की सत्ता से इंकार कर दें और इस प्रकार प्रत्येक वस्तु को निरर्थक बना दें तो हमारे लिए आशा ही कुछ नहीं रह जाएगी। पर वह मानवतावादी होने के कारण जनता से बड़ी कोई सत्ता नहीं मानते थे और इसी जनसेवा को अपना धर्म मानते थे। गांधीजी की तरह उन्होंने भी राज्य में सत्य का समावेश करना चाहा, पर वह सत्य पारलौकिक नहीं, अपितु यथार्थपरक था जैसे भारत की गरीबी और अंग्रेजों की शोषण प्रवृत्ति सत्य है। वे तो चिंतन व ज्ञान के अन्वेषण द्वारा उत्पन्न अपने विचारों को जगत की वास्तविक समस्याओं से संबद्ध करना चाहते थे। नेहरू अहिंसा को उच्चादर्श मानते हुए भी गांधीजी की तरह हर स्थिति में इसका पालन ठीक नहीं मानते थे। उनका कहना था कि कोई भी सरकार महज अहिंसा के आधार पर नहीं चल सकती। वास्तविकताओं के प्रति जागरूकता उनके जीवन दर्शन का प्रमुख पक्ष है। नेहरू जी, गांधी जी की तरह अराजकतावादी नहीं थे और राजसत्ता को इसलिए अनिवार्य मानते थे कि राष्ट्र को सही मार्ग पर अग्रसर करने के लिए एक सरकार, एक शासन की आवश्यकता होती है। स्वतंत्रता का दुरूपयोग रोकने के लिए सरकार आवश्यक है, पर उसे जनमत के अनुसार कार्य करना चाहिए। इस प्रकार पूर्ण न मानते हुए भी वे लोकतंत्र को सबसे अच्छी व्यवस्था मानते थे। उनका आदर्श गांधी जी की तरह रामराज्य न होकर लोक कल्याणकारी राज्य था। वे ऐसे लोकतंत्रवादी थे जो अपने विरोधियों को भी कांग्रेस पार्टी में अच्छे पदों पर चुने जाने में बाधक नहीं थे। नेहरू के अनुसार लोकतंत्र के निर्वाह के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता, समानता के साथ ही सामाजिक स्वतंत्रता एवं समानता भी आवश्यक है। समाज में व्याप्त आर्थिक भेदभाव तथा असमानताओं को दूर किए बिना लोकतंत्र नहीं बन सकता और इस आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए समाजवादी व्यवस्था को आदर्श मानते थे। उनके लोककल्याणकारी राज्य में ग्राम स्तर पर स्वयत्त संस्थायें होगी और प्रशासन के उच्च स्तर पर अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व। वे सत्ता के विकेन्द्रीकरण के पक्षधर थे और इसीलिए उन्होंने सामुदायिक विकास योजना तथा पंचायती राज का शुभारंभ किया। नेहरू की विदेशनीति का निर्धारण भारत की घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के संदर्भ में हुआ था और उनके अंतर्राष्ट्रीय चिंतन में विश्व को युद्ध से बचाने का प्रयास निहित था। वे युद्ध को अवश्यंभावी नहीं मानते थे और न ही शांति को अव्यावहारिक और इसी कारण उन्होंने महाशक्तियों की साम्राज्यवादी नस्लवादी तथा नव उपनिवेशवादी प्रवृत्तियों की भर्त्सना करके गुटनिरपेक्षता का रास्ता चुना। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में वे शक्ति प्रयोग के विपरीत शांति के समर्थक थे और उनका दृष्टिकोण मानवतावादी तथा विश्ववादी था। वे कट्टर राष्ट्रवादी नहीं थे और उनका कहना था- राष्ट्रवाद एक अच्छा नौकर है किंतु बुरा मालिक है। उनका अंतर्राष्ट्रवाद राष्ट्रवाद का ही पूरक है और इसी कारण नेहरू ने एशिया तथा अफ्रीका के नवोदित स्वतंत्र राष्ट्रों की सहायता तथा उनकी प्रभाव वृद्धि का व्यापक प्रचार किया। जाकिर हुसैन ने तो उन्हें विकासशील विश्व के निर्माताओं में से एक माना था। यद्यपि नेहरू साम्यवाद से प्रभावित थे परंतु अर्थव्यवस्था के पूर्ण राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं थे और न ही पूर्णतया पूंजीपतियों के ऊपर छोड़ देने के पक्ष में। अत: उन्होंने मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति अपनाई जिसमें सुरक्षा व सुविधा संबंधी प्रमुख उद्योग तो सार्वजनिक क्षेत्र में ले गए और बाकी निजी क्षेत्र के लिए छोड़ दिए गए ताकि पूंजीपतियों की पूंजी का देश के विकास में उपयोग किया जा सके। नेहरू जी ने छोटे एवं बड़े उद्योगों को एक दूसरे के पूरक के रूप

में विकसित करने के अवसर प्रदान किए। उन्होंने कर्वे समिति की नियुक्ति की और दूसरी पंचवर्षीय योजना में लघु और ग्राम उद्योगों पर समुचित बल दिया। उनका भारी उद्योगों पर साथ-साथ बल दिया जाना अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास था। नेहरू के आर्थिक विचारों का केन्द्र बिन्दु था कि विज्ञान और प्रौद्योगिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्र नहीं बनता तो वह वास्तविक रूप से स्वतंत्र नहीं हो सकता। नेहरू ने आर्थिक एवं सामसाजिक असमानता की चर्चा करते हुए बताया कि आधुनिक लोकतंत्र में मताधिकार का प्रयोग करनेवाले निर्धन व्यक्तियों तथा धन-कुबेरों में समानता स्थापित नहीं की जा सकती। अत: वे आर्थिक विषमता को दूर करने तथा सामाजिक न्याय की स्थापना करने के लिए मूलभूत तथा बड़े बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण चाहते थे और गांधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत को अव्यावहारिक मानते थे। नेहरू जी की सर्वप्रमुख और महत्वपूर्ण देन है- प्रजातांत्रिक पद्धति द्वारा समाजवाद की प्राप्ति जिसे प्रजातांत्रिक समाजवाद कहा जाता है। वे न तो व्यक्तिवादी दृष्टिकोण त्यागना चाहते थे और न साम्यवादी। अत: उन्होंने दोनों के मिश्रण से एक नई राजनैतिक व्यवस्था की परिकल्पना ही नहीं की अपितु उसे एक जीवन पद्धति के रूप में स्वीकार कर व्यावहारिकता का स्वरूप प्रदान किया। उनकी दो अन्य प्रमुख देन हैं- मानवतावाद और अंतर्राष्ट्रीयतावाद। वे आधुनिक भारत के निर्माता भी थे। नियोजन व्यवस्था, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता तटस्थता तथा विश्वशांति आदि प्रमुख देनें भी उनकी हैं। वे बार-बार कहते थे कि हमें समयानुकूल और परंपराओं की ही रक्षा करनी चाहिए। उनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक था। वे संवेदनशील भी थे पर व्यावहारिक जीवन में भावनाओं को अनुपयोगी मानते थे। इस प्रकार उन्होंने भारत को एक समृद्ध ऐतिहासिक और वैज्ञानिक दृष्टि दी। इस प्रकार नेहरू का व्यक्तित्व राजनीतिक विचारक, अर्थशास्त्री एवं मानवतावादी के रूप में अनूठा था। वे गरीबी, निरक्षरता, सांप्रदायिकता जैसी समस्याओं से आजीवन मनसा वाचा कर्मणा जूझते रहे। उन्हें अस्थित चित्त, आत्मप्रशंसक तथा स्वप्न विलासी कहा जाये अथवा क्रांतिकारी समाज सुधारक पर नेहरू के देशप्रेम पर इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। वे विदेश, नीति, वैज्ञानिक तथा आर्थिक नीतियों के प्रणेता तथा विश्व एका के स्वप्नदर्शी थे।

आजादी की लड़ाई के प्रमुख नेता और देश के पहले प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू का जन्म प्रसिद्ध वकील और स्वतंत्रता सेनानी मोतीलाल नेहरू और माता स्वरूप रानी के घर १४ नवंबर १८८९ को इलाहाबाद में हुआ। जवाहर लाल की उच्च शिक्षा कैम्ब्रिज में हुई। भारत लौटने के बाद उन्होंने गांधीजी के सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया और जल्द ही जनता के बीच उनकी अपनी विशेष छवि बन गई, एक अमीर परिवार से संबंध रखने के बावजूद उन्होंने बहुत ही सादा जीवन जिया और खादी धारण की। सन १९१६ में कमला जी से उनका विवाह हुआ। सन १९१७ में उनकी सुपुत्री इंदिरा प्रियदर्शनी का जन्म हुआ। नेहरू जी गांधी जी की सभी नीतियों के समर्थक रहे। उन्हें गांधी जी का राजनीतिक उत्तराधिकारी माना गया। वे शुरू से ही लोकतंत्र, समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता के समर्थक रहे। आजादी के बाद उन्हें सर्वसम्मति से देश का पहला प्रधानमंत्री चुना गया। प्रधानमंत्री के रूप में वे कर्मठता, कठिन परिश्रम और वैज्ञानिक व आधुनिक विचारों के बल पर देश को प्रगति के पथ पर ले चले। शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, वित्त, प्रोद्योगिकी, परिवहन, विदेश नीति जैसे विकास के हर आयाम पर उन्होंने ध्यान दिया। वह एक अच्छे लेखक और इतिहासज्ञ भी माने जाते हैं। अपनी आत्मकथा सहित उन्होंने अन्य कई पुस्तकें लिखीं। ग्लिम्पसेस ऑफ वर्ल्ड हिस्ट्री, डिस्कवरी ऑफ इंडिया जैसी विश्व प्रसिद्ध पुस्तकों में उन्होंने विश्व और भारत के इतिहास को अपनी नजर से देखा। विश्व मंच पर उनके विचारों और सिद्धांतों की साख थी। गुट निरपेक्ष आंदोलन के संस्थापकों में से वह एक थे। विश्व शांति के प्रयासों को बढ़ावा देने और सभी देशों के साथ दोस्ताना संबंध रखने के लिए बनाए उनके पंचशील सूत्रों को विश्व की कई संस्थाओं ने स्वीकार

किया। भारत की विदेश नीति को उन्होंने आकार दिया और राष्ट्रीय हितों को सर्वोपरि रखा। उन्हें बच्चों से बेहद प्यार था। उनके जन्म दिन को देश में बालदिवस के रूप में मनाया जाता है। २७ मई १९६४ को उनका देहांत हुआ।

बच्चों के बीच चाचा नेहरू के नाम से मशहूर भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने स्वतंत्र भारत का जो स्वरूप आज हमारे सामने मौजूद है, उसकी आधारशिला रखी थी। आधुनिक भारत के निर्माण की राह बनाने के साथ ही उन्होंने देश के भावी सामाजिक स्वरूप का खाका भी खींचा था। दुनिया के पटल पर भारत आज अपने जिन मूल्यों आदर्शों के लिए जाना पहचाना जाता है, उसे स्वरूप प्रदान करने का श्रेय एक हद तक नेहरू को दिया जा सकता है। उनके बारे में सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था, जवाहर लाल नेहरू हमारी पीढ़ी के एक महानतम व्यक्ति थे। वह एक ऐसे अद्वितीय राजनीतिज्ञ थे, जिनकी मानव-मुक्ति के प्रति सेवाएं चिरस्मरणीय रहेंगी। स्वाधीनता संग्राम के योद्धा के रूप में वह यशस्वी थे और आधुनिक भारत के निर्माण के लिए उनका अंशदान अभूतपूर्व था। नेहरू का जन्म कश्मीरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। यह परिवार १८वीं शताब्दी के आरंभ में इलाहाबाद आ गया था। इलाहाबाद में बसे इसी परिवार में उनका जन्म १४ नवंबर १८८९ को हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित मोतीलाल नेहरू और माता का नाम श्रीमती स्वरूप रानी था।

उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। १५ वर्ष की उम्र में १९०५ में नेहरू इंग्लैंड के हैरो स्कूल में भेजे गए। हैरो में दो वर्ष तक रहने के बाद नेहरू केंब्रिज के ट्रिनिटी कॉलेज पहुंचे जहां उन्होंने तीन वर्ष तक अध्ययन कर विज्ञान में स्नातक उपाधि प्राप्त की। कैम्ब्रिज छोड़ने के बाद लंदन के इनर टेंपल में दो वर्ष बिताकर उन्होंने वकालत की पढ़ाई की।

भारत लौटने के चार वर्ष बाद मार्च १९१६ में नेहरू का विवाह कमला कौल के साथ हुआ। कमला दिल्ली में बसे कश्मीरी परिवार की थीं। दोनों की अकेली संतान इंदिरा प्रियदर्शिनी का जन्म १९१७ में हुआ।

१९२९ में लाहौर अधिवेशन में नेहरू कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए थे। २७ मई १९६४ को प्रधानमंत्री पद पर रहते हुए निधन होने तक नेहरू अपने देशवासियों का आदर्श बने रहे। भारतीय इतिहास के परिप्रेक्ष्य में नेहरू का महत्व उनके द्वारा आधुनिक जीवन मूल्यों और भारतीय परिस्थितियों के लिए अनुकूलित विचारधाराओं के आयात और प्रसार के कारण है। धर्मनिरपेक्षता और भारत की जातीय तथा धार्मिक विभिन्नताओं के बावजूद देश की मौलिक एकता पर जोर देने के अलावा नेहरू भारत को वैज्ञानिक युग में ले जाने के प्रति भी सचेत थे।

अपने देशवासियों में निर्धनों तथा अछूतों के प्रति सामसाजिक चेतना की जरूरत के प्रति जागरुकता पैदा करने और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति सम्मान पैदा करने का भी कार्य उन्होंने किया। उन्हें अपनी एक उपलब्धि पर विशेष गर्व था कि उन्होंने प्राचीन हिंदू सिविल कोड में सुधार कर अंतत: उत्तराधिकार तथा संपत्ति के मामले में विधवाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार प्रदान करवाया।

पंडित जवाहर लाल नेहरू का जन्म जिस परिवार में हुआ था, वे चाहते तो ऐशोआराम की जिंदगी बसर करते और उन्हें कुछ नहीं करना पड़ता लेकिन उन्होंने ऐशोआराम से परिपूर्ण जिंदगी ठुकराकर देशप्रेम का रास्ता चुना। सच है पंडित नेहरू में देश प्रेम और देश भक्ति कूट कूट कर भरी हुई थी। उनके जीवन में ऐसे कई प्रसंग हैं जिनसे उनके देशभक्त होने का पूरा प्रमाण मिलता है।

एक बार की बात है कि पंडित जी को ध्वजारोहण के लिए आमंत्रित किया गया। तेज धूप पड़ रही थी। तिरंगे झण्डे की फिर्रियों में कुछ खराबी हो गई। यह सोच कर कि फिर्रियां ठीक होने में वक्त लगेगा, आयोजनों ने पंडित जी से तब तक छाया में बैठकर आराम करने के लिए कहा लेकिन उन्होंने आयोजनों का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया और तब तक कड़ी धूप में ही खड़े रहे जब तक फिर्रियां ठीक नहीं हो गई। ध्वजारोहण के पश्चात ही वे वहां से हटे। उनके जीवन की तमाम ऐसी घटनाएं हैं जो उनकी मानवतावादी आदत का उदाहरण है। पंडित नेहरू किसी दौरे पर थे। कारों का काफिला चला जा रहा था। रास्ते के दोनों और भीड़ और पुलिस थी। उन्होंने दूर से देखा कि एक बूढ़े व्यक्ति को सिपाही पकड़कर भीड़ से बाहर कर रहे हैं। पं. नेहरू ने ड्राइवर से गाड़ी रुकवाई। उन पुलिस कर्मियों को फटकारा और बड़े ध्यान से उस बूढ़े व्यक्ति की शिकायत को सुना। बूढ़े ने अपनी बात कही और देश के प्रधानमंत्री की सादगी को देखकर उन्हें आशीर्वाद देता चला गया। जवाहरलाल नेहरू जितने अच्छे नीतिकार और प्रशासक थे उनते ही भावुक भी। कई संवेदनशील और भावुक मौकों पर सार्वजनिक मंच पर ही उनकी आंखें छलछला जाती थी। बात तब की है जब भारत को चीन के साथ युद्ध में पराजय का सामना करना पड़ा था। दिल्ली के लालकिले में एक जलसा था, उसमें पंडित जी भी शिरकत कर रहे थे। कार्यक्रम में भारत की स्वर कोकिला सुश्री लता मंगेशकर ने गीतकार पं. प्रदीप का लिखा देशभक्ति से परिपूर्ण गीत ऐ मेरे वतन के लोगों गाया तो भावुकतावश नेहरू जी की आंखें छलछला उठी। नेहरू जी जहां लोकतंत्र के कट्टर समर्थक थे, वहीं अनुशासन के भी बड़े पक्के थे।

आज देश २१वीं सदी में प्रवेश कर चुका है और इसके साथ विज्ञान और औद्योगिक क्षेत्र में जो प्रगति हासिल की है उस विकास की नींव पंडित जवाहर लाल नेहरू ने ही रखी थी, इसी लिए उन्हें आधुनिक भारत का निर्माता कहा जाता है। आखिर २७ मई १९६४ का वह मनहूस दिन भी आया, जब शांति का पुजारी व्यक्तित्व चिरनिद्रा में लीन हो गया। नेहरू जी के निधन का समाचार सुनकर प्रत्येक भारतवासी की आंखें दुख से नम हो उठी थीं। कहा जाता है उस दिन देश के कई घरों में चूल्हा तक नहीं जला।

जवाहरलाल नेहरू एक बार फिर विमर्श के केंद्र में हैं, खासकर राजनीतिक हलकों में। १९४८ में गांधीजी की हत्या और फिर १९५१ में सरदार पटेल के निधन के बाद उनके पास लगभग निरंकुश ढंग से देश चलाने का पूरा मौका था। पर इसके विपरीत उन्होंने संसद में छोटे, बंटे हुए पर बेहद संभावनाशील विपक्ष के पुरजोर हमले झेले। यहां तक कि विपक्ष को उसकी ताकत (संख्या बल) से अधिक महत्व दिया। दरअसल नेहरू बड़ी शिद्दत के साथ मानते थे कि स्वस्थ लोकतंत्र के लिए सशक्त विपक्ष जरूरी है। उन्होंने जनता से सीधा संपर्क और संवाद बनाया और देश के हरेक नागरिक को यह अधिकार दिया कि वह बिना किसी पूर्वसूचना के उनसे मिल सकता था। वे रोज एक घंटा लोगों का दुख दर्द सुनते थे, भले ही कितने व्यस्त हों।

मुख्यमंत्रियों को पत्र- अक्टूबर १९४७ से लेकर दिसंबर १९६३ तक, हर महीने की पहली और १५ तारीख को नेहरू मुख्यमंत्रियों को पत्र लिखते रहे। इन पत्रों में वे अपनी सरकार की नीतियों को विस्तार से बताते समझाते थे। लेकिन इसके साथ ही वे मुख्यमंत्रियों से सलाह भी लेते थे। उनके पत्र लंबे होते थे, जिनमें सरकार की देश विदेश नीति पर बात होती थी। कभी कभार इन पत्रों में ज्ञान देनेवाला भाव भी झलकता है, लेकिन नेहरू के कद को देखते हुए यह अस्वाभाविक नहीं लगता। पत्रों में वे बिना केस चलाए किसी को जेल में बंद रखने और पुलिस फायरिंग जैसे मसलों पर

भी अपनी राय रखते थे। उन्होंने सुनिश्चित किया कि सरकार और धार्मिक मामलों के बीच किसी तरह का कोई घालमेल न हो। वे चाहते थे कि सांप्रदायिकता का जहर सेना या नौकरशाही पर कभी असर न डाले। कानून की नजर में वे हर भारतीय को एक देखना चाहते थे, ताकि यह साबित हो सके कि भारत सच्चे अर्थों में एक धर्मनिरपेक्ष देश है।

नेहरू युग का अंत यूं तो ५० साल पहले हो गया, लेकिन जिस तरह देश ने कुछ समय पहले १६वीं लोकसभा को चुना है उसका कुछ न कुछ क्रेडिट नेहरू की भी है। करीब ८० करोड़ मतदाताओं ने अपने मताधिकार का प्रयोग करते हुए अपने नुमाइंदों का चयन किया। यानी सत्ता का हस्तांतरण मजे से हो गया। जरा अपने आसपास नेपाल, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, मालदीव, दक्षिण-पूर्व एशिया, पूर्वी एशिया, पश्चिमी एशिया और अफ्रीका को देखिए। तब समझ में आएगा कि नेहरू की बदौलत भारत में संसदीय लोकतंत्र किस तरह से फल फूल रहा है।

पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री बिधान चंद्र राय को २५ दिसंबर १९४९ को लिखे पत्र में उन्होंने कहा था, मेरा मानना है कि सिर्फ जनता के लिए काम करना पर्याप्त नहीं है। बेहतर होगा कि लोगों के साथ मिलकर काम किया जाए ताकि उन्हें इस बात का यकीन हो कि कोई सच में उनका हितैषी है। नेहरू चाहते तो देश के पहले लोकसभा चुनाव को देश विभाजन और शरणार्थियों के पुनर्वास का बहाना बनाकर टलवा सकते थे। लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं होने दिया। इसके विपरीत उन्होंने पहले लोकसभा चुनाव में सांप्रदायिक ताकतों को पानी पिला दिया, जो भारत को हिंदू राष्ट्र बनाने की वकालत कर रहे थे। उन्हें भारत की जनता पर यकीन था कि भले ही कुछ समय पहले मुल्क धर्म के नाम पर बंटा हो, लेकिन उसे हिंदू राष्ट्र उसे कतई मंजूर नहीं होगा। देश के बंटवारे के दौरान और इसके कुछ समय बाद तक मजहब के नाम पर चले दंगों में लाखों बेगुनाहों का लहू बहा और करोड़ों बेघर हो गए। इतना सब होने के बावजूद पहले लोकसभा चुनाव में कम्युनल अजेंडे पर चुनाव लड़नेवालों को कांग्रेस की ३६४ सीटों के मुकाबले सिर्फ १० सीटें मिली थीं।

नेहरू जी संसद में चलनेवाली बहसों में लगातार बैठे रहते थे। वे सुनिश्चित करते थे कि संसद में पारित होनेवाले विधेयकों से देश में यह संदेश न जाए कि विपक्ष की अनदेखी हो रही है। अपने अंतिम दिनों में खासे अस्वस्थ होने के बाद भी उन्होंने संसदीय बहसों में हिस्सा लेना नहीं छोड़ा। वहां हंगामा और अनुशासनहीनता पैदा होने पर वे खड़े हो जाते थे। २ जून, १९५० को उन्होंने एक जगह कहा था, मैं विपक्ष से भयभीत नहीं होता। मेरी तो चाहत है कि विपक्ष का विस्तार हो। मैं यह कतई नहीं चाहता कि भारत में लाखों लोग एक इंसान की हां में हां मिलाएं। मैं भारत में सशक्त विपक्ष देखना चाहता हूं।

विरासत सदा के लिए- नेहरू का अपने जीवन काल में ही कद इतना ऊंचा हो गया था कि उनके बिना भारत की कल्पना करना भी मुश्किल हो गया था। उनकी मृत्यु से एक साल पहले प्रख्यात अमेरिकी पत्रकार वेल्स हैंगन ने एक किताब लिखी थी, आफ्टर नेहरू, हू? यह उस समय का एक बड़ा प्रश्न था। नेहरू के बाद भारत बहुत बदला है, पर बड़ा सवाल यह है कि क्या भारत कभी उस नेहरू को भूल पाएगा, जिसकी वजह से यहां लोकतंत्र ने पैर जमाए और जिसने देश को धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों पर चलने के लिए प्रेरित किया? भारत पर नेहरू का प्रभाव इतना साफ और इतना अधिक है कि उसकी समीक्षा करना भी गैरजरूरी है।

प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने १४ अगस्त १९४७ की रात बारह बजे संविधान सभा को संबोधित वक्तव्य ट्रिस्ट विद डेस्टिनी में भारत को एक प्राचीन किंतु चिर युवा राष्ट्र बताते हुए इसके नवनिर्माण को देशवासियों के लिए एक स्वप्न

की तरह प्रस्तुत किया था। इसके ठीक अगले दिन १५ अगस्त १९४७ की शाम उन्होंने रेडियो प्रसारण के जरिए प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में देश को संबोधित किया तो उनका स्वर एक स्वप्नदर्शी का न होकर एक नवस्वतंत्र देश के राष्ट्राध्यक्ष का था, जो आम लोगों के हितों को ताकतवर निहित स्वार्थों से ऊपर रखते हुए सेना, पुलिस और नौकरशाही को अपना ढर्रा बदलने का संदेश देना चाहता था। फर्स्ट सर्वेंट ऑफ द इंडियन पीपल शीर्षक वाले इस कम चर्चित वक्तव्य का हिंदी भावानुवाद।

प्यारे देशवासियों, यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे कई साल तक भारत और भारतीय स्वाधीनता के लिए काम करने का मौका मिला। भारतीय जनता की सेवा और उसकी बेहतरी के लिए प्रतिबद्ध उसके प्रथम सेवक के रूप में आज मैं आधिकारिक रूप से पहली बार आपको संबोधित कर रहा हूं। मैं यहां इसलिए हूं क्योंकि यह आपकी इच्छा थी और जब तक आप मुझमें अपना भरोसा जताने की इज्जत बख्शेंगे, तब तक मैं यहा रहूंगा।,

आज हम एक स्वतंत्र और संप्रभु जाति हैं और अतीत के बोझ से हमने खुद को आजाद कर लिया है। दुनिया के प्रति हमारी नजर साफ और दोस्ताना है और भविष्य के प्रति आस्था और विश्वास से भरी हुई। विदेशी दासता से तो छुटकारा पा लिया गया है, लेकिन स्वतंत्रता अपने साथ कुछ अलग ही जिम्मेदारियां और दबाव लेकर आती है। यह भारी वजन एक ऐसी स्वतंत्र जाति का बोध लेकर ही उठाया जा सकता है, जो स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने और उसे विस्तार देने को लेकर कृतसंकल्प है।

हमने काफी कुछ हासिल किया है, हमें और भी बहुत कुछ हासिल करना है। हम अपनी नई जिम्मेदारियों से मुखातिब हों- दृढ़ निश्चय के साथ और उन सिद्धांतों के साथ, जो हमारे महान नेता ने हमें सिखाए हैं। हमारा सौभाग्य है कि हमारा नेतृत्व करने के लिए और हमें ऊंचे लक्ष्यों की राह दिखाने के लिए गांधीजी हमारे साथ हैं। उन्होंने काफी पहले हमें सिखाया था कि आदर्शों और उद्देश्यों को कभी इनकी प्राप्ति के लिए अपनाए जानेवाले तरीकों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। श्रेष्ठ लक्ष्यों की प्राप्ति केवल श्रेष्ठ साधनों के द्वारा ही हो सकती है। अगर हमें जीवन के बड़े उद्देश्य अपने सामने रखने हैं और ऐसे भारत का स्वप्न देखना है जो एक महान राष्ट्र के रूप में बाकी दुनिया को शांति और स्वाधीनता का युगों पुराना संदेश दे सके, तो हमें खुद बड़ा बन कर और भारत माता का सच्चा सपूत बनकर दिखाना चाहिए। सारी दुनिया की निगाहें हम पर हैं। लोग पूरब में स्वतंत्रता का जन्म होते देख रहे हैं और इसका अर्थ समझने का प्रयास कर रहे हैं।

हमारा पहला और तात्कालिक लक्ष्य होना चाहिए हर तरह के आंतरिक उपद्रव और हिंसा की समाप्ति। ये चीजें हमारे देश को विकृत बना रही हैं, हमें नीचे ले जा रही हैं और स्वतंत्रता के उद्देश्य को चोट पहुंचा रही हैं। ये व्यापक जनता की उन विराट आर्थिक समस्याओं के समाधान के आड़े आ रही हैं, जिन पर तत्काल पूरी शिद्दत से काम किया जाना जरूरी है।

हमारी लंबी गुलामी ने, विश्व युद्ध और इसके बाद की स्थितियों ने विरासत में हमें भयंकर मुश्किलों का ढेर सौंप दिया है। हमारे लोगों के पास आज न खाना है, न कपड़ा है और न जरूरत की बाकी चीजें हैं। मुद्रास्फीति और बढ़ती कीमतों ने हमें अपनी गिरफ्त में ले रखा है। इन मुश्किलों का हल चुटकी बजाते संभव नहीं है, लेकिन इस काम में अब और देर भी नहीं की जा सकती। लिहाजा हमें इस बारे में समझदारी के साथ योजना बनानी होगी, ताकि लोगों पर इनका बोझ न बढ़े और उनका जीवन स्तर ऊपर उठे। हम किसी का बुरा नहीं चाहते, लेकिन एक बात अच्छी तरह समझ लेना जरूरी है कि लंबे समय से तकलीफें झेल रही व्यापक जनता का हित हमारे लिए सर्वोपरि है और जो भी निहित स्वार्थ इसके आड़े आएगा,

उसे रास्ते से हटना होगा। हमें कालातीत हो चुकी अपनी भूस्वामित्व प्रणाली को जल्द से जल्द बदलना होगा और बड़े पैमाने पर तथा संतुलित ढंग से औद्योगीकरण को बढ़ावा देना होगा। देश की संपदा बढ़ाने के लिए यह जरूरी है और राष्ट्रीय लाभांश बढ़ाने के लिए भी, ताकि उसका वितरण समतापूर्ण ढंग से किया जा सके।

उत्पादन आज हमारी पहली प्राथमिकता है और इसमें बाधा डालने या इसे घटाने का कोई भी उपाय देश के लिए और खासकर हमारे मेहनतकश अवाम के लिए नुकसानदेह है। लेकिन महज उत्पादन से ही सब कुछ नहीं होनेवाला, क्योंकि इससे कुछ गिने-चुने हाथों में संपत्ति का केंद्रीकरण और ज्यादा हो सकता है। यह प्रगति के रास्ते में बाधक होगा और आज के संदर्भ में अस्थिरता और टकराव को जन्म देगा। ऐसे में उचित और समतापूर्ण वितरण समस्या के समाधान के लिए जरूरी है।

भारत सरकार ने फिलहाल नदी घाटियों के विकास की कई योजनाएं हाथ में ले रखी हैं। इसके लिए नदियों का प्रवाह नियंत्रित किया जाएगा, उन पर बांध और जलाशय बनाए जाएंगे और उनसे पनबिजली पैदा की जाएगी। इन उपायों से चौतरफा विकास सुनिश्चित होगा। ये योजनाएं संपूर्ण नियोजन का आधार हैं। हमारी कोशिश इन्हें जल्द से जल्द पूरा कर लेने की है ताकि अवाम को इनका फायदा पहुंचाया जा सके।

इस सबके लिए शांतिपूर्ण परिस्थितियां और सभी संबेधित लोगों का सहयोग और कठिन परिश्रम जरूरी है। हम इन महान और श्रेष्ठ लक्ष्यों के प्रति समर्पित्त हो और आपसी झगड़ों तकरारों को भूल जाएंगे। कोई वक्त झगड़ा करने का होता है, कोई खेलने का, तो कोई मिल जुल कर काम करने का भी होता है। अगर हम अपने देश और अपने लोगों की नजर में झूठे नहीं बनना चाहते तो मान कर चलें कि आज झगड़ने का वक्त बिल्कुल नहीं है और खेलने का भी जरा कम ही है। आज का वक्त तो आपस में हाथ बंटाने और साथ मिलकर पूरी सदिच्छा के साथ काम करने का है।

कुछ बातें मैं नागरिक और फौजी सेवाओं में लगे लोगों से भी कहना चाहूंगा। पुरानी पहचानें और टकराव अब बीते दिनों की बात हो चुके हैं और आज हम सब भारत के आजाद बेटे बेटियां हैं। हमें अपने देश की स्वतंत्रता पर गर्व है और उसकी सेवा में हम सभी को मिल कर काम करना है। हमारी साझा प्रतिबद्धता भारत के प्रति है। आनेवाले कठिन दिनों में हमारी सैन्य और नागरिक सेवाओं को और हमारे विशेषज्ञों को अहम भूमिका निभानी है और हम उन्हें अपने साथियों की तरह भारत की सेवा के लिए आमंत्रित करते हैं।

सी.के. नायडू (निधन- १४ नवंबर)

कोट्टारी कंकैया नायडू भारत की क्रिकेट टीम के प्रथम टेस्ट कप्तान रहे थे। सी.के. नायडू उस उम्र तक क्रिकेट खेलते रहे, जिसके बारे में सोचना भी आज के खिलाड़ियों के लिए दिवास्वप्न है। नायडू की उस समय की फिटनेस आज के उन खिलाड़ियों के लिए एक सबक है, जो दूसरे तीसरे मैच के बाद ही चोटिल हो जाते हैं। ३७ साल की उम्र में जब आज खिलाड़ी रिटायर होने लगते है, तब सी.के. नायडू ने टेस्ट मैच खेलना शुरू किया था। वह ६८ साल तक फिट रहकर क्रिकेट खेलते रहे थे।

हरिकृष्ण देवसरे (निधन- १४ नवंबर)

हरिकृष्ण देवसरे हिंदी के प्रतिष्ठित बाल साहित्यकार और संपादक थे। कविता, कहानी, नाटक, आलोचना आदि विधाओं में उनकी लगभग ३०० पुस्तकें प्रकाशित हैं। वे बच्चों की लोकप्रिय पत्रिका पराग के लगभग १० वर्ष संपादक भी रहे।

भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद (निधन- १४ नवंबर)

अभय चरणारविन्द भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपादप्रसिद्ध गौड़ीय वैष्णव गुरु तथा धर्मप्रचारक थे। वेदान्त, कृष्ण भक्ति और इससे संबंधित क्षेत्रों पर आपने विचार रखे और कृष्णभावना को पश्चिमी जगत में पहुंचाने का कार्य किया। ये भक्तिसिद्धांत ठाकुर सरस्वती के शिष्य थे, जिन्होंने इनको अंग्रेजी के माध्यम से वैदिक ज्ञान के प्रसार के लिए प्रेरित और उत्साहित किया। स्वामी प्रभुपाद ने इस्कॉन को स्थापित किया और कई वैष्णव धार्मिक ग्रंथों का प्रकाशन और संपादन किया।

लक्ष्मीचंद जैन (निधन- १४ नवंबर)

लक्ष्मीचंद जैन भारत के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री थे। सन १९४८ में जैन ने कमला देवी के साथ एक इण्डियन को ऑपरेटिव यूनियन की स्थापना की। सन १९६८ में उन्होंने एक कंसल्टिंग फर्म भी खड़ी की, जो किसानों तथा कारीगरों की सलाह पर सरकारी तथा गैर सरकारी कामकाज में मदद करती थीं।

१५ नवम्बर

अमर शहीद विरसा मुंडा (जन्म- १५ नवम्बर)

दक्षिण बिहार और झारखंड का अधिकांश भाग छोटा नागपुर कहलाता है। छोटा नागपुर प्रमंडल में रांची, सिंहभूम, धनबाद, हजारीबाग और पलामू जिले आते हैं। यह भूभाग वनाच्छदित पर्वतों और उपत्यकाओं से पूर्ण पथरीला तथा दुर्गम है।

यहां के मूल निवासी आदिवासी हैं। ये सदियों से वनों और कंदराओं में रहकर प्रकृति प्रदत्त आहार ग्रहण करते हुए अपने में मस्त रहे हैं पर जब अंग्रेजों ने इनका शोषण किया, इनके स्वाभिमान को चोट पहुंचाई तो ये वनवासी विद्रोह कर उठे। इनके कई नेता शहीद भी हुए हैं। इनमें विरसा मुंडा अत्यंत लोकप्रिय हैं जिन्हें आदिवासी श्रद्धावश विरसा भगवान कहते हैं।

सलमा गांव से प्राथमिक शिक्षा प्रात कर विरसा चाईबासा मिशन स्कूल में भरती हुए। वहां इनको बाइबिल की शिक्षा दी जाने लगी। ये प्रकृत्या भावुक और बहादुर थे। ये हनुमान भक्त थे और हनुमान चालीसा पढ़ा करते थे।

चाईबासा सिंहभूम का मुख्यालय था। वहां विरसा ने अंग्रेजों का आतंक देखा। १८५७ की क्रांति विफल हो चुकी थी। अंग्रेजी राज मजबूती से जम गया था।

मिशन स्कूल की हालत अच्छी नहीं थी। शिक्षक विदेशी थे। वे भारतीय छात्रों खासकर गैर ईसाइयों से बहुत आपत्तिजनक व्यवहार करते थे। घर के काम करना, फुलवारी पटाना, जूठे बर्तन धोना और कपड़े साफ करना छात्रों के अनिवार्य नैतिक काम समझे जाते थे। उन दिनों यातायात के साधन सुगम नहीं थे। लोगों ने प्राय: घोड़े पाल रखे थे। छात्र उन घोड़ों की लीद साफ करते और तालाबों में ले जाकर उन्हें नहलाते। घोड़ों को खिलाने के लिए वनों से महुआ चुनकर लाना पड़ता था।

अंग्रेजों के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध होकर विरसा ने १८९० में स्कूल छोड़ दिया और अपने गांव लौट गया। आनंद पेड़ांग नामक एक व्यक्ति से इनकी मित्रतो हो गई। आनंद को रामायण और महाभारत की कथाओं का अच्छा ज्ञान था। आनंद से ही विरसा ने रामायण और महाभारत की कथाएं सुनी तथा भारतीय संस्कृति के प्रति इनमें अपार श्रद्धा उत्पन्न हो गई। आनंद ने इन्हें देशी चिकित्सा और तंत्र साधना भी सिखाई।

वन गांव का जमीदार जगमोहन सिंह बहुत अत्याचारी था। वह अंग्रेजों का दलाल था। पुलिस से मिलकर लोगों पर अत्याचार करता था। आदिवासी कुंवारी कन्याओं पर सामूहिक बलात्कार में उसकी विशेष रुचि थी। विरोध करनेवालों को वह हाथियों के पैरों तले कुचलवा देता था।

विरसा ने उसके विरोध का निश्चय किया। विरसा एक जन्मजात नेता थे। उनका स्वभाव नरम और व्यक्तित्व आकर्षक था। संगठन कला में उनकी रुचि थी। शीघ्र ही उन्होंने लोगों का विश्वास प्राप्त कर लिया और लोग जमींदार तथा पुलिस के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तैयार हो गये।

परंपरा से आदिवासी वनों पर अपना अधिकार मानते आए हैं। छोटा नागपुर के आदिवासी वृक्षों से प्रेम करते हैं। साल का वृक्ष बहुत पवित्र माना जाता है। यह वृक्ष जाहेरा, सरना आदि देवस्थानों में लगाया जाता है। इसका प्रयोग पत्तल और घर बनाने के कामों में किया जाता है। जब जमींदारों ने इन साल वृक्षों की अंधाधुंध कटाई शुरू की तो आदिवासी भड़क

गए।

सरकार ने जंगल ठेकेदारों को दे दिए। ठेकेदारों ने आदिवासियों को जंगल से महुआ, कटहल, जामुन, आम, केंदु करंज आदि चुनने से मना कर दिया। इससे आदिवासियों के सामने भुखमरी की स्थिति आ गई। उनमें से कुछ असम और भूटान भागने लगे।

इन परिस्थितियों में विरसा ने संघर्ष का नारा दिया। उन्होंने आदिवासियों को समझाया चुटिया नागपुर आबुआ तनानिया की वाइला। तैलेगा कोआनिया का तना। आबु आकाबीर ओडो ओते रेआ माता काबू ओमा कौमा। छोटानागपुर हमारा है। हम उन्हें भूमि और जंगल की उपज नहीं देंगे। अक्टूबर १८९४ ईसवी को चाईबासा में विरसा के नेतृत्व में विशाल जनप्रदर्शन हुआ। जंगल हमारा है के नारों से आकाश गूंज गयां खुले आम अंग्रेजों को चुनौती दी गई। जंगल में जाकर आदिवासियों पर अत्याचार करने के भीषण परिणाम की स्पष्ट घोषणा कर दी गई। अंग्रेजों के लिए यह खतरे की घंटी थी। उन्हें १८५७ की याद आने लगी।

डिप्टी कमिश्नर ने पादरियों और जमींदारों की सहायता से विरसा को गिरफ्तार करने की योजना बनाई। खुलेआम विरसा की गिरफ्तारी संभव नहीं थी क्योंकि पुलिस मुट्ठी भर थी और विरसा के साथ हजारों आदिवासी तीर धनुष से सज्जित थे। आखिर पुलिस अधीक्षक मीयर्स ने चलकद गांव में रात के तीन बजे विरसा को गिरफ्तार किया। सेना का सहयोग भी लिया गया था। उन पर राजद्रोह का अभियोग लगाया गया। प्रमाणों के अभाव में भी विरसा को ढाई वर्षों का कारावास दंड दिया।

१८९७ ईसवीं में विरसा और उनके साथी जेल से छूटकर वापस आए। पूरे छोटा नागपुर में इस समय अकाल और हैजे का प्रकोप था। अंग्रेजों की कोई रूचि आदिवासियों के कल्याण में नहीं थी। विरसा ने गांव-गावं घूमकर सेवा और राहत की योजना बनाई। उनके स्वयंसेवकों ने देशी पद्धति से लोगों की चिकित्सा की। वनों से खाद्य पदार्थ जुटाकर दिए गए। विरसा की लोकप्रियता बढ़ गई।

जमींदार और पुलिस विभाग विरसा के पीछे लगे हुए थे। वे इनके जनहित के कार्यों को भी संदेह की दृष्टि से देखते थे। ईसाई पादरी भी विरसा को पसंद नहीं करते थे। पादरी चाहते थे कि सेवा कार्य वे ही करें ताकि उन्हें आदिवासियों के धर्मान्तरण में सुविधा हो। विरसा और उनके अनुयायी इन परिस्थितियों से मन ही मन क्षुब्ध थे।

विरसा पादरियों द्वारा आदिवासियों के धर्मांतरण के विरोधी थे। वे चर्च को आदिवासी जनता के आर्थिक और सांस्कृतिक शोषण का केंद्र मानते थे। २४ दिसंबर १८९९ को क्रिसमस की पूर्वसंध्या के अवसर पर रांची के जर्मन मिशन चर्च में बहुत से अंग्रेज और पादरी जमा थे। विरसा के नेतृत्व में आदिवासियों ने हमला किया और कुछ अंग्रेज मारे गए। ७ जनवरी १९०० को इन विद्रोहियों ने खूंटी पर अधिकार कर लिया और अंग्रेज भगा दिए गए। रांची के कमिश्नर फारविस, डिप्टी कमिशनर स्ट्रीट फोल्ड और कैप्टन रो के संयुक्त नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने आदिवासी विद्रोहियों को डाबारी बुरू के पास घेर लिया। अंग्रेजों के पास बंदूकों के अलावा तोपें भी थी। आदिवासियों के पास तीर धनुष, टांगी, फरसा आदि परंपरागत हथियार ही है। विरसा ने स्थिति की भयंकरता समझी और टल गए।

अंग्रेजों ने गांव गांव में घूमकर विरसा का पता लगाना शुरू किया। पकड़वाने वाले को ५०० रू. का इनाम देने की घोषणा हुई। लोगों पर अत्याचार होने लगे। पादरियों के सहयोग से इनाम के लालच में वीर सिंह औड़ेया ने ३ मार्च १९०० को विरसा को गिरफ्तार करा दिया।

विरसा को हजारीबाग और रांची के जेलों में रखा गया। उन्हें जहर भी दे दिया गया। मुकदमा अभी चल ही रहा था कि ९ जून १९०० को विरसा का देहांत हो गया। अंग्रेजों ने सुवर्ण रेखा के तीर पर विरसा को जला दिया तथा अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए भी उनके परिवार वालों को सूचित नहीं किया।

विरसा का बलिदान मात्र २५ वर्ष की अवस्था में हो गया। आज भी छोटा नागपुर के लाखों आदिवासी इस नेता को विरसा भगवान के नाम से श्रद्धास्मरण करते हैं।

बिरसा मुंडा एक आदिवासी नेता और लोकनायक थे। ये मुंडा जाति से सम्बन्धित थे। वर्तमान भारत में रांची और सिंहभूमि के आदिवासी बिरसा मुंडा को अब बिरसा भगवान कहकर याद करते हैं। मुंडा आदिवासियों को अंग्रेजों के दमन के विरुद्ध खड़ा करके बिरसा मुंडा ने यह समस्या अर्जित किया था। १९वीं सदी में बिरसा भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में एक मुख्य कड़ी साबित हुए थे।

१५ नवंबर १८७५ को आदिवासी नेता बिरसा मुंडा का जन्म उलीहातू, खूंटी (झारखंड) में हुआ था। उन्होंने अंग्रेजों के दमन के विरुद्ध आदिवासियों को खड़ा किया और उनका नेतृत्व किया। १८९४ के अकाल में उन्होंने जनता की सेवा की जिसके कारण उन्हें अपने जीवनकाल में ही महापुरुष का दर्जा मिल गया था। वे आज भी झारखंड, उड़ीसा, बिहार, पं. बंगाल और मध्यप्रदेश में बिरसा भगवान और धरती आबा के नाम से लोकप्रिय हैं। नौ जून १९०० को जेल में उनकी मृत्यु हो गयी, लेकिन वे लोग गीतों ओर जनजातीय साहित्य में आज भी जीवित हैं।

दक्षिण विहार का अधिकांश भाग छोटा नागपुर कहलाता है। छोटा नागपुर प्रमंडल में रांची, सिंहभूम, धनबाद, हजारीबाग और पलामू जिले आते हैं। यह भूभाग वनाच्छादित पर्वतों और उपत्यकाओं से पूर्ण पथरीला तथा दुर्गम हैं। यहां के मूल निवासी आदिवासी हैं। वे सदियों से वनों और कंदराओं में रहकर प्रकृति प्रदत्त आहार ग्रहण करते हुए अपने में मस्त रहे हैं पर जब अंग्रेजों ने इनका शोषण किया, इनके स्वाभिमान को चोट पहुंचाई तो ये वनवासी विद्रोह कर उठे। इनके कई नेता शहीद भी हुए हैं। इनमें विरसा मुंडा अत्यंत लोकप्रिय हैं जिन्हें आदिवासी श्रद्धावश विरसा भगवान कहते हैं। सलमा गांव से प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर विरसा चाईबासा मिशन स्कूल में भरती हुए। वहां इनको बाइबिल की शिक्षा दी जाने लगी। ये प्रकृत्या भावुक और बहादुर थे। ये हनुमान भक्त थे और हनुमान चालीसा पढ़ा करते थे। चाईबासा सिंहभूम का मुख्यालय था। वहां विरसा ने अंग्रेजों का आतंक देखा। १८५७ की क्रांति विफल हो चुकी थी। अंग्रेजी राज मजबूती से जम गया था। मिशन स्कूल की हालत अच्छी नहीं थी। शिक्षक विदेशी थे। वे भारतीय छात्रों खासकर गैर ईसाइयों से बहुत आपत्तिजनक व्यवहार करते थे। घर के काम करना, फुलवारी पटना, जूठे बर्तन धोना और कपड़े साफ करना छात्रों के अनिवार्य नैतिक काम समझे जाते थे। उन दिनों यातायात के साधन सुगम नहीं थे। लोगों ने प्राय: घोड़े पाल रखे थे। छात्र उन घोड़ों की लीद साफ करते और तालाबों में ले जाकर उन्हें नहलाते। घोड़ों को खिलाने के लिए वनों से महुआ चुनकर लाना पड़ता था। अंग्रेजों के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध होकर विरसा ने १८९० में स्कूल छोड़ दिया और अपने गांव लौट गए। आनंद पेड़ांग नामक एक व्यक्ति से इनकी मित्रता हो गई। आनंद को रामायण और महाभारत की कथाओं का अच्छा ज्ञान था। आनंद से ही विरसा ने रामायण और महाभारत की कथाएं सुनी तथा भारतीय संस्कृति के प्रति इनमें अपार श्रद्धा उत्पन्न हो गई। आनंद ने इन्हें देशी चिकित्सा और तंत्र साधना भी सिखाई। वन गांव का जमीदार जगमोहन सिंह बहुत अत्याचारी था। वह अंग्रेजों का दलाल था। पुलिस से मिलकर लोगों पर अत्याचार करता था। आदिवासी कुंवारी

कन्याओं पर सामूहिक बलात्कार में उसकी विशेष रुचि थी। विरोध करनेवालों को वह हाथियों के पैरों तले कुचलवा देता था। विरसा ने उसके विरोध का निश्चय किया। विरसा एक जन्मजात नेता थे। उनका स्वभाव नरम और व्यक्तित्व आकर्षक था। संगठन कला में उनकी रुचि थी। शीघ्र ही उन्होंने लोगों का विश्वास प्राप्त कर लिया और लोग जमींदार तथा पुलिस के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तैयार हो गये। परंपरा से आदिवासी वनों पर अपना अधिकार मानते आए हैं। छोटा नागपुर के आदिवासी वृक्षों से प्रेम करते हैं। साल का वृक्ष बहुत पवित्र माना जाता है। साल के फूल से वह पर्व मनाया जाता है। यह वृक्ष जाहेरा, सरना आदि देवस्थानों में लगाया जाता है। इसका प्रयोग पत्तल और घर बनाने के कामों में किया जाता है। जब जमींदारों ने इन साल वृक्षों की अंधाधुंध कटाई शुरू की तो आदिवासी भड़क गए। सरकार ने जंगल ठेकेदारों को दे दिए। ठेकेदारों ने आदिवासियों को जंगल से महुआ, कटहल, जामुन, आम, केंदु करंज आदि चुनने से मना कर दिया। इससे आदिवासियों के सामने भुखमरी की स्थिति आ गई। उनमें से कुछ असम और भूटान भागने लगे। इन परिस्थितियों में विरसा ने संघर्ष का नारा दिया। उन्होंने आदिवासियों को समझाया चुटिया नागपुर आबुआ तना निया की वाइला। तैलेगा कोआ निया का तना। आबु आकाबीर ओडो ओते रेआ माता काबू ओमा कौमा। छोटानागपुर हमार है। हमारे पूर्वजों का बनाया है। यह अंग्रेजों का नहीं है। हम उन्हें भूमि और जंगल की उपज नहीं देंगे। अक्टूबर १८९४ ईसवीं को चाईबासा में विरसा के नेतृत्व में विशाल जनप्रदर्शन हुआ। जंगल हमारा है के नारों से आकाश गूंज गया। खुले आम अंग्रेजों को चुनौती दी गई। जंगल में जाकर आदिवासियों पर अत्याचार करने के भीषण परिणाम की स्पष्ट घोषणा कर दी गई। अंग्रेजों के लिए यह खतरे की घंटी थी। उन्हें १८५७ की याद आने लगी। आखिर पुलिस अधीक्षक मीयर्स ने चलकद गांव में रात के तीन बजे विरसा को गिरफ्तार किया। सेना का सहयोग भी लिया गया था। उन पर राजद्रोह का अभियोग लगाया गया। प्रमाणों के अभाव में भी विरसा को ढाई वर्षों का कारावास दंड दिया गया। १८९७ ईसवीं में विरसा और उनके साथी जेल से छूटकर वापस आए। पूरे छोटा नागपुर में इस समय अकाल और हैजे का प्रकोप था। अंग्रेजों की कोई रुचि आदिवासियों के कल्याण में नहीं थी। विरसा ने गांव-गांव घूमकर सेवा और राहत की योजना बनाई। उनके स्वयंसेवकों ने देशी पद्धति से लोगों की चिकित्सा की। वनों से खाद्य पदार्थ जुटाकर दिए गए। विरसा की लोकप्रियता बढ़ गई। विरसा पादरियों द्वारा आदिवासियों के धर्मान्तरण के विरोधी थे। वे चर्च को आदिवासी जनता के आर्थिक और सांस्कृतिक शोषण का केंद्र मानते थे। २४ दिसम्बर १८९९ को क्रिसमस की पूर्व संध्या के अवसर पर रांची के जर्मन मिशन चर्च में बहुत से अंग्रेज और पादरी जमा थे। विरसा के नेतृत्व में आदिवासियों ने हमला किया और कुछ अंग्रेज मारे गए। ७ जनवरी १९०० को इन विद्रोहियों ने खूंटी पर अधिकार कर लिया और अंग्रेज भगा दिए गए। रांची के कमिश्नर फारविस, डिप्टी कमिशनर स्ट्रीट फोल्ड और कैप्टन रो के संयुक्त नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने आदिवासी विद्रोहियों को डाम्बारी बुरू के पास घेर लिया। अंग्रेजों के पास बंदूकों के अलावा तोपें भी थी। आदिवासियों के पास तीर धनुष, टांगी, फरशा आदि परंपरागत हथियार ही है। विरसा ने स्थिति की भयंकरता समझी और टल गए। अंग्रेजों ने गांव-गांव में घूम कर विरसा का पता लगाना शुरू किया पकड़वाने वाले को ५०० रु का इनाम देने की घोषणा हुई। लोगों पर अत्याचार होने लगे। पादरियों के सहयोग से इनाम के लालच में वीर सिंह औडैया ने ३ मार्च १९०० को विरसा को गिरफ्तार करा दिया। विरसा को हजारीबाग और रांची के जेलों में रखा गया। उन्हें जहर भी दे दिया गया। मुकदमा अभी चल ही रहा था कि ९ जून १९०० को विरसा का देहांत हो गया। अंग्रेजों ने सुवर्ण रेखा के तीर पर विरसा को जला दिया तथा अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए भी उनके परिवार वालों को सूचित नहीं किया। विरसा का बलिदान मात्र २५ वर्षों की अवस्था में हो

गया। आज भी छोटा नागपुर के लाखों आदिवासी इस नेता को विरसा भगवान के नाम से श्रद्धास्मरण करते हैं।

सानिया मिर्जा (जन्म- १५ नवंबर)

सानिया मिर्जा प्रसिद्ध भारतीय टेनिस खिलाड़ी हैं। सानिया मिर्जा ने १८ वर्ष की आयु में जो प्रसिद्धि भारत में ही नहीं, अपितु विश्व में प्राप्त की, वह किसी खिलाड़ी के लिए अत्यंत गर्व की बात है। २००६ में उसे पद्मश्री सम्मान प्रदान किया गया। सानिया यह सम्मान पानेवाली सबसे कम उम्र की खिलाड़ी है। उसे २००६ में ही अमेरिका में विश्व की टेनिस को दिग्गज हस्तियों के बीच डब्लूटीए का मोस्ट इम्प्रेसिव न्यू कमर एवार्ड दिया गया।

जयशंकर प्रसाद (निधन- १५ नवंबर)

जयशंकर प्रसाद हिन्दी नाट्य जगत और कथा साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। कथा साहित्य के क्षेत्र में भी उनकी देन महत्वपूर्ण है। भावना-प्रधान कहानी लिखनेवालों में जयशंकर प्रसाद अनुपम थे। प्रसाद जी का जीवन कुल ४८ वर्ष का रहा है। इसी में उनकी रचना प्रक्रिया इसी विभिन्न साहित्यिक विधाओं में प्रतिफलित हुई कि कभी-कभी आश्चर्य होता है। कविता, उपन्यास, नाटक और निबन्ध सभी में उनकी गति समान है। किन्तु अपनी हर विद्या में उनका कवि सर्वत्र मुखरित है।

१६ नवंबर

करतार सिंह सराभा (निधन- १६ नवंबर)

सरदार करतार सिंह सराभा भारत के प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक थे। उन्हें अपने शौर्य, साहस, त्याग एवं बलिदान के लिए हमेशा याद किया जाता रहेगा महाभारत के युद्ध में जिस प्रकार वीर अभिमन्यु ने किशोरावस्था में ही कर्तव्य का पालन करते हुए मृत्यु का आलिंगन किया था, उसी प्रकार सराभा ने भी अभिमन्यु की भाँति केवल उन्नीस वर्ष की आयु में ही हँसते-हँसते देश के लिए अपने जीवन का बलिदान कर दिया।

पुलेला गोपीचंद (जन्म- १६ नवंबर)

पुलेला गोपीचंद एक प्रसिद्ध भारतीय बैडमिंटन खिलाड़ी हैं। ११ मार्च २००१ को ऑल इंग्लैंड बैडमिंटन चैंपियनशिप जीत कर भारत के स्टार शटलर पुलेला गोपीचंद ने भारतीय खेल जगत में एक नया इतिहास लिख डाला। इनसे २१ वर्ष पूर्व प्रकाश पादुकोने ने भारत में बैडमिंटन की ऊँचाइयों को छुआ था।

मिहिर सेन (जन्म- १६ नवम्बर)

मिहिर सेन भारत के प्रसिद्ध लम्बी दूरी के तैराक थे। उन्होंने १९६६ में पनामा नहर की एक छोर से दूसरे छोर तक ७७ किलोमीटर की दूरी तैरकर पार की थी। मिहिर सेन १९५८ में इंग्लिश चैलन तैरकर पार करने वाले प्रथम भारतीय ही नहीं, प्रथम एशियाई भी थे। उन्होंने सॉल्ट वॉटर तैराकी में अनोखी दक्षता हासिल करके ५ महत्वपूर्ण रिकार्ड बनाए थे। उन्हें १९५९ में पद्मश्री प्रदान किया गया तथा १९६७ में पद्मभूषण देकर सम्मानित किया गया था।

शंभू महाराज (जन्म- १६ नवम्बर)

शंभू महाराज भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैली कत्थक के प्रसिद्धि प्राप्त गुरु तथा नर्तक थे। वे लखनऊ घराने से सम्बन्धित थे। उनका वास्तविक नाम शंभूनाथ मिश्री था। नृत्य के संग ठुमरी गाकर उसके भावों को विभिन्न प्रकार से इस अदा से शंभू महाराज प्रदर्शित करते थे कि दर्शक मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता था।

१७ नवंबर

पद्मजा नायडू (जन्म- १७ नवंबर)

पद्मजा नायडू प्रसिद्ध भारतीय राजनीतिज्ञ श्रीमती सरोजिनी नायडू की पुत्री थीं। इन्होंने अपनी माता के समान ही अपना सारा जीवन भारत के हितों के लिए समर्पित्त कर दिया था। राष्ट्रीय सेवा और इसके साथ ही उनका मानवीय दृष्टिकोण हमेशा याद किया जाता है। पद्मजा नायडू को सन १९६२ में भारत सरकार के सर्वोच्च दूसरे नागरिक पुरस्कार पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया था।

१८ नवंबर

बटुकेश्वर दत्त

१८ नवंबर को क्रांतिकारी बटुकेश्वर दत्त का जन्म बर्धमान (पश्चिम बंगाल) में हुआ था। वे भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव और राजगुरु के साथ क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। ८ अप्रैल १९२९ में भगत सिंह के साथ सेंट्रल असेंबली के अंदर बम फेंक कर विरोध जताया और बच निकलने का प्रयास भी नहीं किया। आजीवन कारावास की सजा में पहले लाहौर जेल गये और फिर उन्हें अंदमान भेजा गया। वे १९४२ में चार साल के लिए जेल गये। आजादी के बाद वे पटना में रहने लगे थे। २० जुलाई १९६५ को इलाज के अभाव में उनकी मृत्यु हुई।

देश की आजादी के लिए तमाम पीड़ा झेलनेवाले क्रांतिकारी एवं स्वतंत्रता सेनानी बटुकेश्वर दत्त का जीवन स्वतंत्रता के बाद भी पीड़ा और संघर्षों की गाथा बना रहा और उन्हें वह सम्मान नहीं मिल पाया जिसके वह हकदार थे। १५ साल जेल में गुजारनेवाले बटुकेश्वर दत्त को आजाद भारत में रोजगार मिला एक सिगरेट कंपनी में एजेंट का, जिससे वह पटना की सड़कों पर खाक छानने को विवश हो गए। बाद में उन्होंने बिस्कुट और डबलरोटी का एक छोटा सा कारखाना खोला। वह जल्द बंद हो गया। कुछ समय तक टूरिस्ट एजेंट एवं बस परिवहन का काम भी किया, परंतु असफलता ही हाथ लगी।

दत्त के जीवन के इन अज्ञात पहलुओं का खुलासा नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित किताब बटुकेश्वर दत्त भगत सिंह के सहयोगी में हुआ है। बटुकेश्वर दत्त के १९६४ में अचानक बीमार होने के बाद उन्हें गंभीर हालत में पटना के सरकारी अस्पताल में भर्ती कराया गया। उनकी हालत बिगड़ती गई और २२ नवंबर १९६४ को उन्हें दिल्ली लाया गया। दिल्ली पहुंचने पर उन्होंने पत्रकारों से कहा था, मुझे स्वप्न में भी ख्याल न था कि मैं उस दिल्ली में जहां मैंने बम डाला था, एक अपाहिज की तरह स्ट्रेचर पर लाया जाऊंगा। बाद में पता चला कि दत्त बाबू को कर्करोग है और उनकी जिंदगी के चंद दिन ही शेष बचे हैं। पंजाब के मुख्यमंत्री रामकिशन ने दत्त से पूछ लिया, हम आपको कुछ देना चाहते हैं, जो भी आपकी इच्छा हो मांग लीजिए। छलछलाई आंखों और फीकी मुस्कान के साथ उन्होंने कहा, हमें कुछ नहीं चाहिए। बस मेरी यही अंतिम इच्छा है कि मेरा दाह संस्कार मेरे मित्र भगत सिंह की समाधि के बगल में किया जाए। २० जुलाई १९६५ की रात दत्त बाबू इस दुनिया से विदा हो गए। उनका अंतिम संस्कार भारत पाक सीमा के करीब हुसैनीवाला में भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की समाधि के निकट किया गया।

इस पर उनके मित्र चमनलाल आजाद ने एक लेख में लिखा, क्या दत्त जैसे क्रांतिकारी को भारत में जन्म लेना चाहिए? परमात्मा ने इतने महान शूरवीर को हमारे देश में जन्म देकर भारी भूल की है। खेद की बात है कि जिस व्यक्ति ने देश को स्वतंत्र कराने के लिए प्राणों की बाजी लगा दी और जो फांसी से बाल बाल बच गया, वह आज नितांत दयनीय स्थिति में अस्पताल में पड़ा एड़ियां रगड़ रहा है और उसे कोई पूछनेवाला नहीं है।

इसके बाद सत्ता के गलियारों में हड़कंप मच गया और आजाद, केंद्रीय गृहमंत्री गुलजारी लाल नंदा और पंजाब के मंत्री भीमलाल सच्चर से मिले। पंजाब सरकार ने एक हजार रुपये का चेक बिहार सरकार को भेजकर वहां के मुख्यमंत्री केबी सहाय को लिखा कि यदि वे उनका इलाज कराने में सक्षम नहीं है तो वह उनका दिल्ली या चंड़ीगढ़ में इलाज का व्यय

वहन करने को तैयार है। बिहार सरकार की उदासीनता और उपेक्षा के कारण क्रांतिकारी बैकुंठनाथ शुक्ला पटना के सरकारी अस्पताल में असमय ही दम तोड़ चुके थे। अत: बिहार सरकार हरकत में आयी और पटना मेडिकल कॉलेज में डॉ. मुखोपाध्याय ने दत्त का इलाज शुरू किया। मगर उनकी हालत बिगड़ती गयी, क्योंकि उन्हें सही इलाज नहीं मिल पाया था और २२ नवंबर १९६४ को उन्हें दिल्ली में जहां मैंने बम डाला था, एक अपाहित की तरह स्ट्रेजर पर लाया जाऊंगा। उन्हें सफदरजंग अस्पताल में भर्ती किया गया । पीठ में असहनीय दर्द के इलाज के लिए किए जानेवाले कोबाल्ट ट्रीटमेंट की व्यवस्था केवल एम्स में थी, लेकिन वहां भी कमरा मिलने में विलंब हुआ। २३ नवंबर को पहली दफा उन्हें कोबाल्ट उपचार दिया गया और ११ दिसंबर को उन्हें एम्स में भर्ती किया गया। बाद में पता चला कि दत्त बाबू को कर्करोग है और उनकी जिंदगी के चंद दिन ही शेष बचे हैं। भीषण वेदना झेल रहे दत्त चेहरे पर शिकन भी न आने देते थे। लाहौर षडयंत्र केस के किशोरीलाल अंतिम व्यक्ति थ जिन्हें उन्होंने पहचाना था। उनकी बिगड़ती हालत देखकर भगत सिंह की मां विद्यावती को पंजाब से कार से बुलाया गया। १७ जुलाई को वह कोमा में चले गये और २० जुलाई १९६५ की रात एक बजकर ५० मिनट पर दत्त बाबू इस दुनिया से विदा हो गये।

धीरेन्द्रनाथ गांगुली (निधन- १८ नवम्बर)

धीरेन्द्रनाथ गांगुली बंगाली सिनेमा के प्रसिद्ध अभिनेता और फिल्म निर्देशक थे। धीरेन्द्र नाथ गांगुली को धिरेन गांगुली या डी.जी. के नाम से भी जाना जाता है। भारतीय सिनेमा में इनके अभूतपूर्व योगदान के लिए इन्हें सन १९७५ में दादा साहेब फाल्के पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

शैतान सिंह (शहीद- १८ नवम्बर)

मेजर शैतान सिंह परमवीर चक्र सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। मेजर शैतान सिंह का शौर्य पराक्रम चीन के खिलाफ लड़ते हुए रेजांग ला मोर्चे पर अंतिम बार १८ नवम्बर १९६२ को नजर आया। वह चुशूर सक्टर में १७ हजार फीट की ऊंचाई पर चीन की गोला बारूद से लैस भारी सेना का सामना कर रहे थे। उस मोर्चे पर उन्होंने अदम्य साहस, कुशल नेतृत्व क्षमता तथा देश के प्रति गहरी समर्पण भावना का उदाहरण प्रस्तुत किया, जिसके लिए उन्हें मरणोपरांत परमवीर चक्र प्रदान किया गया।

कनिंघम (निधन- १८ नवम्बर)

अलेक्जँडर कनिंघम को भारत के पुरातत्व अन्वेषण का पिता कहा जाता है। कनिंघम एक ब्रिटिश पुरातत्वशास्त्री तथा सेना में अभियांत्रिक पद पर नियुक्त थे। इनके दोनों भाई फ्रैन्सिस कनिंघम एवं जोसफ कनिंघम भी अपने योगदानों के लिए ब्रिटिश भारत में प्रसिद्ध हुए थे।

कर्नल टॉड (निधन- १८ नवम्बर)

कर्नल जेम्स टॉड ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के एक अधिकारी तथा भारतविद थे। इनका जन्म इंग्लैंड के इंस्लिंग्टन

नामक स्थान में २० मार्च, सन १७८२ में हुआ था। इनके पिता और माता दोनों ईस्ट इंडिया कंपनी की सिविल सर्विस में थे। इसलिए इन्हें सरलता से सेना के उच्च उम्मीदवारों में स्थान मिल गया। कलकत्ता पहुंचने पर दूसरे नंबर की यूरोपियन रेजिमेंट में इनकी नियुक्ति हुई। कुछ महीने बाद १४ नंबर की सेना में इन्हें लेफ्टिनेंट का पद मिला। सन १८०७ में १५ नंबर की देशी सेना में इनका तबादला हुआ।

१९ नवम्बर

झांसी की रानी

मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी

देश के पहले स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए अंग्रेजों को नाकों चने चबाने पर मजबूत करनेवाली अमर वीरांगना, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने की पक्षधर थीं। लक्ष्मीबाई ने अपनी सेना में महिलाओं की भर्ती की थी और अपनी सुरक्षा में भी महिला सैनिकों को शामिल किया था। रानी लक्ष्मीबाई पर एक नाट्य श्रृंखला अपनी झांसी नहीं दूंगी का कई स्थानों पर मंचन कर चुके छत्तीसगढ़ के रंगमंच निर्देशक और कलाकार राकेश नैयर कहते हैं कि लक्ष्मीबाई के जीवन के कई अहम पहलुओं पर उनकी वीरता हावी हो चुकी है। उनकी तारीफ करने पर मजबूर हो गए जिन्हें लक्ष्मीबाई ने नाकों चने चबाने पर बाध्य किया था। इतिहास के जानकार आलोक कुमार कहते हैं कि अंग्रेजों ने जब लक्ष्मीबाई के दत्तक पुत्र को झांसी का उत्तराधिकारी मानने से इन्कार कर दिया और डलहौजी की राज्य हड़प नीति के तहत झांसी पर कब्जा करने का निश्चय किया तो लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों की शर्ते ठुकरा दीं और उन्हें युद्ध के लिए ललकारते हुए ऐलान किया मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी।

लॉर्ड डलहौजी के अंग्रेजी साम्राज्य का विस्तार करने के लिए अपनायी गई व्यपगत की नीति (डॉक्टरिन ऑफ लैप्स) उन्होंने कड़ा विरोध किया और कहा कि मैं अपनी झाँसी कभी नहीं दूंगी।

कुमार के अनुसार, अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध में लक्ष्मीबाई ने अप्रतिम वीरता का परिचय दिया। वह १८ जून १८५८ को वीरगति को प्राप्त हुयीं। १८५७ के संग्राम में झांसी एक प्रमुख केंद्र के रूप में उभरा था। राकेश कहते हैं कि बेहतर सेनापति की क्षमतावाली लक्ष्मीबाई ने कम उम्र में ही अपना कुशल प्रशासनिक कौशल भी साबित कर दिया था। वह महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने की पक्षधर थीं। उन्होंने अपनी सेना में महिलाओं की भर्ती की थी औरी अपनी सुरक्षा में भी महिला सैनिकों को शामिल किया था। उन्होंने बताया कि महिला सैनिकों को विशेष प्रशिक्षण दिया गया था। जब अंग्रेजों ने झांसी पर हमला किया था तब लक्ष्मीबाई की महिला सैनिकों ने तोपखाने की कमान संभाली थी। ये सैनिक घायल पुरुष सैनिकों की देखभाल और उनके लिए भोजन की व्यवस्था भी करती थीं। राकेश बताते हैं कि जिस दौर में महिलाओं को अपने फैसले खुद लेने का अधिकार नहीं था, उस दौर में उन्होंने एक पुत्र को गोद लिया, झांसी का सिंहासन संभाला, अंग्रेजों की शर्ते मानने से निर्भीकतापूर्वक इंकार किया और उनसे जमकर लोहा लिया।

रानी लक्ष्मीबाई मराठा शासित झाँसी राज्य की रानी और १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की वीरांगना थीं। बलिदानों की धरती भारत में ऐसे ऐसे वीरों ने जन्म लिया है, जिन्होंने अपने रक्त से देश प्रेम की अमिट गाथाएं लिखीं। यहां की ललनाएं भी इस कार्य में कभी किसी से पीछे नहीं रहीं, उन्हीं में से एक का नाम है- झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई। उन्होंने न केवल भारत की बल्कि विश्व की महिलाओं को गौरवान्वित किया। उनका जीवन स्वयं में वीरोचित गुणों से भरपूर, अमर देशभक्ति और बलिदान की एक अनुपम गाथा है।

रानी लक्ष्मीबाई मराठा शासित झांसी राज्य की रानी और १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की वीरांगना थी। बलिदानी की धरती भारत में ऐसे-ऐसे वीरों ने जन्म लिया है, जिन्होंने अपने रक्त से देश प्रेम की अमिट गाथाएं लिखीं।

यहां की ललनाएं भी इस कार्य में कभी किसी सी पीछे नहीं रहीं, उन्हीं में से एक का नाम है- झांसी की रानी लक्ष्मीबाई। अंग्रेजों के विरुद्ध रणयज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देनेवाले योद्धाओं में वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई का नाम सर्वोपरि माना जाता है। १८५७ में उन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम का सूत्रपात्र किया था। अपने शौर्य से उन्होंने अंग्रेजी के दांत खट्टे कर दिए थे। उनका निधन १७ जून को हुआ।

रानी लक्ष्मीबाई मराठा शासित झांसी की रानी और भारत की स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम वनिता थीं। भारत को दासता से मुक्त करने के लिए सन १८५७ में बहुत बड़ा प्रयास हुआ। यह प्रयास इतिहास में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम या सिपाही स्वतंत्रता संग्राम कहलाता है। अंग्रेजी के विरुद्ध रणयज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देनेवाले योद्धाओं में वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई का नाम सर्वोपरी माना जाता है। १८५७ में उन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम का सूत्रपात किया था। अपने शौर्य से उन्होंने अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए थे। अंग्रेजों की शक्ति का सामना करने के लिए उन्होंने नये सिरे से सेना का संगठन किया और सुदृढ़ मोर्चाबंदी करके अपने सैन्य कौशल का परिचय दिया था।

१८५७ की महान क्रांति की अग्रदूत झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का जन्म १९ नवंबर को हुआ था। उनके जन्म वर्ष को लेकर इतिहासकारों में मतभेद है। कुछ इतिहासकारों के मुताबिक झांसी की रानी का जन्म १८२८ में वाराणसी में हुआ था तो कुछ अन्य का मत है कि वह १८३० या १८३५ में जन्मी थीं। उनके पिता का नाम मोरोपंत तथा माता का नाम भागीरथी बाई था। उनके पिता बिठूर में पेशवा के दरबार में थे। झांसी की रानी का मूल नाम मणिकर्णिका था। उन्हें प्यार से मनु कहकर बुलाया जाता था। पेशवा प्यार से उन्हें छबीली कहते थे। मनु की शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई। छोटी उम्र में ही वह घुड़सवारी, तलवारबाजी तथा युद्ध कौशल में पारंगत हो गई थीं। झांसी के शासक महाराजा गंगाधरराव के साथ उनका विवाह सन १८४२ में हुआ। उन्होंने मनु का नाम लक्ष्मीबाई रख दिया। १८५१ में उन्हें पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। यह शिशु चार माह बाद ही चल बसा। महाराजा गंगाधरराव ने अपने भतीजे आनंद राव को गोद ले लिया और उसका नया नाम दामोदरराव रखा। १८५३ में महाराजा गंगाधरराव के देहांत के बाद अंग्रेज सत्ता ने दत्तक पुत्र होने की आड़ में दामोदरराव को गंगाधरराव का उत्तराधिकारी मानने से इनकार कर दिया और झांसी राज्य को हड़पने की कुटिल चाल चली। मार्च १८५४ में झांसी की रानी के लिए अंग्रेजों ने ६० हजार रु. पेंशन मुकर्रर की और उन्हें महल छोड़ देने का आदेश दिया। रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों को दो टूक जवाब दे दिया कि वह अपनी झांसी नहीं देंगी। १८५७ की क्रांति में वह क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणास्रोत बनीं। उन्होंने अंग्रेजी सेना से डककर लोहा लिया। १८ जून १८५८ को ग्वालियर के पास कोटा की सराय में अंग्रेजों से लोहा लेते हुए वह वीरगति को प्राप्त हुई।

समस्त विश्व को वीरता का मार्ग दिखानेवाली शौर्य, तेज, दया, करुणा और देशभक्ती का जज्बा जिसके रग रग में भरा हुआ था। माँ की मनु, बाजीराव की छबीली, सुभद्रा कुमारी चौहान की खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी। हम सब की प्रेरणास्रोत और चहेती रानी लक्ष्मीबाई का जन्म १९ नवम्बर, १८३५ को काशी में हुआ था।

माता भागीरथी देवी एवं पिता मोरोपंत के श्रेष्ठ संस्कारों से बालिका मनु का मन और हृदय विविध प्रकार के उच्च और महान उज्ज्वल गुणों से सिंचित हुआ था। बचपन में ही माँ से विविध प्रकार की धार्मिक, सांस्कृतिक और शौर्यपूर्ण गाथाएं

सुनकर मनु के मन में स्वदेश प्रेम की भावना और वीरता की उच्छल तरंगे हिलोरे लेने लगीं थी। इनका बचपन का नाम मणिकर्णिका रखा गया परन्तु प्यार से मणिकर्णिका को मनु पुकारा जाता था।

एक बार बचपन में ही काशी के घाट की सीढ़ियों पर वो बैठी हुई थी तभी कुछ अंग्रेज उस रास्ते से नीचे उतर रहे थे। मनु को रास्ते से हटने के लिये कहा किन्तु वो वहीं दृढ़निश्चयी की तरह बैठी रहीं अंग्रेजों के प्रति उनके मन में रौष बचपन से ही था। अंग्रेज उन्हें बच्ची समझकर दूसरी तरफ से निकल गए। उन्हे क्या पता था कि ये बच्ची उनके वजूद को मिटाने का दम रखती है।

लगभग पांच वर्ष की अल्प आयु में ही मां का साथ छूट गया। पिता मनु को बिठूर ले गए। यहीं पर मनु ने मल्लविद्या, घुड़सवारी और शस्त्रविद्याएं सीखीं। पिता मोरोपंत मनु को अपने साथ बाजीराव के दरबार में ले जाते थे, जहां चंचल एवं सुन्दर मनु ने सबका मन मोह लिया था। बाजीराव मनु को छबीली बुलाते थे।

मनु का विवाह सन १८४२ में झांसी के राजा गंगाधर राव निंबालकर के साथ बड़े ही धूम-धाम से संपन्न हुआ। विवाह के बाद इनका नाम लक्ष्मीबाई रखा गया। इस प्रकार काशी की कन्या मनु, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई बन गई। १८५१ में उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई किन्तु विधाता ने तो उन्हें किसी खास प्रयोजन से धरती पर भेजा था। पुत्र की खुशी को ज्यादा दिन तक न मना सकीं दुर्भाग्यवश शिशु तीन माह का होते होते चल बसा। गंगाधर राव ये आघात सह न सके। इसतरह सन सत्तावन में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरुवात रानी लक्ष्मीबाई के द्वारा हुई। स्वतंत्रता की ये आग पूरे देश में धधक उठी। रानी ने ईंट का जवाब पत्थर से देने के लिये युद्ध का शंखनाद किया जिससे अंग्रेजों के पैर उखड़ने लगे। अंग्रेज आठ दिनों तक किले पर गोले बरसाते रहे परन्तु किला न जीत सके। झांसी के ही एक विश्वासघाती सरदार दूल्हा सिंह को मिला लिया जिसने किले का दक्षिणी द्वार खोल दिया। फिरंगी सेना किले में घुस गई और लूटपाट तथा हिंसा का पैशाचिक दृश्य उपस्थित कर दिया। घोड़े पर सवार, दाहिने हाथ में नंगी तलवार लिए, पीठ पर पुत्र को बांधे हुए रानी ने रणचण्डी का रूप धारण कर लिया और शत्रु दल पर संहार करने लगीं। रानी अंग्रेजों से घिर गईं। रानी कालपी की ओर बढ़ चलीं। दुर्भाग्य से एक गोली रानी के पैर में लगी और उनकी गति कुछ धीमी हुईं। अंग्रेज सैनिक उनके समीप आ गए। घोड़ा नाला पार न कर सका। एक ने पीछे से रानी के सिर पर प्रहार किया जिससे रानी बुरी तरह से घायल हो गई, उसी समय दूसरे गोरे सैनिक ने सांग से उनके हृदय पर वार कर दिया। रानी का रक्त रंजित शरीर को समीप ही बाबा गंगादास की कुटिया में ले जाया गया। रानी के वीरगति पाने पर बाबा गंगादास ने तुरंत कुटिया को ही चिता बनाकर उनका अंतिम संस्कार कर दिया।

लोगों के आग्रह पर उन्होंने एक पुत्र गोद लिया जिसका नाम दामोदर राव रखा गया। गंगधार की मृत्यु के पश्चात जनरल डलहौजी ने दामोदर राव को झांसी का उत्तराधिकारी मानने से इंकार कर दिया। रानी लक्ष्मीबाई ये कैसे सहन कर सकती थीं। उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध का बिगुल बजा दिया और घोषणा कर दी कि मैं अपनी झांसी अंग्रेजों को नहीं दूंगी।

बुंदेले हर बोलों के मुंह हमने सुना कहानी थी, खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

कवियित्री सुभद्रा कुमारी चौहान की यह पंक्तियां आज भी बुंदेलों की जुबान पर हैं। स्वतंत्रता दिवस या आजादी की बात हो और रानी झांसी का जिक्र न आए, ऐसा हो ही नहीं सकता। सन १८५७ के विद्रोह (प्रथम स्वतंत्रता संग्राम) में

फिरंगी सेना की चूल्हें हिला देनेवाली रानी लक्ष्मीबाई की वीरता की कहानी इतिहास के पन्नों में दर्ज है।

ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ सन १८५७ में भड़के विद्रोह में वीरांगना रानी झांसी लक्ष्मीबाई ने अपनी महिला सेनापति झलकारीबाई के साथ फिरंगी सेना का मुकाबले करते हुए युद्ध के मैदान में शहीद होना पसंद किया था, लेकिन अंग्रेजों की दासता नहीं स्वीकार की थी। अंग्रेजों का आभास भी नहीं था कि १९ साल की उम्र में कदम रखनेवाली रानी झांसी के सामने उसके सैनिकों को मुंह की खानी पड़ेगी। २१ नवंबर, १८५३ को राजा बाल गंगाधर राव की मौत के बाद सात मार्च १८५४ को अंग्रेजों ने झांसी रियासत को अपने कब्जे में ले लिया था। तमाम प्रयासों के बाद भी फिरंगियों ने जब रानी झांसी को राज्य वापस करने से इनकार कर दिया तो उनके सामने युद्ध के अलावा कोई चारा नहीं बचा। रानी झांसी अपने दत्तक पुत्र दामोदर राव को पीठ पर बांधकर अंग्रेजी सेना के खिलाफ युद्ध में कूद पड़ीं। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के इस युद्ध मे बांदा के नवाब अली बहादुर ने रक्षाबंधन में रानी झांसी द्वारा भेजी गई राखी की कीमत अपनी सेना झांसी की मदद में भेजकर अदा की थी। चार अप्रैल, १८५८ को नाना भोपटकर की सलाह पर रात को जब रानी अपने दत्तक पुत्र के साथ बिठूर की ओर रवाना हुई तब तक अपनी ही रियासत के राजनीतिक अभिकर्ता मालकम की गद्दारी का शिकार हुईं और अंग्रेजों से युद्ध करते हुए शहीद हो गई।

रानी झांसी की निर्भीकता और बहादुरी को देखकर ही अंग्रेज अधिकारी जनरल ह्यूरोज ने चार जून, १८५८ को कहा था कि अगर भारत की एक फीसदी महिलाएं इस लड़की की तरह आजादी की दीवानी हो गई तो हम सबको वह देश छोड़कर भागना पड़ेगा। अंग्रेज अधिकारी की यह बात सही साबित हुई और उन्हें यह देश छोड़कर जाना ही पड़ा।

भारत के १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों से लोहा लेनेवाली झांसी की रानी लक्ष्मीबाई एक महान योद्धा और वीरता की प्रतिक थी। उनकी बहादुरी भारतीय पुरुष और महिलाओं को पीढ़ियों तक प्रेरित करती रहेगी।

उनकी वीरता और अदम्य, साहस और भावना पीढ़ियों तक हमें प्रेरणा देती रहेगी। १८५७ के भारतीय विद्रोह की वह प्रमुख हस्तियों में से एक थी और ब्रिटिश राज्य के खिलाफ विरोध के लिए वह भारतीय राष्ट्रवादियों का प्रतीक थी।

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की महान वीरांगना के रूप में जानी जाती हैं। अंग्रेजों की भारतीय राज्यों को हड़पने की नीति के विरोध स्वरूप उन्होंने हुंकार भरी अपनी झांसी नहीं दूंगी और अपनी पीठ के पीछे दामोदर राव को कसकर घोड़े पर सवार हो, अंगरेजों के खिलाफ युद्ध का उद्घोष किया।

केशवचंद्र सेन

१९ नवंबर १८३८ को समाज सुधारक केशवचंद्र सेन का जन्म कोलकाता (पश्चिम बंगाल) में हुआ था। उन्होंने १८६६ में भारतीय ब्रह्म समाज की स्थापना की और सर्वांग उपासना की दीक्षा दी।

१८७० में इंग्लैंड से लौटने के बाद इंडियन रिफार्म एसोसिएशन बनायी, जो सभी जाति और धर्म के लोगों के लिए खुली थी। महिलाओं के लिए स्कूल और कॉलेज की स्थापना की। उनके प्रयत्न ने ही वर्ष १८७२ में लड़कियों की विवाह की उम्र बढ़ाने का कानून भी बना। आठ जनवरी १८८४ को कोलकाता में उनका निधन हुआ।

केशव चन्द्र सेन एक प्रसिद्ध धार्मिक व समाज सुधारक, जो ब्रह्मसमाज के संस्थापकों में से एक थे। वे बड़े तीव्र बुद्धि, तार्किक और विद्वान युवक थे। उन्होंने उत्साहपूर्वक समाज को संगठित करना प्रारम्भ किया और इस कारण वे शीघ्र ही

आचार्य पद पर नियुक्त हो गये। केशव चन्द्र सेन ने ही आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती को सलाह दी थी कि वे सत्यार्थ प्रकाश की रचना हिन्दी में करें। केशव चन्द्र सेन और स्वामीजी के विचार आपस में नहीं मिलते थे, जिस कारण ब्रह्म समाज का विभाजन आदि ब्रह्मसमाज और भारतीय ब्रह्मसमाज में हो गया।

इंदिरा गांधी

भारतीय इतिहास में प्राचीन काल से आज तक अनेक नारी रत्नों ने अपनी शौर्य रश्मियों का आलोक विकीर्ण किया है। इस परंपरा में सर्वाधिक ज्योतिर्मान छवि है आधुनिक भारत की उस महान नारी की जिसने विश्व के विशालतम जनतंत्र पर एक लंबी समयावधि तक एक छत्र शासन किया और विश्व में सर्वाधिक सशक्त महिला के रूप में ख्याति अर्जित की। हमारे देश की वह गरिमामयी नारी थी श्रीमती इंदिरा गांधी।

भारतीय महिला शक्ति की प्रतीक

जन्म- १९ नवंबर १९७९, इलाहाबाद, परिवार- पिता पंडित जवाहरलाल नेहरू, मां कमला नेहरू।

शिक्षा- १९३६ में ऑक्सफर्ड यूनिवर्सिटी, इंग्लैंड में पढ़ने गईं। विवाह और बच्चे- यूरोप में ही इंदिरा की एडअ मुलाकात फिरोज गांधी से हुई। भारत लौटकर १९४२ में विवाह हुआ। उनके दो बेटे राजीव और संजय हुए।

आजादी की लड़ाई में हिस्सेदारी- अपने बचपन में इंदिरा ने वानर सेना बनाई। इसमें उनके हम उम्र बच्चे थे।

राजनीति में कदम- १९५९-६० में इंदिरा गांधी इंडियन नैशनल कांग्रेस की अध्यक्ष निर्वाचित हुई। १९६४ में इंदिरा ने चुनाव लड़ा और सूचना व प्रसारण मंत्री के तौर पर सरकार में शामिल हुई।

देश की बागडोर- १९६६ में शास्त्री की मौत के आकस्मिक निधन के बाद इंदिरा ने २४ जनवरी को प्रधानमंत्री पद की शपथ ली।

१९७१ की पाक से जंग और बांग्लादेश का जन्म- पाकिस्तानी सेना के पूर्वी पाकिस्तान की जनता पर बढ़ते अत्याचार से करीब एक करोड़ रिफ्यूजी भारत में आए। इससे आर्थिक बोझ के साथ देश में अस्थिरता बढ़ी। भारत-पाक में युद्ध छिड़ा और बांग्लादेश का जन्म।

शिमला समझौता- इंदिरा ने १९७२ में तत्कालीन पाकिस्तानी प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो को शिमला समझौते के लिए बुलाया। दोनों देश कश्मीर मसले को वार्ता और शांतिपूर्ण तरीके से सुलझाने पर सहमत हुए।

एटमी कार्यक्रम- १९६७ में इंदिरा गांधी ने भारत के एटमी कार्यक्रम की शुरुआत की थीं। १९७४ में भारत ने पहला भूमिगत एटमी परीक्षण राजस्थान के पोकरण में किया। भारत दुनिया की सबसे युवा परमाणु ताकत बना।

हरित क्रांति- खेती में आत्मनिर्भरता के लिए ६० के दशक से उठे कदम हरित क्रांति के रूप में सामने आए।

१९७१ की जीत- गरीबी हटाओ के नारे से इंदिरा फिर सत्ता में आईं। १२ जून १९७५ में इलाहाबाद हाई कोर्ट ने राजनारायण की अपील पर इंदिरा गांधी के चुनाव को अवैध घोषित कर दिया। इंदिरा ने इसके खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में जाने का फैसला किया।

आपतकालीन - इंदिरा सत्ता से हटने को तैयार नहीं थीं। विरोधियों ने उनके खिलाफ जोरदार जनांदोलन की शुरुआत की। इसे दबाने के लिए इंदिरा गांधी ने २६ जून १९७५ को इमरजेंसी लगा दी।

हार और जेल- १९७७ में हुए चुनावों में कांग्रेस की करारी हार हुई। जनता पार्टी की सरकार आई, चौधरी चरण

प्रधानमंत्री बने जिनके आदेश पर इंदिरा गांधी और उनके बेटे संजय गांधी की गिरफ्तारी हुई।

सत्ता में वापसी- १९८० में हुए चुनावों में इंदिरा गांधी सत्ता में लौटीं।

हत्या- ३१ अक्टूबर १९८४ को दो अंगरक्षकों सतवंत सिंह और बेअंत सिंह द्वारा हत्या।

तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी पर अंगरक्षकों द्वारा गोलियां चलाये जाने के बाद उनके खिलाफ हत्या के प्रयास की प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। प्रत्यक्षदर्शी हवलदार नारायण सिंह ने बताया कि पच्चीस साल पहले पुलिस ने प्रधानमंत्री के अंगरक्षकों बेअति सिंह और सतवंत सिंह के खिलाफ हत्या के प्रयास के आरोप में मामला दर्ज किया था जिसे बाद में हत्या के मामले में तब्दील कर दिया गया था।

एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने बताया, शुरूआत में हत्या के प्रयास के तहत मामला दर्ज किया गया था क्योंकि इंदिरा गांधी को मृत घोषित नहीं किया गया था। बाद में प्राथमिकी को हत्या मामले में बदला गया। एक, सफदरजंग रोड स्थित इंदिरा गांधी के आवास पर तैनात हवलदार नारायण तत्कालीन प्रधानमंत्री को धूप से बचाने के लिए उनके सिर पर छाता ताने हुए था जब उनके अंगरक्षकों ने उन्हें गोलियों का शिकार बना डाला।

नारायण के बयान को प्रधानमंत्री पर अंगरक्षकों की गोलीबारी के दो घंटे बाद ११ बजे दर्ज किया गया।

नारायण ने तुगलक रोड पुलिस स्टेशन पर दिये अपने बयान में कहा, सुबह लगभग नौ बजकर दस मिनट पर इंदिरा गांधी और आर के धवन के साथ बाहर आयीं और एक आयरिश प्रतिनिधिमंडल से मुलाकात के लिए १, अकबर रोड की ओर बढ़ी। मैं उनके साथ चलने लगा, उन्हें धूप से बचाने के लिए मेरे हाथों में छाता था। हमारे अलावा, प्रधानमंत्री का निजी सहायक भी मौजूद था।

पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने १९७१ के भारत पाक युद्ध में अपने कुशल नेतृत्व से देश को जीत दिलायी और उनकी कूटनीति की बदौलत बांग्लादेश का गठन हुआ। अंतरराष्ट्रीय राजनीति पर उनकी पकड़ इतनी जबर्दस्त थी कि उस युद्ध के मामले में महाशक्ति देश अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को भी मुंह की खानी पड़ी। अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों के अनुसार भारत पाक युद्ध में इंदिरा गांधी के सही समय पर किये फैसलों के कारण जंग में हस्तक्षेप करने के अमेरिका के मनसूबों पर पानी फिर गया। उस दौरान अमेरिकी नौसेना के सातवें बेड़े के पहुंचने से पहले बांग्लादेश को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर दिया गया। इस तरह अमेरिकी सामरिक नीति को भारत ने करारा झटका दिया।

पूर्व विदेश मंत्री नटवर सिंह ने कहा, इंदिरा गांधी ने १९७१ के युद्ध के दौरान बेहद धैर्य से काम लिया। उन्होंने इस मामले में पहले अंतरराष्ट्रीय जनमत को इस बात के लिए संतुष्ट किया कि भारत के लिए यह युद्ध क्यों जरूरी हो गया था। लाखों बांग्लादेशी शरणार्थियों को करीब एक वर्ष तक देश में पनाह देना भी कोई आसान काम नहीं था।

नटवर सिंह ने कहा, इस बीच इंदिरा गांधी ने यूरोप तथा अमेरिका की यात्राएं कीं। पश्चिमी देशों को भारत में उत्पन्न स्थिति से अवगत कराया। यूरोप ही नहीं, अमेरिका में भी उदारवादी चिंतकों और लोगों का एक वर्ग इससे संतुष्ट हो गया कि तबके पूर्वी पाकिस्तान में बड़े पैमाने पर हाहाकार मचा था और मानवाधिकार हनन हो रहा था। वह बताते हैं, यह श्रीमती गांधी की यह कूटनीतिक सफलता रही कि अमेरिकी मीडिया के एक बड़े वर्ग ने तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति निक्सन की नीतियों का विरोध कर बांग्लादेश के बारे में भारत की नीतियों का समर्थन किया।

इंदिरा गांधी के पूर्व मंत्रिमंडल सहयोगी वसंत साठे ने निक्सन के साथ उनके संबंधों का स्मरण करते हुए बताया, वह १९७० में संयुक्त राष्ट्र के रजत जयंती समारोह में भाग लेने गये थे। इसके बाद विश्व निकाय की महासभा हुई। प्रधानमंत्री

के रूप में इंदिरा गांधी उसे संबोधित करने गयीं। प्राय: ऐसा होता है कि भारत का प्रधानमंत्री जब संयुक्त राष्ट्र महासभा के लिए न्यूयार्क जाता है तो वह वाशिंगटन में अमेरिकी राष्ट्रपति से भी मिलता है। लेकिन उस दौरे में इंदिरा ने निक्सन से मुलाकात नहीं की। इससे पता चलता है कि इंदिरा गांधी कितने मजबूत इरादेवाली नेता थीं।

भारत पाक युद्ध में इंदिरा ने अमेरिकी नौसेना के सातवें बेड़े को हस्तक्षेप का मौका ही नहीं दिया। इससे पहले एक और दिलचस्प घटना हुई, जिसमें इंदिरा के राजनय कौशल के कारण निक्सन की अमेरिकी प्रेस में काफी किरकिरी हुई। विशेषज्ञों के अनुसार अमेरिकी सरकार अपना सातवां बेड़ा भेजने का मन बना रही है, यह बात जब इंदिरा को पता चली तो उन्होंने यह सूचना अमेरिका में तत्कालीन भारतीय राजदूत एल.एन.झा को भिजवा दी।

विशेषज्ञ कहते हैं कि तब झा ने इस सूचना की अमेरिकी विदेश विभाग से पुष्टि करवायी। विदेश विभाग का जवाब था कि वह न तो इसकी पुष्टि कर सकता है और न ही इसका खंडन। झा ने इस अस्पष्टता का लाभ उठाया। तुरंत संवाददाता सम्मेलन बुलाया गया। इसमें उन्होंने कहा कि अमेरिकी विदेश विभाग ने नौसेना का सातवां बेड़ा भेजने की संभावना से इनकार नहीं किया है। उनके इस बयान से अमेरिकी प्रेस में भारी बहस छिड़ गयी। अमेरिकी जनमत का एक बड़ा वर्ग वियतनाम युद्ध को लेकर पहले ही सरकार की नीतियों का भारी विरोधी था। अब यह सूरत बनने लगी कि अमेरिका भारत-पाक युद्ध में हस्तक्षेप कर सकता है। भारतीय राजदूत की इस सूचना से मीडिया में निक्सन सरकार की नीतियों की आलोचना शुरू हो गयी।

अपने दृढ़ फैसलों के लिए पहचानी जानेवाली दिवंगत पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के करीबी कहते हैं कि वह अपने सभी सहयोगियों और अधीनस्थों से सलाह लेकर देश के हित में अटल फैसला देती थीं।

इंदिरा गांधी के निजी सचिव रहे आर.के.धवन कहते हैं कि वह ऐसे फैसले करती थीं, जिनमें लोकतंत्र, समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता का ख्याल रखा जाए।

धवन ने कहा, उनके फैसले अपने होते थे। जो भी फैसला लिया देश हित में लिया और उस पर अटल रहीं। इंदिराजी के जीवन में हर दिन दिक्कतें आयीं लेकिन उन्होंने हमेशा देश की आम जनता के लिए ही सोचा। दूसरी तरफ वरिष्ठ पत्रकार कुलदीप नैयर कहते हैं कि इंदिरा गांधी के शासनकाल के बाद से हर चीज में राजनीति आ गयी। उन्होंने कहा कि आपात काल का गलत फैसला लेने के साथ ही उन्होंने प्रेस पर पाबंदी लगायी, संसद का अपमान किया।

कांग्रेस के वरिष्ठ नेता माखन लाल फोतेदार ने हालांकि आपात काल के फैसले को मजबूरी भरा कदम बताते हुए कहा कि इंदिरा गांधी के विरोधियों ने देश में ऐसे हालात पैदा कर दिये थे कि उन्हें १९७५ में आपातकाल लगाना पड़ा।

इस मामले में धवन कहते हैं कि ७३-७४ में देश के हालात काफी खराब थे। सूखे की स्थिति थी और पेट्रोलियम की कीमत आसमान छू रही थीं। खाद्य पदार्थों की कमी थी।

उन्होंने कहा कि इन हालात में जब इंदिरा गांधी देश को इनसमस्याओं से उबारना चाहती थीं, तब उनके विरोधी उन्हें हटाने के लिये तरह तरह के हथकंडे अपनाने में लगे थे, ऐसे में इस तरह के ठोस फैसले की जरूरत पड़ी।

उनके कद का नेता अभी तक देश में कोई नहीं हुआ है। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता माखनलाल फोतेदार भी कहते कि उनके कद और लोकप्रियता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि १९५५ में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की सदस्य बनने के बाद वह १९५८ में कांग्रेस संसदीय बोर्ड में शामिल हुईं और ५९ में कांग्रेस की अध्यक्ष बन गयीं।

इंदिरा गांधी के निर्णय लेने की शैली पर उन्होंने कहा, वह अपने साथियों से मशविरा करती थीं और सभी के हित में तुरंत

फैसला करती थीं।

इंदिरा गांधी हमारे देश भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री थीं। उनका जन्म १९ नवंबर सन १९१७ ई. को इलाहाबाद में हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा माता का नाम कमला नेहरू था। बचपन में घर में प्यार से सब उन्हें इंदु कह कर पुकारते थे। फिरोज गांधी से विवाह के बाद उनका नाम इंदिरा गांधी हो गया। इंदिरा गांधी के पिता पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी व स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री थे। उनके दादा पंडित मोतीलाल नेहरू भी इलाहाबाद के नामी वकील तथा प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थे।

स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद इंदिरा गांधी ने रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा शांति निकेतन में स्थापित विश्वभारती विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। बाद में कुछ पढ़ाई विदेशों में पूरी की। इंदिरा गांधी एक राजनीतिज्ञ ही नहीं अपितु एक अत्यंत सुसंस्कृत महिला भी थीं। भारतीय संस्कृति के विविध रूपों में उनकी गहरी दिलचस्पी थी। वे एक अत्यंत सुरुचि संपन्न एवं प्रगतिशील महिला थीं। उनका व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावशाली था। उनके पहनावे और रहन-सहन में अभिजात्य के साथ-साथ सौम्यता व सादगी भी झलकती थी।

इंदिरा गांधी कई दशकों तक भारतीय महिलाओं के लिए एक रोल मॉडल और प्रेरणा का स्रोत रहीं जिसकी झलक आज भी देखने को मिल जाती है। उनके स्वभाव में विनम्रता थी। जो भी व्यक्ति उनसे मिलने आते थे इंदिरा गांधी उन पर अपने व्यक्तित्व की गहरी छाप छोड़ती थीं। राजनीतिक जीवन में वे अत्यंत व्यावहारिक थीं और दृढ़ इच्छा शक्ति की धनी भी। जो मन में सोच लिया, करके ही रहती थीं। इंदिरा गांधी सचमुच एक पूरे युग की निर्मात्री थी। बेशक राजनीति में कुछ दोष होते हैं लेकिन इस सब के बावजूद इंदिरा गांधी को देशवासियों से जो प्यार और सम्मान मिला, वह अद्वितीय है।

कुछ लोग समझते हैं कि इंदिरा गांधी, फिरोज गांधी अथवा उनके परिवार का पारिवारिक संबंध महात्मा गांधी के परिवार से हैं। यह ठीक है कि मोती लाल नेहरू व जवाहरलाल नेहरू ने महात्मा गांधी के साथ आजादी के संघर्ष में एकजुट होकर कार्य किया। इस दौरान उनके आपसी संबंध भी अत्यंत सुदृढ़ हुए। जवाहरलाल नेहरू महात्मा गांधी का बड़ा सम्मान करते थे। वो उन्हें बापू कहकर संबोधित करते थे और उनकी बातों को बहुत महत्व देते थे।

जवाहरलाल नेहरू की पुत्री इंदिरा गांधी फिरोज नामक एक पारसी युवक से प्यार करती थीं और उनसे शादी करना चाहती थीं। जवाहरलाल नेहरू इस संबंध के पक्ष में नहीं थे लेकिन इंदिरा की जिद को देखते हुए उन्होंने कहा कि यदि महात्मा गांधी इसे स्वीकृति दे देते हैं तो ठीक है। जवाहरलाल नेहरू की तरह ही महात्मा गांधी भी इस संबंध के पक्ष में तो नहीं थे लेकिन इंदिरा की जिद को देखते हुए महात्मा गांधी ने इसे स्वीकार करने में ही भलाई समझी। इंदिरा का विवाह हिंदू रीति से हो जाए, इसलिए महात्मा गांधी ने फिरोज को अपना कुलनाम अथवा गोत्र गांधी प्रदान किया और दोनों का विवाह संपन्न करवाया।

तभी से इंदिरा का नाम परिवर्तित होकर इंदिरा गांधी हो गया। महात्मा गांधी का लंबे समय तक नेहरू परिवार के निवास स्थान आनंद भवन में आना-जाना लगा रहा अत: वे इंदिरा को बहुत प्यार करते थे और इसीलिए इंदिरा के भावी जीवनसाथी को अपना कुलनाम दिया लेकिन नेहरू या इंदिरा गांधी के परिवार से महात्मा गांधी के परिवार का कोई रक्त संबंध नहीं है। इंदिरा गांधी का विवाह १६ मार्च सन १९४२ को फीरोज गांधी के साथ हुआ। इंदिरा गांधी के दो पुत्र पैदा हुए जिनका नाम है राजीव गांधी व संजय गांधी। वर्ष १९८० में एक हवाई दुर्घटना में पुत्र संजय गांधी की मृत्यु से इंदिरा

गांधी को बहुत बड़ा धक्का लगा लेकिन इसके बावजूद वे कुशलतापूर्वक देश का नेतृत्व करती रहीं। उन्हें राजनीति व व्यक्तिगत जीवन में अनेक बार विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ा लेकिन कभी हार मान कर नहीं बैठीं। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद उनके पुत्र राजीव गांधी ही देश के प्रधानमंत्री बने थे। बाद में राजीव गांधी को भी असमय ही आतंकवादियों के षडयंत्र का शिकार होना पड़ा।

भारत के पहले प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के कार्यकाल में इंदिरा गांधी गैर सरकारी रूप से अपने पिता की निजी सहायक रहीं। उनकी मृत्यु के बाद वे राज्यसभा की सदस्य बनीं तथा स्वतंत्र भारत के दूसरे प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री के मंत्रिमंडल में सूचना व प्रसारण मंत्री रही। लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु के बाद इंदिरा गांधी हमारे देश भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री बनीं। इंदिरा गांधी देश की पहली ऐसी प्रधानमंत्री थीं जो राज्यसभा की सदस्य होने पर भी प्रधानमंत्री चुनी गई। वो देश की अत्यंत लोकप्रिय प्रधानमंत्री रहीं। इंदिरा गांधी एक निर्भीक, निडर महिला और दूरदर्शी नेता थीं। उनके असाधारण नेतृत्व के लिए वर्ष १९७१ में उन्हें देश का सर्वोच्च नागरिक अलंकरण भारत रत्न प्रदान किया गया।

इंदिरा गांधी ने अपने कार्यकाल के दौरान आम आदमी के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए कई अच्छी योजनाएं शुरू कीं। देश में बैंकों का राष्ट्रीयकरण, बांगला देश को स्वतंत्र करवाना, गरीबों के उत्थान के लिए बीस सूत्रीय कार्यक्रम लागू करना तथा गुटनिरपेक्ष आंदोलन को मजबूत करना उनके कुछ महत्वपूर्ण कार्य थे। देश में ही नहीं, विदेशों में भी उन्हें बहुत सम्मान मिला। ३१ अक्टूबर १९८४ को उनके अंगरक्षकों द्वारा ही उनकी हत्या कर दी गई जो एक बड़े राजनीतिक षडयंत्र का हिस्सा था। उनके साहस और अच्छे कार्यों के लिए देश हमेशा उन्हें आदर के साथ याद रखेगा।

१९ नवंबर १९१७ को देश की पहली महिला प्रधानमंत्री इंदिरा प्रियदर्शिनी गांधी का जन्म इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। वे राजनीतिक दृढ़ता और प्रतिभा के लिए विश्व राजनीति में जानी जाती हैं। उन्हें आयरन लेडी के नाम से भी संबोधित किया जाता है। वे १९५९ में पहली बार कांग्रेस पार्टी की अध्यक्ष बनीं। पिता की मृत्यु के बाद वे लाल बहादुर शास्त्री के मंत्रिमंडल में पहली बार सूचना व प्रसारण मंत्री बनीं। ३१ अक्टूबर, १९८४ को उनके दो अंगरक्षकों ने उन्हें गोलियों से भून दिया, अस्पताल में उनकी मौत हो गयी।

१९ जनवरी १९६६ को कांग्रेस पार्टी ने देश के प्रधानमंत्री पद के लिए इंदिरा गांधी को अपना नेता चुना था। नेता के चुनाव में उनके मुख्य प्रतिद्वंदी मोरारजी देसाई थे, जो नेता के लिए चुनाव कराने की अपनी मांग पर अड़े हुए थे।

इस चुनाव में ५२६ सांसदों में से ३५५ ने इंदिरा गांधी के पक्ष में मत दिए, जबकि मोरारजी देसाई को १६९ मत मिले। उस वक्त गुलजारीलाल नंदा का भी नाम आगे चल रहा था लेकिन इंदिरा गांधी के नाम आने के बाद उन्होंने अपना नाम वापस ले लिया। औपचारिक तौर पर इंदिरा गांधी ने चुनाव के पांच दिन बाद २४ जनवरी को प्रधानमंत्री का पदभार संभाला।

इंदिरा गांधी की छवि

सबसे अधिक संकल्पशील नेता- नेतृत्व की पहचान उसकी गुडी-गुडी छवि के लिए नहीं, उसके मजबूत समर्थन और

विरोध से बनती है। ऐसा न उनके चाहने से होता है, न उनके विरोधिचयों के। कठिन चुनौतियों का सामना करते हुए उन्हें मजबूती से कुछ चीजों के, कुछ मूल्यों के पक्ष में खड़ा होना होता है और कुछ की उतनी ही तीव्रता से मुखालफत करनी होती है। आजाद भारत के इतिहास में इंदिरा गांधी की छवि कुछ ऐसे ही संकल्पशील नेता की है। स्वप्नदर्शी राजनेता जवाहरलाल नेहरू ने भारत में कई महत्वपूर्ण पहलकदमियां कीं, लेकिन जमीन पर राज्य सरकारों ने उनकी एक न चलने दी। न कहीं ठोस से जमींदारी उन्मूलन कानून लागू हो पाया, न ही पूंजी के अभाव में छोटे उद्योगों को बढ़ावा मिल सका। इंदिरा गांधी द्वारा रजवाड़ों का प्रिवी पर्स समाप्त करना और बैंकों का राष्ट्रीयकरण पहली बार भारतीय राजसत्ता की स्पष्ट निम्नवर्गीय पक्षधरता का प्रमाण बना। इसी तरह विदेश नीति के क्षेत्र में मौजूद दुविधा को उन्होंने खुलेआम सोवियत संघ से नजदीकी बनाकर दूर किया और १९७१ के बाद से दुनिया भारत को राजनय के एक मजबूत खिलाड़ी के रूप में देखने को मजबूर हुई। अंतरिक्ष विज्ञान, एटॉमिक साइंस और संगणक विज्ञान में भारत की आज जैसी स्थिति की कल्पना इंदिरा गांधी के बगैर अपनी कमजोरियां हो सकती हैं, लेकिन एक राष्ट्र के रूप में भारत को यूटोपिया से निकाल कर यथार्थ के धरातल पर उतारने का श्रेय उन्हीं को ही जाता है। आज के समय में, जब राजनेताओं की पहचान ही भीड़ का हिस्सा बने रहने और एक कदम आगे दो कदम पीछे चलने की हो गई है ।

इंदिरा गांधी की भूमिका में कुछ कमियां रही है, जो कहीं मतों से उजागर हुई है। उनकी कुछ भूमिकाएं भारत में लोकतंत्र को दुर्बल बनाने की रही हैं। इसकी शुरुआत उन्होंने कांग्रेस पार्टी के भीतर लोकतंत्र समाप्त करके की और इसकी पूर्णाहुति देश पर इमर्जेंसी लगाकर देशवासियों के सारे लोकतांत्रिक अधिकारों पर कुठाराघात के रूप में हुई। आज देशभर में जो हम राज ठाकरे और ममता बनर्जी के जैसी पॉपुलिस्ट राजनीति का ज्वार देख रहे हैं, भारत में उसका सूत्रपात भी इंदिरा गांधी का ही किया हुआ है। उनकी तारीफ जिन बातों के लिए की जाती है, या यूं कहें इधर ऐसा करने का चलन शुरू हुआ है, वे किसी दूरदर्शी राजनेता की पहचान नहीं बन सकतीं। उन्हें खालिस्तानी आंदोलन की कमर तोड़ने का श्रेय दिया जाता है लेकिन सचाई यह है कि यह आंदोलन खुद इंदिरा गांधी और ज्ञानी जैल सिंह का शुरू किया हुआ था। १९७१ का भारत पाक युद्ध जीतने के लिए इंदिरा गांधी की अहम भूमिका थी। कुछ श्रेय उन्हें देश की रक्षा पंक्ति मजबूत करने के लिए जरूर दिया जा सकता है, लेकिन एटॉमिक उर्जा और अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में किए गए काम इंदिरा गांधी की नहीं, जवाहर लाल नेहरू की विरासत हैं।

भारतीय राजनीति के फलक पर श्रीमती इंदिरा गांधी का उभार ऐसे समय में हुआ था जब देश नेतृत्व के संकट से जूझ रहा था। शुरू में गूंगी गुड़िया कहलानेवाली इंदिरा ने अपने चमत्कारिक नेतृत्व से न केवल देश को कुशल नेतृत्व प्रदान किया बल्कि विश्व मंच पर भी भारत की धाक जमा दी। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता कर्ण सिंह ने बातचीत में बताया कि इंदिरा एक कुशल प्रशासक थीं। उनके सक्रिय सहयोग से बांग्लादेश अस्तित्व में आया। जिससे इतिहास और भूगोल दोनों बदल गए। इंदिरा गांधी द्वारा आपातकाल लगाये जाने पर पूछे गये सवाल के जवाब में उन्होंने कहा कि मैं समझता हूं कि आपातकाल लगाना गलत था और अपनी इस भूल को उन्होंने भी बाद में स्वीकार किया था। बचपन से ही इंदिरा में नेतृत्व के गुण मौजूद थे। भारत के आजादी के आंदोलन को गति प्रदान करने के लिए इंदिरा ने बचपन में ही वानर सेना का गठन किया था। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर कलीम बहादुर ने बताया कि इंदिरा का प्रधानमंत्रित्व काल

बहुत अच्छा था। उन्होंने बहुत से ऐसे काम किये जिससे विश्व में भारत का सम्मान बढ़ा। उन्होंने बताया कि उन्होंने भारत की विदेश नीति को नए तेवर दिए बांग्लादेश का बनना उनमें से कुछ उदाहरण हैं। इससे उन्होंने विश्व मानचित्र पर देश का दबदबा कायम किया। जवाहरलाल नेहरू और कमला नेहरू के घर इंदिरा का जन्म १९ नवंबर १९१७ को हुआ था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा स्थापित शांतिनिकेतन में पढ़ाई करनेवाली इंदिरा बचपन में काफी संकोची स्वभाव की थी। प्रोफेसर बहादुर ने कहा कि इंदिरा गांधी कभी भी अमेरिका जैसे राष्ट्रों के सामने झुकी नहीं। हाल ही में विकीलिक्स द्वारा किये गये खुलासों में यह बात सामने आयी है कि निक्सन जैसे शक्तिशाली राष्ट्रपति भी उनसे काफी नाराज थे। लेकिन उन्होंने इसकी कभी परवाह नहीं की। अपनी राजनीतिक पारी के शुरूआती दिनों में गूंगी गुड़िया के नाम से जानी जाने वाली इंदिरा बाद के दिनों में बहुत बड़ी जननायक बनकर उभरीं। उनके व्यक्तित्व में अजीब सा जादू था जिससे लोग खुद ब खुद उनकी तरफ खिंचे चले आते थे। वह एक प्रभावी वक्ता भी थीं जो अपने भाषणों से लोगों को मंत्रमुग्ध कर देती थीं। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता रहे अरूण नेहरू ने कहा कि हमारे देश में इंदिरा गांधी अंतिम जन नायक थीं। उनके बाद कभी उन जैसे राजनेता नहीं हुआ। आपातकाल लगाने के बाद उन्हें चुनाव में करारी शिकस्त का सामना करना पड़ा लेकिन फिर से चुनाव में वह विजयी होकर लौटी और अकेले अपने दम पर सरकार का गठन किया। उन्होंने कहा कि आज गठबंधन की सरकारें बन रही हैं। आज के किसी भी राजनेता में वह जादुई ताकत नहीं है कि अपने अकेले दल के दम पर सरकार बना सके। पंजाब में आतंकवाद का सामना करते हुए अपने प्राणों की आहूति देनेवाली इंदिरा गांधी को अपने छोटे बेटे संजय गांधी के आकस्मिक निधन से काफी दुख पहुंचा था। इंदिरा गांधी के मंत्रिमण्डल में लगभग १० सालों तक शामिल रहे कर्ण सिंह ने कहा कि संजय के निधन से उन्हें काफी दुख पहुंचा था लेकिन राजीव से उन्हें काफी संबल मिला। यह पूछे जान पर कि क्या इंदिरा गांधी वे वंशवाद को बढ़ावा दिया, उन्होंने कहा कि ऐसा नहीं है। संजय हो या राजीव सभी लोकतांत्रिक तरीके से चुनाव जीतकर आए थे। उन्होंने इन नेताओं को राष्ट्र पर थोपा नहीं था। पंजाब में ब्लू स्टार ऑपरेशन से नाराज उनके दो अंगरक्षकों ने ३१ अक्टूबर १९८४ को उनकी गोली मारकर हत्या कर दी।

इंदिरा गांधी देश ही नहीं, विदेशों में भी एक शक्तिशाली महिला एवं शासिका मानी जाती रही हैं। भले ही वह आपात्काल जैसे मामलों को लेकर विवादास्पद रही किंतु उनका प्रधानमंत्रित्व वाला कार्यकाल अनूठा और अद्वितीय रहा। उनके कार्यकाल में अमेरिका जैसा देश उनसे भयभीत रहा।

स्वर्गीय इंदिरा गांधी की इसी दमदारी के कारण तत्कालीन विरोधी नेता अटल बिहारी वाजपेयी ने उन्हें दुर्गा कहकर संबोधित किया। यह वाजपेयी जी ने अकारण ही नहीं कहा था। इन्हीं के चलते पड़ोसी बंगला देश को २४ घंटे के भीतर आजादी मिली थी। इंदिरा के इशारे पर भारतीय सेना ने पाकिस्तान से बांगला देश को आजाद कराया। उसे एक स्वतंत्र देश के रूप में मान्यता देकर तब इंदिरा ने विश्व को चौंका दिया था।

पंजाब को आतंकवादियों से मुक्त करानेवाली इंदिरा गांधी तब पाकिस्तान व चीन की अक्ल को भी ठिकाने लगानेवाली थीं किंतु वह अपने ही सुरक्षा जवानों के हाथों मारी गईं।

उसी वीर नारी को मरणोपरांत अब वीरता हेतु सम्मान दिया जाएगा। पड़ोसी बंग्ला देश स्व. इंदिा को सम्मानित करेगा। यह सम्मान उन्हें बंगलादेश की आजादी में योगदान के लिए दिया गया।

वर्ष १९७१ का दौर भारतीय विदेशी नीति के लिए निर्णायक रहा। तब भारत पाकिस्तान युद्ध की संभावना बढ़ने लगी थी और चीन एवं अमेरिका ने पाकिस्तान का समर्थन किया था। ऐसी स्थिति में हम मित्र विहीन अकेले हो गए थे। तब किसी

की परवाह किए बिना इंदिरा ने सोवियत संघ के साथ मैत्री का हाथ बढ़ाया था और भारत रूस मैत्री संधि की। यह भारत के लिए अभूतपूर्व समय था।

दिसंबर १९७१ में पाकिस्तान का मुकाबला किया और उसे निर्णायक रूप से पराजित किया। पश्चिम पाकिस्तान से उसकी सेना को पराजित कर बंगला देश को एक स्वतंत्र देश के रूप में अस्तित्व एवं मान्यता दी तब इंदिरा गांधी की इसी दिलेरी एवं भारतीय सेना की ताकत से विश्व चकित हो गया और शक्तिशाली देश अमेरिका एवं चीन बौखला गए इसीलिए इंदिरा गांधी के जीवित रहने तक अमेरिका व चीन हर पल भयभीत रहे। भारतीय सेना ने अपने हमलों से कुछ ही घंटों के भीतर पाकिस्तान को पराजित कर बंगला देश को आजाद करा लिया था। यह देश के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि रहीं।

१९७५ में आपात्काल के कारण इंदिरा गांधी अपयश की भागी बनीं, उनकी लोकप्रियता में कमी आई और १९७७ में सत्ता से बाहर हुई किंतु १९८० में पुन: सत्ता में आ गई। १९८४ में पंजाब को आतंकवादियों से मुक्त कराया किंतु इसी वर्ष ३१ अक्टूबर को उनके घर में उनकी दिलेरी आज भी यादगार और बेमिसाल है। उनकी वीरता एवं बंगला देश को आजादी दिलाने में योगदान के लिए पड़ोसी बंगाल देश द्वारा उन्हें मरणोपरांत सम्मानित करने का निर्णय देर से उठाया गया सही एवं सम्मानजनक कदम हैं।

श्रीमती इंदिरा गांधी सादा जीवन, उच्च विचार की साकार मूर्ति थी। राष्ट्रीयता की भावना उनमें कूट कूट कर भरी हुई थी। उनका कहना था कि जितनी देखभाल हम अपने शरीर की करते हैं, उससे कहीं अधिक देखभाल हमें अपनी राष्ट्रीय एकता की करनी चाहिए। श्रीमती गांधी बड़ी स्वाभिमानी थी। वे किसी राष्ट्र से भयभीत नहीं होती थीं। सन १९८२ में अपनी अमेरिका यात्रा के समय उन्होंने तटस्थता तथा गुट निरपेक्षता के सन्दर्भ में भारत का दृष्टिकोण रखते हुए कहा हम महाशक्तियों की गुटबंदी में शामिल नहीं हो सकते। हम पूरे विश्व से मित्रता बनाये रखना चाहते है।

इस अमेरिका सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में उन्होंने बलपूर्वक विश्वशांति हेतु परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्रों से विनाशकारी अस्त्रों के निर्माण और प्रयोग को बंद करने की अपील की। उन्होंने आर्थिक विकास हेतु इसके सदस्य राष्ट्रों को परस्पर सहयोग करने का भी आह्वान किया।

राष्ट्रीय एकता बनाए रखने के लिए श्रीमती गांधी ने अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक भारत के गौरव को बढ़ाने के लिए भारतवासियों को सचेत किया मानो उन्हें मालूम हो उनकी मृत्यु के २४ घण्टे पहले भुवनेश्वर में दिए गए भाषण उनके जीवन का अंतिम भाषण होगा।

हो सकता है कि उस महान विभूति को अपने स्थूल शरीर के छूटने का पूर्वाभास हो गया हो, तभी तो उन्होंने ऐसी सरगर्मी के साथ मार्मिक शब्दों में अपने देशवासियों से एकता बनाए रखने पर तथा देश की आंतरिक तथा बाह्य शत्रुओं से सामना करने की अपील करते हुए यहां तक कह डाला- मुझे चिंता नहीं कि मैं जीवित रहूं या न रहूं। यदि राष्ट्र की सेवा में मैं मर भी जाऊं तो मुझे इस पर गर्व होगा। मुझे विश्वास है कि मेरे रक्त की एक-एक बूंद से अखण्ड भारत के विकास में मदद मिलेगी और यह सुदृढ़ तथा गतिशील बनेगा। उनके संबंध में कही गयी यह पंक्तियां पूर्णतया सत्य हैं।

इंदिरा प्रियदर्शनी गांधी न केवल भारतीय राजनीति पर भाई रहीं बल्कि विश्व राजनीति के क्षितिज पर भी वे एक प्रभाव छोड़ गई। श्रीमती इंदिरा गाँधी का जन्म नेहरू खानदान में हुआ था। इंदिरा गांधी, भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू की इकलौती पुत्री थीं। आज इंदिरा गांधी को सिर्फ इस कारण नहीं जाना जाता कि वह पंडित जवाहरलाल नेहरू की बेटी थीं बल्कि इंदिरा गांधी अपनी प्रतिभा और राजनीतिक दृढ़ता के लिए विश्वराजनीति के इतिहास

में जानी जाती हैं और इंदिरा गाँधी को लौह महिला के नाम से संबोधित किया जाता है। ये भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री थीं।

भारत के जितने भी प्रधानमंत्री हुए हैं, उन सभी की अनेक विशेषताएं हो सकती हैं, लेकिन इंदिरा गांधी के रूप में जो प्रधानमंत्री भारत भूमि को प्राप्त हुआ, वैसा प्रधानमंत्री अभी तक दूसरा नहीं हुआ है क्योंकि एक प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने विभिन्न चुनौतियों का मुकाबला करने में सफलता प्राप्त की। युद्ध हो, विपक्ष की गलतियां हों, कूटनीति का अंतर्राष्ट्रीय मैदान हो अथवा देश की कोई समस्या हो- इंदिरा गांधी ने अक्सर स्वयं को सफल साबित किया। इंदिरा गांधी, नेहरू के द्वारा शुरू की गई औद्योगिक विकास की अर्द्ध समाजवादी नीतियों पर कायम रही। उन्होंने सोवियत संघ के साथ नजदीकी सम्बन्ध कायम किए और पाकिस्तान भारत विवाद के दौरान समर्थन के लिए उसी पर आश्रित रहीं। जिन्होंने इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल को देखा है, वे लोग यह मानते हैं कि इंदिरा गांधी में अपार साहस, निर्णय शक्ति और धैर्य था।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की इकलौती संतान भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व. इंदिरा प्रियदर्शिनी गांधी में बचपन से ही परिस्थितियों से जूझने और खतरों का सामना करने की अटूट क्षमता थी।

गुलामी के शासन तंत्र में १९ नवंबर १९१७ को जन्मीं और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की छत्रछाया में पलकर बड़ी हुई इंदिरा गांधी ने पिता द्वारा स्वतंत्र भारत में बोये लोकतंत्र के बीजों की बखूबी सींचकर रक्षा की एवं सदैव लोकतंत्र की पक्षधर रहीं। यद्यपि लोकतंत्र के प्रति उनकी राय के बारे में लोग बहुत सी बातें किया करते थे। जब १९७७ में कांग्रेस के बहुत से लोग चुनाव के पक्ष में नहीं थे, वह यही कहती थीं कि चुनाव टालने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। हम लोगों को लोकतंत्र की नींव रखनी है। चुनाव टालकर हम जनमानस में अपनी क्या शक्ल दिखाएंगे।

राष्ट्र के लिए अपना जीवन न्यौछावर करनेवाली भारत मां की इस महान देशभक्त बेटी ने देश के आत्मसम्मान, हितों व राष्ट्र की एकता और अखंडता की कीमत पर कभी भी किसी भी विदेशी शक्ति के साथ समझौता नहीं किया, यहां तक कि सोवियत संघ से भी नहीं। सोवियत संघ के बारे में उनकी यह दलील काफी सार्थक लगती थी कि उसने हमें उस वक्त मदद दी जब हमारी मदद को कोई आगे नहीं आया।

अपने प्रधानमंत्रित्व काल में इंदिरा गांधी ने १८ मई १९७४ को समूचे विश्व के लाख विरोध के बावजूद प्रथम परमाणु परीक्षण कर भारत को विश्व के आणविक मानचित्र पर अंकित कर दिया। उन्होंने दृढ़ निश्चय और साहस का परिचय देते हुए यह सिद्ध कर दिखाया कि भारत न केवल एक परमाणुशक्ति वाला देश है और वह परमाणुशक्ति का शांतिपूर्ण कार्यों के लिए उपयोग करने की तकनीक में दखल रखता है बल्कि वह अपनी परमाणुनीति सिकी के प्रभाव या दबाव में आकर नहीं अपने राष्ट्रहितों को ध्यान में रखकर निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र है।

इस परमाणु परीक्षण के विरोधस्वरूप कनाडा ने अनुबंध के बावजूद राणा प्रताप सागर परमाणु संयंत्र के लिए भारी पानी देना बंद कर दिया व अन्य देशों ने परिष्कृत यूरेनियम भेजने से इनकार कर दिया। लेकिन अपने दृढ़निश्चयी स्वभाव का परियच देते हुए इंदिरा गांधी ने परमाणुशक्ति नियंत्रण समझौते पर हस्ताक्षर न करके बड़ी शक्तियों के भारत में दखलंदाजी के सारे रास्ते बंद कर दिए।

भारत के सफल अंतरिक्ष कार्यक्रमों का पूरा श्रेय इंदिरा गांधी को जाता है। उन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप आर्यभट्ट,

भास्कर, रोहिणी के बाद इनसेट बी के माध्यम से देश में मौसम की पूर्व जानकारी देने व दूरर्शन के कार्यक्रमों को सुदूर इलाकों तक पहुंचाना संभव हो पाया है।

इंदिरा गांधी अपने आपको राष्ट्र के प्रति समर्पित करके भारत के आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की दुर्दम्य प्रतीक बन गई थी। देश की एकता और अखंडता के लिए और प्रगति के लिए जो कुछ कार्य उन्होंने किए, उसके लिए राष्ट्र सदैव उनका ऋणी रहेगा। संकट की घड़ियों में बिना विचलित हुए इस विशाल लोकतांत्रिक देश का उन्होंने जो कुशल एवं सफल नेतृत्व किया, वह चिरस्मरणीय रहेगा।

ओडिशा में दिए अपने अंतिम भाषण में उन्होंने कहा था मुझे मौत से डर नहीं लगता। यदि मेरा जीवन देश की सेवा में अर्पित हो तो मुझे उसका रत्ती भर दुख नहीं होगा। मेरे खून की बूंद का हर एक कतरा राष्ट्र में नया रक्त संचार करेगा। उनके शब्द आज भी हमारे कानों में गूंजकर बरबस उनकी निडरता और साहसिकता का प्रमाण देते हैं। ऐसी थी वह प्रजातंत्र, आम आदमी, धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्र की एकता व अखंडता की प्रबल पक्षधर, करनेवाली एक महान शक्ति, जिसका नाम इतिहास में अमर हो गया है।

सदा याद रहेंगी इंदिरा प्रियदर्शिनी गांधी

इंदिरा गांधी का राजनीतिक जीवन काफी उतार-चढ़ाव भरा रहा। भारतीय राजनीति में उनके निर्णयों को मिसाल के तौर पर देखा जाता है। आज भी कई युवा जो राजनीति में अपना करियर बनाना चाहते हैं, इंदिरा गांधी को अपना आदर्श मानते हैं। अपने फौलादी व्यक्तित्व और सकारात्मक दृष्टिकोण की वजह से विश्व में उन्हें सबसे ताकतवर महिलाओं की श्रेणी में गिना जाता है। खालिस्तान समर्थकों ने उनके द्वारा चलाए गए ऑपरेशन ब्लू स्टार का बहुत विरोध किया लेकिन इंदिरा ने इस ऑपरेशन को वापस नहीं लिया। उनके इस फैसले से नाराज उनके अंगरक्षकों ने ही ३१ अक्टूबर, १९८४ को उनकी जान ले ली।

इंदिरा प्रियदर्शिनी गांधी को विश्व राजनीति में लौह महिला के रूप में जाना जाता है। भले ही राजनीतिक पृष्ठभूमि और स्वतंत्रता आंदोलन की वजह से उन्हें परिवार का अपेक्षित दुलार प्राप्त नहीं हो सका, लेकिन ब्रिटिश काल में भारत के बिगड़ते हालातों ने उन्हें इन आंदोलनों और संपूर्ण स्वाधीनता की जररूत को भली प्रकार समझा दिया था। परिवार में अकेले होने के कारण उनका अधिकतर समय पिता की नकल करते हुए ही गुजरता था। उनकी भाषण शैली में उनके पिता पं. जवाहरलाल नेहरू के प्रभाव को महसूस किया जा सकता था। ऐसी सामाजिक और पारिवारिक परिस्थितियों ने उन्हें एक मजबूत व्यक्तित्व प्रदान किया जो आगे चलकर उनके सफल राजनीतिक जीवन का आधार बना। गुलाम भारत की चिंतनीय स्थिति को इंदिरा ने बचपन में ही भांप लिया था। उनको यह समझ आ गया था कि किसी भी राष्ट्र के लिए स्वतंत्रता कितनी जरूरी है।

क्रांतिकारियों और आंदोलनकारियों की सहायता के उद्देश्य से इंदिरा गांधी ने अपने हम उम्र बच्चों और कुछ मित्रों के सहयोग से वानर सेना का गठन किया जिसका उद्देश्य देश की आजादी के लिए लड़ रहे लोगों को गुप्त और महत्वपूर्ण सूचनाएं प्रदान करना था। इंदिरा जी को राजनीति की समझ विरासत में मिली थी, जिसकी वजह से जल्दी ही उनका प्रवेश राजनीति में हो गया था। यहां तक कि पं. जवाहरलाल नेहरू भी कई मसलों पर इंदिरा गांधी की राय लेते और उसे मानते भी थे। उचित और तुरंत निर्णय लेने की क्षमता ने कांग्रेस सरकार में इंदिरा गांधी की महत्ता और उनके कद को कई

गुना बढ़ा दिया था। अपने दृढ़ और संकल्पनील आचरण की वजह से राजनीतिक जिम्मेदारी को बखूबी निभाते हुए उन्होंने दो दशकों तक देश को मंदी के हालातों से बचाए रखा। इसके अलावा देश में पहला परमाणु परीक्षण करने का श्रेय भी इंदिरा गांधी को ही जाता है। उनके साथ काम कर चुके लोगों का मानना है कि वह एक बड़ी राजनेता थीं और उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि बांग्लादेश की स्वतंत्रता थी। इसके जरिए उन्होंने भूगोल को ही बदलकर रख दिया।

इंदिरा गांधी का जन्म १९ नवंबर १९१७ को उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में एक संपन्न परिवार में हुआ था। उनका पूरा नाम था इंदिरा प्रियदर्शिनी। उन्हें एक घरेलू नाम भी मिला था जो इंदिरा का संक्षिप्त रूप इंदु था। उनका इंदिरा नाम उनके दादा पंडित मोतीलाल नेहरू ने रखा था, जिसका मतलब होता है कांति, लक्ष्मी एवं शोभा। इस नाम के पीछे की वजह यह थी कि उनके दादाजी को लगता था कि पौत्री के रूप में उन्हें मां लक्ष्मी और दुर्गा की प्राप्ति हुई है। इंदिरा के अत्यंत प्रिय दिखने के कारण पंडित नेहरू उन्हें प्रियदर्शिनी के नाम से संबोधित किया करते थे। चूंकि जवाहरलाल नेहरू और कमला नेहरू स्वयं बेहद सुंदर तथा आकर्षक व्यक्तित्व के मालिक थे, इस कारण सुंदरता उन्हें अपने माता-पिता से प्राप्त हुई थी। इंदिरा को उनका गांधी उपनाम फिरोज गांधी से विवाह के बाद मिला था। इंदिरा गांधी को बचपन में एक स्थिर पारिवारिक जीवन का अनुभव नहीं मिल पाया। इसकी वजह यह थी कि १९३६ में ही उनकी मां कमला नेहरू का तपेदिक के कारण एक लंबे संघर्ष के बाद निधन हो गया था और पिता जवाहरलाल नेहरू हमेशा स्वतंत्रता संग्राम में ही व्यस्त रहे।

इंदिरा प्रियदर्शनी गांधी न केवल भारतीय राजनीति पर छाई रहीं बल्कि विश्व राजनीति के क्षितिज पर भी वे एक प्रभाव छोड़ गई। इंदिरा गांधी अपनी प्रतिभा और राजनीतिक दृढ़ता के लिए विश्वराजनीति के इतिहास में जानी जाती हैं। अपने शासनकाल में उन्होंने अनेक साहसी निर्णय लिये इसी कारण इंदिरा गांधी को लौह महिला के नाम से संबोधित किया जाता है। उन्हीं के कार्यकाल में पड़ोसी देश सिक्कीम का भारत में विलय हुआ। उन्हीं के कारण १९७१ के युद्ध में पाक को मात्र १३ दिन में अपनी हार स्वीकार करने को मजबूर होना पड़ा और ९० हजार पाकिस्तानिक सैनिकोंने भारतीय सेनाके सामने आत्मसमर्पण दिया।

इंदिरा गांधी ने खलिस्तान की मांग को निपटाने के साथ ही उनके साहस से ही बांग्लादेश की निर्मिती हुई। १९६९ में बैंकों का राष्ट्रीयीकरण कर देश की वित्त व्यवस्था को विकास के सही मार्ग पर लाया। किसान, दलित, आदिवासी को मुख्य धारा में लाने के लिए गरीबी हटाओ का नारा दिया। औद्योगिकीकरण पर अमल करने से ही देश का अमूल विकास हुआ है। इंदिरा गांधी के बिना भारत का इतिहास अधूरा है और अधूरा ही रहेगा। इंदिरा एक ऐसी हस्ती है जिनको आज पूरा देश याद करता है और इतिहास के पन्नों से इंदिरा गांधी का नाम मिटाना नामुनकिन है। इंदिरा गांधी भारत की एक महान व्यक्ति थी। उन्होंने देश को एकजूट किया और उन ताकतों के खिलाफ लड़ी जो लोगों को जाति और धर्म के नाम पर बांटने की कोशिश कर रहे थे। उनमें उदारता और मानतवा थी। वह अपने निजी हित के लिए नहीं बल्कि अपने सिद्धांतों के लिए लड़ी। उन्होंने गरिबों, शोषितों के लिए लड़ाई लड़ी और उनकी आवाज को अपनी आवाज में जोड़ने का काम किया। इंदिराजी धर्मनिरपेक्षता के लिए लड़ी। उन्होंने भारत की विविधता तथा मजबूत लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को आगे बढ़ाया। उनके विदेशनीति और सुरक्षानीति सक्षम थी। एक संप्रभुत्व देश के तौर पर भारत के हितों के लिए और महाशक्तियों के वर्चस्व के लिए लड़ी। बांग्लादेश की स्थापना उनके इसी रुख का प्रतीक है। वह भारत को अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर नई ऊंचाइयों पर ले गई। वो हमेशा देश के बारे में सोचती थी। इंदिरा गांधी हकीकत से कभी दूर नहीं भागी।

इंदिरा गांधी ने सिक्कीम का भारत में विलय किया और पाकिस्तान का विभाजन करके बांग्ला देश बनाकर देश की सीमाओं में बढ़ोतरी के साथ सुरक्षा मामलों में बेजोड़ प्रगति की जो उन्हें अमर बनाने के लिये काफी है। इंदिरा गांधी ने प्रिवी पर्स खत्म करके देश के राजा महाराजा युग को सदा के लिये विदा कर दिया। बैंकों का राष्ट्रीयीकरण उन्होंने ही किया जो आम आदमी के हक के लिये जरूरी थे। आपतकाल और ऑपरेशन ब्ल्यू स्टार के बावजूद भी इंदिरा गांधी एक लोकप्रिय प्रधानमंत्री साबित हुई। इंदिरा गांधी आज की भारत की जननी जानी जाती है। इंदिरा गांधी के अलावा कोई अन्य प्रधानमंत्री आज तक न तो देश की सीमा बढ़ा सका है और न ही पाकिस्तान जैसे देश के टुकड़े कर सका है।

अपने दृढ़ निश्चय, साहस और निर्णय लेने की अद्भुत क्षमता के कारण इंदिरा गांधी को विश्व राजनीति में लौह महिला के रूप में जाना जाता है।

लम्बे, फैले हुए बरामदे को पार करना, चरमराती हुई लकड़ी की सीढ़ियों पर चढ़ना और एक स्टूल पर चढ़कर दरवाजे के हैंडिल और बत्ती के स्विच तक पहुंचना।

पूर्व विदेश मंत्री एवं वरिष्ठ नेता नटवर सिंह ने भाषा से कहा कि माता की खराब सेहत और पिता की व्यस्तता के कारण उनका बचपन सामान्य बच्चों की तरह नहीं बीता लेकिन पिता जवाहर लाल नेहरू का उनपर गहरा प्रभाव था।

नेहरू ने भी अपनी पुत्री का हर पथ पर मार्गदर्शन किया। पिता का पुत्र के नाम इसका जीवंत उदाहरण है। इंदिरा ने भी इसे स्वीकार किया है। उन्होंने लिखा, मेरे दादा परिवार के मुखिया थे, इसलिए नहीं कि वह उम्र में सबसे बड़े थे बल्कि इसलिए क्योंकि उनका व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली था। लेकिन मेरी छोटी सी दुनिया के केन्द्रबिन्दु में मेरे पिता थे। मैं उनको प्यार, उनकी प्रशंसा और सम्मान करती थी। वही एकमात्र व्यक्ति थे जिनके पास मेरे अन्तहीन प्रश्नों को गंभीरता से सुनने का समय होता था। उन्होंने ही आसपास की चीजों के प्रति मेरी रूचि जागृत कर मेरी विचारधारा को दिशा दी।

शास्त्री के बाद इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री बनीं। उनके आलोचकों ने शुरू में उन्हें गूंगी गुड़िया कहा लेकिन वे आयरन लेडी साबित हुईं। अपने कठोर साहसिक निर्णयों और पहल कदमी में पं. नेहरू से भी आगे नजर आईं। बैंक राष्ट्रीयकरण और राजाओं के प्रिवीपर्स बंद करने के सख्त फैसले लेना उन्हीं के बूते की बात थी। आपातकाल लागू करने का उनका फैसला अत्यंत विवादास्पद रहा था। उनके विरोधियों ने उन्हें अलोकतांत्रिक व तानाशाह की संज्ञा दी। इंदिरा गांधी ने १९७१ के बांग्लादेश युद्ध में पाकिस्तान के दांत खट्टे कर दिए। बांग्लादेश का निर्माण उनकी एक बहुत बड़ी उपलब्धि रही। वस्तुत: उन्होंने इतिहास रच दिया। अमेरिका ने पाक की तरफदारी करते हुए बंगाल की खाड़ी में सातवां बेड़ा भेजने की धमकी दी लेकिन इंदिरा ने कहा कि उसे आने दो, हमारा विक्रांत उसका मुकाबला कर लेगा। अमेरिकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को उनका यह मुंहतोड़ जवाब था। आपरेशन ब्ल्यू स्टार का दुस्साहस उन्हें महंगा पड़ा जिसके बाद १९८४ में उनकी हत्या कर दी गई। १९७७ में सत्ता खोने के बाद वे फिर १९८० में सत्ता पर लौटी थीं। मोरारजी देसाई की जनता पार्टी सरकार व चौधरी चरणसिंह की सरकार चल नहीं पाई।

अमन के लिए इंदिराजी ने अपनी जान गंवाई अपना जीवन अर्पित करके देश की शान बढ़ाई।

श्रीमती इंदिरा गांधी को उनके बॉडीगार्ड ने ही गोलियों से छलनी कर दिया।

धीरे धीरे यह खबर व्यापारियों तक पहुंची तुरंत सभी लोग अपनी अपनी दुकानें बन्द करके घर जाने लगे। धीरे-धीरे

सड़क पर लोगों का आना-जाना भी कम हो गया। लगभग एक घंटे में बाजार का पूरा रोड खाली हो गया, जैसे अचानक कर्फ्यू लग गया हो। तब सभी लोग दबी आवाज में बातें कर रहे थे कि पता नहीं आगे क्या होगा? उस वक्त ज्ञानी जैलसिंग राष्ट्रपति थे और वे भी यमन के दौरे पर गये हुए थे। खुद राजीव गांधी भी दिल्ली से बाहर दौरे पर गये थे। पंजाब के अमृतसर में स्वर्णमंदिर में ऑपरेशन ब्ल्यू स्टार के बाद आतंकवाद में कमी तो आई थी, मगर श्रीमती इंदिरा गांधी को इसकी कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ी थी। ऑपरेशन ब्ल्यू स्टार के बाद आतंकवादी इंदिरा गांधी के खून के प्यासे हो उठे थे। विदेश में बसे जगजीत सिंह चौहान ने आतंकवादियों को आदेश दे दिया था कि इंदिरा गांधी व उनके परिवार के लोगों को खत्म कर दिया जाये। वैसे खुद इंदिरा गांधी को भी जैसे अपनी मृत्यु का अहसास हो गया था। हत्या से एक दिन पहले ही श्रीमती इंदिरा गांधी ने भुवनेश्वर में हुई आमसभा में बोलते हुए कहा था- मुझे विश्वास है कि मेरे खून की एक एक कतरा देश के विकास में सहायक होगा और इस देश को मजबूत बनायेंगी। इंदिरा गांधी के इन शब्दों को अभी २४ घंटे भी नहीं हुए थे कि ३१ अक्टूबर को सुबह नौ बजे इस भीषण हत्याकांड को अंजाम दे दिया गया था। इस वक्त राष्ट्रपति विदेश में थे। अन्य वरिष्ठ मंत्री और राजीव गांधी भी राजधानी से दूर चुनाव प्रचार में व्यस्त थे। वैसे बाद में पता चला कि आतंकवादियों ने श्रीमती गांधी की हत्या का फैसला १७ अक्टूबर को ही कर लिया था। आतंकवादियों की योजना के अनुसार हत्या का काम २५ अक्टूबर को ही हो जाता, अगर ऐन मौके पर सुरक्षा गार्ड सतवंत सिंह नर्वस नहीं हुआ होता तो। ३१ अक्टूबर को सुबह नौ बजे श्रीमती इंदिरा गांधी पीटर उस्तीनोव को एक दूरदर्शन पर साक्षात्कार देनेवाली थी। जब श्रीमती इंदिरा गांधी तैयार होकर अपने निवास १, सफदरजंग रोड से अपने कार्यालय, अकबर रोड की तरफ चली, तो दोनों इमारतों को मिलाने वाले गेट पर तैनात उनके सुरक्षा बॉडीगार्ड बेअंतसिंह और सतवंत सिंह अचानक उनके सामने मशीनगन तानकर खड़े हो गए। एक क्षण के लिये इंदिरा गांधी स्तब्ध रह गई, उनके मुंह से इतना ही निकला। अरे, बेअंतसिंह-सतवंत सिंह ये क्या कर रहे हो? मगर उनका वाक्य पूरा होने से पहले ही बेअंतसिंह और सतवंत सिंह ने उनकी छाती को गोलियों से छलनी कर दिया। वे जगह पर ही खत्म हो गयीं। बाद में अस्पताल में बॉडी ले जाने पर पता चला कि उनकी छाती में २८ गोलियां लगी थीं और घटनास्थल पर ही उनकी मौत हो चुकी थी। इस भयानक घटना से सारा देश हक्का-बक्का रह गया। अपने ही बॉडीगार्ड द्वारा देश की प्रधानमंत्री की हत्या होने की यह पहली घटना थी। श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के दिन ही ३१ अक्टूबर को शाम साढ़े छह बजे राजीव गांधी को भारत के छठे प्रधानमंत्री के रूप में राष्ट्रपति जैलसिंह द्वारा शपथ दिलाई गई। अब राजीव गांधी दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के प्रधानमंत्री बन गये थे। बाद में ३१ अक्टूबर की रात को ही प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने देश के नाम अपना पहला सार्वजनिक संदेश दिया, उनके इस पांच मिनिट के भाषण ने आगामी चुनावों में उनकी जीत पक्की कर दी। इंदिरा गांधी की हत्या के दूसरे दिन दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश के अनेक शहरों में हिंदु सिख दंगे भड़क उठे थे। दंगों की यह आग महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और हिमाचल प्रदेश तक फैलती चली गई। लगातार तीन दिन तक हिंसा होती रही। सिखों का यह कत्लेआम एक सोची-समझी साजिश थी, जो देश के सिखों को सबक सिखाने के लिये की गई थी। खुद राजीव गांधी ने अपने भाषण में कहा था कि जब कोई बड़ा पेड़ गिरता है तो धरती हिलती है और छोटे कीड़े मकौड़े उसमें दबकर मरते भी हैं। इस तरह राजीव गांधी ने जैसे हो रही घटना को न्यायसंगत ही ठहरा दिया था। इस हत्याकांड में अकेले दिल्ली में ४ से ५ हजार सिख मारे गये थे। देशभर के कई राज्यों में मारे गये निर्दोष सिखों की संख्या भी हजारों में थी। इसमें ज्यादातर मध्यमवर्गीय गरीब सिख ही मारे गये थे। भारत पाकिस्तान बंटवारे के समय जो भयंकर दंगा हुआ था, उसके बाद इतने बड़े प्रमाण में हुआ, यह पहला दंगा था। जिसने जुल्म अत्याचार की सारी हदें पार कर दी थी और जिससे सारी मानवता शर्मसार हुई थी।

❖❖❖

२० नवम्बर

एडविन हब्बल

२० नवंबर १८८९ को आकाशगंगा की खोज करनेवाले खगोलशास्त्री एडविन हब्बल का जन्म मिसौरी (अमेरिका) में हुआ था। उन्होंने कैलिफोर्निया स्थित माउंट विल्सल वेधशाला में शोध में पाया कि आकाशगंगाएं और आकाशीय पिंड तेजी से एक-दूसरे से दूर हो रहे हैं। इस खोज ने ब्रह्मांड के बारे में सदियों से जारी बहस की दिशा ही मोड़ दी।

उन्होंने गैलेक्सियों के वर्गीकरण का सिद्धांत भी बनाया जिसे हब्बल सिक्वेंस कहा जाता है। उन्होंने हुमासन के साथ अनुसंधान करते हुए बताया कि सभी गैलेक्सी की उत्पत्ति एक केंद्रीय सघन बिंदु से हुई है। २८ सितंबर १९५३ को उनका निधन हुआ।

फैज अहमद फैज (निधन - २० नवम्बर)

फैल अहमद फैज प्रसिद्ध शायर थे जिनको अपनी क्रांतिकारी रचनाओं में रसिक भाव (इंकलाबी और रूमानी) के मेल की वजह से जाना जाता है। सेना, जेल तथा निर्वासन में जीवन व्यतीत करनेवाले फैज ने कई नज्म, गजल लिखी तथा उर्दू शायरी में आधुनिक प्रगतिवादी दौर की रचनाओं को सबल किया। उन्हें नोबेल पुरस्कार के लिए भी मनोनीत किया गया था। जेल के दौरान लिखी गई उनकी कविता जिन्दा नामा को बहुत पसंद किया गया था।

श्याम बहादुर वर्मा (निधन- २० नवम्बर)

श्याम बहादुर वर्मा बहुमुखी प्रतिभाशाली, अनेक विषयों के विद्वान, विचारक और कवि थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य को कई शब्दकोश प्रदान किये थे। उनके प्रत्येक कमरे में फर्श से लेकर छत तक पुस्तकें ही पुस्तकें नजर आती थीं। श्याम बहादुर वर्मा ने विविध भाषाओं तथा ज्ञान-विज्ञान की अनेकानेक शाखाओं का गहन अध्ययन किया। १९५३ में उन्होंने अकेले ही हिमालय को पैदल पार कर तिब्बत की यात्रा की थी। उनकी सम्पूर्ण साहित्यिक सेवाओं के लिये हिन्दी अकादमी, दिल्ली ने वर्ष १९९७-९८ में उन्हें साहित्यकार सम्मान प्रदान किया था।

२१ नवम्बर

हरे कृष्ण मेहताब (जन्म- २१ नवंबर)

हरे कृष्ण मेहताब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख नेताओं में से एक थे। आधुनिक उड़ीसा के निर्माताओं में गिने जानेवाले हरे कृष्ण मेहताब भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अग्रणी रहे थे। वे १९४६ से १९५० तक तथा फिर १९५६ से १९६१ तक उड़ीसा के मुख्यमंत्री भी रहे। हरे कृष्ण मेहताब उड़ीसा में उत्कल केसरी की उपाधि से भी जाने जाते थे।

आनंदीबेन पटेल (जन्म- २१ नवंबर)

आनंदीबेन पटेल एक भारतीय राजनीतिज्ञ और गुजरात की पहली महिला मुख्यमंत्री है। लगातार चार बार विधानसभा का चुनाव जीतनेवाली आनंदी बेन पटेल को अच्छा प्रशासक माना जाता है। भाजपा के मनोनित प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने २१ मई, २०१४ को गुजरात के मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया था। राज्यपाल कमला बेनीवाल ने आनंदी बेन पटेल को २२ मई, २०१४ को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई। आनंदीबेन पटेल १९८७ से भारतीय जनता पार्टी में शामिल हैं। आनंदीबेन पटेल १९८० में उस वक्त नरेंद्र मोदी के संपर्क में आई जब वे संघ के प्रचारक थे। आनंदीबेन पटेल को लंबा प्रशासनिक अनुभव है। वे शहरी विकास, राजस्व और शिक्षा विभाग की जिम्मेदारी संभाल चुकी हैं।

चंद्रशेखर वेंकट रामन (निधन- २१ नवंबर)

चंद्रशेखर वेंकट रामन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वैज्ञानिक संसार में भारत को ख्याति दिलाई। प्राचीन भारत में विज्ञान की उपलब्धियां थीं जैसे- शून्य और दशमलव प्रणाली की खोज, पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के बारे में तथा आयुर्वेद के फारमूले इत्यादि। मगर पूर्णरूप से विज्ञान के प्रयोगात्मक कोण में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई थी। रामन ने उस खोये रास्ते की खोज की और नियमों का प्रतिपादन किया जिनसे स्वतंत्र भारत के विकास और प्रगति का रास्ता खुल गया। रामन ने स्वाधीन भारत में विज्ञान के अध्ययन और शोध को जो प्रोत्साहन दिया उसका अनुमान कर पाना कठिन है।

डॉ. चंद्रशेखर वेंकट रामन को उनके योगदान के लिए भारत के सर्वोच्च पुरस्कार भारत रत्न और नोबेल पुरस्कार, लेनिन पुरस्कार जैसे अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। डॉ. रामन की संगीत में भी गहरी रूचि थी। उन्होंने संगीत का भी गहरा अध्ययन किया था। संगीत वाद्य यंत्रों की ध्वनियों के बारे में डॉ. रामन ने अनुसंधान किया, जिसका एक लेख जर्मनी के एक विश्वकोश में भी प्रकाशित हुआ था। वे बहू बाजार स्थित प्रयोगशाला में कामचलाऊ उपकरणों का इस्तेमाल करके शोध कार्य करते थे। फिर उन्होंने अनेक वाद्य यंत्रों का अध्ययन किया और वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर पश्चिम देशों की इस भ्रांति को तोड़ने का प्रयास किया कि भारतीय वाद्य यंत्र विदेशी वाद्यों की तुलना में घटिया हैं।

केसरी सिंह बारहट (जन्म- २१ नवम्बर)

केसरी सिंह बारहट प्रसिद्ध राजस्थानी कवि और स्वतंत्रता सेनानी थे। उन्होंने बांग्ला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं के

साथ इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान, खगोलशास्त्र तथा ज्योतिष आदि का अध्ययन कर प्रमाणिक विद्वत्ता हासिल कर ली थी। केसरी जी के भाई जोरावर सिंह बारहट और पुत्र प्रताप सिंह बारहट ने रास बिहारी बोस के साथ लॉर्ड हार्डिंग द्वितीय की सवारी पर बम फेंकने के कार्य में भाग लिया था। केसरी सिंह बारहट ने प्रसिद्ध चेतावनी रा चुंग्ट्या नामक सोरठे रचे थे, जिन्हें पढ़कर मेवाड़ के महाराणा अत्यधिक प्रभावित हुए थे और वे १९०३ ई. में लॉर्ड कर्जन द्वारा आयोजित दिल्ली दरबार में शामिल नहीं हुए थे।

यदुनाथ सिंह (शहीद- २१ नवम्बर)

यदुनाथ सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय सैनिक थे। इन्हें यह सम्मान सन १९४८ में मरणोपरांत मिला। २१ नवम्बर १९४१ को यदुनाथ सिंह को मनचाहा काम मिल गया। उस समय वह मात्र २६ वर्ष के थे और उन्होंने फौज में प्रवेश किया। उन्हें राजपूत रेजिमेंट में लिया गया। वहीं उनको जुलाई १९४७ में लान्स नायक के रूप में तरक्की मिली और इस तरह ६ जनवरी १९४८ को वह टैनधार में अपनी टुकड़ी की अगुवाई कर रहे थे और इस जोश में थे कि वह नौशेरा तक दुश्मन को नहीं पहुंचने देंगे। उस दिन नायक यदुनाथ सिंह मोर्चे पर केवल ९ लोगों की टुकड़ी के साथ डटे हुए थे कि दुश्मन ने धावा बोल दिया।

२२ नवंबर

झलकारी बाई

२२ नवंबर १८३० बुंदेलखंड के वीर रस के लोकगीतों की प्रणेता झलकारी बाई का जन्म भोजला (झांसी) में हुआ था। वे रानी लक्ष्मीबाई की नियमित सेना में महिला शाखा दुर्गा दल की सेनापति थीं। वे रानी की हमशक्ल भी थीं।

वे प्रथम स्वाधीनता संग्राम में झांसी की रानी के साथ ब्रिटिश सेना के विरुद्ध अद्‌भुत वीरता से लड़ीं।

उनकी वीरता की गाथा आज भी बुंदेलखंड की लोकगाथाओं और लोकगीतों में सुनी जा सकती है।

उनके सम्मान में सरकार डाक टिकट भी जारी कर चुकी है। चार अप्रैल १८५७ को उनका निधन हुआ। अपने अंतिम समय में रानी को किले से भाग निकालने में वे सफल रहीं थीं।

झलकारी बाई झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की नियमित सेना में, महिला शाखा दुर्गा दल की सेनापति थीं। वे लक्ष्मीबाई की हमशक्ल भी थीं इस कारण शत्रु को धोखा देने के लिए वे रानी के वेश में भी युद्ध करती थीं। अपने अंतिम समय में भी वे रानी के वेश में युद्ध करते हुए वे अंग्रेजों के हाथों पकड़ी गयीं और रानी को किले से भाग निकलने का अवसर मिल गया। उन्होंने प्रथम स्वाधीनता संग्राम में झाँसी की रानी के साथ ब्रिटिश सेना के विरुद्ध अद्भुत वीरता से लड़ते हुए ब्रिटिश सेना के कई हमलों को विफल किया था।

मुलायम सिंह यादव (जन्म- २२ नवम्बर)

मुलायम सिंह यादव एक प्रसिद्ध राजनेता और उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री हैं। वे एक किसान नेता और जनता के बीच नेताजी तथा धरतीपुत्र के नाम से भी जाने जाते हैं। मुलायम सिंह तीन बार, १९८९ से १९९१ से १९९५ तक और २००३ से २००७ तक, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद की गरिमा बढ़ा चुके हैं।

मीरा बेन (जन्म- २२ नवम्बर)

मीरा बेन मूल नाम मैडलिन स्लेड एक ब्रिटिश सैन्य अधिकारी की बेटी थीं। इन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी जी के सिद्धांतों से प्रभावित होकर खादी का प्रचार किया था। नि:स्वार्थ उनके आदर्शों पर चलकर खादी अपनाना, पहनना और उसका प्रचार-प्रसार करना किसी विदेशी द्वारा हो तो निश्चित ही सराहनीय है। गांधीजी को मीरा बेन एक बहन, एक बेटी, एक मित्र से भी बढ़कर मिलीं, उनका हर कदम पर साथ दिया और सहारा बनीं।

शहीद लक्ष्मण नायक

२२ नवंबर, १८९९ को लक्ष्मण नायक का जन्म कोरापुट (ओड़िशा) में हुआ था। वे भुइयां जनजाति के थे। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन और बंधुआ मजदूरी के खिलाफ आदिवासियों को संगठित किया और उनका नेतृत्व किया। आदिवासी उन्हें मलकानगिरी का गांधी कहते थे।

वे २१ अगस्त १९४२ को शांतिपूर्ण आंदोलन के दौरान पकड़े गये। उन पर जीरमैया की हत्या का झूठा आरोप लगा। कोरापुट न्यायालय में उन्हें मौत की सजा सुनायी गयी और उन्हें बरहमपुर जेल भेज दिया गया। २९ मार्च १९४३ को फांसी दी गयी।

२३ नवम्बर

नीरद चन्द्र चौधरी

नीरद चन्द्र चौधरी भारत में जन्मे प्रसिद्ध बांग्ला तथा अंग्रेजी लेखक और विद्वान, जिनकी अंतिम पुस्तक थ्री हॉर्समेन ऑफ द न्यू एपोकैलिप्स (१९७७) का प्रकाशन उनके सौवें जन्मदिन से कुछ ही दिन पहले हुआ था।

नीरद चन्द्र चौधरी को अंतिम ब्रिटिश साम्राज्यवादी और अंतिम भूरा साहब कहा गया। उनकी कृति की लगातार आलोचना की गई तथा भारत के साहित्यिक जगत से उन्हें निष्कासित कर दिया गया था।

प्रकाशवीर शास्त्री (निधन- २३ नवंबर)

प्रकाशवीर शास्त्री भारतीय संसद के लोकसभा सदस्य थे। ये संस्कृत के विद्वान और आर्यसमाज के नेता के रूप में भी प्रसिद्ध थे। इनका वास्तविक नाम ओमप्रकाश त्यागी था। प्रकाशवीर शास्त्री का नाम भारतीय राजनीति में उच्चकोटि के भाषण देनेवालों में लिया जाता है। प्रकाशवीर के भाषणों में तर्क बहुत शक्तिशाली होते थे। उनके विरोधी भी उनके प्रशंसक बन जाते थे। ऐसा माना जाता है कि एक बार भारत के पूर्व प्रधानमंत्री और भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि प्रकाशवीर जी उनसे भी बेहतर वक्ता थे।

२४ नवंबर

हीरा लाल शास्त्री (जन्म- २४ नवम्बर)

हीरा लाल शास्त्री भारत के स्वंत्रता सेनानियों में से एक थे। उन्हें देश के प्रसिद्ध राजनेताओं में गिना जाता था। हीरा लाल शास्त्री को राजस्थान के प्रथम मुख्यमंत्री बनने का गौरव प्राप्त हुआ था। वे ३० मार्च, १९४९ से ५ जनवरी, १९५१ तक राजस्थान के मुख्यमंत्री रहे थे। हीरा लाल शास्त्री ने वनस्थली विद्यापीठ की स्थापना की थी। इस विद्यापीठ ने आज नारी शिक्षा की एक प्रमुख राष्ट्रीय संस्था का रूप ग्रहण कर लिया है।

सैयदा अनवरा तैमूर (जन्म- २४ नवम्बर)

सैयदा अनवरा तैमूर भारत की प्रसिद्ध मुस्लिम महिला राजनीतिज्ञ हैं। असम राज्य की राजनीति में उन्हें विशेषतौर पर पहचान मिली है। वे असम की एकमात्र महिला मुख्यमंत्री रही हैं।

मोहम्मद शफी कुरैशी (जन्म- २४ नवम्बर)

मोहम्मद शफी कुरैशी भारत के मुस्लिम राजनीतिज्ञों में से एक हैं। इन्हें जम्मू-कश्मीर में कांग्रेस पार्टी का संस्थापक माना जाता है। इन्होंने जम्मू-कश्मीर में राजनैतिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया। नेशनल कान्फ्रेंस को राष्ट्रीय कांग्रेस में बदलने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। मोहम्मद शफी कुरैशी ने जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय में वकालत भी की। सन १९६५ में आप जम्मू-कश्मीर से राज्य सभा के लिये निर्वाचित हुए। इन्होंने बिहार और मध्य प्रदेश के राज्यपाल का पदभार भी ग्रहण किया था।

गुरु तेग बहादुर (निधन- २४ नवंबर)

गुरु तेग बहादुर सिंह सिक्खों के नौवें गुरु थे। विश्व के इतिहास में धर्म एवं सिद्धांतों की रक्षा के लिए प्राणों की आहुति देनेवालों में इनका अद्वितीय स्थान है। तेग बहादुर जी के बलिदान से हिंदुओं व हिन्दू धर्म की रक्षा हुई। हिन्दू धर्म के लोग भी उन्हें याद करते और उनसे संबंधित कार्यक्रमों में भाग लेते हैं।

२५ नवंबर

सुनीतिकुमार चटर्जी (जन्म- २५ नवम्बर)

सुनीति कुमार चटर्जी को भारत के प्रसिद्ध भाषाविद, साहित्यकार तथा विद्याशास्त्री के रूप में जाना जाता है। वे एक लोकप्रिय कला प्रेमी भी थे। सुनीति कुमार की संस्कृत योग्यता को देखते हुए उन्हें जुबली शोध पुरस्कार दिया गया था। उन्होंने विदेशों में भी भारतीय कला और संस्कृति पर अनेक व्याख्यान दिए थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर का सान्निध्य भी इन्हें प्राप्त था। सुनीति कुमार चटर्जी ग्रीक, इतालवी, लैटिन, फ्रेंच, अंग्रेजी, जर्मन, फारसी, संस्कृत तथा दर्जनों आधुनिक भारतीय भाषाओं के ज्ञाता थे।

देश के प्रमुख भाषा वैज्ञानिक डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी भारतीय भाषाओं की सामर्थ्य से भलीभांति परिचित थे। हिन्दीतर विद्वानों में से हिन्दी को देश की राष्ट्रभाषा मानने वालों में वे प्रमुख व्यक्ति थे।

दुला भाया काग

२५ नवंबर १९०२ को कवि दुला भाया काग का जन्म महुवा (गुजरात) में हुआ था। चारण जाति के इस कवि ने आध्यात्मिक और भक्ति रस की कविताएं लिखीं। इनकी कविताओं का संग्रह कागवाणी १९६२ में आठ भागों में प्रकाशित हुआ। वे पद्मश्री से नवाजे गये। वे कभी स्कूल नहीं जा सके, लेकिन उनकी कविताओं को बच्चों के पाठ्यक्रम से लेकर स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों तक में सम्मिलित किया गया है। २००४ में इनके सम्मान में एक डाक टिकट जारी हुआ। इनका निधन २ फरवरी १९७७ को हुआ।

रामास्वामी परमेस्वरन (निधन- २५ नवंबर)

मेजर रामास्वामी परमेस्वरन परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९८७ में मरणोपरांत मिला। भारत की सेनाओं ने हमेशा युद्ध के लिए हथियार नहीं उठाए बल्कि ऐसा भी मौका आया जब उसकी भूमिका विश्व स्तर पर शांति बनाए रखने की रही। श्रीलंका में ऐसे ही उदाहरण के साथ भारत का नाम जुड़ा हुआ है। विस्तृत इतिहास के बीच एक प्रसंग ऑपरेशन पवन का है जो १९८७ से १९९० तक श्रीलंका में चला, जिसमें भारतीय सेना के वीर मेजर रामास्वामी परमेस्वर ने शांति विरोधी तत्वों के हाथों अपने प्राण गँवाएं और इसके लिए उन्हें भारत सरकार द्वारा परमवीर चक्र प्रदान किया गया।

यशवंतराव चव्हाण निधन- २५ नवंबर)

यशवंतराव बलवंतराव चव्हाण भारत के पाँचवें उपप्रधानमंत्री और महाराष्ट्र के प्रथम मुख्यमंत्री थे। एक समय भारत देश के प्रमुख राजनेता और केन्द्र सरकार के महत्वपूर्ण विभागों के सफल मंत्री थे। यशवंतराव चव्हाण एक मजबूत कांग्रेस नेता, स्वतंत्रता सेनानी, सहकारी नेता, सामाजिक कार्यकर्ता और लेखक थे। ये आम आदमी के नेता के रूप में लोकप्रिय थे। यशवंतराव चव्हाण ने अपने भाषणों और लेखों में दृढ़ता से समाजवादी लोकतंत्र की वकालत की और महाराष्ट्र में किसानों की बेहतरी के लिए सहकारी समितियों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

युगपुरुष साधु टी.एल. वासवानी (जन्म- २५ नवम्बर)

पुणे में साधु वासवानी की मीरा भूमि अब कर्मभूमि है। यह पवित्र भूमि अब तीर्थ स्थल बन गई है। महान कर्मयोगी संत साधु वासवानी १६ जनवरी सन १९६६ में ब्रह्मलीन हुए। अब उनके उत्तराधिकारी दादा जशन वासवानी विलक्षण विश्व विभूति उनकी ज्योति प्रज्वलित कर रहे हैं। साधु वासवानी के आशीर्वाद से दादा जशन लाखों लोगों का व्यवहार व परमार्थ के लिए मार्गदर्शन कर रहे हैं। बीमारों के उपचार के लिये उन्होंने बुधरानी इन्लैक हॉस्पिटल की स्थापना की है।

साधु वासवानी का जन्म कार्तिक एकादशी २५ नवबंबर सन १८७९ में हैदराबाद सिंध में श्री लीलाराम वासवानी के घर में हुआ। उनके जन्म का नाम श्री थांवर था। धार्मिक वातावरण में उनका पालन-पोषण हुआ। विद्यार्थी जीवन में ही वे अभ्यास के साथ-साथ नाम स्मरण करते थे। वे प्रवीण विद्यार्थी थे। वे मैट्रिक परीक्षा में सारे सिन्ध में प्रथम श्रेणी में प्रथम आये, इसलिए उन्हें मैकलियूड स्कॉलरशिप प्राप्त हुई। वे मुंबई विश्वविद्यालय की बी.ए. परीक्षा के अंग्रेजी विषय में प्रथम आए इसलिए उन्हें मुंबई विश्वविद्यालय की ओर से एल्स स्कॉलरशिप दी गई।

उन्होंने उच्चस्तरीय विद्याध्ययन के साथ-साथ गुरुवाणी, श्रीमद्भगवद्गीता, रामायण एवं अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। वे अपनी प्रवीणता व प्रतिभा के कारण कराची कॉलेज में प्राध्यापक नियुक्त हुए। कॉलेज में अध्ययन कार्य करते हुए उन्होंने एम.ए. की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। वे ब्रह्मो समाज के सम्पर्क में थे, इसलिए वे कलकत्ता के विद्या सागर कॉलेज में इतिहास व दर्शन के प्रोफेसर नियुक्त किये गए।

२९ वर्ष की आयु में प्राध्यापक वासवानी को विश्व धर्म सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया गया। यह सिन्धी समाज के लिए गौरव की बात थी। वे विदेश गये। बर्लिन में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में उन्होंने अपने व्याख्यानों द्वारा भारतीय संस्कृति सभ्यता व वेदान्त का संदेश देते हुए श्रोताओं को विभुग्ध कर दिया। उनके प्रभावोत्पादक प्रवचन श्रवण कर हजारों लोगों ने मांस भक्षण का परित्याग किया। इसलिए प्रति वर्ष उनका जन्मदिन सारे विश्व में निरामिष दिवस के रूप में मनाया जाता है। साधु वासवानी करूणा की मूर्ति थे। वे दूसरों की पीड़ा को स्व पीड़ा समझकर उसे दूर करने का प्रयास करते थे। वे न केवल मानव मात्र की सेवा करते थे किन्तु पशु पक्षियों की भी सेवा व सुरक्षा भी करते थे। उन्होंने सिन्ध में मीरा विद्या हलचल आरंभ की। मीरा स्कूलों की स्थापना कर विद्यार्थियों में शुभ संस्कारों का संचार किया, फिर भारत में पुणे में मीरा स्कूल के साथ मीरा कॉलेज खोलकर विद्यार्थियों को नई दिशा दिखाई।

देश विभाजन के पश्चात् साधु वासवानी ने पुणे में आकर स्मरण-सेवा की ज्योति प्रज्वलित की यहां मीरा भूमि में उन्होंने मीरा स्कूल, मीरा कॉलेज के साथ-साथ बीमारों की सेवा के लिए दवाखाना भी आरंभ किया। वे प्रतिदिन मीरा सत्संग हॉल में अमृत वचनों की बरखा कर प्रेमियों की प्यास पूरी करते थे। वे आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रेमियों का मार्गदर्शन करते थे। वे न केवल स्वयं दीन-दुखियों की सेवा करते थे। परंतु औरों को भी सेवा-स्मरण करने के लिए प्रेरित करते थे। वे गरीबों के मसीहा थे। साधु वासवानी ने सत् साहित्य का भी सृजन किया। उनकी सिन्धी व अंग्रेजी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। उनका साहित्य आज भी हमारा मार्गदर्शन करता है। वे गद्यकार भी थे तो पद्यकार भी थे। वे २०वीं शती के महान संत कवि थे।

श्री नूरी ग्रंथ उनकी सिंधी भक्ति काव्य का अमूल्य संग्रह है। कुछ हिन्दी गीत भी हैं। वे गुरु नानकदेव महाराज, संत कबीर, मीरा बाई, शाह लतीफ, सचल आदि संत सूफी कवियों से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं। पुणे में साधु वासवानी की मीरा भूमि अब कर्मभूमि है। यह पवित्र भूमि अब तीर्थ स्थल बन गई है। महान कर्मयोगी संत साधु वासवानी १६ जनवरी

सन १९६६ में ब्रह्मलीन हुए। अब उनके उत्तराधिकारी दादा जशन वासवानी विलक्षण विश्व विभूति उनकी ज्योति प्रज्वलित कर रहे हैं। साधु वासवानी के आशीर्वाद से दादा जशन लाखों लोगों का व्यवहार व परमार्थ के लिए मार्गदर्शन कर रहे हैं। सेवा के क्षेत्र में भी वे प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। बीमारों के उपचार के लिये उन्होंने बुधरानी इन्लैक हॉस्पिटल की स्थापना की है। मीरा भूमि में प्रति दिन अनाथों व अपाहिजों की सेवा की जाती है। अब साधु वासवानी मिशन का कार्य क्षेत्र बढ़ गया है। दादा जशन वासवानी ने देश विदेश के विभिन्न नगरों में जाकर गुरुदेव साधु वासवानी का संदेश प्रचार कर लाखों लोगों के जीवन में परिवर्तन लाया है।

२६ नवंबर

राम शरण शर्मा (२६ नवम्बर)

राम शरण शर्मा भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार और शिक्षाविद थे। वे समाज को हकीकत से रू-ब-रू करानेवाले, अन्तराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त भारतीय इतिहासकारों में से एक थे। रामशरण शर्मा भारतीय इतिहास को वंशवादी कथाओं से मुक्त कर सामाजिक और आर्थिक इतिहास लेखन की प्रक्रिया की शुरुआत करनेवालों में गिने जाते थे। वर्ष १९७० के दशक में दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के डीन के रूप में प्रोफेसर आर.एस.शर्मा के कार्यकाल के दौरान विभाग का व्यापक विस्तार किया गया था। विभाग में अधिकांश पदों की रचना का श्रेय भी प्रोफेसर शर्मा के प्रयासों को ही दिया जाता है।

वर्गीज कुरियन - (२६ नवम्बर)

वर्गीज कुरियन भारत में दुग्ध क्रांन्ति, जिसे श्वेत क्रांन्ति भी कहा जाता है, के जनक माने जाते हैं। भारत को दुनिया का सर्वाधिक दुग्ध उत्पादक देश बनाने के लिए श्वेत क्रांति लानेवाले वर्गीज कुरियन को देश में सहकारी दुग्ध के मॉडल की आधारशिला रखने का श्रेय जाता है।

२६ नवंबर १९२१ को वर्गीज कुरियन का जन्म मद्रास (चेन्नई) में हुआ था।

उन्होंने केडीसीएमपीयूएल (अमूल) के लिए ६० हजार को ऑपरेटिव सोसायटी बनायीं जिसने प्रति दिन लाखों टन दूध सप्लाई किया। इसी को ऑपरेशन फ्लड या श्वेत क्रांति कहा जाता है। वे नेशनल डेयरी डेवपलमेंट बोर्ड के संस्थापक अध्यक्ष भी बने।

वे पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्म विभूषण से सम्मानित हुए। रेमन मैग्नेसे पुरस्कार, विश्व खाद्य पुरस्कार, कृषि रत्न और अमेरिका के इंटरनेशनल पर्सन ऑफ द ईयर सम्मान से भी नवाजे गये। उनके सम्मान में आज का दिन देश में नेशनल मिल्क डे के रूप में मनाया जाता है।

नौ सिंतबर २०१२ को नाडियाड (गुजरात) में निधन हुआ।

नाथूराम प्रेमी - (२६ नवम्बर)

नाथूराम प्रेमी प्रसिद्ध लेखक, कवि, भाषाविद और सम्पादक थे। वे अपनी रचनाएँ प्रेमी उपनाम से लिखते थे। नाथूराम जी ने संस्कृत, बंगला, मराठी और गुजराती भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने मौलिक ग्रंथों के प्रकाशन के साथ-साथ भारतीय भाषाओं, विशेषत: बंगला के मूर्धन्य साहित्यकारों की रचनाओं के अनुवाद प्रकाशित करके हिन्दी के भंडार को भरने का सराहनीय कार्य सम्पन्न किया था।

रवि राय (जन्म- २६ नवंबर)

रवि राय एक राजनीतिज्ञ और पूर्व लोकसभा अध्यक्ष हैं। नौवीं लोकसभा के चुनावों ने भारत के संसदीय लोकतंत्र में एक नए युग का सूत्रपात किया। कोई भी एक राजनीतिक दल सदन में पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं कर सका और इस प्रकार

भारतीय संसद के इतिहास में पहली बार, त्रिशंकु संसद बनी। इस अभूतपूर्व राजनीतिक अनिश्चितता के बावजूद, लोकसभा के सदस्यों ने दलगत भावनाओं से ऊपर उठकर श्री रवि राय को सर्वसम्मति से नौंवी लोकसभा का अध्यक्ष बनाया। अंतर्निहित सादगी तथा पारदर्शी निष्कपटता से संपन्न रवि राय ने अपने निष्पक्ष तथा विवेकपूर्ण रवैये से अध्यक्ष पद के सम्मान तथा गरिमा में वृद्धि की।

सुनीति कुमार चटर्जी (जन्म- २६ नवंबर)

सुनीति कुमार चटर्जी को भारत के प्रसिद्ध भाषाविद्, साहित्यकार तथा विद्याशास्त्री के रूप में जाना जाता है। वे एक लोकप्रिय कला प्रेमी भी थे। सुनीति कुमार की संस्कृत योग्यता को देखते हुए उन्हें जुबली शोध पुरस्कार दिया गया था। उन्होंने विदेशों में भी भारतीय कला और संस्कृति पर अनेक व्याख्यान दिए थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर का सान्निध्य भी इन्हें प्राप्त था। सुनीति कुमार चटर्जी ग्रीक, इतालवी, लैटिन, फ्रेंच, अंग्रेजी, जर्मन, फारसी, संस्कृत तथा दर्जनों आधुनिक भारतीय भाषाओं के ज्ञाता थे।

यशपाल (वैज्ञानिक) (जन्म- २६ नवंबर)

यशपाल भारत के मशहूर वैज्ञानिक और शिक्षाविद थे। देश में वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने में उनका खास योगदान माना जाता है। उनकी उपलब्धियों का सम्मान करते हुए ही भारत सरकार से उन्हें पद्म पुरस्कारों से नवाजा था। यशपाल दूरदर्शन पर टर्निंग पाइंट नाम के एक साइंटिफिक कार्यक्रम को भी होस्ट करते थे। भारत में उनका शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान रहा है। वह शिक्षा में ओवरबर्डन पढ़ाई के सख्त विरुद्ध थे इसीलिए उन्होंने इस मुद्दे की ओर भारत सरकार का कई बार ध्यान आकर्षित किया था।

२७ नवम्बर

हरिवंश राच बच्चन (जन्म- २७ नवम्बर)

हरिवंश राय बच्चन हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध कवि और लेखक थे। इनकी प्रसिद्धि इनकी कृति मधुशाला के लिये अधिक है। बच्चन की कविता की लोकप्रियता का प्रधान कारण उसकी सहजता और संवेदनशील सरलता है और यह सहजता और सरल संवेदना उसकी अनुभूतिमूलक सत्यता के कारण उपलब्ध हो सकी। उन्होंने साहस और सत्यता के साथ सीधी-सादी भाषा और शैली में सहज ही कल्पनाशीलता और सामान्य बिम्बों से सजा-सँवार कर अपने नये गीत हिन्दी जगत को भेंट किये। हिन्दी जगत ने उत्साह से उनका स्वागत किया।

२७ नवंबर १९०७ को कवि हरिवंशराय बच्चन का जन्म इलाहाबाद में हुआ था। पीएचडी करने के बाद उन्होंने अपने नाम से श्रीवास्तव हटा कर बच्चन लगा लिया।

मधुशाला के प्रकाशन के बाद वे साहित्य जगत में मशहूर हुए। उनकी मधुकलश, निशा, निमंत्रण, नीड़ का निर्माण फिर आदि महत्वपूर्ण कृतियां हैं। दो चट्टान के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला, आत्मकथा के लिए सरस्वती सम्मान मिला। १९७६ में उन्हें पद्म भूषण से भी सम्मानित किया गया। उन्होंने इंदिरा गांधी की हत्या पर अपनी अंतिम कविता एक नवंबर १९८४ लिखी। वे राज्यसभा के सदस्य भी रहे। १८ जनवरी २००३ को मुंबई में उनकी मृत्यु हुई।

जो बसे हैं, वे उजड़ते हैं, प्रकृति के जड़ नियम से, पर किसी उजड़े हुए को फिरसे बसाना कब मना है? हरिवंश राय बच्चन को उनकी कृति दो चट्टानें को १९६८ में हिन्दी कविता के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उन्हें सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार तथा एफ्रो एशियाई सम्मेलन के कमल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। बिड़ला फाउन्डेशन ने उनकी आत्मकथा के लिए उन्हें सरस्वती सम्मान दिया था। १९५५ में इंदौर के होल्कर कॉलेज के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. शिवमंगलसिंह सुमन ने हरिवंश राय बच्चन को कवि सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए आमंत्रित किया था। हरिवंश राय बच्चन को भारत सरकार द्वारा सन १९७६ में साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था। उनका निधन- १८ जनवरी को हुआ।

गणेश वासुदेव मावलंकर (जन्म- २७ नवम्बर)

गणेश वासुदेव मावलंकर प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी और भारत की लोकसभा के प्रथम अध्यक्ष थे। इन्हें दादा साहेब के नाम से भी जाना जाता है। इनका जन्म २७ नवम्बर, १८८८ ई. को बड़ोदरा में हुआ था। अपनी शिक्षा पूर्ण करने के बाद इन्होंने अहमदाबाद से अपनी वकालत प्रारम्भ की थी। स्वतंत्रता के पश्चात इन्हें सर्वसम्मति से लोकसभा का अध्यक्ष चुना गया था। इनका कई भाषाओं पर एकाधिकार था। वासुदेव मावलंकर ने अनेक ग्रंथों की भी रचना की है।

२७ नवंबर १८८८ को लोकसभा के पहले स्पीकर गणेश वासुदेव मावलंकर का जन्म बड़ौदा (गुजरात) में हुआ था। वे दादा साहेब के नाम से लोकप्रिय थे।

वे पहली बार १९३७ में मुंबई विधानसभा के अध्यक्ष बनाये गये। फिर वे केंद्रीय असेंबली के अध्यक्ष बने। १९४७ में संविधान सभा (विधायी) के सत्र की अध्यक्षता के लिए वे चुने गये। १९४९ में वे अंतरिम संसद के अध्यक्ष बने।

१९५२ की पहली लोकसभा के लिए भी वे अध्यक्ष चुने गये।

उन्होंने अपनी जेल यात्रा के अनुभवों पर मनावतना झरना (गुजराती) पुस्तक लिखी। उन्होंने ही पंढरपुर के प्रसिद्ध मंदिर में हरिजनों के प्रवेश के लिए सत्याग्रह का नेतृत्व किया था। २७ फरवरी १९५६ को अहमदाबाद में उनका निधन हो गया।

काशी प्रसाद जायसवाल (जन्म- २७ नवम्बर)

काशी प्रसाद जायसवाल भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार एवं साहित्यकार थे। ये इतिहास तथा पुरातत्त्व के अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान थे। काशी प्रसाद जायसवाल काशी नागरी प्रचारिणी सभा के उपमंत्री भी बने थे। इन्होंने बिहार रिसर्च जनरल तथा पाटलीपुत्र नामक पत्रों का सम्पादन भी किया था। पटना संग्रहालय की स्थापना में इनका महत्वपूर्ण योगदान था। इतिहास और मुद्रा विषयक अनेक सम्मेलनों की अध्यक्षता काशी प्रसाद जी ने की थी।

विश्वनाथ प्रताप सिंह (जन्म- २७ नवम्बर)

विश्वनाथ प्रताप सिंह भारत के आठवें प्रधानमंत्री थे। राजीव गांधी सरकार के पतन के कारण बने विश्वनाथ प्रताप सिंह ने आम चुनाव के माध्यम से २ दिसम्बर, १९८९ को प्रधानमंत्री पद प्राप्त किया था। सिंह बेहद महत्वाकांक्षी होने के अतिरिक्त कुटिल राजनीतिज्ञ भी कहे जाते हैं।

शिवमंगल सिंह सुमन (निधन- २७ नवंबर)

शिवमंगल सिंह सुमन हिन्दी के शीर्ष कवियों में से एक थे। उन्हें सन १९९९ में भारत सरकार ने साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में पद्मभूषण से सम्मानित किया था। जिन्होंने सुमनजी को सुना है वे जानते हैं कि सरस्वती कैसे बहती है। सरस्वती की गुप्त धारा का वाणी में दिग्दर्शन कैसा होता है। जब वे बोलते थे तो तथ्य, उदाहरण, परंपरा, इतिहास, साहित्य, वर्तमान का इतना जीवंत चित्रण होता था कि श्रोता अपने अंदर आनंद की अनुभूति करते हुए ज्ञान और ज्ञान की विमलता से भरापूरा महसूस करता था। वह अंदर ही अंदर गूंजता रहता था और अनेकानेक अर्थों की पोटली खोलता था। सुमनजी जैसा समृद्ध वक्ता मिलना कठिन है। सुमनजी जितने ऊंचे, पूरे, भव्य व्यक्तित्व के धनी थे, ज्ञान और कवि कर्म में भी वे शिखर पुरुष थे।

सुल्तान खान (निधन- २७ नवंबर)

सुल्तान खान भारत के प्रसिद्ध सारंगी वादक और शास्त्रीय गायक थे। वे इन्दौर घराना से सम्बन्धित थे। उन्हें देश में सारंगी को पुनर्जीवित करने का श्रेय दिया जाता है। सारंगी के उस्ताद और हृदय को छूनेवाले पिया बसंती रे तथा अलबेला सजन आयो रे सरीखे गीतों को अपनी आवाज देनेवाले उस्ताद सुल्तान खान को हिन्दी संगीत जगत में विशेष सम्माननीय दर्जा प्राप्त है। उन्हें भारत के तीसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान पद्मभूषण से वर्ष २०१२ में सम्मानित किया गया था।

२८ नवम्बर

प्रमोद करण सेठी (जन्म- २८ नवम्बर)

प्रमोद करण सेठी जयपुरिया पैर (कृत्रिम पैर) का निर्माण करनेवाले प्रसिद्ध भारतीय चिकित्सक थे, जो रेमन मैग्सेसे पुरस्कार व पद्मश्री से सम्मानित थे।

२८ नवंबर १९२७ को जयपुर फुट के आविष्कारक डॉ. प्रमोद करण सेठी का जन्म वाराणसी में हुआ था। उन्होंने नि:शक्तों को कृत्रिम हाथ-पैर देकर एक नया जीवन प्रदान किया। रामचंद्र नाम के एक शिल्पी की मदद से उन्होंने जयपुर फुट का आविष्कार १९६९ में किया और विश्व को १९७० में बंगलोर के एक सम्मेलन में इसके बारे में जानकारी दी। इनका नाम गिनीज बुक में भी अंकित है।

उनके अभूतपूर्व योगदान के लिए उन्हें १९८१ में पद्मश्री और रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया। ६ जनवरी २००८ को जयपुर में ही उनका निधन हो गया।

प्रमोद करण सेठी दुनियाभर में मशहूर जयपुरिया पैर (कृत्रिम पैर) के जनक थे। श्री रामचन्द्र शर्मा के साथ मिलकर उन्होंने सन १९६९ में जयपुरिया पैर नामक सस्ता एवं लचीला कृत्रिम पैर का विकास किया।

अमर गोस्वामी (जन्म- २८ नवम्बर)

अमर गोस्वामी हिन्दी के प्रसिद्ध सात्यिकार तथा उपन्यासकार थे। वे मनोरमा और गंगा जैसी देश की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं से लंबे समय तक जुड़े रहे थे। अमर गोस्वामी साहित्यिक संस्था वैचारिकी के संस्थापक भी रहे। उन्होंने कई साहित्यिक पत्रिकाओं का संपादक भी किया था।

देवनारायण द्विवेदी (निधन- २८ नवम्बर)

देवनारायण द्विवेदी हिन्दी के प्रमुख उपन्यासकारों में से थे। इन्होंने काशी समाचार नामक एक राष्ट्रीय पत्र भी निकाला था। देवनारायण द्विवेदी की पुस्तक कर्त्तव्याघात की १९२६ में कहानी सम्राट प्रेमचन्द ने छ: पृष्ठ की समीक्षा लिखी थी। इस समय प्रेमचंद जी ने कहा था कि हिन्दी में इतना अच्छा उपन्यास हमारी नजरों से अब तक गुजरा नहीं था।

२९ नवम्बर

अली सरदार जाफरी

२९ नवंबर, १९१३ को कवि, क्रांतिकारी आलोचक व चिंतक अली सरदार जाफरी का जन्म गोंडा (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उनके काव्य संकलन सरहद को तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी अपनी लाहौर की बस यात्रा में साथ लेकर गये थे। उर्दू कविता और भारतीय साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें वर्ष १९९७ का ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। उनकी कविता रूसी, उजबेकी, फारसी, अंग्रेजी, फ्रेंच अरबी ओर कई अन्य भाषाओं में अनुदित हुई। एक अगस्त २००० को उनका मुंबई में देहांत हो गया।

अली सरदार जाफरी उर्दू भाषा के एक प्रसिद्ध साहित्यकार थे। इन्हें १९९७ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। अपने चिंतन के कारण सरदार का झुकाव वामपंथी राजनीति की ओर हुआ और वे कम्युनिस्ट पार्टी के सक्रिय सदस्य बन गए। राजनैतिक उठा-पटक का नतीजा यह हुआ कि उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा और उन्होंने कई रचनाएं जेल की सीखचों के भीतर रह कर ही लिखीं।

गुरबचन सिंह सालारिया (जन्म- २९ नवम्बर)

कैप्टन गुरबचन सिंह सालारिया परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति हैं। इन्हें यह सम्मान सन १९६१ में मरणोपरांत मिला। संयुक्त राष्ट्र संघ की शांति सेना के साथ कांगों के पक्ष में बेल्जियम के विरुद्ध बहादुरी पूर्वक प्राण न्योछावर करनेवाले योद्धाओं में कैप्टन गुरबचन सिंह सालारिया का नाम लिया जाता है जिन्हें ५ दिसम्बर १९६१ को एलिजाबेथ विला में लड़तें हुए अद्भुत पराक्रम दिखाने के लिए मरणोपरांत परमवीर चक्र दिया गया। वह उस समय केवल २६ वर्ष के थे।

जे.आर.डी. टाटा (निधन- २९ नवंबर)

जहांगीर रतनजी दादाभाई टाटा भारत के प्रसिद्ध उद्योगपति थे। आधुनिक भारत की बुनियाद रखनेवाली औद्योगिक हस्तियों में जे.आर.डी.टाटा का नाम सर्वोपरि है। इन्होंने ही देश की पहली वाणिज्यिक विमान सेवा टाटा एयरलाइंस शुरू की थी, जो आगे चलकर भारत की राष्ट्रीय विमान सेवा एयर एंडिया बन गई। इस कारण जे.आर.डी. टाटा को भारत के नागरिक उड्डयन का पिता भी कहा जाता है।

३० नवम्बर

रोमिला थापर (जन्म- ३० नवम्बर)

रोमिला थापर भारतीय इतिहासकार हैं तथा इनके अध्ययन का मुख्य विषय प्राचीन भारतीय इतिहास रहा है। पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक करने के बाद, रोमिला थापर ने लंदन विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ ओरिएण्टल एंड अफ्रीकन स्टडीज से ए.एल. बाशम के मार्गदर्शन में १९५८ में डॉक्टर की उपाधि अर्जित की। कालांतर में इन्होंने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में प्रोफेसर के पद पर कार्य किया।

थापर कॉर्नेल विश्वविद्यालय, पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय और पेरिस में कॉलेज डी फ्रांस में अतिथि प्रोफेसर हैं। वह १९८३ में भारतीय इतिहास कांग्रेस की जनरल प्रेसिडेंट और १९९९ में ब्रिटिश अकादमी की कोरेस्पोंडिंग फेलो चुनी गयी। इनके ऐतिहासिक कार्यों में हिन्दू धर्म की उत्पत्ति सामाजिक बलों के बीच एक उभरती परस्पर क्रिया के रूप में चित्रित किया है। हाल ही में इन्होंने गुजरात के प्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर के इतिहास के ऊपर लेख लिखा है।

इन्द्र कुमार गुजराल (निधन- ३० नवंबर)

इन्द्र कुमार गुजराल भारत के बारहवें प्रधानमंत्री बने जब कांग्रेस की समर्थन वापसी के भय से संयुक्त मोर्चा सरकार ने नेतृत्व परिवर्तन की उसकी मांग स्वीकार कर ली। तब एच. डी. देवगौड़ा को १० माह के पश्चात प्रधानमंत्री का पद छोड़ना पड़ा। उन्होंने २१ अप्रैल, १९९७ को अपने पद से त्यागपत्र दे दिया और इसी दिन इन्द्र कुमार गुजराल प्रधानमंत्री के पद पर नियुक्त हो गए। लेकिन यह भी ज्यादा समय तक प्रधानमंत्री के पद को सुशोभित नहीं कर सके। १९ मार्च, १९९८ को कांग्रेस द्वारा समर्थन वापस लिए जाने के बाद उन्हें भी पद छोड़ना पड़ा। इस प्रकार इन्द्र कुमार गुजराल लगभग एक वर्ष तक भारत के प्रधानमंत्री रहे।

मैत्रेयी पुष्पा (जन्म- ३० नवंबर)

मैत्रेयी पुष्पा हिंदी की प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। उन्हें हिंदी अकादमी, दिल्ली की उपाध्यक्ष नियुक्त किया गया है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी लेखनी में ग्रामीण भारत को साकार किया है। उनके लेखन में ब्रज और बुंदेल दोनों संस्कृतियों की झलक दिखाई देती है। मैत्रेयी पुष्पा को रांगेय राघव और फणीश्वर नाथ रेणु की श्रेणी की रचनाकार माना जाता है।

गुरुजाडा अप्पाराव (निधन- ३० नवंबर)

गुरुजाडा अप्पाराव आधुनिक तेलुगु भाषा के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि थे। उन्होंने कुछ समय तक अध्यापक रहने के बाद विजयनगर रियासत में नौकरी की। यहां इनको इतिहास पर शोध करने का अवसर मिला और उन्होंने कलिंग का इतिहास नामक ग्रंथ की रचना की। गुरुजाड़ा अप्पाराव राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत बड़े ओजस्वी कवि थे। उनकी कविताओं के अनेक संग्रह प्रकाशित हुए। उन्होंने जाति भेद, वर्ण भेद, आदि का विरोध किया। धर्म के ब्रह्मचार और मूर्ति पूजा में उनका विश्वास नहीं था। कविता के साथ साथ उन्होंने नाटकों, कहानियों और आलोचनाओं की भी रचना की। वे अपनी रचनाओं में जनसाधारण की भाषा का प्रयोग करते थे।

विश्वास में है अपार शक्ति (जन्म- ३० नवंबर, १८५८)

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉक्टर जगदीशचंद्र बोस ने यह खोज की कि सभी पेड़-पौधों में जीव-जंतु एवं प्राणी की भांति प्राण होते हैं, वे दु:ख-दर्द का अनुभव करते हैं। यदि पौधों को जहर दे दिया जाए, तो वे भी मर जाते हैं। अपने इस अनुसंधान का प्रदर्शन करने के दौरान इंग्लैंड में उन्होंने एक इंजेक्शन में जहर भरकर उसे एक पौधे में लगा दिया, लेकिन पौधा मरा नहीं। वहां पर एकत्रित जनसमुदाय उनकी हंसी उड़ाने लगा। चूंकि उन्हें अपनी खोज और उससे कहीं ज्यादा स्वयं पर पूरा विश्वास था, उसी वक्त उन्होंने सोचा कि जब यह पौधा इस जहर से नहीं मर सकता, तो मैं भी इस जहर से कैसे मर सकता हूं? वे उसी जहर का इंजेक्शन स्वयं में भी लगाने को तैयार हुए कि आयोजकों में से एक व्यक्ति ने उनका हाथ रोककर कहा- सर, हमने जहर के स्थान पर इस शीशी में रंगीन पानी भर दिया था। डॉक्टर बोस ने वह प्रयोग वास्तविक जहर से दोबारा किया और पौधा धीरे-धीरे मुरझा गया। उन्होंने अपने प्रयास और स्वयं पर इतना अटूट विश्वास था कि अंत में पूरे विश्व को उनकी इस खोज पर पूर्ण मान्तया देनी पड़ी। आपका विश्वास आपकी सफलता की बुनियाद है। विश्वास से ही आपके साहस में अभूतपूर्व वृद्धि होती है।

श्री जगदीश चंद्र बोस भारत के प्रसिद्ध भौतिकविद तथा पादपक्रिया वैज्ञानिक थे। जगदीश चंद्र बोस ने कई महान ग्रंथ भी लिखे हैं, जिनमें से कुछ निम्नलिखित विषयों पर आधारित हैं, जैसे सजीव तथा निर्जीव की अभिक्रियाएँ (१९०२), वनस्पतियों की अभिक्रिया (१९०६) पौधों की प्रेरक यांत्रिकी (१९२६) इत्यादि।

जगदीश चंद्र बोस

३० नवंबर १८५८ को प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री जगदीश चंद्र बोस का जन्म फरीदपुर ढाका (अब बांग्लादेश) में हुआ था। विश्व में पहली बार १८८५ में उन्होंने रेडियों तरंगों द्वारा बेतार संचार का प्रदर्शन किया (मारकोनी के प्रदर्शन से दो वर्ष पहले)

वनस्पतियों में भी जीवन होता हैं, इसे स्थापित करनेवाले वह पहले वैज्ञानिक थे। १९१७ में उन्हें नाइट की उपाधि मिली और वे रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन के फेलो चुने गये। उन्होंने बोस रिसर्च इंस्टीट्यूट की स्थापना की और १९३७ तक निदेशक रहे। २३ नवंबर १९३७ को गिरीडीह (झारखंड) में निधन।

रमेश चन्द्र दत्त (निधन- ३० नवंबर)

रमेश चन्द्र दत्त अंग्रेजी और बंगला भाषा के प्रसिद्ध लेखक थे। वे धन के बहिर्गमन की विचारधारा के प्रवर्तक तथा महान शिक्षाशास्त्री थे। १८९९ ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन की अध्यक्षता इन्होंने की थी। इनकी रचनाओं में ब्रिटिश भारत का आर्थिक इतिहास, विक्टोरिया युग में भारत और प्राचीन भारतीय सभ्यता का इतिहास आदि शामिल है। ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में रमेश चन्द्र दत्त को विशेष ख्याति प्राप्त हुई थी।

१ दिसम्बर

दादा धर्माधिकारी (निधन- १ दिसंबर)

शंकर त्रिम्बक धर्माधिकारी भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, लेखक और गांधीवादी चिंतक थे। ये गाँधी सेवा संघ के सक्रिय कार्यकर्ताओं में से एक थे। आप दादा धर्माधिकारी के नाम से अधिक जाने जाते थे। दादा धर्माधिकारी ने अपना अधिकांश समय दलितों और महिलाओं के उत्थान में लगाया। हिन्दी, संस्कृत, मराठी, बंगला, गुजराती और अंग्रेजी भाषाओं का इन्हें अच्छा ज्ञान था। एक लेखक के रूप में इनकी दो दर्जन से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं।

सुचेता कृपलानी (निधन- १ दिसंबर)

सुचेता कृपलानी अथवा सुचेता मजूमदार एक प्रसिद्ध भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एवं राजनीतिज्ञ थीं। ये उत्तर प्रदेश की चौथी और भारत की प्रथम महिला मुख्यमंत्री थीं। १९४८ से १९६० तक वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की महासचिव रहीं। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में इतिहास की प्राध्यापिका भी रहीं।

विजयलक्ष्मी पण्डित (निधन- १ दिसंबर)

विजयलक्ष्मी पण्डित एक संपन्न, कुलीन घराने से ताल्लुक रखनेवाली और पण्डित जवाहरलाल नेहरू की बहन थीं। विजयलक्ष्मी पण्डित ने भी देश की स्वतंत्रता में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लेने के कारण उन्हें जेल में बंद किया गया था। विजयलक्ष्मी एक पढ़ी-लिखी और प्रबुद्ध महिला थीं और विदेशों में आयोजित विभिन्न सम्मेलनों में उन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया था। भारत के राजनीतिक इतिहास में वह पहली महिला मंत्री थीं। संयुक्त राष्ट्र की पहली भारतीय महिला अध्यक्ष भी वही थीं। विजयलक्ष्मी पण्डित स्वतंत्र भारत की पहली महिला राजदूत थीं, जिन्होंने मॉस्को, लंदन और वॉशिंगटन में भारत का प्रतिनिधित्व किया था।

काका कालेलकर (जन्म- १ दिसम्बर)

काका कालेलकर भारत के प्रसिद्ध गांधीवादी स्वतंत्रता सेनानी, शिक्षाविद, पत्रकार और लेखक थे। काका कालेलकर देश की मुक्ति के लिए सशस्त्र संघर्ष के पक्षपाती थे। १९१५ ई. में गांधीजी से मिलने के बाद ही इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन गांधी जी के कार्यों को समर्पित कर दिया। गुजराती भाषा का भी इनको अच्छा ज्ञान था। १९२२ में ये गुजराती पत्र नवजीवन के सम्पादक भी रहे थे।

राजा महेन्द्र प्रताप (जन्म- १ दिसम्बर)

राजा महेन्द्र प्रताप एक सच्चे देशभक्त, क्रांतिकारी, पत्रकार और समाज सुधारक थे। ये आर्यन पेशवा के नाम से प्रसिद्ध थे। राजा साहब के जन्मदाता मुरसान राजवंश में राजा बहादुर की उपाधि परंपरागत और जन्मजात थी, जो गद्दी पर बैठनेवाले को स्वयं प्राप्त हो जाती थी। हाथरस राजवंश की स्थिति इससे भिन्न थी। यहां राजा की उपाधि अंग्रेजों द्वारा दी जाती थी। राजा महेन्द्र प्रताप जी की राजा की उपाधि जनता जनार्दन द्वारा प्रदत्त है। वह उन्हें अंग्रेजी दासता की विरासत

से प्राप्त उपाधि नहीं हे। सरकारी कागजों में अंग्रेज उन्हें सदा कुंवर ही लिखते रहे।

मेधा पाटकर (जन्म- १ दिसम्बर)

मेधा पाटकर भारत की प्रसिद्ध समाज सेविका के रूप में जानी जाती हैं। उन्हें नर्मदा घाटी की आवाज के रूप में पूरी दुनिया में जाना जाता है। गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित मेधा पाटकर ने सरदार सरोवर परियोजना से प्रभावित होनेवाले लगभग ३७ हजार गांवों के लोगों को अधिकार दिलाने की लड़ाई लड़ी है। उन्होंने महेश्वर बांध के विस्थापितों के आंदोलन का भी नेतृत्व किया। अरूंधती रॉय जैसी लेखिका उनकी निकट सहयोगी रही हैं।

शैतान सिंह (जन्म- १ दिसम्बर)

मेजर शैतान सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित जवान हैं। इन्हें यह सम्मान १९६२ में मरणोपरांत मिला। मेजर शैतान सिंह का शौर्य पराक्रम चीन के खिलाफ लड़ते हुए रेजांग ला मोर्चे पर अंतिम बार १८ नवम्बर १९६२ को नजर आया। वह चुशूर सेक्टर में १७ हजार फीट की ऊंचाई पर चीन की गोला बारूद से लैस भारी सेना का सामना कर रहे थे। उस मोर्चे पर उन्होंने अदम्य साहस, कुशल नेतृत्व क्षमात तथा देश के प्रति गहरी समर्पण भावना का उदाहरण प्रस्तुत किया, जिसके लिए उन्हें मरणोपरांत देश के सबसे बड़े सैनिक पुरस्कार परमवीर चक्र से सम्मानित किया गया।

२ दिसम्बर

मनोहर जोशी (जन्म- २ दिसंबर)

मनोहर गजानन जोशी एक

भारतीय राजनेता और पूर्व लोकसभा अध्यक्ष हैं। वे राजनीतिक दल शिवसेना के प्रमुख नेताओं में से एक हैं और मनोहर जोशी महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री (१४ मार्च १९९५- ३१ जनवरी १९९९) भी रह चुके हैं।

श्री एन.जी. चंद्रावरकर (जन्म- २ दिसंबर)

श्री चंद्रावरकर का जन्म १८५५ में हुआ। वह १८७८ से १८८९ तक हिंदू प्रकाश के संपादक रहे। १८८१ में वकील बने। पक्के ब्रह्मसमाजी और प्रार्थना समाज के दृढ़ स्तंभ। १८८७ में विश्वविद्यालय द्वारा बॉम्बे लेजिस्लेटिव कारउंसिल में निर्वाचित। १८९० में पुन: निर्वाचित। १९०० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में अध्यक्ष निर्वाचित। १९०९ में चीफ जस्टिस बने। १९१४ में इंदौर के दीवान बने। बॉम्बे यूनिवर्सिटी के उपकुलपति बने। बॉम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल के पहले अध्यक्ष बने। वह एक प्रबल समाज सुधारक और उदारवादी थे। १९२३ में स्वर्गवास।

३ दिसम्बर

१) भारत रत्न डॉ. राजेंद्र प्रसाद

डॉ. राजेंद्र प्रसाद का जन्म ३ दिसंबर १८८४ को बिहार प्रांत के छपरा जिलान्तर्गत जिरादेई गांव मे एक साभ्रांत परिवार में हुआ था। पिता महादेव सहाय एवं माता अत्यंत धर्मपरायण थी। प्रारंभ से ही अत्यंत प्रबुद्ध एवं मेधावी विद्यार्थी के रूप में उर्दू के माध्यम से प्रारंभिक शिक्षा के साथ उत्तरोत्तर आगे बढ़ते हुए कलकत्ता से एम.ए., एल.एल.बी. व एल.एल.एम. आदि सभी परीक्षाएं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करके, वकालत के क्षेत्र मे शीर्षस्थ वकीलों मे अग्रगण्य हो गए।

रौलट एक्ट बनने के पश्चात वकालत को तिलांजलि देकर आप असहयोग आंदोलन मे सम्मिलित होकर, अतिशय विनम्रता, असीम विद्वता, अपूर्व संगठन शक्ति, अद्वितीय राजनीतिक सूझबूझ एवं अनन्य देशभक्ति भाव के कारण स्वाधीनता संग्राम के विशिष्ट महारथियों मे गिने जाने लगे। बिहार मे किसान आंदोलन का सफल नेतृत्व करते हुए आपने सन् १९३४ में बिहार में आये भयानक भूकंप मे तन-मन-धन से सेवाएं समर्पित की। हिन्दी भाषा के प्रबल समर्थक तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति भी रहे। अपने जीवनकाल मे दो बार अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित रहकर देशहित मे अनेक विकट समस्याओं का हल निकालते हुए, संपूर्ण देश मे कांग्रेस के प्रति सौहार्द्रपूर्ण वातावरण भी स्थापित किया। १५ अगस्त, १९४७ को भारत के स्वतंत्र होने पर देश के नवीन विधान संयोजन के लिए बनाई गई। विधान निर्माण सभा के अध्यक्ष पद को गौरवान्वित करते हुए अहर्निश समर्पित राजेन्द्र प्रसाद जी ने अत्यंत दूरदर्शिता एवं सूझबूझ के साथ विधान-संयोजन का दायित्वपूर्ण किया। इस विधान के अनुसार २६ जनवरी, १९५० से भारत एक पूर्णसत्ता संपन्न स्वतंत्र प्रजातंत्र राष्ट्र घोषित किया गया तथा राजेन्द्र प्रसाद जी को भारतीय गणतंत्र का प्रथम राष्ट्रपति नियुक्त किया गया। सन् १९५२ में देश के प्रथम राष्ट्रपति के सर्वोच्च प्रतिष्ठापूर्ण पद के लिए निर्वाचित होकर, अपनी आदर्श कार्यशैली एवं समर्पित सेवाभावना के कारण जन-जन के हृदय सम्राट राजेंद्र बाबू ने सन् १९५७ मे पुन: भारत के राष्ट्रपति पद हेतु निर्वाचित होकर लगातार १२ वर्षों तक राष्ट्रपति के गरिमामंडित पद को सुशोभित किया।

राजनैतिक व्यस्तताओं के बावजूद नित्य प्रात: जागरण एवं दो तीन घंटे भगवद् भजन मे वे नियमित थे। सन् १९५४ में भारतरत्न की उपाधि से अलंकृत वे अपने वेतन का केवल चतुर्थांश ही ग्रहण करते हुए नितांत सादगीपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। राजेन्द्र बाबू उत्कृष्ट कोटि के साहित्यकार भी थे। उनकी आत्मकथा हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। २८ फरवरी, १९६३ को त्याग एवं सेवा की प्रतिमूर्ति डॉ. राजेंद्र प्रसाद की महान आत्मा विराटत्व मे लीन हो गई। उनकी अनुकरणीय जीवनशैली हमे सतत् मार्गदर्शन प्रदान करती रहेगी।

बचपन- राजेन्द्र प्रसाद का जन्म बिहार प्रान्त के छपरा जिले के जीरोदई ग्राम में ३ दिसम्बर, १८८४ में हुआ था। उनके पिता का नाम महादेव सहाय और माता का नाम शारदा देवी था। उनका संयुक्त परिवार था। उस बड़े परिवार में राजेन्द्र बाबू सबकी आँख का तारा थे। बचपन में उन्हें अपने परिवार के सदस्यों का खूब प्यार दुलार मिला क्योंकि वे उस संयुक्त परिवार में सबसे छोटे सदस्य थे।

राजेन्द्र प्रसाद की सबसे पहली याद अपने हिन्दू और मुसलमान दोस्तों के साथ चिक्का और कबड्डी खेलने की है। किशोरवय में उन्हें होली के त्यौहार का इंतजार रहता था और उसमे उनके मुलसमान दोस्त भी शामिल होते थे और मुहर्रम पर हिन्दू ताजिये निकालते थे। राजेन्द्र बाबू को बचपन में गाँव के मठ में रामायण सुनना और स्थानीय रामलीला देखना बड़ा अच्छा लगता था। घर का वातावरण ईश्वर पर पूर्ण विश्वास करता था। उनकी माता उन्हें रामायण की कहानियाँ

सुनाती जिससे उनका चरित्र बचपन में ही उत्तम रहा।

शिक्षा- जब राजेन्द्र बाबू की उम्र पाँच वर्ष की हुई तब उनकी प्रारम्भिक शिक्षा की शुरुआत हुई उनके घर पर ही फारसी और उर्दू पढ़ाने हेतु मौलवी आते थे। आगे की पढ़ाई के लिए राजेन्द्र बाबू ने छपरा के स्कूल में प्रवेश लिया तथा नियमित रूप से अध्ययन शुरू किया। सन् १९०२ ई. में उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय की मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। इस परीक्षा में राजेन्द्र प्रसाद ने तीन राज्यों के छात्रों के साथ प्रतियोगिता करते हुए प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज से एम.ए. और एल.एल.बी. की उपाधियाँ हासिल की। राजेन्द्र प्रसाद की अध्ययन में विशेष रूचि थी। वे अपनी कक्षा में हमेशा प्रथम स्थान पर रहते थे।

विवाह- राजेन्द्र बाबू का गाँव पुरानी परम्पराओं से भरपूर था। उन परम्पराओं में एक थी बालविवाह और उसी परम्परा के अनुसार राजेन्द्र बाबू का विवाह भी केवल बारह वर्ष की छोटी आयु में ही कर दिया गया। उस जमाने में उनकी बरात घोड़ों और बैलगाड़ियों पर गई थी। रास्ते में नदी बहती थी जिसे नांवों द्वारा पार करके वे वधू के घर पहुँचे थें

उनकी पत्नी का नाम राजवंशी देवी था। जो उन दिनों पर्दे में रहती थी। राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ने के बाद राजेन्द्र प्रसाद अपने घर बहुत कम आ पाते थे। यह सत्य है कि शादी के पचास वर्षों में वे अपनी पत्नी के साथ पचास महीने तक भी नहीं रह सके थे। राजेन्द्र प्रसाद को अपने परिवार से ज्यादा चिंता अपने देश की थी। वे राष्ट्र हित में खोए रहते थे। उसकी तुलना में वे अपने परिवार की कोई चिंता नहीं करते थे।

स्वतंत्रता संग्राम में राजेन्द्र बाबू- जनता की सच्चे भाव से सेवा करना तथा मन में स्वतंत्रता की भावना उनके अन्दर बचपन से ही कायम थी। उन्होंने १९०५ के बंग-भंग आंदोलन में सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में भाग लिया और १९०६ की कलकत्ता कांग्रेस में एक स्वयंसेवक के रूप में सम्मिलित हुए। अपनी प्रतिभा से उन दिनों राजेन्द्र बाबू ने गोपाल कृष्ण गोखले को बहुत प्रभावित किया। कांग्रेस के १९१६ ई. के लखनऊ अधिवेशन में राजेन्द्र प्रसाद सम्मिलित हुए वहाँ पर उनकी भेंट गांधीजी एवं अनेक बड़े बड़े नेताओं से हुई।

चम्पारन में नील उगानेवाले किसानों की दशा की जाँच करने में जिन वकीलों ने गाँधीजी को सहयोग दिया उनमें राजेन्द्र बाबू भी प्रमुख थे। गांधीजी के आदर्शों से प्रभावित होकर राजेन्द्र प्रसाद उनके पक्के अनुयायी बन गये। वे गाँधीजी से मिलने उनके आश्रम, साबरमती गये।

सन् १९२० ई. में जब महात्मा गांधी ने अंग्रेज नीति के विरोध में असहयोग आंदोलन शुरू किया तब राजेन्द्र बाबू वकालत छोड़कर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। वे कई आंदोलनों के नेता बने तथा अनेक बार जेल गये।

१९३० ई. के नमक सत्याग्रह के समय राजेन्द्र बाबू को भागलपुर के निकट अंग्रेज पुलिस की लाठियाँ भी सहन करनी पड़ी। राजेन्द्र प्रसाद को गाँधीजी के रचनात्मक कार्यों पर पूरा विश्वास था। उन्होंने गांधीजी के साथ-साथ चर्खा और खादी का प्रचार, मद्य निषेध, अस्पृश्यता निवारण, साम्प्रदायिकता एकता जैसे कार्यक्रम को आगे बढ़ाने में अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी। राजेन्द्र प्रसाद ने राष्ट्रीय भावना के प्रचार एवं प्रसार हेतु देश नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकाल कर उसका सम्पादन भी किया। अपनी योग्यता एवं त्याग भावना के कारण शीघ्र ही उनकी गणना देश के प्रथम कोटि के नेताओं में होने लगी। १९३४ में कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन के समय राजेन्द्र बाबू अध्यक्ष चुने गये।

अध्यक्ष के पद पर रहते हुए राजेन्द्र प्रसाद ने अपने साथियों को देश सेवा का पाठ पढ़ाया तथा सदैव संगठन में रहकर

तन-मन-धन से कर्म करने की प्रेरणा प्रदान की। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब अंग्रेजों ने भारत की स्वतंत्रता की माँग स्वीकार नहीं की तब गांधीजी ने भारत छोड़ो आंदोलन आरम्भ करने की घोषणा की इस पर कई नेता गिरफ्तार किए गये। राजेन्द्र प्रसाद भी गिरफ्तार हुए और लगभग तीन वर्ष तक जेल में रहे।

राजनैतिक जीवन- सन १९४६ ई. में पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में जो अंतरिम सरकार बनी उसमें राजेन्द्र बाबू को कृषि मंत्री बनाया गया। बाद में वे संविधान सभा के अध्यक्ष चुने गये। अध्यक्ष पद पर रहते हुए उन्होंने अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह बड़ी गरिमा के साथ किया।

२६ जनवरी १९५० ई. को देश का नया संविधान लागू हुआ। उसी दिन डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने भारतीय गणराज्य के प्रथम राष्ट्रपति का पद भार सँभाला। १९४९ में वे दूसरे आम चुनाव के बाद पुन: राष्ट्रपति बने। इस प्रकार अपनी ईमानदारी एवं सेवा भावना के साथ वे बारह वर्ष तक देश के सर्वोच्च पद पर रहे। राष्ट्रपति के रूप में राजेन्द्रप्रसादजी ने अनेक देशों की यात्राएँ की तथा वहाँ के लोगों को भारतीय जीवन नीतियों तथा आदर्शों से परिचित कराया।

राजेन्द्र प्रसाद के कार्यकाल में राष्ट्रपति भवन का स्वरूप बदल चुका था। उस समय राष्ट्रपति भवन के दरवाजे जनसाधारण के लिए खोल दिए गए थे। वे जन्म से किसान थे। इसलिए किसानों एवं गरीबों के हित में हरदम सोचते तथा उनके विकास हेतु सदैव प्रयासरत रहते थे। महात्मा गाँधी का सपना था कि भारत का भावी राष्ट्रपति कोई किसान होगा, उस सपने को राजेन्द्र बाबू ने साकार कर दिखाया।

भारतरत्न- १२ मई, १९६२ ई. को राष्ट्रपति पद से अवकाश ग्रहण करने के बाद उसी वर्ष उन्हें देश के सर्वोच्च नागरिक अलंकरण भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

राजेन्द्र प्रसाद अच्छे लेखक भी थे। उन्होंने अपनी नौ सौ पृष्ठों की आत्मकथा जेल में केवल स्मृति के आधार पर लिखी। उनकी अन्य प्रसिद्ध पुस्तकें हैं- खंडित भारत, चंपारन में सत्याग्रह महात्मा गांधी और बिहार महात्मा गाँधी के कुछ संस्मरण। वे हिन्दी भाषा के प्रबल पक्षधर थे और अपना काम हिन्दी में करते थे। हमेशा चर्खा चलाने का काम उन्होंने राष्ट्रपति बनने के बाद भी जारी रखा।

जीवन के अंतिम दिन- अपने जीवन के आखिरी दिनों में वे अपने पुराने स्थान सदाकूत आश्रम पटना के निकट आकर रहने लगे। यहाँ रहते हुए २८ फरवरी, १९६३ को उनके जीवन की कहानी समाप्त हुई। इस प्रकार एक महानपुरुष हमेशा हमेशा के लिए हमसे विदा हो गए। उन्होंने हमेशा सादा जीवन अपनाया। अपना काम अपने हाथ से करने को विशेष महत्व देते थे। वे अपने कमरे में झाड़ू लगाना, रसोई घर साफ करना, अपने बर्तन माँझना तथा गाड़ी के तीसरे दर्जे में यात्रा करना भी अपमानजनक नहीं मानते थे।

अपने सादे जीवन एवं उच्च विचारों के धनी राजेन्द्र प्रसाद युगों-युगों तक याद किये जायेंगे उनकी प्रेरणा के पथ पर चलकर हम उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं।

राजेन्द्र प्रसाद (जन्म- ३ दिसम्बर)

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे। राजेन्द्र प्रसाद बेहद प्रतिभाशाली और विद्वान व्यक्ति थे। राजेन्द्र प्रसाद, भारत के एकमात्र राष्ट्रपति थे जिन्होंने दो कार्यकालों तक राष्ट्रपति पद पर कार्य किया। राष्ट्रपति बनने पर भी उनका राष्ट्र के प्रति समर्पित जीवन चलता रहा। वृद्ध और नाजुक स्वास्थ्य के बावजूद उन्होंने भारत की जनता के साथ अपना निजी सम्पर्क कायम रखा। वह वर्ष में से १५० दिन रेलगाड़ी द्वारा यात्रा करते और आमतौर पर छोटे-छोटे स्टेशनों पर रूककर

सामान्य लोगों से मिलते थे। राष्ट्रपति के पद पर राजेन्द्र प्रसाद ने सदभावना के लिए कई देशों की यात्रायें भी की। उन्होंने इस आण्विक युग में शान्ति की आवश्यकता पर जोर दिया। राजेन्द्र बाबू का यह विश्वास था कि अतीत और वर्तमान में एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

३ दिसंबर १८८४ को देश के पहले राष्ट्रपति भारत रत्न डॉ. राजेंद्र प्रसाद का जन्म जीरादेई गांव (बिहार) में हुआ था। वे १९४६ में संविधान सभा के अध्यक्ष बने। २६ जनवरी १९५० को जब देश का गणतंत्र बना, वे देश के पहले राष्ट्रपति बने और मई १९६२ तक इस पद पर रहे। उन्होंने राष्ट्रपति बनने के बाद शुरू में अपने वेतन में १५% कटौती करवायी और दूसरी बार राष्ट्रपति बनने के बाद ४०% कटौती करवायी। १९६२ में उन्हें भारत रत्न दिया गया। राष्ट्रपति जीवन के बाद वे पटना के सदाकत आश्रम में रहते थे। उनका निधन २८ फरवरी १९६३ को पटना में हुआ।

भारतीय गरिमा के विलक्षण प्रतीक - डॉ. राजेंद्र प्रसाद (जन्म- ३ दिसम्बर)

भारत के अधिकांश निवासी गांवों में रहते हैं और सच्ची भारतीय जीवनधारा उनमें ही प्रवाहित होती है। वन और ग्राम भारतीय संस्कृति का उद्गम रहे हैं। इनसे कटकर हम देश की अपसेवा करते हैं। यह संदेश था भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद का जो उन्होंने ९ जनवरी १९५१ में दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में भाषण करते हुए युवा छात्रों को दिया था और देश प्रेम से ओत-प्रोत श्रोताओं को झंकृत करता हुआ यह संदेश सीधा उनके दिलों में उतरता चला गया क्योंकि डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद की कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं था।

राजेन्द्र बाबू स्वयं भारतीय किसान की प्रतिमूर्ति थें ६ फीट से कुछ अधिक लम्बा कद, ऊंची बाड़ की टेढ़ी टोपी, बंद गले का नीचा कोट था। सादी और घुटने से नीचे आधी टांगों को ढकती धोती वाला यह व्यक्तित्व जब किसानों की बात करता तो सहज ही लगती थी वह बात। सार्वजनिक जीवन में आने के बाद से राष्ट्रपति भवन के निवासकाल में सरकार समारोहों को छोड़कर, उनकी यह वेशभूषा जीवन पर्यंत जारी रही। बिहार के सारन जिले के जीरादेई गांव में ३ दिसम्बर १८८३ को एक मामूली से घर में जन्मी थी यह अद्वितीय प्रतिभा जो भारतीय गणतंत्र के प्रथम राष्ट्रपति के उच्च पद पर आसीन हुई। कानून की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद उन्होंने पेशे के रूप में वकालत को अपना लिया पर विधि के विधान में कुछ और ही लिखा था। १९१७ में वह महात्मा गांधी से चम्पारण सत्याग्रह के सिलसिले में मिले। दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश लौटे गांधी जी से यह उनकी पहली मुलाकात थी और इसी एक मुलाकात ने उन्हें इतना प्रभावित किया कि राजेंद्र बाबू ने पांच लाख रूपए वाली आय वाली वकालत को ठोकर मार दी और चम्पारण के किसानों को गोरी सरकार के अत्याचारों से बचाने के लिये संघर्षरत हो गये। बिहार शुरू से ही भूकम्प और बाढ़ का शिकार होता आया है। ऐसे सभी अवसरों पर राजेन्द्र बाबू ने पीड़ितों की भरसक सेवा की। १९१३ में दामोदर और पुनपुन नदियों में और १९२३ में गंगा में आई भीषण बाढ़ के समय राजेन्द्र बाबू ने अपने विशेष साथियों के साथ जिस तरह सहायता कार्य किया, उसकी प्रशंसा देशवासियों ने ही नहीं बल्कि अंग्रेजी सरकार तक ने की। इसी कारण १९३४ में बिहार से हुए विनाश के दौरान सरकार ने उन्हें जेल से रिहा कर सहायता कार्य में जुटने की अनुमति दे दी। आर्थिक समृद्धि की चरम सीमा पर केवल २६ जर्ङ्ग की अल्पायु में ही उन्होंने सब सुखों को त्यागकर गोपाल कृष्ण गोखले की सर्वेन्टस् ऑफ इंडिया सोसायटी की आजीवन सदस्यता ग्रहण कर ली थी। एक बार उन्होंने अपने भाई महेंद्र प्रसाद को लिखा था कि मुझे सोसायटी से जो कुछ मिलेगा, काफी होगा। मेरी यदि कुछ भी आवश्यकता या महत्वाकांक्षा है तो वह यही है कि भारत माता की कुछ तो सेवा कर सकूं। कांग्रेस ने १९३४ में उन्हें अपना अध्यक्ष चुना। बम्बई कांग्रेस के अवसर पर राजेंद्र बाबू ने देशवासियों को संदेश दिया

काम करो। काम करो। दृढ़ निश्चय के साथ काम करो। यह समझो कि हम स्वतंत्र हैं और तभी तुम स्वतंत्र होंगे। कर्म का महान संदेश देनेवाला यह कर्मयोगी जीवन पर्यंत काम में ही लगा रहा, देशसेवा के काम में। स्वतंत्र भारत में गणराज्य से पूर्व खाद्यमंत्री का पद भी उन्होंने संभाला था। एक किसान और दूरदृष्टा विचारक थे वह परन्तु उनकी अगाध विद्वता सर्वोपरि थी जिसकी वजह से भारत की संविधान सभा के अध्यक्ष पद को उन्होंने बड़ी शालीनता और योग्यता से सुशोभित किया। संविधान की हिन्दी अनुवाद समिति का मार्गदर्शन भी उन्होंने स्वयं किया। १९५० में गणतंत्र बनने के बाद उसके प्रथम राष्ट्रपति के पद पर आसीन हुए राजेन्द्र बाबू और राष्ट्र ने लगातार तीन बार उनको यह सम्मान दिया। यह सही है कि सौम्यता की मूर्ति थे पर दृढ़ता का अभाव भी नहीं था उनमें। अपने सरल और करूणापूर्ण स्वभाव की वजह से अजातशत्रु के रूप में जाना-जानेवाले राजेंद्र बाबू ने अपने ऋषितुल्य जीवन के अनेक अवसरों पर कठोर पग उठाने में अंगद के पैर के सदृश्य दृढ़ता का परिचय भी दिया। निस्पृहता इतनी थी कि उनमें कि तीसरी बार राष्ट्रपति पद संभालने के बाद वैभवशाली राष्ट्रपति भवन त्याग कर ऋषि-मुनियों का जीवन बिताने के लिये अपने पुराने सदाकत आश्रम चले जाने का निर्णय उन्होंने किया। १३ मई को दिल्ली त्यागकर राष्ट्र की रचनात्मक गतिविधियों को दिशानिर्देश देने का संकल्प लिया था उन्होंने और तभी २० अक्टूबर को भारत पर चीनी आक्रमण के दौरान जब वह जनता को रक्षा सन्नद करने के लिये निकलने वाले थे तो काल की छाया ने उन्हें हमसे छीन लिया। उनके अभूतपूर्व योगदान का ऋण यह देश कभी न चुका पायेगा।

राजेन्द्र प्रसाद भारत के एकमात्र राष्ट्रपति थे जिन्होंने दो कार्यकालों तक राष्ट्रपति पद पर कार्य किया। राष्ट्रपति के पद पर राजेन्द्र प्रसाद ने सद्भावना के लिए कई देशों की यात्रायें भी की। उन्होंने इस आण्विक युग में शान्ति की आवश्यकता पर जोर दिया। राजेन्द्र बाबू का यह विश्वास था कि अतीत और वर्तमान में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सन १९६२ में अवकाश प्राप्त करने पर राष्ट्र ने उन्हें भारत रत्न की सर्वश्रेष्ठ उपाधि से सम्मानित किया।

उनके पिता महादेव सहाय फारसी और संस्कृत दोनों ही भाषाओं के विद्वान थे, जबकि उनकी माता कमलेश्वरी देवी एक धार्मिक महिला थीं। वह अपने बेटों को रामायण की कहानियां सुनाया करती थीं। उस समय शिक्षा की शुरुआत फारसी से की जाती थी। प्रसाद जब पांच वर्ष के हुए, तब माता पिता ने उन्हें फारसी सिखाने की जिम्मेदारी एक मौलवी को दी। इस प्रारंभिक पारंपरिक शिक्षण के बाद उन्हें १२ वर्ष की अल्पायु में आगे की पढ़ाई के लिए छपरा जिला स्कूल भेजा गया। उसी दौरान किशोर राजेंद्र का विवाह राजवंशी देवी से हुआ। बाद में वे अपने बड़े भाई महेंद्र प्रसाद के साथ पढ़ाई के लिए पटना चले गए जहां उन्होंने टी.के. घोष अकादमी में दाखिला लिया। इस संस्थान में उन्होंने दो वर्ष अध्ययन किया। वर्ष १९०२ में कोलकाता विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा में उन्होंने पहला स्थान प्राप्त किया। इस उपलब्धि पर उन्हें ३० रुपये प्रतिमाह की छात्रवृत्ति से पुरस्कृत भी किया गया था। सन १९१५ में राजेंद्र बाबू ने कानून में मास्टर की उपाधि विशिष्टता के साथ हासिल की और इसके लिए उन्हें स्वर्ण पदक मिला था। कानून में ही उन्होंने डॉक्टरेट भी किया।

राजेंद्र तेजस्वी और एक महान विद्वान थे। इस बात को उनकी उत्तरपुस्तिका पद लिखी परीक्षक की टिप्पणी, परीक्षक की तुलना में परीक्षार्थी बेहतर है बखूबी प्रमाणित करती है। कानून की पढ़ाई से अधिवक्ता प्रसाद भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल हुए और बिहार प्रदेश के एक बड़े नेता के रूप में उभरे। राष्ट्रपिता

महात्मा गांधी के समर्थक प्रसाद को ब्रिटिश प्रशासन ने १९३१ के नमक सत्याग्रह के दौरान जेल में डाल दिया था। १९५० में जब भारत गणतंत्र बना तो प्रसाद को संविधान सभा द्वारा इसका प्रथम राष्ट्रपमित बनाया गया। बतौर महामहिम प्रसाद ने गैर पक्षपात और पदधारी से मुक्ति की परंपरा स्थापित की। आजादी से पूर्व, २ दिसंबर १९४६ को वह अंतरिम सरकार में खाद्य एवं कृषि मंत्री बने और आजादी के बाद २६ जनवरी १९५० को भारत को गणतंत्र राष्ट्र की दर्जा मिलने के साथ राजेंद्र बाबू देश के प्रथम राष्ट्रपति बने। वर्ष १९५७ में वह दोबारा राष्ट्रपति चुने गए। इस तरह प्रेसीडेंसी के लिए दो बार चुने जानेवाले वह एकमात्र शख्सियत थे।

प्रसाद भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन के महान नेता थे और भारतीय संविधानद के शिल्पकार भी। राष्ट्रपति पद पर रहते हुए उन्होंने कई देशों की सद्भावना यात्रा की। उन्होंने आण्विक युग में शांति बनाए रखने पर जोर दिया था। वर्ष १९६२ में राजेंद्र बाबू को भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से नवाजा गया। बाद में उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया और पटना के सदाकत आश्रम में जीवन बिताने लगे।

देश के प्रथम राष्ट्रपति और संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष होने के नाते डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की संविधान निर्माण में महती भूमिका है। संविधान विशेषज्ञों के अनुसार, भारत के लोकतंत्र का गहना कहे जानेवाले दुनिया के सबसे बेहतरीन संविधान को इस रूप में सामने लाने में डॉ. प्रसाद का अविस्मरणीय योगदान है। संविधान विशेषज्ञ सुब्रतो मुखर्जी ने डॉ. प्रसाद की पुण्यतिथि के अवसर पर बताया कि संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष होने के नाते इसमें शामिल अनेक धाराओं और कानूनों में उनका प्रभाव नजर आता है। उन्होंने कहा, संविधान का वास्तविक ढांचा और इसमें शामिल मूल अधिकारों के संयोजन में राजेंद्र बाबू की महत्वपूर्ण भूमिका है। मुखर्जी ने कहा, हमारे संविधान में अनेक बातों को दूसरे देशों के संविधान से शामिल किया गया है जैसे ब्रिटेन से संसदीय कार्य प्रणाली, अमेरिका से संघीय ढांचा और मूल अधिकार तथा आयरलैंड से नीति निर्देशक तत्वों को शामिल किया गया। लेकिन इन सबके चयन और उन्हें देश की जनता के अनुरूप बनाने में डॉ. प्रसाद के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता जगदीप धनकड़ ने कहा कि प्रारूप समिति का अध्यक्ष होने के नाते संविधान निर्माण में डॉ. प्रसाद की विशेष भूमिका थी। उन्होंने कहा लोकतंत्र के निर्माण में डॉ. प्रसाद का योगदान हमेशा स्मरणीय रहेगा खासकर मूल अधिकारों के संदर्भ में। उनके प्रयासों से ही संविधान अपने बेहतरीन रूप में हमारे सामने आ सका संविधान विशेषज्ञ इम्तियाज अहमद ने कहा कि संविधान निर्माण में तो राजेन्द्र बाबू की भूमिका थी ही लेकिन देश के प्रथम राष्ट्रपति बनने के बाद हिंदू कोड बिल जैसे कई कानूनों को शामिल किए जाने के समय उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई। डॉ. प्रसाद का जन्म बिहार के जीरादेई गांव में ३ दिसंबर १८८४ को हुआ। उनके पिता का नाम महादेव सहाय था। डॉ. प्रसाद बचपन से ही काफी मेधावी थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा में उन्होंने प्रथम स्थान प्राप्त किया और पुरस्कार के तौर पर उन्हें हर माह ३० रुपये की छात्रवृत्ति मिलती थी। शुरुआती शिक्षा विज्ञान विषय से ग्रहण करने के बाद उन्होंने कला पर ध्यान केंद्रित करने का फैसला किया। राजेन्द्र बाबू ने १९१५ में स्वर्ण पदक हासिल करते हुए एलएलएम की परीक्षा पास की और बाद में कानून के क्षेत्र में डायरेक्ट की उपाधि हासिल की। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई और कांग्रेस में शामिल हुए। वर्ष १९३४ में मुंबई अधिवेशन के दौरान उन्हें कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष चुना गया। नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वारा अध्यक्ष पद से इस्तीफा देने के बाद १९३९ में एक बार फिर उन्होंने यह पदभार संभाला। डॉ. राजेंद्र प्रसाद संविधान

निर्माता प्रारूप समिति के अध्यक्ष रहे और आजादी के बाद भारतीय गणराज्य की स्थापना के बाद देश के प्रथम राष्ट्रपति चुने गए। बारह वर्षों तक इस पद को सुशोभित करने के बाद उन्होंने १९६२ में अपने अवकाश की घोषणा कर दी। डॉ. प्रसाद को देश के सर्वोच्च सम्मान भारत रत्न से भी नवाजा गया। २८ फरवरी १९६३ को पटना के सदाकत आश्रम में उनका निधन हो गया।

देश के संविधान निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले बाबू राजेन्द्र प्रसाद के लिए देश हित से ऊपर कुछ भी नहीं था और लोकतंत्र की भावना में विश्वास करनेवाले इस महान नेता ने देश की वित्तीय व्यवस्था, कानून और अन्य कई मामलों पर भी गहन विचारविमर्श किया था। संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप ने कहा कि डॉ. राजेंद्र प्रसाद को स्वतंत्र भारत के पहले राष्ट्रपति, एक स्वतंत्रता सेनानी के अलावा भारत को संविधान देनेवाले के रूप में भी जाना जाता है। जुलाई १९४६ में जब संविधान निर्माण के लिए संविधान सभा का गठन हुआ तो राजेन्द्र बाबू उसके अध्यक्ष चुने गए। उन्होंने कहा कि भारत को विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र बनाने और उसे सबसे बड़ा लिखित संविधान देने में राजेंद्र बाबू का योगदान अतुलनीय है। विश्व के सबसे बेहतरीन संविधानों की सबसे अच्छी बातों को अपने देश की आवश्यकताओं के मुताबिक ढाल कर उन्हें अपने देश के संविधान में शामिल कर राजेन्द्र बाबू और उनके साथ के लोगों ने हमारे लिए सुनहरे भविष्य के रास्ते खोल दिए। काश्यप का कहना है कि संविधान निर्माण में राजेन्द्र बाबू की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण थी। वे न सिर्फ संविधान सभा के अध्यक्ष थे बल्कि इसके लिए बनायी गयी तथा वित्त, नियम और विधि एवं राष्ट्रीय ध्वज सहित अन्य समितियों के अध्यक्ष थे। राष्ट्रीय ध्वज, देश की वित्तीय व्यवस्था, कानून आदि राजेन्द्र बाबू की ही देन हैं। इतिहासविद् सुब्रत मुखर्जी का कहना है कि देश में जब कांग्रेस एकमात्र राजनीतिक पार्टी थी तब राजेन्द्र बाबू ने सभी लोगों के साथ मिलकर हमेशा देश हित के लिए काम किया। जब भी संविधान सभा में किसी बात को लेकर बहस हुई या फिर मतभेद हुआ तो उन्होंने उसे हमेशा लोकतांत्रिक तरीके से ही सुलझाया। जब भी कभी कोई ऐसा मुद्दा आया जिसमें लोगों के विचार जानने की बात हुई तो उन्होंने हमेशा सही सोचा और लोगों तथा देश हित की बात की। संविधान सभा और संविधान बनाने के लिए बनी तमाम समितियों से बाहर होनेवाली बातचीत के बारे में कश्यप कहते हैं कि संविधान सभा के बाहर भी बड़े नेता राजेन्द्र बाबू से मिला करते थे ताकि वे संविधान की गुत्थियों को सुलझा सकें। सभी लोग आपस में मिलकर उन बातों पर विचार करते थे जिन पर अंदर विचार करना मुश्किल होता या फिर जिनमें बहुत वक्त लगता था। सुब्रत मुखर्जी ने कहा कि जिस बात में मतभेद की आशंका होती थी या जिसमें फैसला करने में समय लग सकता था, ऐसे मामलों को राजेंद्र बाबू सभा के बाहर सबसे बात करके आसानी से सुलझा लेते थे। भाई बहनों में सबसे छोटे राजेन्द्र बाबू को अपनी मां और बड़े भाई महादेव प्रसाद से बहुत ज्यादा लगाव था। अपने भाई के कारण ही वे स्वतंत्रता संग्राम में शामिल हुए। राजेद्र बाबू के पिता महादेव सहाय अरबी और संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे और मां कमलेश्वरी देवी बेहद धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। यही वजह थी कि राजेन्द्र बाबू हमेशा सभी धर्मों का सम्मान करते थे। पांच साल की उम्र से ही राजेन्द्र बाबू को मौलवी के पास अरबी पढ़ने भेज दिया गया। बाद में उन्होंने हिन्दी और अंकगणित की पढ़ाई की। पेशे से वकील राजेन्द्र बाबू ने पटना और कलकत्ता उच्च न्यायालय में वकालत भी की। फिर वह भगिनी निवेदिता की डाउन सोसायटी में शामिल हो गए। यहीं से स्वतंत्रता संग्राम में उनकी भागीदारी शुरु हुई। उसके बाद वह महात्मा गांधी के साथ चंपारण के नीलहा आंदोलन में शामिल हुए। राजेन्द्र प्रसाद अक्टूबर १९३४ में बंबई सम्मेलन में भारतीय राष्ट्रीय

कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। १९५० में जब भारत गणतंत्र बना तो उन्हें स्वतंत्र भारत का प्रथम राष्ट्रपति चुना गया। इस पद पर १२ साल तक रहते हुए उन्होंने आगे आनेवालों के लिए एक मिसाल कायम की और १९६२ में इस पद से अवकाश लिया। अपने अंतिम दिन राजेन्द्र बाबू ने पटना के सदाकत आश्रम में गुजारे जहां २८ फरवरी १९६३ को उनका देहावसान हो गया।

भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने २६ जनवरी १९५० को भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति पद की शपथ ली। उस अवसर पर उन्होंने अपने भाषण में कहा था।

हमारे गणराज्य का उद्देश्य है इसके नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता और समता प्राप्त करना तथा इस विशाल देश की सीमाओं में निवास करनेवाले लोगों में भ्रातृ-भाव बढ़ाना जो विभिन्न धर्मों को मानते हैं, अनेक भाषाएं बोलते हैं और अपने विभिन्न रीति-रिवाजों का पालन करते हैं। हम सभी देशों के साथ मित्रता करके रहना चाहते हैं। हमारे भावी कार्यक्रमों में रोग, गरीबी और अज्ञान का उन्मूलन शामिल है।

हम उन सभी विस्थापित लोगों को फिर से बसाने तथा उन्हें फिर से स्थिरता देने के लिए चिंतित हैं जिन्होंने बड़ी मुसीबतें सही हैं और हानियां उठाई हैं और जो अभी भी मुसीबत में हैं। जो लोग किसी प्रकार के अधिकारों से वंचित हैं, उन्हें विशेष सहायता मिलनी चाहिए। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि हम उस स्वतंत्रता को सुरक्षित रखें जो आज हमें प्राप्त है लेकिन राजनीतिक स्वतंत्रता के समान ही आर्थिक और सामाजिक गणतंत्र की घोषणा तथा स्वतंत्रता भी समय की मांग है। वर्तमान हमसे अतीत की अपेक्षा और भी अधिक निष्ठा तथा बलिदान मांग रहा है।

मैं आशा और प्रार्थना करता हूं कि हमें जो अवसर मिला है, हम उसका उपयोग करने में समर्थ हो सकेंगे। हमें अपनी सारी भौतिक और शारीरिक शक्तियां अपनी जनता की सेवा में लगा देनी चाहिए।

मैं यह भी आशा करता हूं कि इस शुभ और आनंदमय दिवस के आगमन पर खुशियां मनाती हुई जनता अपनी जिम्मेदारी का अनुभव करेगी और अपने आपको फिर उस लक्ष्य की पूर्ति के लिए समर्पित्त कर देगी जिसके लिए राष्ट्रपिता जीए, काम करते रहे और अमर हो गए।

३ दिसम्बर

खुदीराम- १९ साल की उम्र में
देश पर कर दी जान निसार

भारत की जंग ए आजादी का इतिहास क्रांति की एक से बढ़कर एक घटनाओं से भरा पड़ा हे। इसी कड़ी में खुदीराम बोस का भी नाम शामिल है जो केवल १९ साल की उम्र में देश के लिए मर मिटे। पश्चिम बंगाल के मिदनापुर में तीन दिसम्बर १८८९ को जन्मे खुदीराम बोस ने आजादी की लड़ाई में शामिल होने के लिए नौवीं कक्षा के बाद ही पढ़ाई छोड़ दी थी। उन्होंने रेवोल्यूशनरी पार्टी की सदस्यता ग्रहण की और वंदे मातरम लिखे पर्चे वितरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बंगाल विभाजन के विरोध में १९०५ में चले आंदोलन में भी उनकी सक्रिय भूमिका रही। इतिहासकार शिरोल ने खुदीराम के बारे में लिखा है कि बंगाल के इस वीर को लोग अपना आदर्श मानने लगे थे। साहस के मामले में खुदीराम का

कोई जवाब नहीं था। २८ फरवरी १९०६ को जब उन्हें गिरफ्तार किया गया तो वह कैद से भाग निकले। दो महीने बाद वह फिर से पकड़े गए, लेकिन १६ मार्च १९०६ को उन्हें रिहा कर दिया गया। प्रोफेसर कांति प्रसाद के अनुसार खुदीराम का क्रांतिकारी व्यक्तित्व बचपन में ही दिखाई देने लगा था। एक बार खुदीराम ने क्रांतिकारी नेता हेमचंद्र कानूनगो का रास्ता रोककर अंग्रेजों को मारने के लिए उनसे बंदूक मांगी। खुदीराम की मांग से हेमचंद्र यह सोचकर आश्चर्यचकित रह गए कि इस बालक को कैसे पता कि उनके पास बंदूक मिल सकती है। खुदीराम ने छह दिसंबर १९०७ को नारायणगढ़ रेल्वे स्टेशन पर बंगाल के गवर्नर की विशेष ट्रेन पर हमला किया, लेकिन वह बच गया। उन्होंने १९०८ में दो अंग्रेज अधिकारियों वाटसन और पैम्फायल्ट फुलर पर बम से हमला किया, लेकिन ये दोनों भी बच निकले। बंगाल का यह वीर क्रांतिकारी मुजफ्फरपुर के सेशन जज किंग्सफोर्ड से बेहद खफा था। इस जज ने कई क्रांतिकारियों को कड़ा दंड दिया था। खुदीराम ने अपने साथी प्रफुल्ल चंद चाकी के साथ मिलकर किंग्सफोर्ड को मारने की योजना बनाई। दोनों मुजफ्फरपुर आए और ३० अप्रैल १९०८ को सेशन जज की गाड़ी में किंग्सफोर्ड की जगह उसकी परिचित दो यूरोपीय महिलाएं सवार थीं जो मारी गई। इन क्रांतिकारियों को इसका काफी अफसोस हुआ। पुलिस उनके पीछे लगी और वैनी रेल्वे स्टेशन पर उन्हें घेर लिया। खुदीराम पकड़े गए जबकि प्रफुल्ल चंद चाकी ने खुद को गोली मारकर जान दे दी। ग्यारह अगस्त १९०८ को मुजफ्फरपुर जेल में खुदीराम को फांसी दे दी गई। देश के लिए शहीद होने के समय खुदीराम की उम्र मात्र १९ साल थी। बलिदान के बाद यह वीर इतना प्रसिद्ध हो गया कि बंगाल के जुलाहे खुदीराम लिखी धोती बुनने लगे। शिरोल ने लिखा है, बंगाल के राष्ट्रवादियों के लिए वह वीर शहीद और अनुकरणीय हो गया। विद्यार्थियों तथा अन्य लोगों ने शोक मनाया। स्कूल बंद रहे और नौजवान ऐसी धोती पहनने लगे जिनकी किनारी पर खुदीराम लिखा होता था।

खुदीराम बोस भारतीय स्वाधीनता के लिए मात्र १९ साल की उम्र में हिंदुस्तान की आजादी के लिये फाँसी पर चढ़ गये। भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास क्रांतिकारियों के सैकड़ों साहसिक कारनामों से भरा पड़ा है। ऐसे ही क्रांतिकारियों की सूची में एक नाम खुदीराम बोस का है।

फौलादी काठ की काया में मातृभूमि को आजाद कराने का फौलादी संकल्प रखनेवाले और स्वतंत्रता की लड़ाई में फांसी पर चढ़नेवाले खुदीराम बोस का जन्म बंगाल के हबीबपुर नाम के गांव में हुआ। मिदनापुर में १९०३ में पढ़ाई के दौरान ब्रिटिश शासन की क्रूरताओं के विरुहद्ध उनके मन में तीव्र असंतोष उभर चुका था।

१९०५ के बंग-भंग के बाद जो जन आंदोलन हुए, उससे बंगाल का कोई गांव अछूता नहीं था। इसी समय खुदीराम की मुलाकात सत्येनबोस से हुई और वे आजादी के लिए समर्पित हुए। पढ़ाई छोड़कर वे सत्येनजी की हैण्डलूम फैक्ट्री में काम करने लगे, जो कि उन दिनों स्वतंत्रता की उग्र गतिविधियों का केंद्र थी। यहीं खुदीराम हथियार चलाने में पारंगत हुए। १९०६ के मिदनापुर के खेती और औद्योगिक मेले में देश के जागरण से संबंधी सोनार बांगला नाम के परचे बांटते हुए वे राजद्रोह के अपराध में पकड़े गए, परन्तु सिपाही को जख्मी कर बच निकले। खुदीराम बोस ने १९०७ में मिदनापुर में नरम दलीय नायक सुरेंद्रनाथ बनर्जी के विरुद्ध निकाले गए जुलूस में भाग लिया और आजादी के लिए नरम रवैये की अपेक्षा क्रांतिकारी विचार को कारगर माना। १९०८ में युगांतर दल के नेता वारीन्द्र घोष ने मुजफ्फरनगर के सत्र न्यायाधीश किंग्सफोर्ड के द्वारा कोलकाता में किए गए अमानुषी अत्याचारों का बदला लेने के लिए प्रफुल्ल चाकी के साथ खुदीराम को भी चुना था। उन्होंने ३० अप्रैल १९०८ को एक वाहन को किंग्सफोर्ड का कैरिज समझकर उस पर बम फेंका था,

जिसकी वजह से वे वैनी रेलवे स्टेशन पर पकड़े गए थे।

वंदे मातरम का जयघोष कर ११ अगस्त १९०८ को फांसी पर चढ़कर खुदीराम शहीद हुए। खुदीराम बोस की शहादत के साथ ही भारत की आजादी के आंदोलन का अग्नियुग समाप्तप्राय हो चुका था।

बाल गंगाधर तिलक उनके प्रशंसक थे और खुदीराम की क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए केसरी में लिखने की वजह से उन्हें कारावास भी भोगना पड़ा था। आजादी के आंदोलन में बम कल्ट के लिए खुदीराम बोस का नाम लिया जाता है, क्योंकि वे क्रांतिकारी तरीकों से आजादी हासिल करना चाहते थे।

इस संबंध में यह तथ्य रोचक है। क्रांतिकारी विचारों की तैयारी और प्रचार के लिए क्लब व जिम्नेशियम के माध्यम से युवाओं की भर्ती के लिए और यहां तक कि धन एकत्रित करने हेतु डकैती के लिए १९०६ से १० का युग एक संक्रमण काल था और यह युग बम कल्ट से प्रभावित था।

भारतीय स्वाधीनता संग्राम का इतिहास इस बात का गवाह है कि मात्र १९ बरस की उम्र में फांसी का फंदा चूमनेवाले खुदीराम बोस ने आत्म बलिदान देकर उस दौर के युवाओं को संगठित करने और उनमें आजादी की अलख जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

हिंदू कॉलेज में इतिहास के प्रोफेसर डी एन गुप्ता ने बताया कि जब खुदीराम बोस को फांसी दी गई तब वह महज १९ वर्ष के थे। इतनी कम उम्र में उनकी शहादत ने युवाओं को संगठित करके उनके मन में क्रांति की भावना का संचार किया और उन्हें आजादी पाने के लिए प्रेरित किया। गुप्ता ने कहा कि खुदीराम बोस उस समय के युवाओं के प्रेरणा स्रोत थे लेकिन शहादत के बारे में ज्यादा नहीं जानता। हमीदिया कॉलेज में इतिहास के प्रोफेसर रह चुके एस के त्रिवेदी ने बताया कि खुदीराम की शहादत का न केवल उस समय के युवा वर्ग बल्कि सारे समाज पर काफी प्रभाव पड़ा। आलम यह था कि लोगों ने एक खास किस्म की धोती पहनना शुरू कर दिया था जिसकी किनारी पर खुदीराम लिखा होता था। कुछ इतिहासकार खुदीराम को देश के लिए फांसी पर चढ़नेवाला सबसे कम उम्र का क्रांतिकारी देशभक्त मानते हैं। खुदीराम का जन्म ३ दिसंबर १८८९ को पश्चिम बंगाल के मिदनापुर जिले के हबीबपुर गांव में त्रैलोक्यनाथ बोस के यहां हुआ। देश को आजाद कराने के लिए वह ९वीं कक्षा में ही पढ़ाई छोड़कर स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े। बाद में वह रिवोल्यूशनरी पार्टी के सदस्य बने। वर्ष १९०५ में बंगाल विभाजन (बंगभंग) के विरोध में चलाए गए आंदोलन में भी उन्होंने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

जज पर फेंका था बम- खुदीराम बोस बंगाल के देशभक्तों को कड़ी सजा देने के कारण मुजफ्फरनगर के सेशन जज किंग्सफोर्ड से बहुत खफा थे। उन्होंने एक अन्य क्रांतिकारी प्रफुल्ल चाकी के साथ मिलकर किंग्सफोर्ड से बदला लेने के लिए ३० अप्रैल १९०८ को उनकी गाड़ी पर बम फेंका, लेकिन गाड़ी में जज की बजाय उसकी परिचित यूरोपीय महिला और उसकी बेटी सवार थी। हमले में दोनों की मौत हो गई। पुलिस उनके पीछे लग गई और वैनी रेलवे स्टेशन पर उन्हें घेर लिया गया। खुद को पुलिस से घिरा पाकर प्रफुल्ल चाकी ने गोली मारकर आत्महत्या ली जबकि खुदीराम को गिरफ्तार कर लिया गया। ११ अगस्त १९०८ को उन्हें मुजफ्फरपुर जेल में फांसी दे दी गई।

चित्रकार नंदलाल बोस

३ दिसंबर १८८२ को चित्रकार नंदलाल बोस का जन्म मुंगेर (बिहार) में हुआ था। वे अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के शिष्य रहे और शांतिनिकेतन के कलाभवन के प्रधानाध्यपक भी रहे। जवाहरलाल नेहरू के आमंत्रण पर उन्होंने भारत के संविधान की मूल प्रति को सजाने का काम किया। उन्होंने संविधान के हर भाग के लिए चित्र बनाये। २२ भागों के लिए चार सालों में २२ चित्र बनाये। उनके प्रसिद्ध चित्रों में दांडी मार्च, संथाली कन्या, सती का देह त्याग है। उन्होंने तीन पुस्तिकाएं भी लिखी। वे १९५४ में पद्मविभूषण से सन्मानित किये गये। १६ अप्रैल १९६६ को उनका देहांत हुआ।

नंदलाल बोस या नंदलाल बसु भारत के एक प्रसिद्ध चित्रकार थे। नंदलाल बोस ने संविधान की मूल प्रति का डिजाइन बनाया था। इनके प्रसिद्ध चित्रों में है- डांडी मार्च, संथाली कन्या, सती का देह त्याग इत्यादि है। नंदलाल बोस ने चित्रकारों और कला अध्यापन के अतिरिक्त इन्होंने तीन पुस्तिकाएँ भी लिखीं- रूपावली, शिल्पकला और शिल्प चर्चा। ये अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रख्यात शिष्य थे।

नंदलाल बोस था नंदलाल बसु भारत के एक प्रसिद्ध चित्रकार थे। नंदलाल बोस ने संविधान की मूल प्रति का डिजाइन बनाया था। इनके प्रसिद्ध चित्रों में हैं- डांडी मार्च, संथाली कन्या, सती का देह त्याग इत्यादि है। नंदलाल बोस ने चित्रकारों और कला अध्यापक के अतिरिक्त इन्होंने तीन पुस्तिकाएँ भी लिखीं- रूपावली, शिल्पकला और शिल्प चर्चा। ये अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रख्यात शिष्य थे।

मिताली राज (जन्म- ३ दिसम्बर)

मिताली राज भारतीय महिला क्रिकेट खिलाड़ी हैं। टेस्ट क्रिकेट मैच में दोहरा शतक बनानेवाली पहली महिला है। मिताली का मानना है कि महिला क्रिकेट को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। उसके लिए अच्छे स्पांसर को आगे आना चाहिए। मिताली दूरदर्शन पर क्रिकेट केवल इसलिए देखती है ताकि सचिन तेंदुलकर के बल्ले का जादू देख सके और उसी प्रकार के कुछ शाट्स खेल सके। उन्हें सचिन के स्ट्रेट ड्राइव और स्केवयर कट बहुत पसन्द हैं।

मिताली राज जब प्रथम बार अंतरराष्ट्रीय टेस्ट मैच में शामिल हुईं तो बिना कोई रन बनाए डक (जीरो) पर आउट हो गई। लेकिन उन्होंने अपने कैरियर में अपनी मेहनत के दम पर आगे बढ़कर दिखाया और अंतरराष्ट्रीय महिला क्रिकेट में आज तक का सर्वाधिक स्कोर २१४ रन बना कर कीर्तिमान स्थापित किया। यह इतिहास उन्होंने इंग्लैंड के खिलाफ खेलते हुए २००२ में बनाया। २००३ की क्रिकेट उपलब्धियों के लिए २२ वर्षीय मिताली राज को २१ सितंबर, २००४ को अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

ध्यान चन्द (निधन- ३ दिसम्बर)

मेजर ध्यान चन्द एक भारतीय हॉकी खिलाड़ी थे, जिनकी गिनती श्रेष्ठतम कालजयी खिलाड़ियों में होती है। मानना होगा कि हॉकी के खेल में ध्यानचंद ने लोकप्रियता का जो कीर्तिमान स्थापित किया है उसके आसपास भी आज तक दुनिया का कोई खिलाड़ी नहीं पहुंच सका। हॉकी में ध्यानचंद सा खिलाड़ी न तो हुआ है और न होगा। वह जितने बड़े खिलाड़ी थे उनते ही नेकदिल मनुष्य थे। हॉकी के इस जादूगर का असली नाम ध्यानसिंह था, लेकिन जब फौज में उन्होंने बाले तिवारी के मार्गदर्शन में हॉकी संभाली तो सभी स्नेह से उन्हें ध्यानचंद कहने लगे और इस तरह उनका नाम ही ध्यानचंद पड़ गया।

भारत के राष्ट्रीय खेल हॉकी का एक खिलाड़ी था जिसका नाम ध्यानचंद था। हिटलर उसका खेल देख रहा था उसे लगा कि उसकी हॉकी में चुम्बक हैं, क्योंकि कोई अन्य खिलाड़ी उससे गेंद नहीं ले पा रहा था। उसने ध्यानचंद की हॉकी तोड़कर देखी कुछ नहीं मिला। हिटलर ने कहा कि जर्मनी आ जाओ सब कुछ मिलेगा। मगर उस खिलाड़ी ने हिटलर के इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। ये वही खिलाड़ी है जो अंग्रेजों के समय भी भारत का तिरंगा बक्से में छिपा कर ले गया और ये वही खिलाड़ी है जिसने ओलम्पिक से लेकर कई प्रयोजनों में भारत का सर गर्व से ऊंचा किया। मगर अफसोस वो भगवान नहीं बन पाया।

४ दिसम्बर

इंद्रकुमार गुजराल (४ दिसम्बर)

भारत तथा उसके पड़ोसी देशों के बीच मैत्री को बढ़ावा देने तथा भारतीय विदेश नीति का एक नया अध्याय लिखनेवाले पूर्व प्रधानमंत्री इंद्रकुमार गुजराल के राजनीतिक जीवन की शुरुआत जहां साम्यवाद के साथ हुई थी वहीं जीवन के आखिरी वर्षों में वे जनता दल के साथ रहे।

श्री गुजराल का जन्म अविभाजित भारत के झेलम में ०४ दिसंबर १९१९ को हुआ था। उनके पिता अवतार नारायण गुजराल तथा मां कृष्णा गुजराल स्वतंत्रता सेनानी थे और परिवार से मिले आदर्शों का श्री गुजराल पर ताउम्र असर रहा। उन्होंने छात्र जीवन से ही राजनीति में प्रवेश किया और नई नई स्थापित हुई कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन बैठे। वे आजादी के बाद कांग्रेस पार्टी के सदस्य बन गये और उनकी प्रशासनिक क्षमताओं को पहचानते हुये तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने उन्हें कई विभागों का जिम्मा सौंपा। वे वर्ष १९७५ के उथल-पुथल भरे वर्षों में सूचना एवं प्रसारण मंत्री रहे और १९८० में सोवियत संघ में भारत के राजदूत भी नियुक्त हुये।

उन्होंने १९८८ में कांग्रेस को भी अलविदा कहा दिया और जनता दल का साथ लिया। जनता दल के सदस्य रहते हुये वे वर्ष १९८९ में जालंधर से संसद सदस्य निर्वाचित हुये, वर्ष १९९२ में राज्यसभा के सदस्य निर्वाचित हुये और वर्ष १९९६ में केन्द्र में एच.डी. देवेगौड़ा के नेतृत्व में बनी संयुक्त मोर्चा सरकार में देश के विदेश मंत्री बनाये गये। उन्होंने इस दौरान निकटवर्ती देशों के साथ मैत्री के पांच सिद्धांत प्रतिपादित किये जिन्हें गुजराल डाक्ट्रीन के नाम से जाना गया।

कांग्रेस उन दिनों संयुक्त मोर्चा सरकार को बाहर से समर्थन दे रही थी लेकिन उसने बीच में ही अपना समर्थन वापस ले लिया जिससे मध्यावधि चुनावों का संकट खड़ा हो गया। हालांकि कांगेस ने इस स्थिति से बचने के लिए एक नये नेता के नेतृत्ववाली संयुक्त मोर्चा सरकार को समर्थन देने की रजामंदी व्यक्त की।

श्री गुजराल ने आखिरकार २१ अप्रैल १९९७ को भारत के १२वें प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली। वह राज्यसभा से निर्वाचित होनेवाले देश के दूसरे प्रधानमंत्री थे। उनसे पहले श्री देवेगौड़ा भी राज्यसभा से ही प्रधानमंत्री निर्वाचित हुये थे।

५ दिसम्बर

जोश मलीहाबादी (जन्म- ५ दिसम्बर)

जोश मलीहाबादी २०वीं शताब्दी के महान शायरों में से एक थे। ये १९५८ तक भारत में रहे फिर पाकिस्तान चले गए। ये गजल और जन्मे तखल्लुस जोश नाम से लिखते थे और अपने जन्म स्थान का नाम भी आपने अपने तखल्लुस में जोड़ दिया तो पूरा नाम जोश मलीहाबादी हुआ।

पांच दिसंबर १८९४ को शायर जोश मलीहाबादी का जन्म लखनऊ के मलीहाबाद पंचायत में हुआ था। इनको बगावत पसंद नज्मों के कारण अंगरेजों के जमाने में शायर-ए-इनकलाब की उपाधि दी गयी थी। २० वीं शताब्दी के इस मशहूर शायर का वास्तविक नाम शब्बीर हुसन खां था।

१९५४ में उन्हें पद्मभूषण दिया गया। लेकिन वे १९५८ में उर्दू साहित्य को बढ़ावा देने के लिए पाकिस्तान चले गये। इनका निधन २२ फरवरी १९८२ को इस्लामाबाद (पाकिस्तान) में हुआ।

एच.सी.दासप्पा (जन्म- ५ दिसम्बर)

एच.सी. दासप्पा का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और देश के नव-निर्माण में समान योगदान रहा था। दासप्पा वर्ष १९२७ से १९३८ तक मैसूर असेम्बली के सदस्य रहे थे। भारत की आजादी के बाद वे मैसूर मंत्रिमण्डल में वित्त और उद्योग मंत्री भी रहे। गांधीजी के रचनात्मक कामों के प्रति दासप्पा की बड़ी श्रद्धा थी।

रघुवीर चौधरी (जन्म- ५ दिसम्बर)

रघुवीर चौधरी गुजराती भाषा के प्रसिद्ध उपन्यासकार, कवि एवं आलोचक हैं। वे अनेक समाचारपत्रों में स्तम्भलेखक भी रहे हैं। रघुवीर चौधरी ने गुजरात विश्वविद्यालय में अध्यापन किया और वर्ष १९९८ में सेवानिवृत्त हुए। गुजराती के अलावा इन्होंने हिन्दी में भी लेखन कार्य किया है। सन् १९७७ में उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया था।

अंजलि भागवत (जन्म-५ दिसम्बर)

अंजलि भागवत भारत की प्रसिद्ध महिला निशानेबाज हैं। उनका पूरा नाम अंजलि वेदपाठक भागवत है। उन्होंने २००२ के मानचेस्टर राष्ट्रमंडल खेलों में अनेकों पदक जीतकर धूम मचा दी थी। वह इन खेलों में व्यक्तिगत व पेयर स्पर्धाओं में ४ स्वर्ण पदक जीतकर सुर्खियों में आ गई। उन्हें वर्ष २००० में अर्जुन पुरस्कार दिया गया और २००२ के राष्ट्रमंडल खेलों की उपलब्धियों के लिए वर्ष २००३ में राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार दिया गया।

अमृता शेरगिल (निधन- ५ दिसम्बर)

अमृता शेरगिल खूबसूरत चित्रकारी करनेवाले चित्रकारों में से एक थीं। अमृता शेरगिल ने कैनवास पर भारत की एक नई तस्वीर उकेरी। अपनी पेंटिंग्स के बारे में अमृता का कहना था- मैंने भारत की आत्मा को एक नया रूप दिया है। यह

परिवर्तन सिर्फ विषय का नहीं, बल्कि तकनीकी भी है। अमृता ने इस प्रकार के यथार्थवादी चित्रों की रचना की थी, जिनकी सारे संसार में चर्चा हुई।

जोश मलीहाबादी

५ दिसंबर १८९४ को शायर जोश मलीहाबादी का जन्म लखनऊ के मलीहाबादी का जन्म लखनऊ के मलीहाबादी पंचायत में हुआ था। इनको बगावत पसंद नज्मों के कारण अंग्रेजों के जमाने में शायर-ए-इंकलाब ही उपाधि की गयी थी।

२० वीं शताब्दी के इस मशहूर शायर का वास्तविक नाम शब्बीर हसन खां था। १९५४ में इन्हें पद्मभूषण दिया गया लेकिन वे १९५८ में उर्दू साहित्य को बढ़ावा देने के लिए पाकिस्तान चले गये। इनका निधन २२ फरवरी १९८२ को इस्लामाबाद (पाकिस्तान) में हुआ।

६ दिसम्बर

चमकौर का युद्ध

छह दिसंबर, १७०५ को मुगल सेना और गुरु गोविंद सिंह की खालसा सेना के बीच चमकौर में युद्ध हुआ था। मुगल सेना गुरु गोविंद सिंह को पकड़ना चाहती थी। जब उन्हें पता चला कि वे सिरसा नदी के किनारे चमकौर की एक हवेली में हैं, तो उन्होंने आक्रमण कर दिया।

१० लाख सैनिकों वाली मुगेल सेना का नेतृत्व वजीर खां कर रहे थे, जबकि मुट्ठीभर खालसा सैनिकों का नेतृत्व गुरु गोविंद सिंह कर रहे थे। इस युद्ध के बाद भी मुगल सेना गुरु गोविंद सिंह को नहीं पकड़ सकी। इस युद्ध का जिक्र गुरु गोविंद सिंह ने जफरनामा में किया है।

होशियार सिंह (शहीद- ६ दिसम्बर)

मेजर होशियार सिंह परमवीर चक्र से सम्मानित भारतीय व्यक्ति है। इन्हें यह सम्मान सन १९७१ में मिला। वर्ष १९७१ के भारत पाकिस्तान युद्ध ने भारत के दो बहादुर सिपाहियों को परमवीर चक्र का हकदार बनाया। एक तो पूना हॉर्स के सेकेण्ड लेफ्टिनेंट अरुण खेत्रपाल जिन्होने अपने प्राण गँवाकर सबसे कम उम्र के परमवीर चक्र विजेता का सम्मान प्राप्त किया, दूसरे मेजर होशियार सिंह जिन्होंने ३ ग्रेनेडियर्स की अगुवाई करते हुए अपना अद्भुत पराक्रम सिखाया और दुश्मन को पराजय का मुंह देखना पड़ा। उन्होंने जम्मू कश्मीर की दूसरी ओर, शकरगड़ के पसारी क्षेत्र में जरवाल का मोर्चा फतह किया था।

८ दिसम्बर

पंडित उदय शंकर

आठ दिसंबर १९०० को नर्तक, नृत्य निर्देशक व बैले निर्माता पंडित उदय शंकर का जन्म उदयपुर (राजस्थान) में हुआ था। वे भारत में आधुनिक नृत्य के जन्मदाता के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने विश्व को भारतीय नृत्यशैली से परिचय करवाया और प्रभावशाली ढंग से स्थापित किया।

उन्होंने तांडव नृत्य, शिव-पार्वती नृत्य, लंका दहन, रिद्म ऑफ लाइफ श्रम और यंत्र, रामलीला और भगवान बुद्ध नाम से नृत्यों की रचना की थी। वे संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार व भारत सरकार द्वारा पद्मविभूषण से नवाजे गये। विश्वभारती द्वारा भी वे सम्मानित हुए।

२६ सितंबर १९७७ को कोलकाता में उनका निधन हुआ था।

पहली पंचवर्षीय योजना लोकसभा में पेश

आठ दिसंबर १९५१ को पहली पंचवर्षीय योजना (१९५१-५६) को पं. जवाहरलाल नेहरू ने लोकसभा में पेश किया था। देश की तेजी से आर्थिक विकास के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए पंचवर्षीय योजना का प्रारूप बनाया गया। जिसमें निश्चित समयावधि में काम पूरा करना सुनिश्चित किया गया।

इस योजना में मुख्य रूप से २७% राशि सिंचाई और ऊर्जा उत्पादन, १७% राशि कृषि एवं यातायात और संचार के लिए २४% राशि आवंटित की गयी थीं। इसी योजना ने पांच आईआईटी की स्थापना के लिए प्राथमिक राशि उपलब्ध करायी थी।

१० दिसम्बर

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (जन्म- १० दिसम्बर)

चक्रवर्ती राजागोपालाचारी भारतीय राजनीति के शिखर पुरुष थे जो राजाजी के नाम से भी जाने जाते हैं। राजगोपालाचारी वकील, लेखक, राजनीतिज्ञ और दार्शनिक थे। वे स्वतंत्र भारत के द्वितीय गवर्नर जनरल और प्रथम भारतीय गवर्नर जनरल थे। अपने अद्भुत और प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण राजाजी के नाम से प्रसिद्ध महान स्वतंत्रता सेनानी, समाज सुधारक, गांधीवादी राजनीतिज्ञ चक्रवर्ती राजगोपालाचारी को आधुनिक भारत के इतिहास का चाणक्य माना जाता है। राजगोपालाचारी जी की बुद्धि चातुर्थ और दृढ़ इच्छाशक्ति के कारण जवाहरलाल नेहरू, महात्मा गांधी और सरदार पटेल जैसे अनेक उच्चकोटि के कांग्रेसी नेता भी उनकी प्रशंसा करते नहीं अघाते थे।

भारत के गवर्नर जनरल रहे सी. राजगोपालाचारी महान देशभक्त होने के साथ ही समाज सुधारक, विचारक, विद्वान, लेखक और एक महान राजनेता भी थे। १० दिसंबर, १८७८ को तमिलनाडु में जन्मे राजगोपालाचारी को राजाजी के नाम से भी जाना जाता है जिनके गुंणों का बखान देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में किया है।

नेहरू ने राजाजी के बारे में लिखा है कि वह जबर्दस्त मेधा के मालिक और एक नि:स्वार्थ चरित्र हैं। उनकी विश्लेषण क्षमता गजब की है। वह भारत में सर्वोच्च मस्तिष्कवाले व्यक्तियों में से हैं। राजगोपालाचारी दुनिया में परमाणु हथियारों के जखीरे के खिलाफ थे और निरस्त्रीकरण के मुद्दे पर उन्होंने अमेरिकी नेताओं से बात भी की थी। इतिहासकार एच.के. सिंह के अनुसार राजाजी का मस्तिष्क चाणक्य जैसा था और जवाहर लाल नेहरू राजाजी के इस गुण के मुरीद थे। सिंह के मुताबिक राजाजी ने आजादी की लड़ाई में बढ़-चढ़कर भूमिका निभाई। उन्होंने १९०७ में कांग्रेस के सूरत सत्र में भाग लिया। वह गांधी जी से १९१९ में मिले और उनसे काफी प्रभावित हुए। १९२० में उन्होंने गांधी जी के असहयोग आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया। १९३० में उन्होंने दक्षिण भारत में नमक सत्याग्रह का नेतृत्व किया। राजगोपालाचारी को स्वतंत्रता संग्राम में उनकी गतिविधियों के चलते नौ महीने तक जेल में रहना पड़ा। वह १९३७ मुं मद्रास प्रेजीडेंसी के प्रीमियर बने, लेकिन १९३९ में कांग्रेस के कहने पर उन्होंने यह पद छोड़ दिया। वह १९४६ में दिल्ली में बनी अंतरिम सरकार के सदस्य रहे और लार्ड माउंटबेटन के बाद भारत के गवर्नर जनरल बने। देश को स्वतंत्रता मिलने पर वह पश्चिम बंगाल के राज्यपाल बनाए गए। राजाजी ने १९५२ में मद्रास के मुख्यमंत्री का पद संभाला और १९५४ तक इस पद पर रहे। वह गांधीजी के साथ ही जवाहर लाल नेहरू, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, सरदार वल्लभभाई पटेल और मौलाना अबुल कलाम आजाद के घनिष्ठ सहयोगी थे। गवर्नर जनरल के पद से इस्तीफा देने के बाद वह नेहरू सरकार में बतौर मंत्री शामिल किए गए। इतिहासकार अवधेश सिंह का कहना है कि बाद में नीतियों को लेकर मतभेद हो गए, लेकिन दोनों के व्यक्तिगत संबंधों पर कोई असर नहीं पड़ा। दोनों के मन में एक-दूसरे के प्रति अगाध सम्मान था। राजाजी को देश के प्रति उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए १९५४ में भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

पटेल के निधन के बाद उन्हें देश का गृहमंत्री बनाया गया। बाद में उन्होंने अपने समर्थकों के साथ मिलकर कांग्रेस छोड़ दी और कांग्रेस रिफॉर्म कमेटी का गठन कर लिया। राजगोपालाचारी ने साहित्य में भी काफी योगदान दिया और १९६६ में उनके द्वारा रचित एक भजन गीत एमएस सुब्बलक्ष्मी द्वारा संयुक्त राष्ट्र में गाया गया। पच्चीस दिसंबर १९७२ को ९४

साल की उम्र में राजाजी का निधन हो गया।

यदुनाथ सरकार (जन्म- १० दिसम्बर)

यदुनाथ अथवा जदुनाथ सरकार को एक प्रसिद्ध इतिहासकार के रूप में जाना जाता है। इन्होंने जीवन का अधिकांश समय ग्रन्थों के अध्ययन और लेखन में व्यतीत किया। इतिहास और अंग्रेजी के प्रोफेसर के रूप में भी इन्होंने अपनी विशिष्ट सेवाएँ प्रदान की थीं। यदुनाथ ने मुगल और मराठा इतिहास पर कई ग्रन्थों की प्रामाणिक सामग्री ने इन्हें ख्यातिप्राप्त इतिहासकार बना दिया।

मोहम्मद अली (जन्म- १० दिसम्बर)

मोहम्मद अली जौहर भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार और शिक्षाविद थे। इन्होंने सन १९११ में कामरेड नामक साप्ताहिक समाचार पत्र निकाला था। तत्कालीन अंग्रेज सरकार द्वारा १९१४ में इस पत्र पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था तथा मोहम्मद अली को चार साल की सजा दी गई। मोहम्मत अली ने खिलाफत आंदोलन में भी भाग लिया और अलीगढ़ में जामिया मिलिया विश्वविद्यालय की स्थापना की, जो बाद में दिल्ली लाया गया। ये रायपुर रियासत के शिक्षाधिकारी भी बनाये गए थे।

१० दिसंबर १८७८ को स्वतंत्रता सेनानी पत्रकार व शिक्षाविद मोहम्मद अली जौहर का जन्म रामपुर (यूपी) में हुआ था। उन्होंने खिलाफत आंदोलन में भाग लिया और अलीगढ़ में जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय की स्थापना की, जो बाद में दिल्ली स्थानांतरित हो गया।

उन्होंने कलकत्ता से कॉमरेड नामक अंग्रेजी साप्ताहिक निकाला और दिल्ली आने के बाद हमदर्द नाम से उर्दू दैनिक शुरू किया था।

४ जनवरी १९३१ को लंदन में उनका देहांत हुआ। लेकिन येरूशलम में उन्हें २३ जनवरी को दफनाया गया। उनके नाम से रामपुर में एक विश्वविद्यालय स्थापित किया गया है।

चौधरी दिगम्बर सिंह (निधन- १० दिसंबर)

चौधरी दिगम्बर सिंह स्वतंत्रता सेनानी थे और चार बार लोकसभा सांसद रहे। इन्होंने सहकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया। किसानों की भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन का सबसे पहला प्रयास इनका ही था। किसानों की बात संसद में कहने के लिए दिगम्बर सिंह प्रसिद्ध थे। राजा महेन्द्र प्रताप, मनीराम बागड़ी और राजा मानसिंह जैसा नेताओं को इन्होंने लोकसभा चुनावों में हराया था। लगभग २५ वर्ष ये मथुरा जिला सहकारी बैंक के अध्यक्ष रहे। मथुरा में आकाशवाणी की स्थापना करवाने का श्रेय इन्हें ही जाता है।

विश्व मानवाधिकार दिवस

१० दिसंबर को पूरी दुनिया में मानव अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। आज ही के दिन १९४८ को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (यूडीएचआर) को अपनाया था। इस दिन १९५० केा अध्यादेश

संख्या ४२३ (पांच) पारित किया गया था। मानव अधकिारों की रक्षा और बढ़ावा देने के लिए १९९३ के वियना घोषणा को वर्ल्ड कॉन्फ्रेस में स्वीकार किया गया जो आज मानव अधिकार का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। इस वर्ष थीम है- आपके अधिकार के लिए २० वर्ष के कार्य।

११ दिसम्बर

ओशो रजनीश (जन्म- ११ दिसम्बर)

ओशो रजनीश का पूरा नाम चन्द्र मोहन जैन है जो ओशो रजनीश के नाम से प्रख्यात हैं। ये अपने विवादास्पद नये धार्मिक (आध्यात्मिक) आन्दोलन के लिये मशहूर हुए और भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में रहे। बड़े-बड़े उद्योगपति, विदेशी धनुकुबेर, फिल्म अभिनेता इनके शिष्य रहे हैं।

प्रणब मुखर्जी (जन्म- ११ दिसम्बर)

प्रणब मुखर्जी भारत के १३वें एवं वर्तमान राष्ट्रपति और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक प्रमुख नेता हैं। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) ने इन्हें जुलाई २०१२ में भारत के राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार नियुक्त किया और राष्ट्रपति चुनाव में प्रणब मुखर्जी ने विरोधी उम्मीदवार पी.ए. संगमा को हराकर जीत हासिल की। २५ जुलाई, २०१२ को प्रणब मुखर्जी राष्ट्रपति पद की शपथ लेकर भारत के १३वें राष्ट्रपति बने।

उम्र साढ़े छिहत्तर साल, जन्मतिथि - ११ दिसंबर १९३५। जन्मस्थान मिराती, पश्चिम बंगाल। कांग्रेस नेता प्रणव मुखर्जी ५ फीट १ इंच लंबे हैं। राजनीति में आने से पहले वे कॉलेज में प्राफेसर थे। उनकी संसदीय यात्रा १९६९ में शुरू हुई। वे कांग्रेस पार्टी के राज्यसभा सांसद बने। प्रणव मुखर्जी को हिंदी नहीं आती है और उन्होंने माना है कि इसी वजह से वे देश के प्रधानमंत्री नहीं बन सके। यूरोमनी मैगजीन ने १९८४ में प्रणव को दुनिया का सर्वश्रेष्ठ वित्तमंत्री करार दिया। प्रणव मुखर्जी अब तक ७ बजट पेश कर चुके। वे १९४० से डायरी लिख रहे हैं। उनकी जिंदगी से जुड़ी हर घटना तिथिवार लिखी हुई है। यह डायरी उनके मृत्यु के बाद प्रकाशित होगी। प्रणव मुखर्जी बड़े पढ़ाकू के रूप में जाने जाते हैं। सामान्यतया तीन किताबें एक साथ पढ़ना शुरू करते है। वे चीनी नेता डेंग झियाओपिंग से प्रभावित हैं। अक्टूबर २०११ में उन्होंने कहा था- हमें कोई छुट्टी नहीं होती है, हम किसी छुट्टी में विश्वास नहीं करते हैं। लेकिन कभी-कभी मैं अपने परिवार के सदस्यों से दुर्गा-पूजा के समय अपने गांव के घर में मिलता हूं। उस समय मेरे परिवार के अधिकांश लोग घर आते हैं। उसे आप छुट्टी कहें या दूसरा कोई नाम दें। सिवा इस बात के कि मैं छुट्टी नहीं लेता हूं। प्रणव मुखर्जी देवी दुर्गा में विश्वास करते हैं। यह भी कहा जाता है कि दुर्गापूजा के दौरान वे तीन दिन उपवास करते हैं। ५५ साल पहले उनकी शादी हुई। एक इंटरव्यू में प्रणव मुखर्जी ने कहा कि उन्हें सुबह में टहलना पसंद है, वे ९० मीटर की परिधिवाले अपने लान के रोज ४० चक्कर लगाते है जो करीब साढ़े तीन किमी होता है। प्रणव मुखर्जी प्रतिदिन औसतन १८ घंटे काम करते हैं। वे अक्सर रात में भी काम में जुट जाते हैं। प्रणव मुखर्जी का पसंदीदा भोजन फिश कढ़ी और चावल है।

शून्य से शिखर तक प्रणव दा का सफर

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक प्रमुख नेता और गांधी परिवार से प्रणव के करीबी संबंध। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्ववाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन ने इन्हें २०१२ में देश के राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार नियुक्त किया और वे भारी मतों से जीते।

पश्चिम बंगाल के वीरभूम जिले के किरनाहर शहर के निकट मिराती गांव में एक ब्राह्मण परिवार में कामदा किंकर

मुखर्जी और राजलक्ष्मी मुखर्जी के बेटे के रूप में उनका जन्म हुआ। उनके पिता १९२० से कांग्रसे पार्टी में सक्रिय थे तथा खउउ, पश्चिम बंगाल विधान परिषद (१९५२-६४) के सदस्य और वीरभूम (पश्चिम बंगाल) जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। उनके पिता एक सम्मानित स्वतंत्रता सेनानी भी थे, जिन्हें ब्रिटिश शासन के खिलाफत के लिए १० वर्षों से अधिक समय के लिए जेल भेजा गया था। उन्होंने सूरी (वीरभूम) के सूरी विद्यासागर कॉलेज में शिक्षा पाई, जो उस समय कलकत्ता विश्वविद्यालय से संबद्ध था।

कलकत्ता विश्वविद्यालय से उन्होंने इतिहास और राजनीति विज्ञान में स्नातकोत्तर के साथ साथ कानून की उपाधि हासिल की है। वे एक वकील और कॉलेज प्राध्यापक भी रह चुके हैं। उन्हें मानद डी.लिट उपाधि भी प्राप्त है। प्रणव मुखर्जी ने एक कॉलेज प्राध्यापक के रूप में और बाद में एक पत्रकार के रूप में अपना कैरियर शुरू किया। उन्होंने जाने-माने बांग्ला प्रकाशन संस्थान देशेर डाक (मातृभूमि की पुकार) के लिए काम किया। वे बंगीय साहित्य परिषद के ट्रस्टी और बाद में निखिल भारत बंग साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बने।

उनका संसदीय कैरियर करीब पांच दशक पुराना है, जो १९६९ में कांग्रेस पार्टी के राज्यसभा सदस्य के रूप में (उच्च सदन) शुरू हुआ और वह १९७५, १९८१, १९९३ और १९९९ में फिर से चुने गए। १९७३ में वे औद्योगिक विकास विभाग के केंद्रीय उप मंत्री के रूप में मंत्रिमंडल मेंशामिल हुए। वे सन १९८२ से १९८४ तक कई कैबिनेट पदों के लिए चुने जाते रहे और सन १९८४ में, यूरोमनी पत्रिका के एक सर्वेक्षण में उनका विश्व के सबसे अच्छे वित्त मंत्री के रूप में मूल्यांकन किया गया। उनका कार्यकाल भारत के अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) के ऋण की १.१ अरब अमरीकी डॉलर की आखिरी किस्त नहीं अदा कर पाने के लिए उल्लेखनीय रहा। वित्त मंत्री के रूप में प्रणव के कार्यकाल के दौरान डॉ. मनमोहन सिंह भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर थे। वे इंदिरा गांधी की हत्या के बाद हुए लोकसभा चुनाव के बाद राजीव गांधी की समर्थक मंडली के षडयंत्र के शिकार हुए जिसने इन्हें मंत्रिमंडल में शामिल नहीं किया। एक छोटी अवधि के लिए कांग्रेस पार्टी से उन्हें निकाल दिया गया था और उस दौरान उन्होंने अपने राजनीतिक दल राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस का गठन किया, लेकिन बाद में सन १९८९ में राजीव गांधी के साथ समझौता होने के बाद उसका कांग्रेस पार्टी में विलय हो गया। उनका राजनीतिक कैरियर तब पुनर्जीवित हो उठा, जब पी.वी. नरसिंह राव ने उन्हें योजना आयोग के उपाध्यक्ष के रूप में और बाद में एक केंद्रीय कैबिनेट मंत्री के तौर पर नियुक्त करने का फैसला किया। उन्होंने राव के मंत्रिमंडल में १९९५ से १९९६ तक पहली बार विदेश मंत्री के रूप में कार्य किया। १९९७ में उन्हें उत्कृष्ट सांसद चुना गया।

सन १९८५ के बाद से वह कांग्रेस की पश्चिम बंगाल राज्य इकाई के भी अध्यक्ष हैं। सन २००४ में, जब कांग्रेस ने गठबंधन सरकार के अगुआ के रूप में सरकार बनायी, तो कांग्रेस के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह सिर्फ एक राज्यसभा सांसद थे। इसलिए जंगीपु (लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र) से पहली बार लोकसभा चुनाव जीतनेवाले प्रणव मुखर्जी को लोकसभा में सदन का नेता बनाया गया। उन्हें रक्षा, वित्त, विदेश विषयक मंत्रालय, राजस्व, नौवहन, परिवहन, संचार, आर्थिक मामले, वाणिज्य और उद्योग, समेत विभिन्न महत्वपूर्ण मंत्रालयों के मंत्री होने का गौरव भी हासिल है। वह कांग्रेस संसदीय दल और कांग्रेस विधायक दल के नेता रहें, जिसमें देश के सभी कांग्रेस सांसद और विधायक शामिल होते हैं, साथ-साथ वह लोकसभा में सदन के नेता, बंगाल प्रदेश कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष, कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की मंत्रिपरिषद में केंद्रीय वित्त मंत्री रहे। लोकसभा चुनावों से पहले जब प्रधानमंत्री ने बाई-पास सर्जरी कराई, प्रणव, विदेश मंत्रालय में केंद्रीय मंत्री होने के बावजूद राजनैतिक मामलों की कैबिनेट समिति के अध्यक्ष और वित्त

मंत्रालय में केंद्रीय मंत्री का अतिरिक्त प्रभार लेकर मंत्रिमंडल के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

१० अक्टूबर २००८ को मुखर्जी और अमेरिकी विदेश सचिव कोंडोलीजा राइस ने धारा १२३ समझौते पर हस्ताक्षर किए। वे अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक और अफ्रीकी विकास बैंक के प्रशासक बोर्ड के सदस्य हैं। सन १९८४ में उन्होंने आईएमएफ और विश्व बैंक से जुड़े ग्रुप २४ की बैठक की अध्यक्षता की। मई और नवम्बर १९९५ के बीच उन्होंने सार्क मंत्रिपरिषद सम्मेलन की अध्यक्षता की।

मुखर्जी को पार्टी के भीतर व सामाजिक नीतियों के क्षेत्र में काफी सम्मान मिलता है। अन्य प्रचार माध्यमों में उन्हें बेजोड़ स्मरणशक्ति वाला आंकड़ाप्रेमी और अपना अस्तित्व बरकरार रखने की अचूक इच्छाशक्ति रखनेवाले एक राजनेता के रूप में वर्णित किया जाता है।

जब सोनिया गांधी अनिच्छा के साथ राजनीति में शामिल होने के लिए राजी हुईं तब प्रणव उनके प्रमुख परामर्शदाताओं में से रहे, जिन्होंने कठिन परिस्थितियों में उन्हें उदाहरणों के जरिये बताया कि उनकी सास इंदिरा गांधी इस तरह के हालात से कैसे निपटती। मुखर्जी की अमोघ निष्ठा और योग्यता ने उन्हें सोनिया गांधी और मनमोहन सिंह के करीब लाया और इस वजह से जब २००४ में पार्टी सत्ता में आयी तो उन्हें भारत के रक्षा मंत्री के प्रतिष्ठित पद पर पहुंचने में मदद मिली। सन १९९१ से १९९६ तक वे योजना आयोग के उपाध्यक्ष पद पर रहे।

२००५ के प्रारंभ में पेटेंट संशोधन बिल पर समझौते के दौरान उनकी प्रतिभा के दर्शन हुए। कांग्रेस एक विधेयक पारित करने के लिए प्रतिबद्ध थी, लेकिन संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन में शामिल वाममोर्चे के कुछ घटक दल बौद्धिक संपदा के एकाधिकार के कुछ पहलुओं का परंपरागत रूप से विरोध कर रहे थे। रक्षा मंत्री के रूप में प्रणव मामले में औपचारिक रूप से शामिल नहीं थे, लेकिन बातचीत के कौशल को देखकर उन्हें आमंत्रित किया गया था। वह उन्होंने ज्योति बसु सहित कई पुराने गठबंधनों को मनाकर मध्यस्थता के कुछ नये बिंदु तय किये, जिसमें उत्पाद पेटेंट के अलावा और कुछ और बातें शामिल थीं। तब उन्हें, वाणिज्य मंत्री कमल नाथ सहित अपने सहयोगियों को यह कहकर मनाना पड़ा कि; कोई कानून नहीं रहने से बेहतर है एक अपूर्ण कानून बनना। अंत में २३ मार्च २००५ को बिल को मंजूरी दे दी गई।

२४ अक्टूबर २००६ को उन्हें भारत का विदेश मंत्री नियुक्त किया गया। रक्षा मंत्रालय में उनकी जगह ए.के. एंटनी ने ली। प्रणव मुखर्जी के नाम पर एक बार भारतीय राष्ट्रपति जैसे सम्मानजनक पद के लिए भी विचार किया गया था। लेकिन केंद्रीय मंत्रिमंडल में व्यावहारिक रूप से उनके अपरिहार्य योगदान को देखते हुए नाम हटा लिया गया था। मुखर्जी की वर्तमान विरासत में अमेरिकी सरकार के साथ असैनिक परमाणु समझौते पर भारत-अमेरिका के सफलतापूर्वक हस्ताक्षर और परमाणु अप्रसार संधि पर दस्तखत नहीं होने के बावजूद असैन्य परमाणु व्यापार में भाग लेने के लिए परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह के साथ हुआ हस्ताक्षर शामिल है। सन २००७ में उन्हें भारत के दूसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान पद्म विभूषण से नवाजा गया।

मनमोहन सिंह की दूसरी सरकार में श्री मुखर्जी भारत के वित्तमंत्री बने, जिस पद पर वे पहले १९८० के दशक में काम कर चुके थे। ६ जुलाई, २००९ को उन्होंने सरकार का सालाना बजट पेश किया। इसमें उन्होंने (क्षुब्ध करनेवाले) फ्रिंज बेनिफिट टैक्स और कमोडिटीज ट्रांजक्शन कर को हटाने सहित कई तरह के कर सुधारों की घोषणा की। उन्होंने ऐलान किया कि वित्त मंत्रालय की हालत इतनी अच्छी है कि माल और सेवा कर लागू कर सके, जिसे महत्वपूर्ण कॉरपोरेट अधिकारियों और अर्थशास्त्रियों ने सराहा। उन्होंने राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, लड़कियों की साक्षरता और

स्वास्थ्य जैसे सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं के लिए और धन का प्रावधान किया। इसके अलावा उन्होंने राष्ट्रीय राजमार्ग विकास कार्यक्रम, बिजलीकरण का विस्तार और जवाहर नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन की तरह बुनियादी सुविधाओं वाले कार्यक्रमों का भी विस्तार किया। हालांकि, कई लोगों ने १९९१ के बाद से सबसे अधिक बढ़ रहे राजकोषीय घाटे के बारे में चिंता व्यक्त की। श्री मुखर्जी ने कहा कि सरकारी खर्च में विस्तार केवल अस्थायी है और सरकार वित्तीय दूरदर्शिता के सिद्धांत के प्रति प्रतिबद्ध है।

विश्वनाथन आनंद (जन्म- ११ दिसम्बर)

विश्वनाथन आनंद भारत के प्रसिद्ध शतरंज खिलाड़ी, अंतर्राष्ट्रीय ग्रैंडमास्टर एवं पूर्व विश्व चैंपियन हैं। विश्वनाथन आनंद अब तक पाँच बार विश्व शतरंज चैंपियन बन चुके हैं। वर्ष २००० में पहली बार विश्व चैंपियन बने विश्वनाथन आनंद, वर्ष २००७ से अब तक (२०१२) लगातार चार बार विश्व चैंपियन हैं।

सुब्रह्मण्य भारती (जन्म- ११ दिसम्बर)

सुब्रह्मण्य भारती भारत के महान कवियों में से एक थे, जिन्होंने तमिल भाषा में काव्य रचनाएँ कीं। इन्हें महाकवि भरतियार के नाम से भी जाना जाता है। भारती एक जुझारू शिक्षक, देशप्रेमी और महान कवि थे। आपकी देश प्रेम की कविताएँ इतनी श्रेष्ठ हैं कि आपको भारती उपनाम से ही पुकारा जाने लगा। तमिल भाषा के महाकवि सुब्रमण्यम भारती ऐसे साहित्यकार थे, जो सक्रिय रूप से स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल रहे, जबकि उनकी रचनाओं से प्रेरित होकर दक्षिण भारत में आम लोग आजादी की लड़ाई में कूद पड़े। ये ऐसे महान कवियों में से एक थे, जिनकी पकड़ हिंदी, बंगाली, संस्कृत, अंग्रेजी आदि कई भाषाओं पर थी, पर तमिल उनके लिए सबसे प्रिय और मीठी भाषा थी। उनका गद्य और पद्य दोनों विधाओं पर समान अधिकार था।

१२ दिसम्बर

नित्यानंद स्वामी (राजनीतिज्ञ)- निधन- १२ दिसंबर

नित्यानंद स्वामी उत्तराखंड के पहले मुख्यमंत्री और भारतीय जनता पार्टी के वयोवृद्ध नेता थे। जब ९ नवंबर २००० को उत्तर प्रदेश से उत्तराखंड को अलग किया गया तो उस वक्त भारतीय जनता पार्टी की सरकार थी। संवैधानिक प्रक्रिया के तहत भारतीय जनता पार्टी के ही किसी वरिष्ठ नेता को अगले चुनाव तक मुख्यमंत्री बनाया जाता था।

मुल्कराज आनंद (जन्म- १२ दिसम्बर)

१२ दिसबंर १९०५ को लेखक मुल्कराज आनंद का जन्म पेशावर (पाकिस्तान) में हुआ था।

अंग्रेजी भाषा में साहित्य लिखनेवाले पहले भारतीय माने जाते है, अनटचेबल (१९३५) और कुली (१९३६) नामक उपन्यासों से उन्हें प्रसिद्धि मिली।

१९४५ में वे इंग्लैंड से स्वदेश लौटे। मार्ग नाम से एक कला पत्रिका शुरू की। द विलेज, द स्वार्ड एंड द सिकल, द बिग हार्ट, सेवेन एजेज ऑफ मैन इत्यादि कुछ प्रसिद्ध कृतियां हैं। १९६७ में वे पद्मभूषण से सम्नानित हुए। २८ सितंबर २००४ को पुणे में निधन हुआ था।

१३ दिसम्बर

इलाचन्द्र जोशी (जन्म- १३ दिसंबर)

इलाचन्द्र जोशी हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के अपारम्भकर्ता माने जाते हैं। जोशी जी ने अधिकांश साहित्यकारों की तरह अपनी साहित्यिक यात्रा काव्य-रचना से ही आरम्भ की। पर्वतीय-जीवन विशेषकर वनस्पतियों से आच्छादित अल्मोड़ा और उसके आस-पास के पर्वत-शिखरों ने और हिमालय के जलप्रपातों एवं घाटियों ने, झीलों और नदियों ने इनकी काव्यात्मक संवेदना को सदा जागृत रखा।

लक्ष्मीचंद जैन (जन्म- १३ दिसंबर)

लक्ष्मीचंद जैन भारत के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री थे। १९४७ के अन्तिम दिनों में उनकी भेंट एक कैम्प में कमला देवी चट्टोपाध्याय से हुई थी। इसके बाद सन १९४८ में जैन ने कमला देवी के साथ एक इण्डियन को-ऑपरेटिव यूनियन की स्थापना की। सन १९६८ में उन्होंने एक कंसल्टिंग फर्म भी खड़ी की, जो किसानों तथा कारीगरों की सलाह पर सरकारी तथा गैर सरकारी कामकाज में मदद करती थी। इस तरह से लक्ष्मीचंद जैन ने किसानों, कारीगरों, तथा स्त्रियों के समूह तथा सरकारी कमेटियों और बोर्ड के बीच एक सेतु की भूमिका अदा की थी, जिसका लाभ उन्हें मिला।

संसद पर हमला

१३ दिसंबर २००१ को नयी दिल्ली स्थित संसद भवन पर आतंकवादियों ने आत्मघाती हमला किया था। इस हमले में नौ लोग मारे गये और १५ लोग घायल हुए थे। दिल्ली पुलिस ने अफजल गुरु, एसएआर गिलानी, अफसान गुरु और उसके पति शौकत हुसैन गुरु को गिरफ्तार किया था। एक वर्ष के बाद गिलानी, शौकत और अफजल को मौत की सजा सुनायी गयी। २००५ में सुप्रीम कोर्ट ने अफजल गुरु की मौत की सजा बरकरार रखी और शौकत को दस वर्ष की जेल की सजा दी। राष्ट्रपति द्वारा दया याचिका खारिज करने के बाद अफजल गुरु को नौ फरवरी २०१३ को तिहाड़ जेल में फांसी दी गयी।

१४ दिसम्बर

आपातकालीन स्थिति और संजय गांधी

मैंने इमरजेंसी को बहुत करीब से देखा था। उन दिनों मैं दिल्ली के एक बहुत बड़े समाचारपत्र समूह का डिप्टी सीईओ था। मेरा काम एडिटोरियल और मैनेजमेंट के बीच समन्वय करना था।

मुझे आज भी याद है कि १९७५ की गर्मियों में जिस दिन इमरजेंसी लगी थी, रात के एक बजे हमारे अंग्रेजी दैनिक के न्यूज एडिटर ने मुझे फोन पर बताया कि देश में इमरजेंसी लग गई है। अब आगे अखबार का छपना मुश्किल है क्योंकि सभी समाचारपत्रों के दफ्तरों की बिजली काट दी गई है। उन्होंने यह भी कहा कि सारा अधिकार सरकार के पास आ गया है और यह कहना मुश्किल है कि अब फिर से अखबार का प्रकाशक कब शुरू हो पाएगा।

गर्मी के महीने में बिजली के अभाव में एयरकंडीशनर नहीं चल रहा था। लोग नीचे समाचारपत्र के दफ्तर के सामने इस इंतजार में खड़े हो गये थे कि इसके बोर्ड पर कोई समाचार आए कि अब आगे क्या होनेवाला है। अचानक ही सब जगह भय और आतंक का माहौल पैदा हो गया।

सूचना और प्रसारण मंत्रालय में सरकार ने समाचार पत्रों पर नियंत्रण करने के लिये एक निगरानी बोर्ड बैठा दिया था जिसका नाम सेंसर रखा था। इसके अधिकारी पूरे समाचारपत्र को पढ़ जाते थे और जहां उन्हें कोई भी आपत्तिजनक समाचार लगता था तो उस समाचार पर लाल कलम चला देते थे।

साधारणत: १० बजे रात तक कोई समाचारपत्र छप जाता है परन्तु उन दिनों १२ बजे और एक बजे रात तक इंतजार करना होता था कि हमारे समाचारपत्र के समाचारों को सेंसर ने पास किया है अथवा नहीं।

थोड़े दिनों में यह खबर मीडिया में फैल गई कि देश के प्रशासन का नियंत्रण संजय गांधी ने अपने हाथों में ले लिया है। अब उनकी इच्छा के विरुद्ध एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। सच यह था कि संजय गांधी चाहे जैसे भी व्यक्ति रहे हों, हिन्दी भाषी राज्यों के मुख्यमंत्रियों और मंत्रियों ने उनकी जय जयकार करके उनके मन में एक गलतफहमी बैठा दी थी कि वे सही अर्थ में भगवान हैं या कम से कम देवदूत तो हैं ही।

बिहार और उत्तर प्रदेश के स्वार्थी तत्कालीन राजनेता जिन्हें लोग व्यंग्य में सूबेदार भी कहते थे, झुण्ड के झुण्ड भाड़े के लोगों को लेकर संजय गांधी के पास जाते और वहां उनकी जय जयकार होती थी। संजय गांधी तथा तथाकथित सूबेदारों के सामने ये भाड़े के प्रशंसक संजय गांधी की प्रशंसा के कसीदे पढ़ने लगते थे और उन्हें बताते थे कि किस प्रकार उनके राज्य में आपतकालीन स्थिति का स्वागत हो रहा है। स्वाभाविक था कि संजय गांधी को अपने बारे में गलतफहमी हो जाए।

सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि आपतकालीन स्थिति के दौरान बिहार जिसमें उन दिनों झारखंड भी शामिल था और उत्तर प्रदेश में जगह-जगह संजय गांधी की सभाएं हुई थी। उन सभाओं में बिहार और उत्तर प्रदेश के तथाकथित सूबेदार संजय गांधी के जूते और चप्पल उठाने में जरा भी संकोच नहीं करते थे।

संजय गांधी के नाम का एक खौफ पूरे देश में छाया हुआ था। उनके नाम पर बिहार और उत्तर प्रदेश के सूबेदार बहुत जुल्म ढहाते थे और कसकर सरकारी खजाना लूटकर अपना घर भर रहे थे। बिहार और उत्तर प्रदेश के सूबेदारों को यदि किसी असली या काल्पनिक प्रतिद्वंद्वी सक बदला लेना होता था तो उसकी झूठी शिकायत संजय गांधी से करते थे और

फिर संजय गांधी उन सूबेदारों को यह हुक्म दे देते थे कि फर्जी केस बनाकर उन लोगों को जेल में डाल दिया जाए तो उनकी आलोचना करते हैं। सर्वत्र भय का माहौल था।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने आपातकालीन स्थिति के पहले जब पटना में सभा की थी और शांतिपूर्वक जुलूस निकाला था तो उन सूबेदारों ने उन पर लाठियां बरसाई थी। आज वे पार्टी बदलकर सत्तापक्ष की पार्टी में आ गये हैं और इस फिराक में हैं कि कैसे दुबारा राज्य की जनता को लूटा जाए। इनके चेहरों पर नकाब पड़ा हुआ है। नई पीढ़ी के युवकों को इनकी असलियत का पता नहीं है। आवश्यकता है इनके चेहरों से नकाब हटाया जाए।

संजय गांधी उस तरह से असंवैधानिक निरंकुश शासक नहीं बनते यदि इन चापलूस और स्वार्थी सूबेदारों ने उनके मन में यह भ्रम नहीं फैलाया होता कि भगवान ने उन्हें इस धरती पर अपना दूत बनाकर राज करने के लिये भेजा है।

आवश्यकता है कि आपातकालीन स्थिति, संजय गांधी और उनके चमचों जो उस समय तथाकथित सूबेदार थे, के रोल के बारे में अच्छी तरह निष्पक्ष शोध किया जाए जिससे नई पीढ़ी सच्चाई से अवगत हो सके और कोई दूसरा संजय गांधी असंवैधानिक तरीके से देश का शासक नहीं बन बैठे।

उपेंद्रनाथ अश्क

१४ दिसंबर १९१० को साहित्यकार उपेंद्रनाथ अश्क का जन्म जालंधर (पंजाब) में हुआ था।

उन्होंने अपने जीवन में पत्रकारिता, वकालत, अध्यापन, रंगमंच, रेडियो, प्रकाशन और स्वतंत्र लेखन का कार्य किया। उन्होंने सबसे पहले १९३३ में भूचाल साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू किया था। उनकी कृतियों में गिरती दीवारें, गर्म राख, शहर में घूमता आईना, एक नन्ही कंदील, नवरत्न, औरत की फितरत, जुदाई की शाम का गीत प्रमुख हैं। वे संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार और सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से सम्मानित हुए। १९ जनवरी १९९६ को उनका निधन हो गया।

१५ दिसंबर

एलेक्जेंडर गुस्ताव एफिल

१५ दिसंबर १८३२ को विश्व प्रसिद्ध पेरिस के एफिल टॉवर के इंजीनियर एलेक्जेंडर गुस्ताव एफिल का जन्म डीजॉन (फ्रांस) में हुआ था।

उन्होंने इसका डिजाइन भी तैयार किया था और दो वर्ष की अवधि में इसे तैयार किया। धातु की संरचनाओं में विशेषज्ञता हासिल करने के बाद अपने करियर के आरंभ में वे पुलों के डिजाइन व निर्माण में लगे रहे।

अमेरिका में स्टैचू ऑफ लिबर्टी के निर्माण के समय मुख्य अभियंता के निधन के बाद उन्होंने ही काम को पूरा किया।

१८८२ में उस समय विश्व के सबसे ऊंचे पुल गेराबिट वायाडक्ट का निर्माण उनके ही देखरेख में हुआ था।

२७ दिसंबर १९२३ को पेरिस में उनका निधन हुआ।

बाइचुंग भूटिया (जन्म - १५ दिसम्बर)

बाइचुंग भूटिया भारत के प्रसिद्ध फुटबॉल खिलाड़ियों में से एक हैं। १९९९ में अर्जुन पुरस्कार जीतनेवाले बाइचुंग भूटिया अपने प्रशंसकों के बीच अंतरराष्ट्रीय फुटबॉल क्षेत्र में भारतीय फुटबॉल टीम के टार्च बियरर अर्थात मार्गदर्शक के नाम से जाने जाते है। वह भारतीय फुटबॉल के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, उनका खेलने का अलग अंदाज है, उनमें उत्तम दर्जे की स्ट्राइक करने की क्षमता है।

पोट्टि श्रीरामुलु (निधन- १५ दिसंबर)

पोट्टि श्रीरामुलु मद्रास प्रदेश से पृथक आंध्र प्रदेश की स्थापना के लिए अनशन करके अपने प्राण त्याग देने वाले व्यक्ति थे। ये गांधीजी के पक्के अनुयायी थे। पोट्टि श्रीरामुलु ने नमक सत्याग्रह, व्यक्तिगत सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन में जेल की सजाएं भी भोगी थी।

गौर किशोर घोष (निधन- १५ दिसंबर)

गौर किशोर घोष एक कुशल पत्रकार तथा लेखक के रूप में जाने जाते हैं। गौर किशोर घोष ने अपने लम्बे संघर्षपूर्ण रचनात्मक लेखन तथा पत्रकारिता के जरिए अपनी बात को निर्भीकतापूर्वक आगे रखा और साथ ही नागरिकों तथा प्रेस की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए जुझारू तेवर दिखाए। गौर किशोर घोष की मानवीय दृष्टि, उनकी निर्भीकता तथा दबावों के खिलाफ अडिग पत्रकारिता के लिए उन्हें वर्ष १९८१ का मैग्सेसे पुरस्कार प्रदान किया गया।

नेक चंद सैनी

१५ दिसंबर १९२४ को चंडीगढ़ रॉक गार्डन के शिल्पकार नेक चंद सैनी का जन्म बरियन कलां, लाहौर (पाकिस्तान) में हुआ था। सड़क निरीक्षक की ड्यूटी करते हुए उन्होंने जंगल में अपने शौक को पूरा करने के लिए बेकार व टूटे-फूटे सामानों को एकत्रित किया और उससे भिन्न-भिन्न आकृतियां बनाना शुरू किया। १८ वर्ष तक वे चुपचाप काम करते

रहे। डॉ. एमएस रंधवा ने इसका नाम रॉक गार्डन रखा। २४ जनवरी १९७६ में इसका विधिवत उद्घाटन हुआ। उन्होंने अपने इस कार्य से चंडीगढ़ को एक नयी पहचान दी। उनके इस अमूल्य योगदान के लिए वे पद्मश्री से सम्मानित किये गये। विदेशों में भी उन्होंने रॉक गार्डन बनाये।

१७ दिसंबर

मुहम्मद हिदायतुल्लाह (जन्म- १७ दिसम्बर)

मुहम्मद हिदायतुल्लाह भारत के पहले मुस्लिम मुख्य न्यायाधीश थे। मुहम्मद हिदायतुल्लाह को भारत के प्रथम कार्यवाहक राष्ट्रपति कहना ज्यादा उपयुक्त होगा, क्योंकि यह भारत की संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार निर्वाचित राष्ट्रपति नहीं थे। उन्होंने दो अवसरों पर भारत के कार्यवाहक राष्ट्रपति के रूप में भी कार्यभार संभाला था। इसके साथ ही वो एक पूरे कार्यकाल के लिए भारत के छठे उपराष्ट्रपति भी रहे।

रहीम (जन्म-१७ दिसम्बर)

रहीम अथवा अब्दुर्रहीम खानखाना अथवा अब्दुर्रहीम खाँ हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे। अकबर के दरबार में इनका महत्वपूर्ण स्थान था। रहीम अकबर के नवरत्नों में से एक थे। गुजरात के युद्ध में शौर्य प्रदर्शन के कारण अकबर ने इन्हें खानखाना की उपाधि दी थी। रहीम अरबी, तुर्की, फारसी, संस्कृत और हिन्दी के अच्छे ज्ञाता थे। इन्हें ज्योतिष का भी ज्ञान था। रहीम की ग्यारह रचनाएं प्रसिद्ध हैं। इनके काव्य में मुख्य रूप से श्रृंगार, नीति और भक्ति के भाव मिलते हैं। ७० वर्ष की उम्र में १६२६ ई. में रहीम का देहांत हो गया।

भोगराजू पट्टाभि सीतारामैया (निधन- १७ दिसम्बर)

भोगराजू पट्टाभि सीतारामैया भारत के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, गाँधीवादी और पत्रकार थे। इन्होंने दक्षिण भारत में स्वतंत्रता की अलख जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। आपने राष्ट्रीय हितों को दूसरे हितों मे मुकाबले हमेशा प्राथमिकता में रखा। सीतारामैया राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रमुख सहयोगियों में से एक थे। जब सन १९३९ में कांग्रेस अध्यक्ष के निर्वाचन में पट्टाभि सीतारामैया सुभाषचंद्र बोस से पराजित हो गए, तब महात्मा गांधी ने उनकी हार को अपनी हार कहा।

राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी (शहीद- १७ दिसम्बर)

राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी भारत के अमर शहीद प्रसिद्ध क्रांतिकारियों में से एक थे। राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी अध्ययन और व्यायाम में अपना सारा समय व्यतीत करते थे। ६ अप्रैल, १९२७ को फाँसी के फैसले के बाद सभी क्रांतिकारियों को अलग कर दिया गया था, परंतु लाहिड़ी ने अपनी दिनचर्या में कोई परिवर्तन नहीं किया। अंग्रेजी सरकार ने डर से राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को गोण्डा कारागार भेजकर अन्य क्रांतिकारियों से दो दिन पूर्व ही १७ दिसम्बर, १९२७ को फांसी दे दी।

१८ दिसंबर

गुरु घासीदास (जन्म- १८ दिसंबर)

गुरु घासीदास भारत के छत्तीसगढ़ राज्य की संत परंपरा में सर्वोपरि हैं। बाल्याकाल से ही घासीदास के हृदय में वैराग्य का भाव प्रस्फुटित हो चुका था। समाज में व्याप्त पशुबलि तथा अन्य कुप्रथाओं का ये बचपन से ही विरोध करते रहे। समाज को नई दिशा प्रदान करने में इन्होंने अतुलनीय योगदान दिया था। सत्य से साक्षात्कार करना ही गुरु घासीदास के जीवन का परम लक्ष्य था। सतनाम पंथ का संस्थापक भी गुरु घासीदास को ही माना जाता है।

भिखारी ठाकुर (जन्म- १८ दिसंबर)

भिखारी ठाकुर भोजपुरी के समर्थक लोक कलाकार, रंगकर्मी लोक जागरण के सन्देश वाहक, नारी विमर्श एवं दलित विमर्श के उद्घोषक, लोक गीत तथा भजन कीर्तन के अनन्य साधक थे। भिखारी ठाकुर बहुआयामी प्रतिभा के व्यक्ति थे। वे एक ही साथ कवि, गीतकार, नाटककार, नाट्य निर्देशक, लोक संगीतकार और अभिनेता थे। भिखारी ठाकुर की मातृभाषा भोजपुरी थी और उन्होंने भोजपुरी को ही अपने काव्य और नाटक की भाषा बनाया। राहुल सांकृत्यायन ने उनको अनगढ़ हीरा कहा था तो जगदीशचंद्र माथुर ने भरत मुनि की परंपरा का कलाकार। उनको भोजपुरी का शेक्सपीयर भी कहा गया।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी (निधन- १८ दिसंबर)

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी सरस्वती के कुशल संपादक, साहित्य वाचस्पति और मास्टरजी के नाम से प्रसिद्ध है। यह एक प्रसिद्ध निबंधकार है। बख्शी जी की एक पुस्तक यात्री नाम से प्रकाशित हुई। यह एक यात्रा वृत्तान्त है और इसमें अनन्त पथ की यात्रा का रोचक वर्णन प्रस्तुत किया गया है। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की सेवाएँ उल्लेखनीय हैं। इन्होंने १९२० ई. से १९२७ ई. तक सरस्वती का सम्पादन किया। कुछ वर्षों तक छाया (इलाहाबाद) के भी सम्पादक रहे।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के स्नेह संरक्षण व कुशल मार्ग निर्देशन में बख्शी रूपी कल्पतरु का भी विकास हुआ जिनकी रचनाओं के सौरभ से हिन्दी साहित्य की मंजूषा सुरभित हुए बिना न रह सकी। यही कारण है कि बख्शी जी आचार्य द्विवेदी जी के उत्तराधिकारी माने जाते हैं। बख्शी जी ने अपनी साहित्यिक कृतियों का संस्थापन किया है। विश्व साहित्य, हिन्दी साहित्य विमर्श, हिन्दी कथा साहित्य पंचतंत्र, नवरात्र, समस्या और समाधान, प्रदीप आदि में इनके साहित्यिक निबन्धों की विशिष्ट मीमांसा है। इनके निबन्धों में विधवा-समस्या, गृह जीवन में असंतोष आदि निबन्ध जीवन की सच्चाईयों को सरलता से प्रतिबिम्बित करते हैं। समाज सेवा इनका प्रसिद्ध निबन्ध है।

१९ दिसंबर

प्रतिभा पाटिल (जन्म- १९ दिसम्बर)

प्रतिभा देवी सिंह पाटिल स्वतंत्र भारत के ६० साल के इतिहास में, मध्य वित्त परिवार से उठकर देश के सर्वोच्च पद तक पहुंचने वाली प्रथम महिला राष्ट्रपति हैं। इन्हें भारत का बारहवाँ निर्वाचित राष्ट्रपति बनने का गौरव प्राप्त हुआ हैं। इनका राष्ट्रपति बनना नारी शक्ति के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण अध्याय साबित हुआ है। २५ जुलाई, २००७ को श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने राष्ट्रपति पद की शपथ ग्रहण की और देश की प्रथम महिला बनने का गौरव भी प्राप्त कर लिया।

२१ दिसम्बर

ठाकुर प्यारेलाल सिंह (जन्म- २१ दिसंबर)

ठाकुर प्यारेलाल सिंह छत्तीसगढ़ में श्रमिक आन्दोलन के सूत्रधार तथा सहकारिता आन्दोलन के प्रणेता थे। ठाकुर प्यारेलाल १९२० में पहली बार महात्मा गांधी के संपर्क में आए थे। असहयोग आन्दोलन एवं सत्याग्रह आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया तथा गिरफ्तार होकर जेल भी गए। वर्ष १९४५ में छत्तीसगढ़ बुनकर सहकारी संघ की स्थापना हुई थी। प्रवासी छत्तीसगढ़ियों को शोषण एवं अत्याचार से मुक्त कराने की दिशा में वे सदा सक्रिय रहे।

यू. आर. अनंतमूर्ति (जन्म- २१ दिसंबर)

यू. आर. अनंतमूर्ति ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ भाषा के प्रसिद्ध रचनाकार हैं। अनंतमूर्ति की संपूर्ण सृजनात्मक यात्रा एक क्रुद्ध विद्रोही युवा से प्रारंभ होकर पारंपरिक रूढ़ियों से मुक्त मानवतावादी लेखक तक की महान रचनात्मक यात्रा है। विरोधी दृष्टिकोणों के जटिल सह-अस्तित्व का उदाहरण अनंतमूर्ति लेखक के सृजनात्मक काल में एक बड़ी परंपरा के सार-रूप में देखा जा सकता है। किसी भी परम में विश्वास न करनेवाले अनंतमूर्ति ने इस परंपरा को उसकी पूरी महिमा और तनाव के साथ ग्रहण किया है। अनंतमूर्ति की संपूर्ण सृजनात्मक यात्रा एक क्रुद्ध विद्रोही युवा से प्रारंभ होकर पारंपरिक रूढ़ियों से मुक्त मानवतावादी लेखक तक की महान रचनात्मक यात्रा है।

सुन्दरलाल शर्मा (जन्म- २१ दिसंबर)

सुन्दरलाल शर्मा बहुमुखी प्रतिभा के धनी, सामाजिक क्रांति के अग्रदूत तथा छत्तीसगढ़ राज्य में जन जागरणकर्ता थे। वे एक कवि, सामाजिक कार्यकता, समाज सेवक, इतिहासकार तथा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। उन्हें छत्तीसगढ़ का गाँधी की उपाधि दी गई है। छत्तीसगढ़ में इनके नाम पर ही पण्डित सुन्दरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है।

महावीर प्रसाद द्विवेदी (निधन- २१ दिसंबर)

महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी गद्य साहित्य के महान साहित्यकार, पत्रकार एवं युगविधायक हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी की साहित्यिक देन कम नहीं है। इनके मौलिक और अनुदित पद्य और गद्य ग्रन्थों की कुल संख्या अस्सी से ऊपर है। गद्य में इनकी १४ अनुदित और ५० मौलिक कृतियाँ प्राप्त है। कविता की ओर महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की विशेष प्रवृत्ति नहीं थी। इस क्षेत्र में इनकी अनुदित कृतियाँ, जिनकी संख्या आठ है, अधिक महत्वपूर्ण हैं। मौलिक कृतियाँ कुल ९ हैं, जिन्हें स्वयं तुकबन्दी कहा है।

रेडियम की खोज

२१ दिसंबर १८९८ को मैरी क्यूरी ने खनिजों के अध्ययन करते समय रेडियम की खोज की। उन्होंने खनिज से जब यूरेनियम को अलग किया गया तो पाया कि बचे हिस्से में यूरेनियम में रेडियोधर्मी तत्व बाकी थे जिसे रेडियम नाम दिया

गया। चिकित्सा विज्ञान और रोगों के उपचार में यह क्रांतिकारी खोज साबित हुई।

इस खोज के लिए उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार भी दिया गया। इसके साथ ही रसायन विज्ञान के क्षेत्र में रेडियन के शुद्धीकरण के लिए रसायनशास्त्र का नोबेल पुरस्कार भी मिला। विज्ञान की दो शाखाओं में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित होनेवाली वे पहली महिला वैज्ञानिक थीं।

२२ दिसम्बर

नेशनल मैथमेटिक्स डे

२२ दिसंबर, १८८७ को महान गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन का जन्म इरोड (तमिलनाडु) में हुआ था। उनके १२५वें जन्मदिवस (२०११ में) समारोह के अवसर पर प्रधानमंत्री ने उनके जन्मदिन को नेशनल मैथमेटिक्स डे के रूप में मनाने की घोषणा की थी। १९११ में जर्नल ऑफ द इंडियन मैथमेटिक्स में उनका पहला पेपर प्रकाशित हुआ। उनके द्वारा लिखित १०० पन्नोंवाला रजिस्टर वैज्ञानिकों के लिए पहेली बना हुआ है। इसे रामानुजन का नोटबुक कहा जाता है। १९१८ में रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन में चुने जानेवाले पहले भारतीय बने। रॉयल सोसायटी के इतिहास में इनसे कम उम्र में कोई सदस्य नहीं बन पाया था।

श्रीनिवास रामानुजन

२२ दिसंबर १८८७ को महान गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन का जन्म इरोड (तमिलनाडु) में हुआ था। १९११ में जर्नल ऑफ द इंडियन मैथेमेटिक्स में पहला पेपर प्रकाशित हुआ। इंग्लैंड के प्रो. जीएच हार्डी प्रयासों से वे इंग्लैंड गये और साथ में काम किया। उनके द्वारा लिखित १०० पन्नोंवाला रजिस्टर वैज्ञानिकों के लिए पहेली बना हुआ है। इसे रामानुजन की नोटबुक कहा जाता है।

१९१८ में वे रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन में चुने जानेवाले पहले भारतीब बने। रॉयल सोसायटी के इतिहास में इनसे कम उम्र में कोई सदस्य नहीं बन पाया था। २६ अप्रैल १९२० को उनका निधन कुंबाकणम, तमिलनाडु में हुआ था।

गुरु गोबिंद सिंग (जन्म- २२ दिसम्बर)

गुरु तेगबहादुर ने देश के कई इलाकों में धर्म का प्रचार-प्रसार किया। जब वे वापिस अपने घर लौटे तब गोविन्दराय चार वर्ष के हुए थे। जिस समय उन्होंने देखा कि एक नन्हा बालक बच्चों को दो दलों में बांट कर खेल रहा था। एक दल को उसने काफी भयभीत कर रखा था। गुरु तेग बहादुर ने जब ऐसा करने का कारण पूछा, तो उसने निडरता से कहा, ये यवन हैं, मेरे शत्रु हैं, इसलिए उनके साथ ऐसा कर रहा हूं। उसने कहा, मैं इन यवनों को कभी क्षमा नहीं कर सकता। गुरु तेगबहादुर जान गए कि यह बालक बचपन से ही यवनों द्वारा अन्य धर्मों पर हो रहे अमानुष अत्याचारों से भलीभांति परिचित है। यही बालक देश में सांप्रदायिक सद्भाव का माहौल खड़ा बनाने और बेगुनाहों की रक्षा के लिए उपयुक्त सिद्ध होगा।

खेल खत्म हो गया। बालक से गुरु तेग बहादुर ने उसका परिचय पूछा। बालक ने कहा, मेरा नाम गोबिंदराय है। मैं गुरु तेग बहादुर जी का बेटा हूं। यह अपनी ही संतान है यह जानकर गुरु साहब के चेहरे पर प्रसन्नता और अभिमान की चमक आ गई। अपना परिचय देने के बाद गोबिंदाय ने गुरु साहब से उनका परिचय पूछ लिया। उन्होंने कहा कि मैं तुम्हारा पिता। सुनते ही पुत्र ने पिता के चरणों का स्पर्श किया और पिता की गोद में समा गया। तब तक माता गूजरी और सिख सेवक वहां पहुंच चुके थे। गुरु साहब ने गोबिंदराय की परवरिश का सारा श्रेय उनकी माता को देते हुए बड़े ही सम्मान के साथ कहा कि जो संतान को जन्म ही नहीं देती बल्कि उसे संस्कारवान भी बनाती है वह माता धन्य है। अपनी और अपने

पुत्र की प्रशंसा सुनकर माता गूजरी की आंखों से खुशी आंसू छलकने लगे।

अचूक निशाना- बालक गोबिंदराय धीरे-धीरे बड़े हो रहे थे। उम्र के साथ-साथ उनकी नटखट हरकतें भी बदलने लगी थीं। जिस हवेली में वे रहते थे, उसमें एक कुआं था। आस पास की स्त्रियां वहां जल भरने आया करती थीं। उन्हें तंग करने में बालक गोबिंदराय को बड़ा मजा आता था। वे अपने दोस्तों के साथ तीर कमान लेकर छिपकर बैठ जाते तो वह और उसके मित्र तीरों का निशाना बनाकर उन घड़ों को फोड़ दिया करते। गोबिंदराय का निशाना इतना अचूक था कि वह कभी खाली नहीं जाता था।

जब मोगलों का अत्याचार अपने चरम पर था और हिंदू धर्म का नामोनिशान मिटाने पर वे आमादा थे। ऐसे हालातों में हिंदुओं की रक्षा करने के लिए सिखों के नौंवे गुरु तेगबहादुर ने अपने प्राणों की आहुति दे दी। उन्हीं तेगबहादुर की संतान हैं गुरु गोविंद सिंह।

खालसा महिला खालसा की परिभाषा और खालसा के कृतित्व धर्म, संस्कृति व राष्ट्र की आन-बान और शान के लिए गुरु गोविंद सिंह ने अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया। इतिहास में ऐसी वीरता और बलिदान कम ही देखने को मिलता है। गुरु गोविन्द सिंह का जन्म उस समय हुआ जब औरंगजेब बादशाह दिल्ली के तख्त पर बैठा हुआ था।

संवत १७२७ विक्रम १७-१८ पौष शनिवार रात और रविवार तड़के के दौरान २२ दिसंबर, सन १६६६ को गुरु तेग बहादुर की धर्मपरायण पत्नी गूजरी देवी ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया, जो बाद में गुरु गोबिंद सिंह के नाम से विख्यात हुए। बालक के जन्म पर पूरे नगर में उत्सव मनाया गया। उन दिनों गुरु तेग बहादुर असम बंगाल में गुरु नानक देव जी के संदेश का प्रचार प्रसार करते हुए घूम रहे थे।

गुरु तेगबहादुर ने पहले से ही बता कर रखा था कि अगर पुत्र हुआ तो उसका नाम गोबिंद रखना। सिख संगत के बीच बालक का नामकरण किया गया। पूरे लाड़ प्यार के साथ उनका नाम गोबिंदराय रखा गया। माता गूजरी ने बालक को जहां दया, करुणा और प्रेम के संस्कार दिए, वहीं साहस, वीरता और निभीकता की घुट्टी भी पिलाई। बताया जाता है कि गोबिंद राय काफी साहसी थे। गुरु के पुत्र होने के कारण नगरवासियों और बच्चों से उन्हें सम्मान मिलता था। वे अक्सर अपने मित्रों को दो गुटों में बांट कर युद्ध का खेल खेला करते थे। तीर-कमान और गुलेल की मदद से वे बचपन से ही निशानेबाजी का स्वयं ही अभ्यास करते थे।

उनके साहस को लेकर एक किस्सा काफी प्रचलित है। बताया जाता है कि एक बार पटना में से नवाब की शोभायात्रा निकल रही थी, जिस राह पर नन्हे मुन्ने गोबिंद खेल रहे थे वहीं नवाब का जुलूस गुजरनेवाला था। एक सिपाही ने आकर बच्चों से कहा कि जैसे ही नवाब आए सब मिलकर सलाम करो। गोबिंद राय बचपन से ही मोगल शासकों के अत्याचारों से वाकिफ थे, उन्होंने अपने छोटे साथियों से कहा कि कोई सलाम नहीं करेगा बल्कि नवाब को चिढ़ाकर भाग जाएंगे। बच्चों ने नवाब को खूब चिढ़ाया और भाग निकले।

भिन्न-भिन्न सबहु कर जाना एक ज्योति किनहु पहचाना।

गुरु गोविंदसिंहजी का जन्म २२ दिसंबर सन् १६६६ में पुण्य माताश्री गुजरी की गोद में पटना साहिब में हुआ था। आप बचपन में ही बड़े साहसी और गुणों से भरपूर थे। आनंदपुर साहिब में ही आपको शिक्षा का प्रबंध किया गया। उन्हें फारसी, हिन्दी, संस्कृत और ब्रज भाषा पढ़ाई गई। जब गुरु तेगबहादुरजी बलिदान देने दिल्ली गए थे, तब गुरुजी की उम्र केवल ९ वर्ष की थी। गुरु गद्दी संभाल

लेने के बाद आपने जनता में जोश भरना शुरू कर दिया।

आपने अपने दरबार में ५२ कवि रखकर लोगों में वीर रस की कविताओं का प्रचलन किया। आपने अत्याचारों के विरुद्ध कई युद्ध किए, इसमें सबसे प्रसिद्ध भंगानी का युद्ध हुआ था। यह युद्ध भीमचंद नामक पहाड़ी राजा से हुआ था। यह भीमचंद वही था जिसको गुरु हरगोविंदसिंह ने ग्वालियर की कैद से छुड़ाया था। इस युद्ध में पहाड़ी राजाओं की करारी हार हुई। इस युद्ध में पीरबुद्ध, शाह अपने ८०० मुरीदों सहित गुरुजी की सहायता के लिए आया था।

सन् १६८८ में नदौन का युद्ध हुआ जो जम्मू के नवाब अलफ खाँ के साथ हुआ था। सन् १६८९ में पहाड़ी नवाब हुसैन खाँ ने गुरुजी से युद्ध छेड़ दिया, जिसमें गुरुजी की जीत हुई। सन् १६९९ को वैशाखी वाले दिन गुरुजी ने केशगढ़ साहिब में पंच पियारों द्वारा तैयार किया हुआ अमृत सब को पिलाकर खालसा पंथ की नींव रखी। खालसा का मतलब है वह सिक्ख जो गुरु से जुड़ा है। वह किसी का गुलाम नहीं है, वह पूर्ण स्वतंत्र है। सन् १७०० से १७०३ तक आपने पहाड़ी राजाओं से आनंदपुर साहिब में चार बड़े युद्ध किए व हर युद्ध में विजय प्राप्त की। पहाड़ी राजाओं की प्रार्थना पर गुरुजी को पकड़ने के लिए औरंगजेब ने सहायता भेजी।

मई सन् १७०४ की आनंदपुर की आखिरी लड़ाई में मुगल फौज ने आनंदपुर साहिब को ६ महीने तक घेरे रखा। अंत में गुरुजी सिक्खों के बहुत मिन्नातें करने पर अपने कुछ सिक्खों के साथ आनंदपुर साहिब छोड़कर चले गए। सिरसा नदी के किनारे एक भयंकर युद्ध हुआ, इसमें दो छोटे साहिबजादे माता रूजरी बिछुड़ गए। २२ दिसंबर सन् १७०४ में चमकौर का युद्ध नामक ऐतिहासिक युद्ध हुआ, जिसमें ४० सिक्खों ने १० लाख फौज का सामना किया। इस युद्ध में बड़े साहिबजादे अजीतसिंह और जुझारसिंहजी शहीद हुए।

इधर २७ दिसंबर सन् १७०४ को दोनों छोटे साहिबजादे और जोरावतसिंह व फतेहसिंहजी को दीवारों में चुनवा दिया गया। जब यह हाल गुरुजी को पता चला तो उन्होंने औरंगजेब को एक जफरनामा (विजय की चिट्ठी) लिखा, जिसमें उन्होंने औरंगजेब को चेतावनी दी कि तेरा साम्राज्य नष्ट करने के लिए खासला पंथ तेयार हो गया है।

८ मई सन् १७०५ में मुक्तसर नामक स्थान पर मुगलों से भयानक युद्ध हुआ, जिसमें गुरुजी की जित हुई। अक्टूबर सन् १७०६ में गुरुजी दक्षिण में गए जहाँ पर आपको औरंगजेब की मृत्यु का पता लगा। औरंगजेब ने मरते समय एक शिकायत पत्र लिखा था। हैरानी की बात है कि जो सब कुछ लुटा चुका था, (गुरुजी) वो फतहनामा लिख रहे थे व जिसके पास सब कुछ था वह शिकस्त नामा लिख रहा है। इसका कारण था सच्चाई। गुरुजी ने युद्ध सदैव अत्याचार के विरुद्ध किए थे न कि अपने निजी लाभ के लिए।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद आपने बहादुरशाह को बादशाह बनाने में मदद की। गुरुजी व बहादुरशाह के संबंध अत्यंत मधुर थे। इन संबंधों को देखकर सरहद का नवाब वजीत खाँ घबरा गया। अत: उसने दो पठान गुरुजी के पीछे लगा दिए। इन पठानों ने गुरुजी पर धोखे से घातक वार किया, जिससे ७ अक्टूबर १७०८ में गुरुजी नांदेड साहिब में दिव्य ज्योति में लीन हो गए। अंत समय आपने सिक्खों को गुरु ग्रंथ साहिब को अपना गुरु मानने को कहा व खुद भी माथा टेका। गुरुजी के बाद माधोदास ने, जिसे गुरुजी ने सिक्ख बनाया बंदासिंह बहादुर नाम दिया था, सरहद पर आक्रमण किया और अत्याचारियों की ईंट से ईंट बजा दी।

गुरु गोविंदजी के बारे में लाला दौलतराय जो हि कट्टर आर्य समाजी थे, लिखते हैं, मैं चाहता तो स्वामी विवेकानंद, स्वामी दयानंद, परमहंस आदि के बारे में काफी कुछ लिख सकता था, परंतु मैं उनके बारे में नहीं लिख सकता जो कि पूर्ण पुरुष नहीं है। मुझे पूर्ण पुरुष के सभी गुण गुरु गोविंदसिंह में मिलते हैं। अत: लाला दौलतराय ने गुरु गोविंदसिंहजी के बारे में पूर्ण पुरुष नामक एक अच्छी पुस्तक लिखी है। इसी प्रकार मुहम्मद अब्दुल लतीफ भी लिखता है कि जब मैं गुरु गोविंदसिंहजी के व्यक्तित्व के बारे में सोचता हूं तो मुझे समझ में नहीं आता कि उनके किस पहलू का वर्णन करूँ। वे कभी मुझे महाधिराज नजर आते हैं, कभी महादानी, कभी फकीर नजर आते हैं, कभी वे गुरु नजर आते हैं।

बैसाखी पंजाब के जनजीवन से जुड़ा हुआ ऐसा त्योहार है जिसका सीधा संबंध कृषि से है। इसलिए यह सभी वर्गों, जातियों और धर्मों के मध्य बड़े उत्साह से मनाया जाता है, किंतु सिखो के लिए इसका विशेष महत्व है। तीन सौ सात वर्ष पूर्व इसी दिन गुरु गोविंद सिंह जी ने खालसा पंथ का सृजन किया था। सिख आंदोलन इससे दो सौ वर्ष पूर्व गुरु नानक देव द्वारा प्रारंम्भ किया जा चुका था। यह आंदोलन अपने मूल रूप मे भक्तिपरक तो था, किंतु यह अपने अंदर तत्कालीन राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक

सरोकारो को भी समाए हुए था। एक ओर यह एकेश्वरवाद से जुड़ा हुआ था, दूसरी ओर मानवीय समता व सामाजिक समरसता के साथ गहरा सरोकार व्यक्त करता था। वह राजनीतिक सत्ता के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध लोगों को जागृत करने वाला भी था।

गुरु गोविंदसिंह से करीब सौ पूर्व इस आंदोलन का टकराव अपने समय की सत्ता से प्रारंभ हो गया था। इसी कारण पांचवें गुरु, गुरु अर्जुन देव को १६०६ मे मुगल बादशाह जहांगीर द्वारा और नौवे गुरु, गुरु तेग बहादुर को १६७५ मे औरंगजेब द्वारा शहीद किया गया। छठे गुरु, गुरु हरगोविंद ने शाहजहां की सेना के साथ सशस्त्र टक्कर ली थी। दसवे गुरु, गुरु गोविंद सिंह ने अनुभव किया कि दो सौ वर्ष पूर्व स्थापित इस परंपरा को नया स्वरूप देने की आवश्यकता है। उनके दादा गुरु हरगोविंद इस स्वरूप-परिवर्तन की नीव रख चुके थे। बैसाखी के दिन शिवालिक की पहाड़ियों के मध्य अपने पिता गुरु तेगबहादुर जी द्वारा बसाए नगर आनंदपुर मे संपूर्ण देश मे फैले अपने अनुयायियों का उन्होंने एक विशाल सम्मेलन बुलाया। उस सम्मेलन मे उन्होने देश और धर्म की रक्षा के लिए कुछ सिर आमंत्रित किए। उनके आह्वान पर पांच लोग सामने आए, जिन्हे पंच प्यारे कह कर पुकारा गया। उस दिन गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने अनुयायियों को नया गणवेश दिया, नाम दिए, उन्हे धर्म-युद्ध करने के लिए तैयार किया। सबसे बड़ा काम यह किया कि युद्ध कर्म के लिए प्रयुक्त उपकरणों अस्त्रो-शस्त्रो के लिए उनमे गहरी आस्था उत्पन्न की। इस देश मे प्राचीन काल से ही, विजयादशमी के दिन शस्त्र पूजा की परंपरा है। ऐसी पूजा केवल क्षत्रिय जातियां ही करती रही है, जिनकी संख्या कभी भी दस प्रतिशत से अधिक नही रही। शेष जनता सदैव शस्त्रविहीन रही। परिणाम यह हुआ कि जब कभी सशस्त्र विदेशी आक्रमणकारी इस देश मे आए, उनका सामना कुछ क्षत्रिय जातियो ने तो किया, अधिसंख्य जनता उससे अलिप्त रही। उसने अत्याचार सहे और बड़ी संख्या मे उनका संहार भी हुआ। वे बड़े निरीह भाव से सब कुछ सहते रहे।

गुरुगोविंद सिंह जी ने देश को युद्ध का पूरा दर्शन दिया। युद्ध कर्म के लिए केवल क्षत्रियों की निर्भरता समाप्त कर दी। उन्होने इस कार्य के लिए प्रशिक्षण देने का कार्य उन पिछड़ी और दलित जातियो के लिए भी किया, उन्होने अपने जीवन मे कभी तलवार नही उठाई थी, कभी समाज मे कोई विशिष्ट स्थान प्राप्त करने की कल्पना भी नही की थी। इस दृष्टि से ज्ञानी ज्ञान सिंह द्वारा रचित पंच प्रकाश की ये पंक्तियां ध्यान देने योग्य हैं।

जिनकी जाति और कुल माही सरदारी नहिं भई कदाही, तिनको मै सरदार बनाऊं, तबै गोविंद सिंह नाम धराऊँ

पिछड़ो, दलितों और निहीर जनों को, जो सदियों से गुलामी और अन्याय की चक्की मे पिस रहे थे, गुरु गोविंद सिंह ने दुर्जेय सैनिकों के रूप मे परिवर्तित कर दिया जो अपने समय की संसार की सबसे बड़ी और शक्तिशाली सत्ता से टक्कर लेने लगे। इस कार्य के लिए उन्होने शस्त्रों की महत्ता पर पूरी तरह बल दिया। इस देश मे शस्त्र पूजा तो होती थी, किंतु कुछ लोगों को छोड़कर शस्त्र सामान्य जनता के जीवन का भाग नही थे। मुगल राज्य मे, राजपूतों को छोड़कर किसी हिंदू को न शस्त्र धारण करने की अनुमति थी, न घोड़े पर चढ़ने की। गुरु गोविंद सिंह जी ने इन दोनो कार्यों के लिए अपने शिष्यों को प्रेरित किया। उनके पूर्व की नानक मार्गी भक्तिधारा मे परमात्मा के लिए वैष्णव मार्गी नामो का ही अधिक प्रयोग होता था। राम, हरि, माधव, गोविंद, गोपाल, मुरारी, सारंगपाणि जैसे परमात्मा बोधक नाम गुरुवाणी मे असंख्य बार प्रयुक्त हुए है। गुरु गोविंद सिंह जी भी ने अनेक पद ऐसे लिखे जिनमे इस प्रकार के नामों का प्रयोग किया गया है, किंतु वह अपने अनुयायियों मे वीर रस का संचार करना चाहते थे। इसके लिए उन्होने परमात्मा बोधक ऐसे नामों को चुना और सृजन किया जो इस उद्देश्य की पूर्ति मे सहायक हो सकते थे। इस दृष्टि से काल उनका सबसे प्रिय नाम था। गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने साहित्य मे परमात्मा के लिए काल, महाकाल, सर्वकाल आदि नामों का प्रयोग किया। काल का वर्णन करते हुए उसके साकार रूप की कल्पना भी उनके सम्मुख अनायास आ गई। इस साकार रूप मे काल का अस्त्र-शस्त्र धारी रूप उनके सम्मुख प्रमुख रूप से रहा। परमात्मा को उन्होने खड्गपाणि, कृपाणपाणि, वाणपाणि, दंडधारी, चक्रपाणि, खड्ग केतु आदि अनेक शस्त्रधारी नामों से पुकारा। शस्त्रों और ईश्वर के वीर रूप के प्रति उनकी तन्मयता इतनी बढ़ी कि उनकी दृष्टि मे शस्त्र और शस्त्रधारी मे कोई अंतर न रहा। स्वयं खड्ग ही खड्गधारी का प्रतीक बन गया। यहां यह बात ध्यान देने की है कि हमारे देश मे अपने ग्रंथ की सकुशल संपूर्णता के लिए कविगण सरस्वती देवी से चापयना करते रहे है, किंतु गुरु गोविंद सिंह ने यह याचना श्री खड्ग से की। उनकी दृष्टि मे शस्त्र और शस्त्रधारी काल अभेद्य है। काल के समान ही ये शस्त्र भी सदा एक रूप और निर्विकार है। गुरु गोविंदसिंह केवल

यही नही चाहते थे कि लोग आत्मरक्षा और अन्याय का सामना करने के लिए शस्त्र धारण करे। वह जानते थे कि शत्रु के सम्मुख उसका सामना करने के लिए तलवार उठाकर आ जाने मात्र से काम नही होता। उन्होने जिस युद्ध दर्शन का विकास किया उसके शस्त्रधारी की मानसिकता मे आमूल-चूल परिवर्तन बहुत आवश्यक था। गुरु गोविंद सिंह जी ने शस्त्रों को परमात्मा का रूप दिया और सदा उसकी शक्ति को स्मरण रखने की बात की। एक स्थान पर उन्होंने कहा है कि मेरे शस्त्र ही मेरे इष्ट देव हैं। उनकी दृष्टि मे काल, काली, तेग और तीर मे कोई अंतर नही है : काल तुही काली तुही तुही तेग अरु तीर।। तुही निसानी जीत की आजु तुही जगबीर गुरु गोविंद सिंह जी ने लोगों को शस्त्रधारी होने के लिए कहा, समय आने पर शस्त्रों का उपयोग करने की भी प्रेरणा दी। उन्होंने जो पत्र औरंगजेब को लिखा था उसमे भी यह कहा था कि जब नीति के सभी साधन असफल हो जाएं तो तलवार उठा लेना पूरी तरह उचित है, किंतु शस्त्र उठाने का एक महत् उद्देश्य होना चाहिए।

२३ दिसंबर

रामवृक्ष बेनीपुरी

२३ दिसंबर १८९९ को हिंदी के प्रसिद्ध लेखक रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म बिहार के बेनीपुर गांव में हुआ था।

वे साहित्यकार, पत्रकार और संपादक भी थे। मैट्रिक पास करने के बाद वे असहयोग आंदोलन में शामिल हो गये। वे कई समाचारपत्रों के संपादक रहे। साल १९२९ में युवक नाम से समाचार पत्र भी निकाला।

जेल की जिंदगी के अनुभव के आधार पर उन्होंने पतितों के देश में उपन्यास की रचना की जो काफी लोकप्रिय हुई। माटी की मूरतें कहानी संग्रह और आम्रपाली उपन्यास, गेहूं और गुलाब, शेक्सपियर के गांव में और नींव की ईंट उनकी लोकप्रिय रचनाओं में से हैं। ९ सितंबर, १९६८ में उनकी मृत्यु हो गयी।

कश्मीर के रक्षक- डॉ. मेहर चंद्र महाजन (जन्म- २३ दिसम्बर)

मेहर चंद्र महाजन, जो बाद में डॉ. मेहर चंद्र महाजन, चीफ जस्टिस ऑफ इण्डिया के नाम से विख्यात हुए, आर्य समाज के स्तंभ थे। आपका सारा जीवन सेवाओं की कहानी है जिसकी एक कड़ी जम्मू कश्मीर रियासत के इतिहास से जुड़ी हुई है। जस्टिस महाजन के आने से पूर्व ही पाकिस्तानी फौजों ने रियासत भर में हर ओर हैवानियत का नंगा नाच जगा दिया था। इस रियासत को मौत के दामन में १९४७ में किसने धकेला था, उसका उत्तरदायित्व तत्कालीन प्रधानमंत्री आर.पी. काक पर है क्योंकि वह राजा हरिसिंह को बिल्कुल अंधेरे में रखकर गलत मार्ग पर ले गया और भ्रम में रखा। वास्तव में उसने पाकिस्तान के साथ साजिश कर रखी थी, इसीलिए राजा को गोरखधंधे में उलझाए रखा और भारत के प्रतिकूल तथा विरोधी बना रहा पर राजा साहब किसी भी हालत में पाकिस्तान के साथ जुड़ना नहीं चाहते थे। स्वतंत्रता के पूर्व व पश्चात मुस्लिम लीग के सर्वोच्च नेता व पाकिस्तान के जनक कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना ने अपने फौजी जनरलों से सलाह-मशवरा करके पाक थलसैनिकों को अस्त्र शस्त्र से लैस कर घुसपैठियों के रूप में सारी रियासत में फैला दिया जो इधर आकर मुस्लिम आबादी का एक अंग बनकर वहीं अपना कार्य प्रचार व विस्तार करने लगे। जिन्ना के संकेतों पर महाराजा हरिसिंह को किसी प्रकार अपने सुनहरी जाल में फंसा कर इस रियासत को हथियाने की एक भारी चाल चली थी। फिर भी भारत सरकार की ओर से कोई पहल नहीं हो रही थी जिससे किसी के निरंतर समझाने पर महाराजा का अपना एक सुन्दर मनोहर सपना जाग उठा- अपनी रियासत को स्विटजरलैंड के समान स्वतंत्र देश बनाकर देखने का विचार था। ज्यों-ज्यों समय आगे सरक रहा था, त्यों-त्यों जिन्ना के आदमी बराबर राजा पर दबाव डाल रहे थे, समझा रहे थे, डरा धमका रहे थे। सारी रियासत की नाकाबन्दी कर दी और हर प्रकार की सप्लाई लाइन काटकर राजा को हर प्रकार से तोड़ना चाहा। इतना कुछ होते हुए भी हिन्दुस्तान के नेता इस ओर से बिल्कुल अनभिज्ञ व उदासीन थे। प्रसिद्ध पत्रकार एस.एन. पंडित की एक पुस्तक फ्रैग्मन्टस ऑफ हिस्ट्री में रहस्योद्घाटन किया है कि भारत के अन्तिम वायसराय लार्ड माउंटबेटन विभाजन से पूर्व जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह पर दबाव डालते रहे कि वे अपनी रियासत को पाकिस्तान में मिला दें परन्तु राजा साहब इसके लिए तैयार नहीं हुए और वायसराय के दौरे के चौथे रोज राजा ने गुर्दे के दर्द का बहाना करके इनसे भेंट को बड़ी सफाई से टाल दिया था। इस कृति में लेखक ने आगे लिखा है कि लार्ड माउंटबेटन के ए डी सी लार्ड इस्मे और अंत में श्रीनगर के एक ब्रिटेन निवासी विलियम वैब ने भी महाराजा को बहुत समझाने की कोशिश की और

जोर देकर कहा था उनके सामने पाकिस्तान में शामिल होने के सिवाए कोई भी दूसरा विकल्प नहीं। जब जम्मू-कश्मीर पर आततायियों का हमला हुआ तो गिलगित स्काउट्स के अंग्रेज सेनापति मेजर ब्राउन ने राजा को धोखा देकर गिलगित पाकिस्तान के हवाले कर दिया। उन दिनों कहा जाता है कि राजा की सेना के अंग्रेज सेनापति मेजर एच एल स्कॉट ने रियासती फौज को जानबूझ कर छोटी-छोटी टुकड़ियों में बांटकर रियासत भर में इधर-उधर दूर दूर तक फैला दिया था ताकि वे शत्रु के आक्रमणों को रोक न सकें। इस पुस्तक के अनुसार भारत के ब्रिटिश सेनाध्यक्ष जनरल रोब लोकहार्ट ने हिन्दुस्तान की सरकार को इस हमले के बारे में आखिरी दम तक अंधेरे में रखा। जब जिन्ना की हर चाल असफल हो गई तो रियासत में घुसपैठियों ने तेजी से बड़बड़, लूटमार और हिन्दू-सिक्खों का कत्ले आम करना आरंभ कर दिया। हर ओर तबाही मचा दी। यह छापमार आगे ही आगे बढ़ने लगे। राजा साहब को तब पता चला जब पाकिस्तानी सेना हर तरफ छा गई और उसने बहुत से स्थानों पर अपना अधिकार जमा लिया। उस नाजुक समय पर १५ अक्टूबर १९४७ को जस्टिस मेहरचन्द्र महाजन को प्रधानमंत्री बनाया गया और उन्होंने सब ओर से टूटी-फूटी व्यवस्था को संभालने के लिए भारी यत्न किया। उस भयंकर व अति गंभीर समय में जबकि शत्रु श्रीनगर हवाई अड्डे से १०-१५ मील की दूरी पर था तो श्री महाजन की सलाह और लगातार प्रयास के बाद ही महाराजा हरिसिंह रियासत को दिनांक २५/१०/१९४७ को भारत में विलय के लिए किसी तरह राजी हुए। भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश मेहरचंद्र महाजन की अति प्रसिद्ध पुस्तक लुकिंग बैक में सविस्तार अनेक तथ्यों का उद्घाटन किया गया है जिसे पढ़कर मन में भ्रम का पर्दा हट जाता है। श्री महाजन २६/१०/१९४७ दिल्ली पहुंचे और पं. नेहरू की कोठी पर गये और रियासत की सारी स्थिति समझाई और इसे भारत में शामिल करने का पत्र दिया तथा तुरंत हवाई जहाजों से भारतीय सेना श्रीनगर हवाई अड्डे उतारने के लिए प्रार्थना की पर पंडित नेहरू ने बड़ी बेरूखी का रास्ता अपनाया जिससे श्री महाजन को बहुत दुख और कष्ट हुआ और तन मन में क्लेश भर गया। प्रधानमंत्री अपनी बात पर अड़े रहे थे और जस्टिस महाजन अपनी पर। श्री महाजन कुछ सोच कर गरज उठे, मिस्टर नेहरू प्रधानमंत्री, भारत, वायुयान द्वारा भारतीय सेना सायंकाल तक श्रीनगर पहुंच जाए अन्यथा मैं वहां से सीधा लाहौर जिन्ना से बात करूंगा और वह उठ गये परन्तु सरदार पटेल ने स्थिति एकदम संभाल ली और उन्हें रोककर कहा, महाजन, तुम पाकिस्तान नहीं जा रहे हो। आज ही सब कुछ ठीक हो जाएगा। कोई चिन्ता करने की बात नहीं। सब कुछ उस महान व्यक्ति की भारी सूझ-बूझ उच्च कोटि की कूटनीति, बहादुरी, साहस व अत्यंत प्रभावशाली योग्यता से ही हो सका। वे तो युग पुरुष थे और उनके पुरुषत्व के दम-खम से ही उस खतरनाक समय में जम्मू-कश्मीर के टूटे-फूटे अस्तित्व को समय पर संभाल सके थे। इसके अतिरिक्त लारी कालिंस और लेपियरे की उतनी ही बहुचर्चित पुस्तक फ्रीडम एट मिडनाइट के कश्मीर, ओनली कश्मीर नामक अध्याय से भी अनेक छिपे तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। इस विषय में लगभग प्रत्येक लेखक ने मेहरचंद्र महाजन की पुस्तक लुकिंग बैक को आधार माना और इसी का सहारा किसी न किसी रूप में जरूर उद्घृत किया।

चौधरी चरण सिंह (जन्म- २३ दिसंबर)

चौधरी चरण सिंह भारत के पांचवें प्रधानमंत्री थे। चरण सिंह किसानों की आवाज बुलन्द करनेवाले प्रखर नेता माने जाते थे। चौधरी चरण सिंह का प्रधानमंत्री के रूप में कार्यकाल २८ जुलाई, १९७९ से १४ जनवरी १९८० तक रहा। यह समाजवादी पार्टी तथा कांग्रेस (ओ) के सहयोग से देश के प्रधानमंत्री बने। इन्हें कांग्रेस इं और सी.पी. आई. ने बाहर से

समर्थन दिया, लेकिन वे इनकी सरकार में सम्मिलित नहीं हुए। इसके अतिरिक्त चौधरी चरण सिंह भारत के गृहमंत्री कार्यकाल- २४ मार्च १९७७ से १ जुलाई १९७८, उपप्रधानमंत्री कार्यकाल- २४ मार्च १९७७ से २८ जुलाई १९७९ और दो बार उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री भी रहे।

२४ दिसम्बर

बनारसीदास चतुर्वेदी (जन्म- २४ दिसंबर)

बनारसीदास चतुर्वेदी प्रसिद्ध पत्रकार और शहीदों की स्मृति में साहित्य प्रकाशन के प्रेरणास्त्रोत थे। उनकी गणना अग्रगण्य पत्रकारों और साहित्यकारों में की जाती है। यद्यपि हिन्दी साहित्य के प्रति अनुराग और लेखक की अभिरूचि के लक्षण उनमें पत्रकार बनने से पहले ही दिखाई दे चुके थे। सन १९१४ से ही वे प्रवासी भारतीयों की समस्याओं पर लिखने लगे थे। बनारसीदास बारह वर्ष तक राज्य सभा के सदस्य भी रहे थे।

२५ दिसम्बर १८६१
पंडित मदन मोहन मालवीय

मानवता के संरक्षक ...

दशकों पुरानी बात है कि गौड़ ब्राह्मणों का एक समुदाय अपने पांडित्य, विद्वता, धर्मशक्ति, कर्मकाण्ड, देशभक्ति और आचारविचार के लिए देशभर में विख्यात था। ये लोग अच्छे कथावाचक तथा संगीतज्ञ भी थे। मालवा उस समय मध्यप्रदेश का एक छोटा सा राज्य हुआ करता था। इस परिवार के एक पूर्वज ने लगभग १५वीं शताब्दी में वहां के तत्कालीन शासक के आदेश को नहीं माना था।

शासक के कोप से बचने के लिए इन ब्राह्मणों का पूरा कुल मालवा से छिपकर भाग निकला और उसमें से कुछ प्रयाग में आकर भारती भवन के पास अहिल्यागंज में बस गये और कुछ लोग मिर्जापुर चले गये। मालवा के रहनेवाले ये लोग मालवीय कहे जाने लगे।

मालवा से पलायान कर प्रयाग इलाहाबाद में बसनेवाले इन मालवीयों में एक पंडित श्रीधर भी थे। वे संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान और ज्योतिषी थे। इनके पुत्र पंडित पद्मधर श्रीमद भगवत के सुप्रसिद्ध कथावाचक थे, साथ ही साथ संगीत के मर्मज्ञ भी थे। इनके चौथे पुत्र पंडित बृजनाथ भी अपने समय के प्रसिद्ध कथावाचक, संगीतकार, संस्कृत के विद्वान और ज्योतिषी थे।

इनकी पांचवी संतान के रूप में २५ दिसंबर १८६१ को पंडित मदनमोहन मालवीय जी का जन्म हुआ। पंडित मदन मोहन मालवीय जी का जन्म शिक्षा-दीक्षा घर में ही हुई। सात वर्ष की आयु में इन्होंने श्रीमद भागवत को कंठस्थ कर लिया था और उसका सस्वर पाठ करने लगे थे।

अल्पायु में ही जहां बालक मदनमोहन एक ओर ईश्वर और माता-पिता के भक्त थे, भागवत, महाभारत और रामायण का नियमित पाठ करनेवाले थे वहीं दूसरी ओर शरीर से अत्यन्त शक्तिशाली, निर्भय, निडर तथा आत्मविश्वास से परिपूर्ण सहज नेतृत्व के गुणोंवाले एक कुशल संगठक भी बन गये।

सत्य, तत्परता और सच्चरित्रता उनके विशेष गुण थे। उनका शरीर सुगठित और शक्तिशाली था। अपने कॉलेज जीवन से निकलने के बाद समाज सेवा के लिए पंडित मदनमोहन मालवीय ने १८८० में हिन्दू-समाज की स्थापना की जो बाद में काफी विकसित हुआ। सन १८८१ में कुन्दन देवी से मालवीय जी का विवाह हुआ।

२६ वर्ष की अवस्था में मालवीयजी ने देश के पहले हिन्दी दैनिक हिंदुस्तान के प्रधान संपादक के पद पर नौकरी की। इसके बाद वे इंडियन यूनियन के संपादक बने। १९०७ में अपना साप्ताहिक अखबार अभ्युदय निकाला। इन्होंने कई सालों तक वकालत भी की। उनके साथ पंडित मोतीलाल नेहरू, पंडित सुन्दरलाल तथा श्री चौधरी भी वकालत करते थे। ५१ वर्ष की आयु में १९११ ई. में इन्होंने वकालत छोड़ दी परन्तु १९२२ में पुन: महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के समय १५० लोगों को निर्दोष साबित करने के लिये पुन: वकालत की।

इन्होंने वकालत पर कई पुस्तकें भी लिखी। वे आजादी की जंग में कई बार जेल गये। सन १९३१ ई. में मालवीय जी ने डॉ. ऐनी बेसेन्ट के सहयोग से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की। १२ नवंबर को बीमारी के चलते उनका

देहान्त हो गया। मालवीय जी वास्तव में मानवता के सच्चे संरक्षक थे।

स्वतंत्रता आंदोलन, समाज सेवा में अहम भूमिका निभाई मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय (बीएचयू) के संस्थापक पंडित मदन मोहन मालवीय ने स्वतंत्रता आंदोलन में अहम भूमिका निभाने के साथ ही सामाजिक सुधार में भी बढ़चढ़कर हिस्सा लिया। जामिशा मिलिया विश्वविद्यालय के इतिहास के प्राध्यापक रिजवान कैसर ने कहा कि शिक्षा के क्षेत्र में मालवीय जी का महती योगदान है। स्वतंत्रता आंदोलन और बीएचयू जैसी बड़ी शिक्षक संस्था की स्थापना में उनके योगदान को हमेशा याद किया जाएगा। उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में २५ दिसम्बर १८६१ को एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे पंडित मदन मोहन मालवीय ने पांच साल की उम्र में पंडित हरदेव की धर्म ज्ञानोपदेश पाठशाला में संस्कृत की शिक्षा ली। वह राष्ट्रवादी साप्ताहिक हिंदुस्तान के संपादक बने। इस दौरान कानून की पढ़ाई करने के बाद वह पहले इलाहाबाद जिला न्यायालय और बाद में दिसंबर १८९३ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में प्रैक्टिस करने लगे। शिक्षा और समाज सेवा के क्षेत्र में कार्य करने के लिए मालवीय ने १९९१ में प्रैक्टिस छोड़ दी, हालांकि चौरा चौरी कांड में १७७ स्वतंत्रता सेनानियों को मृत्युदंड दिए जाने के खिलाफ वह फिर अदालत में उतरे और अपनी दलीलों से १५६ को बरी करवाने में सफल रहे। नरमपंथी नेता मालवीय को १९०९ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया। चार बार १९०९, १९१८, १९३० तथा १९३२ में वह पार्टी अध्यक्ष बने। मालवीय इंपेरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल और बाद में इसके परिवर्तित रूप सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली के सदस्य भी रहे। उन्नीस सौ बीस के दशक के प्रारंभ में वह महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में प्रमुख नेता के रूप में उभरकर सामने आए। सन् १९२८ में उन्होंने लाला लाजपत राय, जवाहरलाल नेहरू आदि के साथ मिलकर साइमन आयोग का जबर्दस्त विरोध किया। तुष्टिकरण के विरोधी मालवीय ने १९१६ के लखनऊ पूना पैक्ट में मुसलमानों के लिए अलग निर्वाचन मंडल का विरोध किया। वह खिलाफत आंदोलन में कांग्रेस के शामलि होने के खिलाफ थे। उन्होंने गांधी जी को देश विभाजन की कीमत पर आजादी के खिलाफ चेताया था। उन्होंने भी १९३१ में पहले गोलमेज सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया था। सत्यमेव जयते को उन्होंने ही लोकवाक्य बनाया। वह कई पत्र पत्रिकाओं के संपादक भी रहे। मालवीय जी ने जाति का बंधन तोड़ने के लिए काफी काम किया। इतिहास के प्राध्यापक प्रदीप कुमार कहते हैं कि मालवीय जी ने गांधीजी और अंबेडकर के बीच १९३० के पूना पैक्ट में अहम भूमिका निभाई। जीवनपर्यंत आजादी का सपना देखनेवाले मालवीय १२ नवंबर १९४६ को चल बसे।

देश से जाति की बेड़ियां तोड़ना चाहते थे मदन मोहन मालवीय (जन्म- २५ दिसम्बर)

पंडित मदन मोहन मालवीय महान स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ और शिक्षाविद ही नहीं, बल्कि एक बड़े समाज सुधारक भी थे जिन्होंने देश से जाति प्रथा की बेड़ियां तोड़ने के लिए कई प्रयास किए। पच्चीस दिसंबर १८६१ में इलाहाबाद में जन्में पंडित मदन मोहन मालवीय अपने महान कार्यों के चलते महामना कहलाए। वह तीन बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। पहली बार वह १९०९ में कांग्रेस के अध्यक्ष बने और १९१० तक इस पद पर रहे। दूसरी बार १९१८ से १९१९ और तीसरी बार उन्होंने १९३२ से १९३३ तक अध्यक्ष के रूप में पार्टी की कमान संभाली। उन्हें एशिया के सबसे बड़े आवासीय विश्वविद्यालय बनारस हिंदू विद्यापीठ संस्थापक के रूप में जाना जाता है। वह १९१२ में इंपीरियल लेजिसलेटिव काउंसिल के सदस्य बने। १९१९ में इसे सेंट्रल लेजिसलेटिव असेंबली के रूप में परिवर्तित कर

दिया गया और मालवीय जी १९२६ तक इसके सदस्य रहे। इतिहासकार वीसी साहू के अनुसार हिन्दू राष्ट्रवाद के समर्थक मदन मोहन मालवीय देश से जातिगत बेड़ियों को तोड़ना चाहते थे। उन्होंने दलितों के मंदिरों में प्रवेश निषेध की बुराई के खिलाफ देशभर में आंदोलन चलाया। मालवीय ने गांधी जी के असहयोग आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया। १९२८ में उन्होंने लाला लाजपत राय, जवाहर लाल नेहरू और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों के साथ मिलकर साइमन कमीशन का जबर्दस्त विरोध किया और इसके खिलाफ देशभर में जनजागरण अभियान चलाया। महामना तुष्टीकरण की नीतियों के खिलाफ थे। उन्होंने १९१६ के लखनऊ पैक्ट के तहत मुसलमानों के लिए अलग निर्वाचक मंडल का विरोध किया। वह देश का विभाजन नहीं होने देना चाहते थे। उन्होंने गांधीजी को आगाह किया था कि वह देश के बंटवारे की कीमत पर स्वतंत्रता स्वीकार न करें। मालवीय जी ने कई अखबारों की स्थापना की और सत्यमेव जयते के नारे को जन-जन में लोकप्रिय बनाया। उन्होंने १९३१ में पहले गोलमेज सम्मेलन में देश का प्रतिनिधित्व किया। वह आजीवन देश सेवा में लगे रहे और १२ नवम्बर १९४६ को उनका निधन हो गया।

मदनमोहन मालवीय महान स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ और शिक्षाविद ही नहीं, बल्कि एक बड़े समाज सुधारक भी थे। इतिहासकार वीसी साहू के अनुसार हिन्दू राष्ट्रवाद के समर्थक मदन मोहन मालवीय देश से जातिगत बेड़ियों को तोड़ना चाहते थे। उन्होंने दलितों के मन्दिरों में प्रवेश निषेध की बुराई के खिलाफ देशभर में आंदोलन चलाया। २४ दिसम्बर, २०१४ को भारत के राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने पंडित मदनमोहन मालवीय को मरणोपरांत देश के सबसे बड़े नागरिक सम्मान भारत रत्न से नवाजा।

एक बार मालवीय जी बम्बई में प्रसिद्ध उद्योगपति श्री रामेश्वरदास बिड़ला के भवन में थे। रात को पंडित रमापति मिश्र उनसे मिलने आए। दोनों के बीच क्रोध पर काफी देर चर्चा हुई। पं. रमापति ने कहा कि उन्होंने अपने क्रोध पर विजय प्राप्त कर ली है अब उन्हें क्रोध नहीं आता फिर बोले- मालवीय जी आप मुझे सौ गालियां देकर देखिए। मुझे तनिक भी क्रोध नहीं आएगा। पंडितजी यह मुझसे न हो सकेगा। आपकी सहनशीलता की परीक्षा तो सौ गालियां देने के बाद होगी पर मेरा मुंह तो मात्र एक ही गाली देने पर गंदा हो जाएगा। मालवीय जी ने हंसकर उत्तर दिया। एक बार महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी से हिन्दु विश्वविद्यालय के कुछ छात्र स्नान गृह की संख्या बढ़ाए जाने की मांग लेकर आए। मालवीय जी ने धैर्य तथा शांति से उनकी बात सुनी और फिर बोले मैं अभी भ्रमण हेतु जा रहा हूं, आप भी मेरे साथ चलिए। रास्ते में आपकी समस्या पर चर्चा होती रहेगी। विद्यार्थी मालवीय जी के साथ चल पड़े। भ्रमण करते हुए सब लोग गंगा के किनारे पहुंचे। मालवीय जी ने अपनी पगड़ी, अंगरखा तथा जूते उतारे फिर गंगा मैया की जय का उद्घोष करते हुए कूद पड़े। गंगा स्तोत्र का उच्चारण करते हुए उन्होंने छात्रों को संकेत से बुलाया। छात्र भी जल में प्रविष्ट हुए। स्नान करने के पश्चात छात्र बाहर आए, तो मालवीय जी ने मुस्करा कर कहा इसे उत्तम प्राकृतिक स्नान गृह आपको कहां मिलेगा। दूसरे दिन से छात्रों के झुण्ड गंगा स्नान के लिए प्रतिदिन वहां आने लगे। छात्रों की समस्या का समाधान हो गया था।

शिरोमणि पुरुष पं. मदन मोहन मालवीय

राष्ट्रपुरुष उन्हें कहते हैं जो अपने देश के सम्मान में वृद्धि करते हैं। उनकी कृतियां एवं जीवन त्याग व बलिदान की सुलगती मशाल होता है और वे आनेवाली पीढ़ियों के लिए प्रकाश स्तम्भ का कार्य करते हैं।

इलाहाबाद की पुण्यभूमि ने बहुत सपूत भारत को दिए हैं। इनमें से पंडित मदन मोहन मालवीय जी का नाम अग्रणी है। वे मालवा प्रदेश के निवासी थे इसलिए उनके नाम के साथ मालवीय लगा दिया जाता है। पिता ब्रजनाथ एवं माता मुन्ना देवी धन्य थी जब २५ दिसम्बर १८६१ में ईश्वर ने उनको पुत्ररत्न दिया जिसने भारत में अपना नाम रोशन किया।

कलकत्ता विश्वविद्यालय में स्नातक की उपाधि के पश्चात वे पचास रुपए मासिक वेतन पर हाईस्कूल के अध्यापक भी रहे। साथ ही वे लेखनी द्वारा हिन्दोस्तान पत्रिका का सम्पादन भी करते रहे। बाद में उन्होंने वकालत पास की एवं प्रयाग में ही अपनी वकालत का अभ्यास आरंभ कर दी। चौरीचौरा काण्ड में उन्होंने अपनी वाकपटुता एवं कानूनी दांव पेचों द्वारा १५२ लोगों को कारावास से मुक्त कराया। भारतीय सभ्यता की सुरक्षा हेतु उन्होंने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना की। करोड़ों रुपए का धन संस्थाओं से इकट्ठा करके विद्यालय बनाया गया।

कांग्रेस सभा के दो बार सभापति बने। जलियांवाला बाग के काण्ड की घोर आलोचना की। १९३१ में इंग्लैंड में गोल मेज कांफ्रेंस में भाग लेने गए। महात्मा गांधी के वे पूर्ण सहयोगी थे। क्रिप्स कमिशन का विरोध १९४२ में किया गया। वहां भी वे अग्रणी थे। कर्तव्यपरायणता, दानशीलता, सत्यनिष्ठा, समाज सेवा व लोकसेवा में सदा वे आगे ही रहते। हिंदी, हिंदू, हिन्दुस्तान के उत्थान के लिए उनक मन में बहुत ललक थी।

वे विद्यार्थियों को मानसिक उन्नति के साथ-साथ शारीरिक उन्नति के लिए भी प्रेरणा देते थे। सैनिक शिक्षा, ब्वायस्काउट के लिए सदा वे बच्चों को प्रोत्साहन देते रहे। भारत की स्वतंत्रता के वातावरण में वे सांस न ले सके। १२ नवम्बर १९४६ को वे अपने कार्यों को अधूरा छोड़कर संसार से चल दिए। उनकी राष्ट्रभक्ति के लिए भारत की आत्मा सदा उनके सामने नतमस्तक रहेगी। सचमुच साधारण से असाधारण पुरुष बनना एक चमत्कार होता है। आज इतने वर्ष बाद भी उन्हें मृत्युपरान्त संसार याद रखे हुए है। गौरव शिखर को प्राप्त रखना कर्मयोग, तपयोग से ही सम्भव होता है। सर्वधर्म उत्थान के लिए पावन भावना जिन महापुरुषों को अनुकृतियों में प्रतिपालित है, भारत उनका सदा कृत कृत रहेगा।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय (बीएचयू) के संस्थापक पंडित मदन मोहन मालवीय कुशल राजनेता, विद्वान शिक्षाविद और मुखर स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही समाज के प्रति अपने दायित्वों को जीवनभर पूरे समर्पण से निभाते रहे। दिल्ली विश्वविद्यालय में इतिहास के प्राध्यापक अनिल राय कहते हैं कि बनारस हिंदू विश्वविद्यालय मालवीय जी के परिश्रम का प्रतिफल है। मालवीय जी ने संस्कृत कॉलेज की स्थापना की जो आगे चलकर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के रूप में विकसित हुआ। जामिया मिलिया विश्वविद्यालय के इतिहास के प्राध्यापक रिजवान कैसर कहते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में मालवीय जी का महती योगदान है। स्वतंत्रता आंदोलन और बीएचयू जैसी बड़ी शिक्षण संस्था की स्थापना में उनके योगदान को हमेशा याद किया जाएगा। उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में २५ दिसंबर, १८६१ को एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे पंडित मदन मोहन मालवीय ने पांच साल की उम्र में पंडित हरदेव की धर्म ज्ञानोपदेश पाठशाला में संस्कृत में शिक्षार्जन आरंभ किया। इलाहाबाद जिला स्कूल से स्कूली शिक्षा ग्रहण के बाद उन्होंने मुईर सेंट्रल कॉलेज से मैट्रीकुलेशन किया। यह कॉलेज आज का इलाहाबाद विश्वविद्यालय है। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक की पढ़ाई की। उन्होंने जुलाई, १८८४ में इलाहाबाद जिला स्कूल में बतौर शिक्षक अपना कैरियर शुरू किया, लेकिन राजनीति में भी लगातार सक्रिय रहे। जुलाई, १८८७ में वह राष्ट्रवादी साप्ताहिक हिंदुस्तान के संपादक बने। इस दौरान कानून की पढ़ाई करने के बाद पहले इलाहाबाद जिला न्यायालय और बाद में दिसंबर, १८९३ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अभ्यास

करने लगे। शिक्षा और समाज सेवा के क्षेत्र में कार्य करने के लिए उन्होंने १९११ में अभ्यास छोड़ दिया, हालांकि चौरी चौरी कांड में १७७ स्वतंत्रता सेनानियों को मृत्युदंड दिए जाने के खिलाफ वह फिर अदालत में उतरे और अपनी दलीलों से १५६ को बरी करवाने में सफल रहे। जब चौरा चौरी कांड में १७७ स्वतंत्रता सेनानी मृत्युदंड के लिए दोषी ठहराए गए तब उन्होंने उनकी ओर से अदालत में पेश हुए और १५६ को बरी करवाया। इस दौरान पूरी तरह राजनीति में रम चुके नरमपंथी नेता मालवीय को १९०९ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया। चार बार १९०९, १९१८, १९३० तथा १९३२ में अध्यक्ष बने। मालवीय जी इंपेरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल और बाद में इसके परिवर्तित रूप सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली के सदस्य भी रहे। उन्नीस सौ बीस के दशक के प्रारंभ में वह महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में प्रमुख नेता के रूप में उभरकर सामने आए। सन १९२८ में उन्होंने लाला लाजपत राय, जवाहरलाल नेहरू आदि के साथ मिलकर साइमन आयोग का जबर्दस्त विरोध किया। तुष्टिकरण के विरोधी मालवीय जी ने १९१६ के लखनऊ पूना पैक्ट में मुसलमानों के लिए अलग निर्वाचन मंडल का विरोध किया। वह खिलाफत आंदोलन में कांग्रेस के शामिल होने के खिलाफ थे। उन्होंने गांधीजी को देश विभोजन की कीमत पर आजादी के खिलाफ चेताया था। उन्होंने भी १९३१ में पहले गोलमेज सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया था। सत्यमेव जयते को उन्होंने ही लोकवाक्य बनाया। वह कई पत्र पत्रिकाओं के संपादक भी रहे। मालवीय जी ने जाति का बंधन तोड़ने के लिए काफी काम किया। इतिहास के प्राध्यापक प्रदीप कुमार कहते हैं कि मालवीय जी ने गांधी जी और आंबेडकर के बीच १९३० के पूना पैक्ट में अहम भूमिका निभाई। जीवनपर्यंत आजादी का सपना देखनेवाले मालवीय जी १२ नवंबर १९४६ को देश को आजादी की दहलीज पर छोड़कर चल बसे।

(जन्म- २५ दिसंबर)

देश की महान विभूति पंडित महामना मदनमोहन मालवीय का १९४६ में निधन हुआ था। उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद शहर में २५ दिसंबर १८६१ को एक साधारण परिवार में जन्मे मदनमोहन के पिता का नाम ब्रजनाथ और माता का नाम भूनादेवी था। चूंकि ये लोग मालवा के मूल निवासी थे, अत: मालवीय कहलाए। राष्ट्रीय नेताओं में अग्रणी मालवीय जी को शिक्षक वर्ग श्रद्धा और आदर से आज भी याद करते हैं। मालवीय जी ने १८९३ में कानून की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। वकालत के क्षेत्र में मालवीय जी की सबसे बड़ी सफलता चौरीचौरा कांड के अभियुक्तों को फांसी से बचा लेने की थी। चौरीचौरा कांड में १७० भारतीयों को फांसी की सजा सुनाई गई थी, किंतु मालवीय जी के बुद्धि-कौशल ने अपनी योग्यता और तर्क के बल पर १५१ लोगों को फांसी से बचा लिया था। देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में इस अद्‌भुत केस की ख्याति फैल गई थी। राष्ट्र की सेवा के साथ ही नवयुवकों के चरित्र निर्माण के लिए और भारतीय संस्कृति की जीवंतता को बनाए रखने के लिए मालवीयजी ने काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना की। मालवीय जी का विश्वास था कि राष्ट्र की उन्नति तभी संभव है, जब वहां के निवासी सुशिक्षित हों। बिना शिक्षा के मनुष्य पशुवत माना जाता है। मालवीय जी नगर नगर की गलियों तथा गांवों में शिक्षा का प्रचार प्रसार में जुटे थे। वे जानते थे कि व्यक्ति अपने अधिकारों को तभी भलीभांति समझ सकता है, जब वह शिक्षित हो।

भारतीय संस्कृति के पोषक थे मालवीय जी

पंडित मदन मोहन मालवीय जी का जन्म २५ दिसम्बर १८६१ को प्रयाग में हुआ था। आपके पिता श्री बृजनाथ जी कथावाचक थे। एक बार महात्मा गांधी जी ने कहा था- मैं मालवीय जी से बड़ा देशभक्त और किसी को नहीं मानता। मैं सदैव उनकी पूजा करता हूं। मालवीय जी गौ-गंगा-गीता और गायत्री को भारतीय संस्कृति का आधार मानकर इनके प्रचार-प्रसार व संरक्षण की दिशा में सदा प्रयासरत रहे। इनकी वकालत भी अनोखी तरह की थी। कहते हैं कि सामाजिक कार्यों के कारण इनका मन इस ओर कम था। प्राय: यह अपने केस दूसरों को दे दिया करते थे। मालवीय जी ने ४ फरवरी १९१६ को वसन्त पंचमी के दिन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की नींव रखी और इसके लिए पूरे देश में यात्रा करते हुए धन एकत्र किया। उन्होंने १९१९ से १९३९ तक इसके उपकुलपति पद का दायित्व भी निभाया। हरिद्वार के ब्रह्मकुण्ड में आनेवाली गंगा की अविच्छिन्न धारा को न रुकने देना और गंगा सभा की स्थापना मालवीय जी का एक महत्वपूर्ण कार्य रहा। घटना १९१४ की है। अंग्रेज सरकार ने गंगा की उस धारा पर बांध बनाने की योजना बना ली जो हर की पैड़ी (हरिद्वार) के ब्रह्मकुण्ड आती थी। इससे पुरोहित समाज व सन्तों महन्तों में रोष उत्पन्न हो गया। उस समय पं. मदन मोहन मालवीय से सन्त समाज की अगुवाई करते हुए बांध न बनने देने तथा गंगा की धारा न रुकने देने के लिए आंदोलन छेड़ दिया। यह आंदोलन एक बड़ा जनान्दोलन बन गया। इस आन्दोलन को दरभंगा नरेश, जयपुर नरेश, अल्वर नरेश, कलकत्ता के न्यायाधीश सहित श्री सुखबीर सिंह एम.एल.सी. मुजफ्फरनगर रिटायर्ड चीफ इंजीनियर राजा ज्वाला प्रसाद, पं. देवरत्न शर्मा, महंत लक्ष्मण दास आदि का भरपूर समर्थन व सहयोग मिला। परिणामस्वरूप तत्कालीन गवर्नर ने कहा कि धारा नं. १ जिसका जल हर की पैडी, पहुंचता है पर कोई बांध नहीं बनेगा किन्तु यह बात नहर विभाग ने नहीं मानी और धारा नं. १ पर बांध बनाना चाहा। अब तो पुन: यह आंदोलन शुरू हो गया। देशभर में जनसभाएं व प्रदर्शन होने लगे। दो वर्षों तक यह सिलसिला चला और इस जनान्दोलन से गवर्नर जेम्स मेस्टन की कुर्सी हिल गयी। सन १९१६ की १८-१९ दिसम्बर को हरिद्वार में एक विशाल सम्मेलन हुआ जिसमें देश की विख्यात रियासतों जयपुर, ग्वालियर, बीकानेर, पटियाला, बनारस, अलवर, कासिम बाजार के राजा तथा तत्कालीन हिन्दू नेता शामिल हुए। सरकारी प्रतिनिधियों से हुए वाद-विवाद में सरकार को आन्दोलन की भावना के सामने झुकना पड़ा। अब एक लिखित समझौता हुआ कि हर की पेड़ी से एक मील नीचे तक कोई बांध नहीं बनाया जाएगा। इसमें धारा को अविच्छिन्न रखने तथा तीर्थ की पवित्रता कायम रखने संबंधी बातें शामिल थी। इसी समय एक संस्था गंगा सभा की स्थापना की गयी जिससे यह फैसला कायम किया जा सके तथा तीर्थ की पवित्रता बनी रहे। गंगा सभा व काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मालवीय जी द्वारा दी गयी ऐसी संस्थाएं हैं जिनका काम ही भारतीय संस्कृति का पोषण है। वास्तव में मालवीय जी भारतीय संस्कृति के पोषक थे।

मदनमोहन मालवीय महान स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ और शिक्षाविद ही नहीं, बल्कि एक बड़े समाज सुधारक भी थे। इतिहासकार वीसी साहू के अनुसार हिन्दू राष्ट्रवाद के समर्थक मदन मोहन मालवीय देश से जातिगत बेड़ियों को तोड़ना चाहते थे। उन्होंने दलितों के मन्दिरों में प्रवेश निषेध की बुराई के खिलाफ देशभर में आंदोलन चलाया। २४ दिसम्बर, २०१४ को भारत के राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने पंडित मदनमोहन मालवीय को मरणोपरांत देश के सबसे बड़े नागरिक सम्मान भारत रत्न से नवाजा। सन १८९३ ई. में मालवीय जी ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना में पूर्ण योग दिया। उनका निधन १२ नवम्बर को हुआ।

हिन्दुत्व के संरक्षक- गुरु तेगबहादुर

गुरु तेगबहादुर इतिहास के उन अद्वितीय एवं अप्रतिम व्यक्तियों में से एक हैं जिन्होंने विभिन्न युगों में विश्व मानवता को निष्ठा, विश्वास, सच्चाई, सहयोग और अटल दृढ़ता के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है। उनका स्थान विश्व के उन महान धार्मिक शहीदों की रत्नगंगा के जगमगाते नक्षत्रों में अत्यन्त विलक्षण है जिन्होंने धर्म और सत्य की वेदी पर अपने प्राणों की बलि दी। उनका बलिदान केवल धर्म पालन के लिये नहीं, समस्त सांस्कृतिक विरासत की खातिर था। धर्म उनके लिये सांस्कृतिक मूल्यों और जीवन विधान का नाम था। अत: धर्म के लिये उनका बलिदान वस्तुत: सांस्कृतिक विरासत और मानव-धर्म की स्वतंत्रता की स्थापना के पक्ष में एक अभूतपूर्व घटना थी। यह गुरुजी के निर्भय आचरण, धार्मिक अडिगता एवं नैतिक उदात्तता का भी उदाहरण था। गुरूजी ने जिन धार्मिक आदर्शों की स्थापना की वह किसी समुदाय, जाति या वर्ग विशेष मनुष्य को महत्व एवं गौरव का अधिकारी समझने का उपदेश है तथा जिसके सांस्कृतिक विधान का मूल सिद्धांत है।

भय काहूं को देत नहिं, नहिं भय मानत आन। यह अभय जीवन दृष्टि, न किसी को डराना, न किसी से डरना उनके बलिदान की संकल्पना का मेरूदंड है। संत परंपरा में मान्य, इस सामान्य से नीति वाक्य- किसी को डराना नहीं चाहिए के साथ यह जोड़कर कि किसी से डरना भी नहीं चाहिए, गुरू तेगबहादुर ने अपने व्यक्तित्व की एक अलग पहचान बना ली। किसी को डराना नहीं चाहिए, यह सिद्धांत एक सद्गुण, एक नैतिक मूल्य हो सकता है पर व्यवहारिक जीवन में यह एक अधूरी उक्ति ही है यदि इसके साथ यह न जोड़ा जाये कि किसी से डरना भी नहीं चाहिए। गुरुजी यह अच्छी तरह जानते थे कि डरा हुआ व्यक्ति कोई भी सार्थक कार्य नहीं कर सकता। विद्रोह और बलिदान तो बड़ी दूर की बात है।

औरंगजेब के अत्याचार- गुरू तेगबहादुर की यह मान्यता थी कि हरेक को अपनी आस्था, अपना मत, अपना विश्वास, अपना धर्म चुनने और पालन करने की छूट है। इस संबंध में कोई जोर-जबर्दस्ती नहीं की जा सकती। इसी धार्मिक और वैचारिक स्वाधीनता का पक्षधर होने के कारण उन्हें औरंगजेब के कठमुल्लापन और धर्मांधता का विरोध करने के लिये खड़ा होना पड़ा। औरंगजेब अन्य सभी धर्मों को ध्वस्त कर केवल इस्लाम की पताका फहराना चाहता था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये राजसिंहासनपर आसीन होते ही उसने हिन्दू जनता पर अनेक प्रकार के अत्याचार आरंभ कर दिये। मंदिरों को गिराकर मस्जिदों का निर्माण होने लगा, जजिया आदि करों की वसूली निर्दयता से होने लगी, तलवार के बल पर इस्लाम का प्रचार होने लगा। हिन्दुओं के यज्ञोपवीत उतरवा कर उन्हें मुसलमान बनाया जाने लगा, एक-एक दिन में सवा मन जनेऊ उतारे जाते थे। ऐसे अनेक कृत्यों से हिन्दू जनता त्राहि-त्राहि कर उठी। हिन्दुओं पर ही नहीं अपितु शिया मुसलमानों और सूफी फकीरों पर भी औरंगजेब ने अनेक अत्याचार किये। सरमद नामक एक सुविख्यात फकीर को कत्ल किया गया। ऐसे अत्याचारों से पंजाब और कश्मीर में बहुत हाहाकार मची। कश्मीर में पंडितों की पुकार औरंगजेब का मत था कि ब्राह्मणों को उत्पीड़ित कर उनके विद्या केन्द्रों को ध्वस्त कर, उनके धार्मिक प्रतीकों को मिटाकर वह हिन्दू धर्म को समाप्त कर सकेगा। ८ अप्रैल १६६९ को एक फर्मान जारी कर उसने प्रांतीय राज्यपालों को यह आदेश दिया कि काफिरों के विद्यालय और मंदिर गिरा दिये जायें और विद्यार्थियों के धर्म की शिक्षा और उसका सामूहिक आचरण अविलंब खत्म कर दिया जाये। औरंगजेब की आज्ञा का पालन करते हुए, कश्मीर के नाजम, शेर अफगान ने आधे से अधिक पंडितों को मुसलमान बना दिया तथा हजारों को मौत के घाट उतार दिया। इन अत्याचारों से तंग आकर पंडित किरपाराम

के नेतृत्व में कोई पांच सौ पंडितों का एक शिष्टमंडल आनंदपुर साहिब में गुरुजी से मिला और उनसे शरण मांगी। मानवता की दुखभरी पुकार सुनकर गुरुजी का करूण हृदय कांप उठा और वे गहरी चिंता में लीन हो गये। उसी समय उनका नौ वर्षीय पुत्र गोबिन्द रायगुरू गोबिंदसिंह भी वहां आ पहुंचा तथा पिता की उदासी का कारण पूछा। गुरु ने अपनी उदासी बताते हुए कहा कि देश मुगलों के अत्याचारों से पीड़ित है तथा हिन्दू धर्म गहरे संकट में है। यह भयंकर स्थिति तभी सुधर सकती है जब कोई पुण्यात्मा धर्म के लिये अपना बलिदान करे। यह सुनकर गोबिन्द राय बोल उठे-

तुरकनभार दुख्त भई लोई। क्षत्री जगत न दिखीअत कोई।

जो निज अपना सीस चढ़ावे। निधरत धरन भार ठहरावे।

तुम में और अधक को आही। देह तेग जाके गृह माही।

इस पर गुरु जी गदगद हो उठे। इस किशोर में कितनी निर्भयता तथा निरासक्ति की भावना भरी हुई है और उन्होंने सहसा ही आत्मोसर्ग का निर्णय कर लिया। गुरुजी ने धर्म की रक्षा के लिये अपने जीवन के उत्सर्ग का व्रत लिया। उन्होंने कश्मीरी पंडितों से कहा कि वे बादशाह तक संदेश भिजवा दें कि अगर उनके संरक्षक गुरू तेगबहादुर सिंह ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया तो वे भी इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेंगे। कश्मीरी पंडितों ने ऐसा ही किया जिससे औरंगजेब तिलमिला उठा। औरंगजेब से भेंट- औरंगजेब ने अपने दो अधिकारियों को गुरुजी को दिल्ली बुलाने के लिये भेजा। गुरुजी ने अपने शिष्यों भाई मतिदास और भाई दयाला व भाई सतीदास के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। आगरा में वे कैद कर लिये गये तथा दिल्ली लाये गये। औरंगजेब से गुरुजी की भेंट का सांस्कृतिक महत्व है। यह दो विरोधी संस्कृतियों की मुठभेड़ थी। औरंगजेब इस्लाम धर्म को ही सच्चा समझता था और सभी को बलपूर्वक मुसलमान बनाना चाहता था जबकि गुरुजी जबरन धर्म परिवर्तन को अनुसूचि समझते थे। गुरुजी ने धार्मिक सहिष्णुता, उदारता एवं एकेश्वरवाद का औरंगजेब को उपदेश दिया मगर अहंकार में डूबे औरंगजेब ने गुरुजी को सत्य मार्ग से विचलित करने के लिये उनके सन्मुख उनके शिष्यों को यातनाएं दी। भाई मतिदास के शरीर की ओर से गुरुजी के सामने चीरा गया तथा भाई दयाला को खौलते हुए तेल के कड़ाही में डाल दिया गया। अगर यह हिंसा और बर्बरता की एक सीमा थी तो सहनशीलता की भी एक सीमा थी। गुरुजी इन सबके बावजूद अपने धर्म पथ से विचलित नहीं हुए।

गुरुजी का अद्भुत बलिदान- मानववाद के पुजारी को उसके आदर्श-पथ से विमुख कर पाने में विफल रहने के बाद औरंगजेब ने जन समूह के बीच उनके वध का आदेश दिया। उन्होंने लोहे के पिंजरे से बाहर लाया गया और उन्हें उनकी इच्छानुसार समीप के कुएं से स्नान करने की अनुमति प्रदान की गयी। स्नान के बाद वे एक वटवृक्ष के तले बैठकर जपुजी का पाठ करने लगे। उन्होंने जल्लाद से कहा- ज्योंही मेरा पाठ खत्म हो और मैं प्रभु के आगे शीश झुकाऊं, तभी मेरी गर्दन पर तलवार का वार करना। गुरुजी की शांत मुद्रा देख जल्लाद भी आश्चर्यचकित रह गया। इस तरह दमन के आगे न झुकते हुए गुरु जी ने अपने प्राणों की आहुति दे दी। गुरुजी का जीवन चरित्र न केवल हमें संजीवनी शक्ति प्रदान करता है अपितु राष्ट्रीय निर्माण के लिये गुरुजी की तरह अद्वितीय बलिदान देने के प्रेरणा देता है। डॉ. आशानंद वोहरा के अनुसार वे हिन्दुत्व के संरक्षक ही न थे वरन भारतीय संस्कृति की जीवन परंपरा के कर्णधार भी थे। इन जैसा व्यक्तित्व सारे भारतीय इतिहास में मिलना कठिन है। गुरु गोविंद सिंह ने इसीलिये तो कहा था- तेग बहादुर सी किरिया, करी न किनहूं न आन।

अटल बिहारी वाजपेयी (जन्म- २५ दिसम्बर)

अटल बिहारी वाजपेयी की एनडीए सरकार के दौरान (१९९९) कारगिल कांड हुआ। गठबंधन की विवशता के कारण भाजपा कुछ कर पाने में विफल रही। इसके बावजूद वाजपेयी ने २४ पार्टियों की गठजोड़ सरकार को बखूबी चलाया तथा सुशासन लाने की भरसक कोशिश की।

२६ दिसम्बर

२) अमर शहीद ऊधम सिंह

पटियाला रियासत के एक छोटे से ग्राम सुनाम मे टहलसिंह रहा करते थे। वही वे रेलवे मे काम करते थे। उनके यहाँ २६ दिसंबर, १८९९ मे एक बालक का जन्म हुआ। बाल-सुलभ चंचलता के कारण उनका उधमसिंह नाम रख दिया गया। ऊधमसिंह के एक ही छोटा भाई था। दोनो भाई सुखपूर्वक रह रहे थे कि एकाएक उनकी माता जी चल बसी। पिता टहलसिंह दोनो बच्चों को साथ लेकर अमृतसर आ गए। यहाँ पिताजी भी शीघ्र ही परलोक सिधार गए। ऊधमसिंह अपने अनुज के साथ अनाथालय की शरण मे चले गए। परिवार का अन्य कोई सदस्य नही था। दुर्भाग्य ने यहाँ भी पीछा नही छोड़ा। अनुज भी साथ छोड़कर परलोक वासी हो गया। अकेले बचे ऊधमसिंह। अनाथालय में रहकर मैट्रिक पास किया और वही कुछ दस्तकारी भी सीखी। १३ अप्रैल १९१९ को वैशाखी के मेले मे जनरल ओ. डायर ने निहत्थी व निरीह जनता पर जलियावाला बाग मे अंधाधुंध गोली चलवाई। बताया जाता है कि १५-२० मिनट के इस हत्याकांड मे १६०० राउंड गोलियां चलाई गयीं थी। जलियांवाला बाग की धरती लाल हो गई थी। हजारों की संख्या मे हुई मौतों को देख युवा ऊधमसिंह की रगो मे अंग्रेजों के विरुद्ध बदले की ज्वाला धधक उठी। ब्रिटिश शासन के प्रति गहरी नफरत पैदा हो गई। बीस वर्षीय युवक उधमसिंह ने इस हत्याकांड का बदला लेने के लिए उसी समय प्रण किया। देश मे जलियांवाला बाग हत्याकांड से पीड़ा और शोक के बादल चारो ओर छा गए। जनरल डायर कई वर्ष बीमार रहकर २३ जुलाई, १९२७ को अपनी मौत मर गया। जबकि माइकेल ओ. डायर १३ मार्च १९४० को कैक्सटन हाल, लंदन मे अपनी बहादुरी के गीत गाने आया था।

ऊधम सिंह भारती की आजादी की लड़ाई में अहम योगदान करनेवाले पंजाब के महान क्रान्तिकारी थे। अमर शहीद ऊधम सिंह ने १३ अप्रैल, १९१९ ई. को पंजाब में हुए भीषण जालियाँवाला बाग हत्याकांड के उत्तरदायी माइकल ओ डायर की लंदन में गोली मारकर हत्या करके निर्दोष भारतीय लोगों की मौत का बदला लिया था।

२६ दिसंबर १८९९ को शहीद ऊधम सिंह का जन्म सुनाम (जिला-संगरूर, पंजाब) में हुआ था। १९१९ को हुए जलियांवाला बाग में जनरल डायर के आदेश पर निर्दोष भारतीय की जघन्य हत्या के बाद उन्होंने बदला लेने की शपथ ली थी। इस हत्याकांड के २१ वर्ष बाद १३ मार्च १९४० को लंदन (इंग्लैंड) में रॉयल सेंट्रल एशियन सोसायटी की कॉक्स्टन हॉल में चल रही बैठक में जनरल डायर पर गोलियां चला दीं। दो गोलियां लगने से जनरल डायनर की मौत हो गयी। इस तरह अपना बदला पूरा किया। ३१ जुलाई १९४० को उन्हें पेंटनविले जेल में फांसी दी गयी। ३४ वर्ष बाद १९४७ में ब्रिटेन से उनके अवशेष लाये गये।

खलनायक का खात्मा कर नायक बने ऊधम सिंह (जन्म- २६ दिसंबर)

भारत के इतिहास में ऊधम सिंह एक ऐसा नाम है जिसके साथ जलियांवाला बाग नरसंहार के खलनायक को लंदन जाकर गोली से उड़ा देने की अदम्य साहस गाथा जुड़ी है। २६ दिसंबर १८९९ के पंजाब के संगरूर जिले के सुनाम गांव में जन्मे ऊधम सिंह ने अंग्रेजों से जलियांवाला बाग हत्याकांड का बदला लेने की प्रतिज्ञा की थी जिसे उन्होंने इस घटना के २१ साल बाद पूरा कर दिखाया। सर्वदानंदन के अनुसार ऊधम सिंह वीर होने के साथ ही सर्वधर्म सम्भाव के भी प्रतीक थे। उन्होंने अपना नाम बदलकर राम मोहम्मद आजाद सिंह रख लिया था जो भारत के तीन प्रमुख धर्मों को दर्शाता है।

ऊधम सिंह अनाथ थे। सन १९०१ में उनकी माता और १९०७ में उनके पिता का निधन हो गया। मां-बाप के चले

जाने के बाद उन्हें अपने बड़े भाई के साथ अमृतसर के एक अनाथालय में शरण लेनी पड़ी। उनका बपचन का नाम शेर सिंह और उनके बड़े भाई का नाम मुक्ता सिंह था जिन्हें अनाथालय में क्रमश: ऊधम सिंह और साधु सिंह के रूप में नए नाम मिले। होनी शायद इतने से ही संतुष्ट नही थी। १९१७ में ऊधम सिंह के बड़े भाई का भी निधन हो गया। इस तरह उनकी जिन्दगी पूरी तरह वीरान सी हो गई। आजादी की लड़ाई उन दिनों जोरों पर थी और ऊधम सिंह को इसमें शामिल होकर अपना मुकाम मिल गया। १९१९ में ऊधम सिंह क्रांतिकारी साथियों के साथ सक्रिय रूप से आजादी के हवनकुंड में कूद पड़े। डॉ. सत्यपाल और सैफुद्दीन किचलू की गिरफ्तारी तथा रोलट एक्ट के विरोध में अमृतसर के जलियांवाला बाग में लोगें ने १३ अप्रैल १९१९ को बैसाखी के दिन एक सभा रखी जिसमें ऊधम सिंह पानी पिलाने का काम कर रहे थे। इस सभा से तिलमिलाए पंजाब के तत्काललीन गनर्वर माइकल ओडवायर ने ब्रिगेडियर जनरल रेजीनल्ड डायर को हिन्दुस्तानियों को सबक सिखाने का आदेश दिया। इस पर जनरल डायर ने ९० सैनिकों के साथ जलियांवाला बाग को घेर लिया और अंधाधुंध गोलीबारी कर दी जिसमें सैकड़ों लोग शहीद हो गए। जान बचाने के लिए बहुत से लोगों ने पार्क में मौजूद कुएं में छलांग लगा दी। बाग में लगी पट्टिका पर लिखा है कि १२० शव तो सिर्फ कुएं से ही मिले। सरकारी आंकड़ों में मरनेवालों की संख्या ३७९ बताई गई, जबकि पंडित मदनमोहन मालवीय के अनुसार कम से कम १३०० लोग मारे गए। स्वामी श्रद्धानंद के अनुसार मरनेवालों की संख्या १५०० से अधिक थी, जबकि अमृतसर के तत्कालीन सिविल सर्जन डॉ. स्मिथ के अनुसार मरनेवालों की संख्या १८०० से ऊपर थी। इस घटना का ऊधम सिंह के दिलोदिमाग पर गहरा असर पड़ा और उन्होंने जलियांवाला बाग की मिट्टी हाथ में लेकर बदला लेने की कसम खाई। वह उस घटना के लिए ओडवायर को जिम्मेदार मानते थे, इसलिए उसे सबक सिखाने की योजना बनाने लगे। ऊधम सिंह अपनी शपथ को पूरा करने के उद्देश्य से १९३४ में लंदन पहुंचे। वहां उन्होंने एक रिवाल्वर और एक कार खरीदी तथा मौके का इंतजार करने लगे। योजना को अंजाम देने के लिए उन्हें उचित अवसर १३ मार्च १९४० को तब प्राप्त हुआ जब माइकल ओडवायर लंदन के कॉक्सटन हाल में एक सभा में शामिल होने के लिए गया। ऊधम सिंह ने एक मोटी किताब के पन्नों को रिवाल्वर के आकार में काटा और उनमें रिवाल्वर छिपाकर हाल के भीतर घुसने में कामयाब हो गए। सभा के अंत में मोर्चा संभालकर उन्होनें ओडवायर पर गोलियां दागनी शुरु कर दी और उसे ढेर कर दिया। ३१ जुलाई १९४० को पेंटविले जेल में ऊधम को फांसी दे दी गई जिसे उन्होंने हंसते हुए स्वीकार कर लिया। जलियांवाला बाग में गोलीबारी का आदेश देनेवाला ओडवायर जहां ऊधम सिंह की गोलियों से मारा गया, वहीं इस आदेश को मूर्त रूप देनेवाला जनरल डायर कई बीमारियों से तड़प-तड़प कर मर गया। ब्रिटेन ने १९७४ में ऊधम सिंह के अवशेष भारत को सौंप दिए।

जलियांवाला बाग में निहत्थों को भूनकर अंग्रेज भारत की आजादी के दीवानों को सबक सिखाना चाहते थे, ताकि वे ब्रितानिया सरकार से टकराने की हिम्मत न कर सकें लेकिन इस घटना ने स्वतंत्रता की चिंगारी को हवा देकर शोला बना दिया और इस बर्बर घटना को अंजाम देनेवाला आततायी आजादी के मतवालों के ताप में भस्म हो गया।

सन १८९९ में पंजाब में संगरूर जिले के सुनाम गांव में जन्मे ऊधम सिंह के सिर से मां-बाप का साया बचपन में ही उठ गया था। उनके जन्म के दो साल बाद १९०१ में उनकी मां का निधन हो गया और फिर १९०७ में उनके पिता भी चल बसे। मां बाप के साये से महरूम ऊधम सिंह और उनके बड़े भाई मुक्ता सिंह को अमृतसर के खालसा अनाथालाय में शरण लेनी पड़ी। होनी इतने से ही संतुष्ट नहीं थी। १९१७ में उनके भाई का भी निधन हो गया। इस तरह ऊधम सिंह दुनिया के जुल्मों सितम झेलने के लिए बिलकुल तनहा रह गए।

इतिहासकार वीरेंद्र शरण के अनुसार ऊधम सिंह इन सब घटनाओं से दुखी तो हुए लेकिन उनकी हिम्मत और संघर्ष करने की ताकत बहुत बढ़ गई। उन्होंने शिक्षा जारी रखने के साथ ही आजादी की लड़ाई में कूदने की भी ठान ली। उन्होंने चंद्रशेखर आजाद, राजगुरु, सुखदेव और भगत सिंह जैसे क्रांतिकारियों के साथ मिलकर ब्रिटिश हुक्मरान को ऐसी चोट दी जिसके निशान यूनियन जैक पर दशकों तक नजर आए। स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में सन १९१९ का १३ अप्रैल का दिन आंसुओं से लिखा गया है।

भारत के महान क्रांतिकारियों की सूची में ऊधम सिंह का विशेष स्थान है जिन्होंने जलियांवाला बाग नरसंहार के दोषी माइकल ओड्वायर को गोली से उड़ा दिया था। पंजाब में संगरूर जिले के सुनाम गांव में २६ दिसंबर १८९९ में जन्में ऊधम सिंह ने जलियांवाला बाग में अंग्रेजों द्वारा किए गए कत्लेआम का बदला लेने की प्रतिज्ञा की थी जिसे उन्होंने गोरों की मांद में ही घुसकर २१ साल बाद पूरा कर दिखाया। पंजाब के तत्कालीन गवर्नर माइकल ओड्वायर के आदेश पर ब्रिगेडियर जनरल रेजीनल्ड डायर ने अमृतसर के जलियांवाला बाग में शांति के साथ सभा कर रहे सैकड़ों भारतीयों को गोलीबारी कर मौत के घाट उतार दिया था। क्रांतिकारियों पर कई पुस्तकें लिख चुके जवाहर लाल नेहरू विश्व विद्यालय के प्रोफेसर चमन लाल के अनुसार जलियांवाला बाग की इस घटना ने ऊधम सिंह के मन पर गहरा असर डाला था और इसीलिए उन्होंने इसका बदला लेने की ठान ली थी। ऊधम सिंह अनाथ थे और अनाथालय में रहते थे लेकिन फिर भी जीवन की प्रतिकूलताएं उनके इरादों से उन्हें डिगा नहीं पाई। उन्होंने १९१९ में अनाथालय छोड़ दिया और क्रांतिकारियों के साथ मिलकर जंग ए आजादी के मैदान में कूद पड़े। जाने माने नेताओं डॉ. सत्यपाल और सैफुद्दीन किचलू की गिरफ्तारी के विरोध में लोगों ने जलियांवाला बाग में १३ अप्रैल १९१९ को बैसाखी के दिन एक सभा रखी थी जिसमें ऊधम सिंह पानी पिलाने का काम कर रहे थे। पंजाब का तत्कालीन गवर्नर माइकल ओड्वायर किसी कीमत पर इस सभा को नहीं होने देना चाहता था और उसकी सहमति से ब्रिगेडियर जनरल रेजीनल्ड डायर ने जलियांवाला बाग को घेरकर अंधाधुंध गोलीबारी कर दी। अचानक हुई गोलीबारी से बाग में भगदड़ मच गई। बहुत से लोग जहां गोलियों से मारे गए, वहीं बहुतों की जान भगदड़ ने ले ली। जान बचाने की कोशिश में बहुत से लोगों ने पार्क में मौजूद कुएं में छलांग लगा दी। बाग में लगी पट्टिका के अनुसार १२० शव तो कुएं से ही बरामद हुए। सरकारी आंकड़ों में मरनेवालों की संख्या ३७९ बताई गई, जबकि पंडित मदन मोहन मालवीय के अनुसार कम से कम १३०० लोगों की इस घटना में जान चली गई। स्वामी श्रद्धानंद के मुताबिक मृतकों की संख्या १५०० से अधिक थी। अमृतसर के तत्कालीन सिविल सर्जन डॉ. स्मिथ के अनुसार मरनेवालों की संख्या १८०० से ज्यादा थी। ऊधम सिंह के मन पर इस घटना ने इतना गहरा प्रभाव डाला था कि उन्होंने बाग की मिट्टी हाथ में लेकर ओड्वायर को मारने की सौगंध खाई थी। अपनी इसी प्रतिज्ञा को पूरा करने के मकसद से वह १९३४ में लंदन पहुंच गए और सही वक्त का इंतजार करने लगे। ऊधम को जिस वक्त का इंतजार था, वह उन्हें १३ मार्च १९४० को उस समय मिला जब माइकल ओड्वायर लंदन के काक्सटन हाल में एक सेमिनार में शामिल होने गया। भारत के इस सपूत ने एक मोटी किताब के पन्नों को रिवाल्वर के आकार के रूप में काटा और उसमें अपनी रिवाल्वर छिपाकर हाल के भीतर घुसने में कामयाब हो गए। चमन लाल के अनुसार मोर्चा संभालकर बैठे ऊधम सिंह ने सभा के अंत में ओड्वायर की ओर गोलियां दागनी शुरू कर दीं। सैकड़ों भारतीयों के कत्ल के गुनाहगार इस गोरे को दो गोलियां लगीं और वह वहीं मौत का शिकार हो गया। अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के बाद इस महान क्रांतिकारी ने समर्पण कर

दियां उन पर मुकदमा चला और उन्हें मौत की सजा सुनाई गई। ३१ जुलाई १९४० को पेंटविले जेल में यह वीर हंसते-हंसते फांसी के फंदे पर झूल गया। ब्रिटेन ने १९७४ में ऊधर सिंह के अवशेष भारत को सौंप दिए। ओड्वायर को जहां ऊधम सिंह ने मौत के घाट उतार दिया, वहीं जनरल डायर जिन्दगी की अंतिम घड़ी में बीमारियों से तड़प-तड़पकर २३ जुलाई १९२७ को बुरी मौत मर गया।

राम मोहम्मद सिंह आजाद। इन्हें सबसे गंभीर मामलों में सजा-ए-मौत दी गई थी। आगे जाकर यही अमर शहीद उधमसिंह के नाम से सारी दुनिया में चर्चित हुए। पंजाब के एक सामान्य परिवार में इनका जन्म हुआ था। दुनिया को ठीक से देखते समझते उससे पहले ही इनके माँ-बाप का देहान्त हो गया। छोटे से बड़े अनाथालाय में हुए। उन दिनों हमारे देश पर अंग्रेजों का राज था। उस वक्त के अंग्रेज दोनों हाथों से हमारे देश को लूट रहे थे। जिस लड़के को पूरी तरह शिक्षा नहीं मिल रही हो और जिंदगी में मां-बाप का प्यार भी नहीं मिला हो, उसकी चेतना कितनी जागरूक थी। वो देश की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार सांप्रदायिकता और सामाजिक झगड़ों को रोज पढ़ते और सुनते थे। इसलिए भारतीय श्रमिक संघ और हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन में काम करते हुए उन्होंने अपना नाम राम मोहम्मद सिंह आजाद रख लिया था। १३ अप्रैल १९१९ को जनरल डायर ने जब जलियांवाला बाग में सैकड़ों हिन्दुस्तानियों के खून से होली खेली, तब उन्होंने जालियांवाला बाग की मिट्टी को हाथ में लेकर इस घटना का डायर से बदला लेने का प्रण किया।

उसी क्षण से उधमसिंह के जीवन ने नया आकार लेना शुरू कर दिया। एक अनाथ नौजवान, जिसके पल्ले में कुछ भी न हो, वह यूरोपीय और अफ्रीकी देशों से होता हुआ लंदन जाता है। वहां वो एक मकान किराये पर लेता है। एक कार खरीदता है और साथ ही रिवॉल्वर भी खरीद लेता है। वो अपनी योजना में सफल होता, इससे पहले ही जनरल डायर अपनी मौत मर गया, पर जालियांवाला बाग हत्याकांड का आदेश निकालनेवाला, जनरल डायर का बॉस यानी लेफ्टिनेंट गवर्नर सर माइकल ओडवायर जिन्दा था। उधर सिंह ने उसकी हत्या करने का फैसला किया। एक दिन उसे पता चला कि ओडवायर रॉयल सेंट्रल एशियन सोसायटी की सभा में भाग लेने के लिए लंदन के फैक्सटन हॉल में आनेवाला है। उधमसिंह ने एक मोटी किताब को बीच में से इस तरह काटा कि उसमें रिवॉल्वर फिट बैठ जाए। अगले कुछ घंटे में उधमसिंह ने अपना टारगेट पूरा कर दिया। यह सच है कि इस हत्याकांड के बाद वो जीते जी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सितारे बन गए। अब इस बात को ८० साल से ज्यादा हो गए हैं, पर इस भली बात को भुला देनेवाले भारतीय उन्हें अब तक बड़ी इज्जत से याद करते हैं। सामाजिक सद्भाव, समानता और स्वतंत्रता के प्रति उनकी जिम्मेदारी आज पहले से बहुत ज्यादा जरूरी हो गई है। अगर हम पिछले कुछ हफ्तों की घटनाओं पर नजर डालें, तो लगेगा जैसे सारी दुनिया ही नफरत की नरक अग्नि में जल रही है।

यशपाल

यशपाल हिन्दी के यशवी कथाकार और निबन्ध लेखक हैं। यशपाल राजनीतिक तथा साहित्यिक, दोनों क्षेत्रों में क्रान्तिकारी हैं। उनके लिए राजनीति तथा साहित्य दोनों साधन हैं और एक ही लक्ष्य की पूर्ति में सहायक हैं।

एक सफल कथाकार होने के साथ-साथ यशपाल अच्छे व्यक्तित्व-व्यंजक निबन्धकार भी हैं। वे अनेक दृष्टिकोण के आधार पर सड़ी-गली रूढ़ियों, प्रवृत्तियों पर जमकर प्रहार करते हैं। उन्होंने सरस तथा व्यंग्य-विनोद, गर्भ संस्मरण और रेखाचित्र भी लिखे हैं। निधन २६ दिसंबर को हुआ।

प्रकाश आम्टे - २६ दिसम्बर

प्रकाश आम्टे प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता तथा चिकित्सक हैं। वे ख्यातिप्राप्त सामाजिक कार्यकर्ता तथा रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्त बाबा आम्टे के पुत्र हैं। प्रकाश आम्टे तथा उनकी पत्नी मंदाकिनी आम्टे जो स्वयं भी एक चिकित्सक हैं, आप दोनों को वर्ष २००८ में उनकी सामाजिक सेवाओं के लिए मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इससे पूर्व प्रकाश जी को २००२ में पद्मश्री से भी सम्मानित किया जा चुका है।

शंकरदयाल शर्मा (निधन- २६ दिसबंर)

शंकरदयाल शर्मा भारत के नवें राष्ट्रपति थे। शंकरदयाल शर्मा मध्य प्रदेश के पहले ऐसे व्यक्ति रहे, जो अपनी विद्वता, सुदीर्घ राजनीतिक समझबूझ, समर्पण और देश-प्रेम के बल पर भारत के राष्ट्रपति बने। इन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में मुख्य रूप से भाग लिया था। शंकरदयाल शर्मा ने १९९२ ई. में भारत के सर्वोच्च पद राष्ट्रपति का कार्यभार ग्रहण किया था।

बीना दास (निधन- २६ दिसंबर)

बीना दास भारत की महिला क्रांतिकारियों में से एक थीं। इनका रुझान प्रारम्भ से ही सार्वजनिक कार्यों की ओर रहा था। पुण्याश्रम संस्था की स्थापना इन्होंने की थी, जो निराश्रित महिलाओं को आश्रय प्रदान करती थी। बीना दास का सम्पर्क युगांतर दल के क्रांतिकारियों से हो गया था। एक दीक्षांत समारोह में इन्होंने अंग्रेज गवर्नर स्टनली जैक्सन पर गोली चलाई, लेकिन इस कार्य में गवर्नर बाल-बाल बच गया और बीना गिरफ्तार कर ली गईं। १९३७ में कांग्रेस की सरकार बनने के बाद कई राजबंदियों के साथ बीना दास को भी रिहा कर दिया गया।

बाबा आमटे

२६ दिसबंर, १९१४ को समाजसेवी बाबा आमटे का जन्म वर्धा (महाराष्ट्र) में हुआ था। उनका पूरा नाम मुरलीधर देवीदास आमटे था।

उन्होंने कुष्ठ रोगियों की सेवा के लिए आनंदवन नामक संस्था की स्थापना की।

मानवतावादी कार्यों के लिए वे पद्मश्री (१९७१), पद्मभूषण (१९७८), पद्मविभूषण (१९८६) और रेमन मैग्सेसे सम्मान (१९८८) से विभूषित किये गये।

उन्होंने राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए कश्मीर से कन्याकुमारी तक और असम से गुजरात तक भारत जोड़ो आंदोलन चलाया।

१० फरवरी, २००८ को आनंद वन में उनका निधन हो गया।

विद्यानंद जी महाराज - २६ दिसम्बर

स्वामी विद्यानंद जी महाराज प्रसिद्ध संत-महात्माओं में से एक हैं। इन पर स्वामी श्री केशवानन्द जी महाराज का विशेष कृपा थी। ये स्वभाव से अत्यन्त सरल और कर्मशील माने जाते हैं। लाहिड़ी जी द्वारा योग क्रिया का अभ्यास कर हिमालय में समाधि द्वारा साधना की प्राप्ति तथा विभिन्न क्रियायोगों का अभ्यास किया। हिमालय में उन्होंने अनेक साधु-संतों के दर्शन किये। वहां पर उन्हें कात्यायनी मां ने आदेश दिया।

बाबर (निधन- २६ दिसंबर)

बाबर ने इब्राहीम लोदी और राणा सांगा की हार के बाद भारत में मुगल राज्य की स्थापना की और आगरा को अपनी राजधानी बनाया। उससे पहले सुल्तानों की राजधानी दिल्ली थी; किंतु बाबर ने उसे राजधानी नहीं बनाया, क्योंकि वहाँ पठान थे, जो तुर्कों की शासन सत्ता पसंद नहीं करते थे। प्रशासन और रक्षा दोनों नजरियों से बाबर को दिल्ली के मुकाबले आगरा सही लगा। मुगल राज्य की राजधानी आगरा होने से शुरू से ही ब्रज से घनिष्ठ संबंध रहा। मध्य एशिया में शासकों का सबसे बड़ा पद खान था, जो मंगोल वंशियों को ही दिया जाता था। दूसरे बड़े शासक अमीर कहलाते थे। बाबर का पूर्वज तैमूर भी थे। बाबर ने अपना पद बादशाह घोषित किया था। बाबर के बाद सभी मुगल सम्राट बादशाह कहलाये गये।

२७ दिसम्बर

गालिब (जन्म- २७ दिसम्बर)

मिर्जा असदउल्ला बेग खान जिन्हें सारी दुनिया मिर्जा गालिब के नाम से जानती है, उर्दू-फारसी के प्रख्यता कवि थे। मिर्जा गालिब का सम्पूर्ण जीवन ही दु:खों से भरा हुआ था। आर्थिक तंगी ने कभी भी इनका पीछा नहीं छोड़ा। कर्ज में हमेशा घिरे रहे, लेकिन अपनी शानो-शौकत में कभी कमी नही आने देते थे। मिर्जा गालिब ने केवल कविता में ही नही, गद्य लेखन के लिये भी एक नया मार्ग निकाला था, जिस पर वर्तमान उर्दू गद्य की नींव रखी गई। सच तो यह है कि, गालिब को नए गद्य का प्रवर्तक कहना चाहिए। इनके दो पत्र-संग्रह, उर्दु-ए-हिन्दी तथा उर्दु-ए-मुअल्ला ऐसे ग्रंथ हैं कि, इनका उपयोग किए बिना आज कोई उर्दू गद्य लिखने का साहस नहीं कर सकता। इन पत्रों के द्वारा इन्होंने सरल उर्दू लिखने का ढंग निकाला और उसे फारसी अरबी की क्लिष्ट शब्दावली तथा शैली से स्वतंत्र किया। इन पत्रों में तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विवरणों का अच्छा चित्र हैं। गालिब की विनोदप्रियता भी इनमें दिखलाई पड़ती है। इनकी भाषा इतनी सरल, सुंदर तथा आकर्षक है कि, वैसी भाषा कोई उर्दू लेखक अब तक नहीं लिख सका। गालिब की शैली इसलिये भी विशेष प्रिय है कि, उसमें अच्छाइयां भी हैं और कच्चाइयां भी, तथा पूर्णता और त्रुटियां भी हैं। यह पूर्णरूप से मनुष्य हैं और इसकी छाप इनके गद्य पद्य दोनों पर है।

गालिब उर्दू-फारसी के प्रख्यात कवि तथा महान शायर थे। गालिब ने अपनी रचनाओं में सरल शब्दों का प्रयोग किया है। उर्दू गद्य-लेखन की नींव रखने के कारण इन्हें वर्तमान उर्दू गद्य का जन्मदाता भी कहा जाता है। इनकी अन्य रचनाएँ लतायफे गैबी, दुरपशे कावेयानी, नामाए गालिब, मेह्नीम आदि गद्य में हैं। फारसी के कुलियात में फारसी कविताओं का संग्रह हैं। दस्तंब में इन्होंने १८५७ ई. के बलवे का आँखों देखा विवरण फारसी गद्य में लिखा हैं। इनकी रचनाओं में देश की तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक स्थिति का वर्णन हुआ। उनकी खूबसूरत शायरी का संग्रह दीवान-ए-गालिब के रूप में १० भागों में प्रकाशित हुआ है। जिसका अनेक स्वदेशी तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। उनका निधन १५ फरवरी को हुआ।

नित्यानंद स्वामी (राजनीतिज्ञ) (जन्म- २७ दिसम्बर)

नित्यानंद स्वामी उत्तराखंड के पहले मुख्यमंत्री और भारतीय जनता पार्टी के वयोवृद्ध नेता थे। नित्यानंद स्वामी उत्तराखंड के पहले मनोनित मुख्यमंत्री बने। ९ नवंबर २००० से २९ अक्टूबर २००१ तक वे प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। उनका कुल कार्यकाल ११ महीने २० दिन रहा। इससे पहले वह वर्ष १९९१ में उत्तर प्रदेश में विधान परिषद के उपसभापति रहे और १९९२ में सभापति बने। सक्रिय राजनीतिक जीवन के आरंभ में दिवंगत स्वामी वर्ष १९६९ में अविभाजित उत्तर प्रदेश राज्य में देहरादून विधानसभा क्षेत्र से विधान परिषद से सदस्य निर्वाचित हुए।

२८ दिसम्बर

गजानन माडखोलकर (जन्म-२८ दिसम्बर)

गजानन माडखोलकर मराठी उपन्यासकार, आलोचक तथा पत्रकार थे। माडखोलकर अपनी काव्यमयी भाषाशैली के लिये बहुत प्रसिद्ध थे। इन्होंने अपना साहित्यिक जीवन रवि किरण मंडल नामक कवि समाज के सदस्य के रूप में कविता से आरंभ किया। किंतु बाद में इनकी ख्याति समालोचक और उपन्यासकार के रूप में अधिक हुई।

रतन टाटा (जन्म- २८ दिसम्बर)

रतन नवल टाटा टाटा समूह के पूर्व अध्यक्ष, जो भारत की सबसे बड़ी व्यापारिक समूह है, जिसकी स्थापना जमशेदजी टाटा ने की और उनके परिवार की पीढ़ियों ने इसका विस्तार किया और इसे दृढ़ बनाया। रतन टाटा, एक ऐसी शख्सियत हैं, जिसने यह सिद्ध कर दिया कि अगर आपमें प्रतिभा है, तो आप देश में रहकर भी ऐसे शिखर पर पहुंच सकते हैं, जहां हर भारतीय आप पर नाज करें।

७७ साल के टाटा को है किताबों से प्यार

इनका जन्म २८ दिसम्बर १९३७ को हुआ। टाटा ग्रुप के पूर्व चेयरमैन ७७ साल के रतन टाटा एक शर्मीले व्यक्ति हैं, समाज की झूठी चमक दमक में विश्वास नहीं करते हैं, वर्षों से मुम्बई के कोलाबा में एक किताबों एवं कुत्तों से भरे आशियाने में रह रहे हैं। रतन टाटा ने अपनी शादी और प्यार को लेकर कई अहम खुलासे किए हैं। उन्होंने कहा कि मुझे अपनी जीवन में ४ बार प्यार हुआ, लेकिन चारों बार हालात ऐसे बने कि किसी न किसी कारण से सिर पर सेहरा बंधते बंधते रह गया। वे कहते हैं कि ये अच्छी बात है कि उनकी शादी नहीं हो सकी, यदि होती तो हालात ज्यादा कठिन हो जाते। रतन टाटा को २००० में पद्मभूषण और २००८ में पद्मविभूषण से सम्मानित किया गया।

अमेरिका में लड़की से हुआ था प्यार

रतन टाटा ने अपने एक प्यार के बारे में बताया, जिसमें वे सबसे अधिक संजीदा थे। जब वे अमेरिका में काम करते थे तो उन्हें एक लड़की से प्यार हो गया था। उस वक्त १९६२ का भारत-चीन युद्ध चल रहा था। टाटा और उनकी प्रेमिका ने शादी का फैसला लिया। रतन टाटा भारत आ गए, लेकिन उनकी प्रेमिका युद्ध के दौरान बने तनावपूर्ण माहौल के चलते भारत नहीं आ सकीं। आखिर में उनकी प्रेमिका ने किसी और से शादी कर ली।

रतन टाटा के परिवार से खून के रिश्ते नहीं हैं। उनके पिता नवल एच टाटा सर रतन टाटा और उनकी बीवी नवजबाई सेठ के गोद लिए हुए बेटे थे।

बचपन में ही रतन टाटा के माता-पिता अलग हो गए थे लेकिन वे तब भी अपनी मां के करीब थे। जब रतन टाटा समूह में आए थे, तब कंपनी का कुल कारोबार १०००० करोड़ रुपए था, जबकि २०११-१२ में समूह का राजस्व ही ४७५.७२१ करोड़ रुपए हो गया है। टाटा ने विकसित देशों की कई ऐसी कंपनियों का अधिग्रहण कर लिया जो अपने देश में सुपर ब्रांड थीं। आज ८० देशों में टाटा समूह की कम्पनियां मौजूद हैं। रतन टाटा ने २१ साल के अपने करिअर में टाटा समूह को नई ऊंचाइयों पर पहुंचाया है।

टाटा से इस कार्यक्रम में ये भी पूछा गया कि वे जिनसे प्रेम करते हैं क्या उनमें से कोई इस शहर (मुंबई) में है। इस पर टाटा ने हां जैसा भाव जाहिर किया। टाटा अपनी प्यार के जीवन के बारे में अधिक बात करना पसंद नहीं करते हैं।

बुक्स से दिल्लगी- रतन बुक लवर हैं। उन्हें लोगों की सफलता की कहानियां पढ़ना बहुत पसंद है। वे कहते हैं कि निवृत्ति के बाद अब वे अपने इस शौक को समय दे पा रहे हैं।

बचपन से इंटरापर्सनल- उन्हें बचपन से ही कम बातचीत पसंद है। वे अपने सहयोगियों से भी सिर्फ औपचारिक बात करते हैं। उनके शौक से पता चलता है कि उनके अंदर कितना कुछ दबा-छिपा है।

जब आप अलग सोचते हैं तभी अलग कर पाते हैं

रतन टाटा का बचपन एक संपन्न परिवार में गुजरा। उनका पारिवारिक माहौल पूरी तरह उद्योग जगत से जुड़ा हुआ था, जिसका असर उन पर भी पड़ा। उनकी प्रारंभिक शिक्षा मुंबई में हुई। जिसके बाद वे आगे की पढ़ाई के लिए अमेरिका चले गएं वहां से उन्होंने स्ट्रक्चरल इंजीनियरिंग के साथ अग्रिम प्रबंधन कार्यक्रम पूरा किया। भारत लौटने से पहले उन्होंने लास एंजेलिस और कैलिफौर्निया में कुछ समय कार्य किया। उच्च शिक्षण पूरा करने के बाद में वे भारत वापस आ गये और अपने दादा जेआरडी टाटा की सलाह पर एक प्रतिष्ठित कंपनी में काम शुरू किया। जहां उन्होंने शॉप फ्लोर पर काम किया और वहां के कारीगरों के साथ वक्त बिताने और मिलकर काम करने की बारीकियां सीखीं। १९७१ में उन्हें नेशनल रेडियो एंड इलेक्ट्रॉनिक्स के डायरेक्टर पद पर नियुक्त किया गया। उस समय कंपनी को ४० फीसदी का नुकसान और दो फीसदी ग्राहकों के मार्केट शेयर खोने पड़े, लेकिन कठिन परिश्रम की बदौलत उन्होंने कंपनी का मुनाफा बढ़ाया, साथ ही ग्राहक मार्केट शेयर को भी दो से बढ़ाकर पच्चीस फीसदी तक ले गये। जल्द ही उन्हे १९८१ में टाटा उद्योग समूह का उत्तराधिकारी घोषित किया गया। जिसका विरोध लोगों द्वारा यह कहकर किया गया कि अभी उनमें अनुभव की कमी है। दस साल बाद उन्हें टाटा ग्रुप के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया। वे हमेशा से ही कुछ अलग करना चाहता था। उनकी इसी आकांक्षा ने टाटा ग्रुप को शिखर पर ले जाने का काम किया। देश में सफलता के बाद उन्होंने विदेशों में भी अपने उद्योग का विकास करने की ठानी। चूंकि उनकी दिलचस्पी हमेशा से ही मोटर-गाड़ियों में थी। इसलिए उन्होंने प्रतिष्ठित मोटर कंपनी जगुआर लैंड रोवर और क्रूज का अधिग्रहण कर वहां भी अपना वर्चस्व स्थापित किया। १९९८ में टाटा मोटर्स ने पहली पूर्णत: भारतीय यात्री कार टाटा इंडिका पेश की। वे भारत के लोगों के लिए एक ऐसी कार लाना चाहता था जो उनके बजट में हो। अपने इस सपने को पूरा करते हुए उन्होंने दुनिया की सबसे सस्ती कार, टाटा नैनो को मार्केट में पेश किया। जो लोगों द्वारा खूब पसंद की गई। उनका यह मानना है कि जीवन में आगे बढ़ते रहने के लिए उतार-चढ़ाव का बड़ा ही महत्व है। यहां तक कि ईसीजी में भी सीधी लकीर का अर्थ मृत ही माना जाता है। जीवन में आगे बढ़ते रहने के लिए उतार चढ़ाव का बड़ा ही महत्व है।

देश की पहली कार जिसकी डिजाइन से लेकर निर्माण तक का कार्य भारत की कंपनी ने किया हो, उस टाटा इंडिका प्रोजेक्ट का श्रेय भी रतन टाटा के खाते में ही जाता है। इंडिका के कारण विश्व मोटर कार बाजार के मानचित्र पर उभरा है। १९९१ में वह टाटा संस के अध्यक्ष बने और उनके नेतृत्व में टाटा स्टील, टाटा मोटर्स, टाटा पावर, टाटा टी, टाटा केमिकल्स और इंडियन होटल्स ने भी काफी प्रगति की। टाटा ग्रुप की टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (टीसीएस) आज भारत की सबसे बड़ी सूचना तकनीकी कंपनी है। वह फोर्ड फाउंडेशन के बोर्ड आफ ट्रस्टीज के भी सदस्य हैं। कंपनी के

नियमानुसार ६५ वर्ष की उम्र पार कर लेने के बाद वह पद से तो रिटायर हो गए, पर काम करने का जुनून अभी भी उन पर हावी है और उनकी अगुवाई में टाटा के कंपनियां नए आयामों को छू रही हैं।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्थापना दिवस

२८ दिसंबर १८८५ को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना बम्बई में हुई थी। इसका श्रेय एओ ह्यूम को जाता है जो प्रथम महासविच थे।

इसकी स्थापना गोकुलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय के भवन में ७२ थियोसोफिकल सोसायटी के राजनीतिक प्रतिनिधियों की उपस्थिति में हुई थी। व्योमेश चंद्र बनर्जी प्रथम अध्यक्ष बनाये गये थे। लार्ड डफरिन के सलाह पर बनी भारतीय राष्ट्रीय संघ का नाम दादाभाई नौरोजी की सलाह पर बदल कर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कर दिया था। अब तक पांच महिलाओं ने अध्यक्ष पद संभाला है।

अरुण जेटली (जन्म- २८ दिसम्बर)

अरुण जेटली भारत की शीर्ष राजनीतिक पार्टियों में से एक भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के प्रमुख नेता हैं। वे वर्तमान समय में भारत के वित्तमंत्री के पद पर आसीन हैं। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) के शासन मं अरुण जेटली केंद्रीय न्यायमंत्री के साथ-साथ कई बड़े पदों पर भी आसीन रह चुके हैं।

धीरूभाई अंबानी (जन्म- २८ दिसम्बर)

धीरजलाल हीराचंद अंबानी भारत के प्रसिद्ध उद्योगपति थे। वे बड़े दूरदर्शी व्यक्ति थे। उद्योग की संभावनाओं का पुर्वानुमान लगा कर वे समय रहते उस क्षेत्र में काम आरंभ कर देते थे। उन्होंने स्वयं अकूत संपत्ति अर्जित की और शेयरधारकों को भी उसमें साझीदार बनाया। आधुनिक भारत में अपनी सूझबूझ से कुछ ही वर्षों में इतना सफल उद्योग-व्यवसाय समूह स्थापित करनेवाले अद्वितीय व्यक्ति थे।

२९ दिसम्बर

व्योमेश चंद्र बनर्जी

२९ दिसंबर १८४४ को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पहले अध्यक्ष व्योमेश चंद्र बनर्जी का जन्म कोलकाता में हुआ था। १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद उन्होंने उसके पहले अध्यक्ष के रूप में कार्यभार संभाला। ब्रिटिश हाऊस ऑफ कॉमन के चुनाव लड़नेवाले वे पहले भारतीय थे। इंग्लैंड प्रवास के दौरान उन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। २१ जुलाई १९६० को इंग्लैंड में उनका निधन हो गया।

३० दिसम्बर

रघुवीर सहाय (निधन-३० दिसंबर)

रघुवीर सहाय की गणना हिंदी साहित्य के उन कवियों में की जाती है जिनकी भाषा और शिल्प में पत्रकारिता का प्रभाव होता था और उनकी रचनाओं में आम आदमी की व्य५था झलकती थी। रघुवीर सहाय एक प्रभावशाली कवि होने के साथ ही साथ कथाकार, निबंध लेखक और आलोचक थे। वह प्रसिद्ध अनुवादक और पत्रकार भी थे।

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी (जन्म- ३० दिसम्बर)

विख्यात वकील, स्वाधीनता सेनानी, लेखक और शिक्षाविद। स्वाधीनता संग्राम में भागीदारी के लिए कई बार जेल की सजा भुगती। भारतीय विद्या भवन, भवंस कॉलेज, हंसराज मोरारजी पब्लिक स्कूल, राजहंस विद्यालय और राजहंस बाल वाटिका के संस्थापक। संविधान सभा में संविधान निर्माण में सक्रिय भूमिका। केंद्र में मंत्री तथा १९५२-५७ तक यूपी के राज्यपाल रहे। १९५९ में कांग्रेस पार्टी से त्यागपत्र देकर स्वतंत्र पार्टी में शामिल हो गए। पर्यावरण प्रिय मुंशी ने वनमहोत्सव की शुरुआत की थी। अंग्रेजी और गुजराती में कई पुस्तकें लिखीं।

३१ दिसम्बर

श्रीलाल शुक्ल (जन्म- ३१ दिसम्बर)

श्रीलाला शुक्ल को लखनऊ जनपद के समकालीन कथा-साहित्य में उद्देश्यपूर्ण व्यंग्य लेखन के लिये विख्यात साहित्यकार माने जाते थे। उन्होंने १९४७ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक परीक्षा पास की। १९४९ में राज्य सिविल सेवा से नौकरी शुरू की। १९८३ में भारतीय प्रशासनिक सेवा से निवृत्त हुए। उनका विधिवत लेखन १९५४ से शुरू होता है और इसी के साथ हिंदी गद्य का एक गौरवशाली अध्याय आकार लेने लगता है।

रविशंकर शुक्ल (निधन- ३१ दिसम्बर)

रविशंकर शुक्ल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता तथा स्वतंत्रता सेनानी थे। आप १ नवम्बर, १९५६ को अस्तित्व में आये नये राज्य मध्य प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री नियुक्त हुए थे। पण्डित रविशंकर शुक्ल को नये मध्य प्रदेश के पुरोधा के रूप में स्मरण किया जाता है।

महाकवि कालिदास

कालीदास भारतीय साहित्य के जाज्वल्यमान रत्न है। काव्य मर्मज्ञों ने उन्हें कविता कामिनी का विलास कहा है। रस की अमृत स्त्रोतस्विनी प्रवाहित करनेवाले भारतीय संस्कृति के चिरंतन आदर्शों को कान्तासम्मित अभिव्यक्ति प्रदान करनेवाले इस सारस्वत कवि का जीवन वृत्त अद्यापि कुतूहल एवं अनुमान का विषय बना हुआ है। न कोई इतिहास के ग्रंथ में उनके विषय में कोई निश्चित सामग्री, जन्म तारीख व जन्मस्थान के बारे में उपलब्ध होती है। माना जाता है कि कालिदास राजाभोज की सभा के कवि थे। उनका साहित्यानुराग पंडित परंपरा में चिरकाल से सम्मानित रहा है। भोज उज्जैन राज्य के अधीश थे। कालीदास ने कुमार सम्भव, मेघदूत, रघुवंश, ऋतुसंहार, अभिज्ञान शाकुंतलम इत्यादि ग्रंथों की रचना की। कई इतिहासकारों ने कालीदास को अकबर दरबार का कवि बताया है। कई इतिहासकारों ने कालीदास को चंद्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) गुप्त के समकालीन बताया है।

कालीदास संस्कृत भाषा के एक महान नाटककार और कवि थे। कालिदास शिव के भक्त थे। कालिदास नाम का शाब्दिक अर्थ है काली का सेवक। उन्होंने भारत की पौराणिक कथाओं और दर्शन को आधार बनाकर रचनाएं की।कालिदास अपनी अलंकार युक्त सरल और मधुर भाषा के लिये विशेष से जाने जाते हैं। उनके ऋतु वर्णन बहुत ही सुंदर हैं और उनकी उपमाएं बेमिसाल हैं। संगीत उनके साहित्य का प्रमुख है। उन्होंने अपने शृंगार रस प्रधान साहित्य में भी साहित्यिक सौंदर्य के साथ-साथ आदर्शवादी परंपरा और नैतिक मूल्यों का समुचित ध्यान रखा है। उनका नाम सदा सदा के लिये अमर है और उनका स्थान वाल्मीकि और व्यास की परम्परा में शामिल हैं। कालिदास के काल के विषय में काफी मतभेद हैं। पर अब विद्वानों की सहमति से उनका काल प्रथम शताब्दी ई.पू. माना जाता है। इस मान्यता का आधार यही है कि उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के शासन काल से कालिदास का रचनाकाल संबद्ध है। भारतीय इतिहास में उदारवृत्ति वाले गुप्त सम्राटों के शासनकाल में ही यह सम्भव हुआ है जिस वैभव एवं ऐश्वर्य का चरित्रचित्रण कालिदास ने अपने ग्रंथों में किया है। कालिदास के ग्रंथों में धार्मिक सहिष्णुता तथा दंडनीति की विनम्रता का प्रचुर उल्लेख हुआ और पुरानी परम्पराएं सर्वत्र विकीर्ण है। इन सभी चित्रणों से कालिदास गुप्त काल की कवी प्रतित होते है। गुप्तकाल में कलाओं की सर्वांगीण उन्नति हुई जिसमें मूर्तिकला का विकास उल्लेखनीय है। इस काल में हिंदू, बौद्ध और जैन मूर्तियों का प्राचुर्य हो चला था और कालिदास की रचनाओं में मुर्तियों का संसार ही अवतीर्ण हुआ। कालिदास के जन्मकाल का प्रश्न जितना जटिल है, उतना ही जटिल यह प्रश्न है कि वे कहाँ उत्पन्न हुए थे। इस महाकवि की शैशव-भूमि के लिये भारतवर्ष के भिन्नभिन्न प्रदेश अपने अधिकार उपस्थित करते है। बंगाल के लोग यह कहते हैं कि कालिदास बंगाल से है क्योंकि काली के दास होते हैं इसलिए उसका नाम कालिदास था। कालिदास ने भारतवर्ष के अनेक भागों, प्रदेशों का अपनी रचनाओं में वर्णन किया है इससे उनके भौगोलिक ज्ञान की सराहना की गयी है। विदर्भ तथा विदिशावाले कालिदास का सम्बन्ध इन प्रांतों से जोड़ने का उपक्रम किया है। मेघदूत की रचना में रामगिरी, वर्तमान रामटेक, विदर्भ में नागपूर के पास अवस्थित है। इसे विदर्भ का माना गया है। कई इतिहासकारों ने कालिदास के संस्कार दक्षिण प्रदेश के है कि वो दक्षिण भारत से है। किन्होंने उन्हे उत्तर कौशल का बताकर उत्तरीय भारत का बताया है। कुछ विद्वानों ने कालिदास की जन्मभूमि मिथिला होने का प्रमाण दिया है। कोई इतिहासकारों ने कालिदास को मयग्राम कश्मीर से बताया है। इसीप्रकार कालिदास का जीवनचरित्र भी ठोस उल्लेखों के आधार पर अनुमानित किया गया है। कालिदास आरंभ में अत्यंत रूपवान पूर्णतया

अशिक्षित एक मूर्ख नवयुवक था जिसका आविर्भाव ब्राह्मण कुल में हुआ और पशुपालन जैसा अभद्र कार्य करता था। किसी छल प्रपंच से उसका विवाह एक अत्यन्त विदुषी राजकुमारी से करवा दिया जिसने उसके वास्तविक ज्ञान एवं संस्कारों का परिचय प्राप्त कर उसे अपनी भर्त्सनाओं अथवा अभ्यर्थनाओं द्वारा विद्योपार्जन करने के लिए अनुप्रेरित किया। कालिदास पत्नी की प्रेरणा से कविकुल के चिराराध्या गुरु बन गए। उनकी रचनाओं में सौंदर्यशालिनी रमणियों का जो अवतरण हुआ है तथा विलास वैभव का जो उल्लासगर्भित चित्रण हुआ है वह व्यक्तिगत अनुभव के अभाव में उतनी पूर्णता के साथ सम्भव नहीं हुआ। कई इतिहासकार कहते हैं उज्जैनी के राजा विक्रमादित्य ने उन्हें अपना जामाता बना लिया। विक्रमादित्य की पुत्री प्रियंगुमंजरी जब पढ़ लिखकर पूर्ण विदुषी बन गयी तब वह यौवन मद के कारण अपने आचार्यों से ही परिहास करने लगी। तब इससे क्षुब्ध होकर उसका गर्व चूर्ण करने के लिए किसी प्रकार उसका विवाह एक महामूर्ख पशुपालक से करा दिया गया। प्रियंगुमंजरी ने युवक की भर्त्सना की जो कालिका देवी की आराधना से महाकवि कालिदास बन गया।

कालिदास जब पत्नी की प्रेरणा से काली की उपासना कर प्रतिभाशाली कवि बन गये तो उन्होंने उसे मातृसुख मान लिया और उसके साथ पत्नी का संबंध छोड़ दिया। इस पर पत्नी ने कुपित हो उन्हें वेश्याव्यसनी होने का श्राप दिया और वेश्या संसर्ग से ही उनकी जीवन लीला समाप्त हुई।

कई इतिहासकारों का मत है कालिदास को मिलनेवाले अतिशय सम्मान के कारण राजसभा के अन्य पंडितों को कोई कुचक आयोजित हुआ होगा जिससे वे राजदरबार से निष्कासित किये गये। उनकी रसीली प्रकृति के कारण, उनके विपक्षियों ने किसी प्रकार उन्हें किसी रमणी के दुश्चक्र में फंसा दिया जो अन्त में उनके निधन का कारण बना। महाकवि कालिदास की विचरणभूमि उत्तर में हिमालय के आंचलों से लेकर दक्षिण में सिंहल द्वीप (लंका) तक प्रसारित रही।

कालिदास केवल कविताकामिनी के एकान्तसाधक ही नहीं थे, अपितु तत्कालीन राज्यसत्ता के संचालन से भी उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। इस कारण, उन्हें भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों में परिभ्रमण करने का प्रचुर अवसर मिला और चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य जैसे प्रतापी सम्राट से सम्बन्धित होने तथा स्वयं प्रतिभाशाली कवि होने के कारण, उन्हें सर्वत्र यथेष्ट सम्मान मिला जिस कारण वे भिन्न-भिन्न स्थानों में कुछ काल तक ठहरते गए और उनकी प्राकृतिक एवं सामन्तीय परिस्थितियों का अवलोकन किया। समस्यापूर्ति उस समय काव्य रसिकों के बीच मनोविनोद का एक सुंदर साधन थी। कालिदास इस कला में भी नितान्त निष्णात थे और पर्याप्त ख्याति अर्जित कर ली थी। अनेक समस्या पूर्तियाँ पंडित समाज में उनके नाम से जुड़ी चली आई हैं। इस कारण भी वे जहाँ जहाँ गए वहाँ वहाँ काव्यरसिकों द्वारा विद्वद्गोष्ठियों में अपना विदग्ध वाग्विलास दिखाने के लिए प्रार्थित हुए। फलस्वरूप जहाँ उन्हें स्नेह, सम्मान एवं श्रद्धा, तीनों का मिश्रित प्रसाद मिला वहीं वे ईर्ष्या और अन्तर्दाह के भी आस्पद बने। कालिदास अपनी जाति तथा जातीय प्रतिभा के विश्वसनीय प्रवक्ता रहे हैं।

भारतवर्ष की राष्ट्रीय चेतना का स्पष्ट तथा जीवन्त मूर्तिकरण कालिदास के काव्य निश्चय में सफल हुआ था। कालिदास ऐसे युग के आरम्भ में आविर्भूत हुए थे जब भारतवर्ष उपनिषदों से पुराणों की ओर, वेदान्त और सांख्य की ऊंची चोटियों से उतरकर संन्यासमूलक योग की शारीरिक प्रक्रियाओं तथा तत्त्वशास्त्रीय तर्कना के शुष्क बुद्धिवाद अथवा रागात्मक धर्म की ऐन्द्रिय ऊष्मा की ओर उन्मुख होकर, अपने दर्शनों को व्यवस्थित रूप प्रदान कर रहा था और अपनी कलाओं एवं विज्ञानों को विकसित कर रहा था। कालिदास इन सम्पूर्ण प्रवृत्तियों, अपने युग की सम्पूर्ण विद्याओं तथा ज्ञानविज्ञान, दार्शनिक एवं आचारशास्त्रीय मान्यताओं अथवा अपने समय की सबसे अधिक वैभवशाली राजधानी की

जीवनचर्याओं से पूर्णतया परिचित तथा प्रभावित थे।

कालिदास की काव्यसृष्टि रूप, शब्द, रस, घ्राण, स्पर्श और स्वाद एवं कल्पना के आनन्दों के ताने-बाने से बनी हुई है। इसमें उन्होंने भाव तथा बौद्धिक अथवा रसात्मक आदर्श के अत्यंत मनोज्ञ कुसुम उगा दिये हैं। उनकी काव्य रचना की दृश्यावली सुन्दर वस्तुओं का एक व्यापक स्वर्ग है। उसमें सभी के ऊपर पार्थिव सुषमा के केवल एक अधिनिम्न का शासन है। नैतिकता रस से आर्द्र बना दी गई है, बुद्धि सौन्दर्य भावना से ओतप्रोत एवं शासित हो गई। सभी प्रकार के भावों एवं विचारों में काल्पनिक आनन्द, शोक एवं उल्लास का ऐश्वर्य, प्रणय के संवेग एवं आनन्द के प्रति उन्मुक्त आत्म विसर्जन, जीवन एवं सौन्दर्य के आस्वादों का अन्वेषण ये सभी कालिदास के युग की विशिष्टताएँ हैं। कालिदास का काव्य विविध मिश्रित रंगों एवं ध्वनियों का समन्वित संसार है जिससे उनके युग की सम्पूर्ण प्रवृत्तियों का यथावत् परिकलन हो सकता है। कालिदास ने प्रकृति की रमणीयताओं का जितना सरस एवं ललित वर्णन किया है, उससे भी अधिक हृदय तथा आवर्जक चित्रण उन्होंने मानव सौंदर्य का किया है। कालिदास के काव्य में सार्वभौमिकता का जो भाव विद्यमान है वह केवल उसकी मानवीयता एवं विषय व्यापकता से ही आविर्भूत नहीं होता, अपितु, उसका कारण यह भी है कि कालिदास काव्यात्मक भाव तथा काव्यात्मक शैली, दोनों के समर्थ स्वामी हैं।

कालिदास भारतीय काव्यशैली के निर्विवाद सर्वश्रेष्ठ स्वामी हैं जो अपनी रचना की पूर्णता एवं मसृणता के कारण अश्वघोष से श्रेष्ठतर ठहरते हैं तथा जिनमें वे असंयमपूर्ण अलंकृतियां बिलकुल नहीं पाई जाती हैं जिनसे पश्चाद्भावी महान काव्यकारों की रचनाएँ दूषित अथवा विकृत हो गई हैं। कालिदास अलंकारों के प्रयोग से अपने काव्य का सौष्ठव बढ़ाने में पीछे नहीं है। लेकिन, उनका प्रधान गुण यह है कि वे विजृम्भण की तुलना में संकेत को अधिक पसन्द करते हैं। उनके उत्तराधिकारियों की यह धारणा थी कि वे अपनी शक्ति का अधिकतम प्रदर्शन कर उसका प्रमाण दे सकते थे; कालिदास केवल एक निश्चित प्रभाव उत्पन्न करके ही सन्तुष्ट रह जाते थे। वर्जिल के समान वे भी ग्राम्य सरलता एवं भदेसपन और काव्य-सौन्दर्य को प्रतिहत करनेवाली अमर्यादित अलंकृति के बीच स्वर्णोपम मध्य-मार्ग का अनुसरण करनेवाले कवि थे। परिणामत: मसृण कोमलता से पूर्ण उनके लघु चित्र प्राय: आपेक्षित पूर्णत्व ग्रहण कर लेते हैं। नारित्व के आदर्शों को उभारने का जो उद्योग उन्होंने किया है, वह उनके काव्य का एक प्रमुख वैशिष्ट्य है। राजदरबारों में पोषित होने के कारण उनकी कविता में अलंकृति का सौष्ठव एवं भावना का चमत्कार मिलता है। वास्तव में, श्रृङ्गाररस के चित्रण में ही कालिदास समर्थ हैं। उनकी कविता में गरिमा उत्पन्न करनेवाले वे तत्व वर्तमान नहीं है। चरित्र चित्रण का उनका फलक परिसीमित है और उन्होंने जीवन एवं जगत् के जिन तथ्यों एवं रसों का उन्मीलन किया है। वर्णाश्रम व्यवस्था की स्पष्ट स्वीकृति कालिदास के काव्यों में प्रतिष्ठित है और कहीं भी उसकी उपयोगिता अथवा समीचीनता के सम्बन्ध में उन्हें किसी प्रकार की कोई जिज्ञासा अथवा विचिकित्सा बेचैन नहीं करती। वह देवताओं की दुनिया में भी स्वच्छंदता तथा सम्मान के साथ विचरण करता है, सुरपुर की सुन्दरियों के प्रण का उपभोग भी करता है। कालिदास के काव्य का संसार इसी धुरी पर घूमता है और इस कक्षा में सत्य, सुन्दर एवं शिव का जो उन्मीलन हो सकता है, वह उसमें प्रचूर परिमाण में उपलब्ध है। कालिदास ने शौर्य, औदार्य, सुखोपभोग तथा त्याग तितिक्षा मिश्रित आदर्श प्रस्तुत कर युग-धर्म को प्रोत्साहित हीं नहीं किया, अपितु, उसे परिष्कृत एवं सुसंस्कृत भी किया। कालिदास ने समाज के सर्वाधिक गतिशील एवं क्रियाशील तत्वों के साथ सहयोग कर युगधर्म को अग्रसर करने का उद्योग किया है।

लगभग दो शताब्दी पूर्व कालिदास को भारतवर्ष का शेक्सपियर कहा गया था। तब से कालिदास की शेक्सपियर के

साथ तुलना काव्य दृष्टि से कहाँ तक सङ्गत एवं समीचीन है, इस विषय में प्रचुर मतभेद का अवकाश विद्यमान है। किन्तु एक दृष्टि से दोनों महाकवि परस्पर समान हैं। जैसे शेक्सपियर आंग्ल जाति के जीवन एवं संस्कृति का सच्चा प्रतिनिधि है, वैसे ही कालिदास भारतीय जीवन के सच्चे प्रवक्ता एवं वैतालिक हैं। भारत वर्ष की आत्मा उनमें जीती है और सांस लेती है। वह भारतवर्ष जिसकी अखण्ड परम्परा में हम जीवित रहे हैं, उनमें सुरक्षित है, हमारे सोचने-विचारने, रोने-हँसने और कर्म-धर्म करने का सम्पूर्ण तरीका प्राय: अद्यापि वही है जो कालिदास ने अपनी कृतियों में प्रतिष्ठित किया है। उनकी दुर्बलताएँ भारतीय जीवन की दुर्बलताएँ और उनकी शक्तियाँ उसकी शक्तियाँ हैं। भारत की धरती से, उसकी प्रकृति से उन्हें प्रगाढ़ अनुराग है और इसी कारण अपनी ललित कल्पना के रंगों से रंजित कर, उन्होंने उसके अत्यन्त प्राणवान चित्र अंकित किये हैं। इस दृष्टि से; कालिदास को भारतवर्ष का राष्ट्रीय कवि कहना पूर्णतया उचित एवं न्यायपूर्ण समझा जाएगा।

कालिदास सम्पूर्ण मानवता के कवि हैं। वस्तुत: भारतीय संस्कृति के उच्चतम आदर्शों को वाणी प्रदान करनेवाला महाकवि मानव मात्र का ही कवि हो सकता है। वस्तुत: कालिदास की सबसे बड़े शक्ति एवं उपलब्धि यही है कि उन्होंने जीवन के लिए एक सुनिश्चित योजना की कल्पना की है, जिसमें मनुष्य के यावत् अभीप्सिताओं की सिद्धि की सम्यक् व्यवस्था है, किन्तु जिसमें प्रेयस के लिए श्रेयस् की अवमानना नहीं की गई है, सुंदर के लिए शिवं की कदर्थना नहीं की गई है। युग युग का मानव मूलत: उसी संघर्ष से उलझता है और मङ्गल मार्ग का वरण कर ही अपने विकास की यात्रा में अग्रसर होता है। वस्तुत: लौकिक साधनाओं में प्राथमिकता का यही क्रम अंगीकार कर सभी काल का मनुष्य विश्व कल्याण की यह कामना करता आया है। कालिदास ने प्रेम और सौंदर्य की जो स्रोतस्विनी अपनी रचनाओं में प्रभावित की है, वह युग-युग में मनुष्य को मनोमुग्ध करती रहेगी। वे सिद्ध सारस्वत कवि हैं। वाङ्मधु का आद्योपान्त परिस्रवण करानेवाला नारिकेलपाक उनके काव्य की प्रधान विभूति है।

कालिदास का काव्य विश्वकुतूहली है। इसी कारण वे युग युग के कवि हैं, समग्र मानवता के मनोमयकोष के मधुर एवं मनस्वी गायक हैं।

महात्मा कबीर

अंधेरा जितना गहरा होगा, उतना ही दीपक का प्रकाश तेज होगा, यह बात कबीर पर यथार्थ सिद्ध होती है। आज चारों ओर अज्ञानता का घनघोर अंधेरा सुरसा की भांति मुंह फैलाये समाज की सभ्यता को निगल जाने को आतुर है। आज भी कबीर की उपयोगिता और अधिक महसूस होती है।

कबीर अर्थ में नहीं बल्कि आध्यात्म में अग्रणी थे। समाज की विसंगति का दोष वे कलियुग पर नहीं थोपते। उनकी रचनाओं के आइने में उनका जो चेहरा उभरता है, उसे नजदीक से निहारने पर सच्चे संत या ज्ञानी भक्त का ही प्रतीत होता है। बिना कागज कलम के उन्होंने वह सब कह डाला जो समाज को सोचने पर विवश करता है। जब सारे सम्प्रदाय लुप्त होने लगे तब उन्होंने सद्भावनापूर्ण सम्प्रदाय स्थापित किया। कबीर के संदेश मानवता का संदेश देते है। वे आत्मा से परमात्मा से मिलने का मार्ग निश्चित कर लोगों को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते है। कबीर ने पूरी दुनिया को जाति, सम्प्रदाय व क्षेत्रवाद को मानव के एकसूत्र में बाधंने की प्रेरणा दी। उनके शब्द हिंदू और मुस्लिम को एकजूट करने के प्रयास में है। कबीर ने तत्वज्ञान से भाषा, प्रांत, धर्म, देश, मानवजाति को प्रेम का संदेश तथा जीवन मूल्यों का विचार दिया है। उन्होंने कहा- विश्व का सबसे छोटा व्यक्ति अस्पृश्यता पालनेवाला है, वो कभी भी बड़ा व्यक्ति नहीं बन सकता। सामाजिक बंटवारे के चलते हमारा देश छोटा बनते जा रहा है। जन्म-मृत्यु, राग-लोभ, सुख-दुख, भूख, तनाव यह सभी बातें एकसमान है। कबीर ने जीवन को सुखमय बनाने का सूत्र बताया। भारतीय संस्कृति मानवता का दर्शन देती है। भारत के कई महान संतों में कबीर काफी ऊंचे है। भाषा, वेष, संगीत, कला के संदर्भ में श्रमिकों को कभी कभार अवसर उपलब्ध होता है ऐसा अवसर उन्हें कबीर के रूप में मिला।

उनका उद्देश्य सृजन था, निषेध नहीं। उनका सारा संघर्ष चेतना पर छाई हुई विकृतियों से होता है इसलिए वे स्पष्ट कहते हैं अपने आप से लड़ना सीखो। अपने अंदर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि जो विकार हैं, उनसे लड़ना सीखो। इन पर विजय पाने के बाद ही सुधार होगा। समाज सुधार की बातें तो बाद की हैं, सर्वप्रथम तो स्वयं को ही सुधारना होगा। उनके मन में समाज का विकल्प सार्वभौम मानव समाज के रूप में स्पष्ट दिखाई देता था। वे न तो अपने को हिन्दू समाज से जोड़ते हैं और न ही मुस्लिम समाज से। वे न तो सार्वभौम मानव समाज के निर्माण का स्वप्न देखते थे।

कबीर जहां एक ओर जोरदार फटकार लगाते हैं वहीं दूसरी ओर उपदेश भी देते हैं। इससे स्पष्ट है कि वे अपने इर्द-गिर्द के समाज से उदासीन नहीं हैं किंतु उसकी वर्तमान कुरूपता उन्हें क्षुब्ध करती है। उन्होंने अपने दिव्य संदेश में बताया कि जीवन का मूल्य तभी बढ़ता है जब त्याग, अहिंसा, प्रेम और व्यवहार श्रेष्ठ हो। अर्धचेतन अवस्था में भागते जाना कोई प्रगति नहीं, प्रगति तो पूर्णता का प्रतीक है। वे स्वानुभूति को महत्व देते हैं इसलिए सदैव वे समाज में पर्याप्त संशोधन या सुधार के पक्षधर रहे।

कबीर वर्णाश्रम व्यवस्था के साथ मानवता तथा एकता की उपेक्षा नहीं कर सके। वे हर कीमत पर समता की प्रतिष्ठा चाहते थे। उनके आसपास जो भी समाज हो, उसमें बिना भेदभाव के वे परिवर्तन लाना चाहते हैं। उनकी दृष्टि अनुभव केन्द्रित है। मानवीय प्रकृति की विवशता के कारण वे अपने समाज और समय की दुखदायी विकृतियों से क्षुब्ध हो उठे और संशोधन तथा सुधार के लिए अकेले ही चल पड़े।

आध्यात्मिक लक्ष्य की पूर्ति में सदा लोकतंत्र की भावना होती है जबकि राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से चलाए गए

आंदोलन में अधिकार और परिग्रह की भावना होती है, इसलिए उन्होंने धार्मिक और आध्यात्मिक पथ का ही सहीसही दिशा निर्देश किया। कबीर कोई क्रांतिकारी या आन्दोलनकारी नहीं थे, न ही उनके साथ कोई जमात थी। वे तो अकेले ही चले और अपने आचरण से जनता के हृदय को प्रभावित कर सदवृत्तियां जगाते रहे।

सामान्यत: संत कबीर का समय संवत १४५५ से १५६५ तक माना जाता है। यह समय देश में राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सामाजिक सभी दृष्टियों से काफी उथल-पुथल का था। शासकों में भी प्राय: धर्म का विनाशकारी उन्माद छाया हुआ था। समाज की उपासना पद्धतियां भी विकृतियों से ग्रस्त थी। पारस्परिक फूट और विद्वेषवश हिंदू शासक परास्त होकर विवश जीवन जीते थे। समाज की यह दशा, व्याप्त विषमता, अनिगिनत विभाजित इकाइयां और पाखण्ड का ताण्डव चारों ओर छा रहा था। ऐसे समय प्रतिक्रिया और प्रतिशोध की आवश्यकता थी। ऐसे दुर्दम्य अपसांस्कृतिक परिवेश को बदलने का कार्य आसान नहीं था। फिर भी संत कबीर ने किया। सचमुच ऐसा कार्य कबीर जैसे महान विचारक ही कर सकते थे। कबीर के यथार्थ चिंतन की आज भी जरूरत है। देश के विकास में योगदान देने का संकल्प मात्र स्वप्न बनकर न रह जाए। उसे साकार रूप में परिणित करने का प्रयास करो, तभी सुधार संभव है। एकता और आदर्श आध्यात्म द्वारा ही संभव है, इसलिए उन्होंने बताया कि मूलतत्व का संग्रह कर उपभोग करें, तभी षड्यंत्रों से बच सकेंगे। उनका ज्ञान जीवन मूल्यों को लेकर चलता है तभी तो श्रेष्ठ है। वास्तव में कबीर का दिव्य संदेश मौन शिक्षक है। यह प्रतिपल प्रेरणा तो देता ही है साथ में भविष्य के लिए चुनौती और मार्गदर्शन भी प्रदान करता है, इसलिए उन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता। वे आज भी प्रासंगिक हैं।

मजाज अदबी

तू इंकलाब की आमद का इंतजार न कर, जो हो सके तो इंकलाब पैदा कर

अपनी पुअसर कलम से समाज की बुराइयों पर वार करनेवाले महान तरक्की पसंद उर्दू शायर मजाज लखनवी ऐसे पहले इंकलाबी उर्दू मौसीकीकार माने जाते हैं, जिन्होंने बेहद परिपक्त तरीके से जदीदियत (आधुनिकतावाद) की तरफ रुख किया और औरतों को घर की चहारदीवारी से निकालकर रियासत तथा अन्य सामाजिक जिम्मेदारियों के निर्वहन में भागीदार बनाने की वकालत की। १९३० के दशक के सबसे प्रगतिशील उर्दू साहित्यिक आवाजों में शुमार मजाज अदबी इंकलाब के जरिये समाज को कुरीतियों से मुक्त कराना चाहते थे और इसकी तड़प उनके कलाम में भी शिद्दत से झलकती है। मजाज का शेर तू इंकलाब की आमद का इंतजार न कर, जो हो सके तो इंकलाब पैदा कर अपनी सोच के लिये उनकी प्रतिबद्धता को जाहिर करता है। मशहूर उर्दू शायर बेकल उत्साही ने मजाज की विलक्षण अदबी शख्सियत का जिक्र करते हुए कहा कि उनके कलाम में गजब की जदीदियत और ताजगी थी तथा वह असल मायनों में प्रगतिशील शायर थे। उन्होंने कहा कि मजाज ऐसे पहले शायर थे, जिन्होंने बहुत समझ बूझ और परिपक्व ढंग से उर्दू शायरी में जदीदियत को पिरोया। उत्साही ने कहा कि अल्फाज की दौलत से मालामाल वह एक ऐसे शायर थे जिनकी साहित्य के प्रति सेवाओं पर बहुत कम शोध कार्य हुआ है। नतीजतन इस बात का डर पैदा हो गया है कि शायरी को नई गहराइयां देनेवाले मजाज की सम्पन्न विरासत कहीं धीरे-धीरे गुम न हो जाए। उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले के रुदौली में वर्ष १९११ में जन्मे असरारुल हक मजाज की शुरुआती तालीम लखनऊ और आगरा में हुई थी। उसके बाद उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि हासिल की थी। उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में ही मजाज लखनवी के तखल्लुस से नज्में और गजलें लिखना शुरू कर दिया था और कलम का धनी यह शायर अदबी दुनिया में जल्द ही मकबूल हो गया। उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय का नारा ये मेरा चमन, है मेरा चमन, मैं अपने चमन का बुलबुल हूं भी लिखा था। मजाज के दो कविता संग्रह आहंग और साज ए नौ बेहद लोकप्रिय हुए। उनकी बहन सफिया का निकाह मशहूर शायर जां मिसार अख्तर से हुआ था। मौजूदा दौर के नामी गीतकार जावेद अख्तर उनके भांजे हैं। उर्दू शायरी में इंकलाब की लौ जलाकर उसे नई ताब और आब देनेवाले मजाज ने पांच दिसंबर १९५५ को लखनऊ में आखिरी सांस ली।

श्री गणेश

त्रयीमयायाखिलबुद्धिदात्रे बुद्धिप्रदीपाय सुराधिपाय ।
नित्याय सत्याय च नित्यबुद्धि नित्यं निरीहाय नमोस्तु नित्यम ।

भगवान गणेश आप सभी बुद्धियों को देनेवाले, बुद्धि को जगाने वाले और देवताओं के भी ईश्वर हैं। आप ही सत्य और नित्य बोध स्वरूप हैं। आपको मैं सदा नमन करता हूं।

श्री नारायणी देवी सांस्कृतिक भवन ट्रस्ट के पंच दस वार्षिक महोत्सव पर आपका स्वास्थ्य, निरोगी काया का विमोचन करते हुए श्री महेन्द्रकुमार पाटोदिया, डॉ. जगदीश हीरेमठ, आचार्य श्री वागेशजी व डॉ. राजीव राऊत।

मानव संसधान केंद्रीय राज्यमंत्री श्री सत्यपाल सिंह को
आपका स्वास्थ्य, निरोगी काया ग्रंथ भेंट करते हुए श्री महेन्द्रकुमार पाटोदिया

हमारे प्रेरणास्रोत आदरणीय श्री ब्रिजमोहन जी मुंजाल

(संस्थापक अध्यक्ष- हीरो मोटर कॉर्प्स)

यादें रह जाती है और दिन गुजर जाते हैं, देखते देखते हरे भरे बाग उजड़ जाते हैं।
वक्त के हाथ का खिलौना है इंसान, जीवनभर के हमसफर कुछ ही क्षणों में बिछुड़ जाते हैं।।

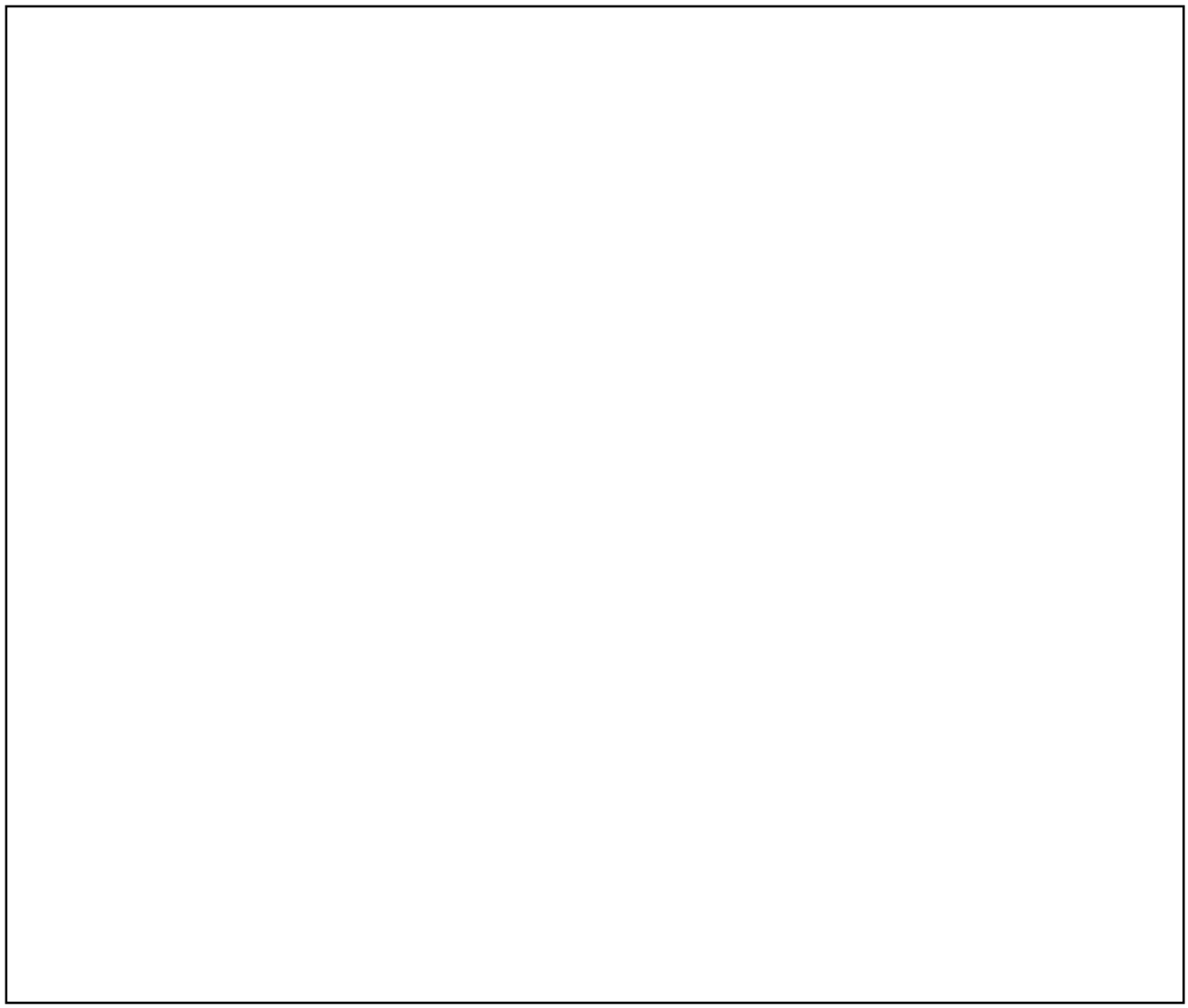

लोक आगमन- १ जुलाई, १९२३ लोक विदाई- १ नवम्बर, २०१५

सुंदरता की मूरत प्यारी, संघर्षों से कभी न हारी।
रहे यशस्वी जीवन भर, कभी न पाला कोई डर।।
सबके थे सबको ही सुहाये, कदम कदम पर वे सबको भाये।
आज पुकारें उन्हें स्नेहीजन, वियोग उनका जीवनभर खूब रुलाये।।

श्री ब्रिजमोहन जी मुंजाल को भावभीनी अश्रुपूर्ण श्रद्धांजली

श्री

विदेशी इतिहास

तियानानमेन स्क्वायर हत्याकांड (४ जून)

आज ही के दिन चार जून १९८९ को चीन की पीपल्स लिबरेशन आर्मी ने बंदूकों और टैंकों के सहारे बीजिंग के तियानानमेन स्क्वायर पर शांतिपूर्वक प्रदर्शन कर रहे निशस्त्र नागरिकों का दमन किया था।

कम्युनिस्ट पार्टी के पूर्व महासचिव और उदार सुधारवादी हू याओबांग की मौत के बाद छात्रों ने सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन शुरू किया था। अप्रैल १९८९ में चीनी छात्रों ने डेमोक्रेटिक रिफॉर्म के लिए आंदोलन शुरू किया था। इसे चीन के कामगारों, बुद्धिजीवी व सिविल सेवा के लोगों का भी समर्थन प्राप्त था। करीब दस लाख से अधिक लोग इस चौक पर जमा हो गए थे।

इसमें मरनेवालों की संख्या ३०० के करीब बताई जाती है। दस हजार से अधिक प्रदर्शनकारी गिरफ्तार किए गए। चीन सरकार ने इससे जुड़े सभी तस्वीरों और सूचनाओं पर रोक लगा दी हैं।

विश्व रक्तदान दिवस

१४ जून को पूरी दुनिया में विश्व रक्तदान दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसकी शुरुआत १९९७ में हुई। इसका मकसद है कि रक्त की जरूरत पड़ने पर उसके लिए पैसा नहीं देना पड़े। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने ऑस्ट्रेलियाई जीवविज्ञानी कार्ल लेण्डस्टाइनर के सम्मान में उनके जन्म दिन को रक्तदान दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया। उन्होंने ही अग्गुल्युटिनिन की मौजूदगी के आधार पर रक्त का चार समूहों में वर्गीकरण कर चिकित्साविज्ञान में अहम योगदान दिया था। १९३० में वे नोबेल पुरस्कार से भी सम्मानित हुए।

हो ची मिन्ह

१९ मई १८९० को वियतनाम के क्रांतिकारी नेता व राष्ट्रपति हो ची मिन्ह का जन्म होवांग टू (मध्य वियतनाम) में हुआ था। उन्होंने तीन दशकों तक राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व किया। सबसे पहले जापान के विरुद्ध लड़े, फिर फ्रांस के उपनिवेशी ताकतों के खिलाफ लड़े और अंत में अमेरिकी सहयोग से चलनेवाली दक्षिणी वियतनाम के खिलाफ लड़े। १९४५ में जापानी सेना के चले जाने के बाद उन्होंने हनोई पर अपना कब्जा किया और वियतनाम को स्वतंत्र घोषित कर दिया। १९५४ में उसके पहले राष्ट्रपति बने। एकीकृत वियतनाम के लिए उन्होंने अमेरिका के विरुद्ध युद्ध लड़ा। तीन सितंबर १९६९ को हनोई में उनका निधन हो गया। हालांकि १९७५ में उनका सपना पूरा हुआ।

जॉन बायड डनलप

५ फरवरी, १८४० को हवा वाले टायर के आविष्कारक जॉन बायड डनलप का जन्म आरशायर (स्कॉटलैंड) में हुआ था। १८८७ में उन्होंने अपने बच्चे की तीन पहिया साइकिल के लिए पहली बार न्यूमेटिक या हवा वाले टायर का प्रयोग किया। इसके लिए उन्होंने एक रबर की चादर का उपयोग लकड़ी के ऊपर किया था।

विश्व का यह पहला टायर था, जिसमें हवा भरी जा सकती थी। ७ दिसंबर, १८८९ को उन्होंने इसका पेटेंट हासिल कर लिया। उन्होंने डनलप टायर का व्यावसायिक उत्पादन शुरू कर दिया। बाद में पेटेंट अधिकार विलियम हारवे कंपनी को बेच दिया। २३ अक्टूबर, १९२१ को उनका निधन हो गया।

आइजैक मेरिट सिंगर

आज ही के दिन २७ अक्टूबर १८११ को पैरों से चलनेवाली सिलाई मशीन को दुनिया में लानेवाले आइजैक मेरिट सिंगर का जन्म न्यूयार्क (अमेरिका) में हुआ था।

युवावस्था में उन्होंने अपने कपड़े खुद बनाने का निर्णय लिया। १८५० में उन्होंने लकड़ी और लोहे से मशीन बनायी और उसे पैरों से चलनेवाला बनाया।

इसमें एक मिनट में ९०० टांके लगने लगे। सिलाई के लिहाज से यह बड़ी क्रांति थी। पहले एक मिनट में ४० टांके ही लगते थे। उन्होंने ड्रिल रॉक नाम की अपनी इस मशीन को पेटेंट करा दिया। १८६० आते-आते सिंगर कंपनी मशहूर हो गयी। सिलाई मशीन बनानेवाली यह दुनिया की सबसे बड़ी कंपनी है। २३ जुलाई १८७५ को इंग्लैंड में उनका निधन हो गया।

वर्साय संधि और प्रथम विश्वयुद्ध का अंत

२८ जून, १९१९ को जर्मनी और गठबंधन देशों के बीच वर्साय शांति संधि पर हस्ताक्षर के साथ ही प्रथम विश्व युद्ध का अंत हो गया था। जर्मनी के प्रतिनिधियों ने विजेता देशों द्वारा पेश संधि पर विरोध जताते हुए दस्तखत किये थे। उन्हें संधि तय करने की बातचीत में शामिल नहीं किया था। इस संधि ने उसके अधिकारों को भी काफी सीमित कर दिया था। इस संधि के बाद जर्मनी को अपनी भूमि का बड़ा हिस्सा खोना पड़ा था। साथ ही उसे सेना को कम करने और विजेता देशों को हर्जाना देने को बाध्य किया गया। जर्मनी पर थोपे गये इस संधि को एडोल्फ हिटलर और अन्य जर्मन लोग अपमानजनक मानते थे और इस तरह यह संधि द्वितीय विश्वयुद्ध के कारणों में से एक बनी।

हिरोशिमा दिवस

६ अगस्त १९४५ को जापान के हिरोशिमा शहर पर अमेरिका ने पहला परमाणु बम गिराया था। यूरेनियम- २३५ आधारित इस बम का नाम लिटिल ब्याय था। इसका वजन ६० किलोग्राम था जिसे एनोला गे नामक बी-२९ विमान से पॉल टिबेट्स ने गिराया था। इसने १३ वर्ग किमी के क्षेत्र में एक साथ १.४ लाख लोगों को मौत की नींद में सुला दिया। इसके विकिरण के प्रभाव से अनेक वर्षों तक अनगिनत लोग मरते रहे। इस विध्वंस से पीड़ित लाखों लोगों को श्रद्धांजलि देने के दिन के रूप में इसे पूरी दुनिया में मनाया जाता है। पहली बार दुनिया ने परमाणु बम की शक्ति और विनाश को देखा था।

ओटो लिनिएथनाल

२३ मई, १८४८ को ग्लाइडर किंग के मशहूर ओटो लिनिएथनाल का जन्म जर्मनी के पोमेरिनिया प्रांत में हुआ था।

उन्होंने इन्सान को उड़ना सिखाया। वे पहले शख्स थे, जिन्होंने ग्लाइडर बनाया और उससे कई सफल उड़ान भरी। उन्होंने अपने ग्लाइडर में पक्षियों के जैसे पंख बनाये और उन्हें साधने के लिए लकड़ी से कसा और १० मीटर ऊंची इमारत की छत से छलांग लगायी। उनकी इस छलांग ने इंसानी सभ्यता का सदियों पुराना उड़ने का सपना साकार कर दिया। ग्लाइडर से गिरने पर लगी चोट के कारण १० अगस्त १८९६ को उनकी मौत हो गयी।

विश्व का पहला गुर्दा प्रत्यारोपण

१७ जून १९५० को शिकागो में चिकित्सकों ने पहली बार एक महिला के शरीर में गुर्दा का सफल प्रत्यारोपण किया था। रूथ टकर नाम की महिला का एक गुर्दा पहले की खराब हो चुका था और दूसरा ठीक से काम नहीं कर रहा था। ऐसे में डी रिचर्ड लॉलर की टीम ने एक मृत महिला के गुर्दे को ट्रांसप्लांट किया। ट्रांसप्लांट करने के १० महीने बाद टकर का शरीर गुर्दे को अपना नहीं पाया। लेकिन तब तक उनका पुराना गुर्दा ठीक हो गया। वे अगले पांच वर्ष तक जीवित रहीं।

इसके चार साल बाद १९५४ में दो जिंदा लोगों के बीच गुर्दा प्रत्यारोपण किया गया। जुड़वां भाइयों में से एक ने दूसरे को गुर्दा दान दिया। इस सफलता के लिए डॉ. जोसफ मरे को १९९० में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया। अमेरिका में प्रति वर्ष औसतन १६००० गुर्दा प्रत्यारोपण होते हैं।

लेजर किरणों की खोज

१६ मई १९६० को पहली बार कैलिफोर्निया की ह्यूज रिसर्च लैबोरेट्रीज में लेजर किरण का प्रदर्शन किया गया था। इसे खोजनेवाले अमेरिकी भौतिकशास्त्री थेअडोर मेमैन ने इस प्रदर्शन में बादलोंवाली बिजली की क्रौध जैसे क्षणिक प्रकाश स्पंदों को एक सिल्वर कोटेड रूबीन क्रिस्टल में से गुजार कर पैदा किया था। लेजर शब्द अंगरेजी में लाइट एम्पिलिफिकेशन वाया रिटम्युलेटेड एमिशन ऑफ रेडिपशन (एलएएसएआर) का प्रथमाक्षर संक्षेप है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता है कि वे एक जैसी फ्रीक्वेंसी, फ्रेज और पोलाराइजेशन वाली अत्यंत सुसंगाठित किरणें होती है और बहुत कम ही छितराती है। उनकी सारी ऊर्जा एक ही बिंदु पर संकेंद्रित की जा सकती है।

एक्स-रे मशीन

१८ जनवरी १८९६ को एचएल स्मिथ ने एक्स किरणों के विकिरण की तकनीक का उपयोग कर पहली एक्स-रे मशीन बनाकर दुनिया के समाने पेश की थी। विलहेल्म रोएंटगेन ने प्रयोग के दौरान एक्स किरणों के विकिरण को देखा और सबसे पहले अपनी पत्नी के हाथ की एक्स रे तस्वीर निकाली। जिसमें हड्डियों के साथ अंगूठी की भी आकृति उभर कर सामने आयी।

एक्स रे का उपयोग चिकित्सीय जांच के अलावा फ्लोरेसेंस और स्टेरिलाइजेशन में ही होता है। १९४०-५० के दशक में एक्स रे मशीन का उपयोग जूतों की दुकानों में माप के लिए भी होता था। विपरीत प्रभावी का पता चलने पर इनका इस्तेमाल बंद हो गया।

परमाणु ऊर्जा से बिजली उत्पादन

२० दिसंबर १९५१ को विश्व में पहली बार परमाणु ऊर्जा से विद्युत उत्पादन हुआ था। यह सफलता अमेरिका के इडाहों में बने एक्सपेरीमेंटल ब्रिडर रिएक्टर-१ (इबीआर-१) में मिली जब परमाणु अभिक्रियाओं द्वारा उत्पन्न ऊष्मा से टरबाइन जनरेटर को भाप दी गई। इस प्रकार उत्पन्न हुई बिजली से चार बिजली के बल्ब जलने लगे। इसके अगले दिन पुन: इस प्रयोग से ईबीआर-१ की पूरी इमारत के लिए बिजली उत्पन्न की गयी। इस घटना ने अमेरिका में न्यूक्लियर पॉवर इंडस्ट्री की शुरुआत की।

जॉन ब्राउनिंग

२१ जनवरी १८५५ को आधुनिक आग्नेयास्त्रों के पिता कहलानेवाले जॉन ब्राउनिंग का जन्म अमेरिका के ऑगडेन (उटाह) में हुआ था। सिर्फ १३ वर्ष की उम्र में ही उन्होंने लोहे के बेकार टुकड़ों से अपनी पहली बंदूक बनाई थी। उन्होंने सबसे पहले अपने भाई के लिए सिंगल शॉट राइफल बनाई। उन्होंने ही दुनिया के सामने पहली बार ऑटोमेटिक पिस्टल, मशीन गन और ऑटोमेटिक राइफल प्रस्तुत की। उन्होंने अपने आविष्कारों से अमेरिका के आग्नेयास्त्र उद्योग में क्रांति ला दी।

उन्होंने ३२ क्षमतावाला ऑटोमेटिक पिस्टल और ४५ क्षमतावाला एम १९११ पिस्टल बनाया, जो आज भी प्रयोग में हैं। २६ नवंबर १९२६ को बिल्जियम में उनका निधन हुआ था।

सच हुआ उड़ने का सपना

१७ दिसंबर १९०३ को इंसान के आसमान में उड़ने का सपना सच हुआ था जब राइट बंधुओं ने द फ्लयार नामक विमान को पहली बार उड़ाया था। ऑरविल और विब्लर राइट ने उत्री कैरोलिना के तट पर १२ सेकेंड की इस उड़ान से १२० फीट की दूरी तय की थी। ग्लाइडर को उड़ान में असफल रहने पर उन्होंने एक साइकिल मैकेनिक चार्ली टेलर की मदद से २०० पौंड से कम वजन वाला १२ हार्सपावर का इंजन बनाने में सफल हुए। फिर उन्होंने ग्लाइडर के उपयुक्त प्रोपेलर तैयार किए। अपने ग्लाइडर किटी हॉक में इंजन और नये प्रोपेलर लगाकर विमान तैयार किया और पहली सफल उड़ान भरी थी।

पिकासो

विश्व प्रसिद्ध चित्रकार व शिल्पी पाब्लो पिकासो का जन्म २५ अक्टूबर, १९०० को मलागा (स्पेन) में हुआ था। उन्होंने चित्रकारी में क्यूबिज्म शैली को जन्म दिया। अपने चित्रकार पिता से कहा की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर वे चित्रकारी में उच्च शिक्षा के लिए मैड्रिड गये। वह पेरिस के समकालीन कलाकारों से काफी प्रभावित हुए।

उनकी प्रमुख कलाकृतियों में एविगनन की महिलाएं, गेर्निका, न्यूड विद ए नेकलेस, ला लेक्चर, द ब्लू रूम, द फ्रूगल रिपास्ट, द ब्लाइंडमैंस मील शामिल हैं। गेर्निका के लिए उन्हें देश निकाला की सजा हुई थी। आठ अप्रैल, १९७३ को फ्रांस में उनका निधन हो गया।

नेल्सन मंडेला

१८ जुलाई, १९१८ को दक्षिण अफ्रीका के पूर्व राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला का जन्म ईस्टर्न केप ऑफ साउथ अफ्रीका के एक छोटे से गांव मवेजों में हुआ था। वे मदीबा कबीले से थे। इसलिए उन्हें अक्सर मदीबा कह कर बुलाया जाता था। कबीले में उनका नाम रोलिहलाहला दालिभंगा था, लेकिन स्कूल के एक शिक्षक ने उनका नाम नेल्सन रख दिया। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद सरकार की जगह एक लोकतांत्रिक बहुनस्ली सरकार बनाने के लिए लंबा संघर्ष किया और २७ वर्ष तक जेल में रहे। वे देश के पहले अश्वेत राष्ट्रपति बनने थे। भारत रत्न (१९९०) और नोबेल शांति पुरस्कार (१९९३) से सम्मानित किये गये थे। पांच दिसंबर २०१३ को उनका निधन हुआ।

नील आर्मस्ट्रांग (निधन- २५ अगस्त)

नील आर्मस्ट्रांग चांद पर कदम रखनेवाले दुनिया के पहले अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री थे। २० जुलाई १९६९ को अपोलो ११ की चंद्रमा के धरातल पर सुरक्षित लैंडिंग हो ही गई। मिशन कंट्रोल रूप को आर्मस्ट्रांग का पहला सन्देश था। २१ जुलाई, १९६९ वह ऐतिहासिक दिन था जब मानव ने पहली बार पृथ्वी के बाहर किसी खगोलीय पिड पर आधिकारिक रूप से अपने कदम रखे। इस मौके पर आर्मस्ट्रांग के विश्वप्रसिद्ध उदगार थे- Thatis one small step for man one giant leap for mankind.

हिटलर-स्टालिन समझौता

२३ अगस्त १९३९ को जर्मनी और सोवियत संघ ने एक-दूसरे का अतिक्रमण न करने की संधि पर हस्ताक्षर किया था। उस समय जर्मनी में हिटलर और सोवियत संघ में स्टालिन का शासन था। दोनों अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए इस संधि पर सहमत हुए थे।

इस समझौते के आधार पर दोनों देशों ने तीन वर्ष तक एक-दूसरे पर आक्रमण न करने का वचन दिया था। जर्मनी के विदेश मंत्री जोवचिन-वॉन रिब्बनट्रॉप व सोवियत संघ की ओर से वीएमा मोलोटोव न मॉस्को में संधि पर हस्ताक्षर किया था। १९४१ में सोवियत संघ पर जर्मनी के आक्रमण के यह समझौता समाप्त हो गया।

एडवर्ड जेनर (जन्म- १७ मई)

एडवर्ड जेनर एक प्रसिद्ध कार्यचिकित्सक थे। विश्व में इनका नाम इसलिए भी प्रसिद्ध है कि इन्होंने चेचक के टीके का आविष्कार किया था। एडवर्ड जेनर के इस आविष्कार से आज करोड़ों लोग चेचक जैसी घातक बीमारी से ठीक हो रहे हैं और अपने जीवन का आनन्द ले रहे हैं। यदि एडवर्ड जेनर नहीं होते तो आज सम्पूर्ण दुनिया के १.५ करोड़ लोग प्रतिवर्ष सिर्फ चेचक के द्वारा काल के ग्रास बने रहे होते।

४ जनवरी

सर आइसेक न्यूटन

सर आइसेक न्यूटन एक किसान परिवार में पैदा हुए थे। वह भी किसान बन गए होते अगर उनके चाचा ने उनके पापा को उन्हें पढ़ाने के लिए राजी न किया होता। वह स्कूल से आने के बाद खेती करने जाते थे। पर उनका इस काम में मन

नहीं लगता था, जिस वजह से वह बहुत बुरे किसान साबित हुए। तभी उनके चाचा ने उनकी मां को उन्हें केमब्रिज्स ट्रिनिटी कॉलेज भेजने के लिए मना लिया। न्यूटन को रात में एप्पल पाई बनाना बहुत पसंद था। साथ ही वह कुछ-कुछ शरारती भी थे। वह अपनी बहन को कई बार चुपके से मारकर भाग जाते थे। इनका जन्म ४ जनवरी को हुआ और ये गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत और गणितशास्त्र में कैलकुलस में मशहूर थे।

नील आर्मस्ट्रांग (जन्म- ५ अगस्त)

नील आर्मस्ट्रांग चाँद पर कदम रखनेवाले दुनिया के पहले अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री थे। आर्मस्ट्रांग ने १९७१ में अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा छोड़ दिया था और छात्रों को अंतरिक्ष इंजीनियरिंग के बारे में पढ़ाने लगे थे।

महारानी विक्टोरिया (जन्म- २४ मई)

महारानी विक्टोरिया १८३७ ई. में ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्ड की महारानी के रूप में सिंहासन पर आरूढ़ हुई थी। १८७७ ई. में उन्हें भारत की सम्राज्ञी घोषित किया गया था। अपने उदार विचारों के कारण ही वह भारतीय जनमानस में प्रसिद्ध हुई थीं।

अलबर्ट आइंस्टाइन (निधन- १८ अप्रैल)

अलबर्ट आइंस्टाइन एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक और सैद्धांतिक भौतिकविद थे। वे सापेक्षता के सिद्धांत और द्रव्यमान-ऊर्जा समीकरण ई = एमसी२ के लिए जाने जाते हैं। उन्हें सैद्धांतिक भौतिक, खासकर प्रकाश-विद्युत ऊत्सर्जन की खोज के लिए १९२१ में नोबेल पुरस्कार मिला था।